। ओं सतिगुर प्रसादि ।

आदि

श्री गुरु ग्रन्थ साहिब

(तीसरी सेंची)

[हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण]

प्रकाशक

भुवन वाणी ट्रस्ट

'प्रभाकर निलयम्', ५०२/१३७, [illegible] रोड, लखनऊ-२२६००३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।

आदि

श्री गुरु ग्रन्थ साहिब

(तीसरो सैंचो)

[हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण]

अनुवाद—

डॉ० मनमोहन सहगल

एम० ए०, पीएच्०डी०, डी०लिट्०

लिप्यन्तरण—

नन्दकुमार अवस्थी

प्रकाशक

भुवन वाणी ट्रस्ट

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चौपटियाँ रोड, लखनऊ-२२६००३

प्रथम संस्करण—

१९८०-८१ ई०

पृष्ठसंख्या—१८×२२÷८=९६४

भेंट— ५०·०० रुपया

मुद्रक—

वाणी प्रेस

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चौपटियाँ रोड, लखनऊ—२२६००३

प्रकाशकीय

प्रत्येक क्षेत्र प्रत्येक सन्त की वाणी।
सम्पूर्ण विश्व में घर-घर है पहुँचानी॥

विषय-प्रवेश

भूमण्डल पर देश-काल-पात्र के प्रभाव से मानव जाति, विभिन्न लिपियाँ और भाषाएँ अपनाती रही है। उन सभी भाषाओं में अनेक दिव्य वाणियाँ अवतरित हैं, जो विश्वबन्धुत्व और परमात्मपरायणता का पथ-प्रदर्शन करती हैं; किन्तु उन लिपियों और भाषाओं से अपरिचित होने के कारण हम इस तथ्य को नहीं देख पाते। अपनी निजी लिपि और अपनी भाषा में ही सारा ज्ञान और सारी यथार्थता समाविष्ट मानकर, दूसरे भाषा-भाषियों को उस ज्ञान से रहित समझते हुए हम अहम् और भेद-विभेद के भ्रमजाल में भ्रमित रहते हैं। भूमण्डल की बात तो दूर, हमारे अपने देश 'भारत' में ही अनेक भाषाएँ और लिपियाँ प्रचलित हैं। एक ब्राह्मी लिपि के मूल से उत्पन्न होने के बावजूद, उन सबसे परिचित न होने के कारण, हम अपने को परस्पर विघटित समझने लगते हैं। सारी लिपियाँ और भाषाएँ सीखना-समझना सम्भव भी नहीं है।

सुतरां, यथासाध्य विश्व, और अनिवार्यतः स्वराष्ट्र की सभी भाषाओं के दिव्य वाङ्मय को राष्ट्रभाषा हिन्दी और सम्पर्कलिपि नागरी में सानुवाद लिप्यन्तरित करके, क्षेत्रीय स्तर से बढ़ाकर उसको सारे राष्ट्र में सुलभ कराना, समस्त सदाचार-साहित्य-निधि को सारे देश की सम्पत्ति बनाना, समस्त-राष्ट्र एवं हो सके तो प्राणिमात्र में एकात्मभाव उत्पन्न करना, यह संकल्प भगवान की प्रेरणा से सन् १९४७ ई० में मैंने अपनाया, और इसी उद्देश्य से १९६९ ई० में भुवन वाणी ट्रस्ट की स्थापना की। प्रस्तुत 'श्री गुरूग्रन्थ साहिब' का हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण भी इस 'भाषाई सेतुबन्ध' की पुष्कल शृंखला की एक कड़ी है।

प्रस्तुत उपलब्धि

लोकप्रख्यात धर्मग्रन्थ 'श्री गुरूग्रन्थ साहिब' के हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण के चार सैंचियों (जिल्दों) में प्रकाशन की योजना के अन्तर्गत, प्रथम सैंची १९७८ ई० में प्रकाशित हुई थी। इस अद्भुत ग्रन्थ के हिन्दी में अवतरित होते ही पाठकों के हर्ष का वारापार न रहा। अगली सैंचियों के शीघ्र प्रकाशन के तक़ाज़े आते रहे। विद्वान अनुवादक श्री डॉ० सहगल के अदम्य उत्साह के फलस्वरूप गत वर्ष दूसरी सैंची और प्रस्तुत वर्ष १९८१ ई० में ही यह तीसरी सैंची आज पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है। चौथी सैंची का मुद्रण आरम्भ हो चुका है। आशा है शीघ्र

ही इस प्रकार यह पुनीत ग्रंथ 'श्री गुरूग्रन्थ साहिब' नागरी कलेवर में सम्पूर्ण होकर हिन्दी-जगत् को उपलब्ध हो जायगा।

भुवन वाणी ट्रस्ट के देवनागरी अक्षयवट की देशी-विदेशी प्रकाण्ड-शाखाओं में, संस्कृत, अरबी, फ़ारसी, उर्दू, हिन्दी, कश्मीरी, गुरुमुखी, राजस्थानी, सिन्धी, गुजराती, मराठी, कोंकणी, मलयाळम, तमिळ, कन्नड, तेलुगु, ओड़िआ, बँगला, असमिया, नेपाली, अंग्रेज़ी, इब्रानी, अरामी, यूनानी आदि के वाङ्मय के अनेक अनुपम ग्रन्थ-प्रसून और किसलय खिल चुके हैं, अथवा खिल रहे हैं। इस नागरी अक्षयवट की गुरुमुखी शाखा में प्रस्तुत ग्रन्थ तीसरा पल्लव-गुच्छ है। विश्व की दिव्य वाणियों के, नागरी कलेवर में उपलब्ध होने पर, विश्वबन्धुत्व की भावना को प्रेरणा मिलेगी। प्राणिमात्र में परस्पर सद्भावना का उदय होगा। परमात्मदर्शन अथवा मिलन का यह सर्वोपरि साधन सिद्ध होगा।

आदि ग्रन्थ

आदि श्री गुरूग्रन्थ साहिब की लिपि गुरमुखी है। पृष्ठ ९ पर प्रस्तुत गुरमुखी-देवनागरी वर्णमाला चार्ट से स्पष्ट है कि गुरमुखी अक्षर प्राय: नागरी लिपि के अनुरूप हैं और सामान्य ध्यान रखने पर गुरमुखी और हिन्दी-भाषी परस्पर दोनों लिपियों का सरलता से पाठ कर सकते हैं। ग्रन्थ की अधिकांश गुरुवाणियाँ पंजाब प्रदेश में अवतरित हैं और इस कारण जन-साधारण उनकी भाषा को पंजाबी के सदृश अनुमान करता है; जबकि बात ऐसी नहीं है। श्री गुरूग्रन्थ की भाषा आधुनिक पंजाबी की अपेक्षा हिन्दी भाषा के अधिक समीप है और हिन्दी-भाषी को पंजाबी-भाषी की अपेक्षा उनका आशय अधिक बोधगम्य है।

दूसरी भ्रान्ति है कि सामान्यजन समझते हैं कि श्री गुरूग्रन्थ साहिब सिक्ख-पंथ-मात्र का धर्मग्रन्थ है, उसमें सिक्ख अनुयायियों के लिए ही विधि-निषेध वर्णित होंगे; जबकि तथ्य यह नहीं है। अलबत्ता यह सही है कि संकट और त्रास के युग में एक संत्रस्त मानव-समूह इन वाणियों के बल पर संगठित हुआ और उसके अपूर्व उत्सर्ग एवं बलिदान द्वारा संत्रस्त समाज और देश ने परित्राण प्राप्त किया। परन्तु श्री गुरूग्रन्थ साहिब की दिव्य गुरुवाणियों में किसी वर्ग-विशेष, पक्ष-विपक्ष, मित्र-शत्रु की झलक मात्र नहीं मिलती। सामाजिक एवं धार्मिक आडम्बरों से बन्धनमुक्त करते हुए, शाश्वत सदाचार और सद्विचार के द्वारा गुरु-चिन्तन, आत्म-परमात्म-चिन्तन और मिलन की ओर मानव मात्र को उन्मुख किया गया है। कहीं यह गन्ध भी नहीं मिलती कि कौन उत्पीड़ित है, कौन उत्पीड़क। मानवीय दुर्बलताओं और दुर्वासनाओं को ही शत्रु मानकर साक्षात् ईश्वरस्वरूप गुरु की कृपा से उनसे स्वत: त्राण, और अन्तत: आवागमन से मुक्ति पाने का

नाद सारे ग्रन्थ में ओतप्रोत है। यह तो भान भी नहीं होता कि यह किसी विशिष्ट सम्प्रदाय का ग्रन्थ है। यह श्री गुरूग्रन्थ साहिब की अलौकिकता है।

गुरमुखी में प्राप्त ऐसे सार्वभौम दिव्य ग्रन्थ के अनुवाद पंजाबी, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं में भले ही हुए हैं, किन्तु आम जनता को बोधगम्य हिन्दी टीका कदाचित् उपलब्ध नहीं है। ग्रन्थ साहिब के आंशिक हिन्दी भाष्य तो देखने को मिले; श्री परमानन्द उदासी द्वारा श्री जपुजी की विशद व्याख्या, एवं कई अन्य टीकाएँ भी। किन्तु एक तो वे टीकाएँ समग्र ग्रन्थ की नहीं हैं, आंशिक हैं; दूसरे वे व्याख्याएँ विस्तर में हैं और विद्वानों के लिए ही उपयुक्त हैं। उनके ही पल्ले वे पड़ सकती हैं, जनसाधारण की सहज पैठ उनमें संभव नहीं। इस विचार से प्रेरित होकर, श्री गुरूग्रन्थ साहिब का हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण, सामान्य जनता के लिए आवश्यक प्रतीत हुआ।

हिन्दी अनुवाद

वाणी और भाव, दोनों का सही निर्वाह करते हुए अनुवाद का कार्य सरल नहीं था। हिन्दी और गुरमुखी, दोनों भाषाओं में पर्याप्त गति, भावग्राह्यता और दर्शन के प्रति सहज निष्ठा, इन सबकी ज़रूरत थी। इसी खोज के दौरान, डॉ० मनमोहन सहगल, हिन्दी विभागाध्यक्ष, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला से साक्षात् हुआ। ट्रस्ट के पुनीत और गुरुतर कार्य पर प्रसन्न होकर उन्होंने बड़े निस्पृह भाव से इस गहन कार्य को सम्हाला। उन्हीं के योगदान से, आदि ग्रन्थ की प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय सैंची पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हो सकी हैं। चौथी (अंतिम) सैंची का अनुवाद चल रहा है। राष्ट्रभाषा में यह एक बड़े अभाव की पूर्ति हो रही है। हिन्दी-भाषी जनता गुरुवाणी का अमृतपान कर डॉ० सहगल की सदैव कृतज्ञ रहेगी। ट्रस्ट की विद्वत्परिषद् के कश्मीरी भाषा-सलाहकार सदस्य डॉ० शिबनकृष्ण रैणा के भी हम आभारी हैं; उन्होंने ही डॉ० सहगल से शुभ परिचय का संयोग उपस्थित किया था।

नागरी लिप्यन्तरण

गुरुमुखी पाठ को यथावत् शुद्ध रूप में नागरी लिपि में प्रस्तुत करने के लिए प्रकाशित अब तक के नागरी लिप्यन्तरणों और श्री शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी, अमृतसर द्वारा प्रकाशित नागरी संस्करण को हमने आरम्भ में आधार बनाया। किन्तु श्री शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी, अमृतसर द्वारा प्रकाशित श्री गुरूग्रन्थ साहिब के गुरमुखी संस्करण से मिलान करने पर विदित हुआ कि नागरी लिप्यन्तरणकार ने गुरमुखी पाठ को नागरी लिपि में रूपान्तरित करते समय, शब्दों को हिन्दी और संस्कृत के समीप

पहुँचाने का यत्न किया है; जबकि उचित था गुरमुखी पाठ को केवल नागरी अक्षरों में यथावत् लिख देना।

सभी भारतीय भाषाओं में संस्कृत के तत्सम और तद्भव शब्दों का अमित भण्डार है। सुतरां, गुरमुखी में और श्री गुरूग्रन्थ साहिब की (गुरमुखी) भाषा में भी संस्कृत से उद्भूत अनेक तद्भव शब्दों का सर्वाधिक प्रयोग हुआ है। ज्ञातव्य है कि मूल पोथी के लेख की आर्ष पवित्रता को चिरस्थायी रखने के लिए, आदि पोथी में यदि कोई शब्द प्रमादवश अशुद्ध लिख गया है, तो आज भी, लाखों प्रतियाँ छप जाने पर भी, उन अशुद्धियों को संशोधित रूप में लिखना अमान्य समझा गया। उदाहरण के लिए यदि आदि लेख में 'ओुही', 'गुोबिंद', 'गुोपाल' आदि लिख गये हैं, तो उनको आर्ष होने के नाते पूज्य और शाश्वत मानकर जैसे का तैसा ही लिखा जा रहा है; उनको, अगले छापों में, क्रमशः 'ओही', 'गोबिंद', 'गोपाल' नहीं संशोधित किया गया।

जहाँ ऐसी सावधानी की परिपाटी है, वहाँ जो शब्द गुरमुखी पाठ में श्री गुरूग्रन्थ साहिब की भाषा के अनुरूप शुद्ध लिखे गये हैं, उनके हिन्दीकरण, अथवा संस्कृतीकरण, अथवा तद्भव से तत्सम बनाने का प्रश्न ही कहाँ उठता है ? उदाहरण के लिए नागरी लिप्यन्तरण में (१) अम्रित को अमृत किया गया है। राग-लय-बद्ध गुरुवाणियों में इन दोनों प्रयोगों में एक मात्रा का अन्तर पड़ जाता है। 'अम्रित' में चार मात्राओं के स्थान पर 'अमृत' में केवल तीन मात्राएँ रहकर छन्द-दोष उत्पन्न करती हैं। (२) उसी प्रकार 'त्रिखा' को 'तृखा' लिखा गया है। गुरमुखी लिपि में ऋ अक्षर का प्रयोग ही नहीं है। फिर यदि तत्सम रूप ही देना था, तो 'तृषा' चाहिए, न कि 'तृखा'। इसी प्रकार 'स्रिसटि', 'द्रिसटि' आदि को 'सृसटि', 'दृसटि' आदि लिखा गया है, जबकि उनके तत्सम रूप 'सृष्टि' और 'दृष्टि' हैं। इस प्रकार अन्य नागरी लिप्यन्तरणों में अनेक शब्द मूलपाठ से विकृत हो गये हैं; न अब वे गुरमुखी रहे, न हिन्दी अथवा संस्कृत रहे।

इस समस्या को सामने देखकर, हमने एक-एक अक्षर गुरमुखी पाठ से मिलाकर उसी प्रकार गुरमुखी शैली पर लिखा है जिस प्रकार वे मान्य और पूज्य हैं। जहाँ लघु या वृहद्, किसी भी आकार में मुद्रण होने पर 'ग्रन्थ साहिब' में सदैव १४३० ही पृष्ठ रखने की मर्यादा निर्धारित है, न कम न ज़्यादा, और जहाँ 'गुोबिंद' के स्थान पर 'गोबिंद' नागरी लिप्यन्तरण में नहीं बदला गया है, वहाँ गुरमुखी के अन्य शुद्ध शब्दों के हिन्दीकरण की गुंजाइश कहाँ, या आवश्यकता भी क्या ? गुरमुखी में 'स्री' अथवा 'सिरी' पाठ है, उसको 'श्री' लिखकर शुद्धीकरण उचित नहीं। पावन ग्रन्थ श्री गुरूग्रन्थ साहिब, पवित्र गुरमुखी भाषा में अवतरित है। अतः नागरी लिपि

में गुरमुखी पाठ को जैसे का तैसा रूपान्तरित करने मात्र का अधिकार है; उसके हिन्दीकरण या संस्कृतीकरण का नहीं।

फलस्वरूप, भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित सानुवाद नागरी संस्करण से दो पावन उद्देश्य सिद्ध हुए। (१) एक तो विश्वप्रसिद्ध अद्वितीय 'श्री गुरूग्रन्थ साहिब' का नाम प्रत्येक व्यक्ति से सुपरिचित होते हुए भी, उसकी पवित्र वाणी का सानुवाद अमृतपान, जो गुरमुखी न जाननेवालों के लिए अब तक दुर्लभ था, वह देश-विदेश के समस्त हिन्दी-जगत् के लिए सुलभ हो गया। (२) दूसरे, श्री गुरूग्रन्थ साहिब का नितांत शुद्ध नागरी लिप्यन्तरण प्रस्तुत हो सका।

आभार-प्रदर्शन

सर्वप्रथम हम उन तपस्वी विद्वानों के कृतज्ञ हैं, जो उल्लेखनीय आर्थिक आकर्षण से रहित, ट्रस्ट द्वारा अर्पित पत्र-पुष्प मात्र को स्वीकार कर, सानुवाद लिप्यन्तरण-जैसे जटिल और गहन कार्य को राष्ट्रहित में अति श्रम से पूर्ण करते हैं। सर्वाधिक श्रेय उनको है।

सदाशय श्रीमानों और उत्तरप्रदेश शासन (राष्ट्रीय एकीकरण विभाग) के प्रति भी हम आभारी हैं कि उनकी अनवरत सहायता से 'भाषाई सेतुकरण' के अन्तर्गत अनेक ग्रन्थों का साथ-साथ प्रकाशन चलता रहता है।

सौभाग्य की बात है कि भारत सरकार के राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय) तथा शिक्षा एवं संस्कृति मंत्रालय ने राष्ट्रभाषा हिन्दी-सहित सभी भाषाओं की समृद्धि और व्यापकता के लिए एक जोड़लिपि "नागरी" के प्रसार पर उपयुक्त बल दिया। उनकी उल्लेखनीय सहायता से हमको विशेष बल मिला है और उसी के फलस्वरूप गुरुमुखी— श्री गुरूग्रन्थ साहिब की यह तीसरी सैंची का प्रकाशन प्रस्तुत वर्ष में सम्पूर्ण हो सका है।

हम उनके अतिशय कृतज्ञ हैं। प्रतिदान में हम आश्वासन देते हैं कि भगवान् की कृपा से भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा नागरी लिपि के माध्यम से 'भाषाई सेतुबन्ध' का पुष्कल कार्य उत्तरोत्तर सफलता से भुवन में व्याप्त होता रहेगा।

बिश्ववाङ्मय से निःसृत अगणित भाषाई धारा।
पहन नागरी पट, सबने अब भूतल-भ्रमण विचारा॥

अमर भारती सलिला की 'गुरमुखी' सुपावन धारा।
पहन नागरी पट, 'सुदेवि' ने भूतल-भ्रमण विचारा॥

नन्दकुमार अवस्थी

प्रतिष्ठाता, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ—३

भुवन-ग्रन्थगाथा, भुवन-संतवाणी

—भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ—३

भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा प्रयुक्त

पंजाबी (गुरमुखी) वर्णमाला का देवनागरी रूपान्तर

पंजाबी (गुरमुखी)-देवनागरी वर्णमाला				
ਅ अ	ਆ आ	ਇ इ	ਈ ई	ਉ उ
ਊ ऊ	ਰੀ ऋ	ਏ ए	ਐ ऐ	ਓ ओ
	ਔ औ	ਅੰ अं	ਅ: अः	
ਕ क	ਖ ख	ਗ ग	ਘ घ	ਙ ङ
ਚ च	ਛ छ	ਜ ज	ਝ झ	ਞ ञ
ਟ ट	ਠ ठ	ਡ ड	ਢ ढ	ਣ ण
ਤ त	ਥ थ	ਦ द	ਧ ध	ਨ न
ਪ प	ਫ फ	ਬ ब	ਭ भ	ਮ म
ਯ य	ਰ र	ਲ ल	ਵ व	ਸ਼ श
	ਸ਼ ष	ਸ स	ਹ ह	

अनुवादकीय

श्री गुरूग्रन्थ साहिब की हिन्दी टीका की यह तीसरी सैंची आपको समर्पित है। इस सैंची की विशिष्टता यह है कि हमने पहली दो सैंचियों पर मिली विद्वानों की प्रतिक्रियाओं एवं उनके सुझावों को भी ध्यान में रखा है। हम अपने विद्वान पाठकों को एक बार पुनः स्मरण दिला देना चाहते हैं कि टीका प्रस्तुत करने का हमारा लक्ष्य मध्यकालीन भारतीय संस्कृति के इस महाभारत ग्रन्थ को हिन्दी पाठकों के लिए न केवल सुलभ ही करने का है, बल्कि इसके माध्यम से हम भारतीय प्रज्ञा की मूलभूत एकता और चिन्तन परम्परा को भी पाठकों तक पहुँचाना चाहते हैं। प्रायः पाठकगण किसी मत या पंथ का बिल्ला लग जाने पर उन महापुरुषों, सन्तों-महात्माओं एवं गुरुओं की वाणी से भी अनभिज्ञ रह जाते हैं, जो मजहबों-पंथों के संकीर्ण घेरों से बहुत ऊँचे सबके लिए एक समान चिन्तन-मंच तैयार करने में रुचि रखते थे। हमारे गुरु साहिबान, गुरु नानकदेव जी से लेकर गुरु गोबिन्दसिंह जी तक सभी ऐसे ही महामानवों की कोटि की मृत्युंजयी अमरात्माएँ थे। पुनः जिन अन्य सन्त-महात्माओं एवं भक्तों की वाणियाँ गुरूग्रन्थ साहिब में संकलित हैं, वे भी उसी परम्परा से सम्बद्ध थे; इसीलिए उनकी वाणी में शब्द-ब्रह्म के दर्शन करने की पंथक मान्यता तो समादरणीय है ही, पंथ में विश्वास न रखनेवालों के लिए भी वह वाणी मानवीय मूल्यों का नित्य उपदेश और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का अमर सन्देश देती है। मानवता के समीचीन जीवन-मूल्यों से सभर होने के कारण ही यह वाणी मानव-मात्र की पथ-प्रदर्शिका है और इसी तथ्य को समक्ष रखते हुए हमने इस महावाणी को देश के उन असंख्य जन तक पहुँचाने को इंगित किया है,

जो ज्ञान की सीमाओं के कारण मूल गुरुमुखी लिपि से परिचित नहीं हैं। टीका का लक्ष्य भी यही है कि पाठक यह जान सकें कि मज़हब कोई भी हो, महापुरुष कोई भी, किसी भी देश या जाति का हो, सत् को पहचाननेवाला सन्त सदैव मानवता का होता है। संसार में उसका आगमन मानवता में पारस्परिक प्रेम-संचयन के लिए होता है; कोई सन्त-महात्मा हमारे हाथों में लाठी-तलवार थमाने नहीं आता। वे सब तो एक ही नूर के अंश होते हैं, पथ-भ्रष्ट जीवों को सुमार्ग पर लगाकर पारस्परिक प्रेम और प्रभु-प्रीति में संलग्न रहकर जीवन जीने और विदेह होने के उपरान्त मूल आलोक में ही समाविष्ट होने की शिक्षा देने आते हैं। प्रस्तुत टीका के माध्यम से यदि हम आंशिक तौर पर भी महान् गुरुओं के महान सन्देश— प्रभु का नाम जपना, नेक कमाई करना, ज़रूरतमन्दों के साथ बाँटकर खाना, सत्संगति करना, गुरु की शक्तियों तथा महत्त्व को पहचानकर स्वसमर्पित करना, अंश को अंशी में विलीन करना आदि— को जन-मानस तक पहुँचाने में सफल हो सके, विभिन्न धर्मों में की एकता के अनिवार्य तत्त्वों को उद्घाटित करने में सक्षम हो सके, तो हम अपने परिश्रम को सार्थक समझेंगे।

हाँ, कुछ मुद्दे ऐसे भी हैं, जिन पर यहाँ एक सामान्य चर्चा कर लेना अन्यथा न होगा। गुरूग्रन्थ-वाणी में अनेकधा ह्रस्व स्वरों की अतिरिक्त मात्राएँ दी हुई मिलती हैं। प्रोफ़ेसर साहिब सिंह ने 'गुरुवाणी-व्याकरण' में तथा गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी, अमृतसर द्वारा प्रकाशित 'शब्दार्थ, गुरूग्रन्थ साहिबजी' की प्रथम जिल्द में इन मात्राओं को एक व्यवस्था के अन्तर्गत सार्थक बताने का प्रयत्न किया गया है। इतना ही नहीं, वाणी में के कथनों का काल-ज्ञान एव विभक्ति-चिह्नों के कतिपय अर्थ भी इंगित किए गए हैं। हम इस दूरागत कल्पना से सहमत नहीं। समूचे मध्यकालीन हिन्दी काव्य को देखने पर यह स्पष्ट है कि ह्रस्व मात्राओं का प्रयोग उस युग की वर्तिनी में एक परम्परा थी, जो उच्चारण में मधुरता एवं अन्तिम अक्षर की ध्वनि को थोड़ा दबाने के लिए अपनाई गई थी। मध्यकाल के लगभग समस्त कवि संगीत से परिचित थे, प्रायः उन्होंने अपनी वाणी पदों में प्रस्तुत करते हुए न केवल राग-रागिनी के ही संकेत दिए हैं, बल्कि टेक, यति-गति एवं उच्चारण के आरोह-अवरोह की ओर भी पूर्ण ध्यान दिया है। गुरु साहिबान की रचना भी संगीत-बद्ध होने के नाते उच्चारण के उन नियमों के ही कारण अतिरिक्त ह्रस्व मात्राओं में बँधी है, इसमें बलात् अर्थ-परिवर्तन को देखने का प्रयास सबल नहीं दीख पड़ता। यदि ऐसा मान

लेंगे तो उन शब्दों का क्या होगा, जिनमें किसी अक्षर को एक ही समय ह्रस्व और दीर्घ दो-दो मात्राएँ दे रखी हैं।

एक बात और ध्यातव्य है। हमने टीका में सिक्ख पंथ में प्रचलित कतिपय शब्दों का प्रयोग किया है। हिन्दी जगत सम्भवतः उन शब्दों से अनभिज्ञ हो या हिन्दी प्रयोग की दृष्टि से उनके अर्थ या वर्तिनी में कुछ भेद हो, तथापि गुरूग्रन्थ-वाणी की भावात्मक सरसता बनाए रखने के लिए ऐसा किया जाना हमें सार्थक प्रतीत हुआ। हाँ, ऐसी स्थितियों में हमने जगह-जगह कोष्ठक में उनके सही हिन्दी पर्याय दे दिए हैं और हमारा विश्वास है कि ऐसे शब्दों की मधुरता तथा पंथक रस से पाठकगण अधिक लाभान्वित होंगे। 'वाहिगुरु', 'सतिनाम', 'सतिसंगति', 'हरिनाम', 'सतिगुरु', 'लंगर', 'छकना', 'बख्शीश', 'करम', 'गुरुमुख', 'मनमुख', 'ब्रह्म-ज्ञानी', 'हुकुम', 'परवाणु', 'भाणा', 'अकालपुरुष' आदि कतिपय ऐसे शब्द हैं, जिनका प्रयोग हमने हिन्दी टीका में किया है। बीच-बीच में हमने इन शब्दों की हिन्दीगत स्पष्टता भी दे दी है, इसलिए पाठकों को किसी प्रकार की समस्या का सामना होगा —ऐसी आशा हम नहीं करते। यहाँ क्रमशः उक्त शब्दों के पर्याय पुनः दे रहे हैं— परमात्मा, सच्चा प्रभु-नाम, सत्संगति, परमात्मा का नाम, सच्चा गुरु, सामूहिक भोजन-व्यवस्था, खाना, अनुग्रह, कृपा, गुरु के आदेशानुसार आचरण वाला, मन-मर्ज़ी करनेवाला, ब्रह्म को पहचानने वाला, प्रभु-इच्छा, स्वीकृति, आकस्मिक प्रभु-इच्छा, अनन्त प्रभु।

श्री गुरूग्रन्थ साहिब का स्वरूप-परिचय हम प्रथम दो सैंचियों में दे चुके हैं, अतः यहाँ उसकी पुनरावृत्ति अनावश्यक होगी। हिन्दी पाठकों के लिए इस बृहद् ग्रन्थ को अर्थ-सहित सुलभ्य बनाने का श्रेय भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ को है, जिसके लिए ट्रस्ट के मुख्यन्यासी सभापति पद्मश्री नन्दकुमार अवस्थी हमारे धन्यवाद के विशेष पात्र हैं। इतने बड़े कार्य को सम्पन्न करने में प्रमादवश यदि कोई भूल अथवा अशुद्ध मुद्रण रह गया हो, तो उसके लिए हम खेद व्यक्त करते हुए विद्वान पाठकों से आग्रह करते हैं कि वे ऐसे स्थलों का संकेत हमें अवश्य भेज दें, ताकि पुनर्मुद्रण के समय भूल-सुधार किया जा सके।

प्रस्तुत जिल्द को पाठकों तक पहुँचने में अस्वस्थता-वश कुछ अधिक विलम्ब हुआ है, उसके लिए हम अपने सहृदय पाठकों से क्षमा चाहते हैं।

आभार-स्वीकृति

प्रस्तुत टीका को आकार देने के लिए हमने पंजाबी में उपलब्ध निम्नलिखित टीकाओं का आश्रय लिया है। हम उन विद्वान् टीकाकारों का आभार स्वीकार करते हैं:—

१.	श्री गुरुग्रन्थ साहिब	टीकाकार प्रो० साहिब सिंह
२.	श्री गुरुग्रन्थ साहिब	फ़रीदकोट वाली टीका
३.	श्री गुरुग्रन्थ साहिब	शब्दार्थ (शि० गु० प्र० क०)

अनेक अन्य पंजाबी के विद्वानों को भी हम हार्दिक धन्यवाद देते हैं, जिनकी गुरु-वाणी टीकाओं से हम प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में सहायता लेते रहे हैं।

(डॉ०) मनमोहन सहगल
एम. ए. पीएच्.डी., डी. लिट्.

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
पंजाबी विश्वविद्यालय,
पटियाला

सूचना

☞ कार्य सम्पन्न होने पर प्रस्तुत ग्रन्थ की प्रतियाँ, हम गुरुग्रन्थ साहिब के अधिकारी विद्वानों और संस्थाओं को निरीक्षणार्थ भेज रहे हैं। यदि उसमें कोई सुधार के सुझाव उनसे प्राप्त होंगे, तो पुस्तक के अन्त में उन्हें एक 'सुधार-पत्र' रूप में देकर हम प्रसन्न होंगे। लिप्यन्तरणकार, अनुवादक, प्रकाशक—सभी इसको सहायता और सहकार मानकर स्वीकार करेंगे।

॥ ੴ सतिगुरु प्रसादि ॥

श्री गुरूग्रन्थ साहिब

(तीसरी सैंची)

ततकरा रागों और शबदों का

पंना

(असटपदीआ म० १)

(म० ३ असटपदीआ)

(असटपदीआ म० ४)

पंना

(असटपदीआ म० ५)

(महला १ कुचजी)

(छंत म० १)

(छंत महला ३)

(महला ४ छंत)

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।

आदि

श्री गुरु ग्रन्थ साहिब

(तीसरी संची)

[हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण]

आदि

श्री गुरू ग्रंथ साहिब

(नागरी लिपि में)

हिन्दी व्याख्या सहित

रागु तिलंग महला १ घरु १

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

यक अरज गुफतम पेसि तो दर गोस कुन करतार । हका कबीर करीम तू बे ऐब परवदगार ॥ १ ॥ दुनीआ मुकामे फानी तहकीक दिल दानी । मम सर मूइ अजराईल गिरफतह दिल हेचि न दानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जन पिसर पदर बिरादरां कस नेस दसतंगीर । आखिर बिअफतम कस न दारद चूं सवद तकबीर ॥ २ ॥ सब रोज गसतम दर हवा करदेम बदी खिआल । गाहे न नेकी कार करदम मम ईं चिनी अहवाल ॥ ३ ॥ बदबखत हम चु बखील गाफिल बे नजर बेबाक । नानक बुगोयद जनु तुरा तेरे चाकरां पाखाक ॥ ४ ॥ १ ॥

हे कर्तार ! तुम शाश्वत हो, तुम महान हो, कृपालु हो, पवित्र हस्ती वाले हो और सर्वरक्षक हो । मैंने तुम्हारे समक्ष एक प्रार्थना की है, उसे ध्यानपूर्वक सुनो ॥ १ ॥ हे मन ! तू सत्य मान कि यह सृष्टि नश्वर है। तू कुछ भी नहीं समझता कि (मौत के फ़रिश्ते) इज्राईल ने मेरे सिर के केश पकड़े हुए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पत्नी, पुत्र, पिता, भाई आदि में (इनमें) से कोई भी सहायक नहीं है। जब अन्त में मैं गिरा अर्थात्

मृत्यु को प्राप्त हुआ, जब मेरी मृत देह को दफ़न करते वक्त नमाज़ पढ़ी जाने लगी, तब कोई भी मुझे यहाँ रख (बचा) नहीं सकता ॥ २ ॥ मैं रात-दिन लोभग्रस्त होकर फिरता रहा। मैं अशुभ संकल्पों में रमण करता रहा और मैंने कोई शुभ कर्म नहीं किया। हे प्रभु ! मेरा ऐसा हाल है (जो मैंने उपर्युक्त पंक्तियों में बतलाया है) ॥ ३ ॥ मेरे समान कोई अभागा, निन्दक, लापरवाह, ढीठ और भयहीन नहीं है। दास नानक का कथन है कि वह तुम्हारा दास है, तुम्हारे सेवकों की चरणधूलि का इच्छुक है ॥ ४ ॥ १ ॥

तिलंग महला १ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ भउ तेरा भांग खलड़ी मेरा चीतु। मै देवाना भइआ अतीतु। कर कासा दरसन की भूख। मै दरि मागउ नीता नीत ॥ १ ॥ तउ दरसन की करउ समाइ। मै दरि मागतु भीखिआ पाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ केसरि कुसम मिरगमै हरणा सरब सरीरी चढ़णा। चंदन भगता जोति इनेही सरबे परमलु करणा ॥ २ ॥ घिअ पट भांडा कहै न कोइ। ऐसा भगतु वरन महि होइ। तेरै नामि निवे रहे लिव लाइ। नानक तिन दरि भीखिआ पाइ ॥ ३ ॥ १ ॥ २ ॥

तुम्हारा भय (सम्मान) मेरे लिए भाँग (नशा) है, मेरा मन इसे सँभालने के लिए थैली है, मैं नशा करनेवाला और विरक्त हो गया हूँ। मेरे दोनों हाथ (तुम्हारे द्वार से कुछ माँगने के लिए) प्याले हैं, मेरी आत्मा को तुम्हारे दर्शनों की भूख है, इसलिए मैं तुम्हारे द्वार पर सदा तुम्हारे दर्शनों की माँग करता हूँ ॥ १ ॥ हे प्रभु !. मैं तुम्हारे द्वार का भिखारी हूँ, मैं तुम्हारे दर्शनों की कामना करता हूँ, इसलिए मुझे अपने दर्शनों का दान दो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ केसर, फूल, कस्तूरी और सोना —ये सब सबके शरीर पर प्रयुक्त किए जाते हैं। चन्दन सबको सुगन्धि देता है, ऐसा ही स्वभाव तुम्हारे भक्तों का है ॥ २ ॥ जैसे रेशम और घी के बर्तन के बारे में कोई नहीं पूछता कि ये किनके द्वारा स्पर्श से भ्रष्ट किए जा चुके हैं, वैसे ही तुम्हारा भक्त भी होता है, चाहे वह किसी भी जाति में जन्मा हो। नानक की प्रार्थना है कि हे प्रभु ! जो मनुष्य तुम्हारे नाम में लीन रहते हैं, लग्न लगाए रखते हैं, उनके द्वार पर (दर्शनों की) मैं भिक्षा माँगता हूँ ॥ ३ ॥ १ ॥ २ ॥

तिलंग महला १ घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ इहु तनु माइआ पाहिआ पिआरे लीतड़ा लबि रंगाए । मेरै कंत न भावै चोलड़ा पिआरे किउ धन सेजै जाए ॥ १ ॥ हंउ कुरबानै जाउ मिहरवाना हंउ कुरबानै जाउ। हंउ कुरबानै जाउ तिना कै लैनि जो तेरा नाउ। लैनि जो तेरा नाउ तिना कै हंउ सद कुरबानै जाउ॥ १ ॥ रहाउ॥ काइआ रंङणि जे थीऐ पिआरे पाईऐ नाउ मजीठ। रंङण वाला जे रंङै साहिबु ऐसा रंगु न डीठ ॥ २ ॥ जिन के चोले रतड़े पिआरे कंतु तिना कै पासि । धूड़ि तिना की जे मिलै जी कहु नानक की अरदासि ॥ ३ ॥ आपे साजे आपे रंगे आपे नदरि करेइ । नानक कामणि कंतै भावै आपे ही रावेइ ॥४॥१॥३॥

जिस जीव-स्त्री के शरीर रूपी वस्त्र को माया की लाग लगी हो और तदन्तर इसे झूठ के साथ रँगा हो, वह जीव-स्त्री प्रभु-पति के चरणों में नहीं पहुँच सकती, क्योंकि यह वस्त्र (रूपी जीवन) प्रभु-पति को भला नहीं लगता ॥ १ ॥ हे कृपालु प्रभु ! मैं बलिहारी हूँ । मैं उन पर बलिहारी हूँ, जो तुम्हारा नाम स्मरण करते हैं । जो व्यक्ति तुम्हारा नाम लेते हैं, मैं उन पर सदा बलिहारी हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि यह शरीर कपड़ा रँगने की मटकी बन जाए और यदि इसमें मजीठ जैसे पक्के रंग वाला प्रभु का नाम-रंग डाला जाए, तदन्तर मालिक-प्रभु आप रंगरेज़ बनकर जीव-स्त्री के मन को रँगे तो अभूतपूर्व रंग चढ़ता है अर्थात् अद्भुत रंग चढ़ता है ॥ २ ॥ हे प्यारे ! जिन जीव-स्त्रियों के शरीर रूपी वस्त्र प्रभु के नाम-रंग में रँगे गए हैं, प्रभु-पति उनके समीप विद्यमान रहता है । हे सज्जन ! नानक की ओर से उनके पास प्रार्थना कर (क्योंकि) नानक को उनके चरणों की धूलि मिल सके ॥ ३ ॥ हे नानक ! जिस जीव-स्त्री पर प्रभु स्वयं कृपा-दृष्टि करता है, उसे वह आप ही सँवारता है, आप ही रँगता है, वह जीव-स्त्री प्रभु-पति को भली लगती है और उसे प्रभु अपने चरणों में जगह देता है ॥ ४ ॥ १ ॥ ३ ॥

॥ तिलंग म० १ ॥ इआनड़ीए मानड़ा काइ करेहि । आपनड़ै घरि हरि रंगो की न माणेहि । सहु नेड़ै धन कंमलीए बाहरु किआ ढूढेहि । भै कीआ देहि सलाईआ नैणी भाव का करि सीगारो । ता सोहागणि जाणीऐ लागी जा सहु धरे

पिआरो ॥ १ ॥ इआणी बाली किआ करे जा धन कंत न भावै । करण पलाह करे बहुतेरे सा धन महलु न पावै । विणु करमा किछु पाईऐ नाही जे बहुतेरा धावै । लब लोभ अहंकार की माती माइआ माहि समाणी । इनी बाती सहु पाईऐ नाही भई कामणि इआणी ॥ २ ॥ जाइ पुछहु सोहागणी वाहै किनी बाती सहु पाईऐ । जो किछु करे सो भला करि मानीऐ हिकमति हुकमु चुकाईऐ । जाकै प्रेमि पदारथु पाईऐ तउ चरणी चितु लाईऐ । सहु कहै सो कीजै तनु मनो दीजै ऐसा परमलु लाईऐ । एव कहहि सोहागणी भैणे इनी बाती सहु पाईऐ ॥ ३ ॥ आपु गवाईऐ ता सहु पाईऐ अउरु कैसी चतुराई । सहु नदरि करि देखै सो दिनु लेखै कामणि नउनिधि पाई । आपणे कंत पिआरी सा सोहागणि नानक सा सभराई । ऐसै रंगि राती सहज की माती अहिनिसि भाइ समाणी । सुंदरि साइ सरूप बिचखणि कहीऐ सा सिआणी ॥ ४ ॥ २ ॥ ४ ॥

हे अबोध आत्मा ! तू इतना अभिमान क्यों करती है ? परमात्मा तेरे हृदय में अवस्थित है । तू उसका आनन्द अनुभवन क्यों नहीं करती ? हे भोली जीव-स्त्री ! प्रभु-पति तुम्हारे निकट विद्यमान है, तू उसे बाहरी संसार में क्यों खोजती फिरती है ? आँखों में प्रभु के प्रीति-भाव का अंजन लगाकर प्रभु के प्रेम का हार-शृंगार कर जीव-स्त्री तब ही भाग्यशालिनी तथा प्रभु के चरणों में स्थान पानेवाली समझी जाती है, जब प्रभु-पति उससे प्रेमभाव रखे ॥ १ ॥ यदि परमात्मा उसे न चाहे तो बेचारी जीव-स्त्री क्या कर सकती है? ऐसी जीव-स्त्री चाहे कितना ही करुण-प्रलाप करे, वह प्रभु-पति का महल अथवा घर प्राप्त नहीं कर सकती । (वैसे) जीव-स्त्री चाहे कितनी ही भाग-दौड़ करे, प्रभु की कृपादृष्टि के बिना उसे कुछ भी प्राप्त नहीं होता । यदि जीव-स्त्री लोभ, आस्वादन, अहंकार आदि में ही लीन रहे और सदा माया में डूबी रहे तो इन बातों से प्रभु-पति नहीं मिलता । वह जीव-स्त्री मूर्ख ही रही (जिसने अन्यान्य तरीक़ों से ईश्वर को पाना चाहा) ॥ २ ॥ निस्सन्देह (प्रभु-पति को प्राप्त करनेवाली) सौभाग्यवती स्त्रियों से पूछ लो कि किन बातों से प्रभु-पति प्राप्त होता है ? (तुम्हें पता लग जाएगा ।) चालाकी और छल-प्रपंच छोड़ दो; जो कुछ प्रभु करता है, वह भला समझकर स्वीकार कर लो । जिस प्रभु के प्रेम द्वारा नाम-वस्तु प्राप्त होती है, उसके चरणों में मन लगाओ । प्रभ-पति जो हुक्म करता है, उसे मानो, अपना तन-मन उसके प्रति अर्पित करो । यह सुगन्धि समझ इस्तेमाल करो । सौभाग्यवती स्त्रियाँ यही कहती हैं कि

इन बातों से ही प्रभु-पति प्राप्त होता है ।। ३ ।। प्रभु-पति तब ही मिलता है, जब अहंभाव दूर किया जाय । इसके अतिरिक्त अन्य सब प्रयास व्यर्थ की चालाकी हैं । वह दिन सफल जानो, जब प्रभु-पति तुम्हें कृपादृष्टि से देखे । जिस जीव-स्त्री पर प्रभु कृपा करता है, वह मानो नौ निधियाँ पा लेती है । हे नानक ! जो जीव-स्त्री प्रभु-पति को प्यारी है, वह सौभाग्यवती है, वह संसार रूपी परिवार में आदर-सम्मान प्राप्त करती है । जो प्रभु के प्रेम-रंग में रँगी रहती है, जो स्थिरचित्त रहती है, जो प्रभु के प्रेम में रात-दिन खोई रहती है, वही सुन्दर है, वही रूपसी है, वही बुद्धिमान और समझदार कही जाती है ।। ४ ।। २ ।। ४ ।।

।। तिलंग महला १ ।। जैसी मै आवै खसम की बाणी तैसड़ा करी गिआनु वे लालो । पाप की जंञ लै काबलहु धाइआ जोरी मंगै दानु वे लालो । सरमु धरमु दुइ छपि खलोए कूड़ु फिरै परधानु वे लालो । काजीआ बामणा की गल थकी अगदु पड़ै सैतानु वे लालो । मुसलमानीआ पड़हि कतेबा कसट महि करहि खुदाइ वे लालो । जाति सनाती होरि हिदवाणीआ एहि भी लेखै लाइ वे लालो । खून के सोहिले गावीअहि नानक रतु का कुंगू पाइ वे लालो ।। १ ।। साहिब के गुण नानकु गावै मास पुरी विचि आखु मसोला । जिनि उपाई रंगि रवाई बैठा वेखै वखि इकेला । सचा सो साहिबु सचु तपावसु सचड़ा निआउ करेगु मसोला । काइआ कपड़ु टुकु टुकु होसी हिदुसतानु समालसी बोला । आवनि अठतरै जानि सतानवै होरु भी उठसी मरद का चेला । सच की बाणी नानकु आखै सचु सुणाइसी सच की बेला ।। २ ।। ३ ।। ५ ।।

हे भाई लालो ! मुझे प्रभु-पति की ओर से जैसा आभास हुआ है, उसी के अनुसार मैं तुझे अवगत कराता हूँ । काबुल से बाबर की फ़ौज मानो पाप-अत्याचार की बारात है, जिसे एकत्रित करके वह आ चढ़ा है और बलपूर्वक हिन्दुस्तान की बागडोर रूपी कन्यादान की माँग कर रहा है । सैयदपुर से लाज और धर्म विलुप्त हो गए हैं, झूठ ही सर्वत्र महत्त्वपूर्ण बना फिरता है । (ऐसा लगता है कि) शैतान विवाह सम्बन्ध करा रहा है और ब्राह्मणों तथा क़ाज़ियों की मर्यादा समाप्त हो चुकी है; मुसलमान औरतें भी इस विपत्ति में क़ुर्आन पढ़ रही हैं और ख़ुदा से प्रार्थना कर रही हैं । ऊँची जाति तथा नीची जाति वाली एवं अन्य दूसरी सब स्त्रियों पर अत्याचार हो रहे हैं । नानक का कथन है कि सब ओर विलाप का संगीत

हो रहा है और लहू का केसर छिड़का जा रहा है ॥ १ ॥ (सब कुछ प्रभु की रज़ा अनुसार होता है, इसलिए) लाशों से भरे इस शहर में बैठकर भी नानक उस मालिक-प्रभु के गुण ही गाता है। (हे लालो!) तू भी प्रभु के इस अटल नियम को उच्चरित कर कि जिस मालिक-प्रभु ने सृष्टि उत्पादित की है, उसी ने इसे माया-मोह में प्रवृत्त किया है और वह आप निर्लिप्त रहकर सब घटनाओं को देख रहा है। वह मालिक-प्रभु अटल नियमों वाला है, उसका न्याय अटल है, वह भविष्य में भी अटल नियम और अटल न्याय का व्यवहार करेगा। अब सैयदपुर में मनुष्य का शरीर रूपी वस्त्र टुकड़े-टुकड़े हो रहा है। यह एक ऐसी भयानक दुर्घटना है, जिसे हिन्दुस्तान कभी नहीं भुला सकेगा। आज मुग़ल लोग सम्वत् अठहत्तर में आए हैं, ये सम्वत् सत्तानबें में चले जाएँगे, कोई दूसरा शूरवीर इनके विरुद्ध उठ खड़ा होगा। नानक तो सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति करता है; आजीवन यह गुणस्तुति करता रहेगा, क्योंकि यह मनुष्य-जन्म की अवधि गुणस्तुति के लिए ही मिली है ॥ २ ॥ ३ ॥ ५ ॥

तिलंग महला ४ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सभि आए हुकमि खसमाहु हुकमि सभ वरतनी। सचु साहिबु साचा खेलु सभु हरि धनी ॥ १ ॥ सालाहिहु सचु सभ ऊपरि हरि धनी। जिसु नाही कोइ सरीकु किसु लेखै हउ गनी ॥ रहाउ ॥ पउण पाणी धरती आकासु घर मंदर हरि बनी। विचि वरतै नानक आपि झूठु कहु किआ गनी ॥ २ ॥ १ ॥

हे भाई! समस्त जीव हुक्म अनुसार प्रभु-पति से ही (उद्भूत होकर) जगत में आए हैं, समस्त दुनिया उसी के हुक्म अनुसार क्रियान्वित है। वह मालिक सत्यस्वरूप है, उसका रचा हुआ यह जगत रूपी तमाशा सत्य है। सर्वत्र वह मालिक आप मौजूद है ॥ १ ॥ हे भाई! सत्यस्वरूप हरि की गुणस्तुति किया करो। वह हरि सर्वोपरि है और मालिक है। जो हरि अप्रतिम है, मैं किस गिनती में हूँ कि उसके गुण कह सकूँ ॥ रहाउ ॥ हे भाई! हवा, पानी, पृथ्वी, आकाश —ये सब परमात्मा के लिए घर बने हुए हैं। हे नानक! इन सबमें परमात्मा आप अवस्थित है। कहो कि इनमें से मैं किसको मिथ्या कहूँ? ॥ २ ॥ १ ॥

॥ तिलंग महला ४ ॥ नित निहफल करम कमाइ बफावै

दुरमतीआ। जब आणै वलवंच करि झूठु तब जाणै जगु जितीआ ॥ १ ॥ ऐसा बाजी सैसारु न चेतै हरि नामा। खिन महि बिनसै सभु झूठु मेरे मन धिआइ रामा ॥ रहाउ ॥ सा वेला चिति न आवै जितु आइ कंटकु कालु ग्रसै। तिसु नानक लए छडाइ जिसु किरपा करि हिरदै वसै ॥ २ ॥ २ ॥ ७ ॥

हे मन ! दुर्बुद्धि वाला मनुष्य सदैव वह काम करता है, जिससे कोई लाभ नहीं होता। ऐसे कार्य करने में उसे अहंकार भी हो जाता है, जैसे जब कोई ठगी करके, झूठ बोलकर कुछ धन ले आता है, तब वह समझता है कि उसने दुनिया को जीत लिया है ॥ १ ॥ हे मन ! जगत एक खेल के समान है, नश्वर है, एक क्षण में नष्ट हो जाता है, लेकिन विकृत बुद्धि वाला मनुष्य परमात्मा का नाम-स्मरण नहीं करता। हे मन ! तू तो परमात्मा का नाम स्मरण करता रह ॥ रहाउ ॥ हे मन ! विकारग्रस्त मनुष्य को वह समय नहीं भासता, जब दुःखदायक काल आकर पकड़ लेता है। हे नानक ! जिस मनुष्य के ह्रदय में कृपा करके परमात्मा आ बसता है, उसे मृत्यु के भय से मुक्ति मिल जाती है ॥ २ ॥ २ ॥ ७ ॥

तिलंग महला ५ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि॥ खाक नूर करदं आलम दुनीआइ। असमान जिमी दरखत आब पैदाइसि खुदाइ ॥ १ ॥ बंदे चसम दीदं फनाइ। दुनींआ मुरदार खुरदनी गाफल हवाइ ॥ रहाउ ॥ गैबान हैवान हराम कुसतनी मुरदार बखोराइ। दिल कबज कबजा कादरो दोजक सजाइ ॥ २ ॥ वली निआमति बिरादरा दरबार मिलक खानाइ। जब अजराईलु बसतनी तब चि कारे बिदाइ ॥ ३ ॥ हवाल मालूमु करदं पाक अलाह। बुगो नानक अरदासि पेसि दरवेस बंदाह ॥ ४ ॥ १ ॥

हे भाई ! चेतन ज्योति और अचेतन मिट्टी मिलाकर परमात्मा ने यह जगत बना दिया है। आसमान, पृथ्वी, वृक्ष, पानी (सब कुछ) परमात्मा की रचना है ॥ १ ॥ हे मनुष्य ! जो दृश्य है, वह नश्वर है; लेकिन दुनिया लोभ-लालच में भटकी हुई है और पराया हक़ (दूसरों की कमाई) खाती है ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! मूर्ख मनुष्य भूत, प्रेत और पशुओं के समान हराम खाता है। वह माया के पूर्ण प्रभाव में है। परमात्मा उसे नरक की सज़ा देता है ॥ २ ॥ हे भाई ! जब मृत्यु का

देवता इसे आकर बाँध लेता है, तब दुनिया से बिदा होते समय पालक पिता, भाई, दरबार, धन-दौलत, घर आदि सारे किस काम आएँगे ? ॥ ३ ॥ हे भाई ! पवित्र परमात्मा तमाम हाल जानता है। (हे नानक !) सन्तों की संगति में रहकर परमात्मा के द्वार पर प्रार्थना किया कर (ताकि तुम्हारी रक्षा हो सके) ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ तिलंग घरु २ महला ५ ॥ तुधु बिनु दूजा नाही कोइ। तू करतारु करहि सो होइ। तेरा जोरु तेरी मनि टेक। सदा सदा जपि नानक एक ॥ १ ॥ सभ ऊपरि पारब्रहमु दातारु। तेरी टेक तेरा आधारु ॥ रहाउ ॥ है तू है तू होवनहार। अगम अगाधि ऊच आपार। जो तुधु सेवहि तिन भउ दुखु नाहि। गुरपरसादि नानक गुण गाहि ॥ २ ॥ जो दीसै सो तेरा रूपु। गुण निधान गोविंद अनूप। सिमरि सिमरि सिमरि जन सोइ। नानक करमि परापति होइ ॥ ३ ॥ जिनि जपिआ तिस कउ बलिहार। तिस कै संगि तरै संसार। कहु नानक प्रभ लोचा पूरि। संत जना की बाछउ धूरि ॥ ४ ॥ २ ॥

हे प्रभु ! तुम समस्त जगत के उत्पादक हो। जो कुछ तुम करते हो, वही होता है। तुमसे अतिरिक्त कोई दूसरा कुछ कर सकनेवाला नहीं है। जीवों को तुम्हारा ही बल है, मन में तुम्हारा ही सहारा है। (इसलिए) हे नानक ! सदा उस एक प्रभु का नाम जपते रहो ॥ १ ॥ हे भाई ! सब जीवों का पालक परमात्मा सब जीवों का रक्षक भी है। हे प्रभु ! जीवों को तुम्हारा ही सहारा है, तुम्हारा ही आसरा है ॥ रहाउ ॥ हे अगम्य, अपरम्पार, सर्वोपरि और अनन्त प्रभु ! सर्वत्र, प्रत्येक पल तुम ही हो, तुम सत्यस्वरूप हो। हे प्रभु ! जो मनुष्य तुम्हें स्मरण करते हैं, उन्हें कोई भय, कोई दुःख स्पर्श नहीं कर सकता। हे नानक ! गुरु-कृपा द्वारा ही परमात्मा के गुण गाए जा सकते हैं ॥ २ ॥ हे गुणों के भण्डार, सुन्दर गोविन्द ! जो कुछ दृष्टिगत है, वह सब तुम्हारा ही स्वरूप है। हे मनुष्य ! हमेशा उस परमात्मा का स्मरण करता रह। हे नानक ! उस प्रभु का नाम-स्मरण उस प्रभु की कृपा द्वारा ही मिलता है ॥ ३ ॥ हे भाई ! जिस मनुष्य ने परमात्मा का नाम जपा है, उस पर बलिहारी होना चाहिए। उस मनुष्य की संगति में रहकर तमाम जगत संसार-समुद्र से पार उतर जाता है। नानक का कथन है कि हे प्रभु ! मेरी कामना पूर्ण करो। मैं तुम्हारे द्वार पर तुम्हारे सन्तों की चरणधूलि माँगता हूँ ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ तिलंग महला ५ घरु ३ ॥ मिहरवानु साहिबु मिहरवानु । साहिबु मेरा मिहरवानु । जीअ सगल कउ देइ दानु ॥ रहाउ ॥ तू काहे डोलहि प्राणीआ तुधु राखैगा सिरजणहारु । जिनि पैदाइसि तू कीआ सोई देइ आधारु ॥ १ ॥ जिनि उपाई मेदनी सोई करदा सार । घटि घटि मालकु दिला का सचा परवदगारु ॥ २ ॥ कुदरति कीम न जाणीऐ वडा वेपरवाहु । करि बंदे तू बंदगी जिचरु घट महि साहु ॥ ३ ॥ तू समरथु अकथु अगोचरु जीउ पिंडु तेरी रासि । रहम तेरी सुखु पाइआ सदा नानक की अरदासि ॥ ४ ॥ ३ ॥

हे भाई ! मेरा मालिक दयालु है। सदा दया करनेवाला है। वह सब जीवों को दान देता है ॥ रहाउ ॥ हे प्राणी ! तू क्यों घबराता है ? वह सर्जक प्रभु तेरी रक्षा करेगा। जिसने तुझे उत्पन्न किया है, वही सारी सृष्टि को आश्रय देता है ॥ १ ॥ जिस परमात्मा ने सृष्टि पैदा की है, वही देख-रेख भी करता है। प्रत्येक शरीर में अवस्थित प्रभु दिलों का मालिक है, वह सत्यस्वरूप है और सबकी देख-रेख करनेवाला है ॥ २ ॥ हे भाई ! उस मालिक की लीला का मूल्य समझा नहीं जा सकता, वह सर्वोपरि है, उसे किसी की ज़रूरत नहीं। हे प्राणी ! जब तक तुम्हारे शरीर में श्वास चलता है, तब तक उस मालिक की बन्दगी करते रहो ॥३॥ हे प्रभु ! तुम सर्वशक्तिमान् हो, तुम्हारे स्वरूप का वर्णन नहीं किया जा सकता, ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा तुझ तक पहुँच नहीं हो सकती। यह शरीर और प्राण तुम्हारी ही दी हुई पूँजी हैं, जिस मनुष्य पर तुम्हारी कृपा हो, उसे सुख मिलता है। नानक की भी सदा तुम्हारे द्वार पर यही प्रार्थना है (कि उसे तुम्हारे नाम-स्मरण का सुख मिले) ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ तिलंग महला ५ घरु ३ ॥ करते कुदरती मुसताकु । दीन दुनीआ एक तूही सभ खलक ही ते पाकु ॥ रहाउ ॥ खिन माहि थापि उथापदा आचरज तेरे रूप । कउणु जाणै चलत तेरे अंधिआरे महि दीप ॥ १ ॥ खुदि खसम खलक जहान अलह मिहरवान खुदाइ । दिनसु रैणि जि तुधु अराधे सो किउ दोजकि जाइ ॥ २ ॥ अजराईलु यारु बंदे जिसु तेरा आधारु । गुनह उसके सगल आफू तेरे जन देखहि दीदारु ॥ ३ ॥ दुनीआ चीज फिलहाल सगले सचु सुखु तेरा नाउ । गुर मिलि नानक बूझिआ सदा एक सु गाउ ॥ ४ ॥ ४ ॥

हे कर्तार ! तुम्हारी लीला देखकर मैं तुम्हारे दर्शन का इच्छुक हूँ। मेरी दुनियावी दौलत तुम्हीं हो। तुम समस्त सृष्टि से निर्लिप्त रहते हो ॥ रहाउ ॥ हे कर्तार ! तुम एक क्षण में जीवों को बनाकर नष्ट भी कर देते हो। तुम्हारे स्वरूप आश्चर्यजनक हैं। कोई जीव तुम्हारे कौतुकों को समझ नहीं सकता। तुम ही अँधेरे में प्रकाश हो ॥ १ ॥ हे अल्लाह, कृपालु प्रभु ! सारी सृष्टि के तुम आप ही मालिक हो। जो मनुष्य तुम्हारी आराधना करता है, वह नरक में कैसे जा सकता है ? ॥ २ ॥ हे प्रभु ! जिसको तुम्हारा सहारा मिल जाता है, मृत्यु का फ़रिश्ता उस मनुष्य का मित्र बन जाता है (क्योंकि) उस मनुष्य के सारे पाप क्षमा कर दिए जाते हैं ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! दुनिया के सारे पदार्थ नश्वर हैं। सत्य-स्वरूप सुख तुम्हारा नाम है। नानक का कथन है कि यह बात मैंने गुरु को मिलकर समझी है, इसलिए मैं सदैव एक परमात्मा का यशगायन करता रहता हूँ ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ तिलंग महला ५ ॥ मीरां दानां दिल सोच। मुहबते मनि तनि बसै सचु साह बंदी मोच ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दीदने दीदार साहिब कछु नही इस का मोलु। पाक परवदगार तू खुदि खसमु वडा अतोलु ॥ १ ॥ दस्तगीरी देहि दिलावर तूही तूही एक। करतार कुदरति करण खालक नानक तेरी टेक ॥२॥५॥

हे सयाने सरदार ! हृदयों को पवित्र करनेवाले, सत्यस्वरूप और बन्धनों से मुक्त करनेवाले प्रभु ! तुम्हारा प्रेम मेरे तन, मन में अवस्थित है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मालिक ! तुम्हारा दर्शन एक अमूल्य देन है, इसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। हे पवित्र और पालक प्रभु ! तुम स्वयं हमारे पति हो, तुम सर्वोपरि हो, तुम्हारी महानता को मूल्यांकित नहीं किया जा सकता ॥ १ ॥ हे शूरवीर प्रभु ! मेरी सहायता करो, एक तुम ही मेरा आसरा हो। नानक का कथन है कि हे कर्तार, प्रकृति के सृजनहार, सृष्टि के स्वामी ! 'मुझे तुम्हारा ही आसरा है' ॥ २ ॥ ५ ॥

तिलंग महला १ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

जिनि कीआ तिनि देखिआ किआ कहीऐ रे भाई। आपे जाणै करे आपि जिनि वाड़ी है लाई ॥ १ ॥ राइसा पिआरे का राइसा जितु सदा सुखु होई ॥ रहाउ ॥ जिनि रंगि कंतु न

राविआ सा पछो रे ताणी । हाथ पछोड़ै सिरु धुणै जब रैंणि विहाणी ।। २ ।। पछोतावा ना मिलै जब चूकैगी सारी । ता फिरि पिआरा रावीऐ जब आवैगो वारी ।। ३ ।। कंतु लीआ सोहागणी मै ते वधवीएह । से गुण मुझै न आवनी कै जी दोसु धरेह ।। ४ ।। जिनी सखी सहु राविआ तिन पूछउगी जाए । पाइ लगउ बेनती करउ लेउगी पंथु बताए ।। ५ ।। हुकमु पछाणै नानका भउ चंदनु लावै । गुण कामण कामणि करै तउ पिआरे कउ पावै ।। ६ ।। जो दिलि मिलिआ सु मिलि रहिआ मिलिआ कहीऐ रे सोई । जे बहुतेरा लोचीऐ बाती मेलु न होई ।। ७ ।। धातु मिलै फुनि धातु कउ लिव लिवै कउ धावै । गुरपरसादी जाणीऐ तउ अनभउ पावै ।। ८ ।। पानावाड़ी होइ घरि खरु सार न जाणै । रसीआ होवै मुसक का तब फूलु पछाणै ।। ९ ।। अपिउ पीवै जो नानका भ्रमु भ्रमि समावै । सहजे सहजे मिलि रहै अमरा पदु पावै ।। १० ।। १ ।।

हे भाई ! जिस परमात्मा ने यह जगत बनाया है, वही इसकी रक्षा भी करता है। यह नहीं कहा जा सकता (कि वह देख-रेख कैसे करता है)। जिसने यह जगत रूपी उद्यान बनाया है, वह आप ही इसकी ज़रूरतें जानता है और उन्हें पूर्ण भी करता है ।। १ ।। हे प्यारे भाई ! परमात्मा की गुणस्तुति करनी चाहिए, क्योंकि इसके द्वारा सदैव आत्मिक आनन्द अनुभूत होता है ।। रहाउ ।। जिस जीव-स्त्री ने प्रेमपूर्वक प्रभु-पति का स्मरण नहीं किया, वह आखिरकार पश्चात्ताप करती है। जब उसकी ज़िन्दगी रूपी रात्रि बीत जाती है, तब वह अपने हाथ मलती है और सिर पटकती है ।। २ ।। लेकिन जब जीवन-रात्रि समाप्त हो जाएगी, तब पश्चात्ताप करने से कुछ प्राप्त नहीं होगा। उस प्यारे प्रभु को फिर तब ही स्मरण किया जा सकेगा, जब पुनः मनुष्य-जीवन मिलेगा ।। ३ ।। जिन स्त्रियों ने प्रभु-पति को पा लिया है, वे मुझसे अधिक भाग्यशालिनी हैं। उन स्त्रियों के गुण (जिनसे प्रभु का दर्शन मिलता है) मेरे भीतर नहीं उपजते, इसलिए मैं किस पर दोष लगाऊँ ? ।। ४ ।। मैं उन सहेलियों से जाकर पूछूँगी, जिन्होंने प्रभु-पति का मिलाप प्राप्त किया है। मैं उनके चरण स्पर्श करूँगी, मैं उनके सामने प्रार्थना करूँगी और प्रभु-प्राप्ति का मार्ग जानूँगी ।। ५ ।। हे नानक ! जब जीव-स्त्री प्रभु-पति की इच्छा को समझ लेती है, जब उसके भय का चन्दन अपने शरीर पर रमाती है, जब जीव-स्त्री पति की प्राप्ति के लिए गुणों के टोणे करती है, तब वह प्रभु-पति से मिलाप प्राप्त कर लेती है ।। ६ ।। हे भाई ! जो मनुष्य अपनी इच्छा

से प्रभु को मिला है, वह हमेशा प्रभु के साथ मिला रहता है। वही मनुष्य प्रभु-चरणों में मिला हुआ कहा जा सकता है। केवल कथनमात्र करने से प्रभु के साथ ऐक्य नहीं हो सकता, चाहे कितनी ही प्रबल कामना करते रहें ॥ ७ ॥ हे भाई! धातु गलकर धातु के साथ मिल जाती है, इसी प्रकार प्रेम, प्रेम की ओर आकर्षित होता है। जब गुरु की कृपा से यह सूझ होती है, तब मनुष्य भयरहित प्रभु को प्राप्त कर लेता है ॥ ८ ॥ घर में पान की क्यारी भी लगी हो, तो भी गधे को उसकी क़द्र नहीं होती। सुगन्धि का प्रेमी व्यक्ति ही पुष्पों के साथ प्रेम करता है ॥ ९ ॥ हे नानक! जो मनुष्य आत्मिक जीवन देनेवाला नाम-जल पीता है, उसके भीतर की दुविधा भीतर ही भीतर समाप्त हो जाती है। वह सदा आत्मिक रूप में स्थिर हो जाता है। वह मनुष्य आध्यात्मिक पहुँच प्राप्त कर लेता है, वहाँ मृत्यु उसके निकट नहीं आती ॥ १० ॥ १ ॥

॥ तिलंग महला ४ ॥ हरि कीआ कथा कहाणीआ गुरि मीति सुणाईआ। बलिहारी गुर आपणे गुर कउ बलि जाईआ ॥ १ ॥ आइ मिलु गुरसिख आइ मिलु तू मेरे गुरू के पिआरे ॥ रहाउ ॥ हरि के गुण हरि भावदे से गुरू ते पाए। जिन गुर का भाणा मंनिआ तिन घुमि घुमि जाए ॥ २ ॥ जिन सतिगुरु पिआरा देखिआ तिन कउ हउ वारी। जिन गुर की कीती चाकरी तिन सद बलिहारी ॥ ३ ॥ हरि हरि तेरा नामु है दुख मेटणहारा। गुर सेवा ते पाईऐ गुरमुखि निसतारा ॥ ४ ॥ जो हरि नामु धिआइदे ते जन परवाना। तिन विटहु नानकु वारिआ सदा सदा कुरबाना ॥ ५ ॥ सा हरि तेरी उसतति है जो हरि प्रभ भावै। जो गुरमुखि पिआरा सेवदे तिन हरि फलु पावै ॥ ६ ॥ जिना हरि सेती पिरहड़ी तिना जीअ प्रभ नाले। ओइ जपि जपि पिआरा जीवदे हरि नामु समाले ॥ ७ ॥ जिन गुरमुखि पिआरा सेविआ तिन कउ घुमि जाइआ। ओइ आपि छुटे परवार सिउ सभु जगतु छडाइआ ॥ ८ ॥ गुरि पिआरै हरि सेविआ गुरु धंनु गुरु धंनो। गुरि हरि मारगु दसिआ गुर पुंनु वड पुंनो ॥ ९ ॥ जो गुरसिख गुरु सेवदे से पुंन पराणी। जनु नानकु तिन कउ वारिआ सदा सदा कुरबाणी ॥ १० ॥ गुरमुखि सखी सहेलीआ से आपि हरि भाईआ। हरि दरगह पैनाईआ हरि आपि गलि लाईआ ॥ ११ ॥

हे गुरुसिक्ख ! गुरु ने मुझे परमात्मा की गुणस्तुति की बातें सुनाई हैं, इसलिए मैं अपने गुरु पर बार-बार बलिहारी जाता हूँ ।। १ ।। हे मेरे गुरु के प्यारे सिक्ख ! मुझे आकर मिल, मुझे अवश्य आकर मिल ।। रहाउ ।। परमात्मा के गुणों का गान परमात्मा को प्रिय लगता है । मैंने वह गुण गुरु द्वारा सीख लिये हैं । मैं उन सौभाग्यवती स्त्रियों पर बार-बार बलिहारी जाता हूँ, जिन्होंने गुरु के हुक्म को सहर्ष स्वीकारा है ।। २ ।। मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ, जिन्होंने प्यारे गुरु का दर्शन किया है, जिन्होंने गुरु द्वारा बतलाई सेवा की है ।। ३ ।। हे प्रभु ! तुम्हारा नाम सारे दुःख दूर करने में समर्थ है, लेकिन यह नाम गुरु का शरणागत होने से मिलता है । गुरु के सान्निध्य में रहने से ही संसार-समुद्र से पार उतरा जा सकता है ।। ४ ।। जो मनुष्य परमात्मा का नाम स्मरण करते हैं, वे मनुष्य सत्कृत होते हैं । नानक उन मनुष्यों पर बलिहारी जाता है, हमेशा बलिहारी जाता है ।। ५ ।। हे हरि ! तुम्हारी गुणस्तुति वही है, जो तुम्हें प्रिय लगती है । जो मनुष्य गुरु के सान्निध्य में रहकर प्यारे प्रभु की सेवा-भक्ति करते हैं, उन्हें प्रभु सुख रूपी फल देता है ।। ६ ।। हे भाई ! जिन मनुष्यों का प्रभु के साथ प्रेम हो जाता है, उनके मन प्रभु के चरणों में लगे रहते हैं । वे मनुष्य हमेशा प्रभु को स्मरण कर, प्रभु का नाम-स्मरण कर आत्मिक सुख प्राप्त करते हैं ।। ७ ।। मैं उन मनुष्यों पर बलिहारी जाता हूँ, जिन्होंने गुरु की शरण लेकर प्यारे प्रभु की सेवा-भक्ति की है । वे मनुष्य स्वयं परिवार सहित मुक्त हुए और सारा संसार भी उन्होंने बचा लिया ।। ८ ।। हे भाई ! गुरु सराहनीय है (सचमुच) गुरु प्रशंसनीय है, प्यारे गुरु के द्वारा मैंने परमात्मा की सेवा-भक्ति प्रारम्भ की है । मुझे गुरु ने परमात्मा के मिलाप का मार्ग बताया है । मुझ पर गुरु का उपकार है, गुरु का अत्यन्त उपकार है ।। ९ ।। गुरु की बतलाई सेवा में प्रवृत्त होनेवाले गुरुमुख भाग्यशाली हैं । दास नानक उन पर बलिहारी है, सदैव बलिहारी है ।। १० ।। गुरु की शरण लेकर (सत्संगिनी) सहेलियाँ (ऐसी हो जाती हैं कि) वे प्रभु को भली लगती हैं । परमात्मा की सेवा में उन्हें आदर मिलता है, परमात्मा उन्हें सदैव अपने गले से लगाता है ।। ११ ।।

जो गुरमुखि नामु धिआइदे तिन दरसनु दीजै । हम तिन के चरण पखालदे धूड़ि घोलि घोलि पीजै ।। १२ ।। पान सुपारी खातीआ मुखि बीड़ीआ लाईआ । हरि हरि कदे न चेतिओ जमि पकड़ि चलाईआ ।। १३ ।। जिन हरि नामा हरि चेतिआ हिरदै उरिधारे । तिन जमु नेड़ि न आवई गुर सिख गुर पिआरे ।।१४।।

हरि का नामु निधानु है कोई गुरमुखि जाणै। नानक जिन सतिगुरु भेटिआ रंगि रलीआ माणै ॥ १५ ॥ सतिगुरु दाता आखीऐ तुसि करे पसाओ। हउ गुर विटहु सद वारिआ जिनि दितड़ा नाओ ॥ १६ ॥ सो धंनु गुरू साबासि है हरि देइ सनेहा। हउ वेखि वेखि गुरू विगसिआ गुर सतिगुर देहा ॥ १७ ॥ गुर रसना अंम्रितु बोलदी हरि नामि सुहावी। जिन सुणि सिखा गुरु मंनिआ तिना भूख सभ जावी ॥ १८ ॥ हरि का मारगु आखीऐ कहु कितु बिधि जाईऐ। हरि हरि तेरा नामु है हरि खरचु लै जाईऐ ॥ १९ ॥ जिन गुरमुखि हरि आराधिआ से साह वड दाणे। हउ सतिगुर कउ सद वारिआ गुरबचनि समाणे ॥ २० ॥ तू ठाकुरु तू साहिबो तू है मेरा मीरा। तुधु भावै तेरी बंदगी तू गुणी गहीरा ॥ २१ ॥ आपे हरि इक रंगु है आपे बहुरंगी। जो तिसु भावै नानका साई गल चंगी ॥ २२ ॥ २ ॥

हे प्रभु ! जो मनुष्य गुरु की शरण लेकर तुम्हारा नाम स्मरण करते हैं, मुझे उनका दर्शन कराओ। मैं उनके चरण धोता रहूँ और उनकी चरणधूलि का आचमन करता रहूँ ॥ १२ ॥ हे भाई ! जो जीव-स्त्रियाँ (सांसारिक आसक्ति में तल्लीन रहती हैं) पान चबाती रहती हैं, जिन्होंने परमात्मा का नाम कभी स्मरण नहीं किया, उन्हें मृत्यु ने पकड़कर आगे कर लिया अर्थात् चौरासी लाख योनियों के चक्र में डाल दिया ॥१३॥ हे भाई ! जिन्होंने अपने हृदय में परमात्मा का नाम स्मरण किया, उन गुरु के प्यारे गुरमुखों के निकट मृत्यु का भय नहीं आता ॥ १४ ॥ परमात्मा का नाम ख़ज़ाना है, कोई विरला मनुष्य ही गुरु की शरण लेकर नाम में प्रवृत्त होता है। गुरु नानक का कथन है कि जिन मनुष्यों को गुरु मिलता है, वह (उनमें से हर जीव) हरि-नाम के प्रेम में प्रवृत्त होकर आत्मिक आनन्द पाता है ॥ १५ ॥ गुरु को नाम की देन देनेवाला है। गुरु प्रसन्न होकर नाम देने की कृपा करता है। मैं हमेशा उस गुरु पर बलिहारी जाता हूँ, जिसने मुझे परमात्मा का नाम दिया है ॥ १६ ॥ हे भाई ! वह गुरु सराहनीय है; वह परमात्मा के नाम-स्मरण की शिक्षा देता है, इसलिए उसकी सराहना करनी चाहिए। मैं तो गुरु को देख-देखकर, गुरु की सुन्दर आकृति देखकर प्रसन्न हो रहा हूँ ॥ १७ ॥ गुरु की जिह्वा आत्मिक जीवन देनेवाला हरि-नाम उच्चरित करती है, हरि-नाम के कारण शोभा पाती है। जिन्होंने गुरु-उपदेश सुनकर गुरु पर विश्वास किया है, उनकी (माया-सम्बन्धी) सारी भूख दूर हो गई है ॥ १८ ॥ हे भाई ! (नाम-स्मरण) परमात्मा के मिलाप का मार्ग कहा जाता है। हे भाई ! कहो कि इस

मार्ग पर किस तरीके से चला जा सकता है ? हे प्रभु ! तुम्हारा नाम ही यात्रा-व्यय है, यह खर्च पल्ले में बाँधकर ही इस मार्ग पर चलना चाहिए ।। १९ ।। हे भाई ! जिन मनुष्यों ने गुरु की शरण लेकर परमात्मा का नाम जपा है, वे बड़े समझदार साहूकार बन गए हैं। मैं सदा गुरु पर बलिहारी जाता हूँ, क्योंकि गुरु के उपदेश के द्वारा ही परमात्मा में लीन हुआ जा सकता है ।। २० ।। हे प्रभु ! तुम मेरे मालिक हो, मेरे साहिब हो, तुम ही मेरे बादशाह हो। यदि तुम्हें उपयुक्त लगे तभी भक्ति सम्भव हो सकती है। तुम गुणों के भण्डार और गहन-गम्भीर हो ।। २१ ।। गुरु नानक का कथन है कि परमात्मा स्वयं एक मात्र अस्तित्व है और आप ही अनेक रूपों वाला भी है। जो बात उसे भली लगती है, उसी में जीवों का भला निहित होता है ।। २२ ।। २ ।।

तिलंग महला ९ काफी

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। चेतना है तउ चेत लै निसि दिन मै प्रानी। छिनु छिनु अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी ।। १ ।। रहाउ ।। हरि गुन काहि न गावही मूरख अगिआना। झूठै लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना ।। १ ।। अजहू कछु बिगरिओ नही जो प्रभ गुन गावै। कहु नानक तिह भजन ते निरभै पदु पावै ।। २ ।। १ ।।

हे मनुष्य ! यदि परमात्मा का नाम स्मरण करना है, तो दिन-रात्रि उसमें प्रवृत्त हो जाओ। अन्यथा जैसे टूटे हुए घड़े से पानी निकलता रहता है, उसी प्रकार एक-एक क्षण करके उम्र बीतती जा रही है ।। १ ।। रहाउ ।। हे मूर्ख ! तू प्रभु की गुणस्तुति के गीत क्यों नहीं गाता ? माया के झूठे लोभ में फँसकर तू मृत्यु की उपेक्षा क्यों करता है ? ।। १ ।। लेकिन (नानक की) धारणा है कि परमात्मा का गुणगान (चाहे कितनी ही उम्र बीत जाए) कभी भी अहितकर नहीं होता। (क्योंकि) उस परमात्मा के भजन के प्रभाव से मनुष्य ऐसा ऊँचा आत्मिक स्थान प्राप्त कर लेता है, जहाँ कोई भय असर नहीं करता ।। २ ।। १ ।।

।। तिलंग महला ९ ।। जाग लेहु रे मना जाग लेहु कहा गाफल सोइआ। जो तन उपजिआ संग ही सो भी संग न होइआ ।। १ ।। रहाउ ।। मात पिता सुत बंध जन हितु जा सिउ कीना। जीउ छूटिओ जब देह ते डारि अगनि मै दीना ।। १ ।।

जीवत लउ बिउहारु है जग कउ तुम जानउ। नानक हरि गुन गाइ लै सभ सुफन समानउ ॥ २ ॥ २ ॥

हे मन ! चेतना में आ ! तू क्यों लापरवाह होकर सो रहा है ? जो शरीर जीव के साथ ही पैदा होता है, वह भी आखिरकार साथ नहीं जाता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ देख, माँ, बाप, पुत्र, सम्बन्धीगण —जिनके साथ मनुष्य तमाम उम्र स्नेह करता रहता है; (वे भी) आत्मा के शरीर से अलग होने पर इसे अग्नि में डाल देते हैं ॥ १ ॥ गुरु नानक का कथन है कि जगत को स्वप्नवत् समझ। यहाँ का लेन-देन जीवन-चेतना तक ही सीमित है। (इसलिए) आजीवन परमात्मा के गुण गाता रह ॥ २ ॥ २ ॥

॥ तिलंग महला ९ ॥ हरि जसु रे मना गाइ लै जो संगी है तेरो। अउसरु बीतिओ जातु है कहिओ मान लै मेरो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संपति रथ धन राज सिउ अति नेहु लगाइओ। काल फास जब गलि परी सभ भइओ पराइओ ॥ १ ॥ जानि बूझ कै बावरे तै काजु बिगारिओ। पाप करत सुकचिओ नही नह गरबु निवारिओ ॥ २ ॥ जिह बिधि गुर उपदेसिआ सो सुनु रे भाई। नानक कहत पुकारि कै गहु प्रभ सरनाई ॥ ३ ॥ ३ ॥

हे मन ! परमात्मा की गुणस्तुति के गीत गाया कर। यह गुणस्तुति ही तुम्हारा वास्तविक साथी है। मेरा वचन मान ले। उम्र का समय बीतता जा रहा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मन ! मनुष्य धन-पदार्थ, रथ, माल, राज्य आदि के साथ अत्यन्त नेह करता है। लेकिन जब मृत्यु की फाँसी गले में पड़ जाती है, तब हरेक चीज पराई हो जाती है ॥ १ ॥ हे मूर्ख मनुष्य ! यह सब कुछ जानता-समझता हुआ भी तू अपना काम बिगाड़ रहा है। तू पाप करता हुआ संकोच नहीं करता, (यही नहीं) तू अहंकार भी दूर नहीं करता ॥ २ ॥ गुरु नानक का कथन है कि हे भाई ! गुरु ने जिस प्रकार शिक्षा दी है, वह श्रवण कर (और) प्रभु की शरण ले ॥ ३ ॥ ३ ॥

तिलंग बाणी भगता की कबीर जी

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ बेद कतेब इफतरा भाई दिल का फिकरु न जाइ। टुकु दमु करारी जउ करहु हाजिर हजूरि खुदाइ ॥ १ ॥ बंदे खोजु दिल हर रोज ना फिरु परेसानी माहि।

इह जु दुनीआ सिहरु मेला दसतगीरी नाहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दरोगु पड़ि पड़ि खुसी होइ बेखबर बादु बकाहि । हकु सचु खालकु खलक मिआने सिआम मूरति नाहि ॥ २ ॥ असमान म्याने लहंग दरीआ गुसल करदन बूद । करि फकरु दाइम लाइ चसमे जह तहा मउजूदु ॥ ३ ॥ अलाह पाकं पाक है सक करउ जे दूसर होइ । कबीर करमु करीम का उहु करै जानै सोइ ॥ ४ ॥ १ ॥

हे भाई ! वेदों-उपनिषदों और क़ुर्आन के उदाहरण देकर और बढ़-चढ़कर बातें करने से मन का भय दूर नहीं होता । यदि तुम अपने मन को पल मात्र भी नियन्त्रित कर लो, तो तुम्हें सबमें परमात्मा व्याप्त दीख पड़ेगा ॥ १ ॥ हे भाई ! अपने मन को प्रतिपल खोजो । घबराहट में न भटको । यह जगत एक जादू-तुल्य है, एक तमाशा-सा है (इस सम्बन्ध में वाद-विवाद से) कुछ भी मिलनेवाली चीज़ नहीं है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अज्ञानी लोगों ने पढ़-पढ़कर (जो लिखा है, वह) झूठ है; वे प्रसन्न हो-होकर वाद-विवाद करते हैं । सत्यस्वरूप परमात्मा जन-मानस में ही अवस्थित है, (न वह कहीं आसमान पर बैठा है और) न वह परमात्मा कृष्ण की मूर्ति में है ॥२॥ वह प्रभु रूपी नदी तुम्हारे अन्तःकरण में लहरें मार रही है, तुम्हें उसमें स्नान करना था । अब तू हमेशा उससे प्रार्थना कर, अनासक्ति की ऐनक लगाकर देख, कि वह प्रभु सर्वत्र अवस्थित है ॥ ३ ॥ परमात्मा सबसे पवित्र हस्ती है । इस बात में मैं तो तब सन्देह करूँ, यदि कोई उस प्रभु के तुल्य हो (वह प्रभु अप्रतिम है) । हे कबीर ! इस रहस्य को वही मनुष्य समझ सकता है, जिसे वह समझने योग्य बनाए । यह कृपा उस कृपालु प्रभु की स्वेच्छा पर निर्भर है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ नामदेव जी ॥ मै अंधुले की टेक तेरा नामु खुंदकारा । मै गरीब मै मसकीन तेरा नामु है अधारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करीमां रहीमां अलाह तू गनीं । हाजरा हजूरि दरि पेसि तू मनीं ॥ १ ॥ दरीआउ तू दिहंद तू बिसीआर तू धनी । देहि लेहि एकु तूं दिगर को नही ॥ २ ॥ तूं दानां तूं बीनां मै बीचारु किआ करी । नामे चे सुआमी बखसंद तू हरी ॥ ३ ॥ १ ॥ २ ॥

हे मेरे बादशाह ! तुम्हारा नाम ही मुझ अन्धे की लकड़ी है, आश्रय है; मैं निर्धन हूँ और तुच्छ हूँ, तुम्हारा नाम ही मेरा सहारा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे अल्लाह, करीम, रहीम ! तुम ही अमीर हो, तुम प्रतिपल मेरे सामने हो (अब मुझे किसी और की ज़रूरत नहीं) ॥ १ ॥ तुम दया

के स्रोत हो, दाता हो, अत्यन्त धनिक हो। एक तुम ही जीवों को पदार्थ देते हो, तुम्हीं लेते हो। कोई दूसरा ऐसा नहीं (जो यह सामर्थ्य रखता हो) ॥ २ ॥ हे नामदेव के स्वामी ! तुम सब कुछ देनेवाले हो, तुम अन्तर्यामी हो और सबके काम देखनेवाले हो। हे हरि ! मैं तुम्हारा कौन-कौन सा गुण व्यक्त करूँ ? ॥ ३ ॥ १ ॥ २ ॥

हले यारां हले यारां खुसिखबरी। बलि बलि जांउ हउ बलि बलि जांउ। नीकी तेरी बिगारी आले तेरा नाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कुजा आमद कुजा रफती कुजा मेरवी। द्वारिका नगरी रासि बुगोई ॥ १ ॥ खूबु तेरी पगरी मीठे तेरे बोल। द्वारिका नगरी काहे के मगोल ॥ २ ॥ चंदीं हजार आलम एकल खानां। हम चिनी पातिसाह सांवले बरनां ॥ ३ ॥ असपति गजपति नरह नरिंद। नामे के स्वामी मीर मुकंद ॥४॥२॥३॥

हे सज्जन प्यारे ! तुम्हारी खबर शीतलता देनेवाली है। मैं तुम पर बलिहारी हूँ, क़ुर्बान हूँ। तुम्हारा नाम सबसे अधिक प्यारा है, (इसलिए इसके प्रभाव से) तुम्हारी दी हुई बेगार भी मीठी लगती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ न तू कहीं से आया, न तू कहीं गया और न तू कहीं जा रहा है, फिर भी द्वारिका नगरी में रास भी तुम स्वयं रचाते हो अर्थात् कृष्णजी भी तुम्हीं हो ॥ १ ॥ तुम्हारी पगड़ी सुन्दर है और तुम्हारे वचन मीठे हैं। तुम न केवल द्वारिका में हो और न ही केवल मुसलमानों के धार्मिक स्थान मक्का में हो (अर्थात् तुम सर्वत्र हो) ॥ २ ॥ सृष्टि के कई हज़ार मण्डलों के तुम अकेले ही मालिक हो। हे बादशाह ! ऐसा ही साँवले रंग वाला कृष्ण है अर्थात् कृष्ण भी तुम आप ही हो ॥ ३ ॥ हे नामदेव के प्रभु-पति ! तुम आप ही मीर हो, तुम आप ही कृष्ण हो, तुम ही सूर्यदेवता हो, तुम ही इन्द्र हो और तुम आप ही ब्रह्मा हो ॥ ४ ॥ २ ॥ ३ ॥

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

रागु सूही महला १ चउपदे घरु १ ॥ भांडा धोइ बैसि धूपु देवहु तउ दूधै कउ जावहु। दूधु करम फुनि सुरति समाइणु होइ निरास जमावहु ॥ १ ॥ जपहु त एको नामा। अवरि निराफल कामा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इहु मनु ईटी हाथि करहु फुनि

नेत्रउ नीद न आवै। रसना नामु जपहु तब मथीऐ इन बिधि अंम्रितु पावहु ॥ २ ॥ मनु संपटु जितु सतसरि नावणु भावन पाती त्रिपति करे। पूजा प्राण सेवकु जे सेवे इन्ह बिधि साहिबु रवतु रहै ॥ ३ ॥ कहदे कहहि कहे कहि जावहि तुम सरि अवरु न कोई। भगतिहीणु नानकु जनु जंपै हउ सालाही सचा सोई ॥ ४ ॥ १ ॥

(मक्खन प्राप्त करने के लिए) तुम पहले बर्तन धोकर, फिर उसे धूप देकर दूध लेने जाते हो, तब इसमें खट्टा लगाते हो। (इसी प्रकार नाम-अमृत पाने को) दैनिक कर्म-कर्तव्य दूध है, प्रभु-चरणों में सुरति लगाए रखना दूध में जामन लगाने के समान है। इस प्रकार सांसारिक आकांक्षाओं से ऊपर उठो। इस प्रकार निष्काम भाव का दूध जमाओ ॥ १ ॥ केवल प्रभु-नाम का जाप करो, क्योंकि अन्य सब कार्य व्यर्थ हैं (इसी से नामामृत मिलता है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस मन को नियन्त्रित करो। (आत्मिक जीवन के लिए मन रूपी) गोटियाँ (रस्सी में बँधी लकड़ी की डंडियाँ) हाथ में पकड़ो। माया-मोह की निद्रा का प्रभाव मन पर न हो (यह रस्सी है)। जिह्वा द्वारा परमात्मा का नाम जपो। (जैसे-जैसे नाम जपोगे) त्यों-त्यों (इस दैनिक कृत्य रूपी दूध का) मन्थन होता रहेगा। इन तरीक़ों से (दैनिक कृत्य करते हुए ही) नाम-अमृत प्राप्त कर लोगे ॥ २ ॥ यदि जीव अपने मन को प्रभु के निवास का मंजूषा बना ले और (उसमें प्रभु का नाम टिकाकर रखे) फिर उसे (मन को) सत्संगति रूपी सरोवर में स्नान कराए, (मन में अवस्थित प्रभु को) श्रद्धा रूपी पत्रों (पूजा में चढ़ाए बिल्व-पत्रों के समान) से प्रसन्न करे। यदि जीव सेवक बनकर अहंत्वभाव छोड़कर प्रभु की सेवा करे, तो इन तरीक़ों से वह जीव मालिक-प्रभु को सदा मिला रहता है ॥ ३ ॥ (नाम-स्मरण के अतिरिक्त प्रभु-प्राप्ति के दूसरे उद्यम) बतानेवाले व्यक्ति जो-जो दूसरे उद्यम बतलाते हैं, वे बता-बताकर अपना जीवन-समय व्यर्थ गँवा जाते हैं। (क्योंकि) हे प्रभु! तुम्हारे स्मरण जैसा दूसरा कोई उद्यम नहीं है। गुरु नानक का कथन है कि वे प्रभु की भक्ति से रहित हैं, तो भी उनकी प्रार्थना है कि वे सत्यस्वरूप प्रभु की सदैव गुणस्तुति करते रहें ॥ ४ ॥ १ ॥

सूही महला १ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ अंतरि वसै न बाहरि जाइ। अंम्रितु छोडि काहे बिखु खाइ ॥ १ ॥ ऐसा गिआनु जपहु मन

मेरे। होवहु चाकर साचे केरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गिआनु धिआनु सभु कोई रवै। बांधनि बांधिआ सभु जगु भवै ॥ २ ॥ सेवा करे सु चाकरु होइ। जलि थलि महीअलि रवि रहिआ सोइ ॥ ३ ॥ हम नही चंगे बुरा नही कोइ। प्रणवति नानकु तारे सोइ ॥ ४ ॥ १ ॥ २ ॥

सेवक वह है, जिसका मन लौकिक रसों, पदार्थों की ओर नहीं दौड़ता, अपने भीतर ही मग्न रहता है; परमात्मा का नाम-अमृत छोड़कर वह विषयों का ज़हर नहीं खाता ॥ १ ॥ हे मन ! परमात्मा के साथ ऐसा अटूट सम्बन्ध जोड़, जिससे तू उस सत्यस्वरूप प्रभु की दासता में बना रह सके ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मौखिक रूप से तो सब कहते हैं कि उन्हें ज्ञान प्राप्त हो गया है, उनकी सुरति लगी हुई है, पर (वास्तव में) सारा जगत माया-मोह की फाँसी में बँधा हुआ भटक रहा है ॥ २ ॥ जो मनुष्य प्रभु का स्मरण करता है, वही प्रभु का सेवक बनता है; उस सेवक को प्रभु जल, थल और आकाश में सर्वत्र व्याप्त दिखता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक प्रार्थना करते हैं कि जो मनुष्य यह समझता है कि वह दूसरों से भला नहीं और कोई उससे बुरा नहीं, ऐसे सेवक को परमात्मा विकारों की लहरों से पार कर लेता है ॥ ४ ॥ १ ॥ २ ॥

सूही महला १ घरु ६

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ उजलु कैहा चिलकणा घोटिम कालड़ी मसु। धोतिआ जूठि न उतरै जे सउ धोवा तिसु ॥ १ ॥ सजण सेई नालि मै चलदिआ नालि चलंन्हि। जिथै लेखा मंगीऐ तिथै खड़े दिसंनि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोठे मंडप माड़ीआ पासहु चितवीआहा। ढठीआ कंमि न आवन्ही विचहु सखणीआहा ॥२॥ बगा बगे कपड़े तीरथ मंझि वसंन्हि। घुटि घुटि जीआ खावणे बगे ना कहीअन्हि ॥ ३ ॥ सिमल रुखु सरीरु मै मैजन देखि भुलंन्हि। से फल कंमि न आवन्ही ते गुण मै तनि हंन्हि ॥ ४ ॥ अंधुलै भारु उठाइआ डूगर वाट बहुतु। अखी लोड़ी ना लहा हउ चड़ि लंघा कितु ॥५॥ चाकरीआ चंगिआईआ अवर सिआणप कितु। नानक नामु समालि तूं बधा छुटहि जितु ॥६॥१॥३॥

काँसा धातु बड़ी चमकीली और साफ़-सुथरी होती है, किन्तु यदि उसे ज़ोर से रगड़ा जाय तो वह काली स्याही छोड़ती है। बार-बार धोने से

जूठन दूर नहीं होती, चाहे कोई सौ बार भी उसे धो ले ।। १ ।। (सज्जन ठग से बात करते हुए गुरुजी उसके नाम का सही तात्पर्य बताते हैं।) (सज्जन) वास्तविक मित्र वही हैं, जो सदा साथ रहें और यहाँ से जाते वक्त भी साथ दें (ताकि) जहाँ कर्मों का हिसाब माँगा जाता है (अर्थात् कठिन समस्या होती है) वहाँ निःसंकोच होकर हिसाब दे सकें (सहायक बनें) ।। १ ।। रहाउ ।। घरों, मन्दिरों, महलों के चारों तरफ़ की दीवारों पर भले चित्रकारी हुई हो, किन्तु यदि वे भीतर से खँडहर बन गए हों तो किसी काम नहीं आते ।। २ ।। बगुले के पंख सफ़ेद होते हैं, वे रहते भी तीर्थों पर हैं, लेकिन जीवों को गले से घोटकर खानेवाले (वे बगुले) साफ़-सुथरे नहीं कहे जा सकते ।। ३ ।। जैसे सेमल का वृक्ष है, वैसे ही मेरा शरीर है। फलों को देखकर तोते धोखा खा जाते हैं, लेकिन वे तोते के किसी काम नहीं आते (बिल्कुल) वैसे ही गुण मेरे शरीर में हैं (जो व्यर्थ हैं) ।। ४ ।। मेरे नेत्र अन्धे हैं, उस पर मैंने बड़ा बोझ उठाया हुआ है और आगे पहाड़ी रास्ता है। आँखों से खोजने पर भी मैं मार्ग नहीं प्राप्त कर सकता, फिर क्योंकर पहाड़ी पर चढ़कर मैं पार उतरूँ ? ।। ५ ।। हे नानक ! दुनिया के लोगों की खुशामदें, लोकदिखावे और चालाकियाँ किसी काम नहीं आ सकतीं, परमात्मा का नाम ही अपने हृदय में सुरक्षित रख। माया-मोह में बँधा हुआ तू इस नाम-स्मरण के द्वारा ही मुक्ति पा सकेगा (यहाँ गुरुजी सब अवगुण अपने में बताकर सज्जन को शर्मिन्दा करते हैं) ।। ६ ।। १ ।। ३ ।।

।। सूही महला १ ।। जप तप का बंधु बेड़ुला जितु लंघहि वहेला । ना सरवरु ना ऊछलै ऐसा पंथु सुहेला ।। १ ।। तेरा एको नामु मंजीठड़ा रता मेरा चोला सद रंग ढोला ।।१।।रहाउ।। साजन चले पिआरिआ किउ मेला होई । जे गुण होवहि गंठड़ीऐ मेलेगा सोई ।। २ ।। मिलिआ होइ न वीछुड़ै जे मिलिआ होई । आवागउणु निवारिआ है साचा सोई ।। ३ ।। हउमै मारि निवारिआ सीता है चोला । गुरबचनी फलु पाइआ सह के अंम्रित बोला ।। ४ ।। नानकु कहै सहेलीहो सहु खरा पिआरा । हम सह केरीआ दासीआ साचा खसमु हमारा ।। ५ ।। २ ।। ४ ।।

हे मनुष्य ! प्रभु-स्मरण का सुन्दर-सा बेड़ा तैयार करो, जिसके माध्यम से तुम शीघ्र पार उतर जाओगे। स्मरण द्वारा तेरा जीवन-मार्ग ऐसा सहज हो जाएगा कि तेरे मार्ग में न यह संसार-समुद्र आएगा और न ही इसका मोह तेरे भीतर चंचलता पैदा करेगा ।। १ ।। हे मित्र (-प्रभु) तुम्हारा नाम ही मजीठ है, जिसके पक्के रंग से मेरा आत्मिक चोला रँग

गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे सज्जन ! जीवन-यात्रा के प्यारे यात्री ! प्रभु के साथ मिलाप कैसे होता है ? (इसका एक ही रास्ता है) यदि पास में गुण हों तो परमात्मा स्वयं ही अपने साथ मिला लेता है ॥ २ ॥ जो जीव प्रभु-चरणों में अनुरक्त होता है और यदि वह सचमुच अनुरक्त है, तो उसका मिलन कभी भंग नहीं होता । उसका जन्म-मरण का चक्र समाप्त हो जाता है, उसे सर्वत्र वह सत्यस्वरूप प्रभु ही दिखता है ॥ ३ ॥ जिस जीव ने अहंत्वभाव दूर कर अहंकार दूर किया है और (प्रभु-मिलन का चोला पहना है) अपना आप सँवार लिया है, सतिगुरु की शिक्षा पर चलकर उसे प्रभु-पति की गुणस्तुति के फल रूपी वचन प्राप्त होते हैं, जो जीवन देने के योग्य हैं ॥ ४ ॥ गुरु नानक का कथन है कि हे गुरुमुख सहेलियो ! स्मरण द्वारा प्रभु-पति बहुत प्यारा लगने लगता है । (वास्तव में) हम प्रभु-पति की दासियाँ हैं और वह प्रभु-पति हमेशा हमारी देखभाल करनेवाला (संरक्षक) है ॥ ५ ॥ २ ॥ ४ ॥

॥ सूही महला १ ॥ जिन कउ भांडै भाउ तिना सवारसी । सूखी करै पसाउ दूख विसारसी । सहसा मूले नाहि सरपर तारसी ॥ १ ॥ तिन्हा मिलिआ गुरु आइ जिन कउ लीखिआ । अंम्रितु हरि का नाउ देवै दीखिआ । चालहि सतिगुर भाइ भवहि न भीखिआ ॥ २ ॥ जाकउ महलु हजूरि दूजे निवै किसु । दरि दरवाणी नाहि मूले पुछ तिसु । छुटै ता कै बोलि साहिब नदरि जिसु ॥ ३ ॥ घले आणे आपि जिसु नाही दूजा मतै कोइ । ढाहि उसारे साजि जाणै सभ सोइ । नाउ नानक बखसीस नदरी करमु होइ ॥ ४ ॥ ३ ॥ ५ ॥

जिन जीवों को हृदय रूपी बर्तन में प्रभु प्रेम की भिक्षा देता है, उनका जीवन सुन्दर होता है । उन्हें सुख मिलता है और वे दुःख-मुक्त हो जाते हैं । इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं कि प्रभु ऐसे जीवों को अवश्य संसार-समुद्र से पार कर देता है ॥ १ ॥ जिन व्यक्तियों को भाग्यवश प्रभु-कृपा मिलती है, उन्हें गुरु की प्राप्ति हो जाती है । गुरु उन्हें प्रभु का आत्मिक जीवन देनेवाला नाम शिक्षा के रूप में देता है । वे व्यक्ति जीवन-यात्रा में गुरु की शिक्षा के अनुसार चलते हैं और इधर-उधर नहीं भटकते ॥ २ ॥ जिस व्यक्ति को परमात्मा की सेवा में स्थान मिल जाता है, वह किसी दूसरे के समक्ष मन्नतें नहीं करता । परमात्मा के द्वार पर द्वारपालों द्वारा उन्हें तनिक भी बाधा नहीं होती; क्योंकि जिस गुरु पर मालिक-प्रभु की कृपादृष्टि है, उस गुरु की शिक्षा पर चलकर वह व्यक्ति विकारों से मुक्त हो चुका होता है ॥ ३ ॥ सब प्रकार के उपदेशों

से परे परमात्मा आप ही जीवों को जगत में भेजता है, आप ही वापस बुला लेता है। प्रभु आप ही सृष्टि का निर्माण करता है और स्वयं ही विनाश भी करता है। वह सब कुछ आप ही सृजन करने की सामर्थ्य रखता है। हे नानक ! जिस मनुष्य पर कृपादृष्टि करनेवाले प्रभु की कृपा हो जाती है, उसे दान-रूप में उसका नाम मिलता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ ५ ॥

॥ सूही महला १ ॥ भांडा हछा सोइ जो तिसु भावसी। भांडा अति मलीणु धोता हछा न होइसी। गुरू दुआरै होइ सोझी पाइसी। एतु दुआरै धोइ हछा होइसी। मैले हछे का वीचारु आपि वरताइसी। मतु को जाणै जाइ अगै पाइसी। जेहे करम कमाइ तेहा होइसी। अंम्रितु हरि का नाउ आपि वरताइसी। चलिआ पति सिउ जनमु सवारि वाजा वाइसी। माणसु किआ वेचारा तिहु लोक सुणाइसी। नानक आपि निहाल सभि कुल तारसी ॥ १ ॥ ४ ॥ ६ ॥

वही हृदय पवित्र है, जो उस परमात्मा को भला लगता है। यदि मनुष्य का हृदय बहुत गन्दा है अर्थात् विकृत है, तो तीर्थ आदि पर बाहर से स्नान करने से हृदय भीतर से शुद्ध नहीं हो सकता। गुरु के द्वार पर प्रार्थना करने से ही स्वयं को पवित्र करने की सुबुद्धि मिलती है, गुरु के द्वार पर रहकर विकारों का मैल धोने से हृदय पवित्र होता है। (गुरु के द्वार पर जाने से) प्रभुकृपा-वश भले-बुरे का विवेक जाग्रत् होता है। कोई जीव यह न समझ ले कि यहाँ से खाली हाथ परलोक में जाकर (स्वयं को पवित्र करने की समझ) मिलेगी। (वास्तव में) मनुष्य जैसे-जैसे कर्म करता है, वह वैसा ही बन जाता है। प्रभु आत्मिक जीवन देनेवाला अपना नाम आप देता है। (नाम पानेवाला) मनुष्य सदाचारी जीवन जीकर, प्रतिष्ठा पाकर यहाँ से जाता है, वह अपनी शोभा का बाजा (यहाँ) बजा जाता है। किसी एक मनुष्य के सम्मुख ही नहीं, तीनों लोकों में परमात्मा उसकी शोभा प्रसरित करता है। हे नानक ! वह मनुष्य हमेशा प्रसन्नचित्त रहता है और अपने सारे वंश की मुक्ति का कारण बनता है ॥१॥४॥६॥

॥ सूही महला १ ॥ जोगी होवै जोगवै भोगी होवै खाइ। तपीआ होवै तपु करे तीरथि मलि मलि नाइ ॥ १ ॥ तेरा सदड़ा सुणीजै भाई जे को बहै अलाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसा बीजै सो लुणे जो खटे सुो खाइ। अगै पुछ न होवई जे सणु नीसाणै जाइ ॥ २ ॥ तैसो जैसा काढीऐ जैसी कार कमाइ। जो दमु चिति न आवई सो दमु बिरथा जाइ ॥ ३ ॥ इहु तनु

वेची बै करी जे को लए विकाइ। नानक कंमि न आवई जितु तनि नाही सचा नाउ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७ ॥

जो मनुष्य योगी बन जाता है, वह योगसाधना करता है। जो मनुष्य गृहस्थी है, वह भोगों में ही मस्त है। जो मनुष्य तपस्वी बनता है, वह सदा तपस्या ही करता है और तीर्थों पर जाकर मल-मलकर स्नान करता है ॥ १ ॥ (किन्तु) हे प्यारे प्रभु! मैं तो तुम्हारे नाम का गुणगान सुनना चाहता हूँ, यदि कोई मेरे पास बैठकर सदा यही सुनाता रहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनुष्य जैसा बीज बोता है, वैसा ही काटता है। जो कुछ कमाई करता है, वही इस्तेमाल करता है। यदि मनुष्य परमात्मा की गुणस्तुति का यात्रा-व्यय लेकर यहाँ से जाए, तो आगे प्रभु के द्वार पर उसे रोक-टोक नहीं होती ॥ २ ॥ मनुष्य जैसा काम करता है, उसका वैसा ही नाम हो जाता है। मनुष्य के जो श्वास परमात्मा के नाम-स्मरण के बग़ैर निकलता है, वह व्यर्थ ही बीतता है ॥३॥ हे नानक! जिस शरीर में प्रभु का सत्यस्वरूप नाम अवस्थित नहीं होता, वह शरीर किसी काम नहीं आता। यदि कोई मनुष्य प्रभु का नाम बदले में देकर मेरा शरीर लेना चाहे तो मैं शरीर का मोल देकर भी उसे पाने को तैयार हूँ ॥४॥५॥७॥

सूही महला १ घरु ७

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जोगु न खिंथा जोगु न डंडै जोगु न भसम चड़ाईऐ। जोगु न मुंदी मूंडि मुडाइऐ जोगु न सिंङी वाईऐ। अंजन माहि निरंजनि रहीऐ जोग जुगति इव पाईऐ ॥ १ ॥ गली जोगु न होई। एक द्रिसटि करि समसरि जाणै जोगी कहीऐ सोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जोगु न बाहरि मड़ी मसाणी जोगु न ताड़ी लाईऐ। जोगु न देसि दिसंतरि भविऐ जोगु न तीरथि नाईऐ। अंजन माहि निरंजनि रहीऐ जोग जुगति इव पाईऐ ॥ २ ॥ सतिगुरु भेटै ता सहसा तूटै धावतु वरजि रहाईऐ। निझरु झरै सहज धुनि लागै घर ही परचा पाईऐ। अंजन माहि निरंजनि रहीऐ जोग जुगति इव पाईऐ ॥ ३ ॥ नानक जीवतिआ मरि रहीऐ ऐसा जोगु कमाईऐ। वाजे बाझहु सिंङी वाजै तउ निरभउ पदु पाईऐ। अंजन माहि निरंजनि रहीऐ जोग जुगति तउ पाईऐ ॥ ४ ॥ १ ॥ ८ ॥

गूदड़ी (चीथड़े) पहन लेना परमात्मा के साथ ऐक्य का साधन नहीं

है, डण्ड हाथ में पकड़ लेने से प्रभु के साथ मेल नहीं हो जाता, यदि शरीर पर राख मल लें तो भी प्रभु का मिलाप नहीं होता। कानों में मुद्राएँ पहन लें या सिर मुँड़ा लें तो भी प्रभु से मिलाप नहीं हो सकता और सिंगी बजाने से भी योग-सिद्धी नहीं होती। परमात्मा के साथ मिलाप का एकमात्र ढंग यही है कि माया-मोह की कालिख में रहते हुए माया से निर्लिप्त प्रभु में अनुरक्त रहें ॥ १ ॥ केवल बातों से प्रभु के साथ मिलाप नहीं होता। वही मनुष्य योगी कहला सकता है, जो समदर्शी होकर सबको समानभाव से अपनाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बाहर श्मशान में रहने से प्रभु का मिलाप नहीं होता, समाधियाँ लगाने से भी परमात्मा नहीं मिलता। यदि देश-परदेश में घूमते फिरें, तो भी प्रभु-मिलाप नहीं होता। तीर्थ पर स्नान करने से भी प्रभु-प्राप्ति नहीं होती। परमात्मा के साथ मिलाप का ढंग केवल इस तरह ही आता है कि माया-मोह की कालिख में रहते हुए भी निर्लिप्त प्रभु में सुरति लगाए रहें ॥ २ ॥ यदि गुरु की प्राप्ति हो जाए तो मन का भय समाप्त हो जाता है, विकारों की ओर दौड़ते मन को नियन्त्रित किया जा सकता है। मन में प्रभु के नाम-अमृत का एक झरना फूट पड़ता है, भीतर से नाम-ध्वनि जागृत होती है और हृदय के भीतर ही परमात्मा के साथ ऐक्य हो जाता है। परमात्मा के मिलाप की सामर्थ्य इसी प्रकार आती है कि माया-मोह की कालिख में रहते हुए भी निर्लिप्त प्रभु में सुरति लगाए रहें ॥ ३ ॥ हे नानक ! परमात्मा के मिलाप का अभ्यास इस प्रकार करें कि दुनियावी कामकाज करते हुए भी विकारों से दूर रह सकें। (नाम-स्मरण में प्रवृत्त रहकर) जीव के भीतर मानो बिना बाजा (सिंगी का नाद) बजाए अनाहत नाद होता है। इस आत्मिक स्थिति को पाकर मनुष्य ऐसी भूमिका में पहुँचता है, जिसमें किसी प्रकार का भय नहीं रह जाता। जब माया-मोह की कालिख में रहते हुए माया से निर्लिप्त प्रभु में सुरति लगाए रहें, तभी प्रभु के मिलाप की विधि आती है ॥ ४ ॥ १ ॥ ८ ॥

॥ सूही महला १ ॥ कउण तराजी कवणु तुला तेरा कवणु सराफु बुलावा। कउणु गुरू कै पहि दीखिआ लेवा कै पहि मुलु करावा ॥ १ ॥ मेरे लाल जीउ तेरा अंतु न जाणा। तूं जलि थलि महीअलि भरि पुरि लीणा तूं आपे सरब समाणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु ताराजी चितु तुला तेरी सेव सराफु कमावा। घट ही भीतरि सो सहु तोली इन बिधि चितु रहावा ॥ २ ॥ आपे कंडा तोलु तराजी आपे तोलणहारा। आपे देखै आपे बूझै आपे है वणजारा ॥ ३ ॥ अंधुला नीच जाति

परदेसी खिनु आवै तिलु जावै । ता की संगति नानकु रहदा किउ करि मूड़ा पावै ॥ ४ ॥ २ ॥ ९ ॥

हे प्रभु ! कोई ऐसी तराज़ू नहीं, ऐसा बाँट नहीं (जो तुम्हारा सही मूल्यांकन कर सके), कोई ऐसा सर्राफ़ नहीं, जिसे मैं (तुम्हारे गुणों का अनुमान करने के लिए) बुला सकूँ । मुझे कोई ऐसा गुरु नहीं मिलता, जिससे मैं तुम्हारा मूल्यांकन कराऊँ अथवा मूल्यांकन कराने का ढंग सीख सकूँ ॥ १ ॥ हे मेरे सुन्दर प्रभुजी ! मैं तुम्हारे गुणों का भेद नहीं पा सकता (कि वे कितने हैं ?) तुम पानी में परिव्याप्त हो, धरती के भीतर व्याप्त हो । तुम आकाश में सर्वत्र मौजूद हो और तुम आप ही सब जीवों में समाए हुए हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! यदि मेरा मन तराज़ू बन जाए, यदि मेरा हृदय तोलनेवाला बाँट बन जाए, यदि मैं तुम्हारी सेवा कर सकूँ, तुम्हारा स्मरण कर सकूँ (यदि यह सेवा, नाम-स्मरण मेरे लिए) सर्राफ़ बन जाएँ (तो भी गुणों का अन्त नहीं पा सकूँगा, लेकिन) इन तरीक़ों से मैं अपने हृदय को तुम्हारे चरणों में लगाए रख सकूँगा । हे भाई ! मैं अपने हृदय में उस प्रभु-पति को स्थिर कर जाँच कर सकूँगा ॥ २ ॥ वह प्रभु आप ही तराज़ू है, आप ही बाँट है, आप ही तराज़ू की ऊपरी रस्सी है (जिसे पकड़कर तोला जाता है) और वह आप ही तोलनेवाला भी है । वह स्वयं सब जीवों की देखभाल करता है, सबके मन की समझता है, आप ही जीव-रूप होकर जगत में नाम-व्यापार कर रहा है ॥ ३ ॥ अज्ञानी (नानक) परमात्मा के गुणों का मूल्यांकन नहीं कर सकता, क्योंकि इसकी संगति सदा उस मन के साथ है जो माया-मोह में अन्धा है, जो निम्न जाति का है, जो सदा भटकता रहता है, तनिक भी एक स्थान पर रह नहीं सकता ॥ ४ ॥ २ ॥ ९ ॥

रागु सूही महला ४ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मनि राम नामु आराधिआ गुर सबदि गुरू गुर के । सभि इछा मनि तनि पूरीआ सभु चूका डरु जम के ॥ १ ॥ मेरे मन गुण गावहु राम नाम हरि के । गुरि तुठै मनु परबोधिआ हरि पीआ रसु गटके ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतसंगति ऊतम सतिगुर केरी गुन गावै हरि प्रभ के । हरि किरपा धारि मेलहु सत संगति हम धोवह पग जन के ॥ २ ॥ राम नामु सभु है राम नामा रसु गुरमति रसु रस के । हरि अंम्रितु हरि जलु पाइआ सभ लाथी तिस तिस के ॥ ३ ॥ हमरी

जाति पाति गुरु सतिगुरु हम वेचिओ सिरु गुर के । जन नानक नामु परिओ गुर चेला गुर राखहु लाज जन के ॥ ४ ॥ १ ॥१०॥

जिस मनुष्य ने गुरु के शब्द में प्रवृत्त होकर परमात्मा का नाम-स्मरण किया है, उसके मन, तन की तमाम आकांक्षाएँ पूर्ण हो जाती हैं, (उसके भीतर से) यमराज का भी सारा भय दूर हो जाता है ॥१॥ हे मेरे मन ! परमात्मा के नाम के गुण गाया कर। यदि गुरु मनुष्य पर दयालु हो जाए, तो उसकी मोह-निद्रा टूट जाती है। वह मनुष्य परमात्मा के नाम का रस लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! गुरु की सत्संगति अत्यन्त श्रेष्ठ स्थान है (वहीं मनुष्य) हरि-प्रभु के गुण गाता है। हे हरि ! कृपा करो, मुझे सत्संगति प्रदान करो। मैं तुम्हारे भक्तों के पैर धोऊँगा ॥२॥ हे भाई ! परमात्मा का नाम समस्त सुख देनेवाला है (लेकिन) गुरु की शिक्षा पर चलकर ही हरि-नाम का रस लिया जा सकता है। जिस मनुष्य ने आत्मिक जीवन देनेवाला नामामृत प्राप्त कर लिया, उसकी सारी प्यास दूर हो गई ॥ ३ ॥ हे भाई ! गुरु ही मेरी जाति है, गुरु ही मेरी प्रतिष्ठा हैं, मैंने अपना सिर (मान-मर्यादा) गुरु के पास बेच दिया है। दास नानक का कथन है कि हे गुरु ! मेरा नाम 'गुरु का सिक्ख' हो गया है, अब तू अपने इस सेवक की प्रतिष्ठा रख ॥ ४ ॥ १ ॥ १० ॥

॥ सूही महला ४ ॥ हरि हरि नामु भजिओ पुरखोतमु सभि बिनसे दालद दलघा। भउ जनम मरणा मेटिओ गुर सबदी हरि असथिरु सेवि सुखि समघा ॥ १ ॥ मेरे मन भजु राम नाम अति पिरघा। मै मनु तनु अरपि धरिओ गुर आगै सिरु वेचि लीओ मुलि महघा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नरपति राजे रंग रस माणहि बिनु नावै पकड़ि खड़े सभि कलघा। धरमराइ सिरि डंडु लगाना फिरि पछुताने हथ फलघा ॥ २ ॥ हरि राखु राखु जन किरम तुमारे सरणागति पुरख प्रतिपलघा। दरसनु संत देहु सुखु पावै प्रभ लोच पूरि जनु तुमघा ॥ ३ ॥ तुम समरथ पुरख वडे प्रभ सुआमी मोकउ कीजै दानु हरि निमघा। जन नानक नामु मिलै सुखु पावै हम नाम विटहु सद घुमघा ॥ ४ ॥ २ ॥११॥

हे भाई ! जिस मनुष्य ने परमात्मा का नाम जपा, उसका समस्त दारिद्रय नष्ट हो गया है। गुरु के शब्द में प्रवृत्त होकर उस मनुष्य ने जन्म-मरण का भय भी समाप्त कर लिया। सत्यस्वरूप परमात्मा की सेवा-भक्ति करके वह आनन्द में लीन हो गया ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! हमेशा परमात्मा का प्रिय नाम स्मरण कर। मैंने अपना मन, तन गुरु के

समक्ष भेंट रख दिया है, मैंने अपना सिर महँगे मूल्य पर बेच दिया है (अर्थात् अहंकार त्यागकर गुरु को पा लिया है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! दुनिया के राजा-महाराजा माया के रंग-रस भोगते रहते हैं, नाम से खाली रहते हैं, मौत उन सबको पकड़कर आगे लगा लेती है । जब उन्हें किए हुए कर्मों का फल मिलता है, जब उनके सिर पर धर्मराज का डण्डा लगता है, तब पश्चात्ताप करते हैं ॥ २ ॥ हे हरि, सर्वपालक सर्वव्यापक प्रभु ! हम तुम्हारे तुच्छ जीव हैं, हम तुम्हारे शरणागत हैं, तुम स्वयं सेवकों की रक्षा करो । हे प्रभु ! मैं तुम्हारा दास हूँ, मुझ दास की इच्छा पूर्ण करो, इसे सन्तजनों के दर्शनों का सौभाग्य दो, ताकि यह आत्मिक आनन्द प्राप्त कर सके ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! सर्वोपरि मालिक ! तुम समस्त शक्तियों के मालिक हो । मुझे एक दिन के लिए ही अपने नाम का दान दो । दास नानक का कथन है कि जिसे प्रभु का नाम प्राप्त होता है, वही परमानन्द को पाता है; मैं सदैव हरि-नाम पर बलिहारी हूँ ॥ ४ ॥ २ ॥११॥

॥ सूही महला ४ ॥ हरि नामा हरि रंङु है हरि रंङु मजीठै रंङु । गुरि तुठै हरि रंगु चाड़िआ फिरि बहुड़ि न होवी भंङु ॥ १ ॥ मेरे मन हरि राम नामि करि रंङु । गुरि तुठै हरि उपदेसिआ हरि भेटिआ राउ निसंङु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मुंध इआणी मनमुखी फिरि आवण जाणा अंङु । हरि प्रभु चिति न आइओ मनि दूजा भाउ सहलंङु ॥ २ ॥ हम मैलु भरे दुहचारीआ हरि राखहु अंगी अंङु । गुरि अंम्रितसरि नवलाइआ सभि लाथे किलविख पंङु ॥ ३ ॥ हरि दीना दीन दइआल प्रभु सतसंगति मेलहु संङु । मिलि संगति हरि रंगु पाइआ जन नानक मनि तनि रंङु ॥ ४ ॥ ३ ॥ १२ ॥

हे भाई ! हरि-नाम का स्मरण व्यक्ति के भीतर प्रभु का प्रेम पैदा करता है । यह प्रभु-प्रेम मजीठ के रंग की तरह दृढ़ होता है । यदि गुरु प्रसन्न होकर उसे एक बार हरि-नाम के रंग से रँग दे, तो बाद में उस रंग का कभी नाश नहीं होता ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! प्रभु के राम-नाम को रंग बना (और उसी में अपने को रँग) । यदि गुरु सन्तुष्ट होकर तुझे सदुपदेश दे, तो तू अवश्य निसंगभाव से हरि में मिल जायगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! जो अज्ञानी जीव-स्त्री स्वेच्छाचारिणी होती है, उसका संयोग जन्म-मरण के चक्र के साथ सदा बना रहता है । उस जीव-स्त्री के हृदय में हरि-प्रभु अवस्थित नहीं होता और माया-मोह ही उसका संगी बना रहता है ॥ २ ॥ हे हरि ! हम जीव विकारों के मैल से भरे हैं, हम कुकर्मी हैं । हे संरक्षक प्रभु ! हमारी रक्षा करो, हमारी सहायता करो । हे भाई !

गुरु ने जिस मनुष्य को आत्मिक जीवन देनेवाले नाम-जल के सरोवर में स्नान करा दिया, उसके भीतर से सारे पाप धुल जाते हैं और विकारों का मैल साफ़ हो जाता है ।। ३ ।। हे दीनों पर दया करनेवाले प्रभु ! मुझे सत्संगति दो । दास नानक का कथन है कि जिस मनुष्य ने सत्संगति में पाकर परमात्मा के नाम का प्रेम प्राप्त कर लिया, उसके मन-तन में वह प्रेम व्याप्त हो जाता है ।। ४ ।। ३ ।।१२।।

।। सूही महला ४ ।। हरि हरि करहि नित कपटु कमावहि हिरदा सुधु न होई । अनदिनु करम करहि बहुतेरे सुपनै सुखु न होई ।। १ ।। गिआनी गुर बिनु भगति न होई । कोरै रंगु कदे न चड़ै जे लोचै सभु कोई ।। १ ।। रहाउ ।। जपु तप संजम वरत करे पूजा मनमुख रोगु न जाई । अंतरि रोगु महा अभिमाना दूजै भाइ खुआई ।। २ ।। बाहरि भेख बहुतु चतुराई मनूआ दहदिसि धावै । हउमै बिआपिआ सबदु न चीन्है फिरि फिरि जूनी आवै ।। ३ ।। नानक नदरि करे सो बूझै सो जनु नामु धिआए । गुरपरसादी एको बूझै एकसु माहि समाए ।।४।।४।।१३।।

हे भाई ! जो मनुष्य व्यर्थ ही केवल मौखिक रूप से राम-राम उच्चरित करते हैं, वे सदैव धोखा-फ़रेब करते हैं, उनका मन पवित्र नहीं हो सकता । ऐसे मनुष्य प्रतिपल अनेक धार्मिक कर्म करते रहते हैं, लेकिन उन्हें स्वप्न में भी आत्मिक आनन्द अनुभव नहीं होता ।। १ ।। हे जीव ! मनुष्य कितनी ही प्रार्थना करे, गुरु का शरणागत हुए बिना भक्ति नहीं हो सकती, जैसे कभी कोरे कपड़े पर रंग नहीं चढ़ता ।। १ ।। रहाउ ।। हे भाई ! स्वेच्छाचारी मनुष्य जाप, तपस्या और अन्य कष्टदायक साधन करता है, व्रत रखता है, लेकिन उस स्वेच्छाचारी मनुष्य का आत्मिक रोग दूर नहीं होता । उसके मन में अहंकार का भारी रोग बना रहता है और वह माया-मोह में फँसकर कुमार्गगामी बना रहता है ।। २ ।। हे भाई ! (गुरु में श्रद्धा न रखनेवाला मनुष्य) लोकदिखावे के लिए धार्मिक वेश बनाता है, चुस्ती-चालाकी दिखाता है, लेकिन उसका विकार-युक्त मन दसों दिशाओं में दौड़ा फिरता है । अहंत्व-अहंकार में फँसा हुआ वह मनुष्य गुरु की शिक्षा का अनुसरण नहीं करता और बार-बार योनियों के चक्र में पड़ा रहता है ।। ३ ।। गुरु नानक का कथन है कि जिस मनुष्य पर परमात्मा कृपादृष्टि करता है, वह आत्मिक जीवन के मार्ग को समझ लेता है; वह मनुष्य परमात्मा का नाम स्मरण करता है, गुरु-कृपा से वह परमात्मा से ही ऐक्य किए रखता है और उसी में ही लीन रहता है ।। ४ ।। ४ ।। १३ ।।

सूही महला ४ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गुरमति नगरी खोजि खोजाई । हरि हरि नामु पदारथु पाई ॥ १ ॥ मेरै मनि हरि हरि सांति वसाई । तिसनाअ गनि बुझी खिन अंतरि गुरि मिलिऐ सभ भुख गवाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि गुण गावा जीवा मेरी माई । सतिगुरि दइआलि गुण नामु द्रिड़ाई ॥ २ ॥ हउ हरि प्रभु पिआरा ढूढि ढूढाई । सत संगति मिलि हरि रसु पाई ॥ ३ ॥ धुरि मसतकि लेख लिखे हरि पाई । गुरु नानकु तुठा मेलै हरि भाई ॥ ४ ॥ १ ॥ ५ ॥

हे भाई ! गुरु की शिक्षाओं पर आचरण द्वारा मैंने अपने शरीर-नगर की भली प्रकार छानबीन की है और इसमें से ही मैंने प्रभु का बहुमूल्य नाम प्राप्त कर लिया है ॥ १ ॥ हे भाई ! गुरु ने हरि-नाम द्वारा मेरे मन में शीतलता पहुँचाई है । एक क्षण में ही मेरी तृष्णा की अग्नि बुझ गई है । गुरु के मिलने से मेरी सारी भूख दूर हो गई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मेरी माँ ! मैं प्रभु के गुण गाता हूँ, मुझे आत्मिक जीवन मिल रहा है, दयालु सतिगुरु ने मेरे हृदय में प्रभु के गुण दृढ़ कर दिए हैं और परमात्मा का नाम भी दृढ़ किया है ॥ २ ॥ हे भाई ! अब मैं प्यारे हरि-प्रभु की खोज करता हूँ, सत्संगियों द्वारा खोज कराता हूँ । सत्संगति में रहकर मैं परमात्मा के नाम का आस्वादन करता हूँ ॥ ३ ॥ प्रभु के दरबार से जिस मनुष्य के मस्तक पर प्रभु-मिलाप का लेख लिखा होता है, उस पर गुरु (नानक) प्रसन्न होता है और उसे परमात्मा से मिला देता है ॥४॥१॥५॥

॥ सूही महला ४ ॥ हरि क्रिपा करे मनि हरि रंगु लाए । गुरमुखि हरि हरि नामि समाए ॥ १ ॥ हरि रंगि राता मनु रंग माणे । सदा अनंदि रहै दिन राती पूरे गुर कै सबदि समाणे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि रंग कउ लोचै सभु कोई । गुरमुखि रंगु चलूला होई ॥ २ ॥ मनमुखि मुगधु नरु कोरा होइ । जे सउ लोचै रंगु न होवै कोइ ॥ ३ ॥ नदरि करे ता सतिगुरु पावै । नानक हरि रसि हरि रंगि समावै ॥ ४ ॥ २ ॥ ६ ॥

हे भाई ! परमात्मा जिस मनुष्य पर कृपा करता है, उसके मन में अपने चरणों का प्रेम उपजाता है । वह मनुष्य गुरु की शरण लेकर परमात्मा के नाम में लीन रहता है ॥ १ ॥ जो मनुष्य परमात्मा के प्रेम-रंग में रँगा रहता है, उसी का मन आत्मिक आनन्द महसूसता है । वह

मनुष्य दिन-रात्रि प्रतिपल आनन्द में मग्न रहता है, पूर्णगुरु की वाणी में लीन रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! वैसे तो हर एक मनुष्य प्रभु-चरणों के प्रेम के लिए प्रार्थना करता है, लेकिन गुरु की शरण लेने से ही मन पर प्रेम का गहरा रंग चढ़ता है ॥ २ ॥ स्वेच्छाचारी मूर्ख मनुष्य प्रेम-रहित होता है, ऐसा मनुष्य यदि सौ बार भी इच्छा करे, उस पर प्रभु-प्रेम का रंग नहीं चढ़ सकता ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि जिस पर प्रभु कृपादृष्टि करता है, वही गुरु का मिलाप प्राप्त करता है और अन्ततः परमात्मा के नाम-रस में, परमात्मा के प्रेम-रंग में समा जाता है ॥ ४ ॥ २ ॥ ६ ॥

॥ सूही महला ४ ॥ जिहवा हरि रसि रही अघाइ । गुरमुखि पीवै सहजि समाइ ॥ १ ॥ हरि रसु जन चाखहु जे भाई । तउ कत अनत सादि लोभाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमति रसु राखहु उरधारि । हरि रसि राते रंगि मुरारि ॥ २ ॥ मनमुखि हरि रसु चाखिआ न जाइ । हउमै करै बहुती मिलै सजाइ ॥ ३ ॥ नदरि करे ता हरि रसु पावै । नानक हरि रसि हरि गुण गावै ॥ ४ ॥ ३ ॥ ७ ॥

हे भाई ! गुरु की शरण लेकर जिस मनुष्य की जिह्वा परमात्मा के नाम-रस से तृप्त रहती है, वह सदा नाम-रस ही पान करता है और आत्मिक स्थिरता में निमग्न रहता है ॥ १ ॥ हे सज्जनो ! यदि तुम परमात्मा के नाम का स्वाद चख लोगे, तो फिर किसी भी अन्य आस्वादन में मन नहीं रमाओगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! गुरु की शिक्षा पर चलकर प्रभु के नाम का आस्वादन अपने हृदय में करो । जो मनुष्य प्रभु के नाम-रस में मस्त हो जाते हैं, वे मुरारी प्रभु के प्रेम-रंग में रँगे जाते हैं ॥ २ ॥ लेकिन, हे भाई ! जो मनुष्य स्वेच्छाचारी होता है, वह परमात्मा के नाम का आस्वादन नहीं कर सकता । वह ज्यों-ज्यों अपनी चतुराई का अहंकार करता है, त्यों-त्यों उसे अधिक सज़ा मिलती है ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि जब परमात्मा की कृपादृष्टि होती है, तभी जीव प्रभु के नाम का आस्वादन करता है । वह हरि-नाम के आस्वादन में लीन होकर परमात्मा की गुणस्तुति के गीत गाता रहता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ ७ ॥

सूही महला ४ घरु ६

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ नीच जाति हरि जपतिआ उतम पदवी पाइ । पूछहु बिदर दासी सुतै किसनु उतरिआ घरि जिसु

जाइ ॥ १ ॥ हरि की अकथ कथा सुनहु जन भाई जितु सहसा दूख भूख सभ लहि जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रविदासु चमारु उसतति करे हरि कीरति निमख इक गाइ । पतित जाति उतमु भइआ चारि वरन पए पगि आइ ॥ २ ॥ नाम देअ प्रीति लगी हरि सेती लोकु छीपा कहै बुलाइ । खत्री ब्राहमण पिठि दे छोडे हरि नामदेउ लीआ मुखि लाइ ॥ ३ ॥ जितने भगत हरि सेवका मुखि अठसठि तीरथ तिन तिलकु कढाइ । जनु नानकु तिन कउ अनदिनु परसे जे क्रिपा करे हरि राइ ॥ ४ ॥ १ ॥ ८ ॥

हे भाई ! निम्न जाति वाला मनुष्य भी परमात्मा का नाम जपने से उच्च आत्मिक स्थान प्राप्त कर लेता है । दासीपुत्र विदुर की बात पूछ कर देखो, उस विदुर के घर कृष्णजी ने आतिथ्य ग्रहण किया था ॥ १ ॥ हे सज्जनो ! परमात्मा की विस्मयजनक गुणस्तुति सुना करो, जिसके प्रभावस्वरूप हर क़िस्म का दुःख दूर हो जाता है और माया की भूख मिट जाती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! भक्त रविदास जाति से चमार थे, पर प्रभु की गुणस्तुति करते थे । वह प्रतिपल प्रभु का यश गाते थे । वही निम्न जाति का रविदास महापुरुष बन गया । चारों वर्णों के मनुष्य उनके चरण स्पर्श करने लगे ॥ २ ॥ हे भाई ! नामदेव की परमात्मा के साथ प्रीति हो गई । जगत (के लोग ब्राह्मण, क्षत्री आदि) उसे छिप्पी कह-कहकर बुलाते थे । परमात्मा ने ब्राह्मणों एवं क्षत्रियों को पराजित कर दिया और नामदेव को सत्कृत किया था ॥ ३ ॥ हे भाई ! परमात्मा के जितने भी भक्त हैं, सेवक हैं, उनके मस्तक पर अठासठ तीर्थों की पवित्र मिट्टी का तिलक लगता है । हे भाई ! यदि प्रभु-बादशाह कृपा करे, तो दास नानक प्रतिपल उनके चरण स्पर्श करता रहे ॥ ४ ॥ १ ॥ ८ ॥

॥ सूही महला ४ ॥ तिन्ही अंतरि हरि आराधिआ जिन कउ धुरि लिखिआ लिखतु लिलारा । तिन की बखीली कोई किआ करे जिन का अंगु करे मेरा हरि करतारा ॥ १ ॥ हरि हरि धिआइ मन मेरे मन धिआइ हरि जनम जनम के सभि दूख निवारणहारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धुरि भगत जना कउ बखसिआ हरि अंम्रित भगति भंडारा । मूरखु होवै सु उन की रीस करे तिसु हलति पलति मुहु कारा ॥ २ ॥ से भगत से सेवका जिना हरि नामु पिआरा । तिन की सेवा ते हरि पाईऐ सिरि निंदक कै पवै छारा ॥ ३ ॥ जिसु घरि विरती सोई जाणै जगतगुर

नानक पूछि करहु बीचारा । चहु पीड़ी आदि जुगादि बखीली किनै न पाइओ हरि सेवक भाइ निसतारा ॥ ४ ॥ २ ॥ ९ ॥

हे भाई ! प्रभु के दरबार से जिन मनुष्यों के मस्तक पर भाग्य लिखा होता है, वही मनुष्य अपने हृदय में परमात्मा की आराधना करते हैं। प्यारा प्रभु जिनका समर्थन करता है, कोई मनुष्य उनकी निन्दा करके उनका कुछ बिगाड़ नहीं सकता ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! परमात्मा का नाम स्मरण किया कर । परमात्मा जन्म-जन्मान्तरों के विकार दूर करने की सामर्थ्य रखता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! परमात्मा ने अपने दरबार से ही भक्तों को आत्मिक जीवन देनेवाली अपनी भक्ति का भण्डार प्रदान किया हुआ है, उनकी बराबरी की सोचनेवाला मूर्ख है । उसका मुँह इस लोक तथा परलोक में काला होता है अर्थात् वह लोक-परलोक में बदनामी पाता है ॥ २ ॥ वही मनुष्य भक्त हैं, वही सेवक हैं, जिन्हें परमात्मा का नाम प्रिय लगता है । ऐसे सेवकों की शरण लेने से परमात्मा का मिलाप प्राप्त होता है और ऐसे सेवकों के निन्दक अपमान के भागी होते हैं ॥ ३ ॥ हे भाई ! आत्म-दैन्य को वही मनुष्य जानता है, जिसके हृदय में यह स्थिति घटित होती है । तुम जगत के गुरु, गुरु नानक को पूछकर (भाव गुरु नानक गद्दी के प्रथम चार गुरुओं से है) और विचारकर देखो (और यह विश्वास जानो) कि जगत के आदिमकाल से किसी भी मनुष्य ने ईर्ष्या करके आत्मिक जीवन प्राप्त नहीं किया । महापुरुषों के प्रति सेवक-वृत्ति का निर्वाह करके ही संसार-सागर से उद्धार होता है ॥ ४ ॥ २ ॥ ९ ॥

॥ सूही महला ४ ॥ जिथै हरि आराधीऐ तिथै हरि मितु सहाई । गुर किरपा ते हरि मनि वसै होरतु बिधि लइआ न जाई ॥ १ ॥ हरि धनु संचीऐ भाई । जि हलति पलति हरि होइ सखाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतसंगती संगि हरि धनु खटीऐ होरथै होरतु उपाइ हरि धनु कितै न पाई । हरि रतनै का वापारीआ हरि रतन धनु विहाझे । कचै के वापारीए वाकि हरि धनु लइआ न जाई ॥ २ ॥ हरि धनु रतनु जवेहरु माणकु हरि धनै नालि अंम्रित वेलै वतै हरि भगती हरि लिव लाई । हरि धनु अंम्रित वेलै वतै का बीजिआ भगत खाइ खरचि रहे निखुटै नाही। हलति पलति हरि धनै की भगता कउ मिली वडिआई ॥ ३ ॥ हरि धनु निरभउ सदा सदा असथिरु है साचा इहु हरि धनु अगनी तसकरै पाणीऐ जमदूतै किसै का गवाइआ न जाई । हरि धन कउ उचका नेड़ि न आवई जमु जागाती डंडु न लगाई ॥ ४ ॥

साकती पाप करि कै बिखिआ धनु संचिआ तिना इक विख नालि न जाई ।। हलतै विचि साकत दुहेले भए हथहु छुड़कि गइआ अगै पलति साकतु हरि दरगह ढोई न पाई ।। ५ ।। इसु हरि धन का साहु हरि आपि है संतहु जिसनो देइ सु हरि धनु लदि चलाई । इसु हरि धनै का तोटा कदे न आवई जन नानक कउ गुरि सोझी पाई ।। ६ ।। ३ ।। १० ।।

हे भाई ! जिस स्थान पर परमात्मा का स्तवन किया जाए (वह मित्र) परमात्मा वहीं सहायक बनता है । लेकिन वह परमात्मा गुरु की कृपा से ही मनुष्य के मन में बस सकता है, किसी अन्य तरीक़े से उसे प्राप्त नहीं किया जा सकता ।। १ ।। हे भाई ! जो हरि लोक-परलोक में मित्र बनता है, उस हरि का नाम-धन एकत्रित करना चाहिए ।। १ ।। रहाउ ।। हे भाई ! सत्संगियों के साथ मिलकर परमात्मा का नाम-धन प्राप्त किया जा सकता है, सत्संग के बिना कहीं भी और किसी भी तरह हरि का नाम-धन नहीं मिलता । हरि के नाम रूपी रत्न का व्यापारी (गुरु) ही हरि-नाम-रत्न ख़रीदता है, नश्वर पदार्थों के व्यापारी सांसारिक पूँजी सम्बन्धी पदार्थ ही ख़रीदते हैं, ऐसे लोगों के परामर्श द्वारा हरि-नाम रूपी धन प्राप्त नहीं किया जा सकता ।। २ ।। हे भाई ! परमात्मा का नाम रूपी धन ही रत्न, जवाहर और मोती है (अर्थात् बहुमूल्य है) । प्रभु-भक्तों ने ब्रह्ममूहूर्त्त में उठकर इस नाम में स्वयं को तल्लीन किया है । ब्रह्ममुहूर्त्त में बोया हुआ यह हरि-नाम रूपी धन भक्त लोग आप भोगते हैं, दूसरों को भी बाँटते रहते हैं, लेकिन यह कभी समाप्त नहीं होता । भक्त-जनों को इस लोक में तथा परलोक में भी, हरि-नाम रूपी धन के कारण प्रतिष्ठा मिलती है ।। ३ ।। हे भाई ! इस हरि-नाम रूपी धन को किसी प्रकार का भय नहीं । यह सत्यस्वरूप और शाश्वत है । आग, चोरी, पानी, मृत्यु —किसी भी तरह इस धन का नुक़सान नहीं किया जा सकता । कोई लुटेरा इस हरि-नाम रूपी धन के निकट नहीं जा सकता । यमराज रूपी चुंगी लेनेवाला, इस धन पर कोई कर नहीं उगाह सकता ।। ४ ।। माया में डूबे जीवों ने पाप कर-करके माया रूपी धन ही एकत्रित किया, लेकिन यह धन पग भर भी उनका साथ नहीं दे सका । (इसी कारण) मायाग्रस्त जीव इस लोक में दुःखी होते हैं, मृत्यु के वक्त यह हाथों से छिन जाता है और आगे परलोक में जाकर भी मायाग्रस्त जीव को परमात्मा की सेवा में कोई जगह नहीं मिलती ।। ५ ।। हे सन्तो ! इस हरि-नाम रूपी धन का मालिक परमात्मा आप ही है । जिस मनुष्य को श्रेष्ठी प्रभु यह धन देता है, वह मनुष्य हरि-नाम रूपी लाभप्रद व्यापार करके जाता है । गुरु नानक

का कथन है कि इस हरि-नाम-धन के व्यापार में कभी घाटा नहीं होता। (गुरु ने अपने सेवक को) यह बात भली प्रकार समझा दी है ॥६॥३॥१०॥

॥ सूही महला ४ ॥ जिसनो हरि सुप्रसंनु होइ सो हरि गुणा रवै सो भगतु सो परवानु। तिस की महिमा किआ वरनीऐ जिसकै हिरदै वसिआ हरि पुरखु भगवानु ॥ १ ॥ गोविंद गुण गाईऐ जीउ लाइ सतिगुरू नालि धिआनु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सो सतिगुरू सा सेवा सतिगुर की सफल है जिस ते पाईऐ परम निधानु। जो दूजै भाइ साकत कामना अरथि दुरगंध सरेवदे सो निहफल सभु अगिआनु ॥ २ ॥ जिस नो परतीति होवै तिस का गाविआ थाइ पवै सो पावै दरगह मानु। जो बिनु परतीती कपटी कूड़ी कूड़ी अखी मीटदे उनका उतरि जाइगा झूठु गुमानु ॥ ३ ॥ जेता जीउ पिंडु सभु तेरा तूं अंतरजामी पुरखु भगवानु। दासनिदासु कहै जनु नानकु जेहा तूं कराइहि तेहा हउ करी वखिआनु ॥ ४ ॥ ४ ॥ ११ ॥

हे भाई! जिस मनुष्य पर परमात्मा प्रसन्न होता है, वह मनुष्य परमात्मा के गुण गाता है, वह (सचमुच) भक्त है और प्रभु के द्वार पर सत्कृत है। हे भाई! जिसके हृदय में भगवान अकालपुरुष स्थिर हो जाता है, उसकी महानता व्यक्त नहीं की जा सकती ॥ १ ॥ आइए, दत्त-चित्त होकर, गुरु की वाणी में तन्मय होकर, प्रभु की गुणस्तुति के गीत गाया करें ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई! वह गुरु समर्थ है, उससे सर्वोच्च कोष मिल जाता है, गुरु द्वारा बतलाई सेवा भी फलदायक होती है। मायाग्रस्त जीव, जो माया-मोहवश एषणाओं की पूर्ति के लिए विषय-विकारों में लगे रहते हैं, वे जीवन व्यर्थ गँवा देते हैं। वे आजीवन आत्मिक जीवन की ओर से उदासीन रहते हैं ॥ २ ॥ हे भाई! जिस मनुष्य को गुरु के प्रति श्रद्धा होती है, उसके द्वारा किया हरि का गुण-स्तवन प्रभु द्वारा स्वीकृत होता है, वह मनुष्य परमात्मा के दरबार में शोभा पाता है। लेकिन जो धोखेबाज़ मनुष्य गुरु पर विश्वास न करके झूठमूठ (दिखावे के लिए) आँखें बन्द करते हैं, उनका अपनी प्रतिष्ठा के बारे में किया गया अहंकार आखिरकार दूर हो जाएगा ॥ ३ ॥ हे प्रभु! मनुष्यों का सब तन-मन तुम्हारा दिया हुआ है, इसलिए तुम सबके भीतर की जाननेवाले सर्वव्यापक प्रभु हो। तुम्हारे दासों का दास नानक कहता है कि हे प्रभु! मैं वही कहता हूँ, जो तुम मुझसे कहलाते हो (अर्थात् तुम्हीं मेरी प्रेरणा हो) ॥ ४ ॥ ४ ॥ ११ ॥

सूही महला ४ घरु ७

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। तेरे कवन कवन गुण कहि कहि गावा तू साहिब गुणी निधाना। तुमरी महिमा बरनि न साकउ तूं ठाकुर ऊच भगवाना ।। १ ।। मै हरि हरि नामु धर सोई। जिउ भावै तिउ राखु मेरे साहिब मै तुझ बिनु अवरु न कोई।।१।। रहाउ ।। मै ताणु दीबाणु तू है मेरे सुआमी मै तुधु आगे अरदासि। मै होरु थाउ नाही जिसु पहि करउ बेनंती मेरा दुखु सुखु तुझ ही पासे ।। २ ।। विचे धरती विचे पाणी विचि कासट अगनि धरीजै। बकरी सिंघु इकतै थाइ राखे मन हरि जपि भ्रमु भउ दूरि कीजै ।। ३ ।। हरि की वडिआई देखहु संतहु हरि निमाणिआ माणु देवाए। जिउ धरती चरण तले ते ऊपरि आवै तिउ नानक साध जना जगतु आणि सभु पैरी पाए।।४।।१।।१२।।

हे सर्वोच्च भगवान ! तुम सबके मालिक हो, तुम समस्त गुणों के भण्डार हो, तुम सबके पालक हो। मैं तुम्हारे कौन-कौन से गुण बतलाकर तुम्हारी गुणस्तुति कर सकता हूँ ? तुम्हारी महानता अनिर्वचनीय है ।।१।। हे हरि ! मेरे लिए तुम्हारा नाम ही एकमात्र सहारा है। हे मेरे मालिक ! जैसे तुम्हें उपयुक्त लगे, वैसे मेरी रक्षा करो। तुम्हारे बिना मेरा कोई सहारा नहीं है ।। १ ।। रहाउ ।। तुम्हीं मेरे बल हो, तुम ही मेरे लिए आसरा हो। मैं तुम्हारे समक्ष ही प्रार्थना कर सकता हूँ। मेरे लिए कोई दूसरा नहीं, जिसके पास मैं प्रार्थना कर सकूँ। मैं अपना प्रत्येक दुःख-सुख तुम्हारे पास ही प्रस्तुत कर सकता हूँ ।। २ ।। हे मन ! पानी में पृथ्वी है और पृथ्वी में ही पानी है; उसने लकड़ी में अग्नि रखी हुई है (ये विरोधी प्रकृति के पदार्थ) मानो सिंह तथा बकरी साथ-साथ रखे हैं। ऐसे शक्तिवान परमात्मा का नाम जपकर तू अपना प्रत्येक भय, भ्रम दूर कर ।। ३ ।। हे सन्तो ! परमात्मा की शक्ति देखो। प्रभु उन्हें सत्कृत कराता है, जिन्हें कोई सम्मान नहीं देता होता। (हे नानक !) जैसे मरणोपरान्त पृथ्वी (मिट्टी) पैरों के नीचे से मनुष्य के ऊपर आ जाती है, वैसे ही परमात्मा समस्त जगत को लाकर साधु पुरुषों के चरणों में डाल देता है ।। ४ ।। १ ।। १२ ।।

।। सूही महला ४ ।। तूं करता सभु किछु आपे जाणहि किआ तुधु पहि आखि सुणाईऐ। बुरा भला तुधु सभु किछु सूझै जेहा को करे तेहा को पाईऐ ।। १ ।। मेरे साहिब तूं अंतर की बिधि जाणहि। बुरा भला तुधु सभु किछु सूझै तुधु भावै तिवै

बुलावहि ।। १ ।। रहाउ ।। सभु मोहु माइआ सरीरु हरि कीआ विचि देही मानुख भगति कराई । इकना सतिगुरु मेलि सुखु देवहि इकि मनमुखि धंधु पिटाई ।। २ ।। सभु को तेरा तूं सभना का मेरे करते तुधु सभना सिरि लिखिआ लेखु । जेही तूं नदरि करहि तेहा को होवै बिनु नदरी नाही को भेखु ।। ३ ।। तेरी वडिआई तूं है जाणहि सभ तुधनो नित धिआए । जिसनो तुधु भावै तिसनो तूं मेलहि जन नानक सो थाइ पाए ।। ४ ।। २ ।। १३ ।।

हे प्रभु ! तुम सृष्टि के उत्पादक हो । प्रत्येक बात को तुम जानते हो । कोई बात तुमसे छिपी नहीं है (इसलिए) तुम्हें कौन सी बात कहकर बताऊँ ? हर एक जीव की भलाई और बुराई का तुम्हें आप ही पता लग जाता है । इसलिए जीव जैसा कर्म करता है, उसका वैसा ही फल वह पा लेता है ।।१।। हे मेरे मालिक ! तुम हर एक जीव के भीतर की स्थिति से परिचित हो । किसी के भीतर भलाई है, किसी के भीतर बुराई है, तुम्हें प्रत्येक बात का पता लग जाता है । जैसे तुम्हें उपयुक्त लगता है, वैसे ही तुम हर जीव को बुलाते हो ।। १ ।। रहाउ ।। हे भाई ! माया का सारा मोह परमात्मा ने ही बनाया है, हरेक शरीर को भी प्रभु ने ही निर्मित किया है । मनुष्य-शरीर द्वारा भक्ति भी प्रभु आप ही कराता है । हे प्रभु ! कई जीवों को तुम गुरु से भेंट कराकर आत्मिक आनन्द प्रदान करते हो । अनेक जीव ऐसे हैं जो स्वेच्छाचारी होते हैं, उन्हें वह स्वयं माया में फँसाए रखता है ।। २ ।। हे मेरे कर्तार ! प्रत्येक जीव तुम्हारा है, तुम सब जीवों के पति हो । सब जीवों के माथे पर तुमने ही लेख लिखा हुआ है । तुम जीव पर जैसी दृष्टि करते हो, वह वैसा ही बन जाता है । तुम्हारी दृष्टि के बिना कोई भी जीव भला अथवा बुरा नहीं बना ।। ३ ।। दास नानक का कथन है कि हे मेरे कर्तार ! तुम्हारी महानता की यथार्थ जानकारी भी तुम्हें ही है । सारी दुनिया तुम्हारा स्मरण करती है । जिसे तुम चाहते हो, उसे अपने चरणों में जगह दे देते हो और वही मनुष्य तुम्हारे दरबार में सत्कृत होता है ।। ४ ।। २ ।। १३ ।।

।। सूही महला ४ ।। जिन कै अंतरि वसिआ मेरा हरि हरि तिनके सभि रोग गवाए । ते मुकत भए जिन हरि नामु धिआइआ तिन पवितु परम पदु पाए ।। १ ।। मेरे राम हरि जन आरोग भए । गुरबचनी जिना जपिआ मेरा हरि हरि तिन के हउमै रोग गए ।। १ ।। रहाउ ।। ब्रहमा बिसनु महादेउ त्रैगुण रोगी विचि हउमै कार कमाई । जिनि कीए तिसहि न चेतहि

बपुड़े हरि गुरमुखि सोझी पाई ॥ २ ॥ हउमै रोगि सभु जगतु बिआपिआ तिन कउ जनम मरण दुखु भारी । गुर परसादी को विरला छूटै तिसु जन कउ हउ बलिहारी ॥ ३ ॥ जिनि सिसटि साजी सोई हरि जाणै ता का रूपु अपारो । नानक आपे वेखि हरि बिगसै गुरमुखि ब्रहम बीचारो ॥ ४ ॥ ३ ॥ १४ ॥

हे भाई ! जिन मनुष्यों के हृदय में मेरा हरि-प्रभु बसा है, उनके सब रोग-कष्ट दूर हो जाते हैं । जिन मनुष्यों ने परमात्मा का नाम स्मरण किया, वे सर्वथा मुक्त हो गए । उन्होंने सर्वोच्च एवं पवित्र आत्मिक स्थान प्राप्त कर लिया ॥ १ ॥ हे भाई ! मेरे हरि के, मेरे राम के दास आरोग्य हैं । जिन मनुष्यों ने गुरु के वचनों पर चलकर हरि-प्रभु का नाम जपा, उनके अहंकार आदि रोग दूर हो गए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माया के तीन गुणों के प्रभाव से ब्रह्मा, विष्णु और शिव भी रोगी ही रहे, उन्होंने अहंकारवश काम-काज किया । जिस प्रभु ने उन्हें उत्पन्न किया था, उन्होंने उसे स्मरण नहीं किया । (वास्तव में) परमात्मा की सही सूझ तो गुरु की शरण लेने से होती है ॥ २ ॥ हे भाई ! सारा जगत अहंत्व के रोग में ग्रस्त है । (अहंत्व से ग्रसित) मनुष्यों को जन्म-मरण के चक्र का भारी दुःख लगा रहता है । कोई विरला मनुष्य गुरु की कृपा से अहंत्व आदि रोग से मुक्ति पाता है; मैं उस मनुष्य पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ३ ॥ हे भाई ! जिस परमात्मा ने यह सारी सृष्टि उत्पन्न की है, वह आप ही इसके रोग को जानता है । उस परमात्मा का स्वरूप अपरम्पार है । हे नानक ! वह परमात्मा अपनी रची सृष्टि को देखकर प्रसन्न होता है । गुरु की शरण लेकर ही परमात्मा के गुणों की सूझ आती है ॥ ४ ॥ ३ ॥ १४ ॥

॥ सूही महला ४ ॥ कीता करणा सरब रजाई किछु कीचै जे करि सकीऐ । आपणा कीता किछू न होवै जिउ हरि भावै तिउ रखीऐ ॥ १ ॥ मेरे हरि जीउ सभु को तेरै वसि । असा जोरु नाही जे किछु करि हम साकह जिउ भावै तिवै बखसि ॥१॥ रहाउ ॥ सभु जीउ पिंडु दीआ तुधु आपे तुधु आपे कारै लाइआ । जेहा तूं हुकमु करहि तेहे को करम कमावै जेहा तुधु धुरि लिखि पाइआ ॥ २ ॥ पंच ततु करि तुधु स्रिसटि सभ साजी कोई छेवा करिउ जे किछु कीता होवै । इकना सतिगुरु मेलि तूं बुझावहि इकि मनमुखि करहि सि रोवै ॥ ३ ॥ हरि की वडिआई हउ आखि न साका हउ मूरखु मुगधु नीचाणु । जन नानक कउ हरि बखसि लै मेरे सुआमी सरणागति पइआ अजाणु ॥४॥४॥१५॥२४॥

हे भाई ! जो कुछ जगत में किया है, जो कुछ कर रहा है, यह सब समस्त इच्छाओं का स्वामी परमात्मा कर रहा है। हम जीव, तभी कुछ करें यदि करने में समर्थ हों। हम जीवों के करने से कुछ नहीं हो सकता। जैसे परमात्मा को भला लगता है, वैसे जीवों को रखता है ॥ १ ॥ हे मेरे प्रभु ! हर जीव तुम्हारे वश में है। हम जीवों में कोई सामर्थ्य नहीं है कि कुछ कर सकें। जैसे तुम्हें उपयुक्त लगे, हम पर कृपा करो ॥१॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! यह आत्मा, देह, सब कुछ तुम्हारी देन है। तुमने प्रत्येक जीव को आप ही कामकाज में लगाया है। तुम जैसा हुक्म करते हो, जीव वैसा ही कर्म करता है; (जीव वही बनता है) जैसा तुमने अपने दरबार से निश्चित कर दिया है ॥ २ ॥ हे प्रभु ! तुमने पाँच तत्त्व निर्मित कर तमाम दुनिया उत्पन्न की है। यदि जीव द्वारा कुछ हो सके तो वह सचमुच छठा तत्त्व बनाकर दिखा दे। हे प्रभु ! कुछ जीवों को तुम गुरु से मिलाकर आत्मिक जीवन की सूझ देते हो, कुछ जीवों को तुम स्वेच्छाचारी बना देते हो (जब कि यह स्वेच्छाचारी) दुःखी होता रहता है ॥ ३ ॥ हे भाई ! मैं अज्ञानी हूँ, दुराचारी हूँ, मैं परमात्मा की महानता व्यक्त नहीं कर सकता। हे हरि ! दास नानक पर कृपा करो, यह दास तुम्हारा शरणागत है ॥ ४ ॥ ४ ॥ १५ ॥ २४ ॥

रागु सूही महला ५ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ बाजीगरि जैसे बाजी पाई। नाना रूप भेख दिखलाई। सांगु उतारि थंम्हिओ पासारा। तब एको एकंकारा ॥ १ ॥ कवन रूप द्रिसटिओ बिनसाइओ। कतहि गइओ उहु कत ते आइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जल ते ऊठहि अनिक तरंगा। कनिक भूखन कीने बहु रंगा। बीजु बीजि देखिओ बहु परकारा। फल पाके ते एकंकारा ॥ २ ॥ सहस घटा महि एकु आकासु। घट फूटे ते ओही प्रगासु। भरम लोभ मोह माइआ विकार। भ्रम छूटे ते एकंकार ॥ ३ ॥ ओहु अबिनासी बिनसत नाही। ना को आवै ना को जाही। गुरि पूरै हउमै मलु धोई। कहु नानक मेरी परम गति होई ॥ ४ ॥ १ ॥

जैसे बाज़ीगर कई प्रकार के रूप और वेश दिखाता है। (लेकिन) जब (प्रभु अपनी यह जगत रूपी) वह नकली वेशभूषा उतारकर इस क्रीड़ा का प्रसार रोक देता है, तब वह अकेला आप ही आप रह जाता है ॥ १ ॥ हे भाई ! परमात्मा के अनेक रूप स्थिर रहते हैं, अनेक रूप

नष्ट होते रहते हैं; (कोई नहीं कह सकता कि) जीव कहाँ से आया था और कहाँ चला जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पानी से अनेक लहरें उठती हैं (फिर पानी में परिवर्तित हो जाती हैं), सोने से कई क़िस्मों के गहने बनाए जाते हैं (वे भी स्वर्ण के परिवर्तित रूप स्वर्ण ही होते हैं)। बीज बोकर कई प्रकार का रूप देखने में आ जाता है। फल पकने पर फिर वही (पूर्व स्थिति वाले) बीज बन जाते हैं। ऐसे ही संसार का मूल परमात्मा ही है ॥ २ ॥ हे भाई ! एक आकाश पानी से परिपूरित हज़ारों घड़ों में अलग-अलग दिखता है। जब घड़े टूट जाते हैं, तो वह आकाश ही दिखता हुआ रह जाता है। माया के भ्रम के कारण जीवात्मा में दुविधा, लोभ, मोह आदि विकार उठते रहते हैं। भ्रम मिट जाने पर सर्वत्र एक परमात्मा का ही रूप हो जाता है ॥ ३ ॥ वह परमात्मा अनश्वर है, कभी नष्ट नहीं होता। न वह जन्मता है, न मृत्यु को प्राप्त होता है। नानक का कथन है कि पूर्णगुरु ने मेरे भीतर से अहंकार का मैल धो दिया है (इसलिए) अब मेरी उच्च आत्मिक अवस्था बन गई है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ कीता लोड़हि सो प्रभ होइ। तुझ बिनु दूजा नाही कोइ। जो जनु सेवे तिसु पूरन काज। दास अपुने की राखहु लाज ॥ १ ॥ तेरी सरणि पूरन दइआला। तुझ बिनु कवनु करे प्रतिपाला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जलि थलि महीअलि रहिआ भरपूरि। निकटि वसै नाही प्रभु दूरि। लोक पतीआरै कछू न पाईऐ। साचि लगै ता हउमै जाईऐ ॥ २ ॥ जिस नो लाइ लए सो लागै। गिआन रतनु अंतरि तिसु जागै। दुरमति जाइ परम पदु पाए। गुरपरसादी नामु धिआए ॥ ३ ॥ दुइ कर जोड़ि करउ अरदासि। तुधु भावै ता आणहि रासि। करि किरपा अपनी भगती लाइ। जन नानक प्रभु सदा धिआइ ॥ ४ ॥ २ ॥

हे प्रभु ! जो कुछ तुम करना चाहते हो, वही (जगत में) क्रियान्वित होता है। तुम्हारे अतिरिक्त कोई दूसरा कुछ करनेवाला नहीं है। जो सेवक तुम्हारी शरण लेता है, उसके समस्त काम सफल हो जाते हैं। तुम अपने सेवकों की प्रतिष्ठा आप बचाते हो ॥ १ ॥ हे सदा दया करनेवाले प्रभु ! मैं तुम्हारा शरणागत हूँ। तुम्हारे अतिरिक्त हम जीवों की देखभाल कोई दूसरा नहीं कर सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! पानी, पृथ्वी, आकाश में सर्वत्र परमात्मा मौजूद है। प्रत्येक जीव के निकट अवस्थित है, किसी से भी वह दूर नहीं है। लेकिन केवल लोगों की दृष्टि में भला बनने से कुछ नहीं मिलता। जब मनुष्य उस सत्यस्वरूप प्रभु में लीन होता है, तब

अहंभावना स्वयमेव दूर हो जाती है ।। २ ।। वही मनुष्य प्रभु में लीन होता है, जिसे प्रभु स्वयं अपने चरणों में जगह देता है । उस मनुष्य के भीतर रत्न जैसी बहुमूल्य आत्मिक जीवन की सूझ प्रकट हो जाती है । उस मनुष्य की दुर्बुद्धि दूर हो जाती है और वह ऊँची आत्मिक अवस्था प्राप्त कर लेता है । गुरु की कृपा से वह परमात्मा का नाम-स्मरण करता रहता है ।। ३ ।। दास नानक का कथन है कि हे प्रभु ! मैं दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूँ । जब तुम्हें उपयुक्त लगे, तब ही तुम प्रार्थना को सफल करते हो । हे भाई ! कृपा करके परमात्मा जिसे अपनी भक्ति में प्रवृत्त करता है, वही उसे सदा स्मरण करता है ।। ४ ।। २ ।।

।। सूही महला ५ ।। धनु सोहागनि जो प्रभू पछानै । मानै हुकमु तजै अभिमानै । प्रिअ सिउ राती रलीआ मानै ।।१।। सुनि सखीए प्रभ मिलण नीसानी । मनु तनु अरपि तजि लाज लोकानी ।। १ ।। रहाउ ।। सखी सहेली कउ समझावै । सोई कमावै जो प्रभ भावै । सा सोहागणि अंकि समावै ।। २ ।। गरबि गहेली महलु न पावै । फिरि पछुतावै जब रैणि बिहावै । करमहीणि मनमुखि दुखु पावै ।। ३ ।। बिनउ करी जे जाणा दूरि । प्रभु अबिनासी रहिआ भरपूरि । जनु नानकु गावै देखि हदूरि ।। ४ ।। ३ ।।

हे सहेली ! वह जीव-स्त्री प्रशंसनीय है, सौभाग्यवती है, जो प्रभु-पति के साथ मिलाप करती है, जो अहंकार त्यागकर प्रभु-पति का हुक्म मानती है । वह जीव-स्त्री प्रभु-पति के प्रेम-रंग में रँगी हुई उसके मिलाप का आत्मिक सुख महसूसती रहती है ।। १ ।। हे सहेली ! परमात्मा को मिलने की निशानी सुन लो । (वह निशानी यह है कि) लोकलाज की ख़ातिर काम करना छोड़कर अपना मन-तन परमात्मा के हवाले कर दो ।। १ ।। रहाउ ।। (एक सहेली दूसरी सत्संगिनी सहेली को समझाती है और कहती है कि) जो जीव-स्त्री वही कुछ करती है जो प्रभु-पति को भला लगता है, वह सौभाग्यवती होती है और सदैव प्रभु के चरणों में लीन रहती है ।। २ ।। जो जीव-स्त्री अहंकार में फँसी रहती है, वह प्रभु-पति के चरणों में जगह प्राप्त नहीं कर सकती । जब ज़िन्दगी की रात्रि (मिलन-निशा) बीत जाती है, तब वह पश्चात्ताप करती है । स्वेच्छाचारिणी अभागी जीव-स्त्री सदा दुःखी रहती है ।। ३ ।। हे भाई ! मैं परमात्मा के द्वार पर (लोकदिखावे के लिए) प्रार्थना तब करूँ, जब मैं प्रभु को कहीं दूर जानूँ ! वह अनश्वर प्रभु सर्वत्र व्यापक है । दास नानक उसे अपने अंग-संग देखकर उसकी गुणस्तुति करता है ।। ४ ।। ३ ।।

॥ सूही महला ५ ॥ ग्रिहु वसि गुरि कीना हउ घर की नारि । दस दासी करि दीनी भतारि । सगल समग्री मै घर की जोड़ी । आस पिआसी पिर कउ लोड़ी ॥ १ ॥ कवन कहा गुन कंत पिआरे । सुघड़ सरूप दइआल मुरारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतु सीगारु भउ अंजनु पाइआ । अंम्रित नामु तंबोलु मुखि खाइआ । कंगन बसत्र गहने बने सुहावे । धन सभ सुख पावै जां पिरु घरि आवै ॥ २ ॥ गुण कामण करि कंतु रीझाइआ । वसि करि लीना गुरि भरमु चुकाइआ । सभ ते ऊचा मंदरु मेरा । सभ कामणि तिआगी प्रिउ प्रीतमु मेरा ॥ ३ ॥ प्रगटिआ सूरु जोति उजीआरा । सेज विछाई सरध अपारा । नव रंग लालु सेज रावण आइआ । जन नानक पिर धन मिलि सुखु पाइआ ॥ ४ ॥ ४ ॥

हे सहेली ! उस प्रभु-पति ने गुरु के द्वारा मेरा शरीर रूपी घर संयमित कर दिया है । अब मैं घर की स्वामिनी बन गई हूँ । उस पति ने दसों इन्द्रियों को मेरी दासियाँ बना दिया है । मैंने अपने शरीर-घर का सारा सामान सजाकर रख दिया है (सेज सजाकर बैठी हूँ) । अब मैं प्रभु-पति के दर्शन की आकांक्षा में उसकी प्रतीक्षा कर रही हूँ ॥ १ ॥ बुद्धिमान, दयालु प्रभु-पति के मैं कौन-कौन से गुण कहूँ ? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अब मैंने सदाचरण को अपने जीवन का शृंगार बना लिया है । मैंने उसके प्रीति-भय का सुरमा (आँखों में) डाल लिया है । उसकी कृपा से आत्मिक जीवन देनेवाला नाम रूपी पान मुँह में खाया है । हे सहेली ! जब प्रभु-पति हृदय-घर में अवस्थित हो जाता है, तब जीव-स्त्री तमाम सुख प्राप्त कर लेती है और उसके कंगन, कपड़े, गहने सुन्दर लगने लगते हैं ॥ २ ॥ हे सहेली ! गुरु ने जिस जीव-स्त्री की दुबिधा दूर कर दी, उसने प्रभु-पति को अपने वश में कर लिया, गुणों के टोने बनाकर प्रभु-पति को प्रसन्न कर लिया । प्रभु-कृपा से ही मेरा हृदय रूपी घर वासनाओं से ऊपर (उदात्त) हो गया है । दूसरी समस्त स्त्रियों को छोड़कर वह प्रियतम मेरा प्यारा बन गया है ॥ ३ ॥ हे सहेली ! मेरे लिए सूरज चढ़ गया है, आत्मिक जीवन की ज्योति जग पड़ी है । अनन्त प्रभु की श्रद्धा की सेज मैंने बिछा दी है । अपनी कृपा से वह नित्य नवीन प्रेम-लीला करनेवाला प्रियतम मेरे हृदय की सेज पर विराजता है । गुरु नानक का कथन है कि प्रभु-पति को मिलकर जीव-स्त्री आत्मिक आनन्द भोगती है ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ उमकिओ हीउ मिलन प्रभ ताई ।

खोजत चरिओ देखउ प्रिअ जाई। सुनत सदेसरो प्रिअ ग्रिहि सेज विछाई। भ्रमि भ्रमि आइओ तउ नदरि न पाई ॥ १ ॥ किन बिधि हीअरो धीरै निमानो। मिलु साजन हउ तुझु कुरबानो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एका सेज विछी धनकंता। धन सूती पिरु सद जागंता। पीओ मदरो धन मतवंता। धन जागै जे पिरु बोलंता ॥ २ ॥ भई निरासी बहुतु दिन लागे। देस दिसंतर मै सगले झागे। खिनु रहनु न पावउ बिनु पग पागे। होइ क्रिपालु प्रभ मिलह सभागे ॥ ३ ॥ भइओ क्रिपालु सतसंगि मिलाइआ। बूझी तपति घरहि पिरु पाइआ। सगल सीगार हुणि मुझहि सुहाइआ। कहु नानक गुरि भरमु चुकाइआ ॥ ४ ॥ जह देखा तह पिरु है भाई। खोल्हिओ कपाटु ता मनु ठहराई ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ ५ ॥

हे सखी! प्यारे प्रभु का आगमन सुनते हुए मैंने हृदय रूपी घर में सेज बिछा दी है। मेरा हृदय प्रभु को मिलने के लिए प्रसन्नता से उछल पड़ा है। प्रभु को खोजने के लिए चला था, लेकिन भटक-भटककर लौट आया है, प्रभु कहीं दृष्टिगत नहीं हुए ॥ १ ॥ हे प्रभु! तुम्हारे दर्शनों के बिना मेरा यह निराश्रित हृदय कैसे धैर्य धारण करे? तुम कृपापूर्वक मुझे दर्शन दो, मैं तुम पर क़ुर्बान हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीव-स्त्री और प्रभु-पति की एक ही सेज बिछी हुई है, पर जीव-स्त्री (मोह-निद्रा में) सोई रहती है। प्रभु-पति सदा-सदा जागता रहता है अर्थात् माया के प्रभाव से निर्लिप्त रहता है। जीव-स्त्री ऐसे मस्त रहती है, जैसे इसने मदिरा-पान किया हुआ हो। यदि प्रभु-पति स्वयं जगाए, तो जीव-स्त्री की निद्रा भंग हो सकती है ॥ २ ॥ हे सखी! बहुत सारे दिन बीत गए हैं, मैंने सारे देशों में छानबीन कर ली है। मैं बाहर खोज-खोजकर **निराश** हो गई हूँ। उस प्रभु-पति के चरणों में जगह लिये बिना मुझे एक **क्षण** के लिए भी शान्ति प्राप्त नहीं होती। यदि वह आप **कृपालु** हो, तो हम जीव-स्त्रियाँ सौभाग्यवती होकर उस प्रभु को मिल सकती हैं ॥३॥ गुरु नानक का कथन है कि प्रभु मुझ पर दयालु हो गया है। मुझे उसने सत्संग में मिला दिया है। मेरी जलन मिट गई है, मैंने उस प्रभु-पति को हृदय-घर में ही प्राप्त कर लिया है। अब मुझे समस्त श्रृंगार सुन्दर लग रहे हैं, गुरु ने मेरी दुविधा दूर कर दी है ॥ ४ ॥ हे भाई! गुरु ने भ्रम का परदा उतार दिया है, मेरा मन स्थिर हो गया है। अब मैं जिधर देखता हूँ, मुझे प्रभु ही दृष्टिगत होता है ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ ५ ॥

।। सूही महला ५ ।। किआ गुण तेरे सारि सम्हाली मोहि निरगुन के दातारे। बैखरीदु किआ करे चतुराई इहु जीउ पिंडु सभु थारे ।। १ ।। लाल रंगीले प्रीतम मनमोहन तेरे दरसन कउ हम बारे ।। १ ।। रहाउ ।। प्रभु दाता मोहि दीनु भेखारी तुम्ह सदा सदा उपकारे। सो किछु नाही जि मै ते होवै मेरे ठाकुर अगम अपारे ।। २ ।। किआ सेव कमावउ किआ कहि रीझावउ बिधि कितु पावउ दरसारे। मिति नही पाईऐ अंतु न लहीऐ मनु तरसै चरनारे ।। ३ ।। पावउ दानु ढीठु होइ मागउ मुखि लागै संत रेनारे। जन नानक कउ गुरि किरपा धारी प्रभि हाथ देइ निसतारे ।। ४ ।। ६ ।।

मुझ गुणहीन के दाता प्रभु ! मैं तुम्हारे कौन-कौन से गुण स्मरण कर हृदय में बसाऊँ ? (क्योंकि) क्रीतदास कोई चालाकी की बात नहीं कर सकता। मेरा यह शरीर और मेरी यह आत्मा सब तुम्हारे ही दिए हुए हैं ।। १ ।। हे कौतुकी प्रियतम ! हम जीव तुम पर बलिहारी हैं ।। १ ।। रहाउ ।। तुम मालिक हो, देन देनेवाले हो और मैं कंगाल याचक हूँ; तुम सदैव ही मुझ पर कृपा करते हो। हे मेरे अपरंपार तथा अगम्य मालिक ! मैं कोई भी कार्य करने में असमर्थ हूँ (जो भी करते हो, तुम ही करते हो) ।। २ ।। मैं तुम्हारी क्या सेवा करूँ ? मैं क्या कहकर तुम्हें प्रसन्न करूँ ? मैं तुम्हारे दर्शन कैसे करूँ ? मैं तुम्हारी हस्ती का मूल्यांकन नहीं कर सकता, तुम्हारे गुणों का भेद नहीं पाया जा सकता। मेरा मन हमेशा तुम्हारे चरणों में रहने को तरसता है ।। ३ ।। हे प्रभु ! मैं ढीठ बनकर तुम्हारे द्वार पर याचना करता हूँ कि मेरे मस्तक पर तुम्हारे सन्तों के चरणों की धूलि लगती रहे। गुरु नानक का कथन है कि जिस दास पर गुरु ने कृपा की, उसे प्रभु ने स्वयं अपने हाथों से पार उतार लिया ।। ४ ।। ६ ।।

सूही महला ५ घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। सेवा थोरी मागनु बहुता। महलु न पावै कहतो पहुता ।। १ ।। जो प्रिअ माने तिन की रीसा। कूड़े मूरख की हाठीसा ।। १ ।। रहाउ ।। भेख दिखावै सचु न कमावै। कहतो महली निकटि न आवै ।। २ ।। अतीतु सदाए माइआ का माता। मनि नही प्रीति कहै मुखि राता ।।३।। कहु नानक प्रभ बिनउ सुनीजै। कुचलु कठोरु कामी मुकतु

कीजै ॥ ४ ॥ दरसन देखे की वडिआई । तुम्ह सुखदाते पुरख सुभाई ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ १ ॥ ७ ॥

हे भाई ! यह मूर्ख जीव काम तो थोड़ा करता है, लेकिन इसके बदले में इसकी माँगें बहुत अधिक हैं। प्रभु के चरणों तक पहुँच तो नहीं कर सकता, लेकिन दावा करता है कि वह प्रभु की सेवा में पहुँचा हुआ है ॥१॥ हे भाई ! झूठे मूर्ख मनुष्य के हठ की बात सुन। यह उनका अनुकरण करता है, जो प्यारे प्रभु के द्वार से सत्कार प्राप्त कर चुके हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ झूठा मनुष्य अपने धार्मिक पाखण्ड (वेशभूषा आदि) दिखा रहा है, सत्यस्वरूप प्रभु के नाम-स्मरण की कमाई नहीं करता। मुँह से दावा करता है कि वह प्रभु की सेवा में पहुँचा हुआ है, पर प्रभु को सही नहीं पहचानता ॥ २ ॥ यह मूर्ख मन अपने आप त्यागी कहलाता है, पर माया में लीन रहता है। इसमें प्रभु-चरणों का प्रेम नहीं है, परन्तु कहता यह है कि वह प्रभु के प्रेम-रंग में रँगा हुआ है ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि हे प्रभु ! मेरी प्रार्थना सुनो। यह जीव कुकर्मी, निर्दयी और विषयी है। इसे इन विकारों से मुक्ति दो ॥ ४ ॥ हे सत्पुरुष ! तुम सब सुख देने में समर्थ हो, प्रेमपूरित हो। हम जीवों को यह सामर्थ्य प्रदान करो कि तुम्हारा दर्शन कर सकें ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ १ ॥ ७ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ बुरे काम कउ ऊठि खलोइआ । नाम की बेला पै पै सोइआ ॥ १ ॥ अउसरु अपना बूझै न इआना । माइआ मोह रंगि लपटाना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लोभ लहरि कउ बिगसि फूलि बैठा । साध जना का दरसु न डीठा ॥ २ ॥ कबहू न समझै अगिआनु गवारा । बहुरि बहुरि लपटिओ जंजारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिखै नाद करन सुणि भीना । हरि जसु सुनत आलसु मनि कीना ॥ ३ ॥ द्रिसटि नाही रे पेखत अंधे । छोडि जाहि झूठे सभि धंधे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहु नानक प्रभ बखस करीजै । करि किरपा मोहि साधसंगु दीजै ॥४॥ तउ किछु पाईऐ जउ होईऐ रेना । जिसहि बुझाए तिसु नामु लैना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ २ ॥ ८ ॥

हे भाई ! मूर्ख मनुष्य दुष्कर्म करने के लिए शीघ्र तत्पर हो उठता है, परन्तु परमात्मा के नाम-स्मरण के समय निश्चिन्त होकर सोया रहता है ॥ १ ॥ मूर्ख मनुष्य माया-मोह की लगन में मस्त रहता है। यह नहीं समझता कि मनुष्य-जीवन ही अपना वास्तविक सुअवसर है (जब प्रभु को याद किया जा सकता है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! तू लोभ की लहर

के कारण (धन-सम्बन्धी आशा पर) खुश होकर बैठता है, कभी सन्तजनों का दर्शन नहीं करता ॥ २ ॥ आत्मिक जीवन की सूझ से रहित मूर्ख मनुष्य अपने कल्याण की बात कभी नहीं समझता, पुनःपुनः माया-सम्बन्धी धन्धों में लगा रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह विषय-विकारों के गीत कानों से सुनकर खुश होता है, लेकिन परमात्मा का गुणगान सुनने में आलस्य करता है ॥ ३ ॥ हे मूढ़ ! तू क्यों नहीं देखता कि यह सारे दुनियावी धन्धे छोड़कर आखिर यहाँ से चला जाना है ? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु नानक का कथन है कि हे प्रभु ! कृपा करके मुझे गुरमुखों की संगति प्रदान करो ॥ ४ ॥ हे भाई ! गुरमुखों की चरणधूलि बनकर ही कुछ प्राप्त किया जा सकता है। जिस मनुष्य को परमात्मा चरणधूलि होने की सूझ देता है, वही सत्संगति में रहकर उसका नाम स्मरण करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ २ ॥ ८ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ घर महि ठाकुरु नदरि न आवै। गल महि पाहणु लै लटकावै ॥ १ ॥ भरमे भूला साकतु फिरता। नीरु बिरोलै खपि खपि मरता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसु पाहण कउ ठाकुरु कहता। ओहु पाहणु लै उस कउ डुबता ॥ २ ॥ गुनहगार लूणहरामी। पाहण नाव न पारगिरामी ॥ ३ ॥ गुर मिलि नानक ठाकुरु जाता। जलि थलि महीअलि पूरन बिधाता ॥ ४ ॥ ३ ॥ ९ ॥

परमात्मा से वियुक्त जीव को अपने घर में मालिक-प्रभु दृष्टिगत नहीं होता और पत्थर की मूर्ति गले में लटकाए फिरता है (गले में शालिग्राम पहननेवालों पर व्यंग्य है) ॥ १ ॥ हे भाई ! परमात्मा से बिछुड़ा हुआ मनुष्य दुबिधा में पड़कर कुमार्गगामी हुआ फिरता है। मूर्तिपूजा तो पानी का मन्थन करने के तुल्य है। यह व्यर्थ मेहनत करके (मूढ़ जीव) आत्मिक रूप से मृत्यु को चिपटाए फिरता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! वह मनुष्य जिस पत्थर को परमात्मा कहता है, वही पत्थर उस पुजारी को लेकर पानी में डूब जाता है (अर्थात् जिससे रक्षा की आशा करता है, वही उसका काल बन जाता है) ॥ २ ॥ हे कृतघ्न ! पत्थर की नाव नदी से पार नहीं उतर सकती ॥ ३ ॥ हे नानक ! जिस मनुष्य ने गुरु को मिलकर मालिक-प्रभु के साथ गहरा मेल किया है, उसे वह कर्तार पानी, पृथ्वी और आकाश सर्वत्र में बसता हुआ दिखाई देता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ ९ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ लालनु राविआ कवन गती री। सखी बतावहु मुझहि मती री ॥ १ ॥ सूहब सूहब सूहवी।

अपने प्रीतम कै रंगि रती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पाव मलोवउ संगि नैन भतीरी । जहा पठावहु जांउ तती री ॥ २ ॥ जप तप संजम देउ जती री । इक निमख मिलावहु मोहि प्रानपती री ॥ ३ ॥ माणु ताणु अहंबुधि हती री । सा नानक सोहागवती री ॥ ४ ॥ ४ ॥ १० ॥

हे सहेली ! तूने किस तरीक़े से सुन्दर प्रभु के साथ मिलाप प्राप्त किया है ? मुझे भी वह ढंग बतला ॥ १ ॥ हे सहेली ! तेरे मुँह पर लाली है, तू अपने प्यारे के प्रेम-रंग में रँगी हुई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं तेरे पैर अपनी आँखों की पुतलियों से मलूँगी । तू मुझे जहाँ भेजेगी मैं वहीं जाऊँगी ॥ २ ॥ बस तू निमिषमात्र के लिए ही मुझे आत्मा का मालिक-प्रभु मिला दे, मैं उसके बदले में सारे जप, तप और संयम दे दूँगी ॥ ३ ॥ हे नानक ! जो जीव-स्त्री अभिमान तथा अहंत्व त्याग देती है, अहंत्व वाली बुद्धि का परित्याग कर देती है, वह सौभाग्यवती हो जाती है ॥४॥४॥१०॥

॥ सूही महला ५ ॥ तूं जीवनु तूं प्रान अधारा । तुझ ही पेखि पेखि मनु साधारा ॥ १ ॥ तूं साजनु तू प्रीतमु मेरा । चितहि न बिसरहि काहू बेरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बै खरीदु हउ दासरो तेरा । तूं भारो ठाकुरु गुणी गहेरा ॥ २ ॥ कोटि दास जाकै दरबारे । निमख निमख वसै तिन्ह नाले ॥ ३ ॥ हउ किछु नाही सभु किछु तेरा । ओति पोति नानक संगि बसेरा ॥ ४ ॥ ५ ॥ ११ ॥

हे प्रभु ! तुम ही मेरी आत्मा हो, तुम ही मेरी आत्मा का सहारा हो। तुम्हें देख-देखकर ही मेरा मन धैर्य धारण करता है ॥१॥ हे प्रभु ! तुम ही मेरे मित्र हो, तुम ही मेरे प्यारे हो । तुम किसी भी समय मेरे मन से विस्मृत न होना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! मैं तुम्हारा तुच्छ-सा क्रीतदास हूँ, तुम मेरे मालिक हो; तुम सर्वगुणसम्पन्न हो और गहनगम्भीर हो ॥ २ ॥ वह प्रभु ऐसा है कि करोड़ों सेवक उसके द्वार पर पड़े रहते हैं, वह प्रतिपल उनके पास रहता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि मेरी अपनी कुछ भी सामर्थ्य नहीं, सब कुछ तुम्हारी देन है । ताने-पेटे की तरह तुम ही मेरे संग रहते हो (मेरे संरक्षक हो) ॥ ४ ॥ ५ ॥ ११ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ सूख महल जा के ऊच दुआरे । ता महि वासहि भगत पिआरे ॥ १ ॥ सहज कथा प्रभ की अति मीठी । विरलै काहू नेत्रहु डीठी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तह गीत

नाद अखारे संगा। ऊहा संत करहि हरि रंगा ॥ २ ॥ तह मरणु न जीवणु सोगु न हरखा। साच नाम की अंम्रित वरखा ॥ ३ ॥ गुहज कथा इह गुर ते जाणी। नानकु बोलै हरि हरि बाणी ॥ ४ ॥ ६ ॥ १२ ॥

हे भाई! उस प्रभु की गुणस्तुति उसके प्यारे भक्त ही करते हैं। उस प्रभु के ऊँचे द्वारों वाले महल आनन्द से परिपूरित हैं ॥ १ ॥ आत्मिक स्थिरता पैदा करनेवाली प्रभु की गुणस्तुति अत्यन्त स्वादिष्ट है, लेकिन किसी विरले मनुष्य ने उसे आँखों से देखा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई! आत्मिक स्थिरता पैदा करनेवाली उस गुणस्तुति में मानो गीत और राग होते रहते हैं, उसमें मानो अखाड़े बने होते हैं (जहाँ कामादिक पहलवानों के साथ मुक़ाबला करने की जाँच सीखी जाती है)। उस गुणस्तुति में प्रवृत्त होकर सन्तजन परमात्मा के मिलाप का आनन्द भोगते हैं ॥२॥ हे भाई! गुणस्तुति में प्रवृत्त होने से जन्म-मरण का चक्र नहीं रहता, दुःख-सुख स्पर्श नहीं कर सकते। उस अवस्था में सत्यस्वरूप प्रभु के आत्मिक जीवन देनेवाले नाम-जल की वर्षा होती रहती है ॥ ३ ॥ हे भाई! इस गुणस्तुति के सम्बन्ध में भेद की बात नानक ने अपने गुरु से समझी है, इसीलिए वह परमात्मा की गुणस्तुति की वाणी उच्चरित करता रहता है ॥ ४ ॥ ६ ॥ १२ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ जाकै दरसि पाप कोटि उतारे। भेटत संगि इहु भवजलु तारे ॥ १ ॥ ओइ साजन ओइ मीत पिआरे। जो हम कउ हरि नामु चितारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा का सबदु सुनत सुख सारे। जा की टहल जमदूत बिदारे ॥ २ ॥ जाकी धीरक इसु मनहि सधारे। जाकै सिमरणि मुख उजलारे ॥ ३ ॥ प्रभ के सेवक प्रभि आपि सवारे। सरणि नानक तिन्ह सद बलिहारे ॥ ४ ॥ ७ ॥ १३ ॥

हे भाई! (सन्तजन ही मेरे प्यारे मित्र हैं) जिनके दर्शन से करोड़ों पाप उतर जाते हैं, जिनके चरण स्पर्श करने से संसार-समुद्र से पार उतरा जाता है ॥ १ ॥ हे भाई! जो सन्त मुझे परमात्मा का नाम स्मरण कराते हैं, वे ही मेरे साज्जन हैं, वे ही प्यारे मित्र हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनका वचन सुनते हुए सारे सुख प्राप्त हो जाते हैं, जिनकी सेवा करने से यमदूत भी नष्ट हो जाते हैं ॥ २ ॥ हे भाई! जिनमे मिला हुआ धैर्य मन को ढाढ़स देता है और जिनके नाम-स्मरण से लोक-परलोक में मुख उज्ज्वल होता है ॥ ३ ॥ हे नानक! प्रभु ने आप ही अपने सेवकों का

जीवन सुन्दर बना दिया है। हे भाई! हमें उन सेवकों की शरण लेनी चाहिए और उन पर सदा क़ुर्बान होना चाहिए ॥ ४ ॥ ७ ॥ १३ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ रहणु न पावहि सुरि नर देवा। ऊठि सिधारे करि मुनि जन सेवा ॥ १ ॥ जीवत पेखे जिन्ही हरि हरि धिआइआ। साध संगि तिन्ही दरसनु पाइआ ॥१॥रहाउ॥ बादिसाह साह वापारी मरना। जो दीसै सो कालहि खरना ॥ २ ॥ कूड़ै मोहि लपटि लपटाना। छोडि चलिआ ता फिरि पछुताना॥ ३ ॥ क्रिपानिधान नानक कउ करहु दाति। नामु तेरा जपी दिनु राति ॥ ४ ॥ ८ ॥ १४ ॥

हे भाई! अनेक लोग स्वयं को दैवी मनुष्य, देवगण, ऋषि, मुनि कहला गए और अनेक उनकी सेवा करते और दुनिया में आते-जाते रहे; यहाँ कोई भी हमेशा के लिए टिका नहीं रह सका ॥ १ ॥ किन्तु आत्मिक जीवन वाले, केवल वही मनुष्य हुए, जिन्होंने परमात्मा का स्मरण किया है। उन्होंने ही सत्संगति में रहकर परमात्मा का दर्शन किया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई! साहूकार, व्यापारी, बादशाह सभी को आख़िर यहाँ से जाना है; जो भी दीख पड़ता है, सब अन्ततः काल का ग्रास बनेगा ॥२॥ मनुष्य हमेशा मिथ्या मोह में फँसा रहता है; लेकिन जब दुनियावी पदार्थ छोड़कर जाना पड़ता है, तो पश्चात्ताप करता है ॥ ३ ॥ हे कृपासिन्धु प्रभु! मुझ (नानक को) शक्ति दो कि मैं (नानक) दिन-रात तुम्हारा नाम जपता रहूँ ॥ ४ ॥ ८ ॥ १४ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ घट घट अंतरि तुमहि बसारे। सगल समग्री सूति तुमारे ॥ १ ॥ तूं प्रीतम तूं प्रान अधारे। तुमही पेखि पेखि मनु बिगसारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक जोनि भ्रमि भ्रमि भ्रमि हारे। ओट गही अब साध संगारे ॥ २ ॥ अगम अगोचरु अलख अपारे। नानकु सिमरै दिनु रैना रे ॥ ३ ॥ ६ ॥ १५ ॥

हे प्रभु! हर एक शरीर में तुम ही अवस्थित हो। तमाम चीज़ें तुम्हारी मर्यादा के धागे में बँधी हैं ॥ १ ॥ हे प्रभु! तुम हमारे प्रियतम हो, तुम हमारी आत्मा का सहारा हो। तुम्हें देख-देखकर मन प्रसन्न होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु! अनेक जीव अलग-अलग योनियों में भटक-भटककर थक जाते हैं, मनुष्य-जन्म में आकर तुम्हारी सत्संगति का आसरा लेते हैं ॥ २ ॥ हे भाई! गुरु नानक दिन-रात्रि उस परमात्मा का स्मरण

करते हैं, जो अगम्य है; जिस तक ज्ञानेन्द्रियों की पहुँच नहीं हो सकती और जो अपरम्पार और अनन्त है ॥ ३ ॥ ९ ॥ १५ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ कवन काज माइआ वडिआई । जाकउ बिनसत बार न काई ॥ १ ॥ इहु सुपना सोवत नही जानै । अचेत बिवसथा महि लपटानै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ महा मोहि मोहिओ गावारा । पेखत पेखत ऊठि सिधारा ॥ २ ॥ ऊच ते ऊच ताका दरबारा । कई जंत बिनाहि उपारा ॥ ३ ॥ दूसर होआ ना को होई । जपि नानक प्रभ एको सोई ॥ ४ ॥ १० ॥ १६ ॥

जिस माया को नष्ट होते हुए देर नहीं लगती, उस माया के कारण मिली महानता भी किसी काम की नहीं ॥१॥ यह जगत स्वप्न है। स्वप्न में सोता हुआ मनुष्य यह नहीं जानता (कि मैं सोया हुआ हूँ)। वह भ्रमित अवस्था में जगत के मोह में चिपटा रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! मूर्ख मनुष्य माया के मोह में लीन रहता है, लेकिन देखते-देखते ही यहाँ से चल देता है ॥ २ ॥ हे भाई ! उसका दरबार ऊँचे से ऊँचा है। वह अनेक जीवों को नष्ट भी करता है और पैदा भी करता है ॥ ३ ॥ (इसलिए, हे नानक !) उस एक परमात्मा का नाम जपा कर, जिसके तुल्य कोई अभी तक नहीं हुआ है, न ही आगे होगा ॥ ४ ॥ १० ॥ १६ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ सिमरि सिमरि ताकउ हउ जीवा । चरण कमल तेरे धोइ धोइ पीवा ॥ १ ॥ सो हरि मेरा अंतरजामी । भगत जना कै संगि सुआमी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुणि सुणि अंम्रित नामु धिआवा । आठ पहर तेरे गुण गावा ॥२॥ पेखि पेखि लीला मनि आनंदा । गुण अपार प्रभ परमानंदा ॥ ३ ॥ जाकै सिमरनि कछु भउ न बिआपै । सदा सदा नानक हरि जापै ॥ ४ ॥ ११ ॥ १७ ॥

हे भाई ! प्रभु का नाम सदा स्मरण करते समझ कि मैं आत्मिक जीवन प्राप्त कर रहा हूँ। हे प्रभु ! मैं तेरे सुन्दर चरण धोकर नित्य पान करता हूँ ॥ १ ॥ हे भाई ! मालिक-प्रभु अपने भक्तों के साथ रहता है। मेरा वह हरि-प्रभु हर एक दिल की जानता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! बार-बार यह सुनकर कि तुम्हारा नाम आत्मिक जीवन का दाता है, मैं तुम्हारा नाम स्मरण करता रहता हूँ, आठों प्रहर मैं तुम्हारी गुणस्तुति के गीत गाता हूँ ॥ २ ॥ हे सर्वोच्च आत्मिक आनन्द के मालिक-प्रभु !

तुम्हारे गुण अनन्त हैं। तुम्हारे कौतुक देख-देखकर मन में आनन्द अनुभूत होता है ॥ ३ ॥ हे नानक ! तू भी उस हरि-प्रभु का नाम जपा कर, जिसके स्मरण के प्रभाव से कोई भय स्पर्श नहीं कर सकता ॥४॥११॥१७॥

॥ सूही महला ५ ॥ गुर कै बचनि रिदै धिआनु धारी। रसना जापु जपउ बनवारी ॥ १ ॥ सफल मूरति दरसन बलिहारी। चरण कमल मन प्राण अधारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साध संगि जनम मरण निवारी। अंम्रित कथा सुणि करन अधारी ॥ २ ॥ काम क्रोध लोभ मोह तजारी। द्रिड़ु नाम दानु इसनानु सुचारी ॥ ३ ॥ कहु नानक इहु ततु बीचारी। राम नाम जपि पारि उतारी ॥ ४ ॥ १२ ॥ १८ ॥

हे भाई ! गुरु के शब्दों पर आचरण द्वारा मैं अपने हृदय में परमात्मा का स्मरण करता हूँ और अपनी जिह्वा से परमात्मा का नाम जपता हूँ ॥ १ ॥ गुरु की हस्ती मनुष्य-जीवन का यथार्थ फल देनेवाली है। मैं गुरु के दर्शन पर बलिहारी हूँ। गुरु के कोमल चरणों को मैं अपने मन, तन के आनन्द का अवलम्ब बनाता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! गुरु की संगति में रहकर मैंने जन्म-मरण का चक्र पूर्ण कर लिया है, इसलिए आत्मिक जीवन देनेवाली गुणस्तुति कानों से सुनकर इसे जीवन का आसरा बना रहा हूँ ॥ २ ॥ हे भाई ! मैंने काम, क्रोध, लोभ, मोह को त्याग दिया है। हृदय में प्रभु-नाम को दृढ़तापूर्वक स्थिर करना, दूसरों की सेवा करना, आचरण को पवित्र रखना —यह मैंने अपनी उत्तम जीवन-मर्यादा बना ली है ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि तुम भी इस वास्तविकता को अपने मन में बसा लो और गुरु के माध्यम से परमात्मा का नाम जपकर स्वयं को संसार-सागर से पार कर लो ॥ ४ ॥ १२ ॥ १८ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ लोभि मोहि मगन अपराधी। करणहार की सेव न साधी ॥ १ ॥ पतित पावन प्रभ नाम तुमारे। राखि लेहु मोहि निरगुनीआरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तूं दाता प्रभ अंतरजामी। काची देह मानुख अभिमानी ॥ २ ॥ सुआद बाद ईरख मद माइआ। इन संगि लागि रतन जनमु गवाइआ ॥ ३ ॥ दुखभंजन जगजीवन हरि राइआ। सगल तिआगि नानकु सरणाइआ ॥ ४ ॥ १३ ॥ १९ ॥

हे प्रभु! हम भूलनेवाले जीव लोभ, मोह में मस्त रहते हैं। तुम हमारे जनक हो (लेकिन) हम कृतघ्न जीव तुम्हारी सेवा-भक्ति नहीं करते ॥ १ ॥

हे प्रभु! तुम्हारा नाम विकृत जीवों को पवित्र करनेवाला है। मुझ गुणहीन को विकारों से बचाए रखो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! तुम हमें सब कुछ देनेवाले हो, अन्तर्यामी हो, लेकिन हम जीव इस नश्वर शरीर का ही अभिमान करते रहते हैं ॥२॥ हे प्रभु ! लौकिक पदार्थों के आस्वाद, झगड़े, ईर्ष्या, माया के अभिमान आदि में प्रवृत्त होकर हम अपना बहुमूल्य मनुष्य-जन्म गँवा रहे हैं ॥ ३ ॥ हे दुःखों के नाशक, जगत के जीवन, प्रभु बादशाह ! दूसरे सब सहारे छोड़कर (नानक) तुम्हारी शरण आया है (आश्रय देना) ॥ ४ ॥ १३ ॥ १९ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ पेखत चाखत कहीअत अंधा। सुनीअत सुनीऐ नाही। निकटि वसतु कउ जाणै दूरे पापी पाप कमाही ॥ १ ॥ सो किछु करि जितु छुटहि परानी। हरि हरि नामु जपि अंम्रित बानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घोर महल सदा रंगि राता। संगि तुम्हारै कछू न जाता ॥ २ ॥ रखहि पोचारि माटी का भांडा। अति कुचील मिलै जम डांडा ॥ ३ ॥ काम क्रोधि लोभि मोहि बाधा। महा गरत महि निघरत जाता ॥४॥ नानक की अरदासि सुणीजै। डूबत पाहन प्रभ मेरे लीजै ॥ ५ ॥ १४ ॥ २० ॥

हे भाई ! मनुष्य दुनियावी पदार्थों को देखता और आस्वादन करता हुआ भी अन्धा ही कहा जा सकता है। सुनता हुआ भी बहिरा है (अर्थात् आत्मिक जीवन से असम्पृक्त है), समीप के नाम रूपी पदार्थ को कहीं दूर समझता है। (इस माया से उपजी विकृति के कारण) विकारों में फँसे हुए जीव इसलिए विकारग्रस्त ही रहते हैं ॥ १ ॥ हे प्राणी ! कोई वह काम करो, जिसके प्रभाव से तुम विकारों से बचे रह सको। सदा परमात्मा का नाम जपा करो। प्रभु की गुणस्तुति की वाणी आत्मिक जीवन देनेवाली है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्राणी ! तुम सदैव घोड़े, महलों आदि की लालसा में लीन रहते हो, लेकिन इनमें से कोई भी चीज़ तुम्हारा साथ नहीं देती ॥ २ ॥ हे प्राणी ! तुम इस मिट्टी के बर्तन रूपी शरीर को बना, सँवारकर रखते हो, लेकिन यह भीतर से बहुत गन्दा हुआ पड़ा है। ऐसे जीवन वाले व्यक्ति को यमदूत सज़ा देते हैं ॥ ३ ॥ हे प्राणी ! तुम काम, क्रोध, लोभ, मोह में बँधे पड़े हो और विकारों के गहरे गर्त में पड़ते जा रहे हो ॥ ४ ॥ हे मेरे प्रभु ! नानक की प्रार्थना सुनो और हमें (डूबते हुए पत्थरों को) डूबने से बचा लो ॥ ५ ॥ १४ ॥ २० ॥

॥ सूही महला ५ ॥ जीवत मरै बुझै प्रभ सोइ। तिसु

जन करमि परापति होइ ॥ १ ॥ सुणि साजन इउ दुतरु तरीऐ। मिलि साधू हरि नामु उचरीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एक बिना दूजा नही जानै। घट घट अंतरि पारब्रहमु पछानै ॥ २ ॥ जो किछु करै सोई भल मानै। आदि अंत की कीमति जानै ॥ ३ ॥ कहु नानक तिसु जन बलिहारी। जाकै हिरदै वसहि मुरारी ॥ ४ ॥ १५ ॥ २१ ॥

हे भाई! जो मनुष्य दुनियावी कामकाज करता हुआ मोह त्याग देता है, वह मनुष्य परमात्मा से ऐक्य कर लेता है; उस मनुष्य को परमात्मा की कृपा से उसका (परमात्मा का) मिलाप प्राप्त हो जाता है ॥ १ ॥ मेरे प्रियजन! सुनो, संसार-समुद्र से पार होना अत्यन्त कठिन है। गुरु को मिलकर प्रभु का नाम स्मरण करने से ही इससे पार उतरा जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई! जो मनुष्य प्रभु के अतिरिक्त किसी दूसरी ओर आकृष्ट नहीं होता, वह परमात्मा को हर एक शरीर में अवस्थित हुआ पहचान लेता है ॥ २ ॥ जो मनुष्य प्रभु की प्रत्येक बात को दुनिया के लिए हितकर मानता है, वह मनुष्य सत्यस्वरूप परमात्मा की क़ीमत पहचान लेता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि जिस मनुष्य के हृदय में तुम विद्यमान रहते हो, मैं उस मनुष्य पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ४ ॥ १५ ॥ २१ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ गुरु परमेसरु करणैहारु। सगल स्रिसटि कउ दे आधारु ॥ १ ॥ गुर के चरण कमल मन धिआइ। दूखु दरदु इसु तन ते जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भवजलि डूबत सतिगुरु काढै। जनम जनम का टूटा गाढै ॥ २ ॥ गुर की सेवा करहु दिन राति। सूख सहज मनि आवै सांति ॥ ३ ॥ सतिगुर की रेणु वडभागी पावै। नानक गुर कउ सद बलि जावै ॥ ४ ॥ १६ ॥ २२ ॥

हे मेरे मन! गुरु उस परमात्मा का रूप है, जो सर्वोपरि है, जो सब कुछ कर सकनेवाला है। गुरु समस्त सृष्टि को सहारा देता है ॥ १ ॥ हे मन! सदैव गुरु के सुन्दर कोमल चरणों का स्मरण किया कर (इस प्रकार) इस शरीर से हर प्रकार का दुःख-क्लेश दूर हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मन! गुरु संसार-समुद्र में डूबते हुए लोगों को बचा लेता है, अनेक जन्मों से परमात्मा से बिछुड़े हुए मनुष्य को परमात्मा से मिला देता है ॥ २ ॥ दिन-रात्रि गुरु की सेवा किया करो, इससे (सेवक) के मन में शान्ति पैदा हो जाती है और आत्मिक स्थिरता का आनन्द

मिलता है ॥ ३ ॥ हे नानक ! कोई भाग्यशाली मनुष्य गुरु की चरण-धूलि प्राप्त करता है (और तब वह) गुरु पर बलिहारी जाता है ॥४॥१६॥२२॥

॥ सूही महला ५ ॥ गुर अपुने ऊपरि बलि जाईऐ । आठ पहर हरि हरि जसु गाईऐ ॥ १ ॥ सिमरउ सो प्रभु अपना सुआमी । सगल घटा का अंतरजामी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरण कमल सिउ लागी प्रीति । साची पूरन निरमल रीति ॥ २ ॥ संत प्रसादि वसै मन माही । जनम जनम के किलविख जाही ॥ ३ ॥ करि किरपा प्रभ दीन दइआला । नानकु मागै संत रवाला ॥ ४ ॥ १७ ॥ २३ ॥

हे भाई ! अपने गुरु पर सदा बलिहारी होना चाहिए (क्योंकि) गुरु-कृपा से ही आठों प्रहर परमात्मा के गुण गाए जा सकते हैं ॥ १ ॥ (गुरु-कृपा से) मैं अपने अन्तर्यामी मालिक प्रभु का स्मरण करता रहता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! गुरु-कृपा से ही परमात्मा के सुन्दर चरणों से प्रेम होता है, प्रभु-चरणों में प्रीति ही अटल, पूर्ण और पवित्र जीवनयुक्ति है ॥ २ ॥ हे भाई ! गुरु-कृपा से वह परमात्मा, जिसके मन में बस जाता है, उसके अनेक जन्मों के पाप दूर हो जाते हैं ॥ ३ ॥ हे निराश्रितों पर दया करनेवाले प्रभु ! (नानक पर) कृपा करो । नानक तुम्हारे द्वार से गुरु के चरणों की धूलि माँगता है ॥ ४ ॥ १७ ॥ २३ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ दरसनु देखि जीवा गुर तेरा । पूरन करमु होइ प्रभ मेरा ॥ १ ॥ इह बेनंती सुणि प्रभ मेरे । देहि नामु करि अपणे चेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपणी सरणि राखु प्रभ दाते । गुरप्रसादि किनै विरलै जाते ॥ २ ॥ सुनहु बिनउ प्रभ मेरे मीता । चरण कमल वसहि मेरै चीता ॥ ३ ॥ नानकु एक करै अरदासि । विसरु नाही पूरन गुणतासि ॥ ४ ॥ १८ ॥ २४ ॥

सतिगुरु के दर्शन से मुझे आत्मिक जीवन मिल जाता है । हे प्रभु ! कृपा करो और सच्चे गुरु से मिलाप करवा दो ॥ १ ॥ हे प्रभु ! यह प्रार्थना सुनो । मुझे अपना सेवक बनाकर अपना नाम प्रदान करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे दाता प्रभु ! मुझे अपनी शरण में रखो । गुरु-कृपा से किसी विरले मनुष्य ने तुम्हारे साथ मेल-मिलाप किया है ॥ २ ॥ हे मेरे मित्र प्रभु ! मेरी प्रार्थना सुनो (ताकि) तुम्हारे सुन्दर चरण मेरे हृदय में अवस्थित हो जाएँ ॥ ३ ॥ हे समस्त गुणों के भण्डार प्रभु ! नानक एक प्रार्थना करता है कि तुम उसे कभी विस्मृत न होना ॥ ४ ॥ १८ ॥ २४ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ मीतु साजनु सुत बंधप भाई । जत कत पेखउ हरि संगि सहाई ॥ १ ॥ जति मेरी पति मेरी धनु हरि नामु । सूख सहज आनंद बिसराम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पारब्रहमु जपि पहिरि सनाह । कोटि आवध तिसु बेधत नाहि ॥ २ ॥ हरि चरन सरण गड़ कोट हमारै । कालु कंटकु जमु तिसु न बिदारै ॥ ३ ॥ नानक दास सदा बलिहारी । सेवक संत राजा राम मुरारी ॥ ४ ॥ १९ ॥ २५ ॥

हे भाई ! मैं जिधर देखता हूँ, परमात्मा मेरे साथ सहायक है। परमात्मा ही मित्र है, सज्जन है और वही पुत्र, सम्बन्धी और भाई है ॥१॥ हे भाई ! परमात्मा का नाम मेरी जाति है, मेरी प्रतिष्ठा, मेरा धन है (जिसके परिणामस्वरूप) मेरे भीतर आनन्द, शान्ति और आत्मिक स्थिरता के सुख हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! सदा परमात्मा का नाम जपा करो और यही नाम रूपी रक्षाकवच पहन रखो। इसे कामादिक करोड़ों हथियार वेध नहीं सकते ॥ २ ॥ हे भाई ! मेरे लिए तो परमात्मा के चरणों की शरण दुर्ग है। इस दुर्ग को दुःखदायक मृत्यु का भय नष्ट नहीं कर सकता ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि हे प्रभु बादशाह, मुरारी ! मैं तुम्हारे सन्तों पर (गुरमुखों पर) सदा बलिहारी जाता हूँ ॥४॥१९॥२५॥

॥ सूही महला ५ ॥ गुण गोपाल प्रभ के नित गाहा । अनद बिनोद मंगल सुख ताहा ॥ १ ॥ चलु सखीए प्रभु रावण जाहा । साध जना की चरणी पाहा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि बेनती जन धूरि बाछाहा। जनम जनम के किलविख लाहां॥२॥ मनु तनु प्राण जीउ अरपाहा । हरि सिमरि सिमरि मानु मोहु कटाहां ॥ ३ ॥ दीन दइआल करहु उतसाहा । नानक दास हरि सरणि समाहा ॥ ४ ॥ २० ॥ २६ ॥

हे सखी ! गोपाल प्रभु के गुण सदैव गाते रहें (जो गाते हैं), उन्हें सुख, आनन्द, चाव, खुशियाँ बनी रहती हैं ॥ १ ॥ उठो, प्रभु का स्मरण करने चलें और सन्तजनों के चरणों में जगह लें ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे सहेली ! प्रभु के समक्ष प्रार्थना करके सन्तों की चरणधूलि माँगें और अपने अनेक जन्मों के पाप दूर कर लें ॥ २ ॥ अपना तन, मन, आत्मा, प्राण प्रभु को भेंट कर दें। प्रतिपल परमात्मा का नाम स्मरण कर अपने भीतर से अहंकार और मोह दूर कर लें ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि हे दीनदयाल हरि ! मेरे भीतर चाव पैदा करो कि मुझे तुम्हारे सेवकों की शरण मिल जाय ॥ ४ ॥ २० ॥ २६ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ बैकुंठ नगरु जहा संत वासा । प्रभ चरण कमल रिद माहि निवासा ॥ १ ॥ सुणि मन तन तुझु सुखु दिखलावउ । हरि अनिक बिजन तुझु भोग भुंचावउ ॥१॥रहाउ॥ अंम्रित नामु भुंचु मन माही । अचरज साद ताके बरने न जाही ॥ २ ॥ लोभु मूआ त्रिसना बुझि थाकी । पारब्रहम की सरणि जन ताकी ॥ ३ ॥ जनम जनम के भै मोह निवारे । नानक दास प्रभ किरपा धारे ॥ ४ ॥ २१ ॥ २७ ॥

हे भाई ! जिस स्थान पर सन्तजन रहते हों, वहीं वैकुण्ठ होता है । सन्तों के सान्निध्य में रहकर प्रभु के सुन्दर चरण हृदय में अवस्थित हो जाते हैं ॥ १ ॥ हे भाई ! मेरी बात सुनो । उससे तुम्हें मन, तन में आत्मिक आनन्द महसूस होगा । प्रभु का नाम अनेक स्वादिष्ट भोजनों के तुल्य है। तुम्हें उन स्वादिष्ट भोज्य पदार्थों का आस्वाद मिलेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! सत्संगति में रहकर आत्मिक जीवनदाता हरि-नाम रूपी भोजन अपने मन में खाया करो । इस भोजन का स्वाद विस्मयजनक है और अवर्णनीय है ॥ २ ॥ हे भाई ! जिन सन्तों ने (सत्संगति के प्रभावस्वरूप) परमात्मा का आसरा ले लिया, उनके भीतर से लोभ समाप्त हो जाता है और तृष्णा की अग्नि बुझकर समाप्त हो जाती है ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि प्रभु अपने दासों पर कृपा करता है और उनके अनेक जन्मों के भय, मोह दूर कर देता है ॥ ४ ॥ २१ ॥ २७ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ अनिक बींग दास के परहरिआ । करि किरपा प्रभि अपना करिआ ॥ १ ॥ तुमहि छडाइ लीओ जनु अपना । उरझि परिओ जालु जगु सुपना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परबत दोख महा बिकराला । खिन महि दूरि कीए दइआला ॥ २ ॥ सोग रोग बिपति अति भारी । दूरि भई जपि नामु मुरारी ॥ ३ ॥ द्रिसटि धारि लीनो लड़ि लाइ । हरि चरण गहे नानक सरणाइ ॥ ४ ॥ २२ ॥ २८ ॥

प्रभु ने अपने सेवक की अनेक कमियाँ दूर कर दीं और कृपा करके उसे अपना बना लिया है ॥ १ ॥ हे प्रभु ! स्वप्न-तुल्य जगत का मोह रूपी जाल सेवक के इर्द-गिर्द फैला था, परन्तु तुमने अपने सेवक को उसमें से आप निकाल लिया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शरणागतों के पहाड़ों जितने बड़े और भयानक दोष दीनदयाल प्रभु ने एक क्षण में दूर कर दिए ॥ २ ॥ हे भाई ! अनेक दुःख और रोग, भारी मुसीबतें परमात्मा का नाम-स्मरण करने से दूर हो गईं ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि जिस मनुष्य ने

परमात्मा के चरण पकड़ लिये, जो मनुष्य प्रभु की शरण में आ गया, परमात्मा ने कृपा करके उसे अपने में विलीन कर लिया ॥ ४॥ २२॥ २८॥

॥ सूही महला ५ ॥ दीनु छडाइ दुनी जो लाए। दुही सराई खुनामी कहाए॥ १ ॥ जो तिसु भावै सो परवाणु। आपणी कुदरति आपे जाणु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सचा धरमु पुंनु भला कराए। दीन कै तोसै दुनी न जाए॥ २ ॥ सरब निरंतरि एको जागै। जितु जितु लाइआ तितु तितु को लागै ॥ ३ ॥ अगम अगोचरु सचु साहिबु मेरा। नानकु बोलै बोलाइआ तेरा ॥ ४ ॥ २३ ॥ २६ ॥

हे भाई! जिस मनुष्य को परमात्मा नाम-धन के व्यापार से हटाकर लौकिक धन की ओर प्रवृत्त कर देता है, वह मनुष्य दोनों लोकों में दोषी कहलाता है ॥ १ ॥ परमात्मा अपनी सृष्टि के बारे में आप ही सब कुछ जाननेवाला है। जो कुछ परमात्मा को भला लगता है, जीवों को वही सहर्ष मानना पड़ता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस मनुष्य को परमात्मा सत्यस्वरूप नाम-स्मरण रूपी धर्म की कमाई देता है, जिससे वह नाम-स्मरण का शुभ कर्म कराता है, नाम-धन कमाते और अध्यात्म का सुख भोगते हुए भी उसकी यह दुनिया नहीं बिगड़ती ॥ २॥ प्रत्येक जीव उसी काम में लगता है, जिस काम में परमात्मा उसे लगाता है ॥ ३॥ हे प्रभु! तुम मेरे सत्य-स्वरूप मालिक हो, तुम अगम्य हो, ज्ञानेन्द्रियों की पहुँच से परे हो। नानक तुम्हारे द्वारा प्रेरित होकर ही तुम्हारे नाम का जाप करता है ॥४॥२३॥२९॥

॥ सूही महला ५ ॥ प्रातहकालि हरि नामु उचारी। ईत ऊत की ओट सवारी ॥ १ ॥ सदा सदा जपीऐ हरि नाम। पूरन होवहि मन के काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु अबिनासी रैणि दिनु गाउ। जीवत मरत निहचलु पावहि थाउ॥ २॥ सो साहु सेवि जितु तोटि न आवै। खात खरचत सुखि अनदि विहावै॥ ३॥ जगजीवन पुरखु साध संगि पाइआ। गुरप्रसादि नानक नामु धिआइआ ॥ ४ ॥ २४ ॥ ३० ॥

हे भाई! ब्रह्ममुहूर्त्त में उठकर परमात्मा का नाम स्मरण किया करो। यही लोक तथा परलोक का एक मात्र सुन्दर आश्रय है ॥ १ ॥ सदैव परमात्मा का नाम स्मरण करते रहना चाहिए, जिससे समस्त मनोवांछित कर्म सफल हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रात-दिन उस अविनाशी प्रभु के गीत गाया करो। इस प्रकार लौकिक कामकाज करते हुए, निर्लिप्त रहकर

तुम प्रभु-चरणों में सत्यस्वरूप (स्थायी) जगह प्राप्त कर लोगे ॥ २ ॥ नाम-धन के मालिक उस प्रभु की सेवा-भक्ति किया करो (जो ऐसा धन प्रदान करता है)। इस धन के व्यापार में कभी घाटा नहीं आता। उस धन को आप इस्तेमाल करते हुए एवं दूसरों से कराते हुए ज़िन्दगी सुखपूर्वक बीतती है ॥ ३ ॥ हे नानक! जिस मनुष्य ने सत्संगति में गुरु-कृपा से परमात्मा का नाम-स्मरण करना शुरू कर दिया (समझो कि) उसने जगत के जीवन सर्वव्यापक प्रभु का मिलाप प्राप्त कर लिया ॥ ४ ॥ २४ ॥ ३० ॥

॥ सूही महला ५ ॥ गुर पूरे जब भए दइआल। दुख बिनसे पूरन भई घाल ॥ १ ॥ पेखि पेखि जीवा दरसु तुम्हारा। चरण कमल जाई बलिहारा। तुझ बिनु ठाकुर कवनु हमारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साध संगति सिउ प्रीति बणि आई। पूरब करमि लिखत धुरि पाई ॥ २ ॥ जपि हरि हरि नामु अचरजु परताप। जालि न साकहि तीने ताप ॥ ३ ॥ निमख न बिसरहि हरि चरण तुम्हारे। नानकु मागै दानु पिआरे ॥ ४ ॥ २५ ॥ ३१ ॥

जब किसी मनुष्य पर सतिगुरु दयालु होते हैं, तब उसके नाम-स्मरण की मेहनत सफल हो जाती है और उसके समस्त दुःख नष्ट हो जाते हैं ॥१॥ हे प्रभु! (मेरी प्रार्थना है कि) तुम्हारा दर्शन करके मुझे आत्मिक जीवन मिलता रहे और मैं तुम्हारे सुन्दर चरणों पर बलिहारी होता रहूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूर्व जन्मों के किए कर्म अनुसार प्रभु के दरबार से जिस मनुष्य के मस्तक पर लिखा लेख प्रकट होता है, वह गुरु की संगति से प्रेम करने लगता है ॥ २ ॥ हमेशा परमात्मा का नाम जपा करो (इससे) ऐसा विस्मयजनक आत्मिक तेज प्राप्त होता है कि उसे संसार के तीनों ताप (आधि, व्याधि, उपाधि) नष्ट नहीं कर सकते ॥ ३ ॥ हे हरि प्यारे! तुम्हारे द्वार से तुम्हारा दास नानक यही वरदान माँगता है कि निमिषमात्र के लिए भी उसे तुम्हारे कल्याणकारी चरण विस्मृत न हों ॥ ४ ॥ २५ ॥ ३१ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ से संजोग करहु मेरे पिआरे। जितु रसना हरि नामु उचारे ॥ १ ॥ सुणि बेनती प्रभ दीन दइआला। साध गावहि गुण सदा रसाला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीवन रूपु सिमरणु प्रभ तेरा। जिसु क्रिपा करहि बसहि तिसु नेरा ॥ २ ॥ जन की भूख तेरा नामु अहारु। तूं दाता प्रभ

देवणहारु ॥ ३ ॥ राम रमत संतन सुखु माना । नानक देवनहार सुजाना ॥ ४ ॥ २६ ॥ ३२ ॥

हे मेरे प्यारे ! मेरे लिए वह संयोग प्रदान करो, जिससे मेरी जिह्वा सदा तुम्हारा नाम उच्चरित करती रहे ॥ १ ॥ हे दीनदयालु प्रभु ! (मेरी प्रार्थना सुनो) जैसे सन्तजन तुम्हारे सरस गुण गाते रहते हैं, वैसे ही मैं भी गाता रहूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! तुम्हारा नाम-स्मरण आत्मिक जीवन का द्योतक है। जिस मनुष्य पर तुम कृपा करते हो, उसके हृदय में आ बसते हो ॥ २ ॥ हे प्रभु ! तुम्हारे सन्तों की आत्मिक भूख दूर करने के लिए तुम्हारा नाम भोजन है। यह भोजन तुम ही देते हो और तुम ही दे सकते हो ॥ ३ ॥ हे नानक ! सन्तजन उस परमात्मा का नाम स्मरण कर आत्मिक आनन्द भोगते रहते हैं, जो सब कुछ देने में समर्थ है और जो विवेक का प्रतीक है ॥ ४ ॥ २६ ॥ ३२ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ बहती जात कदे द्रिसटि न धारत । मिथिआ मोह बंधहि नित पारच ॥ १ ॥ माधवे भजु दिन नित रैणी । जनमु पदारथु जीति हरि सरणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करत बिकार दोऊ कर झारत । राम रतनु रिद तिलु नही धारत ॥ २ ॥ भरण पोखण संगि अउध बिहाणी । जै जगदीस की गति नही जाणी ॥ ३ ॥ सरणि समरथ अगोचर सुआमी । उधरु नानक प्रभु अंतरजामी ॥ ४ ॥ २७ ॥ ३३ ॥

हे भाई ! उम्र की नदी बहती जा रही है, लेकिन तुम इधर ध्यान नहीं करते। तुम नश्वर पदार्थों के मोह का ईंधन ही सदा बटोरते रहते हो ॥१॥ दिन-रात हमेशा लक्ष्मीपति प्रभु का नाम जपा करो। गुरु की शरण लेकर मूल्यवान मनुष्य-जन्म का सही लाभ प्राप्त कर लो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम हानि-लाभ का विचार किए बिना ही विकारों में ग्रस्त हो। परमात्मा का रत्न (रूपी क़ीमती नाम) अपने हृदय में तुम एक क्षण के लिए भी नहीं बसाते ॥ २ ॥ पालन-पोषण में ही तुम्हारी उम्र बीतती जा रही है। परमात्मा की गुणस्तुति के आत्मिक आनन्द की अवस्था तुमने समझी ही नहीं ॥ ३ ॥ (गुरु नानक का कथन है कि) सर्वशक्तिमान ! ज्ञानेन्द्रियों की पहुँच से परे रहनेवाले हे मालिक ! मैं तुम्हारी शरण में हूँ, तुम मेरे स्वामी हो, अन्तर्यामी हो, इसलिए मुझे विकारों से बचा लो ॥४॥२७॥३३॥

॥ सूही महला ५ ॥ साध संगि तरै भै सागरु । हरि हरि नामु सिमरि रतनागरु ॥ १ ॥ सिमरि सिमरि जीवा नाराइण । दूख रोग सोग सभि बिनसे गुर पूरे मिलि पाप

तजाइण ।। १ ।। रहाउ ।। जीवन पदवी हरि का नाउ । मनु तनु निरमलु साचु सुआउ ।। २ ।। आठ पहर पारब्रहमु धिआईऐ । पूरबि लिखतु होइ ता पाईऐ ।। ३ ।। सरणि पए जपि दीन दइआला । नानकु जाचै संत रवाला ।। ४ ।। २८ ।। ३४ ।।

हे भाई ! गुरु की संगति (रत्नों की खान) में हरिनाम-स्मरण कर मनुष्य भयानक संसार-सागर से पार उतर जाता है ।। १ ।। मैं परमात्मा का नाम स्मरण कर आत्मिक जीवन प्राप्त कर रहा हूँ । गुरु को मिलकर समस्त दुःख, रोग नष्ट हो जाते हैं और पाप से मुक्ति मिल जाती है ।।१।। रहाउ ।। परमात्मा का नाम ही आत्मिक जिन्दगी का द्योतक है, जिससे मन पवित्र हो जाता है, शरीर पवित्र हो जाता है और सत्यस्वरूप प्रभु का मिलाप ही जीवन-मनोरथ बन जाता है ।। २ ।। परमात्मा का नाम आठों प्रहर स्मरण करते रहना चाहिए, लेकिन यह प्राप्ति तब ही होती है, जब पूर्वजन्म के कर्म-फल-रूप में मस्तक पर नाम-स्मरण का लेख लिखा हो ।।३।। हे भाई ! दीनदयालु प्रभु का नाम जप-जपकर जो मनुष्य प्रभु की शरण में रहते हैं, नानक उन सन्तों के चरणों की धूलि माँगता है ।।४।।२८।।३४।।

।। सूही महला ५ ।। घर का काजु न जाणी रूड़ा । झूठै धंधै रचिओ मूड़ा ।। १ ।। जितु तूं लावहि तितु तितु लगना । जा तूं देहि तेरा नाउ जपना ।। १ ।। रहाउ ।। हरि के दास हरि सेती राते । राम रसाइणि अनदिनु माते ।। २ ।। बाह पकरि प्रभि आपे काढे । जनम जनम के टूटे गाढे ।।३।। उधरु सुआमी प्रभ किरपा धारे । नानक दास हरि सरणि दुआरे ।।४।।२६।।३५।।

हे प्रभु ! यह मूर्ख मनुष्य झूठे धन्धों में संलग्न रहता है; वह सुन्दर काम करना नहीं जानता, जो इसके अपने हृदय-घर को आलोकित करने में काम आता है ।। १ ।। हे प्रभु ! जिस-जिस काम में तुम जीवों को लगाते हो, उसी काम में वे लगते हैं । जब तुम अपना नाम देते हो, तभी वे तुम्हारा नाम जपते हैं ।। १ ।। रहाउ ।। परमात्मा के भक्त परमात्मा के रंग में रँगे रहते हैं, प्रतिपल सब रसों से श्रेष्ठ हरिनाम-रस में मस्त रहते हैं ।। २ ।। प्रभु ने स्वयं उन्हें बाँह पकड़कर झूठे धन्धों से निकाल लिया और अनेक जन्मों के बिछुड़े हुए जीवों को प्रभु ने अपने साथ लगा लिया ।। ३ ।। (दास नानक का कथन है कि) हे मालिक प्रभु ! कृपा करो । मुझे झूठे धन्धों से बचा लो । मैं तुम्हारा शरणागत हूँ, मैं तुम्हारे द्वार पर आ गिरा हूँ ।। ४ ।। २९ ।। ३५ ।।

।। सूही महला ५ ।। संत प्रसादि निहचलु घरु पाइआ ।

सरब सूख फिरि नही डोलाइआ ।। १ ।। गुरू धिआइ हरि चरन मनि चीन्हे । ता ते करतै असथिरु कीन्हे ।। १ ।। रहाउ ।। गुण गावत अचुत अबिनासी । ता ते काटी जम की फासी ।।२।। करि किरपा लीने लड़ि लाए । सदा अनदु नानक गुण गाए ।। ३ ।। ३० ।। ३६ ।।

हे भाई ! गुरु की कृपा से जिसका मन स्थिर हो गया, उसे समस्त सुख प्राप्त हो गए । वह मनुष्य कभी विचलित नहीं होता ।। १ ।। जिन मनुष्यों ने गुरु का स्मरण कर परमात्मा के चरणों को मन में अवस्थित हुआ पहचान लिया, उसके प्रभाव से कर्तार ने उन्हें स्थिरचित्त बना दिया ।। १ ।। रहाउ ।। अटल अविनाशी प्रभु के गुणगान के प्रभाव से यमों की फाँसी कट जाती है ।। २ ।। हे नानक ! कृपापूर्वक जिन्हें प्रभु अपने साथ लगा लेता है, वे जीव प्रभु के गुण गाकर सदा आत्मिक आनन्द भोगते हैं ।। ३ ।। ३० ।। ३६ ।।

।। सूही महला ५ ।। अंम्रित बचन साध की बाणी । जो जो जपै तिस की गति होवै हरि हरि नामु नित रसन बखानी ।। १ ।। रहाउ ।। कलीकाल के मिटे कलेसा । एको नामु मन महि परवेसा ।। १ ।। साधू धूरि मुखि मसतकि लाई । नानक उधरे हरि गुर सरणाई ।। २ ।। ३१ ।। ३७ ।।

गुरु द्वारा उच्चरित वाणी आत्मिक जीवन देनेवाले वचन हैं । जो मनुष्य इस वाणी को जपता है, वह ऊँची आत्मिक अवस्था को प्राप्त होता है और सदा अपनी जिह्वा से परमात्मा का नाम उच्चरित करता रहता है ।। १ ।। रहाउ ।। गुरुवाणी के प्रभाव से जीवन क्लेश-मुक्त होता है और उसके सब सांसारिक दुःख मिट जाते हैं । वाणी के प्रभाव से केवल एक हरि-नाम ही मन में स्थित रहता है ।। १ ।। हे नानक ! गुरु के चरणों की धूलि जिन्होंने अपने मुँह, मस्तक पर लगा ली, वे मनुष्य गुरु, प्रभु की शरण लेकर मोह-माया के झंझट से बच गए ।। २ ।। ३१ ।। ३७ ।।

।। सूही महला ५ घरु ३ ।। गोबिंदा गुण गाउ दइआला । दरसनु देहु पूरन किरपाला ।। रहाउ ।। करि किरपा तुम ही प्रतिपाला । जीउ पिंडु सभु तुमरा माला ।। १ ।। अंम्रित नामु चलै जपि नाला । नानक जाचै संत रवाला ।।२।।३२।।३८।।

हे गोविन्द, दयालु, पूर्णकृपालु ! मुझे दर्शन दीजिए । मैं सदा तुम्हारे गुण गाता रहूँ ।। रहाउ ।। हे गोविन्द ! तुम ही कृपा करके हमारा

पालन करते हो। यह तन, मन सब कुछ तुम्हारी ही दी हुई राशि पूँजी है ॥ १ ॥ हे भाई ! आत्मिक जीवन के दाता हरि-नाम जपा करो, यही जीवों के साथ जाता है। (नानक भी) गुरु के चरणों की धूलि माँगता है ॥ २ ॥ ३२ ॥ ३८ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ तिसु बिनु दूजा अवरु न कोई । आपे थंमै सचा सोई ॥ १ ॥ हरि हरि नामु मेरा आधारु । करण कारण समरथु अपारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभ रोग मिटावे नवा निरोआ । नानक रखा आपे होआ ॥ २ ॥ ३३ ॥ ३९ ॥

वह सत्यस्वरूप परमात्मा आप ही जीव को सहारा देता है, उसके अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं जो सहारा दे सके ॥ १ ॥ जो परमात्मा समस्त जगत का मूल है, जो सब शक्तियों का स्वामी है, जिसकी हस्ती का ओर-छोर नहीं मिलता, उस प्रभु का नाम ही मेरा आसरा है ॥१॥रहाउ॥ हे नानक ! जिस मनुष्य का रक्षक प्रभु आप बन जाता है, उसके वह सारे रोग मिटा देता है और उसे बिल्कुल पुनर्नवा बना देता है ॥२॥३३॥३९॥

॥ सूही महला ५ ॥ दरसन कउ लोचै सभ कोई । पूरै भागि परापति होई ॥ रहाउ ॥ सिआम सुंदर तजि नीद किउ आई । महा मोहनी दूता लाई ॥ १ ॥ प्रेम बिछोहा करत कसाई । निरदै जंतु तिसु दइआ न पाई ॥ २ ॥ अनिक जनम बीतीअन भरमाई । घरि वासु न देवै दुतर माई ॥ ३ ॥ दिनु रैनि अपना कीआ पाई । किसु दोसु न दीजै किरतु भवाई ॥ ४ ॥ सुणि साजन संत जन भाई । चरण सरण नानक गति पाई ॥ ५ ॥ ३४ ॥ ४० ॥

हर एक जीव परमात्मा के दर्शन की कामना करता है, परन्तु उसका मिलाप सौभाग्यवश ही मिलता है ॥ रहाउ ॥ मुझे क्यों भ्रम की निद्रा ने घेर लिया ? मैंने सुन्दर प्रभु को क्यों भुला दिया ? इस प्रबल मनमोहक माया ने क्यों मुझे काम, क्रोधादि का अनुयायी बना दिया ? ॥ १ ॥ प्रभु-प्रेम की विमुखता मेरे भीतर कसाई का कार्य कर रही है; प्रभु से विछोह, मानो एक निर्दयी जीव है जिसके भीतर तनिक भी दया नहीं है ॥ २ ॥ यह दुस्तर माया हृदय-घर में मेरे मन को टिकने नहीं देती, इस प्रकार भटकते-भटकते अनेक जन्म बीत गए ॥ ३ ॥ लेकिन किसी को दोष नहीं दिया जा सकता, पूर्व जन्मों के कृत-कर्म ही दुबिधा में डाल रहे हैं और मैं दिन-रात अपने कृत-कर्मों का फल भोग रहा हूँ ॥ ४ ॥ (नानक का कथन है कि) हे सज्जनो, भाइयो, सन्तो ! सुनो। परमात्मा के सुन्दर

चरणों में शरण लेने से ही उच्च आत्मिक अवस्था प्राप्त हो सकती है ॥ ५ ॥ ३४ ॥ ॥ ४० ॥

रागु सूही महला ५ घरु ४

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ भली सुहावी छापरी जा महि गुन गाए । कितही कामि न धउलहर जितु हरि बिसराए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनदु गरीबी साध संगि जितु प्रभ चिति आए । जलि जाउ एहु बडपना माइआ लपटाए ॥ १ ॥ पीसनु पीसि ओढि कामरी सुखु मनु संतोखाए । ऐसो राजु न कितै काजि जितु नह त्रिपताए ॥ २ ॥ नगन फिरत रंगि एक कै ओहु सोभा पाए । पाट पटंबर बिरथिआ जिह रचि लोभाए ॥ ३ ॥ सभु किछु तुम्हरै हाथि प्रभ आपि करे कराए । सासि सासि सिमरत रहा नानक दानु पाए ॥ ४ ॥ १ ॥ ४१ ॥

हे भाई ! वह झोंपड़ी भली है, जिसमें रहनेवाला मनुष्य प्रभु के गुण गाता रहता है, जब कि वे पक्के महल किसी काम के नहीं, जिसमें रहने वाला मनुष्य परमात्मा को भुला देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सत्संगति में निर्धनता के मध्य भी आनन्द है, क्योंकि उस दशा में चित्त प्रभु में स्थिर रहता है। वह बड़प्पन, निकृष्ट और जलने योग्य है, जिसके कारण मनुष्य माया से ही बँधकर रह जाता है ॥ १ ॥ उस स्थिति में चक्की पीसकर, चीथड़े पहनकर भी आनन्द मिलता है, क्योंकि मन सन्तुष्ट रहता है। लेकिन, हे भाई ! ऐसा राज्य किसी काम का नहीं, जिसमें मनुष्य माया से कभी तृप्त ही न हो ॥ २ ॥ जो मनुष्य एक परमात्मा के प्रेम में मग्न होकर कार्य-व्यापार करता है, वह शोभा प्राप्त करता है (क्योंकि वह भीतर से शान्त है); (इसके विपरीत) रेशमी कपड़े पहनना भी व्यर्थ है, जिनमें मस्त होकर मनुष्य माया के मोह में अधिकाधिक प्रवृत्त होता है ॥३॥ प्रभु आप ही सब कुछ करता है और वही जीवों से सब कुछ कराता है। (नानक का कथन है कि) हे प्रभु ! सब तुम्हारे हाथ में है, कृपा करो, ताकि तुम्हारे द्वार से नानक यह दान प्राप्त कर ले कि वह हर एक साँस के साथ तुम्हें स्मरण करता रहे ॥ ४ ॥ १ ॥ ४१ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ हरि का संतु परान धन तिस का पनिहारा । भाई मीत सुत सगल ते जीअ हूं ते पिआरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ केसा का करि बीजना संत चंउरु ढुलावउ । सीसु

निहारउ चरण तलि धूरि मुखि लावउ ॥ १ ॥ मिसट बचन बेनती करउ दीन की निआई । तजि अभिमानु सरणी परउ हरि गुण निधि पाई ॥ २ ॥ अवलोकन पुनह पुनह करउ जन का दरसारु । अंम्रित बचन मन महि सिंचउ बंदउ बार बार ॥३॥ चितवउ मनि आसा करउ जन का संगु मागउ । नानक कउ प्रभ दइआ करि दास चरणी लागउ ॥ ४ ॥ २ ॥ ४२ ॥

प्रभु की भक्ति करनेवाले व्यक्ति पर (यदि उसकी कृपा हो तो मैं) अपने प्राण और अपना धन अर्पित कर दूँ, मैं उसका पानी भरनेवाला बना रहूँ । भाई, मित्र, पुत्र तथा प्राणों से भी अधिक मुझे वह प्यारा लगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं अपने केशों का पंखा बनाकर प्रभु के सन्तों पर चँवर डुलाता रहूँ, मैं सन्त के चरणों पर अपना सिर झुकाए रखूँ और उसके चरणों की धूलि लेकर मस्तक पर लगाता रहूँ ॥ १ ॥ मैं निराश्रितों के तुल्य मीठे शब्दों से प्रार्थना करता रहूँ, अहंकार त्यागकर उसकी शरण में रहूँ और उस सन्त से गुणों के ख़ज़ाने परमात्मा का मिलाप प्राप्त करूँ ॥ २ ॥ मैं उस प्रभु के सेवक का दर्शन बार-बार करता रहूँ । आत्मिक जीवन देनेवाले उस सन्त के वचनों का जल मैं अपने मन में सिंचित करता रहूँ और बार-बार उसे नमस्कार करता रहूँ ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! नानक पर कृपा करो, मैं तुम्हारे दास के चरण छूता रहूँ । मैं अपने मन में यही सोचता रहूँ, यही आकांक्षा करता रहूँ और तुमसे उस सेवक का सान्निध्य माँगता रहूँ ॥ ४ ॥ २ ॥ ४२ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ जिनि मोहे ब्रहमंड खंड ताहू महि पाउ । राखि लेहु इहु बिखई जीउ देहु अपुना नाउ ॥१॥रहाउ॥ जाते नाही को सुखी ता कै पाछै जाउ । छोडि जाहि जो सगल कउ फिरि फिरि लपटाउ ॥ १ ॥ करहु क्रिपा करुणापते तेरे हरि गुण गाउ । नानक की प्रभ बेनती साध संगि समाउ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४३ ॥

हे प्रभु ! जिस माया ने सारी सृष्टि और सारे देश अपने प्रेम में फँसाए हुए है, मैं भी उसी के वश में हूँ । मुझे अपना नाम दो और मुझे (विकारी जीव को) माया के हाथों से बचा लो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! मैं भी उसी माया के पीछे बार-बार जाता हूँ, जिससे कभी भी कोई सुखी नहीं हुआ । मैं बार-बार उन पदार्थों के साथ चिपटता हूँ, जो आख़िरकार सबको छोड़ जाते हैं ॥ १ ॥ हे करुणामूर्ति हरि ! कृपा करो (ताकि)

मैं तुम्हारे गुण गाता रहूँ। हे प्रभु ! नानक की यही प्रार्थना है कि मैं सत्संगति में रहूँ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४३ ॥

रागु सूही महला ५ घरु ५ पड़ताल

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ प्रीति प्रीति गुरीआ मोहन लालना। जपि मन गोबिंद एकै अवरु नही को लेखै संत लागु मनहि छाडु दुबिधा की कुरीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निरगुन हरीआसरगुन धरीआ अनिक कोठरीआ भिन भिन भिन भिन करीआ। विचि मन कोट वरीआ। निज मंदरि पिरीआ। तहा आनद करीआ। नह मरीआ नह जरीआ ॥१॥ किरतनि जुरीआ बहु बिधि फिरीआ पर कउ हिरीआ। बिखना घिरीआ। अब साधू संगि परीआ। हरि दुआरै खरीआ। दरसनु करीआ। नानक गुर मिरीआ। बहुरि न फिरीआ ॥ २ ॥ १ ॥ ४४ ॥

हे भाई ! दुनियावी प्रेम से भी प्रबल प्रेम मनमोहन प्रभु का है (उसका प्रेम सर्वोपरि है)। हे मन ! केवल उस प्रभु का नाम जपा कर। दूसरा कोई प्रयास उसके दरबार में स्वीकृत नहीं होता। हे भाई ! सन्तों के चरण स्पर्श करते रहो और अपने मन से डाँवाँडोल रहनेवाली स्थिति की रेखाएँ दूर करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! निर्लिप्त प्रभु ने त्रिगुणात्मक संसार बनाया, इसमें यह अनेक शरीर रूपी कोठरियाँ उसने अलग-अलग क़िस्म की बना दीं। हर शरीर रूपी कोठरी में मन को कोतवाल बना दिया। प्यारा प्रभु हर मन्दिर (शरीर रूपी कोठरी) में स्वयं विद्यमान है और वहाँ आनन्द प्रदान करता है। उस प्रभु की न मृत्यु होती है और न उसके निकट बुढ़ापा आता है ॥ १ ॥ हे भाई ! जीव प्रभु की रची रचना में ही लीन रहता है। कई तरीक़ों से भटकता फिरता है। पराए रूप, धन को देखता फिरता है और विषय-विकारों में घिरा रहता है। इस मनुष्य-जन्म में जब जीव गुरु की संगति में पहुँचता है, तो प्रभु के द्वार पर आ खड़ा होता है, प्रभु का दर्शन करता है। हे नानक ! जो भी मनुष्य गुरु को मिलता है, वह दोबारा जन्म-मरण के चक्र में नहीं भटकता ॥ २ ॥ १ ॥ ४४ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ रासि मंडलु कीनो आखारा। सगलो साजि रखिओ पासारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बहु बिधि रूप रंग आपारा। पेखै खुसी भोग नही हारा। सभि

रस लैत बसत निरारा ॥ १ ॥ बरनु चिहनु नाही मुखु न मासारा । कहनु न जाई खेलु तुहारा । नानक रेण संत चरनारा ॥ २ ॥ २ ॥ ४५ ॥

हे भाई ! यह सारा जगत-प्रसार प्रभु ने स्वयं बनाया है। यह उसने (मानो रास रचाने के लिए) अखाड़ा तैयार किया है और रास के लिए मण्डल बना दिया है॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस जगत-अखाड़े में कई प्रकार के अनन्त रूप-रंग हैं। परमात्मा इसे सहर्ष देखता है, भोगता है और थकान महसूस नहीं करता। तमाम रस महसूसता हुआ भी वह प्रभु आप निर्लिप्त ही रहता है ॥ १ ॥ हे प्रभु ! तुम्हारा रचा हुआ जगत-खेल व्यक्त नहीं किया जा सकता। तुम्हारा न कोई रंग है, न कोई चिह्न है, न कोई मुँह है और न कोई दाढ़ी है। (नानक का कथन है कि) मैं तुम्हारे द्वार से सन्तों के चरणों की धूलि माँगता हूँ ॥ २ ॥ २ ॥ ४५ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ तउ मै आइआ सरनी आइआ। भरोसै आइआ किरपा आइआ। जिउ भावै तिउ राखहु सुआमी मारगु गुरहि पठाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ महा दुतरु माइआ। जैसे पवनु झुलाइआ ॥ १ ॥ सुनि सुनि ही डराइआ। कररो ध्रमराइआ ॥ २ ॥ ग्रिह अंध कूपाइआ। पावकु सगराइआ ॥ ३ ॥ गही ओट साधाइआ। नानक हरि धिआइआ। अब मै पूरा पाइआ ॥ ४ ॥ ३ ॥ ४६ ॥

हे प्रभु ! मैं तुम्हारा शरणागत हूँ। इस भरोसे से आया हूँ कि तुम कृपा करोगे। इसलिए, हे मालिक प्रभु ! जैसे तुम्हें उपयुक्त लगे, मेरी रक्षा करो। मुझे तुम्हारे द्वार पर गुरु ने भेजा है और उसी ने यहाँ का रास्ता दिखाया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! जैसे हवा धक्के मारती है, वैसे ही माया की लहरें धक्के मारती हैं; तुम्हारी माया से पार उतरना बहुत कठिन है ॥ १ ॥ हे प्रभु ! मैं तो यह सुन-सुनकर डर रहा हूँ कि तुम बड़े क्रूर हो ॥ २ ॥ यह संसार एक अंधा कुआँ है, इसमें समस्त आग ही आग है ॥ ३ ॥ (गुरु नानक का कथन है कि) मैंने गुरु का सहारा लिया है, मैं परमात्मा का नाम-स्मरण कर रहा हूँ और अब मुझे पूर्णप्रभु मिल गया है ॥ ४ ॥ ३ ॥ ४६ ॥

रागु सूही महला ५ घरु ६

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सतिगुर पासि बेनंतीआ मिलै

नामु आधारा। तुठा सचा पातिसाहु तापु गइआ संसारा ॥ १ ॥ भगता की टेक तूं संता की ओट तूं सचा सिरजनहारा॥१॥रहाउ॥ सचु तेरी सामगरी सचु तेरा दरबारा। सचु तेरे खाजीनिआ सचु तेरा पासारा ॥ २ ॥ तेरा रूपु अगंमु है अनूपु तेरा दरसारा। हउ कुरबाणी तेरिआ सेवका जिन्ह हरि नामु पिआरा ॥ ३ ॥ सभे इछा पूरीआ जा पाइआ अगम अपारा। गुरु नानकु मिलिआ पारब्रहमु तेरिआ चरणा कउ बलिहारा ॥ ४ ॥ १ ॥ ४७ ॥

हे भाई ! मैं गुरु के पास सदा प्रार्थना करता हूँ कि मुझे परमात्मा का नाम मिल जाए। यही मेरा अवलम्ब है। सत्यस्वरूप प्रभु-बादशाह जिस मनुष्य पर दयालु होता है, उसका माया-मोह वाला ताप दूर हो जाता है ॥ १ ॥ हे सत्यस्वरूप सृजनहार ! तुम भक्तों के सहारे हो, तुम्हारा नाम तुम्हारे सन्तों का आसरा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्हारा दरबार सत्य है, तुम्हारे ख़ज़ाने सदा आपूरित रहनेवाले हैं, तुम्हारे पदार्थ सदा स्थिर रहनेवाले हैं और तुम्हारा जगत-प्रसार अटल नियमों वाला है ॥२॥ हे प्रभु ! तुम्हारी हस्ती ऐसी है, जिस तक पहुँच नहीं हो सकती। तुम्हारा दर्शन अद्वितीय है। मैं तुम्हारे उन सेवकों पर बलिहारी जाता हूँ, जिन्हें तुम्हारा नाम प्रिय लगता है ॥ ३ ॥ हे अगम्य, अनन्त प्रभु ! जब तुम किसी को मिल जाते हो, तब उसकी समस्त मनोकामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। मैं तुम्हारे चरणों पर बलिहारी जाता हूँ। गुरु-कथन है कि जिस मनुष्य को गुरु मिल गया, उसे (मानो) परमात्मा मिल गया ॥ ४ ॥ १ ॥ ४७ ॥

रागु सूही महला ५ घरु ७

१ ओं सतिगुर प्रसादि॥ तेरा भाणा तूहै मनाइहि जिसनो होहि दइआला। साई भगति जो तुधु भावै तूं सरब जीआ प्रतिपाला ॥ १ ॥ मेरे रामराइ संता टेक तुम्हारी। जो तुधु भावै सो परवाणु मनि तनि तूहै अधारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तूं दइआलु क्रिपालु क्रिपानिधि मनसा पूरणहारा। भगत तेरे सभि प्राणपति प्रीतम तूं भगतन का पिआरा ॥ २ ॥ तू अथाहु अपारु अति ऊचा कोई अवरु न तेरी भाते। इह अरदासि हमारी सुआमी विसरु नाही सुख दाते ॥ ३ ॥ दिनु रैणि सासि सासि

गुण गावा जे सुआमी तुधु भावा । नामु तेरा सुखु नानकु मागै साहिब तुठै पावा ॥ ४ ॥ १ ॥ ४८ ॥

हे प्रभु ! जिस मनुष्य पर तुम दयालु होते हो, तुम आप ही उसे अपनी रजा में चलाते हो । असली भक्ति वही है, जो तुम्हें स्वीकार होती है । तुम समस्त जीवों की देखभाल करनेवाले हो ॥ १ ॥ हे मेरे प्रभु बादशाह ! तुम्हारे सन्तों को तुम्हारा ही आसरा रहता है । जो कुछ तुम्हें भला लगता है, वही उन्हें स्वीकार्य होता है; उनके मन, तन में तुम ही रमते हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम दया के घर हो, कृपा के भण्डार हो, तुम अपने भक्तों की मनोकामना पूर्ण करनेवाले हो । हे आत्मा के मालिक, प्रियतम प्रभु ! तुम्हारे भक्त तुम्हें प्यारे लगते हैं और तुम भक्तों को प्यारे लगते हो ॥ २ ॥ तुम्हारी गहराई अथाह है, तुम्हारे सामर्थ्य का ओर-छोर नहीं मिल सकता, तुम बहुत ऊँचे हो, कोई भी तुम्हारे जैसा नहीं है । हे मालिक, सुखदाता प्रभु ! हम जीवों की यह विनती है कि तुम हमें कभी भी विस्मृत न होओ ॥ ३ ॥ यदि तुम्हें स्वीकार हो तो मैं दिन-रात प्रत्येक श्वास के साथ तुम्हारे गुण गाता रहूँ । दास नानक तुमसे तुम्हारा नाम माँगता है (क्योंकि) यही सुख है । हे मेरे साहिब ! तुम दया करके मुझे यह देन दो ॥ ४ ॥ १ ॥ ४८ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ विसरहि नाही जितु तू कबहू सो थानु तेरा केहा । आठ पहर जितु तुधु धिआई निरमल होवै देहा ॥ १ ॥ मेरे राम हउ सो थानु भालण आइआ । खोजत खोजत भइआ साध संगु तिन्ह सरणाई पाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बेद पड़े पड़ि ब्रहमे हारे इकु तिलु नही कीमति पाई । साधिक सिध फिरहि बिललाते ते भी मोहे माई ॥ २ ॥ दस अउतार राजे होइ वरते महादेव अउधूता । तिन्ह भी अंतु न पाइओ तेरा लाइ थके बिभूता ॥ ३ ॥ सहज सूख आनंद नाम रस हरि संती मंगलु गाइआ । सफल दरसनु भेटिओ गुर नानक ता मनि तनि हरि हरि धिआइआ ॥ ४ ॥ २ ॥ ४९ ॥

हे मेरे राम ! तुम्हारा वह स्थान अत्यन्त कौतुकमय है, जिसमें बैठे हुए तुम कभी भी मुझे विस्मृत न होओ; मैं आठों प्रहर तुम्हारा स्मरण कर सकूँ और मेरा अंग-अंग पवित्र हो जाए ॥ १ ॥ मैं वह स्थान खोजने चल पड़ा, (जहाँ तुम्हारे दर्शन हों) खोजते-खोजते मुझे गुरुमुखों का साथ मिल गया और उन गुरुमुखों की शरण लेकर मैंने तुम्हें भी प्राप्त कर लिया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ब्रह्मा जैसे अनेक महान जीव वेद पढ़-पढ़कर थक

गए, लेकिन वे तुम्हारा तनिकमात्र भी मूल्यांकन नहीं कर सके। साधक और करामाती योगी बिलखते फिरते हैं, लेकिन हैं वे भी माया-मोह में फँसे हुए ॥ २ ॥ विष्णु के दस अवतार अपने-अपने युग में सत्कार पाते रहे। शिव भी अत्यन्त प्रसिद्ध त्यागी हुए हैं, लेकिन वे भी तुम्हारा भेद न पा सके (अनेक) अपने शरीर पर राख मल-मलकर थक गए ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि जिन सन्तों ने प्रभु की गुणस्तुति का गीत सदा गाया उन्होंने आत्मिक स्थिरता का सुख, आनन्द भोगा, उन्होंने नाम का रसास्वादन किया। जीवन-मनोरथ पूर्ण कर देनेवाले गुरु से मिलाप होने पर जीव अपने आप परमात्मा का नाम-स्मरण करने लगता है ॥ ४ ॥ २ ॥ ४९ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ करम धरम पाखंड जो दीसहि तिन जमु जागाती लूटै। निरबाण कीरतनु गावहु करते का निमख सिमरत जितु छूटै ॥ १ ॥ संतहु सागरु पारि उतरीऐ। जेको बचनु कमावै संतन का सो गुरपरसादी तरीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोटि तीरथ मजन इसनाना इसु कलि महि मैलु भरीजै। साध संगि जो हरि गुण गावै सो निरमलु करि लीजै ॥ २ ॥ बेद कतेब सिम्रिति सभि सासत इन्ह पड़िआ मुकति न होई। एकु अखरु जो गुरमुखि जापै तिस की निरमल सोई ॥ ३ ॥ खत्री ब्राहमण सूद वैस उपदेसु चहु वरना कउ साझा। गुरमुखि नामु जपै उधरै सो कलि महि घटि घटि नानक माझा ॥ ४ ॥ ३ ॥ ५० ॥

हे भाई! (तीर्थस्नान आदि) धार्मिक कार्य दिखावे के लिए हैं; ये काम जितने भी लोग करते दिखते हैं, उन्हें चुंगी वसूल करनेवाला यमराज लूट लेता है। (इसलिए) वासना-रहित होकर कर्तार की गुणस्तुति किया करो, क्योंकि इसके प्रभाव में क्षणमात्र के लिए भी नाम-स्मरण करता हुआ मनुष्य विकारों से मुक्ति पा लेता है ॥ १ ॥ हे सन्तो! प्रभु की गुणस्तुति द्वारा संसार-समुद्र से पार उतरा जा सकता है। यदि कोई मनुष्य सन्तों की शिक्षा का अनुसरण करे, तो वह गुरु की कृपा से पार उतर जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई! (करोड़ों) तीर्थों पर स्नान करते हुए जीव जगत में विकारों के मैल से मलिन हो जाते हैं; लेकिन जो मनुष्य गुरु की संगति में रहकर परमात्मा की गुणस्तुति के गीत गाता है, वह सदाचारी बन जाता है ॥ २ ॥ वेद, पुराण, स्मृतियाँ इन सबके पढ़ने से ही विकारों से छुटकारा नहीं मिलता, लेकिन जो मनुष्य गुरु का शरणागत होकर एक अविनाशी प्रभु का नाम जपता है उसकी शोभा

बन जाती है ।। ३ ।। नाम-स्मरण का उपदेश ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र —चारों वर्णों के लोगों के लिए एक जैसा है। जो मनुष्य गुरु द्वारा बतालए मार्ग पर चलकर प्रभु का नाम-स्मरण करता है, वह जगत में विकारों से बच निकलता है। हे नानक ! उस मनुष्य को परमात्मा प्रत्येक शरीर में अवस्थित दीख पड़ता है ।। ४ ।। ३ ।। ५० ।।

।। सूही महला ५ ।। जो किछु करै सोई प्रभ मानहि ओइ राम नाम रंगि राते। तिन्ह की सोभा सभनी थाई जिन्ह प्रभ के चरण पराते ।।१।। मेरे राम हरि संता जेवडु न कोई। भगता बणि आई प्रभ अपने सिउ जलि थलि महीअलि सोई ।। १ ।। रहाउ ।। कोटि अप्राधी संत संगि उधरै जमु ता कै नेड़ि न आवै। जनम जनम का बिछुड़िआ होवै तिन्ह हरि सिउ आणि मिलावै ।। २ ।। माइआ मोह भरमु भउ काटै संत सरणि जो आवै। जेहा मनोरथु करि आराधे सो संतन ते पावै ।। ३ ।। जन की महिमा केतक बरनउ जो प्रभ अपने भाणे। कहु नानक जिन सतिगुरु भेटिआ से सभ ते भए निकाणे ।। ४ ।। ४ ।। ५१ ।।

हे भाई ! सन्तजन परमात्मा के नाम-रंग में रँगे रहते हैं। जो कुछ सामने आता है, उसे वे परमात्मा द्वारा किया ही मानते हैं। जिन्होंने परमात्मा के चरणों में जगह पा ली, उनकी महानता सर्वत्र प्रसारित होती है ।। १ ।। हे मेरे प्रभु ! तुम्हारे सन्तों के बराबर का दूसरा कोई नहीं है। सन्तों की परमात्मा के साथ अविच्छिन्न प्रीति बनी रहती है; उन्हें परमात्मा पानी, पृथ्वी आकाश में सर्वत्र अवस्थित दृष्टिगत होता है ।। १ ।। रहाउ ।। करोड़ों अपराध करनेवाला मनुष्य भी सन्तों की संगति में विकारों से बच जाता है। यम उसके निकट नहीं आता, यदि कोई मनुष्य अनेक जन्मों से परमातमा से बिछुड़ा होवे, तो सन्त ऐसे अनेक मनुष्यों को लाकर परमातमा से मिला देता है ।। २ ।। जो मनुष्य सन्तों की शरण में आता है, उसके भीतर से माया-मोह, दुबिधा, भय आदि दूर हो जाते हैं; मनुष्य जो कामना लेकर प्रभु का स्मरण करता है, उसे वही फल सन्तजनों से प्राप्त कर लेता है ।। ३ ।। हे भाई ! जो सेवक अपने प्रभु को प्यारे लग चुके हैं, मैं उनकी क्या प्रशंसा करूँ ? गुरु नानक का कथन है कि जिन मनुष्यों को गुरु मिल गया, उन्हें दुनिया में (किसी की) अधीनता नहीं रही ।। ४ ।। ४ ।। ५१ ।।

।। सूही महला ५ ।। महा अगनि ते तुधु हाथ दे राखे पए तेरी सरणाई। तेरा माणु ताणु रिद अंतरि होर दूजी आस

चुकाई ।। १ ।। मेरे रामराइ तुधु चिति आइऐ उबरे । तेरी टेक भरवासा तुम्हरा जपि नामु तुम्हारा उधरे ।। १ ।। रहाउ ।। अंध कूप ते काढि लीए तुम्ह आपि भए किरपाला । सारि सम्हालि सरब सुख दीए आपि करे प्रतिपाला ।। २ ।। आपणी नदरि करे परमेसरु बंधन काटि छडाए । आपणो भगति प्रभि आपि कराई आपे सेवा लाए ।। ३ ।। भरमु गइआ भै मोह बिनासे मिटिआ सगल विसूरा । नानक दइआ करी सुखदातै भेटिआ सतिगुरु पूरा ।। ४ ।। ५ ।। ५२ ।।

हे प्रभु ! जो मनुष्य तुम्हारी शरण में आ गए, तुमने उन्हें अपना हाथ देकर (रक्षा करके) तृष्णा की प्रबल अग्नि से बचा लिया । उन्होंने अपने मन से दूसरों की मदद की आशा समाप्त कर दी । उनके हृदय में तुम्हारा ही अवलम्ब बना रहता है ।। १ ।। यदि तुम जीवों के हृदय में आ बसो, तो वे डूबने से (नाश से) बच सकते हैं । वे मनुष्य तुम्हारा नाम जपकर विकारों से मुक्ति पा लेते हैं और उन्हें तुम्हारा ही आसरा और तुम्हारी ही सहायता का भरोसा बना रहता है ।। १ ।। रहाउ ।। हे प्रभु ! जिन मनुष्यों पर तुम दयालु हो गए, तुमने उन्हें अँधेरे कुएँ (अज्ञान) से निकाल लिया । तुमने उनको सहारा देकर, उनकी देखभाल करके उन्हें समस्त सुख प्रदान किए । हे भाई ! प्रभु आप उनकी देखभाल करता है ।। २ ।। जिन मनुष्यों पर परमात्मा कृपादृष्टि करता है, उनके मोह-बन्धन काटकर उन्हें विकारों से छुड़ा लेता है; उन्हें अपनी सेवा-भक्ति में लगा लेता है । प्रभु उनसे अपनी भक्ति स्वयं करवा लेता है ।। ३ ।। हे नानक ! सुखदाता प्रभु ने जिन पर दया की, उन्हें पूर्णगुरु मिल गया, उनकी दुबिधा मिट गई, उनके भीतर से मोह तथा दूसरे समस्त भय नष्ट हो गए और उनकी समस्त चिन्ताएँ और दुःख समाप्त हो गए ।। ४ ।। ५ ।। ५२ ।।

।। सूही महला ५ ।। जब कछु न सीओ तब किआ करता कवन करम करि आइआ । अपना खेलु आपि करि देखै ठाकुरि रचनु रचाइआ ।।१।। मेरे रामराइ मुझ ते कछू न होई । आपे करता आपि कराए सरब निरंतरि सोई ।। १ ।। रहाउ ।। गणती गणी न छूटै कतहू काची देह इआणी । क्रिपा करहु प्रभ करणैहारे तेरी बखस निराली ।। २ ।। जीअ जंत सभ तेरे कीते घटि घटि तुही धिआईऐ । तेरी गति मिति तू है जाणहि कुदरति कीम न पाईऐ ।। ३ ।। निरगुणु मुगधु अजाणु अगिआनी करम धरम नही

जाणा। दइआ करहु नानकु गुण गावै मिठा लगै तेरा भाणा ॥ ४ ॥ ६ ॥ ५३ ॥

हे भाई ! जब संसार निर्मित ही नहीं हुआ था, तब यह जीव क्या करता था ? और कौन से कर्म करके यह अस्तित्व में आया है ? वास्तव में परमात्मा ने जगत-रचना की है, वह अपना यह जगत-तमाशा रचकर स्वयं ही इस तमाशे को देख रहा है ॥ १ ॥ हे मेरे प्रभु बादशाह ! किसी भी कार्य का श्रेय मुझे नहीं है। परमात्मा ही समस्त जीवों में निरन्तर व्याप्त है। वह आप ही सब कुछ करता है और आप ही जीवों से कराता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीव नासमझ और नश्वर शरीर वाला है। यदि इसके किए कर्मों का लेखा गिना गया, तो यह किसी तरह भी मुक्त नहीं हो सकता। (इसलिए) हे समर्थ प्रभु ! तुम आप ही कृपा करो। तुम्हारी कृपा अलग ही क़िस्म की (अद्वितीय) है ॥ २ ॥ जगत में समस्त जीव तुम्हारे द्वारा उत्पादित हैं, हर शरीर में तुम्हारा ही स्मरण किया जा रहा है। तुम कैसे हो ? तुम कितने महान हो —यह भेद तुम आप ही जानते हो। तुम्हारी प्रकृति का मूल्यांकन नहीं हो सकता ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! मैं गुणहीन, मूर्ख और नासमझ हूँ, मुझे आत्मिक जीवन की सूझ नहीं, मैं कोई धार्मिक काम करना भी नहीं जानता। (इसलिए) कृपा करो (ताकि) मनुष्य तुम्हारा गुणगान करता रहे और उसे तुम्हारी शुभेच्छा सदा मीठी लगती रहे ॥ ४ ॥ ६ ॥ ५३ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ भागठड़े हरि संत तुम्हारे जिन्ह घरि धनु हरि नामा। परवाणु गणी सेई इह आए सफल तिना के कामा ॥ १ ॥ मेरे राम हरि जन कै हउ बलि जाई। केसा का करि चवरु ढुलावा चरण धूड़ि मुखि लाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए। जीअ दानु दे भगती लाइनि हरि सिउ लैनि मिलाए ॥ २ ॥ सचा अमरु सची पातिसाही सचे सेती राते। सचा सुखु सची वडिआई जिस के से तिनि जाते ॥ ३ ॥ पखा फेरी पाणी ढोवा हरि जन कै पीसणु पीसि कमावा। नानक की प्रभ पासि बेनंती तेरे जन देखणु पावा ॥ ४ ॥ ७ ॥ ५४ ॥

तुम्हारे सन्त भाग्यशाली हैं, क्योंकि उनके हृदय में तुम्हारा नाम-धन होता है। मैं मानता हूँ कि उन्हीं भक्तों (नाम-धन से समृद्ध) का जन्म लेना तुम्हारी दृष्टि में स्वीकार्य (सफल) है, उन सन्तों के सारे काम सफल हो जाते हैं ॥ १ ॥ हे मेरे राम ! मैं तुम्हारे सेवकों पर बलिहारी जाऊँ,

मैं अपने केशों का चँवर बनाकर उन पर झुलाऊँ और उनके चरणों की धूलि लेकर अपने मस्तक पर लगाऊँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तजन जन्म-मरण के चक्र में नहीं आते, वे तो यहाँ दूसरों की भलाई करने के लिए आते हैं। सन्तजन दूसरों को आत्मिक जीवन की देन देकर परमात्मा की भक्ति में लगाते हैं और उन्हें परमात्मा से मिला देते हैं ॥ २ ॥ हे भाई ! सन्त-जन सत्यस्वरूप प्रभु के प्रेम-रंग में रँगे होते हैं, उनका हुक्म हमेशा चलता रहता है, उनकी बादशाहत अर्थात् उनका स्वामित्व बना रहता है। उन्हें स्थिर आनन्द का अनुभव होता है, उनकी शोभा हमेशा के लिए बनी रहती है। जिस परमात्मा के वे सेवक बने रहते हैं, वह परमात्मा ही उनकी क़ीमत पहचानता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक भी परमात्मा के समक्ष यही प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभु ! मैं तुम्हारे सन्तों का दर्शन करता रहूँ, मैं उन पर पंखा करता रहूँ, उनके लिए पानी ढोता रहूँ और उनके द्वार पर चक्की पीसकर सेवा करता रहूँ (यहाँ सेवा के प्रति श्रद्धा चित्रित है) ॥ ४ ॥ ७ ॥ ५४ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ पारब्रहम परमेसर सतिगुर आपे करणैहारा । चरण धूड़ि तेरी सेवकु मागै तेरे दरसन कउ बलिहारा ॥ १ ॥ मेरे रामराइ जिउ राखहि तिउ रहीऐ । तुधु भावै ता नामु जपावहि सुखु तेरा दिता लहीऐ ॥१॥रहाउ॥ मुकति भुगति जुगति तेरी सेवा जिसु तूं आपि कराइहि । तहा बैकुंठ जह कीरतनु तेरा तूं आपे सरधा लाइहि ॥२॥ सिमरि सिमरि सिमरि नामु जीवा तनु मनु होइ निहाला । चरण कमल तेरे धोइ धोइ पीवा मेरे सतिगुर दीन दइआला ॥ ३ ॥ कुरबाणु जाई उसु वेला सुहावी जितु तुमरै दुआरै आइआ । नानक कउ प्रभ भए क्रिपाला सतिगुरु पूरा पाइआ ॥ ४ ॥ ८ ॥ ५५ ॥

हे परमात्मा ! तुम सब कुछ करने में समर्थ हो। तुम्हारा दास तुम्हारे चरणों की धूलि माँगता है, तुम्हारे दर्शनों पर बलिहारी जाता है ॥ १ ॥ हे मेरे प्रभु बादशाह ! तुम जैसे रखो, वैसे ही रहा जा सकता है। जब तुम्हें भला लगता है, तो तुम जीवों से नाम जपाते हो। तुम्हारा ही दिया हुआ सुख हम भोग सकते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्हारी सेवा-भक्ति में ही मुक्ति है, सांसारिक सुख हैं, सुन्दर जीवनयुक्ति है (लेकिन तुम्हारी सेवा में वही प्रवृत्त होता है) जिसे तुम करते हो। जहाँ तुम्हारी गुणस्तुति होती हो, वही जगह मेरे लिए स्वर्ग है। तुम स्वयं ही हमारे भीतर (नाम-स्मरण की) श्रद्धा पैदा करते हो ॥ २ ॥ हे दीनदयालु सतिगुरु ! (कृपा करो) मैं तुम्हारा नाम-स्मरण कर आत्मिक जीवन

प्राप्त करता रहूँ; मेरा मन, तन प्रसन्न रहे और मैं सदा तुम्हारे सुन्दर चरण धोकर पान करता रहूँ ॥ ३ ॥ हे सतिगुरु ! मैं उस सुन्दर घड़ी पर बलिहारी जाता हूँ, जब मैं तुम्हारे द्वार पर आ पड़ूँ। हे भाई ! जब (गुरु) नानक पर प्रभु दयालु हुए, तब उसे पूर्णगुरु मिल गया ॥ ४ ॥ ८ ॥ ५५ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ तुधु चिति आए महा अनंदा जिसु विसरहि सो मरि जाए । दइआलु होवहि जिसु ऊपरि करते सो तुधु सदा धिआए ॥ १ ॥ मेरे साहिब तूं मै माणु निमाणी । अरदासि करी प्रभ अपने आगै सुणि सुणि जीवा तेरी बाणी ॥१॥ रहाउ ॥ चरण धूड़ि तेरे जन की होवा तेरे दरसन कउ बलि जाई । अंम्रित बचन रिदै उरिधारी तउ किरपा ते संगु पाई ॥२॥ अंतर की गति तुधु पहि सारी तुधु जेवडु अवरु न कोई । जिसनो लाइ लैहि सो लागै भगतु तुहारा सोई ॥ ३ ॥ दुइ कर जोड़ि मागउ इकु दाना साहिबि तुठै पावा । सासि सासि नानकु आराधे आठ पहर गुण गावा ॥ ४ ॥ ९ ॥ ५६ ॥

हे प्रभु ! यदि तुम हृदय में आ बसो, तो बड़ा सुख मिलता है। जिस मनुष्य को तुम भुला देते हो, समझो कि उस मनुष्य की आत्मिक मृत्यु हो गई। जिस मनुष्य पर तुम दयालु होते हो, वह हमेशा तुम्हें स्मरण करता रहता है ॥ १ ॥ यह जीव आपकी वाणी सुन-सुनकर विनती करता है कि हे प्रभु ! तुम मेरे साहिब हो और मैं तुम्हारा तुच्छ सेवक हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! मैं तुम्हारे दर्शन पर बलिहारी जाता हूँ, (मेरी कामना है कि) तुम्हारे सेवकों के चरणों की धूलि बना रहूँ। तुम्हारे आत्मिक जीवन देनेवाले वचन मैं अपने भीतर बसाए रखूँ और तुम्हारी कृपा से तुम्हारे सन्तों की संगति प्राप्त करूँ ॥ २ ॥ हे प्रभु ! मैंने अपने मन की स्थिति तुम्हारे सामने खोलकर रख दी है। मुझे तुम्हारे समान कोई नहीं दिखता। जिस मनुष्य को तुम चरणों में जगह देते हो, वही तुम्हारे चरणों में जगह पाता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! मैं दोनों हाथ जोड़कर एक दान आपसे माँगता हूँ। गुरु-कथन है कि जीव प्रत्येक श्वास के साथ तुम्हारी पूजा करता रहे और मैं भी आठों प्रहर तुम्हारी गुणस्तुति के गीत गाता रहूँ ॥ ४ ॥ ९ ॥ ५६ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ जिस के सिर ऊपरि तूं सुआमी सो दुखु कैसा पावै । बोलि न जाणै माइआ मदि माता मरणा चीति न आवै ॥ १ ॥ मेरे रामराइ तूं संता का संत तेरे । तेरे सेवक

कउ भउ किछु नाही जमु नही आवै नेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो तेरै रंगि राते सुआमी तिन्ह का जनम मरण दुखु नासा । तेरी बखस न मेटै कोई सतिगुर का दिलासा ॥ २ ॥ नामु धिआइनि सुख फल पाइनि आठ पहर आराधहि । तेरी सरणि तेरै भरवासै पंच दुसट लै साधहि ॥३॥ गिआनु धिआनु किछु करमु न जाणा सार न जाणा तेरी । सभ ते वडा सतिगुरु नानकु जिनि कल राखी मेरी ॥ ४ ॥ १० ॥ ५७ ॥

हे मेरे मालिक ! जिस मनुष्य के सिर पर तुम्हारा हाथ है, उसे कोई दुःख नहीं होता । वह मनुष्य माया-प्रेरित होकर कभी नहीं बोलता, मृत्यु का भय भी उसके चित्त में पैदा नहीं होता ॥ १ ॥ तुम अपने सन्तों के रक्षक हो, तुम्हारे सन्त तुम्हारे ही सहारे रहते हैं । हे प्रभु ! तुम्हारे सेवक को कोई भय स्पर्श नहीं करता, मृत्यु का भय उसके निकट नहीं जाता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो मनुष्य तुम्हारे प्रेम-रंग में रँगे रहते हैं, उनके जन्म-मरण का दुःख दूर हो जाता है; उन्हें गुरु का दिया हुआ यह भरोसा स्मरण रहता है कि उन पर हुई तुम्हारी कृपा को कोई मिटा नहीं सकता ॥ २ ॥ तुम्हारे सन्त तुम्हारा नाम-स्मरण करते रहते हैं, आत्मिक आनन्द भोगते हैं, आठों प्रहर तुम्हारा पूजन करते रहते हैं । तुम्हारी शरण में आकर, तुम्हारे आसरे रहकर वे कामादिक पाँचों वैरियों को पकड़ कर वश में कर लेते हैं ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! मैं तुम्हारी कृपा की क़ीमत नहीं जानता था, मुझे आत्मिक जीवन की सूझ नहीं थी, मैं तुम्हारे चरणों में सुरति लगानी भी नहीं जानता था, किसी और धार्मिक काम की भी मुझे सूझ नहीं थी । परन्तु तुम्हारी कृपा से मुझे सबसे बड़ा (गुरु नानक) शक्तिमान मिल गया, जिसने मेरी लाज रख ली ॥ ४ ॥ १० ॥ ५७ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ सगल तिआगि गुर सरणी आइआ राखहु राखनहारे । जितु तू लावहि तितु हम लागह किआ एहि जंत विचारे ॥ १ ॥ मेरे राम जी तूं प्रभ अंतरजामी । करि किरपा गुरदेव दइआला गुण गावा नित सुआमी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आठ पहर प्रभु अपना धिआईऐ गुर प्रसादि भउ तरीऐ । आपु तिआगि होईऐ सभ रेणा जीवतिआ इउ मरीऐ ॥ २ ॥ सफल जनमु तिस का जग भीतरि साध संगि नाउ जापे । सगल मनोरथ तिसके पूरन जिसु दइआ करे प्रभु आपे ॥ ३ ॥ दीन दइआल क्रिपाल प्रभ सुआमी तेरी सरणि दइआला । करि किरपा अपना नामु दीजै नानक साध रवाला ॥ ४ ॥ ११ ॥ ५८ ॥

हे रक्षा करने में समर्थ प्रभु ! मेरी रक्षा करो । मैं समस्त आसरे छोड़कर गुरु की शरण में आ गया हूँ । इन बेचारे जीवों की क्या सामर्थ्य है ? तुम जिस काम में हम जीवों को लगा देते हो, हम उसी काम में लग जाते हैं ॥ १ ॥ हे प्रभु ! तुम अन्तर्यामी हो, हे दया के घर गुरुदेव, हे स्वामी ! कृपा करो । मैं सदैव तुम्हारे गुण गाता रहूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! आठों प्रहर अपने मालिक प्रभु का स्मरण करना चाहिए, इस प्रकार ही गुरु की कृपा से संसार-समुद्र से पार उतरा जा सकता है। अहंत्वभाव छोड़कर सबके चरणों की धूलि बन जाना चाहिए; इस प्रकार दुनियावी कामकाज करते हुए भी निर्लिप्त हुआ जाता है ॥ २ ॥ जो मनुष्य गुरु की संगति में रहकर परमात्मा का नाम जपता है, जगत में उसका जीवन सफल हो जाता है । हे भाई ! जिस मनुष्य पर परमात्मा आप ही कृपा करता है, उसकी सब कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि हे दीनदयाल, कृपालु, मालिक प्रभु ! हे दया के स्रोत ! मैं तुम्हारा शरणागत हूँ । कृपा करो और अपना नाम तथा गुरु के चरणों की धूलि दो ॥ ४ ॥ ११ ॥ ५८ ॥

रागु सूही असटपदीआ महला १ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सभि अवगण मै गुणु नही कोई । किउकरि कंत मिलावा होई ॥ १ ॥ ना मै रूपु न बंके नैणा । ना कुल ढंगु न मीठे बैणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहजि सीगार कामणि करि आवै । ता सोहागणि जा कंतै भावै ॥ २ ॥ ना तिसु रूपु न रेखिआ काई । अंति न साहिबु सिमरिआ जाई ॥ ३ ॥ सुरति मति नाही चतुराई । करि किरपा प्रभ लावहु पाई ॥ ४ ॥ खरी सिआणी कंत न भाणी । माइआ लागी भरमि भुलाणी ॥ ५ ॥ हउमै जाई ता कंत समाई । तउ कामणि पिआरे नवनिधि पाई ॥ ६ ॥ अनिक जनम बिछुरत दुखु पाइआ । करु गहि लेहु प्रीतम प्रभ राइआ ॥ ७ ॥ भणति नानक सहु है भी होसी । जै भावै पिआरा तै रावेसी ॥८॥१॥

मेरे भीतर समस्त अवगुण ही अवगुण हैं, गुण एक भी नहीं (इसलिए) मुझे पति-प्रभु का मिलाप कैसे प्राप्त हो सकता है ? ॥१॥ न मेरी सुन्दर शक्ल है, न मेरी सुन्दर आँखें हैं, न ही कुलीनों वाला मेरा आचरण है, न मेरी बोली मीठी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि कामिनी (जीव-स्त्री) सहज शृंगार करके आती है, तो वह सुहागिन प्रभु-पति को अच्छी लगने लगती है ॥२॥

उस पति-प्रभु की कोई आकृति नहीं है, न उसका कोई चिह्न है (जिसे देखा जा सके, लेकिन यदि उम्र भर उसे भुलाए रखा तो) अन्तिम समय में वह मालिक स्मरण नहीं किया जा सकता ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! मेरी उच्च सुरति नहीं, मुझमें बुद्धि नहीं, कोई चतुराई नहीं। तुम आप ही कृपा करके अपने चरणों में जगह दो ॥ ४ ॥ जो जीव-स्त्री माया में फँसी रहे, दुबिधा में पड़कर जीवनमार्ग से विचलित रहे, वह चाहे कितनी ही चतुर हो, किन्तु पति-प्रभु को भली नहीं लगती ॥ ५ ॥ हे (पति-) प्रभु ! यदि अहंत्व दूर हो तभी तुम्हारे चरणों में जगह मिल सकती है, तब ही, हे प्यारे ! जीव-स्त्री तुम्हें नौ निधियों के स्रोत को पा सकती है ॥ ६ ॥ तुमसे बिछुड़कर अनेक योनियों में भटक-भटककर मैंने बहुत दुःख सहा है, अब तुम मेरा हाथ पकड़ (मुझे उबार लो) ॥ ७ ॥ गुरु नानक प्रार्थना करते हैं कि प्रभु-पति सदा स्थिर हैं और सदैव रहेंगे। जो जीव-स्त्री उन्हें भली लगती है, उसे वे अपने साथ मिला लेते हैं ॥ ८ ॥ १॥

[यहाँ गुरुजी ने आत्मा को स्त्री तथा परमात्मा को पति-रूप में चित्रित करते हुए, स्त्री के गुणवान होने पर ही प्रभु-प्राप्ति (पति-प्राप्ति) की सम्भावना बताई है।]

सूही महला १ घरु ९

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ कचा रंगु कसुंभ का थोड़ड़िआ दिन चारि जीउ। विणु नावै भ्रमि भुलीआ ठगि मुठी कूड़िआरि जीउ। सचे सेती रतिआ जनमु न दूजी वार जीउ ॥ १ ॥ रंगे का किआ रंगीऐ जो रते रंगु लाइ जीउ। रंगण वाला सेवीऐ सचे सिउ चितु लाइ जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चारे कुंडा जे भवहि बिनु भागा धनु नाहि जीउ। अवगणि मुठी जे फिरहि बधिक थाइ न पाहि जीउ। गुरि राखे से उबरे सबदि रते मन माहि जीउ ॥ २ ॥ चिटे जिन के कपड़े मैले चित कठोर जीउ। तिन मुखि नामु न ऊपजै दूजै विआपे चोर जीउ। मूलु न बूझहि आपणा से पसूआ से ढोर जीउ ॥ ३ ॥ नित नित खुसीआ मनु करे नित नित मंगै सुख जीउ। करता चिति न आवई फिरि फिरि लगहि दुख जीउ। सुख दुख दाता मनि वसै तितु तनि कैसी भुख जीउ ॥ ४ ॥ बाकी वाला तलबीऐ सिरि मारे जंदारु जीउ। लेखा मंगै देवणा पुछै करि बीचारु जीउ। सचे की लिव उबरै बखसे बखसणहारु जीउ ॥५॥ अन को कीजै मितड़ा

खाकु रलै मरि जाइ जीउ । बहु रंग देखि भुलाइआ भुलि भुलि आवै जाइ जीउ । नदरि प्रभू ते छुटीऐ नदरी मेलि मिलाइ जीउ ॥ ६ ॥ गाफल गिआन विहूणिआ गुर बिनु गिआनु न भालि जीउ । खिंचोताणि विगुचीऐ बुरा भला दुइ नालि जीउ । बिनु सबदै भै रतिआ सभ जोही जम कालि जीउ ॥ ७ ॥ जिनि करि कारणु धारिआ सभसै देइ आधारु जीउ । सो किउ मनहु विसारीऐ सदा सदा दातारु जीउ । नानक नामु न वीसरै निधारा आधारु जीउ ॥ ८ ॥ १ ॥ २ ॥

जैसे (किंशुक) कुसुंभे के पुष्प का रंग कच्चा होता है, चार दिन ही रहता है, वैसे ही माया की व्यापारिन जीव-स्त्री प्रभु-नाम से खाली होकर माया रूपी कुसुंभे के भ्रम में कुमार्गगामी हो जाती है, ठगी जाती है और उसका आत्मिक जीवन लुट जाता है। हे भाई! यदि वह सत्यस्वरूप प्रभु (-पति) के प्रेम-रंग में रँग जाए, तो उसका बार-बार का जन्म-चक्र समाप्त हो जाता है ॥ १ ॥ हे भाई! जो व्यक्ति परमात्मा के प्रेम-रंग में रँगे जाते हैं, उनके रँगे हुए मन को किसी दूसरे रंग की आवश्यकता नहीं रहती। उस सत्यस्वरूप तथा जीवों को अपने प्रेम-रंग में रँगनेवाले प्रभु को मन लगाकर स्मरण करना चाहिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे आत्मा! यदि तुम चारों दिशाओं में खोजती फिरो, तो भी सौभाग्य के बिना नाम-धन प्राप्त नहीं होता। यदि अवगुणों की बंदिनी बनी (कोल्हू के बैल की तरह) चलती रहे, तो भी परमात्मा-पति के रहस्यों से वंचित रह जाती है। जिन आत्माओं की गुरु ने रक्षा की है, जो जीव गुरु के शब्द के प्रभाव से मन में प्रभु-नाम से रँगे गए हैं, वे ही माया-मोह के विकारों से बचते हैं ॥ २ ॥ जिनके कपड़े तो श्वेत हैं परन्तु मन मैले हैं, वे क्रूर हैं, उनके मुँह से प्रभु का नाम नहीं निकलता। वे चोर हैं और माया-मोह में फँसे हुए हैं ॥ ३ ॥ मन सदा लौकिक ख़ुशियाँ संकलित करता है और हमेशा सुख की कामना से बँधा रहता है। लेकिन जब तक कर्तार प्रभु उसके हृदय में नहीं बस जाता, तब तक उसे बार-बार दुःख कचोटते रहते हैं। जिस मन में दुःख-सुख देनेवाला परमात्मा बस जाता है, उसे कोई तृष्णा नहीं रह जाती ॥४॥ (जीव-व्यापारी नाम के व्यापार के लिए जन्मा है, लेकिन जो जीव नाम-व्यापार भुलाकर विकारों का क़र्ज़ सिर पर उठा लेता है उस) क़र्ज़दार को बुलावा आता है, यमराज उसके सिर पर चोट करता है, उसके समस्त कृत कर्मों का विचार करके उससे कैफ़ीयत पूछता है, और उससे वह लेखा माँगता है जो उसके लिए देना बनता है। जिस जीव-बनजारे के भीतर सत्यस्वरूप प्रभु की लग्न हो, वह यमराज की मार से बच जाता है, क्षमाशील प्रभु उस पर

कृपा करता है ॥ ५ ॥ यदि परमात्मा के अतिरिक्त किसी दूसरे को मित्र बनाता है, तो वह व्यक्ति मिट्टी में मिल जाता है और आत्मिक मृत्यु को प्राप्त होता है। माया के बहुत से रंग-तमाशे देखकर वह कुमार्गगामी हो जाता है और जीवन के सन्मार्ग से अलग होकर वह जन्म-मरण के चक्र में पड़ जाता है। प्रभु की कृपादृष्टि से ही मुक्ति मिलती है, वह परमात्मा कृपादृष्टि द्वारा गुरुचरणों में जगह देकर अपने साथ मिला लेता है ॥ ६ ॥ हे आलसी तथा अज्ञानी जीव ! गुरु की शरण लिये बिना परमात्मा के साथ ऐक्यभाव की कामना व्यर्थ है। पूर्वकृत शुभ-अशुभ कर्मों के संस्कार तो हर वक्त मौजूद ही हैं (गुरु-शरण के बिना व्यक्ति दुबिधा में पड़ा रहता है) और इस खींचातानी में वह दुःखी होता है। 'गुरु' शब्द का आसरा लिये बिना दुनिया संत्रस्त रहती है, ऐसी दुनिया को मौत अपनी दृष्टि में रखती है अर्थात् ऐसे व्यक्ति की आत्मिक मृत्यु कभी भी हो सकती है ॥७॥ जिस कर्तार ने यह सृष्टि रची है और निर्मित करके इसे स्थापित किया हुआ है, वह हर एक जीव को आश्रय दे रहा है; उसे कभी भी मन से भुलाना नहीं, वह हमेशा सबका दाता है। हे नानक ! (प्रार्थना करो कि) परमात्मा का नाम कभी विस्मृत न हो। परमात्मा ही एक मात्र निराश्रितों का आश्रय है ॥ ८ ॥ १ ॥ २ ॥

सूही महला १ काफी घरु १०

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ माणस जनमु दुलंभु गुरमुखि पाइआ। मनु तनु होइ चुलंभु जे सतिगुर भाइआ ॥ १ ॥ चलै जनमु सवारि वखरु सचु लै। पति पाए दरबारि सतिगुर सबदि भै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनि तनि सचु सलाहि साचे मनि भाइआ। लालि रता मनु मानिआ गुरु पूरा पाइआ ॥ २ ॥ हउ जीवा गुण सारि अंतरि तू वसै। तूं वसहि मन माहि सहजे रसि रसै ॥ ३ ॥ मूरख मन समझाइ आखउ केतड़ा। गुरमुखि हरि गुण गाइ रंगि रंगेतड़ा ॥ ४ ॥ नित नित रिदै समालि प्रीतमु आपणा। जे चलहि गुण नालि नाही दुखु संतापणा ॥ ५ ॥ मनमुख भरमि भुलाणा ना तिसु रंगु है। मरसी होइ विडाणा मनि तनि भंगु है ॥ ६ ॥ गुर की कार कमाइ लाहा घरि आणिआ। गुरबाणी निरबाणु सबदि पछाणिआ ॥ ७ ॥ इक नानक की अरदासि जे तुधु भावसी। मै दीजै नाम निवासु हरि गुण गावसी ॥ ८ ॥ १ ॥ ३ ॥

चौरासी लाख योनियों में से मनुष्य-जन्म बड़ी कठिनाई से प्राप्त होता है। लेकिन इसका महत्त्व वही समझता है, जो गुरु की शरण ले। यदि सतिगुरु को भला लगे, तो उस शरणागत मनुष्य का मन और शरीर प्रभु-प्रेम के रंग से गहरा हो जाता है ॥१॥ जो मनुष्य सतिगुरु के शब्द और परमात्मा के भय-आदर में रहकर सत्यस्वरूप प्रभु के नाम-सौदे का व्यापार करता है और अपना जीवन सुन्दर बनाकर यहाँ से चला जाता है, वही परमात्मा के दरबार में प्रतिष्ठित होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस मनुष्य को पूर्णगुरु मिल जाता है, वह अपने मन-तन के द्वारा सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति करके सत्यस्वरूप प्रभु को प्रिय लगने लगता है। प्रभु-नाम की लाली में मस्त हुआ उसका मन उसी लाली में लीन हो जाता है ॥ २ ॥ हे प्रभु ! यदि तुम मेरे मन में बस जाओ तो मेरा मन स्थिर होकर नाम के आस्वादन में भीग जाए, तुम्हारे गुणस्मरण करके मेरे भीतर आत्मिक जीवन उजागर हो और मेरे भीतर 'तू ही तू' की धुन लग जाए ॥ ३ ॥ हे मेरे मूर्ख मन ! मैं तुझे कितना समझाऊँ कि गुरु की शरण लेकर परमात्मा की गुणस्तुति कर और परमात्मा के नाम-रंग में रँग जा ॥४॥ हे भाई ! अपने प्रियतम प्रभु को सदैव हृदय में सँभालकर रखो। तुम शुभ गुण लेकर जीवन-यात्रा में चलोगे तो कोई दुःख-क्लेश तुम्हें स्पर्श नहीं कर सकेगा ॥ ५ ॥ स्वेच्छाचारी मनुष्य का मन दुबिधा में पड़कर कुमार्गगामी हुआ रहता है। उसे परमात्मा के नाम की लाली नहीं चढ़ती। ऐसी जीवात्मा पतिहीन होकर आत्मिक मृत्यु पाती है और उसके मन-तन में परमात्मा से विछोह बना रहता है ॥ ६ ॥ जिस मनुष्य ने गुरु द्वारा बतलाया आचरण (व्यापार) करके भक्ति का लाभ (उपलब्धि) अपने हृदय रूपी घर में एकत्रित किया, उसने गुरु की वाणी के प्रभाव से गुरु के ज्ञान में प्रवृत्त होकर वासनारहित परमात्मा के साथ मेल कर लिया ॥ ७ ॥ हे प्रभु ! (मुझ नानक की) प्रार्थना भी यही है। यदि तुम्हें यह भली लगे, तो मेरे हृदय में अपने नाम को स्थिर कर दो, ताकि मैं तुम्हारे गुण गाता रहूँ ॥ ८ ॥ १ ॥ ३ ॥

॥ सूही महला १ ॥ जिउ आरणि लोहा पाइ भंनि घड़ाईऐ। तिउ साकतु जोनी पाइ भवै भवाईऐ ॥ १ ॥ बिनु बूझे सभु दुखु दुखु कमावणा। हउमै आवै जाइ भरमि भुलावणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तूं गुरमुखि रखणहारु हरि नामु धिआईऐ। मेलहि तुझै रजाइ सबदु कमाईऐ ॥ २ ॥ तूं करि करि वेखहि आपि देहि सु पाईऐ। तू देखहि थापि उथापि दरि बीनाईऐ ॥ ३ ॥ देही होवगि खाकु पवणु उडाईऐ। इहु किथै

घरु अउताकु महलु न पाईऐ ॥ ४ ॥ दिहु दीवी अंध घोरु घबु मुहाईऐ । गरबि मुसै घरु चोरु किसु रूआईऐ ॥ ५ ॥ गुरमुखि चोरु न लागि हरि नामि जगाईऐ । सबदि निवारी आगि जोति दीपाईऐ ॥ ६ ॥ लालु रतनु हरि नामु गुरि सुरति बुझाईऐ । सदा रहै निहकामु जे गुरमति पाईऐ ॥ ७ ॥ राति दिहै हरि नाउ मंनि वसाईऐ । नानक मेलि मिलाइ जे तुधु भाईऐ ॥८॥२॥४॥

जिस प्रकार भट्ठी में लोहा डालकर, गलाकर फिर नये सिरे से बनाया जाता है, उसी प्रकार माया में डूबा जीव योनियों में डाला जाता है और वह जन्म-मरण के चक्र में पड़कर आवागमन करता है ॥ १ ॥ सही जीवनयुक्ति समझे बिना मनुष्य जो भी कर्म करता है, उसमें दुःख ही दुःख पाता है। अहंकार के कारण मनुष्य जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है और दुबिधाग्रस्त होकर भ्रमित हुआ रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! जो मनुष्य गुरु की शरण लेता है, तुम उसे चौरासी लाख योनियों के चक्र से बचाते हो, वह (हे प्रभु !) तुम्हारा नाम-स्मरण करता है। गुरु-मिलन भी तुम्हारी इच्छा से ही सम्भव है। (जिसे गुरु का दर्शन होता है) वही गुरु के शब्द की साधना करता है ॥ २ ॥ हे प्रभु ! जीव उत्पन्न कर, इनकी देखभाल भी तुम आप करते हो। जो कुछ तुम देते हो, वही जीवों को मिलता है। तुम आप पैदा करते हो, आप नष्ट करते हो और अपनी देखरेख में सबकी रक्षा करते हो ॥३॥ जब शरीर से श्वास निकल जाता है, तो शरीर मिट्टी हो जाता है। तदुपरान्त न यह घर इसे मिलता है, न बैठक मिलती है और न महलों में रह पाता है ॥ ४ ॥ (गुरु की शिक्षा सुने बिना) जीव अपने घर का माल लुटाए जाता है, प्रकाशपूरित दिन होते हुए भी उसके लिए घोर अँधेरा बना रहता है। अहंत्व ग्रसित होने के कारण मोह रूपी चोर इसके घर (आत्मिक धन) को लूटता जाता है। अब यह किसके पास शिकायत करे ? ॥ ५ ॥ जो मनुष्य गुरु की शरण लेता है, उसके आत्मिक धन को चोर नहीं चुराते, गुरु उसे परमात्मा के नाम के द्वारा सचेत रखता है। गुरु अपने शब्द द्वारा तृष्णा रूपी आग बुझा देता है और उसके भीतर ईश्वरीय ज्योति जाग्रत् कर देता है॥ ६ ॥ परमात्मा का नाम ही उत्तम धन है। गुरु ने यह सूझ इसे दे दी है। यदि मनुष्य गुरु की शिक्षा प्राप्त कर ले, तो वह सदा मायाजन्य वासना से बचा रहता है ॥ ७ ॥ हे नानक ! (प्रभु-द्वार पर प्रार्थना कर कि, हे प्रभु !) यदि तुम्हें भला लगे तो कृपा करके अपना सान्निध्य प्रदान करो, ताकि रात-दिन (हे हरि !) तुम्हारा नाम मन में बसाया जा सके ॥ ८ ॥ २ ॥ ४ ॥

॥ सूही महला १ ॥ मनहु न नामु विसारि अहिनिसि

धिआईऐ । जिउ राखहि किरपा धारि तिवै सुखु पाईऐ ॥ १ ॥ मै अंधुले हरि नामु लकुटी टोहणी । रहउ साहिब की टेक न मोहै मोहणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जह देखउ तह नालि गुरि देखालिआ । अंतरि बाहरि भालि सबदि निहालिआ ॥ २ ॥ सेवी सतिगुर भाइ नामु निरंजना । तुधु भावै तिवै रजाइ भरमु भउ भंजना ॥३॥ जनमत ही दुखु लागै मरणा आइकै । जनमु मरणु परवाणु हरि गुण गाइकै ॥ ४ ॥ हउ नाही तू होवहि तुध ही साजिआ । आपे थापि उथापि सबदि निवाजिआ ॥ ५ ॥ देही भसम रुलाइ न जापी कह गइआ । आपे रहिआ समाइ सो विसमादु भइआ ॥ ६ ॥ तूं नाही प्रभ दूरि जाणहि सभ तू है । गुरमुखि वेखि हदूरि अंतरि भी तू है ॥ ७ ॥ मै दीजै नाम निवासु अंतरि सांति होइ । गुण गावै नानक दासु सतिगुरु मति देइ ॥ ८ ॥ ३ ॥ ५ ॥

हे आत्मा ! परमात्मा के नाम को विस्मृत न कर, दिन-रात परमात्मा का नाम स्मरण करना चाहिए । हे प्रभु ! जैसे भी मुझ पर तुम्हारी कृपा होती रहे, वैसे ही मुझे आत्मिक आनन्द प्राप्त होता है ॥ १ ॥ मेरे लिए परमात्मा का नाम अन्धे की लकड़ी है, यही मेरे लिए सहारा है । जब मैं मालिक-प्रभु के सहारे रहता हूँ तो मनमोहक माया मुझे नहीं भ्रमा सकती ॥१॥ रहाउ ॥ गुरु ने मुझे यह सूझ प्रदान की है कि, हे प्रभु ! तुम सदैव मेरे साथ हो । अब तक तुम्हें मैं बाहर खोज रहा था, किन्तु गुरु के उपदेश द्वारा मैंने तुम्हें अपने भीतर ही पा लिया है ॥ २ ॥ हे मायातीत प्रभु ! गुरु के उपदेश अनुसार आचरण करते हुए मैं तुम्हारा नाम-स्मरण करता हूँ । हे भ्रम तथा भय के नाशक प्रभु ! जो कुछ तुम्हें भला लगता है, मैं उसी को तुम्हारी रजा समझता हूँ ॥ ३ ॥ (प्रभु को विस्मृत करने पर) जन्म से मृत्यु पर्यन्त आत्मिक मृत्यु का दुःख भोगना पड़ता है । परमात्मा के गुण गाकर समस्त जीवन सफल हो जाता है ॥ ४ ॥ हे प्रभु ! तुमने ही जगत पैदा किया है, तुम आप ही जगत को पैदा करते हो, आप ही नष्ट करते हो । जिस जीव को तुम गुरु के शब्द में प्रवृत्त कर उपकृत करते हो, जिसके भीतर तुम प्रकट होते हो, उसके भीतर अहंभावना नहीं रह जाती ॥ ५ ॥ जीवात्मा शरीर को मिट्टी में मिलाकर, पता नहीं लगता कहाँ चला जाता है ? आश्चर्यजनक कौतुक करता है (लेकिन, हे प्रभु !) तुम आप ही सर्वत्र मौजूद हो ॥ ६ ॥ जो मनुष्य गुरु की शरण लेते हैं, वे जानते हैं कि तुम दूर नहीं हो, सर्वत्र तुम्हीं हो, भीतर भी तुम हो (बाहर भी तुम ही हो), तुम्हें वे सर्वत्र अवस्थित देखते हैं ॥ ७ ॥ गुरु-कथन है कि

प्रभु से प्रार्थना करो, ताकि तुम्हारे भीतर प्रभु-नाम का स्थायी वास हो और तुम शान्ति अनुभव करो। तुम्हारी कृपा से जिसे सतिगुरु शिक्षा देता है, वही दास तुम्हारे गुण गाता है ॥ ८ ॥ ३ ॥ ५ ॥

रागु सूही महला ३ घरु १ असटपदीआ

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ नामै ही ते सभु किछु होआ बिनु सतिगुर नामु न जापै। गुर का सबदु महा रसु मीठा बिनु चाखे सादु न जापै। कउडी बदलै जनमु गवाइआ चीनसि नाही आपै। गुरमुखि होवै ता एको जाणै हउमै दुखु न संतापै ॥ १ ॥ बलिहारी गुर अपणे विटहु जिनि साचे सिउ लिव लाई। सबदु चीन्हि आतमु परगासिआ सहजे रहिआ समाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि गावै गुरमुखि बूझै गुरमुखि सबदु बीचारे। जीउ पिंडु सभु गुर ते उपजै गुरमुखि कारज सवारे। मनमुखि अंधा अंधु कमावै बिखु खटे संसारे। माइआ मोहि सदा दुखु पाए बिनु गुर अति पिआरे ॥ २ ॥ सोई सेवकु जे सतिगुर सेवे चालै सतिगुर भाए। साचा सबदु सिफति है साची साचा मंनि वसाए। सची बाणी गुरमुखि आखै हउमै विचहु जाए। आपे दाता करमु है साचा साचा सबदु सुणाए ॥ ३ ॥ गुरमुखि घाले गुरमुखि खटे गुरमुखि नामु जपाए। सदा अलिपतु साचै रंगि राता गुर कै सहजि सुभाए। मनमुखु सदही कूड़ो बोलै बिखु बीजै बिखु खाए। जमकालि बाधा त्रिसना दाधा बिनु गुर कवणु छडाए ॥ ४ ॥ सचा तीरथु जितु सतसरि नावणु गुरमुखि आपि बुझाए। अठसठि तीरथ गुर सबदि दिखाए तितु नातै मलु जाए। सचा सबदु सचा है निरमलु ना मलु लगै न लाए। सची सिफति सची सालाह पूरे गुर ते पाए ॥ ५ ॥ तनु मनु सभु किछु हरि तिसु केरा दुरमति कहणु न जाए। हुकमु होवै ता निरमलु होवै हउमै विचहु जाए। गुर की साखी सहजे चाखी त्रिसना अगनि बुझाए। गुर कै सबदि राता सहजे माता सहजे रहिआ समाए ॥६॥ हरि का नामु सति करि जाणै गुर कै भाइ पिआरे। सची वडिआई गुर ते पाई सचै नाइ पिआरे। एको सचा सभ महि वरतै विरला को वीचारे। आपे मेलि लए ता बखसे सची भगति

सवारे ॥ ७ ॥ सभो सचु सचु सचु वरतै गुरमुखि कोई जाणै । जंमण मरणा हुकमो वरतै गुरमुखि आपु पछाणै । नामु धिआए ता सतिगुर भाए जो इछै सो फलु पाए । नानक तिस दा सभु किछु होवै जि विचहु आपु गवाए ॥ ८ ॥ १ ॥

परमात्मा के नाम से सब कुछ होता है, लेकिन गुरु का शरणागत हुए बिना नाम की क़ीमत आँकी नहीं जाती । गुरु का शब्द रसीला है, मीठा है, जब तक इसे चखा न जाए, आस्वाद का पता नहीं लग सकता, जो मनुष्य अपने आत्मिक जीवन को नहीं पहचानता, वह अपने जन्म को कौड़ियों के मोल व्यर्थ ही गँवा देता है । जब मनुष्य गुरु द्वारा बतलाए मार्ग पर चलता है, तब वह परमात्मा से अटूट सम्बन्ध जोड़ लेता है और उसे अहंत्व का दुःख प्रभावित नहीं कर पाता ॥ १ ॥ हे भाई ! मैं अपने गुरु पर बलिहारी जाता हूँ, जिसने सत्यस्वरूप परमात्मा के साथ मेरी प्रीति जोड़ दी है । गुरु के उपदेश से ऐक्यभाव स्थापित करने पर मनुष्य का आत्मिक जीवन उज्ज्वल होता है और मनुष्य आत्मिक स्थिरता में लीन रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु की शरण लेनेवाला मनुष्य गुरु के शब्द का गान करता है, उसे समझता और उस पर विचार करता है । उस मनुष्य की आत्मा, उसका शरीर गुरु के प्रभाव से नया आत्मिक बल प्राप्त करता है, गुरु की शरण लेकर वह अपने सारे काम सँवार लेता है । स्वेच्छाचारी मनुष्य माया-मोह में अन्धा हुआ रहता है, वह सदा अन्धों (अज्ञानियों) वाला काम ही करता रहता है, दुनिया में वह ऐसी कमाई करता है, जो उसके आत्मिक जीवन के लिए ज़हर बन जाती है । प्यारे प्रभु की शरण के बिना वह मनुष्य माया-मोह में फँसकर सदा दुःख सहन करता है ॥ २ ॥ जो मनुष्य गुरु की शरण लेता है, गुरु की 'रज़ा' में रहता है, वह मनुष्य परमात्मा का भक्त बन जाता है । सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति की वाणी उसमें बसी रहती है और वह मनुष्य सत्यस्वरूप प्रभु को अपने भीतर धारण कर लेता है । गुरु के बताए मार्ग पर चलनेवाला मनुष्य सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति की वाणी उच्चरित करता रहता है, जिससे उसके भीतर से अहंभावना दूर हो जाती है । उसे विश्वास हो जाता है कि परमात्मा आप ही सब देन देनेवाला है, परमात्मा की कृपा अटल है । इसलिए वह मनुष्य सत्यस्वरूप प्रभु का सदैव गुणगान करता है ॥ ३ ॥ जो मनुष्य गुरु के बताए मार्ग पर चलता है वह नाम की साधना करता है, (नाम-धन) प्राप्त करता है तथा दूसरों को भी नाम जपाता है । प्रभु के प्रेम-रंग में रँगकर वह मनुष्य सदैव निर्लिप्त रहता है । गुरु के द्वार पर रहकर वह मनुष्य आत्मिक स्थिरता को बनाए रखता है और प्रभु के प्रेम में लीन रहता है । इसके विपरीत स्वेच्छाचारी मनुष्य सदैव मिथ्या आचरण

करता है, माया-मोह का विष बोता है और वही विष खाता है। वह मनुष्य आत्मिक मृत्यु के बन्धनों में बँधा रहता है, तृष्णा की अग्नि से जलता रहता है। (इस स्थिति से) उसे गुरु के अतिरिक्त कोई नहीं बचा सकता ॥ ४ ॥ जो मनुष्य गुरु की शरण लेता है, उसे प्रभु परमात्मा स्वयं सच्चे तीर्थ, गुरु के शब्द रूपी सरोवर में स्नान करने की सूझ देता है। गुरु के शब्द द्वारा ही उसे (प्रभु) अड़सठ तीर्थ का पुण्य लब्ध होता है। उस (गुरु-शब्द) तीर्थ में स्नान करने से विकारों का मैल उतर जाता है। (वास्तव में) गुरु का शब्द ही सत्यस्वरूप और पवित्र तीर्थ है, (उस तीर्थ में स्नान करने से) मैल नहीं लगता। उसमें स्नान करनेवाला मनुष्य गुरु से सत्यस्वरूप परमात्मा की सही पहचान प्राप्त कर लेता है ॥ ५ ॥ मनुष्य दुर्बुद्धि के फलस्वरूप यह नहीं जानता कि हमारा यह तन-मन सब कुछ ईश्वर-प्रदत्त है। जब परमात्मा की रज़ा होती है (तब मनुष्य का मन) पवित्र हो जाता है और उसके भीतर से अहंभावना दूर हो जाती है। वह मनुष्य आत्मिक रूप से स्थिर होकर गुरु की शिक्षा का आनन्द भोगता है (गुरु का उपदेश) उसके भीतर से तृष्णा की अग्नि बुझा देता है। वह मनुष्य गुरु के ज्ञान में रँग जाता है, आत्मिक स्थिरता में मस्त हो जाता है और उसी में ही लीन रहता है ॥ ६ ॥ जो मनुष्य प्यारे गुरु के प्रेम में स्थिर रहता है, वह यह बात समझ लेता है कि परमात्मा का नाम ही सच्चा साथी है। वह मनुष्य गुरु-निर्दिष्ट ढंग से सत्यस्वरूप प्रभु का गुणगान करता है और सत्यस्वरूप प्रभु के नाम में लग्न रखने लगता है। सृष्टि में प्रभु की व्याप्ति का विचार कोई विरला मनुष्य ही करता है। ऐसे मनुष्य को जब प्रभु आप ही कृपा करके अपने चरणों में जगह देता है और अपनी भक्ति देकर उसका जीवन सुन्दर बना देता है ॥ ७ ॥ हे भाई! कोई विरला मनुष्य ही गुरु की शरण लेकर समझता है कि सर्वत्र सत्यस्वरूप प्रभु ही कार्यरत है, जगत में जन्मना-मरना भी उसी के हुक्म अनुसार होता है। गुरु की शरण लिये बिना मनुष्य आत्मिक जीवन की असफल खोज करता है। जब वह मनुष्य परमात्मा का नाम-स्मरण करना शुरू करता है, तो गुरु को प्यारा लगने लगता है। फिर वह जो भी कामना करता है, वही प्राप्त कर लेता है। नानक का कथन है कि जो मनुष्य अपने भीतर से अहंत्व दूर कर लेता है, उसका आत्मिक जीवन सदा सम्पन्न रहता है ॥८॥१॥

॥ सूही महला ३ ॥ काइआ कामणि अति सुआल्हिउ पिरु वसै जिसु नाले। पिर सचे ते सदा सुहागणि गुर का सबदु सम्हाले। हरि की भगति सदा रंगि राता हउमै विचहु जाले ॥ १ ॥ वाहु वाहु पूरे गुर की बाणी। पूरे गुर ते उपजी

साचि समाणी ।। १ ।। रहाउ ।। काइआ अंदरि सभु किछु वसै खंड मंडल पाताला । काइआ अंदरि जग जीवन दाता वसै सभना करे प्रतिपाला । काइआ कामणि सदा सुहेली गुरमुखि नामु सम्हाला ।।२।। काइआ अंदरि आपे वसै अलखु न लखिआ जाई । मनमुखु मुगधु बूझै नाही बाहरि भालणि जाई । सतिगुरु सेवे सदा सुखु पाए सतिगुरि अलखु दिता लखाई ।।३।। काइआ अंदरि रतन पदारथ भगति भरे भंडारा । इसु काइआ अंदरि नउ खंड प्रिथमी हाट पटण बाजारा । इसु काइआ अंदरि नामु नउनिधि पाईऐ गुर कै सबदि वीचारा ।। ४ ।। काइआ अंदरि तोलि तोलावै आपे तोलणहारा । इहु मनु रतनु जवाहर माणकु तिसका मोलु अफारा । मोलि कितही नामु पाईऐ नाही नामु पाईऐ गुर बीचारा ।। ५ ।। गुरमुखि होवै सु काइआ खोजै होर सभ भरमि भुलाई । जिसनो देइ सोई जनु पावै होर किआ को करे चतुराई । काइआ अंदरि भउ भाउ वसै गुर परसादी पाई ।। ६ ।। काइआ अंदरि ब्रहमा बिसनु महेसा सभ ओपति जितु संसारा । सचै आपणा खेलु रचाइआ आवागउणु पासारा । पूरै सतिगुरि आपि दिखाइआ सचि नामि निसतारा ।। ७ ।। सा काइआ जो सतिगुरु सेवे सचै आपि सवारी । विणु नावै दरि ढोई नाही ता जमु करे खुआरी । नानक सचु वडिआई पाए जिसनो हरि किरपा धारी ।। ८ ।। २ ।।

हे भाई ! गुरुवाणी के प्रभाव से जिस जीव-स्त्री में प्रभु-पति अवस्थित हो जाता है, वह स्त्री सुन्दर बन जाती है । जो जीव-स्त्री गुरु के उपदेश को अपने हृदय में धारण करती है, सत्यस्वरूप प्रभु-पति के मिलाप के कारण वह सौभाग्यवती बन जाती है । वाणी के प्रभाव से जो मनुष्य अपने अन्दर से अहंत्व जला देता है, वह सदा के लिए परमात्मा की भक्ति के रंग में रँग जाता है ।। १ ।। हे भाई ! पूर्णगुरु की वाणी धन्य है । यह वाणी गुरु के हृदय से पैदा होती है । यही (पवित्र वाणी ही) उसे सत्यस्वरूप परमात्मा में लीन कर देती है ।। १ ।। रहाउ ।। (मानव-शरीर में सब कुछ है) खण्ड, मण्डल, लोक सब शरीर में अवस्थित हैं, सबका प्रतिपालक और जगत का संरक्षक वह परमात्मा भी शरीर में बसता है । जो जीव-स्त्री गुरु की शरण लेकर परमात्मा का नाम अपने हृदय में बसाती है, उसकी देह सदा सुखी रहती है ।। २ ।। हे भाई ! इस शरीर में प्रभु आप ही विद्यमान रहता है, लेकिन वह अलक्षित है, देखा नहीं जा सकता । स्वेच्छाचारी मूर्ख

मनुष्य यह भेद नहीं समझता, वह प्रभु को बाहर ढूँढ़ने के लिए चल पड़ता है। जो मनुष्य गुरु की शरण लेता है, वह सदा आत्मिक आनन्द प्राप्त करता है। (गुरु की शरण लेनेवाले मनुष्य को) गुरु ने भीतर ही अलक्षित परमात्मा का दर्शन करवा दिया है ॥ ३ ॥ परमात्मा की भक्ति एक रत्न पदार्थ है, इन रत्न-पदार्थों के भण्डार शरीर में भरे पड़े हैं। इस शरीर के भीतर ही सारी पृथ्वी के हाट, बाज़ार और शहर हैं। गुरु के शब्द के द्वारा विचार करके इस शरीर के अन्दर से ही परमात्मा का नाम प्राप्त हो जाता है, जो पृथ्वी के नौ भण्डारों (के समान है) ॥ ४ ॥ हे भाई ! इस मनुष्य-शरीर में नाम-रत्न का पारखी प्रभु आप ही विद्यमान रहता है, वह आप ही नाम-रत्न की परख करने का तरीक़ा सिखाता है; (प्रभु जिसे यह तरीक़ा सिखा देता है उसका) यह मन रत्न, जवाहर, मोती (तुल्य क़ीमती बन जाता है, इतना क़ीमती कि) उसका मूल्यांकन नहीं हो सकता। परमात्मा का नाम किसी सांसारिक मोल पर नहीं मिल सकता। (केवल) सतिगुरु की वाणी के चिन्तन से परमात्मा का नाम मिलता है ॥ ५ ॥ जो मनुष्य गुरु की शरण लेता है, वह परमात्मा के नाम की प्राप्ति के लिए अपने शरीर को ही खोजता है। शेष दुनिया दुविधाग्रस्त होकर कुमार्गगामी हुई रहती है। परमात्मा आप जिस मनुष्य को नाम की देन देता है, वही मनुष्य इसे प्राप्त करता है। कोई भी मनुष्य गुरु की शरण के बिना नाम-प्राप्ति की चतुराई नहीं कर सकता। गुरु की कृपा द्वारा ही नाम प्राप्त होता है। जिसे प्राप्त होता है, उसके शरीर में परमात्मा का भय-सम्मान और प्रेम स्थिर हो जाता है ॥६॥ इसी शरीर में वह परमात्मा अवस्थित है, जिससे ब्रह्मा, विष्णु, शिव तथा शेष समस्त दुनिया की उत्पत्ति हुई है। सत्यस्वरूप प्रभु ने यह जगत अपना एक तमाशा रचा हुआ है और यह जन्म-मरण का एक प्रसार कर दिया है। जिस मनुष्य को पूर्णगुरु ने यह वास्तविकता दिखा दी, उस मनुष्य का सत्यस्वरूप प्रभु के नाम में प्रवृत्त होकर उद्धार हो जाता है ॥७॥ वही शरीर धन्य है, जो गुरु की शरण लेता है। उस शरीर को सत्यस्वरूप कर्तार ने सुन्दर बना दिया है। परमात्मा के नाम के बिना उस प्रभु के द्वार पर स्थान नहीं मिलता। ऐसे नास्तिक मनुष्य को यमराज दुःखी करता है। हे नानक ! जिस मनुष्य पर परमात्मा आप कृपा करता है, उसे ही अपना सत्यस्वरूप नाम प्रदान करता है ॥८॥२॥

रागु सूही महला ३ घरु १०

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ दुनीआ न सालाहि जो मरि वंञसी। लोका न सालाहि जो मरि खाकु थीई ॥ १ ॥ वाहु

मेरे साहिबा वाहु । गुरमुखि सदा सलाहीऐ सचा वेपरवाहु ।।१।। रहाउ ।। दुनीआ केरी दोसती मनमुख दझि मरंनि । जमपुरि बधे मारीअहि वेला न लाहंनि ।। २ ।। गुरमुखि जनमु सकारथा सचै सबदि लगंनि । आतम रामु प्रगासिआ सहजे सुखि रहंनि ।। ३ ।। गुर का सबदु विसारिआ दूजै भाइ रचंनि । तिसना भुख न उतरै अनदिनु जलत फिरंनि ।।४।। दुसटा नालि दोसती नालि संता वैरु करंनि । आपि डुबे कुटंब सिउ सगले कुल डोबंनि ।। ५ ।। निंदा भली किसै की नाही मनमुख मुगध करंनि । मुह काले तिन निंदका नरके घोरि पवंनि ।। ६ ।। ए मन जैसा सेवहि तैसा होवहि तेहे करम कमाइ । आपि बीजि आपे ही खावणा कहणा किछू न जाइ ।। ७ ।। महा पुरखा का बोलणा होवै कितै परथाइ । ओइ अंम्रित भरे भरपूर हहि ओना तिलु न तमाइ ।। ८ ।। गुणकारी गुण संघरै अवरा उपदेसेनि । से वडभागी जि ओना मिलि रहे अनदिनु नामु लएनि ।। ९ ।। देसी रिजकु संबाहि जिनि उपाई मेदनी । एको है दातारु सचा आपि धणी ।। १० ।। सो सचु तेरै नालि है गुरमुखि नदरि निहालि । आपे बखसे मेलि लए सो प्रभु सदा समालि ।। ११ ।। मनु मैला सचु निरमला किउकरि मिलिआ जाइ । प्रभु मेले ता मिलि रहै हउमै सबदि जलाइ ।। १२ ।। सो सहु सचा वीसरै ध्रिगु जीवणु संसारि । नदरि करे ना वीसरै गुरमती वीचारि ।। १३ ।। सतिगुरु मेले ता मिलि रहा साचु रखा उरधारि । मिलिआ होइ न वीछुड़ै गुर कै हेति पिआरि ।।१४।। पिरु सालाही आपणा गुर कै सबदि वीचारि । मिलि प्रीतम सुखु पाइआ सोभावंती नारि ।। १५ ।। मनमुख मनु न भिजई अति मैले चिति कठोर । सपै दुधु पीआईऐ अंदरि विसु निकोर ।।१६।। आपि करे किसु आखीऐ आपे बखसणहारु । गुरसबदी मैलु उतरै ता सचु बणिआ सीगारु ।। १७ ।।

हे भाई ! दुनिया की खुशामद व्यर्थ है, क्योंकि दुनिया नश्वर है। लोगों की भी झूठी प्रशंसा व्यर्थ है, क्योंकि वे भी क्षणभंगुर हैं ।।१।। केवल परमात्मा ही धन्य है, प्रशंसनीय है। इसलिए गुरु की शरण लेकर उस परमात्मा की गुणस्तुति करनी चाहिए, जो अनश्वर है और स्वाधीन है ।। १ ।। रहाउ ।। स्वेच्छाचारी मनुष्य दुनियावी मित्रता में ही जल

मरते हैं। वे यमराज के द्वार पर चोटें खाते हैं, पश्चात्ताप करते हैं, किन्तु तब उन्हें (बीता हुआ समय) वापस नहीं मिलता ॥ २ ॥ हे भाई! जो मनुष्य गुरु की शरण लेते हैं, उनका जीवन सफल हो जाता है क्योंकि वे हमेशा सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति की वाणी में संलग्न रहते हैं। उनके भीतर सर्वव्यापक परमात्मा का प्रकाश हो जाता है। वे आत्मिक स्थिरता के आनन्द में लीन रहते हैं ॥ ३ ॥ हे भाई! जो मनुष्य गुरु की वाणी को भुला देते हैं, वे माया-मोह के विकारों में ग्रस्त रहते हैं। उनके भीतर से माया की भूख-प्यास दूर नहीं होती, वे हर वक्त तृष्णा की अग्नि में जलते हैं ॥ ४ ॥ ऐसे मनुष्य दुराचारी व्यक्तियों के साथ मित्रता बनाए रखते हैं और सन्तों के साथ वैरभाव करते हैं। वे आप सपरिवार डूबते हैं और अपने वंश को भी साथ ही डुबा लेते हैं ॥ ५ ॥ किसी की भी बुराई करना भला काम नहीं है। स्वेच्छाचारी मूर्ख मनुष्य ही निंदा किया करते हैं। लोक-परलोक में वे बदनाम होते हैं और भयानक नरक में पड़ते हैं ॥ ६ ॥ हे मन! तू जैसे (पात्र) की सेवा-भक्ति करेगा, अपने कर्मों से वैसा ही बन जायगा। (यह नियम है कि) जीव को आप ही बीज (कर्म रूपी बीज) बोकर आप ही उसका फल खाना होता है। इस नियम का अतिक्रमण नहीं किया जा सकता ॥ ७ ॥ महापुरुषों के प्रवचन किसी संयोग से उच्चरित होते हैं। वे महापुरुष आत्मिक जीवन देनेवाले नाम-रस से भरपूर रहते हैं, उन्हें किसी सेवा आदि का लालच नहीं होता ॥ ८ ॥ वे महापुरुष दूसरों को भी नाम का उपदेश करते हैं। गुण ग्रहण करनेवाला मनुष्य उनसे गुण ग्रहण कर लेता है। इसलिए जो मनुष्य उन महापुरुषों की संगति में रहते हैं, वे सौभाग्यशाली हो जाते हैं और प्रतिपल नाम जपने लग जाते हैं ॥ ९ ॥ हे भाई! जिस परमात्मा ने यह सृष्टि बनाई है, वह आप ही सब जीवों को भोजन पहुँचाता है। वही सब देन देनेवाला है। वह मालिक सत्यस्वरूप भी है ॥ १० ॥ हे भाई! वह सत्यस्वरूप परमात्मा तुम्हारे साथ-साथ रहता है। गुरु की शरण लेकर तू अपनी आँखों से उसे देख ले। वह जिस मनुष्य पर कृपा करता है, उसे आप ही अपने चरणों में जगह देता है। उस प्रभु को हमेशा अपने हृदय में धारण करो ॥ ११ ॥ वह सत्यस्वरूप परमात्मा सदैव पवित्र है; जब तक मनुष्य का मन विकृत है, तब तक उस परमात्मा के साथ मेल नहीं हो सकता। जीव तब ही उस प्रभु के चरणों में जगह पा सकता है, जब प्रभु आप गुरु के शब्द के द्वारा उसके भीतर का अहम् जलाकर उसे अपने चरणों में जगह देता है ॥ १२ ॥ हे भाई! यदि वह सत्यस्वरूप प्रभु विस्मृत हो जाए, तो जीने को धिक्कार है। जिस पर प्रभु की दया होती है, उसे निरन्तर उसकी याद बनी रहती है। वह मनुष्य गुरु के उपदेश से हरि-नाम में सुरति लगाता है ॥ १३ ॥ हे भाई! यदि गुरु मुझे प्रभु के

साथ मिला दे, तो ही मैं परमात्मा से ऐक्य प्राप्त कर सकता हूँ और उस सत्यस्वरूप परमात्मा को हृदय में अवस्थित रख सकता हूँ। गुरु के प्रेम द्वारा जो मनुष्य प्रभु-चरणों में जगह पा लेता है, वह फिर वहाँ से कभी नहीं बिछुड़ता ॥ १४ ॥ हे भाई ! गुरु के शब्द में सुरति लगाकर तू भी पति-प्रभु की गुणस्तुति किया कर। प्रियतम प्रभु को मिलकर ही जीव-स्त्री ने आत्मिक आनन्द प्राप्त कर लिया और साथ-साथ सर्वत्र सम्मानित हुई ॥१५॥ स्वेच्छाचारी मनुष्यों का मन परमात्मा के नाम में अनुरक्त नहीं होता। ऐसा मनुष्य अपने भीतर मैले तथा कठोर रहते हैं। यदि सर्प को दूध भी पिलाया जाए, तो उसके भीतर निरा ज़हर ही भरा रहता है ॥ १६ ॥ हे भाई ! प्रभु आप ही सब कुछ कर रहा है, किसे भला या बुरा कहा जाए ? वह आप ही कृपा करनेवाला है। जब गुरु के ज्ञान द्वारा जीव के मन का मैल उतर जाता है, तो उसकी आत्मा को सत्यस्वरूप सुन्दरता मिल जाती है ॥ १७ ॥

सचा साहु सचे वणजारे ओथै कूड़े ना टिकंनि। ओना सचु न भावई दुख ही माहि पचंनि ॥ १८ ॥ हउमै मैला जगु फिरै मरि जंमै वारो वार। पइऐ किरति कमावणा कोइ न मेटणहार ॥१९॥ संता संगति मिलि रहै ता सचि लगै पिआरु। सचु सलाही सचु मनि दरि सचै सचिआरु ॥ २० ॥ गुर पूरे पूरी मति है अहिनिसि नामु धिआइ। हउमै मेरा वड रोगु है विचहु ठाकि रहाइ ॥ २१ ॥ गुरु सालाही आपणा निवि निवि लागा पाइ। तनु मनु सउपी आगै धरी विचहु आपु गवाइ ॥२२॥ खिंचोताणि विगुचीऐ एकसु सिउ लिव लाइ। हउमै मेरा छडि तू ता सचि रहै समाइ ॥ २३ ॥ सतिगुर नो मिले सि भाइरा सचै सबदि लगंनि। सचि मिले से न विछुड़हि दरि सचै दिसंनि ॥ २४ ॥ से भाई से सजणा जो सचा सेवंनि। अवगण विकणि पलहरनि गुण की साझ करंन्हि ॥ २५ ॥ गुण की साझ सुखु ऊपजै सची भगति करेनि। सचु वणंजहि गुर सबद सिउ लाहा नामु लएनि ॥ २६ ॥ सुइना रुपा पाप करि करि संचीऐ चलै न चलदिआ नालि। विणु नावै नालि न चलसी सभ मुठी जम कालि ॥ २७ ॥ मन का तोसा हरि नामु है हिरदै रखहु सम्हालि। एहु खरचु अखुटु है गुरमुखि निबहै नालि ॥ २८ ॥ ए मन मूलहु भुलिआ जासहि पति गवाइ। एहु जगतु मोहि दूजै

विआपिआ गुरमती सचु धिआइ ॥ २६ ॥ हरि की कीमति ना पवै हरि जसु लिखणु न जाइ । गुर कै सबदि मनु तनु रपै हरि सिउ रहै समाइ ॥३०॥ सो सहु मेरा रंगुला रंगे सहजि सुभाइ । कामणि रंगु ता चड़ै जा पिर कै अंकि समाइ ॥ ३१ ॥ चिरी विछुंने भी मिलनि जो सतिगुरु सेवंनि । अंतरि नवनिधि नामु है खानि खरचनि न निखुटई हरि गुण सहजि रवंनि ॥ ३२ ॥ ना ओइ जनमहि ना मरहि ना ओइ दुख सहंनि । गुरि राखे से उबरे हरि सिउ केल करंनि ॥ ३३ ॥ सजण मिले न विछुड़हि जि अनदिनु मिले रहंनि । इसु जग महि विरले जाणीअहि नानक सचु लहंनि ॥ ३४ ॥ १ ॥ ३ ॥

साहूकार प्रभु सत्यस्वरूप है, उसके नाम का व्यापार करनेवाले भी सत्यस्वरूप जीवन वाले बन जाते हैं, लेकिन उस साहूकार के तुल्य झूठी दुनिया के व्यापारी (बनजारे) नहीं हो सकते । उन्हें सत्यस्वरूप प्रभु का नाम भला नहीं लगता और वे सदा दुःख में ही रहते हैं ॥ १८ ॥ हे भाई ! अहंत्व द्वारा विकृत जगत भटक रहा है, बार-बार जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है । पूर्वजन्म के कृतकर्मों के अनुसार ऐसे ही कर्म किए जाता है (जिनके बन्धन को) कोई नहीं मिटा सकता ॥ १९ ॥ सत्संगति में रहनेवाले मनुष्य का स्नेह सत्यस्वरूप प्रभु में हो जाता है । हे भाई ! तू सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति किया कर । सत्यस्वरूप प्रभु को अपने मन में स्थित कर (इस प्रकार तू) सत्यस्वरूप प्रभु के द्वार पर निश्चिन्त रहेगा ॥ २० ॥ पूर्णगुरु की शिक्षा दोषरहित है । जो मनुष्य गुरु की शिक्षा द्वारा दिन-रात्रि परमात्मा का नाम स्मरण करता है, वह मनुष्य अहंत्व और ममत्व के बड़े रोग को अपने भीतर से दूर कर देता है ॥ २१ ॥ यदि प्रभु-कृपा हो तो मैं अपने गुरु की प्रशंसा करूँ, विनम्र होकर (झुककर) मैं गुरु के चरण स्पर्श करूँ, अपने भीतर से अहंत्व दूर कर अपना मन, तन गुरु के प्रति अर्पित कर दूँ, गुरु के समक्ष रख दूँ ॥ २२ ॥ हे भाई ! हम दुबिधाग्रस्त होने के कारण दुःखी होते हैं (इसलिए) एक परमात्मा से ही सुरति लगाए रखो । भीतर से अहंत्व और ममत्व दूर कर (अहंत्व, ममत्व दूर होने पर ही) मनुष्य सत्यस्वरूप परमात्मा में लीन होता है ॥ २३ ॥ वे मनुष्य मेरे भाई हैं, जो गुरु के शरणागत हैं और हमेशा प्रभु की गुणस्तुति की वाणी में लगे रहते हैं । जो मनुष्य सत्यस्वरूप प्रभु में लीन हो जाते हैं, वे फिर प्रभु से वियुक्त नहीं होते । वे हमेशा सत्यस्वरूप प्रभु के द्वार पर दिखाई देते हैं ॥२४॥ वे मनुष्य मेरे भाई और मित्र हैं, जो सत्यस्वरूप परमात्मा की सेवा-भक्ति करते हैं और अवगुण कट जाने पर प्रफुल्लित होते

हैं। वे मनुष्य परमात्मा के गुणों से ऐक्यभाव पैदा करते हैं ॥ २५ ॥ हे भाई ! गुरु के साथ ऐक्यभाव के प्रभाव से उनके भीतर आत्मिक आनन्द पैदा होता है, वे परमात्मा की सच्ची भक्ति करते हैं। वे मनुष्य गुरु के शब्द के माध्यम से सत्यस्वरूप प्रभु के नाम का व्यापार करते हैं और हरि-नाम का लाभ प्राप्त करते हैं ॥ २६ ॥ हे भाई ! सोना-चाँदी आदि धन पापों से एकत्रित किया जाता है, लेकिन जगत से चलते वक्त वह धन मनुष्य के साथ नहीं जाता। परमात्मा के नाम के अतिरिक्त कोई भी चीज़ मनुष्य के साथ नहीं जाएगी, नाम से खाली सारी दुनिया आत्मिक मृत्यु के द्वारा लुट जाती है ॥ २७ ॥ मनुष्य के मन के लिए परमात्मा का नाम ही (जीवन-यात्रा का) खर्च (मार्ग-व्यय) है। इसे हृदय मे सँभालकर रखो, यह धन अक्षय है। जो मनुष्य गुरु द्वारा बतलाए मार्ग पर चलता है, उसके साथ हमेशा प्रभु का मेल रहता है ॥२८॥ जगत के मूल परमात्मा से अलग हुए हे मन ! (इस प्रकार प्रभु से निर्लिप्त रहने पर तो) तू अपनी प्रतिष्ठा गँवाकर यहाँ से जायगा। यह जगत तो माया-मोह में फँसा पड़ा है, (इसे पहचानते हुए) तू गुरु की शिक्षा का अनुसरण कर और सत्यस्वरूप परमात्मा का नाम-स्मरण किया कर ॥ २९ ॥ हे भाई ! परमात्मा किसी अन्य मूल्य पर नहीं मिल सकता, परमात्मा की महानता अवर्णनीय है। जिस मनुष्य का मन, तन गुरु के शब्द में रँग जाता है, वह सदैव परमात्मा में लीन रहता है ॥ ३० ॥ हे भाई ! मेरा वह पति-प्रभु आनन्दस्वरूप है। (उसके चरणों में जो जगह पाता है, उसे वह) आत्मिक स्थिरता में, प्रेम-रंग में रँग देता है। जब कोई जीव-स्त्री उस पति-प्रभु के चरणों में लीन हो जाती है, तब उसकी आत्मा पर प्रेम-रंग चढ़ जाता है ॥ ३१ ॥ जो मनुष्य गुरु की शरण लेते हैं, वे चिरकाल से बिछुड़े हुए भी प्रभु को आ मिलते हैं। परमात्मा का नाम ही नवनिधि है, जो उन्हें अपने भीतर ही प्राप्त हो जाता है। उस नाम-ख़ज़ाने को वे आप इस्तेमाल करते हैं और दूसरों को भी बाँटते हैं, लेकिन वह फिर भी समाप्त नहीं होता। आत्मिक रूप से स्थिर होकर वे मनुष्य परमात्मा के गुण स्मरण करते रहते हैं ॥ ३२ ॥ ऐसे अध्यात्मवादी मनुष्य दोबारा न जन्मते हैं, न मरते हैं और न ही दुःख सहन करते हैं। जिनकी रक्षा गुरु ने की, वे जन्म-मरण से बच गए; वे सदा प्रभु के चरणों में जगह पाकर आत्मिक आनन्द पाते हैं ॥ ३३ ॥ जो भले मनुष्य प्रतिपल प्रभु-चरणों में रहते हैं, वे दोबारा कभी अलग नहीं होते। लेकिन, हे नानक ! इस जगत में ऐसे विरले व्यक्ति ही होते हैं, जो सत्यस्वरूप परमात्मा का मिलाप प्राप्त करते हैं ॥ ३४ ॥ १ ॥ ३ ॥

॥ सूही महला ३ ॥ हरि जी सूखमु अगमु है कितु बिधि मिलिआ जाइ। गुर कै सबदि भ्रमु कटीऐ अचिंतु वसै मनि

आइ ॥ १ ॥ गुरमुखि हरि हरि नामु जपंनि । हउ तिनकै बलिहारणै मनि हरिगुण सदा रवंनि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु सरवरु मान सरोवरु है वडभागी पुरख लहंन्हि । सेवक गुरमुखि खोजिआ से हंसुले नामु लहंनि ॥ २ ॥ नामु धिआइन्हि रंग सिउ गुरमुखि नामि लगंन्हि । धुरि पूरबि होवै लिखिआ गुर भाणा मंनि लएन्हि ॥ ३ ॥ वडभागी घरु खोजिआ पाइआ नामु निधानु । गुरि पूरै वेखालिआ प्रभु आतम रामु पछानु ॥ ४ ॥ सभना का प्रभु एकु है दूजा अवरु न कोइ । गुरपरसादी मनि वसै तितु घटि परगटु होइ ॥ ५ ॥ सभु अंतरजामी ब्रहमु है ब्रहमु वसै सभ थाइ । मंदा किसनो आखीऐ सबदि वेखहु लिव लाइ ॥ ६ ॥ बुरा भला तिचरु आखदा जिचरु है दुहु माहि । गुरमुखि एको बुझिआ एकसु माहि समाइ ॥ ७ ॥ सेवा सा प्रभ भावसी जो प्रभु पाए थाइ । जन नानक हरि आराधिआ गुरचरणी चितु लाइ ॥ ८ ॥ २ ॥ ४ ॥ ९ ॥

हे भाई ! परमात्मा अलक्ष्य है, अपहुँच है, फिर उसे किस तरीक़े से मिला जा सकता है ? जब गुरु के ज्ञान के द्वारा मन की दुबिधा समाप्त की जाती है, तब परमात्मा सहज ही मनुष्य के मन में आ बसता है ॥ १ ॥ हे भाई ! गुरु के सान्निध्य में रहनेवाले मनुष्य सदैव प्रभु का नाम जपते हैं । जो मनुष्य अपने मन में परमात्मा के गुण स्मरण करते रहते हैं, मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु एक सुन्दर सरोवर है, मानसरोवर है, भाग्यशाली मनुष्य उसे प्राप्त कर लेते हैं । गुरु के सान्निध्य में रहनेवाले जिन सेवकों ने उसकी खोज की, वे सुन्दर हंस (गुरु-मानसरोवर से) नाम रूपी मोती प्राप्त कर लेते हैं ॥ २ ॥ हे भाई ! गुरु के सान्निध्य में रहनेवाले मनुष्य परमात्मा का नाम स्मरण करते हैं और नाम-स्मरण में (ही) संलग्न रहते हैं । जिन मनुष्यों के मस्तक पर परमात्मा के दरबार से ही यह भाग्य-लेख लिखा होता है, वही गुरु की रज़ा को मानते हैं ॥ ३ ॥ हे भाई ! जिन भाग्यशाली मनुष्यों ने अपने हृदय-घर की खोज की, उन्होंने अपने भीतर ही परमात्मा का नाम-ख़ज़ाना प्राप्त कर लिया । पूर्णगुरु ने (उन्हें भीतर ही वह नाम-ख़ज़ाना दिखा दिया) । अतः, ऐ जीव ! तू भी गुरु की शरण लेकर उस सर्वव्यापक परमात्मा के साथ अविच्छिन्न सम्बन्ध पैदा कर ॥ ४ ॥ परमात्मा ही सब जीवों का मालिक है, वह अप्रतिम है । गुरु-कृपा से वह जिस मन में अवस्थित हो जाता है, उस हृदय में वह प्रत्यक्ष प्रकट होता है ॥ ५ ॥ हे भाई ! यह समस्त जगत-आकार उस अन्तर्यामी परमात्मा का स्वरूप हैं । सर्वत्र परमात्मा अवस्थित है । गुरु

के शब्द में सुरति लगाकर देखो (यदि) प्रत्येक पिंड में वही दिखाई दे, तो किसे बुरा कह सकेंगे ? ॥ ६ ॥ मनुष्य तब तक ही किसी दूसरे को भला या बुरा कहता है, जब वह अपने-पराए के द्वन्द्व में रहता है। जो मनुष्य गुरु द्वारा बतलाए मार्ग पर चलता है, वह सर्वत्र एक प्रभु को ही अवस्थित समझता है। वह एक परमात्मा में ही लीन रहता है ॥ ७ ॥ हे भाई ! वही सेवा-भक्ति प्रभु को भली लगती है, जो गुरु-उपदेशानुसार होती है। हे दास नानक ! तभी गुरु के सान्निध्य में रहनेवाले मनुष्य प्रभु-चरणों में मन लगाकर परमात्मा की आराधना करते हैं ॥ ८ ॥ २ ॥ ४ ॥ ९ ॥

रागु सूही असटपदीआ महला ४ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ कोई आणि मिलावै मेरा प्रीतमु पिआरा हउ तिसु पहि आपु वेचाई ॥ १ ॥ दरसनु हरि देखण कै ताई। क्रिपा करहि ता सतिगुरु मेलहि हरि हरि नामु धिआई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जे सुखु देहि त तुझहि अराधी दुखि भी तुझै धिआई ॥ २ ॥ जे भुख देहि त इत ही राजा दुख विचि सूख मनाई ॥ ३ ॥ तनु मनु काटि काटि सभु अरपी विचि अगनी आपु जलाई ॥ ४ ॥ पखा फेरी पाणी ढोवा जो देवहि सो खाई ॥ ५ ॥ नानकु गरीबु ढहि पइआ दुआरै हरि मेलि लैहु वडिआई ॥ ६ ॥ अखी काढि धरी चरणा तलि सभ धरती फिरि मत पाई ॥ ७ ॥ जे पासि बहालहि ता तुझहि अराधी जे मारि कढहि भी धिआई ॥ ८ ॥ जे लोकु सलाहे ता तेरी उपमा जे निंदै त छोडि न जाई ॥ ९ ॥ जे तुधु वलि रहै ता कोई किहु आखउ तुधु विसरिऐ मरि जाई ॥ १० ॥ वारि वारि जाई गुर ऊपरि पै पैरी संत मनाई ॥ ११ ॥ नानकु विचारा भइआ दिवाना हरि तउ दरसन कै ताई ॥ १२ ॥ झखड़ु झागी मीहु वरसै भी गुरु देखण जाई ॥ १३ ॥ समुंदु सागरु होवै बहु खारा गुरसिखु लंघि गुर पहि जाई ॥ १४ ॥ जिउ प्राणी जल बिनु है मरता तिउ सिखु गुर बिनु मरि जाई ॥ १५ ॥ जिउ धरती सोभ करे जलु बरसै तिउ सिखु गुर मिलि बिगसाई ॥ १६ ॥

हे भाई ! यदि कोई मेरा प्रियतम मुझे मिलाए, तो मैं उसके समक्ष अपने आप को बेच दूँ ॥१॥ हे प्रभु ! यदि तुम कृपा करो, मुझे गुरु मिला दो, तो मैं सदैव तुम्हारे दर्शनों के लिए तुम्हारा नाम-स्मरण करता

रहूँ ।। १ ।। रहाउ ।। हे प्रभु ! यदि तुम मुझे सुख दो तो मैं तुम्हें ही स्मरण करता रहूँ, दुःख के क्षणों में भी तुम्हारी ही आराधना करता रहूँ ।।२।। यदि तुम मुझे भूखा रखोगे, तो उस स्थिति में भी सन्तुष्ट रहूँगा और दुःखों में भी सुख महसूस करूँगा ।। ३ ।। तुम्हारे दर्शनों के लिए मैं अपना तन काट-काटकर भेंट कर दूँगा और स्वयं को अग्नि में होम कर दूँगा ।। ४ ।। हे प्रभु ! (तुम्हारा नाम-स्मरण करनेवाले भक्तजनों को) पंखा करूँगा, उनके लिए पानी ढोऊँगा । जो कुछ तुम दोगे वही प्रसन्न होकर खा लूँगा ।। ५ ।। ग़रीब नानक तुम्हारे द्वार पर शरणागत है, उसे अपने चरणों में जगह दो, तुम्हारा उपकार होगा ।। ६ ।। मैं अपनी आँखें निकालकर गुरु के चरणों में भेंट कर दूँगा, समस्त पृथ्वी पर शायद कहीं गुरु मिल जाए ।। ७ ।। हे प्रभु ! यदि तुम मुझे पास बिठा लो, तो तुम्हारी आराधना करता रहूँ; यदि तुम मुझे धक्के देकर निकाल दो, तो भी मैं तुम्हारा ही स्मरण करूँगा ।। ८ ।। हे प्रभु ! यदि जगत मुझे भला कहेगा, तो यह तुम्हारी ही महानता होगी । यदि दुनिया मेरी निंदा करेगी तो भी मैं तुम्हें त्यागकर नहीं जाऊँगा ।।९।। मेरी प्रीति तुम्हारी ओर बनी रहे तो चाहे मुझे कोई कुछ भी कहता रहे; लेकिन, तुम्हारे भुलाने पर मैं आत्मिक रूप से मृत्यु को प्राप्त हो जाऊँगा ।।१०।। हे प्रभु ! मैं गुरु पर बलिहारी जाता हूँ । मैं सन्त-गुरु के चरण-स्पर्श कर उसे प्रसन्न करूँगा ।। ११ ।। हे हरि ! तुम्हारा दर्शन करने के लिए बेचारा नानक भ्रमित हुआ फिरता है ।। १२ ।। गुरु का दर्शन करने के लिए मैं आँधी-तूफ़ानों का सामना करने को तैयार हूँ । यदि मेंह बरसने लगे तो भी मैं गुरु के दर्शनार्थ जाने के लिए तैयार हूँ ।। १३ ।। हे भाई ! यदि खारा समुद्र भी पार करना पड़े तो भी गुरु का सिक्ख गुरु के पास पहुँचता है ।। १४ ।। जिस प्रकार प्राणी पानी के बिना मरने लगता है, उसी प्रकार सिक्ख गुरु के मिले बिना आत्मिक मृत्यु निकट आई महसूसने लगता है ।। १५ ।। जिस प्रकार मेंह बरसने से पृथ्वी सुन्दर लगने लगती है, उसी प्रकार सिक्ख गुरु को पाकर आनन्दित होता है ।। १६ ।।

सेवक का होइ सेवकु वरता करि करि बिनउ बुलाई ।।१७।।
नानक की बेनंती हरि पहि गुर मिलि गुर सुखु पाई ।। १८ ।।
तू आपे गुरु चेला है आपे गुर विचुदे तुझहि धिआई ।। १९ ।।
जो तुधु सेवहि सो तूहै होवहि तुधु सेवक पैज रखाई ।। २० ।।
भंडार भरे भगती हरि तेरे जिसु भावै तिसु देवाई ।। २१ ।।
जिसु तूं देहि सोई जनु पाए होर निहफल सभ चतुराई ।। २२ ।।
सिमरि सिमरि सिमरि गुरु अपुना सोइआ मनु जागाई ।। २३ ।।

इकु दानु मंगै नानकु वेचारा हरि दासनि दासु कराई ॥ २४ ॥ जे गुरु झिड़के त मीठा लागै जे बखसे त गुर वडिआई ॥ २५ ॥ गुरमुखि बोलहि सो थाइ पाए मनमुखि किछु थाइ न पाई ॥२६॥ पाला ककरु वरफ वरसै गुरसिखु गुर देखण जाई ॥ २७ ॥ सभु दिनसु रैणि देखउ गुरु अपुना विचि अखी गुर पैर धराई ॥ २८ ॥ अनेक उपाव करी गुर कारणि गुर भावै सो थाइ पाई ॥ २९ ॥ रैणि दिनसु गुर चरण अराधी दइआ करहु मेरे साई ॥ ३० ॥ नानक का जीउ पिंडु गुरू है गुर मिलि त्रिपति अघाई ॥ ३१ ॥ नानक का प्रभु पूरि रहिओ है जत कत तत गोसाई ॥ ३२ ॥ १ ॥

हे भाई ! मैं गुरु के सेवक का सेवक बनकर उसकी सेवा करने को तैयार हूँ। मैं उसे प्रार्थना करते हुए बुलाऊँगा अर्थात् विनम्रतापूर्वक बुलाऊँगा ॥ १७ ॥ (गुरु नानक की) परमात्मा से प्रार्थना है कि गुरु को मिलकर अत्यन्त आनन्द की अनुभूति होती है (इसलिए गुरु से भेंट कराइए) ॥ १८ ॥ हे प्रभु ! तुम स्वयं ही गुरु हो और स्वयं ही शिष्य हो। मैं गुरु के माध्यम से तुम्हें ही स्मरण करता हूँ ॥ १९ ॥ हे प्रभु ! जो मनुष्य तुम्हारी सेवा करते हैं, वे तुम्हारे ही प्रतिरूप बन जाते हैं। तुम अपने सेवकों की प्रतिष्ठा बचाते आए हो ॥ २० ॥ तुम्हारे पास भक्ति के भण्डार भरे पड़े हैं। जिस पर तुम्हारी रज़ा होती है, उसे तुम गुरु के द्वारा यह ख़ज़ाना दिलाते हो ॥ २१ ॥ तुम्हें पाने के लिए चतुराई व्यर्थ है। वही मनुष्य ये ख़ज़ाने प्राप्त करता है, जिसे तुम आप देते हो ॥ २२ ॥ तुम्हारी कृपा से मैं अपने गुरु को पुनःपुनः स्मरण कर मोह-निद्रा में सुप्त अपने मन को जगाता रहता हूँ ॥ २३ ॥ तुम्हारे द्वार पर ग़रीब (दास नानक) यह दान माँगता है कि मुझे अपने दासों का दास बनाए रखो ॥ २४ ॥ यदि गुरु किसी कारणवश प्रताड़ित करे, तो उसकी वह प्रताड़ना मुझे प्यारी लगती है। यदि गुरु मुझ पर कृपादृष्टि करता है, तो यह गुरु का उपकार है (मेरी कोई विशेषता नहीं) ॥ २५ ॥ गुरु के सान्निध्य में रहनेवाले मनुष्य जो वचन बोलते हैं, गुरु उनकी पुष्टि करता है। स्वेच्छाचारी व्यक्तियों का वचन स्वीकृत नहीं होता ॥ २६ ॥ पाला, भयंकर शीत, बर्फ़ कुछ भी क्यों न पड़ता रहे, गुरु का सच्चा शिष्य गुरु का दर्शन करने के लिए अवश्य जाता है ॥ २७ ॥ मैं भी रात-दिन प्रतिपल अपने गुरु का दर्शन करता रहता हूँ। गुरु के चरणों को अपनी आँखों में बसाए रहता हूँ ॥ २८ ॥ यदि मैं गुरु को प्रसन्न करने के लिए अनेक यत्न भी करूँ, तो वही यत्न स्वीकृत होता है जो गुरु को उपयुक्त लगता है ॥२९॥

हे पति-प्रभु ! मुझ पर कृपा करो, ताकि मैं दिन-रात्रि प्रतिपल गुरु के चरणों का स्मरण करता रहूँ ॥ ३० ॥ (गुरु) नानक की आत्मा को गुरु का आश्रय है, उसकी देह गुरु के चरणों में (समर्पित) है। गुरु से भेंट करके ही तृप्ति मिलती है ॥ ३१ ॥ (गुरु-कृपा द्वारा ही यह सूझ होती है कि) नानक का प्रभु, सृष्टि का मालिक सर्वत्र व्यापक है ॥ ३२ ॥ १ ॥

रागु सूही महला ४ असटपदीआ घरु १०

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ अंदरि सचा नेहु लाइआ प्रीतम आपणै। तनु मनु होइ निहालु जा गुरु देखा साम्हणे ॥ १ ॥ मै हरि हरि नामु विसाहु। गुर पूरे ते पाइआ अंम्रितु अगम अथाहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउ सतिगुरु वेखि विगसीआ हरि नामे लगा पिआरु। किरपा करि कै मेलिअनु पाइआ मोख दुआरु ॥२॥ सतिगुरु बिरही नाम का जे मिलै त तनु मनु देउ। जे पूरबि होवै लिखिआ ता अंम्रितु सहजि पीएउ ॥ ३ ॥ सुतिआ गुरु सालाहीऐ उठदिआ भी गुरु आलाउ। कोई ऐसा गुरमुखि जे मिलै हउ ता के धोवा पाउ ॥ ४ ॥ कोई ऐसा सजणु लोड़ि लहु मै प्रीतमु देइ मिलाइ। सतिगुरि मिलिऐ हरि पाइआ मिलिआ सहजि सुभाइ ॥ ५ ॥ सतिगुरु सागरु गुण नाम का मै तिसु देखण का चाउ। हउ तिसु बिनु घड़ी न जीवऊ बिनु देखे मरि जाउ ॥ ६ ॥ जिउ मछुली विणु पाणीऐ रहै न कितै उपाइ। तिउ हरि बिनु संतु न जीवई बिनु हरि नामै मरि जाइ ॥ ७ ॥ मै सतिगुर सेती पिरहड़ी किउ गुर बिनु जीवा माउ। मै गुरबाणी आधारु है गुरबाणी लागि रहाउ ॥ ८ ॥ हरि हरि नामु रतंनु है गुरु तुठा देवै माइ। मै धर सचे नाम की हरि नामि रहा लिव लाइ ॥ ९ ॥ गुर गिआनु पदारथु नामु है हरि नामो देइ द्रिड़ाइ। जिसु परापति सो लहै गुरचरणी लागै आइ ॥१०॥ अकथ कहाणी प्रेम की को प्रीतमु आखै आइ। तिसु देवा मनु आपणा निवि निवि लागा पाइ ॥ ११ ॥ सजणु मेरा एकु तूं करता पुरखु सुजाणु। सतिगुरि मीति मिलाइआ मै सदा सदा तेरा ताणु ॥ १२ ॥ सतिगुरु मेरा सदा सदा ना आवै ना जाइ। ओहु अबिनासी पुरखु है सभ महि रहिआ समाइ ॥ १३ ॥ राम

नाम धनु संचिआ साबतु पूंजी रासि । नानक दरगह मंनिआ गुर पूरे साबासि ।। १४ ।। १ ।। २ ।। ११ ।।

हे भाई ! गुरु ने प्यारे प्रभु का शाश्वत प्रेम मेरे हृदय में अद्भुत कर दिया है; (इसलिए) जब मैं अपने गुरु का दर्शन करता हूँ, तो मेरा मन, तन प्रसन्न हो उठता है ।। १ ।। हे भाई ! पूर्णगुरु द्वारा मैंने उस परमात्मा का नाम-धन प्राप्त कर लिया है, जो आत्मिक जीवन का दाता है और अगम्य तथा अत्यन्त गम्भीर है ।। १ ।। रहाउ ।। गुरु के दर्शन से मेरी आत्मा प्रसन्न हो जाती है, प्रभु के नाम में मेरी लग्न लग गयी है । जिन्हें गुरु ने कृपा करके परमात्मा के चरणों में जगह दिला दी है, उन्होंने सांसारिक मोह से मुक्ति का द्वार प्राप्त कर लिया ।। २ ।। हे भाई ! गुरु परमात्मा के नाम का प्रेमी है । यदि मुझे गुरु मिल जाए तो मैं अपना तन, मन उसके समक्ष भेंट कर दूँ । यदि पूर्व समय से ही गुरु-मिलाप का लेख लिखा हो, तभी मैं आत्मिक जीवन देनेवाला नाम-जल पान कर सकता हूँ ।। ३ ।। मनुष्य को सोते-जागते गुरु की स्तुति में संलग्न रहना है । यदि ऐसी शिक्षा देनेवाला, गुरु के सान्निध्य में रहनेवाला सज्जन मुझे मिल जाए तो मैं उसके पैर धोऊँ ।। ४ ।। कोई ऐसा सज्जन मुझे मिला दीजिए, जो मुझे प्रियतम प्रभु के साथ मिला दे । गुरु के मिलते ही परमात्मा से भेंट हो जाती है । (गुरु के मिलाप करने पर) जीव को आत्मिक स्थिरता में, प्रेम-रंग में रँग जाने पर परमात्मा प्राप्त हो जाता है ।। ५ ।। गुरु गुणों का समुद्र है, परमात्मा के नाम का समुद्र है । उस गुरु का दर्शन करने की मुझे अत्यन्त आकांक्षा है । मैं उस गुरु के बिना घड़ी भर भी आत्मिक जीवन बनाए नहीं रख सकता । गुरु का दर्शन किए बिना मेरी आत्मिक मृत्यु हो जाती है ।। ६ ।। जिस प्रकार मछली पानी के बिना किसी भी यत्न से जीवित नहीं रह सकती, उसी प्रकार परमात्मा के बिना सन्त भी जीवित नहीं रह सकता, क्योंकि परमात्मा के नाम के बिना वह अपनी आत्मिक मृत्यु समझता है ।। ७ ।। हे माँ ! गुरु के साथ मेरा अत्यन्त लगाव है । उसके बिना मैं किस प्रकार जीवित रह सकता हूँ । गुरु की वाणी मेरा सहारा है । गुरु की वाणी में प्रवृत्त होकर ही मैं जीवित रह सकता हूँ ।। ८ ।। हे माँ ! परमात्मा का नाम रत्न-पदार्थ है । गुरु जिस पर प्रसन्न होता है, उसे यह रत्न देता है । सत्यस्वरूप प्रभु का नाम ही मेरा सहारा है । प्रभु के नाम में सुरति लगाकर ही मैं रह सकता हूँ ।। ९ ।। गुरु की दी हुई आत्मिक जीवन की सूझ एक बहुमूल्य चीज़ है । उसका दिया हुआ हरि-नाम क़ीमती पदार्थ है । जिस मनुष्य के भाग्य में इसकी प्राप्ति लिखी है, वह मनुष्य गुरु के चरण-स्पर्श करता है और यह पदार्थ प्राप्त कर लेता है ।। १० ।। प्रभु के प्रेम की कहानी प्रत्येक व्यक्ति व्यक्त नहीं कर सकता; यदि कोई प्यारा

सज्जन मुझे आकर यह कहानी सुनाए, तो मैं अपना तन-मन उसके प्रति समर्पित कर दूँ और विनम्र होकर उसके पैरों पर गिर पड़ूँ ।। ११ ।। हे प्रभु ! केवल तुम ही मेरे मित्र हो । तुम सबके जनक हो, सबमें व्याप्त हो, अन्तर्यामी हो । मित्र-गुरु ने मुझे तुम्हारे साथ मिला दिया है । मुझे हमेशा तुम्हारा ही सहारा है ।। १२ ।। प्यारे गुरु के अनुसार प्रभु शाश्वत है; वह न जन्मता है, न मरता है.। वह सत्पुरुष प्रभु कभी नष्ट नहीं होता (बल्कि) सबमें अवस्थित है ।। १३ ।। गुरु नानक का कथन है कि जिस मनुष्य को प्रभु ने मार्ग प्रदर्शित कर दिया, वही परमात्मा का नाम-धन एकत्रित करता है । उसकी यह राशि हमेशा अक्षुण्ण रहती है और उसे प्रभु के दरबार में सत्कार प्राप्त होता है ।। १४ ।। १ ।। २ ।। ११ ।।

रागु सूही असटपदीआ महला ५ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। उरझि रहिओ बिखिआ कै संगा । मनहि बिआपत अनिक तरंगा ।। १ ।। मेरे मन अगम अगोचर । कत पाईऐ पूरन परमेसर ।। १ ।। रहाउ ।। मोह मगन महि रहिआ बिआपे । अति त्रिसना कबहू नही ध्रापे ।। २ ।। बसइ करोधु सरीरि चंडारा । अगिआनि न सूझै महा गुबारा ।। ३ ।। भ्रमत बिआपत जरे किवारा । जाणु न पाईऐ प्रभ दरबारा ।।४।। आसा अंदेसा बंधि पराना । महलु न पावै फिरत बिगाना ।।५।। सगल बिआधि कै वसि करि दीना । फिरत पिआस जिउ जल बिनु मीना ।। ६ ।। कछू सिआनप उकति न मोरी । एक आस ठाकुर प्रभ तोरी ।। ७ ।। करउ बेनती संतन पासे । मेलि लैहु नानक अरदासे ।। ८ ।। भइओ क्रिपालु साध संगु पाइआ । नानक त्रिपते पूरा पाइआ ।। १ ।। रहाउ दूजा ।। १ ।।

मनुष्य माया के लोभ में फँसा रहता है, यह मनुष्य के मन को अनेक तरंगों में दबाए रखती है ।। १ ।। हे मेरे मन ! (ऐसे में) वह पूर्ण-परमात्मा कैसे प्राप्त हो ? वह मनुष्य की बुद्धि की पकड़ से परे है; ज्ञानेन्द्रियों की सहायता से भी उस तक पहुँचा नहीं जा सकता ।। १ ।। रहाउ ।। वह माया-मोह में दबा रहता है, उसे प्रतिपल माया की तृष्णा लगी रहती है, किसी वक्त भी उसका मन तृप्त नहीं होता ।। २ ।। ऐसे मनुष्य के शरीर में चाण्डाल क्रोध अवस्थित रहता है; आत्मिक जीवन की ओर से नासमझी के कारण उसके जीवनमार्ग में अज्ञान अँधेरा बना रहता है, जिससे उसे सही जीवनमार्ग नहीं सूझता ।। ३ ।। दुबिधा और माया का दबाव —ये

दो किवाड़ लगे रहते हैं, इसलिए मनुष्य परमात्मा के दरबार में पहुँच नहीं सकता ॥ ४ ॥ मनुष्य हर वक्त माया की तृष्णाओं और चिन्ता-फ़िक्र के बन्धनों में बँधा रहता है, प्रभु का सान्निध्य प्राप्त नहीं कर सकता, वरन् वह परदेसी लोगों की तरह भटकता फिरता है ॥ ५ ॥ ऐसा मनुष्य तमाम मानसिक बीमारियों के वश में रहता है। जैसे पानी के बिना मछली तड़पती है, वैसे ही यह तृष्णा का मारा हुआ भटकता है ॥ ६ ॥ हे प्रभु ! इन विकारों के विरोध में मेरी कोई चतुराई नहीं चल सकती। इसलिए केवल तुम्हारी सहायता की ही अपेक्षा है, ताकि सुरक्षा हो जाए ॥ ७ ॥ हे प्रभु ! मैं तुम्हारे सन्तों के समक्ष प्रार्थना करता हूँ कि मुझ (नानक) को अपने चरणों में जगह दिए रखो ॥ ८ ॥ गुरु नानक का कथन है कि जिन मनुष्यों पर प्रभु कृपालु होता है, उन्हें गुरु का सामीप्य प्राप्त होता है; वे माया की तृष्णा से मुक्त हो जाते हैं और उन्हें पूर्णप्रभु मिल जाता है ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ १ ॥

रागु सूही महला ५ घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मिथन मोह अगनि सोक सागर । करि किरपा उधरु हरि नागर ॥ १ ॥ चरण कमल सरणाइ नराइण । दीनानाथ भगत पराइण ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनाथा नाथ भगत भै मेटन । साध संगि जमदूत न भेटन ॥ २ ॥ जीवन रूप अनूप दइआला । रवण गुणा कटीऐ जम जाला ॥३॥ अंम्रित नामु रसन नित जापै । रोग रूप माइआ न बिआपै ॥४॥ जपि गोबिंद संगी सभि तारे । पोहत नाही पंच बटवारे ॥ ५ ॥ मन बच क्रम प्रभु एकु धिआए । सरब फला सोई जनु पाए ॥६॥ धारि अनुग्रहु अपना प्रभि कीना । केवल नामु भगति रसु दीना ॥ ७ ॥ आदि मधि अंति प्रभु सोई । नानक तिसु बिनु अवरु न कोई ॥ ८ ॥ १ ॥ २ ॥

हे सुन्दर हरि ! नश्वर पदार्थों के मोह, तृष्णा की अग्नि, चिन्ता के समुद्र से कृपा करके मुझे बचा लो ॥ १ ॥ हे दीनदयालु नारायण हरि ! हम जीव तुम्हारे शरणागत हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे निराश्रितों के आश्रय, भक्तों के समस्त भय दूर करनेवाले प्रभु ! गुरु की संगति में रहने से यमदूत भी निकट नहीं आते ॥ २ ॥ हे जीवनदाता प्रभु ! तुम्हारे गुण स्मरण करने से मौत की फाँसी भी कट जाती है ॥ ३ ॥ जो मनुष्य अपनी जिह्वा द्वारा आत्मिक जीवन देनेवाला हरि-नाम जपता है, उस पर समस्त

रोगों की मूल यह माया प्रभाव नहीं कर सकती ।। ४ ।। सदा परमात्मा का नाम जपा कीजिए (क्योंकि) नाम जपनेवाला अपने सारे साथियों को संसार-समुद्र से पार कर लेता है और कामादिक पाँचों लुटेरे उस पर दबाव नहीं डाल सकते ।। ५ ।। हे भाई ! जो मनुष्य मन, वचन, कर्म से केवल एक परमात्मा का स्मरण करता है, वह (अपने जन्म के) सारे फल प्राप्त कर लेता है ।। ६ ।। परमात्मा ने कृपा करके जिसे अपना बना लिया, उसे अपना नाम प्रदान किया और अपनी भक्ति का आस्वादन कराया ।। ७ ।। हे नानक ! परमात्मा ही जगत के आदि से है, अब भी है और जगत के अन्त में भी वही होगा, वह सर्वथा अप्रतिम है ।। ८ ।। १ ।। २ ।।

रागु सूही महला ५ असटपदीआ घरु ९

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। जिन डिठिआ मनु रहसीऐ किउ पाईऐ तिन्ह संगु जीउ । संत सजन मन मित्र से लाइनि प्रभ सिउ रंगु जीउ । तिन्ह सिउ प्रीति न तुटई कबहु न होवै भंगु जीउ ।। १ ।। पारब्रहम प्रभ करि दइआ गुण गावा तेरे नित जीउ । आइ मिलहु संत सजणा नामु जपह मन मित जीउ ।। १ ।। रहाउ ।। देखै सुणे न जाणई माइआ मोहिआ अंधु जीउ । काची देहा विणसणी कूड़ु कमावै धंधु जीउ । नामु धिआवहि से जिणि चले गुर पूरे सनबंधु जीउ ।। २ ।। हुकमे जुग महि आइआ चलणु हुकमि संजोगि जीउ । हुकमे परपंचु पसरिआ हुकमि करे रस भोग जीउ । जिसनो करता विसरै तिसहि विछोड़ा सोगु जीउ ।।३।। आपनड़े प्रभ भाणिआ दरगह पैधा जाइ जीउ । ऐथै सुखु मुखु उजला इको नामु धिआइ जीउ । आदरु दिता पारब्रहमि गुरु सेविआ सत भाइ जीउ ।। ४ ।। थान थनंतरि रवि रहिआ सरब जीआ प्रतिपाल जीउ । सचु खजाना संचिआ एकु नामु धनु माल जीउ । मन ते कबहु न वीसरै जा आपे होइ दइआल जीउ ।।५।। आवणु जाणा रहि गए मनि वुठा निरंकारु जीउ । ता का अंतु न पाईऐ ऊचा अगम अपारु जीउ । जिसु प्रभु अपणा विसरै सो मरि जंमै लख वार जीउ ।। ६ ।। साचु नेहु तिन प्रीतमा जिन मनि वुठा आपि जीउ । गुण साझी तिन संगि बसे आठ पहर प्रभ जापि जीउ । रंगि रते परमेसरै बिनसे सगल संताप जीउ ।। ७ ।। तूं करता तूं करणहारु तू है एकु

अनेक जीउ। तू समरथु तू सरब मै तू है बुधि बिबेक जीउ। नानक नामु सदा जपी भगत जना की टेक जीउ ॥ ८ ॥ १ ॥ ३ ॥

हे प्रभु! उन गुरमुखों का साथ कैसे प्राप्त हो, जिनका दर्शन करने से मन प्रसन्न हो जाता है? वही मनुष्य मेरे लिए सज्जन हैं, संत और वास्तविक मित्र हैं, जो परमात्मा से मेरा नेह जोड़ दें। हे प्रभु! उनसे मेरा प्रेम अटूट हो और कभी विछोह न हो ॥१॥ हे परब्रह्म प्रभु! कृपा करो। मैं हमेशा तुम्हारे गुण गाता रहूँ। हे सन्तो, सज्जनो! आकर एकत्रित होकर बैठो और परमात्मा का नाम जपो ॥१॥ रहाउ ॥ हे भाई! मायाग्रस्त जीव अन्धा हो जाता है; वह वास्तविकता को न देख सकता है, न सुन सकता है और न समझ सकता है। कच्चे घड़े के तुल्य उसका यह शरीर नश्वर है, वह प्रतिपल नश्वर पदार्थों की ख़ातिर भाग-दौड़ करता रहता है। हे भाई! जो मनुष्य पूर्णगुरु का मिलाप पाकर परमात्मा का नाम जपते हैं, वे मनुष्य जीवन की बाज़ी जीतकर यहाँ से जाते हैं ॥ २ ॥ परमात्मा के हुक्म से ही जीव जगत में आता है, और हुक्म अनुसार कार्य निपटाकर जीव यहाँ से प्रस्थान कर जाता है। प्रभु की इच्छानुसार यह जीवन-प्रसार हुआ है, उसकी इच्छा के अनुसार ही जीव यहाँ रस-भोग करता है। जिस मनुष्य को परमात्मा विस्मृत कर देता है, यह विछोह उसके भीतर आकुलता बनाए रखता है ॥ ३ ॥ जो मनुष्य अपने प्रभु को भला लगने लगता है, वह उसके दरबार में प्रतिष्ठित होता है, इस लोक में सुख पाता है और परलोक में भी मुक्त रहता है (क्योंकि वह परमात्मा का नाम-स्मरण करता रहता है)। जिसने सद्‌भावनाओं से गुरु का आश्रय लिया, उसे परमात्मा ने सदा सम्मानित किया ॥४॥ परमात्मा सर्वत्र व्यापक है, वह सब जीवों की देखभाल करनेमें सक्षम है। जब वह प्रभु जिस जीव पर कृपालु होता है, तब उस जीव द्वारा वह कभी भी विस्मृत नहीं होता। वह मनुष्य सत्यस्वरूप हरि-नाम रूपी ख़ज़ाना एकत्रित करता है और परमात्मा के नाम को ही अपनी मूल राशि बनाता है ॥ ५ ॥ वह परमात्मा उस मनुष्य के मन में अवस्थित हो जाता है। उस परमात्मा के गुणों का अन्त नहीं हो सकता, वह सबसे ऊँची हस्ती वाला है। वह अपहुँच और अनन्त है। जिस मनुष्य को वह परमात्मा विस्मृत हो जाता है, वह लाखों बार जन्मता-मरता रहता है ॥ ६ ॥ जिन गुरमुख सज्जनों के मन में परमात्मा आ बसता है, उनके हृदय में प्रभु का सत्यस्वरूप-प्रेम भर जाता है। जो मनुष्य उनकी संगति में रहते हैं, वे भी आठों प्रहर प्रभु का नाम जपकर उनके साथ गुणों का मेल कर लेते हैं। जो मनुष्य परमात्मा के प्रेम-रंग में रँगे जाते हैं, उनके भीतर से सारे दुःख-क्लेश दूर हो जाते हैं ॥ ७ ॥ हे प्रभु! तुम सबके जनक हो, तुम सब कुछ करने में समर्थ हो। तुम ही एक हो, अनेक रूप

भी तुम ही हो। तुम सर्वशक्तिमान् हो, सबमें परिव्याप्त हो। जीवों को भले-बुरे की परख करानेवाले भी तुम आप ही हो। गुरु नानक का कथन है कि यदि तुम कृपा करो, तो तुम्हारे भक्तों का सहारा लेकर मैं सदा तुम्हारा नाम जपता रहूँ ॥ ८ ॥ १ ॥ ३ ॥

रागु सूही महला ५ असटपदीआ घरु १० काफी

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जे भुली जे चुकी साईं भी तहिंजी काढीआ। जिन्हा नेहु दूजाणे लगा झूरि मरहु से वाढीआ ॥ १ ॥ हउ ना छोडउ कंत पासरा। सदा रंगीला लालु पिआरा एहु महिंजा आसरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सजणु तू है सैणु तू मै तुझ उपरि बहु माणीआ। जा तू अंदरि ता सुखे तूं निमाणी माणीआ ॥ २ ॥ जे तू तुठा क्रिपा निधान ना दूजा वेखालि। एहा पाई मू दातड़ी नित हिरदै रखा समालि ॥ ३ ॥ पाव जुलाई पंध तउ नैणी दरसु दिखालि। स्रवणी सुणी कहाणीआ जे गुरु थीवै किरपालि ॥ ४ ॥ किती लख करोड़ि पिरीए रोम न पुजनि तेरिआ। तू साही हू साहु हउ कहि न सका गुण तेरिआ ॥ ५ ॥ सहीआ तऊ असंख मंञहु हभि वधाणीआ। हिक भोरी नदरि निहालि देहि दरसु रंगु माणीआ ॥ ६ ॥ जै डिठे मनु धीरीऐ किलविख वंञन्हि दूरे। सो किउ विसरै माउ मै जो रहिआ भरपूरे ॥ ७ ॥ होइ निमाणी ढहि पई मिलिआ सहजि सुभाइ। पूरबि लिखिआ पाइआ नानक संत सहाइ ॥ ८ ॥ १ ॥ ४ ॥

हे मेरे पति-प्रभु! यदि मैं भूल से गलती भी करती हूँ, तो भी तुम्हारी ही कहलाती हूँ। (इसके विपरीत) जिनका लगाव किसी दूसरे के साथ बना हुआ है, वे परित्यक्ताएँ दुःखी होकर मर रही हैं ॥ १ ॥ मैं पति-प्रभु का सुन्दर पक्ष कभी भी नहीं छोड़ूँगी। मेरा वह प्यारा प्रियतम हमेशा आनन्दस्वरूप है, मेरा वही आसरा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु! मेरे तो तुम ही मित्र एवं सम्बन्धी हो। मुझे तुम पर गर्व है। जब तुम मेरे भीतर अवस्थित होते हो, तब ही मैं सुखी होती हूँ। मुझ-सी तुच्छ जीवात्मा के तुम ही गर्व हो ॥ २ ॥ तुम मुझ पर दया करते रहना और कोई दूसरा आश्रय न दिखाना। मेरी यही सुन्दर उपलब्धि है, इसी को मैं सदा हृदय में सँभाल-सँभालकर रखती हूँ ॥ ३ ॥ हे पति-प्रभु! गुरु-कृपा से मैं अपने

कानों में तुम्हारी गुणस्तुति श्रवण करती रहूँ और अपने पैरों को तुम्हें पाने वाले मार्ग पर चलाऊँ। हे प्यारे! मेरी आँखों को अपने दर्शन दो ॥ ४ ॥ तुम बादशाहों के बादशाह हो, मैं तुम्हारे गुण व्यक्त नहीं कर सकती। यदि मैं तुम्हारे लाखों और करोड़ों गुण कहूँ, तो भी वे सब तुम्हारे एक रोम की महानता के तुल्य नहीं हो सकते ॥ ५ ॥ हे प्यारे! तुम्हारी अनगिनत सहेलियाँ (चाहनेवाले जीव) हैं। मुझसे वे सब अधिक भली हैं। एक निमिष मात्र के लिए ही मुझे कृपादृष्टि से देखो। मुझे दर्शन दो, ताकि मैं आत्मिक आनन्द महसूस कर सकूँ ॥ ६ ॥ हे माँ! मुझे वह प्यारा प्रभु क्योंकर विस्मृत हो सकता है, जो सारे जगत में व्याप्त है; जिसका दर्शन करने से मन धैर्य धारण करता है और सारे पाप दूर हो जाते हैं? ॥ ७ ॥ गुरु नानक का कथन है कि जब मैंने आत्मिक स्थिरता में, प्रेम में स्थिर होकर, विनम्र होकर उसकी शरण ली, तब वह प्यारा प्रभु मुझे मिल गया। किसी पूर्वजन्म में सौभाग्य द्वारा लिखा प्राप्य मुझे गुरु की सहायता से मिल गया है ॥ ८ ॥ १ ॥ ४ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ सिम्रिति बेद पुराण पुकारनि पोथीआ। नाम बिना सभि कूड़ु गाल्ही होछीआ ॥ १ ॥ नामु निधानु अपारु भगता मनि वसै। जनम मरण मोहु दुखु साधू संगि नसै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मोहि बादि अहंकारि सरपर रुंनिआ। सुखु न पाइन्हि मूलि नाम विछुंनिआ ॥ २ ॥ मेरी मेरी धारि बंधनि बंधिआ। नरकि सुरगि अवतार माइआ धंधिआ ॥ ३ ॥ सोधत सोधत सोधि ततु बीचारिआ। नाम बिना सुखु नाहि सरपर हारिआ ॥ ४ ॥ आवहि जाहि अनेक मरि मरि जनमते। बिनु बूझे सभु वादि जोनी भरमते ॥ ५ ॥ जिन्ह कउ भए दइआल तिन साधू संगु भइआ। अम्रितु हरि का नामु तिन्ही जनी जपि लइआ ॥ ६ ॥ खोजहि कोटि असंख बहुतु अनंत के। जिसु बुझाए आपि नेड़ा तिसु हे ॥ ७ ॥ विसरु नाही दातार आपणा नामु देहु। गुण गावा दिनु राति नानक चाउ एहु ॥ ८ ॥ २ ॥ ५ ॥

जो मनुष्य वेद, पुराण, स्मृतियाँ आदि धार्मिक ग्रंथ पढ़कर उच्च स्वर से सुनाते हैं, वे मूर्ख थोथी बातें सुनाते हैं। परमात्मा के नाम के बिना ये लोग झूठा प्रचार मात्र ही करते हैं ॥ १ ॥ परमात्मा के नाम का अनन्त खज़ाना भक्तों के हृदय में विद्यमान रहता है। गुरु के सान्निध्य में रहकर जन्म-मरण के दुःख, मोह जैसे सब क्लेश दूर हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥

प्रभु के नाम से बिछुड़े हुए मनुष्य कभी भी आत्मिक आनन्द नहीं भोगते। वे जीव माया-मोह, शास्त्रार्थ और अहंकार में फँसकर दुःखी होते हैं ॥ २ ॥ (नास्तिक लोग) माया-मोह के बन्धन में बँधे रहते हैं। केवल माया के झंझटों के कारण ही वे लोग सुख-दुःख भोगते रहते हैं ॥ ३ ॥ हे भाई ! भली प्रकार देखभाल कर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि परमात्मा के नाम के बिना आत्मिक आनन्द नहीं मिल सकता। नाम-हीन व्यक्ति मनुष्य-जन्म की बाज़ी हारकर जाते हैं ॥ ४ ॥ अनेक प्राणी जन्मते-मरते हैं और आत्मिक मृत्यु पाकर बार-बार जन्मते रहते हैं। सही समझ के बिना उनका सारा प्रयास व्यर्थ रहता है और वे अनेक योनियों में भटकते रहते हैं ॥ ५॥ हे भाई ! जिन मनुष्यों पर परमात्मा दयालु होता है, उन्हें गुरु की संगति प्राप्त होती है और वे मनुष्य आत्मिक जीवन देनेवाला हरि-नाम जपते रहते हैं ॥ ६ ॥ हे भाई ! अनगिनत प्राणी परमात्मा की खोज करते हैं; लेकिन परमात्मा स्वयं जिसे यह समझ प्रदान करता है, वही प्रभु का नैकट्य प्राप्त करता है ॥ ७ ॥ गुरु नानक का कथन है कि हे दाता प्रभु ! मेरे भीतर यह आकांक्षा है कि मैं दिन-रात्रि तुम्हारे गुण गाता रहूँ। मुझे अपना नाम दो, ताकि मैं तुम्हें कभी न भूलाऊँ ॥ ८ ॥ २ ॥ ५ ॥

रागु सूही महला १ कुचजी

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मंञु कुचजी अंमावणि डोमड़े हउ किउ सहु रावणि जाउ जीउ। इकदू इकि चड़ंदीआ कउणु जाणै मेरा नाउ जीउ। जिन्ही सखी सहु राविआ से अंबी छावड़ीएहि जीउ। से गुण मंञु न आवनी हउ कै जी दोस धरेउ जीउ। किआ गुण तेरे विथरा हउ किआ किआ घिना तेरा नाउ जीउ। इकतु टोलि न अंबड़ा हउ सद कुरबाणै तेरै जाउ जीउ॥ सुइना रुपा रंगुला मोती तै माणिकु जीउ। से वसतू सहि दितीआ मै तिन्ह सिउ लाइआ चितु जीउ। मंदर मिटी संदड़े पथर कीते रासि जीउ। हउ एनी टोली भुलीअसु तिसु कंत न बैठी पासि जीउ। अंबरि कूंजा कुरलीआ बग बहिठे आइ जीउ। साधन चली साहुरै किआ मुहु देसी अगै जाइ जीउ। सुती सुती झालु थीआ भुली वाटड़ीआसु जीउ। तै सह नालहु मुतीअसु दुखा कूं धरीआसु जीउ। तुधु गुण मै सभि अवगणा इक नानक की अरदासि जीउ। सभि राती सोहागणी मै डोहागणि काई राति जीउ ॥ १ ॥

हे सहेली ! मैंने सही जीवन का ढंग नहीं सीखा, मेरे भीतर इतने दोष हैं कि भीतर समा नहीं सकते। (इसी कारण) मैं प्रभु-पति को प्रसन्न करने के लिए जाती लजाती हूँ। (कैसे जा सकती हूँ ?) उसके द्वार पर एक से एक श्रेष्ठ जीवात्माएँ हैं, मेरा तो वहाँ कोई नाम भी नहीं जानता। जिन सहेलियों ने प्रभु-पति को प्रसन्न कर लिया हैं, वे मानो आम की छाया के नीचे बैठी हैं। मेरे भीतर तो वे गुण ही नहीं हैं (जिनसे प्रभु प्रसन्न होते हैं)। मैं अपनी इस अज्ञानता का दोष (अपने ही अतिरिक्त) और किसे दे सकती हूँ ? हे प्रभु-पति ! मैं तुम्हारे कौन-कौन से गुण विस्तारपूर्वक कहूँ ? मैं तुम्हारे कौन-कौन से नाम लूँ ? तुम्हारे दिए हुए सुन्दर पदार्थों के द्वारा भी तुम्हारी देन का सही मूल्यांकन नहीं हो सकता। मैं तुम पर बलिहारी जाती हूँ। सोना, चाँदी, मोती, हीरा आदि क़ीमती पदार्थ —ये वस्तुएँ प्रभु-पति ने मुझे दीं और मैंने इन वस्तुओं से ही मोह जोड़ लिया। मिट्टी, पत्थर आदि के बनाए हुए सुन्दर घर —यही मैंने अपनी राशि-पूँजी बना लिये। मैंने इन सुन्दर पदार्थों में फँसकर ही ग़लती कर ली, (क्योंकि) इनमें लिप्त होकर मैं उस पति-प्रभु के पास नहीं बैठी। माया-मोह में फँसकर जीव-स्त्री के शुभ गुण उससे दूर हो जाएँ और उसके भीतर निरे पाखण्ड एकत्रित हो जाएँ; इस हाल में यदि वह परलोक जाएगी तो वहाँ जाकर क्या मुँह दिखाएगी ? हे प्रभु ! माया-मोह की निद्रा में भ्रमित हुए मुझे बुढ़ापा आ गया है, जीवन के सन्मार्ग से मैं भटक गई हूँ। मैं तुझसे बिछुड़ी हुई हूँ और मैंने केवल दुःख ही दुःख एकत्रित किए हैं। हे प्रभु ! तुम अनन्त गुणों वाले हो, मेरे भीतर सब अवगुण ही अवगुण हैं, लेकिन फिर भी नानक की प्रार्थना है कि भाग्यशालिनी जीवात्माएँ तो सदा ही तुम्हारे नाम-रंग में रँगी हुई हैं। मुझ अभागिनी को भी कोई एक रात्रि (मिलाप के लिए) प्रदान करो ॥ १ ॥

॥ सूही महला १ सुचजी ॥ जा तू ता मै सभु को तू साहिबु मेरी रासि जीउ। तुधु अंतरि हउ सुखि वसा तूं अंतरि साबासि जीउ। भाणै तखति वडाईआ भाणै भीख उदासि जीउ। भाणै थल सिरि सरु वहै कमलु फुलै आकासि जीउ। भाणै भवजलु लंघीऐ भाणै मंझि भरीआसि जीउ। भाणै सो सहु रंगुला सिफति रता गुणतासि जीउ। भाणै सहु भीहावला हउ आवणि जाणि मुईआसि जीउ। तू सहु अगमु अतोलवा हउ कहि कहि ढहि पईआसि जीउ। किआ मागउ किआ कहि सुणी मै दरसन भूख पिआसि जीउ। गुरसबदी सहु पाइआ सचु नानक की अरदासि जीउ ॥ २ ॥

हे प्रभु ! जब तुम कृपा करते हो, तब हर जीव मुझे प्रतिष्ठा देता है। तुम ही मेरे मालिक हो, तुम ही मेरे धन हो। जब मैं तुम्हें अपने हृदय में बसा लेती हूँ, तब मैं सुखी रहती हूँ। जब तुम मेरे हृदय में प्रकट हो जाते हो, तब मुझे सर्वत्र सम्मान मिलता है। प्रभु की इच्छानुसार ही कोई सिंहासन पर बैठता है और प्रतिष्ठित हो रहा है। उसकी रज़ा-अनुसार कोई विरक्त होकर भिक्षा माँगता फिरता है। प्रभु की इच्छानुसार ही कहीं सूखी धरती पर सरोवर प्रवाहित हो जाता है और आकाश में कमल खिल आता है। प्रभु की रज़ा-अनुसार संसार-समुद्र से पार उतरा जाता है, उसकी इच्छा हो तो विकारों से भरकर नौका बीच में ही डूब जाती है। उसकी रज़ा-अनुसार ही किसी जीव-स्त्री को वह प्रभु-पति प्रिय लगता है, रज़ा-अनुसार ही कोई जीव उस गुणों के भण्डार प्रभु की गुणस्तुति में मस्त रहता है। और यह भी उसकी रज़ा ही है कि वह स्वामी कभी मुझ जीव-स्त्री को भयानक है और मैं जन्म-मरण के चक्र में पड़कर आत्मिक रूप से मृत्यु को प्राप्त करती हूँ। हे प्रभु-पति ! तुम अगम्य और अनन्त गुणों के स्वामी हो। मैं प्रार्थना कर-करके तुम्हारे ही द्वार पर पड़ी हूँ। मैं तुम्हारे द्वार से और क्या माँगूँ ? तुम्हें और क्या कहूँ जो तुम सुनो ? मुझे तुम्हारे दर्शन की ही भूख-प्यास है। सत्यस्वरूप प्रभु गुरु के उपदेश द्वारा मिलता है। मुझ नानक की तुम्हारे समक्ष प्रार्थना है कि मुझे भी गुरु की शरण में रखकर प्रभु से भेंट कराओ ॥ २ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ गुणवंती जो दीसै गुरसिखड़ा तिसु निवि निवि लागउ पाइ जीउ। आखा बिरथा जीअ की गुरु सजणु देहि मिलाइ जीउ। सोई दसि उपदेसड़ा मेरा मनु अनत न काहू जाइ जीउ। इहु मनु तैकूं डेवसा मै मारगु देहु बताइ जीउ। हउ आइआ दूरहु चलि कै मै तकी तउ सरणाइ जीउ। मै आसा रखी चिति महि मेरा सभो दुखु गवाइ जीउ। इतु मारगि चले भाईअड़े गुरु कहै सु कार कमाइ जीउ। तिआगें मन की मतड़ी विसारें दूजा भाउ जीउ। इउ पावहि हरि दरसावड़ा नह लगै तती वाउ जीउ। हउ आपहु बोलि न जाणदा मै कहिआ सभु हुकमाउ जीउ। हरि भगति खजाना बखसिआ गुरि नानकि कीआ पसाउ जीउ। मै बहुड़ि न त्रिसना भुखड़ी हउ रजा त्रिपति अघाइ जीउ। जो गुर दीसै सिखड़ा तिसु निवि निवि लागउ पाइ जीउ ॥ ३ ॥

मुझे जो भी कोई गुरु का प्यारा शिष्य मिल जाता है, मैं विनम्र होकर

उसका चरण स्पर्श करता हूँ और उससे अपने भीतर की पीड़ा कहता हूँ। (मेरी प्रार्थना है कि) मुझे सज्जन गुरु मिलाओ। मुझे कोई ऐसा सुन्दर उपदेश कहो, जिससे मेरा मन किसी अन्य ओर प्रवृत्त न हो। मैं अपना यह मन तुम्हारे हवाले कर दूँगा (इसलिए) मुझे मार्ग बतलाओ। मैं चौरासी लाख योनियों के दूरवर्ती मार्ग पर चलकर आया हूँ और अब मैंने तुम्हारा मार्ग देखा है। मेरे भीतर यह आशा है कि तुम मेरा सारा दुःख दूर कर दोगे। (आगे इस प्रश्न का उत्तर है) इस मार्ग पर जो गुरु-भाई चले हैं, तू भी (गुरु के सान्निध्य में रहकर) वही काम कर, जो गुरु ने बतलाया है। यदि तू कुबुद्धि त्याग दे, यदि तू प्रभु के अतिरिक्त शेष सभी का प्रेम विस्मृत कर दे, तो इस प्रकार तू प्रभु का सुन्दर दर्शन कर लेगा और तुझे कोई दुःख-क्लेश नहीं होगा। मैंने जो कुछ तुझे कहा है, यह गुरु का ही हुक्म बताया है। मैं अपनी बुद्धि द्वारा यह रास्ता नहीं बतला रहा। जिस पर गुरु नानक ने कृपा की है, परमात्मा ने उसे अपनी भक्ति का खज़ाना प्रदान किया है। मैं पूर्णरूपेण सन्तुष्ट हूँ, अब मुझे माया की कोई भूख नहीं सताती। मुझे जो भी कोई गुरु का प्यारा सिक्ख मिल जाता है, मैं नम्रतापूर्वक उसके चरण स्पर्श करता हूँ ॥ ३ ॥

रागु सूही छंत महला १ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ भरि जोबनि मै मत पेईअड़ै घरि पाहुणी बलिराम जीउ। मैली अवगणि चिति बिनु गुर गुण न समावनी बलिराम जीउ। गुण सार न जाणी भरमि भुलाणी जोबनु बादि गवाइआ। वरु घरु दरु दरसनु नही जाता पिर का सहजु न भाइआ। सतिगुर पूछि न मारगि चाली सूती रैणि विहाणी। नानक बालतणि राडेपा बिनु पिर धन कुमलाणी ॥१॥ बाबा मै वरु देहि मै हरि वरु भावै तिसकी बलिराम जीउ। रवि रहिआ जुग चारि त्रिभवण बाणी जिसकी बलिराम जीउ। त्रिभवण कंतु रवै सोहागणि अवगणवंती दूरे। जैसी आसा तैसी मनसा पूरि रहिआ भरपूरे। हरि की नारि सु सरब सुहागणि रांड न मैलै वेसे। नानक मै वरु साचा भावै जुगि जुगि प्रीतम तैसे ॥ २ ॥ बाबा लगनु गणाइ हंभी वंञा साहुरै बलिराम जीउ। साहा हुकमु रजाइ सो न टलै जो प्रभु करै बलिराम जीउ। किरतु पइआ करतै करि पाइआ मेटि न सकै कोई। जाञी नाउ नरह निहकेवलु रवि रहिआ तिहु लोई। माइ निरासी

रोइ विछुंनी बाली बालै हेते । नानक साच सबदि सुख महली गुर चरणी प्रभु चेते ॥ ३ ॥ बाबुलि दितड़ी दूरि ना आवै घरि पेईऐ बलिराम जीउ । रहसी वेखि हदूरि पिरि रावी घरि सोहीऐ बलिराम जीउ । साचे पिर लोड़ी प्रीतम जोड़ी मति पूरी परधाने । संजोगीमेला थानि सुहेला गुणवंती गुर गिआने । सतु संतोखु सदा सचु पलै सचु बोलै पिर भाए । नानक विछुड़ि ना दुखु पाए गुरमति अंकि समाए ॥ ४ ॥ १ ॥

हे प्रभु ! तुम पर बलिहारी हूँ । जीवात्मा यौवनकाल में इस प्रकार मस्त है, जैसे शराब पान कर मदहोश हो । जीव-स्त्री इस पितृगृह में एक मेहमान है । विकारों की कमाई से वह भीतर से मैली रहती है (क्योंकि) गुरु की शरण के बिना हृदय में गुण नहीं रह सकते । दुबिधा में पड़कर जीव-स्त्री ने प्रभु के गुणों की क़ीमत नहीं समझी, कुमार्गगामी रही और यौवन का समय व्यर्थ गँवा लिया । न उसने पति-प्रभु के साथ मेल किया, न प्रभु के घर-द्वार पर गई, और उसके दर्शन के महत्त्व को नहीं पहचाना । (दुबिधा के कारण) जीव-स्त्री को प्रभु-पति का स्वभाव ही भला न लगा । माया-मोह में सोती हुई जीव-स्त्री की सारी रात्रि बीत गई, सतिगुरु की शिक्षा लेकर जीवन के सन्मार्ग पर कभी भी न चली । हे नानक ! ऐसी जीव-स्त्री ने तो मानो बाल्यावस्था में ही वैधव्य पा लिया और प्रभु-पति के मिलाप के बिना उसका हृदय-कमल मुरझाया ही रहा ॥ १ ॥ हे प्यारे सतिगुरु ! मुझे प्रभु-पति से मिलाइए । मुझे वह प्रभु-पति प्यारा लगे; मैं उस पर बलिहारी होऊँ, जो सर्वत्र व्यापक है और तीनों भुवनों में जिसका आदेश चलता है । तीनों भुवनों का स्वामी प्रभु भाग्यशालिनी जीव-स्त्री से प्रेम करता है; लेकिन जिसके पास अवगुण ही अवगुण हैं, वह उसके चरणों से बिछुड़ी रहती है । वह मालिक हर एक के हृदय में अवस्थित है । जैसी कामना लेकर कोई उसके द्वार पर आती है, वैसी ही इच्छा वह प्रभु पूर्ण कर देता है । जो जीव-स्त्री प्रभु-पति की ही बनी रहती है, वह सदा सौभाग्यशालिनी रहती है, कभी भी विधवा नहीं होती । उसका वेश कभी मैला नहीं होता । गुरु नानक की प्रार्थना है कि वह सत्यस्वरूप प्रभु, जो युग-युग से अपरिवर्तनीय है, मुझे प्यारा लगता रहे ॥ २ ॥ हे सतिगुरु ! वह मुहूर्त बताइए, जब मैं भी प्रभु-पति के चरणों में जगह पा सकूँ (अपने ससुराल जाऊँगी) । मालिक-प्रभु जो आदेश देता है, वही उस मेल का अवसर बन जाता है, उसे कोई आगे-पीछे नहीं कर सकता । जीवों के पूर्वकृत कर्मों के अनुसार कर्तार ने जो भी हुक्म दिया है, उसका कोई उल्लंघन नहीं कर सकता । वह परमात्मा, जो तीनों लोकों में व्याप्त है और फिर भी स्वतन्त्र है; वही जीव-स्त्री के लिए वर बनकर

आता है। (तब) जीव-स्त्री के प्रभु-पति के साथ सच्चे प्रेम के कारण उसे अपने बन्धन में रख सकने की असमर्थता को महसूस करके माया रो-रोकर अलग हो जाती है। हे नानक! जीव-स्त्री गुरु के चरणों में जगह पाकर प्रभु-पति को हृदय में बसाती है और सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति वाले शब्द के द्वारा प्रभु की सेवा में आनन्द अनुभव करती है ॥ ३ ॥ सतिगुरु ने जीव-स्त्री को माया के प्रभाव से मुक्त कर दिया, वह दोबारा जन्म-मरण के चक्र में नहीं फँसती। प्रभु-पति का प्रत्यक्ष दर्शन करके वह प्रसन्नचित्त होती है। प्रभु-पति ने जब उसके साथ प्रेम किया, तो उसके चरणों में जगह पाकर वह अपना जीवन सँवारती है। सत्यस्वरूप प्रियतम प्रभु को जब उस जीव-स्त्री की आवश्यकता हुई, तब उसने उसे अपने साथ मिला लिया। उसके प्रभाव से उसकी बुद्धि निर्मल हुई और वह लोकप्रिय हो गई। वह सौभाग्यवती बनी और प्रभु-चरणों में उसका जीवन सुखी हो गया। वह सर्वगुणसम्पन्न और गुरुप्रदत्त ज्ञान से युक्त हो गई। सत्य, सन्तोष और सत्यस्वरूप स्मृति उसके हृदय में बस गई और अब वह सत्यस्वरूप प्रभु को सदा स्मरण करती है, जिससे वह प्रभु-पति को प्यारी लगने लगती है। हे नानक! वह जीव-स्त्री प्रभु के चरणों से बिछुड़कर दुःख नहीं पाती, गुरु की शिक्षा के प्रभाव से वह प्रभु में ही लीन हो जाती है ॥ ४ ॥ १ ॥

रागु सूही महला १ छंत घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हम घरि साजन आए। साचै मेलि मिलाए। सहजि मिलाए हरि मनि भाए पंच मिले सुखु पाइआ। साई वसतु परापति होई जिसु सेती मनु लाइआ। अनदिनु मेलु भइआ मनु मानिआ घर मंदर सोहाए। पंच सबद धुनि अनहद वाजे हम घरि साजन आए ॥ १ ॥ आवहु मीत पिआरे। मंगल गावहु नारे। सचु मंगलु गावहु ता प्रभ भावहु सोहिलड़ा जुग चारे। अपनै घरि आइआ थानि सुहाइआ कारज सबदि सवारे। गिआन महा रसु नेत्री अंजनु त्रिभवण रूपु दिखाइआ। सखी मिलहु रसि मंगलु गावहु हम घरि साजनु आइआ ॥ २ ॥ मनु तनु अंम्रिति भिना। अंतरि प्रेमु रतंना। अंतरि रतनु पदारथु मेरै परम ततु वीचारो। जंत भेख तू सफलिओ दाता सिरि सिरि देवणहारो। तू जानु गिआनी अंतरजामी आपे कारणु कीना। सुनहु सखी मनु मोहनि मोहिआ तनु मनु अंम्रिति

भीना ॥ ३ ॥ आतम रामु संसारा। साचा खेलु तुम्हारा। सचु खेलु तुम्हारा अगम अपारा तुधु बिनु कउणु बुझाए। सिध साधिक सिआणे केते तुझ बिनु कवणु कहाए। कालु बिकालु भए देवाने मनु राखिआ गुरि ठाए। नानक अवगण सबदि जलाए गुण संगमि प्रभु पाए ॥ ४ ॥ १ ॥ २ ॥

मेरे हृदय-घर में मित्र-प्रभुजी प्रकट हुए हैं। उन्होंने मुझे अपने चरणों में जगह दे दी है। प्रभु ने मुझे आत्मिक रूप से स्थिर कर दिया है, अब प्रभुजी मुझे मन में प्यारे लगते हैं, मेरी पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ केन्द्रित हो बैठी हैं, मैंने परमानन्द प्राप्त किया है। जिस नाम रूपी वस्तु की मेरे भीतर चाह पैदा हो रही थी, वह मुझे मिल गई है। अब प्रतिपल प्रभु के नाम के साथ मेरा ऐक्य बना रहता है, मेरा मन उस नाम में रम गया है, मेरा हृदय और ज्ञानेन्द्रियाँ सुहावनी हो गई हैं। मेरे हृदय-घर में सज्जन प्रभुजी प्रकट हो गए हैं और (मानो) पाँचों क़िस्मों के बाजे लगातार मिले-जुले स्वर में बज रहे हैं ॥ १ ॥ हे मेरी ज्ञानेन्द्रियो, हे सहेलियो ! आओ, परमात्मा की गुणस्तुति के गीत गाओ। वे गीत गाओ जो मन में उत्साह पैदा करते हैं। वे गीत गाओ जो अटल आत्मिक आनन्द पैदा करते हैं। गुणस्तुति का वह गीत गाओ जो चारों युगों में आत्मिक उत्साह प्रदान करता है; तब ही तुम प्रभु को भली लगोगी। सज्जन प्रभु मेरे (हृदय-घर में) आया है, मेरे हृदयस्थान में बैठा सुशोभित है, गुरु के शब्द ने मेरे जीवन-मनोरथ सँवार दिए हैं। सर्वोत्कृष्ट आत्मिक आनन्द देनेवाला ज्ञान का सुरमा मुझे आँखों में डालने को मिला है, (उसके प्रभाव से गुरु ने) मुझे तीनों भुवनों में व्यापक प्रभु का दर्शन करा दिया है। हे सहेलियो ! प्रभु-चरणों में मन लगाओ और आनन्दपूर्वक गुणस्तुति का वह गीत गाओ, जो आत्मिक उत्साह पैदा करता है। मेरे हृदय-घर में सज्जन प्रभु प्रकट हुआ है ॥ २ ॥ मेरा मन और शरीर आत्मिक जीवन देनेवाला नाम-जल में भीग गया है, मेरे हृदय में प्रेम-रत्न पैदा हो गया है। मेरे हृदय में परमात्मा के गुणों का विचार एक ऐसा सुन्दर रत्न पैदा हुआ है (जिससे यह जीव प्रभु-द्वार पर भिक्षुक लगते हैं)। तुम भिक्षुक जीवों के दाता हो, तुम हर एक जीव के रक्षक हो। तुम बुद्धिमान हो, ज्ञानी हो, अन्तर्यामी हो और तुमने आप ही यह जगत बनाया है। हे सहेलियो ! मोहन प्रभु ने मेरा मन प्रेम के वशीभूत कर लिया है, मेरा मन, तन उसके नाम-अमृत में भीगा पड़ा है ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! तुम संसार के प्राण हो, यह संसार तुम्हारी रची हुई क्रीड़ा है। हे अगम्य और अनन्त प्रभु ! यह संसार तुम्हारी सचमुच रची गई क्रीड़ा है, (इस रहस्य को) तुम्हारे बिना कोई समझा नहीं सकता। अनेक पहुँचे हुए योगी, अनेक साधना करनेवाले

तथा बुद्धिमान होते आए हैं (लेकिन) तुम्हारे बिना कोई भी तुम्हारा स्मरण नहीं करा सकता। गुरु ने जिसका मन तुम्हारे चरणों में अनुरक्त कर दिया, उसका जन्म-मरण का चक्र दूर हो गया। जिस मनुष्य ने गुरु के शब्द में प्रवृत्त होकर अपने अवगुण जला लिये, उसने गुणों के द्वारा प्रभु को प्राप्त कर लिया ॥ ४ ॥ १ ॥ २ ॥

रागु सूही महला १ घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ आवहो सजणा हउ देखा दरसनु तेरा राम। घरि आपनड़ै खड़ी तका मै मनि चाउ घनेरा राम। मनि चाउ घनेरा सुणि प्रभ मेरा मै तेरा भरवासा। दरसनु देखि भई निहकेवल जनम मरण दुखु नासा। सगली जोति जाता तू सोई मिलिआ भाइ सुभाए। नानक साजन कउ बलि जाईऐ साचि मिले घरि आए ॥ १ ॥ घरि आइअड़े साजना ता धन खरी सरसी राम। हरि मोहिअड़ी साच सबदि ठाकुर देखि रहंसी राम। गुण संगि रहंसी खरी सरसी जा रावी रंगि रातै। अवगण मारि गुणी घरु छाइआ पूरै पुरखि बिधातै। तसकर मारि वसी पंचाइणि अदलु करे वीचारे। नानक राम नामि निसतारा गुरमति मिलहि पिआरे ॥२॥ वरु पाइअड़ा बालड़ीए आसा मनसा पूरी राम। पिरि राविअड़ी सबदि रली रवि रहिआ नह दूरी राम। प्रभु दूरि न होई घटि घटि सोई तिस की नारि सबाई। आपे रसीआ आपे रावे जिउ तिस दी वडिआई। अमर अडोलु अमोलु अपारा गुरि पूरै सचु पाईऐ। नानक आपे जोग सजोगी नदरि करे लिव लाईऐ ॥ ३ ॥ पिरु उचड़ीऐ माड़ड़ीऐ तिहु लोआ सिरताजा राम। हउ बिसम भई देखि गुणा अनहद सबद अगाजा राम। सबदु वीचारी करणी सारी राम नामु नीसाणो। नाम बिना खोटे नही ठाहर नामु रतनु परवाणो। पति मति पूरी पूरा परवाना ना आवै ना जासी। नानक गुरमुखि आपु पछाणै प्रभ जैसे अविनासी ॥४॥१॥३॥

हे सज्जन प्रभु! आइए, मैं तुम्हारा दर्शन कर सकूँ। मैं अपने हृदय में पूरी सावधानी से प्रतीक्षा कर रही हूँ, मेरे मन में (तुम्हारे दर्शनों का) बड़ा चाव है और मुझे आसरा भी तुम्हारा ही है। जिस

जीवात्मा ने तुम्हारा दर्शन कर लिया, वह पवित्र हो गई, उसके जन्म-मरण का दुःख दूर हो गया। उसने समस्त जीवों में तुम्हें अवस्थित पहचान लिया, उसके प्रेम के द्वारा तुम उसे मिल गए। हे नानक! सज्जन प्रभु पर बलिहारी होना चाहिए। जो जीव-स्त्री उसके सत्यस्वरूप नाम में प्रवृत्त होती है, वह उसके हृदय में प्रकट हो जाता है ॥ १ ॥ जब सज्जन प्रभुजी जीव-स्त्री के हृदय-घर में प्रकट हो जाते हैं, तब जीव-स्त्री बहुत प्रसन्नचित्त होती है। जब सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति के शब्द ने उसे बाँध लिया, तब ठाकुरजी का दर्शन कर वह स्थिरचित्त हो गई। जब प्रेम-रंग में रँगे प्रभु ने जीव-स्त्री को अपने चरणों में जगह दी, तो वह प्रभु के गुणों में प्रवृत्त होकर स्थिरचित्त हो गई और बहुत प्रसन्न हो गई। पूर्णपुरुष परमात्मा ने उसके अवगुण दूर कर उसके हृदय को गुणों से भरपूर कर दिया। कामादिक चोरों को मारकर वह जीव-स्त्री उस परमात्मा के चरणों में स्थान पा गयी, जो सदा पूर्णरूपेण सोच-समझकर न्याय करता है। हे नानक! परमात्मा के नाम में प्रवृत्त होने से संसार-समुद्र से पार उतरा जाता है, गुरु की शिक्षा पर चलने से प्यारे प्रभुजी से मिलाप होता है ॥२॥ जिस जीव-स्त्री ने प्रभु-पति को प्राप्त कर लिया, उसकी प्रत्येक आशा, प्रत्येक इच्छा पूर्ण हो जाती है। जिस जीव-स्त्री को प्रभु-पति ने अपने चरणों में लगा लिया, जो जीव-स्त्री गुरु के शब्द के प्रभाव से प्रभु में लीन हो गई, उसे प्रभु सर्वत्र व्यापक दिखता है, उसे वह अपने से दूर नहीं लगता। उसे यह निश्चय हो जाता है कि प्रभु कहीं दूर नहीं, प्रत्येक शरीर में मौजूद है, सब जीव-स्त्रियाँ उसी प्रभु की हैं, वह आप ही आनन्द का स्रोत है। जिस प्रकार उसकी रज़ा होती है, वह आप ही अपने मिलाप का आनन्द देता है। वह परमात्मा मृत्यु-रहित है, माया से परे है, उसका मूल्यांकन नहीं हो सकता। वह सत्यस्वरूप है, वह अनन्त है, पूर्णगुरु के द्वारा उसकी प्राप्ति होती है। हे नानक! प्रभु आप ही जीवों के मिलन का संयोग अपने साथ बनाता है; जब वह कृपादृष्टि करता है, तब जीव उसमें सुरति लगाता है ॥ ३ ॥ प्रभु-पति एक सुन्दर ऊँचे महल में रहता है, वह तीनों लोकों का स्वामी है। उसके गुण देखकर मैं आश्चर्य-चकित हूँ। चारों दिशाओं में उसकी अनाहत ध्वनि ध्वनित हो रही है। जो मनुष्य प्रभु की गुणस्तुति के शब्द को स्मरण करता है, जिसने इसे श्रेष्ठ कर्तव्य बना लिया है, जिसके पास उस परमात्मा का नाम रूपी पार-पत्र है (उसे प्रभु अपने चरणों में जगह देता है), लेकिन नामहीन खोटे मनुष्य को उसके दरबार में जगह नहीं मिलती, (उसके द्वार पर) उसका नाम-रत्न ही स्वीकृत होता है। जिसके पास प्रभु-नाम का न रोका जानेवाला पत्र है, उसे प्रभु-द्वार पर पूर्ण प्रतिष्ठा मिलती है। उसकी बुद्धि दोषहीन हो जाती है, वह जन्म-मरण के चक्र से बच जाता है। गुरु नानक का कथन है कि गुरु की

शरण लेकर जो मनुष्य अपने जीवन की छानबीन करता है, वह अविनाशी प्रभु का रूप हो जाता है ।। ४ ।। १ ।। ३ ।।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। रागु सूही छंत महला १ घरु ४ ।।
जिनि कीआ तिनि देखिआ जगु धंधड़ै लाइआ । दानि तेरै घटि चानणा तनि चंदु दीपाइआ । चंदो दीपाइआ दानि हरि कै दुखु अंधेरा उठि गइआ । गुण जंञ लाड़े नालि सोहै परखि मोहणीऐ लइआ । वीवाहु होआ सोभ सेती पंच सबदी आइआ । जिनि कीआ तिनि देखिआ जगु धंधड़ै लाइआ ।। १ ।। हउ बलिहारी साजना मीता अवरीतां । इहु तनु जिन सिउ गाडिआ मनु लीअड़ा दीता । लीआ त दीआ मानु जिन्ह सिउ से सजन किउ वीसरहि । जिन्ह दिसि आइआ होहि रलीआ जीअ सेती गहि रहहि । सगल गुण अवगणु न कोई होहि नीता नीता । हउ बलिहारी साजना मीता अवरीता ।। २ ।। गुणा का होवै वासुला कढि वासु लईजै । जे गुण होवन्हि साजना मिलि साझ करीजै । साझ करीजै गुणह केरी छोडि अवगण चलीऐ । पहिरे पटंबर करि अडंबर आपणा पिड़ु मलीऐ । जिथै जाइ बहीऐ भला कहीऐ झोलि अम्रितु पीजै । गुणा का होवै वासुला कढि वासु लईजै ।। ३ ।। आपि करे किसु आखीऐ होरु करे न कोई । आखण ताकउ जाईऐ जे भूलड़ा होई । जे होइ भूला जाइ कहीऐ आपि करता किउ भुलै । सुणे देखे बाझु कहिऐ दानु अणमंगिआ दिवै । दानु देइ दाता जगि बिधाता नानका सचु सोई । आपि करे किसु आखीऐ होरु करे न कोई ।। ४ ।। १ ।। ४ ।।

जिस प्रभु ने यह जगत पैदा किया है, उसी ने इसकी देखभाल की है और उसी ने इसे माया की भाग-दौड़ में लगाया हुआ है । तुम्हारी कृपा से (ईश्वर-कृपा से) हृदय में तुम्हारी ज्योति का प्रकाश होता है (किसी भाग्यशाली) शरीर में चन्द्रमा प्रतिभासित होता है । प्रभु-कृपा से जिस हृदय में प्रभु-नाम की शीतलता प्रभाव करती है, उस हृदय में से अँधेरा और दुःख-क्लेश दूर हो जाता है । जैसे बारात दूल्हे के साथ सुन्दर लगती है, उसी प्रकार जीव-स्त्री के गुण तब ही सुशोभित होते हैं जब प्रभु-पति हृदय में अवस्थित हो । जिस जीव-स्त्री ने अपने जीवन को प्रभु की गुणस्तुति

द्वारा सुन्दर बना लिया है, उसने इसकी महत्ता स्वीकार कर प्रभु को अपने हृदय में बसा लिया है। उसका प्रभु-पति के साथ मिलाप हो जाता है, (लोक-परलोक में) उसे शोभा भी मिलती है और अनवरत आत्मिक आनन्द का दाता प्रभु उसके हृदय में प्रकट हो जाता है। जिस प्रभु ने यह जगत पैदा किया है, वही इसकी देखभाल करता है और उसी ने इसे माया की भाग-दौड़ में लगाया हुआ है ॥ १ ॥ मैं उन सज्जनों, मित्रों पर न्यौछावर हूँ, जिन पर माया का परदा नहीं पड़ा। जिनके संसर्ग के प्रभाव से मैंने वाहिगुरु के साथ आत्मिक ऐक्य प्राप्त किया है। जिन गुरमुखों के साथ हार्दिक मेल-मिलाप सम्पन्न हो सके, वे सज्जन अविस्मरणीय हैं। उनका दर्शन करने से आत्मिक ख़ुशियाँ उपलब्ध होती हैं। वे सज्जन अपने सत्संगियों को अपने प्राणों के तुल्य समझते हैं। उनमें सारे गुण ही गुण होते हैं, अवगुण उनके निकट नहीं होते। मैं उन सज्जनों, मित्रों पर न्यौछावर हूँ, जो माया के प्रभाव से परे हैं ॥ २ ॥ यदि किसी को गुणों का सुरभित डिब्बा मिल जाए, तो उसे वह डिब्बा खोलकर उसमें निहित सुगन्धि लेनी चाहिए। हे भाई ! यदि तू चाहता है कि तेरे भीतर गुण पैदा हों, तो गुरमुखों को मिलकर उनके साथ मेल करना चाहिए। इस प्रकार अपने भीतर से अवगुण त्यागकर सन्मार्ग पर चला जा सकता है, सबके साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करके और भलाई के सुन्दर उद्यम करके विकारों के मुक़ाबले पर जीवन-संग्राम जीता जा सकता है। (फिर) जहाँ भी बैठें वहीं भलाई की बात की जा सकती है और कुकर्मों से हटकर आत्मिक जीवन का दाता नाम-जल पान किया जा सकता है। यदि किसी को गुणों का सुरभित डिब्बा मिल जाए तो उसे वह डिब्बा खोलकर उसमें निहित सुगन्धि लेनी चाहिए ॥ ३ ॥ परमात्मा आप ही सब कुछ कर रहा है, उसके अतिरिक्त कोई दूसरा यह नहीं कर सकता, इसलिए किसी दूसरे के पास शिकायत आदि नहीं की जा सकती। वह प्रभु पथभ्रष्ट नहीं है, इसलिए भूल नहीं करता। भूल हो तो कोई शिकायत भी करे, किन्तु स्वयं सृजनहार कभी भूल नहीं करता। वह सब जीवों की प्रार्थनाएँ सुने, सब जीवों के कृत कर्म देखे बिना ही बिन-माँगे सबको दान देता है। वह दानी जगत में प्रत्येक को दान देता है। गुरु नानक का कथन है कि वह सृजनहार ही सदा स्थिर रहनेवाला है। वह सब कुछ आप ही करता है, कोई दूसरा कुछ नहीं कर सकता। किसी दूसरे के पास जाकर कोई शिकायत नहीं की जा सकती ॥ ४ ॥ १ ॥ ४ ॥

॥ सूही महला १ ॥ मेरा मनु राता गुण रवै मनि भावै सोई। गुर की पउड़ी साच की साचा सुखु होई। सुखि सहजि आवै साच भावै साच की मति किउ टलै। इसनानु

दानु सुगिआनु मजनु आपि अछलिओ किउ छलै। परपंच मोह बिकार थाके कूड़ु कपटु न दोई। मेरा मनु राता गुण रवै मनि भावै सोई ॥ १ ॥ साहिबु सो सालाहीऐ जिनि कारणु कीआ। मैलु लागी मनि मैलिऐ किनै अंम्रितु पीआ। मथि अंम्रितु पीआ इहु मनु दीआ गुर पहि मोलु कराइआ। आपनड़ा प्रभु सहजि पछाता जा मनु साचै लाइआ। तिसु नालि गुण गावा जे तिसु भावा किउ मिलै होइ पराइआ। साहिबु सो सालाहीऐ जिनि जगतु उपाइआ ॥ २ ॥ आइ गइआ की न आइओ किउ आवै जाता। प्रीतम सिउ मनु मानिआ हरि सेती राता। साहिब रंगि राता सच की बाता जिनि बिंब का कोटु उसारिआ। पंचभू नाइको आपि सिरंदा जिनि सच का पिंडु सवारिआ। हम अवगणिआरे तू सुणि पिआरे तुधु भावै सचु सोई। आवण जाणा ना थीऐ साची मति होई ॥ ३ ॥ अंजनु तैसा अंजीऐ जैसा पिर भावै। समझै सूझै जाणीऐ जे आपि जाणावै। आपि जाणावै मारगि पावै आपे मनूआ लेवए। करम सुकरम कराए आपे कीमति कउण अभेवए। तंतु मंतु पाखंडु न जाणा रामु रिदै मनु मानिआ। अंजनु नामु तिसै ते सूझै गुरसबदी सचु जानिआ ॥ ४ ॥ साजन होवनि आपणे किउ परघर जाही। साजन राते सच के संगे मन माही। मन माहि साजन करहि रलीआ करम धरम सबाइआ। अठसठि तीरथ पुंन पूजा नामु साचा भाइआ। आपि साजे थापि वेखै तिसै भाणा भाइआ। साजन रांगि रंगीलड़े रंगु लालु बणाइआ ॥५॥ अंधा आगू जे थीऐ किउ पाधरु जाणै। आपि मुसै मति होछीऐ किउ राहु पछाणै। किउ राहि जावै महलु पावै अंध की मति अंधली। विणु नाम हरि के कछु न सूझै अंधु बूडौ धंधली। दिनु राति चानणु चाउ उपजै सबदु गुर का मनि वसै। कर जोड़ि गुर पहि करि बिनंती राहु पाधरु गुरु दसै ॥ ६ ॥ मनु परदेसी जे थीऐ सभु देसु पराइआ। किसु पहि खोल्हउ गंठड़ी दूखी भरि आइआ। दूखी भरि आइआ जगतु सबाइआ कउणु जाणै बिधि मेरीआ। आवणे जावणे खरे डरावणे तोटि न आवै फेरीआ। नाम विहूणे ऊणे झूणे ना गुरि सबदु सुणाइआ।

मनु परदेसी जे थीऐ सभु देसु पराइआ ॥ ७ ॥ गुर महली घरि आपणै सो भरपुरि लीणा । सेवकु सेवा तां करे सच सबदि पतीणा। सबदे पतीजै अंकु भीजै सु महलु महला अंतरे । आपि करता करे सोई प्रभु आपि अंति निरंतरे । गुर सबदि मेला तां सुहेला बाजंत अनहद बीणा । गुर महली घरि आपणै सो भरिपुरि लीणा ॥ ८ ॥ कीता किआ सालाहीऐ करि वेखै सोई । ता की कीमति ना पवै जे लोचै कोई । कीमति सो पावै आपि जाणावै आपि अभुलु न भुलए । जैजैकारु करहि तुधु भावहि गुर कै सबदि अमुलए । हीणउ नीचु करउ बेनंती साचु न छोडउ भाई। नानक जिनि करि देखिआ देवै मति साई ॥ ९ ॥ २ ॥ ५ ॥

परमात्मा के प्रेम-रंग में रँगा हुआ मेरा मन परमात्मा के गुण स्मरण करता है (जिससे) उसे परमात्मा ही प्यारा लगता जा रहा है । परमात्मा का गुणगान एक सीढ़ी है, जिसे गुरु ने दिया है और इसके द्वारा ही सत्य-स्वरूप प्रभु तक पहुँचा जा सकता है । इस सीढ़ी के द्वारा मेरे भीतर स्थिर आनन्द प्राप्त हो रहा है । जो मनुष्य इस सीढ़ी से आत्मिक आनन्द पाता है, वह सत्यस्वरूप प्रभु को प्यारा लगता है । सत्यस्वरूप प्रभु के गुण गानेवाली उसकी बुद्धि स्थिर हो जाती है । परमात्मा को छला नहीं जा सकता । (प्रभु के प्रति लगाव न हो तो) कोई स्नान, कोई दान, कोई ज्ञान और कोई तीर्थ उसे प्रसन्न नहीं कर सकता । (प्रभु के गुणगान से) धोखे-फ़रेब, मोह के चमत्कार, विकार आदि सब समाप्त हो जाते हैं । उसके भीतर झूठ, ठगी और 'मैं-पर' की बात बिल्कुल नहीं रहती । प्रभु-प्रेम में रँगा हुआ मेरा मन ज्यों-ज्यों गुण गाता है, त्यों-त्यों मेरे मन में वह प्रभु ही प्यारा लगता जा रहा है ॥ १ ॥ उस मालिक-प्रभु की गुणस्तुति करनी चाहिए, जिसने जगत उत्पादित किया है । (गुणस्तुति के बिना) मन को विकारों का मैल लगा रहता है और यदि मन में विकारों का मैल लगा रहे तो कोई भी नाम-अमृत पान नहीं कर सकता । मैंने गुरु द्वारा परमात्मा-प्राप्ति के लिए मूल्यांकन कराया, तो उन्होंने बताया कि जिसने यह मन गुरु के सहारे छोड़ दिया, उसने बार-बार सिमरण कर नाम-अमृत पान कर लिया । जब किसी मनुष्य ने अपना मन सत्यस्वरूप प्रभु में लगा दिया, तब उसने आत्मिक रूप से सन्तुलित होकर प्रियतम प्रभु के साथ अभिन्नता कर ली । (लेकिन) मैं प्रभु के चरणों में लीन होकर तभी प्रभु के गुणों का गान कर सकता हूँ, यदि प्रभु की रज़ा हो। उस प्रभु के प्रति उदासीन रहने से उसके साथ ऐक्य नहीं हो सकता । (इसलिए) उस मालिक-प्रभु की गुणस्तुति करनी चाहिए, जिसने यह जगत उत्पन्न किया है ॥ २ ॥ जिस

मनुष्य के हृदय में प्रभु का वास हो उसे दूसरे किसी पदार्थ की लालसा नहीं रहती और उसका जन्म-मरण का चक्र भी समाप्त हो जाता है। उसका मन प्रियतम-प्रभु के स्मरण में रत होता है और वह प्रभु-प्रेम में अनुरक्त हो जाता है। उसका अन्तर्मन प्रभु के रंग में रँग जाता है। वह उस सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति की बातें करता रहता है, जिसने पानी की बूंद से शरीर रूपी क़िला बना दिया है। जो पाँचों तत्त्वों का मालिक है, जो आप ही विश्व की सृजना करनेवाला है और जिसने अपने रहने के लिए मनुष्य-शरीर का निर्माण किया है। हे प्रभु! मेरी प्रार्थना सुनो। हम जीव अवगुणों से भरपूर हैं; लेकिन जो जीव तुम्हें प्रिय लगता है, वह (तुम्हारी कृपा के फलस्वरूप) तुम्हारे जैसा हो जाता है। उसका जन्म-मरण का चक्र समाप्त हो जाता है और वह तुम्हें कभी विस्मृत नहीं करता ॥ ३ ॥ जीव-स्त्री को (शृंगार की दृष्टि से) ऐसा सुरमा डालना चाहिए जो प्रभु-पति को प्रिय लगे। (प्रभु की दृष्टि में प्रिय लगना अपने वश की बात नहीं है, क्योंकि) जब परमात्मा आप सुबुद्धि प्रदान करे तब ही जीव को ज्ञान होता है और तब ही वह इस बारे में कुछ समझ सकता है। परमात्मा आप ही सूझ-बूझ देता है; आप ही सन्मार्ग दिखाता है और आप ही जीव के मन को अपनी ओर प्रेरित करता है। सामान्य और विशेष सभी प्रकार के कार्य परमात्मा स्वयं जीव से कराता है, लेकिन उस प्रभु का रहस्य नहीं जाना जा सकता, कोई भी उसका मूल्यांकन नहीं कर सकता। (जीवात्मा का कथन है कि) परमात्मा की प्राप्ति के लिए मैं कोई जादू-टोना, मन्त्र आदि बाह्याचार नहीं जानता। मैंने तो केवल उस प्रभु को अपने भीतर अवस्थित किया है और मेरा मन उसकी स्मृति में लीन हो गया है। प्रभु-पति को प्रसन्न करने के लिए उसका नाम ही सुरमा है, इस सुरमे की सूझ-बूझ भी उस प्रभु (की कृपा) से ही होती है। (जिसे यह ज्ञान हो जाता है, वह) गुरु के ज्ञान में प्रवृत्त होकर सत्यस्वरूप प्रभु के साथ अविभाज्य सम्बन्ध जोड़ लेता है ॥ ४ ॥ सज्जन-प्रभु जिन भाग्यशाली जीवों के अपने हो जाते हैं, वे जीव पराए घरों में नहीं जाते अर्थात् वे कहीं नहीं भटकते। वे मनुष्य अन्तर्मन से सज्जन-प्रभु के साथ अनुरक्त रहते हैं। वे अपने मन में सज्जन-प्रभु के मिलाप का आनन्द अनुभव करते हैं; यह आनन्द-अनुभवन ही उनके लिए समस्त धार्मिक कार्यों के तुल्य है। उन्हें सत्यस्वरूप प्रभु का नाम प्रिय लगता है, यही उनके लिए अठासठ तीर्थों का स्नान है, यही उनके लिए दान-पुण्य है और यही उनके लिए देवपूजा है। उन व्यक्तियों को उसी प्रभु की रज़ा मीठी लगती है, जो आप जगत की सृजना करता है और सृजना करके उसका पोषण भी करता है। सज्जन-प्रभु के प्रेम में अनुरक्त उन व्यक्तियों ने अपने भीतर प्रभु-प्रेम का लाल रंग बना रखा है ॥ ५ ॥ यदि किसी मनुष्य का मार्गप्रदर्शक ऐसा

व्यक्ति हो जाए जो स्वयं माया-मोह में अन्धा है, तो वह मनुष्य जीवन-यात्रा का सहज मार्ग नहीं समझ सकता क्योंकि वह मार्गप्रदर्शक तो स्वयं ही दुर्बुद्धि के कारण लूटा जा रहा है; उसके निदेशन में मार्ग तय करनेवाला मार्ग कैसे प्राप्त कर सकता है ? माया-मोह में अन्धे हुए मनुष्य की अपनी ही बुद्धि भ्रमित हुई रहती है, वह आप ही न तो सन्मार्ग पर चल सकता है और न परमात्मा का द्वार पा सकता है; परमात्मा के नाम के बिना उसे कुछ नहीं सूझता (क्योंकि) माया-मोह में अन्धा हुआ मनुष्य माया की भाग-दौड़ में लगा रहता है। लेकिन जिस मनुष्य के मन में गुरु का ज्ञान रहता है, उसके भीतर दिन-रात 'नाम' का प्रकाश रहता है और उसके भीतर सेवा-स्मरण का उत्साह बना रहता है। वह दोनों हाथ जोड़कर गुरु की प्रार्थना करता है, क्योंकि गुरु उसे जीवन का सही मार्ग बतलाता है ॥ ६ ॥ यदि मनुष्य का मन प्रभु-चरणों में प्रवृत्त न हो तो उसे समस्त विश्व पराया-पराया लगता है। (दुबिधा के कारण) समस्त विश्व ही दुःखों से परिपूरित रहता है (इसलिए विश्व में कोई ऐसा दृष्टिगत नहीं होता) जिसके समक्ष मैं अपने दुःखों की पोटली खोल सकूँ। प्रभु-चरणों से अलग होने के कारण समस्त विश्व दुःखों से परिपूरित रहता है (सब अपने-अपने दुःखों में बेचैन हैं, इसलिए) कोई मेरी स्थिति को जानने की चिन्ता नहीं करता। (नाम-रहित) जीव जन्म-मरण के भयानक चक्र में पड़े रहते हैं, उनका यह आवागमन समाप्त नहीं होता। जिन्हें गुरु ने परमात्मा की गुणस्तुति का शब्द श्रवण नहीं कराया, जो नाम से खाली रहे वे दुःखी जीवन बिताकर मृत्यु को प्राप्त हो गए। क्योंकि प्रभु-चरणों से बिलग रहकर जीव को समस्त जगत पराया लगता है (और उसके भीतर द्वैत-भावना बनी रहती है) ॥ ७ ॥ उच्च ठिकाने पर (अर्थात् पवित्र स्थान पर) रहनेवाला प्रभु जिस मनुष्य के हृदय-घर में अवस्थित होता है, वह मनुष्य उस सर्वव्यापक प्रभु की स्मृति में मस्त रहता है। वह मनुष्य प्रभु का सेवक बन जाता है, प्रभु की सेवा करता है और सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति के शब्द में मग्न रहता है। वह मनुष्य सतिगुरु के शब्द में लीन हो जाता है, उसका हृदय नाम-रस में ओत-प्रोत रहता है और उसे प्रत्येक शरीर के भीतर प्रभु अवस्थित दृष्टिगत होता है। वह विश्वस्त हो जाता है कि प्रभु आप ही सब कुछ कर रहा है और आप ही हर एक जीव के भीतर व्याप्त है। गुरु के उपदेश द्वारा जब उस मनुष्य का प्रभु के साथ मिलाप हो जाता है, तब उसका जीवन सहज हो जाता है और उसके भीतर अनाहत वीणा बजती रहती है। उच्च स्थान पर अवस्थित होनेवाला प्रभु जिस मनुष्य के अपने हृदय-घर में प्रकट हो जाता है, वह उस सर्वव्यापक प्रभु के स्मरण में लीन रहता है ॥ ८ ॥ परमात्मा द्वारा उत्पन्न जीवों की प्रशंसा करने का क्या लाभ ? गुणस्तुति तो जगत की सृजना और सृजना

के उपरान्त देखभाल करनेवाले प्रभु की करनी चाहिए। यदि कोई मनुष्य उस प्रभु के गुणों का मूल्यांकन करना चाहे तो वह असम्भव है। जिस मनुष्य को प्रभु यह सूझ-बूझ देता है, वह प्रभु के महत्त्व को जान लेता है, (उसकी दृष्टि में) प्रभु कभी ग़लती नहीं करता। (वह प्रभु से प्रार्थना करता है कि हे प्रभु! जो व्यक्ति तुम्हें प्यारे लगते हैं, वे गुरु के अमूल्य शब्द में प्रवृत्त होकर तुम्हारी गुणस्तुति करते हैं। गुरु नानक का कथन है कि हे जीवात्मा! कहो— मैं तुच्छ हूँ, लेकिन मैं प्रभु-द्वार पर प्रार्थना करता हूँ और मैं कभी भी उस सत्यस्वरूप प्रभु के आश्रय को नहीं छोड़ता। जो प्रभु जीवों को उत्पादित कर उनकी देखभाल करता है, वही गुणस्तुति करने की सूझ-बूझ प्रदान करता है ॥ ९ ॥ २ ॥ ५ ॥

रागु सूही छंत महला ३ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सुख सोहिलड़ा हरि धिआवहु। गुरमुखि हरि फलु पावहु। गुरमुखि फलु पावहु हरि नामु धिआवहु जनम जनम के दूख निवारे। बलिहारी गुर अपणे विटहु जिनि कारज सभि सवारे। हरि प्रभु क्रिपा करे हरि जापहु सुखफल हरि जन पावहु। नानकु कहै सुणहु जन भाई सुख सोहिलड़ा हरि धिआवहु ॥ १ ॥ सुणि हरि गुण भीने सहजि सुभाए। गुरमति सहजे नामु धिआए। जिन कउ धुरि लिखिआ तिन गुरु मिलिआ तिन जनम मरण भउ भागा। अंदरहु दुरमति दूजी खोई जो जनु हरि लिव लागा। जिन कउ क्रिपा कीनी मेरै सुआमी तिन अनदिनु हरि गुण गाए। सुणि मन भीने सहजि सुभाए ॥ २ ॥ जुग महि राम नामु निसतारा। गुर ते उपजै सबदु वीचारा। गुरसबदु वीचारा राम नामु पिआरा जिसु किरपा करे सु पाए। सहजे गुण गावै दिनु राती किलविख सभि गवाए। सभु को तेरा तू सभना का हउ तेरा तू हमारा। जुग महि राम नामु निसतारा ॥ ३ ॥ साजन आइ वुठे घर माही। हरि गुण गावहि त्रिपति अघाही। हरि गुण गाइ सदा त्रिपतासी फिरि भूख न लागै आए। दह दिसि पूज होवै हरि जन की जो हरि हरि नामु धिआए। नानक हरि आपे जोड़ि विछोड़े हरि बिनु को दूजा नाही। साजन आइ वुठे घर माही ॥ ४ ॥ १ ॥

सुखद गान-सरीखा हरि का नाम जपो, उससे गुरु के द्वारा हरि रूपी

फल की उपलब्धि होगी। गुरुमुख के द्वारा नाम जपने और फल प्राप्त करने से जन्म-जन्म के दुःख दूर हो जाते हैं। मैं अपने गुरु पर बार-बार बलिहारी जाती हूँ, जिससे मेरे सब कार्य सँवार दिये हैं। परमात्मा की कृपा से हरि-नाम जपनेवाला जीव सुख रूपी फल को प्राप्त करता है। इसलिए गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मेरे भाइयो ! तुम सुख-फल के प्रदायक परमात्मा का नाम जपो ॥ १ ॥ हरि के गुणों के श्रवण करने से आत्मा प्रसन्न होती है और सहज ही प्रभु-नाम में लीन हो जाती है। जिन पर भाग्य प्रसन्न होता है, या जो परमात्मा के दरबार से ही सौभाग्य लेकर आते हैं, उन्हें गुरु की प्राप्ति होती है और जन्म-मरण का भय नष्ट हो जाता है। उनके मन से कुमति और द्वैतभाव नष्ट हो जाते हैं और वे जीव परमात्मा में लग्न लगाते हैं। मेरे प्रभु ने जिन जीवों पर दया की है, वे रात-दिन हरि की गुणस्तुति करते हैं। परमात्मा के गुणगान को सुनकर उनका मन भीग जाता है और वे सहज ध्यान में मग्न हो जाते हैं ॥ २ ॥ इस जगत में राम-नाम से ही निस्तार मिल सकता है। (यह राम-नाम) गुरुवाणी के विचार से प्रकट होता है। गुरु के शब्द से राम-नाम की उपलब्धि केवल उसे ही हो सकती है, जिस पर परमात्मा की कृपा हो; वहाँ जीव सहज ध्यान में रात-दिन प्रभु के गुण गाता है और सब प्रकार के पापों से मुक्त हो जाता है। हे प्रभु ! सब कुछ तुम्हारा है, तुम सबके हो; मैं तुम्हारी शरण में हूँ, तुम हम पर कृपा करो; संसार में केवल राम-नाम से ही मुक्ति हो सकती है ॥ ३ ॥ हे मेरे साजन-परमात्मा ! तुम मेरे मन में बस जाओ, ताकि हम तुम्हारा गुण गाते-गाते परम तृप्ति को पा सकें। परमात्मा का गुण गाने से ऐसी तृप्ति प्राप्त होती है कि दोबारा किसी चीज की तृष्णा नहीं रह जाती। हरि-नाम का जाप करनेवाले व्यक्ति का महत्त्व इतना बढ़ जाता है कि दसों दिशाओं में उसकी पूजा होने लगती है। गुरु नानक का कथन है कि परमात्मा ही वियोगियों को संयोग प्रदान करता है, कोई दूसरा इसमें समर्थ नहीं। (इसलिए प्रार्थना करते हैं कि) हे मेरे प्रभु ! तुम मेरे मन में निवास करो ॥ ४ ॥ १ ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

रागु सूही महला ३ घरु ३ ॥ भगत जना की हरि जीउ राखै जुगि जुगि रखदा आइआ राम। सो भगतु जो गुरमुखि होवै हउमै सबदि जलाइआ राम। हउमै सबदि जलाइआ मेरे हरि भाइआ जिसदी साची बाणी। सची भगति करहि दिनु राती गुरमुखि आखि वखाणी। भगता की चाल सची अति निरमल

नामु सचा मनि भाइआ । नानक भगत सोहहि दरि साचै जिनी सचो सचु कमाइआ ॥ १ ॥ हरि भगता की जाति पति है भगत हरि कै नामि समाणे राम । हरि भगति करहि विचहु आपु गवावहि जिन गुण अवगण पछाणे राम । गुण अउगण पछाणै हरि नामु वखाणै भै भगति मीठी लागी । अनदिनु भगति करहि दिनु राती घर ही महि बैरागी । भगती राते सदा मनु निरमलु हरि जीउ वेखहि सदा नाले । नानक से भगत हरि कै दरि साचे अनदिनु नामु सम्हाले ॥२॥ मनमुख भगति करहि बिनु सतिगुर विणु सतिगुर भगति न होई राम । हउमै माइआ रोगि विआपे मरि जनमहि दुखु होई राम । मरि जनमहि दुखु होई दूजै भाइ परज विगोई विणु गुर ततु न जानिआ । भगति विहूणा सभु जगु भरमिआ अंति गइआ पछुतानिआ । कोटि मधे किनै पछाणिआ हरि नामा सचु सोई । नानक नामि मिलै वडिआई दूजै भाइ पति खोई ॥ ३ ॥ भगता कै घरि कारजु साचा हरि गुण सदा वखाणे राम । भगति खजाना आपे दीआ कालु कंटकु मारि समाणे राम । कालु कंटकु मारि समाणे हरि मनि भाणे नामु निधानु सचु पाइआ । सदा अखुटु कदे न निखुटै हरि दीआ सहजि सुभाइआ । हरि जन ऊचे सद ही ऊचे गुर कै सबदि सुहाइआ । नानक आपे बखसि मिलाए जुगि जुगि सोभा पाइआ ॥ ४ ॥ १ ॥ २ ॥

भक्तों के मान का रक्षक एकमात्र परमात्मा ही है, जो युग-युग से उनकी रक्षा करता आया है। सच्चा भक्त वही हो सकता है, जो गुरु के आदेशों पर आचरण करता है और अपने मन से अहंकार को दूर हटा देता है। गुरु-शब्दों के द्वारा अहंकार का विनाश तभी सम्भव है, जब भगवान की महती कृपा हो और उसका नाम जपा जाय। गुरुमुख जीव दिन-रात सच्ची भक्ति करते हैं, ऐसी भक्ति जो गुरु ने सिखाई होती है। भक्तों का आचरण हमेशा सत्यमय होता है और वे निर्मल नाम का उच्चारण करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सत्यस्वरूप परमात्मा के दरबार में सुशोभित होते हैं और सदैव ही सत्य का व्यापार करते हैं ॥ १ ॥ भक्तों की जाति, प्रतिष्ठा सब परमात्मा स्वयं है, क्योंकि वे सदैव हरि-नाम में लीन रहते हैं। वे हरि-भक्ति द्वारा अहंभाव को अपने भीतर से नष्ट कर देते हैं और उन्हें गुणावगुण की पहचान हो जाती है। गुणावगुण को पहचाननेवाले और हरि-नाम का बखान करनेवाले भक्तों को परमात्मा के भय में भक्ति मधुर लगने लगती है। वे रात-दिन भक्ति करते हैं और

गृहस्थी में ही त्यागी बन जाते हैं। भक्ति में रत होने से मन सदा निर्मल रहता है और परमात्मा की लग्न लगती है। गुरु नानक का कथन है कि भक्त रात-दिन हरि के द्वार पर उसका नाम पुकारता है ॥ २ ॥ मन के संकेतों पर चलनेवाले (मनमुख) गुरु के बिना भक्ति करना चाहता है, किन्तु सतगुरु के बिना भक्ति नहीं होती। मनमुख के भीतर अहंकार और मोह-माया के रोग व्याप्त होते हैं और वह जन्म-मरण के चक्कर में दुःख पाता है। आवागमन में दुःखी मनमुख द्वैतभाव के कारण समूची सृष्टि को ख़राब करता है, किन्तु गुरु के अभाव में तत्त्वज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता। भक्तिविहीन संसार अस्थिर और भ्रमित रहता है, अन्त में उसे पश्चात्ताप भी होता है, किन्तु हरि-नाम की सच्चाई को करोड़ों में से कोई विरल ही पहचानता है। गुरु नानक का कथन है कि प्रभु के सच्चे नाम से प्रतिष्ठा प्राप्त होती है और द्वैतभाव से मनुष्य प्रतिष्ठाहीन हो जाता है ॥ ३ ॥ भक्तों के घर में हरिगुण-गान का समारोह मनाया जाता है। भक्त (अपनी भक्ति के कारण) परमात्मा के दरबार में स्थान प्राप्त करता है, परमात्मा स्वयं उसके संकटों को काट देता है; (भक्त के लिए) यमराज के कष्टों का निराकरण हरि-कृपा से स्वयमेव हो जाता है और भक्त नाम के सच्चे कोष को प्राप्त करता है। नाम का ख़ज़ाना कभी कम नहीं होगा, क्योंकि इसकी उपलब्धि स्वयं परमात्मा में स्थिरमन होने से होती है; हरि-भक्त सर्वोच्च होते हैं क्योंकि वे परमात्मा के शब्दों में सुहाते हैं। इसलिए गुरु नानक का कथन है कि जिस जीव को परमात्मा स्वयं कृपापूर्वक अपना लेता है, वह युग-युग में प्रतिष्ठित हो जाता है ॥ ४ ॥ १ ॥ २ ॥

॥ सूही महला ३ ॥ सबदि सचै सचु सोहिला जिथै सचे का होइ वीचारो राम। हउमै सभि किलविख काटे साचु रखिआ उरिधारे राम। सचु रखिआ उरधारे दुतरु तारे फिरि भवजलु तरणु न होई। सचा सतिगुरु सची बाणी जिनि सचु विखालिआ सोई। साचे गुण गावै सचि समावै सचु वेखै सभु सोई। नानक साचा साहिबु साची नाई सचु निसतारा होई ॥ १ ॥ साचै सतिगुरि साचु बुझाइआ पति राखै सचु सोई राम। सचा भोजनु भाउ सचा है सचै नामि सुखु होई राम। साचै नामि सुखु होई मरै न कोई गरभि न जूनीवासा। जोती जोति मिलाई सचि समाई सचि नाइ परगासा। जिनी सचु जाता से सचे होए अनदिनु सचु धिआइनि। नानक सचु नामु जिन हिरदै वसिआ ना वीछुड़ि दुखु पाइनि ॥ २ ॥ सची बाणी सचे गुण गावहि

तितु घरि सोहिला होई राम। निरमल गुण साचे तनु मनु साचा विचि साचा पुरखु प्रभु सोई राम। सभु सचु वरतै सचो बोलै जो सचु करै सु होई। जह देखा तह सचु पसरिआ अवरु न दूजा कोई। सचे उपजै सचि समावै मरि जनमै दूजा होई। नानक सभु किछु आपे करता आपि करावै सोई॥ ३॥ सचे भगत सोहहि दरवारे सचो सचु वखाणे राम। घट अंतरे साची बाणी साचो आपि पछाणे राम। आपु पछाणहि ता सचु जाणहि साचे सोझी होई। सचा सबदु सची है सोभा साचे ही सुखु होई। साचि रते भगत इक रंगी दूजा रंगु न कोई। नानक जिस कउ मसतकि लिखिआ तिसु सचु परापति होई॥ ४॥ २॥ ३॥

हरि का सच्चा गुणगान गुरु के सच्चे शब्दों द्वारा होता है और उसमें सत्यस्वरूप परमात्मा पर विचार किया जाता है। इससे अहंकार और पाप नष्ट हो जाते हैं और परम सत्य मन में बिराजता है। सत्य को मन में धारने से दुस्तर संसार-सागर भी पराजित हो जाता है, भवजल-तरण की समस्या भी सरल हो जाती है। परमात्मा की कृपा से ही सच्चा सतगुरु और उसकी सच्ची वाणी प्राप्त होती है, जीव सत्यस्वरूप परमात्मा के गुण गाता है, उसी सत्य में लीन हो जाता है और तब सत्य का दर्शन करता है। गुरु नानक का कथन है कि परमात्मा सत्य है, उनका नाम भी सत्य है और उसी सच्चे नाम का स्मरण करने से मुक्ति प्राप्त होती है॥ १॥ सच्चे सतगुरु की सहायता से ही सत्यस्वरूप परमात्मा की पहचान होती है और उसी जीव की सच्ची प्रतिष्ठा विद्यमान है। जीव सत्य का भोजन पाता है, सत्य के भावों में विचरण करता है और परम सत्य की निकटता का सुख प्राप्त करता है। सच्चे नाम के जपने से ऐसे अमर सुख की प्राप्ति होती है कि जीव का आवागमन मिट जाता है और वह गर्भयोनियों के वास से बच जाता है, उसकी आत्मा परमात्मा के आलोक में मिल जाती है और उस पर सच्चा प्रभु-नाम प्रकट होता है। परम सत्य को पहचानकर जीव स्वयं सत्यस्वरूप हो जाता है और रात-दिन सत्य में ही ध्यानस्थ रहता है। गुरु नानक का कथन है कि ऐसा परम सत्यनाम जिस जीव के हृदय में बस जाता है, उसे कभी हरि-विरह का दुःख नहीं होता॥ २॥ गुरु की सच्ची वाणी गानेवाले जीव को नित्य खुशियाँ प्राप्त होती हैं। उसके गुण सच्चे होते हैं, उसका तन-मन पवित्र हो जाता है और उसके मन-मन्दिर में स्वयं सत्यस्वरूप परमात्मा निवास करता है। (उसके लिए चतुर्दिक्) सत्य व्याप्त होता है और परमात्मा की इच्छा में उसे अडिग

विश्वास होने लगता है। वह जिधर देखता है उसे सत्य का ही प्रसार नज़र पड़ता है, वह अन्य कुछ नहीं मानता (अपने चतुर्दिक् सर्वस्व को) वह सत्य में से उत्पन्न और सत्य में ही विलीन होनेवाला मानता है। वह जान लेता है कि द्वैतभाव आवागमन का कारण होता है। गुरु नानक का कथन है कि परमात्मा सब कुछ करता है और स्वेच्छा से सब कुछ करवाता भी है ॥ ३ ॥ सत्य का बखान करनेवाले सच्चे भक्त परमात्मा के दरबार में सुशोभित होते हैं। उनके मन में गुरु की सच्ची वाणी शोभती है और वे अपने को पहचानने लगते हैं। आत्म-पहचान से ही सत्य की पहचान होती है और जीव परमात्मा का ज्ञान पा लेता है। तब वह सत्यस्वरूप परमात्मा की सच्ची शोभा का गुणगान करता हुआ सुख प्राप्त करता है। वे भक्त, जो एकमात्र हरि के रंग में रँग जाते हैं, वे ही परम सत्य को पहचानते हैं। गुरु नानक का कथन है कि जिन जीवों का उत्तम भाग्य होता है, वे ही सत्यस्वरूप परमात्मा को प्राप्त करते हैं ॥४॥२॥ ३ ॥

॥ सूही महला ३ ॥ जुग चारे धन जे भवै बिनु सतिगुर सोहागु न होई राम। निहचलु राजु सदा हरि केरा तिसु बिनु अवरु न कोई राम। तिसु बिनु अवरु न कोई सदा सचु सोई गुरमुखि एको जाणिआ। धन पिर मेलावा होआ गुरमती मनु मानिआ। सतिगुरु मिलिआ ता हरि पाइआ बिनु हरि नावै मुकति न होई। नानक कामणि कंतै रावे मनि मानिऐ सुखु होई ॥ १ ॥ सतिगुरु सेवि धन बालड़ीए हरि वरु पावहि सोई राम। सदा होवहि सोहागणी फिरि मैला वेसु न होई राम। फिरि मैला वेसु न होई गुरमुखि बूझै कोई हउमै मारि पछाणिआ। करणी कार कमावै सबदि समावै अंतरि एको जाणिआ। गुरमुखि प्रभु रावे दिन राती आपणा साची सोभा होई। नानक कामणि पिरु रावे आपणा रवि रहिआ प्रभु सोई ॥ २ ॥ गुर की कार करे धन बालड़ीए हरि वरु देइ मिलाए राम। हरि कै रंगि रती है कामणि मिलि प्रीतम सुखु पाए राम। मिलि प्रीतम सुखु पाए सचि समाए सचु वरतै सभ थाई। सचा सीगारु करे दिनु राती कामणि सचि समाई। हरि सुखदाता सबदि पछाता कामणि लइआ कंठि लाए। नानक महली महलु पछाणै गुरमती हरि पाए ॥ ३ ॥ सा धन बाली धुरि मेली मेरै प्रभि आपि मिलाई राम। गुरमती घटि चानणु होआ प्रभु रवि रहिआ सभ

थाई राम । प्रभु रवि रहिआ सभ थाई मंनि वसाई पूरबि लिखिआ पाइआ । सेज सुखाली मेरे प्रभ भाणी सचु सीगारु बणाइआ । कामणि निरमल हउमै मलु खोई गुरमति सचि समाई । नानक आपि मिलाई करतै नामु नवैनिधि पाई ॥ ४ ॥ ३ ॥ ४ ॥

यदि जीव-स्त्री चारों युगों में भ्रमती रहे तो भी सतगुरु के बिना परमात्मा रूपी सुहाग उसे नहीं मिल सकता । संसार में एकमात्र परमात्मा ही अटल है, उसके बिना दूसरा कोई नहीं । उसके बिना दूसरा सत्य कोई नहीं है, केवल गुरुमुख ही उसे पहचानता है । गुरु की कृपा से ही तथा उसके आदेशानुसार आचरण करने से ही जीव रूपी स्त्री और परमात्मा रूपी पति का मिलाप सम्भव होता है । सतगुरु के मिलने से हरि की प्राप्ति होती है और हरि का नाम जपने से मुक्ति मिलती है । गुरु नानक का कथन है कि जब जीव-स्त्री प्रभु-पति के साथ संयोग करती है, तो परमसुख को प्राप्त होती है ॥ १ ॥ ऐ मन्दबुद्धि जीवात्मा रूपी स्त्री ! यदि तुझे परमात्मा रूपी पति को प्राप्त करना है, तो सहजभाव से सतगुरु की सेवा कर (ऐसा करने से) तुझे कभी वैधव्य का सामना नहीं करना पड़ेगा, तेरा सुहाग अमर होगा । (मैला वेश से कवि का अभिप्राय वैधव्य से है ।) मलिन वेश से बचने का एकमात्र ढंग अहंकार को मार कर जाग्रति प्राप्त करने में है, जो कि गुरु की शिक्षानुसार चलनेवाली जीव रूपी स्त्री भलीभाँति जानती है । इसीलिए वह सत्कर्म करती है । 'गुरु' शब्द में लीन रहती है और अन्तरात्मा में प्रभु को पहचानती है । गुरुमुख जीवात्मा रात-दिन अपने स्वामी के साथ रमण करती हुई प्रतिष्ठा लाभ करती है । गुरु नानक कहते हैं कि जीवात्मा रूपी स्त्री अपने प्रभु-पति में ऐसे समा जाती है कि जैसे परमात्मा हम सबमें समाया हुआ है ॥ २ ॥ ऐ बाल बुद्धि वाली जीवात्मा रूपी स्त्री ! तू यदि गुरु के आदेशों को अपना ले तो उसकी कृपा से तुझे परमात्मा रूपी वर की प्राप्ति हो सकती है । हरि में जीवात्मा की रति होने से वह अपने प्रियतम को मिलती और सुख प्राप्त करती है । वह अपने प्रियतम को मिलकर सुख पाती है, चतुर्दिक् सत्य को व्याप्त देखती है और स्वयं उसी सत्य में विलीन हो जाती है । सत्य में विलीन होनेवाली जीवात्मा रूपी कामिनी रात-दिन सत्य का श्रृंगार करती है, और सुखदाता हरि रूपी पति उसकी पुकार को सुनकर उसे गले लगा लेता है । गुरु नानक का कथन है कि स्त्री अपने पति के घर पहुँच जाती है और गुरु के बताये मार्ग पर चलते हुए परमात्मा को पा लेती है ॥ ३ ॥ जीवात्मा रूपी स्त्री प्रभु के दरबार से ही मिलन के भाग्य लेकर आती है और स्वयं परमात्मा (कृपा करके) उसे अपने में मिला लेता

है। गुरु-उपदेश को मानने से शरीर आलोकित हो उठता है और उस परम प्रकाश में परमात्मा सब जगह व्याप्त दीख पड़ता है। सर्वव्यापक हरि को जीव मन में धारण करता है और पूर्वलिखित भाग्य-फल को भोगता है। सत्य का श्रृंगार धारण करनेवाली जीवात्मा रूपी स्त्री की सेज पर प्रभु-पति रमण करता है। गुरुबोध को पानेवाली जीवात्मा अहंकार के मेल को दूर कर सत्य में ही विलीन हो जाती है और (गुरु नानक का कथन है कि) परमात्मा स्वयं उसे नाम-दान देकर नवनिधियों की स्वामिनी बना देता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ ४ ॥

॥ सूही महला ३ ॥ हरि हरे हरि गुण गावहु हरि गुरमुखे पाए राम। अनदिनो सबदि रवहु अनहद सबद वजाए राम। अनहद सबद वजाए हरि जीउ घरि आए हरि गुण गावहु नारी। अनदिनु भगति करहि गुर आगै साधन कंत पिआरी। गुर का सबदु वसिआ घट अंतरि से जन सबदि सुहाए। नानक तिन घरि सद ही सोहिला हरि करि किरपा घरि आए ॥ १ ॥ भगता मनि आनंदु भइआ हरि नामि रहे लिवलाए राम। गुरमुखे मनु निरमलु होआ निरमल हरि गुण गाए राम। निरमल गुण गाए नामु मंनि वसाए हरि की अम्रित बाणी। जिन्ह मनि वसिआ सेई जन निसतरे घटि घटि सबदि समाणी। तेरे गुण गावहि सहजि समावहि सबदे मेलि मिलाए। नानक सफल जनमु तिन केरा जि सतिगुरि हरि मारगि पाए ॥ २ ॥ संत संगति सिउ मेलु भइआ हरि हरि नामि समाए राम। गुर कै सबदि सद जीवन मुकत भए हरि कै नामि लिव लाए राम। हरि नामि चितु लाए गुरि मेलि मिलाए मनूआ रता हरि नाले। सुखदाता पाइआ मोहु चुकाइआ अनदिनु नामु सम्हाले। गुर सबदे राता सहजे माता नामु मनि वसाए। नानक तिन घरि सद ही सोहिला जि सतिगुर सेवि समाए ॥ ३ ॥ बिनु सतिगुर जगु भरमि भुलाइआ हरि का महलु न पाइआ राम। गुरमुखे इकि मेलि मिलाइआ तिन के दूख गवाइआ राम। तिन के दूख गवाइआ जा हरि मनि भाइआ सदा गावहि रंगि राते। हरि के भगत सदा जन निरमल जुगि जुगि सद ही जाते। साची भगति करहि दरि जापहि घरि दरि सचा सोई। नानक सचा सोहिला सची सचु बाणी सबदे ही सुखु होई ॥ ४ ॥ ४ ॥ ५ ॥

हरि-रंग में रँगकर, हरि के गुणों को गाते हुए गुरुमुख जीव 'हरि' को प्राप्त कर लेता है। वह रात-दिन 'हरि' शब्द में रमता है और अनाहत शब्द में ध्यान लगाता है। अनाहत शब्द का श्रवण करनेवाले जीव सदा हरिगुण-गान में मग्न रहते हैं। ऐसी जीवात्माएँ गुरु की भक्ति में संलग्न होकर प्रभु-कन्त का प्यार प्राप्त कर लेती हैं। गुरु का शब्द जीव के भीतर निवसित है और अन्तर में प्रवेश करनेवाली आत्मा प्राप्त कर लेती है। गुरु नानक का कथन है कि जिस पिण्ड में परमात्मा प्रकट है, वहाँ सदैव उल्लास छाया रहता है ।। १ ।। भक्तों के मन में यह उल्लास हरि-नाम में ध्यानस्थ होने से उपजता है; गुरु के द्वारा उनका मन निर्मल हो जाता है और वे निर्मल प्रभु के गुण गाते हैं। परमात्मा की अमृतवाणी को वे निर्मल मन से गाते हैं। जिनके मन में, घट-घट में व्याप्त प्रभु की वाणी प्रकट है वे मुक्त हो जाते हैं। हे परमात्मा ! वे जीव सहजावस्था में तुम्हारा गुणगान करते हैं और गुरु-शब्दों में ही लीन रहते हैं। गुरु नानक का कथन है कि वे जीव धन्य हैं, उनका जन्म सफल है, जो सतगुरु के द्वारा हरि-मार्ग पर लगा दिये जाते हैं ।। २ ।। वह जीवात्मा, जो सतसंगति में रहती है, हरि-नाम में मन लगाती है। गुरु के शब्दों के सहारे जीवनमुक्त स्थिति में प्रभु के नाम में आसक्त होती है। मन में हरि-नाम के जागने से सतगुरु की प्राप्ति होती है और मन परमात्मा में रत होता है। सुखदाता प्रभु के मिलने से जीव का मोह नष्ट होता है और वह रात-दिन प्रभु का नाम स्मरण करता है। गुरु की वाणी से जीव सहजावस्था में स्थिर होकर प्रभु-नाम को मन में बसा लेता है। गुरु नानक का कहना है कि जो जीव सतगुरु द्वारा अपना लिये जाते हैं, उनके यहाँ सदैव प्रसन्नता के गीत गाये जाते हैं ।। ३ ।। (सच तो यह है कि) सतगुरु का आश्रय पाये बिना संसार भ्रमजाल में फंसा है, उसे हरि की प्राप्ति नहीं हो सकती। गुरु के द्वारा ही उसके दुःख दूर हो सकते हैं और वह प्रभु से ऐक्य प्राप्त कर सकता है। मन में परमात्मा बोध को धारण किये, दुःखों से मुक्त वह जीव सदैव प्रभु का स्तुति-गान करता है। युग-युग में हरिभक्त निर्मल गंगा की भाँति अवतरित होते हैं; सच्ची भक्ति द्वारा वे सत्यस्वरूप परमात्मा के दरबार में सुशोभित होते हैं। गुरु नानक का कथन है कि सच्चा उल्लास गुरु की सच्ची वाणी और परमात्मा के शब्द में ही निहित है ।। ४ ।। ४ ।। ५ ।।

।। सूही महला ३ ।। जे लोड़हि वरु बालड़ीए ता गुर चरणी चितु लाए राम। सदा होवहि सोहागणी हरि जीउ मरै न जाए राम। हरि जीउ मरै न जाए गुर कै सहजि सुभाए सा धन कंत पिआरी। सचि संजमि सदा है निरमल गुर कै सबदि

सीगारी। मेरा प्रभु साचा सद ही साचा जिनि आपे आपु उपाइआ। नानक सदा पिरु रावे आपणा जिनि गुर चरणी चितु लाइआ ॥ १ ॥ पिरु पाइअड़ा बालड़ीए अनदिनु सहजे माती राम। गुरमती मनि अनदु भइआ तितु तनि मैलु न राती राम। तितु तनि मैलु न राती हरि प्रभि राती मेरा प्रभु मेलि मिलाए। अनदिनु रावे हरि प्रभु अपणा विचहु आपु गवाए। गुरमति पाइआ सहजि मिलाइआ अपणे प्रीतम राती। नानक नामु मिलै वडिआई प्रभु रावे रंगि राती ॥ २ ॥ पिरु रावे रंगि रातड़ीए पिर का महलु तिन पाइआ राम। सो सहो अति निरमलु दाता जिनि विचहु आपु गवाइआ राम। विचहु मोहु चुकाइआ जा हरि भाइआ हरि कामणि मनि भाणी। अनदिनु गुण गावै नित साचे कथे अकथ कहाणी। जुग चारे साचा एको वरतै बिनु गुर किनै न पाइआ। नानक रंगि रवै रंगि राती जिनि हरि सेती चितु लाइआ ॥ ३ ॥ कामणि मनि सोहिलड़ा साजन मिले पिआरे राम। गुरमती मनु निरमलु होआ हरि राखिआ उरिधारे राम। हरि राखिआ उरिधारे अपना कारजु सवारे गुरमती हरि जाता। प्रीतमि मोहि लइआ मनु मेरा पाइआ करम बिधाता। सतिगुरु सेवि सदा सुखु पाइआ हरि वसिआ मंनि मुरारे। नानक मेलि लई गुरि अपुनै गुर कै सबदि सवारे ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

हे बाल बुद्धि वाली जीवात्मा रूपी स्त्री ! यदि तुझे पति प्राप्त करना है, तो गुरु के चरणों में ध्यान लगा। तभी तुझे परमात्मा रूपी अमर सुहाग की प्राप्ति होगी, जो कभी जन्मता-मरता नहीं। गुरु-सरीखे शान्त और अडिग स्वभाव द्वारा जो जीवात्मा रूपी स्त्री परमात्मा-पति की बनती है, वह उसे प्यारी लगती है। सत्यस्वरूप संयम द्वारा वह सदैव निर्मल रहती है और गुरुमुख के शब्दों द्वारा श्रृंगार करती है। मेरा प्रभु सदैव सत्यस्वरूप है, उसने स्वयं अपने आप का निर्माण किया है। गुरु नानक का कथन है कि केवल वे जीवात्माएँ ही प्रभु-पति का संयोग प्राप्त करती हैं, जो गुरु के चरणों में ध्यान लगाती हैं ॥ १ ॥ ऐ मुग्धा जीवात्मा ! परमात्मा रूपी पति को पाकर तुम रात-दिन सहज में उन्मत्त रहती हो। गुरु-उपदेशों के कारण तुम्हें परमानन्द की प्राप्ति हुई है और अब कभी तुम्हारे शरीर में मैल लगने (वैधव्य) की कोई सम्भावना नहीं रह गयी। जिसे परमात्मा स्वयं वरण कर लेता है, वह कभी मलिन नहीं हो सकती। उसका अहमत्व नष्ट हो जाता है और वह रात-दिन पति-प्रभु

का गुणगान करती है। गुरु की शिक्षा पाकर वह सहजभाव में लीन अपने प्रियतम में लग्न लगाती है। गुरु नानक का कथन है कि प्रभु के रंग में रँग जानेवाले को ही प्रतिष्ठा प्राप्त होती है ॥ २ ॥ जो जीवात्मा प्यारे प्रभु के रंग में मस्त रहती है, उसी का नाम जपती है, वही पतिगृह में प्रवेश करती है। वह पति परमनिर्मल स्वामी है और जीवात्मा के अहम् को दूर कर देता है। परमात्मा रूपी पति को जब जीवात्मा रूपी पत्नी प्रिय लगती है, तो वह उसके मोह-माया रूपी दुर्गुणों को नष्ट कर देता है। जीवात्मा प्रभु-कृपा से उसका स्तुतिगान करती है, और परमात्मा की अनिर्वचनीय कथा को कहने का सामर्थ्य प्राप्त कर लेती है। वह सत्य-स्वरूप परमात्मा चारों युगों में व्याप्त है, किन्तु गुरु के बिना उस तक किसी की गति नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि हरि से प्यार करनेवाली और उसी के रंग में मस्त नारी (जीवात्मा) ही उसे प्राप्त कर सकती है ॥ ३ ॥ जीवात्मा रूपी कामिनी जब अपने साजन के गीत गाती है, तो वह उसके नैकट्य को पा लेती है; गुरु द्वारा प्रबोधन पाकर उसका मन निर्मल हो जाता है और वह उस निर्मल चित्त में परमात्मा को धारण करती है। मन में हरि को धारण कर वह अपने सब कार्य सँवारती है और गुरु-पथ का अनुसरण करती है। वह आत्मा रूपी कामिनी अपने प्रियतम पर मन न्यौछावर कर देती है और कर्मफल के प्रदाता प्रभु को प्राप्त करती है। सतगुरु की शरण लेने से वह परमसुख को प्राप्त करती है और मन में परमात्मा को बसा लेती है। गुरु नानक का कथन है कि गुरु के शब्दों में सँवरकर वह स्वयं गुरु से संयोग प्राप्त कर लेती है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

॥ सूही महला ३ ॥ सोहिलड़ा हरि राम नामु गुर सबदी वीचारे राम। हरि मनु तनो गुरमुखि भीजै राम नामु पिआरे राम। राम नामु पिआरे सभि कुल उधारे राम नामु मुखि बाणी। आवण जाण रहे सुखु पाइआ घरि अनहद सुरति समाणी। हरि हरि एको पाइआ हरि प्रभु नानक किरपा धारे। सोहिलड़ा हरि राम नामु गुर सबदी वीचारे ॥ १ ॥ हम नीवी प्रभु अति ऊचा किउकर मिलिआ जाए राम। गुरि मेली बहु किरपा धारी हरि कै सबदि सुभाए राम। मिलु सबदि सुभाए आपु गवाए रंग सिउ रलीआ माणे। सेज सुखाली जा प्रभु भाइआ हरि हरि नामि समाणे। नानक सोहागणि सा वडभागी जे चलै सतिगुर भाए। हम नीवी प्रभु अति ऊचा किउकरि मिलिआ जाए राम ॥ २ ॥ घटि घटे सभना विचि एको एको

राम भतारो राम । इकना प्रभु दूरि वसै इकना मनि आधारो राम । इकना मन आधारो सिरजणहारो वडभागी गुरु पाइआ । घटि घटि हरि प्रभु एको सुआमी गुरमुखि अलखु लखाइआ । सहजे अनदु होआ मनु मानिआ नानक ब्रहम बीचारो । घटि घटे सभना विचि एको एको राम भतारो राम ॥ ३ ॥ गुरु सेवनि सतिगुरु दाता हरि हरि नामि समाइआ राम । हरि धूड़ि देवहु मै पूरे गुर की हम पापी मुकतु कराइआ राम । पापी मुकतु कराए आपु गवाए निज घरि पाइआ वासा । बिबेक बुधी सुखि रैणि विहाणी गुरमति नामि प्रगासा । हरि हरि अनदु भइआ दिनु राती नानक हरि मीठ लगाए । गुरु सेवनि सतिगुरु दाता हरि हरि नामि समाए ॥४॥६॥७॥५॥७॥१२॥

प्रभु की गुणस्तुति हरि-नाम जपने में ही है, जिसका सही भाव गुरुवाणी से ही जाना जा सकता है। गुरुवाणी द्वारा तन-मन हरि-रंग में रँगा जाता है और जीव को हरि-नाम प्यारा लगता है। राम-नाम के उच्चारण से परमात्मा से प्यार बढ़ता है और नाम-जाप करनेवाले का समूचा वंश मुक्ति पा जाता है। उसका आवागमन मिट जाता है, उसे सुख की प्राप्ति होती है और उसकी आत्मा उच्चतम आत्मिक आनन्द में लीन हो जाती है। गुरु नानक का कथन है कि परमात्मा की कृपा से नाम जपनेवाला स्वयं नाम्नि को प्राप्त होता है। परमात्मा की गुणस्तुति का सही ज्ञान गुरुवाणी के माध्यम से ही मिलता है ॥ १ ॥ हम नीच हैं प्रभु महानतर है; हम उसे कैसे मिल सकते हैं ? यह तो गुरु ही यदि कृपा करे तो अपनी शिक्षाओं द्वारा वह सहज ही हरि को मिला दे। जो आत्मा सहज में शब्द श्रवण करती है, वह अपने अहंकार को नष्ट करके प्रेमपूर्वक प्रभु के संग विचरती है। हरि-नाम में लीन होकर वह प्रभु-पति के सेज पर रमण करती है। गुरु नानक का विश्वास है कि सतगुरु की सेवा में रहनेवाली जीवात्मा सौभाग्यशालिनी होती है और परमात्मा रूपी सुहाग को प्राप्त करती है। अन्यथा हम बहुत नीच हैं और परमात्मा उच्चतम है, हमारा मिलन इससे क्योंकर सम्भव हो सकता है ? ॥ २ ॥ प्रत्येक चेतन जीव में परमात्मा व्याप्त है, वही सबका मालिक है। कुछ ऐसे जीव भी हैं जिनसे प्रभु-पति दूर रहता है और कुछ के हृदय में बसता है। कुछ जीवात्माओं के मन का आधार सर्जक परमात्मा स्वयं होता है और सौभाग्य से वे गुरु को प्राप्त कर लेते हैं। परमात्मा सबका मालिक है, घट-घट में व्याप्त है, केवल गुरुमुख ही उस अदृश्य को दृश्य कर पाता है। सहज में ही उसे आनन्द मिलता है, और, गुरु नानक का कथन है कि परमात्मा

की जानकारी पाकर जीवात्मा उस सर्वव्यापक और सर्वस्वामी प्रभु को प्रकट में पा लेता है ॥ ३ ॥ गुरु की सेवा में लीन हरि-नाम जपनेवाला जीव सर्वप्रदाता ईश्वर को देखता है। गुरु हमें सत्यस्वरूप परमात्मा की धूल देकर हमें पापमुक्त करा लेता है। पाप से मुक्त होकर जीव निरहंकारी बनता है और अपने मूल में विलीन हो जाता है। उसमें विवेकबुद्धि जाग्रत् होती है; दुःख का अँधेरा टूट जाता है और गुरु-मार्ग पर चलने से उसे प्रभु-नाम का आलोक प्राप्त होता है। गुरु नानक का विश्वास है कि उस जीव को परमानन्द उपलब्ध है और वह रस में लीन हो जाता है। गुरु की सेवा द्वारा ईश्वर को पानेवाला जीव प्रभु-नाम में लीन होता है ॥ ४ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ५ ॥ ७ ॥ १२ ॥

रागु सूही महला ४ छंत घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सतिगुरु पुरखु मिलाइ अवगण विकणा गुण रवा बलिराम जीउ । हरि हरि नामु धिआइ गुरबाणी नित नित चवा बलिराम जीउ । गुरबाणी सद मीठी लागी पाप विकार गवाइआ । हउमै रोगु गइआ भउ भागा सहजे सहजि मिलाइआ । काइआ सेज गुर सबदि सुखाली गिआन तति करि भोगो । अनदिनु सुखि माणे नित रलीआ नानक धुरि संजोगो ॥१॥ सतु संतोखु करि भाउ कुड़मु कुड़माई आइआ बलिराम जीउ । संत जना करि मेलु गुरबाणी गावाईआ बलिराम जीउ । बाणी गुर गाई परमगति पाई पंच मिले सोहाइआ । गइआ करोधु ममता तनि नाठी पाखंडु भरमु गवाइआ । हउमै पीर गई सुखु पाइआ आरोगत भए सरीरा । गुरपरसादी ब्रहमु पछाता नानक गुणी गहीरा ॥ २ ॥ मनमुखि विछुड़ी दूरि महलु न पाए बलि गई बलिराम जीउ । अंतरि ममता कूरि कूड़ु विहाझे कूड़ि लई बलिराम जीउ । कूड़ु कपटु कमावै महा दुखु पावै विणु सतिगुर मगु न पाइआ । उझड़ पंथि भ्रमै गावारी खिनु खिनु धके खाइआ । आपे दइआ करे प्रभु दाता सतिगुरु पुरखु मिलाए । जनम जनम के विछुड़े जन मेले नानक सहजि सुभाए ॥ ३ ॥ आइआ लगनु गणाइ हिरदै धन ओमाहीआ बलिराम जीउ । पंडित पाधे आणि पती बहि वाचाईआ बलिराम जीउ । पती वाचांई मनि वजी वधाई जब साजन सुणे घरि आए । गुणी

गिआनी बहि मता पकाइआ फेरे ततु दिवाए। वरु पाइआ पुरखु अगंमु अगोचरु सद नवतनु बाल सखाई। नानक किरपा करि कै मेले विछुड़ि कदे न जाई ॥ ४ ॥ १ ॥

हे प्रभु ! मैं तुम पर बलिहार हूँ; कृपा करके मुझे सर्वशक्तिमान् सतगुरु से मिला दो, ताकि मैं अपने अवगुणों को दूर करके गुणों का स्मरण कर सकूँ। हरि का नाम जपूँ, नित्यप्रति गुरुवाणी का पाठ करूँ —ऐसा बोध मुझे दो; मैं तुम पर बलिहार हूँ। गुरुवाणी अतीव मधुर अभिव्यक्ति है, जो कि मन के पापों और विकारों का नाश करती है। इससे अहम् का रूप मिटता है, भय दूर होता है और जीवात्मा सहजावस्था में लीन हो जाती है। गुरुवाणी की कमाई करनेवाली शरीर रूपी सेज हर प्रकार से श्रमहारी हो गयी है अर्थात् वाणी से जो तत्त्वज्ञान प्राप्त हुआ, उससे परमात्मा के सामीप्य का आनन्द मिलने लगा है। गुरु नानक का कथन है कि जिसके भाग्य में यह संयोग है, वह रात-दिन नित्यप्रति सुख लाभ करता है ॥ १ ॥ सत्य और सन्तोष रूपी गुरु उसकी समाधि है, जो कि आत्मा रूपी स्त्री की सगाई परमात्मा रूपी वर से करता है। (यहाँ गुरु को समाधि कहा गया है, क्योंकि वह आत्मा को परमात्मा से मिलाता है।) हे प्रभु ! मैं तुम पर बलिहार हूँ, क्योंकि तुमने सन्तजनों को मिलाकर गुरुवाणी का उच्चारण करवाया है। गुरुवाणी के गाने से परमगति प्राप्त होती है और सन्तों की इस अभिव्यक्ति में सब प्रकार के कार्य सम्पन्न हो जाते हैं। क्रोध, ममता, पाखण्ड, भ्रम सब तत्त्व (गुरुवाणी के सम्मुख) मुँह छिपा लेते हैं; अहंकार की पीड़ा नष्ट हो जाती है और शरीर को स्वास्थ्य-सुख प्राप्त होता है। गुरु नानक का कथन है कि गहनगुणों वाला परमात्मा गुरु की कृपा से ही पहचाना जा सकता है ॥ २ ॥ मनमुख (मनोविकारों द्वारा प्रेरित) जीवात्मा परमात्मा से बिछुड़कर उसकी शरण से दूर हो जाता है और विरह-दुःख में जलता है। उसके भीतर ममता मिथ्यात्व के कारण मिथ्या आचरण करती और मिथ्या द्वारा छली जाती है। वह मिथ्या कपट का अर्जन करती हुई दुःखों के प्रवाह में बहती है, किन्तु सतगुरु के बिना मार्ग पा जाना असम्भव है। मनमुख गँवार उजाड़ रास्तों पर भ्रमता है, हर पल तिरस्कृत होता है। यदि परमात्मा की दया हो जाय, उसे सबल सतगुरु प्राप्त हो तो वह उसे समर्थ परमात्मा से मिला सकता है। गुरु नानक का कथन है कि ऐसे मनमुख जीव जन्म-जन्म से बिछुड़े होकर भी गुरु-कृपा से सहज समाधि में लीन हो जाते हैं ॥ ३ ॥ गुरु रूपी समाधि शुभ मुहूर्त में हृदय रूपी स्त्री को प्रभु-पति के मिलन-उत्साह में संलग्न करता है, तब सन्तजन रूपी पण्डित, पुरोहित आदि पत्रा बाँचकर आत्मा का परमात्मा से गठजोड़ कर

देते हैं। विवाहप्रक्रिया सम्पन्न होने से और घर में ही साजन को पा लेने से हृदय आनन्दित हो उठता है, अन्ततः सन्तजन के निश्चयानुसार तत्काल भाँवरे दी जाती हैं। जीवात्मा रूपी स्त्री को चिरयुवा बाल्यकाल का प्रेमी अगम अगोचर प्रभु-पति प्राप्त हो जाता है। गुरु नानक का कथन है कि परमात्मा स्वयं कृपा करके आत्मा को संग मिला लेता है और फिर कभी नहीं बिछुड़ता ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ सूही महला ४ ॥ हरि पहिलड़ी लाव परविरती करम द्रिड़ाइआ बलिराम जीउ। बाणी ब्रहमा वेदु धरमु द्रिड़हु पाप तजाइआ बलिराम जीउ। धरमु द्रिड़हु हरि नामु धिआवहु सिम्रिति नामु द्रिड़ाइआ। सतिगुरु गुरु पूरा आराधहु सभि किलविख पाप गवाइआ। सहज अनंदु होआ वड भागी मनि हरि हरि मीठा लाइआ। जनु कहै नानकु लाव पहिली आरंभु काजु रचाइआ ॥ १ ॥ हरि दूजड़ी लाव सतिगुरु पुरखु मिलाइआ बलिराम जीउ। निरभउ भै मनु होइ हउमै मैलु गवाइआ बलिराम जीउ। निरमलु भउ पाइआ हरि गुण गाइआ हरि वेखै रामु हदूरे। हरि आतम रामु पसारिआ सुआमी सरब रहिआ भरपूरे। अंतरि बाहरि हरि प्रभु एको मिलि हरि जन मंगल गाए। जन नानक दूजी लाव चलाई अनहद सबद वजाए ॥ २ ॥ हरि तीजड़ी लाव मनि चाउ भइआ बैरागीआ बलिराम जीउ। संत जना हरि मेलु हरि पाइआ वडभागीआ बलिराम जीउ। निरमलु हरि पाइआ हरि गुण गाइआ मुखि बोली हरि बाणी। संत जना वडभागी पाइआ हरि कथीऐ अकथ कहाणी। हिरदै हरि हरि हरि धुनि उपजी हरि जपीऐ मसतकि भागु जीउ। जनु नानकु बोले तीजी लावै हरि उपजै मनि बैरागु जीउ ॥ ३ ॥ हरि चउथड़ी लाव मनि सहजु भइआ हरि पाइआ बलिराम जीउ। गुरमुखि मिलिआ सुभाइ हरि मनि तनि मीठा लाइआ बलिराम जीउ। हरि मीठा लाइआ मेरे प्रभ भाइआ अनदिनु हरि लिव लाई। मन चिंदिआ फलु पाइआ सुआमी हरि नामि वजी वाधाई। हरि प्रभि ठाकुरि काजु रचाइआ धन हिरदै नामि विगासी। जनु नानकु बोले चउथी लावै हरि पाइआ प्रभु अविनासी ॥ ४ ॥ २ ॥

[गुरुजी ने जीवन का आदर्श जीव-स्त्री और प्रभु-पति का विवाह माना है। इस मिलाप की पूर्ति के लिए गुरुजी ने तैयारी की भावना

से 'लवैं' (फेरे या भाँवरें) नाम से यह वाणी लिखी है। इसमें एक-एक फेरे को आध्यात्मिक तैयारी के रूप में लिया गया है।] परमात्मा रूपी पुरोहित ने पहला फेरा सम्पन्न करवाते हुए जीव को प्रवृत्ति कर्म में संलग्न रहने का उपदेश दिया है (प्रवृत्ति से घर-गृहस्थी के पालन और धर्मानुसार आचरण का अभिप्राय है।) हम ऐसे पुरोहित पर बलिहार जाते हैं। गुरुवाणी को ही ब्रह्मा और उसकी रचना वेद-रूप में मानने को कहा, यही धर्म है, इसी से पाप नष्ट होते हैं। धर्म पर दृढ़ रहने, हरि-नाम का ध्यान करने और प्रभु का स्मरण करने का उपदेश दिया। सत्यस्वरूप गुरु की आराधना करने से सब प्रकार के पापों का नाश हो जाता है; सौभाग्य से सहज आनन्द की प्राप्ति होती है और मधुरतम हरि-नाम का सुख मिलता है। गुरु नानक कहते हैं कि हमको इस प्रकार आत्मा-परमात्मा के विवाह की रस्म पूरी करते हुए गुरु रूपी पुरोहित ने पहले फेरे का उपदेश दिया ॥ १ ॥ अध्यात्म के दूसरे फेरे में प्रभु-कृपा से समर्थ सतगुरु की प्राप्ति होती है (अर्थात् धर्मग्रन्थों आदि के अध्ययन से दैवी स्थिति में गुण-युक्त हुई आत्मा दूसरी स्थिति में परमात्मा रूपी पति के समीप बैठती है)। जीवात्मा मन से निर्भय हो जाता है, उसमें से अहंकार का मैल धुल जाता है और वह परमात्मा पर बलि-बलि जाता है। (पति-मिलन का सहज डर) उसके भीतर निर्मल भय होता है, गुलामी वाला डर नहीं, इसीलिए वह अपने प्रभु-पति का गुणगान करती है और परमात्मा को साक्षात् सम्मुख देखती है। सर्वव्यापक परमात्मा के प्रसार को जान लेती है और अपने स्वामी में मन रमाती है। तब उसे बाहर और भीतर दोनों ओर प्रभु साक्षात् होते हैं और वह सन्तजनों के साथ मिलकर खुशी के गीत गाने लगती है। दास नानक का कथन है कि दूसरे फेरे में जीवात्मा के भीतर अनाहत शब्द की ध्वनि होने लगती है ॥ २ ॥ तीसरे फेरे में जीव-स्त्री के भीतर वैराग्य का चाव पैदा होता है। (स्त्री में भय की स्थिति के बाद प्रायः पति के लिए प्रेम पैदा होता है, किन्तु यहाँ यह प्रेम मन की चंचलता का द्योतक न होकर वैराग्य का आधार होता है। पीहर के सम्बन्ध टूटते हैं, पति के प्यार में उन्मत्त हो पत्नी सारे संसार के प्रति विरक्त हो जाती है।) सन्तजनों ने मिलकर इस फेरे पर सौभाग्य का आशीर्वाद दिया है, जिससे जीवात्मा रूपी पत्नी को चिरनिर्मल प्रभु-पति का मिलाप होता है और वह उसकी गुणस्तुति में संलग्न हो जाती है। सन्तों का कहना है कि यह स्थिति किसी सौभाग्यशाली को मिलती है और वही उस परमात्मा के गुण कथन कर सकता है। सौभाग्य के ही कारण वह जीवात्मा हरि का नाम जपता है और उसके हृदय में निरन्तर हरि-हरि की ध्वनि उपजने लगती है। इसलिए, दास नानक का कहना है कि तीसरे फेरे में जीव-स्त्री के मन में वैराग्य का चाव पैदा हो जाता है ॥ ३ ॥

अध्यात्म पथ पर चौथा फेरा आत्मावधू को सहज की स्थिति में ले जाता है, जहाँ वह अपने परमभर्तार पर बलिहारी जाती है। वह सही अर्थों में गुरु के द्वारा सहजानन्द को प्राप्त करती है और हरि की मधुरता के आस्वादन में लीन हो जाती है। हरि का आस्वाद इतना आकर्षक है कि वहाँ रात-दिन उसी में मग्न रहती है। उसे मनोवाञ्छित वर की प्राप्ति होती है और वह हरि-नाम की बधाइयों को बराबर समेटती चलती है। परमात्मा रूपी स्वामी ने जीवात्मा रूपी पत्नी के साथ विवाह का यह समारोह रचाया है, जिसमें स्त्री परमुल्लासमय हो गयी है। दास नानक का कथन है कि विवाह का यह चौथा फेरा आत्मा को अविनाशी प्रभु से सदा के लिए मिला देता है ॥ ४ ॥ २ ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रागु सूही छंत महला ४ घरु २ ॥

गुरमुखि हरि गुण गाए। हिरदै रसन रसाए। हरि रसन रसाए मेरे प्रभ भाए मिलिआ सहजि सुभाए। अनदिनु भोग भोगे सुखि सोवै सबदि रहै लिव लाए। वडै भागि गुरु पूरा पाईऐ अनदिनु नामु धिआए। सहजे सहजि मिलिआ जगजीवनु नानक सुंनि समाए ॥ १ ॥ संगति संत मिलाए। हरि सरि निरमलि नाए। निरमलि जलि नाए मैलु गवाए भए पवितु सरीरा। दुरमति मैलु गई भ्रमु भागा हउमै बिनठी पीरा। नदरि प्रभू सतसंगति पाई निजघरि होआ वासा। हरि मंगल रसि रसन रसाए नानक नामु प्रगासा ॥ २ ॥ अंतरि रतनु बीचारे। गुरमुखि नामु पिआरे। हरि नामु पिआरे सबदि निसतारे अगिआनु अधेरु गवाइआ। गिआनु प्रचंडु बलिआ घटि चानणु घर मंदर सोहाइआ। तनु मनु अरपि सीगार बणाए हरि प्रभ साचे भाइआ। जो प्रभु कहै सोई परु कीजै नानक अंकि समाइआ ॥ ३ ॥ हरि प्रभि काजु रचाइआ। गुरमुखि वीआहणि आइआ। वीआहणि आइआ गुरमुखि हरि पाइआ साधन कंत पिआरी। संत जना मिलि मंगल गाए हरि जीउ आपि सवारी। सुरि नर गण गंधरब मिलि आए अपूरब जंञ बणाई। नानक प्रभु पाइआ मै साचा ना कदे मरै न जाई ॥४॥१॥३॥

गुरु के आदेशानुसार जिस जीवात्मा ने प्रभु का गुणगान किया, उसने मन तथा जिह्वा द्वारा परमरस को प्राप्त किया। जिह्वा से परमात्मा का

नाम दुहरानेवाला जीव प्रभु की इच्छा से सहजावस्था में समा गया। रात-दिन वह आनन्द-उल्लास का भोग करता सुख-शान्ति से जीवन व्यतीत करता और प्रेमपूर्वक प्रभु के शब्द में लीन रहता। सच्चे गुरु की उपलब्धि सौभाग्य से होती है और उसकी कृपा से जीवात्मा रात-दिन प्रभु-नाम का ध्यान करता है। गुरु नानक का कथन है कि ऐसा जीव सहज में ही परब्रह्म में विलीन हो जाता है ॥ १ ॥ सतसंगति में रहते हुए सन्तों से मिलाप होता है। हरि-नाम के निर्बल सरोवर में जीवात्मा स्नान करता है और निर्मल जल में स्नान करके मैल धो डालने से शरीर पवित्र हो जाता है। कुमति का मैल धुल जाने से भ्रम दूर हुआ और अहम् की पीड़ा नष्ट हो गयी। परमात्मा की कृपा से मनुष्य को साधु-संगति मिलती है और वह अपने असली घर परमात्मा के दरबार में निवास करने लगता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम के मंगलकारी रसबोध से जीव में प्रकाश पैदा होता है ॥ २ ॥ जो जीवात्मा हृदय में विवेक-रत्न पैदा करता है और गुरु के द्वारा नाम को प्यार करने लगता है, हरि-नाम में उसकी लौ लगती है, तो शब्द-श्रवण से उसे मोक्षलाभ होता है और उसका अज्ञानान्धकार समाप्त हो जाता है। ज्ञान के प्रचण्ड प्रकाश से मनुष्य के हृदय में प्रकाश होता है और घट-घट में दीप्त हो उठता है। जीवात्मा रूपी स्त्री प्रभु-इच्छा के अनुसार तन-मन समर्पित कर सुशोभित होती है। जो कुछ प्रभु का आदेश होता है, उसे भलीभाँति करने से, गुरु नानक कहते हैं, जीवात्मा प्रभु में लीन हो जाता है ॥ ३ ॥ परमात्मा ने स्वयं विवाह रचाया, जीव गुरु के द्वारा ब्याहने आया, तब उस जीवात्मा रूपी स्त्री को गुरु-कृपा से सत्यस्वरूप परमात्मा रूपी कन्त प्राप्त हुआ। (ऐसे शुभ विवाह के अवसर पर) सन्तजनों ने मिलकर मंगलगीत गाये और प्रभु ने स्वयं दुलहन को अपनाया। इस विवाह में देवता, देवताओं के सेवक गन्धर्व आदि ने मिलकर अपूर्व बारात सजाई। गुरु नानक का कथन है कि इस प्रकार जीवात्मा ने सच्चा परमात्मा पा लिया, जो अमर है अजर है, कभी मरता-जन्मता नहीं ॥ ४ ॥ १ ॥ ३ ॥

रागु सूही छंत महला ४ घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ आवहो संत जनहु गुण गावह गोविंद केरे राम। गुरमुखि मिलि रहीऐ घरि वाजहि सबद घनेरे राम। सबद घनेरे हरि प्रभ तेरे तू करता सभ थाई। अहिनिसि जपी सदा सालाही साच सबदि लिव लाई। अनदिनु सहजि रहै रंगि राता राम नामु रिद पूजा। नानक गुरमुखि एकु पछाणै

अवरु न जाणै दूजा ॥ १ ॥ सभ महि रवि रहिआ सो प्रभु अंतरजामी राम। गुरसबदि रवै रवि रहिआ सो प्रभु मेरा सुआमी राम। प्रभु मेरा सुआमी अंतरजामी घटि घटि रविआ सोई। गुरमति सचु पाईऐ सहजि समाईऐ तिसु बिनु अवरु न कोई। सहजे गुण गावा जे प्रभ भावा आपे लए मिलाए। नानक सो प्रभु सबदे जापै अहिनिसि नामु धिआए ॥ २ ॥ इहु जगो दुतरु मनमुखु पारि न पाई राम। अंतरे हउमै ममता कामु क्रोधु चतुराई राम। अंतरि चतुराई थाइ न पाई बिरथा जनमु गवाइआ। जम मगि दुखु पावै चोटा खावै अंति गइआ पछुताइआ। बिनु नावै को बेली नाही पुतु कुटंबु सुतु भाई। नानक माइआ मोहु पसारा आगै साथि न जाई ॥ ३ ॥ हउ पूछउ अपना सतिगुरु दाता किन बिधि दुतरु तरीऐ राम। सतिगुर भाइ चलहु जीवतिआ इव मरीऐ राम। जीवतिआ मरीऐ भउजलु तरीऐ गुरमुखि नामि समावै। पूरा पुरखु पाइआ वडभागी सचि नामि लिव लावै। मति परगासु भई मनु मानिआ राम नामि वडिआई। नानक प्रभु पाइआ सबदि मिलाइआ जोती जोति मिलाई ॥ ४ ॥ १ ॥ ४ ॥

हे सन्तो, मुझ पर दया करनेवालो ! आओ, हम सब मिलकर परमात्मा के गुणों का बखान करें, गुरु के द्वारा घर में ही अनेक मंगलवाद्य बज रहे हैं। (यहाँ पाँच शब्द या पाँच ध्वनियों की अपेक्षा कवि ने अनेक शब्द का प्रयोग किया है; तात्पर्य यह है कि पाँच ध्वनियाँ पारस्परिक मेल से अनेक ध्वनियों में बदल जाती हैं।) उक्त अनेक ध्वनियों को सुनता हुआ जीव, हे प्रभु ! तुम्हारी शरण में आता है और हर प्रकार से तुम्हें सर्वरचयिता और सर्वव्यापक मानता है। रात-दिन तुम्हारी महिमा का गान करता है और सच्चे शब्द में ध्यान लगाता है। रात-दिन सहजावस्था में लीन रहता है और प्रभु-नाम को हृदय में धारण करता है। गुरु नानक का कथन है कि इस रहस्य को 'गुरु' के माध्यम से ही जाना जा सकता है, दूसरा कोई नहीं जान सकता ॥ १ ॥ वह अन्तर्यामी प्रभु सब जीवों में व्याप्त है। जो गुरु-शब्द द्वारा उसका स्मरण करता है, उसे वह सर्वव्यापक साक्षात् दीख पड़ता है। परमात्मा मेरा स्वामी है, अन्तर्यामी और घट-घट में बसनेवाला है। गुरु के उपदेशों से उसका सत्यस्वरूप पहचान में आता है। जीव सहजावस्था धारण करता है, प्रभु के बिना उसके लिए कुछ शेष नहीं रह जाता। स्वाभाविक रीति से जब जीव प्रभु का गुणगान

करता है और प्रभु अपने विरद की लाज से उस पर कृपा कर देता है, तो उसे अपने में विलीन कर लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा की पहचान गुरु के शब्दों से ही सम्भव होती है और रात-दिन नाम-स्मरण से जीव परमात्मा का ही रूप हो जाता है ॥ २ ॥ यह संसार-सागर कठिनता से पार किया जाता है, मन के संकेतों पर चलनेवाला (मनमुख) तो कभी पार उतर ही नहीं सकता। उसके मन में अहंकार, काम, क्रोध, ममता और चातुरी सदा बने रहते हैं। मन में चतुराई धारण करनेवाला जीव अपने मूल को नहीं पहचान सकता, व्यर्थ में ही जन्म गँवा देता है। यमदूतों के मार्ग पर चलकर वह निरन्तर दुःख पाता, आघात सहन करता और अन्ततः पश्चात्ताप करता है। (सच तो यह है कि) प्रभु-नाम के सिवा कोई वास्तविक मित्र नहीं, चाहे पुत्र-सपुत्र और कुटुम्ब के अनेक लोग वहाँ मौजूद हों। गुरु नानक कहते हैं कि माया-मोह के प्रसार के कारण कुछ भी साथ नहीं जाता है ॥ ३ ॥ मैं अपने सतगुरु दाता से पूछता हूँ कि संसार-सागर किस प्रकार तरा जा सकता है? (उत्तर यह है) जो जीव सतगुरु के आदेशानुसार आचरण करता है और जीते-जी मरता है (वही प्रभु को पहचानता है।) जीते-जी मरकर संसार-सागर से पार हुआ जा सकता है और गुरु के द्वारा नाम में लग्न बनती है। सच्चे नाम से प्यार करनेवाले भाग्यशाली पुरुष को परमपुरुष की प्राप्ति होती है। राम-नाम की प्रतिष्ठा से विवेक जाग्रत् होता है, और, गुरु नानक का कथन है कि प्रभु-कृपा से जीवात्मा को गुरु की भक्ति प्राप्त होती है और वह आत्मज्योति को परमज्योति में मिला देता है ॥ ४ ॥ १ ॥ ४ ॥

सूही महला ४ घरु ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गुरु संत जनो पिआरा मै मिलिआ मेरी त्रिसना बुझि गईआसे। हउ मनु तनु देवा सतिगुरै मै मेले प्रभ गुणतासे। धनु धंनु गुरू वड पुरखु है मै दसे हरि साबासे। वडभागी हरि पाइआ जन नानक नामि विगासे ॥ १ ॥ गुरु सजणु पिआरा मै मिलिआ हरि मारगु पंथु दसाहा। घरि आवहु चिरी विछुंनिआ मिलु सबदि गुरू प्रभ नाहा। हउ तुझु बाझहु खरी उडीणीआ जिउ जल बिनु मीनु मराहा। वडभागी हरि धिआइआ जन नानक नामि समाहा ॥ २ ॥ मनु दहदिसि चलि चलि भरमिआ मनमुखु भरमि भुलाइआ। नित आसा मनि चितवै मन त्रिसना भुख लगाइआ। अनता धनु धरि दबिआ

फिरि बिखु भालण गइआ। जन नानक नामु सलाहि तू बिनु नावै पचि पचि मुइआ ॥ ३ ॥ गुरु सुंदरु मोहनु पाइ करे हरि प्रेम बाणी मनु मारिआ। मेरै हिरदै सुधि बुधि विसरि गई मन आसा चिंत विसारिआ। मै अंतरि वेदन प्रेम की गुर देखत मनु साधारिआ। वडभागी प्रभ आइ मिलु जन नानक खिनु खिनु वारिआ ॥ ४ ॥ १ ॥ ५ ॥

हे सन्तजनो! मुझे प्यारे गुरु की प्राप्ति हुई है और मेरी तृष्णा सदा के लिए तृप्त हो गयी है। मैं सतगुरु को अपना तन-मन भेंट करता हूँ, जो मुझे प्रभु से मिलाता है। पूर्णपुरुष गुरु धन्य है, जो मुझे राह बताता है और परमात्मा के साथ मिलाता है। गुरु नानक का कथन है कि सौभाग्य से ही कोई प्रभु को प्राप्त करता और उसका नाम जपता है ॥ १ ॥ मुझे प्यारा गुरु प्राप्त हुआ है और उससे मैं परमात्मा तक पहुँचने का मार्ग पूछता हूँ। (जीव पुकार करता है कि) हे युगों से बिछुड़े मेरे प्रियतम! अब तो घर आओ, गुरु के शब्द द्वारा, हे प्यारे! तुम मुझे आ मिलो। मैं तुम्हारे बिना बहुत उदास हूँ; जैसे जल के बिना मछली की स्थिति होती है (वैसी मेरी है)। गुरु नानक का कथन है कि कोई सौभाग्यशाली जीव ही हरि-नाम का ध्यान करता है और उसी में लीन हो जाता है ॥ २ ॥ मनमुख जीव भ्रमों में पड़ा रहता है, उसका मन दसों दिशाओं में चलायमान रहता है। नित्यनवीन आशाओं के पीछे भागता और तृष्णा की भूख से पीड़ित होता है। उसके भीतर अनन्त धनराशि दबी पड़ी है, किन्तु वह विषाक्त धन (मायावी और वासनायुक्त तत्त्व) खोजता फिरता है। गुरु नानक कहते हैं कि जीव को प्रभु-नाम की स्तुति करनी चाहिए, क्योंकि प्रभु-नाम के बिना वह व्यर्थ में धक्के खाता जन्म गँवा देता है ॥ ३ ॥ सुन्दर और मनमोहक गुरु की खोज करके (मैंने) हरि-प्रेम की वाणी से मन को अनुलिप्त किया है। मेरे हृदय की सांसारिक चेतनाएँ नष्ट हो गयी हैं और मन की आशाएँ, चिन्ताएँ मैंने छोड़ दी हैं। अब मेरे भीतर केवल प्रेम की पीड़ा शेष है, लेकिन गुरु के दर्शन पाते ही शान्ति मिल गयी है। गुरु नानक कहते हैं कि जिस सौभाग्यशाली को परमात्मा मिल जाता है, वे उस पर क्षण-क्षण बलिहार जाते हैं ॥ ४ ॥ १ ॥ ५ ॥

॥ सूही छंत महला ४ ॥ मारेहिसु वे जन हउमै बिखिआ जिनि हरि प्रभ मिलण न दितीआ। देह कंचन वे वंनीआ इनि हउमै मारि विगुतीआ। मोहु माइआ वे सभ कालखा इनि मनमुखि मूड़ि सजुतीआ। जन नानक गुरमुखि उबरे गुरसबदी

हउमै छुटीआ ।। १ ।। वसि आणिहु वे जन इसु मन कउ मनु बासे जिउ नित भउदिआ । दुखि रैणि वे विहाणीआ नित आसा आस करेदिआ । गुरु पाइआ वे संत जनो मनि आस पूरी हरि चउदिआ ।। जन नानक प्रभ देहु मती छडि आसा नित सुखि सउदिआ ।। २ ।। सा धन आसा चिति करे राम राजिआ हरि प्रभ सेजड़ीऐ आई । मेरा ठाकुरु अगम दइआलु है राम राजिआ करि किरपा लेहु मिलाई । मेरै मनि तनि लोचा गुरमुखे राम राजिआ हरि सरधा सेज विछाई । जन नानक हरि प्रभ भाणीआ राम राजिआ मिलिआ सहजि सुभाई ।। ३ ।। इकतु सेजै हरि प्रभो राम राजिआ गुरु दसे हरि मेलेई । मै मनि तनि प्रेम बैरागु है राम राजिआ गुरु मेले किरपा करेई । हउ गुर विटहु घोलि घुमाइआ राम राजिआ जीउ सतिगुर आगै देई । गुरु तुठा जीउ राम राजिआ जन नानक हरि मेलेई ।।४।।२।।६।।५।।७।।६।।१८।।

हे सन्तजनो ! इस अहंकार के विष का नाश करो, यह परमात्मा के मिलाप में बाधक होता है । हे प्रियजनो ! मेरा यह शरीर कंचन-सा सुन्दर था, किन्तु इस अहंभावना ने इसे तोड़कर बेकार कर दिया है । मोह-माया की कालिमा ने मनमुखों को मूढ़ता से जोड़ दिया है । गुरु-कथन है कि जीवात्मा केवल गुरु के सहारे उबरता है और उसी के शब्दों की सहायता से अहंकार से मुक्ति पाता है ।। १ ।। हे भले लोगो ! इस मन को वश में लाने का प्रयास करो, अन्यथा यह पक्षी की तरह व्यर्थ चक्कर खाता रहेगा । हमारी रात दुःखों में बीतती है, क्योंकि हम आशाओं से बँधे हुए हैं । गुरु को पा जाने से तथा परमात्मा का नाम जपने से सब आशाएँ पूर्ण हो जाती हैं । गुरु नानक का कथन है कि प्रभु को समर्पित होनेवालों की बुद्धि अडिग हो जाती है और वे आशा-तृष्णा से मुक्त होकर सुख से सोते हैं ।। २ ।। वह जीव-स्त्री यदि आशा करती भी है तो केवल प्रभु-पति के सेज पर आने की आशा करती है । वह जानती है कि उसका स्वामी दयालु है, कृपालु है और शरण में आयी जीवात्मा रूपी स्त्री को अपने संग मिला लेने में समर्थ है । हे मेरे हरि प्रियतम ! मेरा मन-तन तुम्हारा आकांक्षी है और मैं श्रद्धापूर्वक सेज बिछाये हुए तुम्हारी प्रतीक्षा में हूँ । इसलिए, गुरु नानक का कथन है, हे प्रियतम! तुम शीघ्र ही सहज में आ मिलो ।। ३ ।। परमात्मा मेरी सेज पर विद्यमान है, किन्तु उस अदृश्य को देखने के लिए गुरु का सामर्थ्य अपेक्षित है । मेरे तन-मन में उसी की आसक्ति है, संसार से विरक्त होकर मैं गुरु की कृपा चाहता हूँ । मैं गुरु पर नित्य बलिहार जाता हूँ, जो मुझे परमात्मा के निकट पहुँचा देता है ।

गुरु नानक का कथन है कि जब गुरु सन्तुष्ट हो जाता है, तो वह जीव को परमात्मा से मिला देता है ॥ ४ ॥ २ ॥ ६ ॥ ५ ॥ ७ ॥ ६ ॥ १८ ॥

रागु सूही छंत महला ५ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सुणि बावरे तू काए देखि भुलाना । सुणि बावरे नेहु कूड़ा लाइओ कुसंभ रंगाना । कूड़ी डेखि भुलो अढु लहै न मुलो गोविद नामु मजीठा । थीवहि लाला अति गुलाला सबदु चीनि गुर मीठा । मिथिआ मोहि मगनु थी रहिआ झूठ संगि लपटाना । नानक दीन सरणि किरपानिधि राखु लाज भगताना ॥ १ ॥ सुणि बावरे सेवि ठाकुरु नाथु पराणा । सुणि बावरे जो आइआ तिसु जाणा । निहचलु हभ वैसी सुणि परदेसी संत संगि मिलि रहीऐ । हरि पाईऐ भागी सुणि बैरागी चरण प्रभू गहि रहीऐ । एहु मनु दीजै संक न कीजै गुरमुखि तजि बहु माणा । नानक दीन भगत भवतारण तेरे किआ गुण आखि वखाणा ॥ २ ॥ सुणि बावरे किआ कीचै कूड़ा मानो । सुणि बावरे हभु वैसी गरबु गुमानो । निहचलु हभ जाणा मिथिआ माणा संत प्रभू होइ दासा । जीवत मरीऐ भउजलु तरीऐ जे थीवै करमि लिखिआसा । गुरु सेवीजै अंम्रितु पीजै जिसु लावहि सहजि धिआनो । नानकु सरणि पइआ हरि दुआरै हउ बलि बलि सद कुरबानो ॥ ३ ॥ सुणि बावरे मतु जाणहि प्रभु मै पाइआ । सुणि बावरे थीउ रेणु जिनी प्रभु धिआइआ । जिनि प्रभु धिआइआ तिनि सुखु पाइआ वडभागी दरसनु पाईऐ । थीउ निमाणा सद कुरबाणा सगला आपु मिटाईऐ । ओहु धनु भाग सुधा जिनि प्रभु लधा हम तिसु पहि आपु वेचाइआ । नानक दीन सरणि सुखसागर राखु लाज अपनाइआ ॥ ४ ॥ १ ॥

हे मूर्ख जीव ! तू इस संसार को देख-देखकर क्यों भूला रहा है ? संसार का प्रेम मिथ्या होता है, कुसुम्भ के रंग की तरह कच्चा, जो कभी भी धुल सकता है । जिस मिथ्या वस्तु को देखकर तुम भूल गये, उसका मोल तो कौड़ियों में भी नहीं मिलता, जब कि दूसरी ओर हरि का नाम मजीठ जैसे पक्के रंग का है (एक बार लग जाए तो कभी उतरता नहीं) । हे जीव ! गुरु-कृपा से यदि तू शब्द-रहस्य को समझ ले तो तुझ

पर गाढ़ा लाल रंग चढ़ सकता है। झूठे मोह में पड़कर तो माया के संग लिपट रहा है। गुरु नानक का कहना है कि यदि तुम दैन्यभाव से कृपानिधि प्रभु की शरण में जाओ तो वह भक्तों की लाज रखनेवाला (तुम्हें भी सहारा देगा) ॥ १ ॥ हे मूर्ख ! तू प्राणनाथ परमात्मा की सेवा कर। सुन, जो इस संसार में आया है उसे जाना होता है। यह सब कुछ, जिसे तू निश्चल समझता है, मिट जायेगा। इसलिए, हे परदेशी आत्मा ! सन्तों का संग कर (उसी में कल्याण है)। हे जीव ! परमात्मा भाग्य से मिलता है, हमारा कर्तव्य उसके चरणों में पड़े रहना है। गुरु के द्वारा यदि जीवात्मा निःशंक होकर अपना अहम् त्याग दे और मन प्रभु को समर्पित कर दे तो, गुरु नानक कहते हैं कि वह परमात्मा भक्तों और दीनों को मुक्त करता है, उसके गुण अनिर्वचनीय हैं ॥ २ ॥ हे मूर्ख ! सुनो, क्यों मिथ्या अभिमान करते हो ? ये तुम्हारा गर्व-गुमान सब नष्ट हो जानेवाला है, निश्चय ही मिथ्या अभिमान का नाश होगा, इसलिए किसी हरिजन सन्त की दासता स्वीकार करो। यदि उसकी कृपा हो जाय तो जीते-जी मरकर भवसागर को तरा जा सकता है। हे हरि ! जिसको तुम अडिक समाधि प्रदान करते हो, वही गुरु की सेवा करता और नामामृत पीता है। गुरु नानक का कथन है कि गुरु की शरण लेनेवाले जीव पर वे सदैव बलिहारी और क़ुर्बान हैं ॥ ३ ॥ हे मूर्ख ! (प्रभु मिल भी जाय) तो यह न समझ लेना कि तुमने उसे पा लिया, तुम्हें तो प्रभु को पा लेनेवालों के चरणों की धूल हो जाना है। जो जीव प्रभु का नाम जपते हैं वे सुख पाते हैं और बड़े सौभाग्य से परमात्मा का दर्शन पा लेते हैं। हमें विनम्र होकर हर प्रकार के अहंकार का त्याग करके परमात्मा पर क़ुर्बान हो जाना है। वह सौभाग्यशाली धन्य है जो परमात्मा को पा लेता है, हम उस पर अपने को क़ुर्बान करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे सुखसागर परमात्मा ! मुझे अपनी शरण में अपना लो और मेरी लाज रखो ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ हरि चरण कमल की टेक सतिगुरि दिती तुसि कै बलिराम जीउ। हरि अंम्रिति भरे भंडार सभु किछु है घरि तिस कै बलिराम जीउ। बाबुलु मेरा वड समरथा करणकारण प्रभु हारा। जिसु सिमरत दुखु कोई न लागै भउजलु पारि उतारा। आदि जुगादि भगतन का राखा उसतति करि करि जीवा। नानक नामु महारसु मीठा अनदिनु मनि तनि पीवा ॥ १ ॥ हरि आपे लए मिलाइ किउ वेछोड़ा थीवई बलिराम जीउ। जिसनो तेरी टेक सो सदा सद जीवई बलिराम जीउ। तेरी टेक तुझै ते पाई साचे सिरजणहारा। जिस ते

खाली कोई नाही ऐसा प्रभू हमारा। संत जना मिलि मंगलु गाइआ दिनु रैनि आस तुम्हारी। सफलु दरसु भेटिआ गुरु पूरा नानक सद बलिहारी ॥ २ ॥ संम्हलिआ सचु थानु मानु महतु सचु पाइआ बलिराम जीउ। सतिगुरु मिलिआ दइआलु गुण अबिनासी गाइआ बलिराम जीउ। गुण गोविंद गाउ नित नित प्राण प्रीतम सुआमीआ। सुभ दिवस आए गहि कंठि लाए मिले अंतरजामीआ। सतु संतोखु वजहि वाजे अनहदा झुणकारे। सुणि भै बिनासे सगल नानक प्रभ पुरख करणैहारे ॥ ३ ॥ उपजिआ ततु गिआनु साहुरै पेईऐ इकु हरि बलिराम जीउ। ब्रहमै ब्रहमु मिलिआ कोइ न साकै भिन करि बलिराम जीउ। बिसमु पेखै बिसमु सुणीऐ बिसमादु नदरी आइआ। जलि थलि महीअलि पूरन सुआमी घटि घटि रहिआ समाइआ। जिस ते उपजिआ तिसु माहि समाइआ कीमति कहणु न जाए। जिसके चलत न जाही लखणे नानक तिसहि धिआए ॥ ४ ॥ २ ॥

सतगुरु ने कृपापूर्वक जीव को हरि-नाम का सहारा दिया, मैं उस पर बलिहार हूँ। हरि अमृत का भण्डार है और उसके घर पर सब कुछ उपलब्ध है। वह मेरा पिता है, वह महान् और सामर्थ्यवान् है, मेरा प्रभु सर्वकर्ता है। उसका स्मरण करने से कोई दुःख नहीं होता और जीव संसार-सागर से पार हो जाता है। वह सृष्टि के आरम्भ से ही भक्तों का रक्षक है, मैं उसी की स्तुति करते हुए जीवन जीता हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि उसका नाम-रस बहुत मीठा है, मैं प्रतिदिन उसी को पीता हूँ ॥ १ ॥ परमात्मा जिनको अपने संग मिला लेता है, उन्हें कभी बिछोड़ा नहीं होता। हे राम ! मैं तुम पर बलिहार हूँ; जिसे तेरा सहारा है, वह अमरता को पा जाता है। हे सत्यस्वरूप सर्जक ! तुम्हारा सहारा भी तुम्हीं से प्राप्त होता है। हमारा परमात्मा ऐसा व्यापक है कि कोई उसके प्रभाव से खाली नहीं। सन्तजन रात-दिन समवेत स्वर में उसी का स्तुतिगान करते हैं, उसी की आशा में जीते हैं। गुरु नानक ऐसे सच्चे गुरु पर सदा बलिहार जाते हैं, जिसके दर्शन मात्र से ही फल की प्राप्ति होती है ॥ २ ॥ सत्यस्वरूप परमात्मा के सच्चे स्थान का स्मरण करने से मान-प्रतिष्ठा मिलती है। प्रभु-कृपा से यदि दयालु गुरु मिल जाय, तो जीव उस अविनाशी परमात्मा की गुणस्तुति करता है। प्राणों से भी प्रिय परमात्मा के गुण नित्य गाता है। तब वह शुभ दिन भी आता है जब अन्तर्यामी परमात्मा के दर्शन होते हैं और वह प्रसन्न होकर जीव को गले से लगा लेता है। सत्य और सन्तोष की ध्वनि होती है और अनाहत वाद्य बजने लगते हैं अर्थात् अपूर्व

आनन्द प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु को पा जाने से सभी भय नष्ट हो जाते हैं ॥ ३ ॥ तब तत्त्वज्ञान उपजता है और लोक-परलोक (ससुराल और पीहर) में एकमात्र हरि ही दिखाई देने लगता है (मैं उस पर क़ुर्बान जाता हूँ)। वह ब्रह्म में मिल जाता है, कोई उसे अलग नहीं कर सकता (अभिप्राय ये कि आत्मा और परमात्मा के एक हो जाने से अभेद हो जाता है; यही मोक्ष है)। यह स्थिति देखने-सुनने में आश्चर्यमात्र है। मेरा स्वामी परमात्मा धरती, आकाश और जल, सब जगह समाया हुआ है। यह सृष्टि जिससे उपजती है उसी में समा जाती है, उसका मोल नहीं आँका जा सकता। गुरु नानक कहते हैं कि जिस परमात्मा के कारनामों को समझा नहीं जा सकता, उसका मात्र स्मरण ही किया जा सकता है ॥ ४ ॥ २ ॥

रागु सूही छंत महला ५ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गोबिंद गुण गावण लागे। हरि रंगि अनदिनु जागे। हरि रंगि जागे पाप भागे मिले संत पिआरिआ। गुर चरण लागे भरम भागे काज सगल सवारिआ। सुणि स्रवण बाणी सहजि जाणी हरि नामु जपि वड भागै। बिनवंति नानक सरणि सुआमी जीउ पिंडु प्रभ आगै ॥ १ ॥ अनहत सबदु सुहावा। सचु मंगलु हरि जसु गावा। गुण गाइ हरि हरि दूख नासे रहसु उपजै मनि घणा। मनु तंनु निरमलु देखि दरसनु नामु प्रभ का मुखि भणा। होइ रेण साधू प्रभ अराधू आपणे प्रभ भावा। बिनवंति नानक दइआ धारहु सदा हरि गुण गावा ॥ २ ॥ गुर मिलि सागरु तरिआ। हरि चरण जपत निसतरिआ। हरि चरण धिआए सभि फल पाए मिटे आवण जाणा। भाइ भगति सुभाइ हरि जपि आपणे प्रभ भावा। जपि एकु अलख अपार पूरन तिसु बिना नही कोई। बिनवंति नानक गुरि भरमु खोइआ जत देखा तत सोई ॥ ३ ॥ पतित पावन हरि नामा। पूरन संत जना के कामा। गुरु संतु पाइआ प्रभु धिआइआ सगल इछा पुंनीआ। हउ ताप बिनसे सदा सरसे प्रभ मिले चिरी विछुंनिआ। मनि साति आई वजी वधाई मनहु कदे न वीसरै। बिनवंति नानक सतिगुरि द्रिड़ाइआ सदा भजु जगदीसरै ॥ ४ ॥ १ ॥ ३ ॥

यदि जीवात्मा परमात्मा के गुण गाने लगे और हरि के रंग में रात-दिन जागकर हरिमय हो जाय, तो सब पाप नष्ट हो जाते हैं और प्यारा सतगुरु मिल जाता है। गुरु की शरण में जाने से सब भ्रम नष्ट हो जाते हैं और सब कार्य सम्पन्न होते हैं। वह जीव अपने कानों से गुणवाणी सुनकर सहज में ही ज्ञान को प्राप्त करता है और सौभाग्यपूर्वक हरि-नाम जपता है। गुरु नानक विनती करते हैं कि उनका तन-मन प्रभु के सन्मुख समर्पित है, परमात्मा उन्हें शरण दे ॥ १ ॥ हरि-गुण गाने से अनाहत शब्द गूंजरित हो उठा, सत्यस्वरूप परमात्मा का सुमंगलकारी यशोगान हुआ और हरि-कृपा से सब दुःख नष्ट हो गये। मन में बहुत अधिक उल्लास छा गया। प्रभु का दर्शन करने से तन-मन निर्मल हो गया और जीव मुँह से हरि-नाम उच्चरित करने लगा। जो जीव परमात्मा को याद करनेवाले साधुओं की चरणधूल हो जाते हैं, वे ही प्रभु-दरबार में सम्मानित होते हैं। गुरु नानक विनती करते हैं कि प्रभु-कृपा से वे सदा हरि की गुणस्तुति करते रहें ॥ २ ॥ गुरु से भेंट करनेवाला जीव भवसागर से पार हो जाता है। हरि के चरणों का ध्यान करने से उसे मोक्ष मिलता है। हरि-चरणों का ध्यान करने से उसे सब प्रकार के फल प्राप्त होते हैं और उसका आवागमन मिट जाता है। रागात्मिका भक्ति द्वारा हरि-नाम का जाप करके जीव प्रभु को अच्छा लगने लगता है। हे जीव! तू भी उस अपारपूर्ण और अलक्ष्य परमात्मा का भजन कर, उसके बिना और कोई सहारा नहीं। गुरु नानक विनती करते हैं कि गुरु की कृपा से भ्रमों का नाश होता है और जीव जिधर देखता है उधर प्रभु को पाता है ॥ ३ ॥ हरि-नाम पतित जीवों को भी पवित्र कर देता है। उससे ही सन्तों के सब कार्य सम्पन्न होते हैं। जब जीव गुरु को पा लेता है और उसके द्वारा परमात्मा का ध्यान करता है, तो उसकी सब इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं। अहंकार का ताप नष्ट होता है, सदा खुशी मिलती है और चिरवियुक्त परमात्मा से मेल होता है। मन में ऐसी अद्भुत शान्ति होती है जो कभी नहीं मिटती, चारों ओर आनन्द के बाजे बजने लगते हैं। गुरु नानक विनती करते हैं कि हे जीव! सतगुरु की दृढ़ भक्ति से सदा परमात्मा का ध्यान करो ॥ ४ ॥ १ ॥ ३ ॥

रागु सूही छंत महला ५ घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ तू ठाकुरो बैरागरो मै जेही घण चेरी राम। तूं सागरो रतनागरो हउ सार न जाणा तेरी राम। सार न जाणा तू वडदाणा करि मिहरंमति सांई। किरपा कीजै

सा मति दीजै आठ पहर तुधु धिआई। गरबु न कीजै रेण होवीजै ता गति जीअरे तेरी। सभ ऊपरि नानक का ठाकुरु मै जेही घण चेरी राम ॥ १ ॥ तुम्ह गउहर अति गहिर गंभीरा तुम पिर हम बहुरीआ राम। तुम वडे वडे वड ऊचे हउ इतनीक लहुरीआ राम। हउ किछु नाही एको तू है आपे आपि सुजाना। अंम्रित द्रिसटि निमख प्रभ जीवा सरब रंग रस माना। चरणह सरनी दासह दासी मनि मउलै तनु हरीआ। नानक ठाकुरु सरब समाणा आपन भावन करीआ ॥ २ ॥ तुझु ऊपरि मेरा है माणा तू है मेरा ताणा राम। सुरति मति चतुराई तेरी तू जाणाइहि जाणा राम। सोई जाणै सोई पछाणै जाकउ नदरि सिरंदे। मनमुखि भूली बहुती राही फाथी माइआ फंदे। ठाकुर भाणी सा गुणवंती तिन ही सभ रंग माणा। नानक की धर तू है ठाकुर तू नानक का माणा ॥ ३ ॥ हउ वारी वंञा घोली वंञा तू परबतु मेरा ओल्हा राम। हउ बलि जाई लख लख लख बरीआ जिनि भ्रमु परदा खोल्हा राम। मिटे अंधारे तजे बिकारे ठाकुर सिउ मनु माना। प्रभ जी भाणी भई निकाणी सफल जनमु परवाना। भई अमोली भारा तोली मुकति जुगति दरु खोल्हा। कहु नानक हउ निरभउ होई सो प्रभु मेरा ओल्हा ॥ ४ ॥ १ ॥ ४ ॥

हे स्वामी ! तू माया-अतीत है, मुझ सरीखी तेरी अनेक दासियाँ हैं। तू रत्नाकर सागर है, मैं तेरे सम्मुख बहुत क्षुद्र हूँ। तू विवेक है, कृपागार है, मैं तेरा अन्त नहीं पहचानता। हे प्रभु ! कृपा करके मुझे ऐसी बुद्धि दो कि आठों याम मैं तुम्हारा भजन करता रहूँ। हे जीव ! तेरी गति इसी में है कि तू अभिमान का त्याग कर गुरु की चरणधूल बन जा। गुरु नानक कहते हैं कि उनका स्वामी सबसे बड़ा है, जिसके द्वार पर उनके समान अनेक सेवक पड़े हैं ॥ १ ॥ हे परमात्मा ! तुम गहनगम्भीर और असीम हो। तुम हमारे प्रिय हो और मैं तुम्हारी स्त्री हूँ। तुम बहुत बड़े और ऊँचे हो, मैं बहुत छोटी हूँ। मैं कुछ भी नहीं, तुम सर्वस्व हो और अपने आप सब कुछ जानते हो। तुम्हारी थोड़ी सी भी अमृत-दृष्टि यदि मुझे मिले तो मुझे जीवन का समूचा रस-रंग प्राप्त हो जाता है। तुम्हारे चरणों में शरण मिलने से इस दासी का मन खिल उठता है और शरीर प्रफुल्लित हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा सर्वव्यापक है और स्वेच्छा से सब कार्य करता है ॥ २ ॥ हे परमात्मा ! मेरी प्रतिष्ठा, मेरा बल तुम्हीं हो। मेरी आत्मा, मेरी बुद्धि या चतुराई

तुम्हारे ही अधीन है। तुम्हारे समझाने से ही आलोकित होती है। जिस पर सृजनहार की कृपादृष्टि होती है, वही सब कुछ जान या पहचान सकता है। जो जीव मन के संकेत पर चलते हैं, वे पथभ्रष्ट हो जाते हैं और माया के फन्दे में जकड़े जाते हैं। (सच तो यह है) जो स्त्री (आत्मा) स्वामी को प्रिय लगती है, वही गुणवान होती है और उसे सब खुशियाँ प्राप्त होती हैं। हे प्रभु ! तुम ही गुरु नानक का आश्रय हो और तुम्हीं में नानक की प्रतिष्ठा सुरक्षित है ॥ ३ ॥ हे परमात्मा ! मैं तुम पर बार-बार क़ुर्बान हूँ, तुम पर्वत सरीखा मेरा सहारा हो (पर्वत की उपमा सुदृढ़ता की प्रतीक है)। मैं अपने उस स्वामी पर लाख-लाख बार बलिहार जाता हूँ, जिसने मेरे भ्रम का परदा दूर कर दिया है। स्वामी से दिल मिल जाने पर अज्ञान का अन्धकार दूर होता है और विकार नष्ट होते हैं। अपने प्रभु को भा जाने से जीव रूपी दुलहन बेपरवाह हो जाती है, उसका जन्म सफल हो जाता है। अपने प्रियतम का अमूल्य प्रेम पाकर उसे गरिमा प्राप्त होती है और उसके लिए मुक्ति का द्वार खुल जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा का सहारा पाकर वे निर्भय हो गये हैं ॥ ४ ॥ १ ॥ ४ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ साजनु पुरखु सतिगुरु मेरा पूरा तिसु बिनु अवरु न जाणा राम। मात पिता भाई सुत बंधप जीअ प्राण मनि भाणा राम। जीउ पिंडु सभु तिस का दीआ सरब गुणा भरपूरे। अंतरजामी सो प्रभु मेरा सरब रहिआ भरपूरे। ता की सरणि सरब सुख पाए होए सरब कलिआणा। सदा सदा प्रभ कउ बलिहारै नानक सद कुरबाणा ॥ १ ॥ ऐसा गुरु वडभागी पाईऐ जितु मिलिऐ प्रभु जापै राम। जनम जनम के किलविख उतरहि हरि संत धूड़ी नित नापै राम। हरि धूड़ी नाईऐ प्रभू धिआईऐ बाहुड़ि जोनि न आईऐ। गुरचरणी लागे भ्रम भउ भागे मनि चिंदिआ फलु पाईऐ। हरि गुण नित गाए नामु धिआए फिरि सोगु नाही संतापै। नानक सो प्रभु जीअ का दाता पूरा जिसु परतापै ॥ २ ॥ हरि हरे हरि गुणनिधे हरि संतन कै वसि आए राम। संत चरण गुर सेवा लागे तिनी परम पद पाए राम। परम पदु पाइआ आपु मिटाइआ हरि पूरन किरपा धारी। सफल जनमु होआ भउ भागा हरि भेटिआ एकु मुरारी। जिस का सा तिन ही मेलि लीआ जोती जोति समाइआ। नानक नामु निरंजन जपीऐ मिलि सतिगुर सुखु

पाइआ ॥ ३ ॥ गाउ मंगलो नित हरि जनहु पुंनी इछ सबाई राम । रंगि रते अपुने सुआमी सेती मरै न आवै जाई राम । अबिनासी पाइआ नामु धिआइआ सगल मनोरथ पाए । सांति सहज आनंद घनेरे गुरचरणी मनु लाए । पूरि रहिआ घटि घटि अबिनासी थान थनंतरि साई । कहु नानक कारज सगले पूरे गुरचरणी मनु लाई ॥ ४ ॥ २ ॥ ५ ॥

सत्यस्वरूप प्रभु मेरा प्रिय साजन है, उसके सिवा मैं किसी को नहीं पहचानती । (यहाँ आत्मा रूपी पत्नी अपने पति-प्रभु की चर्चा करते हुए अपने सतीत्व का परिचय देती है।) वास्तव में माता, पिता, भाई, पुत्र, सम्बन्धी, सब उसी में विद्यमान हैं, वही मेरे प्राणों का प्राण है । यह शरीर और आत्मा उसी का दिया हुआ है और वह सर्वगुणसम्पन्न है। वह मेरा प्रभु अन्तर्यामी है और सबके भीतर विद्यमान है। उसकी शरण में आनेवाला हर कोई सुख पाता और कल्याण अर्जित करता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसे स्वामी पर सदा क़ुर्बान जाता हूँ ॥ १ ॥ ऐसा गुरु सौभाग्य से ही प्राप्त होता है, जिसके सान्निध्य में परमात्मा का ज्ञान हो जाता है । उसे पाकर जन्म-जन्म के पाप धुल जाते हैं और जीव परमात्मा के सेवकों की चरणधूल में स्नान करता है । प्रभु की चरण-धूल में स्नान कर, पुनः उसका ध्यान करने से जीव योनि के बन्धन में नहीं आता । गुरु की शरण लेने से भ्रम-भय नष्ट हो जाते हैं और मनचाहा फल प्राप्त होता है । हरि का स्तुतिगान करने और नाम जपने से हमेशा के लिए शोक-सन्ताप का नाश हो जाता है । गुरु नानक कहते हैं कि वह प्रभु आत्मा का स्वामी है, उसी के प्रताप से अंश अंशी में विलीन होता है ॥ २ ॥ परमात्मा गुणों का भण्डार है और केवल सन्तों के वश में ही रहता है। जो जीव गुरोपदेशानुसार सत्संगति और सेवा में संलग्न होते हैं, वे परमपद को प्राप्त होते हैं । अभिमान को मिटाकर जो जीव अग्रसर होता है, उस पर ईश्वर की पूरी कृपा होती है और वह मोक्ष को प्राप्त करता है, उसका जन्म सफल हो जाता है, भय नष्ट होता है और परमात्मा से उसकी भेंट हो जाती है। जिस परमात्मा का वह अंश था, उसी में मिल जाता है; जैसे एक ज्योति दूसरी ज्योति में समा जाती है (मनुष्य की आत्मा रूपी ज्योति परमात्मा की परमज्योति में मिल जाती है) । गुरु नानक का कथन है कि सच्चे गुरु को पा जानेवाला जीव प्रभु के निर्मल नाम का जाप करता और सुखलाभ करता है ॥ ३ ॥ हे जीवो ! तुम नित्य हरि का स्तुतिगान करो, उससे तुम्हारी सब इच्छाएँ पूर्ण होंगी । जो जीवात्मा अपने पति-प्रभु के रंग में रँग जाता है, उसका जन्म-मरण समाप्त हो जाता है । प्रभु का नाम जपकर जो जीव अनश्वर परमात्मा को पाता

है, उसके सब मनोरथ पूरे हो जाते हैं, सहज शान्ति और गहन आनन्द को प्राप्त करता है, गुरु के चरणों में मन लगाने से उसे यह उपलब्धि होती है। वह अमर परमात्मा घट-घट में बसा है, सब जगहों पर विद्यमान है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के चरणों में एकाग्रचित्त होने से उनकी सब अपेक्षाएँ पूर्ण हो गयी हैं ॥ ४ ॥ २ ॥ ५ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ करि किरपा मेरे प्रीतम सुआमी नेत्र देखहि दरसु तेरा राम। लाख जिहवा देहु मेरे पिआरे मुखु हरि आराधे मेरा राम। हरि आराधे जम पंथु साधे दूखु न विआपै कोई। जलि थलि महीअलि पूरन सुआमी जत देखा तत सोई। भरम मोह बिकार नाठे प्रभु नेरहू ते नेरा। नानक कउ प्रभ किरपा कीजै नेत्र देखहि दरसु तेरा ॥ १ ॥ कोटि करन दीजहि प्रभ प्रीतम हरि गुण सुणीअहि अबिनासी राम। सुणि सुणि इहु मनु निरमलु होवै कटीऐ काल की फासी राम। कटीऐ जम फासी सिमरि अबिनासी सगल मंगल सुगिआना। हरि हरि जपु जपीऐ दिनु राती लागै सहजि धिआना। कलमल दुख जारे प्रभू चितारे मन की दुरमति नासी। कहु नानक प्रभ किरपा कीजै हरि गुण सुणीअहि अविनासी ॥ २ ॥ करोड़ि हसत तेरी टहल कमावहि चरण चलहि प्रभ मारगि राम। भवसागर नाव हरि सेवा जो चड़ै तिसु तारगि राम। भवजलु तरिआ हरि हरि सिमरिआ सगल मनोरथ पूरे। महा बिकार गए सुख उपजे बाजे अनहद तूरे। मन बांछत फल पाए सगले कुदरति कीम अपारगि। कहु नानक प्रभ किरपा कीजै मनु सदा चलै तेरै मारगि ॥ ३ ॥ एहो वरु एहा वडिआई इहु धनु होइ वडभागा राम। एहो रंगु एहो रस भोगा हरि चरणी मनु लागा राम। मनु लागा चरणे प्रभ की सरणे करण कारण गोपाला। सभु किछु तेरा तू प्रभु मेरा मेरे ठाकुर दीन दइआला। मोहि निरगुण प्रीतम सुख सागर संत संगि मनु जागा। कहु नानक प्रभि किरपा कीन्ही चरण कमल मनु लागा ॥ ४ ॥ ३ ॥ ६ ॥

हे मेरे प्रियतम स्वामी! कुछ ऐसी कृपा करो जो मैं तुम्हें अपनी आँखों से देख सकूँ। हे मेरे प्यारे! मुझे लाखों जिह्वाएँ दो, जिससे मैं सदा तुम्हारे नाम का उच्चारण करता रहूँ। हरि की आराधना करके और यममार्ग को विजित करके दुःखों की व्यापकता से ऊपर उठ जाऊँ। धरती, आकाश और

जल में मेरा स्वामी पूरित है, जिधर देखता हूँ उधर वही दीख पड़ता है। जीव के लिए भ्रम-मोह और विकार आदि दूर होते हैं और उसके लिए परमात्मा समीपतर होता है। गुरु नानक कहते हैं कि हे परमात्मा ! मुझ पर कृपा करो, ताकि मैं आँखों से तुम्हें भेंट सकूँ ॥ १ ॥ हे परमात्मा ! मुझे करोड़ों कान देना, जिनसे मैं अविनाशी परमात्मा के गुणों का श्रवण कर सकूँ। उन गुणों को सुन-सुनकर मेरा मन निर्मल होगा और यम का फन्दा कट जायेगा। अमर परमात्मा का स्मरण करके मौत के फन्दे को काटो और हर प्रकार की खुशियाँ और ज्ञान प्राप्त करो। दिन-रात हरि का नाम जपने से सहजावस्था में ध्यान लगे। सब प्रकार के पाप धुल जायँ और परमात्मा की कृपा से मन की कुमति का नाश हो। गुरु नानक कहते हैं कि यदि परमात्मा की कृपा हो, तभी अविनाशी प्रभु की गुणस्तुति का श्रवण हो सकता है ॥ २ ॥ हे प्रभु ! यदि मेरे करोड़ों हाथ हों तो मैं तुम्हारी सेवा में मग्न रहूँ और चरण हों तो मैं तुम्हारे रास्ते पर चलूँ। इस संसार-सागर को पार करने के लिए हरि-सेवा नौका के समान है, जिसमें चढ़कर पार हुआ जा सकता है। हरि-स्मरण करने से भवजल पार होता है और सब मनोरथ पूरे होते हैं। जीवन के सब विकार नष्ट हो जाते हैं, सुख उपजता है और आनन्द के बाजे बजते हैं; मनोवाञ्छित फलों की प्राप्ति होती है और अपरिमित जीवनमूल्य लब्ध होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे परमात्मा ! तुम्हारी कृपा से ही मन तुम्हारे मार्ग पर चलता है ॥ ३ ॥ हे परमात्मा! मेरे लिए यही आशीर्वाद, प्रतिष्ठा, धन, रसभोगादि हैं कि मेरा मन तुम्हारे चरणों में तल्लीन रहे। उस कर्तापुरुष परमात्मा के चरणों में मन का स्थिर होना ही उसकी शरण में जाना है। हे परमात्मा ! सब कुछ तुम्हारा है, किन्तु तुम दीनों पर दया करनेवाले मेरे स्वामी हो। हे प्रिय, सुखसागर ! मैं गुणहीन था, सन्तों की संगति में मेरा मन जाग्रत् हुआ है। गुरु नानक का कथन है कि परमात्मा की कृपा से ही जीव प्रभु-चरणों में संलग्न होता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ ६ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ हरि जपे हरि मंदरु साजिआ संत भगत गुण गावहि राम। सिमरि सिमरि सुआमी प्रभु अपना सगले पाप तजावहि राम। हरि गुण गाइ परम पदु पाइआ प्रभ की ऊतम बाणी। सहज कथा प्रभ की अति मीठी कथी अकथ कहाणी। भला संजोगु मूरतु पलु साचा अबिचल नीव रखाई। जन नानक प्रभ भए दइआला सरब कला बणि आई ॥ १ ॥ आनंदा वजहि नित वाजे पारब्रहमु मनि वूठा राम। गुरमुखे सचु करणी सारी बिनसे भ्रम भै झूठा राम। अनहद बाणी गुरमुखि

वखाणी जसु सुणि सुणि मनु तनु हरिआ। सरब सुखा तिस ही बणि आए जो प्रभि अपना करिआ। घर महि नवनिधि भरे भंडारा राम नामि रंगु लागा। नानक जन प्रभु कदे न विसरै पूरन जाके भागा ॥ २ ॥ छाइआ प्रभि छत्रपति कीन्ही सगली तपति बिनासी राम। दूख पाप का डेरा ढाठा कारजु आइआ रासी राम। हरि प्रभि फुरमाइआ मिटी बलाइआ साचु धरमु पुंनु फलिआ। सो प्रभु अपुना सदा धिआईऐ सोवत बैसत खलिआ। गुण निधान सुखसागर सुआमी जलि थलि महीअलि सोई। जन नानक प्रभ की सरणाई तिसु बिनु अवरु न कोई ॥ ३ ॥ मेरा घरु बनिआ बनु तालु बनिआ प्रभ परसे हरि राइआ राम। मेरा मनु सोहिआ मीत साजन सरसे गुण मंगल हरि गाइआ राम। गुण गाइ प्रभू धिआइ साचा सगल इछा पाईआ। गुर चरण लागे सदा जागे मनि वजीआ वाधाईआ। करी नदरि सुआमी सुखहगामी हलतु पलतु सवारिआ। बिनवंति नानक नित नामु जपीऐ जीउ पिंडु जिनि धारिआ ॥४॥४॥७॥

हरि-नाम जपने के लिए यह हरिमन्दिर बनाया गया है, जिसमें सन्त और भक्त लोग प्रभु का गुणगान करते हैं। अपने परमात्मा का निरन्तर स्मरण करते हुए सब पापों का नाश करते हैं। हरि की वाणी ऐसी उत्तम है कि इसके द्वारा परमात्मा का गुण गाकर मुक्ति मिलती है। परमात्मा की सहजावस्था प्राप्त करवानेवाली वाणी बड़ी मधुर और अनिर्वचनीय है। वह समय, वह अवसर बहुत उत्तम था, जब इस मन्दिर की अमर नीवँ रखी गयी थी। दास नानक का कहना है कि जब प्रभु की दया होती है, तो सब विधियाँ सफल हो जाती हैं ॥ १ ॥ जब मन में वाहिगुरु का निवास हो जाता है, तो चतुर्दिक् आनन्द के बाजे बजने लगते हैं। गुरु के आदेशानुसार व्यवहार करनेवाला जीव तब सत्कर्म करता और मिथ्या भय-भ्रम को दूर कर देता है। गुरु के द्वारा वह अनाहत वाणी का बखान करता है, जिसे सुन-सुन कर तन-मन आह्लादित हो उठता है। जिसे परमात्मा अपना लेता है, उसे सब सुख लब्ध होते हैं। उसके भीतर ही नवनिधियाँ और महान कोष भरे होते हैं और वह राम-नाम के रंग में लीन रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि जिनका भाग्य उत्तम है, उन्हें परमात्मा कभी विस्मृत नहीं होता ॥ २ ॥ उस पर सर्वसंरक्षक परमात्मा की छाया होती है और उसके समस्त ताप नष्ट हो जाते हैं। उसके मन में दु:खों और पापों का नाश हो जाता है, उसके शुभ कर्म प्रभु-दरबार में स्वीकार होते हैं। हरि की कृपा से उसकी

अला-बला नष्ट हो जाती है और सत्यधर्म तथा पुण्यलाभ होता है। ऐसा प्रभु सोते, बैठते, जागते, सदा सिमरण करना चाहिए। वह मालिक गुणों का सागर है और जल, थल, आकाश सब जगह व्याप्त है। (इसलिए) दास नानक पुकार करके कहते हैं कि उस परमात्मा की शरण ग्रहण करो, उसके बिना दूसरा कोई नहीं ॥ ३ ॥ प्रभु के चरण-स्पर्श करने से मेरा घर (यह तन-मन) उद्यान बन गया है (प्रभु की गन्ध चारों ओर फैल रही है)। परमात्मा के स्तुतिगान करने से मन मोहित हो गया और मेरा प्रियतम प्रभु प्रसन्न हो उठा। मैंने उसका गुण गाकर तथा उसका सच्चा नाम जपकर समस्त इच्छाओं को पूर्ण किया है। गुरु के चरणों का आश्रय पाकर मैंने चिरजागृति पाई है और मेरे मन में आनन्द के बाजे बज रहे हैं। परमात्मा की कृपादृष्टि होने से मेरा लोक-परलोक सँवर गया है। गुरु नानक विनती करते हैं कि जिस प्रभु ने मानव के तन-मन को आधार दिया है, नित्य उसका नाम स्मरण करें ॥ ४ ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ भै सागरो भै सागरु तरिआ हरि हरि नामु धिआए राम। बोहिथड़ा हरि चरण अराधे मिलि सतिगुर पारि लघाए राम। गुरसबदी तरीऐ बहुड़ि न मरीऐ चूकै आवण जाणा। जो किछु करै सोई भल मानउ ता मनु सहजि समाणा। दूख न भूख न रोगु न बिआपै सुखसागर सरणी पाए। हरि सिमरि सिमरि नानक रंगि राता मन की चिंत मिटाए ॥ १ ॥ संत जना हरि मंत्रु द्रिड़ाइआ हरि साजन वसगति कीने राम। आपनड़ा मनु आगै धरिआ सरबसु ठाकुरि दीने राम। करि अपुनी दासी मिटी उदासी हरि मंदरि थिति पाई। अनद बिनोद सिमरहु प्रभु साचा विछुड़ि कबहू न जाई। सा वडभागणि सदा सोहागणि राम नाम गुण चीन्हे। कहु नानक रवहि रंगि राते प्रेम महा रसि भीने ॥ २ ॥ अनद बिनोद भए नित सखीए मंगल सदा हमारै राम। आपनड़ै प्रभि आपि सीगारी सोभावंती नारे राम। सहज सुभाइ भए किरपाला गुण अवगण न बीचारिआ। कंठि लगाइ लीए जन अपुने राम नाम उरिधारिआ। मान मोह मद सगल बिआपी करि किरपा आपि निवारे। कहु नानक भै सागरु तरिआ पूरन काज हमारे ॥ ३ ॥ गुण गोपाल गावहु नित सखीहो सगल मनोरथ पाए राम। सफल जनमु होआ मिलि साधू एकंकारु धिआए राम। जपि

एक प्रभू अनेक रविआ सरब मंडलि छाइआ। ब्रहमो पसारा ब्रहमु पसरिआ सभु ब्रहमु द्रिसटी आइआ। जलि थलि महीअलि पूरि पूरन तिसु बिना नही जाए। पेखि दरसनु नानक बिगसे आपि लए मिलाए ॥ ४ ॥ ५ ॥ ८ ॥

हरि-नाम का स्मरण करने से जीव भवसागर से पार होता है, सतगुरु की कृपा से यदि वह जहाज़ रूपी हरिचरणों का आश्रय पाये (तभी यह सम्भव है)। गुरु के शब्दों से एक बार संसार में ऊँचा उठकर दोबारा जन्म-मरण के चक्कर से मुक्ति मिल जाती है। जो कुछ भी प्रभु-इच्छा हो उसे भला मानकर शिरोधार्य करने से ही मन सहजावस्था को प्राप्त करता है। तब उसे दुःख, भूख या रोग पीड़ित नहीं करते, क्योंकि वह सुखों के सागर अर्थात् परमात्मा की शरण पा लेता है। गुरु नानक का कथन है कि हे जीव! तू भी निरन्तर हरि का स्मरण कर, उसी के रंग में लीन होकर चिन्ताओं से मुक्त हो जा ॥ १ ॥ सन्तजनों की संगति में हरि-मन्त्र दृढ़ होता है और प्रियतम हरि वश में आता है। जब हम अपना मन हरि के हवाले कर देते हैं, तो वह भी हमें सर्वस्व प्रदान करता है। जब परमात्मा जीव को अपनी दासता में प्रवीण करता और हरिमन्दिर में स्थिर करता है तो सब उदासियाँ मिट जाती हैं। सत्यस्वरूप परमात्मा के स्मरण से सब प्रकार के आनन्द-विनोद प्राप्त होते हैं और जीव को कभी प्रिय-वियोग नहीं होता। जो जीवात्मा रूपी स्त्री राम-नाम के गुणों को पहचानती है, वह सौभाग्यशालिनी है और प्रियतम के सान्निध्य में चिरसुहागिनी होती है। गुरु नानक का कथन है कि वह प्रभु-पति के प्रेम-रंग में रसभोग करती है ॥ २ ॥ हे सखि! राम के सामीप्य में नित्यनवीन आनन्द और विलास होता है। प्रभु-पति जीवात्मा रूपी स्त्री का स्वयं श्रृङ्गार करता है (अर्थात् उसे गुणयुक्त बनाता है)। सहज स्वभाव से ही जब प्रभु-पति की कृपा होती है तो वह गुणावगुण नहीं विचारता। तब वह अपनी दासी (जिसने राम-नाम को मन में धारण किया है) को गले से लगा लेता है। सर्वव्यापी लोभ-मोह और अहंकार अपने आप नष्ट हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि तब जीवात्मा के समूचे कार्य पूर्ण हो जाते हैं अर्थात् सब अभिलाषाएँ पूर्ण होती हैं और वह भवसागर से पार हो जाती है ॥ ३ ॥ हे सखियो! यदि तुम नित्य प्रभु का गुणगान करो तो तुम्हारे सब मनोरथ पूर्ण होंगे। साधुसंगति में वाहिगुरु का भजन करने से जन्म सफल होता है। उस एक प्रभु का नाम जपो, जो अनेक रूपों में सब जगह व्याप्त है। ब्रह्म सृष्टि का प्रसार करता है, स्वयं सृष्टि में प्रसरित होता है; जिधर देखता हूँ, उधर वही दृष्टि में आता है। जल-थल और आकाश में वह व्याप्त है, कोई जगह उससे खाली

नहीं। उसका दर्शन पाकर जब नानक उल्लसित होते हैं, तो उसी में लीन हो जाते हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ ८ ॥

॥ सूही महला ५ ॥ अबिचल नगरु गोबिंद गुरू का नामु जपत सुखु पाइआ राम। मन इछे सेई फल पाए करतै आपि वसाइआ राम। करतै आपि वसाइआ सरब सुख पाइआ पुत भाई सिख बिगासे। गुण गावहि पूरन परमेसुर कारजु आइआ रासे। प्रभु आपि सुआमी आपे रखा आपि पिता आपि माइआ। कहु नानक सतिगुर बलिहारी जिनि एहु थानु सुहाइआ ॥ १ ॥ घरमंदर हट नाले सोहे जिसु विचि नामु निवासी राम। संत भगत हरि नामु अराधहि कटीऐ जम की फासी राम। काटी जम फासी प्रभि अबिनासी हरि हरि नामु धिआए। सगल समग्री पूरन होई मन इछे फल पाए। संत सजन सुखि माणहि रलीआ दूख दरद भ्रम नासी। सबदि सवारे सतिगुरि पूरै नानक सद बलि जासी ॥ २ ॥ दाति खसम की पूरी होई नित नित चड़ै सवाई राम। पारब्रहमि खसमाना कीआ जिस दी वडी वडिआई राम। आदि जुगादि भगतन का राखा सो प्रभु भइआ दइआला। जीअ जंत सभि सुखी वसाए प्रभि आपे करि प्रतिपाला। दहदिस पूरि रहिआ जसु सुआमी कीमति कहणु न जाई। कहु नानक सतिगुर बलिहारी जिनि अबिचल नीव रखाई ॥ ३ ॥ गिआन धिआन पूरन परमेसुर हरि हरि कथा नित सुणीऐ राम। अनहद चोज भगत भव भंजन अनहद वाजे धुनीऐ राम। अनहद झुणकारे ततु बीचारे संत गोसटि नित होवै। हरि नामु अराधहि मैलु सभ काटहि किलविख सगले खोवै। तह जनम न मरणा आवण जाणा बहुड़ि न पाईऐ जुोनीऐ। नानक गुरु परमेसरु पाइआ जिसु प्रसादि इछ पुनीऐ ॥ ४ ॥ ६ ॥ ९ ॥

(टिप्पणी— कहते हैं, इस शब्द का उच्चारण अमृतसर नगर की स्थापना के समय किया गया था।) यह परमात्मा की नगरी सदा स्थायी रहनेवाली है, इसमें रहकर नाम जपने से सुख मिलता है (यहाँ नगरी मनुष्य-शरीर को भी कहा जा सकता है)। यह नगर परमात्मा ने स्वयं बसाया है, इसलिए यहाँ सब मनोवाञ्छित फलों की प्राप्ति होती है। प्रभु की इस नगरी में सब सुखों को पाकर पुत्र, भाई, शिष्य सब प्रसन्न हैं। पूर्णपरमेश्वर का गुणगान करने से सब कार्य सम्पन्न हो गये हैं। परमात्मा

स्वयं इसका रक्षक है, इसका भाई-बाप है। गुरु नानक का कथन है कि वे इस स्थान को स्थापित करनेवाले अपने वाहिगुरु पर बलिहार जाते हैं ॥१॥ यहाँ पर घर, प्रासाद और बाज़ार सब सुन्दर हैं, यहाँ प्रभु-नाम का निवास है। सन्त-भगत सब मिलकर हरि-नाम की आराधना करते हैं और उनकी मृत्यु की फाँसी कट जाती है। हरि-नाम जपने से अविनाशी प्रभु मृत्यु के फन्दे को काट देता है; समस्त सामग्री पूर्ण होती है और मनोवाञ्छित फल प्राप्त होता है। साधु-सन्त दुःख, दर्द, भ्रम आदि का नाश होने पर परस्पर ख़ुशियाँ मनाते हैं। सतगुरु के शब्दों पर आचरण करने से वे सँवरते हैं और गुरु नानक सदा उन पर क़ुर्बान जाते हैं॥ २॥ मालिक की देन जीव के लिए सम्पूर्ण होती है, बल्कि नित्यप्रति बढ़ती जाती है। परब्रह्म स्वयं जीव को अपने आश्रय में अपना लेता है, यही उसका विरद है। युग-युग से भक्तों की रक्षा करनेवाला प्रभु जब दयालु होता है, तो सब जीव-जन्तु सुखी हो जाते हैं; वह परमात्मा ही उनका प्रतिपालक है, वह परमात्मा दसों दिशाओं में व्याप्त है, उसका सही मूल्यांकन कोई नहीं कर सकता। गुरु नानक कहते हैं कि अटलनगर की नीवँ रखनेवाले अपने वाहिगुरु पर सदा बलिहार जाते हैं॥ ३॥ पूर्णपरमेश्वर की कथा-श्रवण ही मूल ज्ञान-ध्यान का विषय है, नित्य उसका श्रवण करें। संसार के बन्धन तोड़नेवाले हरि के भक्त एकरस-विलास करते हैं। वहाँ नित्य सन्तों की गोष्ठियाँ होती हैं, तत्त्व-विचार होता है, और अनाहत वाणी का कीर्तन सदा होता है। हरि-नाम की आराधना से सब मैल कट जाता है, पाप नष्ट हो जाते हैं। वहाँ आकर जन्म-मरण का चक्र छूट जाता है और दोबारा योनि में नहीं आना पड़ता। गुरु नानक का कथन है कि यहाँ सच्चे गुरु की प्राप्ति होती है, जिसकी कृपा से वाञ्छाएँ पूर्ण होती हैं॥ ४॥ ६॥ ९॥

॥ सूही महला ५ ॥ संता के कारजि आपि खलोइआ हरि कंमु करावणि आइआ राम। धरति सुहावी तालु सुहावा विचि अंम्रित जलु छाइआ राम। अंम्रित जलु छाइआ पूरन साजु कराइआ सगल मनोरथ पूरे। जैजैकारु भइआ जग अंतरि लाथे सगल विसूरे। पूरन पुरख अचुत अबिनासी जसु वेद पुराणी गाइआ। अपना बिरदु रखिआ परमेसरि नानक नामु धिआइआ॥ १॥ नवनिधि सिधि रिधि दीने करते तोटि न आवै काई राम। खात खरचत बिलछत सुखु पाइआ करते की दाति सवाई राम। दाति सवाई निखुटि न जाई अंतरजामी पाइआ। कोटि बिघन सगले उठि नाठे दूखु न नेड़ै आइआ।

सांति सहज आनंद घनेरे बिनसी भूख सबाई । नानक गुण गावहि सुआमी के अचरजु जिसु वडिआई राम ॥ २ ॥ जिस का कारजु तिनही कीआ माणसु किआ वेचारा राम । भगत सोहनि हरि के गुण गावहि सदा करहि जैकारा राम । गुण गाइ गोबिद अनद उपजे साध संगति संगि बनी । जिनि उदमु कीआ ताल केरा तिस की उपमा किआ गनी । अठसठि तीरथ पुंन किरिआ महा निरमल चारा । पतित पावनु बिरदु सुआमी नानक सबद अधारा ॥ ३ ॥ गुण निधान मेरा प्रभु करता उसतति कउनु करीजै राम । संता की बेनंती सुआमी नामु महारसु दीजै राम । नामु दीजै दानु कीजै बिसरु नाही इक खिनो । गुण गोपाल उचरु रसना सदा गाईऐ अनदिनो । जिसु प्रीति लागी नाम सेती मनु तनु अंम्रित भीजै । बिनवंति नानक इछ पुंनी पेखि दरसनु जीजै ॥ ४ ॥ ७ ॥ १० ॥

(टिप्पणी— कहते हैं, ये शब्द नगर में अमृत-सरोवर के सम्पन्न होने पर परमात्मा को धन्यवाद देते हुए उच्चारण किया गया है।) परमात्मा सन्तों के कार्य सम्पन्न करने के लिए स्वयं उपस्थित रहता है, कार्य करवाने के लिए स्वयं आता है। उसकी कृपा से यहाँ की धरती सुन्दर हो गयी है, सरोवर सुशोभित है और उसमें अमृतसमान निर्मल जल भर गया है। प्रभु-कृपा से (उसमें) अमृत-जल भरा है, सब कार्य सम्पन्न हो गया है और सकल मनोरथ पूरे हो गये हैं। संसार में जय-जयकार हुआ है, सब दुःख दूर हो गये हैं। वेदों-पुराणों में अच्युत अविनाशी पूर्णपुरुष का यशोगान हुआ है, इसलिए, गुरु नानक का कथन है कि उसका नाम जपने से वह अपने विरद की रक्षा करता है ॥ १ ॥ परमात्मा ने सब रिद्धि-सिद्धि और निधियाँ दी हैं, कोई अभाव नहीं रह गया है। खाते-खर्चते और विलसते सब सुख प्राप्त हैं, वाहिगुरु की देन नित्य बढ़ती ही जाती है। उस अन्तर्यामी को प्राप्त कर जीव की उपलब्धियाँ बढ़ती ही जाती हैं, कभी समाप्त नहीं होतीं। करोड़ों विघ्न अपने आप दूर हो जाते हैं, कोई दुःख नज़दीक नहीं आता। मन को शान्ति मिलती है, सहजावस्था में आनन्द प्राप्त है, सब प्रकार की इच्छाओं का दमन हो जाता है। (तभी तो) गुरु नानक सब प्रकार के विषमयों के धारक वाहिगुरु का गुण गाते और स्तुति करते हैं ॥ २ ॥ जिसका कार्य था उसी ने सम्पन्न कर दिया, विवश मनुष्य कर भी क्या सकता है? भक्तजन हरि के गुण गाकर सदा प्रतिष्ठित होते हैं और सदा उसकी जय-जयकार करते हैं। साधु-संगति में बैठकर परमात्मा का गुण गाने से परमानन्द की प्राप्ति होती है। जिसने सरोवर को तैयार करने का उद्यम किया, वह

अनुपम है। इस सरोवर में अठासठ तीर्थ, पुण्य और पवित्र कर्म सब आ गये हैं। गुरु नानक को पतितपावन विरद के रक्षक परमात्मा का ही आश्रय है ॥ ३ ॥ मेरा परमात्मा गुणों का भण्डार है, उसकी पूर्ण स्तुति कौन कर सकता है ? (उसके चरणों में) सन्तों की विनती है कि वह हमें नाम-रस प्रदान करे, नाम का दान देकर वह हमारे भीतर ही स्थिर हो जाय, क्षण भर के लिए भी हमसे दूर न हो। हे मेरी जिह्वा ! तू रात-दिन प्रभु के गुणों का गान कर, जिसके नाम में प्रीति लगने से तन-मन अमृतमय हो जाता है। गुरु नानक विनती करते हैं कि हे वाहिगुरू ! मेरी एक इच्छा पूर्ण कर दो, मुझे दर्शन दो, मेरा जीवन उसी में है ॥ ४ ॥ ७ ॥ १० ॥

रागु सूही महला ५ छंत

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मिठ बोलड़ा जी हरि सजणु सुआमी मोरा। हउ संमलि थकी जी ओहु कदे न बोलै कउरा। कउड़ा बोलि न जानै पूरन भगवानै अउगणु को न चितारे। पतित पावनु हरि बिरदु सदाए इकु तिलु नही भंनै घाले। घट घट वासी सरब निवासी नेरै ही ते नेरा। नानक दासु सदा सरणागति हरि अंम्रित सजणु मेरा ॥ १ ॥ हउ बिसमु भई जी हरि दरसनु देखि अपारा। मेरा सुंदरु सुआमी जी हउ चरन कमल पगछारा। प्रभ पेखत जीवा ठंढी थीवा तिसु जेवडु अवरु न कोई। आदि अंति मधि प्रभु रविआ जलि थलि महीअलि सोई। चरन कमल जपि सागरु तरिआ भवजल उतरे पारा। नानक सरणि पूरन परमेसुर तेरा अंतु न पारावारा ॥ २ ॥ हउ निमख न छोडा जी हरि प्रीतम प्रान अधारो। गुरि सतिगुर कहिआ जी साचा अगम बीचारो। मिलि साधू दीना ता नामु लीना जनम मरण दुख नाठे। सहज सूख आनंद घनेरे हउमै बिनठी गाठे। सभ कै मधि सभहू ते बाहरि राग दोख ते निआरो। नानक दास गोबिद सरणाई हरि प्रीतमु मनहि सधारो ॥ ३ ॥ मै खोजत खोजत जी हरि निहचलु सु घरु पाइआ। सभि अध्रव डिठे जीउ ता चरन कमल चितु लाइआ। प्रभु अबिनासी हउ तिस की दासी मरै न आवै जाए। धरम अरथ काम सभि पूरन मनि चिंदी इछ पुजाए। स्रुति सिम्रिति

गुन गावहि करते सिध साधिक मुनि जन धिआइआ। नानक सरनि क्रिपानिधि सुआमी वडभागी हरि हरि गाइआ ॥४॥१॥११॥

मेरा स्वामी परमात्मा सदा मधुरभाषी है; मैं कई बार जाँचकर देख चुका हूँ कि वह कभी कड़ुवा नहीं बोलता। वह परमात्मा न तो कड़ुवा बोलता है और न ही (जीव के) अवगुणों को याद रखता है। पतितपावन उसका विरद है, किसी के किये को रत्ती भर भी नहीं भूलता। वह घट-घट में वास करता है, सर्वव्यापक है, समीप से समीप है। गुरु नानक कहते हैं कि उसकी शरण में आया हूँ, वह मेरा स्वामी अमृत के समान मधुर है ॥१॥ मैं अपने प्यारे प्रभु का दर्शन कर आश्चर्य करता हूँ। मैं अपने सुन्दर स्वामी के चरण-कमलों की धूल हूँ। परमात्मा को देखे ही मेरी आत्मा शान्त होती है (ठण्डी होती है), उसके अतिरिक्त अन्य कोई उसके बराबर नहीं है। सृष्टि के आदि-अन्त और मध्य में वह परमात्मा ही रमण करता है, जल-थल और वायुमण्डल में वह छाया हुआ है। उसके चरण-कमल का जाप करने से संसार-सागर से पार हुआ जाता है और मुक्ति प्राप्त होती है। गुरु नानक कहते हैं कि हे परमात्मा ! तेरा कोई आर-पार नहीं, मैं तेरी शरण में हूँ ॥ २ ॥ हे हरि-प्रियतम ! तुम मेरे प्राणाधार हो, मैं निमिषमात्र भी तुम्हें ओझल नहीं कर सकता। मेरे सतगुरु ने उसके सम्बन्ध में अगम-अगोचर विचार मुझे दिया है। सच्चे सन्तों की संगति में मैंने उसका नाम लिया है, जिससे मेरे जन्म-मरण का दुःख नष्ट हो गया है। मुझे सहजावस्था का परमसुख प्राप्त है, अहंकार की गाँठ खुल गयी है। वह प्रभु सबके बीच विद्यमान है, सबके बाहर भी है और राग-द्वेष से परे है। गुरु नानक कहते हैं कि मैं उस गोविन्द की शरण में आकर हरि-प्रियतम को मन में स्थिर करता हूँ ॥ ३ ॥ मैंने खोजते-खोजते परमात्मा का अचलस्थान प्राप्त कर लिया है। क्योंकि संसार में शेष सबको अस्थिर पाया है, इसलिए प्रभु के चरण-कमल में मन दृढ़ कर लिया है। मेरा प्रभु अविनाशी है, मृत्यु और आवागमन से परे है, इसलिए मैंने उसकी दासता स्वीकार की है। (उसकी दासता में) धर्म-अर्थ-काम सब मनोवाञ्छाएं पूर्ण हो जाती हैं। चारों वेद, बीसियों स्मृतियाँ उसी परमात्मा के गुण गाती हैं और सिद्ध, साधक तथा मुनिजन सदैव उसका ध्यान लगाते हैं। गुरु नानक का कथन है, जो उस कृपासागर हरि का शरणागत हुआ, वह भाग्यशाली है ॥ ४ ॥ १ ॥ ११ ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ वार सूही की सलोका नालि महला ३ ॥ सलोकु म० ३ ॥ सूहै वेसि दोहागणी पर पिरु

रावण जाइ। पिरु छोडिआ घरि आपणै मोही दूजै भाइ। मिठा करि कै खाइआ बहु सादहु वधिआ रोगु। सुधु भतारु हरि छोडिआ फिरि लगा जाइ विजोगु। गुरमुखि होवै सु पलटिआ हरि राती साजि सीगारि। सहजि सचु पिरु राविआ हरि नामा उरधारि। आगिआकारी सदा सुोहागणि आपि मेली करतारि। नानक पिरु पाइआ हरि साचा सदा सुोहागणि नारि ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ सूहवीए निमाणीए सो सहु सदा सम्हालि। नानक जनमु सवारहि आपणा कुलु भी छुटी नालि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ आपे तखतु रचाइओनु आकास पताला। हुकमे धरती साजीअनु सची धरमसाला। आपि उपाइ खपाइदा सचे दीन दइआला। सभना रिजकु संबाहिदा तेरा हुकमु निराला। आपे आपि वरतदा आपे प्रतिपाला ॥ १ ॥

॥ सलोकु म०३ ॥ वह स्त्री सुहाग के जोड़े में भी विधवा है (वेश्या है), यदि वह अपने पति को छोड़ किसी अन्य मर्द के साथ रमण करने जाती है। अपने प्रियतम तथा अपने घर को छोड़कर जो द्वैतभाव में लीन है (अर्थात् अपने सच्चे पति-परमात्मा को छोड़कर माया के प्यार में लीन होती है), वह जिसे मीठा समझकर खाती है, उसी के स्वाद में उसका रोग बढ़ता जाता है। अपने परमात्मा रूपी पति को छोड़कर वह वियोग में जलती है। मात्र गुरु के आदेशों पर आचरण करने पर ही वह माया से पलटती है और प्यार से पुनः साज-शृंगार कर अपने पति-परमात्मा को समर्पित हो जाती है। जो मात्र प्यार के साथ अपने पति के नाम को हृदय में धारणकर रमण करती है, वह आज्ञाकारिणी वास्तव में सुहागिन होती है और परमात्मा-पति उसे कण्ठ से लगा लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि उसे सत्यस्वरूप परमात्मा-पति के रूप में मिल जाता है और वह चिरसुहागिन हो जाती है। (इस वाणी का मूलभाव यह है कि द्वैतभाव को त्यागकर मात्र परमात्मा का ही ध्यान करना चाहिए। द्वैतभाव सम्भव ही नहीं, जब आत्मा को यह मालूम हो जाता है कि जो कुछ सृष्टि में है वह सब उस हरि की रचना है) ॥ १ ॥ म० ३ ॥ हे सुहाग का जोड़ा पहननेवाली जीवात्मा रूपी स्त्री! सदा अपने पति का स्मरण करो, उसे अपना बना लो। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसा करने से तुम्हारा जन्म तो सफल होगा ही, तुम्हारा समूचा कुल मुक्त हो जायगा ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ उस परमात्मा ने ही ये आकाश, पाताल बनाये हैं। उसी के हुक्म से धर्म कमाने का स्थान यह धरती अस्तित्व में आयी है। वह सच्चा दीनदयालु खुद ही बनाता है और स्वयं नष्ट भी कर देता है। उसके

आश्चर्यपूर्ण हुक्म से सबको भोजन मिलता है और वह सर्वव्यापक सबका पोषण स्वयं करता है ॥ १ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ सूहब ता सोहागणी जा मंनि लैहि सचु नाउ । सतिगुरु अपणा मनाइ लै रूपु चड़ी ता अगला दूजा नाही थाउ । ऐसा सीगारु बणाइ तू मैला कदे न होवई अहिनिसि लागै भाउ । नानक सोहागणि का किआ चिहनु है अंदरि सचु मुखु उजला खसमै माहि समाइ ॥ १ ॥ म० ३ ॥ लोका वे हउ सूहवी सूहा वेसु करी । वेसी सहु न पाईऐ करि करि वेस रही । नानक तिनी सहु पाइआ जिनी गुर की सिख सुणी । जो तिसु भावै सो थीऐ इन बिधि कंत मिली ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हुकमी स्रिसटि साजीअनु बहु भिति संसारा । तेरा हुकमु न जापी केतड़ा सचे अलख अपारा । इकना नो तू मेलि लैहि गुर सबदि बीचारा । सचि रते से निरमले हउमै तजि विकारा । जिसु तू मेलहि सो तुधु मिलै सोई सचिआरा ॥ २ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ हे सुन्दर और आकर्षक नाम वाली स्त्री ! तू तभी वास्तव में सुहागिन हो सकती है, यदि तू सत्यस्वरूप परमात्मा का नाम अपना ले अर्थात् सदा के लिए उसकी हो जाये । तू अपने सतगुरु को (प्रभु-पति को) मना ले तो तेरा सौन्दर्य सहस्रों गुणा बढ़ जायेगा; इस उपलब्धि के लिए गुरु के अतिरिक्त कोई दूसरा मध्यम नहीं है । अपना ऐसा सुन्दर श्रृंगार कर ले, जो कभी मलिन नहीं होता । इसके लिए रात-दिन अपने पति में परमप्रेम की अपेक्षा है । गुरु नानक सुहागिन की पहचान बताते हुए कहते हैं कि उसके मन में सदैव सत्यस्वरूप परमात्मा बसता है, पति में ही सदैव लीन होने के कारण उसका मुख तेजवान होता ॥ १ ॥ म० ३ ॥ लोगों की दृष्टि में मैंने सुहाग के लाल जोड़े भी पहने, दुलहन का लाल वेष भी बनाया । किन्तु हाय ! भेष बनाने से प्रियतम नहीं मिलता, मेरे बनावटी वेश व्यर्थ ही रहे । गुरु नानक कहते हैं कि प्रियतम-पति को उसी भाग्यशालिनी स्त्री ने प्राप्त किया, जिसने गुरु की शिक्षाओं पर आचरण किया । जो उसकी इच्छा होती है वही होता है (उसी की कृपा से ही) स्त्री अपने पति को मिलती है ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा ने अपने आदेश से ही कई भाँति के संसारों की सृष्टि की है । तुम्हारे हुक्म का परिमाण कोई नहीं जानता, तुम बेअन्त, अलक्ष्य और अपार हो । कुछ को गुरु-शब्दों का ज्ञान पा लेने पर तुम अपने में लीन कर लेते हो । सत्यरूप में रत रहनेवाले जीव अहंकार आदि विकारों

को त्यागकर निर्मल हो जाते हैं। जिसे तू चाहे अपने में लीन कर सकता है, वही सत्य को पाकर सत्यस्वरूप बन जाता है ॥ २ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ सूहवीए सूहा सभु संसारु है जिन दुरमति दूजा भाउ। खिन महि झूठु सभु बिनस जाइ जिउ टिकै न बिरख की छाउ। गुरमुखि लालो लालु है जिउ रंगि मजीठ सचड़ाउ। उलटी सकति सिवै घरि आई मनि वसिआ हरि अंम्रित नाउ। नानक बलिहारी गुर आपणे जितु मिलिऐ हरि गुण गाउ ॥ १ ॥ म० ३ ॥ सूहा रंगु विकारु है कंतु न पाइआ जाइ। इसु लहदे बिलम न होवई रंड बैठी दूजै भाइ। मुंध इआणी दुंमणी सूहै वेसि लुोभाइ। सबदि सचै रंगु लालु करि भै भाइ सीगारु बणाइ। नानक सदा सोहागणी जि चलनि सतिगुर भाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ आपे आपि उपाइअनु आपि कीमति पाई। तिस दा अंतु न जापई गुरसबदि बुझाई। माइआ मोहु गुबारु है दूजै भरमाई। मनमुख ठउर न पाइन्ही फिरि आवै जाई। जो तिसु भावै सो थीऐ सभ चलै रजाई ॥३॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ हे मायावी पदार्थों में तल्लीन जीव-स्त्री! जिन लोगों को दुर्मति के कारण माया से प्यार है, उनके लिए सारा संसार लालिमामय है; किन्तु वह सब मिथ्यापन है जो कुछ ही समय में नष्ट हो जायेगा, जैसे वृक्ष की छाया कभी एक-सी नहीं टिकी रहती। गुरु के द्वारा सुशिक्षित जीव वास्तव में लालिमा को पाता है, जैसा कि वह सच्चे मजीठ-रंग में रँग गया हो (यहाँ लालिमा से अभिप्राय परमात्मा के प्रेम-रंग से है)। इस स्थिति में जैसे माया वाहिगुरु के घर आ जाती है अर्थात् उन जीवों की रुचि माया से उलटकर वाहिगुरु के घर में स्थिर होती है और अमृतसमान हरि का नाम उनके मन में बसता है। गुरु नानक कहते हैं कि वे अपने गुरु पर बलिहार जाते हैं, जिसके मिलाप से ही हरिगुण-गान सम्भव होता है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ बनावटी लाल रंग अर्थात् दिखाने का सुहाग का जोड़ा विकार पैदा करता है। यह पति के मिलने में सहायक नहीं होता, इस भेष को उतारने में देरी नहीं होनी चाहिए, तभी वेश्या (हरि से वियुक्ता) द्वैतभाव को छोड़कर सही मार्ग अपना सकती है। नासमझ स्त्री लाल रंग के वेश पर लोभायमान होकर दुबिधा में पड़ी है। यदि उसे सच्चे शब्द का ज्ञान हो जाय तो वह परमात्मा के भय और प्यार द्वारा श्रृंगार कर सही अर्थों में दुलहन बन सकती है। गुरु नानक कहते हैं कि सतगुरु की इच्छानुसार चलनेवाली जीवात्मा रूपी स्त्री ही वास्तव में सुहागिन होती

है ।। २ ।। पउड़ी ।। वह परमात्मा स्वयंभू है । अपना सही मूल्यांकन स्वयमेव ही कर सकता है । वह अनन्त है, उसका अन्त अर्थात् उसकी गहनता गुरुवाणी द्वारा ही समझी जा सकती है । द्वैतभाव में लीनता माया, मोह, अहंकार की उत्पादक है । मन के संकेतों पर चलनेवाला जीव सदैव अस्थिर रहता है और जन्म-मरण के चक्कर में पड़ता है । सच तो यह है कि जो उसे रुचता है वही होता है; और जो होता है, वह उसी के संकेत से होता है ।। ३ ।।

।। सलोकु म० ३ ।। सूहै वेसि कामणि कुलखणी जो प्रभ छोडि परपुरख धरे पिआरु । ओसु सीलु न संजमु सदा झूठु बोलै मनमुखि करम खुआरु । जिसु पूरबि होवै लिखिआ तिसु सतिगुरु मिलै भतारु । सूहा वेसु सभु उतारि धरे गलि पहिरै खिमा सीगारु । पेईऐ साहुरै बहु सोभा पाए तिसु पूज करे सभु सैसारु । ओह रलाई किसै दी ना रलै जिसु रावे सिरजनहारु । नानक गुरमुखि सदा सुहागणी जिसु अविनासी पुरखु भरतारु ।। १ ।। ।। म० १ ।। सूहा रंगु सुपनै निसी बिनु तागे गलि हारु । सचा रंगु मजीठ का गुरमुखि ब्रहम बीचारु । नानक प्रेम महा रसी सभि बुरिआईआ छारु ।। २ ।। पउड़ी ।। इहु जगु आपि उपाइओनु करि चोज विडानु । पंच धातु विचि पाईअनु मोहु झूठु गुमानु । आवै जाइ भवाईऐ मनमुखु अगिआनु । इकना आपि बुझाइओनु गुरमुखि हरि गिआनु । भगति खजाना बखसिओनु हरि नामु निधानु ।। ४ ।।

।। सलोकु म० ३ ।। सुहाग का जोड़ा पहननेवाली जीवात्मा रूपी स्त्री तब तक कुलटा ही कही जाती है, जब तक वह अपने प्रभु-पति को छोड़कर परपुरुष से प्यार करती है । उसमें शील और संयम का अभाव होता है, वह मिथ्या कथन करती है और मन के संकेतों पर आचरण करती है । जिसके प्रारब्ध में पहले से सुलेख मौजूद है, वही वाहिगुरु रूपी पति को प्राप्त करती है । ऐसी स्त्री दिखावे के लाल जोड़े उतार फेंकती है और गले में क्षमायुक्त चोला पहन लेती है । तब उसे पीहर और ससुराल सब जगह शोभा प्राप्त होती है और संसार उसे श्रद्धा की दृष्टि से देखने लगता है । वह सृजनहार जिसे प्रतिष्ठा प्रदान करता है, वह कभी किसी के करने पर उपेक्षित नहीं होती । गुरु नानक कहते हैं कि गुरुमुख जीवात्मा रूपी स्त्री सदा सुहागिन होती है, स्वयं अविनाशी प्रभु उसके पति होते हैं ।। १ ।। म० १ ।। मायावी लाल रंग रात के सपने के समान

या सूत्र-रहित हार के समान है (अर्थात् भ्रम है)। इसके विपरीत गुरु के द्वारा ब्रह्म का विचार करना मजीठ के पक्के रंग के समान है। गुरु नानक का कथन है कि जो प्रेम के महारस में आनन्दित है, उसकी सब बुराइयाँ जलकर राख हो जाती हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा ने महान आश्चर्यमय यह संसार पैदा किया है। इसमें पाँच तत्त्व (अग्नि, वायु, जल, पृथ्वी और आकाश) उपजाये हैं और साथ ही मिथ्या मोह, अहंकार (विकार) भी पैदा किये हैं। मन के संकेतों पर चलनेवाला अज्ञानी जीव (मनमुख) आवागमन के चक्कर में पड़ा रहता है और कुछ को स्वयं कृपा करके गुरु द्वारा ज्ञान की उपलब्धि भी परमात्मा ही करवाता है। वह भक्तों को हरि-नाम की निधियों के भण्डार प्रदान करता है ॥ ४ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ सूहवीए सूहा वेसु छडि तू ता पिर लगी पिआरु। सूहै वेसि पिरु किनै न पाइओ मनमुखि दझि मुई गावारि। सतिगुरि मिलिऐ सूहा वेसु गइआ हउमै विचहु मारि। मनु तनु रता लालु होआ रसना रती गुण सारि। सदा सोहागणि सबदु मनि भै भाइ करे सीगारु। नानक करमी महलु पाइआ पिरु राखिआ उर धारि ॥ १ ॥ म० ३ ॥ मुंधे सूहा परहरहु लालु करहु सीगारु। आवण जाणा वीसरै गुरसबदी वीचारु। मुंध सुहावी सोहणी जिसु घरि सहजि भतारु। नानक सा धन रावीऐ रावे रावणहारु ॥२॥ पउड़ी ॥ मोहु कूड़ु कुटंबु है मनमुखु मुगधु रता। हउमै मेरा करि मुए किछु साथि न लिता। सिर उपरि जमकालु न सुझई दूजै भरमिता। फिरि वेला हथि न आवई जमकालि वसि किता। जेहा धुरि लिखि पाइओनु से करम कमिता ॥ ५ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ हे मायावी रंग में रत जीवात्मा! यह नकली रंग वाला वेश उतार दे, तभी तुझे प्रियतम-प्रभु के साथ प्रेम होगा। नकली रंगों में रँगकर परमात्मा को कोई नहीं पा सकता, अनेक मनमुख इसी दौड़ में जलकर खाक हो गये। सतगुरु के मिलन से माया की लालिमा नष्ट हो जाती है और अहंकार दूर होता है। जीव का तन-मन प्रभु के रंग में लाल हो जाता है, जिह्वा परमात्मा का गुण गाने में तल्लीन होती है। वह जीवात्मा चिरसुहागिन होती है, जो मन में परमात्मा के भय और भाव का श्रृङ्गार करती है। गुरु नानक कहते हैं कि यदि परमात्मा की कृपा हो जाय तो जीव-स्त्री को पति का घर प्राप्त होता है और फिर वह सदैव अपने प्रियतम को हृदय में धारण करके रखती

है ।। १ ।। म० ३ ।। हे स्त्री ! किंशुक का कच्चा लाल रंग (माया) छोड़कर मजीठ के पक्के लाल रंग (अध्यात्म) से श्रृङ्गार करो। इससे आवागमन दूर होता है, गुरु-ज्ञान प्राप्त होता है। वही स्त्री सुशोभित होती है, जिसकी निष्काम भावी प्रीति से पति घर में प्रवेश करता है। गुरु नानक का कथन है कि वह स्त्री वास्तव में सुहागिन है, जिसकी सेज पर स्वयं हरि-प्रभु रमण करता है ।। २ ।। पउड़ी ।। वह कुटुम्ब और उसका मोह झूठा है, जिसमें प्राय: मनमुख मूर्ख व्यक्ति संलग्न रहता है। वह अहंकार और अधिकार के संघर्ष में जूझता रहता है, उसके साथ कुछ भी नहीं जाता। वह द्वैतभाव में इतना भ्रमित हो जाता है कि उसे सिर पर खड़ा काल (मृत्यु) भी नहीं सूझता। जब काल उस पर अधिकार जमा लेता है तो फिर गया वक़्त हाथ नहीं आता। जो कुछ भी प्रारब्ध के फल-रूप में उसे मिलता है, वही उसे भोगना होता है ।। ५ ।।

।। सलोकु म० ३ ।। सतीआ एहि न आखीअनि जो मड़िआ लगि जलंन्हि। नानक सतीआ जाणीअन्हि जि बिरहे चोट मरंन्हि ।।१।। म० ३ ।। भी सो सतीआ जाणीअनि सील संतोखि रहंन्हि। सेवनि साई आपणा नित उठि संम्हालंन्हि ।। २ ।। ।। ३ ।। कंता नालि महेलीआ सेती अगि जलाहि। जे जाणहि पिरु आपणा ता तनि दुख सहाहि। नानक कंत न जाणनी से किउ अगि जलाहि। भावै जीवउ कै मरउ दुरहु ही भजि जाहि ।। ३ ।। ।। पउड़ी ।। तुधु दुखु सुखु नालि उपाइआ लेखु करतै लिखिआ। नावै जेवड होर दाति नाही तिसु रूपु न रिखिआ। नामु अखुटु निधानु है गुरमुखि मनि वसिआ। करि किरपा नामु देवसी फिरि लेखु न लिखिआ। सेवक भाइ से जन मिले जिन हरि जपु जपिआ ।। ६ ।।

।। सलोक म० ३ ।। उन स्त्रियों को सती नहीं कहा जाता, जो पति की मृत देह के साथ जल मरती हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वास्तव में वे स्त्रियाँ सती हैं जो पति के बिछड़ने का आघात ही नहीं सह पातीं ।। १ ।। ।। म० ३ ।। उन स्त्रियों को भी सती ही कहा जाता है, जो शील और सन्तोष धारण कर उच्च आचरण करती हैं। अपने पति की सेवा में रत रहती हैं और सदैव उसे याद करती हैं ।। २ ।। ३ ।। जो स्त्रियाँ पति के साथ आग में जल मरती हैं (वे ही तो सती नहीं होतीं)। यदि वे पति को अपना समझती हैं तो उन्हें पति के मरने से वही असह्य दुःख उठाना पड़ता है। जल-मरकर सती होने की आवश्यकता नहीं, वे तो जीते-जी

सती हो जाती हैं। और यदि वे पति का सत्कार नहीं करतीं तो फिर आग में जलने से क्या लाभ ? (दोनों स्थितियों में आग में जलकर मरना व्यर्थ है।) उनका पति जीवित हो या मृत, वे तो उससे दूर ही होती हैं ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा ने जीव के सब दुःख-सुख पैदा किये हैं और इसकी पुष्टि में उसने सबके लिए भाग्य-लेख लिख दिये हैं। हरि-नाम के समान कोई दूसरा वरदान नहीं, उसकी कोई रूपरेखा भी नहीं। नाम कभी न समाप्त होनेवाला भण्डार है, जो गुरुमुखों के मन में बसता है। यदि परमात्मा कृपा करके नाम-दान देगा, तो फिर दुःख-सुख का लेखा कट जायेगा। यदि सेवक प्रेमभाव से प्रभु के दरबार में प्रस्तुत हो तो परमात्मा का नाम अपने आप दुहराया जाता है ॥ ६ ॥

॥ सलोकु म० २ ॥ जिनी चलणु जाणिआ से किउ करहि विथार। चलण सार न जाणनी काज सवारणहार ॥ १ ॥ ॥ म० २ ॥ राति कारणि धनु संचीऐ भलके चलणु होइ। नानक नालि न चलई फिरि पछुतावा होइ ॥ २ ॥ म० २ ॥ बधा चटी जो भरे ना गुणु ना उपकारु। सेती खुसी सवारीऐ नानक कारजु सारु ॥ ३ ॥ म० २ ॥ मनहठि तरफ न जिपई जे बहुता घाले। तरफ जिणै सत भाउ दे जन नानक सबदु वीचारे ॥ ४ ॥ ॥ पउड़ी ॥ करतै कारणु जिनि कीआ सो जाणै सोई। आपे स्रिसटि उपाईअनु आपे फुनि गोई। जुग चारे सभ भवि थकी किनि कीमति होई। सतिगुरि एकु विखालिआ मनि तनि सुखु होई। गुरमुखि सदा सलाहीऐ करता करे सु होई ॥ ७ ॥

॥ सलोकु म० २ ॥ जो प्रवाह से बँधे हैं वे विस्तार में विश्वास नहीं रखते (अर्थात् प्रभु-नाम के प्रवाह में बहनेवाले माया के विस्तार से विमुख रहते हैं)। जिन लोगों को प्रवाह का ज्ञान नहीं वे मोह-माया के धन्धे में फँस जाते हैं ॥ १ ॥ म० २ ॥ आयु इतनी छोटी है, जैसे कि एक रात। उस एक रात के लिए हम धन संग्रह करते हैं, कौन जानता है कि अगले ही दिन चल बसें। गुरु नानक कहते हैं कि यह धन मौत के समय साथ नहीं जाता, बाद में पछतावा होता है ॥ २ ॥ म० २ ॥ जो मजबूरी के साथ काम करते हैं, उसका कोई लाभ न अपने को पहुँचा सकते हैं और न किसी दूसरे को ही लाभ पहुँचता है। इसलिए, गुरु नानक कहते हैं कि प्रत्येक कार्य को प्रसन्नतापूर्वक करने से ही सिद्धि होती है ॥३॥ ॥ म० २ ॥ मन हठपूर्वक अपना पक्ष नहीं जीत सकता, चाहे कितना भी संघर्ष हो। गुरु नानक का विश्वास है कि सच्चे भाव से ही कार्य करने

और गुरु के शब्दों पर विचार करने से ही सफलता मिलती है ।। ४ ।।
।। पउड़ी ।। सृष्टि का रचयिता प्रकृति की रचना को स्वयं ही जानता है। वह स्वयं सृष्टि की रचना करता है और इच्छानुसार उसका नाश भी कर देता है। मैं चारों युगों में उसके रहस्य को जानने का प्रयास करती रही (जीवात्मा से भाव है), किन्तु उसका सही मूल्यांकन किससे करवाती ? अब सतगुरु से मिलाप हुआ है, उसने एक ब्रह्म को दिखा दिया है, जिससे मेरा तन-मन सुखी हो गया है। इसीलिए गुरु के द्वारा सदा परमात्मा का गुणगान करना होता है, क्योंकि जो भी घटित है वह सर्जक की इच्छानुसार होता है ।। ७ ।।

।। सलोक महला २ ।। जिना भउ तिन्ह नाहि भउ मुचु भउ निभविआह । नानक एहु पटंतरा तितु दीबाणि गइआह ।।१।। ।। म० २ ।। तुरदे कउ तुरदा मिलै उडते कउ उडता । जीवते कउ जीवता मिलै मूए कउ मूआ । नानक सो सालाहीऐ जिनि कारणु कीआ ।। २ ।। पउड़ी ।। सचु धिआइनि से सचे गुरसबदि वीचारी । हउमै मारि मनु निरमला हरि नामु उरिधारी । कोठे मंडप माड़ीआ लगि पए गावारी । जिन्हि कीए तिसहि न जाणनी मनमुखि गुबारी । जिसु बुझाइहि सो बुझसी सचिआ किआ जंत विचारी ।। ८ ।।

।। सलोक महला २ ।। जिन्हें परमात्मा का डर होता है उन्हें और कोई भय नहीं रह जाता। जिन्हें परमात्मा का डर नहीं उन्हें अन्य अनेक भय घेरे रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि ये रहस्य परमात्मा के दरबार में ही पता चलता है ।। १ ।। म० २ ।। जल में जल और पवन में पवन विलीन हो जाता है; अग्नि अग्नि में मिल जाती है और मिट्टी मिट्टी में समा जाती है अर्थात् तत्त्व तत्त्वों में विलीन हो जाते हैं। (यहाँ तुरदा जल के लिए, उडता पवन के लिए, जीवता अग्नि के लिए एवं मुआ मिट्टी के लिए प्रयुक्त हुए हैं।) गुरु नानक कहते हैं कि जिसके करने से यह सब होता है, उसका स्तुतिगान कीजिए ।। २ ।। पउड़ी ।। जो जीव गुरु के आदेशानुसार आचरण करते हुए सत्यस्वरूप परमात्मा का ध्यान करते हैं, वे अभिमान का अन्त कर अपने निर्मल मन में प्रभु को धारण करते हैं। (इसके विपरीत) जो जीव भव्य भवनों, प्रासादों और अन्य-अन्य उद्योगों में मन लगाते हैं, वे गँवार होते हैं। वे मनमुख उस सर्जक को भी नहीं पहचानते, जिसके कारण उनका अपना अस्तित्व होता है। सत्य तो ये है कि जीवों के हाथ कुछ नहीं होता, जिन्हें वह परमात्मा उस सत्य का ज्ञान देना चाहता है, केवल वे ही उसे समझ पाते हैं ।। ८ ।।

॥ सलोक म० ३ ॥ कामणि तउ सीगारु करि जा पहिलां कंतु मनाइ । मतु सेजै कंतु न आवई एवै बिरथा जाइ । कामणि पिर मनु मानिआ तउ बणिआ सीगारु । कीआ तउ परवाणु है जा सहु धरे पिआरु । भउ सीगारु तबोल रसु भोजनु भाउ करेइ । तनु मनु सउपे कंत कउ तउ नानक भोगु करेइ ॥ १ ॥ म० ३ ॥ काजल फूल तंबोल रसु ले धन कीआ सीगारु । सेजै कंतु न आइओ एवै भइआ विकारु ॥ २ ॥ ॥ म० ३ ॥ धन पिरु एहि न आखीअनि बहनि इकठे होइ । एक जोति दुइ मूरती धन पिरु कहीऐ सोइ ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ भै बिनु भगति न होवई नामि न लगै पिआरु । सतिगुरि मिलिऐ भउ ऊपजै भै भाइ रंगु सवारि । तनु मनु रता रंग सिउ हउमै त्रिसना मारि । मनु तनु निरमलु अति सोहणा भेटिआ क्रिसन मुरारि । भउ भाउ सभु तिसदा सो सचु वरतै संसारि ॥ ६ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ शृङ्गार उसी स्त्री को भाता है जिसने पहले अपने पति को प्रसन्न कर लिया हो, अन्यथा यदि सेज पर कन्त न आये तो शृङ्गार वृथा ही तो है । कामिनी और पति का मन यदि एक दूसरे में आसक्त है तो स्त्री के लिए वही सहज शृङ्गार ही है । उसी स्त्री का शृङ्गार स्वीकृत होता है, जिसे अपने पति से अपरिमित प्रेम होता है । स्त्री को चाहिए कि वह पति-प्रभु के भय का शृङ्गार करे, उसकी स्मृतियों का पान चबाये और उसके प्रति सद्भावनाओं का भोजन करे । गुरु नानक कहते हैं कि ऐसा करके यदि स्त्री अपना तन-मन पति को समर्पित कर देती है, तभी वह पति-प्रभु से भोग्य के योग्य होती है ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ आँखों में काजल लगाकर, केशों में फूल गूँथकर और ओष्ठों पर ताम्बूलरस का शृङ्गार बनाकर पति की प्रतीक्षा करनेवाली स्त्री का समूचा शृङ्गार विकार बन जाता है, यदि उसकी सेज पर भर्तार रमण न करे ॥ २ ॥ म० ३ ॥ वास्तव में पति-पत्नी उन्हें नहीं कहा जाता जो मिलकर एक दूसरे के निकट बैठ सकें । पति-पत्नी वे हैं, जिनके दो शरीरों में एक ही ज्योति का प्रकाश होता है अर्थात् वे दो शरीर एक आत्मा हो जाते हैं ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा के भय के बिना न भक्ति हो सकती है और न ही प्रभु-नाम में प्यार बनता है । सतगुरु के मिलाप से परमात्मा का भय पैदा होता है और जीव हरि के प्रेमभाव के रंग में सँवर जाता है । परमात्मा के प्रेम में जीव का तन-मन रँग जाता है और अहंकार तथा तृष्णा का नाश होता है । तन-मन निर्मल होकर प्रभु से

भेंट करता है, उसी के भय और प्रेम में मग्न होता है और संसार में सत्य का आचरण करने लगता है ॥ ९ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ वाहु खसम तू बाहु जिनि रचि रचना हम कीए । सागर लहरि समुंद सर वेलि वरस वराहु । आपि खड़ोवहि आपि करि आपीणै आपाहु । गुरमुखि सेवा थाइ पवै उनमनि ततु कमाहु । मसकति लहहु मजूरीआ मंगि मंगि खसम दराहु । नानक पुर दर वेपरवाह तउ दरि ऊणा नाहि को सचा वेपरवाहु ॥ १ ॥ महला १ ॥ उजल मोती सोहणे रतना नालि जुड़ंनि । तिन जरु वैरी नानका जि बुढे थीइ मरंनि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि सालाही सदा सदा तनु मनु सउपि सरीरु । गुर सबदी सचु पाइआ सचा गहिर गंभीरु । मनि तनि हिरदै रवि रहिआ हरि हीरा हीरु । जनम मरण का दुखु गइआ फिरि पवै न फीरु । नानक नामु सलाहि तू हरि गुणी गहीरु ॥ १० ॥

॥ सलोक म० १ ॥ हे स्वामी ! तू धन्य है, जिसके द्वारा हमें बनाया गया है । रचना और रचयिता का सम्बन्ध ऐसा है, जैसे समुद्र की लहर और समुद्र-शाखा या लता तथा जलद का (जो लता को सींचता है) । वह परमात्मा सृष्टि को बनाकर स्वयं उसका आन्तरिक सम्बल बन जाता है । वह अपने आप सब कुछ है अर्थात् स्वयंभू है । गुरु के द्वारा उसकी सेवा करने तथा सहजावस्था में तत्त्वस्वरूप का अध्ययन करने से वह प्रभु की स्वीकृति प्राप्त करता है । परमात्मा के दरबार से ऐसी स्वीकृति माँग-माँगकर बड़े परिश्रम से प्राप्त होती है । गुरु नानक कहते हैं कि उस बेपरवाह परमात्मा का घर परमपूर्ण है, सत्यस्वरूप परमप्रभु का घर कभी ख़ाली नहीं होता ॥ १ ॥ म० १ ॥ उज्ज्वल और सुन्दर मोती (दाँतो के लिए कहा गया है) तथा जड़े हुए रत्न (आँखों के लिए कहा गया है) बुढ़ापा आने पर जर्जरित हो जाते हैं । तात्पर्य यह है कि जिन सुन्दर अंगों पर हमें अभिमान होता है, वे सब बुढ़ापे के साथ-साथ नष्टप्राय हो जाते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे जीव ! सदा हरि का स्तुतिगान कर और अपना तन-मन उसी को समर्पित कर दे । गुरु के आदेशानुसार आचरण करने से सत्स्वरूप और गहनगम्भीर परमात्मा का रहस्य तुम पा जाओगे । वह अथाह और गुणवान हरि हमारे तन-मन और वातावरण में रमण क़र रहा है । (उसकी शरण लेने से) जन्म-मरण का दुःख दूर हो जाता है और आवागमन से मुक्ति मिलती है । गुरु नानक कहते हैं

कि हे जीव ! तू प्रभु-नाम का गुण गा, वह प्रभु अथाह गुणों का स्वामी है ॥ १० ॥

॥ सलोक म० १ ॥ नानक इहु तनु जालि जिनि जलिऐ नामु विसारिआ । पउदी जाइ परालि पिछै हथु न अंबड़ै तितु निवंधै तालि ॥ १ ॥ म० १ ॥ नानक मन के कंम फिटिआ गणत न आवही । किती लहा सहंम जा बखसे ता धका नही ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ सचा अमरु चलाइओनु करि सचु फुरमाणु । सदा निहचलु रवि रहिआ सो पुरखु सुजाणु । गुरपरसादी सेवीऐ सचु सबदि नीसाणु । पूरा थाटु बणाइआ रंगु गुरमति माणु । अगम अगोचरु अलखु है गुरमुखि हरि जाणु ॥ ११ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ नानक कहते हैं कि जिस विकारों-भरे शरीर ने हरि-नाम को विस्मृत कर दिया है, उस शरीर को जला डाल अर्थात् धिक्कार है । उसमें पापों की काई इकट्ठी हो रही है, उस शरीर रूपी छिछले सरोवर में से उसे हटाने के लिए फिर हाथ नहीं पहुँचेगा । (तालाब में पड़नेवाले घास-फूस की सफ़ाई यदि साथ-साथ न हो तो वह ऐसे पट जाता है कि बाद में उसे साफ़ करना कठिन हो जाता है । यहाँ शरीर को ऐसा ही तालाब कहा गया है, जो धीरे-धीरे विकारों से पटता है । हरि-नाम के स्मरण से उसे साथ-साथ ही साफ़ कर लेना चाहिए) ॥ १ ॥ म० १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि मन के कार्य विकृत हो चुके हैं, उनकी गिनती नहीं की जा सकती । इसी कारण न जाने कितने दुःख मुझ पर आनेवाले हैं; किन्तु यदि वह क्षमा-दान दे तो दुःखों का धक्का मुझे नहीं पहुँचता ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा सत्यस्वरूप है, उसका हुक्म सब पर चलता है, उसके आदेश सच्चे हैं । वह परम-पुरुष सदा स्थिर है और सर्वव्यापक भी है । गुरु की कृपा से सच्चे शब्द द्वारा जीवन का सच्चा लक्ष्य पाया जाता है । सच्चे शब्द द्वारा जब ज़िन्दगी का लक्ष्य मिल जाता है, तो जीव की प्रतिष्ठा होती है । वह गुरु के द्वारा अगम, अगोचर और अलक्ष्य परमात्मा को पहचान लेता है ॥ ११ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ नानक बदरा माल का भीतरि धरिआ आणि । खोटे खरे परखीअनि साहिब के दीबाणि ॥ १ ॥ ॥ म० १ ॥ नावण चले तीरथी मनि खोटै तनि चोर । इकु भाउ लथी नातिआ दुइ भा चड़ीअसु होर । बाहरि धोती तूमड़ी अंदरि विसु निकोर । साध भले अणनातिआ चोर सि चोरा

चोर ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ आपे हुकमु चलाइदा जगु धंधै लाइआ । इकि आपे ही आपि लाइअनु गुर ते सुखु पाइआ । दहदिस इहु मनु धावदा गुरि ठाकि रहाइआ । नावै नो सभ लोचदी गुरमती पाइआ । धुरि लिखिआ मेटि न सकीऐ जो हरि लिखि पाइआ ॥ १२ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ (मालिक के दरबार में जीवों के सच-झूठ की परख होती है।) गुरु नानक कहते हैं कि खरे-खोटे सिक्कों से भरी थैली परमात्मा के सम्मुख पेश की जाती है। खरे-खोटे की परख प्रभु के दरबार में होती है अर्थात् प्रत्येक जीव के शुभ-अशुभ कर्मों की परख की जाती है ॥ १ ॥ म० १ ॥ लोग तीर्थों पर नहाने तथा पापमुक्त होने जाते हैं, किन्तु मन में पहले से विकार और शरीर में वासनाएँ भरी होती हैं। परिणाम यह होता है कि स्नान करने से पाप का एक अंश दूर होता है, तो दो अंश बढ़ जाते हैं। मनुष्य की स्थिति बाहर से धोकर साफ़ की हुई तुम्बी की तरह हो जाती है, जिसके भीतर शुद्ध कटुता भरी होती है। साधु तो बिना नहाये ही भला होता है, किन्तु जो चोर हैं वे नहाकर भी चोर ही रहते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ उस परमात्मा ने विश्व को अपने आदेशों में बाँधा है और सबको अलग-अलग व्यवसायों में लगा दिया है। कुछ को गुरु के माध्यम से अपने सान्निध्य में लाकर सुख प्रदान किया है और कुछ को गुरुप्राप्ति के बिना रोके रखता है, जिससे उनका मन दसों दिशाओं में भटकता फिरता है। सब जीवात्माएँ हरि-नाम पाने के लिए ललकती हैं, किन्तु गुरु का मिलाप पा जानेवाली आत्मा ही लक्ष्य तक पहुँचती है। प्रभु की ओर से जो जिसके भाग्य में लिखा जा चुका है, वह मिटाया नहीं जा सकता ॥ १२ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ दुइ दीवे चउदह हट नाले । जेते जीअ तेते वणजारे । खुल्हे हट होआ वापारु । जो पहुचै सो चलणहारु । धरमु दलालु पाए नीसाणु । नानक नामु लाहा परवाणु । घरि आए वजी वाधाई । सच नाम की मिली वडिआई ॥ १ ॥ म० १ ॥ राती होवनि कालीआ सुपेदा सेवंन । दिहु बगा तपै घणा कालिआ काले वंन । अंधे अकली बाहरे मूरख अंध गिआनु । नानक नदरी बाहरे कबहि न पावहि मानु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ काइआ कोटु रचाइआ हरि सचै आपे । इकि दूजै भाइ खुआइअनु हउमै विचि विआपे । इहु मानस जनमु

दुलंभु सा मनमुख संतापे। जिसु आपि बुझाए सो बुझसी जिसु सतिगुरु थापे। सभु जगु खेलु रचाइओनु सभ वरतै आपे ॥१३॥

॥ सलोक म० १ ॥ (टिप्पणी— गुरुजी ने यहाँ संसार को एक व्यापार-स्थल के रूप में प्रस्तुत किया है, जहाँ रात-दिन अच्छे-बुरे कर्मों का व्यापार होता है।) दो दीपक हैं (सूर्य और चन्द्र अर्थात् रात और दिन का समय), बाज़ार में साथ-साथ सबकी दुकानें हैं। जितने भी जीव हैं वे सब व्यापारी हैं। खुली दुकानों पर रात-दिन व्यापार होता है। व्यापार के लिए आनेवाला हर कोई कार्य पूरा कर वापस जाता है। (व्यापार के खरे-खोटे होने के सन्दर्भ में) धर्मराज रूपी दलाल सब पर निशान लगा देता है। समूचे व्यापार में केवल नाम की कमाई का लाभ ही दरबार में स्वीकृत होता है। जो जीव यह लाभ कमाकर घर आते हैं, उन्हें बधाई मिलती है और वे सत्यस्वरूप नाम से प्रतिष्ठित हो जाते हैं ॥ १ ॥ म० १ ॥ रात्रि चाहे कितनी ही काली हो तो भी सफ़ेद चीज़ें सफ़ेद ही रहती हैं अर्थात् परिस्थितियाँ चाहे कितनी ही बुरी हों, भले स्वभाव के लोग अपना मन नहीं बदलते। दिन उजला होता है, तपता भी खूब है, किन्तु काला रंग उसमें काला ही रहता है अर्थात् मनमुख लोगों का स्वभाव नहीं बदलता चाहे परिस्थितियाँ कितनी ही अनुकूल क्यों न हों। बुद्धिहीन, अज्ञान में अन्धे हुए मूर्ख लोग परमात्मा की कृपा के बिना कभी प्रतिष्ठित नहीं हो सकते ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सत्यस्वरूप परमात्मा ने शरीर का यह दुर्ग स्वयं बनाया है। कुछ जीवों को द्वैतभाव में पथभ्रष्ट कर अहंकार में लीन कर रखा है। यह मनुष्य-जन्म दुर्लभ है, किन्तु वे मनमुख सदैव दुःख उठाते हैं। केवल जिन जीवों को सतगुरु की प्रेरणा होती है, वे ही प्रभु को पहचान सकते हैं। सारा संसार उस पूर्णब्रह्म का खेल है जिसमें वह स्वयं व्याप्त है ॥ १३ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ चोरा जारा रंडीआ कुटणीआ दीबाणु। वेदीना की दोसती वेदीना का खाणु। सिफती सार न जाणनी सदा वसै सैतानु। गदहु चंदनि खउलीऐ भी साहू सिउ पाणु। नानक कूड़ै कतिऐ कूड़ा तणीऐ ताणु। कूड़ा कपड़ु कछीऐ कूड़ा पैनणु माणु ॥ १ ॥ म० १ ॥ बांगा बुरगू सिङीआ नाले मिली कलाण। इकि दाते इकि मंगते नामु तेरा परवाणु। नानक जिन्ही सुणि कै मंनिआ हउ तिना विटहु कुरबाणु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ माइआ मोहु सभु कूड़ु है कूड़ो होइ गइआ। हउमै झगड़ा पाइओनु झगड़ै जगु मुइआ। गुरमुखि

झगड़ु चुकाइओनु इको रवि रहिआ । सभु आतम रामु पछाणिआ भउजलु तरि गइआ । जोति समाणो जोति विचि हरि नामि समइआ ॥ १४ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ चोरों, व्यभिचारियों, वेश्याओं और कुटिल लोगों में पारस्परिक सम्बन्ध होते हैं । अधर्मियों की दोस्ती अधर्मियों से होती है, उनका आपस में खान-पान और मेल-मिलाप होता है । वे परमात्मा का स्तुतिगान करना नहीं जानते, उनके हृदय में शैतान का निवास होता है । जैसे गधे को चन्दन का लेप भी कर दिया जाय तो भी वह राख में ही लोटता है (वैसे ही उक्त दुष्ट और कुटिल लोगों की स्थिति होती है, उन्हें कोई अच्छाई नहीं भाती) । गुरु नानक कहते हैं कि वे मिथ्या कर्मों की कताई करते हैं, मिथ्या का ताना तनते हैं, मिथ्या का कपड़ा बुनते और पहनने का मिथ्या अभिमान करते हैं अर्थात् मिथ्या के बीज से उत्पन्न मिथ्या के पौधे पर लगे मिथ्या फलों का भोग करते हैं । जैसा कर्म करते हैं, वैसा फल पाते हैं ॥ १ ॥ म० १ ॥ मौलवी बाँग देकर, फ़क़ीर तूती बजाकर, योगी सिंगी बजाकर और मिरासी डफली पर थाप देकर घर-घर माँगते फिरते हैं । इस प्रकार जगत में अनेक प्रकार के भिखारी हैं और अनेक दाता भी हैं, किन्तु, हे प्रभु ! तुम्हारे द्वार पर तो केवल नाम ही प्रवान है । गुरुजी कहते हैं, जिन्होंने इस सत्य को मान लिया है, वे उन पर क़ुर्बान जाते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मोह-माया के बन्धन सब मिथ्या हैं और अन्ततः नष्ट हो जाते हैं । अहंकार झगड़े की जड़ है और सारा संसार झगड़े में मृत्युगामी है । गुरु के द्वारा इन झगड़ों से मुक्त हुआ जा सकता है और सबमें व्याप्त परमात्मा की पहचान की जा सकती है । सबमें रमण करनेवाला वाहिगुरु पहचाना जाता है और जीव भवसागर से मुक्त हो जाता है । ऐसे जीवों की आत्म-ज्योति हरि की परमात्म-ज्योति में समा जाती है ॥ १४ ॥

॥ म० १ ॥ सतिगुर भीखिआ देहि मै तूं संम्रथु दातारु । हउमै गरबु निवारीऐ कामु क्रोधु अहंकारु । लबु लोभु परजालीऐ नामु मिलै आधारु । अहिनिसि नवतन निरमला मैला कबहूं न होइ । नानक इह बिधि छुटीऐ नदरि तेरी सुखु होइ ॥ १ ॥ ॥ म० १ ॥ इको कंतु सबाईआ जिती दरि खड़ीआह । नानक कंतै रतीआ पुछहि बातड़ीआह ॥ २ ॥ म० १ ॥ सभे कंतै रतीआ मै दोहागणि कितु । मै तनि अवगण एतड़े खसमु न फेरे चितु ॥ ३ ॥ म० १ ॥ हउ बलिहारी तिन कउ सिफति

जिना दै वाति। सभि राती सोहागणी इक मै दोहागणि राति ॥ ४ ॥ ॥ पउड़ी ॥ दरि मंगतु जाचै दानु हरि दीजै क्रिपा करि। गुरमुखि लेहु मिलाइ जनु पावै नामु हरि। अनहद सबदु वजाइ जोती जोति धरि। हिरदै हरि गुण गाइ जै जै सबदु हरि। जग महि वरतै आपि हरि सेती प्रीति करि ॥ १५ ॥

॥ म० १ ॥ हे सतगुरु ! तुम समर्थ हो, देने के योग्य हो, मुझे ये भिक्षा दो कि मेरा गर्व-अभिमान नष्ट हो सके और मैं काम-क्रोध आदि से ऊपर उठ सकूँ। मेरे मोह और लोभ को पूरी तरह नष्ट करके मुझे नाम का आश्रय प्रदान कीजिए। रात-दिन मैं नूतन और निर्मल होकर रहूँ, मुझे मलिनता कभी न छुए। मैं इसी तरह तुम्हारी कृपादृष्टि पाकर ही मुक्त हो सकता हूँ और सुखलाभ कर सकता हूँ ॥ १ ॥ ॥ म० १ ॥ सब जीवात्माओं का वही एक कन्त है, सब उसी के द्वार पर खड़ी पुकार रही हैं। गुरुजी का कथन है कि कन्त के प्यार में रँगी सभी जीवात्माएँ उसी परमात्मा की बातें करती हैं ॥ २ ॥ म० १ ॥ सभी तो अपने पति-प्रियतम में रत हैं, मैं वियोगिनी किस गिनती में हूँ ? मुझमें इतने अवगुण हैं कि मेरा पति-परमेश्वर मेरी ओर ध्यान ही नहीं देता ॥ ३ ॥ म० १ ॥ मैं उन पर बलिहार जाती हूँ, जिनकी ज़बान पर सदा प्रभु की स्तुति है। वे सब रातों में पति द्वारा सुहागिन बनाई जाती हैं; एक मैं वियोगिनी ऐसी हूँ, जो उसकी एक रात की संगति पाने को तड़प रही हूँ ॥ ४ ॥ पउड़ी ॥ हे हरि ! तुम्हारे द्वार पर खड़ा मैं भिखारी यह दान माँगता हूँ, कृपा करके मुझे यह दान दीजिए। गुरु के द्वारा मुझे अपनी शरण में ले लो और इस नाचीज़ सेवक को अपना नाम प्रदान करो। तभी अनाहत शब्द की ध्वनि श्रव्य होगी और आत्म-ज्योति परमात्म-ज्योति में मिल जायेगी। हृदय में भगवान का गुणगान करे और मुँह से प्रभु का जयकार करे, तभी संसार में व्यापक परमात्मा के साथ सच्ची प्रीति सम्भव है ॥ १५ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ जिनी न पाइओ प्रेम रसु कंत न पाइओ साउ। सुंञे घर का पाहुणा जिउ आइआ तिउ जाउ ॥ १ ॥ म० १ ॥ सउ ओलाम्हे दिनै के राती मिलन्हि सहंस। सिफति सलाहणु छडि कै करंगी लगा हंसु। फिटु इवेहा जीविआ जितु खाइ वधाइआ पेटु। नानक सचे नाम विणु सभो दुसमनु हेतु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ ढाढी गुण गावै नित जनमु

सवारिआ। गुरमुखि सेवि सलाहि सचा उरधारिआ। घरु दरु पावै महलु नामु पिआरिआ। गुरमुखि पाइआ नामु हउ गुर कउ वारिआ। तू आपि सवारहि आपि सिरजनहारिआ ॥१६॥

॥ सलोक म० १ ॥ जिन अभागी जीवात्माओं को प्रेम का रस और पति-प्रभु के संयोग का स्वाद नहीं मिलता, उनका संसार में आगमन शून्य घर के मेहमान की तरह होता है, जो जैसे आता है वैसा ही लौट जाता है ॥ १ ॥ म० १ ॥ जीव पापों में घिरे होने के कारण दिन-रात सैकड़ों-हज़ारों उपालम्भों का भागी होता है। उसकी स्थिति ऐसी है, जैसे मोती छोड़कर हंस शव-भक्षण-क्रिया में संलग्न हो (अर्थात् जीवात्मा रूपी हंस प्रभु के गुणगान रूपी मोतियों का चुगना छोड़कर विकार रूपी नरकंकालों को खाने लगा है)। ऐसे जीने को धिक्कार है, जिसमें खा-खाकर पेट बढ़ा लिया जाता है। गुरु नानक कहते हैं, प्रभु के सच्चे नाम के बिना सब तरह का लगाव हमारा शत्रु है अर्थात् हानिकारक है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ प्रभु का प्रशस्तिगायक (ढाढी) नित्य स्तुतिगान करके अपना जन्म सँवार लेता है। गुरु के द्वारा मन में सत्य को धारण कर वह प्रभु के गुण गाता है। जिसने हरि-नाम से प्यार किया है, वह अपने स्वामी के घर में सम्मान पाता है। जिसने गुरु के द्वारा हरि-नाम का रहस्य जान लिया, मैं उसके गुरु पर क़ुर्बान हूँ। हे सृजनहार ! तू सर्वरचयिता है, स्वयंभू है ॥ १६ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ दीवा बलै अंधेरा जाइ। बेद पाठ मति पापा खाइ। उगवै सूरु न जापै चंदु। जह गिआन प्रगासु अगिआनु मिटंतु। बेद पाठ संसार की कार। पढ़ि पढ़ि पंडित करहि बीचार। बिनु बूझे सभ होइ खुआर। नानक गुरमुखि उतरसि पारि ॥ १ ॥ म० १ ॥ सबदै सादु न आइओ नामि न लगो पिआरु। रसना फिका बोलणा नित नित होइ खुआरु। नानक पइऐ किरति कमावणा कोइ न मेटणहारु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जि प्रभु सालाहे आपणा सो सोभा पाए। हउमै विचहु दूरि करि सचु मंनि वसाए। सचु बाणी गुण उचरै सचा सुखु पाए। मेलु भइआ चिरी विछुंनिआ गुर पुरखि मिलाए। मनु मैला इव सुधु है हरि नामु धिआए ॥१७॥

॥ सलोक म० १ ॥ दीपक जला लेने से अँधेरा दूर हो जाता है, किन्तु वेदों आदि के पाठ अब पाप-बुद्धि से किये जाते हैं अर्थात् लोकाचार हो गये हैं। सूर्य के उदित होने पर चन्द्र का प्रकाश अदृश्य हो जाता है,

ठीक वैसे ही ज्ञान का प्रकाश हो जाने से अज्ञान का अन्धकार मिट जाता है। किन्तु श्रुति-स्मृति का अध्ययन संसार का व्यवहार बन गया है। विद्वान् लोग पढ़-पढ़कर इस पर विचार तो करते हैं, किन्तु रहस्यज्ञान के बग़ैर सब भटकते रह जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि मात्र गुरु का आश्रय लेनेवाला जीव ही पार उतर सकता है ॥ १ ॥ म० १ ॥ जिन जीवों ने कभी शब्द का स्वाद नहीं लिया, न ही कभी हरि-नाम से प्यार किया है, वे सदैव जिह्वा से मिथ्या उच्चारण करते हैं और नित्यप्रति जीवन में भटक जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि प्रारब्ध के फलस्वरूप, यह उनकी आदत बन जाती है जो कभी मिटती नहीं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो अपने परमात्मा का गुणगान करता है, वह (हर जगह) शोभा पाता है। अपने भीतर से अहंकार का नाश करके वह सत्यस्वरूप परमात्मा को मन में बसा लेता है। सच्ची वाणी का गुणगान-कर्ता तथा सच्चे सुख को प्राप्त करता है। युगों से बिछुड़ी उनकी जीवात्मा गुरु की कृपा से परमात्मा से मिलाप करती है और इस प्रकार हरि-नाम का ध्यान करने से उनका मलिन मन निर्मल हो जाता है ॥ १७ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ काइआ कूमल फुल गुण नानक गुपसि माल। एनी फुली रउ करे अवर कि चुणीअहि डाल ॥ १ ॥ महला २ ॥ नानक तिना बसंतु है जिन घरि वसिआ कंतु। जिन के कंत दिसापुरी से अहिनिसि फिरहि जलंत ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ आपे बखसे दइआ करि गुर सतिगुर बचनी। अनदिनु सेवी गुण रवा मनु सचै रचनी। प्रभु मेरा बेअंतु है अंतु किनै न लखनी। सतिगुर चरणी लगिआ हरि नामु नित जपनी। जो इछै सो फलु पाइसी सभि घरै विचि जचनी ॥ १८ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ जो जीव अपने शरीर रूपी कोंपलों और गुणों रूपी फूलों को गूँथकर माला तैयार करता है, उसकी माला प्रभु को प्रवान होती है, शाखाओं के फूलों को चुनने की उसे कोई आवश्यकता नहीं ॥ १ ॥ ॥महला २॥ गुरु नानक कहते हैं कि जिन जीवात्माओं रूपी स्त्रियों के घर में प्रभु-पति रमण करता है, उनके लिए नित्य वसन्त है। किन्तु जिनके पति देसावर में गये हैं, उनके लिए रात-दिन जलने के अतिरिक्त और कुछ नहीं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ वाहिगुरु स्वयं ही कृपा करके जीवों को बख़्श लेता है। इसीलिए मैं प्रतिदिन उस सत्यस्वरूप प्रभु की सेवा में लीन रहता हूँ, उसके गुण गाता और मन को उसके ध्यान में संलग्न करता हूँ। मेरा प्रभु अन्तहीन है, उसका अन्त आज तक किसी ने नहीं देखा।

सतगुरु के चरणों में लगकर नित्य हरि-नाम का जाप करो। सब मनोवाञ्छित फलों की प्राप्ति होगी और सब अपेक्षाएँ घर में ही पूरी हो जायेंगी ॥ १८ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ पहिल बसंतै आगमनि पहिला मउलिओ सोइ। जितु मउलिऐ सभ मउलीऐ तिसहि न मउलिहु कोइ ॥ १ ॥ म० २ ॥ पहिल बसंतै आगमनि तिस का करहु बीचारु। नानक सो सालाहीऐ जि सभसै दे आधारु ॥ २ ॥ ॥ म० २ ॥ मिलिऐ मिलिआ ना मिलै मिलै मिलिआ जे होइ। अंतर आतमै जो मिलै मिलिआ कहीऐ सोइ ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ हरि हरि नामु सलाहीऐ सचु कार कमावै। दूजी कारै लगिआ फिरि जोनी पावै। नामि रतिआ नामु पाईऐ नामे गुण गावै। गुर कै सबदि सलाहीऐ हरि नामि समावै। सतिगुर सेवा सफल है सेविऐ फल पावै ॥ १६ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ सबसे पहले वसन्त ऋतु आती है, किन्तु उससे भी पहले हरि का विकास हुआ है अर्थात् हरि सबका विकास करता है, स्वय वह स्वविकसित है ॥ १ ॥ म० २ ॥ जिसका आना वसन्त-आगमन से भी पहले होता है (भाव परमात्मा से है), उसका विचार कीजिए। गुरु नानक कहते हैं कि उसका गुणगान करना चाहिए, जो सबका आधार है ॥ २ ॥ म० २ ॥ केवल ऊपरी मिलन से ही सच्चा मिलाप नहीं होता, सच्चा मिलाप तभी होता है, जब मन से भावस्तर पर मिलन हो। अन्तरात्मा के प्रभुमय हो जाने को ही सही अर्थों में प्रभु-मिलन कहा जा सकता है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ हरि-नाम का गुणगान कीजिए और सदा सत्कर्म करिए। असत्कर्म करनेवाला जीव पुनर्जन्म का भागी होता है। हरि-नाम में रत होकर नाम का सिमरन कीजिए और नामी का गुण गाइए। गुरु के शब्दों द्वारा हरि-नाम में लीन होने से वाहिगुरु की सेवा सफल होती है और सेवा का अमर फल प्राप्त होता है ॥ १९ ॥

॥ सलोक म० २ ॥ किसही कोई कोइ मंञु निमाणी इकु तू। किउ न मरीजै रोइ जा लगु चिति न आवही ॥ १ ॥ ॥ म० २ ॥ जां सुख ता सहु राविओ दुखि भी संम्हालिओइ। नानकु कहै सिआणीए इउ कंत मिलावा होइ ॥२॥ पउड़ी ॥ हउ किआ सालाही किरम जंतु वडी तेरी वडिआई। तू अगम दइआलु अगंमु है आपि लैहि मिलाई। मै तुझ बिनु बेली को

नही तू अंति सखाई। जो तेरी सरणागती तिन लैहि छडाई। नानक वेपरवाहु है तिसु तिलु न तमाई ॥ २० ॥ १ ॥

॥ सलोक म० २ ॥ किसी का कोई आश्रय है, किसी का कोई सहारा, किन्तु मुझ अपदार्थ के लिए केवल तुम ही एक मात्र अवलम्ब हो। जब तक तुम मेरे हृदय में निवास नहीं करते, क्यों न मैं रो-रोकर प्राण दे दूँ ? ॥ १ ॥ म० २ ॥ सुख में पति के साथ रमण किया है तो दुःख में भी उसी को स्मरण करना होगा। गुरु नानक कहते हैं कि हे जीवात्मा ! (सुख-दुःख दोनों में प्रभु-पति के साथ रहने से ही) परमात्मा रूपी पति इसी तरह मिलता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मैं तो निकृष्टतम कीटसमान जीव हूँ, मैं तुम्हारा क्या गुणगान कर सकता हूँ ? तुम अपरिमित दयामय हो, अगम हो, स्वयं ही कृपा करके मुझे अपने साथ मिला लो। तुम्हारे बिना मेरा कोई संगी-साथी नहीं है, तुम ही मेरे एकमात्र सहायक हो। जो तुम्हारी शरण में आते हैं, तुम उन्हें मुक्त करवा लेते हो। गुरु नानक कहते हैं कि तुम बेपरवाह हो, तुम्हें किसी प्रकार का कोई लोभ नहीं है ॥ २० ॥ १ ॥

रागु सूही बाणी स्री कबीर जीउ तथा सभना भगता की ॥
कबीर के

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ अवतरि आइ कहा तुम कीना। राम को नामु न कबहू लीना ॥ १ ॥ राम न जपहु कवन मति लागे। मरि जइबे कउ किआ करहु अभागे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुख सुख करि कै कुटंबु जीवाइआ। मरती बार इकसर दुखु पाइआ ॥ २ ॥ कंठ गहन तब करन पुकारा। कहि कबीर आगे ते न संम्हारा ॥ ३ ॥ १ ॥

मनुष्य-जन्म लेकर भी, हे लोगो ! तुमने क्या किया ? प्रभु का नाम तो कभी सिमरन नहीं किया ॥ १ ॥ न जाने किन मन्द विचारों के कारण तुमने राम-नाम नहीं जपा। अरे अभागो ! मरते समय के लिए तुमने क्या उपाय किये हैं ? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुःख-सुख सहन करके तुमने परिवार की पालना की, किन्तु मरते समय का दुःख तुम्हें अकेले ही भोगना पड़ा ॥ २ ॥ जब यमदूत तुम्हारा गला घोंटते हैं, तब तुम चिल्लाते हो, पुकारते हो। कबीरजी कहते हैं कि पहले ही क्यों तुमने उस परमात्मा को याद नहीं किया ॥ ३ ॥ १ ॥

॥ सूही कबीर जीउ ॥ थरहर कंपै बाला जीउ । ना जानउ किआ करसी पीउ ॥ १ ॥ रैनि गई मत दिनु भी जाइ । भवर गए बग बैठे आइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काचै करवै रहै न पानी । हंसु चलिआ काइआ कुमलानी ॥ २ ॥ कुआर कंनिआ जैसे करत सीगारा । किउ रलीआ मानै बाझु भतारा ॥ ३ ॥ काग उडावत भुजा पिरानी । कहि कबीर इह कथा सिरानी ॥ ४ ॥ २ ॥

जीवात्मा रूपी स्त्री पति-मिलन के समय थर-थर काँपती है। सोचती है, न जाने पति क्या करेगा ॥ १ ॥ यही सोचते रात बीत जाती है, कहीं दिन भी इसी प्रकार बीत न जाय (जवानी बीतती है, कहीं बुढ़ापा भी यों ही न जाय)। भँवरे उड़ गये हैं, बगुले आ बैठे हैं (जवानी बीत गयी है, अब बुढ़ापा आ गया है।) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कच्चे घड़े में जैसे पानी नहीं रहता, वैसे ही ये शरीर कच्चे घड़े के समान है। इसमें की आत्मा निकल जाती है, तो शरीर कुम्हला जाता है ॥ २ ॥ कुमारी कन्या यदि श्रृंगार कर भी ले तो पति के बिना वह क्या रंगरलियाँ मनायेगी अर्थात् जीव का बाहरी साज-श्रृंगार प्रभु-पति के बिना व्यर्थ है ॥ ३ ॥ बुढ़ापे में पति की इन्तज़ार में काग उड़ाते मेरी बाँह दुःखने लगी है अर्थात् मैं परमात्मा रूपी पति की प्रतीक्षा में टूट गया हूँ और अब आयु का भी अन्त आ गया है। कबीरजी कहते हैं कि यही कथा का अन्त है, इसी के प्रतीक-सन्दर्भ में जीवन की कहानी चलती है ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ सूही कबीर जीउ ॥ अमलु सिरानो लेखा देना । आए कठिन दूत जम लेना । किआ तै खटिआ कहा गवाइआ । चलहु सिताब दीबानि बुलाइआ ॥ १ ॥ चलु दरहालु दीवानि बुलाइआ । हरि फुरमानु दरगह का आइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करउ अरदासि गाव किछु बाकी । लेउ निबेरि आजु की राती । किछु भी खरचु तुम्हारा सारउ । सुबह निवाज सराइ गुजारउ ॥ २ ॥ साध संगि जाकउ हरि रंगु लागा । धनु धनु सो जनु पुरखु सभागा । ईत ऊत जन सदा सुहेले । जनमु पदारथु जीति अमोले ॥ ३ ॥ जागतु सोइआ जनमु गवाइआ । मालु धनु जोरिआ भइआ पराइआ । कहु कबीर तेई नर भूले । खसमु बिसारि माटी संगि रूले ॥ ४ ॥ ३ ॥

जीवन एक प्रकार की नौकरी है, जिससे अवकाश प्राप्त करने पर अब तुम्हें हिसाब-किताब देना है, कठोर यमदूत तुम्हें लेने आये हैं। इस बीच तुमने क्या कमाया और क्या व्यर्थ किया, इसका हिसाब देने के लिए तुम्हें दरबार में बुलाया गया है, तुम्हें शीघ्र चलना है ॥ १ ॥ इसी हालत में तुम चलो, दरबार से ऐसा हुक्म तुम्हें मिल चुका है, नैयायिक ने बुलाया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम यमदूत से विनती करते हो कि नौकरी का कुछ थोड़ा सा कार्य बाक़ी रहता है, कुछ गाँवों से उगाही करनी है, मैं रातों-रात यह कार्य भुगता लूँगा, बल्कि तुम्हें भी ख़र्चसार के तौर पर उसमें से कुछ दूँगा। रात भर में समूचा कार्य समाप्त करके मैं तुम्हारे साथ चलूँगा और प्रातः की नमाज़ रास्ते में ही पढ़ लूँगा ॥ २ ॥ साधु-संगति में जिन जीवों को परमात्मा से प्यार हो जाता है, वे सौभाग्यशाली हैं, वे धन्य हैं। लोक-परलोक में ऐसे जीव सदा सुखी रहते हैं। वे अपने अमूल्य जन्म का सही मूल्यांकन कर लेते हैं ॥ ३ ॥ जो जागते हुए भी सोते हैं अर्थात् संसार में आकर भी अन्धकार में पड़े रहते हैं, वे मनुष्य-जन्म को व्यर्थ गँवा देते हैं। उनके द्वारा एकत्रित सम्पत्ति सब अन्य लोग भोगते हैं। कबीरजी कहते हैं कि वे लोग पथभ्रष्ट हैं। वे परमात्मा रूपी पति को छोड़कर मिट्टी में लोटते हैं ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ सूही कबीर जीउ ललित ॥ थाके नैन स्रवन सुनि थाके थाकी सुंदरि काइआ। जरा हाकदी सभ मति थाकी एक न थाकसि माइआ ॥ १ ॥ बावरे तै गिआन बीचारु न पाइआ। बिरथा जनमु गवाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तब लगु प्रानी तिसै सरेवहु जब लगु घट महि सासा। जे घटु जाइ त भाउ न जासी हरि के चरन निवासा ॥ २ ॥ जिस कउ सबदु बसावै अंतरि चूकै तिसहि पिआसा। हुकमै बूझै चउपड़ि खेलै मनु जिणि ढाले पासा ॥ ३ ॥ जो जन जानि भजहि अबिगत कउ तिन का कछू न नासा। कहु कबीर ते जन कबहु न हारहि ढालि जु जानहि पासा ॥ ४ ॥ ४ ॥

आँखें अब देखने में असमर्थ हैं, कान सुनकर थक गये हैं और सुन्दर शरीर भी शिथिल हो गया है। बुढ़ापे के आगमन से मन, बुद्धि भी शिथिल हो गये हैं, किन्तु अब तक भी तुम्हारा मोह नहीं टूटा ॥ १ ॥ अरे मूर्ख ! तूने कभी सच्चे ज्ञान को प्राप्त नहीं किया, समूचा जन्म व्यर्थ गँवा दिया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मनुष्य ! जब तक तेरे शरीर में श्वास आता-जाता है, तब तक उस परमात्मा की सेवा कर। यदि शरीर नष्ट

भी हो जायेगा तो भी प्रभु से लगा तेरा प्यार हमेशा बना रहेगा ।। २ ।। जिन जीवों के मन में हरि का नाम बसता है, उनकी तृष्णा दूर हो जाती है । वह हरि के हुक्म को समझता है और जीवन के इस चौपड़ के खेल पर मन का पासा फेंकता है ।। ३ ।। जो लोग ज्ञानपूर्वक अविनाशी परमात्मा का जाप करते हैं, वे कभी नष्ट नहीं होते । कबीरजी कहते हैं कि पासा फेंकते हुए वे जीव कभी पराजित नहीं होते ।। ४ ।। ४ ।।

।। सूही ललित कबीर जीउ ।। एकु कोटु पंच सिकदारा पंचे मागहि हाला । जिमी नाही मै किसी की बोई ऐसा देनु दुखाला ।। १ ।। हरि के लोगा मो कउ नीति डसै पटवारी । ऊपरि भुजा करि मै गुर पहि पुकारिआ तिनि हउ लीआ उबारी ।। १ ।। रहाउ ।। नउ डाडी दस मुंसफ धावहि रईअति बसन न देही । डोरी पूरी मापहि नाही बहु बिसटाला लेही ।। २ ।। बहतरि घर इकु पुरखु समाइआ उनि दीआ नामु लिखाई । धरमराइ का दफतरु सोधिआ बाकी रिजम न काई ।। ३ ।। संता कउ मति कोई निंदहु संत रामु है एको । कहु कबीर मै सो गुरु पाइआ जा का नाउ बिबेको ।। ४ ।। ५ ।।

शरीर एक किला है, जिसके पाँच अधिकारी (काम, क्रोध आदि) हैं और पाँचों मन पर राज्य करते और उससे यथेष्ट कार्य करवाते हैं । मैंने तो किसी की धरती पर हल नहीं चलाया, फिर अकारण मुआमला देना मुझे दुःखकर प्रतीत होता है ।। १ ।। हे प्रभु के सेवको ! मुझे पटवारी का भय अर्थात् मौत का भय नित्य डराता है, किन्तु जब मैंने भुजा उठाकर गुरु के पास पुकार की तो उसने मुझे बचा लिया ।। १ ।। रहाउ ।। नौ परिमापक (शरीर के नौ द्वार) तथा दस न्यायाधीश (पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ) दौड़कर बीच में आ जाते हैं और प्रजा को शान्ति से बसने नहीं देते । परिमापक डोरी का पूरा माप भी नहीं करते और बड़ी-बड़ी रिश्वत खाते हैं ।। २ ।। शरीर की बहत्तर कोठड़ियों (तंत्रिका) में जो परमात्मा समाया हुआ है, उसने मेरे नाम में व्यय जुड़वा दिया है, इसलिए जब धर्मराज ने हिसाब-किताब की जाँच की तो मेरी ओर कोई ऋण बाक़ी नहीं निकला अर्थात् प्रभु-कृपा से मेरे सब कर्मफल नाश हो गये ।। ३ ।। इसीलिए कबीरजी कहते हैं कि सन्त अनिन्दनीय हैं, सन्त और राम में अभेद है । मुझे विवेक रूपी गुरु की प्राप्ति हुई है (जो सदैव मेरा पथ-प्रदर्शन करता है) ।। ४ ।। ५ ।।

रागु सूही बाणी स्री रविदास जीउ की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सह की सार सुहागनि जानै । तजि अभिमानु सुख रलीआ मानै । तनु मनु देइ न अंतरु राखै । अवरा देखि न सुनै अभाखै ॥१ ॥ सो कत जानै पीर पराई । जा कै अंतरि दरदु न पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुखी दुहागनि दुइ पख हीनी । जिनि नाह निरंतरि भगति न कीनी । पुरसलात का पंथु दुहेला । संगि न साथी गवनु इकेला ॥ २ ॥ दुखीआ दरदवंदु दरि आइआ । बहुतु पिआस जबाबु न पाइआ । कहि रविदास सरनि प्रभ तेरी । जिउ जानहु तिउ करु गति मेरी ॥ ३ ॥ १ ॥

प्रभु-पति का महत्त्व सुहागिन स्त्री ही जानती है (अर्थात् प्रभु से मिलाप प्राप्त कर लेनेवाली स्त्री ही प्रभु का महत्त्व समझती है)। वह अभिमान का त्याग कर अपने पति के साथ रंगरेलियाँ मनाती है और परमसुख को प्राप्त होती है। वह अपना तन-मन प्रभु को समर्पित कर देती है और उसके साथ अभेद प्राप्त कर लेती है, दूसरों के सम्बन्ध में न वह बात करती है और न उनकी बात सुनती है, उनकी ओर देखती भी नहीं ॥ १ ॥ जिसके मन में प्रभु-पति के वियोग की वेदना नहीं, वह मनमुख गुरुमुखों की विरह-पीड़ा को क्योंकर समझ सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस कुलटा स्त्री ने प्रभु-पति की भक्ति नहीं की, वह दुःख उठाती है और दोनों ओर लोक-परलोक से वञ्चित रहती है। यमदूतों का मार्ग बड़ा कठिन है, वहाँ आत्मा का कोई संगी-साथी नहीं होता, उसे अकेले ही जाना होता है ॥ २ ॥ दुःखी और पीड़ित आत्मा परमात्मा के द्वार पर पुकार करती है। प्रभु-दर्शनों की उसकी उत्कट इच्छा का कोई समाधान नहीं मिलता। रविदासजी कहते हैं कि वे तो प्रभु की शरण में हैं, जैसा वह उचित समझता है वैसी ही गति उन्हें स्वीकार है ॥ ३ ॥ १ ॥

॥ सूही ॥ जो दिन आवहि सो दिन जाही । करना कूचु रहनु थिरु नाही । संगु चलत है हम भी चलना । दूरि गवनु सिर ऊपरि मरना ॥१॥ किआ तू सोइआ जागु इआना । तै जीवनु जगि सचु करि जाना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनि जीउ दीआ सु रिजकु अंबरावै । सभ घट भीतरि हाटु चलावै । करि बंदिगी छाडि मै मेरा । हिरदै नामु सम्हारि सवेरा ॥ २ ॥

जनमु सिरानो पंथु न सवारा। सांझ परी दहदिस अंधिआरा। कहि रविदास निदानि दिवाने। चेतसि नाही दुनीआ फनखाने ॥ ३ ॥ २ ॥

जो दिन आते हैं वे बीत जाते हैं। यहाँ का रहना स्थिर नहीं है, अतः जाना तो होगा ही; हमारे साथी जा रहे हैं, हमें भी चलना है; दूर कहीं जाना है, मौत हमारी प्रतीक्षा में है ॥ १ ॥ हे नासमझ जीव! तू क्यों सो रहा है, जाग। तूने अपनी नासमझी में इस संसार के जीवन को ही सच मान लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसने प्राण दिये हैं वही पेट भरकर इसकी रक्षा भी करता है। प्रभु ने मनुष्य की हर आवश्यकता को पूरा करने के लिए उसके भीतर ही प्रबन्ध कर रखा है। इसलिए, हे मनुष्य! तू मैं-मेरी का अभिमान छोड़कर प्रभु का भजन कर। यथाशीघ्र मन में प्रभु-नाम स्थिर कर ले ॥ २ ॥ समूचा जीवन बीत गया, किन्तु तुमने सही रास्ता नहीं पकड़ा। यदि सन्ध्या हो गयी (मौत निकट आ गयी) तो दसों दिशाओं में अन्धकार छा जायेगा। रविदासजी कहते हैं कि हे मूर्ख दीवाने! संसार नश्वर है, तू क्यों इसके प्रति सजग नहीं होता ॥ ३ ॥ २ ॥

॥ सूही ॥ ऊचे मंदर साल रसोई। एक घरी फुनि रहनु न होई ॥ १ ॥ इहु तनु ऐसा जैसे घास की टाटी। जलि गइओ घासु रलि गइओ माटी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भाई बंध कुटंब सहेरा। ओइ भी लागे काढु सवेरा ॥ २ ॥ घर की नारि उरहि तन लागी। उह तउ भूतु भूतु करि भागी ॥३॥ कहि रविदास सभै जगु लूटिआ। हम तउ एक राम कहि छूटिआ ॥ ४ ॥ ३ ॥

किसी के पास यदि भव्य भवन हों, ऊँची पाकशालाएँ हों अर्थात् कोई कितना भी सम्पत्तिशाली क्यों न हो, मृत्यु की घड़ी आने पर वह क्षण भर भी उसे नहीं टाल सकता ॥ १ ॥ यह शरीर तो घास की टट्टी के समान दुर्बल है। कभी भी जैसे घास जलकर मिट्टी में मिल जाती है (वैसे ही इसका अन्त होगा) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सब नातेदार मित्र और परिवार के सदस्य कहने लगते हैं कि (मुर्दे को) जल्दी से घर से हटाइए ॥२॥ अपनी स्त्री भी, जो सदा गले लगती थी, मुर्दे को देखकर भूत-भूत कह भाग जाती है ॥३॥ रविदासजी कहते हैं कि उक्त परिस्थितियों में सारा संसार दुःखी हो रहा है, केवल राम का नाम स्मरण करनेवाला ही इन दुःखों से मुक्त हो सकता है ॥ ४ ॥ ३ ॥

रागु सूही बाणी सेख फरीद जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ तपि तपि लुहि लुहि हाथ मरोरउ । बावलि होई सो सहु लोरउ । तै सहि मन महि कीआ रोसु । मुझु अवगन सह नाही दोसु ॥ १ ॥ तै साहिब की मै सार न जानी । जोबनु खोइ पाछै पछुतानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काली कोइल तू कित गुन काली । अपने प्रीतम के हउ बिरहै जाली । पिरहि बिहून कतहि सुखु पाए । जा होइ क्रिपालु त प्रभू मिलाए ॥ २ ॥ विधन खूही मुंध इकेली । ना को साथी ना को बेली । करि किरपा प्रभि साध संगि मेली । जा फिरि देखा ता मेरा अलहु बेली ॥ ३ ॥ वाट हमारी खरी उडीणी । खंनिअहु तिखी बहुतु पिईणी । उसु ऊपरि है मारगु मेरा । सेख फरीदा पंथु सम्हारि सवेरा ॥४॥१॥

(यहाँ बाबा फ़रीद प्रभु-वियुक्ता आत्मा की दुःख-भरी कथा कहते हैं।) प्रभु के बिना शोकसंतप्त होकर मैं दुःखी हो रही हूँ, हाथ मलती हूँ, और उन मादिनी की भाँति अपने प्रियतम की खोज कर रही हूँ। हे प्रभु-पति ! तुमने मुझ पर गुस्सा किया, यह मेरे अवगुणों का दोष है, तुम्हारा इसमें कोई दोष नहीं ॥ १ ॥ तू सबका मालिक है, मैंने तुम्हारी क़द्र नहीं जानी। अब यौवन बीत जाने पर अर्थात् अहम् नष्ट होने पर मैं तुम्हारे लिए पछता रही हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काली कोयल किस कारण से काली हो गयी है ? वह अपने प्रियतम के विरह में जल गयी है। सच है, प्रियतम के बिना किसी को कहीं सुख नहीं मिलता। उसकी ही कृपा हो तो आत्मा रूपी स्त्री परमात्मा रूपी पति से मिलाप कर सकती है ॥२॥ यह कुआँ सूना (वियोग की स्थिति) है, इसमें आत्मा रूपी स्त्री अकेले गिर गयी है। वहाँ उसका कोई संगी या मित्र नहीं है। ऐसे में परमात्मा-पति ने सहयोग देकर (मेरी) रक्षा की है। जब मैं पीछे मुड़कर देखती हूँ तो मुझे अपना परममित्र परमात्मा साथ दीख पड़ता है ॥ ३ ॥ हमारा रास्ता तंग और सूना है। यह तलवार की धार सरीखा तेज और पतला है। हमें इसी मार्ग पर चलना है (यहाँ शून्य मार्ग की बात कह रहे हैं)। फ़रीदजी कहते हैं कि समय रहते इस मार्ग की जानकारी प्राप्त करना अपेक्षित है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ सूही ललित ॥ बेड़ा बंधि न सकिओ बंधन की वेला । भरि सरवरु जब ऊछलै तब तरणु दुहेला ॥ १ ॥ हथु न लाइ

कसुंभड़ै जलि जासी ढोला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इक आपीन्है पतली सहकेरे बोला । दुधा थणी न आवई फिरि होइ न मेला ॥ २ ॥ कहै फरीदु सहेलीहो सहु अलाएसी । हंसु चलसी डुंमणा अहि तनु ढेरी थीसी ॥ ३ ॥ २ ॥

(इस संसार-सागर से पार उतरने के लिए) जब बेड़ा बाँधने का (नौका बनाने अर्थात् भजन करने का) समय था, तब तुमने बेड़ा नहीं बनाया। जब सागर की ऊँची ओर तेज लहरों का सामना होगा अर्थात् जीवन में विषय-विकार बढ़ जायेंगे, तो तैरना कठिन हो जायेगा ॥ १ ॥ कुसुम्भ का फूल बड़ा लाल और भड़कीला होता है, किन्तु इसे हाथ न लगाना, जल जायेगा। (विषय-विकार कुसुम्भ के फूल की तरह सुन्दर और आकर्षक होता है, किन्तु उनका सौन्दर्य आग की लपट की तरह दाहक होता है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एक तो जीव रूपी स्त्री स्वयं दुर्बल है, दूसरे मालिक कठोर है अर्थात् स्त्री ने प्रभु-नाम का बल प्राप्त नहीं किया और उसे कठोर हुक्मों का सामना करना है। परमात्मा से मिलन भी इसी जन्म में सम्भव है; क्योंकि जिस प्रकार थनों से निकाला गया दूध दोबारा थनों में नहीं जा सकता है, उसी तरह इस जन्म को गँवा देने पर दोबारा परमात्मा से मिलाप नहीं हो सकता ॥ २ ॥ शेख़ फ़रीदजी पुकारकर कहते हैं कि हे मित्रो ! परमात्मा हम सबको बुला लेगा अर्थात् हमारी मृत्यु ज़रूर आयेगी। यह हंस (आत्मा) उदास होकर चल पड़ेगा और शरीर मिट्टी की ढेरी हो जायेगा ॥ ३ ॥ २ ॥

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

॥ रागु बिलावलु महला १ चउपदे घरु १ ॥ तू सुलतानु कहा हउ मीआ तेरी कवन वडाई । जो तू देहि सु कहा सुआमी मै मूरख कहणु न जाई ॥ १ ॥ तेरे गुण गावा देहि बुझाई । जैसे सच महि रहउ रजाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो किछु होआ सभु किछु तुझ ते तेरी सभ असनाई । तेरा अंतु न जाणा मेरे साहिब मै अंधुले किआ चतुराई ॥ २ ॥ किआ हउ कथी कथे कथि देखा मै अकथु न कथना जाई । जो तुधु भावै सोई आखा

तिलु तेरी वडिआई ॥ ३ ॥ एते कूकर हउ बेगाना भउका इसु तन ताई । भगति हीणु नानकु जे होइगा ता खसमै नाउ न जाई ॥ ४ ॥ १ ॥

हे परमेश्वर ! तुम तो सबके बादशाह हो, इसलिए यदि मैं तुम्हें मियाँ (सम्माननीय) कह भी दूँ, तो इसमें तुम्हारी क्या बड़ाई है ? हे मालिक ! तुम जैसा भी नाम-कथन करने की शक्ति देते हो, मैं वैसा ही कथन कर लेता हूँ; अन्यथा मैं मूर्ख जीव क्या कह सकता हूँ ? ॥१॥ मैं तुम्हारे गुण गा सकूँ, मुझे ऐसी समझ (बुद्धि) प्रदान करो। हे रज़ा के स्वामी ! ऐसी कृपा करो कि मैं तुम्हारे सत्यस्वरूप में स्थित रह सकूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह जो कुछ भी (जड़-चेतन) विश्व-प्रपञ्च निर्मित है, सब कुछ तुमसे ही हुआ है, और यह सब तुम्हारी ही प्रीति से हुआ है। हे मालिक ! मैं जीव तुम्हारा अन्त क्या पा सकता हूँ। मुझ अन्धे में क्या सामर्थ्य है कि तुम्हारा अन्त प्राप्त कर सकूँ ॥ २ ॥ मैं तुम्हारे गुण क्या वर्णन कर सकता हूँ; क्योंकि वर्णन कर-करके भी जब देखता हूँ तो भी यही कहना पड़ता है कि तुम अकथ हो, तुम्हारा गुणगान मुझसे अकथनीय है अर्थात् मुझमें इतनी सामर्थ्य नहीं कि तुम्हारे गुण वर्णन कर सकूँ। हे ईश्वर ! मैं तुम्हारी तिल भर भी वही बड़ाई (गुण आदि) करने में अपने को समर्थ पाता हूँ, जो तुम्हें भाती है ॥ ३॥ काम-क्रोधादि कुत्तों के बीच फँसा हुआ मैं इस शरीर की मुक्ति के लिए पुकार रहा हूँ। हे भगवन् ! (गुरु नानक कहते हैं,) यदि मैं भक्ति से हीन भी होऊँ तो भी मैं तुम्हारा ही रहूँगा, तब भी तुम्हारा नाम मेरे साथ रहेगा अर्थात् मुझे तुम्हारा ही दास कहा जाएगा ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ बिलावलु महला १ ॥ मनु मंदरु तनु वेस कलंदरु घट ही तीरथि नावा । एकु सबदु मेरै प्रानि बसतु है बाहुड़ि जनमि न आवा ॥ १ ॥ मनु बेधिआ दइआल सेती मेरी माई । कउणु जाणै पीर पराई । हम नाही चिंत पराई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अगम अगोचर अलख अपारा चिंता करहु हमारी । जलि थलि महीअलि भरिपुरि लीणा घटि घटि जोति तुम्हारी ॥ २ ॥ सिख मति सभ बुधि तुम्हारी मंदिर छावा तेरे । तुझ बिनु अवरु न जाणा मेरे साहिबा गुण गावा नित तेरे ॥ ३ ॥ जीअ जंत सभि सरणि तुम्हारी सरब चिंत तुधु पासे । जो तुधु भावै सोई चंगा इक नानक की अरदासे ॥ ४ ॥ २ ॥

मेरा मन ही प्रभु का मन्दिर है और मेरा शरीर क़लंदर का वेश धारण किए हुए है, मैं हृदय-तीर्थ में ही स्नान करता हूँ। केवल एक शब्द 'ब्रह्म' ही मेरे प्राणों में निवास करता है, इसलिए मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा अर्थात् मुक्त हो जाऊँगा ॥१॥ हे माँ! मेरा मन उस दयालु परमेश्वर से जुड़ (बिंध) चुका है। उस परमेश्वर के अतिरिक्त पर-पीड़ा को कौन समझ सकता है। इसीलिए हम किसी अन्य (देवी-देव) के सम्बन्ध में सोचते ही नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे अगम, अगोचर, अलख, अपार परमेश्वर! तुम्हीं हमारी चिन्ता करनेवाले हो। जल में, थल में, पृथ्वी-आकाश में सर्वत्र तुम्हीं व्याप्त हो और घट-घट में तुम्हारा ही प्रकाश है ॥ २ ॥ समस्त जीवों को समझ-बूझ, बुद्धि तुम्हारी ही प्रदान की हुई है, सब जीवों के शरीर में तुम्हारा ही निवास है। हे मालिक! तुम्हारे अतिरिक्त मैं अन्य किसी को नहीं जानता, मैं तो तुम्हारे ही गुणगान करता हूँ ॥३॥ सब जीव-जन्तु तुम्हारी ही शरण हैं और तुम्हें ही सबकी चिन्ता है। (गुरु) नानक की यही प्रार्थना है कि जो तुम्हें अच्छा लगे, उसमें ही मेरी रुचि रहे अर्थात् तुम्हारी रज़ा के अनुकूल चलता रहूँ ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ बिलावलु महला १ ॥ आपे सबदु आपे नीसानु। आपे सुरता आपे जानु। आपे करि करि वेखै ताणु। तू दाता नामु परवाणु ॥१॥ ऐसा नामु निरंजन देउ। हउ जाचिकु तू अलख अभेउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माइआ मोहु धरकटी नारि। भूंडी कामणि कामणिआरि। राजु रूपु झूठा दिन चारि। नामु मिलै चानणु अंधिआरि ॥ २ ॥ चखि छोडी सहसा नही कोइ। बापु दिसै वेजाति न होइ। एके कउ नाही भउ कोइ। करता करे करावै सोइ ॥३॥ सबदि मुए मनु मन ते मारिआ। ठाकि रहे मनु साचै धारिआ। अवरु न सूझै गुर कउ वारिआ। नानक नामि रते निसतारिआ ॥ ४ ॥ ३ ॥

हे परमात्मन्! तुम स्वयं ही शब्द (ब्रह्म) हो और स्वयं ही उसका चिह्न (प्रकटाव) हो। स्वयं ही (शब्द के) श्रोता हो और स्वयं ही उसके जाननेवाले भी हो। तुम स्वयं ही इस संसार की रचना कर-करके स्वयं ही उसके द्रष्टा भी हो। तुम स्वयं नाम के दाता (दान करनेवाले) हो और अपना नाम-दान भक्तों को देकर स्वयं ही उसे स्वीकार करनेवाले भी हो ॥ १ ॥ हे निरंजन प्रभो! अपना ऐसा नाम प्रदान करो, जिससे मैं मुक्त हो सकूँ। हे अलख-अभेद ईश्वर! मैं तुम्हारे नाम (महिमा) का याचक हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भगवन्! तुम्हारी माया सबको मोहित करनेवाली व्यभिचारिणी नारी के समान है। वह माया जादू-टोने करने

वाली भट्ठी स्त्री के समान है। उस माया से निर्मित यह राज्य और रूप आदि सब झूठे हैं और इनका अस्तित्व केवल चार दिन का समझना चाहिए। यदि मुझे तुम्हारा नाम (स्मरण) का दान प्राप्त हो जाए, तो मेरे मन का अँधेरा मिटकर वहाँ प्रकाश हो जाए ॥२॥ जिसने माया को देख लिया, उसे फिर कोई संशय नहीं रहता। जिसका पिता प्रत्यक्ष हो उसे कोई अन्य जाति से उत्पन्न नहीं कह सकता। इसलिए जिस भक्त ने एक मात्र तुम्हें अपना पिता (सर्वस्व) मान रखा हो, उसे किसी भी तरह का भय नहीं है; क्योंकि वह समझता है कि तुम स्वयं ही कर्ता और कारयिता (करवाने वाला) हो ॥३॥ ऐसा भक्तजन ही सद्गुरु के उपदेश से अभिमान-रहित होकर मन को वश करनेवाला होता है और अन्य संकल्प-विकल्पों (मायादि) से मन को रोककर सत्यस्वरूप भगवान की ओर प्रवृत्त (स्थिर) करने में समर्थ होता है। उसे और कुछ नहीं सूझता। वह तो सद्गुरु के ही बलिहारी जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो भक्तजन परमात्मा के नाम में अनुरक्त होते हैं, उनका निस्तार (उद्धार) हो जाता है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ बिलावलु महला १ ॥ गुरबचनी मनु सहज धिआने। हरि कै रंगि रता मनु माने। मनमुख भरमि भुले बउराने। हरि बिनु किउ रहीऐ गुरसबदि पछाने ॥ १ ॥ बिनु दरसन कैसे जीवउ मेरी माई। हरि बिनु जीअरा रहि न सकै खिनु सतिगुरि बूझ बुझाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा प्रभु बिसरै हउ मरउ दुखाली। सासि गिरासि जपउ अपुने हरि भाली। सद बैरागनि हरि नामु निहाली। अब जाने गुरमुखि हरि नाली ॥ २ ॥ अकथ कथा कहीऐ गुर भाइ। प्रभु अगम अगोचरु देइ दिखाइ। बिनु गुर करणी किआ कार कमाइ। हउमै मेटि चलै गुरसबदि समाइ ॥ ३ ॥ मनमुखु विछुड़ै खोटी रासि। गुरमुखि नामि मिलै साबासि। हरि किरपाधारी दासनि दास। जन नानक हरि नाम धनु रासि ॥ ४ ॥ ४ ॥

गुरु के वचनों (उपदेश) से मेरा मन भगवान के ध्यान में लीन हो गया है, और मन को यह विश्वास हो गया है कि वह प्रभु के रंग में रँग चुका है। गुरुवचनों को त्यागकर मन के कहने पर चलनेवाले लोग भ्रम में भूले हुए बावले बन रहे हैं। मैं प्रभु के बिना नहीं रह सकता और प्रभु की पहचान (ज्ञान) गुरुवचनों से ही सम्भव है ॥ १ ॥ हे माँ! प्रभु के दर्शन बिना कैसे जीवित रहूँ? हरि के बिना यह जीवन क्षण भर भी रह नहीं सकता, क्योंकि अब मुझे गुरु ने उसकी प्राप्ति का ज्ञान दे दिया है ॥१॥

रहाउ ।। अगर मेरा प्रभु भूल जाए, तो मैं दुःख में मर जाऊँगा; इसीलिए हर श्वास और हरेक ग्रास ग्रहण करते समय उसकी ही याद करता हूँ और उसी का नाम लेता हूँ। सदा ही उस प्रभु की वैरागिनी बनकर उसके नाम से निहाल (सन्तुष्ट या भरपूर) रहता हूँ। मैं तो गुरु के वचनों से भगवान को अब अपने साथ ही अनुभव करता हूँ ।। २ ।। उस अवर्णनीय भगवान की महिमा गुरु में भक्तिभाव रखकर ही की जानी सम्भव है; क्योंकि उस अगम्य-अगोचर भगवान के दर्शन गुरु ही करा सकता है और बिना गुरु के कोई भी कर्म (करनी) व्यर्थ है, इसलिए अपना अहम् त्यागकर गुरु के शब्दों में अपने आप को लीन कर दो ।। ३ ।। जो व्यक्ति गुरु के बताए मार्ग को छोड़कर मनमाने (अपने मन के कहने के अनुसार) मार्ग को अपनाता है, उसके पास खोटेपन (बुराइयों) का ही ढेर लगा रहता है। गुरुवचनों को अपनाकर जो लोग भगवान के नाम में लीन होते हैं, उन्हें ही धन्य है। ऐसे भक्तों के सेवकों तक पर भगवान अपनी कृपा करता है। श्री गुरु नानक कहते हैं, हे प्रभु ! मुझे भी अपने नाम रूपी धन का ढेर प्रदान करो ।। ४ ।। ४ ।।

बिलावलु महला ३ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। ध्रिगु ध्रिगु खाइआ ध्रिगु ध्रिगु सोइआ ध्रिगु ध्रिगु कापड़ु अंगि चड़ाइआ। ध्रिगु सरीरु कुटंब सहित सिउ जितु हुणि खसमु न पाइआ। पउड़ी छुड़की फिरि हाथि न आवै अहिला जनमु गवाइआ ।। १ ।। दूजा भाउ न देई लिव लागणि जिनि हरि के चरण विसारे। जगजीवन दाता जन सेवक तेरे तिन के तै दूखि निवारे ।। १ ।। रहाउ ।। तू दइआलु दइआपति दाता किआ एहि जंत विचारे। मुकत बंध सभि तुझ ते होए ऐसा आखि वखाणे। गुरमुखि होवै सो मुकति कहीऐ मनमुख बंध विचारे ।। २ ।। सो जनु मुकतु जिसु एक लिव लागी सदा रहै हरि नाले। तिन की गहण गति कही न जाई सचै आपि सवारे। भरमि भुलाणे सि मनमुख कहीअहि ना उरवारि न पारे ।। ३ ।। जिस नो नदरि करे सोई जनु पाए गुर का सबदु सम्हाले। हरि जन माइआ माहि निसतारे। नानक भागु होवै जिसु मसतकि कालहि मारि बिदारे ।। ४ ।। १ ।।

ऐसे खाने, सोने और अंगों पर वस्त्रादि धारण करने पर धिक्कार है,

और सभी बन्धु-बान्धवों सहित इस देह पर भी धिक्कार है, अगर इस जन्म में (मनुष्य-जीवन में) भी प्रभु को प्राप्त नहीं किया। यदि यह देह रूपी पौड़ी छूट गयी तो फिर हाथ नहीं आएगी और यह अत्यन्त मूल्यवान जन्म ऐसे ही गँवाया जाएगा ॥ १ ॥ जिन्होंने हरि के चरणों को भुला दिया है, उन्हें द्वैतभाव (जीव-ब्रह्म की भिन्नता) प्रभु-चरणों में लीन नहीं होने देता। हे जीवनदाता! जो लोग तुम्हारे सेवक हैं, तुमने उन सबके दुःख दूर किये हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभो! तुम दयालु हो, दया के स्वामी हो और स्वयं ही दया प्रदान करनेवाले हो, ये बेचारे जीव तो कुछ भी महत्त्व नहीं रखते। इन जीवों का मुक्ति-बन्धन सब तुम ही करनेवाले हो, यह सत्य पुकार-पुकारकर कहा गया है। जो व्यक्ति गुरु के वचनों पर चलनेवाला है, उसे मुक्त कहना चाहिए, और जो मन की बात मानकर चलनेवाला है, उसे बन्धन में बँधा हुआ मानना चाहिए ॥२॥ वही जन मुक्त हैं, जिनकी एक मात्र लगन भगवान से लगी रहती है। ऐसे लोगों का जीवन भगवान ने स्वयं ही शोभायुक्त बनाया है। ऐसे भक्तजनों की गहन गति अवर्णनीय है। जो मन की इच्छानुसार आचरण करनेवाले भ्रम में फँसे तुम्हें (भगवान को) भूले हुए हैं, ऐसे लोग न इधर के रहते (संसार के) हैं और न ही उधर (परलोक) के ॥ ३ ॥ जिस जीव पर भगवान की कृपादृष्टि होती है, उसे ही गुरु का शब्द (उपदेश) प्राप्त होता है। ऐसे ही भक्त जीव माया से उद्धार प्राप्त करते हैं। श्री गुरु नानक कहते हैं कि जिसका भाग्य अच्छा होता है, वही मृत्यु को जीतकर जन्म-मरण से रहित हो जाता है ॥४॥१॥

॥ बिलावलु महला ३ ॥ अतुलु किउ तोलिआ जाइ। दूजा होइ त सोझी पाइ। तिस ते दूजा नाही कोइ। तिस दी कीमति किकू होइ ॥ १ ॥ गुरपरसादि वसै मनि आइ। ता को जाणै दुबिधा जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपि सराफु कसवटी लाए। आपे परखे आपि चलाए। आपे तोले पूरा होइ। आपे जाणै एको सोइ ॥ २ ॥ माइआ का रूपु सभु तिस ते होइ। जिस नो मेले सु निरमलु होइ। जिस नो लाए लगै तिसु आइ। सभु सचु दिखाले ता सचि समाइ ॥ ३ ॥ आपे लिव धातु है आपे। आपि बुझाए आपे जापे। आपे सतिगुरु सबदु है आपे। नानक आखि सुणाए आपे ॥ ४ ॥ २ ॥

वह अतुलनीय भगवान भला कैसे तोला जा सकता? क्योंकि उसके अतिरिक्त कोई अन्य दूसरा हो तब तो तुलना की जा सके, दूसरा तो कोई है ही नहीं। इसलिए भगवान का मूल्य कैसे लगाया जा सकता है? ॥१॥

गुरु की प्रसन्नता (कृपा) से ही भगवान का जीव के मन में निवास हो सकता है और दुबिधा (द्वैतभाव) दूर जाती है, तो उस भगवान को जाना जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वास्तव में वह प्रभु ही गुरु रूपी सराफ़ के रूप में जिज्ञासु जीव को कसौटी पर परखनेवाला है। वह स्वयं ही जीव की परख करके उसे अपने मार्ग पर चलानेवाला है। वह स्वयं ही पूरा तोलने वाला है और आप ही वह एक मात्र सब कुछ जाननेवाला (सर्वज्ञ) है ॥२॥ माया का रूप यह जगत उससे ही निर्मित है। जिसे वह अपने साथ मिला लेता है, वही निर्मल बन जाता है और जिसका माया से लगाव करता है उसे ही माया चिपटती है। जिसे गुरु के द्वारा अपना सत्यस्वरूप दिखलाता है, वही उस सत्यस्वरूप में लीन होता है ॥ ३ ॥ वह प्रभु स्वयं ही लगन है और स्वयं ही माया है। वह स्वयं ही प्रभु-रूप में ज्ञान प्रदान करता है और स्वयं ही जीव-रूप में अपना नाम जपता है। वह स्वयं ही सद्गुरु-रूप है और स्वयं उसका उपदेश है। श्री गुरु नानक कहते हैं कि वह प्रभु ही स्वयं अपना नाम (उपदेश) अन्य जीवादि को सुनाता है ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ बिलावलु महला ३ ॥ साहिब ते सेवकु सेव साहिब ते किआ को कहै बहाना। ऐसा इकु तेरा खेलु बनिआ है सभ महि एकु समाना ॥ १ ॥ सतिगुरि परचै हरि नामि समाना। जिसु करमु होवै सो सतिगुरु पाए अनदिनु लागै सहज धिआना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ किआ कोई तेरी सेवा करे किआ को करे अभिमाना। जब अपुनी जोति खिंचहि तू सुआमी तब कोई करउ दिखा वखिआना ॥ २ ॥ आपे गुरु चेला है आपे आपे गुणी निधाना। जिउ आपि चलाए तिवै कोई चालै जिउ हरि भावै भगवाना ॥३॥ कहत नानकु तू साचा साहिबु कउणु जाणै तेरे कामां। इकना घर महि दे वडिआई इकि भरमि भवहि अभिमाना ॥ ४ ॥ ३ ॥

प्रभु (साहिब) की सेवा से ही सेवक कहलाता है और सेवक की सेवा ही उसे साहिब (परमात्मा) से मिलती है, इस बात में कोई भी क्या ग़लत तर्क दे सकता है? हे ईश्वर! तुम्हारा यह एक ऐसा अद्भुत खेल बना हुआ है कि सबमें तुम ही एक होकर समाए हुए हो ॥ १ ॥ सद्गुरु की प्राप्ति होने पर ही जीव प्रभु-नाम में मगन हो सकता है और सद्गुरु की प्राप्ति उसे ही सम्भव है जिस पर भगवान की कृपा हो। सद्गुरु की प्राप्ति से ही जीव दिन-रात सहज-ध्यान में लीन हो सकता है॥ १ ॥रहाउ॥ हे ईश्वर! तुम्हारी कृपा के बिना तो कोई (जीव) तुम्हारी सेवा भी नहीं कर सकता और सेवा पर अभिमान तो कौन कर सकता है? जब तुम अपनी ज्योति खींच लेते हो, उस अवस्था में भला कोई किसी भी प्रकार का

व्याख्यान (वर्णन) करके दिखाये तो सही ॥ २ ॥ हे भगवन् ! तुम स्वयं ही गुरु हो और स्वयं ही शिष्य भी हो और स्वयं ही (शिष्य को दिए जाने वाले) गुणों का समूह हो। हे हरि भगवन् ! तुम्हें जैसा कुछ अच्छा लगता है और जिस तरह तुम जीव को जैसे मार्ग पर चलाना चाहते हो, उसी तरह जीव चलता है ॥ ३ ॥ श्री गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभो ! एक तुम ही सच्चे स्वामी हो, तुम्हारे काम कौन समझ (जान) सकता है ? हे ईश्वर ! एक जीव के हृदय में अपना निवास करके उसे सम्मान प्रदान करते हो और कुछ अहंकार में फँसकर भ्रम में भटकते रहते हैं ॥४॥३॥

॥ बिलावलु महला ३ ॥ पूरा थाटु बणाइआ पूरै वेखहु एक समाना। इसु परपंच महि साचे नाम की वडिआई मतु को धरहु गुमाना ॥ १ ॥ सतिगुर की जिस नो मति आवै सो सतिगुर माहि समाना। इह बाणी जो जीअहु जाणै तिसु अंतरि रवै हरि नामा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चहु जुगा का हुणि निबेड़ा नर मनुखा नो एकु निधाना। जतु संजम तीरथ ओना जुगा का धरमु है। कलि महि कीरति हरि नामा ॥ २ ॥ जुगि जुगि आपो आपणा धरमु है सोधि देखहु बेद पुराना। गुरमुखि जिनी धिआइआ हरि हरि जगि ते पूरे परवाना ॥ ३ ॥ कहत नानकु सचे सिउ प्रीति लाए चूकै मनि अभिमाना। कहत सुणत सभे सुख पावहि मानत पाहि निधाना ॥ ४ ॥ ४ ॥

हे भाई ! देखो उस पूर्णपरमात्मा ने ही यह सम्पूर्ण (जड़-चेतन) रचना रची है और वही एक सबमें समाया हुआ है। इस संसार-प्रपञ्च में उस सच्चे भगवन्नाम की ही बड़ाई है, इसलिए धन-रूपादि का अभिमान धारण मत करो ॥ १ ॥ जिस जीव को सद्गुरु का उपदेश प्राप्त हो जाता है, वही उस उपदेश में मगन रहता है। इस वाणी (उपदेश) को जो जीव हृदय से (मन लगाकर) जान लेता है, उसके ही अन्दर हरि का नाम रमण करता है अर्थात् स्थिर रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चारों युगों का निचोड़ यही है कि मनुष्य के लिए भगवान का नाम ही सब कुछ है। उन (सत्य-युग, त्रेता और द्वापर) युगों में ब्रह्मचर्य, इन्द्रिय-संयम और तीर्थाटन आदि ही मुख्य धर्म रहा है, परन्तु कलियुग में भगवान का नाम-कीर्तन ही प्रमुख धर्म है ॥ २ ॥ वेद-पुराण आदि के अध्ययन से भी यही स्पष्ट होता है कि प्रत्येक युग में स्वधर्म ही कल्याणकारी होता है। इसीलिए जिन्होंने गुरु के मुख से उपदेशादि श्रवण कर परमेश्वर का ध्यान किया है, उन्हें ही परमेश्वर ने अपना स्वीकार किया है ॥३॥ श्री गुरु नानक कहते हैं कि जो

व्यक्ति उस सत्य सनातन परमेश्वर से प्रेम करता है, उसका अहंभाव दूर हो जाता है, उस परमात्मा का नाम बोलने-सुननेवाले सभी सुख प्राप्त करते हैं; परन्तु मनन करनेवाले स्वयं उस सब सुखों के निधि-रूप परमेश्वर को ही प्राप्त कर लेते हैं ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ बिलावलु महला ३ ॥ गुरमुखि प्रीति जिस नो आपे लाए। तितु घरि बिलावलु गुरसबदि सुहाए। मंगलु नारी गावहि आए। मिलि प्रीतम सदा सुखु पाए ॥ १ ॥ हउ तिन बलिहारै जिन्ह हरि मंनि वसाए। हरि जन कउ मिलिआ सुखु पाईऐ हरि गुण गावै सहजि सुभाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सदा रंगि राते तेरै चाए। हरि जीउ आपि वसै मनि आए। आपे सोभा सद ही पाए। गुरमुखि मेलै मेलि मिलाए ॥ २ ॥ गुरमुखि राते सबदि रंगाए। निजघरि वासा हरि गुण गाए। रंगि चलूलै हरि रसि भाए। इहु रंगु कदे न उतरै साचि समाए ॥३॥ अंतरि सबदु मिटिआ अगिआनु अंधेरा। सतिगुर गिआनु मिलिआ प्रीतमु मेरा। जो सचि राते तिन बहुड़ि न फेरा। नानक नामु द्रिड़ाए पूरा गुरु मेरा ॥ ४ ॥ ५ ॥

(हे भाई!) वह परमात्मा जिसे गुरु-उपदेश द्वारा अपने नाम का प्रेम लगाता है, उसके हृदय रूपी घर में सदा आनन्द रहता है और गुरु के शब्द शोभित रहते हैं। उसके समीप सन्तजन रूपी स्त्रियाँ परमेश्वर का नाम रूपी मंगलाचार गायन करती हैं और अपने प्रियतम परमेश्वर से मिलकर सुख प्राप्त करती हैं ॥ १ ॥ ऐसे लोगों के बलिहारी जाऊँ, जिन्होंने भगवान को मन में बसा रखा है। जो हरि-भक्तजन सहज-स्वाभाविक रूप से ही भगवान का गुण गायन करते हैं, उनसे मिलकर ही सुख की प्राप्ति हो सकती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे ईश्वर! जो लोग तुम्हारे ही प्रेम (रंग) में अनुरक्त हैं, तुम सदा उनके मन में निवास करते हो। ऐसे लोग सदा ही शोभा प्राप्त करते हैं। उन भक्तजनों के सत्संग का मिलाप भी तुम ही करानेवाले हो ॥ २ ॥ जो भक्तजन परमेश्वर में अनुरक्त हैं, वे ही उसके नाम (शब्द) में रँगे रहते हैं। प्रभु का गुणगान करने से उन्हें ही आत्मस्वरूप का ज्ञान होता है। वे ही परमेश्वर नाम के गहरे रंग में रँगे जाते हैं और उन्हें ही नाम रूपी रस अच्छा लगता है। जो भक्तजन उस परमात्मा के सत्यस्वरूप में समाए हुए हैं, उन पर से यह रंग कभी नहीं उतरता ॥ ३ ॥ भगवान के नाम-स्मरण से ही अज्ञान का अन्धकार दूर होता है। सद्‌गुरु के ज्ञान (उपदेश) से ही परमात्मा की

प्राप्ति होती है। जो लोग उस सच्चे परमात्मा में अनुरक्त हैं, उनका फिर से इस संसार में आगमन नहीं होता अर्थात् वे भक्त मुक्त हो जाते हैं। श्री गुरु नानक कहते हैं कि नाम को दृढ़ करनेवाला वही मेरा सद्गुरु (परमात्मा) है ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ बिलावलु महला ३ ॥ पूरे गुर ते वडिआई पाई। अचिंत नामु वसिआ मनि आई। हउमै माइआ सबदि जलाई। दरि साचै गुर ते सोभा पाई ॥ १ ॥ जगदीस सेवउ मै अवरु न काजा। अनदिनु अनदु होवै मनि मेरै गुरमुखि मागउ तेरा नामु निवाजा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन की परतीति मन ते पाई। पूरे गुर ते सबदि बुझाई। जीवण मरणु को समसरि वेखै। बहुड़ि न मरै ना जमु पेखै ॥ २ ॥ घर ही महि सभि कोट निधान। सतिगुरि दिखाए गइआ अभिमानु। सद ही लागा सहजि धिआन। अनदिनु गावै एको नाम ॥ ३ ॥ इसु जुग महि वडिआई पाई। पूरे गुर ते नामु धिआई। जह देखा तह रहिआ समाई। सदा सुखदाता कीमति नही पाई ॥ ४ ॥ पूरै भागि गुरु पूरा पाइआ। अंतरि नामु निधानु दिखाइआ। गुर का सबदु अति मीठा लाइआ। नानक त्रिसन बुझी मनि तनि सुखु पाइआ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ४ ॥ ६ ॥ १० ॥

जिस व्यक्ति (भक्त) को उस सद्गुरु (परमात्मा) की ओर से कृपा का सम्मान प्राप्त होता है, उसी के मन में सब प्रकार की चिन्ताएँ दूर करनेवाला भगवान का नाम निवास करता है। सद्गुरु के उपदेश से ही अहंभाव और माया भस्म होते हैं तथा परमात्मा के सच्चे द्वार (दरबार) में शोभा प्राप्त होती है ॥ १ ॥ हे जगदीश ! मैं तुम्हारी ही सेवा में रहना चाहता हूँ, मुझे और कुछ नहीं चाहिए। मैं तो सदा ही बड़ाई (सम्मान) देनेवाले तुम्हारे नाम की याचना करता हूँ, ताकि दिन-रात मेरे मन में आनन्द रहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आत्मबोध स्वयं अपने मन से ही होता है, परन्तु इसका ज्ञान पूर्णगुरु (पहुँचे हुए गुरु) के शब्द (उपदेश) से ही हो सकता है। आत्मबोध हो जाने पर जीव जीवन और मृत्यु को बराबर समझने लगता है। वह बार-बार नहीं मरता और इसीलिए उसे यमराज को नहीं देखना पड़ता ॥ २ ॥ जीव के हृदय रूपी घर में ही करोड़ों का खज़ाना वह भगवान निवास करता है। उसके दर्शन सद्गुरु उपदेश से ही हो सकते हैं। उसी से जीव का अभिमान जाता है और वह सदा परमात्मा के सहज ध्यान में लीन रहता है तथा दिन-रात उस परमेश्वर

का एकमात्र नाम ही गायन करता है ।। ३ ।। जिसे पूरे गुरु के उपदेश से प्रभु के नाम की प्राप्ति होती है, उसे ही इस युग में सम्मान मिलता है। जहाँ देखो वहीं वह प्रभु समाया हुआ है। वह सदा सुखदाता है, वह अमूल्य है ।।४।। जिसके भाग्य अच्छे हों उसे ही पूर्णगुरु की प्राप्ति होती है, जो जीव को उसके अन्तर में छिपे नाम रूपी खज़ाने का दर्शन करा सकता है। श्री गुरु नानक कहते हैं कि मुझे तो गुरु का शब्द अत्यन्त मीठा लगता है। उसी के कारण मेरी प्यास बुझती है और मन-तन को सुख प्राप्त होता है ।। ५ ।। ६ ।। ४ ।। ६ ।। १० ।।

रागु बिलावलु महला ४ घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। उदम मति प्रभ अंतरजामी जिउ प्रेरे तिउ करना। जिउ नटूआ तंतु वजाए तंती तिउ वाजहि जंत जना ।। १ ।। जपि मन राम नामु रसना। मसतकि लिखत लिखे गुरु पाइआ हरि हिरदै हरि बसना ।। १ ।। रहाउ ।। माइआ गिरसति भ्रमतु है प्रानी रखि लेवहु जनु अपना। जिउ प्रहिलादु हरणाखसि ग्रसिओ हरि राखिओ हरि सरना ।। २ ।। कवन कवन की गति मिति कहीऐ हरि कीए पतित पवंना। ओहु ढोवै ढोर हाथि चमु चमरे हरि उधरिओ परिओ सरना ।।३।। प्रभ दीनदइआल भगत भवतारन हम पापी राखु पपना। हरि दासन दास दास हम करीअहु जन नानक दास दासंना ।। ४ ।। १ ।।

हे अन्तर्यामिन्! अपने नाम-स्मरण आदि में उद्यम करनेवाली बुद्धि प्रदान करो; क्योंकि तुम जैसे प्रेरित करते हो, हम जीव उसी प्रकार आचरण करते हैं। जिस-जिस प्रकार तन्त्रीवादक तन्त्री (वीणा) बजाता है, उसी-उसी प्रकार जीव रूपी वीणा बजती है। इसी तरह जैसे तुम प्रेरणा करते हो वैसे ही हम जीव आचरण करते हैं ।।१।। मैं अपने मन और जिह्वा से राम का नाम लेता हूँ। जिसके माथे अच्छे भाग्यों का लेख लिखा हो, उसे ही सद्‌गुरु की प्राप्ति होती है और दुःखहर्ता हरि का हृदय में निवास प्राप्त होता है ।। १ ।। रहाउ ।। तुम्हारी माया से ग्रसित जीव भ्रम में पड़ा हुआ है, उसे अपना समझकर उसकी रक्षा करो। जिस प्रकार हिरण्याक्ष (हिरण्यकशिपु) से ग्रस्त प्रह्लाद को हरि-शरण में आने पर रक्षा की थी, उसी प्रकार हम जीवों की रक्षा करो।। २ ।। किस-किस की हालत वर्णन करें, जिस-जिस पतित को भगवान ने पावन किया अर्थात् प्रत्येक पतित को

ही भगवान ने अपनी कृपा से पावन बनाया है। मरे हुए पशुओं को ढोने वाले और हर समय हाथों में चमड़ा लिये रहनेवाले रविदास चमार का भी शरण आने पर उद्धार किया ॥ ३ ॥ हे दीनदयालु ! तुम भक्तों को इस भवसागर से तारनेवाले हो, इसलिए हम जैसे पापियों को पापों से बचाओ। श्री गुरु (चतुर्थ नानक) जी कहते हैं कि जो भगवान के दासों के भी दास हैं, उनके भी दासों का दास मुझे बना लो ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ बिलावलु महला ४ ॥ हम मूरख मुगध अगिआन मती सरणागति पुरख अजनमा। करि किरपा रखि लेवहु मेरे ठाकुर हम पाथर हीन अकरमा ॥ १ ॥ मेरे मन भजु राम नामै रामा। गुरमति हरि रसु पाईऐ होरि तिआगहु निहफल कामा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि जन सेवक से हरि तारे हम निरगुन राखु उपमा। तुझ बिनु अवरु न कोई मेरे ठाकुर हरि जपीऐ वडे करंमा ॥ २ ॥ नाम हीन ध्रिगु जीवते तिन वड दूख सहंमा। ओइ फिरि फिरि जोनि भवाईअहि मंदभागी मूड़ अकरमा ॥ ३ ॥ हरि जन नामु अधारु है धुरि पूरबि लिखे वड करमा। गुरि सतिगुरि नामु द्रिड़ाइआ जन नानक सफलु जनंमा ॥ ४ ॥ २ ॥

हे अजन्मा परमात्मन् ! हम जीव मूर्ख हैं, तुम्हारी माया से मोहित हैं और अज्ञानग्रस्त बुद्धि वाले हैं, फिर भी तुम्हारी शरण हैं। हम जीव पत्थर के समान जड़ हैं, हीनबुद्धि और मन्दकर्मा हैं। हे ठाकुर ! अपनी कृपा करके हमारी रक्षा करो ॥ १ ॥ अरे मन ! तू राम का भजन कर और राम का ही नाम जप। गुरु की कृपा से ही भगवान के नाम का रस प्राप्त होता है, इसलिए और सब कुछ त्यागकर भगवान का नाम जप, क्योंकि और सब काम फलहीन हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो भगवान के सेवक हैं, भगवान उनका उद्धार करता है। हम जैसे गुणहीनों का उद्धार करने में ही उसकी उपमा (बड़ाई) है। हे मेरे ठाकुर ! तुम्हारे बिना मेरा और कोई नहीं और तुम्हारा नाम बड़े भाग्यों से प्राप्त होता है ॥ २ ॥ तुम्हारे नाम-जाप के बिना जीवन को धिक्कार है, ऐसे लोगों को बड़े-बड़े दुःख सहने पड़ते हैं। ऐसे लोग मन्दभाग्य हैं और उन्हें बारम्बार अनेक योनियों में चक्कर काटना पड़ता है ॥ ३ ॥ हे भगवन् ! भक्तों को तो तुम्हारे नाम का ही आधार है, ऐसे भक्तों के पूर्वजन्म के कर्मों का ही फल है कि वे तुम्हारा नाम-आधार प्राप्त करते हैं। श्री गुरु (चतुर्थ नानक) कहते हैं कि सद्गुरु ने तुम्हारा नाम मेरे हृदय में दृढ़ कर दिया है और मेरा जन्म सफल हो गया है ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ बिलावलु महला ४ ॥ हमरा चितु लुभत मोहि बिखिआ बहु दुरमति मैलु भरा । तुम्हरी सेवा करि न सकह प्रभ हम किउकरि मुगध तरा ॥१॥ मेरे मन जपि नरहर नामु नरहरा । जन ऊपरि किरपा प्रभि धारी मिलि सतिगुर पारि परा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हमरे पिता ठाकुर प्रभ सुआमी हरि देहु मती जसु करा । तुम्हरै संगि लगे से उधरे जिउ संगि कासट लोह तरा ॥ २ ॥ साकत नर होछी मति मधिम जिन्ह हरि हरि सेव न करा । ते नर भागहीन दुहचारी ओइ जनमि मुए फिरि मरा ॥ ३ ॥ जिन कउ तुम्ह हरि मेलहु सुआमी ते न्हाए संतोख गुरसरा । दुरमति मैलु गई हरि भजिआ जन नानक पारि परा ॥ ४ ॥ ३ ॥

हमारे मन में विषय-विकारों का मैल भरा हुआ है, लोभ, मोह आदि का विष उसमें है । हे प्रभु ! इसीलिए हम तुम्हारी सेवा-भक्ति नहीं कर पाते, हम गँवारों का उद्धार कैसे होगा ? ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! तू प्रभु का नाम जपा कर । परमात्मा अपने सेवकों पर कृपा करता है तो सतिगुरु को पाकर जीव मुक्त हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु स्वामी हम सबके पिता हैं, वे हमें ऐसी मति प्रदान करें कि हम उनका यशोगान कर सकें । हे परमात्मा ! तुममें जिसने भी विश्वास किया वो तर गया, जैसे लकड़ी के संग लोहा तर जाता है ॥ २ ॥ परमात्मा से विमुख जीव हरि की सेवा नहीं करते, उनकी बुद्धि मलिन और नीच होती है । वे भाग्यहीन और दुराचारी होते हैं, सदैव जन्म-मरण के चक्कर में पड़े रहते हैं ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! जिन्हें तुम कृपा करके स्वामी के संग मिला देते हो, उन्हें सन्तोष रूपी सागर अर्थात् गुरु में स्नान करने का अवसर प्राप्त हो जाता है । तात्पर्य यह है कि जिन पर ईश्वर की कृपा होती है, उन्हें गुरु मिलता है, और वे गुरु को पाकर मोक्ष की ओर बढ़ते हैं । हरि का भजन करने से उनकी कुबुद्धि रूपी मलिनता दूर हो जाती है और वे मुक्ति को प्राप्त होते हैं ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ बिलावलु महला ४ ॥ आवहु संत मिलहु मेरे भाई मिलि हरि हरि कथा करहु । हरि हरि नामु बोहिथु है कलजुगि खेवटु गुरसबदि तरहु ॥ १ ॥ मेरे मन हरि गुण हरि उचरहु । मसतकि लिखत लिखे गुन गाए मिलि संगति पारि परहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काइआ नगर महि राम रसु ऊतमु किउ पाईऐ उपदेसु

जन करहु । सतिगुरु सेवि सफल हरि दरसनु मिलि अंम्रितु हरि रसु पीअहु ॥ २ ॥ हरि हरि नामु अंम्रितु हरि मीठा हरि संतहु चाखि दिखहु । गुरमति हरि रसु मीठा लागा तिन बिसरे सभि बिख रसहु ॥ ३ ॥ राम नामु रसु राम रसाइणु हरि सेवहु संत जनहु । चारि पदारथ चारे पाए गुरमति नानक हरि भजहु ॥ ४ ॥ ४ ॥

हे सत्संगति में बैठनेवाली मेरी सहयोगिनी जीवात्माओ ! आओ हम सब मिलकर हरि की कथा-गान करें। कलियुग में हरि का नाम जहाज़ है और गुरु उसका मल्लाह है; उसके शब्द द्वारा पार हो जाओ ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! हरि के गुणों का उच्चारण करो। भाग्य-अनुसार ही कोई जीव प्रभु के गुण गाता है और सत्संगति में आकर मोक्ष लाभ करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शरीर रूपी नगर में हरि के प्रेम का पवित्र अमृत-सरोवर है। सतिगुरु की भक्ति करने से परमात्मा के दर्शन प्राप्त होते हैं और उसको मिलकर ही कोई अमृत-पान कर सकता है ॥ २ ॥ हे सन्तो ! हरि का नाम अमृत है; हरि का नाम अत्यन्त मीठा है; अतः इसको चखकर देखो। गुरु के आदेशों पर आचरण करने से हरि-रस मीठा लगता है और जीव को सब विषैले स्वाद भूल जाते हैं ॥ ३ ॥ राम-नाम रसायन के समान है। हे सन्तो ! इसका सेवन करो अर्थात् राम-नाम को जपो, क्योंकि यह सब रोगों का इलाज है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-भजन करने से जीव को चारों पदार्थों (काम, अर्थ, धर्म, मोक्ष) की प्राप्ति होती है ॥४॥४॥

॥ बिलावलु महला ४ ॥ खत्री ब्राहमणु सूदु वैसु को जापै हरि मंत्रु जपैनी । गुरु सतिगुरु पारब्रहमु करि पूजहु नित सेवहु दिनसु सभ रैनी ॥ १ ॥ हरि जन देखहु सतिगुरु नैनी । जो इछहु सोई फलु पावहु हरि बोलहु गुरमति बैनी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक उपाव चितवीअहि बहुतेरे सा होवै जि बात होवैनी । अपना भला सभु कोई बाछै सो करे जि मेरै चिति न चितैनी ॥ २ ॥ मन की मति तिआगहु हरि जन एहा बात कठैनी । अनदिनु हरि हरि नामु धिआवहु गुर सतिगुर की मति लैनी ॥ ३ ॥ मति सुमति तेरै वसि सुआमी हम जंत तू पुरखु जंतैनी । जन नानक के प्रभ करते सुआमी जिउ भावै तिवै बुलैनी ॥ ४ ॥ ५ ॥

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र —चारों वर्णों में से कोई भी हरि-नाम

रूपी जपने योग्य मन्त्र का जाप करो। सतिगुरु को परब्रह्म के रूप में पूजो और रात-दिन उसकी सेवा में रत रहो ।। १ ।। सतिगुरु की सहायता से हरिजन प्रभु को प्रत्यक्ष देखते हैं। मनोवांछित फल पाओ यदि गुरु के ही आदेशानुसार मुँह से हरि-नाम का उच्चारण करो ।। १ ।। रहाउ ।। अनेक प्रकार की बातें हम मन में सोचते हैं; किन्तु होता वही है, जो होनहार होता है। सब कोई अपना भला चाहता है; किन्तु प्रभु वह करता है, जिसका हमें ध्यान भी नहीं होता ।। २ ।। हे जीवो ! मनमति को त्यागो और हरि के नाम-स्मरण जैसी बात को अपनाओ, भले ही उसमें कठिनाई हो। सतिगुरु के आदेशानुसार सदा हरि-नाम का भजन करो ।। ३ ।। हे प्रभु ! बुद्धि या कुबुद्धि तुम्हारे ही वश है, हम तो यंत्र मात्र हैं, यंत्र-चालक तुम्हीं हो। दास नानक कहते हैं कि परमात्मा जैसा चाहता है, वैसा ही हमसे करवाता है ।। ४ ।। ५ ।।

।। बिलावलु महला ४ ।। अनद मूलु धिआइओ पुरखोतमु अनदिनु अनद अनंदे । धरमराइ की काणि चुकाई सभि चूके जम के छंदे ।। १ ।। जपि मन हरि हरि नामु गुोबिंदे । वडभागी गुरु सतिगुरु पाइआ गुण गाए परमानंदे ।। १ ।। रहाउ ।। साकत मूड़ माइआ के बधिक विचि माइआ फिरहि फिरंदे । त्रिसना जलत किरत के बाधे जिउ तेली बलद भवंदे ।। २ ।। गुरमुखि सेव लगे से उधरे वडभागी सेव करंदे । जिन हरि जपिआ तिन फलु पाइआ सभि तूटे माइआ फंदे ।। ३ ।। आपे ठाकुरु आपे सेवकु सभु आपे आपि गोविंदे । जन नानक आपे आपि सभु वरतै जिउ राखै तिवै रहंदे ।। ४ ।। ६ ।।

परमपुरुष हरि सब खुशियों का मूल है, उसका स्मरण करो; हमेशा सुख ही सुख रहेगा। ऐसा करने से धर्मराज की अधीनता से भी मुक्ति मिलेगी और यम के सब छल-कपट दूर हो जायँगे ।। १ ।। हे मन ! तू सारी सृष्टि के मालिक हरि का नाम जप। उच्च भाग्य के कारण तुझे सतिगुरु मिला है, प्रभु के गुण गाकर परमानन्द को प्राप्त कर ।। १ ।। रहाउ ।। मनमुख जीव गँवार और माया में बँधे हुए होते हैं और सदैव माया के ही घेरे में भ्रमित रहते हैं। आशाओं, तृष्णाओं में जलते, कर्म के बँधे, तेली के बैल की तरह उसी घेरे में घूमते रहते हैं ।। २ ।। गुरु के द्वारा जो परमात्मा की सेवा-भक्ति में रत होते हैं, उनका उद्धार हो जाता है; सेवा-भक्ति भी भाग्यशाली जीव ही कर सकते हैं। हरि का जाप करनेवाले जीव सफल होते हैं, उनके माया-बन्धन टूट जाते हैं ।। ३ ।।

परमात्मा स्वयं ही सेवक है और स्वयं ही सेव्य है। गुरु नानक कहते हैं कि वही सब जगह व्याप्त है; जैसा वह रखे, वैसा हमें रहना है ॥४॥६॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रागु बिलावलु महला ४ पड़ताल घरु १३ ॥ बोलहु भईआ राम नामु पतित पावनो। हरि संत भगत तारनो। हरि भरिपुरे रहिआ। जलि थले राम नामु। नित गाईऐ हरि दूख बिसारनो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि कीआ है सफल जनमु हमारा। हरि जपिआ हरि दूख बिसारनहारा। गुरु भेटिआ है मुकति दाता। हरि कीई हमारी सफल जाता। मिलि संगती गुन गावनो ॥ १ ॥ मन राम नाम करि आसा। भाउ दूजा बिनसि बिनासा। विचि आसा होइ निरासी। सो जनु मिलिआ हरि पासी। कोई राम नाम गुन गावनो। जनु नानकु तिसु पगि लावनो ॥ २ ॥ १ ॥ ७ ॥ ४ ॥ ६ ॥ ७ ॥ १७ ॥

हे भाइयो, पतित-पावन राम-नाम बोलो। यही नाम सन्तों-भक्तों का मोक्षदाता है। परमात्मा सर्वत्र व्याप्त है। राम-नाम भी जल-थल में रमा हुआ है। यह दुःखों का नाशक है, इसलिए नित्य इसका जाप करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि को पाकर हमारा जन्म सफल है। हरि को जपने में दुःखों का नाश होता है, मुक्तिदाता गुरु की प्राप्ति होती है। हरि ने हमारी जीवन-यात्रा सफल कर दी है, इसलिए सत्संगति में बैठकर हमें उसी का गुणगान करना है ॥ १ ॥ हे मन ! केवल राम-नाम की ही आशा रखो, क्योंकि द्वैतभाव विनाशक होता है। जो मनुष्य आशाओं में निराश रह सकता है अर्थात् सांसारिक भोग-विलासों में भी विरक्त रहता है, वह सन्निकट ही परमात्मा को पा जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि वे राम-नाम जपनेवाले व्यक्ति के चरण छूते हैं ॥ २ ॥ १ ॥ ७ ॥ ४ ॥ ६ ॥ ७ ॥ १७ ॥

रागु बिलावलु महला ५ चउपदे घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ नदरी आवै तिसु सिउ मोहु। किउ मिलीऐ प्रभ अबिनासी तोहि। करि किरपा मोहि मारगि पावहु। साध संगति कै अंचलि लावहु ॥ १ ॥ किउ तरीऐ बिखिआ संसारु। सतिगुरु बोहिथु पावै पारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥

पवन झुलारे माइआ देइ। हरि के भगत सदा थिरु सेइ। हरख सोग ते रहहि निरारा। सिर ऊपरि आपि गुरू रखवारा ॥ २ ॥ वाइआ वेड़ माइआ सरब भुइअंगा। हउमै पचे दीपक देखि पतंगा। सगल सीगार करे नही पावै। जा होइ क्रिपालु ता गुरू मिलावै ॥ ३ ॥ हउ फिरउ उदासी मै इकु रतनु दसाइआ। निरमोलकु हीरा मिलै न उपाइआ। हरि का मंदरु तिसु महि लालु। गुरि खोलिआ पड़दा देखि भई निहालु ॥ ४ ॥ जिनि चाखिआ तिसु आइआ सादु। जिउ गूंगा मन महि बिसमादु। आनद रूपु सभु नदरी आइआ। जन नानक हरिगुण आखि समाइआ ॥ ५ ॥ १ ॥

जो जगत दृश्यमान है उससे हमारा मोह है, हे अविनाशी प्रभु! (तुम अदृश्य हो) तुम्हें हम कैसे मिलें ? कृपा करके मुझे अपने निकट आने का मार्ग बताओ और सन्तों की संगति प्रदान करो ॥ १ ॥ यह विष रूपी संसार क्योंकर पार किया जा सकता है ! केवल सतिगुरु रूपी जहाज़ ही हमें पार पहुँचा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माया हवा के समान जीव को इधर-उधर डोलाती है, किन्तु हरि के भक्त सदा स्थिर रहते हैं। वे हर्ष-शोक से निर्लिप्त रहते हैं; क्योंकि गुरु तदैव उनका संरक्षक होता है ॥ २ ॥ माया रूपी नागिन ने सबको लपेट रखा है। अहंकार के कारण जीव माया की अग्नि में इस प्रकार जलते हैं, जैसे पतंगे दीपक में जलते हैं। जीव अनेक गुणों की वृद्धि से भी प्रभु को नहीं पा सकता; यदि परमात्मा की कृपा हो जाये, तो वह जीव को गुरु से मिला दे (तभी गुरु की सहायता से परमात्मा उपलब्ध हो सकता है) ॥३॥ मैं विरक्त होकर इधर-उधर परमात्मा रूपी रत्न को खोजती फिरती हूँ। वह अमूल्य हीरा न मिलता है, न पैदा किया जा सकता है। हरि का मन्दिर यह शरीर ही है, इसी के भीतर परमात्मा रूपी रत्न मौजूद है, किन्तु इस तथ्य का ज्ञान गुरु से ही मिलता है; उसके द्वारा तथ्य के अनावृत होने पर जीव उल्लसित हो जाता है ॥४॥ जिसने हरि-रस चखा है उसे वह अनिर्वचनीय स्वाद मिला है, जैसे गूँगे के मन में प्रसन्नता होती है (किन्तु वह व्यक्त नहीं कर सकता)। गुरु-कृपा से जब वह आनन्द रूपी प्रभु दृष्टि में आया तो, गुरु-कथन है कि जीव उसी के गुण गा-गाकर उसी में लीन हो गया ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ सरब कलिआण कीए गुरदेव। सेवकु अपनी लाइओ सेव। बिघनु न लागै जपि अलख अभेव ॥ १ ॥ धरति पुनीत भई गुन गाए। दुरतु गइआ हरि

नामु धिआए ।। १ ।। रहाउ ।। सभनी थांई रविआ आपि । आदि जुगादि जाका वड परतापु । गुर परसादि न होइ संतापु ।। २ ।। गुर के चरन लगे मनि मीठे । निरबिघन होइ सभ थांई वूठे । सभि सुख पाए सतिगुर तूठे ।। ३ ।। पारब्रहम प्रभ भए रखवाले । जिथै किथै दीसहि नाले । नानक दास खसमि प्रतिपाले ।। ४ ।। २ ।।

मेरे गुरुदेव ने मेरा समस्त कल्याण किया है; अपने सेवक को सेवा में लगा लिया है। उस अदृश्य और नित्य रहस्यमय प्रभु का नाम जपने से सब प्रकार के विघ्न नष्ट हो गये हैं ।। १ ।। उसका गुण गाने से हृदय रूपी धरती पुण्यमयी हो गयी है; हरि-नाम का ध्यान करने से पाप दूर हो गये हैं ।। १ ।। रहाउ ।। परमात्मा स्वयं सब जगह व्याप्त है; वह आदिपुरुष है और उसका महान प्रताप है। गुरु की कृपा से जीव सब सन्तापों से मुक्त रहता है ।। २ ।। गुरु के चरणों में शरण लेने से मन मीठा हो जाता है। तब जीव निर्विघ्नभाव से सब जगह रह सकता है। सतिगुरु के सन्तुष्ट होने से उसे सब सुख प्राप्त हो जाते हैं ।। ३ ।। परब्रह्म परमात्मा स्वयं जीव का रक्षक होता है, जहाँ कहीं भी उसका साथ देता है। गुरु नानक कहते हैं कि स्वामी सेवक का प्रतिपालक होता है ।।४।।२।।

।। बिलावलु महला ५ ।। सुख निधान प्रीतम प्रभ मेरे । अगनत गुण ठाकुर प्रभ तेरे । मोहि अनाथ तुमरी सरणाई । करि किरपा हरि चरन धिआई ।। १ ।। दइआ करहु बसहु मनि आइ । मोहि निरगुन लीजै लड़ि लाइ ।। रहाउ ।। प्रभु चिति आवै ता कैसी भीड़ । हरि सेवक नाही जम पीड़ । सरब दूख हरि सिमरत नसे । जाकै संगि सदा प्रभु बसै ।। २ ।। प्रभ का नामु मनि तनि आधारु । बिसरत नामु होवत तनु छारु । प्रभ चिति आए पूरन सभ काज । हरि बिसरत सभ का मुहताज ।। ३ ।। चरन कमल संगि लागी प्रीति । बिसरि गई सभ दुरमति रीति । मन तन अंतरि हरि हरि मंत । नानक भगतन कै घरि सदा अनंद ।। ४ ।। ३ ।।

मेरा प्रियतम प्रभु सुखों का भण्डार है। हे स्वामी ! तुम्हारे गुण अनन्त हैं, उनका उल्लेख नहीं किया जा सकता। मैं अनाथ तुम्हारी शरण में हूँ, कृपा करके मुझे अपने चरणों का ध्यान प्रदान करो ।। १ ।। हे परमात्मा ! दया करके मेरे मन में आकर बसो, मुझ गुणहीन को अपनी

शरण में स्थान दो ॥ रहाउ ॥ यदि परमात्मा मन में निवसित हो तो जीव पर कोई मुसीबत नहीं होती। हरि के सेवक को यमदूत भी पीड़ा नहीं पहुँचाता। हरि के स्मरण मात्र से ही सब दुःखों का नाश हो जाता है और सदैव परमात्मा उन जीवों के साथ रहता है ॥ २ ॥ प्रभु का नाम मेरे मन-तन का आधार है। नाम के विस्मरण से शरीर मिट्टी के समान हो जाता है। मन में परमात्मा का ध्यान आने से सब कार्य सम्पन्न होते हैं, किन्तु हरि को विस्मृत करने से जीव सबके लिए दयनीय हो जाता है ॥ ३ ॥ जिस जीव की प्रीति प्रभु के चरण-कमलों में होती है, उसकी सब कुबुद्धि दूर हो जाती है। जो तन-मन में 'हरि-हरि' मन्त्र का जाप करता है, गुरु नानक का मत है कि ऐसे भक्त के घर सदा आनन्द बना रहता है ॥ ४ ॥ ३ ॥

रागु बिलावलु महला ५ घरु २ यानड़ीए कै घरि गावणा

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मै मनि तेरी टेक मेरे पिआरे मै मनि तेरी टेक। अवर सिआणपा बिरथीआ पिआरे राखन कउ तुम एक ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु पूरा जे मिलै पिआरे सो जनु होत निहाला। गुर की सेवा सो करे पिआरे जिस नो होइ दइआला। सफल मूरति गुरदेउ सुआमी सरब कला भरपूरे। नानक गुरु पारब्रहमु परमेसरु सदा सदा हजूरे ॥ १ ॥ सुणि सुणि जीवा सोइ तिना की जिन अपुना प्रभु जाता। हरि नामु अराधहि नामु वखाणहि हरि नामे ही मनु राता। सेवकु जन की सेवा मागै पूरै करमि कमावा। नानक की बेनंती सुआमी तेरे जन देखणु पावा ॥ २ ॥ वडभागी से काढीअहि पिआरे संत संगति जिना वासो। अंम्रित नामु अराधीऐ निरमलु मनै होवै परगासो। जनम मरण दुखु काटीऐ पिआरे चूकै जम की काणे। तिना परापति दरसनु नानक जो प्रभ अपणे भाणे ॥ ३ ॥ ऊच अपार बेअंत सुआमी कउणु जाणै गुण तेरे। गावते उधरहि सुणते उधरहि बिनसहि पाप घनेरे। पसू परेत मुगध कउ तारे पाहन पारि उतारै। नानक दास तेरी सरणाई सदा सदा बलिहारै ॥ ४ ॥ १ ॥ ४ ॥

मेरे प्यारे प्रभु ! मुझे केवल तुम्हारा ही सहारा है। अन्य सब बुद्धि-विवेक व्यर्थ हैं, केवल तुम्हीं एक संरक्षक हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐ प्यारे

जीवात्मा ! यदि सतिगुरु से मिलाप हो जाये तो व्यक्ति निहाल हो जाता है। जिस पर प्रभु स्वयं दयालु होता है, वह बड़ी गुरु की भक्ति कर सकता है। मेरा गुरुदेव स्वामी उच्च व्यक्तित्व का मालिक है, जिसमें सारी शक्तियाँ भरी हुई हैं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु परब्रह्म से अभेद्य है और सब जगह हाज़िर रहता है ॥१॥ हे जीवो ! तुम उनका गुणगान सुनो, जिन्होंने अपने प्रभु को जान लिया है। जिन्होंने हरि-नाम की आराधना की है, उसी का बखान करते हैं और उसी में जिनका मन रत है (उसका गुणगान सुनो)। मैं सेवक के रूप में तुमसे, हे प्रभु, तुम्हारे भक्तों की सेवा का दान माँगता हूँ, इसी से मेरा भाग्य उज्ज्वल होगा। गुरु नानक परमात्मा से विनती करते हैं कि हे प्रभु ! मैं तुम्हारे सेवकों के दर्शन कर सकूँ ॥ २ ॥ उन जीवों को सौभाग्यशाली कहा जा सकता है, जो सन्तों की संगति में रहते हैं; जो अमृत-नाम की आराधना करके अपने निर्मल मन में आलोक जगा लेते हैं। उन लोगों का जन्म-मरण का दुःख दूर हो जाता है और यम की परवशता कट जाती है। गुरु का कथन है कि परमात्मा जिन जीवों को चाहता है, उन्हें ही उसके दर्शन प्राप्त होते हैं ॥ ३ ॥ मेरा प्रभु ऊँचा, अपार और बेअन्त है, उसके गुण कौन जान सकता है ? उसके गुणों को गानेवालों तथा सुननेवालों का उद्धार हो जाता है और उनके पाप नष्ट हो जाते हैं। परमात्मा पशुओं, नीची जाति के जीवों और मूर्खों का भी उद्धार कर देता है, वह पत्थरों को भी तैरा सकता है। गुरु नानक कहते हैं कि वे उसी परमात्मा की शरण में हैं और सदा उस पर बलिहार जाते हैं ॥ ४ ॥ १ ॥ ४ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ बिखै बन फीका तिआगि री सखीए नामु महारसु पीओ। बिनु रस चाखे बुडि गई सगली सुखी न होवत जीओ। मानु महतु न सकति ही काई साधा दासी थीओ। नानक से दरि सोभावंते जो प्रभि अपुनै कीओ ॥ १ ॥ हरिचंदउरी चित भ्रमु सखीए म्रिग त्रिसना द्रुम छाइआ। चंचलि संगि न चालती सखीए अंति तजि जावत माइआ। रसि भोगण अति रूप रस माते इन संगि सूखु न पाइआ। धंनि धंनि हरि साध जन सखीए नानक जिनी नामु धिआइआ ॥ २ ॥ जाइ बसहु वडभागणी सखीए संता संगि समाईऐ। तह दूख न भूख न रोगु बिआपै चरन कमल लिव लाईऐ। तह जनम न मरणु न आवण जाणा निहचलु सरणी पाईऐ। प्रेम बिछोहु न मोहु बिआपै नानक हरि एकु

धिआईऐ ॥ ३ ॥ द्रिसटि धारि मनु बेधिआ पिआरे रतड़े सहजि सुभाए । सेज सुहावी संगि मिलि प्रीतम अनद मंगल गुण गाए । सखी सहेली राम रंगि राती मन तन इछ पुजाए । नानक अचरजु अचरज सिउ मिलिआ कहणा कछू न जाए ॥ ४ ॥ २ ॥ ५ ॥

हे सखी ! विषय-विकारों के फीके रसों का त्याग कर हरि-नाम रूपी महारस का पान करो । उस रस का पान किये बग़ैर सारी सृष्टि डूब रही है, कोई जीव सुख को प्राप्त नहीं होता । तुममें मान नहीं है, तुम्हारा कोई महत्त्व भी नहीं और न ही तुम शक्तिशाली हो, इसलिए तुम सन्तों की सेवा में रत रहो । गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु जिन्हें अपना बना लेता है वे ही सुशोभित होते हैं ॥१॥ हे सखी ! मन का भ्रम मृग-तृष्णा के समान है (यहाँ हरिचन्दौरी शब्द का प्रयोग किया गया है। इसका अर्थ ऐसा गन्धर्व नगर कहा जाता है, जो त्रिशंकु की तरह बीचो-बीच लटक रहा है। न धरती पर है और न आकाश पर। इसीलिए सन्दर्भ के नाते हमने इसका अर्थ मृग-तृष्णा लगाया है, जिसका कोई अन्त नहीं होता) । हे सखी! यह माया बड़ी चंचला है, पेड़ों की छाया और मृग-तृष्णा की भाँति कभी साथ नही देती; अन्ततः साथ छोड़ जाती है। रसों के भोग-विलास तथा रूप-रस के मतवालेपन में कोई सुख नहीं पा सकता। इसलिए, ऐ सखी ! वे सन्तजन धन्य हैं, जिन्होंने परमात्मा के नाम का ध्यान किया है ॥ २ ॥ ऐ सौभाग्यशाली मेरी जीवात्मा रूपी सखी ! तुम भी सन्तों की संगति में रहो अर्थात् सतिगुरु की शरण लो । वहाँ किसी भी प्रकार की रुग्णता, भूख या दुःख नहीं रह जाते; जीव केवल प्रभु के चरण-कमलों में प्रीत करने लगता है। गुरु की शरण ऐसा स्थिर समाँ है कि वहाँ जन्म-मृत्यु और आवागमन से मुक्ति मिल जाती है। गुरु नानक कहते हैं कि एक परमात्मा का ध्यान करने से जीव को प्रेम, वियोग और मोह आदि व्याप्त नहीं होता ॥ ३ ॥ प्यारे परमात्मा ने कृपा करके हमारे मन को बींध लिया है और हम सहज ही उसके प्रेम में रँग गये हैं। अपने प्रियतम से एक ही सेज पर मिलकर अनन्त आनन्द और उल्लास प्राप्त हुए हैं। जो सखियाँ इसी प्रकार राम के रंग में मग्न हैं, उनके तन-मन की सब इच्छाएँ पूर्ण हो गयी हैं। गुरु नानक का कथन है कि यह स्थिति एक रहस्य के दूसरे रहस्य में मिल जाने की है, इसके सम्बन्ध में वाणी मूक है, कुछ कहा नहीं जा सकता ॥ ४ ॥ २ ॥ ५ ॥

रागु बिलावलु महला ५ घरु ४

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ एक रूप सगलो पासारा ।

आपे बनजु आपि बिउहारा ॥ १ ॥ ऐसो गिआनु बिरलोई पाए । जत जत जाईऐ तत द्रिसटाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक रंग निरगुन इक रंगा । आपे जलु आप ही तरंगा ॥ २ ॥ आप ही मंदरु आपहि सेवा । आप ही पूजारी आप ही देवा ॥ ३ ॥ आपहि जोग आप ही जुगता । नानक के प्रभ सद ही मुकता ॥ ४ ॥ १ ॥ ६ ॥

संसार का समूचा प्रसार एक परमात्मा का ही रूप है। वही इसका प्रतिपालक है और वही परिचालक भी है ॥ १ ॥ जहाँ-जहाँ हम जायें उधर परमात्मा ही दिखायी दे, यह ज्ञान किसी विरल को ही प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह निर्गुण परमात्मा सब रंगों का स्वामी होते हुए भी एक ही रंग का है। वह स्वयं ही जल है और जल की तरंगें भी वही है; अभिप्राय यह है कि वह भेदाभेदी रूप है; किन्तु उसकी एकता में कोई अन्तर नहीं आता ॥ २ ॥ वह परमात्मा स्वयं मन्दिर है और उसमें की जानेवाली पूजा, आराधना भी वह स्वयं ही है। वह स्वयं पुजारी है और देवता भी वही है ॥ ३ ॥ योगाभ्यास और योग के नियम-उपनियम उसी में निहित हैं। नानक के प्रभु सबमें व्याप्त होते हुए भी निर्लिप्त हैं ॥ ४ ॥ १ ॥ ६ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ आपि उपावन आपि सधरना । आपि करावन दोसु न लैना ॥१॥ आपन बचनु आप ही करना । आपन बिभउ आप ही जरना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आप ही मसटि आप ही बुलना । आप ही अछलु न जाई छलना ॥ २ ॥ आप ही गुपत आपि परगटना । आप ही घटि घटि आपि अलिपना ॥ ३ ॥ आपे अविगतु आप संगि रचना । कहु नानक प्रभ के सभि जचना ॥ ४ ॥ २ ॥ ७ ॥

परमात्मा स्वयं पैदा करनेवाला है और स्वयं ही आश्रय देनेवाला भी है। वही सब कर्म करवाता है, किन्तु कर्मों के उत्तरदायित्व से अलग रहता है ॥ १ ॥ कहने, करनेवाला स्वयं परमात्मा भी है; सब विभूतियाँ उसी में हैं और वही दुःखों को सहनेवाला भी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मौन धारण करनेवाला मौनी और वक्तव्य देनेवाला वाचाल स्वयं प्रभु है। वह निष्कपट और छल-रहित है; उसे कोई भी नहीं छल सकता ॥ २ ॥ वह परमात्मा रहस्यमय भी है और प्रकट में प्रत्यक्ष भी दीख पड़ता है। सब जगह वह व्याप्त है और सबसे अलग निर्लिप्त भी है ॥ ३ ॥ प्रभु अविगत अर्थात् पहुँच से परे भी है और अपनी रचना के संग-संग रहनेवाला भी

है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा हर उस रूप में विद्यमान है, जो उसे अच्छा लगता है ॥ ४ ॥ २ ॥ ७ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ भूले मारगु जिनहि बताइआ। ऐसा गुरु वडभागी पाइआ ॥ १ ॥ सिमरि मना राम नामु चितारे। बसि रहे हिरदै गुरचरन पिआरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कामि क्रोधि लोभि मोहि मनु लीना। बंधन काटि मुकति गुरि कीना ॥ २ ॥ दुख सुख करत जनमि फुनि मूआ। चरन कमल गुरि आस्रमु दीआ ॥ ३ ॥ अगनि सागर बूडत संसारा। नानक बाह पकरि सतिगुरि निसतारा ॥ ४ ॥ ३ ॥ ८ ॥

मुझे ऐसा गुरु मिला है जो मुझ भूले हुए को राह पर डाल सका है। यह प्राप्ति मेरा सौभाग्य ही है ॥ १ ॥ हे मेरे मन! राम-नाम का स्मरण कर और अपने हृदय में प्यारे गुरु के चरणों को धारण कर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि ने मन का हरण कर लिया है, किन्तु गुरु ने इन बन्धनों को काटकर जीव को मुक्ति दी है ॥ २ ॥ दुःख-सुख भोगने को जीव बार-बार आवागमन में पड़ा था; अब गुरु ने उसे अपने चरण-कमलों का आश्रय दिया है ॥ ३ ॥ सारा संसार माया रूपी अग्नि-सागर में डूब रहा है; गुरु नानक कहते हैं कि केवल सतिगुरु ही बाँह पकड़कर इस स्थिति से उबार सकते हैं ॥ ४ ॥ ३ ॥ ८ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ तनु मनु धनु अरपउ सभु अपना। कवन सुमति जितु हरि हरि जपना ॥ १ ॥ करि आसा आइओ प्रभ मागनि। तुम्ह पेखत सोभा मेरै आगनि ॥१॥ रहाउ ॥ अनिक जुगति करि बहुतु बीचारउ। साध संगि इसु मनहि उधारउ ॥ २ ॥ मति बुधि सुरति नाही चतुराई। ता मिलीऐ जा लए मिलाई ॥ ३ ॥ नैन संतोखे प्रभ दरसनु पाइआ। कहु नानक सफलु सो आइआ ॥ ४ ॥ ४ ॥ ९ ॥

जो मुझे हरि-नाम जपने की सुमति दान दे, मैं उस पर तन, मन, धन सब न्यौछावर कर दूँगा ॥ १ ॥ हे प्रभु! तुम्हारे दर्शनों से ही मेरे मन में प्रकाश हो जाता है (आँगन में शोभा हो जाती है), इसलिए मैं बड़ी आशाएँ सँजोकर तुम्हारा प्यार माँगने आया हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैंने अनेक युक्तियों द्वारा सर्वांगीण विचार किया है, केवल सन्तों की संगति में ही मन का उद्धार हो सकता है ॥ २ ॥ मेरे भीतर कोई बुद्धि, विवेक या चतुराई नहीं है; तुम्हारा मिलाप तभी सम्भव है, यदि तुम स्वयं मुझे अपने साथ

मिला लो ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! तुम्हारा दर्शन पाकर मेरे नेत्र सन्तुष्ट हुए हैं। गुरु नानक कहते हैं कि संसार में जन्म लेकर जो प्रभु को पा लेता है, उसका जीवन सफल हो जाता है ॥ ४ ॥ ४ ॥ ९ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ मात पिता सुत साथि न माइआ। साध संगि सभु दूखु मिटाइआ ॥ १ ॥ रवि रहिआ प्रभु सभ महि आपे। हरि जपु रसना दुखु न विआपे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तिखा भूख बहु तपति विआपिआ। सीतल भए हरि हरि जसु जापिआ ॥ २ ॥ कोटि जतन संतोखु न पाइआ। मनु त्रिपताना हरि गुण गाइआ ॥ ३ ॥ देहु भगति प्रभ अंतरजामी। नानक की बेनंती सुआमी ॥ ४ ॥ ५ ॥ १० ॥

माता, पिता, पुत्र सब माया हैं, कोई साथ नहीं देता। केवल सन्तों की संगति में ही सब दुःखों का निवारण सम्भव होता है ॥ १ ॥ परमात्मा सब जगह व्याप्त है; जो जीव जिह्वा से उसके नाम का जाप करते हैं, उन्हें कोई क्लेश नहीं होता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तृष्णा और भूख की जलन में जीव दुःखी था, किन्तु हरि-नाम का जाप करने से उसकी जलन शान्त हो गयी, उसे सुख लाभ हुआ ॥ २ ॥ करोड़ों यत्न करने पर भी जब सन्तोष नहीं मिलता, तो हरिगुण-गान से मन तृप्त हो जाता है ॥ ३ ॥ हे मेरे अन्तर्यामी प्रभु ! मुझे भक्ति का दान दो, यही तुम स्वामी के पास मेरी विनती है ॥ ४ ॥ ५ ॥ १० ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ गुरु पूरा वडभागी पाईऐ। मिलि साधू हरि नामु धिआईऐ ॥ १ ॥ पारब्रहम प्रभ तेरी सरना। किल बिख काटै भजु गुर के चरना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अवरि करम सभि लोकाचार। मिलि साधू संगि होइ उधार ॥ २ ॥ सिम्रिति सासत बेद बीचारे। जपीऐ नामु जितु पारि उतारे ॥ ३ ॥ जन नानक कउ प्रभ किरपा करीऐ। साधू धूरि मिलै निसतरीऐ ॥ ४ ॥ ६ ॥ ११ ॥

पूर्णगुरु की प्राप्ति सद्भाग्य से ही होती है और जीव उसे पाकर ही हरि-नाम का ध्यान करता है ॥ १ ॥ हे परब्रह्म परमात्मा ! हम तेरी शरण में हैं। गुरु के चरणों के आश्रय में हमारे सब पाप नष्ट हो गये हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अन्य सब कर्म लोकाचार अथवा आडम्बर मात्र हैं, केवल गुरु-प्राप्ति का प्रयत्न ही वास्तविक सही व्यवहार है, जिससे उद्धार होता है ॥ २ ॥ स्मृतियों, शास्त्रों और वेदों को विचारने से जीव की

मुक्ति नहीं होती। उस हरि-नाम का जाप करो, जिसमें मुक्ति निहित है ॥ ३ ॥ दास नानक कहते हैं कि हे प्रभु ! मुझ पर कृपा करके सन्तों की चरणधूल दिलवाइये, ताकि मेरा उद्धार हो सके ॥ ४ ॥ ६ ॥ ११ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ गुर का सबदु रिदे महि चीना। सगल मनोरथ पूरन आसीना ॥ १ ॥ संत जना का मुखु ऊजलु कीना। करि किरपा अपुना नामु दीना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंध कूप ते करु गहि लीना। जै जेकारु जगति प्रगटीना ॥ २ ॥ नीचा ते ऊच ऊन पूरीना। अंम्रित नामु महा रसु लीना ॥ ३ ॥ मन तन निरमल पाप जलि खीना। कहु नानक प्रभ भए प्रसीना ॥ ४ ॥ ७ ॥ १२ ॥

जिस जीव ने हृदय में गुरु का शब्द धारण किया, उसकी सब आशाएँ और मनोरथ पूरे हो गये ॥ १ ॥ परमात्मा जिस पर कृपा करके अपना नाम देता है, उसका मुख गुरु-कृपा से उज्ज्वल हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा ने हमें अज्ञान के अन्धे कुएँ में गिरने से बचाया है और संसार भर में जय-जयकार प्राप्त की है ॥ २ ॥ उसने नीचों से ऊँच किया और खाली को भर दिया; हरि-नाम रूपी अमृत का रस पिलाकर सबका कल्याण किया ॥ ३ ॥ (नाम-अमृत-पान से) तन-मन निर्मल हो गया और पाप जलकर क्षीण हो गये। गुरु नानक कहते हैं कि यह सब परमात्मा की कृपा और प्रसन्नता का द्योतक है ॥ ४ ॥ ७ ॥ १२ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ सगल मनोरथ पाईअहि मीता। चरन कमल सिउ लाईऐ चीता ॥ १ ॥ हउ बलिहारी जो प्रभू धिआवत। जलनि बुझै हरि हरि गुन गावत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सफल जनमु होवत वडभागी। साध संगि रामहि लिव लागी ॥ २ ॥ मति पति धनु सुख सहज अनंदा। इक निमख न विसरहु परमानंदा ॥ ३ ॥ हरि दरसन की मनि पिआस घनेरी। भनति नानक सरणि प्रभ तेरी ॥ ४ ॥ ८ ॥ १३ ॥

हे मित्र ! परमात्मा के चरण-कमल में मन लगाने से सब प्रकार के मनोरथ पूरे हो जाते हैं ॥ १ ॥ मैं उन सब पर बलिहार हूँ, जो प्रभु की आराधना करते हैं। हरि के गुण गाने से उनकी मानसिक अशान्ति दूर हो जाती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उस जीव का जन्म सफल हो जाता है; वह सौभाग्यशाली है, जो गुरु की संगति में परमात्मा के साथ लगन लगा लेता है ॥ २ ॥ श्रेष्ठ बुद्धि, सम्मान तथा धन आदि सब कुछ सहज में

ही प्राप्त हो जाता है, जब परमात्मा को क्षण भर के लिए भी जीव मन से नहीं बुलाता है ॥ ३ ॥ मेरे मन में हरि-दर्शन की तीखी पिपासा है, इसलिए, गुरु नानक कहते हैं कि वे परमात्मा की ही एक मात्र शरण ग्रहण करते हैं ॥ ४ ॥ ८ ॥ १३ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ मोहि निरगुन सभ गुणह बिहूना। दइआ धारि अपुना करि लीना ॥ १ ॥ मेरा मनु तनु हरि गोपालि सुहाइआ। करि किरपा प्रभु घर महि आइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भगति वछल भै काटनहारे। संसार सागर अब उतरे पारे ॥ २ ॥ पतित पावन प्रभ बिरदु बेदि लेखिआ। पारब्रहमु सो नैनहु पेखिआ ॥ ३ ॥ साध संगि प्रगटे नाराइण। नानक दास सभि दूख पलाइण ॥ ४ ॥ ९ ॥ १४ ॥

मुझ गुणविहीन जीव को परमात्मा ने दया कर अपना बना लिया है ॥ १ ॥ मेरे तन-मन में हरि समाया हुआ है, इसलिए वह सुन्दर हो गया है। प्रभु ने कृपा करके मेरे मन के भीतर सहज स्थान बना लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु भक्तों से प्यार करनेवाले और भय से निस्तार दिलानेवाले हैं। अब (उसके मिल जाने पर) हम संसार-सागर को (सुविधानुसार) पार कर लेंगे ॥ २ ॥ वेदों में परमात्मा का जो पतित-पावन गुण लिखा है, वह प्रभु-कृपा से मैंने अपनी आँखों से देख लिया है ॥ ३ ॥ सन्तों की संगति में रहने से प्रभु का साक्षात् होता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा की दासता में रहकर सब प्रकार के दुःख दूर हो जाते हैं ॥ ४ ॥ ९ ॥ १४ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ कवनु जानै प्रभ तुम्हरी सेवा। प्रभ अबिनासी अलख अभेवा ॥ १ ॥ गुण बेअंत प्रभ गहिर गंभीरे। ऊच महल सुआमी प्रभ मेरे। तू अपरंपर ठाकुर मेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एकस बिनु नाही को दूजा। तुम्ह ही जानहु अपनी पूजा ॥ २ ॥ आपहु कछू न होवत भाई। जिसु प्रभु देवै सो नामु पाई ॥ ३ ॥ कहु नानक जो जनु प्रभ भाइआ। गुण निधान प्रभु तिन ही पाइआ ॥ ४ ॥ १० ॥ १५ ॥

हे प्रभु ! तुम्हारी सच्ची भक्ति का ज्ञान किसे है ? तुम अविनाशी, अदृश्य और अज्ञेय हो ॥ १ ॥ प्रभु के गुण अनन्त और गम्भीर हैं। तुम मेरे मालिक हो, तुम्हारी कोई सीमाएँ नहीं हैं और न ही तुम किसी सांसारिक भवन में निवसित हो। हे मेरे ठाकुर ! तुम्हारे महल बहुत

ऊँचे हैं अर्थात् तुम जन-साधारण के लिए अपहुँच हो ।। १ ।। रहाउ ।। उस एक परमात्मा के बिना दूसरा कोई नहीं है और उसकी आराधना का सही ढंग भी वह स्वयं ही जानता है ।। २ ।। मनुष्य से अपने आप कुछ नहीं होता; जो कुछ भी मिलता है, वह नाम की आराधना से प्रभु-इच्छा द्वारा मिलता है ।। ३ ।। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव प्रभु को प्रिय होते हैं, वे ही गुणों के भण्डार परमात्मा को पाते हैं ।। ४ ।। १० ।। १५ ।।

।। बिलावलु महला ५ ।। मात गरभ महि हाथ दे राखिआ । हरि रसु छोडि बिखिआ फलु चाखिआ ।। १ ।। भजु गोबिद सभ छोडि जंजाल । जब जमु आइ संघारै मूड़े तब तनु बिनसि जाइ बेहाल ।। १ ।। रहाउ ।। तनु मनु धनु अपना करि थापिआ । करनहारु इक निमख न जापिआ ।। २ ।। महा मोह अंध कूप परिआ । पारब्रहमु माइआ पटलि बिसरिआ ।। ३ ।। वडै भागि प्रभ कीरतनु गाइआ । संत संगि नानक प्रभ पाइआ ।। ४ ।। ११ ।। १६ ।।

परमात्मा माता के गर्भ में भी सहारा देकर जीव की रक्षा करता है। जब कि जीव उस प्रभु का रस छोड़कर माया के विष-फल को खाने लगता है ।। १ ।। ऐ जीव ! तुम सब जंजालों को छोड़कर परमात्मा का नाम सिमरन करो; अन्यथा जब यम आकर तुम्हें दण्ड देगा तो तुम्हारा शरीर दुःखपूर्वक नष्ट हो जायेगा ।। १ ।। रहाउ ।। तुमने इस संसार में तन, मन, धन को अपना समझ लिया है, उस कर्तार को क्षण भर के लिए भी स्मरण नहीं किया ।। २ ।। महामोह के अन्धे कुएँ में गिरा रहा, किन्तु माया के कारण परब्रह्म को भुलाए रहा ।। ३ ।। सौभाग्यवश जब जीव ने परमात्मा का भजन किया, नानक कहते हैं, तो गुरु की संगति में उसने परमात्मा को पा लिया ।। ४ ।। ११ ।। १६ ।।

।। बिलावलु महला ५ ।। मात पिता सुत बंधप भाई । नानक होआ पारब्रहमु सहाई ।। १ ।। सूख सहज आनंद घणे । गुरु पूरा पूरी जाकी बाणी अनिक गुणा जाके जाहि न गणे ।। १ ।। रहाउ ।। सगल सरंजाम करे प्रभु आपे । भए मनोरथ सो प्रभु जापे ।। २ ।। अरथ धरम काम मोख का दाता । पूरी भई सिमरि सिमरि बिधाता ।। ३ ।। साध संगि नानकि रंगु माणिआ । घरि आइआ पूरै गुरि आणिआ ।। ४ ।। १२ ।। १७ ।।

गुरु नानक पुकारकर कहते हैं कि परब्रह्म ही हमारा माता, पिता,

पुत्र, भाई, बन्धु और सहायी है ॥ १ ॥ उसे पा लेने पर सहज में ही हमें असीम आनन्द की प्राप्ति होती है और वह सत्यस्वरूप गुरु मिल जाता है, जिसकी वाणी मुक्तिदाता और जिसके गुण असंख्य होते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा स्वयं ही सब कार्यों को सिद्ध करता है। प्रभु का नाम जपनेवाले के सब मनोरथ पूरे हो जाते हैं ॥ २ ॥ वह प्रभु अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष का प्रदाता है और उसी का स्मरण करने से जीव की मेहनत सफल होती है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि उन्होंने गुरु की संगति में उल्लास पाया है और उस गुरु ने उन्हें अपने वास्तविक घर में पहुँचा दिया है ॥ ४ ॥ १२ ॥ १७ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ सब निधान पूरन गुरदेव ॥१॥ रहाउ ॥ हरि हरि नामु जपत नर जीवे । मरि खुआरु साकत नर थीवे ॥ १ ॥ राम नामु होआ रखवारा । झख मारउ साकतु वेचारा ॥ २ ॥ निंदा करि करि पचहि घनेरे । मिरतक फास गलै सिरि पैरे ॥ ३ ॥ कहु नानक जपहि जन नाम । ता के निकटि न आवै जाम ॥ ४ ॥ १३ ॥ १८ ॥

मेरे पूर्णगुरु के अब कोष और भण्डार भरे पूरे हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि-नाम जपनेवाला जीव अमर हो जाता है और इसके विपरीत नास्तिक व्यक्ति झख मारकर मृत्यु को प्राप्त करता है ॥ १ ॥ राम-नाम जिसका रक्षक बन जाता है, वह सफल-जीवन कहलाता है और बेचारा नास्तिक आवागमन में पड़ा रहता है ॥ २ ॥ सतिगुरु की निन्दा कर-करके अनेक जीव दुःख में पड़े तड़पते हैं और नित्यप्रति उनके गले में मौत का फन्दा पड़ा ही रहता है ॥ ३ ॥ इसीलिए, गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव परमात्मा का नाम जपता है, उसके निकट कभी यमदूत नहीं आते ॥ ४ ॥ १३ ॥ १८ ॥

रागु बिलावलु महला ५ घरु ४ दुपदे

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ कवन संजोग मिलउ प्रभ अपने । पलु पलु निमख सदा हरि जपने ॥ १ ॥ चरन कमल प्रभ के नित धिआवउ । कवन सु मति जितु प्रीतमु पावउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐसी क्रिपा करहु प्रभ मेरे । हरि नानक बिसरु न काहू बेरे ॥ २ ॥ १ ॥ १९ ॥

मैं अपने प्रभु को किस शुभ अवसर पर मिल सकता हूँ, मैं तो पल-पल प्रति क्षण केवल हरि-नाम जपना ही अपना उद्देश्य मानता हूँ ॥ १ ॥

हे जीवो ! नित्य प्रभु के चरण-कमलों का ध्यान करो। वह कौन सी सुबुद्धि होगी, जिससे तुम प्रियतम को प्राप्त कर लोगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मेरे प्रभु ! ऐसी कृपा करो कि नानक को परमात्मा कभी विस्मृत न हो ॥ २ ॥ १ ॥ १९ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ चरन कमल प्रभ हिरदै धिआए। रोग गए सगले सुख पाए ॥१॥ गुरि दुखु काटिआ दीनो दानु। सफल जनमु जीवन परवानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अकथ कथा अंम्रित प्रभ बानी। कहु नानक जपि जीवे गिआनी ॥ २ ॥ २ ॥ २० ॥

जो जीव परमात्मा के चरण-कमलों को हृदय में धारण करते हैं, उनके सब दुःख दूर होते और उन्हें परमसुख की प्राप्ति होती है ॥ १ ॥ गुरु ने कृपा करके उसके दुःखों को दूर कर दिया है और अब उसका जीवन सफल और प्रभु के द्वारा स्वीकृत हो गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि विवेकशील जीव परमात्मा की अमृत-वाणी की अकथ कथा सुनकर मुक्ति को प्राप्त करते हैं ॥ २ ॥ २ ॥ २० ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ सांति पाई गुरि सतिगुरि पूरे। सुख उपजे बाजे अनहद तूरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ताप पाप संताप बिनासे। हरि सिमरत किलविख सभि नासे ॥१॥ अनदु करहु मिलि सुंदर नारी। गुरि नानकि मेरी पैज सवारी ॥२॥३॥२१॥

सच्चे गुरु का प्रश्रय पाकर जीव को शान्ति मिलती है, सुख उपजता है और अनाहत ध्वनि होने लगती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सब प्रकार के कष्ट, पाप और व्यग्रता नष्ट होती है। हरि का स्मरण करने से सब मलिनताएँ दूर हो जाती हैं ॥ १ ॥ हे सुन्दर जीवात्मा रूपी नारी ! गुरु नानक कहते हैं, सतिगुरु ने तुझे शरण दी है, अब उससे मिलकर परम आनन्द को प्राप्त करो ॥ २ ॥ ३ ॥ २१ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ ममता मोह ध्रोह मदि माता बंधनि बाधिआ अति बिकराल। दिनु दिनु छिजत बिकार करत अउध फाही फाथा जम कै जाल ॥ १ ॥ तेरी सरणि प्रभ दीन दइआला। महा बिखम सागरु अति भारी उधरहु साधू संगि रवाला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभ सुखदाते समरथ सुआमी जीउ पिंडु सभु तुमरा माल। भ्रम के बंधन काटहु परमेसर नानक के प्रभ सदा क्रिपाल ॥ २ ॥ ४ ॥ २२ ॥

अहम्, ममता, मोह और छल-कपट की मस्ती में उन्मत्त हुआ मनुष्य इन बन्धनों के कारण भयकारक दिखाई देता है। वह यम के फन्दे में फँसा आयु भर तिल-तिल करके क्षीण होता जाता है ॥ १ ॥ इसलिए हे प्रभु दीनदयाल ! हम तुम्हारी शरण में हैं; हमें सन्तों की चरणधूल देकर इस महाविषम सागर से उद्धार करवा दो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मेरे समर्थ सुख-दाता स्वामी ! यह आत्मा और शरीर तुम्हारी ही देन है, इसलिए कृपा करके, हे परमेश्वर! हमारे बन्धनों को काट दीजिए ॥ २ ॥ ४ ॥ २२ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ सगल अनंदु कीआ परमेसरि अपणा बिरदु सम्हारिआ। साध जना होए किरपाला बिगसे सभि पर वारिआ ॥ १ ॥ कारजु सतिगुरि आपि सवारिआ। वडी आरजा हरि गोबिंद की सूख मंगल कलिआण बीचारिआ ॥१॥ रहाउ ॥ वण त्रिण त्रिभवण हरिआ होए सगले जीअ साधारिआ। मन इछे नानक फल पाए पूरन इछ पुजारिआ ॥ २ ॥ ५ ॥ २३ ॥

हे परमेश्वर ! तुमने अपने स्वभावानुसार परमसुख की सृष्टि की। सन्तों की कृपा से तुम्हारा सारा परिवार प्रसन्न हुआ ॥ १ ॥ हमारे सब कार्य स्वयं सतिगुरु ने पूरे कर दिये और हरगोबिन्दजी की आयु बड़ी करके हमारे सुख-कल्याण का ध्यान रखा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (कथन है कि इस शब्द का उच्चारण गुरु अर्जुनदेवजी ने तब किया था, जब बालक हरिगोबिन्द कठिन रोग से मुक्त हुए थे।) जंगल की वनस्पति और तीनों भुवन हरे-भरे हो गये अर्थात् सब जगह आनन्द व्याप्त हुआ। सभी जीव तुम्हारी शरण पाकर प्रसन्न हो उठे। गुरु नानक कहते हैं कि हे इच्छाओं को पूर्ण करनेवाले प्रभु ! तुम्हारी कृपा से हमने सब मनोरथ पूरे कर लिये हैं ॥ २ ॥ ५ ॥ २३ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ जिसु ऊपरि होवत दइआलु। हरि सिमरत काटै सो कालु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साध संगि भजीऐ गोपालु। गुन गावत तूटै जम जालु ॥ १ ॥ आपे सतिगुरु आपे प्रतिपाल। नानकु जाचै साध रवाल ॥२॥६॥२४॥

जिस पर परमात्मा की दया होती है, वह हरि-स्मरण कर मृत्यु पर विजयी होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु की संगति में रहकर प्रभु का भजन करने तथा गुणगान करने से यम के फन्दे टूट जाते हैं ॥ १ ॥ सतिगुरु की शरण लेने से वह स्वयं संरक्षक हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि वे तो केवल सन्तों की चरणधूल की याचना करते हैं ॥ २ ॥ ६ ॥२४॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ मन महि सिंचहु हरि हरि नाम । अनदिनु कीरतनु हरि गुण गाम ॥ १ ॥ ऐसी प्रीति करहु मन मेरे । आठ पहर प्रभ जानहु नेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहु नानक जाके निरमल भाग । हरि चरनी ता का मनु लाग ॥ २ ॥ ७ ॥ २५ ॥

हे जीवो ! मन में हरि-नाम का अभिसिंचन करो और रात-दिन हरि के गुण गाते हुए उसी का कीर्तन करो ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! प्रभु से ऐसी प्रीति करो कि आठों प्रहर उसे अपने निकट समझो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि जिनका भाग्य उज्ज्वल होता है, उनकी प्रीति सदा हरि-चरणों में लीन रहती है ॥ २ ॥ ७ ॥ २५ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ रोगु गइआ प्रभि आपि गवाइआ । नीद पई सुख सहज घरु आइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रजि रजि भोजनु खावहु मेरे भाई । अंम्रित नामु रिद माहि धिआई ॥१॥ नानक गुर पुरे सरनाई । जिनि अपने नाम की पैज रखाई ॥ २ ॥ ८ ॥ २६ ॥

प्रभु की कृपा से अब रोग-मुक्त हो गये; मिलनोल्लास की निद्रा में जीव ने चतुर्थ पद को प्राप्त कर लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अब, ऐ मेरे भाई, इस अमृत रूपी नाम को हृदय में धारण करो, पूर्णतृप्ति से इसका भोजन करो ॥ १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि पूरे गुरु की शरण में आने से उसी के विरद की पुष्टि होती है अर्थात् गुरु की शरण लेनेवाला उसके उदार स्वभाव के कारण मुक्ति प्राप्त कर लेता है ॥ २ ॥ ८ ॥ २६ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ सतिगुर करि दीने असथिर घर बार ॥ रहाउ ॥ जो जो निंद करै इन ग्रिहन की तिसु आगै ही मारै करतार ॥ १ ॥ नानक दास ता की सरनाई जा को सबदु अखंड अपार ॥ २ ॥ ९ ॥ २७ ॥

सतिगुरु ने मेरे घर-बार, परिवार को स्थिरता प्रदान की है ॥ रहाउ ॥ जो लोग गुरु-घर की निन्दा करते हैं, वे कर्तार के सम्मुख दोषी ठहराये जाते हैं और दण्ड प्राप्त करते हैं ॥ १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि वे उस परमात्मा की शरण में हैं, जिसका शब्द अखण्ड और असीम है ॥२॥९॥२७॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ ताप संताप सगले गए बिनसे ते रोग । पारब्रहमि तू बखसिआ संतन रस भोग ॥ रहाउ ॥ सरब

सुखा तेरी मंडली तेरा मनु तनु आरोग । गुन गावहु नित राम के इह अवखद जोग ।। १ ।। आइ बसहु घर देस महि इह भले संजोग । नानक प्रभ सुप्रसंन भए लहि गए बिओग ।।२।।१०।।२८।।

प्रभु की कृपा से हमारे रोग-सन्ताप नष्ट हो गये हैं । परब्रह्म ने हमें सन्तों की संगति रूपी रस प्रदान किया है ।। रहाउ ।। गुरु का नैकट्य पाकर सब सुख तुम्हारे साथ हैं और तुम्हारा तन-मन अरोग हो गया है । आरोग्य को पाने के लिए एक ही उपयुक्त दवा है कि तुम नित्यप्रति राम-नाम का गुणगान करो ।। १ ।। अब जीव को अपने ही घर में रहने का संयोग मिला है (अर्थात् इधर-उधर माया-मोह में भटकने की अपेक्षा अब उसे एकाग्रचित्त होने का सुअवसर प्राप्त है) । गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु की प्रसन्नता से जीव के सब वियोग दूर हो गये अर्थात् वह परममिलन की अवस्था में पहुँच गया है ।। २ ।। १० ।। २८ ।।

।। बिलावलु महला ५ ।। काहू संगि न चालही माइआ जंजाल । ऊठि सिधारे छत्रपति संतन कै खिआल ।। रहाउ ।। अहंबुधि कउ बिनसना इह धुर की ढाल । बहु जोनी जनमहि मरहि बिखिआ बिकराल ।। १ ।। सति बचन साधू कहहि नित जपहि गुपाल । सिमरि सिमरि नानक तरे हरि के रंग लाल ।। २ ।। ११ ।। २९ ।।

सन्तों के विचारानुसार दुनिया की सब उपलब्धियाँ माया-जाल हैं, कोई साथ नहीं चलतीं; बड़े-बड़े छत्रपति राजा चले गये, किन्तु वे साथ कुछ नहीं ले जा पाये ।। रहाउ ।। अन्ततः अहम्पूर्ण बुद्धि का नाश होता ही है, यही यहाँ की रीति है । जीव यों ही अनेक योनियों में भ्रमते हैं और विकराल माया के विष में पड़े सड़ा करते हैं ।। १ ।। सन्तजन नित्य प्रभु-नाम का जाप करते और सत्य वचन कहते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि वे हरि-प्रेम में लीन होकर नित्य प्रभु-स्मरण में लगे रहते हैं ।। २ ।। ११ ।। २९ ।।

।। बिलावलु महला ५ ।। सहज समाधि अनंद सूख पूरे गुरि दीन । सदा सहाई संगि प्रभ अंम्रित गुण चीन ।। रहाउ ।। जैजैकारु जगत्र महि लोचहि सभि जीआ । सुप्रसंन भए सतिगुर प्रभू कछु बिघनु न थीआ ।। १ ।। जाका अंगु दइआल प्रभ ता के सभ दास । सदा सदा वडिआईआ नानक गुर पासि ।। २ ।। १२ ।। ३० ।।

गुरु की कृपा से जीव को सहज समाधि प्राप्त हुई है और वह परमानन्द की स्थिति में पहुँच गया है। परमात्मा उसका सदैव सहायक हो गया है और वह उसी के गुणों का गान करता है ॥ रहाउ ॥ संसार में सभी जीव उसी का जय-जयकार करना चाहते हैं, जिससे सतिगुरु प्रसन्न होते हैं और सब विघ्न नष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥ दयालु प्रभु जिसका पक्ष लेते हैं, सभी उसकी दासता स्वीकार कर लेते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु की संगति पाकर जीव को सदैव प्रतिष्ठा मिलती है ॥ २ ॥ १२ ॥ ३० ॥

रागु बिलावलु महला ५ घरु ५ चउपदे

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ त्रित मंडल जगु साजिआ जिउ बालू घर बार। बिनसत बार न लागई जिउ कागद बूंदार ॥१॥ सुनि मेरी मनसा मनै माहि सति देखु बीचारि। सिध साधिक गिरही जोगी तजि गए घर बार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसा सुपना रैनि का तैसा संसार। द्रिसटिमान सभु बिनसीऐ किआ लगहि गवार ॥ २ ॥ कहा सु भाई मीत है देखु नैन पसारि। इकि चाले इकि चालसहि सभि अपनी वार ॥ ३ ॥ जिन पूरा सतिगुरु सेविआ से असथिरु हरि दुआरि। जनु नानकु हरि का दासु है राखु पैज मुरारि ॥ ४ ॥ १ ॥ ३१ ॥

यह नश्वर संसार परमात्मा ने बालू की दीवार की तरह खड़ा किया है; इसे नष्ट होते वैसे ही कोई देर नहीं लगती, जैसे लगातार बूंदें पड़ने से कागज़ को नष्ट होते देर नहीं लगती ॥ १ ॥ मन लगाकर मेरी बात को सुनो और उसके तथ्य पर विचार करो। बड़े-बड़े सिद्ध-साधक, गृहस्थी और योगी, सबको अन्ततः घर-बार सर्वस्व त्यागकर यहाँ से जाना ही पड़ा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह संसार रात्रि के सपने के समान है। जो भी यहाँ दृश्यमान है, सबको नष्ट होना है; ऐ मूर्ख ! तू क्यों इसी में रत है ?॥ २ ॥ ज़रा आँखें खोलकर देखो तो सही कि तुम्हारे भाई-मित्र आदि कहाँ हैं ! कुछ संसार से जा चुके हैं और कुछ अपनी बारी आने पर चले जायँगे ॥ ३ ॥ जिन जीवों ने सतगुरु की सेवा की होती है अर्थात् जो परमात्मा के भक्त हैं, वे ही प्रभु-कृपा से स्थिर हो पाते हैं। गुरु नानक अपने को हरि का दास कहते हुए उसी के पास अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए प्रार्थना करते हैं ॥ ४ ॥ १ ॥ ३१ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ लोकन कीआ वडिआईआ बैसंतरि पागउ ॥ जिउ मिलै पिआरा आपना ते बोल करागउ ॥ १ ॥ जउ प्रभ जीउ दइआल होइ तउ भगती लागउ । लपटि रहिओ मनु बासना गुर मिलि इह तिआगउ ॥१॥ रहाउ ॥ करउ बेनती अति घनी इहु जीउ होमागउ । अरथ आन सभि वारिआ प्रिअ निमख सोहागउ ॥ २ ॥ पंच संगु गुर ते छुटे दोख अरु रागउ । रिदै प्रगासु प्रगट भइआ निसि बासुर जागउ ॥ ३ ॥ सरणि सोहागनि आइआ जिसु मसतकि भागउ । कहु नानक तिनि पाइआ तनु मनु सीतलागउ ॥४॥२॥३२॥

दुनिया की प्रशंसाओं को आग में डालूँगा; केवल वे ही वचन कहूँगा, जिनसे मेरा प्रिय परमात्मा मुझे मिल सके ॥ १ ॥ जिस पर परमात्मा की कृपा होती है वही भक्ति में लीन होता है । वासनाओं में लिपटा मन गुरु-मिलन से ही मुक्त हो पाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं प्रभु के सम्मुख अति विनम्र-भाव से विनती करता और अपने आप को उस पर न्यौछावर करता हूँ । यदि मुझे क्षण भर के लिए भी परमात्मा की संगति का आनन्द प्राप्त हो, तो मैं संसार के सब पदार्थ उस पर न्यौछावर कर दूँ ॥ २ ॥ गुरु की संगति में सब प्रकार के राग-द्वेष और काम-क्रोध आदि पाँच दोष छूट गये । मेरे हृदय में आलोक प्रकट हुआ और अब मैं रात-दिन जाग्रत् हूँ ॥३॥ जिसके माथे पर भाग्य की श्रेष्ठ रेखाएँ होती हैं, वही मिलनोल्लास पाकर परमात्मा की शरण में आता है । गुरु नानक कहते हैं कि उसके सभी सन्ताप दूर हो जाते हैं और उसके तन-मन में शीतलता वास करती है ॥ ४ ॥ २ ॥ ३२ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ लाल रंगु तिस कउ लगा जिस के वडभागा । मैला कदे न होवई नह लागै दागा ॥ १ ॥ प्रभु पाइआ सुखदाईआ मिलिआ सुख भाइ । सहजि समाना भीतरे छोडिआ नह जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जरा मरा नह विआपई फिरि दूखु न पाइआ । पी अंम्रितु आघानिआ गुरि अमर कराइआ ॥ २ ॥ सो जानै जिनि चाखिआ हरि नामु अमोला । कीमति कही न जाईऐ किआ कहि मुखि बोला ॥ ३ ॥ सफल दरसु तेरा पारब्रहम गुणनिधि तेरी बाणी । पावउ धूरि तेरे दास की नानक कुरबाणी ॥ ४ ॥ ३ ॥ ३३ ॥

प्रभु-नाम की लालिमा उसी जीव को रँगती है, जो भाग्यशाली होता

है। यह रंग न कभी मलिन होता है और न ही इस पर कोई दाग़ लगता है ॥ १ ॥ सुखदाता प्रभु के मिलने से ख़ुशियों और सुख के भण्डार खुल गये हैं, अन्तरात्मा में सहजावस्था का प्रकाश हुआ है, जिसे अब छोड़ा नहीं जा सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐसे जीव को मृत्यु और वृद्धावस्था के भय नहीं रह जाते और फिर कभी वह दुःख नहीं पाता। वह नामामृत का पान कर सन्तुष्ट हो जाता है और गुरु-कृपा से अमरता प्राप्त करता है ॥२॥ अनमोल हरि-नाम रस को वही जानता है, जिसने उसे चखा है। उसका मोल कोई नही लगा सकता, वह अनिर्वचनीय है ॥ ३ ॥ जिसके दर्शन करने मात्र से ही सब मनोवांछित फल प्राप्त हो जाते हैं, हे परब्रह्म ! तू वही है और तेरी वाणी गुरुओं का ऐसा कोश है, जिसे पाकर जीव परमानन्द अवस्था को प्राप्त करता है। गुरु नानक कहते हैं, यदि तुम्हारे भक्तों की भी चरणधूलि मुझे मिले तो मैं उन पर न्यौछावर हो जाऊँ ॥ ४ ॥ ३ ॥ ३३ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ राखहु अपनी सरणि प्रभ मोहि किरपा धारे। सेवा कछू न जानऊ नीचु मूरखारे ॥ १ ॥ मानु करउ तुधु ऊपरे मेरे प्रीतम पिआरे। हम अपराधी सद भूलते तुम्ह बखसनहारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हम अवगन करह असंख नीति तुम्ह निरगुन दातारे। दासी संगति प्रभू तिआगि ए करम हमारे ॥ २ ॥ तुम्ह देवहु सभु किछु दइआ धारि हम अकिरतघनारे। लागि परे तेरे दान सिउ नह चिति खसमारे ॥३॥ तुझ ते बाहरि किछु नही भव काटनहारे। कहु नानक सरणि दइआल गुर लेहु मुगध उधारे ॥ ४ ॥ ४ ॥ ३४ ॥

हे प्रभु ! कृपा करके मुझे अपनी शरण में जगह दो। मैं मूर्ख, गँवार और नीच हूँ, सेवा की भावना से भी परिचित नहीं हूँ (तुम्हीं कृपा करो) ॥ १ ॥ हे मेरे प्यारे प्रियतम ! मुझे तुम पर मान है। हम तो अपराधी हैं, सदा ग़लती करते हैं; किन्तु तुम क्षमाशील हो, क्षमा कर देते हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हम प्रतिदिन अनन्त भूलें करते हैं, किन्तु, हे प्रभु ! तुम हम गुणहीनों को गुणों का दान देते हो। हमारे कर्म इतने नीच हैं कि हम तुम्हारी सेवा को त्यागकर तुम्हारी दासी माया की सेवा में लगे रह जाते हैं ॥ २॥ तुम दया करके हमें सब कुछ देते हो, किन्तु हम कृतघ्न हैं। तुमसे सब कुछ पाकर भी तुम्हारे जैसे स्वामी में मन नहीं रमाते ॥३॥ हे भव-बन्धनों को काटनेवाले परमात्मा! तुमसे बाहर कुछ भी नहीं है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु की दया से हमें शरण देकर अपना लो और हम मन्द-बुद्धि जीवों का उद्धार करो ॥ ४ ॥ ४ ॥ ३४ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ दोसु न काहू दीजीऐ प्रभु अपना धिआईऐ। जितु सेविऐ सुखु होइ घना मन सोई गाईऐ ॥ १ ॥ कहीऐ काइ पिआरे तुझु बिना। तुम्ह दइआल सुआमी सभ अवगन हमा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ तुम्ह राखहु तिउ रहा अवरु नही चारा। नीधरिआ धर तेरीआ इक नाम अधारा ॥२॥ जो तुम्ह करहु सोई भला मनि लेता मुकता। सगल समग्री तेरीआ सभ तेरी जुगता ॥ ३ ॥ चरन पखारउ करि सेवा जे ठाकुर भावै। होहु क्रिपाल दइआल प्रभ नानकु गुण गावै ॥ ४ ॥ ५ ॥ ३५ ॥

ऐ जीवात्माओ ! किसी को दोष मत दो, केवल अपने प्रियतम में ध्यान लगाओ। उसकी सेवा में परमसुख प्राप्त होता है, इसलिए एकाग्र-मन होकर उसी का गुणगान करो ॥ १ ॥ हे प्रियतम ! तुम्हारे सिवाय और किसके पास विनय करें; तुम दयालु हो, हम सबके स्वामी हो और हमारे सब अवगुणों को दूर करनेवाले हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसा उचित समझो वैसा हमें रखो; इसके अतिरिक्त और कोई चारा नहीं है। हमें एकमात्र नाम का श्रेय है, हम निराश्रित थे, तुम्हींने हमें आश्रय दिया है ॥ २ ॥ जो कुछ तुम करते हो, उसे सिर-माथे स्वीकार करनेवाला जीव ही मुक्त होता है। समूची रचना तुम्हारी की हुई है और इसे चलाने के सब तरीक़े भी तुम्हारे ही हाथ हैं ॥ ३ ॥ यदि स्वामी को स्वीकार हो तभी उसकी सेवा सम्भव हो सकती है, उसके चरण धोये जा सकते हैं। इसीलिए गुरु नानक परमात्मा से उसकी कृपा और दया की माँग करते हैं, ताकि जीव उसका गुणगान कर सके ॥ ४ ॥ ५ ॥ ३५ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ मिरतु हसै सिर ऊपरे पसूआ नही बूझै। बाद साद अहंकार महि मरणा नही सूझै ॥ १ ॥ सतिगुरु सेवहु आपना काहे फिरहु अभागे। देखि कसुंभा रंगुला काहे भूलि लागे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि करि पाप दरबु कीआ वरतण कै ताई। माटी सिउ माटी रली नागा उठि जाई ॥ २ ॥ जा कै कीऐ स्रमु करै ते बैर बिरोधी। अंतकालि भजि जाहिगे काहे जलहु करोधी ॥ ३ ॥ दास रेणु सोई होआ जिसु मसतकि करमा। कहु नानक बंधन छुटे सतिगुर की सरना ॥४॥६॥३६॥

यह अज्ञानी जीव पशु के समान है, जो यह भी नहीं जानता कि मृत्यु सदैव उसके सिर पर मँड़राती रहती है। सांसारिक खुशियों, वाद-विवाद

और अहंकार में पड़ा वह अपनी मृत्यु से बेखबर रहता है ॥१॥ ऐ अभागे ! इधर-उधर भटकने की अपेक्षा क्यों नहीं तू अपने सतगुरु की सेवा में मग्न होता । दुनिया में मायावी रंगों को देखकर क्यों भूला पड़ा है ? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनेक पाप कर-करके अपने प्रयोग के लिए हम द्रव्य एकत्रित करते हैं । अकस्मात् मृत्यु आ घेरती है, जीव को खाली हाथ जाना पड़ता है, मिट्टी, मिट्टी में मिल जाती है ॥ २ ॥ जिन संगी-साथियों के लिए वह श्रम करता है, वे ही उससे वैर-विरोध करते हैं । वे अन्तकाल में उसका साथ नहीं देते, व्यर्थ क्रोध करने का क्या लाभ ? ॥ ३ ॥ उच्च कर्मों के कारण जिसका भाग्य ऊँचा है, वही परमात्मा की चरणधूलि लेकर उसकी दासता (दास्य-भक्ति) स्वीकार करता है । गुरु नानक कहते हैं कि सतगुरु की शरण लेने पर ही बन्धनों से मुक्ति मिलती है ॥ ४ ॥ ६ ॥ ३६ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ पिंगुल परबत पारि परे खल चतुर बकीता । अंधुले त्रिभवण सूझिआ गुर भेटि पुनीता ॥१॥ महिमा साधू संग की सुनहु मेरे मीता । मैलु खोई कोटि अघ हरे निरमल भए चीता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐसी भगति गोविंद की कीटि हसती जीता । जो जो कीनो आपनो तिसु अभै दानु दीता ॥ २ ॥ सिंघु बिलाई होइ गइओ त्रिणु मेरु दिखीता । स्रमु करते दम आढ कउ ते गनी धनीता ॥ ३ ॥ कवन वडाई कहि सकउ बेअंत गुनीता । करि किरपा मुहि नामु देहु नानक दरसरीता ॥ ४ ॥ ७ ॥ ३७ ॥

गुरु की संगति में आने से असम्भव भी सम्भव हो जाता है; लँगड़े-लूले पर्वत पर चढ़ सकते हैं; मूर्ख-गँवार चतुर हो जाते हैं और अन्धों को तीनों लोकों की सूझ मिल जाती है ॥ १ ॥ हे मेरे मित्र ! साधु-संगति की महिमा सुनो । साधु की शरण लेने पर करोड़ों मलिनताएँ दूर होती हैं, पाप नष्ट हो जाते हैं और चित्त निर्मल होता है ॥१॥ रहाउ ॥ परमात्मा की भक्ति इतनी सशक्त है कि चींटी भी हाथी को जीत सकती है । परमात्मा ने जिस-जिस को अपना बना लिया है, उसे अभयदान दिया है ॥ २ ॥ सिंह बिल्ली बन जाता है (अहंकार द्रवित होकर विनम्रता अपना लेता है), तिनका मेरुपर्वत के समान दिखाई देता है अर्थात् विनम्रता, जो पहले निर्बलता का चिह्न मानी जाती थी, अब पर्वत का बल धारण कर चुकी है । आधे-आधे छदाम के लिए जो भागे फिरते थे, वे अब सन्तुष्ट और धनवान हो गये हैं ॥ ३ ॥ उस अनन्त गुणवान की क्या बड़ाई करूँ वह तो, गुरु नानक कहते हैं, मुझ दर्शनों से वंचित जीव पर कृपा करके मेरा उद्धार करता है ॥ ४ ॥ ७ ॥ ३७ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ अहंबुधि परबाद नीत लोभ रसना सादि । लपटि कपटि ग्रिहि बेधिआ मिथिआ बिखिआदि ॥ १ ॥ ऐसी पेखी नेत्र महि पूरे गुरपरसादि । राज मिलख धन जोबना नामै बिनु बादि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रूप धूप सोगंधता कापर भोगादि । मिलत संगि पापिसट तन होए दुरगादि ॥ २ ॥ फिरत फिरत मानुखु भइआ खिन भंगन देहादि । इह अउसर ते चूकिआ बहु जोनि भ्रमादि ॥ ३ ॥ प्रभ किरपा ते गुर मिले हरि हरि बिसमाद । सूख सहज नानक अनंद ता कै पूरन नाद ॥ ४ ॥ ८ ॥ ३८ ॥

यह जीव नित्यप्रति अहंकार के कारण झगड़े करता है, लोभ और आस्वाद में लिप्त रहता है; घर-गृहस्थी में फँसा मिथ्या विषय-विकारों में रत रहता है ॥ १ ॥ गुरु की कृपा से ऐसा दीख पड़ने लगा है कि नाम के बिना धन, यौवन, राज्य और सम्पत्ति आदि सब व्यर्थ हैं ॥ १ ॥रहाउ॥ सुन्दर रूप, सुगन्धियाँ, कपड़े और रस-भोग आदि जब इस पाप-भरे शरीर से छूते हैं तो दुर्गन्धपूर्ण हो जाते हैं ॥ २ ॥ यह जीव अनेक योनियों में भटकता हुआ मनुष्य-जन्म प्राप्त करता है, इसमें भी शरीर क्षणभंगुर है, यदि इस अवसर से वह चूक गया तो पुनः उसे योनियों में भटकना पड़ेगा ॥३॥ यदि प्रभु की कृपा से उसे गुरु मिल जाए और वह हरि-नाम का जाप कर आनन्द-लाभ करे तो, गुरु नानक कहते हैं कि उसके अन्तर में परमात्मा के शब्द की ध्वनि प्रकट हो जाती है और वह सहजावस्था में परमानन्द को प्राप्त करता है ॥ ४ ॥ ८ ॥ ३८ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ चरन भए संत बोहिथा तरे सागरु जेत । मारग पाए उदिआन महि गुरि दसे भेत ॥ १ ॥ हरि हरि हरि हरि हरि हरे हरि हरि हरि हेत । ऊठत बैठत सोवते हरि हरि हरि चेत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंच चोर आगै भगे जब साध संगेत । पूंजी साबतु घणो लाभु ग्रिहि सोभा सेत ॥२॥ निहचल आसणु मिटी चिंत नाही डोलेत । भरमु भुलावा मिटि गइआ प्रभ पेखत नेत ॥ ३ ॥ गुण गभीर गुन नाइका गुण कहीअहि केत । नानक पाइआ साध संगि हरि हरि अंम्रेत ॥ ४ ॥ ९ ॥ ३९ ॥

सन्तों के चरण ऐसे जहाज़ हैं, जिनके सहारे संसार-सागर पार किया जाता है। तरह-तरह के गोरख-धन्धों में सच्चा गुरु ही यह सही मार्ग बता

सकता है, यह रहस्य उसे ही ज्ञात है ॥ १ ॥ हे जीव ! तू नित्य हरि-हरि नाम का जाप कर, हरि-नाम से प्यार कर और उठते-बैठते, सोते सदा हरि-नाम का ध्यान कर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सच्चे गुरु की संगति प्राप्त होते ही काम-क्रोध आदि पाँचों चोर भाग खड़े होते हैं और शरण में आये जीव परमात्मा से प्राप्त पूँजी को स्थिर रखते हुए, बल्कि उसे और बढ़ाते हुए शोभापूर्वक अपने घर लौटते हैं (अपने घर से यहाँ अभिप्राय है कि जीव परमात्मा के दरबार में मुक्ति-लाभ करके पहुँचते हैं) ॥ २ ॥ वे स्थिर-चित्त होते हैं, उनकी चिन्ताएँ मिट जाती हैं और वे कभी दोलायमान नहीं होते। परमात्मा को साक्षात् अपने नेत्रों से देखकर उनका भ्रम सदा के लिए दूर हो जाता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि हे गुणी-गम्भीर मेरे स्वामी ! तेरे किन-किन गुणों का कथन करूँ ? तेरे नामामृत की प्राप्ति केवल सन्तों की संगति में ही सम्भव है ॥ ४ ॥ ९ ॥ ३९ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ बिनु साधू जो जीवना तेतो बिरथारी। मिलत संगि सभि भ्रम मिटे गति भई हमारी ॥१॥ जा दिन भेटे साध मोहि उआ दिन बलिहारी। तनु मनु अपनो जीअरा फिरि फिरि हउ वारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एत छडाई मोहि ते इतनी द्रिड़तारी। सगल रेन इहु मनु भइआ बिनसी अपधारी ॥ २ ॥ निंद चिंद परदूखना ए खिन महि जारी। दइआ मइआ अरु निकटि पेखु नाही दूरारी ॥ ३ ॥ तन मन सीतल भए अब मुकते संसारी। हीत चीत सभ प्रान धन नानक दरसारी ॥ ४ ॥ १० ॥ ४० ॥

सन्तों की संगति के बिना जितना भी जीवन है, वह व्यर्थ होता है। गुरु के मिल जाने से सब भ्रम नष्ट हो जाते हैं और हमारा उद्धार हो जाता है ॥ १ ॥ मैं उस दिन पर बलिहार जाता हूँ, जिस दिन गुरु से मिलन होगा। मैं बार-बार अपना तन-मन, प्राण उस पर न्यौछावर कर दूँगा ॥१॥ रहाउ ॥ गुरु ने मुझसे अहंभाव छुड़वाकर इतनी दृढ़ विनम्रता प्रदान की है कि मेरा मन सबकी चरणधूलि हो गया है ॥२॥ मुझ द्वारा की जानेवाली निन्दा और पर-दूषण क्षण भर में ही गुरु ने मिटा दिये। अब सबके लिए मेरे मन में कृपा, दया है और मैं सबमें परमात्मा को निकट देखता हूँ ॥ ३ ॥ जीवन-मुक्त होकर अब मेरा तन-मन शीतल हो गया है और परमात्मा के दर्शन पाकर मैं उसी में अपना हित, चित्त, प्राण देखता हूँ ॥ ४ ॥ १० ॥ ४० ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ टहल करउ तेरे दास की पग

झारउ बाल । मसतकु अपना भेट देउ गुन सुनउ रसाल ॥ १ ॥ तुम्ह मिलते मेरा मनु जीओ तुम्ह मिलहु दइआल । निसि बासुर मनि अनदु होत चितवत किरपाल ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जगत उधारन साध प्रभ तिन्ह लागहु पाल । मोकउ दीजै दानु प्रभ संतन पग राल ॥ २ ॥ उकति सिआनप कछु नही नाही कछु घाल । भ्रम भै राखहु मोह ते काटहु जम जाल ॥ ३ ॥ बिनउ करउ करुणापते पिता प्रतिपाल । गुण गावउ तेरे साध संगि नानक सुख साल ॥ ४ ॥ ११ ॥ ४१ ॥

यदि परमात्मा का कोई सच्चा भक्त मिले अर्थात् कोई सन्त-महात्मा मिल जाए तो मैं उसकी सेवा करूँ, उसके चरणों को अपने लम्बे केशों से साफ़ करूँ; अपना मस्तक उस पर न्यौछावर कर दूँ और उससे तुम्हारे (परमात्मा के) रसीले गुणों का श्रवण करूँ ॥ १ ॥ हे प्रभु ! तुम्हारे मिलन में ही मेरा जीवन है, कृपा करके दर्शन दो । तुम सरीखे कृपालु प्रभु के दर्शनों से रात-दिन मन आनन्दित रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के दास सन्त-महात्मा जगत का उद्धार करने में समर्थ होते हैं, उन्हीं की शरण ग्रहण करूँगा । हे परमात्मा ! मुझे उन सन्तों की चरणधूलि प्रदान करो ॥ २ ॥ मेरे पास युक्ति, बुद्धि या सेवा का कोई गुण नहीं है; तुम्हीं कृपा करके मुझे भ्रम, भय आदि से सुरक्षित करो और मेरे फन्दों को काट दो ॥ ३ ॥ हे करुणापति प्रभु ! मैं विनय करता हूँ कि मैं सत्संगति में बैठकर उस प्रभु के, जो सुखों का घर है, गुण गाता रहूँ ॥४॥११॥४१॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ कीता लोड़हि सो करहि तुझ बिनु कछु नाहि । परतापु तुम्हारा देखि कै जमदूत छडि जाहि ॥ १ ॥ तुम्हरी क्रिपा ते छूटीऐ बिनसै अहंमेव । सरब कला समरथ प्रभ पूरे गुरदेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खोजत खोजत खोजिआ नामै बिनु कूरु । जीवन सुखु सभु साध संगि प्रभ मनसा पूरु ॥ २ ॥ जितु जितु लावहु तितु तितु लगहि सिआनप सभ जाली । जत कत तुम्ह भरपूर हहु मेरे दीन दइआली ॥ ३ ॥ सभु किछु तुम ते मागना वडभागी पाए । नानक की अरदासि प्रभ जीवा गुन गाए ॥ ४ ॥ १२ ॥ ४२ ॥

हे परमात्मा ! तुम जो करना चाहते हो वही करते हो, तुम्हारे सिवा और कुछ नहीं है । तुम्हारे प्रताप से ही यमदूत भी जीवों को छोड़ जाते हैं ॥ १ ॥ तुम्हारी कृपा से ही जीवों को मुक्ति मिलती है, उनका

अहंभाव नष्ट होता है। गुरु के द्वारा ही उस सर्वशक्तिमान् समर्थ प्रभु को पाया जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खोजते-खोजते मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि प्रभु-नाम के बिना सब मिथ्या है; केवल प्रभु के भक्तों की संगति में ही जीवन का सुख है और वहीं सब मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं ॥ २ ॥ जीवों की बौद्धिक योग्यता किसी काम नहीं आती, परमात्मा ही उनसे जो चाहता है, करवा लेता है। हे मेरे दीनदयालु प्रभु ! तुम सर्वव्यापक हो और स्वेच्छा से सब कुछ करते हो ॥३॥ सब कुछ तुम्हारी ही देन है, सभी तुमसे माँगते हैं, भाग्यशालियों को प्राप्त भी हो जाता है। इसीलिए गुरु नानक प्रभु के गुण गाते हुए ही जीने की इच्छा व्यक्त करते हैं ॥ ४ ॥ १२ ॥ ४२ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ साध संगति कै बासबै कलमल सभि नसना। प्रभ सेती रंगि रातिआ ता ते गरभि न ग्रसना ॥ १ ॥ नामु कहत गोविंद का सूची भई रसना। मन तन निरमल होईहै गुर का जपु जपना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि रसु चाखत ध्रापिआ मनि रसु लै हसना। बुधि प्रगास प्रगट भई उलटि कमलु बिगसना ॥ २ ॥ सीतल सांति संतोखु होइ सभ बूझी त्रिसना। दह दिस धावत मिटि गए निरमल थानि बसना ॥ ३ ॥ राखनहारै राखिआ भए भ्रम भसना। नामु निधान नानक सुखी पेखि साध दरसना ॥ ४ ॥ १३ ॥ ४३ ॥

सत्संगति में बसनेवाले सभी जीवों के पाप नष्ट हो जाते हैं। वे प्रभु के रंग में लीन हो जाते हैं, इसलिए दोबारा गर्भ में प्रविष्ट नहीं होते ॥ १ ॥ परमात्मा का नाम लेने से जिह्वा पवित्र हो जाती है; गुरु के आदेशानुसार नाम-जाप से समूचा तन-मन निर्मल हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीव का मन हरि-रस चखने से सन्तुष्ट होता है और परमानन्द को प्राप्त होता है। भीतर से विवेक का आलोक जाग्रत् होता है और हृदय-कमल माया की ओर से उलटकर विकसित हो जाता है ॥ २ ॥ मानव को सन्तोष और शान्ति मिलती है, तृष्णा की अग्नि बुझ जाती है, मन की दसों दिशाओं की भटकन मिट जाती है और वह निर्मल-भाव से जीवन व्यतीत करता है ॥ ३ ॥ संरक्षक प्रभु उसकी रक्षा करता है और उसके भ्रम और भय जल जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सन्तों के दर्शन करके तथा परमात्मा के नामामृत को पाकर मनुष्य सुखी हो जाता है ॥ ४ ॥ १३ ॥ ४३ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ पाणी पखा पीसु दास कै तब

होहि निहालु । राज मिलख सिकदारीआ अगनी महि जालु ॥१॥ संत जना का छोहरा तिसु चरणी लागि । माइआधारी छत्रपति तिन्ह छोडउ तिआगि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संतन का दाना रूखा सो सरब निधान । ग्रिहि साकत छतीह प्रकार ते बिखू समान ॥२॥ भगत जना का लूगरा ओढि नगन न होई । साकत सिरपाउ रेसमी पहिरत पति खोई ॥ ३ ॥ साकत सिउ मुखि जोरिऐ अध वीचहु टूटै । हरि जन की सेवा जो करे इत ऊतहि छूटै ॥ ४ ॥ सभ किछु तुम्ह ही ते होआ आपि बणत बणाई । दरसनु भेटत साध का नानक गुण गाई ॥ ५ ॥ १४ ॥ ४४ ॥

परमात्मा के दासों अर्थात् सन्तों की सेवा में पानी ढोना, पंखा करना और उनके लिए श्रम करना आदि मनुष्य को निहाल कर देता है। राज्य, सम्पत्ति और अधिकार इसके सम्मुख कुछ भी नहीं (अग्नि में जलाने योग्य हैं) ॥ १ ॥ सन्तजनों का सेवक परमात्मा की शरण ग्रहण कर लेता है, जब कि माया के फन्दे में फँसा छत्रपति भी त्याज्य है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तों की रूखी रोटी भी सुखों की भण्डार होती है, जब कि मायाधारी के घर में छत्तीस प्रकार के पकवान भी विष के समान होते हैं ॥ २ ॥ भक्तों की संगति में रहते हुए फटे कपड़े भी मनुष्य की नग्नता को ढके रहते हैं, किन्तु मायावी जीवों के रेशमी सिरोपे पहनकर भी मनुष्य मान खो बैठता है ॥ ३ ॥ गुरु-विहीन मायावी व्यक्ति से मेल बढ़ाने से बीच में ही स्थिति कट जाती है, जब कि सन्तों की सेवा में संसार में मुक्ति मिलती है और परमात्मा के दरबार में सम्मान प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ सब कुछ, हे परमात्मा, तुम्हारे द्वारा ही हुआ है, यह समूची रचना तुम्हारी ही बनाई हुई है। गुरु नानक कहते हैं कि जीव को सन्तों की संगति में रहकर उनके दर्शन और स्पर्श के साथ-साथ परमात्मा का गुण-गान करना चाहिए ॥ ५ ॥ १४ ॥ ४४ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ स्रवनी सुनउ हरि हरि हरे ठाकुर जसु गावउ । संत चरण कर सीसु धरि हरि नामु धिआवउ ॥ १ ॥ करि किरपा दइआल प्रभ इह निधि सिधि पावउ । संत जना की रेणुका लै माथै लावउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नीच ते नीचु अति नीचु होइ करि बिनउ बुलावउ । पाव मलोवा आपु तिआगि संत संगि समावउ ॥ २ ॥ सासि सासि नह वीसरै अन कतहि न धावउ । सफल दरसन गुरु भेटीऐ मानु मोहु

मिटावउ ।। ३ ।। सतु संतोखु दइआ धरमु सीगारु बनावउ । सफल सुहागणि नानका अपुने प्रभ भावउ ।। ४ ।। १५ ।। ४५ ।।

ऐ जीवो ! तुम अपने कानों से 'हरि-हरि' शब्द का श्रवण करो और नित्य प्रभु-स्वामी का गुणगान करो । सन्तों के चरणों में अपना शीश न्यौछावर कर परमात्मा का नाम जपते रहो ।।१।। परमात्मा की कृपा से सब प्रकार की निधियाँ और सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं, इसलिए उसके दासों (सन्तों) की चरणधूलि लेकर मस्तक पर लगाओ ।। १ ।। रहाउ ।। नम्र से भी नम्र होकर उस परमात्मा से विनय करो, उसे पुकारो । सन्तों की चरण-सेवा करो, अहम् का त्याग करो और उन्हीं की संगति में समा जाओ ।। २ ।। किसी भी श्वास पर परमात्मा को न भुलाओ और कहीं अन्यत्न न भटको । मान, मोह आदि को मिटाकर गुरु की शरण लो, उसके दर्शन-मात्न से ही सब फल प्राप्त हो जाते हैं ।। ३ ।। सत्य, सन्तोष, दया, धर्म आदि गुणों से अपना शृंगार करो, इसी से जीवात्मा रूपी स्त्री सुहागिन होती है और अपने प्रियतम परमात्मा को अच्छी लगने लगती है ।। ४ ।। १५ ।। ४५ ।।

।। बिलावलु महला ५ ।। अटल बचन साधू जना सभ महि प्रगटाइआ । जिसु जन होआ साध संगु तिसु भेटै हरि राइआ ।। १ ।। इह परतीति गोविंद की जपि हरि सुखु पाइआ । अनिक बाता सभि करि रहे गुरु घरि लै आइआ ।। १ ।। रहाउ ।। सरणि परे की राखता नाही सहसाइआ । करम भूमि हरि नामु बोइ अउसरु दुलभाइआ ।। २ ।। अंतरजामी आपि प्रभु सभ करे कराइआ । पतित पुनीत घणे करे ठाकुर बिरदाइआ ।। ३ ।। मत भूलहु मानुख जनमाइआ भरमाइआ । नानक तिसु पति राखसी जो प्रभि पहिराइआ ।। ४ ।। १६ ।। ४६ ।।

यह बात सब लोगों में प्रकट है कि साधुजनों का वचन अटल होता है; जिसे गुरु की संगति प्राप्त हो जाती है, उसे गुरु-कथन के ही कारण स्वयं हरि भी प्राप्त हो जाता है ।। १ ।। जिन जीवों को यह निश्चय हो गया है कि परमात्मा मिल सकता है, वे हरि का नाम जपकर सुखी होते हैं । अन्य सब लोग तो तरह-तरह की बातें ही करते रह जाते हैं, किन्तु गुरु की शरण लेनेवाला परमात्मा को अपने घर ले जाता है अर्थात् उसे अपने भीतर बसा हुआ देख लेता है ।। १ ।। रहाउ ।। परमात्मा शरण में आनेवाले की प्रतिष्ठा रखता है, सन्देहों में पनपनेवाले की नहीं । इसलिए इस कर्म-भूमि अर्थात् इस जीवन में हरि-नाम का बीज बोओ; यह अवसर

दुर्लभ है, फिर नहीं मिलेगा ॥ २ ॥ परमात्मा स्वयं अन्तर्यामी है, सब कुछ स्वयं करता है। उस स्वामी ने अपने विरद की रक्षा करते हुए अनेक पतितों को पुण्यवान बना दिया है ॥ ३ ॥ हे मनुष्यो ! माया के भ्रमाने से मत भटको। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु का आलम्बन लेनेवाले की रक्षा वह स्वयं करता है ॥ ४ ॥ १६ ॥ ४६ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ माटी ते जिनि साजिआ करि दुरलभ देह। अनिक छिद्र मन महि ढके निरमल द्रिसटेह ॥१॥ किउ बिसरै प्रभु मनै ते जिस के गुण एह। प्रभ तजि रचे जि आन सिउ सो रलीऐ खेह ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिमरहु सिमरहु सासि सासि मत बिलम करेह। छोडि प्रपंचु प्रभ सिउ रचहु तजि कूड़े नेह ॥ २ ॥ जिनि अनिक एक बहु रंग कीए है होसी एह। करि सेवा तिसु पारब्रहम गुर ते मति लेह ॥ ३ ॥ ऊचे ते ऊचा वडा सभ संगि बरनेह। दास दास को दासरा नानक करि लेह ॥ ४ ॥ १७ ॥ ४७ ॥

जिस परमात्मा ने मिट्टी से तुम्हारी यह सुन्दर देह बनायी है, अनेक प्रकार के दोष, पाप या मलिनताएँ इसके भीतर ढक रखे हैं और ऊपर से शरीर सुन्दर दिखाई देता है (उसकी रचना के सौन्दर्य में न भटको, उसी को खोजो) ॥ १ ॥ ऐसा गुणवान प्रभु मन से क्योंकर विस्मृत हो सकता है। प्रभु को छोड़कर अर्थात् रचयिता को छोड़कर जो उसकी रचना के आकर्षणों में फँसते हैं, वे मिट्टी में मिल जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐ जीवो ! श्वास-श्वास उस प्रभु का नाम जपो, किसी प्रकार का विलम्ब न करो, प्रपञ्चों को त्यागकर और मिथ्या-आकर्षणों को छोड़कर परमात्मा से लग्न लगाओ ॥ २ ॥ जिस अनेक-रूपी होते हुए भी एक रूप में परमात्मा ने बहुत से तमाशे बनाए हैं, उस परब्रह्म की सेवा गुरु के बताए पथ पर चलते हुए करो ॥ ३ ॥ वह परमात्मा ऊँचे से ऊँचा है, सबका साथी है, यही उसका विवरण है। इसलिए नानक आप उसके दासों का भी दास बनकर रहना चाहते हैं ॥ ४ ॥ १७ ॥ ४७ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ एक टेक गोविंद की तिआगी अन आस। सभ ऊपरि समरथ प्रभ पूरन गुण तास ॥ १ ॥ जन का नामु अधारु है प्रभ सरणी पाहि। परमेसर का आसरा संतन मन माहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपि रखै आपि देवसी आपे प्रतिपारै। दीन दइआल क्रिपानिधे सासि सासि

सम्हारै ॥ २ ॥ करणहारु जो करि रहिआ साई वडिआई । गुरि पूरै उपदेसिआ सुखु खसम रजाई ॥ ३ ॥ चित अंदेसा गणत तजि जनि हुकमु पछाता । नह बिनसै नह छोडि जाइ नानक रंगि राता ॥ ४ ॥ १८ ॥ ४८ ॥

हमें केवल परमात्मा का ही एक आश्रय है, अन्य सब आशाएँ हमने त्याग दी हैं। वह समर्थ प्रभु सबसे ऊपर है और गुणों का भण्डार है ॥ १ ॥ उसके सेवकजन उसकी शरण पाकर नाम का आधार लेते हैं। सन्तों के मन में केवल परमेश्वर का ही आश्रय होता है ॥१॥रहाउ॥ परमात्मा स्वयं रक्षक है, दाता है और प्रतिपालक है। वह दीनदयालु सब पर कृपा करता है और हर घड़ी जीवों की रक्षा करता है ॥ २ ॥ वह करने योग्य कर्तार जो करता है, वही प्रशंसनीय है। सतगुरु का उपदेश भी यही है कि उस परमात्मा की इच्छानुसार जीना ही सुख का आधार है ॥ ३ ॥ चिन्ता, सन्देह और शंका की वृत्तियों को छोड़कर जिस जीव ने परमात्मा के हुक्म को पहचान लिया है; वह ऐसे रंग में रँग जाता है कि, गुरु नानक कहते हैं, जो कभी नष्ट नहीं होता और न ही जीव का साथ छोड़ता है ॥ ४ ॥ १८ ॥ ४८ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ महा तपति ते भई सांति परसत पाप नाठे । अंध कूप महि गलत थे काढे दे हाथे ॥ १ ॥ ओइ हमारे साजना हम उन की रेन । जिन भेटत होवत सुखी जीअ दानु देन ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परा पूरबला लीखिआ मिलिआ अब आइ । बसत संगि हरि साध कै पूरन आसाइ ॥ २ ॥ भै बिनसे तिहु लोक के पाए सुख थान । दइआ करी समरथ गुरि बसिआ मनि नाम ॥ ३ ॥ नानक की तू टेक प्रभ तेरा आधार । करण कारण समरथ प्रभ हरि अगम अपार ॥ ४ ॥ १९ ॥ ४९ ॥

सतगुरु के सान्निध्य में पाप नष्ट हो जाते हैं और सन्तप्त जीवन में शान्ति मिलती है। वह सहयोग देकर अन्धे कुएँ में (संसार रूपी) सड़ने वाले जीवों को निकाल लेता है ॥ १ ॥ वह परमात्मा ही हमारा वास्तविक प्रियतम है और हम उसकी चरणधूलि हैं। उसको मिलने से सुख प्राप्त होता है और प्राणों का उत्थान होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (सत्गुरु की प्राप्ति से) अब कहीं पूर्व-लिखा सौभाग्य प्राप्त हुआ है। साधु-संगति के साथ-साथ परमात्मा का सान्निध्य मिलने से हमारी सब आशाएँ पूर्ण हो गयी हैं ॥ २ ॥ तीनों लोकों के भय दूर हो गये हैं और सुख का स्थान प्राप्त हुआ है। गुरु की कृपा से वह समर्थ प्रभु मन

में निवसित हो गया है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु ही अपने जीवों की एकमात्र शक्ति है और वही उनका सहारा है। वह अगम, अपार परमात्मा शक्तिशाली कर्तार है ॥ ४ ॥ १९ ॥ ४९ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ सोई मलीनु दीनु हीनु जिसु प्रभु बिसराना। करनैहारु न बूझई आपु गनै बिगाना ॥ १ ॥ दूखु तदे जदि वीसरै सुखु प्रभ चिति आए। संतन कै आनंदु एहु नित हरि गुण गाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऊचे ते नीचा करै नीच खिन महि थापै। कीमति कही न जाईऐ ठाकुर परतापै ॥ २ ॥ पेखत लीला रंग रूप चलनै दिनु आइआ। सुपने का सुपना भइआ संगि चलिआ कमाइआ ॥ ३ ॥ करण कारण समरथ प्रभ तेरी सरणाई। हरि दिनसु रैणि नानकु जपै सद सद बलि जाई ॥ ४ ॥ २० ॥ ५० ॥

वही जीव दीन-हीन और मलिन होता है, जो परमात्मा को विस्मृत कर देता है। वह अपने रचयिता प्रभु को नहीं पहचानता, बल्कि मूर्ख अपने को बड़ा मानता है ॥ १ ॥ परमात्मा के भूलने में ही दुःख है और हृदय में उसे बसा लेने में परमसुख है। सन्तजनों को सदैव हरि-गुण गाने में ही आनन्द मिलता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह सबल परमात्मा क्षण भर में ही किसी ऊँचे को नीचा गिरा सकता है और नीच व्यक्ति को उच्च स्थापित भी कर सकता है। परमात्मा के प्रताप का मोल नहीं डाला जा सकता ॥ २ ॥ संसार के रंग-रूप देखते-देखते यहाँ से कूच करने का समय आ गया। स्वप्न के समान वे रंग-रूप सपना ही हो गये अर्थात् लुप्त हो गये; साथ केवल उच्च आचरण तथा प्रभु का नाम ही जा सका ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं, इसीलिए, हे कर्तार! हम तेरी शरण में आये हैं, रात-दिन तेरा नाम जपते हैं और नित्य तुझ पर न्यौछावर हैं ॥ ४ ॥ २० ॥ ५० ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ जलु ढोवउ इह सीस करि कर पग पखलावउ। बारि जाउ लख बेरीआ दरसु पेखि जीवावउ ॥ १ ॥ करउ मनोरथ मनै माहि अपने प्रभ ते पावउ। देउ सूहनी साध कै बीजनु ढोलावउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंम्रित गुण संत बोलते सुणि मनहि पीलावउ। उआ रस महि सांति त्रिपति होइ बिखै जलनि बुझावउ ॥ २ ॥ जब भगति करहि संत मंडली तिन्ह मिलि हरि गावउ। करउ नमसकार

भगत जन धूरि मुखि लावउ ॥ ३ ॥ उठत बैठत जपउ नामु इहु करमु कमावउ । नानक की प्रभ बेनती हरि सरनि समावउ ॥ ४ ॥ २१ ॥ ५१ ॥

(नवधा भक्ति में सेवा का उच्च-स्थान है। यहाँ गुरुजी उसी का संकेत करते हैं।) अपने सत्गुरु की सेवा में मैं अपने सिर पर उठाकर पानी लाऊँगा और अपने हाथों उसके चरण धोऊँगा। लाखों बार मैं उस पर न्यौछावर हो जाऊँगा और उसका दर्शन देख-देखकर ही जिऊँगा ॥ १ ॥ जो भी मैं मन में अभिलाषा करूँगा, वह मुझे अपने प्रभू से प्राप्त हो जाएगी; जैसा कि मैं यह अभिलाषा करता हूँ कि अपने गुरु के द्वार पर झाड़ू दूँ और पंखा झुलाऊँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तों की वाणी अमृत के समान है, उसे सुनकर मन को तृप्ति मिलती है। उससे मन शान्त होता है और विषय-विकारों की अग्नि बुझ जाती है ॥ २ ॥ जब सन्तमण्डली में लोग हरि की भक्ति करते हैं, तो उनसे मिलकर मैं भी हरि का गुण गाऊँ। उन भक्तजनों को प्रणाम करूँ और उनकी चरणधूलि अपने मस्तक से लगाऊँ (अर्थात् सत्संगति में बैठकर प्रभु-नाम का जाप करूँ और साधुजनों का सत्कार कर सकूँ) ॥३॥ जीवन में उठते-बैठते प्रभु-नाम जपने का ही कर्म करूँ और हरि की शरण में समा जाऊँ, ऐसी गुरु नानक की विनती है ॥ ४ ॥ २१ ॥ ५१ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ इहु सागरु सोई तरै जो हरि गुण गाए । साध संगति कै संगि वसै वडभागी पाए ॥ १ ॥ सुणि सुणि जीवै दासु तुम्ह बाणी जन आखी । प्रगट भई सभ लोअ महि सेवक की राखी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अगनि सागर ते काढिआ प्रभि जलनि बुझाई । अंम्रित नामु जलु संचिआ गुर भए सहाई ॥ २ ॥ जनम मरण दुख काटिआ सुख का थानु पाइआ । काटी सिलक भ्रम मोह की अपने प्रभ भाइआ ॥ ३ ॥ मत कोई जाणहु अवरु कछु सभ प्रभ कै हाथि । सरब सूख नानक पाए संगि संतन साथि ॥ ४ ॥ २२ ॥ ५२ ॥

इस संसार-सागर से वही पार हो सकता है, जो परमात्मा का गुणगान करता है। वह सौभाग्यशाली है जो सन्तों की संगति में जीता है ॥ १ ॥ हे प्रभु! जो वाणी तेरे भक्तों ने उच्चारी है, उसे सुन-सुनकर मेरा जीवन-प्राण बना हुआ है। वह वाणी सब लोकों में प्रकट हो गयी है और उससे तुम्हारे सेवकों को प्रतिष्ठा मिली है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा ने जीवों को तृष्णा रूपी अग्नि के सागर से निकाल लिया है और उनकी जलन

बुझा दी है। गुरु की सहायता से अब वे नामामृत जल से सिंचित हो गये हैं ॥ २ ॥ परमात्मा ने कृपा करके जीवों का जन्म-मरण-दुःख काट दिया है और सुख की स्थिति प्रदान की है। उसने मोह और भ्रम की रस्सी को काटकर जीव को अपने साथ मिला लिया है ॥ ३ ॥ गुरु नानक पुकारकर कहते हैं कि और किसी की कोई सत्ता नहीं, सब कुछ परमात्मा के हाथ है और सन्तों की संगति में अनन्त सुख प्राप्त होते हैं ॥ ४ ॥ २२ ॥ ५२ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ बंधन काटे आपि प्रभि होआ किरपाल। दीन दइआल प्रभ पारब्रहम ता की नदरि निहाल ॥ १ ॥ गुरि पूरै किरपा करी काटिआ दुखु रोगु। मनु तनु सीतलु सुखी भइआ प्रभ धिआवन जोगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अउखधु हरि का नामु है जितु रोगु न विआपै। साध संगि मनि तनि हितै फिरि दूखु न जापै ॥ २ ॥ हरि हरि हरि हरि जापीऐ अंतरि लिव लाई। किलविख उतरहि सुधु होइ साधू सरणाई ॥ ३ ॥ सुनत जपत हरि नाम जसु ता की दूरि बलाई। महा मंत्रु नानकु कथै हरि के गुण गाई ॥ ४ ॥ २३ ॥ ५३ ॥

परमात्मा जब कृपा करता है तो सब बन्धन काट देता है। दीनदयालु, परब्रह्म प्रभु की कृपादृष्टि जनों को निहाल कर देती है ॥ १ ॥ सतगुरु ने कृपा करके हमारे सब दुःख दूर कर दिये हैं। अब मन, तन सब शीतल हो गया है और सुखपूर्वक परमात्मा की आराधना के योग्य बन गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि का नाम सबसे बड़ी औषधि है, जिसके सम्मुख कोई रोग नहीं ठहरता। सन्तों की संगति में रहते हुए जब यह औषधि तन-मन में संचरित होती है, तो किसी रोग का भान भी नहीं रह जाता ॥ २ ॥ (अतः) हरि-हरि नाम का जाप करो, मन में उसी का ध्यान लगाओ और सन्तों की शरण ग्रहण करो —इससे सब पाप धुल जाते हैं ॥ ३ ॥ जो जीव हरि-नाम का श्रवण करता है, हरि-नाम का जाप करता है, उसकी सब मुसीबतें दूर हो जाती हैं; तभी तो गुरु नानक हरि-गुणगान को महामन्त्र कहकर पुकारते हैं ॥ ४ ॥ २३ ॥ ५३ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ भै ते उपजै भगति प्रभ अंतरि होइ सांति। नामु जपत गोविंद का बिनसै भ्रम भ्रांति ॥ १ ॥ गुरु पूरा जिसु भेटिआ ता कै सुखि परवेसु। मन की मति तिआगीऐ सुणीऐ उपदेसु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिमरत सिमरत

सिमरीऐ सो पुरखु दातारु। मन ते कबहु न वीसरै सो पुरखु अपारु ॥ २ ॥ चरन कमल सिउ रंगु लगा अचरज गुरदेव। जा कउ किरपा करहु प्रभ ता कउ लावहु सेव ॥ ३ ॥ निधि निधान अंम्रितु पीआ मनि तनि आनंद। नानक कबहु न वीसरै प्रभ परमानंद ॥ ४ ॥ २४ ॥ ५४ ॥

(प्रभु के) भय से प्रभु की भक्ति पैदा होती है, जिससे जीव के अन्तर्मन को शान्ति मिलती है। गोविन्द का नाम जपने से जीव के सब भ्रम नष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥ जिस जीव को पूर्णगुरु मिल गया है, उसके हृदय में सुख ने प्रवेश कर लिया है। वह गुरु के उपदेशों को सुनकर मनमुखता का त्याग कर देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उस परमपुरुष का अनन्त स्मरण करना चाहिए। मन से कभी भी वह विस्मृत नहीं होना चाहिए ॥ २ ॥ गुरु के आश्चर्यजनक सहयोग से परमात्मा के चरण-कमलों में प्रेम अर्थात् लग्न लगती है। जिस पर परमात्मा की कृपा होती है, उसी को वह अपनी सेवा प्रदान करता है ॥ ३ ॥ समस्त निधियों के भण्डार नामामृत का पान करने से तन-मन आनन्दित हो उठता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमानन्द का द्योतक प्रभु कभी मन से विस्मृत नहीं होना चाहिए ॥४ ॥ २४ ॥ ५४ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ त्रिसन बुझी ममता गई नाठे भै भरमा। थिति पाई आनदु भइआ गुरि कीने धरमा ॥ १ ॥ गुरु पूरा आराधिआ बिनसी मेरी पीर। तनु मनु सभु सीतलु भइआ पाइआ सुखु बीर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सोवत हरि जपि जागिआ पेखिआ बिसमादु। पी अंम्रितु त्रिपतासिआ ताका अचरज सुआदु ॥ २ ॥ आपि मुकतु संगी तरे कुल कुटंब उधारे। सफल सेवा गुर देव की निरमल दरबारे ॥ ३ ॥ नीचु अनाथु अजानु मै निरगुनु गुणहीनु। नानक कउ किरपा भई दासु अपना कीनु ॥ ४ ॥ २५ ॥ ५५ ॥

जीव के प्रति जब गुरु अपना धर्म निभाता है अर्थात् कृपा करता है तो उसकी तृष्णा शान्त हो जाती है, ममता और भ्रम दूर हो जाते हैं; वह परमात्मा के नाम में स्थिर हो जाता है और चतुर्दिक् आनन्द को पाता है ॥ १ ॥ पूर्णगुरु की आराधना करने से मेरी सब पीड़ाएँ शमित हो गयी हैं। हे भाई ! मेरा तन-मन सब शीतल हो गया है और अब मुझे सुख ही सुख है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अज्ञान की रात्रि में सोता

हुआ जीव गुरु-कृपा से जब हरि-नाम जपकर ज्ञान की जागृति में प्रभु का साक्षात्कार करता है, तो विस्मय में खो जाता है। अमृत-रस का पान कर उसके आश्चर्यजनक रस की तृप्ति पाता है ॥ २ ॥ वह स्वयं मुक्त होता है, अपने साथियों को मुक्त करता है और समूचे कुटुम्ब का उद्धार कर देता है। गुरु की सेवा करने से उसका जीवन सफल होता है और परमात्मा के दरबार में उसे प्रतिष्ठा मिलती है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि मैं तो नीच, अनाथ, गँवार और गुणहीन था, प्रभु ने कृपा करके मुझे अपना बना लिया है ॥ ४ ॥ २५ ॥ ५५ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ हरि भगता का आसरा अन नाही ठाउ। ताणु दीबाणु परवार धनु प्रभ तेरा नाउ ॥ १ ॥ करि किरपा प्रभि आपणी अपने दास रखि लीए। निंदक निंदा करि पचे जमकालि ग्रसीए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संता एकु धिआवना दूसर को नाहि। एकसु आगै बेनती रविआ स्रब थाइ ॥ २ ॥ कथा पुरातन इउ सुणी भगतन की बानी। सगल दुसट खंड खंड कीए जन लीए मानी ॥ ३ ॥ सति बचन नानकु कहै परगट सभ माहि। प्रभ के सेवक सरणि प्रभ तिन कउ भउ नाहि ॥ ४ ॥ २६ ॥ ५६ ॥

भक्तजनों का एकमात्र आश्रय हरि है, दूसरा कोई स्थान उनके लिए नहीं। प्रभु का नाम ही उनके लिए पारिवारिक, नैयायिक और धन-सम्पत्ति सब कुछ है ॥ १ ॥ प्रभु ने कृपा करके अपने सेवकों की रक्षा की है; निन्दकजन निन्दा कर-करके नष्ट हो गये और मृत्यु द्वारा ग्रसित हुए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तजन केवल उसी का ध्यान करते हैं, दूसरे किसी का नहीं। वह सर्वव्यापक है और उसी एक प्रभु के आगे उनकी विनती है ॥ २ ॥ भक्तों के मुख से एक पुरानी कथा इस प्रकार सुनते आये हैं कि परमात्मा दुष्कर्मियों को टुकड़े-टुकड़े करके दण्डित करता है तथा सेवकों को सत्कार प्रदान करता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक सबके सम्मुख प्रकट सत्य-वचन का उच्चारण करते हैं कि प्रभु की शरण लेने वाले सेवकों को किसी का भय नहीं रह जाता ॥ ४ ॥ २६ ॥ ५६ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ बंधन काटै सो प्रभू जाकै कल हाथ। अवर करम नही छूटीऐ राखहु हरि नाथ ॥ १ ॥ तउ सरणागति माधवे पूरन दइआल। छूटि जाइ संसार ते राखै गोपाल ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आसा भरम बिकार मोह इन महि लोभाना। झूठु समग्री मनि वसी पारब्रहमु न जाना ॥ २ ॥

परम जोति पूरन पुरख सभि जीअ तुम्हारे। जिउ तू राखहि तिउ रहा प्रभ अगम अपारे ॥ ३ ॥ करण कारण समरथ प्रभ देहि अपना नाउ। नानक तरीऐ साध संगि हरि हरि गुण गाउ ॥ ४ ॥ २७ ॥ ५७ ॥

प्रभु समर्थ है, माया के सब बन्धन काटता है। (यदि अपने को प्रभु के सामर्थ्य पर छोड़ने के अतिरिक्त) अन्य कर्मों में लगाएँगे तो छुटकारा नहीं हो सकेगा। इसलिए, हे स्वामी! तुम्हीं हमारी रक्षा करो ॥ १ ॥ हे हरि! हम तुम्हारे शरणागत हैं, तुम दयालु हो, यदि हमें सहारा दोगे तो संसार से हमें मुक्ति मिल जाएगी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनुष्य आशा, भ्रम, मोह और विकारों में लुब्ध है; मिथ्या-मायावी वस्तुओं में मन रमा हुआ है, परमात्मा को पहचानने का प्रयास नहीं करता ॥ २ ॥ हे परमज्योति, पूर्णपुरुष! संसार के सब जीव तुम्हारे हैं। तुम अगम, अपार स्वामी हो, जैसे उन्हें रखते हो, वैसे वे रहते हैं ॥ ३ ॥ हे समर्थ कर्तार! हमें अपना नाम-दान दो। गुरु नानक कहते हैं कि सन्तों की संगति में हरिगुण-गान करने से जीवों का उद्धार हो सकता है ॥ ४ ॥ २७ ॥ ५७ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ कवनु कवनु नही पतरिआ तुम्हरी परतीति। महा मोहनी मोहिआ नरक की रीति ॥ १ ॥ मन खुटहर तेरा नही बिसासु तू महा उदमादा। खर का पैखरु तउ छुटै जउ ऊपरि लादा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जप तप संजम तुम्ह खंडे जम के दुख डांड। सिमरहि नाही जोनि दुख निरलजे भांड ॥ २ ॥ हरि संगि सहाई महा मीतु तिस सिउ तेरा भेदु। बीधा पंच बटवारई उपजिओ महा खेदु ॥ ३ ॥ नानक तिन संतन सरणागती जिन मनु वसि कीना। तनु धनु सरबसु आपणा प्रभि जन कउ दीन्हा ॥ ४ ॥ २८ ॥ ५८ ॥

हे मन! तुम पर विश्वास कर किस-किस का पतन नहीं हुआ? महामोहिनी माया ने तुम्हें मोहित कर लिया है, जो कि नरक का रास्ता है ॥ १ ॥ हे मन! तुम दुष्ट हो, महा उत्पाती हो, इसलिए तुम्हारा कोई विश्वास नहीं है। गधे के पाँव में बँधी रस्सी तभी खोली जाती है, जब उस पर कुछ लाद दिया जाता है अर्थात् मन ख़रमस्ती करता है; इसे नाम, जप आदि से संयमित रखो, तभी क़ाबू रहता है या यह तभी क़ाबू आता है, जब इस पर दुःख-संताप का बोझ लद जाता है (भाव यह कि मन गधे के समान है, ख़रमस्तियाँ करते हुए चारों ओर दुलत्तियाँ झाड़ता है, इसके पाँवों में हरिनाम-जाप की रस्सी बाँधे रखो या फिर दुःखों के

बोझ-तले यह अपने-आप हरि-नाम की ओर प्रवृत्त होता है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन ने अपनी दुष्ट खरमस्तियों के कारण जप-तप आदि पूर्व-कर्मों का प्रभाव दूर कर दिया है तथा अपने आप को यम के दण्ड की चोटों के योग्य बना लिया है। ऐ कुटिल मनुष्य! इस पर भी तुम निर्लज्ज भाव से जन्म-मरण का दु:ख सहन करते हो, किन्तु परमात्मा का सिमरन नहीं करते ॥ २ ॥ परमात्मा सच्चा संगी, सहायक और मित्र है, उसी से तुम दूर रहते हो। काम-क्रोध आदि पाँच चोरों द्वारा तुम निरन्तर लुट रहे हो, यह खेद का विषय है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि जिन सन्तों ने अपना मन वश में कर लिया है और तन-धन सर्वस्व प्रभु को अर्पित कर दिया है, उनकी शरण में ही रहने से सुख की सम्भावना होती है ॥ ४ ॥ २८ ॥ ५८ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ उदमु करत आनदु भइआ सिमरत सुख सारु। जपि जपि नामु गोबिंद का पूरन बीचारु ॥ १ ॥ चरन कमल गुर के जपत हरि जपि हउ जीवा। पारब्रहमु आराधते मुखि अंम्रितु पीवा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीअ जंत सभि सुखि बसे सभ कै मनि लोच। परउपकारु नित चितवते नाही कछु पोच ॥ २ ॥ धंनु सु थानु बसंत धंनु जह जपीऐ नामु। कथा कीरतनु हरि अति घना सुख सहज बिस्रामु ॥ ३ ॥ मन ते कदे न वीसरै अनाथ को नाथ। नानक प्रभ सरणागती जाकै सभु किछु हाथ ॥ ४ ॥ २९ ॥ ५९ ॥

परमात्मा की प्राप्ति के लिए उद्यम करने से आनन्द की प्राप्ति होती है, सुख-लाभ होता है। इसलिए, ऐ जीव! तुम सविवेक-भाव से गोविन्द का नाम जपो ॥ १ ॥ मैं हरि-नाम की आराधना करते और गुरु के चरण-कमलों का ध्यान करते हुए जिऊँ। परब्रह्म की आराधना करते हुए नाम रूपी अमृत का पान करूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के बनाए सभी जीव मन में एक ही इच्छा धारण किये हुए हैं (कि उन्हें परमात्मा मिल सके)। वे निरन्तर परोपकार की बात सोचते हैं और उसमें किसी प्रकार की कमी रहीं छोड़ना चाहते ॥ २ ॥ वह स्थान धन्य है और उस स्थान पर बसनेवाले भी धन्य हैं, जहाँ नित्य प्रभु का नाम जपा जाता है; जहाँ नित्य कथा-कीर्तन होता है और सहज-सुख की प्राप्ति होती है ॥ ३ ॥ वह अनाथों का नाथ परमात्मा कभी मन से विस्मृत नहीं होना चाहिए; इसीलिए गुरु नानक उस परमात्मा की शरण लेना चाहते हैं, सब कुछ जिसके हाथ है ॥ ४ ॥ २९ ॥ ५९ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ जिनि तू बंधि करि छोडिआ

फुनि सुख महि पाइआ। सदा सिमरि चरणारबिंद सीतल होताइआ ॥ १ ॥ जीवतिआ अथवा मुइआ किछु कामि न आवै। जिनि एहु रचनु रचाइआ कोऊ तिस सिउ रंगु लावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रे प्राणी उसन सीत करता करै घाम ते काढै। कीरी ते हसती करै टूटा ले गाढै ॥२॥ अंडज जेरज सेतज उतभुजा प्रभ की इह किरति। किरत कमावन सरब फल रवीऐ हरि निरति ॥ ३ ॥ हम ते कछू न होवना सरणि प्रभ साध। मोह मगन कूप अंध ते नानक गुर काढ ॥ ४ ॥ ३० ॥ ६० ॥

जिस परमात्मा ने गर्भ के बन्धनों से छुड़वाकर संसार के अनन्त सुख प्रदान किये, उसके चरण-कमलों का सिमरन करने से संसार के सब सन्ताप शीतल हो जाते हैं ॥ १ ॥ जीते-जी अथवा मरणोपरान्त माया किसी काम नहीं आती। बस समझदारी यही है कि जिसने यह रचना बनायी है, सदा उसी के संग लग्न लगाये रहो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्राणी ! वह परमात्मा ही उष्ण-शीत बनाता है और वही सन्ताप से मुक्त भी करता है। चींटी से हाथी बनाता है और नष्टप्राय को पुनः सुनिर्मित करता है ॥ २ ॥ अण्डज, जेरज, स्वेदज, उद्भिज आदि चारों प्रकार के प्राणी उसी के बनाये हुए हैं। सब अपने-अपने कर्मानुसार फल भोगते हैं; किन्तु उसी का कर्म सफल है, जो निश्चित भाव से हरि के नाम में रत रहता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि हम जीव तब तक कुछ नहीं कर सकते, जब तक सन्तों की शरण न मिले; कोई सच्चा गुरु ही मोह-मग्न जीव को अज्ञान के अन्धे कुएँ से निकाल सकता है ॥ ४ ॥ ३० ॥ ६० ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ खोजत खोजत मै फिरा खोजउ बन थान। अछल अछेद अभेद प्रभ ऐसे भगवान ॥ १ ॥ कब देखउ प्रभु आपना आतम कै रंगि। जागन ते सुपना भला बसीऐ प्रभ संगि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बरन आस्रम सासत्र सुनउ दरसन की पिआस। रूपु न रेख न पंच तत ठाकुर अबिनास ॥२॥ ओहु सरूपु संतन कहहि विरले जोगीसुर। करि किरपा जाकउ मिले धनि धनि ते ईसुर ॥ ३ ॥ सो अंतरि सो बाहरे बिनसे तह भरमा। नानक तिसु प्रभु भेटिआ जाके पूरन करमा ॥ ४ ॥ ३१ ॥ ६१ ॥

मैं वन, नगर आदि खोज-खोजकर उस निष्कपट, अनश्वर और अभेद्य परमात्मा को खोजता रहा हूँ ॥ १ ॥ न जाने उस प्रभु को

प्यारपूर्वक मैं कब देख पाऊँगा ! ऐसी जागृति से तो स्वप्न अच्छा, जिसमें प्रभु की संगति में विचरण का सौभाग्य तो था ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वर्ण, आश्रम बतानेवाले शास्त्रों को सुनता हूँ तो हरि-दर्शन की प्यास बनी रहती है। उस अविनाशी स्वामी की कोई रूपरेखा नहीं, न कोई आकार है (उसके दर्शन कैसे हों ?) ॥ २ ॥ ऐसे स्वरूप वाले योगीश्वर अर्थात् हरि के रूप का वर्णन सन्तजन ही कर सकते हैं, जो गुण और आकार से निराली पहुँच रखते हैं। वह ईश्वर जिस पर कृपा करके उसे मिलता है, वह धन्य है ॥ ३ ॥ वह अन्तर-बाहर सब जगह रम रहा है, भ्रमों का विनाशक है; केवल वही व्यक्ति, गुरु नानक कहते हैं, उससे साक्षात्कार करता है जिसके कर्म उत्तम होते हैं, जो भाग्यशाली होता है ॥ ४ ॥ ३१ ॥ ६१ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ जीअ जंत सुप्रसंन भए देखि प्रभ परताप। करजु उतारिआ सतिगुरू करि आहरु आप ॥ १ ॥ खात खरचत निबहत रहै गुर सबदु अखूट। पूरन भई समगरी कबहू नही तूट ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साध संगि आराधना हरि निधि आपार। धरम अरथ अरु काम मोख देते नही बार ॥२॥ भगत अराधहि एक रंगि गोबिद गुपाल। राम नाम धनु संचिआ जाका नही सुमार ॥ ३ ॥ सरनि परे प्रभ तेरीआ प्रभ की वडिआई। नानक अंतु न पाईऐ बेअंत गुसाई ॥४॥३२॥६२॥

प्रभु का प्रताप देखकर सब जीव-जन्तु प्रसन्न होते हैं। सतगुरु के द्वारा नाम-प्रचार का ऋण स्वयं प्रभु के प्रबन्ध से ही उतर सका है (भाव यह कि गुरु पर यह क़र्ज़ था कि वह जीवों को नाम का रहस्य बताकर मुक्ति की ओर प्रवृत्त करे। यह क़र्ज़ उतारने में स्वयं परमात्मा ही निमित्त बनता है) ॥ १ ॥ गुरु का बताया हुआ शब्द अनन्त है, जो खाते-खर्चते अर्थात् प्रयोग करते कभी समाप्त नहीं होता। संसारेतर वह पूर्ण सामग्री जीव को मिल जाती है, जिसमें कभी घाटा नहीं रहता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तों की संगति में हरि की आराधना से ही चतुर्लक्ष्य की प्राप्ति होती है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष आदि मिलते देर नहीं लगती ॥ २ ॥ भक्तजन निरन्तर प्रेम से परमात्मा की आराधना करते हैं और राम-नाम का इतना धन इकट्ठा कर लेते हैं कि उसकी कोई सीमा नहीं होती ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि हे स्वामी ! हम तेरी ही शरण हैं, तेरा ही गुणगान करते हैं; फिर भी, हे अनन्त ! तेरा अन्त कोई नहीं पा सकता ॥ ४ ॥ ३२ ॥ ६२ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ सिमरि सिमरि पूरन प्रभू कारज भए रासि। करतारपुरि करता वसै संतन कै पासि ॥ १ ॥

रहाउ ॥ बिघनु न कोऊ लागता गुर पहि अरदासि । रखवाला गोबिंद राइ भगतन की रासि ॥ १ ॥ तोटि न आवै कदे मूलि पूरन भंडार । चरन कमल मनि तनि बसे प्रभ अगम अपार ॥ २ ॥ बसत कमावत सभि सुखी किछु ऊन न दीसै । संत प्रसादि भेटे प्रभू पूरन जगदीसै ॥ ३ ॥ जैजैकार सभै करहि सचु थानु सुहाइआ । जपि नानक नामु निधान सुख पूरा गुरु पाइआ ॥ ४ ॥ ३३ ॥ ६३ ॥

परम वाहिगुरु का सिमरन करो, उससे सब कार्य सम्पन्न होते हैं। कर्तार सत्संगति में निवास करता है, उसकी उपलब्धि वहीं सम्भव है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के पास विनती करने से सब कार्य निर्विघ्न होते हैं। स्वयं परमात्मा, जो कि भक्तों का सहारा होता है, उनकी रक्षा करता है ॥ १ ॥ उसके भण्डार सदैव भरे रहते हैं, उनमें कभी कोई कमी नहीं होती। अनन्त और अगम परमात्मा के चरण-कमलों में अपना तन-मन समर्पित कर दो ॥ २ ॥ (उसके चरणों की शरण में रहते हुए) परमसुख लाभ होता है और जीवन में कोई कमी नहीं रह जाती। सतगुरु की कृपा से पूर्णपरमात्मा से भेंट होती है ॥ ३ ॥ प्रभु सत्य की नगरी में सुशोभित है और चतुर्दिक् उसका जय-जयकार हो रहा है। गुरु नानक कहते हैं कि उसका नाम जपने और गुरु की कृपा से परमसुख की प्राप्ति होती है ॥ ४ ॥ ३३ ॥ ६३ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ हरि हरि हरि आराधीऐ होईऐ आरोग । रामचंद की लसटिका जिनि मारिआ रोगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु पूरा हरि जापीऐ नित कीचै भोगु । साध संगति कै वारणै मिलिआ संजोगु ॥ १ ॥ जिसु सिमरत सुखु पाईऐ बिनसै बिओगु । नानक प्रभ सरणागती करण कारण जोगु ॥ २ ॥ ३४ ॥ ६४ ॥

बार-बार हरि की आराधना करके हमें आरोग्य-प्राप्ति होती है। हरि-स्मरण ही श्रीराम का वह राज्य-संकेत (लकड़ी, जो प्रजा को नियन्त्रण में रखने का संकेत होती है) है, जो प्रजा के समस्त रोगों का निदान करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमगुरु की दया से हरि-नाम जपने से नित्य आनन्द प्राप्त होता है। साधु-सन्तों की संगति में प्रभु से मिलाप का अवसर मिलता है, अतः ऐसे सन्तों पर हम बलिहार जाते हैं ॥ १ ॥ जिसका सिमरन करने से सुख मिलता और वियोग नष्ट होता है, गुरु नानक उसी समर्थ की शरण चाहते हैं ॥ २ ॥ ३४ ॥ ६४ ॥

राग़ु बिलावलु महला ५ दुपदे घरु ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ अवरि उपाव सभि तिआगिआ दारू नामु लइआ । ताप पाप सभि मिटे रोग सीतल मनु भइआ ॥ १ ॥ गुरु पूरा आराधिआ सगला दुखु गइआ । राखनहारै राखिआ अपनी करि मइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बाह पकड़ि प्रभि काढिआ कीना अपनइआ । सिमरि सिमरि मन तन सुखी नानक निरभइआ ॥ २ ॥ १ ॥ ६५ ॥

(सांसारिक रोगों के निदान के लिए) अन्य सभी उपाय छोड़कर केवल नाम की औषधि ग्रहण करो । इससे सब प्रकार के पाप, कष्ट आदि मिटते हैं और मन को परमशान्ति प्राप्त होती है ॥ १ ॥ पूर्णगुरु की आराधना करने से सब दुःख निरस्त हो जाते हैं और सर्वरक्षक प्रभु दया करके जीवों की रक्षा कर लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा ने बाँह पकड़कर जीव को वासना के गर्त से निकालकर अपना लिया है; इसलिए गुरु नानक हरि-स्मरण द्वारा न केवल सुख को प्राप्त कर सके हैं, बल्कि पूर्णतः निर्भय हो गये हैं ॥ २ ॥ १ ॥ ६५ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ करु धरि मसतकि थापिआ नामु दीनो दानि । सफल सेवा पारब्रहम की ता की नही हानि ॥१॥ आपे ही प्रभु राखता भगतन की आनि । जो जो चितवहि साध जन सो लेता मानि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सरणि परे चरणारबिंद जन प्रभ के प्रान । सहजि सुभाइ नानक मिले जोती जोति समान ॥ २ ॥ २ ॥ ६६ ॥

स्वयं परमात्मा ने मेरे माथे पर हाथ धरकर मुझे इस पद पर स्थापित किया है और नाम-दान प्रदान किया है । परब्रह्म की सेवा में रहनेवाला प्रत्येक जीव सफलता प्राप्त करता है और कभी घाटे में नहीं रहता ॥ १ ॥ भक्तों की आन का रक्षक स्वयं प्रभु है; जो-जो जीव सन्तों की संगति में आता है, वही सम्मानित हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शरण में आनेवाले भक्तों को परमात्मा के चरण-कमल प्राणों से भी प्रिय होते हैं । इसी प्रेम और भक्ति के परिणाम-स्वरूप सहज में ही भक्तजन प्रभु में लीन हो जाते हैं ॥ २ ॥ २ ॥ ६६ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ चरण कमल का आसरा दीनो प्रभि आपि । प्रभ सरणागति जन परे ता का सद परतापु ॥१॥

राखनहार अपार प्रभ ता की निरमल सेव। राम राज रामदासपुरि कीन्हे गुरदेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सदा सदा हरि धिआईऐ किछु बिघनु न लागै। नानक नामु सलाहीऐ भइ दुसमन भागै ॥ २ ॥ ३ ॥ ६७ ॥

मुझे परमात्मा ने स्वयं अपने चरणों में आश्रय दिया है। सन्तों के प्रताप से ही प्रभु की शरण मिलती है ॥ १ ॥ परमात्मा स्वयं रक्षक है, उसकी सेवा में निरत जीव पावन हो जाता है। गुरु ने कृपा करके इसी दृष्टि से रामदासपुर (अमृतसर) को राम-राज्य के समान प्रतिष्ठा प्रदान की है अर्थात् अमृतसर को सिक्खों के लिए राम-राज्य के समान स्थान घोषित किया है। जहाँ आकर वे सर्वरक्षक परमात्मा की निर्मल सेवा कर सकें ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सदा हरि-सिमरन करते रहने से विघ्नों का नाश होता है। गुरु नानक कहते हैं कि नाम के स्तुतिगान के भय से शत्रुओं का क्षय होता है ॥ २ ॥ ३ ॥ ६७ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ मनि तनि प्रभु आराधीऐ मिलि साध समागै। उचरत गुन गोपाल जसु दूर ते जमु भागै ॥ १ ॥ राम नामु जो जनु जपै अनदिनु सद जागै। तंतु मंतु नह जोहई तितु चाखु न लागै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काम क्रोध मद मान मोह बिनसे अनरागै। आनंद मगन रसि राम रंगि नानक सरनागै ॥ २ ॥ ४ ॥ ६८ ॥

सन्त-समागम में रहते हुए तन-मन से एकाग्र हो प्रभु की आराधना करो। प्रभु का गुणगान करने से यम दूर से ही भाग खड़ा होता है ॥ १ ॥ जो जीव दिन-रात राम-नाम जपते हैं, वे चिरजागृति को प्राप्त होते हैं; उन पर मन्त्र-तन्त्र का कोई प्रभाव नहीं होता और न ही उन्हें किसी की बदनज़र कष्ट पहुँचाती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि-नाम के जाप से वे मोह-माया की ओर विरक्त हो जाते हैं और उनमें काम-क्रोध आदि क्षमित हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि शरण में आने पर वे जीव राम-रस में पगकर परमानन्द को प्राप्त होते हैं ॥ २ ॥ ४ ॥ ६८ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ जीअ जुगति वसि प्रभू कै जो कहै सु करना। भए प्रसंन गोपालराइ भउ किछु नही करना ॥ १ ॥ दूखु न लागै कदे तुधु पारब्रहमु चितारे। जम कंकरु नेड़ि न आवई गुरसिख पिआरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करण

कारण समरथु है तिसु बिनु नही होरु । नानक प्रभ सरणागती साचा मनि जोरु ॥ २ ॥ ५ ॥ ६९ ॥

जीवों का एकमात्र आधार परमात्मा ही है, जैसा वह चाहे वैसा ही करना समीचीन है। यदि परमात्मा प्रसन्न हो तो जीव को कोई भय ही नहीं रह जाता ॥ १ ॥ परब्रह्म को याद करने से जीव को कोई दुःख नहीं रह जाता। गुरु के प्रिय शिष्य के निकट यमदूत भी नहीं आते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा समर्थकर्ता है, उसके बिना और कोई शक्ति मौजूद नहीं है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु की शरण में मन को सच्चा बल प्राप्त होता है ॥ २ ॥ ५ ॥ ६९ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ सिमरि सिमरि प्रभु आपना नाठा दुख ठाउ । बिस्राम पाए मिलि साध संगि ताते बहुड़ि न धाउ ॥ १ ॥ बलिहारी गुर आपने चरनन्ह बलि जाउ । अनद सूख मंगल बने पेखत गुन गाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कथा कीरतनु राग नाद धुनि इहु बनिओ सुआउ । नानक प्रभ सुप्रसंन भए बांछत फल पाउ ॥ २ ॥ ६ ॥ ७० ॥

अपने प्रभु की बार-बार आराधना करने से जीव में दुःखों का वास चुक गया। सन्तों के सम्पर्क में आने से स्थिर ठिकाना मिल गया, जहाँ से आगे भटकना शेष नहीं रह जाता ॥ १ ॥ मैं अपने गुरु पर बलिहार हूँ, उसके चरणों पर बलि जाता हूँ। उसके गुण गाने और उसके दर्शन करने मात्र से ही परमसुख, आनन्द और कल्याण की प्राप्ति होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अब तो मेरा मनोरथ ही कथा-कीर्तन करना और प्रभु-नाम जपना रह गया है। गुरु नानक कहते हैं कि इससे जब परमात्मा प्रसन्न होते हैं, तो मनोवांछित फल प्राप्त होता है ॥ २ ॥ ६ ॥ ७० ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ दास तेरे की बेनती रिद करि परगासु । तुम्हरी क्रिपा ते पारब्रहम दोखन को नासु ॥ १ ॥ चरन कमल का आसरा प्रभ पुरख गुणतासु । कीरतन नामु सिमरत रहउ जब लगु घटि सासु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मात पिता बंधप तूहै तू सरब निवासु । नानक प्रभ सरणागती जा को निरमल जासु ॥ २ ॥ ७ ॥ ७१ ॥

हे प्रभु ! तुम्हारे सेवक की यह प्रार्थना है कि उसके हृदय में आलोक पैदा कर दो। हे परब्रह्म ! तुम्हारी कृपा से ही मेरे सब दोष दूर हो सकते हैं ॥ १ ॥ हे गुणों के भण्डार प्रभु ! मुझे तुम्हारे चरण-कमल का

ही सहारा है। जब तक मेरे शरीर में प्राण विद्यमान हैं, मैं तुम्हारा ही सिमरन-कीर्तन करता रहूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम ही मेरे माता-पिता, बन्धु हो, सृष्टि में तुम्हारा ही सारा प्रसार है। गुरु नानक कहते हैं कि निर्मल गुणों और अमर यश के भागी परमात्मा की शरण ग्रहण करो ॥ २ ॥ ७ ॥ ७१ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ सरब सिधि हरि गाईऐ सभि भला मनावहि । साधु साधु मुख ते कहहि सुणि दासु मिलावहि ॥ १ ॥ सूख सहज कलिआण रस पूरै गुरि कीन्ह । जीअ सगल दइआल भए हरि हरि नामु चीन्ह ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूरि रहिओ सरबत्र महि प्रभ गुणी गहीर । नानक भगत अनंद मै पेखि प्रभ की धीर ॥ २ ॥ ८ ॥ ७२ ॥

सर्वसिद्धियों के स्वामी हरि का गुणगान करने से कल्याण होता है। और मुख से नाम की आराधना करने पर दास को परमात्मा से मिलाप होता है ॥ १ ॥ पूरे गुरु की कृपा से सहज सुख और कल्याण होता है और हरि के नाम को पहचान लेने से सृष्टि के सब जीव दयालु हो उठते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सर्वगुणों का कोष परमात्मा सबमें व्याप्त है। गुरु नानक का विश्वास है कि शरण लेनेवाले भक्त उसके आनन्दमय दर्शन में लीन हो जाते हैं ॥ २ ॥ ८ ॥ ७२ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ अरदासि सुणी दातारि प्रभि होए किरपाल । राखि लीआ अपना सेवको मुखि निंदक छारु ॥ १ ॥ तुझहि न जोहै को मीत जन तूं गुर का दास ॥ पारब्रहमि तू राखिआ दे अपने हाथ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीअन का दाता एकु है बीआ नही होरु । नानक की बेनंतीआ मै तेरा जोरु ॥ २ ॥ ९ ॥ ७३ ॥

परमात्मा जिसकी प्रार्थना सुन लेता है, उस पर कृपालु हो जाता है। वह अपने सेवकों की रक्षा करता है; निन्दकों के मुँह धूल पड़ती है ॥ १ ॥ प्रभु के सेवक को कोई बुरी नज़र से नहीं देख सकता, उस पर सदैव गुरु की कृपा होती है। परब्रह्म हाथ देकर उसकी रक्षा करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीवों का प्रतिपालक एक परमात्मा ही है, दूसरा कोई नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि जीव में प्रभु का बल ही मुख्य शक्ति होती है ॥ २ ॥ ९ ॥ ७३ ॥

॥ बिलावलु महला ५॥ मीत हमारे साजना राखे गोविंद । निंदक मिरतक होइ गए तुम्ह होहु निचिंद ॥ १ ॥ रहाउ ॥

सगल मनोरथ प्रभि कीए भेटे गुरदेव। जैजैकारु जगत महि सफल जा की सेव ॥ १ ॥ ऊच अपार अगनत हरि सभि जीअ जिसु हाथि। नानक प्रभ सरणागती जत कत मेरै साथि ॥२॥१०॥७४॥

परमात्मा (हमारे) भक्तों के मित्र-दोस्तों की भी रक्षा कर लेता है। निन्दा करनेवाले मारे जाते हैं और समर्पित होनेवाले निश्चिन्त हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु-कृपा से सतगुरु का मिलाप हो जाने पर सकल मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं। जीव की सेवा सफल होती है और संसार में उसका जय-जयकार होता है ॥ १ ॥ परमात्मा परमोच्च है, अगम्य और अपार है, सब जीव उसी के आश्रय अस्तित्व पाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा की शरण लेने से वह सदा अङ्ग-सङ्ग रहता है ॥ २ ॥ १० ॥ ७४ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ गुरु पूरा आराधिआ होए किरपाल। मारगु संति बताइआ तूटे जम जाल ॥ १ ॥ दूख भूख संसा मिटिआ गावत प्रभ नाम। सहज सूख आनंद रस पूरन सभि काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जलनि बुझी सीतल भए राखे प्रभि आप। नानक प्रभ सरणागती जा का वड परताप ॥२॥११॥७५॥

पूर्णगुरु की आराधना करने से, जब वह कृपा करता है तो जीव को सत्‌खण्ड का मार्ग बताता है और यम का जाल भंग कर देता है ॥ १ ॥ प्रभु का नाम जपते हुए सब प्रकार के दुःख, भूख और संशय दूर हो जाते हैं। सहज सुख और आनन्द प्राप्त होता है तथा सब कार्य पूर्ण होते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु स्वयं रक्षा करता है, मन की दुबिधा नष्ट हो जाती है और आत्मा शीतलता अनुभव करता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा की शरण लेने का बड़ा प्रताप है ॥ २ ॥ ११ ॥ ७५ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ धरति सुहावी सफल थानु पूरन भए काम। भउ नाठा भ्रमु मिटि गइआ रविआ नित राम ॥१॥ साध जना कै संगि बसत सुख सहज बिस्राम। साई घड़ी सुलखणी सिमरत हरि नाम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रगट भए संसार महि फिरते पहनाम। नानक तिसु सरणागती घट घट सभ जान ॥ २ ॥ १२ ॥ ७६ ॥

जिस धरती पर परमात्मा का नाम लिया जाता है, वह सुशोभित होती है; वह जगह सफल है और नाम जपनेवाले के सब कार्य पूर्ण होते

हैं। निरन्तर राम-नाम में रत रहने के कारण जीव का भय दूर होता और भ्रम मिट जाता है ॥ १ ॥ सन्तों की संगति में रहने के कारण सहज एवं पूर्णसुख की प्राप्ति होती है। वही क्षण महत्त्वपूर्ण है, जब मनुष्य के मुँह से हरि-नाम उच्चारण किया जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संसार में अनजाने नगण्य व्यक्ति भी अकस्मात् महत्त्व अर्जित कर लेते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि उस अन्तर्यामी की शरण लेने से सब कुछ प्राप्त हो जाता है ॥ २ ॥ १२ ॥ ७६ ॥

॥ बिलावलु महला ५॥ रोगु मिटाइआ आपि प्रभि उपजिआ सुखु सांति। वड परतापु अचरज रूपु हरि कीन्ही दाति ॥ १ ॥ गुरि गोविंदि क्रिपा करी राखिआ मेरा भाई। हम तिस की सरणागती जो सदा सहाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिरथी कदे न होवई जन की अरदासि। नानक जोरु गोविंद का पूरन गुणतासि ॥ २ ॥ १३ ॥ ७७ ॥

परमात्मा ने अपने विरद के हित महान आश्चर्य प्रकट किया है—दुनिया के सब रोगों, भोगों को मिटाकर चतुर्दिक् सुख-शान्ति स्थापित कर दी है ॥ १ ॥ परमात्मा ने कृपा करके मेरे प्यारे की भी रक्षा की है; मैं उसी महान की शरण चाहता हूँ जो सदैव सबका सहायक है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सेवक की प्रार्थना कभी व्यर्थ नहीं जाती। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा के बल पर आश्रित जीव सदैव गुणवान होता है ॥ २ ॥ १३ ॥ ७७ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ मरि मरि जनमे जिन बिसरिआ जीवन का दाता। पारब्रहमु जनि सेविआ अनदिनु रंगि राता ॥ १ ॥ सांति सहजु आनदु घना पूरन भई आस। सुखु पाइआ हरि साध संगि सिमरत गुणतास ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुणि सुआमी अरदासि जन तुम्ह अंतरजामी। थान थनंतरि रवि रहे नानक के सुआमी ॥ २ ॥ १४ ॥ ७८ ॥

जो लोग जीवनदाता परमात्मा को विसार देते हैं, वे आवागमन के चक्र में पड़ते हैं। (इसके विपरीत) जो लोग रात-दिन परमात्मा का भजन करते हैं, वे प्रभु-रंग में आनन्द मनाते हैं ॥ १ ॥ वे स्थिर, शान्ति और अपरिमित आनन्द लाभ करते हैं और उनकी सब आशाएँ पूर्ण होती हैं। उस परम गुणागार का भजन करने से तथा सन्तों की संगति में परमसुख मिलता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे स्वामी! तुम अन्तर्यामी हो, अपने सेवक की विनती सुनो। गुरु नानक कहते हैं कि वह स्वामी प्रत्येक अन्तराल में व्याप्त है ॥ २ ॥ १४ ॥ ७८ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ ताती वाउ न लगई पारब्रहम सरणाई । चउगिरद हमारै रामकार दुखु लगै न भाई ॥ १ ॥ सतिगुरु पूरा भेटिआ जिनि बणत बणाई । राम नामु अउखधु दीआ एका लिव लाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राखि लीए तिनि रखनहारि सभ बिआधि मिटाई । कहु नानक किरपा भई प्रभ भए सहाई ॥ २ ॥ १५ ॥ ७९ ॥

परब्रह्म के शरणागत को कभी कोई कष्ट नहीं होता (ताती हवा तक नहीं लगती), क्योंकि उसके गिर्द रक्षक लक्ष्मण-रेखा खिंच जाती है और कोई दुःख उसका अतिक्रमण नहीं कर सकता ॥ १ ॥ सतगुरु के मिलने पर ऐसा विधान होता कि जीव एकाग्र होकर राम-नाम में ही लीन हो जाता है (राम-नाम की दवा लेकर शक्ति पाता है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रक्षक प्रभु नित्य रक्षा करता है और सब प्रकार के सन्तापों को दूर करता है । गुरु नानक कहते हैं कि जब परमात्मा कृपा करता है, तो जीवों का सहायक हो जाता है ॥ २ ॥ १५ ॥ ७९ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ अपणे बालक आपि रखिअनु पारब्रहम गुरदेव । सुख सांति सहज आनद भए पूरन भई सेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भगत जना की बेनती सुणी प्रभि आपि । रोग मिटाइ जीवालिअनु जा का वड परतापु ॥१॥ दोख हमारे बखसिअनु अपणी कल धारी । मन बांछत फल दितिअनु नानक बलिहारी ॥ २ ॥ १६ ॥ ८० ॥

वाहिगुरु स्वयं अपने सेवकों की रक्षा करता है । सुख-शान्ति और सहज-आनन्द पाकर उनकी सेवा पूर्ण हो जाती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु भक्तों की विनती सुनकर अपने प्रताप द्वारा उनके रोगों को मिटाता और जीवन का दान देता है ॥ १ ॥ हे प्रभु ! अपनी शक्ति से हमारे दोषों को क्षमा कर दो और नानक को मनोवाञ्छित फल प्रदान करो, वह नित्य उस पर बलिहार है ॥ २ ॥ १६ ॥ ८० ॥

रागु बिलावलु महला ५ चउपदे दुपदे घरु ६

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मेरे मोहन स्रवनी इह न सुनाए । साकत गीत नाद धुनि गावत बोलत बोल अजाए ॥ १ ॥रहाउ॥ सेवत सेवि सेवि साध सेवउ सदा करउ किरताए । अभै दानु पावउ

पुरख दाते मिलि संगति हरि गुण गाए ॥ १ ॥ रसना अगह अगह गुन राती नैन दरस रंगु लाए । होहु क्रिपाल दीन दुख भंजन मोहि चरण रिदै वसाए ॥ २ ॥ सभहू तलै तलै सभ ऊपरि एह द्रिसटि द्रिसटाए । अभिमानु खोइ खोइ खोइ खोई हउ मोकउ सतिगुर मंत्रु द्रिड़ाए ॥ ३ ॥ अतुलु अतुलु अतुलु नह तुलीऐ भगति वछलु किरपाए । जो जो सरणि परिओ गुर नानक अभै दानु सुख पाए ॥ ४ ॥ १ ॥ ८१ ॥

मेरे प्यारे प्रभु ! मुझ पर ये कृपा करो कि नीच लोगों की वाणी अथवा अभद्रगीत अकस्मात् भी मेरे कानों में न पड़ें ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं सदा सन्तों की सेवा में दत्तचित्त रहूँ और सत्संगति में मिलकर प्रभु का नाम गान करते हुए अभय पद को प्राप्त कर लूँ ॥ १ ॥ मेरी जिह्वा हरि के अथाह गुणों में रत रहे और मेरे नेत्र सदा हरि-दर्शन में लीन रहें । हे दीनों के दुःखों को दूर करनेवाले प्रभु ! मैं तुम्हारे चरणों को हृदय में धारण करता हूँ ॥ २ ॥ मेरी दृष्टि ऐसी विनम्र हो जाय, जो सबके नीचे रहे और अन्ततः सबसे ऊपर उठ सके । मेरा अभिमान पूर्णतः नष्ट हो जाय और मैं सतगुरु के उपदेशों को मन में दृढ़ करता रहूँ ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! तुम अतुलनीय हो, अनुपम हो, तुम्हारी तुलना किसी से नहीं की जा सकती; तुम अपने भक्तों से प्यार करते हो । इसीलिए, गुरु नानक कहते हैं कि जो तुम्हारी शरण में आ जाता है, वह अभय पद को प्राप्त कर परमसुख लाभ करता है ॥ ४ ॥ १ ॥ ८१ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ प्रभ जी तू मेरे प्रान अधारै । नमसकार डंडउति बंदना अनिक बार जाउ बारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऊठत बैठत सोवत जागत इहु मनु तुझहि चितारै । सूख दूख इसु मन की बिरथा तुझ ही आगै सारै ॥ १ ॥ तू मेरी ओट बल बुधि धनु तुम ही तुमहि मेरै परवारै । जो तुम करहु सोई भल हमरै पेखि नानक सुख चरनारै ॥ २ ॥ २ ॥ ८२ ॥

हे प्रभुजी ! आप ही एकमात्र मेरे प्राणों का आधार हैं । मैं बार-बार आपको दण्डवत प्रणाम करता हूँ और आप पर क़ुर्बान जाता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उठते-बैठते, सोते-जागते मेरा मन सदा आप ही का स्मरण करता है । यह मन अपने सुख-दुःख की समूची अवस्था आप ही के सम्मुख प्रस्तुत करता है ॥ १ ॥ हे प्रभु ! आप मेरा सहारा हैं, मेरा बल, बुद्धि, धन सब आप ही हैं, मेरा समूचा परिवार भी आप पर ही

निर्भर है। जो कुछ आप करते हैं, वही मेरा भला है। गुरु नानक कहते हैं कि आपके चरणों के दर्शन में ही मेरा सुख निहित है ॥ २ ॥ २॥ ८२॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ सुनीअत प्रभ तउ सगल उधारन। मोह मगन पतित संगि प्रानी ऐसे मनहि बिसारन ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संचि बिखिआ ले ग्राहजु कीनी अंम्रितु मन ते डारन। काम क्रोध लोभ रतु निंदा सतु संतोखु बिदारन ॥ १ ॥ इन ते काढि लेहु मेरे सुआमी हारि परे तुम्ह सारन। नानक की बेनंती प्रभ पहि साध संगि रंक तारन ॥ २ ॥ ३ ॥ ८३ ॥

हे प्रभु ! सुनता हूँ कि तुम सबका उद्धार करनेवाले हो। मैंने मोह में मग्न होने के कारण पतित प्राणियों की संगति में तुम्हें मन से हटा दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (मैं कितना मूर्ख हूँ कि) मैंने विष को संग्रह कर ग्राह्य समझ लिया है और मन के अमृत को गिरा दिया है। काम, क्रोध, लोभ आदि विकारों में ग्रस्त हो गया हूँ, दूसरों की निन्दा करता हूँ; जब कि मैंने अपने भीतर के सत्य, सन्तोष आदि गुणों को त्याग दिया है ॥ १ ॥ हे मेरे स्वामी ! मैं दुःखी होकर तुम्हारी शरण में आया हूँ, उक्त स्थिति से मेरी रक्षा करो। गुरु नानक कहते हैं कि हे ज्ञान-हीनों और रंकों का भी उद्धार करनेवाले प्रभु ! मेरी तुमसे विनती है (कि मेरा भी उद्धार कर दो) ॥ २ ॥ ३ ॥ ८३ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ संतन कै सुनीअत प्रभ की बात। कथा कीरतनु आनंद मंगल धुनि पूरि रही दिनसु अरु राति ॥१॥ रहाउ ॥ करि किरपा अपने प्रभि कीने नामु अपुने की कीनी दाति। आठ पहर गुन गावत प्रभ के काम क्रोध इसु तन ते जात ॥ १ ॥ त्रिपति अघाए पेखि प्रभ दरसनु अंम्रित हरि रसु भोजनु खात। चरन सरन नानक प्रभ तेरी करि किरपा संत संगि मिलात ॥ २ ॥ ४ ॥ ८४ ॥

मैं सन्तों की संगति में ही प्रभु की चर्चा सुनता हूँ। वह कथा-कीर्तन के वातावरण में ही रात-दिन आनन्द और कल्याण की ध्वनि प्रसारित होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु ने कृपा करके मुझे अपनी शरण में अपना लिया है और कृपा का दान दिया है। अब मैं आठों प्रहर परमात्मा का गुणगान करता हूँ। काम, क्रोध आदि विकार मुझसे दूर हट गये हैं ॥ १ ॥ परमात्मा के शुभ दर्शनों से मेरी पूर्णतृप्ति हो गयी है और हरिरस-भोजन पाकर मैं अमृतमय हो गया हूँ। गुरु नानक कहते

हैं कि उन्हें तुम्हारे ही चरणों का आश्रय है, कृपा करके उन्हें सन्तों की संगति प्रदान करो ॥ २ ॥ ४ ॥ ८४ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ राखि लीए अपने जन आप । करि किरपा हरि हरि नामु दीनो बिनसि गए सभ सोग संताप ॥१॥ रहाउ ॥ गुण गोविंद गावहु सभि हरि जन राग रतन रसना आलाप । कोटि जनम की त्रिसना निवरी राम रसाइणि आतम ध्राप ॥ १ ॥ चरण गहे सरणि सुखदाते गुर कै बचनि जपे हरि जाप । सागर तरे भरम भै बिनसे कहु नानक ठाकुर परताप ॥ २ ॥ ५ ॥ ८५ ॥

परमात्मा ने अपने जीवों की स्वयं रक्षा की है। कृपा करके हरि ने हमें अपना नाम प्रदान किया है, जिससे हमारे सब शोक-सन्ताप बीत गये हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सब हरिजनों को अपनी पावन जिह्वा द्वारा रागों के माध्यम से परमात्मा का गुणगान उच्चारित करना चाहिए। ऐसा करने से करोड़ों जन्मों की तृष्णा नष्ट होगी और राम-रस पाकर आत्मा सन्तुष्ट होगा ॥ १ ॥ गुरु के आदेशानुसार जो हरि-नाम जपता और परमात्मा के चरणों की शरण लेता है, वह संसार-सागर से मुक्त हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा की कृपा से उसके भ्रम-भय नष्ट हो जाते हैं ॥ २ ॥ ५ ॥ ८५ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ तापु लाहिआ गुर सिरजनहारि । सतिगुर अपने कउ बलि जाई जिनि पैज रखी सारै संसारि ॥१॥ रहाउ ॥ करु मसतकि धारि बालिकु रखि लीनो । प्रभि अंम्रित नामु महा रसु दीनो ॥ १ ॥ दास की लाज रखै मिहरवानु । गुरु नानकु बोलै दरगह परवानु ॥ २ ॥ ६ ॥ ८६ ॥

गुरु-कृपा से सृजनहार ने हमारी पीड़ाओं का निस्तार कर दिया है। मैं सतगुरु पर नित्य बलिहार जाता हूँ, जिसने सारे संसार के सामने मेरी प्रतिष्ठा बना दी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे माथे पर हाथ रखकर बालक की तरह मुझे संरक्षण दिया। परमात्मा ने अपने नाम का महारस मुझे पान करवाया ॥ १ ॥ प्रभु बहुत कृपालु है, दास जानकर उसने मेरी लाज रखी। गुरु-कथन है कि भक्त का प्रत्येक वाक्य प्रभु के दरबार में प्रबाण है ॥ २ ॥ ६ ॥ ८६ ॥

रागु बिलावलु महला ५ चउपदे दुपदे घरु ७

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सतिगुर सबदि उजारो दीपा । बिनसिओ अंधकार तिह मंदरि रतन कोठड़ी खुल्ही अनूपा ॥१॥ रहाउ॥ बिसमन बिसम भए जउ पेखिओ कहनु न जाइ वडिआई । मगन भए ऊहा संगि माते ओति पोति लपटाई ॥ १ ॥ आल जाल नही कछू जंजारा अहंबुधि नही भोरा । ऊचन ऊचा बीचु न खीचा हउ तेरा तूं मोरा ॥ २ ॥ एकंकारु एकु पासारा एकै अपर अपारा। एकु बिसथीरनु एकु संपूरनु एकै प्रान अधारा ॥३॥ निरमल निरमल सूचा सूचो सूचा सूचो सूचा । अंत न अंता सदा बेअंता कहु नानक ऊचो ऊचा ॥ ४ ॥ १ ॥ ८७ ॥

गुरु के शब्द रूपी दीपक से सब ओर प्रकाश हुआ है। इस शरीर रूपी मन्दिर में से अँधेरा दूर हो गया है (भाव यह कि जब गुरु-शब्द द्वारा हमारा विवेक जाग्रत् हुआ तो हृदय-मन्दिर की अनुपम कोठरी खुल गयी अर्थात् परमात्मा का दिव्यालोक मन-मन्दिर में प्रकट हुआ) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा को देखकर जीव आश्चर्यचकित हो उठता है, अपनी सीमित बुद्धि से उसके बड़प्पन का गुणकथन नहीं कर सकता। उसी की संगति में लीन होकर उसके सिमरन के ताने-बाने में लिपट गया है ॥ १ ॥ अब जीव पर घर के जाल-जंजाल कोई प्रभाव नहीं डालते, अहम्-बुद्धि तो रंचमात्र भी नहीं रह गयी। दोनों में किसी प्रकार का भी अन्तराल नहीं रहा, कोई पर्दा या दीवार नहीं रही; अब तो जीव तुममें और तुम जीव में अभेद हो गये हो ॥ २ ॥ वह प्रभु एक है, अद्वैत है और उसी एक का अपार प्रसार हमें दीख पड़ता है। ये समूचा प्रसार उसी एक का है और वही सबका प्राणाधार है ॥ ३ ॥ वह निर्मलों से निर्मल और पवित्रों से पवित्र है। गुरु नानक कहते हैं कि वह अनन्त है, उसका कोई अन्त नहीं, वह ऊँचे से ऊँचा मालिक है ॥ ४ ॥ १ ॥ ८७ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ बिनु हरि कामि न आवत हे । जा सिउ राचि माचि तुम्ह लागे ओह मोहनी मोहावत हे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कनिक कामिनी सेज सोहनी छोडि खिनै महि जावत हे। उरझि रहिओ इंद्री रस प्रेरिओ बिखै ठगउरी खावत हे ॥१॥ त्रिण को मंदरु साजि सवारिओ पावकु तलै जरावत हे। ऐसे गड़ महि ऐठि हठीलो फूलि फूलि किआ पावत हे ॥ २ ॥ पंच

दूत मूड परि ठाढे केस गहे फेरावत हे। द्रिसटि न आवहि अंध अगिआनी सोइ रहिओ मद मावत हे ॥ ३ ॥ जालु पसारि चोग बिसथारी पंखी जिउ फाहावत हे। कहु नानक बंधन काटन कउ मै सतिगुरु पुरखु धिआवत हे ॥ ४ ॥ २ ॥ ८८ ॥

परमात्मा के बिना संसार का समूचा प्रपञ्च मिथ्या है। जिसके संग मिल-जुलकर तुम जीवन व्यतीत करते हो, उसी माया के मोह में पड़े रह जाते हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मृत्यु के समय धन-सम्पत्ति, स्त्री और भोग-विलास क्षण भर में ही छोड़कर जाना होता है। भोगों के रसास्वाद में इन्द्रिय आकर्षण से प्रेरित जीव माया मिथ्यात्व में संलग्न है ॥ १ ॥ (इसकी मूर्खता तो देखिए कि) तिनकों का महल बनाकर नीचे आग जला रहा है। शरीर रूपी दुर्ग में हठ के कारण अकड़-अकड़कर अपने वार करता है, किन्तु उसे उससे क्या प्राप्त है ॥२॥ काम, क्रोध आदि पाँच शत्रु नित्य इसके शिर पर इसके केश थामे रहते हैं। अपने अज्ञान और निर्बुद्धि के कारण संसार का यह परमसत्य इसकी दृष्टि में नहीं आता और वह विकारों की मस्ती में ही सोया रह जाता है ॥ ३ ॥ काल ने इसके लिए जाल फैलाकर नीचे दाना बिछा रखा है, ताकि यह नित्य फँसता रहे। गुरु नानक कहते हैं कि इन बन्धनों को काटने के लिए केवल परमपुरुष सतगुरु का ध्यान ही अपेक्षित है ॥ ४ ॥ २ ॥ ८८ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ हरि हरि नामु अपार अमोली। प्रान पिआरो मनहि अधारो चीति चितउ जैसे पान तंबोली ॥१॥ रहाउ ॥ सहजि समाइओ गुरहि बताइओ रंगि रंगी मेरे तन की चोली। प्रिअ मुखि लागो जउ वडभागो सुहागु हमारो कतहु न डोली ॥ १ ॥ रूप न धूप न गंध न दीपा ओति पोति अंग अंग संगि मउली। कहु नानक प्रिअ रवी सुहागनि अति नीकी मेरी बनी खटोली ॥ २ ॥ ३ ॥ ८९ ॥

हरि-नाम अपार और अमोलक है। यह हमें प्राणों से प्रिय है, मन का एकमात्र आधार है और इसे हमें इस प्रकार सिमरन करते रहना चाहिए, जैसे तमोली अपने पान के पत्तों का ख़याल रखता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के आदेशानुसार आचरण करने से सहजावस्था प्राप्त हो सकती है और शरीर रूपी चोली प्रभु-नाम रूपी मजीठ के पक्के रंग में रँगी जाती है। मेरा भाग्य उदित हुआ है, जो मैं अपने प्यारे के संसर्ग में आयी हूँ; मेरा सुहाग अमर है, कभी दोलायमान नहीं होता ॥ १ ॥ अब प्रभु की आरती उतारने के लिए मुझे रूप, धूप, गन्ध व दीपक की अपेक्षा नहीं

रही, अब तो मैं अङ्ग-प्रत्यङ्ग से उसी में समा गयी हूँ और पूर्णतः प्रफुल्लित हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि मेरे प्रिय ने अब मुझे सुहागिन बना दिया है और मेरी सेज अतिसुन्दर और आकर्षक हो गयी है ॥ २ ॥ ३ ॥ ८९ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ गोबिंद गोबिंद गोबिंद मई। जब ते भेटे साध दइआरा तब ते दुरमति दूरि भई ॥१॥रहाउ॥ पूरन पूरि रहिओ संपूरन सीतल सांति दइआल दई। काम क्रोध त्रिसना अहंकारा तन ते होए सगल खई ॥ १ ॥ सतु संतोखु दइआ धरमु सुचि संतन ते इहु मंतु लई। कहु नानक जिनि मनहु पछानिआ तिन कउ सगली सोझ पई ॥ २ ॥ ४ ॥ ९० ॥

मैं गोविन्द-गोविन्द नाम जपते अब गोविन्दमयी हो गयी हूँ। जब से मुझे सच्चे और दयालु सतगुरु का सम्पर्क प्राप्त हुआ है, तब से मेरी कुबुद्धि अर्थात् मनोविकार नष्ट हो गये हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह पूर्णप्रभु मेरे भीतर स्थिर होकर मुझे शान्ति प्रदान कर रहा है और प्रकाश रूपी वह गुरु मेरा संरक्षक हो गया है। इसीलिए मुझमें पूर्वस्थिर काम, क्रोध, अहंकार और तृष्णा आदि विकार नष्ट हो गये हैं ॥ १ ॥ मैंने सन्तों की संगति में सत्य, सन्तोष, दया, धर्म और पुण्य लाभ किया है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसने प्रभु को पहचान लिया है, उसे पूर्ण विवेक-बुद्धि प्राप्त है ॥ २ ॥ ४ ॥ ९० ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ किआ हम जीअ जंत बेचारे बरनि न साकह एक रोमाई। ब्रहम महेस सिध मुनि इंद्रा बेअंत ठाकुर तेरी गति नही पाई ॥ १ ॥ किआ कथीऐ किछु कथनु न जाई। जह जह देखा तह रहिआ समाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जह महा भइआन दूख जम सुनीऐ तह मेरे प्रभ तूहै सहाई। सरनि परिओ हरि चरन गहे प्रभ गुरि नानक कउ बूझ बुझाई ॥ २ ॥ ५ ॥ ९१ ॥

हम बेचारे जीव-जन्तु परमात्मा के एक रोम का भी बखान करने में असमर्थ हैं। ब्रह्मा, महेश, सिद्ध साधक, इन्द्रादि देवता भी तुम्हारी गति नहीं पहचान पाये ॥ १ ॥ तुम्हारी महानता का क्या बतायें ? कुछ कहा नहीं जाता। जहाँ-जहाँ भी मेरी दृष्टि जाती है, तुम्हीं व्याप्त दीखते हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भयंकर यमदूतों द्वारा दिये गये कष्टों की जो बात सुनते हैं, हे मेरे मालिक ! वहाँ भी मुझे तुम्हारा ही सहारा है।

मैं तुम्हारे चरण पकड़कर तुम्हारी ही शरण में पड़ा हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि मुझे, हे प्रभु ! सत्य का ज्ञान प्रदान करो ॥ २ ॥ ५ ॥ ९१ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ अगम रूप अबिनासी करता पतित पवित इक निमख जपाईऐ। अचरजु सुनिओ परापति भेटुले संत चरन चरन मनु लाईऐ ॥ १ ॥ कितु बिधीऐ कितु संजमि पाईऐ। कहु सुरजन कितु जुगती धिआईऐ ॥१॥रहाउ॥ जो मानुखु मानुख की सेवा ओहु तिस की लई लई फुनि जाईऐ। नानक सरनि सरणि सुखसागर मोहि टेक तेरो इक नाईऐ ॥ २ ॥ ६ ॥ ९२ ॥

उस अगम, अविनाशी परमात्मा का यदि निमिष मात्र के लिए ही नाम जपा जाये तो वह पतितों को पवित्र कर देता है। सन्तों के चरणों के सम्पर्क से वह आश्चर्य आँखों से देखा जा सकता है, जिसे आज तक केवल सुनते आये हैं। हमें उन्हीं चरणों की शरण लेनी चाहिए ॥ १ ॥ किस साधन और संयम के द्वारा; किस युक्ति और ढंग के द्वारा हम परमपुरुष परमात्मा को पा सकते हैं ? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि एक मनुष्य दूसरे मनुष्य की सेवा करता है, वो भी उसे कभी नहीं भूलता (ऐसे में स्वयं हरि की सेवा क्योंकर वृथा जा सकती है।) गुरु नानक कहते हैं कि हे सुखसागर ! मैं तुम्हारी शरण में हूँ और मुझे एकमात्र तुम्हारे नाम का सहारा है ॥ २ ॥ ६ ॥ ९२ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ संत सरणि संत टहल करी। धंधु बंधु अरु सगल जंजारो अवर काज ते छूटि परी ॥१॥रहाउ॥ सूख सहज अरु घनो अनंदा गुर ते पाइओ नामु हरी। ऐसो हरि रसु बरनि न साकउ गुरि पूरै मेरी उलटि धरी ॥ १ ॥ पेखिओ मोहनु सभ कै संगे ऊन न काहू सगल भरी। पूरन पूरि रहिओ किरपा निधि कहु नानक मेरी पूरी परी ॥ २ ॥ ७ ॥ ९३ ॥

सन्तों की शरण लो, सन्तों की सेवा करो। धन्धों के बेकार बन्धन और सब प्रकार के जंजाल इसी कारण से नष्ट हो जायेंगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहजावस्था का सुख और श्रेष्ठतर आनन्द गुरु के द्वारा हरि-नाम की प्राप्ति से मिलता है। ऐसे हरि-नाम का वर्णन मैं नहीं कर सकता; गुरु-कृपा से मेरी वृत्ति अब अन्तर्मुखी हो गयी है ॥ १ ॥ उस प्यारे वाहिगुरु को मैं सबमें व्याप्त देखता हूँ, वह पूर्णतः पूर्ण है, रंच मात्र भी उसमें न्यूनता नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि वह कृपानिधान परमात्मा हमेशा

पूरे का पूरा है, उसी से सबको पूर्णता प्राप्त होती है (उपनिषद् में कहा गया है।) ॥ २ ॥ ७ ॥ ९३ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ मन किआ कहता हउ किआ कहता। जान प्रबीन ठाकुर प्रभ मेरे तिसु आगै किआ कहता ॥१॥ रहाउ ॥ अनबोले कउ तुही पछानहि जो जीअन महि होता। रे मन काइ कहा लउ डहकहि जउ पेखत ही संगि सुनता ॥ १ ॥ ऐसो जानि भए मनि आनद आन न बीओ करता। कहु नानक गुर भए दइआरा हरि रंगु न कबहू लहता ॥ २ ॥ ८ ॥ ९४ ॥

हे मन ! तू क्या कहता है ? तू क्या कह सकता है, वह तो पहले ही सब कुछ जानता है, उस अन्तर्यामी के सामने क्या कह सकता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो कुछ लोगों के मन में होता है, वह बिन बताये ही तुम जानते हो, इसलिए, हे मन ! जब वह सब कुछ देखता-सुनता है, तो तुम्हारा उससे कुछ भी छिपाना सम्भव नहीं ॥ १ ॥ ऐसा जानकर कि उसके अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं है, मन को आनन्द मिलता है। गुरु नानक कहते हैं कि जिन पर गुरु की दया होती है, उन पर से हरि का रंग कभी नहीं उतरता ॥ २ ॥ ८ ॥ ९४ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ निंदकु ऐसे ही झरि परीऐ। इह नीसानी सुनहु तुम भाई जिउ कालर भीति गिरीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जउ देखै छिद्रु तउ निंदकु उमाहै भलो देखि दुख भरीऐ। आठ पहर चितवै नही पहुचै बुरा चितवत चितवत मरीऐ ॥ १ ॥ निंदकु प्रभू भुलाइआ कालु नेरै आइआ हरि जन सिउ बादु उठरीऐ। नानक का राखा आपि प्रभु सुआमी किआ मानस बपुरे करीऐ ॥ २ ॥ ९ ॥ ९५ ॥

निन्दकजन अपने आप नष्ट हो जाते हैं। हे भाई ! यह जान लो कि उनकी स्थिति कल्लर (रेह) की दीवार की तरह होती है, जो कभी भी धराशायी हो सकती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निन्दक लोग न्यूनता या छिद्र देखकर खुश होते हैं, भले व्यक्ति को देखकर ईर्ष्या से भर उठते हैं। बुरा व्यक्ति चाहता है कि आठों पहर भलाई करनेवालों की बराबरी कर सकें, किन्तु वह यही सोचते-सोचते मर जाता है ॥ १ ॥ निन्दक लोग परमात्मा को भुला देते हैं, काल उनके निकट बसता है और वे सदा हरिजन से झगड़ा उठाये रहते हैं। गुरु नानक का रक्षक स्वयं परमात्मा है, ये बेचारे निन्दक जीव उसका क्या बिगाड़ सकते हैं ? ॥ २ ॥ ९ ॥ ९५ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ ऐसे काहे भूलि परे । करहि करावहि मूकरि पावहि पेखत सुनत सदा संगि हरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काच बिहाझन कंचन छाडन बैरी संगि हेतु साजन तिआगि खरे । होवनु कउरा अनहोवनु मीठा बिखिआ महि लपटाइ जरे ॥ १ ॥ अंधकूप महि परिओ परानी भरम गुबार मोह बंधि परे । कहु नानक प्रभ होत दइआरा गुरु भेटै काढै बाह फरे ॥२॥१०॥९६॥

हे जीव ! ऐसे क्यों भूले पड़े हो । वही सब करने, करानेवाला है, उसी को देखते-सुनते, उससे सम्पर्क बनाये रखना है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कंचन छोड़ काँच का सौदा करनेवाले ऐसे जीव विवेक को त्यागकर सज्जन से शत्रुता और वैरी से मित्रता करते हैं । उनके लिए चिर अस्तित्ववान वाहिगुरु कड़वा है और अनस्तित्व के मिथ्या तत्त्व मीठे हैं और वह विषैली माया के प्रपञ्चों में लिपटकर जल मरता है ॥ १ ॥ ऐसा प्राणी अँधेरे के भ्रमों में पड़ा अन्धकूप का वासी बना रहता है और मोहबन्धनों में जकड़ा रहता है । गुरु नानक कहते हैं कि यदि प्रभु की कृपा हो जाय तो उसे गुरु मिलता है, जो उसे बाँह पकड़कर संसार के प्रवाह से निकाल लेता है ॥ २ ॥ १० ॥ ९६ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ मन तन रसना हरि चीन्हा । भए अनंदा मिटे अंदेसे सरब सूख मोकउ गुरि दीन्हा ॥१॥रहाउ॥ इआनप ते सभ भई सिआनप प्रभु मेरा दाना बीना । हाथ देह राखै अपने कउ काहू न करते कछु खीना ॥ १ ॥ बलि जावउ दरसन साधू कै जिह प्रसादि हरि नामु लीना । कहु नानक ठाकुर भारोसै कहू न मानिओ मनि छीना ॥ २ ॥ ११ ॥ ९७ ॥

जो जीव तन-मन और जिह्वा द्वारा सदैव हरि का ही विचार करते हैं, वे प्रफुल्लित होते हैं; उनकी शंकाएं नष्ट हो जाती हैं और गुरु-कृपा से उन्हें सब सुख प्राप्त होते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा प्रभु सर्वज्ञाता और सर्वदर्शक है । उसकी कृपा से मेरी कुबुद्धि भी विवेक में बदल जाती है । वह हाथ देखकर सबकी रक्षा करता है, कोई उसे हानि नहीं पहुँचा सकता ॥ १ ॥ मैं सन्तों के दर्शन पर बलिहार जाता हूँ, जिनकी कृपा से मुझे हरि-नाम प्राप्त हुआ है । गुरु नानक कहते हैं कि मैंने तो सदा हरि पर ही भरोसा किया है, क्षणमात्र के लिए भी किसी और को नहीं माना ॥ २ ॥ ११ ॥ ९७ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ गुरि पूरै मेरी राखि लई ।

अंम्रित नामु रिदे महि दीनो जनम जनम की मैलु गई ॥१॥रहाउ॥ निवरे दूत दुसट बैराई गुर पूरे का जपिआ जापु । कहा करै कोई बेचारा प्रभ मेरे का बड परतापु ॥ १ ॥ सिमरि सिमरि सिमरि सुखु पाइआ चरन कमल रखु मन माही । ता की सरनि परिओ नानकदास जाते ऊपरि को नाही ॥ २ ॥ १२ ॥ ९८ ॥

पूर्णगुरु ने मेरी प्रतिष्ठा रखी है। मेरे हृदय में अमृत रूपी हरि-नाम स्थिर किया है, जिससे मेरी जन्म-जन्म की मलिनता दूर हो गयी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुष्ट वैरी मुझसे दूर हट गये हैं, क्योंकि अब मैं गुरु का सिमरन करता हूँ। कोई मुझे क्या हानि पहुँचा सकता है ? मेरे प्रभु का प्रताप बड़ा है ॥ १ ॥ मैंने परमात्मा के चरण-कमलों को मन में धारण कर लिया है और उसी का सिमरन करते हुए मैं परमसुख को प्राप्त हुआ हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि वे उसी प्रभु की शरण ग्रहण करते हैं, जिसके ऊपर और कोई नहीं ॥ २ ॥ १२ ॥ ९८ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ सदा सदा जपीऐ प्रभ नाम । जरा मरा कछु दूखु न बिआपै आगै दरगह पूरन काम ॥१॥रहाउ॥ आपु तिआगि परीऐ नित सरनी गुर ते पाईऐ एहु निधानु । जनम मरण की कटीऐ फासी साची दरगह का नीसानु ॥ १ ॥ जो तुम्ह करहु सोई भल मानउ मन ते छूटै सगल गुमानु । कहु नानक ता की सरणाई जा का कीआ सगल जहानु ॥२॥१३॥९९॥

हमें हमेशा प्रभु का नाम जपना है। इससे बुढ़ापे और मृत्यु के दुःख निकट नहीं आते और प्रभु के दरबार में हमारी सब इच्छाएँ पूरी हो जाती हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अभिमान को छोड़कर परमात्मा की शरण लो; यह अमूल्य निधियाँ गुरु से प्राप्त होती हैं। गुरु जन्म-मरण का चक्र समाप्त करके प्रभु के दरबार में जीव को मान्यता दे देता है ॥ १ ॥ हे प्रभु ! मैंने अपने मन से सब गुमान निकाल दिये हैं और जो कुछ तुम करते हो वही मुझे भला लगता है। गुरु नानक कहते हैं कि मैं उसी की शरण लेता हूँ, जिसने सारी सृष्टि की रचना की है ॥ २ ॥ १३ ॥ ९९ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ मन तन अंतरि प्रभु आही । हरि गुन गावत परउपकार नित तिसु रसना का मोलु किछु नाही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कुल समूह उधरे खिन भीतरि जनम जनम की मलु लाही । सिमरि सिमरि सुआमी प्रभु अपना अनद सेती बिखिआ बनु गाही ॥ १ ॥ चरन प्रभू के बोहिथु पाए

भवसागरु पारि पराही । संत सेवक भगत हरि ता के नानक मनु लागा है ताही ॥ २ ॥ १४ ॥ १०० ॥

जिसके मन-तन में हरि विद्यमान है, वह नित्य हरि के गुण गाता है; वह परोपकार करता है और जिह्वा से उस अमूल्य हरि की चर्चा करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु-कृपा से उसके समूचे वंश का निमिषमात्र में उद्धार हो जाता है और जन्म-जन्म का मैल उतर जाता है। इसलिए, हे जीव ! तू विषय-विकारों के इस जंगल रूपी संसार को छोड़कर आनन्द-पूर्वक अपने स्वामी का सिमरन कर ॥ १ ॥ परमात्मा के चरण उस जहाज़ के समान हैं, जिसके सहारे संसार-सागर पार किया जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि बड़े-बड़े सन्त-महात्मा भी उसी की सेवा में लगे हैं, और उनका अपना मन भी उसी में रत है ॥ २ ॥ १४ ॥ १०० ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ धीरउ देखि तुम्हारे रंगा । तू ही सुआमी अंतरजामी तूही वसहि साध कै संगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खिन महि थापि निवाजे ठाकुर नीच कीट ते करहि राजंगा ॥१॥ कबहू न बिसरै हीए मोरे ते नानक दास इही दानु मंगा ॥ २ ॥ १५ ॥ १०१ ॥

तुम्हारी उदारतापूर्ण कृपाओं को देखकर मुझे धैर्य मिलता है। तुम अन्तर्यामी हो, सन्तों की संगति में तुम्हारा ही वास है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्हारी कृपा हो तो क्षण भर में ही तुम नीचकीट-समान जीव को राज्य-सिंहासन पर स्थापित कर देते हो ॥ १ ॥ गुरु नानक तुमसे एक कामना करते हैं कि तुम उनके मन से कभी दूर न होओ ॥ २ ॥ १५ ॥ १०१ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ अचुत पूजा जोग गोपाल । मनु तनु अरपि रखउ हरि आगै सरब जीआ का है प्रतिपाल ॥१॥ रहाउ ॥ सरनि समथ अकथ सुखदाता किरपासिंधु बडो दइआल । कंठि लाइ राखै अपने कउ तिस नो लगै न ताती बाल ॥ १ ॥ दामोदर दइआल सुआमी सरबसु संत जना धन माल । नानक जाचिक दरसु प्रभ मागै संत जना की मिलै रवाल ॥ २ ॥ १६ ॥ १०२ ॥

अमर और अनश्वर परमात्मा पूजनीय है। वह सब जीवों का प्रतिपालक है। इसलिए मैं अपना तन-मन उसके सम्मुख अर्पित करता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपने पूर्णदयालु प्रभु, सुखदाता, कृपासिन्धु, परम-

समर्थ और अनिर्वचनीय परमात्मा की शरण लेता हूँ। वह जिसे अपने गले लगा लेता है, उसे ताती हवा नहीं लगने देता ॥ १ ॥ वह परमात्मा दयालु है, सबका स्वामी है, और सन्तजनों के लिए तो वही समूची पूंजी है। गुरु नानक याचना करते हैं कि उन्हें प्रभु का दर्शन और सन्तजनों की चरणधूलि प्राप्त हो ॥ २ ॥ १६ ॥ १०२ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ सिमरत नामु कोटि जतन भए। साध संगि मिलि हरि गुन गाए जमदूतन कउ त्रास अहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जेते पुनहचरन से कीन्हे मनि तनि प्रभ के चरण गहे। आवण जाणु भरमु भउ नाठा जनम जनम के किलविख दहे ॥१॥ निरभउ होइ भजहु जगदीसै एहु पदारथु वडभागि लहे। करि किरपा पूरन प्रभ दाते निरमल जसु नानक दास कहे ॥२॥१७॥१०३॥

केवल नाम जपने मात्र से अनेक साधन सम्पन्न हो जाते हैं अर्थात् नाम के रहते अन्य यत्नों की आवश्यकता ही नहीं। जब-जब यमदूतों का भय बढ़ता है, जीव को सन्तों के सम्पर्क में आकर हरिगुण-गान करना चाहिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन में प्रभु के चरणों को धारण कर लेने मात्र से ही जीव के सभी प्रायश्चित्त पूर्ण हो जाते हैं। आने-जाने (आवागमन) का समूचा भय नष्ट हो जाता है और जन्म-जन्म के पाप जल जाते हैं ॥ १ ॥ निर्भय होकर परमात्मा का भजन करो, सौभाग्यशालियों के लिए यही पदार्थ अपेक्षित है। दास नानक परमात्मा से यही प्रार्थना करता है कि वह निर्मल सत्यस्वरूप परमात्मा नित्य उस पर कृपा बनाये रखे ॥ २ ॥ १७ ॥ १०३ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ सुलही ते नाराइण राखु। सुलही का हाथु कही न पहुचै सुलही होइ मूआ नापाकु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काढि कुठारु खसमि सिरु काटिआ खिन महि होइ गइआ है खाकु। मंदा चितवत चितवत पचिआ जिनि रचिआ तिनि दीना धाकु ॥ १ ॥ पुत्र मीत धनु किछू न रहिओसु छोडि गइआ सभ भाई साकु। कहु नानक तिसु प्रभ बलिहारी जिनि जन का कीनो पूरन वाकु ॥ २ ॥ १८ ॥ १०४ ॥

(यह पद सिक्ख मिथिहास की ओर संकेत करता है। जहाँगीर का एक अधिकारी सुलही खाँ गुरुजी पर आघात करने के लिए आया था, किन्तु मार्ग में ही एक दुर्घटना में उसकी मृत्यु हो गयी। गुरु अर्जुनदेव ने इसी तथ्य की ओर संकेत करते हुए अपने मालिक को धन्यवाद दिया है।) सुलही खाँ से स्वयं नारायण ने हमारी रक्षा की। सुलही हमें कोई हानि नहीं

पहुँचा सका, बल्कि स्वयं ही अपवित्र हो मर गया (यहाँ उसकी मृत्यु को इसलिए अपवित्र कहा गया है कि वह आग में जलकर मर गया था और मुसलमानों में मुर्दे को भी आग में नहीं जलाया जाता) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा ने अपने अदृश्य कुठार से उसका सिर काट डाला और वह क्षण भर में ही राख हो गया। वह गुरु-घर का बुरा चाहता था, स्वयं ही जल मरा; जिस हरि ने उसे बनाया था उसी ने उसे मौत के गर्त में धकेल दिया ॥ १ ॥ पुत्र, मित्र और स्त्री व किसी ने उसका साथ नहीं दिया और वह सब संगी-साथियों को छोड़ गया। गुरु नानक कहते हैं कि वे उस परमात्मा पर बलिहार जाते हैं, जो उनके वचनों की रक्षा करता है ॥ २ ॥ १८ ॥ १०४ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ पूरे गुर की पूरी सेव। आपे आपि वरतै सुआमी कारजु रासि कीआ गुरदेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आदि मधि प्रभु अंति सुआमी अपना थाटु बनाइओ आपि। अपने सेवक की आपे राखै प्रभ मेरे को वड परतापु ॥ १ ॥ पारब्रहम परमेसुर सतिगुर बसि कीन्हे जिनि सगले जंत। चरन कमल नानक सरणाई राम नाम जपि निरमल मंत ॥२॥१९॥१०५॥

पूरा गुरु ब्रह्म से अभेद होता है, उसकी सेवा भी पूर्ण होती है। ऐसे गुरु की शरण लेने से स्वयं परमात्मा रक्षक होता है और सब कार्य सम्पन्न हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आदि, मध्य और अन्त में उसी एक मालिक की रचना व्याप्त है। मेरे परमात्मा का ऊँचा प्रताप है कि वह अपने सेवक की हमेशा इज़्ज़त रखता है ॥ १ ॥ वह सतगुरु स्वयं परब्रह्म परमेश्वर का रूप है और सभी जीव-जन्तु उसी के संकेतों पर आचरण करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि मैं उसी गुरु के चरण-कमलों की शरण लेता हूँ और उसके बताये हुए निर्मल आदर्शों पर आचरण करता हूँ ॥ २ ॥ १९ ॥ १०५ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ ताप पाप ते राखे आप। सीतल भए गुरचरनी लागे राम नाम हिरदे महि जाप ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि किरपा हसत प्रभि दीने जगत उधार नवखंड प्रताप। दुख बिनसे सुख अनद प्रवेसा त्रिसन बुझी मन तन सचु ध्राप ॥ १ ॥ अनाथ को नाथु सरणि समरथा सगल स्रिसटि को माई बापु। भगति वछल भै भंजन सुआमी गुण गावत नानक आलाप ॥ २ ॥ २० ॥ १०६ ॥

मेरा प्रभु पापों और पीड़ाओं से स्वयं मेरी रक्षा करता है। हृदय

में राम-नाम जाप करते हुए जब मैं उसके चरणों में आता हूँ, तो मेरे सब परिताप शीतल हो जाते हैं ।। १ ।। रहाउ ।। परमात्मा कृपा करके मुझे सहायता का हाथ देता है, वह संसार का उद्धार करनेवाला और महा प्रतापी है। उसकी कृपा से दुःख नष्ट होते हैं, सुख-आनन्द की उपलब्धि होती है; तृष्णा की अग्नि बुझ जाती है और सत्य-लाभ करके तन-मन तृप्त हो जाता है ।। १ ।। परमात्मा अनाथों का नाथ है और समूची सृष्टि का सर्जक तथा सबको शरण देने में समर्थ है। वह भक्तवत्सल है और सभी मानसिक भीतियों का निवारक है; इसीलिए गुरु नानक उसका गुणगान करते हैं ।। २ ।। २० ।। १०६ ।।

।। बिलावलु महला ५ ।। जिस ते उपजिआ तिसहि पछानु । पारब्रहमु परमेसरु धिआइआ कुसल खेम होए कलिआन ।। १ ।। रहाउ ।। गुरु पूरा भेटिओ बडभागी अंतरजामी सुघड़ सुजानु । हाथ देइ राखे करि अपने बड समरथु निमाणिआ को मानु ।।१।। भ्रम भै बिनसि गए खिन भीतरि अंधकार प्रगटे चानाणु । सासि सासि आराधै नानकु सदा सदा जाईऐ कुरबाणु ।।२।।२१।।१०७।।

हे जीव ! जिससे तू उत्पन्न हुआ है, उसी को पहचान। परब्रह्म परमेश्वर का ध्यान करने से कुशल-क्षेम और कल्याण प्राप्त होता है ।। १ ।। रहाउ ।। उत्तम भाग्य के ही कारण विवेकशील और अन्तर्यामी गुरु से भेंट होती है। वह स्वयं हाथ देकर उन अनाथ जीवों की रक्षा करता है, जो स्वयं अपने को (उसी पर आश्रित कर देते हैं) ।। १ ।। क्षण में ही जीव के भ्रम-भय नष्ट हो जाते हैं और उसका अज्ञानान्धकार प्रकाश में बदल जाता है। इसलिए गुरु नानक नित्य उस पर क़ुर्बान जाते हैं और श्वास-श्वास उसका भजन करते हैं ।। २ ।। २१ ।। १०७ ।।

।। बिलावलु महला ५ ।। दोवै थाव रखे गुर सूरे । हलत पलत पारब्रहमि सवारे कारज होए सगले पूरे ।।१।।रहाउ।। हरि हरि नामु जपत सुख सहजे मजनु होवत साधू धूरे । आवण जाण रहे थिति पाई जनम मरण के मिटे बिसूरे ।। १ ।। भ्रम भै तरे छुटे भै जम के घटि घटि एकु रहिआ भरपूरे । नानक सरणि परिओ दुख भंजन अंतरि बाहरि पेखि हजूरे ।।२।।२२।।१०८।।

लोक-परलोक दोनों स्थानों पर स्वयं सर्वशक्तिमान् परमात्मा रक्षा करता है। परब्रह्म जीव का यह लोक और परलोक सुधार देता है और उसके समस्त कार्य पूरे हो जाते हैं ।। १ ।। रहाउ ।। जीव नित्य हरि-नाम जपता

है; सहज सुख को प्राप्त करता है और सन्तों की चरणधूलि में स्नान करता है। उसका आना-जाना चुक जाता है और जन्म-मरण का चक्र मिट जाता है ॥ १ ॥ जीव के भ्रम-भय आदि का अन्त होता है, यमदूतों से मुक्ति मिलती है और वह प्रभु घट-घट में व्याप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि मैंने अन्दर-बाहर सब जाँच करके ही उस दुःख-भंजन प्रभु की शरण ली है ॥ २ ॥ २२ ॥ १०८ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ दरसनु देखत दोख नसे। कबहु न होवहु द्रिसटि अगोचर जीअ कै संगि बसे ॥१॥ रहाउ ॥ प्रीतम प्रान अधार सुआमी। पूरि रहे प्रभ अंतरजामी ॥ १ ॥ किआ गुण तेरे सारि सम्हारी। सासि सासि प्रभ तुझहि चितारी ॥ २ ॥ किरपा निधि प्रभ दीन दइआला। जीअ जंत की करहु प्रतिपाला ॥ ३ ॥ आठ पहर तेरा नामु जनु जापे। नानक प्रीति लाई प्रभि आपे ॥ ४ ॥ २३ ॥ १०९ ॥

हरि के दर्शन मात्र से ही सब दोष नष्ट हो जाते हैं। वह कभी दृष्टि से ओझल नहीं होता, सदा जीव के अङ्ग-सङ्ग बसता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा प्रियतम मेरे प्राणों का एकमात्र आधार है और मेरे सर्वस्व का स्वामी है। वह अन्तर्यामी है और निरन्तर सब जगह व्याप्त है ॥ १ ॥ हे प्रभु! मैं तुम्हारे कौन-कौन से गुणों की याद करूँ, मैं तो बस हर श्वास के साथ तुम्हारी ही याद करता हूँ ॥ २ ॥ हे कृपानिधान, दीनदयालु प्रभु! तुम सभी जीवों के स्वामी हो, उनके प्रतिपालक हो ॥ ३ ॥ सेवक को आठों प्रहर तुम्हारा नाम जपना चाहिए, इसी से, गुरु-कथन है, मनोबल बढ़ता है और दृढ़ता आती है, प्रभुप्रेम-वृद्धि होती है ॥ ४ ॥ २३ ॥ १०९ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ तनु धनु जोबनु चलत गइआ। राम नाम का भजनु न कीनो करत बिकार निसि भोरु भइआ ॥१॥ रहाउ ॥ अनिक प्रकार भोजन नित खाते मुख दंता घसि खीन खइआ। मेरी मेरी करि करि मूठउ पाप करत नह परी दइआ ॥ १ ॥ महा बिकार घोर दुख सागर तिसु महि प्राणी गलतु पइआ। सरनि परे नानक सुआमी की बाह पकरि प्रभ काढि लइआ ॥ २ ॥ २४ ॥ ११० ॥

तन-धन और यौवन नश्वर हैं। हरि-नाम का भजन नहीं किया, रात-दिन विकारों में लीन रहा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनेक प्रकार के भोजन आदि करते दाँत भी घिस गये हैं अर्थात् बुढ़ापा आ गया है। अहंकार के कारण

जीव चारों ओर से लुट रहा है और पाप करते हुए दया नहीं मानता ॥ १ ॥ संसार विकारों का महासागर है, जीव उसी में डूब रहा है। किन्तु गुरु नानक कहते हैं कि उसकी शरण लेनेवाले की वह बाँह पकड़कर निकाल लेता है ॥ २ ॥ २४ ॥ ११० ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ आपना प्रभु आइआ चीति। दुसमन दुसट रहे झख मारत कुसलु भइआ मेरे भाई मीत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गई बिआधि उपाधि सभ नासी अंगीकारु कीओ करतारि। सांति सूख अरु अनद घनेरे प्रीतम नामु रिदै उरहारि ॥ १ ॥ जीउ पिंडु धनु रासि प्रभ तेरी तूं समरथु सुआमी मेरा। दास अपुने कउ राखनहारा नानक दास सदा है चेरा ॥ २ ॥ २५ ॥ १११ ॥

जो लोग अपने प्रभु को हृदय में धारण करते हैं, उनके दुश्मन और कुटिल लोग झख मारकर रह जाते हैं, किन्तु उनका कुछ अकुशल नहीं कर पाते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीव की सब व्याधियाँ और विपत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं और परमात्मा उसे अङ्गीकार कर लेता है। प्रियतम के नाम को हृदय-हार बना लेने से सुख-शान्ति और अनन्त आनन्द की प्राप्ति होती है ॥ १ ॥ जीव, शरीर और धन, यह सब प्रभु का दिया हुआ है, वह सब तरह समर्थ है। वह सेवकों का रक्षक है और इसलिए गुरु नानक सदैव उसकी दासता को स्वीकार करते हैं ॥ २ ॥ २५ ॥ १११ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ गोबिदु सिमरि होआ कलिआणु। मिटी उपाधि भइआ सुखु साचा अंतरजामी सिमरिआ जाणु ॥१॥ रहाउ ॥ जिस के जीअ तिनि कीए सुखाले भगत जना कउ साचा ताणु। दास अपुने की आपे राखी भै भंजन ऊपरि करते माणु ॥ १ ॥ भई मित्राई मिटी बुराई द्रुसट दूत हरि काढे छाणि। सूख सहज आनंद घनेरे नानक जीवै हरि गुणह वखाणि ॥ २ ॥ २६ ॥ ११२ ॥

परमात्मा के सिमरन से सब प्रकार का श्रेय लाभ होता है। अन्तर्यामी और सर्वज्ञाता को सिमरने से सब व्याधियाँ मिटती हैं और सर्वसुख प्राप्त होते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसके बनाये हुए ये जीव हैं, वही भक्तों का सच्चा सहारा उन्हें सुख पहुँचाता है। वही अपने दास की इज़्ज़त बचाता है, उसी भयभंजन पर हमें मान है ॥ १ ॥ उससे मित्रता हो जाने पर बुराई नष्ट हो जाती है और वह चुन-चुनकर

दुष्टों को समाप्त कर देता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि के गुणों का बखान करने से सहज सुख और परमानन्द की प्राप्ति होती है ॥ २ ॥ २६ ॥ ११२ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ पारब्रहम प्रभ भए क्रिपाल। कारज सगल सवारे सतिगुर जपि जपि साधू भए निहाल ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंगीकारु कीआ प्रभि अपनै दोखी सगले भए रवाल। कंठि लाइ राखे जन अपने उधरि लीए लाइ अपनै पाल ॥ १ ॥ सही सलामति मिलि घरि आए निंदक के मुख होए काल। कहु नानक मेरा सतिगुरु पूरा गुरप्रसादि प्रभ भए निहाल ॥२॥२७॥११३॥

परब्रह्म प्रभु जब कृपा करते हैं तो नाम जपनेवाले सन्तजनों को निहाल कर देते हैं और सतगुरु के माध्यम से उनके सब कार्य सँवर जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा द्वारा अङ्गीकार कर लिये जाने पर कुटिल जन नष्ट हो जाते हैं। परमात्मा अपने सेवकों को गले से लगाकर रखता है और उन्हें मोक्ष प्रदान कर अपने में लीन कर लेता है ॥ १ ॥ जीव सही-सलामत अपने गन्तव्य पर पहुँच जाता है, निन्दकों का मुँह काला होता है। गुरु नानक कहते हैं कि पूरे सतगुरु की शरण लेने और उसकी कृपा से परमात्मा प्रसन्न होता है ॥ २ ॥ २७ ॥ ११३ ॥

॥ बिलावलु महला ५॥ मू लालन सिउ प्रीति बनी ॥रहाउ॥ तोरी न तूटै छोरी न छूटै ऐसी माधो खिच तनी ॥ १ ॥ दिनसु रैनि मन माहि बसतु है। तू करि किरपा प्रभ अपनी ॥ २ ॥ बलि बलि जाउ सिआम सुंदर कउ अकथ कथा जाकी बात सुनी ॥ ३ ॥ जन नानक दासनि दासु कहीअत है। मोहि करहु क्रिपा ठाकुर अपुनी ॥ ४ ॥ २८ ॥ ११४ ॥

वाहिगुरु से मेरी प्रीति बनी है ॥ रहाउ ॥ प्रभु से ऐसा आकर्षण हुआ है, जो न टूटने से टूटता है न छोड़ने से छूटता है ॥ १ ॥ रात-दिन वही प्रिय मेरे मन में बसता है और मुझ पर निरन्तर उसकी कृपा है ॥ २ ॥ मैं अपने सुन्दर परमात्मा पर बलिहार जाता हूँ और उसकी अनिर्वचनीय कथाओं के बारे में सदैव सुनता रहता हूँ ॥ ३ ॥ सेवक नानक विनती करते हैं कि वह प्रभु उन पर कृपा करे ॥ ४ ॥ २८ ॥ ११४ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ हरि के चरन जपि जांउ कुरबानु। गुरु मेरा पारब्रहम परमेसुरु ता का हिरदै धरि मन

धिआनु ।। १ ।। रहाउ ।। सिमरि सिमरि सिमरि सुखदाता जा का कीआ सगल जहांनु । रसना रवहु एकु नाराइणु साची दरगह पावहु मानु ।। १ ।। साधू संगु परापति जाकउ तिनही पाइआ एहु निधानु । गावउ गुण कीरतनु नित सुआमी करि किरपा नानक दीजै दानु ।। २ ।। २६ ।। ११५ ।।

हरि के चरणों का ध्यान करते हुए मैं उस पर क़ुर्बान हूँ। मेरा सतगुरु परब्रह्म से अभेद है, मैं उसे हृदय में धारणकर सदैव मन में उसका ध्यान करता हूँ ।। १ ।। रहाउ ।। उस सुखदाता परमात्मा का निरन्तर सिमरन करो, जो समूचे संसार का सर्जक है। जिह्वा से हमेशा उस नारायण का भजन करो, जिसके दरबार में जीव को मान प्राप्त होता है ।। १ ।। जो जीव सन्तों की संगति को प्राप्त करते हैं, वे ही सुखदाता परमात्मा को पा सकते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि उस स्वामी का गुण-कीर्तन करो, ताकि प्रसन्न होकर हमें कृपा का दान दे ।। २ ।। २९ ।। ११५ ।।

।। बिलावलु महला ५ ।। राखि लीए सतिगुर की सरण । जैजैकारु होआ जग अंतरि पारब्रहमु मेरो तारण तरण ।।१।।रहाउ।। बिस्वंभर पूरन सुखदाता सगल समग्री पोखण भरण । थान थनंतरि सरब निरंतरि बलि बलि जांई हरि के चरण ।। १ ।। जीअ जुगति वसि मेरे सुआमी सरब सिधि तुम कारण करण । आदि जुगादि प्रभु रखदा आइआ हरि सिमरत नानक नही डरण ।। २ ।। ३० ।। ११६ ।।

सतगुरु की शरण लेनेवाले प्रभु द्वारा संरक्षित होते हैं। परब्रह्म तरन-तारन है, इसलिए संसार में उसी का जय-जयकार है ।। १ ।। रहाउ ।। विश्वम्भर परम सुखदाता स्वामी है और पोषण की समूची सामग्री का प्रदाता है। वह सर्वव्यापक सर्वेश्वर है; मैं उसके चरणों पर बार-बार बलिहार हूँ ।। १ ।। समस्त जीवों का प्रबन्ध मेरे स्वामी के हाथ है, वह समस्त सिद्धियों का मालिक और सर्वकर्ता है। गुरु नानक कहते हैं कि युग-युग से परमात्मा ही सबकी रक्षा करता आया है, उसका सिमरन करने से कोई भय नहीं रह जाता ।। २ ।। ३० ।। ११६ ।।

रागु बिलावलु महला ५ दुपदे घरु ८

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। मै नाही प्रभ सभु किछु तेरा । ईघै निरगुन ऊघै सरगुन केल करत बिचि सुआमी मेरा ।। १ ।।

रहाउ ॥ नगर महि आपि बाहरि फुनि आपन प्रभ मेरे को सगल बसेरा । आपे ही राजन आपे ही राइआ कह कह ठाकुरु कह कह चेरा ॥ १ ॥ का कउ दुराउ का सिउ बल बंचा जह जह पेखउ तह तह नेरा । साध मूरति गुरु भेटिओ नानक मिलि सागर बूंद नही अन हेरा ॥ २ ॥ १ ॥ ११७ ॥

हे परमात्मा ! मैं कुछ भी नहीं हूँ, जो कुछ भी है सब तुम्हारा ही है । एक तरफ़ वह निर्गुणस्वरूप है, तो दूसरी ओर सगुणस्वरूप —दोनों स्थितियों में वह रचना का खेल कर रहा है अर्थात् वह दोनों रूपों में सृष्टि का प्रबन्ध कर रहा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह शरीर रूपी नगर में बसता है और उससे बाहर भी विद्यमान है, सब दिशाओं में उसी का बास है । वह स्वयं राजा है, प्रजा भी स्वयं है; स्वामी और सेवक दोनों रूप उसी के हैं ॥ १ ॥ उससे कुछ छिपा नहीं, उसको छला नहीं जा सकता; जहाँ तक दृष्टि जाती है, वह निकटतर पड़ता है । सन्तों के स्वरूप में साक्षात् उसी का रूप विद्यमान है, सागर में मिली बूंद की तरह उसे अलग करके नहीं देखा जा सकता ॥ २ ॥ १ ॥ ११७ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ तुम्ह समरथा कारन करन । ढाकन ढाकि गोबिद गुर मेरे मोहि अपराधी सरन चरन ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जो कीनो सो तुम्ह जानिओ पेखिओ ठउर नाही कछु ढीठ मुकरन । बड परतापु सुनिओ प्रभ तुम्हरो कोटि अघा तेरो नाम हरन ॥ १ ॥ हमरो सहाउ सदा सद भूलन तुम्हरो बिरदु पतित उधरन । करुणामै किरपाल क्रिपानिधि जीवन पद नानक हरि दरसन ॥ २ ॥ २ ॥ ११८ ॥

हे प्रभु ! तुम समर्थ हो, सब कुछ कर सकने के योग्य हो । मैं अपराधी तुम्हारी शरण में आया हूँ, हे स्वामी ! मेरी लाज रखना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ढीठ जीव को मुकरने का भी कोई स्थान नहीं अर्थात् जीव जो कुछ करता है, परमात्मा उसे जान लेता है । इसलिए मनुष्य चाहे कितना भी निर्लज्ज हो, किन्तु परमात्मा के सामने वह अपने कर्मों से मुकर नहीं सकता । हे परमात्मा ! तुम्हारा बड़ा प्रताप सुना है; सुना है कि तुम्हारे नाममात्र से करोड़ों पाप दूर हो जाते हैं ॥१॥ हमारा स्वभाव सदा भूल करनेवाला है, किन्तु तुम पतितों का उद्धार करने का विरद लिये हुए हो । हे करुणामय, कृपानिधि ! गुरु नानक के लिए तुम्हारा दर्शन ही प्राणदायी तत्त्व है ॥ २ ॥ २ ॥ ११८ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ ऐसी किरपा मोहि करहु । संतह चरण हमारो माथा नैन दरसु तनि धूरि परहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर को सबदु मेरै हीअरै बासै हरि नामा मन संगि धरहु । तसकर पंच निवारहु ठाकुर सगलो भरमा होमि जरहु ॥ १ ॥ जो तुम्ह करहु सोई भल मानै भावनु दुबिधा दूरि टरहु । नानक के प्रभ तुम ही दाते संत संगि ले मोहि उधरहु ॥ २ ॥ ३ ॥ ११९ ॥

मुझ पर, हे परमात्मा ! ऐसी कृपा करो कि हमारा मस्तक सदा सन्तों के चरणों पर झुका रहे, नयनों में प्रभु का स्वरूप बना रहे और शरीर पर सन्तों की चरणधूलि लगी रहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के शब्द मेरे हृदय में बसें और मन हमेशा हरि-नाम में रत रहे । हे प्रभु ! काम, क्रोध आदि पाँचों तस्करों से मुझे मुक्त कीजिए, और, हे स्वामी ! मेरे सब भ्रमों को जलाकर राख कर दो ॥ १ ॥ जो तुम करते हो वही मैं भला मानता हूँ, मेरी द्विविधाजन्य भावना दूर हो रही है । गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु ! तुम सर्वप्रदाता हो; सन्तों की संगति प्रदान कर मेरा उद्धार करो ॥ २ ॥ ३ ॥ ११९ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ ऐसी दीखिआ जन सिउ मंगा । तुम्हरो धिआनु तुम्हारो रंगा । तुम्हरी सेवा तुम्हारे अंगा ॥१॥ रहाउ ॥ जन की टहल संभाखनु जन सिउ ऊठनु बैठनु जन कै संगा । जन चर रज मुखि माथै लागी आसा पूरन अनत तरंगा ॥ १ ॥ जन पारब्रहम जा की निरमल महिमा जन के चरन तीरथ कोटि गंगा । जन की धूरि कीओ मजनु नानक जनम जनम के हरे कलंगा ॥ २ ॥ ४ ॥ १२० ॥

हे प्रभु ! तुम्हारा सेवक तुमसे ऐसी शिक्षा माँगता है कि वह सदैव तुम्हारे ही ध्यान में और तुम्हारे ही रंग में रत रह सके । (जीव की आकांक्षा है) वह सदा तुम्हारे सम्पर्क में रह सके ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तजनों की सेवा, उन्हीं से सम्भाषण, उनके निकट उठना-बैठना और उनका संसर्ग प्राप्त हो । यदि सन्तजनों की चरणधूलि मुँह-माथे लगे, तो मन की लहरों के कारण बनी अनेक आशाएँ सम्पूर्ण हों ॥ १ ॥ सन्तजन निर्मल महिमा के धारक स्वयं परब्रह्म से अभेद होते हैं, उनके चरण करोड़ों गंगा तीर्थ के समान हैं । गुरु नानक कहते हैं कि सन्तों की चरणधूलि में स्नान करने से जन्म-जन्म के पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ २ ॥ ४ ॥ १२० ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ जिउ भावै तिउ मोहि प्रतिपाल । पारब्रहम परमेसर सतिगुर हम बारिक तुम्ह पिता किरपाल ॥१॥ रहाउ ॥ मोहि निरगुण गुणु नाही कोई पहुचि न साकउ तुम्हरी घाल । तुमरी गति मिति तुमही जानहु जीउ पिंडु सभु तुमरो माल ॥ १ ॥ अंतरजामी पुरख सुआमी अनबोलत ही जानहु हाल । तनु मनु सीतलु होइ हमारो नानक प्रभ जीउ नदरि निहाल ॥ २ ॥ ५ ॥ १२१ ॥

हे परमात्मा ! तुम्हें जैसे रुचे वैसे मुझे संरक्षण दो । हे परब्रह्म, कृपानिधि, वाहिगुरु ! तुम हमारे प्रतिपालक हो और हम तुम्हारे बालक हैं ॥ १॥ रहाउ ॥ मैं गुणहीन हूँ, मेरे पास कोई गुण नहीं और न ही मैं तुम्हारे किये को मूल्यांकित कर सकता हूँ । तुम्हारी गति तुम स्वयं ही जानो, मेरे शरीर, प्राण सब तुम्हारे हाथ हैं ॥ १ ॥ मेरा प्रभु अन्तर्यामी है, बिना कहे ही सब हाल जान लेता है । नानकजी कहते हैं कि जब उसकी कृपादृष्टि पड़ती है, तो समूचा तन-मन शीतल हो जाता है ॥ २ ॥ ५ ॥ १२१ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ राखु सदा प्रभ अपनै साथ । तू हमरो प्रीतमु मन मोहनु तुझ बिनु जीवनु सगल अकाथ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रंक ते राउ करत खिन भीतरि प्रभु मेरो अनाथ को नाथ । जलत अगनि महि जन आपि उधारे करि अपुने दे राखे हाथ ॥ १ ॥ सीतल सुखु पाइओ मन त्रिपते हरि सिमरत स्रम सगले लाथ । निधि निधान नानक हरि सेवा अवर सिआनप सगल अकाथ ॥ २ ॥ ६ ॥ १२२ ॥

हे परमेश्वर ! मुझे सदा अपनी शरण में रखो । तुम मेरे सच्चे प्रियतम हो, मनमोहन हो, तुम्हारे बिना समूचा जीवन व्यर्थ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा प्रभु क्षण भर में ही रंक से राजा और अनाथ को सनाथ कर सकता है । अपने सेवकों की जलती आग में भी हाथ दे रक्षा करता है ॥ १ ॥ हरि का सिमरन करने से मन तृप्त होता है, समस्त कष्ट दूर होते हैं और पूर्णसुख की प्राप्ति होती है । गुरु नानक कहते हैं कि हरि-सेवा नवनिधि के समान है, अन्य सब चालाकियाँ बेकार हैं ॥२॥६॥१२२॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ अपने सेवक कउ कबहु न बिसारहु । उरि लागहु सुआमी प्रभ मेरे पूरब प्रीति गोबिंद बीचारहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पतित पावन प्रभ बिरदु तुम्हारो

हमरे दोख रिदै मत धारहु । जीवन प्रान हरि धनु सुखु तुम ही हउमै पटलु क्रिपा करि जारहु ॥ १ ॥ जल बिहून मीन कत जीवन दूध बिना रहनु कत बारो । जन नानक पिआस चरन कमलन्ह की पेखि दरसु सुआमी सुख सारो ॥ २ ॥ ७ ॥ १२३ ॥

हे प्रभुजी ! कृपा करके अपने सेवकों को कभी न विसारो । हे मेरे स्वामी ! मेरे हृदय से लग जाओ, तुम्हें पूर्व प्रीति की सौगन्ध है ॥१॥रहाउ॥ हे परमात्मा ! तुम पतितपावन कहलाते हो, इसलिए मेरे दोषों पर नजर मत डालो । हे हरि ! तुम मेरे जीवनप्राण हो, सुखदाता हो, इसलिए मेरे अभिमान के आवरण को जला दो ॥ १ ॥ जल के बिना मीन का जीवन या दूध के बिना बालक का जीवन असम्भव होता है, वैसे ही गुरु नानक को प्रभु के चरण-कमल की प्यास है, उसके बिना उनका जीवन सम्भव नहीं । स्वामी के दर्शन में ही उनका सब सुख निहित है ॥२॥ ७ ॥ १२३ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ आगै पाछै कुसलु भइआ । गुरि पूरै पूरी सभ राखी पारब्रहमि प्रभि कीनी मइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनि तनि रवि रहिआ हरि प्रीतमु दूख दरद सगला मिटि गइआ । सांति सहज आनद गुण गाए दूत दुसट सभि होए खइआ ॥ १ ॥ गुनु अवगुनु प्रभि कछु न बीचारिओ करि किरपा अपुना करि लइआ । अतुल बडाई अचुत अबिनासी नानकु उचरै हरि की जइआ ॥ २ ॥ ८ ॥ १२४ ॥

पूरे गुरु की कृपा के कारण जब जीव पर परब्रह्म की दया होती है, तो उसके आगे-पीछे के (परिवारों में भी) कुशल-आनन्द छा जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रियतम परमात्मा जब तन-मन में छा जाता है, तो सब दुःख-दर्द मिट जाते हैं । सुख-शान्ति प्राप्त होते हैं, आनन्द मिलता है; जीव प्रभु के गुण गाता है और यम के दुष्ट दूतों का क्षय हो जाता है ॥१॥ हे प्रभु ! मेरे गुणावगुण पर विचार मत कीजिए, कृपा करके अपनी शरण में ले लीजिए । तुम अच्युत अविनाशी और सर्वशक्तिमान् हो, गुरु नानक तुम्हारी ही जय-जयकार करते हैं ॥ २ ॥ ८ ॥ १२४ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ बिनु भै भगती तरनु कैसे । करहु अनुग्रहु पतित उधारन राखु सुआमी आप भरोसे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिमरनु नही आवत फिरत मद मावत बिखिआ राता सुआन जैसे । अउध बिहावत अधिक मोहावत पाप कमावत बुडे ऐसे ॥ १ ॥ सरनि दुख भंजन पुरख निरंजन साधू संगति

रवणु जैसे। केसव कलेस नास अघखंडन नानक जीवत दरस दिसे ॥ २ ॥ ६ ॥ १२५ ॥

तुम्हारे प्रीतिजन्य भय के बिना भक्ति या मोक्ष सम्भव नहीं है। हे पतित-उद्धारन ! हम पर अनुग्रह कीजिए और अपना वर्द्धहस्त हमारे मस्तक पर रखिये ॥१॥रहाउ॥ जो जीव प्रभु का सिमरन छोड़कर विषय-वासनाओं में उन्मत्त हुआ फिरता है, वह श्वान के समान है, उसकी आयु बीत रही है, वह पापों के मोह में डूब रहा है ॥ १ ॥ जो जीव दुःख-भञ्जन मायातीत प्रभु की शरण लेते हैं, वे सत्संगति में रमण करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा उनके पाप-क्लेश नष्ट कर देता है और उन्हें जीते-जी प्रभु के दर्शन प्राप्त हो जाते हैं ॥ २ ॥ ९ ॥ १२५ ॥

रागु बिलावलु महला ५ दुपदे घरु ९

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ आपहि मेलि लए। जब ते सरनि तुमारी आए तब ते दोख गए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तजि अभिमानु अरु चिंत बिरानी साधह सरन पए। जपि जपि नामु तुम्हारो प्रीतम तन ते रोग खए ॥ १ ॥ महा मुगध अजान अगिआनी राखे धारि दए। कहु नानक गुरु पूरा भेटिओ आवन जान रहे ॥ २ ॥ १ ॥ १२६ ॥

हे परमात्मा ! जबसे हमने तुम्हारी शरण ली है, हमारे सब दोष दूर हो गये हैं और तुमने हमें अपने संग मिला लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अभिमान और परायी चिन्ताओं को छोड़कर सन्तों की शरण ली है, और, हे प्रियतम ! नित्य तुम्हारा नाम जपकर हमारे कष्टों का क्षय हो गया है ॥ १ ॥ तुमने मूर्खता, अपरिचय तथा अज्ञान में संलग्न जीवों को दयावश अपनी शरण में लिया है। गुरु नानक कहते हैं कि पूर्णगुरु का मिलाप हो जाने से जन्म-मरण का चक्र टूट गया है ॥ २ ॥ १ ॥ १२६ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ जीवउ नामु सुनी। जउ सुप्रसंन भए गुर पूरे तब मेरी आस पुनी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पीर गई बाधी मनि धीरा मोहिओ अनद धुनी। उपजिओ चाउ मिलन प्रभ प्रीतम रहनु न जाइ खिनी ॥ १ ॥ अनिक भगत अनिक जन तारे सिमरहि अनिक मुनी। अंधुले टिक निरधन धनु पाइओ प्रभ नानक अनिक गुनी ॥ २ ॥ २ ॥ १२७ ॥

मुझ पर गुरु की कृपा हो जाने से मेरी आशाएँ पूर्ण हो गयी हैं और मैं नित्य नाम और गुरुवाणी को श्रवण कर जीवित हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरुवाणी की अनाहत ध्वनि में मग्न मेरे मन को धैर्य मिला है और मेरी पीड़ा का नाश हो गया है। मन में प्रभु-मिलन के लिए चाव पैदा हुआ है और अब प्रियतम प्रभु के मिलाप के बिना जीना कठिन हो रहा है ॥१॥ स्मरण करने से अनेक भक्त, सेवक और ऋषि-मुनि संसार-सागर से पार हो गये। गुरु नानक कहते हैं कि उस गुणागार प्रभु का सहारा पाकर अन्धे को सहारा और निर्धन को धन प्राप्त हो जाता है (यहाँ अन्धा अज्ञानी के लिए तथा निर्धन अध्यात्म से वंचित को कहा गया है) ॥ २ ॥ २ ॥ १२७ ॥

रागु बिलावलु महला ५ घरु १३ पड़ताल

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मोहन नीद न आवै हावै हार कजर बसत्र अभरन कीने। उडीनी उडीनी उडीनी। कब घरि आवै री ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सरनि सुहागनि चरन सीसु धरि। लालनु मोहि मिलावहु। कब घरि आवै री ॥ १ ॥ सुनहु सहेरी मिलन बात कहउ सगरो अहं मिटावहु तउ घर ही लालनु पावहु। तब रस मंगल गुन गावहु। आनद रूप धिआवहु। नानकु दुआरै आइओ। तउ मै लालनु पाइओ री ॥ २ ॥ मोहन रूपु दिखावै। अब मोहि नीद सुहावै। सभ मेरी तिखा बुझानी। अब मै सहजि समानी। मीठी पिरहि कहानी। मोहनु लालनु पाइओ री ॥ रहाउ दूजा ॥ १ ॥ १२८ ॥

हे मेरे प्यारे! मालाएँ पहनने, काजल और वस्त्राभूषण पहनकर सुन्दर शृङ्गार बनाने पर भी जब तुम्हारा विरह बना रहता है, तो वियोग की आहों में मुझे नींद नहीं आती। मैं तुम्हारी इन्तजार में उदास, बहुत उदास हूँ; मेरा प्रियतम कब घर आयेगा? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं अन्य सुहागिनों (प्रियतम प्रभु से मिलाप प्राप्त करनेवाली जीवात्माओं) के चरणों में शिर धरकर विनती करती हूँ कि मुझे मेरा प्रियतम मिला दें ॥ १ ॥ (उत्तर मिलता है कि) हे सहेली! सुनो, मैं तुम्हें पति-मिलन का ढंग बताती हूँ। तुम अपना सब अहम् त्याग दो, तो अपने भीतर ही प्रभु-पति को प्राप्त कर लोगी। तब पति-मिलन के रस में लीन होकर खुशियों के गीत गीत गाओगी। अतः आनन्दरूप परमात्मा के गुण

गाओ, उसी के द्वार पर पुकार करो, तभी तुम्हें प्रभु-पति का दर्शन होगा ॥ २ ॥ उसके मोहक रूप का दर्शन हुआ है, तो अब मुझे नींद सुहाती है। मेरी सब तृष्णा दूर हो गयी है। अब मैं स्थिर सुख में लीन हूँ। प्रियतम की कथा मुझे मीठी लगती है और अब मैंने प्यारे पति से मिलाप कर लिया है ॥ रहाउ दूजा ॥ १ ॥ १२८ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ मोरी अहं जाइ दरसन पावत हे। राचहु नाथ ही सहाई संतना। अब चरन गहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आहे मन अवरु न भावै चरनावै चरनावै उलझिओ अलि मकरंद कमल जिउ। अनरस नही चाहै एकै हरि लाहै ॥ १ ॥ अन ते टूटीऐ रिख ते छूटीऐ। मन हरि रस घूटीऐ संगि साधू उलटीऐ। अन नाही नाही रे। नानक प्रीति चरन चरन हे ॥ २ ॥ २ ॥ १२९ ॥

परमात्मा के दर्शन करने से ही मेरा अहम् नष्ट हो जाता है। सन्तों के सहायक वाहिगुरु के चरण पकड़कर उन्हीं में रत हो जाओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा मन उसी के चरण-कमलों में अटका है; उसे और कुछ नहीं भाता, वह बार-बार चरणों की ओर उसी तरह लपकता है, जैसे भँवरा कमल का रस-पान करने के लिए मँड़राता है। मेरा मन भी और कोई रस नहीं चाहता, केवल हरि-रस का इच्छुक है ॥१॥ द्वैतभाव के मिटाने से धर्मराज के हिसाब-किताब से छूटा जा सकता है। साधु-संगति में मन को माया की ओर से उलटकर हरि-रस में विभोर किया जा सकता है। गुरु नानक पुकारकर कहते हैं कि अन्य किसी ओर भी आकर्षण नहीं होना चाहिए, केवल परमात्मा के चरणों में ही प्रीति हो ॥ २ ॥ २ ॥ १२९ ॥

रागु बिलावलु महला ९ दुपदे

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ दुखहरता हरि नामु पछानो। अजामलु गनका जिह सिमरत मुकति भए जीअ जानो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गज की त्रास मिटी छिनहू महि जब ही रामु बखानो। नारद कहत सुनत ध्रूअ बारिक भजन माहि लपटानो ॥ १ ॥ अचल अमर निरभै पदु पाइओ जगत जाहि हैरानो। नानक कहत भगत रछक हरि निकटि ताहि तुम मानो ॥ २ ॥ १ ॥

हे जीवात्माओ ! हरि-नाम को पहचानो, वही एकमात्र दुःखहर्ता

शक्ति है। याद रखो, उसी का सिमरन करते हुए अजामिल और गणिका जैसे पापी मुक्त हो गये थे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गजराज ने ज्योंही परमात्मा का नाम पुकारा, तभी वह त्रासमुक्त हो गया था। नारद मुनि का उपदेश सुनकर बालक ध्रुव ने भी भजन में मन लगाया था ॥ १ ॥ उसने नाप-जाप के प्रताप से ऐसा अचल और अमरपद प्राप्त किया कि आज सारा संसार उस पर आश्चर्यचकित है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु भक्त-रक्षक है, तुम सदैव उसे अङ्ग-सङ्ग समझो (इस पद में गुरु तेग़बहादुरजी ने पौराणिक भक्तों की गाथाओं की ओर संकेत करते हुए हरि-नाम का महत्त्व स्थापित किया है।) ॥२॥ १॥

॥ बिलावलु महला ९ ॥ हरि के नाम बिना दुखु पावै । भगति बिना सहसा नह चूकै गुर इह भेदु बतावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहा भइओ तीरथ ब्रत कीए राम सरनि नही आवै । जोग जग निहफल तिह मानउ जो प्रभ जसु बिसरावै ॥ १ ॥ मान मोह दोनो कउ परहरि गोबिंद के गुन गावै । कहु नानक इह बिधि को प्रानी जीवन मुकति कहावै ॥ २ ॥ २ ॥

हरि-नाम के जाप के बिना जीव दुःख प्राप्त करता है। भक्ति के बिना संशय का नाश नहीं होता, यह रहस्य गुरु से जाना जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि राम की शरण नहीं ली, तो तीर्थ-व्रत करने से क्या लाभ ? उस जीव के योगसाधन और यज्ञकर्म आदि बेकार हैं, जिसने परमात्मा की कीर्ति भुला दी है ॥ १ ॥ जीव को मान और मोह दोनों का त्याग कर परमात्मा का गुण गाना चाहिए। गुरु-कथन है कि यही विधि जीव को जीवन-मुक्ति का पद प्रदान करती है ॥ २ ॥ २ ॥

॥ बिलावलु महला ९ ॥ जा मै भजनु राम को नांही । तिह नर जनमु अकारथ खोइआ यह राखहु मन माही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तीरथ करै ब्रत फुनि राखै नह मनूआ बसि जा को । निहफल धरम ताहि तुम मानो साचु कहत मै या कउ ॥ १ ॥ जैसे पाहनि जल महि राखिओ भेदै नाहि तिहि पानी । तैसे ही तुम ताहि पछानो भगति हीन जो प्रानी ॥ २ ॥ कल मै मुकति नाम ते पावत गुर यह भेदु बतावै । कहु नानक सोई नरु गरूआ जो प्रभ के गुन गावै ॥ ३ ॥ ३ ॥

जो लोग राम-भजन नहीं करते उन लोगों का जन्म व्यर्थ है, ऐसा निश्चय मान लो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो लोग तीर्थ करते हैं, व्रत-उपवास

में भी कष्ट उठाते हैं, तो भी यदि उनका मन वश में नहीं है तो उनका समूचा धर्मविधान निष्फल है, यह मेरा अनुभूत सत्य है ॥ १ ॥ जैसे यदि पत्थर को पानी में रखा जाय तो पानी उसके भीतरी भाग को नहीं भिगो पाता; ठीक वैसे ही तुम भक्तिहीन प्राणियों को समझो (वे भी बाहरी आडम्बर तो करते हैं, किन्तु पत्थर की तरह भक्ति उनके भीतर प्रभाव नहीं डालती) ॥ २ ॥ गुरु ने यह रहस्य स्पष्ट कर दिया है कि कलियुग में बिना प्रभु-नाम के मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती; इसलिए गुरु-कथन है कि प्रभु का गुण गानेवाला मनुष्य ही सही महत्त्व को अर्जित करता है ॥ ३ ॥ ३ ॥

बिलावलु असटपदीआ महला १ घरु १०

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ निकटि वसै देखै सभु सोई । गुरमुखि विरला बूझै कोई । विणु भै पइऐ भगति न होई । सबदि रते सदा सुखु होई ॥ १ ॥ ऐसा गिआनु पदारथु नामु । गुरमुखि पावसि रसि रसि मानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गिआनु गिआनु कथै सभु कोई । कथि कथि बादु करे दुखु होई । कथि कहणै ते रहै न कोई । बिनु रस राते मुकति न होई ॥ २ ॥ गिआनु धिआनु सभु गुर ते होई । साची रहत साचा मनि सोई । मनमुख कथनी है परु रहत न होई । नावहु भूले थाउ न कोई ॥ ३ ॥ मनु माइआ बंधिओ सर जालि । घटि घटि बिआपि रहिओ बिखु नालि । जो आंजै सो दीसै कालि । कारजु सीधो रिदै सम्हालि ॥ ४ ॥ सो गिआनी जिनि सबदि लिव लाई । मनमुखि हउमै पति गवाई । आपे करतै भगति कराई । गुरमुखि आपे दे वडिआई ॥ ५ ॥ रैणि अंधारी निरमल जोति । नाम बिना झूठे कुचल कछोति । बेदु पुकारै भगति सरोति । सुणि सुणि मानै वेखै जोति ॥ ६ ॥ सासत्र सिम्रिति नामु द्रिड़ामं । गुरमुखि सांति ऊतम करामं । मनमुखि जोनी दूख सहामं । बंधन तूटे इकु नामु वसामं ॥ ७ ॥ मंने नामु सची पति पूजा । किसु वेखा नाही को दूजा । देखि कहउ भावै मनि सोइ । नानकु कहै अवरु नही कोइ ॥ ८ ॥ १ ॥

परमात्मा सबसे निकट रहता है और सब कुछ देखता है । किन्तु

यह तथ्य गुरु के आदेशों पर चलनेवाला (गुरुमुख) कोई विरला जीव ही समझ सकता है। मन में प्रभु के भय के बिना भक्ति नहीं होती और जो जीव शब्द में लीन हो जाते हैं, वे सदा सुखी होते हैं॥ १॥ प्रभु का नाम ज्ञानदायी पदार्थ है, जिसे गुरु के द्वारा प्राप्त करके ही जीवनानन्द प्राप्त होता॥ १॥ रहाउ॥ सब लोग ज्ञान की चर्चा करते हैं; वाद-विवाद में दुःख उठाते हैं। कोरी बातें करने से कोई नहीं चूकता। (किन्तु सच यह है कि) नाम के रस में लीन हुए बिना मुक्ति सम्भव नहीं है॥ २॥ ज्ञान-ध्यान की उपलब्धि सच्चे गुरु से होती है। प्रभु को मन में बसा लेने से ही हमारे रहन-सहन में सत्य-तत्त्व का समावेश होता है। मनमुख जन व्यर्थ की बातें करते हैं, जीवन में सत्य को नहीं अपनाते। नाम को भुला देनेवाले के लिए कोई स्थान नहीं है॥ ३॥ माया ने संसार रूपी तालाब के जाल में मन को फाँस रखा है। हर जीव के हृदय में विषय रूपी विष-सहित यह जाल बिछा हुआ है। जो पैदा होता है, वह काल के अधीन रहता है। जो लोग दिल से वाहिगुरु को याद करते हैं, उनका कार्य सिद्ध होता है॥ ४॥ जो शब्द में एकाग्रचित्त होता है, वह ज्ञानी होता है (यहाँ ज्ञानी भक्त की महिमा कही गयी है)। मनमुख जीव अभिमानवश अपनी सार्थकता खो देता है। परमात्मा की इच्छानुसार ही भक्ति की जा सकती है। वह स्वयं गुरुमुख को बड़ाई देता है॥ ५॥ आयु रूपी रात्रि अन्धकारमयी है, इसमें वाहिगुरु की निर्मल ज्योति है। वाहिगुरु के नाम के बिना सब जीव झूठे, मलिन और अछूत हैं। वेदों में भक्ति का यशोगान हुआ है। इस तथ्य को सुन-सुनकर जो स्वीकार कर लेता है, वह वाहिगुरु की ज्योति का दर्शन करता है॥ ६॥ स्मृतियाँ, शास्त्रादि धार्मिक पुस्तकें भी नाम की महिमा कहती हैं। गुरु के द्वारा यह उत्तम कर्म करने से शान्ति मिलती है। मनमुख जीव आवागमन के चक्र में दुःख सहन करते हैं; किन्तु जो मन में नाम को बसा लेते हैं, उनके सब बन्धन टूट जाते हैं॥ ७॥ प्रभु-नाम की मान्यता ही सच्ची पूजा-प्रतिष्ठा है, और किसे देखूँ? दूसरा तो कोई है ही नहीं। सब कुछ देख-सोचकर मैं कहता हूँ कि परमात्मा ही हमेशा मन में भाता है। (गुरु नानक कहते हैं कि) उसके बिना दूसरा कोई नहीं॥ ८॥ १॥

॥ बिलावलु महला १ ॥ मन का कहिआ मनसा करै। इहु मनु पुंनु पापु उचरै। माइआ मदि माते त्रिपति न आवै। त्रिपति मुकति मनि साचा भावै॥ १॥ तनु धनु कलतु सभु देखु अभिमाना। बिनु नावै किछु संगि न जाना॥ १॥ रहाउ॥ कीचहि रस भोग खुसीआ मन केरी। धनु लोकां तनु भसमै

ढेरी । खाकू खाकु रलै सभु फैलु । बिनु सबदै नही उतरै मैलु ॥ २ ॥ गीत राग घन ताल सि कूरे । त्रिहु गुण उपजै बिनसै दूरे । दूजी दुरमति दरदु न जाइ । छूटै गुरमुखि दारू गुण गाइ ॥ ३ ॥ धोती ऊजल तिलकु गलि माला । अंतरि क्रोधु पड़हि नाटसाला । नामु विसारि माइआ मदु पीआ । बिनु गुर भगति नाही सुखु थीआ ॥४॥ सूकर सुआन गरधभ मंजारा । पसू मलेछ नीच चंडाला । गुर ते मुहु फेरे तिन्ह जोनि भवाईऐ । बंधनि बाधिआ आईऐ जाईऐ ॥ ५ ॥ गुर सेवा ते लहै पदारथु । हिरदै नामु सदा किरतारथु । साची दरगह पूछ न होइ । माने हुकमु सीझै दरि सोइ ॥ ६ ॥ सतिगुरु मिलै त तिस कउ जाणै । रहै रजाई हुकमु पछाणै । हुकमु पछाणि सचै दरि वासु । काल बिकाल सबदि भए नासु ॥ ७ ॥ रहै अतीतु जाणै सभु तिस का । तनु मनु अरपै है इहु जिसका । ना ओहु आवै ना ओहु जाइ । नानक साचे साचि समाइ ॥ ८ ॥ २ ॥

जीव जो मन में आता है वही करता है । मन से ही कर्मों के साथ पाप-पुण्य जोड़ लेता है । माया के अभिमान में मस्त होने पर उसे कभी सन्तुष्टि नहीं होती । सत्यस्वरूप परमात्मा को मन में बसा लेने से ही तृप्ति और मुक्ति मिल जाती है ॥ १ ॥ देख लो कि तन-धन और स्त्री सब अभिमान है । नाम के अतिरिक्त साथ कुछ नहीं जाता ॥१॥रहाउ॥ भोग-विलास और मन की खुशियाँ व्यर्थ हैं । धन लोग सम्हाल लेते हैं और शरीर जलकर राख हो जाता है । समूचा प्रसार मिट्टी है, मिट्टी में मिल जाता है; गुरु के शब्द के बिना वासनाओं का मैल नहीं उतरता ॥ २ ॥ प्रभु-प्यार के बिना राग, संगीत और नाद सब मिथ्या हैं । तीनों गुण उपजते-मिटते रहते हैं । द्वैतभाव वाली कुमति में रहते दुःख दूर नहीं होते । केवल गुरु के द्वारा प्रभु-गुणगान रूपी औषध से ही ये कष्ट दूर होते हैं ॥ ३ ॥ उजली धोती, गले में जनेऊ और माथे तिलक लगा लेने से भी जब तक मन में क्रोध रहता है, उनके सब कथन नाट्य-शाला में उच्चरित संवाद जैसे लगते हैं । नाम को विस्मृत करके जो लोग माया की मदिरा पीते हैं, उन्हें गुरु-भक्ति के बिना कभी सुख नहीं होता है ॥ ४ ॥ गुरु से मुँह फेर लेनेवाले आवागमन के बन्धन में बँधकर नित्य जन्म-मरण में पड़ते और सूअर, कुत्ते, गधे और बिल्ले आदि की योनियों में भ्रमते रहते हैं । वे पशु नीच, म्लेच्छ और चाण्डाल जैसा जीवन जीते हैं ॥ ५ ॥ गुरु की सेवा करने से सच्चा नाम-पदार्थ प्राप्त

होता है और हृदय में सदा जीवों को कृतार्थ करता है। परमात्मा के दरबार में उस पर कोई आपत्ति नहीं होती, हुक्म के अनुसार आचरण करने वाला उसके दरबार में सफल होता है ॥ ६ ॥ सतगुरु का मिलाप होने से परमात्मा का ज्ञान प्राप्त होता है। जो जीव प्रभु की इच्छा में रहता और हुक्म पहचानता है, वह प्रभु के दरबार में प्रतिष्ठित होता है और गुरु के शब्दों से उसका जन्म-मरण मिट जाता है ॥ ७ ॥ प्रभु को पहचानने से जीव में त्यागभावना आ जाती है और वह अपने तन-मन को उसी पर अर्पित कर देता है, जिसने वह बनाया है। गुरु नानक कहते हैं कि तब उसका आवागमन मिट जाता है और वह एकमात्र सत्य में प्रवेश करता है ॥ ८ ॥ २ ॥

बिलावलु महला ३ असटपदी घरु १०

१ ओं सतिगुर प्रसादि। जगु कऊआ मुखि चुंच गिआनु। अंतरि लोभु झूठु अभिमानु। बिनु नावै पाजु लहगु निदानि ॥१॥ सतिगुर सेवि नामु वसै मनि चीति। गुरु भेटे हरि नामु चेतावै बिनु नावै होर झूठु परीति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरि कहिआ सा कार कमावहु। सबदु चीन्हि सहज घरि आवहु। साचै नाइ वडाई पावहु ॥ २ ॥ आपि न बूझै लोक बुझावै। मन का अंधा अंधु कमावै। दरु घरु महलु ठउरु कैसे पावै ॥ ३ ॥ हरि जीउ सेवीऐ अंतरजामी। घट घट अंतरि जिस की जोति समानी। तिसु नालि किआ चलै पहनामी ॥ ४ ॥ साचा नामु साचै सबदि जानै। आपै आपु मिलै चूकै अभिमानै। गुरमुखि नामु सदा सदा वखानै ॥ ५ ॥ सतिगुरि सेविऐ दूजी दुरमति जाई। अउगण काटि पापा मति खाई। कंचन काइआ जोती जोति समाई ॥ ६ ॥ सतिगुरि मिलिऐ वडी वडिआई। दुखु काटै हिरदै नामु वसाई। नामि रते सदा सुखु पाई ॥ ७ ॥ गुरमति मानिआ करणी सारु। गुरमति मानिआ मोख दुआरु। नानक गुरमति मानिआ परवारै साधारु ॥ ८ ॥ १ ॥ ३ ॥

संसार कौए के समान है, इसकी चोंच रूपी मुँह में ज्ञान है अर्थात् ज्ञान की बातें तो करता है, किन्तु हृदय में कोई प्रभाव नहीं। मन में लोभ, झूठ और अभिमान रहता है। नाम के बिना आखिर पर्दा खुल ही जाता है और झूठ प्रकट हो जाता है ॥ १ ॥ सतगुरु की सेवा करने से

मन में नाम का निवास होता है। गुरु के मिलने से हरि-नाम की चेतना मिलती है। हरि-नाम के बिना और सब प्रकार की प्रतीति मिथ्या होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के कथनानुसार कर्म कीजिए। शब्द को पहचानकर जीव सहजावस्था को प्राप्त होता है और प्रभु-नाम की महिमा प्राप्त करता है ॥ २ ॥ मनमुख जीव न स्वयं कुछ समझता है और न दूसरों को ज्ञान दे सकता है। वह मन से अन्धा होता है, इसलिए अन्धे कर्म करता है। ऐसा जीव परमात्मा के दरबार में क्योंकर स्थान पा सकता है ? ॥ ३ ॥ अन्तर्यामी हरि की सेवा कीजिए। हरि की ज्योति घट-घट में समायी हुई है। उस अन्तर्यामी से कोई तथ्य छिपाया नहीं जा सकता ॥ ४ ॥ गुरु की सच्ची वाणी के द्वारा प्रभु जाना जाता है; जीव उसी में रत हो जाता है और उसका अभिमान निरस्त हो जाता है। जीव गुरु के माध्यम से सदा-सदा प्रभु-नाम का बखान करने लगता है ॥ ५ ॥ सतगुरु की सेवा में आने से द्वैत की कुबुद्धि नष्ट हो जाती है। अवगुण कट जाते हैं और पापों-भरी मति दूर हो जाती है। शरीर सोने जैसा नीरोग और उत्तम हो जाता है, आत्मा प्रेमपूर्वक परमात्मा की ज्योति में विलीन हो जाता है ॥ ६ ॥ सतगुरु के मिलाप से बड़ाई मिलती है, दुःख कट जाते हैं, और हृदय में नाम स्थिर होता है। नाम में प्रेम करनेवाले सदा सुख पाते हैं ॥ ७ ॥ गुरु के उपदेश मानने से मनुष्य के कर्म पवित्र हो जाते हैं, मुक्ति मिलती है, और (गुरु नानक कहते हैं कि) परिवार तथा संगी-साथियों का सुधार होता है ॥ ८ ॥ १ ॥ ३ ॥

बिलावलु महला ४ असटपदीआ घरु ११

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ आपै आपु खाइ हउ मेटै अनदिनु हरि रस गीत गवईआ। गुरमुखि परचै कंचन काइआ निरभउ जोती जोति मिलईआ ॥१॥ मै हरि हरि नामु अधारु रमईआ। खिनु पलु रहि न सकउ बिनु नावै गुरमुखि हरि हरि पाठ पड़ईआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एकु गिरहु दस दुआर है जा के अहिनिसि तसकर पंच चोर लगईआ। धरमु अरथु सभु हिरि ले जावहि मनमुख अंधुले खबरि न पईआ ॥ २ ॥ कंचन कोटु बहु माणकि भरिआ जागे गिआन तति लिव लईआ। तसकर हेरू आइ लुकाने गुर कै सबदि पकड़ि बंधि पईआ ॥ ३ ॥ हरि हरि नामु पोतु बोहिथा खेवटु सबदु गुरु पारि लंघईआ। जमु जागाती नेड़ि न आवै ना को तसकरु चोरु लगईआ ॥ ४ ॥ हरि

गुण गावै सदा दिनु राती मै हरि जसु कहते अंतु न लहीआ। गुरमुखि मनूआ इकतु घरि आवै मिलउ गोपाल नीसानु बजईआ ॥ ५ ॥ नैनी देखि दरसु मनु त्रिपतै स्रवन बाणी गुर सबदु सुणईआ। सुनि सुनि आतमदेव है भीने रसि रसि राम गोपाल रवईआ ॥ ६ ॥ त्रैगुण माइआ मोहि विआपे तुरीआ गुणु है गुरमुखि लहीआ। एक द्रिसटि सभ सम करि जाणै नदरी आवै सभु ब्रहमु पसरईआ ॥ ७ ॥ राम नामु है जोति सबाई गुरमुखि आपे अलखु लखईआ। नानक दीन दइआल भए है भगति भाइ हरि नामि समईआ ॥ ८ ॥ १ ॥ ४ ॥

अहंभाव को मिटा दे तथा अभिमान को नष्ट कर दे, तो रात-दिन जीव हरि-रस में पगा रह सकता है। गुरु के द्वारा मन में विश्वास हो जाने से शरीर कञ्चन जैसा अरोग्य शुद्ध हो जाता है और निर्भय होकर मनुष्य की ज्योति परमात्मा की ज्योति में मिल जाती है ॥ १ ॥ मुझे एकमात्र सर्वव्यापक हरि-नाम का ही सहारा है। मैं एक क्षण के लिए भी गुरु द्वारा दी गयी शिक्षानुसार नाम-विहीन होकर नहीं रह सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह शरीर रूपी एक घर है, दस इन्द्रियाँ इसके द्वार हैं और काम-क्रोधादि पाँच चोर इसे दिन-रात लूटते रहते हैं (भाव यह है कि विषय-विकार में पड़ा शरीर क्षय हो रहा है)। ये चोर धर्म, अर्थ आदि सब लूट लेते हैं और अन्धे मनमुख जीव को खबर भी नहीं पड़ती ॥ २ ॥ शरीर स्वर्ण-दुर्ग है, यह अनेक रत्नों से भरा हुआ है; ज्ञानी जीव इस सत्य को जानकर चोरों से बचने के लिए नित्य जाग्रत् रहता है। चोर-लुटेरे आदि आकर इसमें छिपते तो हैं, किन्तु गुरु के शब्दों के सहारे वह जीव उन्हें पकड़कर बन्दी बना लेता है ॥ ३ ॥ (संसार-सागर से पार होने के लिए) हरि का नाम जहाज है और गुरु का शब्द पार लगानेवाला मल्लाह है। इस जहाज के निकट चुंगी लेनेवाला धर्मराज (कर्मों का हिसाब चुकानेवाला) भी नहीं आता, काम-क्रोध आदि लुटेरे तो यों ही डरकर भाग जाते हैं ॥ ४ ॥ मैं रात-दिन हरि का यशोगान करता हूँ, उसके गुणों का अन्त किसी ने नहीं पाया। गुरु के द्वारा संयत किया जाने पर मन पलटकर एकाग्र होता है और परमात्मा की महिमा गान करता है ॥ ५ ॥ नयनों से प्रभु का दर्शन करने से मन तृप्त हो जाता है और गुरुवाणी के श्रवण से कान पवित्र होते हैं। शब्द सुन-सुनकर आत्मा प्रसन्न होता है और उसी आनन्द में हरि का स्मरण करता है ॥ ६ ॥ तीन गुणों की स्थिति में माया-मोह चिपका रहता है; चौथी अवस्था गुरु के द्वारा प्राप्त होती है। उस अवस्था में पहुँचकर सब एक समान दीख

पड़ते हैं और परब्रह्म से साक्षात्कार होता है ॥ ७ ॥ राम-नाम की अनबुझ ज्योति जल उठती है और गुरु के द्वारा अदृश्य प्रभु भी दीख पड़ने लगता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि हम दीनों पर दयालु है और हम भक्तिभाव के माध्यम से हरि-नाम में समा गये हैं ॥ ८ ॥ १ ॥ ४ ॥

॥ बिलावलु महला ४ ॥ हरि हरि नामु सीतल जलु धिआवहु हरि चंदन वासु सुगंध गंधईआ। मिलि सत संगति परम पदु पाइआ मै हिरड पलास संगि हरि बुहीआ ॥ १ ॥ जपि जगंनाथ जगदीस गुसईआ। सरणि परे सेई जन उबरे जिउ प्रहिलाद उधारि समईआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भार अठारह महि चंदनु ऊतम चंदन निकटि सभ चंदनु हुईआ। साकत कूड़े ऊभ सुक हूए मनि अभिमानु विछुड़ि दूरि गईआ ॥ २ ॥ हरि गति मिति करता आपे जाणै सभ बिधि हरि हरि आपि बनईआ। जिसु सतिगुरु भेटे सु कंचनु होवै जो धुरि लिखिआ सु मिटै न मिटईआ ॥ ३ ॥ रतन पदारथ गुरमति पावै सागर भगति भंडार खुल्हईआ। गुरचरणी इक सरधा उपजी मै हरि गुण कहते त्रिपति न भईआ ॥ ४ ॥ परम बैरागु नित नित हरि धिआए मै हरि गुण कहते भावनी कहीआ। बार बार खिनु खिनु पलु कहीऐ हरि पारु न पावै परै परईआ ॥ ५ ॥ सासत बेद पुराण पुकारहि धरमु करहु खटु करम द्रिड़ईआ। मनमुख पाखंडि भरमि विगूते लोभ लहरि नाव भारि बुडईआ ॥ ६ ॥ नामु जपहु नामे गति पावहु सिम्रिति सासत्र नामु द्रिड़ईआ। हउमै जाइ त निरमलु होवै गुरमुखि परचै परम पदु पईआ ॥ ७ ॥ इहु जगु वरनु रूपु सभु तेरा जितु लावहि से करम कमईआ। नानक जंत वजाए वाजहि जितु भावै तितु राहि चलईआ ॥८॥२॥५॥

हरि का नाम जल के समान है, जिसमें स्नान करने से शीतलता मिलती है; प्रभु का नाम स्मरण करने से शरीर में चन्दन जैसी सुगन्ध वस जाती है और सब कुछ सुवासित हो उठता है। सत्संगति में मिलकर जीव उसी प्रकार परमपद को प्राप्त करता है, जैसे (चन्दन के निकट उगे) ढाक, एरण्ड के पेड़ भी सुगन्धित हो जाते हैं ॥ १ ॥ हे जीव ! संसार के मालिक उस स्वामी का नाम जप, जिसकी शरण लेने से मनुष्य उसी प्रकार उबरता है, जैसे प्रह्लाद का उद्धार हो गया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ समूची वनस्पति (अठारह भार) में चन्दन उत्तम पेड़ है, क्योंकि उसके निकट

रहनेवाली प्रत्येक वस्तु से चन्दन-समान गन्ध आने लगती है। मायाधारी, मिथ्या व्यवहारी लोग अपने अहंकार के कारण खड़े-खड़े ही सूख जाते हैं और हरि से बिछुड़कर दूर चले जाते हैं ॥ २ ॥ सृष्टि का सृजनहार परमात्मा सबको जानता है और सब प्राकृतिक नियम-विधानों का नियन्ता है। जिन जीवों को सतगुरु प्राप्त हो जाता, वे कञ्चन-समान पावन हो जाते हैं— कर्मालेख कभी नहीं मिटता ॥ ३ ॥ गुरु के आदेशानुसार आचरण करने से नाम-रत्न प्राप्त होता है और भक्ति का भण्डार खुल जाता है। गुरु के चरणों में जब श्रद्धा उपजती है, तो उसका गुणगान करते मुझे तृप्ति नहीं होती ॥ ४ ॥ हरि की नित्य आराधना करने से उच्चतम वैराग्य पैदा होता है और हरि का गुणगान करते हुए जीव अपने मन की श्रद्धा ही प्रकट करता है। बार-बार और क्षण-क्षण परमात्मा की महिमा कहने से भी हरि के गुणों का अन्त नहीं होता, वे अनन्त हैं और परे से परे हैं ॥ ५ ॥ वेद-शास्त्र और पुराणों में बार-बार धर्म कमाने और षट्कर्म करने को कहा गया है, किन्तु मनमुखी लोग अज्ञान तथा लोभ के समुद्र में अपनी जीवन-नौका को डुबा लेते हैं ॥ ६ ॥ इसलिए प्रभु का नाम जपो, नाम से ही गति मिलती है; शास्त्रों, स्मृतियों ने भी नाम की महिमा का कथन किया है। नाम जपने से अभिमान नष्ट होता है, जीव निर्मल हो जाता है और गुरु के माध्यम से मन सन्तुष्ट होकर परमपद को प्राप्त करता है ॥ ७ ॥ यह सब संसार, हे प्रभु ! तुम्हारा ही रूप है; जिससे चाहते हो, सही कर्म करवा लेते हो। गुरु नानक कहते हैं कि हम मनुष्य केवल वादनयन्त्र के ही समान हैं, जो परमात्मा के बजाने से ही ध्वनित होते हैं अर्थात् जहाँ वह चलाता है वहीं चलते हैं ॥ ८ ॥ २ ॥ ५ ॥

॥ बिलावलु महला ४ ॥ गुरमुखि अगम अगोचरु धिआइआ हउ बलि बलि सतिगुर सति पुरखईआ। राम नामु मेरै प्राणि वसाए सतिगुर परसि हरि नामि समईआ ॥ १ ॥ जन की टेक हरि नामु टिकईआ। सतिगुर की धर लागा जावा गुर किरपा ते हरि दरु लहीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इहु सरीरु करम की धरती गुरमुखि मथि मथि ततु कढईआ। लालु जवेहर नामु प्रगासिआ भांडै भाउ पवै तितु अईआ ॥ २ ॥ दासनि दास दास होइ रहीऐ जो जन राम भगत निज भईआ। मनु बुधि अरपि धरउ गुर आगै गुर परसादी मै अकथु कथईआ ॥ ३ ॥ मनमुख माइआ मोह विआपे इहु मनु त्रिसना जलत तिखईआ। गुरमति नामु अंम्रित जलु पाइआ अगनि बुझी गुरसबदि बुझईआ ॥ ४ ॥ इहु मनु नाचै सतिगुर आगै अनहद सबद धुनि तूर वजईआ।

3

हरि हरि उसतति करै दिनु राती रखि रखि चरण हरि ताल पूरईआ ॥ ५ ॥ हरि कै रंगि रता मनु गावै रसि रसाल रसि सबदु रवईआ । निज घरि धार चुऐ अति निरमल जिनि पीआ तिन ही सुखु लहीआ ॥ ६ ॥ मन हठि करम करै अभिमानी जिउ बालक बालू घर उसरईआ । आवै लहरि समुंद सागर की खिन महि भिन भिन ढहि पईआ ॥ ७ ॥ हरि सरु सागरु हरि है आपे इहु जगु है सभु खेलु खेलईआ । जिउ जल तरंग जलु जलहि समावहि नानक आपे आपि रमईआ ॥ ८ ॥ ३ ॥ ६ ॥

हमने गुरु की सहायता से मन-वाणी से परे अगम्य प्रभु का ध्यान किया है; और हम उस गुरु पर बलिहार जाते हैं, जिसने हमें सत्पुरुष से मिला दिया है। वह गुरु राम-नाम को हमारे प्राणों में बसा देता है और जीव सतगुरु के चरण छूकर हरि-नाम में ही विलीन हो जाता है ॥ १ ॥ सेवकों ने केवल हरि-नाम का ही सहारा लिया है; सतगुरु की टेक लेकर, उसकी कृपा से ही कोई परमात्मा के द्वार तक पहुँचता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हम इस शरीर के द्वारा ही अच्छे-बुरे कर्म करते हैं और निरन्तर परिश्रम से श्रेष्ठ हरि-नाम प्राप्त करते हैं। इससे मन आलोकित होता है और उससे प्रभु-प्रेम जाग्रत् होता है ॥ २ ॥ राम के सच्चे भक्तों के दासों के भी हमें दास होना चाहिए। मन-बुद्धि को गुरु के सम्मुख समर्पित करके गुरु-कृपा से अध्यात्म की अनिर्वचनीय कथा को जानना चाहिए ॥ ३ ॥ मनमुख जीव माया-मोह के कारण तृष्णा में जलते रह जाते हैं। गुरु-कृपा से जब नामामृत रूपी जल मिल जाता है, तो मोह की अग्नि बुझ जाती है ॥ ४ ॥ हमारा मन रात-दिन गुरु-शब्द की ध्वनि में निरत रहकर गुरु के सम्मुख समर्पित होता है। दिन-रात हरि की स्तुति करते हुए नृत्य का वज़न पूरा करते हुए हम हरि की ताल पर चलते हैं अर्थात् उसी की कृपानुसार जीवन व्यतीत करते हैं ॥ ५ ॥ हरि के प्रेम में रत हुआ मन बड़े मज़े से हरि-नाम जपता है। अपनी अन्तरात्मा में हरि-रस की पावन धारा बहने लगती है और जो जीव उस अमृत का आचमन करते हैं, वे परमसुख को प्राप्त होते हैं ॥ ६ ॥ अभिमानी लोग मन के संकेतों पर काम करते हैं, जैसे बालक बालू का घर बनाते हैं (मनमुखों की करनी बालू के घर के समान होती है, जो अस्थिर और अस्थायी होता है)। समुद्र की एक ही लहर से क्षणी भर में वह ढह जाता है अर्थात् संसार-सागर की मोहमयी तरंगों में मनमुख आचरण अस्थिर होता है ॥ ७ ॥ सर-सागर हरि स्वयं है, यह संसार उसका खेल है; जैसे जल-तरंग जल होती है और जल में ही समा जाती है, वैसे ही परमात्मा सर्वस्व स्वयं ही है—ऐसा गुरु-कथन है ॥ ८ ॥ ३ ॥ ६ ॥

॥ बिलावलु महला ४ ॥ सतिगुरु परचै मनि मुंद्रा पाई गुर का सबदु तनि भसम द्रिड़ईआ । अमर पिंड भए साधू संगि जनम मरण दोऊ मिटि गईआ ॥ १ ॥ मेरे मन साध संगति मिलि रहीआ । क्रिपा करहु मधसूदन माधउ मै खिनु खिनु साधू चरण पखईआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तजै गिरसतु भइआ बनवासी इकु खिनु मनूआ टिकै न टिकईआ । धावतु धाइ तदे घरि आवै हरि हरि साधू सरणि पवईआ ॥२॥ धीआ पूत छोडि संनिआसी आसा आस मनि बहुतु करईआ । आसा आस करै नही बूझै गुर कै सबदि निरास सुखु लहीआ ॥ ३ ॥ उपजी तरक दिगंबरु होआ मनु दहदिस चलि चलि गवनु करईआ । प्रभवनु करै बूझै नही त्रिसना मिलि संगि साथ दइआ घरु लहीआ ॥ ४ ॥ आसण सिध सिखहि बहुतेरे मनि मागहि रिधि सिधि चेटक चेटकईआ । त्रिपति संतोखु मनि सांति न आवै मिलि साधू त्रिपति हरि नामि सिधि पईआ ॥ ५ ॥ अंडज जेरज सेतज उतभुज सभि वरन रूप जीअ जंत उपईआ । साधू सरणि परै सो उबरै खत्री ब्राहमणु सूदु वैसु चंडालु चंडईआ ॥ ६ ॥ नामा जैदेउ कंबीरु त्रिलोचनु अउजाति रविदासु चमिआरु चमईआ । जो जो मिलै साधू जन संगति धनु धंना जटु सैणु मिलिआ हरि दईआ ॥ ७ ॥ संत जना की हरि पैज रखाई भगति वछलु अंगीकारु करईआ । नानक सरणि परे जग जीवन हरि हरि किरपा धारि रखईआ ॥ ८ ॥ ४ ॥ ७ ॥

मन रूपी श्रवणों में गुरु-ज्ञान रूपी मुद्राएँ पहनिये तथा गुरु के उपदेशों की धूल शरीर में रमाइये, ऐसा योग रचाने से साधु-संगति में शारीरिक अमरत्व, जन्म-मरण से मुक्ति मिल जाती है ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! नित्य साधुओं की संगति करो, क्षण-क्षण साधुओं के चरण धोओ, तभी माधवजी (वाहिगुरु) की कृपा होगी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घर-गृहस्थी का त्याग कर यदि कोई जंगल में रहने लगे, तो भी उसका मन नहीं टिकता । वह जब हरि-कृपा से साधु-संगति या गुरु की शरण में आता है, तभी उसकी दौड़ समाप्त होती है और वह अपने सही घर में प्रवेश करता है ॥ २ ॥ पुत्र-पुत्रियों को छोड़कर संन्यासी बन जाने में भी मन में अनेक आशाएँ उभरती हैं और मनुष्य तृष्णा का शिकार रहता है । गुरु के शब्दों को जान लेनेवाला जीव आशातीत होकर परमसुख को प्राप्त होता

है ॥ ३ ॥ (मन में दुनिया से घृणा पैदा हुई) तो नंगा रहनेवाला जैनी साधु बन जाय तो भी जीव का मन दसों दिशाओं में भटकता रहता है। ऐसा जीव ज्ञान से वञ्चित रहकर तब तक इधर-उधर भटकता है, जब तक गुरु-कृपा से उसकी तृष्णा नहीं मिट जाती और वह सही अर्थों में अन्तर्मुखी नहीं हो जाता ॥ ४ ॥ सिद्ध लोग अनेक योगासन, तप करने के तरीक़े सीखते हैं और मन में करामाती शक्तियों और जादू की इच्छा करते हैं, किन्तु मन सन्तुष्ट नहीं होता। अन्ततः वे भी सतगुरु से ही हरि-नाम की करामात और पूर्णशान्ति लाभ करते हैं ॥ ५ ॥ परमात्मा ने अण्डज, जेरज, स्वेदज तथा भूमज आदि अनेक प्रकार की सृष्टि पैदा की है, किन्तु साधु-संगति के बिना ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र कोई मोक्ष नहीं पा सकता ॥ ६ ॥ (गुरु साहब प्रमाण-रूप में आगे कुछ महात्माओं के उदाहरण देते हैं।) नामदेव, जयदेव, कबीर, त्रिलोचन और नीच जाति का रविदास चमार हो या धन्ना जाट और सैना नाई हो, जो-जो सतगुरु की शरण में आया, वह धन्य हो गया और उसका हरि से मिलाप हुआ ॥ ७ ॥ परमात्मा स्वयं सन्तजनों के सम्मान का रक्षक है, वह नित्य भक्तवत्सल होने के कारण सेवकों को अपने साथ अपनाता है। गुरु नानक कहते हैं कि संसार को सप्राण करनेवाले परमात्मा की शरण लेने से ही जीव उसका कृपापात्र बनता है ॥ ८ ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ बिलावलु महला ४ ॥ अंतरि पिआस उठी प्रभ केरी सुणि गुरबचन मनि तीर लगईआ। मन की बिरथा मन ही जाणै अवरु कि जाणै को पीर परईआ ॥ १ ॥ राम गुरि मोहनि मोहि मनु लईआ। हउ आकल बिकल भई गुर देखे हउ लोट पोट होइ पईआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउ निरखत फिरउ सभि देस दिसंतर मै प्रभ देखन को बहुतु मनि चईआ। मनु तनु काटि देउ गुर आगै जिनि हरि प्रभ मारगु पंथु दिखईआ ॥ २ ॥ कोई आणि सदेसा देइ प्रभ केरा रिद अंतरि मनि तनि मीठ लगईआ। मसतकु काटि देउ चरणा तलि जो हरि प्रभु मेले मेलि मिलईआ ॥ ३ ॥ चलु चलु सखी हम प्रभु परबोधह गुण कामण करि हरि प्रभु लहीआ। भगति वछलु उआ को नामु कहीअतु है सरणि प्रभू तिसु पाछै पईआ ॥ ४ ॥ खिमा सीगार करे प्रभ खुसीआ मनि दीपक गुर गिआनु बलईआ। रसि रसि भोग करे प्रभु मेरा हम तिसु आगै जीउ कटि कटि पईआ ॥ ५ ॥ हरि हरि हारु कंठि है बनिआ मनु मोतीचूरु वड गहन गहनईआ। हरि

हरि सरधा सेज विछाई प्रभु छोडि न सकै बहुतु मनि भईआ ॥६॥ कहै प्रभु अवरु अवरु किछु कीजै सभु बादि सीगारु फोकट फोकटईआ । कीओ सीगारु मिलण कै ताई प्रभु लीओ सुहागनि थूक मुखि पईआ ॥ ७ ॥ हम चेरी तू अगम गुसाई किआ हम करह तेरै वसि पईआ । दइआ दीन करहु रखि लेवहु नानक हरि गुर सरणि समईआ॥ ८ ॥ ५ ॥ ८ ॥

गुरु के वचनों को सुनकर मेरे मन पर ऐसी चोट लगी है कि मन में प्रभु-मिलन की उत्कट इच्छा जाग उठी है। मेरे मन की इस व्यथा को मैं ही जानता हूँ। और कोई व्यक्ति परायी पीड़ा को क्योंकर समझेगा ? ॥ १ ॥ मेरे प्यारे गुरु ने मेरा मन मोह लिया है। मैं गुरु को देखते ही बेसुध हो जाता हूँ और उसका सान्निध्य पाने के लिए व्याकुल हो उठता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं देश-विदेश में प्रभु को देखने का चाव मन में लिये घूमता रहा। (गुरु ने वह परमात्मा दिखा दिया है, इसलिए) मैं हरि-प्रभु का मार्ग दिखानेवाले गुरु के सम्मुख अपना तन-मन भेंट करता हूँ ॥ २ ॥ कोई आकर यदि मुझे मेरे स्वामी का सन्देश दे अर्थात् मुझसे प्रभु की चर्चा करे तो मेरे हृदय में वे बातें बहुत मीठी लगती हैं। मुझसे मेरे स्वामी का मिलाप करा देनेवाले के चरणों में मैं अपना मस्तक काटकर डाल सकता हूँ ॥ ३ ॥ आओ सखियो ! हम अपने स्वामी को अच्छी तरह समझ लें और अपने में गुणों के टोने करके उस प्रभु को प्राप्त कर लें; उसका नाम भक्तवत्सल है, हम उसकी शरण में रहें ॥ ४ ॥ क्षमा का शृङ्गार करके यदि मन में गुरु के उपदेशों का दीपक जलाया जाय तो परमात्मा खुश होता है। तभी मेरा स्वामी आत्मा रूपी स्त्री के साथ रस-भोग में मग्न होता है; मैं उसके सम्मुख अपना दिल काट-काटकर क़ुर्बान करता हूँ ॥ ५ ॥ हरि ही मेरे गले का हार है और हरि-प्रेम से भरा मन मेरे लिए सबसे बड़ा आभूषण है, मोतियों का चूड़ामणि है। हरि-नाम की श्रद्धा रूपी सेज मैंने अपने प्रभु के लिए बिछायी है, मैं उसके प्रेम में उन्मत्त हूँ, मैं उसे कभी छोड़ नहीं सकती ॥ ६ ॥ यदि परमात्मा का हुक्म कुछ और हो और हम कुछ और ही करते रहें तो हमारा सब शृङ्गार (गुणवृद्धि) बेकार है। प्रभु को मिलने के लिए अनेक आत्मा रूपी स्त्रियों ने शृङ्गार किया, किन्तु गुरुमुख जीवात्माएँ ही सुहागिन बन सकीं, हुक्म न माननेवाली जीवात्माओं के मुँह पर थूक पड़ा ॥ ७ ॥ हम तुम्हारी दासी हैं, तुम अगम अगोचर हो, हम तुम्हारे वश में हैं, स्वयं हम क्या कर सकती हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु ! तुम हम दीनों पर दया करके अपनी शरण में जगह दो ॥ ८ ॥ ५ ॥ ८ ॥

॥ बिलावलु महला ४ ॥ मै मनि तनि प्रेमु अगम ठाकुर का खिनु खिनु सरधा मनि बहुतु उठईआ। गुर देखे सरधा मन पूरी जिउ चात्रिक प्रिउ प्रिउ बूंद मुखि पईआ ॥ १ ॥ मिलु मिलु सखी हरि कथा सुनईआ। सतिगुरु दइआ करे प्रभु मेले मै तिसु आगै सिरु कटि कटि पईआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रोमि रोमि मनि तनि इक बेदन मै प्रभ देखे बिनु नीद न पईआ। बैदक नाटिक देखि भुलाने मै हिरदै मनि तनि प्रेम पीर लगईआ ॥ २ ॥ हउ खिनु पलु रहि न सकउ बिनु प्रीतम जिउ बिनु अमलै अमली मरि गईआ। जिन कउ पिआस होइ प्रभ केरी तिन्ह अवरु न भावै बिनु हरि को दुईआ ॥३॥ कोई आनि आनि मेरा प्रभू मिलावै हउ तिसु विटहु बलि बलि घुमि गईआ। अनेक जनम के विछुड़े जन मेले जा सति सति सतिगुर सरणि पवईआ ॥ ४ ॥ सेज एक एको प्रभु ठाकुरु महलु न पावै मनमुख भरमईआ। गुरु गुरु करत सरणि जे आवै प्रभु आइ मिलै खिनु ढील न पईआ ॥ ५ ॥ करि करि किरिआचार वधाए मनि पाखंड करमु कपट लोभईआ। बेसुआ कै घरि बेटा जनमिआ पिता ताहि किआ नामु सदईआ ॥ ६ ॥ पूरब जनमि भगति करि आए गुरि हरि हरि हरि हरि भगति जमईआ। भगति भगति करते हरि पाइआ जा हरि हरि हरि हरि नामि समईआ ॥ ७ ॥ प्रभि आणि आणि महिंदी पीसाई आपे घोलि घोलि अंगि लईआ। जिन कउ ठाकुरि किरपा धारी बाह पकरि नानक कढि लईआ ॥ ८ ॥ ६ ॥ ९ ॥ २ ॥ १ ॥ ६ ॥ ९ ॥

मेरे मन में उस अगम अगोचर स्वामी का प्रेम बसा है। मन में क्षण-क्षण यह प्रीति बढ़ती ही जा रही है। गुरु को देखने से ही मन की प्रीति उसी प्रकार पूर्ण हो जाती है, जैसे पपीहे की पी-पी पुकार मुँह में स्वाति नक्षत्र का जल पड़ने से शान्त होती है ॥ १ ॥ आओ सखियो! मिल-बैठकर प्रभु की कथा सुनायें। सतगुरु की कृपा हो, तभी परमात्मा से मिलाप हो सकता है, मैं तो शीश काटकर उसके चरणों पर अर्पित करती हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे रोम-रोम में एक ऐसी पीड़ा व्याप्त है कि प्रभु का दर्शन किये बिना मुझे नींद नहीं पड़ती। वैद्य और नाड़ी-ज्ञान के विशेषज्ञ मुझे देख-देखकर हैरान हैं, उन्हें मेरी पीड़ा का निदान पता नहीं चलता। मुझे तो प्रभु-प्रेम की पीड़ा है ॥ २ ॥ परमात्मा को

देखे बिना मैं क्षण भर भी रह नहीं सकती (स्त्रीलिङ्ग क्रिया का प्रयोग जीवात्मा के लिए है)। मेरी दशा उस नशेबाज़ की तरह है, जो नशा न मिलने पर मरणासन्न हो जाता है। जिन स्त्रियों को अपने स्वामी की मिलन-पिपासा होती है, उन्हें हरि के बिना कोई दूसरा नहीं भाता ॥ ३ ॥ यदि कोई आकर मेरे प्रभु को मुझसे मिला दे तो मैं उस पर से बार-बार क़ुर्बान हो जाऊँ। अनेक जन्मों के बिछुड़े प्रभु से मिलाप तभी सम्भव है, जब मैं अपने सतगुरु की शरण प्राप्त करूँ ॥ ४ ॥ आतमा तथा परमात्मा एक ही सेज पर रमते हैं, किन्तु फिर भी मनमुख आत्मा भटकती फिरती है तथा उसे हरि का महल नहीं मिलता (अर्थात् एक ही शरीर रूपी सेज पर रहकर भी भटकी हुई आतमा परमात्मा से मिलाप नहीं कर पाती)। गुरु का नाम जपते हुए जो उसकी शरण में आती है वह क्षण भर में ही प्रभु को प्राप्त कर लेती है, उसमें कोई ढील नहीं होती ॥ ५ ॥ जो जीवात्मा अधिकतर कर्मकाण्ड में विश्वास करती है और मन में आडम्बर, लोभ और छल-कपट को धारण करती है (वह हरि को कभी स्वीकार नहीं होती); उसकी दशा उस वेश्या के समान होती है, जिसके यहाँ पुत्र-जन्म तो होता है किन्तु कोई उसका पिता नहीं कहलाता ॥ ६ ॥ जिन जीवात्माओं ने पूर्वजन्म में भक्ति की होती है, उनमें गुरु हरि-भक्ति पैदा करता है और उसी भक्ति में लीन रहकर वे जीवात्माएँ हरि को प्राप्त करती हैं। हरि-हरि नाम जपते हुए हरि-नाम में ही विलीन हो जाती हैं ॥ ७ ॥ वे हरि-नाम की मेंहदी पीसती, घोलती और अङ्ग में लगाती हैं। नानक कहते हैं, उन पर स्वामी की कृपा होती है और वह बाँहों को पकड़कर उन्हें माया-जाल से निकाल लेता है ॥ ८ ॥ ६ ॥ ९ ॥ २ ॥ १ । ६ ॥ ९ ॥

रागु बिलावलु महला ५ असटपदी घरु १२

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ उपमा जात न कही मेरे प्रभ की उपमा जात न कही। तजि आन सरणि गही ॥१॥रहाउ॥ प्रभ चरन कमल अपार। हउ जाउ सद बलिहार। मनि प्रीति लागी ताहि। तजि आन कतहि न जाहि ॥ १ ॥ हरि नाम रसना कहन। मल पाप कलमल दहन। चड़ि नाव संत उधारि। भै तरे सागर पारि ॥ २ ॥ मनि डोरि प्रेम परीति। इह संत निरमल रीति। तजि गए पाप बिकार ॥ हरि मिले प्रभ निरंकार ॥ ३ ॥ प्रभ पेखीऐ बिसमाद। चखि अनद पूरन साद। नह डोलीऐ इत ऊत। प्रभ बसे हरि हरि चीत ॥४॥

तिन्ह नाहि नरक निवासु । नित सिमरि प्रभ गुणतासु । ते जमु न पेखहि नैन । सुनि मोहे अनहत बैन ।। ५ ।। हरि सरणि सूर गुपाल । प्रभ भगत वसि दइआल । हरि निगम लहहि न भेव । नित करहि मुनि जन सेव ।। ६ ।। दुख दीन दरद निवार । जाकी महा बिखड़ी कार । ता की मिति न जानै कोइ । जलि थलि महीअलि सोइ ।। ७ ।। करि बंदना लख बार । थकि परिओ प्रभ दरबार । प्रभ करहु साधू धूरि । नानक मनसा पूरि ।। ८ ।। १ ।।

मेरे प्रभु की महिमा अनिर्वचनीय है, (इसीलिए) और सब आश्रय छोड़कर मैंने हरि की शरण ग्रहण कर ली है ।। १ ।। रहाउ ।। प्रभु के चरण-कमल अनन्य हैं, मैं सदा उन पर बलिहार जाती हूँ । मेरे मन में उनकी प्रीति लगी है, मैं उन्हें छोड़कर किसी और का ध्यान भी नहीं कर सकती ।। १ ।। जीव से हरि-नाम जपने से पापों और दोषों का मैल जल जाता है । सन्तों की प्रभु-नाम रूपी नौका पर चढ़कर भयानक संसार-सागर से पार हुआ जा सकता है ।। २ ।। सन्तों की निर्मल रीति यही है कि मन में प्रेम की डोरी बँध जाय, जिससे पाप-विकार सब छूट जाते हैं और निराकार परब्रह्म से मिलन होता है ।। ३ ।। प्रभु के दर्शन होने से परमाश्चर्य होता है और पूर्णानन्द का आस्वादन मिलता है । हरि-प्रभु के मन में बस जाने से जीव का इधर-उधर डोलना समाप्त हो जाता है ।। ४ ।। जो लोग नित्य प्रभु का गुणगान करते हैं, वे कभी नरकवास में नहीं पड़ते, उन्हें कभी यमदूतों का सामना नहीं होता, क्योंकि वे सदा हरि के अनाहत शब्दों को सुनकर मस्त रहते हैं ।। ५ ।। हम लोग परम शूरवीर परमात्मा की शरण में पड़े हैं, वह दयालु प्रभु हमेशा भक्तों के वश में रहता है । वेद उस हरि का भेद नहीं जानते तथा इन्द्रियों को वश में करनेवाले मुनिलोग सदा उसी की सेवा में रहते हैं ।। ६ ।। वह परमात्मा सदैव दीनों, अनाथों के दुःख दूर करनेवाला है । उसकी सेवा बड़ी कठिन है । उसका अन्त कोई नहीं जानता । जल, थल और आकाश सब जगह वही परमात्मा व्याप्त है ।। ७ ।। थककर, भटककर, अब मैं प्रभु के दरबार में आ पड़ा हूँ और लाख-लाख बार उसकी वन्दना करता हूँ । हे प्रभु ! नानक की इच्छा पूर्ण करो और उसे सन्तों की धूल बना दो ।। ८ ।। १ ।।

।। बिलावलु महला ५ ।। प्रभ जनम मरन निवारि । हारि परिओ दुआरि । गहि चरन साधू संग । मन मिसट हरि

हरि रंग। करि दइआ लेहु लड़ि लाइ। नानका नामु धिआइ ॥ १ ॥ दीना नाथ दइआल मेरे सुआमी दीना नाथ दइआल। जाचउ संत रवाल ॥१॥रहाउ॥ संसारु बिखिआ कूप। तम अगिआन मोहत घूप। गहि भुजा प्रभ जी लेहु। हरि नामु अपुना देहु। प्रभ तुझ बिना नही ठाउ। नानका बलि बलि जाउ ॥ २ ॥ लोभि मोहि बाधी देह। बिनु भजन होवत खेह। जमदूत महा भइआन। चित गुपत करमहि जान। दिनु रैनि साखि सुनाइ। नानका हरि सरनाइ ॥३॥ भै भंजना मुरारि। करि दइआ पतित उधारि। मेरे दोख गने न जाहि। हरि बिना कतहि समाहि। गहि ओट चितवी नाथ। नानका दे रखु हाथ ॥ ४ ॥ हरि गुणनिधे गोपाल। सरब घट प्रतिपाल। मनि प्रीति दरसन पिआस। गोबिंद पूरन आस। इक निमख रहनु न जाइ। वडभागि नानक पाइ ॥ ५ ॥ प्रभ तुझ बिना नही होर। मनि प्रीति चंद चकोर। जिउ मीन जल सिउ हेतु। अलि कमल भिंनु न भेतु। जिउ चकवी सूरज आस। नानक चरन पिआस ॥ ६ ॥ जिउ तरुनि भरत परान। जिउ लोभीऐ धनु दानु। जिउ दूध जलहि संजोगु। जिउ महा खुधिआरथ भोगु। जिउ मात पूतहि हेतु। हरि सिमरि नानक नेत ॥ ७ ॥ जिउ दीप पतन पतंग। जिउ चोरु हिरत निसंग। मैगलहि कामै बंधु। जिउ ग्रसत बिखई धंधु। जिउ जूआर बिसनु न जाइ। हरि नानक इहु मनु लाइ ॥ ८ ॥ कुरंक नादै नेहु। चात्रिकु चाहत मेहु। जन जीवना सतसंगि। गोबिदु भजना रंगि। रसना बखानै नामु। नानक दरसन दानु ॥ ९ ॥ गुन गाइ सुनि लिखि देइ। सो सरब फल हरि लेइ। कुल समूह करत उधारु। संसारु उतरसि पारि। हरि चरन बोहिथ ताहि। मिलि साध संगि जसु गाहि। हरि पैज रखै मुरारि। हरि नानक सरनि दुआरि ॥ १० ॥ २ ॥

हे परमात्मा! मैं तुम्हारे द्वार पर आ पड़ा हूँ, मेरा आवागमन मिटा दो। सन्तों की संगति में, उनके चरणों में पड़कर मुझे तुम्हारा प्रेम और भी मीठा लगता है। अतः नाम जपते हुए नानक विनती करते हैं कि

कृपा करके उन्हें अपनी शरण में लो और वे सदा नाम-जाप करते रहें ॥ १ ॥ हे मेरे दीनानाथ, मेरे स्वामी ! मैं तुमसे केवल सन्तों की चरणधूलि की याचना करता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संसार विषय-वासनाओं रूपी विष का कुआँ है । यहाँ अज्ञान और मोह का अँधेरा है । इसलिए, हे प्रभु ! मुझे बाँह पकड़कर सहारा दो, अपना नाम जपाओ । मुझे तुम्हारे बिना और कोई आश्रय नहीं है । इसलिए मैं बार-बार तुम पर बलिहार जाता हूँ ॥ २ ॥ मेरा शरीर लोभ और मोह में बँधा है । भजन के बिना वह मिट्टी के समान है । यम के दूत बड़े भयानक हैं और चित्रगुप्त मेरे सब कर्मों को जानता है । मैंने रात-दिन उसी का सहारा लिया है, वही मेरा साक्षी है, मैं उसी की शरण में हूँ ॥ ३ ॥ भय को नाश करनेवाले प्रभु ! मुझ पर दया करके मुझ पतित का भी उद्धार करो । मेरे दोष गिने नहीं जा सकते; परमात्मा के बिना मुझे और कहीं सहारा नहीं मिल सकता । इसलिए, हे स्वामी ! मैं (नानक) तुम्हारे ही सहारे की आशा रखता हूँ, कृपा करके हाथ दो ॥ ४ ॥ गुणनिधि और सृष्टि के प्रतिपालक परमात्मा ! मेरे मन में तुम्हारी प्रीति है और आँखों में दर्शन की प्यास है । हे गोविन्द ! मेरी आशाओं को पूर्ण करो, मैं एक क्षण भी तुम्हारे बिना नहीं रह सकती; तुम्हें पाकर ही मेरा भाग्य उदय होगा ॥५॥ हे प्रभु ! तुम्हारे बिना मेरा और कौन है ? मेरे मन में तुम्हारे लिए ऐसी प्रीति है, जैसे चन्द्र के लिए चकोर की, जैसे जल के लिए मछली की । जैसे भँवरा कमल से अलग नहीं होना चाहता, जैसे चकवी को सूर्य की आशा होती है, गुरु नानक कहते हैं कि वैसे ही मुझे भी तुम्हारे चरणों की प्यास है ॥ ६ ॥ जैसे तरुणी के लिए प्राण उसके पति में बसते हैं; जैसे लोभी धन से प्यार करता है; जैसे दूध और जल का संयोग होता है; जैसे भूखे के लिए भोगों की प्रीति होती है; जैसे माता पुत्र को प्यार करती है; नानक कहते हैं, ऐसे ही हर जीव को नित्य हरि-सिमरन करना चाहिए ॥ ७ ॥ जैसे पतंगे दीये पर गिरते हैं; जैसे चोर बेझिझक होकर चोरी करता है; जैसे हाथी कामरत होता है; जैसे गृहस्थी विषय-वासनाओं में पड़ा रहता है; जैसे जुआरी की आदत नहीं टलती, उसी तरह, हे नानक ! तू भी हरि में अपने मन को लगा ॥ ८ ॥ मृग का राग से प्रेम है, पपीहा स्वाति की माँग करता है, वैसे ही हरि के दासों का जीवन सत्संगति और गोविन्द-भजन में है । वे जिह्वा से सदा नाम जपते हैं और परमात्मा के दर्शनों का दान माँगते हैं ॥ ९ ॥ जो हरि के गुण गाता, सुनता या लिखता है, उसे हरि से सब फलों की प्राप्ति होती है और वह अपने समूचे परिवार को तार देता है, संसार-सागर से पार उतारता है । जो साधु-संगति में प्रभु का यशोगान करता है, उसके लिए हरि के चरण सन्तरण-समान हैं । परमात्मा उनकी

लाज रखता है; (नानक कहते हैं) जो हरि के द्वार पर शरण ग्रहण करता है ॥ १० ॥ २ ॥

बिलावलु महला १ थिती घरु १० जति

१ ओं सतिगुर प्रसादि। एकम एकंकारु निराला। अमरु अजोनी जाति न जाला। अगम अगोचरु रूपु न रेखिआ। खोजत खोजत घटि घटि देखिआ। जो देखि दिखावै तिस कउ बलि जाई। गुरपरसादि परम पदु पाई ॥ १ ॥ किआ जपु जापउ बिनु जगदीसै। गुर कै सबदि महलु घरु दीसै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दूजै भाइ लगे पछुताणे। जम दरि बाधे आवण जाणे। किआ लै आवहि किआ ले जाहि। सिरि जम कालु सि चोटा खाहि। बिनु गुर सबद न छूटसि कोइ। पाखंडि कीन्है मुकति न होइ ॥ २ ॥ आपे सचु कीआ कर जोड़ि। अंडज फोड़ि जोड़ि विछोड़ि। धरति अकासु कीए बैसण कउ थाउ। राति दिनंतु कीए भउ भाउ। जिनि कीए करि वेखणहारा। अवरु न दूजा सिरजणहारा ॥ ३ ॥ त्रितीआ ब्रहमा बिसनु महेसा। देवी देव उपाए वेसा। जोती जाती गणत न आवै। जिनि साजी सो कीमति पावै। कीमति पाइ रहिआ भरपूरि। किसु नेड़ै किसु आखा दूरि ॥ ४ ॥ चउथि उपाए चारे बेदा। खाणी चारे बाणी भेदा। असट दसा खटु तीनि उपाए। सो बूझै जिसु आपि बुझाए। तीनि समावै चउथै वासा। प्रणवति नानक हम ता के दासा ॥५॥ पंचमी पंच भूत बेताला। आपि अगोचरु पुरखु निराला। इकि भ्रमि भूखे मोह पिआसे। इकि रसु चाखि सबदि त्रिपतासे। इकि रंगि राते इकि मरि धूरि। इकि दरि घरि साचै देखि हदूरि ॥६॥ झूठे कउ नाही पति नाउ। कबहु न सूचा काला काउ। पिंजरि पंखी बंधिआ कोइ। छेरीं भरमै मुकति न होइ। तउ छूटै जा खसमु छडाए। गुरमति मेले भगति द्रिड़ाए ॥ ७ ॥ खसटी खटु दरसन प्रभ साजे। अनहद सबदु निराला वाजे। जे प्रभ भावै ता महलि बुलावै। सबदे भेदे तउ पति पावै। करि करि वेस खपहि जलि जावहि। साचै साचे साचि समावहि ॥ ८ ॥

सपतमी सतु संतोखु सरीरि। सात समुंद भरे निरमल नीरि। मजनु सीलु सचु रिदै वीचारि। गुर कै सबदि पावै सभि पारि। मनि साचा मुखि साचउ भाइ। सचु नीसाणै ठाक न पाइ ॥९॥ असटमी असट सिधि बुधि साधै। सचु निहकेवलु करमि अराधै। पउण पाणी अगनी बिसराउ। तही निरंजनु साचो नाउ। तिसु महि मनूआ रहिआ लिव लाइ। प्रणवति नानकु कालु न खाइ ॥ १० ॥

(प्रस्तुत वाणी में गुरु नानकदेव चन्द्र के अनुसार चतुर्दश तिथियों को लेकर पुराने भ्रमों को दूर करते हैं और एकमात्र परमात्मा की भक्ति में संलग्न होने की शिक्षा देते हैं।) प्रतिपदा तिथि (के द्वारा यह सन्देश मिलता है कि) परमात्मा एक है तथा सबसे निराला है। वह अमर है, अयोनि है और जाति-पाँति से इतर है। उसके लिए कोई बन्धन नहीं, पहुँच से परे है अर्थात् मन-वाणी की सीमाओं से दूर है और न ही उसका कोई रूप या चिह्न है। पर खोजते-खोजते हमने उसे सर्वव्यापक पाया। जो उसे पाकर दूसरों को भी उसके दर्शन करवा सके, मैं उसके बलिहार जाता हूँ। गुरु की कृपा से जीव को परमपद की प्राप्ति अर्थात् मुक्ति होती है ॥ १ ॥ जगदीश्वर के बिना कोई और जाप बेकार है; गुरु की वाणी द्वारा मार्ग पाकर परमात्मा का स्थान ही अपना स्थान बन जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ द्वैतभाव में विश्वास करनेवाले पछताते हैं। वे यम के बन्धनों में बँधे आवागमन में पड़े रहते हैं। वे न तो कुछ लेकर जन्मते हैं और न किसी उपलब्धि पर मरते हैं। उनके सिर पर सदैव यमदूतों का दण्ड रहता है और वे नित्य चोटें खाते हैं। गुरु के शब्द के बिना कोई नहीं छूटता, पाखण्ड करने से कभी मुक्ति नहीं मिलती अर्थात् जीव को द्वैतभाव त्यागकर सतगुरु के उपदेशों पर आचरण करना चाहिए ॥२॥ सत्यस्वरूप परमात्मा ने स्वयं अपने हाथों से सृष्टि की रचना की है। अण्डे के आकार वाले गोलाकार को तोड़कर (दो भाग कर दिये), फिर दोनों के शिरे मिलाकर दोनों को बीच से अलग कर दिया अर्थात् इस प्रकार धरती और आसमान अलग जगहें बनायीं। फिर रात और दिन, भय और प्यार पैदा किया। जिसने ये सब रचा, वही इसका साक्षी है; कोई दूसरा रचयिता नहीं हो सकता ॥ ३ ॥ तृतीया प्रभु की रचना में त्रिदेव अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, महेश की प्रतीक है। परमात्मा ने ऐसे अनेक देवी-देवता पैदा किये। ज्योतिर्मान जीवों की कोई गिनती नहीं। जिसने यह रचना रची, वही इसका सही मूल्यांकन कर सकता है और इसकी भरपूर कीमत डालता है; वह किससे दूर है और किसके निकट, यह कहा नहीं जा सकता ॥ ४ ॥

चतुर्थी चारों वेदों की उपज का आधार है। चारों प्रकार के जीव तथा उनकी बोलियों के भेद बनाये। पुन: अठारह पुराण, छ: शास्त्र और तीन गुण पैदा किये। यह सब ज्ञान उसी के लिए सम्भव है, जिसे वह स्वयं जानकारी देता है। जो जीव तीनों गुणों को मिटाकर चौथी अवस्था में स्थिर होता है, गुरु नानक नतमस्तक होकर कहते हैं कि वे उस जीव की दासता स्वीकार करते हैं ॥ ५ ॥ पंचमी तिथि पाँच तत्त्वों के निर्माण की प्रतीक है। सांसारिक जीव पञ्चभूतों में भौतिक जीवन व्यतीत करते हैं। रचयिता सबसे निराला और अगोचर है। कुछ जीव भ्रम में पड़कर तृष्णा और मोह का शिकार होते हैं और कुछ जीव हरि-रस का पान कर प्रभु-नाम से तृप्ति पाते हैं। कई प्रेम में रत हैं और अन्य कई मरकर मिट्टी में मिल जाते हैं। कुछ ऐसी मुक्त आत्माएँ भी हैं, जो अपने (हृदय रूपी) घर में ही सत्यस्वरूप हरि को प्रत्यक्ष देखती हैं ॥ ६ ॥ मिथ्या व्यवहारी जीव को कभी प्रतिष्ठा नहीं मिलती। वे काले कौए के समान होते हैं, जो कभी पावन नहीं बन सकते। जैसे कोई पक्षी पिंजरे में क़ैद होता है, वह पिंजरे के छिद्रों में झाँकता तो है, किन्तु पिंजरे से छुटकारा नहीं पा सकता। उसकी मुक्ति तभी सम्भव है, जब स्वामी स्वयं पिंजरे का द्वार खोलकर उसे मुक्त कर दे। केवल गुरु के आदेशानुसार आचरण करने और भक्ति में मन को दृढ़ करने से ही यह सब सम्भव है ॥ ७ ॥ षष्ठी तिथि द्वारा उपदेश है कि हरि ने छ: वेशों वाले ऐसे आध्यात्मिक जीव बनाये, जिनका अनाहत शब्द अर्थात् लक्ष्य एक दूसरे से अलग है। (आध्यात्मिक जीवों के छ: प्रकार ये हैं— योगी, संन्यासी, जंगम, बौद्ध, सरेबड़े तथा वैरागी) यदि प्रभु-इच्छा हो तो वह इनमें किसी को भी शरण देकर मुक्त कर सकता है। यदि गुरु-शब्द द्वारा कोई जीव मन को संयत कर ले तो वह परमात्मा के हुज़ूर में प्रतिष्ठा पा सकता है। वेश बना-बनाकर लोग जल-मर जाते हैं, किन्तु जो सत्यस्वरूप प्रभु को पहचानते हैं, वे सत्य में ही लीन हो जाते हैं ॥ ८ ॥ सप्तमी तिथि का उपदेश है कि शरीर के भीतर रहनेवाले सत्य, सन्तोष आदि गुणों को प्रेरित करें। यदि सातों समुद्र नाम रूपी निर्मल जल से भरे हों (पाँच इन्द्रियों तथा मन और बुद्धि, इन्हें सात समुद्र कहा गया है), तो उसमें सत्य और पावन आचरण द्वारा स्नान करने से गुरु का शब्द प्राप्त होता है, जो सबको तार देता है। मन में सत्य की भावना हो, जिह्वा पर सच्चे प्रभु का नाम हो, तो अपने सच्चे लक्ष्य तक पहुँचने में कोई बाधा नहीं रह जाती ॥ ९ ॥ अष्टमी तिथि का उपदेश है कि अष्टसिद्धि को पाकर भी जीव बुद्धि को संयत रखे (अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्रकाम्य, ईषत् और वशिता —ये आठ सिद्धियाँ हैं)। जीव सत्यस्वरूप और अविकारी प्रभु को आचरण द्वारा सिमरन करे तथा हवा, पानी और

अग्नि के स्वभावों (रजो, सतो, तमोगुण) को त्याग दे, तो उस जीव के हृदय में स्वयं हरि निवास करने लगता है। मन परमात्मा में एकाग्र हो जाता है और गुरु-कथन है कि ऐसे में जीव को काल नहीं खा सकता ॥१०॥

नाउ नउमी नवे नाथ नव खंडा। घटि घटि नाथु महा बलवंडा। आई पूता इहु जगु सारा। प्रभ आदेसु आदि रखवारा। आदि जुगादी है भी होगु। ओहु अपरंपरु करणै जोगु ॥ ११ ॥ दसमी नामु दानु इसनानु। अनदिनु मजनु सचा गुण गिआनु। सचि मैलु न लागै भ्रमु भउ भागै। बिलमु न तूटसि काचै तागै। जिउ तागा जगु एवै जाणहु। असथिरु चीतु साचि रंगु माणहु ॥ १२ ॥ एकादसी इकु रिदै वसावै। हिंसा ममता मोहु चुकावै। फलु पावै ब्रतु आतम चीनै। पाखंडि राचि ततु नही बीनै। निरमलु निराहार निहकेवलु। सूचै साचे ना लागै मलु ॥ १३ ॥ जह देखउ तह एको एका। होरि जीअ उपाए वेको वेका। फलोहार कीए फलु जाइ। रस कस खाए सादु गवाइ। कूड़ै लालचि लपटै लपटाइ। छूटै गुरमुखि साचु कमाइ ॥ १४ ॥ दुआदसि मुद्रा मनु अउधूता। अहिनिसि जागहि कबहि न सूता। जागतु जागि रहै लिव लाइ। गुर परचै तिसु कालु न खाइ। अतीत भए मारे बैराई। प्रणवति नानक तह लिव लाई ॥ १५ ॥ दुआदसी दइआ दानु करि जाणै। बाहरि जातो भीतरि आणै। बरती बरत रहै निहकाम। अजपा जापु जपै मुखि नाम। तीनि भवण महि एको जाणै। सभि सुचि संजम साचु पछाणै ॥ १६ ॥ तेरसि तरवर समुद कनारै। अंम्रितु मूलु सिखरि लिव तारै। डर डरि मरै न बूडै कोइ। निडरु बूडि मरै पति खोइ। डर महि घरु घर महि डरु जाणै। तखति निवासु सचु मनि भाणै ॥ १७ ॥ चउदसि चउथे थावहि लहि पावै। राजस तामस सत काल समावै। ससीअर कै घरि सूरु समावै। जोग जुगति की कीमति पावै। चउदसि भवन पाताल समाए। खंड ब्रहमंड रहिआ लिव लाए ॥ १८ ॥ अमावसिआ चंदु गुपतु गैणारि। बूझहु गिआनी सबदु बीचारि। ससीअरु गगनि जोति तिहु लोई। करि करि वेखै करता सोई।

गुर ते दीसै सो तिस ही माहि। मनमुखि भूले आवहि जाहि ॥ १९ ॥ घरु दरु थापि थिरु थानि सुहावै। आपु पछाणै जा सतिगुरु पावै। जह आसा तह बिनसि बिनासा। फूटै खपरु दुबिधा मनसा। ममता जाल ते रहै उदासा। प्रणवति नानक हम ताके दासा ॥ २० ॥ १ ॥

नवमी का उपदेश है कि हरि-नाम धरती के नौ खण्डों, नौ नाथों और प्रत्येक जीव का महाबलशाली स्वामी है, वह हरि रूपी माता इस समूचे संसार की जननी है। प्रभु सबका रक्षक है, युग-युग से है और रहेगा भी। वह अनन्त है और सब कुछ कर सकने में समर्थ है; अतः हमारा इसे प्रणाम है ॥ ११ ॥ दसमी तिथि पावनता, दूसरे को बाँटकर खाने तथा नाम जपने की प्रेरणा है। हरि के गुणों का सच्चा ज्ञान ही प्रतिदिन का स्नान है। सत्य को पा लेने से कभी मलिनता नहीं आती और भ्रम-भय आदि दूर हो जाते हैं। कच्चे धागे को टूटते देर नहीं लगती; संसार को कच्चा धागा ही समझो। चित्त की स्थिरता तभी सम्भव है, जो जीव सत्यस्वरूप प्रभु में लीन रहे ॥ १२ ॥ एकादशी का व्रत है कि एकमात्र प्रभु को ही हृदय में धारण किया जाय। इससे हिंसा और मोह-ममता दूर होगी। सिद्धान्त की दृढ़ता और आत्म-पहिचान द्वारा फल-प्राप्ति होगी। जो जीव पाखण्डों में रत होने के कारण यथार्थता को नहीं समझता (वह निष्फल रहता है)। परमात्मा पवित्र है, आहार की अपेक्षा नहीं रखता और सदा अलिप्त है; ऐसे सत्यस्वरूप परमात्मा द्वारा जो जीव सत्यमय हो जाता है, उसे कभी मल नहीं लगता ॥ १३ ॥ जहाँ तक उसकी दृष्टि जाती है उसे वही एक परमात्मा दीख पड़ता है। उसने अन्य जीव अनेक भाँति के पैदा किये हैं। कोई फलाहारी व्रत करते हैं, किन्तु उन्हें व्रत का फल नहीं मिलता; कोई सरस भोग करते हैं, किन्तु फिर भी रस नहीं पाते— क्योंकि ये दोनों प्रकार के जीव मिथ्या लोभ में लिपटे होते हैं। केवल गुरु के द्वारा सत्यभाव की कमाई करने से ही इनकी मुक्ति सम्भव है ॥ १४ ॥ द्वादशी का उपदेश है कि जिन अवधूतों का मन आडम्बर की बारह मुद्राओं से उपराम हो गया है (बारह मुद्राएँ— ब्रह्मचारी के पाँच चिह्न जनेऊ, मृगछाला, मूँज की तड़ागी, कमण्डलु और शिखा; तीन चिह्न वैष्णवों के तिलक, कण्ठी और तुलसी की माला; शैवों के दो चिह्न रुद्राक्ष माला और त्रिपुण्ड्र; योगियों की मुद्राएँ तथा संन्यासियों का दण्ड), जो रात-दिन जाग्रत् अवस्था में रहता है, कभी मूर्च्छावस्था में नहीं आता; जाग-जागकर परमात्मा में चित्त लगाता है। जो गुरु में अखण्ड विश्वास रखता है, वह काल से सदा मुक्त है। वह जीव व्यावहारिक रूप में त्यागी होता है, वह काम आदि शत्रुओं को मार लेता है और गुरु-कथन है कि वह सदा प्रभु

में ही ध्यानस्थ रहता है ।। १५ ।। द्वादशी का सही व्रत दान और दया करने में है । बाहर जाती हुई मनोवृत्तियों को रोककर भीतर ही स्थिर करना द्वादशी का सन्देश है । व्रत रखनेवाला निष्काम-भावना का व्रत ले और मुँह से उच्चारण किये बग़ैर ही प्रभु-नाम का जाप करे । तीनों लोकों में एक ही प्रभु की सत्ता स्वीकार करे, तब वह सब प्रकार की निर्मलता और संयम को पाकर सत्य की जानकारी प्राप्त कर सकता है ।। १६ ।। त्रयोदशी तिथि इस बात का प्रतीक है कि मनुष्य का जीवन समुद्र के किनारे लगे पेड़ के समान है (जो कभी भी उखड़कर गिर सकता है), किन्तु यदि उसकी चोटी प्रभु-प्यार के सूत्र से बँधी रहे तो उसकी जड़ अमर हो सकती है अर्थात् यदि मन में अटूट लग्न हो तो जीवन अमर हो सकता है । जिसके मन में परमात्मा का भय है, वह कभी संसार-सागर में नहीं डूबता, किन्तु निडर जीव इज़्ज़त खोकर डूब मरता है । जो जीव प्रभु के भय में जीता है, वह परमात्मा का महल पा लेता है और हरि से प्यार करने के कारण वह प्रतिष्ठित हो जाता है ।।१७।। चतुर्दशी में जीव तुरीयावस्था में प्रवेश करता है; रज तम और सत् तीनों गुणों का अन्त कर देता है । जैसे चतुर्दशी को धीमा आलोक बिखरता है, वैसे ही चाँद में सूर्य आ बसता है अर्थात् मानवीय अज्ञानता में गुरु के उपदेशों का प्रकाश होता है, तब प्रभु-मिलन की युक्ति समझ पड़ती है । चौदह भुवन, तल और पाताल उसके ज्ञान के विषय बनते हैं और वह खण्डों, ब्रह्माण्डों में व्याप्त परमात्मा से राग करता है ।।१८।। अमावास्या को आकाश में चन्द्र अदृश्य रहता है । कोई ज्ञानी या सूझवान व्यक्ति ही गुरु के शब्दों द्वारा इस तथ्य को जान सकता है । गगन का चन्द्र तीनों लोकों को ज्योति देता है । सृष्टि के रचयिता ने ऐसा चमत्कार किया है । जो जीव गुरु के उपदेशों पर आचरण करते हुए इस तथ्य को समझते हैं, वे इसी में समा जाते हैं; किन्तु मनमुखी जीव भ्रम में पड़े जन्म-मरण की चक्की में पिसते रहते हैं ।। १९ ।। जो जीव परमात्मा के दरबार में स्थिरचित्त होकर अपना स्थान बना लेता है, उसे आत्मोपलब्धि भी होती है और उसका वाहिगुरु से मिलाप हो जाता है; उसकी सब आशा-तृष्णाएँ दूर हो जाती हैं । द्वैतभावना और अहम् का चक्र टूट जाता है; वह ममता-जाल से विरक्त हो जाता है । गुरु नानक कहते हैं कि वे ऐसे जीव के दास हैं ।। २० ।। १ ।।

बिलावलु महला ३ वार सत घरु १०

१ ओं सतिगुर प्रसादि । आदित वारि आदि पुरखु है सोई । आपे वरतै अवरु न कोई । ओति पोति जगु रहिआ

परोई । आपे करता करै सु होई । नामि रते सदा सुखु होई । गुरमुखि विरला बूझै कोई ॥ १ ॥ हिरदै जपनी जपउ गुणतासा । हरि अगम अगोचरु अपरंपर सुआमी जन पगि लगि धिआवउ होइ दासनि दासा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सोमवारि सचि रहिआ समाइ । तिस की कीमति कही न जाइ । आखि आखि रहे सभि लिव लाइ । जिसु देवै तिसु पलै पाइ । अगम अगोचरु लखिआ न जाइ । गुर कै सबदि हरि रहिआ समाइ ॥ २ ॥ मंगलि माइआ मोहु उपाइआ । आपे सिरि सिरि धंधै लाइआ । आपि बुझाए सोई बूझै । गुर कै सबदि दरु घरु सूझै । प्रेम भगति करे लिव लाइ । हउमै ममता सबदि जलाइ ॥ ३ ॥ बुधवारि आपे बुधि सारु । गुरमुखि करणी सबदु वीचारु । नामि रते मनु निरमलु होइ । हरि गुण गावै हउमै मलु खोइ । दरि सचै सद सोभा पाए । नामि रते गुरसबदि सुहाए ॥ ४ ॥ लाहा नामु पाए गुरदुआरि । आपे देवै देवणहारु । जो देवै तिस कउ बलि जाईऐ । गुरपरसादी आपु गवाईऐ । नानक नामु रखहु उरधारि । देवणहारे कउ जैकारु ॥ ५ ॥ वीरवारि वीर भरमि भुलाए । प्रेत भूत सभि दूजै लाए । आपि उपाए करि वेखै वेका । सभना करते तेरी टेका । जीअ जंत तेरी सरणाई । सो मिलै जिसु लैहि मिलाई ॥ ६ ॥ सुक्रवारि प्रभु रहिआ समाई । आपि उपाइ सभ कीमति पाई । गुरमुखि होवै सु करै बीचारु । सचु संजमु करणी है कार । वरतु नेमु निताप्रति पूजा । बिनु बूझे सभु भाउ है दूजा ॥ ७ ॥ छनिछरवारि सउण सासत बीचारु । हउमै मेरा भरमै संसारु । मनमुखु अंधा दूजै भाइ । जम दरि बाधा चोटा खाइ । गुरपरसादी सदा सुखु पाए । सचु करणी साचि लिव लाए ॥ ८ ॥ सतिगुरु सेवहि से वडभागी । हउमै मारि सचि लिव लागी । तेरै रंगि राते सहजि सुभाइ । तू सुखदाता लैहि मिलाइ । एकस ते दूजा नाही कोइ । गुरमुखि बूझै सोझी होइ ॥ ९ ॥ पंद्रह थितीं तै सत वार । माहा रुती आवहि वार वार । दिनसु रैणि तिवै संसारु । आवागउणु कीआ

करतारि । निहचलु साचु रहिआ कलधारि । नानक गुरमुखि बूझै को सबदु वीचारि ॥ १० ॥ १ ॥

(इस वाणी में गुरुजी ने सप्ताह के सातों दिनों को आधार बनाकर जीवात्मा को प्रभु-मिलन की ओर प्रवृत्त किया है।) रविवार का उपदेश है कि परमात्मा आदिपुरुष है, स्वयं सबका सर्जक है, उसके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं। प्रभु ने संसार को पूरी तरह से अपने में सँजो रखा है; जो वह चाहता है वही करता है। जीव यदि नाम में रत रहे तो सदा सुख प्राप्त करता है, दुःख उसके निकट नहीं आता; किन्तु इस तथ्य को कोई विरल जीव ही गुरु के द्वारा समझ पाता है ॥ १ ॥ हृदय की माला लेकर गुणों के भण्डार वाहिगुरु का जाप करो। हरि अगम, अगोचर, अपार और सबका स्वामी है, इसलिए उसके चरणों की शरण लेकर उसका नाम जपो और उसकी दासता स्वीकार करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सोमवार का प्रतीक सत्यस्वरूप परमात्मा में विलीन होने का है। यह स्थिति अमूल्य है, इसका मोल कहा नहीं जा सकता। (बड़े-बड़े ऋषियों-मुनियों ने इसकी व्याख्या का प्रयास किया) किन्तु वे भी इस अनिर्वचनीय सत्य की व्याख्या नहीं कर पाये और अन्ततः चुप हो गये। सत्य तो यह है कि प्रभु जिसे वाहिगुरु का ज्ञान देना चाहता है, उसी को सौंपता है। अन्यथा वह अगम, अगोचर प्रभु किसी अन्य के द्वारा समझा नहीं जा सकता। यदि गुरु के शब्दों के अनुसार आचरण किया जाये तो जीव उसी में समा जाता है ॥ २ ॥ मंगलवार का उपदेश है कि परमात्मा ने ही माया-मोह आदि उत्पन्न किये हैं। प्रत्येक जीव को रचकर अलग-अलग कार्य से लगा रखा है। जिसे वह उस तथ्य का ज्ञान देता है, वही उसे समझता है। गुरु के शब्दों पर आचरण करने से ही परमात्मा का सच्चा धर्म दीख पड़ता है। जीव प्रेम और भक्ति के द्वारा परमात्मा में ध्यान लगाता है और गुरु-शब्दों द्वारा अहंकार तथा ममता को जला देता है ॥ ३ ॥ बुधवार मानव-बुद्धि को आश्रय देने का प्रतीक है। वाहिगुरु स्वयं जीव की बुद्धि का संरक्षण करता है। वह जीव गुरु द्वारा शुभ कार्यों में रत होता है और शब्द विचारता है। प्रभु-नाम में रत होने से मन निर्मल हो जाता है, हरि का गुणगान करने से अहंकार की मलिनता दूर होती है और जीव सत्यस्वरूप परमात्मा के दरबार में प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। गुरु के सुहाने शब्दों पर आचरण करते हुए जीव नाम में ही एकाग्र हो जाता है ॥ ४ ॥ गुरु के द्वारा उसे नाम का लाभ प्राप्त होता है। यह लाभ देनहार प्रभु स्वयं देता है। अतः जिसे वह (नाम) देता है, हम उस पर बलिहार जाते हैं। गुरु की कृपा से अहंकार दूर होता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु-नाम को हृदय में धारण करके

रखो और नाम देनेवाले का जय-जयकार करो ॥ ५ ॥ बृहस्पतिवार का उपदेश बावन वीरों के (हनुमान, भैरों आदि) भ्रम में भूले जीवों को सही मार्ग बताने के लिए कहा है। भूत, प्रेत आदि सब वाहिगुरु को छोड़कर दूसरे में लीन हों। परमात्मा स्वयं उन्हें अलग-अलग बनाता और उनकी सम्हाल करता है। सबको एकमात्र उसी परमात्मा का सहारा है। सब जीव-जन्तु प्रभु की शरण में हैं; विलीन वही होता है, जिसे परमात्मा स्वयं अपने में मिला लेता है ॥ ६ ॥ शुक्रवार जीव के प्रभु में समा जाने की गाथा है। प्रभु ने जीवों को स्वयं पैदा किया है और उनका अलग-अलग मूल्य निर्धारित किया है। जिस जीव को गुरु का आश्रय मिला है, वही इस तथ्य पर विचार कर सकता है। सत्य और संयम ही इसका वास्तविक लक्ष्य है। व्रत, नियम और नित्यप्रति की पूजा बिना यथार्थ ज्ञान के सब द्वैतभाव के द्योतक हैं ॥ ७ ॥ शनिवार सगुण मुहूर्त और शास्त्र का विचार है, किन्तु यह सब मेरा भ्रम और अहंकार मात्र है। मन के संकेतों पर चलनेवाला जीव द्वैतभाव में अन्धा होता है। इसीलिए यमदूतों के द्वार पर बँधा हुआ ठोकरें खाता है। यदि गुरु की कृपा हो जाये तो वह सदा सुख को प्राप्त करे, सत्यकर्म कमाये और सत्यस्वरूप परमात्मा में ही लीन हो जाये ॥ ८ ॥ जो जीव इन सबसे ऊपर निष्काम भाव से सतगुरु की सेवा में रत रहता है, वह परम भाग्यशाली है। वह अपने अहंकार का अन्त कर सत्यस्वरूप प्रभु में ध्यानस्थ होता है और उसी के रंग में रँगा जाकर सहजावस्था को प्राप्त कर लेता है। सुखदाता प्रभु उसे अपने में ही विलीन कर लेता है। एक परमात्मा के अतिरिक्त दूसरा कुछ नहीं, इस तथ्य का ज्ञान गुरु के द्वारा मिलता है और जीव का विवेक जाग्रत् होता है ॥ ९ ॥ जिस प्रकार दिन-रात पन्द्रह तिथियाँ, सात वार, बारह महीने और छः ऋतुएँ बार-बार आती-जाती हैं, वैसे ही यह संसार है; यह भी जन्म-मरण के चक्कर में पड़ा रहता है, निश्चल और अडिग केवल एक परमात्मा है, उसी की शक्ति चतुर्दिक् व्याप्त है। गुरु नानक कहते हैं कि कोई विरल जीव ही गुरु के शब्दों का सही ज्ञान पाकर इस रहस्य को समझ पाता है ॥ १० ॥ १ ॥

॥ बिलावलु महला ३ ॥ आदि पुरखु आपे स्रिसटि साजे। जीअ जंत माइआ मोहि पाजे। दूजै भाइ परपंचि लागे। आवहि जावहि मरहि अभागे। सतिगुरि भेटिऐ सोझी पाइ। परपंचु चूके सचि समाइ ॥ १ ॥ जा कै मसतकि लिखिआ लेखु। ता कै मनि वसिआ प्रभु एकु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ स्रिसटि उपाइ आपे सभु वेखै। कोइ न मेटै तेरै लेखै। सिध साधिक

जे को कहै कहाए । भरमे भूला आवै जाए । सतिगुरु सेवै सो जनु बूझै । हउमै मारे ता दरु सूझै ।। २ ।। एकसु ते सभु दूजा हूआ । एको वरतै अवरु न बीआ । दूजे ते जे एको जाणै । गुर कै सबदि हरि दरि नीसाणै । सतिगुरु भेटे ता एको पाए । विचहु दूजा ठाकि रहाए ।। ३ ।। जिस दा साहिबु डाढा होइ । तिस नो मारि न साकै कोइ । साहिब की सेवकु रहै सरणाई । आपे बखसे दे वडिआई । तिस ते ऊपरि नाही कोइ । कउणु डरै डरु किस का होइ ।। ४ ।। गुरमती सांति वसै सरीर । सबदु चीन्हि फिरि लगै न पीर । आवै न जाइ ना दुखु पाए । नामे राते सहजि समाए । नानक गुरमुखि वेखै हदूरि । मेरा प्रभु सद रहिआ भरपूरि ।। ५ ।। इकि सेवक इकि भरमि भुलाए । आपे करे हरि आपि कराए । एको वरतै अवरु न कोइ । मनि रोसु कीजै जे दूजा होइ । सतिगुरु सेवे करणी सारी । दरि साचै साचे वीचारी ।। ६ ।। थिती वार सभि सबदि सुहाए । सतिगुरु सेवे ता फलु पाए । थिती वार सभि आवहि जाहि । गुर सबदु निहचलु सदा सचि समाहि । थिती वार ता जा सचि राते । बिनु नावै सभि भरमहि काचे ।। ७ ।। मनमुख मरहि मरि बिगती जाहि । एकु न चेतहि दूजै लोभाहि । अचेत पिंडी अगिआन अंधारु । बिनु सबदै किउ पाए पारु । आपि उपाए उपावणहारु । आपे कीतोनु गुर वीचारु ।।८।। बहुते भेख करहि भेखधारी । भवि भवि भरमहि काची सारी । ऐथै सुखु न आगै होइ । मनमुख मुए अपणा जनमु खोइ । सतिगुरु सेवे भरमु चुकाए । घर ही अंदरि सचु महलु पाए ।। ९ ।। आपे पूरा करे सु होइ । एहि थिती वार दूजा दोइ । सतिगुर बाझहु अंधु गुबारु । थिती वार सेवहि मुगध गवार । नानक गुरमुखि बूझै सोझी पाइ । इकतु नामि सदा रहिआ समाइ ।। १० ।। २ ।।

आदिपुरुष परब्रह्म ने स्वयं यह सृष्टि बनायी। जीव-जन्तुओं को माया-मोह में प्रवृत्त किया, छल-रूप जगत में सब के सब द्वैतभाव में मग्न किये। अब वे दुर्भाग्यशाली संसार में जन्म-मरण के चक्कर में पड़े हैं; जब तक उन्हें सतगुरु से मिलन नहीं प्राप्त होता, तब तक उनका यह जगत-प्रपञ्च मिट नहीं पाता और न ही वे सत्यस्वरूप प्रभु में विलीन हो पाते

हैं ॥ १ ॥ जो भाग्यशाली हैं, जिन्होंने सतकर्म किये हैं, उनके मन में प्रभु स्वयं निवास करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु ने सृष्टि का यह खेल रचा है और वही खेल का दर्शक भी है। हे जीव ! तुम्हारे मस्तिष्क पर लिखे लेखों को कोई नहीं मिटा सकता, चाहे कोई कितना भी सिद्ध या साधक क्यों न हो, वह भी माया के भ्रम में पड़ा आवागमन का शिकार है। जो जीव सतगुरु की भक्ति करता है, वही उस ज्ञान को प्राप्त करता है; अहंकार को मारता है, तभी उसे परमात्मा का द्वार मिलता है ॥ २ ॥ एक ब्रह्म से ही दूसरा सब कुछ पैदा हुआ है। वही एक सर्वव्याप्त है दूसरा और कोई नहीं। यदि जीव दूसरों को छोड़कर एक हरि को पहचान ले तो गुरु के शब्दों द्वारा वह परमात्मा के सामने प्रतिष्ठित होता है। एक प्रभु की प्राप्ति भी सतगुरु के मिलाप से ही सम्भव है। तभी उसके मन से द्वैतभाव का नाश हो सकता है ॥ ३ ॥ नियम भी है कि जिसका मालिक शक्तिशाली होता है, उसे कोई नहीं मार सकता है। जो सेवक स्वामी की शरण में रहता है, उसे स्वामी स्वयं सम्मानित करता है। उसके ऊपर अधिक शक्तिशाली कोई नहीं होता, इसलिए वह क्यों डरे, उसे किसका डर हो सकता है ॥ ४ ॥ गुरु के आदेशों पर आचरण करने से जीव शान्तिपूर्वक जीता है। गुरु-शब्दों को जान लेने पर फिर कोई पीड़ा नहीं रह जाती। उसका आवागमन नष्ट हो जाता है और उसे कोई दुःख नहीं रह जाता। नाम में मग्न होकर जीव अडिग अवस्था में पहुँचता है और गुरु नानक का कथन है कि वह जीव गुरु के द्वारा परमात्मा को साक्षात् कर लेता है। प्रभु सदैव उसके अंग-संग होता है ॥ ५ ॥ कुछ जीव परमात्मा की सेवा में लीन होते हैं और कुछ भ्रमों में भटकते रहते हैं। परमात्मा स्वयं उन्हें उक्त दशा में रखता है। एक परमात्मा ही सब तरफ़ व्याप्त है, अन्य कोई नहीं। मन की वेदना तो तब प्रकट हो, यदि द्वैतभाव उग्र हो उठे। सतगुरु की भक्ति ही सच्ची कर्मशीलता है; इस कर्मशीलता का आयोजन स्वय सत्यस्वरूप परमात्मा ने किया है ॥ ६ ॥ तिथियों तथा वारों को शब्द में लगाकर सुहाना बनाया जा सकता है, सतगुरु की सेवा से मोक्ष-फल प्राप्त होता है। तिथियाँ तथा वार परिवर्तनशील हैं, किन्तु गुरु के शब्दों के सहारे जीव सत्यस्वरूप निश्चल परमात्मा में समा जाता है। तिथियों और वारों का सही महत्त्व तभी होता है, जब जीव सत्य में समा जाता है। प्रभु-नाम के बिना सब रचना अस्तित्वहीन और कच्ची है ॥ ७ ॥ मनमुखी जीव मरकर भी दुर्गति को प्राप्त होता है, क्योंकि वह एक परमात्मा में विश्वास नहीं करता, द्वैतभाव में लोभायमान रहता है। वह नासमझ, अज्ञानी और अन्धा जीव होता है; गुरु-शब्दों के बिना उसकी कोई गति नहीं होती। रचयिता ने उसे भी बनाया है, किन्तु गुरु की समझ उसे प्राप्त नहीं होती (इसलिए वह जगत में ही

ठोकरें खाता रह जाता है) ॥ ८ ॥ वह भेसधारी मनमुख अनेक भेसों को धारण करता है, बार-बार कच्चा पाँसा फेंकता है (किन्तु उसे कभी विजय प्राप्त नहीं होती)। उसके लिए न यहाँ सुख होता है, न आगामी जीवन में उसे सुख मिलता है। मनमुख एक अमूल्य जीवन को खोकर मर जाता है। यदि वह सतगुरु की शरण ले और भ्रमों से मुक्त हो जाये तो शरीर में ही उसे प्रभु का मन्दिर मिल सकता है॥ ९ ॥ परमात्मा पूर्ण है, वह जो भी चाहता है वही होता है। इन तिथियों और वारों का विचार द्वैतभाव पैदा करता है, सतगुरु के बिना दूसरे विचारों में लीन रहना अज्ञानान्धता है। जो लोग तिथियों और वारों को मानते हैं, वे अविवेकी हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिस जीव ने गुरु के द्वारा विवेक प्राप्त कर लिया है, वह सदा एक प्रभु के नाम में ही लीन रहता है॥ १० ॥ २ ॥

बिलावलु महला १ छंत दखणी

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मुंध नवेलड़ीआ गोइलि आई राम। मटुकी डारि धरी हरि लिव लाई राम। लिव लाइ हरि सिउ रही गोइलि सहजि सबदि सीगारीआ। कर जोड़ि गुर पहि करि बिनंती मिलहु साचि पिआरीआ। धन भाइ भगती देखि प्रीतम काम क्रोधु निवारिआ। नानक मुंध नवेल सुंदरि देखि पिरु साधारिआ ॥ १ ॥ सचि नवेलड़ीए जोबनि बाली राम। आउ न जाउ कही अपने सह नाली राम। नाह अपने संगि दासी मै भगति हरि की भावए। अगाधि बोधि अकथु कथीऐ सहजि प्रभ गुण गावए। राम नाम रसाल रसीआ रवै साचि पिआरीआ। गुरिसबदु दीआ दानु कीआ नानका वीचारीआ ॥ २ ॥ स्री धर मोहिअड़ी पिर संगि सूती राम। गुर कै भाइ चलो साचि संगूती राम। धन साचि संगूती हरि संगि सूती संगि सखी सहेलीआ। इक भाइ इक मनि नामु वसिआ सतिगुरू हम मेलीआ। दिनु रैणि घड़ी न चसा विसरै सासि सासि निरंजनो। सबदि जोति जगाइ दीपकु नानका भउ भंजनो ॥ ३ ॥ जोति सबाइड़ीए त्रिभवण सारे राम। घटि घटि रवि रहिआ अलख अपारे राम। अलख अपार अपारु साचा आपु मारि मिलाईऐ। हउमै ममता लोभु जालहु सबदि

मैलु चुकाईऐ । दरि जाइ दरसनु करी भाणै तारि तारणहारिआ ।
हरि नामु अंम्रितु चाखि त्रिपती नानका उरधारिआ ।। ४ ।। १ ।।

आत्मा रूपी नववधू संसार रूपी चरागाह में थोड़े समय के लिए ही आयी है ('गोयली' उस चरागाह को कहते हैं, जहाँ वर्षा के दिनों में लोग अपने पशुओं को चराते हैं) । यहाँ आकर विवेकवान आत्मा चरागाह का मोह छोड़कर अर्थात् संसार के आकर्षणों को त्यागकर सहज में ही हरि-नाम का शृंगार करती है । हाथ जोड़कर प्रभु से विनती करती है कि परमात्मा उसे प्राप्त हो । वह स्त्री काम-क्रोध का निवारण करके भाव-भक्ति में लीन हो जाती है और अपने प्रियतम का ध्यान करती है । गुरु नानक कहते हैं कि वह नवयौवना अपने को इतना आकर्षक बना लेती है कि प्रियतम उसके प्रति मोह करने लगता है और वह सुहागिन हो जाती है ।। १ ।। सत्य के सहारे नित्य नवयौवन को प्राप्त करनेवाली आत्मा रूपी स्त्री फिर किसी भ्रम-भटकाव में नहीं पड़ती और हमेशा अपने पति-प्रभु के साथ संयोग दशा को प्राप्त होती है । (वह कहती है कि) मैं अपने पति के साथ दास्य-भाव की भक्ति में लीन हूँ । जिस परमात्मा का ज्ञान अथाह और अनिर्वचनीय है, मैं उसी की चर्चा करती और गुण गाती हूँ । राम-नाम समस्त रसों का भण्डार है और इस रस में लगी प्रिय आत्माओं को प्रभु-पति वहीं भोगता है (अर्थात् राम-नाम का रसपान करने वाली जीवात्मा रूपी स्त्री उसी में प्रभु-मिलन को प्राप्त होती है) । गुरु नानक कहते हैं कि गुरु का शब्द प्राप्त होने से जीवात्मा विवेक को धारण करती है ।। २ ।। परमात्मा के मोह में पड़ी जीवात्मा रूपी स्त्री उसकी संगति को पाती है । गुरु के आदेशों पर आचरण करते हुए वह सत्यस्वरूप परमात्मा के संग मिल जाती है । वह स्त्री सच्चे वाहिगुरु का मिलाप पाकर उसी के संयोग में अपनी सखी-सहेलियों को भी ले आती है । जब उन सब में प्रभु-पति के लिए अनुराग पैदा होता है और मन में उसका नाम जाप करती हैं, तो सतगुरु उन्हें अपने में ही लीन कर लेता है । तब रात-दिन, घड़ी-पल, क्षण भर के लिए भी वे अपने पति के नाम को विस्मृत नहीं करतीं, श्वास-श्वास से परमात्मा का नाम लेती हैं । गुरु नानक कहते हैं कि तब उनके भीतर शब्द की ज्योति आलोकित हो उठती है और वे भय-भञ्जन प्रभु की शरण में रहती हैं ।। ३ ।। हे स्त्री ! उस हरि की ज्योति सब जगह तीनों भुवनों में व्याप्त है । वह अलक्ष्य अपार प्रभु घट-घट में निवसित है । उस अपार अदृश्य परमात्मा को केवल अहंकार का निवारण करके ही मिला जा सकता है । (जीव को चाहिए कि) अहंकार, लोभ और ममता को जलाकर गुरु के शब्दों द्वारा सब प्रकार की मलिनता को दूर करे । उसके द्वार पर समर्पित भाव से दर्शन करे और उसकी इच्छा

को शिरोधार्य करे। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम रूपी अमृत का पान करके जीवात्मा रूपी स्त्री तृप्त हो जाती है और परमात्मा को हृदय में बसा लेती है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ बिलावलु महला १ ॥ मै मनि चाउ घणा साचि विगासी राम। मोही प्रेम पिरे प्रभि अबिनासी राम। अविगतो हरि नाथु नाथह तिसै भावै सो थीऐ। किरपालु सदा दइआलु दाता जीआ अंदरि तूं जीऐ। मै अवरु गिआनु न धिआनु पूजा हरि नामु अंतरि वसि रहे। भेखु भवनी हठु न जाना नानका सचु गहि रहे ॥ १ ॥ भिनड़ी रैणि भली दिनस सुहाए राम। निजघरि सूतड़ीए पिरमु जगाए राम। नवहाणि नव धन सबदि जागी आपणे पिर भाणीआ। तजि कूड़ु कपटु सुभाउ दूजा चाकरी लोकाणीआ। मै नामु हरि का हारु कंठे साच सबदु नीसाणिआ। कर जोड़ि नानकु साचु मागै नदरि करि तुधु भाणिआ ॥ २ ॥ जागु सलोनड़ीए बोलै गुरबाणी राम। जिनि सुणि मंनिअड़ी अकथ कहाणी राम। अकथ कहाणी पदु निरबाणी को विरला गुरमुखि बूझए। ओहु सबदि समाए आपु गवाए त्रिभवण सोझी सूझए। रहै अतीतु अपरंपरि राता साचु मनि गुण सारिआ। ओहु पूरि रहिआ सरब ठाई नानका उरिधारिआ ॥ ३ ॥ महलि बुलाइड़ीए भगति सनेही राम। गुरमति मनि रहसी सीझसि देही राम। मनु मारि रीझै सबदि सीझै त्रैलोक नाथु पछाणए। मनु डीगि डोलि न जाइ कत ही आपणा पिरु जाणए। मै आधारु तेरा तू खसमु मेरा मै ताणु तकीआ तेरओ। साचि सूचा सदा नानक गुरसबदि झगरु निबेरओ ॥ ४ ॥ २ ॥

मैं सत्य के द्वारा उल्लसित हूँ और मेरे मन में परमात्मा का घना चाव है। अविनाशी प्रभु मालिकों का भी मालिक है और जो उसे उपयुक्त लगता है वही होता है। वह कृपालु और दयालु परमात्मा सबका पोषक है तथा सब जीवों का जीव है। मुझे किसी प्रकार के ज्ञान, ध्यान या पूजा की अपेक्षा नहीं रह जाती, यदि वह प्रभु स्वयं मेरे भीतर निवास करे। तीर्थों पर भटकना और विभिन्न भेस बनाना मुझे नहीं भाता; क्योंकि, नानक कहते हैं, सत्यस्वरूप प्रभु की शरण लेनेवाला उक्त बातों

मैलु चुकाईऐ । दरि जाइ दरसनु करी भाणै तारि तारणहारिआ । हरि नामु अंम्रितु चाखि त्रिपती नानका उरधारिआ ।। ४ ।। १ ।।

आत्मा रूपी नववधू संसार रूपी चरागाह में थोड़े समय के लिए ही आयी है ('गोयली' उस चरागाह को कहते हैं, जहाँ वर्षा के दिनों में लोग अपने पशुओं को चराते हैं)। यहाँ आकर विवेकवान आत्मा चरागाह का मोह छोड़कर अर्थात् संसार के आकर्षणों को त्यागकर सहज में ही हरि-नाम का शृंगार करती है। हाथ जोड़कर प्रभु से विनती करती है कि परमात्मा उसे प्राप्त हो। वह स्त्री काम-क्रोध का निवारण करके भाव-भक्ति में लीन हो जाती है और अपने प्रियतम का ध्यान करती है। गुरु नानक कहते हैं कि वह नवयौवना अपने को इतना आकर्षक बना लेती है कि प्रियतम उसके प्रति मोह करने लगता है और वह सुहागिन हो जाती है ।। १ ।। सत्य के सहारे नित्य नवयौवन को प्राप्त करनेवाली आत्मा रूपी स्त्री फिर किसी भ्रम-भटकाव में नहीं पड़ती और हमेशा अपने पति-प्रभु के साथ संयोग दशा को प्राप्त होती है। (वह कहती है कि) मैं अपने पति के साथ दास्य-भाव की भक्ति में लीन हूँ। जिस परमात्मा का ज्ञान अथाह और अनिर्वचनीय है, मैं उसी की चर्चा करती और गुण गाती हूँ। राम-नाम समस्त रसों का भण्डार है और इस रस में लगी प्रिय आत्माओं को प्रभु-पति वहीं भोगता है (अर्थात् राम-नाम का रसपान करने वाली जीवात्मा रूपी स्त्री उसी में प्रभु-मिलन को प्राप्त होती है)। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु का शब्द प्राप्त होने से जीवात्मा विवेक को धारण करती है ।। २ ।। परमात्मा के मोह में पड़ी जीवात्मा रूपी स्त्री उसकी संगति को पाती है। गुरु के आदेशों पर आचरण करते हुए वह सत्यस्वरूप परमात्मा के संग मिल जाती है। वह स्त्री सच्चे वाहिगुरु का मिलाप पाकर उसी के संयोग में अपनी सखी-सहेलियों को भी ले आती है। जब उन सब में प्रभु-पति के लिए अनुराग पैदा होता है और मन में उसका नाम जाप करती हैं, तो सतगुरु उन्हें अपने में ही लीन कर लेता है। तब रात-दिन, घड़ी-पल, क्षण भर के लिए भी वे अपने पति के नाम को विस्मृत नहीं करतीं, श्वास-श्वास से परमात्मा का नाम लेती हैं। गुरु नानक कहते हैं कि तब उनके भीतर शब्द की ज्योति आलोकित हो उठती है और वे भय-भञ्जन प्रभु की शरण में रहती हैं ।। ३ ।। हे स्त्री ! उस हरि की ज्योति सब जगह तीनों भुवनों में व्याप्त है। वह अलक्ष्य अपार प्रभु घट-घट में निवसित है। उस अपार अदृश्य परमात्मा को केवल अहंकार का निवारण करके ही मिला जा सकता है। (जीव को चाहिए कि) अहंकार, लोभ और ममता को जलाकर गुरु के शब्दों द्वारा सब प्रकार की मलिनता को दूर करे। उसके द्वार पर समर्पित भाव से दर्शन करे और उसकी इच्छा

को शिरोधार्य करे। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम रूपी अमृत का पान करके जीवात्मा रूपी स्त्री तृप्त हो जाती है और परमात्मा को हृदय में बसा लेती है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ बिलावलु महला १ ॥ मै मनि चाउ घणा साचि विगासी राम। मोही प्रेम पिरे प्रभि अबिनासी राम। अविगतो हरि नाथु नाथह तिसै भावै सो थीऐ। किरपालु सदा दइआलु दाता जीआ अंदरि तूं जीऐ। मै अवरु गिआनु न धिआनु पूजा हरि नामु अंतरि वसि रहे। भेखु भवनी हठु न जाना नानका सचु गहि रहे ॥ १ ॥ भिनड़ी रैणि भली दिनस सुहाए राम। निजघरि सूतड़ीए पिरमु जगाए राम। नवहाणि नव धन सबदि जागी आपणे पिर भाणीआ। तजि कूड़ु कपटु सुभाउ दूजा चाकरी लोकाणीआ। मै नामु हरि का हारु कंठे साच सबदु नीसाणिआ। कर जोड़ि नानकु साचु मागै नदरि करि तुधु भाणिआ ॥ २ ॥ जागु सलोनड़ीए बोलै गुरबाणी राम। जिनि सुणि मंनिअड़ी अकथ कहाणी राम। अकथ कहाणी पदु निरबाणी को विरला गुरमुखि बूझए। ओहु सबदि समाए आपु गवाए त्रिभवण सोझी सूझए। रहै अतीतु अपरंपरि राता साचु मनि गुण सारिआ। ओहु पूरि रहिआ सरब ठाई नानका उरिधारिआ ॥ ३ ॥ महलि बुलाइड़ीए भगति सनेही राम। गुरमति मनि रहसी सीझसि देही राम। मनु मारि रीझै सबदि सीझै त्रैलोक नाथु पछाणए। मनु डीगि डोलि न जाइ कत ही आपणा पिरु जाणए। मै आधारु तेरा तू खसमु मेरा मै ताणु तकीआ तेरओ। साचि सूचा सदा नानक गुरसबदि झगरु निबेरओ ॥ ४ ॥ २ ॥

मैं सत्य के द्वारा उल्लसित हूँ और मेरे मन में परमात्मा का घना चाव है। अविनाशी प्रभु मालिकों का भी मालिक है और जो उसे उपयुक्त लगता है वही होता है। वह कृपालु और दयालु परमात्मा सबका पोषक है तथा सब जीवों का जीव है। मुझे किसी प्रकार के ज्ञान, ध्यान या पूजा की अपेक्षा नहीं रह जाती, यदि वह प्रभु स्वयं मेरे भीतर निवास करे। तीर्थों पर भटकना और विभिन्न भेस बनाना मुझे नहीं भाता; क्योंकि, नानक कहते हैं, सत्यस्वरूप प्रभु की शरण लेनेवाला उक्त बातों

पर आश्रित नहीं रहता ।। १ ।। (प्रभु-पति को पा लेनेवाली जीवात्मा रूपी स्त्री के लिए) रात्रि सुखदायी होती है और दिन सुहाने होते हैं। अपने आप में मस्त उस स्त्री को प्रियतम स्वयं जगाकर अपने में स्थिर कर लेता है और वह नवयौवना स्त्री शब्द की ध्वनि से जागृति को प्राप्त कर अपने प्रियतम को सुहानी लगने लगती है । तब वह मिथ्या छल-कपट, द्वैतभाव और सांसारिक दासता को त्याग देती है । वह हरि-नाम की माला को कण्ठ में धारण करके शब्द के द्वारा अपना सच्चा शृंगार करती है और हाथ जोड़कर प्रियतम की कृपादृष्टि की नित्य माँग करती है ।। २ ।। हे सलोनी सुन्दर स्त्री ! उठकर गुरुवाणी का पाठ कर, जिसे सुनकर प्रभु की अनिर्वचनीय कहानी प्रकट होती है । आत्मा और परमात्मा के मिलन की यह अकथ्य कथा कोई निराला व्यक्ति ही गुरु के माध्यम से समझता है और निर्वाण पद को पा जाता है । उसे त्रिभुवन का ज्ञान हो जाता है और वह अहंकार का त्याग कर प्रभु के शब्द में ही लीन रहता है । वह संसार से अलिप्त पर ब्रह्म में अनुराग बनाकर उसी के गुणों का स्मरण करता रहता है । वह सब जगह विद्यमान प्रभु को अपने हृदय में धारण कर लेता है, ऐसा गुरु नानक का मत है ।। ३ ।। वह वाहिगुरु भक्तों से प्यार करता है और उस जीवात्मा को अपने महल में बुला लेता है । गुरु की शिक्षा को मन में धारण करके आत्मा आनन्दवती होती है और अपने जीवत को सफल कर लेती है । मन को मारकर और शब्द में रत होकर आत्मा त्रिलोकीनाथ को पहचानती है; उसका मन स्थिर हो जाता है और वह अपने प्रियतम में ध्यानस्थ हो जाती है । आत्मा को प्रभु-पति का ही सहारा है, प्रभु ही उसका एकमात्र स्वामी है और उसी के बल पर वह प्राणवंत है । गुरु नानक कहते हैं कि सत्यस्वरूप परमात्मा एक मात्र निर्मलता का द्योतक है और गुरु के शब्दों द्वारा बाकी सब विकृतियों का निवारण हो जाता है ।। ४ ।। २ ।।

छंत बिलावलु महला ४ मंगल

१ ओं सतिगुर प्रसादि । मेरा हरि प्रभु सेजै आइआ मनुमुखि समाणा राम । गुरि तुठै हरि प्रभु पाइआ रंगि रलीआ माणा राम । वडभागीआ सोहागणी हरि मसतकि माणा राम । हरि प्रभु हरि सोहागु है नानक मनि भाणा राम ।।१।। निमाणिआ हरि माणु है हरि प्रभु हरि आपै राम । गुरमुखि आपु गवाइआ नित हरि हरि जापै राम । मेरे हरि प्रभ भावै सो करै हरि रंगि

हरि रापै राम । जनु नानकु सहजि मिलाइआ हरि रसि हरि ध्रापै राम ॥ २ ॥ माणस जनमि हरि पाईऐ हरि रावण वेरा राम । गुरमुखि मिलु सोहागणी रंगु होइ घणेरा राम । जिन माणस जनमि न पाइआ तिन्ह भागु मंदेरा राम । हरि हरि हरि हरि राखु प्रभ नानकु जनु तेरा राम ॥ ३ ॥ गुरि हरि प्रभु अगमु द्रिड़ाइआ मनु तनु रंगि भीना राम । भगति वछलु हरि नामु है गुरमुखि हरि लीना राम । बिनु हरि नाम न जीवदे जिउ जल बिनु मीना राम । सफल जनमु हरि पाइआ नानक प्रभि कीना राम ॥ ४ ॥ १ ॥ ३ ॥

(यहाँ प्रभु-मिलन के उल्लास का चित्रण किया गया है।) मेरा प्रभु-पति मेरी सेज पर विराजमान है और मेरा मन सुख और उल्लास की अनुभूतियों में खोया हुआ है। गुरु के सन्तुष्ट होने पर ही मैंने परमात्मा रूपी पति को प्राप्त किया है और उसके साथ रंगरलियाँ मना रही हूँ। मुझे परमात्मा का सौभाग्य सुहाग प्राप्त हुआ है, मेरे माथे भाग्य की मणि दीप्त है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-प्रभु सब जीवात्माओं का सुहाग है, जो उसके मन को आकर्षित करती है (वही उसकी संगति प्राप्त कर लेती है) ॥ १ ॥ निर्मल जीवों का स्वामी भी स्वयं परमात्मा ही है। गुरु के द्वारा अहंकार का त्याग कर नित्य हरि-नाम का जाप करने से (जीवात्मा को उसकी शरण प्राप्त होती है)। मेरे प्रभु-पति को जो अच्छा लगता है वही करता है, उसके प्यार में जो हरि-रंग में ही रँग जाता है (वही उसका सान्निध्य प्राप्त करता है)। गुरु नानक कहते हैं कि दास को परमात्मा सहज में ही अपने साथ मिलाकर पूर्णतृप्ति प्रदान करता है ॥ २ ॥ मनुष्य-जन्म परमात्मा के स्मरण का समय है, उसी में प्रभु को प्राप्त किया जा सकता है। गुरु के द्वारा परमात्मा को मिलकर आत्मा सुहागिन होती है और परमानन्द को प्राप्त करती है। जिन जीवात्माओं को मनुष्य-जन्म नहीं मिलता, वे बुरे कर्मों का फल पा रहे हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु ! मेरी रक्षा करो, मैं तुम्हारा दास हूँ ॥ ३ ॥ गुरु ने अगम परमात्मा को हमें मिला दिया है, जिससे मेरा तन-मन उल्लसित हो उठा है। परमात्मा भक्तवत्सल है और गुरु के द्वारा हरि-नाम में मन लगाया जा सकता है। हरि-नाम के बिना जल-विहीन मछली की तरह जीना भी दूभर है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसने परमात्मा को अपना बना लिया, उसी का जीवन सफल है ॥ ४ ॥ १ ॥ ३ ॥

॥ बिलावलु महला ४ ॥ सलोकु ॥ हरि प्रभु सजणु

लोड़ि लहु मनि वसै वडभागु । गुरि पूरै वेखालिआ नानक हरि लिव लागु ।। १ ।। छंत ।। मेरा हरि प्रभ रावणि आईआ हउमै बिखु झागे राम । गुरमति आपु मिटाइआ हरि हरि लिव लागे राम । अंतरि कमलु परगासिआ गुर गिआनी जागे राम । जन नानक हरि प्रभु पाइआ पूरै वडभागे राम ।। १ ।। हरि प्रभु हरि मनि भाइआ हरि नामि वधाई राम । गुरि पूरै प्रभु पाइआ हरि हरि लिव लाई राम । अगिआनु अंधेरा कटिआ जोति परगटिआई राम । जन नानक नामु अधारु है हरि नामि समाई राम ।। २ ।। धन हरि प्रभि पिआरै रावीआ जां हरि प्रभ भाई राम । अखी प्रेम कसाईआ जिउ बिलक मसाई राम । गुरि पूरै हरि मेलिआ हरि रसि आघाई राम । जन नानक नामि विगसिआ हरि हरि लिव लाई राम ।। ३ ।। हम मूरख मुगध मिलाइआ हरि किरपा धारी राम । धनु धंनु गुरू साबासि है जिनि हउमै मारी राम । जिन्ह वडभागीआ वडभागु है हरि हरि उरधारी राम । जन नानक नामु सलाहि तू नामे बलिहारी राम ।। ४ ।। २ ।। ४ ।।

प्रभु-साजन को बड़े भाग्य से ही मन में स्थिर किया जाता है। गुरु नानक का कथन है कि कोई पूरा गुरु ही उससे साक्षात्कार करवा सकता है और तभी जीव का प्रेम उसमें स्थिर होता है ।। १ ।। छंत ।। मैं अपने पति-प्रभु को मिलने के लिए संसार रूपी विष के सागर को पार करके आयी हूँ, मैंने अपने अहंकार को भी त्याग दिया है। गुरु के उपदेशों से मेरा अहंकार दूर हुआ है और मैं हरि से प्रेम करने लगी हूँ। गुरु के ज्ञान से मेरे भीतर जागृति पैदा हुई है और मेरा हृदय-कमल विकसित हो गया है। दास नानक का कथन है कि बड़े ऊँचे भाग्य के कारण ही जीव-पत्नी को परमात्मा-पति प्राप्त होता है ।। १ ।। हरि-प्रभु को पा लेनेवाली जीवात्मा-स्त्री हरि-नाम का स्मरण करती है और बधाई की पात्रा होती है। गुरु की कृपा से ही वह परमात्मा को प्राप्त करती है और उसमें मन लगाती है। उसका अज्ञान रूपी अँधेरा दूर हो जाता है और उसके मन में परमात्मा की ज्योति प्रकट होती है। दास नानक का कथन है कि जिस जीवात्मा को नाम का सहारा होता है, वह हरि-नाम में ही समा जाती है ।।२।। जो जीवात्मा परमात्मा को पा जाती है, उसे प्रभु के दरबार में प्रतिष्ठा मिलती है अर्थात् प्रभु उसके साथ रमण करता है। उसकी आँखों में प्रेम का खिंचाव ऐसे बन जाता है, जैसे चूहे को पकड़ते हुए बिल्ली की आँखों में अन्य कोई लक्ष्य

नहीं रहता। पूरे गुरु की कृपा से ही हरि मिलता है और जीव मिलन-रस से तृप्ति पाता है। दास नानक का कहना है कि जिस जीव में हरि-नाम प्रकाशित होता है, उसकी वृत्ति उसी में स्थिर हो जाती है ।।३।। परमात्मा ने कृपा करके मूर्ख, गँवार जीवों को भी अपने साथ मिला लिया है। उस गुरु के हम बलिहार जाते हैं, जिसने जीव के अहंकार को दूर कर दिया है। जिन सौभाग्यशाली जीवों को हरि ने सौभाग्य प्रदान किया है, वे परमात्मा को हृदय में धारण करते हैं। दास नानक का कथन है कि जीव को हरि-नाम का यशोगान करना चाहिए और प्रभु पर सदैव बलिहार जाना चाहिए ।। ४ ।। २ ।। ४ ।।

बिलावलु महला ५ छंत

१ ओं सतिगुर प्रसादि। मंगल साजु भइआ प्रभु अपना गाइआ राम। अबिनासी वरु सुणिआ मनि उपजिआ चाइआ राम। मनि प्रीति लागै वडै भागै कब मिलीऐ पूरनपते। सहजे समाईऐ गोविंदु पाईऐ देहु सखीए मोहि मते। दिनु रैणि ठाढी करउ सेवा प्रभु कवन जुगती पाइआ। बिनवंति नानक करहु किरपा लैहु मोहि लड़ि लाइआ ।। १ ।। भइआ समाहड़ा हरि रतनु विसाहा राम। खोजी खोजि लधा हरि संतन पाहा राम। मिले संत पिआरे दइआ धारे कथहि अकथ बीचारो। इक चिति इक मनि धिआइ सुआमी लाइ प्रीति पिआरो। कर जोड़ि प्रभ पहि करि बिनंती मिलै हरि जसु लाहा। बिनवंति नानक दासु तेरा मेरा प्रभु अगम अथाहा ।। २ ।। साहा अटलु गणिआ पूरन संजोगो राम। सुखह समूह भइआ गइआ विजोगो राम। मिलि संत आए प्रभ धिआए बणे अचरज जाञीआं। मिलि इकत्र होए सहजि ढोए मनि प्रीति उपजी माञीआ। मिलि जोति जोती ओति पोती हरि नामु सभि रस भोगो। बिनवंति नानक सभ संति मेली प्रभु करणकारण जोगो ।। ३ ।। भवनु सुहावड़ा धरति सभागी राम। प्रभु घरि आइअड़ा गुरचरणी लागी राम। गुरचरण लागी सहजि जागी सगल इछा पुंनीआ। मेरी आस पूरी संत धूरी हरि मिले कंत विछुंनिआ। आनंद अनदिनु वजहि वाजे अहंमति मन की तिआगी। बिनवंति नानक सरणि सुआमी संत संगि लिव लागी ।। ४ ।। १ ।।

कल्याण के वादन बजने लगे और जीवात्मा ने अपने परमात्मा का गुणगान किया। उसे पता चल गया कि उसका पति अविनाशी प्रभु है, इसलिए उसके मन में चाव की अभिवृद्धि हुई। वह बार-बार अपने प्रेम को सराहती हुई सौभाग्य पर विचार करने लगी कि उसका मिलन परमात्मा-पति से कब होगा ? उसकी सखियाँ उसे सद्‌बुद्धि दें कि वह सहजावस्था में ही गोविन्द पति को प्राप्त कर सकेगी अर्थात् जीवात्मा सत्संगति में उस विवेक को प्राप्त करती है, जिससे सहजावस्था में उसे परमात्मा मिल जाता है। दिन-रात खड़े-खड़े वह अपने पति को प्रसन्न करने के लिए उसकी सेवा में रत रहती है, और विनती करती है कि कृपा करके प्रभु-पति उसे अपने आश्रय में अपना ले ॥ १ ॥ जीवात्मा कहती है कि उसने हरि-नाम रूपी रत्न का व्यापार कर लिया है, जिससे प्राप्त लाभ के कारण उसे अतीव आनन्द प्राप्त हुआ है। खोज-खोजकर हरि-नाम रूपी रत्न की प्राप्ति उसे सन्त रूपी बनजारों से हुई है। सन्तों ने उस पर कृपा करके प्रभु-मिलन की अकथ कहानी को समझा दिया है। जीवात्मा ने भी एकाग्रचित्त होकर निश्चित मन से अपने प्रिय पति में ध्यान लगा लिया है। हाथ जोड़कर वह उससे विनती करती है कि परमात्मा उसे इस व्यापार के लाभ-रूप में प्राप्त हो। गुरु नानक कहते हैं कि जीवात्मा दास्यभाव से प्रभु से विनती करती है और उसे अगम एवं अथाह मानती है ॥ २ ॥ परमात्मा के साथ मिलन का मुहूर्त पूर्ण हुआ है, इसलिए जीवात्मा रूपी पत्नी का मिलन भी उससे आनन्ददायी होगा। उसका वियोग दूर हो गया है और उसे सुख-सम्पन्नता प्राप्त हुई है। सन्तजन मिलकर बारात के सदस्य बने हैं (यहाँ विवाह का रूपक प्रस्तुत किया जा रहा है)। सब सगे-सम्बन्धी एकत्रित हुए हैं और जीवात्मा रूपी दुलहिन को सहज का उपहार दे रहे हैं। उनका आशीष है कि जीवात्मा की ज्योति प्रभु-पति की ज्योति से मिलकर दोनों एक ज्योति हो जायें और हरि-नाम रूपी रस का भोग करें। गुरु नानक विनती करते हैं कि परमात्मा सब कुछ करने योग्य है, वही बिछुड़े हुओं को मिलाता है ॥ ३ ॥ वह घर सुहाना है, वह धरती सौभाग्यशाली है, जिस पर प्रभु-पति का आगमन हुआ है और जीवात्मा-दुलहिन ने उसकी शरण ग्रहण की है। गुरु की शरण लेने से आत्मा को सहज जागृति मिलती है और उसकी सब इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं। अपने पति से बिछुड़ी हुई आत्मा को सन्तों की चरणधूलि मिल जाने से सन्तोष होता है और वह अपनी आशाओं को पूर्ण हुआ मानती है। मन के अहम्‌भाव को त्यागकर वह रात-दिन आनन्दमग्न रहती है और मंगलवादनों की ध्वनियों का श्रवण करती है। गुरु नानक विनती करते हैं कि सन्तों की शरण लेनेवाली जीवात्मा रूपी स्त्री प्रभु में तल्लीन हो जाती है ॥ ४ ॥ १ ॥

।। बिलावलु महला ५ ।। भाग सुलखणा हरि कंतु हमारा राम । अनहद बाजित्रा तिसु धुनि दरबारा राम । आनंद अनदिनु वजहि वाजे दिनसु रैणि उमाहा । तह रोग सोग न दूखु बिआपै जनम मरणु न ताहा । रिधि सिधि सुधा रसु अंम्रितु भगति भरे भंडारा । बिनवंति नानक बलिहारि वंञा पारब्रहम प्रान अधारा ।। १ ।। सुणि सखीअ सहेलड़ीहो मिलि मंगलु गावह राम । मनि तनि प्रेमु करे तिसु प्रभ कउ रावह राम । करि प्रेमु रावह तिसै भावह इक निमख पलक न तिआगीऐ । गहि कंठि लाईऐ नह लजाईऐ चरन रज मनु पागीऐ । भगति ठगउरी पाइ मोहह अनत कतहू न धावह । बिनवंति नानक मिलि संगि साजन अमर पदवी पावह ।। २ ।। बिसमन बिसम भई पेखि गुण अबिनासी राम । करु गहि भुजा गही कटि जम की फासी राम । गहि भुजा लीन्ही दासि कीन्ही अंकुरि उदोतु जणाइआ । मलन मोह बिकार नाठे दिवस निरमल आइआ । द्रिसटि धारी मनि पिआरी महा दुरमति नासी । बिनवंति नानक भई निरमल प्रभ मिले अबिनासी ।। ३ ।। सूरज किरणि मिले जल का जलु हूआ राम । जोती जोति रली संपूरनु थीआ राम । ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ । आतम पसारा करणहारा प्रभ बिना नही जाणीऐ । आपि करता आपि भुगता आपि कारणु कीआ । बिनवंति नानक सेई जाणहि जिन्ही हरि रसु पीआ ।। ४ ।। २ ।।

मेरा भाग्य अच्छा है, जो मुझे परमात्मा रूपी पति प्राप्त हुआ है। प्रभु के दरबार में अनाहत ध्वनि को मैंने सुन लिया है अर्थात् पूर्ण आत्मिक आनन्द प्राप्त हुआ है। अब रात-दिन मुझमें उत्साह, उल्लास और आनन्द बना रहता है। मेरे रोग, शोक सब नष्ट हो गये हैं और वहाँ जन्म-मरण का दुःख भी अब व्याप्त नहीं है। सब रिद्धियाँ-सिद्धियाँ तथा अमृत-रस उसी भक्ति-भण्डार में भरे पड़े हैं। गुरु नानक विनती करते हैं कि अब मैं अपने प्राणाधार प्रभु के पास जाती हूँ अर्थात् आत्मा परमात्मा की मिलनेच्छा से व्यग्र होकर उसकी ओर समर्पित होती है ।। १ ।। हे मेरी सखियो, सहेलियो (आत्मा सत्संगति में गुरुमुखों से सम्बोधित है) ! तुम सब मिलकर मेरे सौभाग्य संयोग का मंगलगान करो। मेरा तन-मन उस प्रभु की प्रीति में पूर्णतः रम गया है। इसीलिए मैं उसी प्रेमभाव में रमण करती हूँ और क्षण भर के लिए भी उसे नज़रों से ओझल नहीं होने देती।

मैं अपने प्रभु-पति को पाकर, सब प्रकार की लज्जा त्याग करके उसके गले से लिपट गयी हूँ और उसकी चरणधूलि में अपना मन आप्लावित करती हूँ। भक्ति की ठग-वनस्पति से (यहाँ ठग-वनस्पति के द्वारा प्रभु-पति के मन को चुराने का भाव है) मैंने अन्य सब मोह समाप्त कर प्रभु की शरण ली है, अब मेरी भटकन मिट गयी है। गुरु नानक कहते हैं कि इस प्रकार जीवात्मा रूपी स्त्री जब अपने साजन को मिल जाती है, तो वहाँ अमरपद को प्राप्त होती है ॥ २ ॥ अविनाशी प्रभु के आश्चर्यजनक गुणों को देखकर विस्मय होता है। वह जीवात्मा का हाथ थामकर बाँह पकड़े का विरद निभाता है और यम के बन्धनों का अन्त कर देता है। जब प्रभु ने जीवात्मा रूपी स्त्री की बाँह थाम ली और उसे अपनी दासता में अपना लिया, तो उसका भाग्य उदित हो गया। उसकी मलिनता, मोह और विकार नष्ट हो गये और उसके लिए निर्मलता का दिवस उदित हुआ। प्रभु-पति की प्यारी कृपादृष्टि जीव-पत्नी ने मन में धारण कर ली, तो हर प्रकार की दुर्मति का अन्त हो गया। गुरु नानक कहते हैं कि इस प्रकार जीवात्मा रूपी स्त्री निर्मल हो गयी और उसे अविनाशी पति प्राप्त हुआ ॥ ३ ॥ जीवात्मा और पति में ऐसा अभेद हो गया, जैसे सूर्य और किरण तथा जल और जल की लहर में हुआ करता है। जीवात्मा की ज्योति परमज्योति प्रभु में विलीन हो गयी है और अंश सम्पूर्ण हो गया है। ऐसे में जीवात्मा को सर्वत्र एकमात्र ब्रह्म ही दीखता-सुनता है। सत्य तो यह है कि प्रभु के बिना आत्म-प्रसार का ज्ञान सम्भव नहीं है, क्योंकि वही एकमात्र कर्ता, भोगता और कारण-रूप सर्वस्व का आधार है। जिन्होंने हरि-मिलन के रस का पान किया है, केवल वे ही उक्त तथ्य को जानते हैं, ऐसी गुरु नानक की मान्यता है ॥ ४ ॥ २ ॥

बिलावलु महला ५ छंत

१ ओं सतिगुर प्रसादि। सखी आउ सखी वसि आउ सखी असी पिर का मंगलु गावह। तजि मानु सखी तजि मानु सखी मतु आपणे प्रीतम भावह। तजि मानु मोहु बिकारु दूजा सेवि एकु निरंजनो। लगु चरण सरण दइआल प्रीतम सगल दुरत बिखंडनो। होइ दास दासी तजि उदासी बहुड़ि बिधी न धावा। नानकु पइअंपै करहु किरपा तामि मंगलु गावा ॥ १ ॥ अंम्रितु प्रिअ का नामु मै अंधुले टोहनी। ओह जोहै बहु परकार सुंदरि मोहनी। मोहनी महा बचित्रि चंचलि अनिक भाव

दिखावए। होइ ढीठ मीठी मनहि लागै नामु लैण न आवए। ग्रिह बनहि तीरै बरत पूजा बाट घाटै जोहनी। नानकु पइअंपै दइआ धारहु मै नामु अंधुले टोहनी ॥ २ ॥ मोहि अनाथ प्रिअ नाथ जिउ जानहु तिउ रखहु। चतुराई मोहि नाहि रीझावउ कहि मुखहु। नह चतुरि सुघरि सुजान बेती मोहि निरगुनि गुनु नही। नह रूप धूप न नैण बंके जह भावै तह रखु तुही। जै जै जइअंपहि सगल जा कउ करणापति गति किनि लखहु। नानकु पइअंपै सेव सेवकु जिउ जानहु तिउ मोहि रखहु ॥ ३ ॥ मोहि मछुली तुम नीर तुझ बिनु किउ सरै। मोहि चात्रिक तुम्ह बूंद त्रिपतउ मुखि परै। मुखि परै हरै पिआस मेरी जीअ हीआ प्रानपते। लाडिले लाड लडाइ सभ महि मिलु हमारी होइ गते। चीति चितवउ मिटु अंधारे जिउ आस चकवी दिनु चरै। नानकु पइअंपै प्रिअ संगि मेली मछुली नीरु न वीसरै ॥ ४ ॥ धनि धंनि हमारे भाग घरि आइआ पिरु मेरा। सोहे बंक दुआर सगला बनु हरा। हर हरा सुआमी सुखहगामी अनद मंगल रसु घणा। नवल नवतन नाहु बाला कवन रसना गुन भणा। मेरी सेज सोही देखि मोही सगल सहसा दुखु हरा। नानकु पइअंपै मेरी आस पूरी मिले सुआमी अपरंपरा ॥ ५ ॥ १ ॥ ३ ॥

ऐ सखियो ! प्रभु-पति की इच्छाओं का सम्मान करो और सब मिलकर अपने साजन के मंगलगान गाओ। हे सखियो ! अपने अहम् का त्याग कर दो, अहंकार छोड़ दो, शायद इसी प्रकार तुम प्रियतम की चाहत प्राप्त कर सको। मान, मोह और विकारों को छोड़कर केवल एक परमात्मा की सेवा में रत हो जाओ, द्वैतभाव त्याग दो। अपने दयालु प्रियतम के चरणों की शरण लो,क्योंकि वही पाप-विनाशक है, सब मलिनताओं को खण्डित करनेवाला है। उसी प्रभु की दासता स्वीकार करो, मिथ्या विरतियों को त्याग दो, ताकि दोबारा अन्य विधियों के पीछे न भागना पड़े। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु ! इस पर कृपा करो, ताकि हम तुम्हारा मंगलगान कर सकें, या गुण गा सकें ॥ १ ॥ मेरे प्रिय का नाम अमृत के समान है, वह मेरे लिए अन्धे की लकड़ी के समान है। वह माया अनेक प्रकार से मन को दोलायित करने की कोशिश करती है, अनेक प्रकार से चंचलतापूर्वक आडम्बर रचकर वैचित्र्य का प्रदर्शन करती है। हठपूर्वक मीठी वाणी द्वारा हमें भ्रमित करती है, हरि-नाम से हमें विमुख रखती है। घर, वन, नदी-किनारे, व्रत-पूजा करते हुए या रास्ता

चलते हुए यह माया सब जगह हमें ठगती है, इसलिए, गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु ! हम पर कृपा करो, तुम्हारा नाम हमारे लिए अन्धे की लाठी के समान है ॥ २ ॥ हे मेरे प्रियतम नाथ ! मुझ अनाथ को जैसे चाहो वैसा प्रश्रय दो। मेरे पास ऐसी चतुराई नहीं कि मैं कुछ कहकर तुम्हें प्रसन्न कर सकूँ और न ही मैं सुघड़, सुजान या ज्ञानवान हूँ; मैं तो गुणहीन हूँ मुझमें कोई गुण नहीं। मुझमें न रूप है, न सौन्दर्य है, न बाँके नयनों के कटाक्ष हैं, इसलिए, हे प्रभु ! तुम्हें जैसा रुचता है, वैसे ही मेरी रज़ा करो। सब लोग तुम्हारा जय-जयकार करते हैं, हे करुणापति ! तुम्हारी गति कोई नहीं जानता। गुरु नानक कहते हैं कि मैं तो तुम्हारा सेवक हूँ, तुम्हारी शरण में पड़ा हूँ, जैसा चाहो वैसा रखो ॥ ३ ॥ मैं मछली के समान हूँ, तो तुम मेरे लिए जल के समान हो; भला तुम्हारे बिना मैं कैसे रह सकता हूँ ! मैं पपीहा हूँ और तुम स्वाति-बूँद हो, मेरे मुख में आकर सन्तोष दान दो। मुझे सहारा देकर मेरी तृष्णा दूर करो ! हे वाहिगुरु ! तुम्हीं मेरे प्राण और हृदय के स्वामी हो। हे लाडले ! तुम्हारे लाड़ लड़ाने से ही हमारी गति है। हृदय में तुम्हें धारण करने से ही अविवेक का अँधेरा दूर होता है, जैसे आशायुक्त चकवी के भाग्य से सूर्य उदय हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि आत्मा अपने प्रिय परमात्मा के साथ मिलकर जल और मछली के समान दुबारा नहीं बिछुड़ती ॥ ४ ॥ हमारे धन्य भाग्य हैं कि मेरा प्रभु-पति आज मेरे घर आया है। मेरा घर-आँगन सुशोभित हो रहा है, सारी वनस्पति मेरे लिए हरिया गयी है। उल्लास-दायी सुखों का सागर मेरा स्वामी आया है, चतुर्दिक् आनन्द और मंगल-वादन बज रहे हैं और प्रेम का रस बरस रहा है। मेरा नवेला, सुन्दर और सुकुमार पति मेरे पास है, उसके गुणों का कथन करनेवाली ज़बान मेरे पास नहीं है। वह मेरी सेज पर सुशोभित है, उसे देखकर मेरी समस्त शंकाएँ और दुःख दूर हो गये हैं। (गुरु नानक कहते हैं कि) मेरी सब इच्छाओं की पूर्ति हो गयी है और मुझे अपरम्पार स्वामी प्राप्त हो गये हैं ॥ ५ ॥ १ ॥ ३ ॥

बिलावलु महला ५ छंत मंगल

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सलोकु ॥ सुंदर सांति दइआल प्रभ सरब सुखानिधि पीउ। सुखसागर प्रभ भेटिऐ नानक सुखी होत इहु जीउ ॥ १ ॥ छंत ॥ सुख सागर प्रभु पाईऐ जब होवै भागो राम। मान निमानु वञाईऐ हरि चरणी लागो राम।

छोडि सिआनप चातुरी दुरमति बुधि तिआगो राम । नानक पउ सरणाई रामराइ थिरु होइ सुहागो राम ॥ १ ॥ सो प्रभु तजि कत लागीऐ जिसु बिनु मरि जाईऐ राम । लाज न आवै अगिआन मती दुरजन बिरमाईऐ राम । पतित पावन प्रभु तिआगि करे कहु कत ठहराईऐ राम । नानक भगति भाउ करि दइआल की जीवन पदु पाईऐ राम ॥ २ ॥ स्री गोपालु न उचरहि बलि गईए दुहचारणि रसना राम । प्रभु भगति वछलु नह सेवही काइआ काक ग्रसना राम । भ्रमि मोही दूख न जाणही कोटि जोनी बसना राम । नानक बिनु हरि अवरु जि चाहना बिसटा क्रिम भसमा राम ॥ ३ ॥ लाइ बिरहु भगवंत संगे होइ मिलु बैरागनि राम । चंदन चीर सुगंध रसा हउमै बिखु तिआगनि राम । ईत ऊत नह डोलीऐ हरि सेवा जागनि राम । नानक जिनि प्रभु पाइआ आपणा सा अटल सुहागनि राम ॥ ४ ॥ १ ॥ ४ ॥

मेरा प्यारा पति (परमात्मा) सुन्दर, शान्त, दयालु और सर्व सुखों की खान है। उस सुख-सागर परमात्मा को मिलकर ये मन-प्राण सुखी हो उठते हैं ॥ १ ॥ छंत ॥ सुखागार परमात्मा की प्राप्ति तभी होती है, जब जीव का भाग्य सबल होता है। मान-अपमान को छोड़कर उस समय जीव को हरि-चरणों में लगना चाहिए। ऐ जीवात्माओ ! अपनी चातुरी और योग्यताओं को छोड़कर अविवेक का त्याग करो। नानक कहते हैं कि उस प्रभु की शरण लो, उसी में तुम्हारा सुहाग स्थिर है ॥ १ ॥ उस प्रभु को छोड़कर और किसका सहारा लिया जा सकता है, उसके बिना जीवन भी मृत्यु के समान है। दुर्जनों के द्वारा भ्रमित किये जाने पर अज्ञानी लोगों को लाज नहीं आती, किन्तु पतित-पावन स्वामी को छोड़कर हम कहाँ ठहर सकते हैं। गुरु नानक का कथन है कि उस दयालु प्रभु के प्रति भक्तिभाव के द्वारा जीवन के परमपद को प्राप्त किया जा सकता है ॥ २ ॥ जो जिह्वा परमात्मा का नाम नहीं उच्चारती, वह दुराचारिणी जल क्यों नहीं जाती ! भक्तवत्सल परमात्मा की सेवा नहीं की तो यह शरीर किस काम का, इसे कौए खा जायेंगे। भ्रम में पड़ा हुआ जीव उन दु:खों को नहीं जानता, जो करोड़ों योनियों में बसने पर सहन करने पड़ेंगे। नानक कहते हैं कि हरि के बिना किसी और की इच्छा करना मलिनता का कीड़ा बनकर मर जाने के बराबर है ॥ ३ ॥ भगवंत के साथ विरह की तड़प बढ़ाकर संसार से विरक्त हो जाओ। चन्दन की

शीतलता, सुन्दर कपड़ों की तड़क-भड़क, सुगन्धियाँ सांसारिक रस और अहंकार आदि सब विष के समान हैं, इनका त्याग करो। इधर-उधर दोलायित न होकर हरि-सेवा में सावधानी से संलग्न रहो। गुरु नानक का कथन है कि जिस जीवात्मा रूपी स्त्री ने परमात्मा को पा लिया है, वह अटल सुहागिन हो जाती है ॥ ४ ॥ १ ॥ ४ ॥

॥ बिलावलु महला ५ ॥ हरि खोजहु वडभागीहो मिलि साधू संगे राम। गुन गोविद सद गाईअहि पारब्रहम कै रंगे राम। सो प्रभु सद ही सेवीऐ पाईअहि फल मंगे राम। नानक प्रभ सरणागती जपि अनत तरंगे राम ॥ १ ॥ इकु तिलु प्रभू न वीसरै जिनि सभु किछु दीना राम। वडभागी मेलावड़ा गुरमुखि पिरु चीन्हा राम। बाह पकड़ि तम ते काढिआ करि अपुना लीना राम। नामु जपत नानक जीवै सीतलु मनु सीना राम ॥ २ ॥ किआ गुण तेरे कहि सकउ प्रभ अंतरजामी राम। सिमरि सिमरि नाराइणै भए पारगरामी राम। गुन गावत गोविंद के सभ इछ पुजामी राम। नानक उधरे जपि हरे सभहू का सुआमी राम ॥ ३ ॥ रस भिनिअड़े अपुने राम संगे से लोइण नीके राम। प्रभ पेखत इछा पुंनीआ मिलि साजन जी के राम। अंम्रित रसु हरि पाइआ बिखिआ रस फीके राम। नानक जलु जलहि समाइआ जोती जोति मीके राम ॥४॥२॥५॥

हे सौभाग्यशाली जीवात्माओ! हरि-पति को खोजने के लिए सन्तों की संगति करो। परमात्मा के रंग में लीन होकर गोविन्द के गुण गाओ। सदैव उस प्रभु की सेवा करने से मनोवाञ्छित फल प्राप्त होते हैं। गुरु नानक सुझाव देते हैं कि जीव को प्रभु की शरण लेकर सर्वव्यापी हरि का नाम जपना चाहिए ॥ १ ॥ जिस परमात्मा ने हमें सब कुछ दिया है, उसे एक क्षण के लिए भी भुलाया नहीं जाना चाहिए। प्रभु को गुरु के द्वारा कोई सौभाग्यशाली ही पहचानता है और तब वह बाँह पकड़कर उसे अविवेक के अन्धकार से निकालकर अपना बना लेता है। नानक कहते हैं कि नाम के जपने से तन-मन शीतल हो जाता है और जीवन सुखी-सम्पन्न बनता है ॥ २ ॥ हे अन्तर्यामी प्रभु! मैं तुम्हारे क्या गुण कहूँ, तुम्हारे सिमरन मात्र से ही, हे परमात्मा! जीवों को मुक्ति मिल जाती है। परमात्मा के गुण गाने से सब मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं; गुरु-कथन है कि सबके स्वामी परमात्मा का नाम जपने से उद्धार होता है ॥ ३ ॥ अपने प्रभु से मिल जानेवाले मित्र रसमय हो जाते हैं और उनमें एक आकर्षण

पैदा हो जाता है। प्रभु के दर्शनों से ही मन की सब आकाङ्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं। हरि-नाम का अमृत-रस पा लेने से अन्य सब रस फीके पड़ जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि तब आत्मा की ज्योति परम-ज्योति परमात्मा में समा जाती है, अभेद को प्राप्त होती है ॥ ४ ॥ २ ॥ ५ ॥

बिलावल की वार महला ४

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सलोक म० ४ ॥ हरि उतमु हरि प्रभु गाविआ करि नादु बिलावलु रागु। उपदेसु गुरू सुणि मंनिआ धुरि मसतकि पूरा भागु। सभ दिनसु रैणि गुण उचरै हरि हरि हरि उरि लिव लागु। सभु तनु मनु हरिआ होइआ मनु खिड़िआ हरिआ बागु। अगिआनु अंधेरा मिटि गइआ गुर चानणु गिआनु चरागु। जनु नानकु जीवै देखि हरि इक निमख घड़ी मुखि लागु ॥ १ ॥ म० ३ ॥ बिलावलु तब ही कीजीऐ जब मुखि होवै नामु। राग नाद सबदि सोहणे जा लागै सहजि धिआनु। राग नाद छोडि हरि सेवीऐ ता दरगह पाईऐ मानु। नानक गुरमुखि ब्रहमु बीचारीऐ चूकै मनि अभिमानु ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ तू हरि प्रभु आपि अगंमु है सभि तुधु उपाइआ। तू आपे आपि वरतदा सभु जगतु सबाइआ। तुधु आपे ताड़ी लाईऐ आपे गुण गाइआ। हरि धिआवहु भगतहु दिनसु राति अंति लए छडाइआ। जिनि सेविआ तिनि सुखु पाइआ हरि नामि समाइआ ॥ १ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ बिलावल राग की धुनों पर अर्थात् उल्लास के स्वरों में हरि-प्रभु का गुणगान किया। मस्तिष्क पर सद्भाग्य की मणि होने के कारण गुरु के उपदेश को सुना और स्वीकार किया। सब रात-दिन परमात्मा की ओर हृदय में लग्न लगाकर उसका गुणगान करते रहे। परिणामतः तन-मन उल्लसित हो गया और हृदय रूपी उद्यान सुविकसित हुआ। अज्ञान का अन्धकार मिट गया और गुरु-ज्ञान के दीपक के प्रकाश में मन आलोकित हो उठा। घड़ी भर के लिए भी प्रभु का दर्शन हो जाने से दास नानक को चेतना मिली ॥ १ ॥ म० ३ ॥ बिलावल राग का गान तभी सम्भव है, जब मुख में हरि का नाम लिया जा रहा हो। राग की ध्वनि गुरु के शब्दों द्वारा तभी सुशोभित होती है, जब पूर्ण आडोल-भाव से सहज अवस्था में ध्यान एकाग्र हो। गुरु-शब्दों के बिना राग की

ध्वनियों को सजीव करना अनुचित है, उससे ध्यान भंग होता है। बाहरी रागों और स्वरों को छोड़कर हरि की सेवा उपयुक्त है, तभी प्रभु के दरबार में सम्मान प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा का ध्यान करने और उसमें चेतना को स्थिर करने से मन का अभिमान नष्ट हो जाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु ! तुम सामान्य लोगों की पहुँच से बाहर हो, फिर भी सारा जगत तुम्हारा ही पैदा किया हुआ है। तुम अपने आप सब जगह व्याप्त हो और सारे संसार को चालित किये हुए हो। मौन-भाव से समाधि लगानेवाले भी तुम्हीं हो और वाचाल होकर सस्वर गुणगान करनेवाले भी स्वयं तुम हो। सारा संसार रात-दिन तुम्हारा ही ध्यान करता है और अन्ततः तुम ही सबका उद्धार करते हो। जिन जीवात्माओं ने तुम्हारी भक्ति की, वे सुखी हो गये और हरि-नाम में ही लीन हो गये ॥ १ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ दूजै भाइ बिलावलु न होवई मनमुखि थाइ न पाइ । पाखंडि भगति न होवई पारब्रहमु न पाइआ जाइ । मनहठि करम कमावणे थाइ न कोई पाइ । नानक गुरमुखि आपु बीचारीऐ विचहु आपु गवाइ । आपे आपि पारब्रहमु है पारब्रहमु वसिआ मनि आइ । जंमणु मरणा कटिआ जोती जोति मिलाइ ॥ १ ॥ म० ३ ॥ बिलावलु करिहु तुम्ह पिआरिहो एकसु सिउ लिव लाइ । जनम मरण दुखु कटीऐ सचे रहै समाइ । सदा बिलावलु अनंदु है जे चलहि सतिगुर भाइ । सत संगती बहि भाउ करि सदा हरि के गुण गाइ । नानक से जन सोहणे जि गुरमुखि मेलि मिलाइ ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ सभना जीआ विचि हरि आपि सो भगता का मितु हरि । सभु कोई हरि कै वसि भगता कै अनंदु घरि । हरि भगता का मेली सरबत सउ निसुल जन टंग धरि । हरि सभना का है खसमु सो भगत जन चिति करि । तुधु अपड़ि कोइ न सकै सभ झखि झखि पवै झड़ि ॥ २ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ द्वैतभाव में बिलावल राग की उत्पत्ति नहीं होती अर्थात् मानसिक उल्लास द्वैत से नहीं मिलता। जो जीव (मनमुख) मन के संकेतों पर आचरण करते हैं, वे कहीं प्रश्रय नहीं प्राप्त कर सकते। आडम्बर और पाखण्डों में भक्ति नहीं होती और उनके माध्यम से परमात्मा भी नहीं मिलता। मन की हठ से किये गये धार्मिक कर्मों को भी प्रभु के दरबार में स्वीकृति नहीं मिलती। गुरु नानक कहते हैं कि

गुरु के आदेश पर आचरण करने से जीव आत्म-विश्लेषण करता है और अपने भीतर से अहंकार-भाव को निकाल फेंकता है। उसे विवेक होता है कि वह स्वयं परब्रह्म का अंश है और परब्रह्म ही उसके मन में स्थिर है। उसका जन्म-मरण का चक्कर टूट जाता है और उसकी ज्योति परमज्योति में लीन हो जाती है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ प्रिय जीवात्माओ! तुम बिलावल राग गाओ अर्थात् एक हरि के ध्यान में एकाग्र होकर मन का उल्लास प्राप्त करो। इससे जन्म-मरण का दुःख दूर होगा और तुम सच्चे प्रभु में ही समा जाओगे। सतगुरु के आदेशों पर चलते हुए बिलावल राग की ध्वनियाँ आनन्द की वृद्धि करती हैं। जीव सत्संगति में बैठकर सदैव प्रभु का गुणगान करता है और गुरु नानक के मतानुसार वह गुरु के द्वारा प्रभु-मिलन का परम सौन्दर्य प्राप्त कर लेता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सभी जीवात्माओं में परमात्मा का अंश विद्यमान है, वह परमात्मा भक्तों का परम मित्र है। प्रभु भक्तों के वशीभूत होता है और नित्य उनके लिए आनन्द का द्योतक है। हरि-भक्तों का मित्र और सर्वस्व है, उसके सेवक निःशंक-भाव से टाँग पर टाँग धरकर सोते हैं। हरि सबका स्वामी है, अतः, हे भक्तो! उसका सदा स्मरण करो। उस परमात्मा को सदैव कोई नहीं पहुँच सकता, सब झख मारकर रह जाते हैं ॥ २ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ ब्रहमु बिंदहि ते ब्राहमणा जे चलहि सतिगुर भाइ। जिन कै हिरदै हरि वसै हउमै रोगु गवाइ। गुण रवहि गुण संग्रहहि जोती जोति मिलाइ। इसु जुग महि विरले ब्राहमण ब्रहमु बिंदहि चितु लाइ। नानक जिन्ह कउ नदरि करे हरि सचा से नामि रहे लिव लाइ ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ सतिगुर की सेव न कीतीआ सबदि न लगो भाउ। हउमै रोगु कमावणा अति दीरघु बहु सुआउ। मनहठि करम कमावणे फिरि फिरि जोनी पाइ। गुरमुखि जनमु सफलु है जिसनो आपे लए मिलाइ। नानक नदरी नदरि करे ता नाम धनु पलै पाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सभ वडिआईआ हरि नाम विचि हरि गुरमुखि धिआईऐ। जि वसतु मंगीऐ साई पाईऐ जे नामि चितु लाईऐ। गुहज गल जीअ की कीचै सतिगुरू पासि ता सरब सुखु पाईऐ। गुरु पूरा हरि उपदेसु देइ सभ भुख लहि जाईऐ। जिसु पूरबि होवै लिखिआ सो हरि गुण गाईऐ ॥ ३ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ सच्चा ब्राह्मण वही है, जो सतगुरु की इच्छानुसार ब्रह्म को पहचानता है। उसके हृदय में स्वयं परमात्मा

निवास करता है, उसका अहंकार नष्ट हो चुका होता है। वे (ब्राह्मण) जीव प्रभु के गुणों का स्मरण करते, उनका संग्रह करते और परमज्योति में अपनी ज्योति को शामिल कर लेते हैं। इस संसार में ब्रह्म को पहचानने और उसी में ध्यान लगानेवाला कोई विरला जीव ही ब्राह्मण होता है। गुरु नानक का कथन है कि जिस पर प्रभु की कृपादृष्टि होती है, वह सच्चे नाम के साथ जुड़ जाता है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ जो जीव सतगुरु की सेवा नहीं करते, जिन्हें गुरु की वाणी में प्यार नहीं है, वे ही अहंकार के रोगी हैं और दीर्घ स्वार्थ द्वारा प्रताड़ित हैं। वे मन के हठ द्वारा कर्म करते हैं और बार-बार संसार में जन्म पाते हैं। गुरु के द्वारा चेतना जीव का जन्म सफल होता है, क्योंकि उसे परमात्मा अपने साथ मिला लेता है। गुरु-कथन है कि गुरु की कृपादृष्टि से ही नाम रूपी धन की उपलब्धि होती है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ गुरु के आदेशानुसार प्रभु का स्मरण करना चाहिए, क्योंकि हरि-नाम में सब सद्गुण मौजूद हैं। नाम को मन में स्थिर कर लेने से जीव जो चाहे वह प्राप्त कर सकता है। मन के रहस्यों और भ्रमों को सतिगुरु के पार निकालकर सब सुखों को पाया जा सकता है। परमगुरु का उपदेश पाकर सब भूख शमित हो जाती है। जिसके भाग्य में पहले से लेख मौजूद हैं, वही परमात्मा के गुण गा सकता है ॥ ३ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ सतिगुर ते खाली को नही मेरै प्रभि मेलि मिलाए। सतिगुर का दरसनु सफलु है जेहा को इछे तेहा फलु पाए। गुर का सबदु अंम्रितु है सभ त्रिसना भुख गवाए। हरि रसु पी संतोखु होआ सचु वसिआ मनि आए। सचु धिआइ अमरा पदु पाइआ अनहद सबद वजाए। सचो दहदिसि पसरिआ गुर कै सहजि सुभाए। नानक जिन अंदरि सचु है से जन छपहि न किसै दे छपाए ॥ १ ॥ म० ३ ॥ गुर सेवा ते हरि पाईऐ जा कउ नदरि करेइ। मानस ते देवते भए सची भगति जिसु देइ। हउमै मारि मिलाइअनु गुर कै सबदि सुचेइ। नानक सहजे मिलि रहे नामु वडिआई देइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ गुर सतिगुर विचि नावै की वडी वडिआई हरि करतै आपि वधाई। सेवक सिख सभि वेखि वेखि जीवन्हि ओन्हा अंदरि हिरदै भाई। निंदक दुसट वडिआई वेखि न सकनि ओन्हा पराइआ भला न सुखाई। किआ होवै किसही की झख मारी जा सचे सिउ बणि आई।

जि गल करते भावै सा नित नित चड़ै सवाई सभ झखि झखि मरै लोकाई ॥ ४ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ मेरे प्रियतम ने संयोगपूर्वक जिन्हें गुरु से मिला दिया है, उनमें से कोई भी खाली हाथ नहीं रहता। सतिगुरु का दर्शन इतना सार्थक है कि हर मनोवाञ्छित फल की प्राप्ति हो जाती है। गुरु का शब्द अमृत के समान है, जिसे पाकर सब प्रकार की तृष्णाओं की भूख दूर हो जाती है। हरि का रसामृत पान कर जीव तृप्त होता है और सत्यस्वरूप परमात्मा स्वयं उसके मन में आ बसता है। परमसत्य परमात्मा का ध्यान करने से अमर पद की प्राप्ति होती है और परम आनन्द लाभ मिलता है। गुरु के सहज-शान्त स्वभाव वाले के लिए वह परमात्मा दसों दिशाओं में व्याप्त दीख पड़ता है। गुरु नानक कहते हैं कि जिन जीवों के भीतर सत्य विद्यमान है, वे लोग किसी के छिपाये छिप नहीं सकते ॥ १ ॥ म० ३ ॥ गुरु की सेवा-भक्ति द्वारा यदि जीव उसका कृपा-पात्र बन सके तो परमात्मा को पा सकता है। जिसने सच्ची भक्ति की कमाई की, वे मनुष्य से देवता हो गया। अहंकार को मारकर गुरु के पावन शब्दों में लीन हो गया। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसा जीव सहज में ही समा जाता है और प्रभु-नाम का गुणगान करता है ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ वाहिगुरु में उसके नाम की बड़ाई स्वयं परमात्मा ने निश्चित की है अर्थात् नामी से नाम को बड़प्पन प्राप्त है। परमात्मा के सब सेवक उसी बड़ाई को मन में उतारकर जीवन-चेतना को प्राप्त करते हैं। किन्तु तुष्ट निन्दक लोग बड़ाई को सहन नहीं कर सकते, इसलिए उन्हें दूसरे की भलाई अच्छी नहीं लगती। सच्चे प्रभु के साथ जिन जीवों का मिलाप हो जाता है, कोई झख मारकर भी उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकता है। जो बात सर्व-कर्ता को अच्छी लगती है, वह नित्य प्रवाण चढ़ती है, चाहे संसार कितना भी उसका विरोध करता रहे ॥ ४ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ ध्रिगु एह आसा दूजे भाव की जो मोहि माइआ चितु लाए। हरि सुखु पलहरि तिआगिआ नामु विसारि दुखु पाए। मनमुख अगिआनी अंधुले जनमि मरहि फिरि आवै जाए। कारज सिधि न होवनी अंति गइआ पछुताए। जिसु करमु होवै तिसु सतिगुरु मिलै सो हरि हरि नामु धिआए। नामि रते जन सदा सुखु पाइन्हि जन नानक तिन बलि जाए ॥१॥ ॥ म० ३ ॥ आसा मनसा जगि मोहणी जिनि मोहिआ संसारु। सभ को जम के चीरे विचि है जेता सभु आकारु। हुकमी ही

जमु लगदा सो उबरै जिसु बखसै करतारु। नानक गुरपरसादी एहु मनु तां तरै जा छोडै अहंकारु। आसा मनसा मारे निरासु होइ गुर सबदी वीचारु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिथै जाईऐ जगत महि तिथै हरि साई। अगै सभु आपे वरतदा हरि सचा निआई। कूड़िआरा के मुह फिटकीअहि सचु भगति वडिआई। सचु साहिबु सचा निआउ है सिरि निंदक छाई। जन नानक सचु अराधिआ गुरमुखि सुखु पाई ॥ ५ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ द्वैतभाव की आशा को धिक्कार है, इससे मन में मोह-माया जाग्रत् होती है। जो जीव व्यर्थ की चीज़ों के लिए हरि-नाम को विसारते हैं तथा परमसुख का त्याग कर देते हैं, वे अन्ततः दुःख पाते हैं। मनमुख जीव अज्ञान में अन्धे होकर जन्मते, मरते और आवागमन का दुःख भोगते हैं। उनका कोई कार्य सिद्ध नहीं होता और वे अन्ततः पश्चात्ताप करके रह जाते हैं। जिस पर परमात्मा की दया होती है, उसे सतिगुरु मिलता है और हरि-नाम का ध्यान करता है। हरि-नाम में रत जीव सदा सुख पाते हैं; दास नानक उन पर बलिहार जाते हैं ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ मन की आशाएँ संसार के लिए मनमोहक होती हैं, सब लोग उन पर मोहित रहते हैं। संसार के सब गुण, आकार और चेतन वस्तुएँ मृत्यु के घेरे में रहती हैं। मृत्यु भी प्रभु के हुक्म से ही आती है, जिसे परमात्मा क्षमा कर देता है, वह सुरक्षित रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु की कृपा से जब यह मन अहंकार का त्याग कर देता है, तभी इसका उद्धार होता है। जब जीव गुरु के शब्दों को मानकर मन की आशाओं, तृष्णाओं को निकाल देता है और विरक्त हो जाता है, तभी मुक्ति पाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ (परमात्मा की ओर प्रवृत्त जीव) संसार में जहाँ भी जाते हैं, वहीं परमात्मा उनका रक्षक होता है। वह स्वयं हर जगह उनकी देखभाल करता है और अपेक्षित न्याय देता है। मिथ्याचारी लोगों को धिक्कार है, सत्य आचरण और भक्ति को सम्मान मिलता है। सत्यस्वरूप परमात्मा का न्याय भी सत्य है, निन्दकों के सिर में राख पड़ती है। दास नानक का कथन है कि जिन्होंने गुरु के द्वारा परमात्मा को पा लिया है, वे ही परम-सुख का भोग करते हैं ॥ ५ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ पूरै भागि सतिगुरु पाईऐ जे हरि प्रभु बखस करेइ। ओपावा सिरि ओपाउ है नाउ परापति होइ। अंदरु सीतलु सांति है हिरदै सदा सुखु होइ। अंम्रितु खाणा पैन्हणा नानक नाइ वडिआई होइ ॥ १ ॥ म० ३ ॥ ए मन गुर

की सिख सुणि पाइहि गुणी निधानु। सुखदाता तेरै मनि वसै हउमै जाइ अभिमानु। नानक नदरी पाईऐ अंम्रितु गुणी निधानु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जितने पातिसाह साह राजे खान उमराव सिकदार हहि तितने सभि हरि के कीए। जो किछु हरि करावै सु ओइ करहि सभि हरि के अरथीए। सो ऐसा हरि सभना का प्रभु सतिगुर कै वलि है तिनि सभि वरन चारे खाणी सभ स्रिसटि गोले करि सतिगुर अगै कार कमावण कउ दीए। हरि सेवे की ऐसी वडिआई देखहु हरि संतहु जिनि विचहु काइआ नगरी दुसमन दूत सभि मारि कढीए। हरि हरि किरपालु होआ भगत जना उपरि हरि आपणी किरपा करि हरि आपि रखि लीए ॥ ६ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ यदि परमात्मा की कृपा हो और जीव का भाग्य भी उज्ज्वल हो तो सतिगुरु प्राप्त होता है, तब सभी उपायों से ऊँचा उपाय मिलता है, तब मन में शान्ति और हृदय में सुख होता है। गुरु-कथन है कि ऐसे जीव को हरि-नाम द्वारा प्रतिष्ठा मिलती है और वह अमृत का भोग करता है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ ऐ मन! गुरु के उपदेशों को सुनकर हृदय में धारण करो, तभी तुम्हें वह गुणागार प्रभु मिलेगा। यदि तुम अहंकार-भाव को छोड़ दो, तो वह सुखदाता परमात्मा तुम्हारे हृदय में ही प्रकट हो जायेगा। गुरु नानक कहते हैं कि हरि की कृपा से ही उस अमृतमय गुण-निधान को पाया जा सकता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ संसार में सब बादशाह, राजे-महाराजे, अमीर, उमराव तथा अधिकारी जन, सब परमात्मा के ही बनाये हुए हैं। जो कुछ परमात्मा उनसे करवाता है, वे करते हैं, वे सब हरि के दरबार के भिखारी हैं। अतः परमात्मा सबका है। चारों वर्ण, चौदह भुवन, सृष्टि के सब ग्रह सभी सतिगुरु के आगे उसके हुक्म में चलने के लिए बनाये गये हैं। हरि की भक्ति में ऐसी प्रतिष्ठा है कि सन्तों की संगति के कारण काया-नगरी में से पंच दूतों का निष्कासन हो जाता है। परमात्मा उन जीवों पर कृपा करता है; भक्तजनों की रक्षा करता है और सब ओर सुख-समृद्धि प्रदान करता है ॥ ६ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ अंदरि कपटु सदा दुखु है मनमुख धिआनु न लागै। दुख विचि कार कमावणी दुखु वरतै दुखु आगै। करमी सतिगुरु भेटीऐ ता सचि नामि लिव लागै। नानक सहजे सुखु होइ अंदरहु भ्रमु भउ भागै ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ गुरमुखि सदा हरि रंगु है हरि का नाउ मनि

भाइआ। गुरमुखि वेखणु बोलणा नामु जपत सुखु पाइआ। नानक गुरमुखि गिआनु प्रगासिआ तिमर अगिआनु अंधेरु चुकाइआ ॥ २ ॥ म० ३ ॥ मनमुख मैले मरहि गवार। गुरमुखि निरमल हरि राखिआ उरधारि। भनति नानकु सुणहु जन भाई। सतिगुरु सेविहु हउमै मलु जाई। अंदरि संसा दूख विआपे सिरि धंधा नित मार। दूजै भाइ सूते कबहु न जागहि माइआ मोह पिआर। नामु न चेतहि सबदु न बीचारहि इहु मनमुख का बीचार। हरि नामु न भाइआ बिरथा जनमु गवाइआ नानक जमु मारि करे खुआर ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ जिसनो हरि भगति सचु बखसीअनु सो सचा साहु। तिस की मुहताजी लोकु कढदा होरतु हटि न वथु न वेसाहु। भगत जना कउ सनमुखु होवै सु हरि रासि लए वेमुख भसु पाहु। हरि के नाम के वापारी हरि भगत हहि जमु जागाती तिना नेड़ि न जाहु। जन नानकि हरि नाम धनु लदिआ सदा वेपरवाहु ॥ ७ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ मनमुख जीव के भीतर सदा कपट रहता है और कभी उसका ध्यान स्थिर नहीं होता। वे जो कुछ भी करते हैं, कमाते हैं और समय व्यतीत करते हैं, वह सब दुःखमय होता है। सौभाग्य-पूर्वक यदि ईश्वर-कृपा से गुरु मिल जाये, तो सत्यप्रभु के नाम में उनका ध्यान एकाग्र हो सकता है। गुरु नानक कहते हैं कि तब सहज ही उनके भीतर से भ्रम-भय नष्ट हो जाते हैं और सुख उपजता है॥ १॥ म० ३ ॥ गुरुमुख सदा गुरु के प्यार में रहता है और हरि-नाम को मन में बसा लेता है। गुरु के द्वारा ही वह देखता, बोलता है और नाम-जाप में सुख प्राप्त करता है। गुरु नानक का कथन है कि गुरुमुख जीव में अज्ञान का अन्धकार दूर होकर सत्य का आलोक प्रकट होता है॥ २॥ म० ३ ॥ मनमुख जीव मूर्ख और मलिन होते हैं, जब कि गुरमुख परमात्मा को हृदय में धारण कर सदैव निर्मल विचरते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे लोगो! सुनो— सतिगुरु की सेवा करने से अहंकार की गन्दगी दूर होती है। द्वैतभाव में पड़े हुए जीव माया-मोह में इतने लिप्त होते हैं कि उन्हें कभी जागृति नहीं मिलती और उनके भीतर हमेशा संशय और दुःख बना रहता है और उन्हें मृत्यु का भय सताया करता है। वे हरि-नाम को नहीं पहचानते, गुरु के शब्दों पर आचरण नहीं करते, सदैव मन के इशारों पर चलते हैं गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम को अपनाये बग़ैर वे मानव-जीवन को वृथा गँवाते हैं और अन्ततः मौत उन्हें अपने जाल में फँसा लेती

है ।। ३ ।। पउड़ी ।। जिसे परमात्मा स्वयं नाम और भक्ति का दान देता है, वही वास्तव में धन-कुबेर हो जाता है। लोग उसकी चापलूसी करते हैं (क्योंकि उसके पास नाम-धन प्राप्य होता है), और किसी स्थान से नाम उपलब्ध नहीं होता, न ही इसका व्यापार होता है। जो जीव भक्तजनों की संगति करते हैं, उन्हें हरि रूपी धन प्राप्त होता है, विमुख लोगों को राख पल्ले पड़ती है। हरि-नाम के हरि-भक्त व्यापारियों का रास्ता यम रूपी कराधिकारी नहीं रोक पाते। दास नानक का कथन है कि उन्होंने हरि-नाम की सामग्री का व्यापार किया है, इसलिए सदा बेपरवाह हैं ।।७।।

।। सलोक म० ३ ।। इसु जुग महि भगती हरि धनु खटिआ होरु सभु जगतु भरमि भुलाइआ। गुरपरसादी नामु मनि वसिआ अनदिनु नामु धिआइआ। बिखिआ माहि उदास है हउमै सबदि जलाइआ। आपि तरिआ कुल उधरे धंनु जणेदी माइआ। सदा सहजु सुखु मनि वसिआ सचे सिउ लिव लाइआ। ब्रहमा बिसनु महादेउ त्रैगुण भुले हउमै मोहु वधाइआ। पंडित पड़ि पड़ि मोनी भुले दूजै भाइ चितु लाइआ। जोगी जंगम संनिआसी भुले विणु गुर ततु न पाइआ। मनमुख दुखीए सदा भ्रमि भुले तिन्ही बिरथा जनमु गवाइआ। नानक नामि रते सेई जन समधे जि आपे बखसि मिलाइआ ।। १ ।। म० ३ ।। नानक सो सालाहीऐ जिसु वसि सभु किछु होइ। तिसहि सरेवहु प्राणीहो तिसु बिनु अवरु न कोइ। गुरमुखि अंतरि मनि वसै सदा सदा सुखु होइ ।। २ ।। पउड़ी ।। जिनी गुरमुखि हरि नाम धनु न खटिओ से देवालीए जुग माहि। ओइ मंगदे फिरहि सभ जगत महि कोई मुहि थुक न तिन कउ पाहि। पराई बखीली करहि आपणी परतीति खोवनि सगवा भी आपु लखाहि। जिसु धन कारणि चुगली करहि सो धनु चुगली हथि न आवै ओइ भावै तिथै जाहि। गुरमुखि सेवक भाइ हरि धनु मिलै तिथहु करमहीण लै न सकहि होर थै देस दिसंतरि हरि धनु नाहि ।। ८ ।।

।। सलोक म० ३ ।। इस संसार में भक्त लोगों ने ही वास्तव में सच्ची कमाई की है, अन्य सब भ्रम में भटकते रह गये हैं। गुरु की कृपा से जीव के मन में नाम स्थिर होता है और वह सदा उसी में ध्यानस्थ रहता है। ऐसा जीव विषयों में जीकर भी सदा विरक्त रहता है और अहंकार को गुरु के शब्दों की शक्ति से जला डालता है। वह स्वयं मुक्त

हो जाता है और अपने कुल का उद्धार करता है, सचमुच उसको जन्म देनेवाली माँ धन्य है। वह सदा सहज अवस्था में सुख मानता है और सत्यस्वरूप प्रभु में मग्न रहता है। ब्रह्मा, विष्णु, महादेव सभी माया के तीनों गुणों में भटकते हैं और अहम्‌भाव में विचरण करते हैं। पण्डित और मौन धारण किये हुए योगी अपनी विद्वत्ता और साधना में धुले रहते हैं तथा उनका चित्त अस्थिर रहता है। योगी, शैव, जंगम और संन्यासी भी भटकते रह जाते हैं, गुरु के बिना किसी को यथार्थ ज्ञान प्राप्त नहीं होता। मन के संकेतों पर आचरण करने के कारण वे सदा दु:ख उठाते और भ्रम में भटकते हैं, उनका जन्म वृथा हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव नाम-उपासना करते हैं, वे ही स्थिर हैं, परमात्मा स्वयं कृपापूर्वक उन्हें अपने संग मिला लेता है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ गुरु-कथन है कि जिस परमात्मा के अधीन सब कुछ है, उसी का गुण गाना चाहिए। हे प्राणियो ! उसी की आराधना करो, उसके बिना और कोई नहीं। गुरु के द्वारा परमात्मा हृदय में आ बसता है और जीव को परमसुख की प्राप्ति होती है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिन जीवों ने गुरु के द्वारा हरिनाम-धन की कमाई नहीं की, वे इस जगत में दीवालिये हैं। वे सारे संसार के सामने भिक्षा माँगते फिरते हैं, अर्थात् इतने पतित हैं कि कोई उनके मुँह पर थूकता भी नहीं। पराई निन्दा करते हैं, अपना विश्वास खो बैठते हैं, बल्कि दुनिया के सामने अनावृत हो जाते हैं। जिस धन के कारण वे निन्दा-चुगली करते हैं, वह भी हाथ नहीं आता चाहे वे कहीं भी भाग-दौड़ करते फिरें। गुरुमुख जीव को सेवाभाव से हरि रूपी धन प्राप्त होता है। द्वैतभाव वाले कर्महीन लोग इस धन को प्राप्त नहीं कर पाते, क्योंकि हरि रूपी धन देश-देशान्तर में घूमने से नहीं मिलता ॥ ८ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ गुरमुखि संसा मूलि न होवई चिंता विचहु जाइ। जो किछु होइ सु सहजे होइ कहणा किछू न जाइ। नानक तिन का आखिआ आपि सुणे जि लइअनु पंनै पाइ ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ कालु मारि मनसा मनहि समाणी अंतरि निरमलु नाउ। अनदिनु जागै कदे न सोवै सहजे अंम्रितु पिआउ। मीठा बोले अंम्रित बाणी अनदिनु हरि गुण गाउ। निज घरि वासा सदा सोहदे नानक तिन मिलिआ सुखु पाउ ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ हरि धनु रतन जवेहरी सो गुरि हरि धनु हरि पासहु देवाइआ। जे किसै किहु दिसि आवै ता कोई किहु मंगि लए अकै कोई किहु देवाए एहु हरि धनु जोरि कीतै किसै नालि न जाइ वंडाइआ। जिसनो सतिगुर नालि हरि सरधा लाए तिसु हरि

धन की वंड हथि आवै जिसनो करतै धुरि लिखि पाइआ। इसु हरि धन का कोई सरीकु नाही किसै का खतु नाही किसै कै सीव बंनै रोलु नाही जे को हरि धन की बखीली करे तिस का मुहु हरि चहु कुंडा विचि काला कराइआ। हरि के दिते नालि किसै जोरु बखीली न चलई दिहु दिहु नित नित चड़ै सवाइआ ॥ ९ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ गुरु के आदेश पर आचरण करनेवाले को कभी संशय नहीं होता, उसकी, चिन्ताएँ दूर हो जाती हैं। जो कुछ भी होता है वह सहज में ही हो जाता है, उनकी अनन्त महिमा का कथन नहीं किया जा सकता। गुरु नानक कहते हैं कि उनका कहा स्वयं वह प्रभु सुनता है, जिसने उनके नाम अपने खाते में चढ़ा लिये होते हैं ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ ऐसे जीवों के लिए मृत्यु का भय नहीं रह जाता, वासनाएँ अवरुद्ध हो जाती हैं और मन हरि-नाम की पावनता से निर्मल हो जाता है। वह सदा जागृति को प्राप्त करता है, चिरचेतन होता है और सहजावस्था में नाम-अमृत का पान करता है। सबके साथ अमृत-जैसी मीठी वाणी बोलता है और सदा परमात्मा के गुण गाता है। अन्ततः वह परमात्मा की ही शरण में जगह पा लेता है और परमसुख में जीता है ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ हरि-नाम का धन, जो रत्नों-जवाहरों की तरह है, वह धन गुरु ने जीवों को परमात्मा से दिलवाया है। यदि किसी के पास इसमें से कुछ दिखायी दे, तो कोई माँगे या कोई इसे दे सके; शक्ति से तो इसे बाँटा नहीं जा सकता। जिसे सतिगुरु कृपा करके प्रभु के प्रति श्रद्धा देता है, वही हरि-धन को प्राप्त करता है; शुरू से ही उसके भाग्य हैं, ऐसा लिखा होता है। हरि रूपी धन का कोई शरीक नहीं, लिखा-पढ़ी नहीं, सीमा-बन्धन नहीं, न ही इसमें कोई झगड़ा-झंझट है। यदि कोई इस पर निन्दा-चुगली करता है, तो परमात्मा चारों दिशाओं में उसे तिरस्कृत करवाता है। हरि के देने के विरुद्ध किसी की निन्दा या बल काम नहीं करते, वह तो दिनोंदिन नित्य बढ़ता जाता है ॥ ९ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ जगतु जलंदा रखि लै आपणी किरपा धारि। जितु दुआरै उबरै तितै लैहु उबारि। सतिगुरि सुखु वेखालिआ सचा सबदु बीचारि। नानक अवरु न सुझई हरि बिनु बखसणहारु ॥ १ ॥ म० ३ ॥ हउमै माइआ मोहणी दूजै लगै जाइ। ना इह मारी ना मरै ना इह हटि विकाइ। गुर कै सबदि परजालीऐ ता इह विचहु जाइ। तनु मनु होवै उजला नामु वसै मनि आइ। नानक माइआ का मारणु सबदु है

गुरमुखि पाइआ जाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सतिगुर की वडिआई सतिगुरि दिती धुरहु हुकमु बुझि नीसाणु । पुती भातीई जावाई सकी अगहु पिछहु टोलि डिठा लाहिओनु सभना का अभिमानु । जिथै को वेखै तिथै मेरा सतिगुरू हरि बखसिओसु सभु जहानु । जि सतिगुर नो मिलि मंने सु हलति पलति सिझै जि वेमुखु होवै सु फिरै भरिसट थानु । जन नानक कै वलि होआ मेरा सुआमी हरि सजण पुरखु सुजानु । पउदी भिति देखि कै सभि आइ पए सतिगुर की पैरी लाहिओनु सभना किअहु मनहु गुमानु ॥ १० ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ सारा संसार माया की अग्नि में जल रहा है, केवल परमात्मा ही कृपापूर्वक इसकी रक्षा कर सकता है। जिस प्रकार से भी हो सकता हो, उसी तरह बचा लो। सतगुरु के सच्चे शब्दों का मनन ही एकमात्र सुख का मार्ग है। गुरु-कथन है कि परमात्मा के बिना और कोई जीवों पर कृपा करनेवाला नहीं ॥ १ ॥ म० ३ ॥ अहम्भाव से युक्त माया जीवों को मोह लेनेवाली है, इसके कारण मनुष्य द्वैतभाव में संलग्न होता है। न यह मारी जा सकती है, न इसका तिरस्कार सम्भव है, और न ही दुकानों-बाज़ारों में यह बिकती है। यदि गुरु के शब्द के द्वारा इसे जलाया जाये, तभी यह पीछा छोड़ती है। (इसमें युक्त जीव का) तन-मन उज्ज्वल हो जाता है और उसके मन में हरि-नाम निवसित होता है। गुरु नानक कहते हैं कि माया को मारने का एकमात्र ढंग गुरु के शब्द हैं, जो कि गुरु-कृपा से ही उपलब्ध होते हैं ॥२॥ पउड़ी॥ सतिगुरु का यश मूलतः प्रभु के हुक्म से सतगुरु द्वारा ही प्राप्त होता है (अर्थात् गुरु-गद्दी के सही अधिकारी को पूर्व गुरु वही यश प्रदान करता है, जो अपने गुरु से उसे पहले ही प्राप्त होता है)। पुत्रों, भतीजों, दामादों या अन्य सगे-सम्बन्धियों को परखकर देख लिया और सबके मन का अहंकार गुरु ने दूर किया। अब मैं जिधर देखता हूँ, उधर मेरा गुरु व्याप्त दीख पड़ता है; परमात्मा ने सारे संसार पर कृपा की है। जो जीव सतगुरु पर श्रद्धा रखता है, वह लोक-परलोक में सफल होता है और जो उससे विमुख होता है, वह भ्रष्ट हो जाता है। दास नानक का कथन है कि परमात्मा मनुष्य के विवेक को परखकर ही उसका पक्ष लेता है (अर्थात् गुरु अमरदास का कथन है कि उन्हें गुरु-पद की प्राप्ति उसी विवेक के कारण हुई है)। आज गुरु का अनन्त लंगर देखकर सबके मन का गुमान नष्ट हो गया है और वे गुरु की शरण में आ गये हैं ॥ १० ॥

॥ सलोक म० १ ॥ कोई वाहे को लुणै को पाए

खलिहानि । नानक एव न जापई कोई खाइ निदानि ॥ १ ॥ ॥ म० १ ॥ जिसु मनि वसिआ तरिआ सोइ । नानक जो भावै सो होइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ पारब्रहमि दइआलि सागरु तारिआ । गुरि पूरै मिहरवानि भरमु भउ मारिआ । काम क्रोधु बिकरालु दूत सभि हारिआ । अंम्रित नामु निधानु कंठि उरिधारिआ । नानक साधू संगि जनमु मरणु सवारिआ ॥ ११ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ कोई फ़सल काटता है, कोई खलिहान में उसे एकत्र करता है; किन्तु गुरु नानक कहते हैं कि यह नहीं कहा जा सकता कि अन्ततः उसे कौन खायेगा ॥ १ ॥ म० १ ॥ जिसके हृदय में परमात्मा निवसित होता है, वही मुक्ति को प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो वह चाहता है वही होता है अर्थात् प्रभु-इच्छा सर्वोपरि है ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ कृपालु परब्रह्म ने जीव को इस संसार-सागर से पार किया है। गुरु ने कृपा करके उसके भयों-भ्रमों आदि का अन्त कर दिया है। काम, क्रोध आदि भयंकर दूत सब पराजित हो गये हैं। जीव ने अब प्रभु का नामामृत कण्ठ में धारण कर लिया है और सत्संगति में अपने जन्म-मरण के चक्र को निपटा दिया है ॥ ११ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ जिन्ही नामु विसारिआ कूड़े कहण कहंन्हि । पंच चोर तिना घरु मुहन्हि हउमै अंदरि संन्हि । साकत मुठे दुरमती हरि रसु न जाणंन्हि । जिन्ही अंम्रितु भरमि लुटाइआ बिखु सिउ रचहि रचंन्हि । दुसटा सेती पिरहड़ी जन सिउ वादु करंन्हि । नानक साकत नरक महि जमि बधे दुख सहंन्हि । पइऐ किरति कमावदे जिव राखहि तिवै रहंन्हि ॥१॥ ॥ म० ३ ॥ जिन्ही सतिगुरु सेविआ ताणु निताणे तिसु । सासि गिरासि सदा मनि वसै जमु जोहि न सकै तिसु । हिरदै हरि हरि नाम रसु कवला सेवकि तिसु । हरि दासा का दासु होइ परम पदारथु तिसु । नानक मनि तनि जिसु प्रभु वसै हउ सद कुरबाणै तिसु । जिन्ह कउ पूरबि लिखिआ रसु संत जना सिउ तिसु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो बोले पूरा सतिगुरू सो परमेसरि सुणिआ । सोई वरतिआ जगत महि घटि घटि मुखि भणिआ । बहुतु वडिआईआ साहिबै नह जाही गणीआ । सचु सहजु अनदु सतिगुरू पासि सची गुर मणीआ । नानक संत सवारे पारब्रहमि सचे जिउ बणिआ ॥ १२ ॥

।। सलोक म० ३।। जिस जीव ने प्रभु-नाम को विस्मृत किया, वह व्यर्थ हो गया। काम, क्रोध आदि पाँच चोर उसके हृदय-घर को लूटने लगे और अहंकार के कारण उसके अन्तर्मन में नकबज़नी होने लगी। माया में लीन जीव कुबुद्धि में रत होने के कारण प्रभु-मिलन का रस नहीं जानते। भ्रम में पड़कर उन्होंने नामामृत को ठुकरा दिया और विषय-विकारों के विष में संलग्न रहे। उन्होंने दुष्टों के साथ प्यार किया, हरि-सेवकों के संग वाद-विवाद में पड़े रहे। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसे मायावी जीव नरक में पड़ते और यम के द्वारा बँधे दुःख सहन करते हैं। स्वभाव के अनुसार दुष्कर्म करते हैं, किन्तु उनके कुछ भी वश नहीं होता; वे वही करते हैं जो परमात्मा उनसे करवाता है ।। १ ।। म० ३ ।। जो जीव सतगुरु की सेवा करते हैं, वे अनाथ होते हुए भी सनाथ हो जाते हैं। खाते-पीते श्वास-श्वास पर परमात्मा सदा उनके साथ रहता है, यमदूत उनकी ओर देख भी नहीं सकते। जिसके हृदय में नाम का रस बसता है, स्वयं माया उसकी दासी बन जाती है। हरि के सेवकों का सेवक होकर भी वह ऊँची से ऊँची वस्तु अर्थात् मुक्ति प्राप्त कर लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसके तन-मन में परमात्मा निवास करता है, वे स्वयं उस पर क़ुर्बान हो जाते हैं। जिन जीवों के भाग्य में पूर्व कर्मों के फलस्वरूप पहले से ही लिखा है, उन्हें सन्तों से प्यार हो ही जाता है ।। २ ।। ।।पउड़ी।। परमसन्त सतगुरु जो कुछ कहता है, उसे स्वयं परमेश्वर सुनता है। वह गुरु-वचन ही संसार में प्रसारित होता है और लोगों के मन में समाकर वाणी द्वारा पुनः प्रकट होता है। उस परमात्मा के असंख्य गुण हैं, उनकी गणना नहीं हो सकती। सतगुरु की शरण में सत्य और सहज आनन्द की उपलब्धि होती है, गुरु के उपदेश अनमोल रत्नों के समान हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे जीव सन्तों की सेवा करने के कारण स्वयं परमात्मा के समान बन जाते हैं, उनमें और परमात्मा में कोई भेद नहीं रह जाता ।। १२ ।।

।। सलोक म० ३ ।। अपणा आपु न पछाणई हरि प्रभु जाता दूरि। गुर की सेवा विसरी किउ मनु रहै हजूरि। मनमुखि जनमु गवाइआ झूठै लालचि कूरि। नानक बखसि मिलाइअनु सचै सबदि हदूरि ।। १ ।। म० ३ ।। हरि प्रभु सचा सोहिला गुरमुखि नामु गोविंदु। अनदिनु नामु सलाहणा हरि जपिआ मनि आनंदु। वडभागी हरि पाइआ पूरनु परमानंदु। जन नानक नामु सलाहिआ बहुड़ि न मनि तनि भंगु ।। २ ।। ।। पउड़ी ।। कोई निंदकु होवै सतिगुरू का फिरि सरणि गुर आवै। पिछले गुनह सतिगुरु बखसि लए सतसंगति नालि रलावै। जिउ

मीहि वुठै गलीआ नालिआ टोभिआ का जलु जाइ पवै विचि सुरसरी सुरसरी मिलत पवित्रु पावनु होइ जावै । एह वडिआई सतिगुर निरवैर विचि जितु मिलिऐ तिसना भुख उतरै हरि सांति तड़ आवै । नानक इहु अचरजु देखहु मेरे हरि सचे साह का जि सतिगुरू नो मंनै सु सभनां भावै ॥ १३ ॥ १ ॥ सुधु ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ जो लोग गुरु-सेवा से दूर रहते हैं वे अपने आप को नहीं पहचानते, परमात्मा भी उनके लिए दूर ही बना रहता है। वे गुरु की सेवा से हटते हैं, तो परमात्मा उन्हें क्योंकर मिल सकता है ? वे मन के संकेतों पर आचरण करनेवाले गुरु-विमुख जीव होते हैं, उनका जीवन व्यर्थ और मिथ्या-लोभ में महत्त्वहीन हो जाता है। किन्तु गुरु नानक कहते हैं कि यदि वे परमात्मा के सम्मुख अपने उपेक्षा-कर्मों के लिए क्षमा माँग लें तो वे भी उसी में विलीन हो सकते हैं ॥ १ ॥ म० ३ ॥ जो जीव गुरु के द्वारा परमात्मा का नाम जपता और प्रभु का यशोगान करता है; निरन्तर नाम में लीन रहता और हरि-जाप से मन को प्रसन्न कर लेता है, वह सौभाग्यशाली है और अन्ततः परमानन्द-रूप परमात्मा को पा लेता है। दास नानक कहते हैं कि नाम का स्तुति-गान करनेवाले के मार्ग में फिर कभी विघ्न नहीं आता ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ यदि कोई सतगुरु का निंदक भी हो और फिर उसी की शरण में आ जाए, तो भी वह क्षमाशील उसे क्षमा कर देता है और सत्संगति में मिला लेता है, जैसे वर्षा होने पर गलियों, नालियों, जौहड़ों का पानी गंगा में मिलकर गंगा के समान पवित्र हो जाता है। यह गुण निर्वैर सतगुरु में सदैव विद्यमान है, इसीलिए उसके मिलने से तृष्णा और भूख शान्त हो जाती है, तुरन्त ही प्रभु-मिलन की शीतलता मिलती है। गुरु नानक कहते हैं कि मेरे परमात्मा का यह आश्चर्यजनक ढंग देखिए, जो सतगुरु को स्वीकार करनेवाले को अपना बना लेता है, स्वीकार करता है (अर्थात् जो सतगुरु को मानता है वह सबको प्रिय होता है) ॥ १३ ॥ १ ॥ सुधु ॥ (यहाँ "सुधु" शब्द से यह अभिप्राय है कि उक्त 'वार' का भलीभाँति संशोधन कर लिया गया है।)

बिलावलु बाणी भगता की ॥ कबीर जीउ की

१ ओं सतिनामु करता पुरखु गुरप्रसादि ॥ ऐसो इहु संसारु पेखना रहनु न कोऊ पईहै रे । सूधे सूधे रेगि चलहु तुम नतर कुधका दिवईहै रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बारे बूढे तरुने भईआ सभहू जमु लै जईहै रे । मानसु बपुरा मूसा कीनो मीचु बिलईआ

खईहै रे ।। १ ।। धनवंता अरु निरधन मनई ता की कछू न कानी रे । राजा परजा सम करि मारै ऐसो कालु बडानी रे ।। २ ।। हरि के सेवक जो हरि भाए तिन्ह की कथा निरारी रे । आवहि न जाहि न कबहू मरते पारब्रहम संगारी रे ।। ३ ।। पुत्र कलत्र लछिमी माइआ इहै तजहु जीअ जानी रे । कहत कबीर सुनहु रे संतहु मिलिहै सारिगपानी रे ।। ४ ।। १ ।।

यह संसार ऐसे विचित्र खेल-तमाशे के समान है कि जहाँ कोई रह नहीं सकता, सब अपना-अपना समय आने पर चले जाते हैं। सब जीव चलायमान हैं, सीधे-सीधे अपने रास्ते पर चलते जाते हैं, नहीं तो पीछे आनेवाले लोगों के धक्के पड़ते हैं ।। १ ।। रहाउ ।। बालक, तरुण और बूढ़े सभी मृत्यु के द्वारा क्रम से ले जाए जाते हैं। बेचारा मनुष्य चूहे की तरह मृत्यु रूपी बिल्ली के द्वारा ग्रस लिया जाता है ।। १ ।। चाहे कोई धनवान हो या निर्धन, किसी का कोई लिहाज़ नहीं; यम इतना व्यापक है कि राजा और प्रजा को समान रूप से मारता है ।। २ ।। किन्तु हरि के उन सेवकों की कथा इससे अलग है, क्योंकि वे हरि को प्रिय होते हैं। परब्रह्म स्वयं उनका साथी होता है, इसलिए आवागमन से मुक्त होते हैं और अमर हो जाते हैं ।। ३ ।। इसलिए, हे प्यारे जीव ! स्त्री, पुत्र और धन-दौलत को माया समझकर त्यागो; कबीरजी कहते हैं कि हे सज्जनो, तुम्हें तभी परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है ।। ४ ।। १ ।।

।। बिलावलु ।। बिदिआ न परउ बादु नही जानउ । हरि गुन कथत सुनत बउरानो ।। १ ।। मेरे बाबा मै बउरा सभ खलक सैआनी मै बउरा । मै बिगरिओ बिगरै मति अउरा ।। १ ।। रहाउ ।। आपि न बउरा राम कीओ बउरा । सतिगुरु जारि गइओ भ्रमु मोरा ।। २ ।। मै बिगरे अपनी मति खोई । मेरे भरमि भूलउ मति कोई ।। ३ ।। सो बउरा जो आपु न पछानै । आपु पछानै त एकै जानै ।। ४ ।। अबहि न माता सु कबहु न माता । कहि कबीर रामै रंगि राता ।।५।।२।।

मैंने विद्याध्ययन नहीं किया है, न ही वाद-विवाद की सामर्थ्य मुझमें है। मैं तो हरि के गुण गाते-सुनते अपने-आप में लीन रहता हूँ ।। १ ।। हाँ मेरे बाबा, मैं पगला गया हूँ, सारी जनता सूझवान है, किन्तु मैं पगला गया हूँ। मैं बिगड़ गया हूँ, अन्य कोई मेरा अनुकरण करते हुए न बिगड़े ।। १ ।। रहाउ ।। (यहाँ कबीर अध्यात्म-पथ पर चलने के कारण

लोगों की दृष्टि में अपने को पागल कहता है, क्योंकि मायावी-दृष्टि सांसारिक-बुद्धि को ही विशिष्ट मानती है)। मैं स्वयं पागल नहीं हुआ, मुझे तो प्रभु ने पागल कर दिया है (अर्थात् परमात्मा के आलोक का दर्शन पाने से कबीर उन्मत्त हो गया है)। सतगुरु ने मेरे भ्रम-जाल को जला डाला है ॥ २ ॥ मैंने बिगड़कर अपनी बुद्धि खो दी है (अर्थात् अध्यात्मिकता बौद्धिक तर्क की चीज़ नहीं), मेरे भ्रम में पड़कर कोई दूसरा अपने-आप को न भुलाए ॥ ३ ॥ सच तो ये है कि पागल वे लोग हैं, जो अपने-आप को नहीं पहचानते। अपने को पहचानें तो प्रभु की पहचान भी उन्हें सुलभ हो जाए ॥ ४ ॥ यदि कोई अब इस जन्म में प्रभु के रंग में रँगकर उन्मत्त नहीं हो जाता, तो वह कभी उस मस्ती को प्राप्त नहीं कर सकता। कबीर कहते हैं कि वे राम के रंग में पगलाए हैं (अन्य जीवों को भी मनुष्य-योनि में ही राम को पा लेना चाहिए) ॥ ५ ॥ २ ॥

॥ बिलावलु ॥ ग्रिहु तजि बनखंड जाईऐ चुनि खाईऐ कंदा। अजहु बिकार न छोडई पापी मनु मंदा ॥ १ ॥ किउ छूटउ कैसे तरउ भवजल निधि भारी। राखु राखु मेरे बीठुला जनु सरनि तुम्हारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिखै बिखै की बासना तजीअ नह जाई। अनिक जतन करि राखीऐ फिरि फिरि लपटाई ॥ २ ॥ जरा जीवन जोबनु गइआ किछु कीआ न नीका। इहु जीअरा निरमोलको कउडी लगि मीका ॥ ३ ॥ कहु कबीर मेरे माधवा तू सरब बिआपी। तुम समसरि नाही दइआलु मोहि समसरि पापी ॥ ४ ॥ ३ ॥

जो लोग घर-गृहस्थी छोड़कर जंगलों में जाते और कन्द-मूल आदि खाकर निर्वाह करते हैं, उनके भीतर से भी विषय-विकारों का अन्त नहीं होता, उनका मन भी भटकता ही रहता है ॥ १ ॥ मुक्ति क्योंकर मिल सकती है ? इस भयंकर संसार-सागर से क्योंकर पार हुआ जा सकता है ? कबीरजी कहते हैं कि हे मेरे स्वामी ! मेरी रक्षा करो, मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रकार-प्रकार की विषय-वासना का त्याग सम्भव नहीं हो पाता, यद्यपि मैं अनेक यत्न करके मन को संयत करता हूँ, फिर भी यह बार-बार वासना की ओर खिच जाता है ॥ २ ॥ यौवन का जीवन बीत गया, बुढ़ापा आ गया किन्तु मैं कुछ भी भला कर्म नहीं कर सका। मेरा यह जीवन, जो अनमोल था, कौड़ियों के बदले बिक गया ॥ ३ ॥ कबीरजी कहते हैं कि हे प्रभु ! तुम सर्वव्यापी हो, तुम्हारे समान कोई दयावान नहीं है और मेरे समान कोई पापी नहीं है (मेरा उद्धार करो) ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ बिलावलु ॥ नित उठि कोरी गागरि आनै लीपत जीउ गइओ । ताना बाना कछू न सूझै हरि हरि रसि लपटिओ ॥१॥ हमारे कुल कउने रामु कहिओ । जब की माला लई निपूते तब ते सुखु न भइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुनहु जिठानी सुनहु दिरानी अचरजु एकु भइओ । सात सूत इनि मुडींए खोए इहु मुडीआ किउ न मुइओ ॥ २ ॥ सरब सुखा का एकु हरि सुआमी सो गुरि नामु दइओ । संत प्रहलाद की पैज जिनि राखी हरनाखसु नख बिदरिओ ॥ ३ ॥ घर के देव पितर की छोडी गुर को सबदु लइओ । कहत कबीर सगल पाप खंडनु संतह लै उधरिओ ॥४॥४॥

नित्य-प्रति जागकर यह जीव कोरी गगरी लाता और उसे लीपते हुए अपना जीवन बिता देता है । उसे ताना-बाना कुछ मालूम नहीं, वह तो केवल हरि-नाम के रस में लिपटा रहता है ॥ १ ॥ (यहाँ कबीर प्रभु से आसक्ति रखनेवाले जीव की कथा कहते हैं) । हमारे तो कुल में भी कभी किसी ने राम-नाम नहीं लिया था । जबसे इस मूर्ख ने माला उठायी है, तबसे घर का सुख नष्ट हो गया है (कबीर विपरीत भाव से व्यंग्य करते हैं कि प्रभु-नाम जपनेवाले को माया के सुख नहीं मिलते) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे देवरानी-जेठानी! सुनो कि यह विचित्र बात है कि उसने घर का कामकाज ही छोड़ दिया है । तनने-बुनने के सूत्रों की उपेक्षा कर दी गयी है, ऐसे लड़के से तो छुटकारा मिल जाना चाहिए था (कबीर की माता कबीर के हरि-नाम जपने को लेकर यहाँ अपनी देवरानी-जेठानी के पास शिकायत करती है) ॥ २ ॥ (कबीरजी उत्तर देते हैं कि) सब सुखों का स्वामी वह परमात्मा है, जिसका नाम मुझे गुरु ने सुझा दिया है । उसी प्रभु ने सन्त प्रह्लाद की रक्षा की थी और उसे कष्ट देनेवाले हिरण्यकशिपु को अपने नखों से चीर दिया था ॥ ३ ॥ घर में अपने बुज़ुर्गों के इष्ट-देवताओं को छोड़कर मैंने केवल गुरु के शब्द को ग्रहण किया है । कबीरजी कहते हैं कि वही सब पापों का नाश करनेवाला है, उसी को पाकर सन्तों का उद्धार हुआ है ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ बिलावलु ॥ कोऊ हरि समानि नही राजा । ए भूपति सभ दिवस चारि के झूठे करत दिवाजा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरो जनु होइ सोइ कत डोलै तीनि भवन पर छाजा । हाथु पसारि सकै को जन कउ बोलि सकै न अंदाजा ॥ १ ॥ चेति अचेत मूड़ मन मेरे बाजे अनहद बाजा । कहि कबीर संसा भ्रमु चूको ध्रू प्रहिलाद निवाजा ॥ २ ॥ ५ ॥

परमात्मा के समान कोई राजा नहीं है (स्वामी नहीं है)। अन्य सब राजा तो कुछ दिनों के लिए झूठी प्रतिष्ठा पाते हैं और अन्त को प्राप्त होते हैं (केवल हरि ही अनश्वर है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो परमात्मा रूपी राजा या ठाकुर का सेवक है, वह कभी पथ-भ्रष्ट नहीं होता, क्योंकि तीनों भुवनों पर उसी का साम्राज्य है। उस सेवक की तरफ़ कोई बुरी नज़र नहीं उठा सकता, उस पर कोई हाथ नहीं उठा सकता, उसके बड़प्पन का अनुमान लगाया जाना भी कठिन है ॥ १ ॥ हे मूर्ख मन ! तेरे सामने अनाहत ध्वनियाँ अर्थात् सहज आनन्ददायी वादन बज रहे हैं, तू जाग। कबीरजी कहते हैं कि उसकी शरण लेने पर जैसे ध्रुव और प्रह्लाद निर्भय हो गये थे, वैसे ही सबका संशय और भ्रम नष्ट हो जाता है ॥ २ ॥ ५ ॥

॥ बिलावलु ॥ राखि लेहु हम ते बिगरी। सीलु धरमु जपु भगति न कीनी हउ अभिमान टेढ पगरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अमर जानि संची इह काइआ इह मिथिआ काची गगरी। जिनहि निवाजि साजि हम कीए तिसहि बिसारि अवर लगरी ॥ १ ॥ संधिक तोहि साध नही कहीअउ सरनि परे तुमरी पगरी। कहि कबीर इह बिनती सुनीअहु मत घालहु जम की खबरी ॥ २ ॥ ६ ॥

हे प्रभु ! हमसे अपराध बना है, बात बिगड़ गयी है, तुम कृपा करके हमारी रक्षा करो। शील, धर्म, जप या भक्ति आदि के गुणों का प्रसार हमने नहीं किया है, मिथ्याभिमान में हमारी पगड़ी टेढ़ी बनी रही है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हमने इस शरीर को अमर मानकर इसी के सेवा में सब शक्तियाँ लगा दीं, किन्तु यह तो कच्ची गगरी की तरह प्रमाणित हुआ, जिसने हमें सजाया, सँवारा और बनाया था उसी को भुलाकर हम अन्य लोगों के पीछे लगे घूमते रहे ॥ १ ॥ इस तरह हम तुम्हारे साधक न बनकर चोर बन गये हैं और अब तुम्हारे चरणों की शरण में पड़े हैं। कबीरजी कहते हैं कि तुम्हारे सम्मुख अब इतनी ही विनती है कि हमें क्षमा कर दो, हमारे लिए यम को सन्देश न भेजो ॥ २ ॥ ६ ॥

॥ बिलावलु ॥ दरमादे ठाढे दरबारि। तुझ बिनु सुरति करै को मेरी। दरसनु दीजै खोल्हि किवार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम धन धनी उदार तिआगी स्रवनन्ह सुनीअतु सुजसु तुम्हार। मागउ काहि रंक सभ देखउ तुम्ह ही ते मेरो निसतारु ॥ १ ॥ जैदेउ नामा बिप सुदामा तिन कउ क्रिपा

भई है अपार। कहि कबीर तुम संम्रथ दाते चारि पदारथ देत न बार ॥ २ ॥ ७ ॥

हम बड़े विनम्र-भाव से, हे प्रभु! तुम्हारे द्वार पर खड़े हैं। तुम्हारे बिना और कौन है जो हमारी सुधि लेगा। कृपा करके द्वार खोलो और दर्शन दो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ समस्त राशियों के स्वामी तुम्हीं हो, हमने तुम्हारी उदारता और त्याग की चर्चा तथा तुम्हारा सुयश कानों से सुना है। मुझ सरीखा रंक और किससे माँगने जाएगा? सब जानते हैं कि तुम्हीं से मेरा निस्तार सम्भव है ॥ १ ॥ जयदेव सरीखे भक्त, नामदेव जैसे सन्त और ब्राह्मण सुदामा जैसे कंगाल, सभी पर तुम्हारी अपार कृपा हुई है। कबीरजी कहते हैं कि हे प्रभु! तुम समर्थ और दातार हो, चारों पदार्थों (काम, अर्थ, धर्म, मोक्ष) का दान देते तुम्हें कुछ देरी नहीं लगती ॥ २ ॥ ७ ॥

॥ बिलावलु ॥ डंडा मुंद्रा खिंथा आधारी। भ्रम कै भाइ भवै भेखधारी ॥१॥ आसनु पवन दूरि करि बवरे। छोडि कपटु नित हरि भजु बवरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिह तू जाचहि सो त्रिभवन भोगी। कहि कबीर केसौ जगि जोगी ॥ २ ॥ ८ ॥

संन्यासी वाले दण्ड और योगियों वाले मुद्रा, झोली और आधारी आदि को धारण करनेवाले वेशधारी लोग भ्रम के भाव में ही भटकते रहते हैं ॥ १ ॥ ऐ भोले मनुष्य! आसन और प्राणायाम की बातों को छोड़कर, कपट और आडम्बर को त्यागकर नित्य हरि का भजन कर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस माया की तू याचना करता है, वह तो तीनों लोकों की भोग्या है; (कबीरजी कहते हैं कि) असली योगी (मायातीत) तो केवल परमात्मा स्वयं ही है ॥ २ ॥ ८ ॥

॥ बिलावलु ॥ इन्हि माइआ जगदीस गुसाई तुम्हरे चरन बिसारे। किंचत प्रीति न उपजै जन कउ जन कहा करहि बेचारे ॥१॥रहाउ॥ ध्रिगु तनु ध्रिगु धनु ध्रिगु इह माइआ ध्रिगु ध्रिगु मति बुधि फंनी। इस माइआ कउ द्रिड़ु करि राखहु बांधे आप बचंनी ॥ १ ॥ किआ खेती किआ लेवा देई परपंच झूठु गुमाना। कहि कबीर ते अंति बिगूते आइआ कालु निदाना ॥ २ ॥ ९ ॥

हे प्रभु! इसी माया के वश में पड़कर जीवों ने तुम्हारे चरणों का आश्रय छोड़ दिया है। इसी के कारण लोगों में तुम्हारे प्रति किंचित भी प्रीति नहीं उपजती, वे बेचारे क्या करें ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह शरीर,

धन, मान-सम्मान और छल-कपट वाली यह मायावी बुद्धि, सबको धिक्कार है। हे प्रभु ! अपने आदेश से इस माया को दृढ़ करके बाँधे रखो ॥ १ ॥ कृषि का कार्य हो या लेन-देन का कार्य-व्यापार, सब झूठा प्रपंच है, क्योंकि, कबीरजी कहते हैं कि जब अन्त समय काल का आगमन हुआ, तो कुछ भी सहायक नहीं हो सका ॥ २ ॥ ९ ॥

॥ बिलावलु ॥ सरीर सरोवर भीतरे आछै कमल अनूप। परम जोति पुरखोतमो जा कै रेख न रूप ॥ १ ॥ रे मन हरि भजु भ्रमु तजहु जगजीवन राम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आवत कछू न दीसई नह दीसै जात। जह उपजै बिनसै तही जैसे पुरिवन पात ॥ २ ॥ मिथिआ करि माइआ तजी सुख सहज बीचारि। कहि कबीर सेवा करहु मन मंझि मुरारि ॥ ३ ॥ १० ॥

परमात्मा रूपी अनुपम कमल शरीर रूपी सरोवर के भीतर ही खिला है। वह परम, पुरुषोत्तम, ज्योति-स्वरूप है, उसका आकार या रूप कुछ नहीं ॥ १ ॥ इसलिए, ऐ मन, तू सब भ्रमों का त्याग कर केवल उस जगजीवन परमात्मा का ही भजन कर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संसार में न तो कुछ आते दिखायी देता है, न जाते भासता है। जो कुछ भी उपजता है, वह जल में पैदा होनेवाली पुरइन की पत्तियों की तरह नष्ट हो जाता है ॥ २ ॥ माया को मिथ्या जानकर त्यागो, सहज और परमसुख का विचार करो, कबीर कहते हैं कि इस प्रकार मन के भीतर ही परमात्मा का ध्यान करने से आत्मोपलब्धि होती है ॥ ३ ॥ १० ॥

॥ बिलावलु ॥ जनम मरन का भ्रमु गइआ गोबिद लिव लागी। जीवत सुंन समानिआ गुर साखी जागी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कासी ते धुनि ऊपजै धुनि कासी जाई। कासी फूटी पंडिता धुनि कहां समाई ॥ १ ॥ त्रिकुटी संधि मै पेखिआ घट हू घट जागी। ऐसी बुधि समाचरी घट माहि तिआगी ॥ २ ॥ आप आप ते जानिआ तेज तेजु समाना। कहु कबीर अब जानिआ गोबिद मनु माना ॥ ३ ॥ ११ ॥

परमात्मा से प्रीति हो जाने पर जन्म-मरण का भ्रम दूर हो जाता है। गुरु की शिक्षा से आत्मा जाग्रत् होता है और जीते-जी शून्य में एकाग्र हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काँसे की धातु से ध्वनि पैदा होती है और काँसे में ही समा जाती है; यदि काँसा न रहे तो, हे पंडितो, ध्वनि कहाँ चली जाती है ? (अर्थात् ध्वनि का जैसे भौतिक आधार न रहने पर भी

ध्वनि आकाश में समा जाती है, वैसे ही अन्ततः ज्योति ज्योति में ही समा जाती है) ॥ १ ॥ तीनों गुणों के सन्धि-स्थल अर्थात् समूचे विश्व में मैंने उसी प्रभु की ज्योति को आलोकित होते देखा है, जिससे मुझमें ऐसी बुद्धि जाग्रत् हुई है कि मैंने अपने भीतर ही वास्तविक योगावस्था को प्राप्त कर लिया है ॥ २ ॥ मैंने अपने को स्वयं पहचान लिया है, अतः मेरी ज्योति परमज्योति में समा गयी है; कबीरजी कहते हैं कि अब सब ओर परमात्मा ही परमात्मा व्याप्त दीख पड़ता है ॥ ३ ॥ ११ ॥

॥ बिलावलु ॥ चरन कमल जा कै रिदै बसहि सो जनु किउ डोलै देव । मानौ सभ सुख नउनिधि ता कै सहजि सहजि जसु बोलै देव ॥ रहाउ ॥ तब इह मति जउ सभ महि पेखै कुटिल गांठि जब खोलै देव । बारंबार माइआ ते अटकै लै नरजा मनु तोलै देव ॥ १ ॥ जह उहु जाइ तही सुखु पावै माइआ तासु न झोलै देव । कहि कबीर मेरा मनु मानिआ राम प्रीति कीओ लै देव ॥ २ ॥ १२ ॥

जिस जीव के मन में परमात्मा के चरण-कमल बसते हैं, वह कभी दोलायित नहीं होता। नौ निधियाँ और संसार के समस्त सुख उसके हस्तामलक-सम समझो, सहज को पा जाने से वह प्रतिष्ठित हो जाता है ॥ रहाउ ॥ उसकी सद्बुद्धि तभी कही जा सकती है, जब वह मन से कुटिलता की गाँठ खोल दे और सबमें प्रभु का दर्शन करने लगे। बार-बार अपने मन को माया के आकर्षणों से रोके और तराज़ू लेकर मन की बुराइयों का मूल्यांकन करे और उन्हें तिरस्कार दे ॥१॥ तब वह जहाँ भी जायगा उसे सुख प्राप्त होगा, माया उसके मार्ग में बाधक नहीं हो सकेगी। कबीरजी कहते हैं कि मैंने भी जब अपने मन को प्रभु के प्रेम में लग्न किया तो वह संयत हो गया ॥ २ ॥ १२ ॥

बिलावलु बाणी भगत नामदेव जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सफल जनमु मो कउ गुर कीना । दुख बिसारि सुख अंतरि लीना ॥ १ ॥ गिआन अंजनु मो कउ गुरि दीना । राम नाम बिनु जीवनु मन हीना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामदेइ सिमरनु करि जानां । जगजीवन सिउ जीउ समानां ॥ २ ॥ १ ॥

गुरु के सम्पर्क में आने से मेरा जन्म सफल हो गया है। मेरे दुःखों का अन्त हो गया और मेरे भीतर सुख व्याप्त है ॥ १ ॥ गुरु ने मुझे ज्ञान का आलोक प्रदान किया है। राम-नाम के बिना मेरा जीवन केवल शारीरिक ही था (गुरु ने उसे आत्मिक बना दिया) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्त नामदेव कहते हैं कि मैंने जीवन के यथार्थ को प्रभु के सिमरण से जान लिया है और परमात्मा में ही अपने मन को लीन कर दिया है ॥ २ ॥ १ ॥

बिलावलु बाणी रविदास भगत की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ दारिदु देखि सभ को हसै ऐसी दसा हमारी । असटदसा सिधि कर तलै सभ क्रिपा तुमारी ॥१॥ तू जानत मैं किछु नही भवखंडन राम । सगल जीअ सरनागती प्रभ पूरन काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो तेरी सरनागता तिन नाही भारु । ऊच नीच तुम ते तरे आलजु संसारु ॥२॥ कहि रविदास अकथ कथा बहु काइ करीजै । जैसा तू तैसा तुही किआ उपमा दीजै ॥ ३ ॥ १ ॥

मेरी निर्धनता को देखकर सब कोई उपहास करता था, ऐसी मेरी दशा थी, किन्तु अब अठारह सिद्धियाँ मेरे हस्तामलक-सम हो गयी हैं, यह सब तुम्हारी ही कृपा है ॥ १ ॥ हे प्रभु, तुम जानते हो कि मेरा मुझमें कुछ नहीं, तुम्हीं जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति दिलानेवाले हो। सब जीव तुम्हारी शरण में आये हैं, कृपा करके उनके काम सँवारो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे परमात्मा, जो तेरी शरण में आ जाता है, वह अपने पापों के बोझ से मुक्त हो जाता है। इस निर्लज्ज संसार में सब ऊँचे-नीचे लोग तुम्हारी ही कृपा से मुक्त होते हैं ॥ २ ॥ सन्त रविदास कहते हैं कि यह सब अकथनीय है, क्योंकर कहा जा सकता है। तुम जैसे हो, वैसे तुम ही हो, तुम्हें कोई उपमा नहीं दी जा सकती ॥ ३ ॥ १ ॥

जिह कुल साधु बैसनौ होइ । बरन अबरन रंकु नही ईसुरु बिमल बासु जानीऐ जगि सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ब्रहमन बैस सूद अरु ख्यत्री डोम चंडार मलेछ मन सोइ । होइ पुनीत भगवंत भजन ते आपु तारि तारे कुल दोइ ॥ १ ॥ धंनि सु गाउ धंनि सो ठाउ धंनि पुनीत कुटंब सभ लोइ । जिनि पीआ सार रसु तजे आन रस होइ रस मगन डारे बिखु खोइ ॥ २ ॥ पंडित सूर छत्रपति

राजा भगत बराबरि अउरु न कोइ । जैसे पुरैन पात रहै जल समीप भनि रविदास जनमे जगि ओइ ॥ ३ ॥ २ ॥

जिसके कुल में कोई प्रभु-भक्त पैदा हो जाता है, वह ऊँच-नीच, राजा-रंक कोई भी हो, उसकी पावन सुगन्ध सारे संसार में फल जाती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, डोम, चण्डाल या मलिन मन का कोई भी व्यक्ति क्यों न हो, वह परमात्मा के भजन से पावन हो जाता है और अपने मोक्ष के साथ-साथ अपने दोनों वंशों (पितृ और मातृवंश) का उद्धार करता है ॥ १ ॥ वह गाँव, वह स्थान और वह कुटुम्ब, सब धन्य हैं और सब लोकों में पुनीत हैं, जिनका कोई जीव सांसारिक रसों को त्यागकर प्रभु-नाम के रसपान में रस-मग्न हो जाता है। उसके सब दुःख दूर हो जाते हैं ॥ २ ॥ पण्डित हो या शूरवीर, या छत्रपति राजा हो, भक्त की बराबरी कोई नहीं कर सकता। भक्त की स्थिति उस कमल-पत्र के समान होती है, जो सदैव जल के निकट रहता है, किन्तु जल से अप्रभावित रहता है। भक्त भी संसार में रहते तो हैं, किन्तु सांसारिक वासनाओं से निर्लिप्त रहते हैं; वास्तव में संसार में उन्हीं का जन्म सफल कहा जा सकता है ॥ ३ ॥ २ ॥

बाणी सधने की रागु बिलावलु

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ न्रिप कंनिआ के कारनै इकु भइआ भेखधारी । कामारथी सुआरथी वाकी पैज सवारी ॥१॥ तव गुन कहा जगत गुरा जउ करमु न नासै । सिंघ सरन कत जाईऐ जउ जंबुकु ग्रासै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एक बूंद जल कारने चात्रिकु दुखु पावै । प्रान गए सागरु मिलै फुनि कामि न आवै ॥ २ ॥ प्रान जु थाके थिरु नही कैसे बिरमावउ । बूडि मूए नउका मिलै कहु काहि चढावउ ॥ ३ ॥ मै नाही कछु हउ नही किछु आहि न मोरा । अउसर लजा राखि लेहु सधना जनु तोरा ॥ ४ ॥ १ ॥

राजा की कन्या के लिए किसी ने वेश धारण किया था। वह स्वार्थी था, कामुक था; फिर भी, हे प्रभु, तुमने उसकी लाज रखी (किसी राजा की कन्या के प्रेम में आसक्त होकर किसी बढ़ई ने विष्णु का रूप धारण कर उससे शादी कर ली थी। कुछ समय पश्चात् उस राजा पर किसी अन्य राजा ने आक्रमण किया तो वह अपने दामाद को विष्णु मानकर

उससे सहायता माँगने लगा। वास्तव में निःशक्त बढ़ई अपनी लाज बचाने के लिए साक्षात् विष्णु से प्रार्थना करने लगा तो उसकी प्रार्थना स्वीकृत हुई) ॥ १ ॥ हे जगद्गुरु, तुम्हारा बड़प्पन किस काम का यदि कर्मों का फन्दा मेरे गले से न उतरे? यदि गीदड़ों से ही डरते रहना हुआ तो सिंह की शरण लेने से क्या लाभ अर्थात् प्रभु की शरण में आकर जीव के सब कर्म और भय नष्ट हो जाने चाहिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चातक स्वाति की एक बूँद के लिए दुःख पाता है। उसी तड़प में यदि वह प्यासा मर जाए तो बाद में जल का सागर मिल जाने से भी क्या लाभ? अर्थात् भक्त जब भगवान को पुकारता है, तब यदि उसे प्रभु लब्ध नहीं होता तो बाद में उसका क्या महत्त्व रह जाता है? ॥ २ ॥ मेरे प्राण थक चुके हैं, उनमें स्थिरता नहीं आ रही, मैं क्योंकर शान्ति से बैठ सकता हूँ। डूब जाने के बाद यदि नौका मिल भी जाए तो उसमें किसे चढ़ाया जाएगा ॥ ३ ॥ मैं कुछ नहीं हूँ, मेरा कुछ नहीं है और न ही मेरा कुछ था। यथा अवसर तुम मेरी लाज रख लो, यही दास सधना की तुम्हारे सम्मुख विनती है ॥ ४ ॥ १ ॥

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

रागु गौड चउपदे महला ४ घरु १ ॥ जे मनि चिति आस रखहि हरि ऊपरि ता मन चिंदे अनेक अनेक फल पाई। हरि जाणै सभु किछु जो जीइ वरतै प्रभु घालिआ किसै का इकु तिलु न गवाई। हरि तिस की आस कीजै मन मेरे जो सभ महि सुआमी रहिआ समाई ॥ १ ॥ मेरे मन आसा करि जगदीस गुसाई। जो बिनु हरि आस अवर काहू की कीजै सा निहफल आस सभ बिरथी जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो दीसै माइआ मोह कुटंबु सभु मत तिस की आस लगि जनमु गवाई। इन्ह कै किछु हाथि नही कहा करहि इहि बपुड़े इन्ह का वाहिआ कछु न वसाई। मेरे मन आस करि हरि प्रीतम अपुने की जो तुझु तारै तेरा कुटंबु सभु छडाई ॥ २ ॥ जे किछु आस अवर करहि पर मित्री मत तूं जाणहि तेरै कितै कंमि आई। इह आस परमित्री भाउ दूजा है खिन महि झूठु बिनसि सभ जाई। मेरे मन आसा करि

हरि प्रीतम साचे की जो तेरा घालिआ सभु थाइ पाई ।। ३ ।। आसा मनसा सभ तेरी मेरे सुआमी जैसी तू आस करावहि तैसी को आस कराई । किछु किसी कै हथि नाही मेरे सुआमी ऐसी मेरै सतिगुरि बूझ बुझाई । जन नानक की आस तू जाणहि हरि दरसनु देखि हरि दरसनि त्रिपताई ।। ४ ।। १ ।।

(परमात्मा के अतिरिक्त किसी और की आशा करना व्यर्थ है। परमात्मा ही हमारी सब आशाएँ पूर्ण करता है, इसलिए उसी के सम्मुख सर्मापित होना उचित है।) यदि हम प्रभु पर ही अपनी आशाओं को निर्भर करें तो अनेक मनोवाञ्छित फलों की प्राप्ति होती है। जो कुछ हमारे मन में होता है, वह उस अन्तर्यामी प्रभु को ज्ञात होता है और वह किसी का श्रम व्यर्थ नहीं जाने देता। इसलिए हमें परमात्मा पर ही आशा रखनी चाहिए, क्योंकि वह सबका स्वामी है ।। १ ।। हे मेरे मन, सृष्टि के स्वामी परमात्मा पर ही आशा रखो, यदि हरि के अतिरिक्त किसी और की आशा करोगे तो वह व्यर्थ होगी, कार्य-सिद्धि नहीं हो सकेगी ।। १ ।। रहाउ ।। दृश्यमान जगत में मोह-माया, कुटुम्ब आदि सबके आश्रय जन्म गँवाने के समान हैं। इनके हाथ कुछ नहीं है, ये बेचारे क्या करेंगे, क्योंकि इनके वश में कुछ नहीं। ऐ मेरे मन, तू उस प्रियतम पर आशा रख, जो तेरा उद्धार कर सकता है और तेरे परिवार को भी मुक्ति प्रदान कर सकता है ।। २ ।। यदि परायों की सहायता की आशा रखोगे और यह मानोगे कि वे तुम्हारे काम आएँगे तो याद रखो कि दिखावे के मित्रों की आशा द्वैतभाव के समान है, जो क्षण भर में ही नष्ट हो जाती है। इसलिए, ऐ मन, उस प्रभु-परमात्मा की सच्ची आशा पर निर्भर हो जो कभी किसी के श्रम को विफल नहीं जाने देता ।। ३ ।। ऐ मेरे स्वामी, मेरी आशाएँ और मन के अरमान सब तेरे ही हैं; जैसी आशा तुम करवाओगे, वैसी ही मैं करूँगा। मेरे सतगुरु ने मुझे ऐसा ज्ञान दिया है कि तुम्हारे अतिरिक्त और किसी के हाथ कुछ नहीं। दास नानक की आशा केवल तुम पर ही निर्भर करती है, तुम्हारे दर्शनों से ही उसको तृप्ति मिलती है ।। ४ ।। १ ।।

।। गौड महला ४ ।। ऐसा हरि सेवीऐ नित धिआईऐ जो खिन महि किलविख सभि करे बिनासा । जे हरि तिआगि अवर की आस कीजै ता हरि निहफल सभ घाल गवासा । मेरे मन हरि सेविहु सुखदाता सुआमी जिसु सेविऐ सभ भुख लहासा ।।१।। मेरे मन हरि ऊपरि कीजै भरवासा । जह जाईऐ तह नालि मेरा

सुआमी हरि अपनी पैज रखै जन दासा ।। १ ।। रहाउ ।। जे अपनी बिरथा कहहु अवरा पहि ता आगै अपनी बिरथा बहु बहुतु कढासा । अपनी बिरथा कहहु हरि अपुने सुआमी पहि जो तुम्हरे दूख ततकाल कटासा । सो ऐसा प्रभु छोडि अपनी बिरथा अवरा पहि कहीऐ अवरा पहि कहि मन लाज मरासा ।। २ ।। जो संसारै के कुटंब मित्र भाई दीसहि मन मेरे ते सभि अपनै सुआइ मिलासा । जितु दिनि उन्ह का सुआउ होइ न आवै तितु दिनि नेड़ै को न ढुकासा । मन मेरे अपना हरि सेवि दिनु राती जो तुधु उपकरै दूखि सुखासा ।। ३ ।। तिस का भरवासा किउ कीजै मन मेरे जो अंती अउसरि रखि न सकासा । हरि जपु मंतु गुर उपदेसु लै जापहु तिन्ह अंति छडाए जिन्ह हरि प्रीति चितासा । जन नानक अनदिनु नामु जपहु हरि संतहु इहु छूटण का साचा भरवासा ।। ४ ।। २ ।।

ऐसे परमात्मा की सेवा करो, नित्य उसका ध्यान करो, जो क्षण भर में ही सभी पापों को नष्ट कर देता है। यदि हरि के अतिरिक्त किसी अन्य की आशा करोगे तो तुम्हारी सब मेहनत व्यर्थ हो जाएगी। इसलिए, ऐ मेरे मन, उस सुखदाता स्वामी की सेवा कर, जिसके सेवन से सब प्रकार की आशाएँ-तृष्णाएँ पूर्ण हो जाती हैं ।। १ ।। ऐ मन, परमात्मा पर भरोसा रखो। जहाँ जाएँ वहीं मेरा स्वामी तुम्हारा साथ देगा। वह अपने सेवकों की सब जगह लाज रखता है ।। १ ।। रहाउ ।। यदि हम किसी के पास अपना दुःख कहने जाएँ तो आगे से वह भी दुःखों का पहाड़ कह सुनाता है। इसलिए अपने दुःखों की गाथा उस प्रभु को सुनाओ जो उन दुःखों को तत्काल नष्ट कर सकता है। अपने दुःख प्रभु के अतिरिक्त किसी और को कहना तो लाज से मर जाने के समान है ।। २ ।। संसार में परिवार, मित्र, भाई आदि —सब अपने स्वार्थ से मिलते हैं। जिस दिन उनका स्वार्थ नहीं रह जाता, कोई निकट नहीं फटकता। इसलिए, हे मेरे मन, सच्चे हरि की सेवा में रह, जो उपकारवश दुःखों को सुखों में बदल देता है ।। ३ ।। ऐ मन, ऐसे लोगों का भरोसा क्यों किया जाए, जो मौक़ा आने पर सहायक न हो सकें। गुरु के उपदेश से हरि-नाम का मन्त्र जपो जो अन्त समय हमारे उद्धार और हार्दिक प्रीति का आधार बनता है। दास नानक कहते हैं कि रात-दिन उसी का भरोसा करो, जो मुक्ति का सच्चा अवलम्ब है ।। ४ ।। २ ।।

।। गोड महला ४ ।। हरि सिमरत सदा होइ अनंदु सुखु

अंतरि सांति सीतल मनु अपना। जैसे सकति सूरु बहु जलता गुर ससि देखे लहि जाइ सभ तपना ।। १ ।। मेरे मन अनदिनु धिआइ नामु हरि जपना। जहा कहा तुझु राखै सभ ठाई सो ऐसा प्रभु सेवि सदा तू अपना ।। १ ।। रहाउ ।। जा महि सभि निधान सो हरि जपि मन मेरे गुरमुखि खोजि लहहु हरि रतना। जिन हरि धिआइआ तिन हरि पाइआ मेरा सुआमी तिनके चरण मलहु हरि दसना ।। २ ।। सबदु पछाणि राम रसु पावहु ओहु ऊतमु संतु भइओ बड बडना। तिसु जन की वडिआई हरि आपि वधाई ओहु घटै न किसै की घटाई इकु तिलु तिलु तिलना ।। ३ ।। जिसते सुख पावहि मन मेरे सो सदा धिआइ नित कर जुरना। जन नानक कउ हरि दानु इकु दीजै नित बसहि रिदै हरी मोहि चरना ।। ४ ।। ३ ।।

हरि का सिमरन करने से परमानन्द की प्राप्ति होती है, अन्तर्मन शान्त और शीतल हो जाता है। जैसे माया रूपी सूर्य के ताप से उत्तप्त जीव गुरु रूपी चन्द्र से मन को शीतल करता है और सब तापों से मुक्त हो जाता है ।। १ ।। ऐ मेरे मन, रात-दिन हरि-जाप में ध्यान लगा। ऐसे स्वामी की सेवा कर जो हर जगह, यहाँ-वहाँ सब स्थानों पर तुम्हारी रक्षा कर सके ।। १ ।। रहाउ ।। जिस प्रभु में सब सुखों के स्रोत विद्यमान हैं, ऐ मन, गुरु की सहायता से उसी रत्न-पदार्थ को खोज ले। जिन लोगों ने हरि का ध्यान कर उसे पा लिया है, तू भी हरि के उन सेवकों की चरण-सेवा कर ।। २ ।। जो जीव प्रभु के शब्द को पहचानकर राम-रस का पान करता है, वह उत्तम और बड़े से बड़ा हो जाता है। उस दास को परमात्मा स्वयं बड़प्पन देता है, जो किसी के घटाने से तिल भर भी नहीं घटता ।। ३ ।। ऐ मेरे मन, जिस परमात्मा से सब सुख उपलब्ध होते हैं, सदा हाथ जोड़कर उसकी आराधना करो। गुरु नानक समर्पित भाव से यही वरदान माँगते हैं कि उनका मन सदा हरि-चरणों में लीन रहे ।। ४ ।। ३ ।।

।। गोड महला ४ ।। जितने साह पातिसाह उमराव सिकदार चउधरी सभि मिथिआ झूठु भाउ दूजा जाणु। हरि अबिनासी सदा थिरु निहचलु तिसु मेरे मन भजु परवाणु ।। १ ।। मेरे मन नामु हरी भजु सदा दीबाणु। जो हरि महलु पावै गुर बचनी तिसु जेवडु अवरु नाही किसै दा ताणु ।। १ ।। रहाउ ।।

जितने धनवंत कुलवंत मिलखवंत दीसहि मन मेरे सभि बिनसि जाहि जिउ रंगु कसुंभ कचाणु। हरि सति निरंजनु सदा सेवि मन मेरे जितु हरि दरगह पावहि तू माणु ॥ २ ॥ ब्राहमणु खत्री सूद वैस चारि वरन चारि आस्रम हहि जो हरि धिआवै सो परधानु। जिउ चंदन निकटि वसै हिरडु बपुड़ा तिउ सतसंगति मिलि पतित परवाणु ॥ ३ ॥ ओहु सभ ते ऊचा सभ ते सूचा जाकै हिरदै वसिआ भगवानु। जन नानकु तिस के चरन पखालै जो हरि जनु नीचु जाति सेवकाणु ॥ ४ ॥ ४ ॥

संसार में जितने राजा-महाराजा, अमीर-उमराव, चौधरी आदि हैं, सबको मिथ्या और द्वैतभाव के आधार समझो। केवल हरि ही अविनाशी, स्थिर निश्चल है; मेरे मन, तू उसी पर क़ुर्बान हो जा ॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, परमात्मा का भजन कर, एकमात्र उसी का सहारा ले। जो परमात्मा मुक्ति-दाता है, गुरु के द्वारा उसकी खोज कर; उससे बड़ा शक्तिशाली और कोई नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संसार में जितने धनवान, कुलीन और सम्पत्तिशाली दिखते हैं, वे सब नश्वर हैं, कुसुम्भ के कच्चे रंग की तरह वे मिट जाते हैं। हरि सत्य और मायातीत है, मेरे मन सदा उसी की सेवा में संलग्न हो, वही तुम्हें सम्मान प्रदान करके अपने में विलीन कर लेगा ॥ २ ॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र —चारों वर्ण और चारों आश्रमों में वही वर्ण या आश्रम उत्तम है, जिसमें जीव परमात्मा को पा लेता है या जो परमात्मा को स्वीकार है। जैसे चन्दन के निकट लगा अरिण्ड का पेड़ सुगन्धित हो जाता है, वैसे ही प्रभु भी पतितों को अपना लेता है ॥ ३ ॥ जिसके हृदय में परमात्मा वास करता है, वह जीव सर्वोच्च और सर्वश्रेष्ठ होता है। नीच जाति के हरि-सेवकों के भी चरण धोना दास नानक अपना अहोभाग्य मानता है ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ गोंड महला ४ ॥ हरि अंतरजामी सभतै वरतै जेहा हरि कराए तेहा को करईऐ। सो ऐसा हरि सेवि सदा मन मेरे जो तुधनो सभदू रखि लईऐ ॥ १ ॥ मेरे मन हरि जपि हरि नित पड़ईऐ। हरि बिनु को मारि जीवालि न साकै ता मेरे मन काइतु कड़ईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि परपंचु कीआ सभु करतै विचि आपे आपणी जोति धरईऐ। हरि एको बोलै हरि एकु बुलाए गुरि पूरै हरि एकु दिखईऐ ॥ २ ॥ हरि अंतरि नाले बाहरि नाले कहु तिसु पासहु मन किआ चोरईऐ। निहकपट सेवा कीजै हरि केरी तां मेरे मन सरब सुख पईऐ ॥ ३ ॥ जिसदै

वसि सभु किछु सो सभदू वडा सो मेरे मन सदा धिअईऐ । जन नानक सो हरि नालि है तेरै हरि सदा धिआइ तू तुधु लए छडईऐ ।। ४ ।। ५ ।।

परमात्मा अन्तर्यामी है, सर्वव्यापक है और जैसा चाहता है वैसा करवाता है। ऐ मेरे मन, सदा ऐसे ही परमात्मा की आराधना कर, जो सब तरफ़ से तुम्हारी रक्षा कर सके ।। १ ।। ऐ मन, नित्य हरि का जाप कर, उसकी सेवा में रह; हरि के अतिरिक्त कोई मारने-जिलानेवाला नहीं, फिर क्यों किसी के लिए समर्पित हुआ जाए ।। १ ।। रहाउ ।। कर्ता-पुरुष हरि ने सृष्टि का यह प्रपञ्च रचा और बीच में अपनी ज्योति को अदृश्य रूप से व्याप्त कर दिया। परमात्मा के नाम से बोलने-बुलाने वाला हरि वही एक है, कोई सच्चा गुरु ही उससे मिलाप करवा सकता है ।। २ ।। परमात्मा अन्दर और बाहर सदा अंग-संग रहता है, उसके पास से क्या चुराया जा सकता है। निष्कपट-भाव से उसकी सेवा करो, तभी, मेरे मन, सर्व सुखों की प्राप्ति होगी ।। ३ ।। जिसके वश में सब कुछ है वही सबसे बड़ा है; मेरे मन, सदा उसी का ध्यान कर। दास नानक कहते हैं कि वह परमात्मा सदा हमारे साथ है, उसी का ध्यान करो, वही हमारा उद्धार करेगा ।। ४ ।। ५ ।।

।। गोंड महला ४ ।। हरि दरसन कउ मेरा मनु बहु तपतै । जिउ त्रिखावंतु बिनु नीर ।।१।। मेरै मनि प्रेमु लगो हरि तीर । हमरी बेदन हरि प्रभु जानै मेरे मन अंतर की पीर ।।१।। रहाउ ।। मेरे हरि प्रीतम की कोई बात सुनावै सो भाई सो मेरा बीर ।। २ ।। मिलु मिलु सखी गुण कहु मेरे प्रभ के ले सतिगुर की मति धीर ।। ३ ।। जन नानक की हरि आस पुजावहु हरि दरसनि सांति सरीर ।। ४ ।। ६ ।। छका १ ।।

जिस प्रकार प्यासा व्यक्ति पानी के लिए तड़पता है, उसी तरह मेरा मन हरि के दर्शनों के लिए तड़प रहा है ।। १ ।। मेरे मन में हरि-प्रेम का तीर गहरा घाव कर गया है; इसलिए मेरे भीतर की पीड़ा भी केवल उसी परमात्मा को विदित है, जिसने मुझे प्रेम-बाण से घायल किया है ।। १ ।। रहाउ ।। जो मेरे पास, मेरे प्रियतम की कथा कहे, वही मेरा भाई, मेरा शुभ-चिन्तक है ।। २ ।। ऐ सखियो, मेरे सतगुरु की मति लेकर नित्य-प्रति मिल-मिलकर प्रभु की गौरवगाथा सुनाओ ।। ३ ।। दास नानक कहते हैं कि परमात्मा ही हमारी सब आशाओं का पूरक है और उसी के दर्शनों से शरीर को शान्ति मिलती है ।। ४ ।। ६ ।। छका १ ।।

राग़ु गोंड महला ५ चउपदे घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सभु करता सभु भुगता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुनतो करता पेखत करता । अद्रिसटो करता द्रिसटो करता । ओपति करता परलउ करता । बिआपत करता अलिपतो करता ॥ १ ॥ बकतो करता बूझत करता । आवतु करता जातु भी करता । निरगुन करता सरगुन करता । गुरप्रसादि नानक समद्रिसटा ॥ २ ॥ १ ॥

परमात्मा स्वयं सब कुछ करने योग्य है और सबका भोक्ता भी स्वयं है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुननेवाला तथा देखनेवाला भी स्वयं परमात्मा ही है। वही दृश्य और अदृश्य है; वही सृष्टि की उत्पत्ति करता है और प्रलय का कारण भी वही होता है। समूचा प्रसार तथा समाहार उसी के द्वारा सम्पन्न होता है ॥ १ ॥ वही बोलता है और वही समझता है। वही आता है और जाता भी वही है। निर्गुण और सगुण दोनों रूप कर्ता के ही हैं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु की कृपा से ही उस समद्रष्टा प्रभु से मिलन हो सकता है ॥ २ ॥ १ ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ फाकिओ मीन कपिक की निआई तू उरझि रहिओ कुसंभाइले । पग धारहि सासु लेखै लै तउ उधरहि हरि गुण गाइले ॥ १ ॥ मन समझु छोडि आवाइले । अपने रहन कउ ठउरु न पावहि काए पर कै जाइले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ मैगलु इंद्री रसि प्रेरिओ तू लागि परिओ कुटंबाइले । जिउ पंखी इकत्र होइ फिरि बिछुरै थिरु संगति हरि हरि धिआइले ॥२॥ जैसे मीनु रसन सादि बिनसिओ ओहु मूठौ मूड़ लोभाइले । तू होआ पंच वासि वैरी कै छूटहि परु सरनाइले ॥ ३ ॥ होहु क्रिपाल दीन दुख भंजन सभि तुम्हरे जीअ जंताइले । पावउ दानु सदा दरसु पेखा मिलु नानक दास दसाइले ॥ ४ ॥ २ ॥

हे मनुष्य, तुम मछली या बन्दर की नाईं मायावी रसों में उलझे हुए हो। यदि तुम परमात्मा की इच्छानुसार जीवन-यापन करो और प्रभु का नाम जपो तो तुम्हारी मुक्ति सम्भव हो सकती है ॥ १ ॥ हे मन, इस तथ्य को समझ लो और मिथ्या संसार में आकर्षणों को त्याग दो। अपने रहने के लिए तो स्थान नहीं, दूसरों को क्यों निमन्त्रित करते हो अर्थात् अपना मन तो क़ाबू में नहीं है, दूसरों को उपदेश देने का क्या लाभ

है ? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे हाथी इन्द्रिय-रस की प्रेरणा से फँसता है, वैसे ही तुम कुटुम्ब के चक्कर में पड़े हो। जसे पक्षी दाना चुगने के लिए एक जगह इकट्ठे होते हैं और फिर अपने-अपने घोंसलों को उड़ जाते हैं, वैसे ही मनुष्य-जन्म आने-जाने का खेल है; केवल प्रभु-नाम के जपने से ही स्थिरता मिल सकती है ॥ २ ॥ जैसे मछली जीभ के स्वाद के कारण नष्ट होती और लोभ में फँसती है, वैसे ही तुम काम-क्रोधादि पाँच शत्रुओं के घेरे में फँसे हो, इससे कैसे छूटोगे ? प्रभु की शरण अपना लो ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! तुम दुःखों को नाश करनेवाले हो, सभी जीव तुम्हारे ही हैं, उन पर कृपा करके ऐसा दान प्रदान करो कि दासों के दास नानक को सदा तुम्हारा दर्शन प्राप्त हो सके ॥ ४ ॥ २ ॥

रागु गोंड महला ५ चउपदे घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जीअ प्रान कीए जिनि साजि । माटी महि जोति रखी निवाजि । बरतन कउ सभु किछु भोजन भोगाइ । सो प्रभु तजि मूड़े कत जाइ ॥ १ ॥ पारब्रहम की लागउ सेव । गुर ते सुझै निरंजन देव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनि कीए रंग अनिक परकार । ओपति परलउ निमख मझार । जा की गति मिति कही न जाइ । सो प्रभु मन मेरे सदा धिआइ ॥ २ ॥ आइ न जावै निहचलु धनी । बे अंत गुना ता के केतक गनी । लाल नाम जाकै भरे भंडार । सगल घटा देवै आधार ॥ ३ ॥ सतिपुरखु जाको है नाउ । मिटहि कोटि अघ निमख जसु गाउ । बाल सखाई भगतन को मीत । प्रान अधार नानक हित चीत ॥ ४ ॥ १ ॥ ३ ॥

जिस परमात्मा ने जीव-प्राण बनाए हैं और मिट्टी की इस देह में जीवन की ज्योति प्रतिष्ठित की है; सबको प्रयोग के लिए सब कुछ देता और हर प्रकार के भोग करवाता है, उस परमात्मा को छोड़कर, ऐ मूर्ख व्यक्ति, तुम कहाँ जाओगे ? ॥ १ ॥ हे मनुष्य, तुम परब्रह्म की सेवा में लगो, वह निरंजन, निर्गुण परमात्मा गुरु के आदेशों पर आचरण करने से ही प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस प्रभु ने अनेक रंगों की योजना की है और जो क्षण भर में ही उत्पत्ति और प्रलय कर देने में समर्थ है, जिसकी अवस्था का अनुमान नहीं किया जा सकता, हे मेरे मन, सदा उसी प्रभु का ध्यान करो ॥ २ ॥ वह परमात्मा सबका स्वामी है, उसमें कोई

अस्थिरता नहीं, न ही वह कहीं आता-जाता है। उसके अनन्त गुण हैं, वे गिने नहीं जा सकते। नाम रूपी हीरे-मोतियों से उसके भण्डार भरे हैं और वह संसार के सभी भौतिक पदार्थों को आधार देता है ॥ ३ ॥ उसका नाम सत्पुरुष है। उसका यश क्षण भर के लिए गान करने से भी करोड़ों पाप नष्ट हो जाते हैं, वह हमारा बाल-सखा और भक्तों का मित्र है। गुरु नानक कहते हैं कि वह हमारा प्राणाधार है और सदैव हमारा हित-चिन्तक है ॥ ४ ॥ १ ॥ ३ ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ नाम संगि कीनो बिउहारु। नामो ही इसु मन का अधारु। नामो ही चिति कीनी ओट। नामु जपत मिटहि पाप कोटि ॥ १ ॥ रासि दीई हरि एको नामु। मन का इसटु गुर संगि धिआनु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु हमारे जीअ की रासि। नामो संगी जत कत जात। नामो ही मनि लागा मीठा। जलि थलि सभ महि नामो डीठा ॥ २ ॥ नामे दरगह मुख उजले। नामे सगले कुल उधरे। नामि हमारे कारज सीध। नाम संगि इहु मनूआ गीध ॥ ३ ॥ नामे ही हम निरभउ भए। नामे आवन जावन रहे। गुरि पूरै मेले गुणतास। कहु नानक सुखि सहजि निवासु ॥ ४ ॥ २ ॥ ४ ॥

नाम के सहारे किया गया जीवन व्यवहार ही सत्य है। प्रभु-नाम ही इस मन का एकमात्र सच्चा आधार है। प्रभु का नाम मन को उत्साहित करता है, नाम जपने से करोड़ों पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥ परमात्मा ने हमें नाम की राशि प्रदान की है। मन का यह धर्म है कि गुरु की संगति में वह हरि-नाम का ध्यान करे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु-नाम हमारे जीवन की राशि है। जहाँ कहीं भी हम जाते हैं, हरि-नाम का ही हमें सहारा रहता है। हरि-नाम मन को मीठा लगता है; जल-थल सब जगह नाम व्याप्त है (यहाँ नाम परमात्मा के आलोक का प्रतीक बन गया है) ॥ २ ॥ हरि-नाम के जपने से परमात्मा के दरबार में प्रतिष्ठा होती है, नाम से सारे वंश का उद्धार होता है, नाम जपने से सब कार्यों की सिद्धि होती है और नाम से ही यह मन नियन्त्रित होता है ॥ ३ ॥ हरि-नाम के जपने से हम निर्भय हो जाते हैं, नाम से आवागमन से मुक्ति मिलती है; यदि किसी सच्चे गुरु के आश्रय उस गुणवान नामी से मिलाप हो जाए तो, गुरु नानक कहते हैं, जीव सहजावस्था को प्राप्त करता है ॥ ४ ॥ २ ॥ ४ ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ निमाने कउ जो देतो मानु। सगल

भूखे कउ करता दानु। गरभ घोर महि राखनहारु। तिसु ठाकुर कउ सदा नमसकारु ॥१॥ ऐसो प्रभु मन माहि धिआइ। घटि अवघटि जत कतहि सहाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रंकु राउ जा कै एक समानि। कीट हसति सगल पूरान। बीओ पूछि न मसलति धरै। जो किछु करै सु आपहि करै ॥ २ ॥ जा का अंतु न जानसि कोइ। आपे आपि निरंजनु सोइ। आपि अकारु आपि निरंकारु। घट घट घटि सभ घट आधारु ॥ ३ ॥ नाम रंगि भगत भए लाल। जसु करते संत सदा निहाल। नाम रंगि जन रहे अघाइ। नानक तिन जन लागै पाइ ॥४॥३॥५॥

जो प्रभु मान-रहित व्यक्ति को भी मान देता है, समस्त भूखों को भोजन का दान देता है, भयानक गर्भ की अग्नि में भी सबकी रक्षा करता है, उस परमात्मा को सदैव हमारा प्रणाम है ॥ १ ॥ ऐसे प्रभु को, हे लोगो! नित्य मन में ध्यान करो; वही अन्दर-बाहर अर्थात् सब जगह तुम्हारा सहायक होगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस परमात्मा के लिए राजा और रंक एक समान हैं, जो चींटी और हाथी में समान रूप से व्याप्त है, जो दूसरे से परामर्श लेकर कुछ नहीं करता, जो करता है अपनी ही इच्छा से करता है ॥ २ ॥ जिस परमात्मा का अन्त कोई नहीं जानता, वह माया से रहित अपने आप में विचरण करता है; वह साकार और निराकार स्वयं ही है और सब स्थानों में व्याप्त होकर भी सबका एक-मात्र सहारा है ॥ ३ ॥ उसी प्रभु के नाम-रंग में लीन होकर भक्तजन उल्लसित होते हैं। साधुसंगति में उसका यशोगान करने से सन्तजन निहाल हो जाते हैं, भक्तजन नाम-रंग में ही सन्तुष्ट रहते हैं; गुरु नानक कहते हैं कि ऐसे महात्माओं के चरणों की शरण लेने पर महापुण्य होता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ ५ ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ जाकै संगि इहु मनु निरमलु। जाकै संगि हरि हरि सिमरनु। जा कै संगि किलबिख होहि नास। जा कै संगि रिदै परगास ॥ १ ॥ से संतन हरि के मेरे मीत। केवल नामु गाईऐ जा कै नीत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कै मंत्रि हरि हरि मनि वसै। जा कै उपदेसि भरमु भउ नसै। जा कै कीरति निरमल सार। जा की रेनु बांछै संसार ॥ २ ॥ कोटि पतित जा कै संगि उधार। एकु निरंकारु जा कै नाम अधार। सरब जीआं का जानै भेउ। क्रिपा निधान निरंजन

देउ ॥ ३ ॥ पारब्रहम जब भए क्रिपाल । तब भेटे गुर साध दइआल । दिनु रैणि नानकु नामु धिआए । सूख सहज आनंद हरि नाए ॥ ४ ॥ ४ ॥ ६ ॥

(जिन सन्तों की) संगति में मन निर्मल होता है, जिनकी संगति में परमात्मा का स्मरण होता है, जिनके संग रहने से पाप नष्ट होते हैं और जिनकी संगति में अर्थात् उपदेश से हृदय आलोकित होता है ॥ १ ॥ ऐसे ही परमात्मा के सन्त मेरे सच्चे मित्र हैं, नित्य उनका यशोगान करना चाहिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनके उपदेशों से परमात्मा मन में निवास करता है, जिससे मन का भय और भ्रम नष्ट होता है; जिसका कीर्तिगान करने से निर्मल ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त होता है और जिनकी चरण-धूलि सारे संसार को अपेक्षित है ॥ २ ॥ जिसकी संगति में करोड़ों पतितों का उद्धार होता है और जिन्हें केवल निरंकार के नाम का ही आश्रय है; जो सब जीवों का भेद जानता है, वह कृपा के भण्डार और माया से रहित परब्रह्म है ॥ ३ ॥ (ऐसे सन्तों से भेंट तभी सम्भव होती है, जब) परब्रह्म की विशेष कृपा होती है । दया के सागर गुरु से जब मिलाप होता है तब, गुरु नानक कहते हैं, जीव रात-दिन प्रभु का नाम जपता है और हरि-नाम के द्वारा सहजावस्था के सुख और आनन्द को प्राप्त करता है ॥ ४ ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ गुर की मूरति मन महि धिआनु । गुर कै सबदि मंत्रु मनु मान । गुर के चरन रिदै लै धारउ । गुरु पारब्रहमु सदा नमसकारउ ॥ १ ॥ मत को भरमि भुलै संसारि । गुर बिनु कोइ न उतरसि पारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भूले कउ गुरि मारगि पाइआ । अवर तिआगि हरि भगती लाइआ । जनम मरन की त्रास मिटाई । गुर पूरे की बेअंत वडाई ॥ २ ॥ गुरप्रसादि ऊरध कमल बिगास । अंधकार महि भइआ प्रगास । जिनि कीआ सो गुर ते जानिआ । गुर किरपा ते मुगध मनु मानिआ ॥ ३ ॥ गुरु करता गुरु करणै जोगु । गुरु परमेसरु है भी होगु । कहु नानक प्रभि इहै जनाई । बिनु गुर मुकति न पाईऐ भाई ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७ ॥

हे जीव, तुम सदैव गुरु के स्वरूप का ध्यान मन में करो, गुरु के बताए उपदेशों पर आचरण करो, गुरु के चरणों को हृदय में धारण करो; क्योंकि गुरु परब्रह्म है, इसलिए सदा उसे प्रणाम करो ॥ १ ॥ संसार में कोई इस भ्रम में न रहे ! गुरु के बिना किसी को मुक्ति नहीं मिलती

अर्थात् ऐ लोकवासियो, याद रखो, मुक्ति का एकमात्र आधार गुरु है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पथभ्रष्ट जीव को गुरु ही राह दिखाता है। द्वैत के चक्कर में से निकालकर गुरु ही जीव को हरिचरणों में प्रवृत्त करता है। गुरु जीव के जन्म-मरण के भय को दूर कर देता है, यही सच्चे गुरु की वास्तविक महानता है ॥ २ ॥ गुरु की कृपा से ही हृदय रूपी कमल, जो पहले उलटा था, अब सीधा होकर खिल उठता है, जिससे अज्ञान के अन्धकार में प्रकाश हो जाता है। जिस परमात्मा ने यह सृष्टि बनायी है, उसकी जानकारी गुरु से ही मिल सकती है। यदि गुरु-कृपा हो जाए तो मूर्ख, गँवार के मन में भी परमात्मा प्रकट हो जाता है ॥ ३ ॥ गुरु स्वयं कर्ता है, करने में समर्थ है (यहाँ गुरु और परमात्मा में अभेद दिखाया गया है); गुरु स्वयं परमेश्वर है और भविष्य में भी उसमें परम शक्तियों का स्थान रहेगा। गुरु नानक कहते हैं कि हमने तो यही समझा है कि गुरु के बिना किसी की मुक्ति सम्भव नहीं होती ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७ ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ गुरू गुरू गुरु करि मन मोर। गुरू बिना मै नाही होर। गुर की टेक रहहु दिनु राति। जाकी कोइ न मेटै दाति ॥ १ ॥ गुरु परमेसरु एको जाणु। जो तिसु भावै सो परवाणु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर चरणी जाका मनु लागै। दूखु दरदु भ्रमु ताका भागै। गुर की सेवा पाए मानु। गुर ऊपरि सदा कुरबानु ॥ २ ॥ गुर का दरसनु देखि निहाल। गुर के सेवक की पूरन घाल। गुर के सेवक कउ दुखु न बिआपै। गुर का सेवकु दहदिसि जापै ॥ ३ ॥ गुर की महिमा कथनु न जाइ। पारब्रहमु गुरु रहिआ समाइ। कहु नानक जा के पूरे भाग। गुर चरणी ता का मनु लाग ॥ ४ ॥ ६ ॥ ८ ॥

हे मेरे मन, गुरु, गुरु कहकर गुरु का नाम जप, गुरु के बिना मेरी कोई अलग सत्ता नहीं है। रात-दिन मुझे गुरु का ही सहारा है, जिसकी दी हुई सत्ता को कोई नहीं मिटा सकता ॥ १ ॥ गुरु और परमेश्वर को एक समान समझो, जो गुरु चाहता है वह सब परमात्मा को स्वीकार होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसका मन गुरु के चरणों में लग जाता है, उसका दुःख, दर्द, भ्रम, सब नष्ट हो जाते हैं। गुरु की सेवा में संलग्न होने से प्रतिष्ठा मिलती है, इसलिए हम सदा गुरु की सत्ता पर क़ुर्बान हैं ॥ २ ॥ गुरु का दर्शन करने मात्र से हृदय खिल उठता है, गुरु की सेवा करनेवाले का श्रम सिद्धि को प्राप्त करता है। गुरु के सेवक को कभी दुःख-रोग नहीं चिपटते, बल्कि गुरु का सेवक दसों दिशाओं में सबके लिए प्रकट हो

जाता है ।। ३ ।। गुरु की महिमा अनिर्वचनीय है, स्वयं परब्रह्म गुरु में समाया रहता है । इसीलिए गुरु नानक कहते हैं कि जिस जीव का भाग्य ऊँचा होता है (अर्थात् जिसका प्रारब्ध उत्तम होता है), वही गुरु-चरणों में लग्न लगाता है ।। ४ ।। ६ ।। ८ ।।

।। गोंड महला ५ ।। गुरु मेरी पूजा गुरु गोबिंदु । गुरु मेरा पारब्रहमु गुरु भगवंतु । गुरु मेरा देउ अलख अभेउ । सरब पूज चरन गुर सेउ ।। १ ।। गुर बिनु अवरु नाही मै थाउ । अनदिनु जपउ गुरू गुर नाउ ।। १ ।। रहाउ ।। गुरु मेरा गिआनु गुरु रिदै धिआनु । गुरु गोपालु पुरखु भगवानु । गुर की सरणि रहउ कर जोरि । गुरू बिना मै नाही होरु ।। २ ।। गुरु बोहिथु तारे भव पारि । गुर सेवा जम ते छुटकारि । अंधकार महि गुर मंत्रु उजारा । गुर कै संगि सगल निसतारा ।। ३ ।। गुरु पूरा पाईऐ वडभागी । गुर की सेवा दूखु न लागी । गुर का सबदु न मेटै कोइ । गुरु नानकु नानकु हरि सोइ ।।४।।७।।९।।

गुरु ही मेरी पूजा का आधार है और गुरु ही समूची सृष्टि का पोषक है । मेरे लिए गुरु परब्रह्म है और महान् प्रताप का धारक है । मेरा गुरु पूजनीय है और अदृश्य-ब्रह्म से अभेद्य है । मैं सर्वपूज्य गुरु के चरणों की सेवा में रत हूँ ।। १ ।। गुरु के बिना मुझे और कोई अवलम्ब नहीं, इसीलिए मैं रात-दिन गुरु-नाम का ध्यान करता हूँ ।। १ ।। रहाउ ।। गुरु ही मेरा ज्ञान है, सदा उसी को मैं हृदय में धारण करता हूँ । गुरु और हरि दोनों अभेद हैं, परमपुरुष भी गुरु ही है । हाथ जोड़कर मैं गुरु की शरण में रहता हूँ, क्योंकि गुरु के बिना मेरा और कोई नहीं ।। २ ।। गुरु संसार-सागर से पार लगानेवाला जहाज़ (संतरण) है । गुरु की सेवा से यमदूतों से छुटकारा मिलता है; अज्ञान के अन्धकार में गुरु का उपदेश ही प्रकाश देनेवाला है । गुरु की संगति में सबका उद्धार हो जाता है ।। ३ ।। उच्च कर्मों से सच्चे गुरु की प्राप्ति होती है; गुरु की सेवा करने से कोई दुःख नहीं लगता । गुरु के वचनों को कोई नहीं मिटा सकता । गुरु नानक कहते हैं कि गुरु ही परमेश्वर है (दोनों अभेद्य हैं) ।। ४ ।। ७ ।। ९ ।।

।। गोंड महला ५ ।। राम राम संगि करि बिउहार । राम राम राम प्रान अधार । राम राम राम कीरतनु गाइ । रमत रामु सभ रहिओ समाइ ।। १ ।। संत जना मिलि बोलहु राम । सभ ते निरमल पूरन काम ।। १ ।। रहाउ ।। राम राम

धनु संचि भंडार। राम राम राम करि आहार। राम राम वीसरि नही जाइ। करि किरपा गुरि दीआ बताइ ॥ २ ॥ राम राम राम सदा सहाइ। राम राम राम लिव लाइ। राम राम जपि निरमल भए। जनम जनम के किलबिख गए ॥ ३ ॥ रमत राम जनम मरणु निवारै। उचरत राम भै पारि उतारै। सभ ते ऊच राम परगास। निसि बासुर जपि नानक दास ॥ ४ ॥ ८ ॥ १० ॥

गुरु के साथ मिलकर हरि-नाम का व्यवहार करो, क्योंकि राम का नाम ही हमारे प्राणों का आधार है। राम-नाम का कीर्तन-गान करो, क्योंकि वह सर्वव्यापक है और सब जगह समाया हुआ है ॥ १ ॥ सन्त-जनों की संगति में सब मिलकर राम-नाम जपो, क्योंकि यह परमनिर्मल है और सब कामनाओं को पूर्ण करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम-नाम के भण्डार का संग्रह करो, राम-राम शब्दों का ही भोजन करो। देखें कहीं राम का नाम विस्मित न हो जाए, जो तुम्हें गुरु ने कृपापूर्वक बता दिया है ॥ २ ॥ राम का नाम सदा हमारी सहायता करता है, इसलिए सदा राम-राम के सिमरन में लग्न लगाये रहो। राम का नाम जपकर निर्मल हुआ जाता है, और जन्म-जन्म के पाप उससे दूर हो जाते हैं ॥ ३ ॥ सर्वव्यापक राम के नाम का जाप करने से जन्म-मरण कट जाता है। राम का नाम उच्चारण करने से भवसागर तिरा जाता है; राम के नाम का प्रकाश सबसे ऊँचा है, इसलिए दास नानक रात-दिन उसी का जाप करते हैं ॥ ४ ॥ ८ ॥ १० ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ उन कउ खसमि कीनी ठाकहारे। दास संग ते मारि बिदारे। गोबिंद भगत का महलु न पाइआ। राम जना मिलि मंगलु गाइआ ॥ १ ॥ सगल स्रिसटि के पंच सिकदार। राम भगत के पानीहार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जगत पास ते लेते दानु। गोबिंद भगत कउ करहि सलामु। लूटि लेहि साकत पति खोवहि। साध जना पग मलि मलि धोवहि ॥ २ ॥ पंच पूत जणे इक माइ। उतभुज खेलु करि जगत विआइ। तीनि गुणा कै संगि रचि रसे। इन कउ छोडि ऊपरि जन बसे ॥ ३ ॥ करि किरपा जन लीए छडाइ। जिस के से तिनि रखे हटाइ। कहु नानक भगति प्रभ सारु। बिनु भगती सभ होइ खुआरु ॥ ४ ॥ ९ ॥ ११ ॥

उन पाँचों (काम, क्रोधादि) को मेरे स्वामी ने ही रोका है, अपने दास की संगति से उन्हें मारकर अलग कर दिया है। वे दुष्ट तत्त्व परमात्मा के भक्तों की पहुँच तक रसाई नहीं रखते। इसीलिए अब प्रभु के भक्त मिलकर प्रभु का यश गाते हैं ॥ १ ॥ ये पाँचों सारी सृष्टि के मुखिया हैं, किन्तु परमात्मा के भक्तों के सामने पानी भरते हैं ॥१॥रहाउ॥ संसार से ये कुटिल तत्त्व खिराज (कर) प्राप्त करते हैं, लेकिन परमात्मा के भक्तों को झुक-झुककर सलाम करते हैं। परमात्मा से विमुख जीवों को लूटते और अपमानित करते हैं, किन्तु सन्तजनों के चरण मल-मलकर धोते हैं ॥ २ ॥ ये पाँचों एक ही माता के पुत्र हैं (काम, क्रोधादि को माया ने जन्म दिया है), उसने चारों प्रकार के जीवों को रचकर सारे जगत को पैदा किया है। सारा भौतिक जगत तीन गुणों (तमोगुण, रजोगुण और सतोगुण) में लिप्त है, किन्तु परमात्मा के दास इन सबको छोड़कर इनसे ऊपर निवास करते हैं ॥ ३ ॥ परमात्मा कृपा करके अपने सेवकों को इनसे छुड़वा लेता है। जिसके ये जीव हैं वही उनका संरक्षण करता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा स्वयं भक्तों की सम्हाल करता है, भक्तिहीन सब जन ख़ुआर (अपमानित) होते हैं ॥ ४ ॥ ९ ॥ ११ ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ कलि कलेस मिटे हरि नाइ। दुख बिनसे सुख कीनो ठाउ। जपि जपि अंम्रित नामु अघाए। संत प्रसादि सगल फल पाए ॥ १ ॥ राम जपत जन पारि परे। जनम जनम के पाप हरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर के चरन रिदै उरिधारे। अगनि सागर ते उतरे पारे। जनम मरण सभ मिटी उपाधि। प्रभ सिउ लागी सहजि समाधि ॥ २ ॥ थान थनंतरि एको सुआमी। सगल घटा का अंतरजामी। करि किरपा जाकउ मति देइ। आठ पहर प्रभ का नाउ लेइ ॥ ३ ॥ जा कै अंतरि वसै प्रभु आपि। ता कै हिरदै होइ प्रगासु। भगति भाइ हरि कीरतनु करीऐ। जपि पारब्रहमु नानक निसतरीऐ ॥ ४ ॥ १० ॥ १२ ॥

हरि का नाम लेने से सब प्रकार के दुःखों, कष्टों का नाश होता है। दुःखों का स्थान सुख और आनन्द ले लेते हैं। जो अमृत जैसे प्रभु-नाम का जाप कर सन्तुष्ट हो जाते हैं, वे सन्तों की कृपा से अर्थात् गुरुकृपा से सब मनोरथ सिद्ध कर लेते हैं ॥ १ ॥ राम-नाम जपनेवाले जीव संसार-सागर से पार हो जाते हैं। उनके जन्म-जन्म के पाप धुल जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे जीव, गुरु के चरणों को हृदय में धारण करो। ऐसा करने

से संसार के अग्नि-सागर से पार उतर जाओगे। जन्म-मरण के कष्ट दूर होंगे और वृत्ति परमात्मा में लीन हो जाएगी ॥ २॥ वह मेरा स्वामी हर जगह व्याप्त है, सब शरीरों के भीतर की बात जानता है। वह कृपा करके जब किसी को विवेक देता है, तो वह आठों प्रहर प्रभु का नाम जपने लगता है ॥ ३ ॥ जिसके भीतर प्रभु स्वयं निवास करता है, उसका अन्तर्मन प्रकाशित हो उठता है। इसलिए भक्ति-भाव से हमें हरि-कीर्तन करना चाहिए, क्योंकि परब्रह्म के जपने से संसार-सागर से पार हुआ जाता है ॥ ४॥ १० ॥ १२ ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ गुर के चरन कमल नमसकारि। कामु क्रोधु इसु तन ते मारि। होइ रहीऐ सगल की रीना। घटि घटि रमईआ सभ महि चीना ॥ १ ॥ इन बिधि रमहु गोपाल गोबिंदु। तनु धनु प्रभ का प्रभ की जिंदु ॥ १॥ रहाउ॥ आठ पहर हरि के गुण गाउ। जीअ प्रान को इहै सुआउ। तजि अभिमानु जानु प्रभु संगि। साध प्रसादि हरि सिउ मनु रंगि ॥ २ ॥ जिनि तूं कीआ तिस कउ जानु। आगै दरगह पावहि मानु। मनु तनु निरमल होइ निहालु। रसना नामु जपत गोपाल ॥ ३ ॥ करि किरपा मेरे दीन दइआला। साधू की मनु मंगै रवाला। होहु दइआल देहु प्रभ दानु। नानकु जपि जीवै प्रभ नामु ॥ ४ ॥ ११ ॥ १३ ॥

गुरु के चरण-कमलों में प्रणाम करो, वही तुम्हारे भीतर से काम, क्रोधादि को मारता है। सबके चरणों की धूल बनकर रहना चाहिए (अतिविनम्रता का भाव है), क्योंकि सबमें वही परमात्मा बसता है ॥ १ ॥ इस प्रकार सृष्टि के स्वामी परमात्मा का सिमरण करो कि तन, मन, धन उसी को समर्पित हो जाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आठों पहर हरि का यशोगान करो, शरीर-प्राण धारण करने का यही प्रयोजन है। अभिमान का त्याग करो और परमात्मा को नित्य अंग-संग मानो, गुरु की कृपा से हरि में प्रेम पैदा करो ॥ २ ॥ जिसने तुम्हें पैदा किया है, उसे जानो। उसी ज्ञान से परमात्मा के दरबार में तुम्हें प्रतिष्ठा मिलेगी। तुम्हारा तन-मन निर्मल हो जाएगा और तुम परम-आनन्द को प्राप्त करोगे। मुख से नित्य राम का नाम जपते रहो ॥ ३ ॥ हे मेरे दीनदयालु प्रभु ! मुझ पर कृपा करो, मेरा मन तुम्हारे सन्तों की चरणधूलि चाहता है। दया करके उसे यह दान दो, ताकि दास नानक सदा तुम्हारा नाम जपता हुआ जीवित रह सके ॥ ४ ॥ ११ ॥ १३ ॥

।। गोंड महला ५ ।। धूप दीप सेवा गोपाल । अनिक बार बंदन करतार । प्रभ की सरणि गही सभ तिआगि । गुर सुप्रसंन भए वडभागि ।। १ ।। आठ पहर गाईऐ गोबिंदु । तनु धनु प्रभ का प्रभ की जिंदु ।। १ ।। रहाउ ।। हरि गुण रमत भए आनंद । पारब्रहम पूरन बखसंद । करि किरपा जन सेवा लाए । जनम मरण दुख मेटि मिलाए ।। २ ।। करम धरम इहु ततु गिआनु । साध संगि जपीऐ हरि नामु । सागर तरि बोहिथ प्रभ चरण । अंतरजामी प्रभ कारण करण ।। ३ ।। राखि लीए अपनी किरपा धारि । पंच दूत भागे बिकराल । जूऐ जनमु न कबहू हारि । नानक का अंगु कीआ करतारि ।। ४ ।। १२ ।। १४ ।।

भगवान के लिए धूप, दीप, नैवेद्य आदि द्वारा की जानेवाली पूजा यही है कि हम प्रभु को बार-बार प्रणाम करते रहें। सब कुछ त्यागकर हमने परमात्मा की शरण ली है और सद्भाग्य से हम पर सतगुरु की प्रसन्नता और कृपा हुई है ।। १ ।। आठों पहर हमें गोविन्द के गुण गाते हुए अपने तन-मन और प्राण उसी को समर्पित कर देने हैं ।। १ ।। रहाउ ।। हरि के गुणों का सिमरण करने से आनन्द मिलता है। परब्रह्म बड़ा कृपालु है, हम पर नित्य दया करता है। कृपा करके अपने सेवकों को अपनी शरण में लेता है और अपने में विलीन करके जन्म-मरण के दुःखों को मिटा देता है ।। २ ।। कर्म-धर्म और वास्तविक ज्ञान यही है कि हम गुरु की संगति में रहकर हरि-नाम का जाप करें। प्रभु के चरण संसार-सागर को पार लगानेवाले संतरण हैं। सब कुछ करनेवाला प्रभु स्वयं अन्तर्यामी है ।। ३ ।। परमात्मा ने विशेष कृपा करके हमारी रक्षा की है, काम-क्रोधादि पाँचों भयंकर शत्रुओं को भगा दिया है। ऐ जीव, मायावी जुए में अपने मनुष्य-जन्म को बेकार न खो; परमात्मा स्वयं उन लोगों की सहायता करता है, जो उसकी शरण लेते हैं ।। ४ ।। १२ ।। १४ ।।

।। गोंड महला ५ ।। करि किरपा सुख अनद करेइ । बालक राखि लीए गुरदेवि । प्रभ किरपाल दइआल गुोबिंद । जीअ जंत सगले बखसिंद ।।१।। तेरी सरणि प्रभ दीन दइआल । पारब्रहम जपि सदा निहाल ।। १ ।। रहाउ ।। प्रभ दइआल दूसर कोई नाही । घट घट अंतरि सरब समाही । अपने दास का हलतु पलतु सवारै । पतित पावन प्रभ बिरदु तुम्हारै ।। २ ।।

अउखध कोटि सिमरि गोबिंद। तंतु मंतु भजीऐ भगवंत। रोग सोग मिटे प्रभ धिआए। मन बांछत पूरन फल पाए ॥३॥ करन कारन समरथ दइआर। सरब निधान महा बीचार। नानक बखसि लीए प्रभि आपि। सदा सदा एको हरि जापि ॥ ४ ॥ १३ ॥ १५ ॥

प्रभु की कृपा से जीवों को सुख और आनन्द मिलता है। हम सब परमात्मा के बालक हैं, गुरु की कृपा से हमारी रक्षा होती है। परमात्मा कृपालु और दयालु है, सब जीवों के अपराधों को क्षमा कर (कर्मों को नकार कर) अपनी शरण में लेता है ॥ १ ॥ हे दीनदयालु प्रभु, हम तुम्हारी शरण में आकर सदा तुम्हारे नाम का सिमरन करते हुए प्रसन्नता प्राप्त करते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के समान कोई अन्य दयालु नहीं है, सब जीवों में वही परमात्मा समाया हुआ है। वह अपने सेवकों की रक्षा इहलोक और परलोक, दोनों जगह करता है। पतितपावन-रूप में ही उसका यश गाया जाता है ॥ २॥ करोड़ों दवाइयों की एक दवा परमात्मा का सिमरन है, वही सब प्रकार के तन्त्र-मन्त्र का काम भी करता है। प्रभु का ध्यान करने से सब रोग-शोक मिट जाते हैं और मनोवाञ्छित फलों की प्राप्ति होती है ॥ ३ ॥ हरि सब कुछ कर सकने में समर्थ है, उसके महान विचार ही हमारी समृद्धि हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हम सदैव हरि का नाम जपते हैं, वह अपने आप हमें बख्श लेगा ॥ ४ ॥ १३ ॥ १५ ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ हरि हरि नामु जपहु मेरे मीत। निरमल होइ तुम्हारा चीत। मन तन की सभ मिटै बलाइ। दूखु अंधेरा सगला जाइ ॥ १ ॥ हरि गुण गावत तरीऐ संसारु। वडभागी पाईऐ पुरखु अपारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जनु करै कीरतनु गोपाल। तिस कउ पोहि न सकै जमकालु। जग महि आइआ सो परवाणु। गुरमुखि अपना खसमु पछाणु ॥२॥ हरि गुण गावै संत प्रसाद। काम क्रोध मिटहि उनमाद। सदा हजूरि जाणु भगवंत। पूरे गुर का पूरन मंत ॥३॥ हरि धनु खाटि कीए भंडार। मिलि सतिगुर सभि काज सवार। हरि के नाम रंग संगि जागा। हरि चरणी नानक मनु लागा ॥ ४ ॥ १४ ॥ १६ ॥

हे मेरे मित्रो, हरि का नाम जपो, जिससे तुम्हारा हृदय निर्मल होगा। तुम्हारे तन-मन की सब बुराइयाँ नष्ट हो जाएँगी और जीवन से

दुःख का अँधेरा सदा के लिए मिट जायेगा ॥ १ ॥ हरि के गुण गाते हुए संसार का उद्धार होता है और इसी से सौभाग्यवश जीव को परमपुरुष परमात्मा की प्राप्ति होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो लोग प्रभु का कीर्तिगान करते हैं, स्वयं यमदूत भी उन तक नहीं पहुँच सकता। संसार में ऐसे ही लोगों का जन्म लेना सार्थक है। इसलिए, ऐ जीव, गुरु की कृपा से तू अपने मालिक को पहचान ॥ २ ॥ साधु-संगति में रहकर जीवों को गुरु-कृपा से हरि का गुणगान करना चाहिए। इससे काम-क्रोधादि का उन्माद नष्ट होता है। ऐसा जीव पूरे गुरु के उपदेश को पाकर अपने को नित्य परमात्मा के निकट मानता है ॥ ३ ॥ हरि रूपी धन कमाकर अपने भण्डारों को भर लो; गुरु की कृपा से अपने सब काम सँवार लो। मनुष्य हरि के नाम से ही सच्ची जागृति प्राप्त करता है और, गुरु नानक कहते हैं कि उसी के नाम में अपना मन रमाता है ॥ ४ ॥ १४ ॥ १६ ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ भवसागर बोहिथ हरि चरण। सिमरत नामु नाही फिरि मरण। हरि गुण रमत नाही जम पंथ। महा बीचार पंच दूतह मंथ ॥ १ ॥ तउ सरणाई पूरन नाथ। जंत अपने कउ दीजहि हाथ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिम्रिति सासत्र बेद पुराण। पारब्रहम का करहि वखिआण। जोगी जती बैसनो रामदास। मिति नाही ब्रहम अबिनास ॥ २ ॥ करण पलाह करहि सिव देव। तिलु नही बूझहि अलख अभेव। प्रेम भगति जिसु आपे देइ। जग महि विरले केई केइ ॥ ३ ॥ मोहि निरगुण गुणु किछहू नाहि। सरब निधान तेरी द्रिसटी माहि। नानकु दीनु जाचै तेरी सेव। करि किरपा दीजै गुरदेव ॥ ४ ॥ १५ ॥ १७ ॥

संसार-सागर से पार होने के लिए हरि-चरण ही जहाज़ हैं। परमात्मा का नाम सिमरण करने से जीव का कभी नाश नहीं होता। हरि का गुण गाने से जीव यमों के चंगुल में नहीं फँसता और पाँचों दूतों की कुटिलता से मुक्त रहता है ॥ १ ॥ हे मेरे स्वामी, मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ, अपना सेवक जानकर मेरी रक्षा करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभी वेद, शास्त्र और स्मृतियाँ परब्रह्म के गुणों का बखान करती हैं। योगी, यति, वैष्णव और रमदासिए आदि उस अनश्वर परमात्मा का अन्दाज़ा नहीं लगा सकते ॥ २ ॥ स्वयं शिवजी महाराज उसे प्राप्त करने के लिए व्याकुल रहते हैं, किन्तु उस अलख, अभेद परमात्मा को समझ नहीं पाते। प्रभु जिसे चाहे प्रेम-भक्ति दे सकता है और उसे प्राप्त करनेवाले संसार में

विरले जन ही होते हैं ॥ ३ ॥ मैं गुणविहीन हूँ, मुझमें कोई गुण नहीं। हे सर्वनिधान, तुम्हारी दृष्टि में मैं अकिंचन हूँ। दीन नानक तुम्हारी सेवा की याचना करता है, कृपा करके, हे गुरुदेव ! उसकी झोली भर दो ॥ ४ ॥ १५ ॥ १७ ॥

॥ गोड महला ५ ॥ संत का लीआ धरति बिदारउ। संत का निंदकु अकास ते टारउ ॥ संत कउ राखउ अपने जीअ नालि। संत उधारउ तत खिण तालि ॥१॥ सोई संतु जि भावै राम। संत गोबिंद कै एकै काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संत कै ऊपरि देइ प्रभु हाथ। संत कै संगि बसै दिनु राति। सासि सासि संतह प्रतिपालि। संत का दोखी राज ते टालि ॥ २ ॥ संत की निंदा करहु न कोइ। जो निंदै तिस का पतनु होइ। जिस कउ राखै सिरजनहारु। झख मारउ सगल संसारु ॥ ३ ॥ प्रभ अपने का भइआ बिसासु। जीउ पिंडु सभु तिसकी रासि। नानक कउ उपजी परतीति। मनमुख हार गुरमुख सद जीति ॥ ४ ॥ १६ ॥ १८ ॥

सन्तों के द्वारा तिरस्कृत जीव धरती पर रहने के योग्य नहीं हैं। सन्तों की निन्दा करनेवाले को आकाश से गिरा दिया जाना चाहिए। सन्तों का नाम अपने प्राणों के साथ रखा जाना चाहिए, क्योंकि सन्तों की कृपा हो जाये तो क्षण भर में ही जीव का उद्धार हो सकता है ॥ १ ॥ सन्त वही होता है, जो प्रभु को प्रिय हो; वास्तव में सन्त और परमात्मा का एक ही काम है अर्थात् हरि और सन्त में अभेद होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तों पर परमात्मा का संरक्षण होता है, इसलिए दिन-रात उन्हीं के संग बसना या रहना समीचीन है। परमात्मा श्वास-श्वास सन्तों का पालन करता है। सन्तों को कष्ट पहुँचानेवाला अपनी प्रभु-सत्ता खो बैठता है ॥ २ ॥ ऐ लोगो, सन्तों की निन्दा मत करो, निन्दा करनेवाले का पतन निश्चित होता है। वह परमात्मा जिसका रक्षक है, सारा संसार चाहे झख मार ले, उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता ॥ ३ ॥ अपने प्रभु पर जब विश्वास जगता है, तो जीव तन-मन को उसी की धरोहर मानकर उसी पर समर्पित कर देता है। गुरु नानक का विश्वास है कि परमात्मा को समर्पित हो जानेवाला गुरुमुख सदा विजयी होता है, मन के संकेतों पर आचरण करने वाला जीव जीवन में पराजित हो जाता है ॥ ४ ॥ १६ ॥ १८ ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ नामु निरंजनु नीरि नराइण। रसना सिमरत पाप बिलाइण ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नाराइण सभ

माहि निवास । नाराइण घटि घटि परगास । नाराइण कहते नरकि न जाहि । नाराइण सेवि सगल फल पाहि ॥ १ ॥ नाराइण मन माहि अधार । नाराइण बोहिथ संसार । नाराइण कहत जमु भागि पलाइण । नाराइण दंत भाने डाइण ॥ २ ॥ नाराइण सद सद बखसिंद । नाराइण कीने सूख अनंद । नाराइण प्रगट कीनो परताप । नाराइण संत को माई बाप ॥३॥ नाराइण साध संगि नाराइण । बारं बार नाराइण गाइण । बसतु अगोचर गुर मिलि लही । नाराइण ओट नानक दास गही ॥ ४ ॥ १७ ॥ १९ ॥

परमात्मा का पवित्र नाम निर्मल नीर के समान है, जिह्वा से इसका जाप करने से सब पाप धुल जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा सबमें निवास करता है, उसी नारायण का प्रकाश घट-घट में विद्यमान है। नारायण का नाम जपने से कोई नरक नहीं जाता; उसकी सेवा में सब मनोवांछित फल प्राप्त होते हैं ॥ १ ॥ ऐ जीव, इसीलिए तू मन में नारायण का आश्रय ले, क्योंकि वही संसार का जहाज़ है। नारायण का नाम जपने से यमदूत भाग खड़े होते हैं, नारायण ही माया रूपी पिशाचिनी के दाँत तोड़ता है ॥ २ ॥ परमात्मा क्षमाशील है, सबके लिए सुख और आनन्द देनेवाला है। विश्व में सब ओर उसी प्रभु का प्रताप प्रकट है, वही सब सन्तों-महात्माओं का माई-बाप है ॥ ३ ॥ गुरु की संगति में जीव हमेशा नारायण-नारायण ही कहता है, बार-बार नारायण नाम का गान करता है। मन तथा इन्द्रियों की पहुँच से परे की अमूल्य वस्तु तभी प्राप्त हो सकती है, जब दास नानक नारायण का सहारा लेता है ॥ ४ ॥ १७ ॥ १९ ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ जाकउ राखै राखणहारु । तिसका अंगु करे निरंकारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मात गरभ महि अगनि न जोहै । कामु क्रोधु लोभु मोहु न पोहै । साध संगि जपै निरंकारु । निंदक कै मुहि लागै छारु ॥ १ ॥ राम कवचु दास का संनाहु । दूत दुसट तिसु पोहत नाहि । जो जो गरबु करे सो जाइ । गरीब दास की प्रभु सरणाइ ॥२॥ जो जो सरणि पइआ हरि राइ । सो दासु रखिआ अपणै कंठि लाइ । जे को बहुतु करे अहंकारु । ओहु खिन महि रुलता खाकू नालि ॥३॥

है भी साचा होवणहारु । सदा सदा जाई बलिहार । अपणे दास रखे किरपा धारि । नानक के प्रभ प्राण अधार ॥४॥१८॥२०॥

परमात्मा जिसकी रक्षा करता है, सदा उसी का पक्ष लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माता के गर्भ में उसे अग्नि के दुःखों से बचाता है, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि उसे परेशान नहीं करते। गुरु की संगति में वह निरंकार का जाप करता है और निन्दकजन के मुँह पर राख पुतती है ॥ १ ॥ राम-नाम परमात्मा के सेवकों का कवच है; दुष्ट लोग उन पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकते। जो लोग अहंकार करते हैं, वे नष्ट हो जाते हैं, किन्तु विनम्र जन प्रभु की शरण में सुख भोगते हैं ॥ २ ॥ जो-जो जीव परमात्मा की शरण लेते हैं, उन-उनको परमात्मा अपने गले से लगाये रखता है। जो कोई गुमान करता है, वह क्षण भर में ही ख़ाक में मिल जाता है ॥ ३ ॥ वह परमात्मा सत्य है और भविष्य में भी सत्य का स्वरूप है। इसलिए हम सदा उसी पर बलिहार जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वह प्रभु कृपापूर्वक अपने दासों की रक्षा करता है और उनके जीवन का एकमात्र आधार है ॥ ४ ॥ १८ ॥ २० ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ अचरज कथा महा अनूप । प्रातमा पारब्रहम का रूपु ॥ रहाउ ॥ ना इहु बूढा ना इहु बाला । ना इसु दूखु नही जम जाला । ना इहु बिनसै ना इहु जाइ । आदि जुगादी रहिआ समाइ ॥ १ ॥ ना इसु उसनु नही इसु सीतु । ना इसु दुसमनु ना इसु मीतु । ना इसु हरखु नही इसु सोगु । सभु किछु इसका इहु करनै जोगु ॥ २ ॥ ना इसु बापु नही इसु माइआ । इहु अपरंपरु होता आइआ । पाप पुंन का इसु लेपु न लागै । घट घट अंतरि सद ही जागै ॥३॥ तीनि गुणा इक सकति उपाइआ । महा माइआ ता की है छाइआ । अछल अछेद अभेद दइआल । दीन दइआल सदा किरपाल । ता की गति मिति कछू न पाइ । नानक ता कै बलि बलि जाइ ॥ ४ ॥ १९ ॥ २१ ॥

आध्यात्मिकता की यह कथा अनुपम है; जीवात्मा स्वयं परब्रह्म का ही रूप है, अद्वैत है ॥ रहाउ ॥ यह जीवात्मा न कभी बूढ़ा होता है, न कभी बालक कहलाता है। इसे कोई दुःख या यमदूतों का भय कभी नहीं हुआ। इसका नाश भी कभी नहीं होता, न यह कभी जन्मता है; आदि और अन्त अर्थात् सब समय यह विद्यमान रहता है ॥ १ ॥ इसे गर्मी या सर्दी की अनुभूति नहीं होती, इसका कोई शत्रु या मित्र भी नहीं

है। जीवात्मा हर्ष-शोक से परे रहता है; सब कुछ इसी का है, यह सब कुछ करने में समर्थ है ॥ २ ॥ इसको जन्म देनेवाले कोई माँ या बाप नहीं; यह परे से परे शारीरिक सीमाओं से परे है। इस पर पाप-पुण्य का कोई प्रभाव नहीं, क्योंकि यह घर-घर में जाग्रत्-तत्त्व है ॥ ३ ॥ जीवात्मा ने ही अविद्या की शक्ति से त्रिगुणात्मक माया को पैदा किया है, अज्ञान के कारण महामाया इसी की छाया है। स्वयं परब्रह्म का अंश होने के कारण वह अछल, अभेद और अकाट्य है। परमात्मा का दयालु और कृपालु रूप उसमें भी विद्यमान है। उसकी गति और स्थिति कोई नहीं जान सकता, इसीलिए गुरु नानक बार-बार उस पर क़ुर्बान हैं ॥ ४ ॥ १९ ॥ २१ ॥

॥ गोंड महला ५ ॥ संतन कै बलिहारै जाउ। संतन कै संगि राम गुन गाउ। संत प्रसादि किलविख सभि गए। संत सरणि वडभागी पए ॥ १ ॥ रामु जपत कछु बिघनु न विआपै। गुरप्रसादि अपुना प्रभु जापै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पारब्रहमु जब होइ दइआल। साधू जन की करै रवाल। कामु क्रोधु इसु तन ते जाइ। राम रतनु वसै मनि आइ ॥ २ ॥ सफलु जनमु तां का परवाणु। पारब्रहमु निकटि करि जाणु। भाइ भगति प्रभ कीरतनि लागै। जनम जनम का सोइआ जागै ॥ ३ ॥ चरन कमल जन का आधारु। गुण गोविंद रउं सचु वापारु। दास जना की मनसा पूरि। नानक सुखु पावै जन धूरि ॥ ४ ॥ २२ ॥ २८ ॥

सन्तजनों पर बलिहार जाओ, सन्तों की संगति में राम का गुणगान करो। सन्तों की कृपा से सब पाप धुल जाते हैं; ऊँचे भाग्य से ही सन्तों की संगति प्राप्त होती है ॥ १ ॥ राम का नाम जपने से जीवन में कोई विघ्न नहीं रहता। गुरु की कृपा से स्वयं परमात्मा का दर्शन सम्भव होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा जब दयालु होता है, तो सन्तों की चरणधूलि प्राप्त होती है। इस शरीर से काम-क्रोधादि नष्ट हो जाते हैं और राम का नाम मन में निवसित होता है ॥ २ ॥ ऐसे जीवों का जन्म सफल हो जाता है, परब्रह्म को वे अपने निकटतर समझते हैं। वे जीव भक्ति-भाव से परमात्मा का यशोगान करते हैं और युग-युग से अज्ञान के कारण सोया हुआ उनका अन्तर्मन जाग्रत् होता है ॥ ३ ॥ परमात्मा के सेवकों का एकमात्र सहारा प्रभु के चरण ही हैं। परमात्मा के गुणों का सिमरन ही उनका सच्चा आचरण है। गुरु नानक कहते हैं, हे प्रभु,

अपने सेवकों की इच्छा पूर्ण करो, ताकि उन्हें सन्तों की चरणधूलि में सुख प्राप्त हो ॥ ४ ॥ २२ ॥ २८ ॥

रागु गोंड असटपदीआ महला ५ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ करि नमसकार पूरे गुरदेव । सफल मूरति सफल जा की सेव । अंतरजामी पुरखु बिधाता । आठ पहर नाम रंगि राता ॥ १ ॥ गुरु गोबिंद गुरू गोपाल । अपने दास कउ राखनहार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पातिसाह साह उमराउ पतीआए । दुसट अहंकारी मारि पचाए । निंदक कै मुखि कीनो रोगु । जै जैकारु करै सभु लोगु ॥ २ ॥ संतन कै मनि महा अनंदु । संत जपहि गुरदेउ भगवंतु । संगति के मुख ऊजल भए । सगल थान निंदक के गए ॥ ३ ॥ सासि सासि जनु सदा सलाहे । पारब्रहम गुर बेपरवाहे । सगल भै मिटे जा की सरनि । निंदक मारि पाए सभि धरनि ॥ ४ ॥ जन की निंदा करै न कोइ । जो करै सो दुखीआ होइ । आठ पहर जनु एकु धिआए । जमूआ ता कै निकटि न जाए ॥ ५ ॥ जन निरवैर निंदक अहंकारी । जन भल मानहि निंदक वेकारी । गुर कै सिखि सतिगुरू धिआइआ । जन उबरे निंदक नरकि पाइआ ॥ ६ ॥ सुणि साजन मेरे मीत पिआरे । सति बचन वरतहि हरि दुआरे । जैसा करे सु तैसा पाए । अभिमानी की जड़ सरपर जाए ॥ ७ ॥ नीधरिआ सतिगुर धर तेरी । करि किरपा राखहु जन केरी । कहु नानक तिसु गुर बलिहारी । जा कै सिमरनि पैज सवारी ॥ ८ ॥ १ ॥ २९ ॥

ऐ जीव, पूरे गुरु को प्रणाम करो, जिसके दर्शन से जीवन सफल होता है और सब फल प्राप्त होते हैं। परमात्मा अन्तर्यामी और कर्ता-पुरुष है और गुरु आठों पहर उसके नाम-रंग में लीन रहता है ॥ १ ॥ गुरु ही गोविन्द है, गुरु ही सृष्टि-पालक है और वही अपने दासों की रक्षा करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह बड़े-बड़े अमीरों और बादशाहों को सन्तोष प्रदान करता है और दुष्टों, अहंकारियों को मारकर नष्ट कर देता है। निन्दकजन मुख से रुग्ण होते हैं और अन्य सब लोग उसका जय-जयकार करते हैं ॥ २ ॥ सन्तजनों के मन में सदा आनन्द निवसित

होता है और गुरु की कृपा से नाम जपकर भगवद्-प्राप्ति होती है। सन्तों की संगति में रहनेवाले जीवों के मुख सदा उज्ज्वल होते हैं और निन्दक-जन कहीं के भी नहीं रह जाते ।। ३ ।। हर साँस पर सेवकजन उसी का गुण गाते हैं, किन्तु परब्रह्म-समान गुरु भी बड़ा बेपरवाह है। गुरु की शरण लेने से सब प्रकार के भय नष्ट हो जाते हैं और निन्दकों को मारकर धरती में डाल दिया जाता है ।। ४ ।। परमात्मा के सेवकों की निन्दा नहीं करनी चाहिए; जो ऐसा करता है, वह दुःख उठाता है। सेवकजन आठों पहर परमात्मा का ध्यान करते हैं, यमदूत भी उनके समीप नहीं जाता ।। ५ ।। परमात्मा के सेवक निर्वैर-भावी होते हैं, जबकि निन्दक अहंकारी होते हैं। सेवक सबका भला चाहते हैं, किन्तु निन्दक दूसरों का बुरा विचारते हैं। गुरु के सिख परमात्मा का ध्यान करते हैं। सेवकों को मुक्ति मिलती है, निन्दक नरक में सड़ते हैं ।। ६ ।। हे मेरे मित्र, मेरे प्रिय, मेरे सच्चे वचनों को सुनो। परमात्मा के द्वार पर हमेशा सत्य व्यापता है। जो जैसा करता है, वैसा ही पाता है। अभिमानी जन की जड़ ज़रूर कट जाती है ।। ७ ।। निराश्रित जीवों का आश्रय सच्चा गुरु ही होता है; वही कृपा करके अपने सेवकों की रक्षा करता है। गुरु नानक कहते हैं कि वे उस गुरु पर बलिहार जाते हैं, जिसके सिमरन से जीव की बिगड़ी बनती है ।। ८ ।। १ ।। २९ ।।

रागु गोंड बाणी भगता की ।। कबीर जी घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। संतु मिलै किछु सुनीऐ कहीऐ । मिलै असंतु मसटि करि रहीऐ ।। १ ।। बाबा बोलना किआ कहीऐ । जैसे राम नाम रवि रहीऐ ।। १ ।। रहाउ ।। संतन सिउ बोले उपकारी । मूरख सिउ बोले झख मारी ।। २ ।। बोलत बोलत बढहि बिकारा । बिनु बोले किआ करहि बीचारा ।। ३ ।। कहु कबीर छूछा घटु बोलै । भरिआ होइ सु कबहु न डोलै ।। ४ ।। १ ।।

सन्त से भेंट हो जाए तो उससे चर्चा चलाने और बातचीत करने में आनन्द मिलता है। असन्त की मुलाक़ात दुःखदायी होती है, ऐसे में मौन बने रहना ही उपयुक्त है ।। १ ।। आखिर सन्तों के पास जाकर क्या चर्चा करें ? वही जिसके द्वारा राम-नाम में लीन होना सम्भव हो ।। १ ।। रहाउ ।। सन्तों के साथ की हुई बातचीत से उपकार होता है, किन्तु मूर्ख से की चर्चा बेकार जाती है ।। २ ।। बेकार बोलने से अवगुण बढ़ते

हैं, किन्तु बिना बोले भी क्या कर सकते हैं ? ।। ३ ।। कबीरजी कहते हैं कि खाली घड़ा ही बोलता है, यदि वह भरा हो तो वह कभी डगमगाता नहीं। (यहाँ ऐसे मनुष्य का संकेत दिया है जो ओछा होकर आत्म-प्रचार करता है, किन्तु सही अर्थों में उसकी परमात्मा तक पहुँच नहीं होती) ।। ४ ।। १ ।।

।। गोंड ।। नरू मरै नरु कामि न आवै । पसू मरै दस काज सवारै ।। १ ।। अपने करम की गति मै किआ जानउ । मै किआ जानउ बाबा रे ।। १ ।। रहाउ ।। हाड जले जैसे लकरी का तूला । केस जले जैसे घास का पूला ।।२।। कहु कबीर तब ही नरु जागै । जम का डंडु मूंड महि लागै ।। ३ ।। २ ।।

मनुष्य की मृत देह किसी काम नहीं आती, जबकि मरा हुआ पशु दस काम सँवारता है ।। १ ।। अपने कर्मों की गति मैं नहीं जानता; मुझे क्या पता है कि मेरा क्या हाल होगा ।। १ ।। रहाउ ।। अन्त में हड्डियाँ इस प्रकार जल जाएँगी, जैसे लकड़ी का गट्ठा हो, और बाल ऐसे जलेंगे, जैसे घास की गठरी हो ।। २ ।। कबीरजी कहते हैं कि मनुष्य तभी जागता है, जब यमदूत का डण्डा सिर में लगता है ।। ३ ।। २ ।।

।। गोंड ।। आकासि गगनु पातालि गगनु है चहुदिसि गगनु रहाइले । आनद मूलु सदा पुरखोतमु घटु बिनसै गगनु न जाइले ।। १ ।। मोहि बैरागु भइओ । इहु जीउ आइ कहा गइओ ।। १ ।। रहाउ ।। पंच ततु मिलि काइआ कीन्ही ततु कहा ते कीनु रे । करम बध तुम जीउ कहत हो करमहि किनि जीउ दीनु रे ।। २ ।। हरि महि तनु है तन महि हरि है सरब निरंतरि सोइ रे । कहि कबीर राम नामु न छोडउ सहजे होइ सु होइ रे ।। ३ ।। ३ ।।

आकाश, पाताल तथा हमारे चतुर्दिक् चेतन सत्ता विद्यमान है। आनन्द-रूप में पुरुषोत्तम की सत्ता शरीर के नष्ट हो जाने पर भी शून्य में नहीं मिल जाती ।। १ ।। मुझे इस बात का क्षोभ है कि संसार में जन्म लेनेवाले मनुष्य भी आकर कहाँ लौट जाते हैं ? ।। १ ।। रहाउ ।। परमात्मा ने पंच-तत्त्वों को मिलाकर यह शरीर बनाया, किन्तु कोई क्या जाने कि वे तत्त्व कहाँ से आते हैं ? आप जीव को कर्मों से बँधा हुआ कहते हो फिर चाहो तो पूछ सकते हो कि कर्मों को बनानेवाला कौन है ? ।। २ ।। हमारे लिए वह परमात्मा ही सब कुछ है, हमारे तन-मन में हमेशा से वही

बसा हुआ है। कबीरजी कहते हैं कि जीव को राम-नाम का ध्यान नहीं छोड़ना चाहिए, प्रभु-कृपा से जो कुछ सहज में होता है, वही ग्राह्य है ॥ ३ ॥ ३ ॥

रागु गौड बाणी कबीर जीउ की घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ भुजा बांधि भिला करि डारिओ। हसती क्रोपि मूंड महि मारिओ। हसति भागि कै चीसा मारै। इआ मूरति कै हउ बलिहारै ॥ १ ॥ आहि मेरे ठाकुर तुमरा जोरु। काजी बकिबो हसती तोरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रे महावत तुझु डारउ काटि। इसहि तुरावहु घालहु साटि। हसति न तोरै धरै धिआनु। वाकै रिदै बसै भगवानु ॥ २ ॥ किआ अपराधु संत है कीन्हा। बांधि पोट कुंचर कउ दीन्हा। कुंचरु पोट लै लै नमसकारै। बूझी नही काजी अंधिआरै ॥ ३ ॥ तीनि बार पतीआ भरि लीना। मन कठोरु अजहू न पतीना। कहि कबीर हमरा गोबिंदु। चउथे पद महि जन की जिंदु ॥ ४ ॥ १ ॥

मुझे गाँठ बाँधकर हाथी के सामने डाल दिया और महावत ने गुस्से में उसके सिर पर अकुंश भी मारा, किन्तु हाथी भागकर चिंघाड़ता हुआ, यह कहता है कि मैं इस मूर्ति (कबीर) पर बलिहार जाता हूँ। (यहाँ कबीर एक ऐतिहासिक प्रसंग की ओर संकेत कर रहें हैं। सिकन्दर लोदी ने उन्हें बनारस में बन्दी बना लिया था और बाँधकर हाथी के सामने डाल दिया था। पाँव-तले कुचलने की बजाए हाथी बार-बार चिंघाड़कर रह जाता, किन्तु कबीर को कोई हानि न पहुँचाता था) ॥ १॥ हे मेरे स्वामी, मुझे तुम्हारा ही सहारा है, चाहे क़ाज़ी हाथी को आगे बढ़ाने के लिए महावत को कितना भी डाँटता रहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (क़ाज़ी डाँटता है कि) अरे महावत, तुम्हें क़त्ल करवा दिया जायगा, नहीं तो ज़ोर की चोट करके हाथी को आगे बढ़ाओ। हाथी उसके प्रयत्नों पर भी नहीं चलता, वह अपने ध्यान में खड़ा रहता है, क्योंकि उसके हृदय में स्वयं भगवान् निवास किये हुए हैं ॥ २ ॥ साधु से आखिर क्या अपराध हो गया है, जो उसे बाँधकर हाथी के आगे फेंक दिया गया है। हाथी तो बँधे हुए साधु को बार-बार सूँड़ उठाकर नमस्कार करता है, किन्तु अज्ञान के अँधेरे में पड़ा क़ाज़ी कुछ नहीं समझता ॥ ३ ॥

तीन बार क़ाज़ी ने परीक्षा कर ली, किन्तु उसे कठोर हृदय के व्यक्ति को अभी भी विश्वास नहीं हुआ। कबीरजी कहते हैं कि हमें केवल परमात्मा का ही सहारा है, हमारे प्राण तुरीया-पद में उसी की शरण में बसते हैं ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ गोंड ॥ ना इहु मानसु ना इहु देउ। ना इहु जती कहावै सेउ। ना इहु जोगी ना अवधूता। ना इसु माइ न काहू पूता ॥ १ ॥ इआ मंदर महि कौन बसाई। ता का अंतु न कोऊ पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ना इहु गिरही ना ओदासी। ना इहु राज न भीख मंगासी। नां इसु पिंडु न रकतू राती। ना इहु ब्रहमनु ना इहु खाती ॥ २ ॥ ना इहु तपा कहावै सेखु। ना इहु जीवै न मरता देखु। इसु मरते कउ जे कोऊ रोवै। जो रोवै सोई पति खोवै ॥ ३ ॥ गुर प्रसादि मै डगरो पाइआ। जीवन मरनु दोऊ मिटवाइआ। कहु कबीर इहु राम की अंसु। जस कागद पर मिटै न मंसु ॥ ४ ॥ २ ॥

यह जीव न मनुष्य-रूप है, न देव-रूप है। इससे यती या शैव भी नहीं कहा जा सकता। जीव योगी या संन्यासी भी नहीं और न ही ये किसी का पुत्र है, न ही इसकी कोई जननी है ॥ १ ॥ इस शरीर रूपी मन्दिर में कौन बसता है, इसका रहस्य कोई नहीं जानता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शरीर रूपी मन्दिर में बसनेवाला प्राण न गृहस्थ है, न उदासी है। यह राजा या भिखमंगा भी नहीं; न इसका कोई शरीर है और न ही इसमें थोड़ा सा विरक्त है। यह जीव ब्राह्मण या क्षत्रिय भी नहीं है ॥ २ ॥ जीव को तपस्वी या शेख भी नहीं कहा जा सकता, यह मरता या जीता भी नहीं। इसे मरता समझकर यदि कोई रोता है, तो वह अपनी प्रतिष्ठा ही गँवाता है ॥ ३ ॥ गुरु की कृपा से मैंने इस रहस्य को पा लिया है और मेरा जीवन-मरण का चक्र निपट गया है। कबीरजी कहते हैं कि यह जीवात्मा राम का अंश है और जैसे कागज़ से स्याही नहीं मिटती, वैसे ही जीव का अस्तित्व नहीं मिटता ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ गोंड ॥ तूटे तागे निखुटी पानि। दुआर ऊपरि झिलकावहि कान। कूच बिचारे फूए फाल। इआ मुंडीआ सिर चढिबो काल ॥ १ ॥ इहु मुंडीआ सगलो द्रबु खोई। आवत जात नाक सर होई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुरी नारि की छोडी बाता। राम नाम वा का मनु राता। लरिकी लरिकन

खैबो नाहि । मुंडीआ अनदिनु धापे जाहि ।। २ ।। इक दुइ मंदरि इक दुइ बाट । हम कउ साथरु उन कउ खाट । मूड पलोसि कमर बधि पोथी । हम कउ चाबनु उन कउ रोटी ।।३।। मुंडीआ मुंडीआ हूए एक । ए मुंडीआ बूडत की टेक । सुनि अंधली लोई बे पीरि । इन्ह मुंडीअन भजि सरनि कबीर ।। ४ ।। ३ ।।

धागे टूट जाते हैं, पाण (कपड़े को चमकाने और कड़क बनाने के लिए जो लेई लगायी जाती है) निकली पड़ी है, द्वार पर तोरण झलकते हैं, बाल चारों ओर बिखरे हुए होते हैं, मानो इस लड़के (कबीर) को अति चंचलता छू गयी है ।।१।। (यहाँ कबीर के पूर्वज कबीर के नटखट व्यवहार से तंग आकर उलाहना दे रहे हैं।) इस लड़के ने तो साधुओं के साथ मिलकर सारा धन खो दिया है। घर में इन साधुओं के आने-जाने से नाक में दम हो गया है ।। १ ।। रहाउ ।। इसने तुरी और नलकियों (जुलाहे के काम की चीज़ें) को छोड़ दिया है और उसका मन राम-नाम में ही लीन हो गया है। घर में बालक-बालिका को तो खाने को नहीं मिलता, जबकि साधुजन पेट भरकर निकलते हैं ।। २ ।। दो-एक साधु घर में जमे ही रहते हैं, दो-एक रास्ते पर घर के लिए आ रहे होंगे ! हमें सोने के लिए चटाई मिलती है, जबकि उन्हें चारपाई दी जाती है। वे कमर में पोथी खोंस कर उनके सिर पर हाथ फेरते हैं। हमारे लिए चबेना भी नसीब नहीं, उन्हें ताज़ी रोटी मिलती है ।। ३ ।। ये लड़के-साधु एक हो जाते हैं, ये साधु लड़के डूबतों का सहारा हैं। अरी लोई, तू निगुरी है; तू नहीं जानती कि दौड़कर इन साधु लड़कों की शरण लेने में ही बचाव है ।। ४ ।। ३ ।।

।। गोंड ।। खसमु मरै तउ नारि न रोवै । उसु रखवारा अउरो होवै । रखवारे का होइ बिनास । आगै नरकु ईहा भोग बिलास ।। १ ।। एक सुहागनि जगत पिआरी । सगले जीअ जंत की नारी ।। १ ।। रहाउ ।। सोहागनि गलि सोहै हारु । संत कउ बिखु बिगसै संसारु । करि सीगारु बहै पखिआरी । संत की ठिठकी फिरै बिचारी ।। २ ।। संत भागि ओह पाछै परै । गुरपरसादी मारहु डरै । साकत की ओह पिंड पराइणि । हम कउ द्रिसटि परै त्रखि डाइणि ।। ३ ।। हम तिस का बहु जानिआ भेउ । जब हूए क्रिपाल मिले गुरदेउ । कहु कबीर अब बाहरि परी । संसारै कै अंचलि लरी ।।४।।४।।

स्वामी (मनुष्य) के मरने पर नारी (माया) को कुछ दुःख नहीं पहुँचता, क्योंकि वह किसी और की बनकर रहने लगती है। उसकी रक्षा करनेवाले का नाश हो जाता है; वह इहलोक में भोग-विलास करता और परलोक में नरक भोगता है ॥ १ ॥ (सन्त कबीर माया की अस्थिरता और असतीत्व का परिचय दे रहे हैं।) माया सारे संसार की प्यारी है, सृष्टि के सब जीव-जन्तु इसे अपनी नारी बनाकर रखना चाहते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस सुहागिन माया के गले में हार सुशोभित होते हैं, किन्तु सन्तों को यह विष-समान लगती है। संसार इसे देखकर प्रफुल्लित होता है। यह श्रृंगार करके लोगों को मोहित करने के लिए वेश्या के समान द्वार पर बैठी रहती है, किन्तु सन्तजन इसे ठुकरा देते हैं ॥ २ ॥ वह भागकर सन्तों का पीछा करती है, किन्तु सन्तों पर गुरु की कृपा के कारण दण्ड की सम्भावना से डरती है। शाक्त लोगों का लक्ष्य शरीर का पोषण होता है, इसलिए वह उन्हें प्रिय होती है। हमें तो वह रक्त-पिपासु पिशाचिनी दिखायी देती है ॥ ३ ॥ हमने उसके रहस्य को समझ लिया है। किन्तु यह तभी सम्भव हो सका, जब गुरुदेव की हम पर कृपा हुई। कबीरजी कहते हैं कि अब माया हमसे बाहर हो गयी है, किन्तु संसार के पल्ले अभी भी पड़ी है ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ गोंड ॥ ग्रिहि सोभा जाकै रे नाहि । आवत पहीआ खूधे जाहि । वाकै अंतरि नही संतोखु । बिनु सोहागनि लागै दोखु ॥ १ ॥ धनु सोहागनि महा पवीत । तपे तपीसर डोलै चीत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सोहागनि किरपन की पूती । सेवक तजि जगत सिउ सूती । साधू कै ठाढी दरबारि । सरनि तेरी मोकउ निसतारि ॥ २ ॥ सोहागनि है अति सुंदरी । पग नेवर छनक छनहरी । जउ लगु प्रान तऊ लगु संगे । नाहि त चली बेगि उठि नंगे ॥ ३ ॥ सोहागनि भवन त्रै लीआ । दसअठ पुराण तीरथ रस कीआ । ब्रहमा बिसनु महेसर बेधे । बडे भूपति राजे है छेधे ॥ ४ ॥ सोहागनि उरवारि न पारि । पांच नारद कै संगि बिधवारि । पांच नारद के मिटवे फूटे । कहु कबीर गुर किरपा छूटे ॥ ५ ॥ ५ ॥

जिस घर में माया की शोभा नहीं है, वहाँ आए हुए अतिथि भूखे ही लौट जाते हैं। उनके भीतर तृप्ति नहीं रहती और माया के बिना वे दोषी ठहराए जाते हैं ॥ १ ॥ यह महापवित्र सुहागिनी धन्य है! बड़े-बड़े तपस्वी-योगियों के चित्त भी इसके कारण डोल जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥

माया सुहागिन बड़ी ही कंजूस है, यह किसी को पूर्णतः समर्पित नहीं होती। अपनी सेवा में लगे जीवों को छोड़कर दूसरों की शय्या-गामिनी बनती है। सन्तों के दरबार में खड़ी भीख माँगती है कि वे उसे शरण दें तो उसका उद्धार हो ॥ २ ॥ ये सुहागिन बड़ी सुन्दर है; पग में घुँघरू बाँधकर छन-छन करती हुई घूमती है। जब तक शरीर में प्राण हैं साथ देती है, अन्यथा जल्दी ही नंगे पाँव भाग खड़ी होती है ॥ ३ ॥ इस माया ने तीनों लोकों को वश में कर रखा है। अठारह पुराण और अड़सठ तीर्थ इसे चाहते हैं। इसने ब्रह्मा, विष्णु, महेश को भी बींध रखा है। बड़े-बड़े राजाओं, महाराजाओं को इसने नष्ट कर दिया है ॥ ४ ॥ इस माया का कोई आर-पार नहीं है, यह पंच-ज्ञानेन्द्रियों के साथ नारदीय चंचलता से व्यवहार में मस्त है, यदि इन इन्द्रियों के रहस्यमय भेद खुल जाएँ तो, कबीर कहते हैं, गुरु-कृपा से जीव की मुक्ति हो जाती है ॥५॥५॥

॥ गोंड ॥ जैसे मंदर महि बलहर ना ठाहरै। नाम बिना कैसे पारि उतरै। कुंभ बिना जलु ना टीकावै। साधू बिनु ऐसे अबगतु जावै ॥ १ ॥ जारउ तिसै जु रामु न चेतै। तन मन रमत रहै महि खेतै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे हलहर बिना जिमी नही बोईऐ। सूत बिना कैसे मणी परोईऐ। घुंडी बिनु किआ गंठि चड़्हाईऐ। साधू बिनु तैसे अबगतु जाईऐ ॥ २ ॥ जैसे मात पिता बिनु बालु न होई। बिंब बिना कैसे कपरे धोई। घोर बिना कैसे असवार। साधू बिनु नाही दरवार ॥ ३ ॥ जैसे बाजे बिनु नही लीजै फेरी। खसमि दुहागनि तजि अउहेरी। कहै कबीर एकै करि करना। गुरमुखि होइ बहुरि नही मरना ॥ ४ ॥ ६ ॥

जैसे बिना स्तम्भों के मकान नहीं ठहरता, वैसे ही नाम के बिना कोई संसार-सागर से पार नहीं उतरता। जैसे मटके के बिना जल संचित नहीं किया जा सकता, वैसे ही सन्तों के बिना जगत की कोई गति नहीं ॥ १ ॥ मैं उसे जला दूँगा जो राम का नाम नहीं जपता। जो तन-मन से शरीर रूपी खेत में ही खिंचा रहता है (वह जलाने योग्य है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे किसान के बिना ज़मीन में बीज नहीं डाला जा सकता; जैसे सूत्र के बिना माला के मोती नहीं पिरोये जा सकते; जैसे बल दिये बग़ैर किसी चीज़ को गाँठ नहीं लगायी जा सकती, वैसे ही सन्तों के बिना जगत की गति सम्भव नही ॥ २ ॥ जैसे माता-पिता के बिना सन्तान नहीं होती; जल के बिना कपड़े नहीं धोये जा सकते; जैसे घोड़े के बिना

सवारी सम्भव नहीं, वैसे ही सन्तों के बिना जीव परमात्मा के दरबार में नहीं पहुँच सकता ॥ ३ ॥ जैसे संगीत के बिना नृत्य का कोई मज़ा नहीं, वैसे ही पति के मन की किये बग़ैर सुहागिन होना सम्भव नहीं (कुलटा होने से पति तिरस्कारपूर्वक त्याग कर देता है) । कबीरजी कहते हैं कि केवल परमात्मा को ही अपनाना चाहिए, गुरु के आदेश पर चलने से जीव मृत्यु पर भी विजय पा लेता है ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ गोंड ॥ कूटनु सोइ जु मन कउ कूटै । मन कूटै तउ जम ते छूटै । कुटि कुटि मनु कसवटी लावै । सो कूटनु मुकति बहु पावै ॥ १ ॥ कूटनु किसै कहहु संसार । सगल बोलन के माहि बीचार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नाचनु सोइ जु मन सिउ नाचै । झूठि न पतीऐ परचै साचै । इसु मन आगे पूरै ताल । इसु नाचन के मन रखवाल ॥ २ ॥ बजारी सो जु बजारहि सोधै । पांच पलीतह कउ परबोधै । नउ नाइक की भगति पछानै । सो बाजारी हम गुर माने ॥ ३ ॥ तसकरु सोइ जि ताति न करै । इंद्री कै जतनि नामु उचरै । कहु कबीर हम ऐसे लखन । धंनु गुरदेव अति रूप बिचखन ॥ ४ ॥ ७ ॥

असली दलाल वही है, जो मन को मिलाने की दलाली करे, क्योंकि मन को मिलाने से जीव यमदूतों से छूट जाता है । जो दलाल मन को घिस-घिसकर कसौटी पर परखता है, वही दलाल मुक्ति का अधिकारी होता है (दलाल व्यभिचारी स्त्री-पुरुष को मिलाने का काम करता है, किन्तु यहाँ गुरुजी ने आत्मा और परमात्मा को मिलानेवाले या मन को परमात्मा में मिलानेवाले जीव को दलाल कहा है) ॥ १ ॥ संसार दलाल किसे कहता है ? यह तो बोलने-बोलने का अन्तर है, आप कुछ अर्थ समझते हैं, मैं कुछ और अर्थ लेता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नर्तक वही है जो मन को अपने इशारों पर नचाता है, झूठ से सन्तुष्ट नहीं होता, केवल सत्य पर ही विश्वास रखता है । जो इस मन के आगे प्रेमाभिभूत होकर नृत्य करता है, ऐसे नाचने के मन का रक्षक स्वयं परमात्मा होता है ॥ २ ॥ बाज़ार में शरीर का सौदा करनेवाला वही है, जो शरीर रूपी बाज़ार का संशोधन करता है । शरीर के भीतर की पाँचों मलिनताओं को धो डालता है अर्थात् काम-क्रोधादि को नियंत्रित करता है । जो नव-खण्डों के स्वामी परमात्मा को पहचानता है, वह कंजर हमारे लिए गुरु के समान है । (यहाँ कंजर वेश्यालय में शरीर की नीलामी करनेवाला नहीं, बल्कि शरीर को साधनेवाला है) ॥ ३ ॥ सच्चा तस्कर वही है जो ईर्ष्या नहीं करता, ज्ञानेन्द्रियों के परिश्रम से प्रभु के नाम का जाप करता है । कबीरजी

कहते हैं कि हम ऐसे लक्षणों वाले जीव को गुरु-पदवी पर स्वीकार करते और सुन्दर सुयोग्य मानते हैं ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ गोंड ॥ धंनु गुपाल धंनु गुरदेव । धंनु अनादि भूखे कवलु टहकेव । धनु ओइ संत जिन ऐसी जानी । तिन कउ मिलिबो सारिंगपानी ॥ १ ॥ आदि पुरख ते होइ अनादि । जपीऐ नामु अंन कै सादि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जपीऐ नामु जपीऐ अंनु । अंभै कै संगि नीका वंनु । अंनै बाहरि जो नर होवहि । तीनि भवन महि अपनी खोवहि ॥ २ ॥ छोडहि अंनु करहि पाखंड । ना सोहागनि ना ओहि रंड । जग महि बकते दूधाधारी । गुपती खावहि वटिका सारी ॥ ३ ॥ अंनै बिना न होइ सुकालु । तजिऐ अंनि न मिलै गुपालु । कहु कबीर हम ऐसे जानिआ । धंनु अनादि ठाकुर मनु मानिआ ॥४॥८॥

हे मेरे प्रभु, हे मेरे गुरुदेव, आप धन्य हैं। अन्न आदि वस्तुएँ भी धन्य हैं, जिनसे भूखे व्यक्ति का हृदय-कमल खिल उठता है। वे सन्त धन्य हैं, जिहोंने परमात्मा को जाना है और जो प्रभु को मिल गये हैं ॥ १ ॥ आदिपुरुष परमात्मा ने ही अन्नादि वस्तुओं को उपजाया है। परमात्मा का नाम भी हमें अन्न के स्वाद ही की तरह ग्रहण करना चाहिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नाम का जपना और अन्न का जपना उसी तरह साथ चलता है, जैसे किसी भी वस्तु का स्वाद पानी के साथ लेने से बढ़ जाता है। जो लोग अन्न की तरह नाम को ग्रहण नहीं करते अर्थात् अपनी परिसीमाओं से बाहर हो जाते हैं, वे तीनों लोकों में अपनी प्रतिष्ठा खो बैठते हैं ॥ २ ॥ जो लोग अन्न छोड़ते अर्थात् व्रत-उपवास करते हैं, वे पाखण्डी हैं। उन्हें वफ़ादार या बेवफ़ा कुछ भी नहीं कहा जा सकता। जो संसार में दुग्धाहारी कहलाते हैं, वे छिप-छिपकर पंसेरी अन्न खा जाते हैं ॥ ३ ॥ अन्न के बिना संसार मे खुशहाली नहीं आती। अन्न त्यागने से परमात्मा नहीं मिलता। कबीरजी कहते हैं कि हमने यह जान लिया है कि अन्न धन्य है, जिसके खाने से शरीर स्वस्थ रहता है और हम परमात्मा का नाम जप सकते हैं ॥ ४ ॥ ८ ॥

रागु गोंड बाणी नामदेउ जी की घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ असुमेध जगने । तुला पुरख दाने । प्राग इसनाने ॥ १ ॥ तउ न पुजहि हरि कीरति नामा ।

अपुने रामहि भजु रे मन आलसीआ ।। १ ।। रहाउ ।। गइआ पिंडु भरता । बनारसि असि बसता । मुखि बेद चतुर पड़ता ।। २ ।। सगल धरम अछिता । गुर गिआन इंद्री द्रिड़ता । खटु करम सहित रहता ।। ३ ।। सिवा सकति संबादं । मन छोडि छोडि सगल भेदं । सिमरि सिमरि गोबिंदं । भजु नामा तरसि भव सिंधं ।। ४ ।। १ ।।

अश्वमेध यज्ञ करने से, अपने बराबर तुलादान (स्वर्ण का) करने से अथवा प्रयाग में त्रिवेणी-स्नान करने से (मोक्ष-प्राप्ति सम्भव नहीं) ।। १ ।। इतने पर भी कोई जीव हरि के यशोगान की बराबरी नहीं कर सकता। इसलिए, ऐ मेरे आलसी मन, राम का भजन कर ।। १ ।। रहाउ ।। गया में पूर्वजों के पिण्ड भरवाने से, काशी में नदी किनारे निवास करने से अथवा मुख से चारों वेदों का उच्चारण करने से (उसका कल्याण नहीं होता) ।। २ ।। सभी धर्मों का निर्वाह करने से, गुरु के उपदेशानुसार इन्द्रिय-निरोध करने से अथवा छः प्रकार के कर्मों का दावा करने से (भी उसका उद्धार नहीं होता) ।। ३ ।। जो शिव-शक्ति के सम्वाद में लीन रहता है, मन की बातों को त्यागकर, पारस्परिक भेदों को बाद करता है; नित्यप्रति गोविन्द-नाम का स्मरण करता है, वही, नामदेव कहते हैं, भवसागर से तर जायेगा ।। ४ ।। १ ।।

।। गोंड ।। नाद भ्रमे जैसे मिरगाए । प्रान तजे वाको धिआनु न जाए ।। १ ।। ऐसे रामा ऐसे हेरउ । राम छोडि चितु अनत न फेरउ ।। १ ।। रहाउ ।। जिउ मीना हेरै पसूआरा । सोना गढते हिरै सुनारा ।। २ ।। जिउ बिखई हेरै पर नारी । कउडा डारत हिरै जुआरी ।। ३ ।। जह जह देखउ तह तह रामा । हरि के चरन नित धिआवै नामा ।। ४ ।। २ ।।

संगीत पर जो मृग की तरह मस्त हो जाता है; वह प्राण त्याग देता है, किन्तु उसका ध्यान नहीं टूटता ।। १ ।। राम की ओर मेरा भी ऐसा ही ध्यान हो, राम को छोड़कर मेरा मन किसी और तरफ़ न लगे (यही मेरी प्रार्थना है) ।। १ ।। रहाउ ।। जिस प्रकार बगुला एकटक ध्यान लगा कर मछलियों को देखता है; जैसे सुनार सोने के गहने गढ़ता हुआ उस पर ध्यान देता है ।। २ ।। जैसे विषयी परनारी को देखता है और जुआरी कौड़ियाँ फेंकते हुए उनमें ध्यान लगाता है ।। ३ ।। वैसे ही मैं जहाँ-जहाँ भी ध्यान लगाता हूँ, मुझे राम प्रत्यक्ष होते हैं। इसीलिए नामदेव नित्य हरि-चरणों में ध्यान लगाते हैं ।। ४ ।। २ ।।

॥ गोंड ॥ मोकउ तारि ले रामा तारि ले। मै अजानु जनु तरिबे न जानउ बाप बीठुला बाह दे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नर ते सुर होइ जात निमख मै सतिगुर बुधि सिखलाई। नर ते उपजि सुरग कउ जीतिओ सो अवखध मै पाई ॥ १ ॥ जहा जहा धूअ नारदु टेके नैकु टिकावहु मोहि। तेरे नाम अविलंबि बहुतु जन उधरे नामे की निज मति एह ॥ २ ॥ ३ ॥

हे प्रभु, मेरा उद्धार करो, मुझे मोक्ष दो। मैं अंजान हूँ, इस संसार-सागर में थोड़ा भी तैरना नहीं जानता, इसलिए, ऐ मेरे पिता प्रभु (विट्ठल)! मुझे सहारा दो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतगुरु की मति लेकर नर क्षण भर में ही देवत्व को प्राप्त कर लेता है। मनुष्य से उत्पन्न होकर अर्थात् मानव-जन्म लेकर मैंने वह साधन प्राप्त कर लिया है, जिससे स्वर्ग पर भी विजय पायी जा सकती है ॥ १ ॥ हे प्रभु! जहाँ-जहाँ तुमने ध्रुव और नारद जैसे भक्तों को टिकाया है, थोड़ा मुझे भी वहीं सहारा दो। तुम्हारे नाम का सहारा लेकर बहुत से जीव मुक्ति पा गये, ऐसी सन्त नामदेव की मान्यता है ॥ २ ॥ ३ ॥

॥ गोंड ॥ मोहि लागती ताला बेली। बछरे बिनु गाइ अकेली ॥ १ ॥ पानीआ बिनु मीन तलफै। ऐसे राम नामा बिनु बापुरो नामा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे गाइ का बाछा छूटला। थन चोखता माखनु घूटला ॥ २ ॥ नामदेउ नाराइनु पाइआ। गुरु भेटत अलखु लखाइआ ॥ ३ ॥ जैसे बिखै हेत पर नारी। ऐसे नामे प्रीति मुरारी ॥ ४ ॥ जैसे तापते निरमल घामा। तैसे राम नामा बिनु बापुरो नामा ॥ ५ ॥ ४ ॥

मुझे परमात्मा के बिना ऐसी तड़प लगी है, जैसे बछड़े के बिना गाय अकुलाती है ॥ १ ॥ पानी के बिना जैसे मछली तड़पती है, उसी प्रकार तुम्हारा सेवक नामदेव भी अकुलाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस प्रकार गाय का बछड़ा खूँटे से छूटते ही दूध पीने भागता है और माँ के थनों को खींचता है (वैसे ही मैंने संसार से छूटकर नाम-रस को पिया है) ॥ २ ॥ नामदेव कहते हैं कि गुरु से भेंट हो जाने पर अलक्ष्य प्रभु को उन्होंने पा लिया है ॥ ३ ॥ जैसे विषयी को परनारी से प्रेम होता है, वैसे ही नामदेव की प्रीति परमात्मा से है ॥ ४ ॥ जैसे दोपहर की धूप में लोग सन्तप्त होते हैं, वैसे ही राम-नाम के बिना बेचारा नामदेव भी सन्तप्त हो उठता है ॥ ५ ॥ ४ ॥

रागु गोंड बाणी नामदेउ जीउ की घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हरि हरि करत मिटे सभि भरमा । हरि को नामु लै ऊतम धरमा । हरि हरि करत जाति कुल हरी । सो हरि अंधुले की लाकरी ॥ १ ॥ हरए नमसते हरए नमह । हरि हरि करत नही दुखु जमह ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि हरनाखस हरे परान । अजैमल कीओ बैकुंठहि थान । सूआ पड़ावत गनिका तरी । सो हरि नैनहु की पूतरी ॥ २ ॥ हरि हरि करत पूतना तरी । बाल घातनी कपटहि भरी । सिमरन द्रोपद सुत उधरी । गऊतम सती सिला निसतरी ॥ ३ ॥ केसी कंस मथनु जिनि कीआ । जीअ दानु काली कउ दीआ । प्रणवै नामा ऐसो हरी । जासु जपत भै अपदा टरी ॥ ४ ॥ १ ॥

हरि-नाम का जाप करने से सब प्रकार के भ्रमों का नाश हो जाता है; हरि-नाम का जाप करना ही जीव के लिए सर्वोत्तम धर्म है। हरि-हरि नाम लेने से कुल और जाति की ऊँच-नीच समाप्त हो जाती है, हरि तो अन्धे की लकड़ी के समान है, सबका एकमात्र सहारा है ॥ १ ॥ परमात्मा को हमारा नमस्कार है, हरि प्रणम्य है। हरि का नाम जपने से शरीर को कोई दुःख नहीं सताता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु ने हिरण्यकशिपु के प्राण हरण किये, अजामिल को वैकुण्ठ में स्थान दिया, तोते को हरि-नाम पढ़ानेवाली वेश्या का उद्धार किया, ऐसा हरि मेरी आँखों की पुतली के समान मुझे प्रिय है ॥ २ ॥ पूतना राक्षसी हरि का नाम लेने से ही भव-सागर से तर गयी, यद्यपि वह कपटपूर्ण बालघाती हत्यारिन थी। प्रभु के सिमरन से द्रौपदी का कल्याण हुआ और समय पाकर पत्थर की शिला हो जानेवाली गौतम-पत्नी अहल्या का उद्धार हुआ ॥ ३ ॥ केशी और कंस जैसे राक्षसों को जिसने मारा और कालियनाग को प्राण-दान दिया; नामदेव उसी हरि को प्रणाम करता है, जिसका नाम जपने से सभी विपत्तियाँ टल जाती हैं ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ गोंड ॥ भैरउ भूत सीतला धावै । खर बाहन उहु छार उडावै ॥ १ ॥ हउ तउ एक रमईआ लैहउ । आन देव बदलावनि दैहउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिव सिव करते जो नरु धिआवै । बरद चढे डउरू ढमकावै ॥ २ ॥ महा माई की

पूजा करै । नर सै नारि होइ अउतरै ॥ ३ ॥ तू कहीअत ही आदि भवानी । मुकति की बरीआ कहा छपानी ॥ ४ ॥ गुरमति राम नाम गहु मीता । प्रणवै नामा इउ कहै गीता ॥ ५ ॥ २ ॥

जो जीव भैरों, भूत या शीतला आदि देवी-देवताओं के पीछे भागता है, उसे गधे की सवारी या धूल उड़ाने जैसी गर्दभ-क्रियाओं का दण्ड मिलता है ॥ १ ॥ इसलिए मैं तो केवल राम का भजन करूँगा, अन्य देवी-देवताओं में ध्यान नहीं लगाऊँगा, बल्कि हरि के बदले में सबको बेच डालूँगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जीव शिवशंकर का ध्यान करते हैं, वे बैल की सवारी करते और डमरू बजाते हैं ॥ २ ॥ जो महामाई दुर्गा की उपासना करते हैं, वे पुरुष से नारी की योनि में जन्म लेते हैं ॥ ३ ॥ तुम आदिभवानी कही जाती हो, किन्तु मुक्ति के समय कहाँ छिप जाती हो ? ॥ ४ ॥ गुरु के उपदेशानुसार हे मित्र ! राम का दामन थाम लो, यही गीता का उपदेश है और नामदेव इसीलिए उस परमतत्त्व राम को प्रणाम करता है ॥ ५॥ २ ॥

॥ बिलावलु गोंड ॥ आजु नामे बीठलु देखिआ मूरख को समझाऊ रे ॥ रहाउ ॥ पांडे तुमरी गाइत्री लोधे का खेतु खाती थी । लै करि ठेगा टगरी तोरी लांगत लांगत जाती थी ॥ १ ॥ पांडे तुमरा महादेउ धउले बलद चड़िआ आवत देखिआ था । मोदी के घर खाणा पाका वाका लड़का मारिआ था ॥ २ ॥ पांडे तुमरा रामचंदु सो भी आवतु देखिआ था । रावन सेती सरबर होई घर की जोइ गवाई थी ॥ ३ ॥ हिंदू अंन्हा तुरकू काणा । दुहां ते गिआनी सिआणा । हिंदू पूजै देहुरा मुसलमाणु मसीत । नामे सोई सेविआ जह देहुरा न मसीति ॥ ४ ॥ ३ ॥

आज नामदेव ने परमात्मा से साक्षात्कार कर लिया है, ऐसा मूर्खों को कौन समझा सकता है ॥ रहाउ ॥ ऐ पंडित, तुम्हारी गायत्री किसी किसान का खेत खाती थी कि उसने डण्डा लेकर उसकी टाँग तोड़ दी, तो वह लँगड़ी हो गयी ॥ १ ॥ (यहाँ सन्त नामदेव ने पंडितों के धर्म-कर्म पर व्यंग्याघात किया है । गायत्री ब्रह्मा की पत्नी थी, जो अभिशप्त होकर गाय बन गयी । गायत्री मन्त्र के वे तीन ही चरण हैं, इसलिए व्यंग्य का संकेत उधर भी हो सकता है ।) हे पंडित, तुम्हारे महादेव को हमने सफ़ेद नन्दी पर चढ़कर आते देखा था; उसने भण्डारी के घर का खाना नापसन्द होने पर अभिशाप देकर उसका लड़का मार दिया था ॥ २ ॥ पंडित

तुम्हारा रामचन्द्र भी हमने आते देखा था, जिसने रावण के साथ युद्ध करके अपनी धर्मपत्नी को खो दिया था ।। ३ ।। सच तो ये है कि हिन्दू अन्धे हैं, तुर्क काने हैं, इन दोनों से ज्ञानीपुरुष महान् हैं । हिन्दू ठाकुरद्वारे की पूजा करते हैं और मुसलमान मस्जिद में नमाज पढ़ते हैं; किन्तु नामदेव ने तो उस परब्रह्म की उपासना की है, जो मन्दिर और मस्जिद से परे है ।। ४ ।। ३ ।।

रागु गोंड बाणी रविदास जीउ की घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। मुकंद मुकंद जपहु संसार । बिनु मुकंद तनु होइ अउहार । सोई मुकंदु मुकति का दाता । सोई मुकंदु हमरा पित माता ।। १ ।। जीवत मुकंदे मरत मुकंदे । ता के सेवक कउ सदा अनंदे ।। १ ।। रहाउ ।। मुकंद मुकंद हमारे प्रानं । जपि मुकंद मसतकि नीसानं । सेव मुकंद करै बैरागी । सोई मुकंदु दुरबल धनु लाधी ।। २ ।। एकु मुकंदु करै उपकारु । हमरा कहा करै संसारु । मेटी जाति हूए दरबारि । तुही मुकंद जोग जुगतारि ।। ३ ।। उपजिओ गिआनु हूआ परगास । करि किरपा लीने कीट दास । कहु रविदास अब त्रिसना चूकी । जपि मुकंद सेवा ताहू की ।। ४ ।। १ ।।

ऐ संसार के लोगो ! मुक्तिदाता परमात्मा का नाम जपो; बिना परमात्मा के तुम्हारा कभी भला नहीं होगा । वह परमात्मा मुक्ति का दाता है और वही हमारा माता-पिता है ।। १ ।। हमारा जीवन और मरण उसी प्रभु को समर्पित है अर्थात् जीते-मरते हम उसी का नाम जपते हैं । परमात्मा के सेवक को सदा आनन्द ही आनन्द प्राप्त होता है ।। १ ।। रहाउ ।। परमात्मा ही हमारा प्राण है, परमात्मा को जपने से हमारे माथे उसके आशीर्वाद का हाथ उठता है । वास्तविक त्यागी ही प्रभु की सेवा करता है, मुझ सरीखे दुर्बल को भी परमात्मा रूपी धन प्राप्त हुआ है ।। २ ।। यदि परमात्मा हमारा उपकार करता है, तो संसार हमारा क्या बिगाड़ सकता है ? प्रभु ने हमारी नीची जाति को मिटाकर हमें अपना दरबारी बना लिया है । युग-युग से वही हमारा उद्धार करता आया है ।। ३ ।। उसकी कृपा से मुझे ज्ञान का प्रकाश प्राप्त हुआ है । कृपा करके अपने कीट-समान दासों को भी उसने प्रतिष्ठा दी है । सन्त रविदास कहते हैं कि हे प्रभु ! तुम्हारी सेवा में रत रहने से मेरी सब तृष्णाएँ दूर हो गयीं ।। ४ ।। १ ।।

॥ गोंड ॥ जे ओहु अठिसठि तीरथ न्हावै । जे ओहु दुआदस सिला पूजावै । जे ओहु कूप तटा देवावै । करै निंद सभ बिरथा जावै ॥ १ ॥ साध का निंदकु कैसे तरै । सरपर जानहु नरक ही परै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जे ओहु ग्रहन करै कुलखेति । अरपै नारि सीगार समेति । सगली सिम्रिति स्रवनी सुनै । करै निंद कवनै नही गुनै ॥ २ ॥ जे ओहु अनिक प्रसाद करावै । भूमि दान सोभा मंडपि पावै । अपना बिगारि बिरांना सांढै । करै निंद बहु जोनी हांढै ॥ ३ ॥ निंदा कहा करहु संसारा । निंदक का परगटि पाहारा । निंदकु सोधि साधि बीचारिआ । कहु रविदास पापी नरकि सिधारिआ ॥४॥२॥

यदि कोई जीव अड़सठ तीर्थों का स्नान करे, बारह शिव-मन्दिरों (सोमनाथ, किष्किन्धा, पुरी, नर्मदा, देवगढ़, पूना, रामेश्वरम्, द्वारका, काशी, गोदावरी, अमरनाथ और औरंगाबाद । बारह शिव-मन्दिरों के के अतिरिक्त बारह मूर्तियों की बात भी की जाती है, वे हैं— विष्णु, लक्ष्मी, शिव, पार्वती, ब्रह्मा, सरस्वती, यम, गणेश, दुर्गा, भैरों, सूर्य, और इन्द्र) को पूज ले, यदि वह स्नान-ध्यान के अनेक स्थान बनाए, तो भी साधु की निन्दा करने से उसका सब पुण्य व्यर्थ हो जायेगा ॥ १ ॥ साधु की निन्दा करनेवाले का कभी उद्धार नहीं होता; निश्चय जानो कि वह नरक में ही पड़ेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि वह जीव सूर्यग्रहण के समय कुरुक्षेत्र में स्नान करे, सोलह श्रृङ्गारयुक्त स्त्री का दान करे, समस्त स्मृतियों की कथा अपने कानों से सुने, किन्तु एक निन्दा करने मात्र से उसके ये सब गुण व्यर्थ हो जाते हैं ॥ २ ॥ यदि वह प्रभु-मन्दिर में प्रसाद चढ़ाए, भूमि का दान करे और महलों में सुशोभित हो; अपना कार्य बिगाड़कर भी दूसरे का कार्य सँवारे तो भी निन्दा करने के कारण वह संसार की भौतिक योनियों में भटकता रहेगा ॥ ३ ॥ संसार उसकी निन्दा किसलिए करे, निन्दक का तो अपना ही प्रसार बहुत होता है और कभी भी उसका पोल खुल जाता है । सन्त रविदास कहते हैं कि हमने निन्दक पर खूब सोच-विचार की है (और यह निष्कर्ष निकाला है कि) वह पापी निश्चय ही नरक को सिधारता है ॥ ४ ॥ २ ॥

रामकली महला १ घरु १ चउपदे ॥

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

कोई पड़ता सहसाकिरता कोई पड़ै पुराना । कोई नामु जपै जप माली लागै तिसै धिआना । अब ही कब ही किछू न जाना तेरा एको नामु पछाना ॥१॥ न जाणा हरे मेरी कवन गते । हम मूरख अगिआन सरनि प्रभ तेरी । करि किरपा राखहु मेरी लाजपते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कबहू जीअड़ा ऊभि चड़तु है कबहू जाइ पइआले । लोभी जीअड़ा थिरु न रहतु है चारे कुंडा भाले ॥ २ ॥ मरणु लिखाइ मंडल महि आए जीवणु साजहि माई । एकि चले हम देखह सुआमी भाहि बलंती आई ॥ ३ ॥ न किसी का मीतु न किसी का भाई ना किसै बापु न माई । प्रणवति नानक जे तू देवहि अंते होइ सखाई ॥ ४ ॥ १ ॥

कोई संस्कृत में वेदवाणी का अध्ययन करता है, कोई पुराण पढ़ता है; कोई माला फेरते हुए प्रभु का नाम जपता और उसी में ध्यान लगाता है, किन्तु मैं न वर्तमान में किसी और को पहचानता हूँ, न भविष्य में किसी और की कामना करता हूँ, एकमात्र तुम्हारा ही नाम जपा करता हूँ ॥ १ ॥ मैं नहीं जानता कि मेरी क्या गति होगी । मैं मूर्ख अज्ञानी हूँ, किन्तु, हे प्रभु, तुम्हारी शरण में हूँ, कृपा करके मेरी लाज बचा लो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कभी मेरा जीव श्रेष्ठता की साक्षी भरता है और कभी पतनोन्मुखी होता है । लोभी होने के कारण यह जीव स्थिर नहीं रहता, चारों दिशाओं में भटकता फिरता है ॥ २ ॥ हे भाई, हम मृत्यु का परवाना लेकर ही यहाँ आए थे और सोचते ये हैं कि हम मृत्यु से बचे रहें, जीवन सदा बना रहे । हम नित्य लोगों को मरते देखते हैं, मौत की आग बढ़ती चली आ रही है, एक-एक करके सबको जला रही है ॥ ३ ॥ (मौत के बाद जीव) न किसी का मित्र रहता है, न किसी का भाई, न किसी का माँ या बाप रह जाता है । गुरु नानक विनती करते हैं कि हे प्रभु, यदि तुम अपना नाम दो तो अन्त समय में भी सहायक होगे ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ रामकली महला १ ॥ सरब जोति तेरी पसरि रही । जह जह देखा तह नरहरी ॥१॥ जीवन तलब निवारि सुआमी ।

अंध कूपि माइआ मनु गाडिआ किउकरि उतरउ पारि सुआमी ।। १ ।। रहाउ ।। जह भीतरि घट भीतरि बसिआ बाहरि काहे नाही । तिन की सार करे नित साहिबु सदा चिंत मन माही ।। २ ।। आपे नेड़ै आपे दूरि । आपे सरब रहिआ भरपूरि । सतगुरु मिलै अंधेरा जाइ । जह देखा तह रहिआ समाइ ।। ३ ।। अंतरि सहसा बाहरि माइआ नैणी लागसि बाणी । प्रणवति नानक दासनि दासा परतापहिगा प्राणी ।।४।।२।।

जिधर-जिधर मैं देखता हूँ, हे प्रभु, तुम्हारा ही प्रसार है, तुम्हारा ही आलोक चतुर्दिक् फैला हुआ है ।। १ ।। हे मेरे परमात्मा, मेरी जीवन की इच्छाओं को दूर करो । मैं माया के अँधेरे कूप में फँसा पड़ा हूँ, क्योंकर पार उतर सकता हूँ ! ।। १ ।। रहाउ जिनके हृदय में तुम बसे हो, उनके बाहर क्यों नहीं ? (भाव, बाहर भी है ।) उनका संरक्षण स्वयं परमात्मा करता है, प्रभु को ही उनकी चिन्ता रहती है ।। २ ।। वह प्रभु समीप भी है, दूर भी है, सब जगह व्याप्त है । सतगुरु के मिलाप से अज्ञान का अँधेरा दूर हो जाता है और फिर जिधर दृष्टि जाती है, वही दीख पड़ता है ।। ३ ।। मन में संशय बना रहता है, बाहर माया आँखों को आकर्षित करती है; गुरु नानक विनती करते हैं कि हे प्रभु, तुम्हारी सहायता के बिना प्राणी संतप्त हैं ।। ४ ।। २ ।।

।। रामकली महला १ ।। जितु दरि वसहि कवनु दरु कहीऐ दरा भीतरि दरु कवनु लहै । जिसु दर कारणि फिरा उदासी सो दरु कोई आइ कहै ।।१।। किन बिधि सागरु तरीऐ । जीवतिआ नह मरीऐ ।। १ ।। रहाउ ।। दुखु दरवाजा रोहु रखवाला आसा अंदेसा दुइ पट जड़े । माइआ जलु खाई पाणी घरु बाधिआ सत कै आसणि पुरखु रहै ।। २ ।। किते नामा अंतु न जाणिआ तुम सरि नाही अवरु हरे । ऊचा नही कहणा मन महि रहणा आपे जाणै आपि करे ।। ३ ।। जब आसा अंदेसा तब ही किउ करि एकु कहै । आसा भीतरि रहै निरासा तउ नानक एकु मिलै ।। ४ ।। इन बिधि सागरु तरीऐ । जीवतिआ इउ मरीऐ ।। १ ।। रहाउ दूजा ।। ४ ।। ३ ।।

जिस शरीर में तुम बसते हो उसे असंख्य शरीरों में हम कहाँ ढूँढ़ें । जिस परमात्मा के स्वरूप के लिए हम मारे-मारे फिरते हैं, उसके घर का द्वार कोई बता दे (तो कल्याण हो) ।। १ ।। जब तक जीते-जी हम

मरना नहीं सीख लेते अर्थात् जीवन्मुक्त नहीं होते, तब तक कहो इस संसार-सागर से क्योंकर पार हुआ जा सकता है ? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस शरीर रूपी दुर्ग में दुःख रूपी दरवाज़े का चौकीदार क्रोध है और आशा तथा शंका के दो द्वार बन्द किये रखे हैं। चारों ओर माया की खाई है और उसके पानी में हमने घर बना रखा है। यदि इन सब कठिनाइयों को पार किया जा सके, तो सामने सत्य के आसन पर वाहिगुरु विराजमान हैं ॥ २ ॥ तुम्हारे अनन्त नाम हैं, फिर भी तुम्हारे बराबर कोई दूसरा नहीं। तुम्हारे नाम को ऊँचा पुकारने की अपेक्षा भी नहीं, केवल हृदय में बसा लेना पर्याप्त है ॥ ३ ॥ आशाओं, शंकाओं के बिखराव की स्थिति में कोई परमात्मा के नाम को क्योंकर जप सकता है ! आशागत जीवन में रहकर भी आशाओं से परे विचरण करने से ही एक परमात्मा से मिलन सम्भव होता है ॥ ४ ॥ इसी प्रकार से जीते-जी मरने का अभ्यास होता है और संसार-सागर से पार होने का यही रास्ता है ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ रामकली महला १ ॥ सुरति सबदु साखी मेरी सिङी बाजै लोकु सुणे। पतु झोली मंगण कै ताई भीखिआ नामु पड़े ॥ १ ॥ बाबा गोरखु जागै। गोरखु सो जिनि गोइ उठाली करते बार न लागै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पाणी प्राण पवणि बंधि राखे चंदु सूरजु मुखि दीए। मरण जीवण कउ धरती दीनी एते गुण विसरे ॥ २ ॥ सिध साधिक अरु जोगी जंगम पीर पुरस बहुतेरे। जे तिन मिला त कीरति आखा ता मनु सेव करे ॥ ३ ॥ कागदु लूणु रहै घ्रित संगे पाणी कमलु रहै। ऐसे भगत मिलहि जन नानक तिन जमु किआ करै ॥ ४ ॥ ४ ॥

(वास्तविक योगी कौन है ? इस पर गुरुजी कहते हैं कि) मेरी आत्मा के लिए शब्द रूपी गुरु की शिक्षा सिंगी के समान बजती है और लोग इस नाद को सुनते हैं अर्थात् सुरत शब्द का योग होने से जो अनाहत ध्वनि होती है, अभ्यासी-जन उसे सुन सकते हैं, तब भिक्षाटन के लिए जो झोली पहनकर साधक निकलता है, उसमें प्रभु-नाम की भिक्षा डाली जाती है ॥१॥ हे भाई, वह गोरख (परमात्मा) चिर जाग्रत् ज्योति है। गोरख वही होता है, जिसने गो (धरती) को सम्हाल रखा और उसके बनाने-बिगाड़ने में जिसे कोई विलम्ब नहीं लगता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसने प्राणों को पवन, पानी आदि से बाँध रखा है और चन्द्र, सूर्य आदि दो बड़े-बड़े दीये जलाये हैं। मरने-जीने के लिए हमें धरती दी है, किन्तु हमने उसके सब उपकारों को भुला दिया है ॥ २ ॥ सिद्ध-साधक, योगी और पीर-पैग़म्बर बहुत हैं। इनमें से यदि मैं किसी से भेंट करूँ तो केवल हरि-यशोगान ही

करूँगा। (अभिप्राय यह है कि मैं किसी सम्प्रदाय से सम्बन्धित नहीं हूँ। जिससे भी मिलूँगा उससे केवल हरि-चर्चा ही करूँगा।) ॥ ३ ॥ काग़ज़ और नमक घी के संग रहने के कारण पानी से अप्रभावित रहता है, कमल पानी में रहकर अप्रभावित होता है; वैसे ही गुरु नानक कहते हैं, भक्त सबके सम्पर्क में आते हैं (किन्तु पानी में कमल के समान ही रहते हैं), यमदूत भी उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकता ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ रामकली महला १ ॥ सुणि माछिंद्रा नानकु बोलै। वसगति पंच करे नह डोलै। ऐसी जुगति जोग कउ पाले। आपि तरै सगले कुल तारे ॥ १ ॥ सो अउधूतु ऐसी मति पावै। अहिनिसि सुंनि समाधि समावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भिखिआ भाइ भगति भै चलै। होवै सु त्रिपति संतोखि अमुलै। धिआन रूपि होइ आसणु पावै। सचि नामि ताड़ी चितु लावै ॥२॥ नानकु बोलै अंम्रित बाणी। सुणि माछिंद्रा अउधू नीसाणी। आसा माहि निरासु वलाए। निहचउ नानक करते पाए ॥ ३ ॥ प्रणवति नानकु अगमु सुणाए। गुर चेले की संधि मिलाए। दीखिआ दारू भोजनु खाइ। छिअ दरसन की सोझी पाइ ॥ ४ ॥ ५ ॥

हे मच्छन्दरनाथ (मत्स्येन्द्रनाथ)! सुनो, नानक तुम्हें बताता है (कि यथार्थ में योगी कौन है), जो काम-क्रोध आदि पाँचों इन्द्रियों को वश में कर लेता है और स्थिर जीवन जीता है; ऐसी युक्ति द्वारा जो योग का सही पालन करता है, वह स्वयं मुक्त होता है और अपने वंश का भी उद्धार कर लेता है ॥ १ ॥ विरक्त साधु वही है जो दिन-रात निर्गुण ब्रह्म में समाये रहने का विवेक प्राप्त कर लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भक्ति-भाव और प्रभु का भय ही उसकी भिक्षा होती है और वह अमूल्य सन्तोष और परमतृप्ति में जीता है। उसका आसन हरि में अटूट ध्यान होता है और वह हृदय में सत्-नाम की समाधि लगाता है ॥ २ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि उसके वचन अमृत-वाणी के समान होते हैं। अवधूत की वास्तविक निशानी यही होती है कि वह राग में भी विरागी रहकर जीवन बिताता है— निश्चय ही वह परमात्मा को पा लेता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक रहस्य की बात कहते हैं कि जो आत्मा और परमात्मा को मिला सकता है, गुरु के उपदेश को अपनी सब रोगों की एक ही औषध बना लेता है, वह संसार के सब (छः) वेशधारियों की असलियत को समझ लेता है। (ये छः वेशधारी हैं— जोगी, जंगम, संन्यासी, बोधी, सरेवड़े और वैरागी) ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ रामकली महला १ ॥ हम डोलत बेड़ी पाप भरी है पवणु लगै मतु जाई। सनमुख सिध भेटण कउ आए निहचउ देहि वडिआई ॥ १ ॥ गुर तारि तारणहारिआ। देहि भगति पूरन अविनासी हउ तुझ कउ बलिहारिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिध साधिक जोगी अरु जंगम एकु सिधु जिनी धिआइआ। परसत पैर सिझत ते सुआमी अखरु जिन कउ आइआ ॥ २ ॥ जप तप संजम करम न जाना नामु जपी प्रभ तेरा। गुरु परमेसरु नानक भेटिओ साचै सबदि निबेरा ॥ ३ ॥ ६ ॥

हमारी जीवन-नौका पापों से भरी है, हवा लगने से डोल रही है और कहीं डूब न जाये। हम, हे प्रभु, तुम्हें मिलने के लिए आये हैं, कृपा करके हमें मिलन का सम्मान दो ॥ १ ॥ हे मेरे सतगुरु, तुम तरन-तारन हो, मेरा भी कल्याण करो। हे अविनाशी प्रभु, मुझे अपनी भक्ति दान दो, मैं तुम पर क़ुर्बान हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिद्ध, साधक, योगी और जंगम वास्तव में वे ही हैं, जिन्होंने सिद्धपुरुष परमात्मा को जपा है। वे प्रभु के चरण छूकर सफल हो गये हैं, क्योंकि उन्हें गुरु का अक्षर (उपदेश) प्राप्त हुआ है ॥ २ ॥ हे परमात्मा, मुझे जप-तप-संजमादि का कोई ज्ञान नही, मैं तो केवल तुम्हारा नाम जपता हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु की सहायता से परमात्मा से भेंट हो जाने पर सब सांसारिक झंझटों का अन्त हो जाता है ॥ ३ ॥ ६ ॥

॥ रामकली महला १ ॥ सुरती सुरति रलाईऐ एतु। तनु करि तुलहा लंघहि जेतु। अंतरि भाहि तिसै तू रखु। अहिनिसि दीवा बलै अथकु ॥ १ ॥ ऐसा दीवा नीरि तराइ। जितु दीवै सभ सोझी पाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हछी मिटी सोझी होइ। ता का कीआ मानै सोइ। करणी ते करि चकहु ढालि। ऐथै ओथै निबही नालि ॥ २ ॥ आपे नदरि करे जा सोइ। गुरमुखि विरला बूझै कोइ। तितु घटि दीवा निहचलु होइ। पाणी मरै न बुझाइआ जाइ। ऐसा दीवा नीरि तराइ ॥ ३ ॥ डोलै वाउ न वडा होइ। जापै जिउ सिंघासणि लोइ। खत्री ब्राहमणु सूदु कि वैसु। निरति न पाईआ गणी सहंस। ऐसा दीवा बाले कोइ। नानक सो पारंगति होइ ॥ ४ ॥ ७ ॥

अपनी आत्मा को परमात्मा में इस तरह से मिला दो कि शरीर ही तुम्हारी नौका बन जाए और तुम पार उतर सको। तुम्हारे भीतर तृष्णा

की अग्नि विद्यमान है, उसका निरोध करो ताकि दिन-रात मन में प्रकाश बना रहे ॥ १ ॥ ज्ञान का दीपक हृदय के जल पर तैरा दीजिये, ताकि उसके आलोक में सब कुछ सूझ सके ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उत्तम विचार ज्ञान के उस दीपक की मिट्टी बनें, क्योंकि ऐसी मिट्टी का बना दीपक परमात्मा को स्वीकार है। ऐसी करनी अर्थात् ऐसे कर्म करो कि जिनका प्रभाव इहलोक तथा परलोक में सदा बना रहे ॥ २ ॥ जब वह प्रभु कृपा करता है तो कोई विरला गुरमुख ही समझ पाता है। उसके हृदय में जलनेवाला ज्ञान-दीपक स्थिर होता है, पानी में डूबता नहीं, न ही बुझाया जा सकता है। हृदय रूपी नीर पर ऐसा ही दीपक तैराया जा सकता है ॥ ३ ॥ उसे हवा नहीं डुला सकती अर्थात् संसार की कठिनाइयों में वह डोलता नहीं, और न ही कभी बुझता है। इस दीपक की रोशनी में परमात्मा हृदय-सिंहासन पर विराजमान दीख पड़ता है। क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य और शूद्र सब मिलकर भी सहस्रों गिनतियाँ करें, तो भी इस दीपक का सही मूल्यांकन नहीं कर सकते। ऐसा दीपक अपने मन में जो जला लेता है, गुरु नानक कहते हैं कि वह मुक्त हो जाता है ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ रामकली महला १ ॥ तुधनो निवणु मंनणु तेरा नाउ। साचु भेट बैसण कउ थाउ। सतु संतोखु होवै अरदासि। ता सुणि सदि बहाले पासि ॥ १ ॥ नानक बिरथा कोइ न होइ। ऐसी दरगह साचा सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रापति पोता करमु पसाउ। तू देवहि मंगत जन चाउ। भाडै भाउ पवै तितु आइ। धुरि तै छोडी कीमति पाइ ॥ २ ॥ जिनि किछु कीआ सो किछु करै। अपनी कीमति आपै धरै। गुरमुखि परगटु होआ हरिराइ। ना को आवै ना को जाइ ॥ ३ ॥ लोकु धिकारु कहै मंगत जन मागत मानु न पाइआ। सह कीआ गला दर कीआ बाता तै ता कहणु कहाइआ ॥ ४ ॥ ८ ॥

हे प्रभु, तुम्हारी वन्दना करना और तुम्हारा नाम जपना ही तुम्हें भाता है, सत्य की भेंट अर्थात् सत्य और सन्तोष की प्रार्थना ही तुम्हें स्वीकार होती है, तभी जीव को सही अवलम्ब मिल पाता है। जीव की ऐसी प्रार्थनाएँ सुनकर ही तुम उसे सहारा देते हो ॥ १ ॥ वह सच्चा प्रभु ऐसा है और उसका दरबार भी ऐसा है कि किसी भी जीव को बिल्कुल निकम्मा नहीं समझा जाता, उसका थोड़े से थोड़ा परिश्रम भी स्वीकार किया जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (परमात्मा के सम्मुख प्रार्थना करने से) उसकी कृपा और अनेक समृद्धियों का खज़ाना प्राप्त होता है। मैं भिखारी हूँ, मेरे मन में यही चाव है कि परमात्मा मुझे दे और मैं उससे

लूँ। इससे मेरे हृदय रूपी बर्तन में प्रेम और भक्ति का रस भर जाता है; यही प्रभु की प्राप्ति की असली क़ीमत है, जो युग-युग से डाली जा रही है ॥ २ ॥ जो प्रभु-भजन करते हैं, वे ही उसकी निकटता को पाते हैं; परमात्मा स्वयं उनके हृदय में अपनी क़ीमत निश्चित करता है अर्थात् उनके मन में प्रेमभक्ति पैदा करता है। गुरु के उपदेशों पर आचरण करने से परमात्मा प्रकट होता है और जिस पर वह प्रकट होता है, उसका आवागमन मिट जाता है ॥ ३ ॥ (मैंने तुमसे भिक्षा माँगी है) किन्तु लोग भिक्षा माँगने पर दुत्कारते हैं और कहते हैं कि माँगने से प्रतिष्ठा घटती है; किन्तु मैं कहता हूँ कि ये आध्यात्मिक बातें तुम्हींने मुझसे कहलवायी है, इसलिए मैं तिरस्कार का पात्र नहीं हो सकता ॥ ४ ॥ ८ ॥

॥ रामकली महला १ ॥ सागर महि बूंद बूंद महि सागरु कवणु बुझै बिधि जाणै। उतभुज चलत आपि करि चीनै आपे ततु पछाणै ॥ १ ॥ ऐसा गिआनु बीचारै कोई। तिसते मुकति परमगति होई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दिन महि रैणि रैणि महि दिनीअरु उसन सीत बिधि सोई। ताकी गति मिति अवरु न जाणै गुर बिनु समझ न होई ॥ २ ॥ पुरख महि नारि नारि महि पुरखा बूझहु ब्रहम गिआनी। धुनि महि धिआनु धिआन महि जानिआ गुरमुखि अकथ कहानी ॥ ३ ॥ मन महि जोति जोति महि मनूआ पंच मिले गुर भाई। नानक तिन कै सद बलिहारी जिन एक सबदि लिव लाई ॥ ४ ॥ ९ ॥

(इस पद में गुरुजी ने अंश और अंशी में अभेद दर्शाया है और यह अंशांशी भाव की दार्शनिकता का द्योतक पद है।) सागर में बूँद और बूँद में सागर होने की रहस्यात्मक कथा की जानकारी उसे ही सम्भव है जो जीवन-युक्ति को पहचानता है। उद्भिज आदि रचना वह स्वयं करता है और खुद ही उसका भेद भी जानता है ॥ १ ॥ ऐसे उत्तम ज्ञान की सूझ जिस जीव को हो जाती है, वह परमगति मोक्ष को प्राप्त करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दिन, जो प्रकाश का स्वरूप है, उसमें भी अँधेरे का अंश होता है और रात में दिन के आलोक का अंश मौजूद होता है, किन्तु उष्ण-शीत की अवस्था बराबर बनी रहती है। इन तथ्यों की गति को केवल वही समझ सकता है, जिसे गुरु का सम्पर्क प्राप्त होता है, अन्य कोई इस रहस्य को नहीं जान सकता ॥ २ ॥ पुरुष में नारी की उपस्थिति तथा नारी में पुरुष की विद्यमानता को कोई ब्रह्मज्ञानी ही समझ सकता है (पुरुष के वीर्य से नारी की उत्पत्ति और नारी के उदर से पुरुष का जन्म अभिप्रेत है)। अनाहत नाद के श्रवण से जीव का ध्यान एकाग्र होता है

और उसी एकाग्रता में कोई गुरमुख इस रहस्यात्मक अनिर्वचनीय कथा को समझ सकता है ॥ ३ ॥ प्रभु की ज्योति मन में पहले से विद्यमान है, उसी ज्योति में पाँचों ज्ञानेन्द्रियों को एकाग्र कर लीन कर देना है। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव अपने मन को इस प्रकार परम-ज्योति में रत रखते हैं, उन पर वे क़ुर्बान हैं ॥ ४ ॥ ९ ॥

॥ रामकली महला १ ॥ जा हरि प्रभि किरपा धारी। ता हउमै विचहु मारी। सो सेवकि राम पिआरी। जो गुरसबदी बीचारी ॥१॥ सो हरि जनु हरि प्रभ भावै। अहिनिसि भगति करे दिनु राती लाज छोडि हरि के गुण गावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धुनि वाजे अनहद घोरा। मनु मानिआ हरि रसि मोरा। गुर पूरै सचु समाइआ। गुरु आदि पुरखु हरि पाइआ ॥ २ ॥ सभि नाद बेद गुरबाणी। मनु राता सारिग पाणी। तह तीरथ वरत तप सारे। गुर मिलिआ हरि निसतारे ॥ ३ ॥ जह आपु गइआ भउ भागा। गुर चरणी सेवकु लागा। गुरि सतगुरि भरमु चुकाइआ। कहु नानक सबदि मिलाइआ ॥ ४ ॥ १० ॥

यदि परमात्मा की कृपा हो जाए तो मन का अहंकार नष्ट हो जाता है और प्रभु का सेवक गुरु के शब्दों में विश्वास लाने के कारण प्रभु को प्रिय लगने लगता है ॥ १ ॥ जो सेवक दुनिया की लाज-शर्म छोड़कर रात-दिन प्रभु-भक्ति में लीन रहता है, वही परमात्मा को प्रिय होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शब्द की ध्वनि उठाने से अनाहत ध्वनि गूँज उठी और मेरा मन हरि-रस में भीग गया। सतगुरु की कृपा से मन पूर्णसत्पुरुष परमात्मा में समा गया ॥ २ ॥ मेरे लिए गुरुवाणी ही नाद है, गुरुवाणी ही वेद है, मेरा मन परमात्मा में रचा हुआ है; मेरे तीर्थ, व्रत, तप सभी वही है; मुझे गुरु मिल गया है जिससे परमात्मा ने मेरा उद्धार कर दिया है ॥ ३ ॥ मुझमें जब अहंकार नष्ट हुआ तो मेरा सब भय अपने आप दूर हो गया। मैं गुरु के चरणों की शरण में आ गया! सतगुरु ने मेरे सब भ्रमों को नाश कर दिया और मैं शब्द-ब्रह्म में लीन हो गया ॥ ४ ॥ १० ॥

॥ रामकली महला १ ॥ छादनु भोजनु मागतु भागै। खुधिआ दुसट जलै दुखु आगै। गुरमति नही लीनी दुरमति पति खोई। गुरमति भगति पावै जनु कोई ॥ १ ॥ जोगी जुगति

सहज घरि वासै । एक द्रिसटि एको करि देखिआ भीखिआ भाइ सबदि त्रिपतासै ।। १ ।। रहाउ ।। पंच बैल गडीआ देह धारी । रामकला निबहै पति सारी । धर तूटी गाडो सिर भारि । लकरी बिखरि जरी मंझ भारि ।। २ ।। गुर का सबदु वीचारि जोगी । दुखु सुखु सम करणा सोग बिओगी । भुगति नामु गुर सबदि बीचारी । असथिरु कंधु जपै निरंकारी ।। ३ ।। सहज जगोटा बंधन ते छूटा । कामु क्रोधु गुर सबदी लूटा । मन महि मुंद्रा हरि गुर सरणा । नानक राम भगति जन तरणा ।। ४ ।। ११ ।।

योगी लोग वस्त्र, भोजन आदि माँगने के लिए भागे फिरते हैं। यहाँ पेट की आग में जलते हैं और आगे जन्म-मरण के दुःख भोगते हैं। उन्हें गुरु का उपदेश प्राप्त नहीं, वे कुमति में लिप्त रहकर अपना सम्मान खो बैठते हैं। कोई सच्चा सेवक ही गुरु के उपदेश से सच्ची भक्ति-भावना को प्राप्त कर सकता है ।। १ ।। परमात्मा में लीन योगी की वास्तविक युक्ति सहजावस्था में रहने की है। वह परमात्मा को सबमें एक दृष्टि से देखता है और उसकी भिक्षा गुरु-शब्द और प्रेम है, जिनसे उसे तृप्ति मिलती है ।। १ ।। रहाउ ।। पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ बैल की तरह इस शरीर की गाड़ी को खींचती हैं, किन्तु इस लीला का आधार राम की शक्ति है जो आत्मा-रूप में शरीर के भीतर विराजती है। यदि राम के सहारे का धुरा टूट जाए तो शरीर रूपी गाड़ी गिर जाती है। सिर के बल गिरकर लकड़ियाँ बिखर जाती हैं और जलकर राख हो जाती हैं ।। २ ।। इसलिए, ऐ योगी, तू गुरु के वचनों पर आचरण कर, दुःख-सुख, संयोग-वियोग को समान रूप में स्वीकार कर। गुरु के शब्दों द्वारा प्राप्त नाम रूपी भोजन को ग्रहण कर, जिससे तेरा जीवन स्थिर होकर निरंकार का नाम जपेगा ।। ३ ।। ऐ योगी, तू सहज का लँगोट धारण कर, जिससे तू काम-क्रोधादि बन्धनों से मुक्त हो जाएगा। गुरु की शरण लेकर मन को हरि-नाम में रत करना ही मुद्रा को धारण करने के समान है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु के सेवकों का उद्धार केवल राम-भक्ति से ही सम्भव है ।। ४ ।। ११ ।।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।।

रामकली महला ३ घरु १ ।। सतजुगि सचु कहै सभु कोई । घरि घरि भगति गुरमुखि होई । सतजुगि धरमु पैर

है चारि । गुरमुखि बूझै को बीचारि ॥ १ ॥ जुग चारे नामि वडिआई होई । जि नामि लागै सो मुकति होवै गुर बिनु नामु न पावै कोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रेतै इक कल कीनी दूरि । पाखंडु वरतिआ हरि जाणनि दूरि । गुरमुखि बूझै सोझी होई । अंतरि नामु वसै सुखु होई ॥ २ ॥ दुआपुरि दूजै दुबिधा होइ । भरमि भुलाने जाणहि दोइ । दुआपुरि धरमि दुइ पैर रखाए । गुरमुखि होवै त नामु द्रिड़ाए ॥ ३ ॥ कलजुगि धरम कला इक रहाए । इक पैरि चलै माइआ मोहु वधाए । माइआ मोहु अति गुबारु । सतगुरु भेटै नामि उधारु ॥ ४ ॥ सभ जुग महि साचा एको सोई । सभ महि सचु दूजा नही कोई । साची कीरति सचु सुखु होई । गुरमुखि नामु वखाणै कोई ॥ ५ ॥ सभ जुग महि नामु ऊतमु होई । गुरमुखि विरला बूझै कोई । हरि नामु धिआए भगतु जनु सोई । नानक जुगि जुगि नामि वडिआई होई ॥ ६ ॥ १ ॥

(इस पद में गुरुजी ने चारों युगों में प्रभु-प्राप्ति की साधना के स्वरूप की चर्चा की है।) सतयुग में सब ओर सत्य का वातावरण होता है। घर-घर में गुरु-कृपा से सब लोग भक्ति करते हैं। धर्म के चारों पैर सतयुग में मौजूद होते हैं और गुरु के द्वारा लोग ज्ञान को प्राप्त कर लेते हैं ॥ १ ॥ चारों युगों में नाम की प्रतिष्ठा होती है; जो जीव हरि-नाम का सहारा लेते हैं वे मुक्ति को प्राप्त होते हैं, और गुरु के बिना किसी को नाम की प्राप्ति नहीं होती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रेतायुग में धर्म की एक कल (शक्ति) दूर हो जाती है, जिसके कारण हरि का ज्ञान छोड़कर पाखण्ड का प्रसार होने लगता है। किन्तु जो गुरु की शरण लेते हैं, उन्हें यथार्थ ज्ञान प्राप्त होता है। उनके मन में हरि-नाम बसने के कारण वे परमसुखी होते हैं ॥ २ ॥ द्वापर में द्वैत-भाव के कारण दुबिधा बढ़ जाती है, आत्मा और परमात्मा के सही रूप को जानने का भ्रम बना रहता है। द्वापर में धर्म के केवल दो ही पग रह जाते हैं, किन्तु यदि जीव गुरु की शरण ले तो वह उसे नाम-दान दे सकता है ॥ ३ ॥ कलियुग में धर्म की एक ही शक्ति रह जाती है और वह माया-मोह के बढ़ने से एक ही पैर पर चलता है। माया-मोह के कारण चारों ओर अज्ञान का अन्धकार छा जाता है; किन्तु जो लोग सतिगुरु की शरण लेते हैं, हरि-नाम के कारण उनका उद्धार हो जाता है ॥ ४ ॥ सब युगों में सच्चा स्वामी परमात्मा व्याप्त है। उसी का सत्य सबमें विद्यमान है, दूसरा कोई नहीं। उस परमात्मा की कीर्ति सच्ची और सुखदायी है, किन्तु उसी को उपलब्ध होती है जो गुरु के सहारे नाम जपता

है ।। ५ ।। सतगुरु में हरि-नाम की श्रेष्ठता नियत होती है, इस सत्य को कोई विरल महान्-आत्मा ही समझ सकता है। प्रभु के सेवक-भक्त, जो हरि-नाम का ध्यान करते हैं, गुरु नानक के मतानुसार युग-युग तक उनकी प्रतिष्ठा अमर रहती है। (पद में गुरुजी ने चारों युगों की स्थितियों में तो परिवर्तन होते दिखाया है, किन्तु नाम का आधार हमेशा बना रहता है।) ।। ६ ।। १ ।।

रामकली महला ४ घरु १   १ ओं सतिगुर प्रसादि ।।

जेवड भाग होवहि वडभागी ता हरि हरि नामु धिआवै। नामु जपत नामे सुखु पावै हरि नामे नामि समावै ।। १ ।। गुरमुखि भगति करहु सद प्राणी। हिरदै प्रगासु होवै लिव लागै गुरमति हरि हरि नामि समाणी ।। १ ।। रहाउ ।। हीरा रतन जवेहर माणक बहु सागर भरपूरु कीआ। जिसु वडभागु होवै वड मसतकि तिनि गुरमति कढि कढि लीआ ।। २ ।। रतनु जवेहरु लालु हरि नामा गुरि काढि तली दिखलाइआ। भागहीण मनमुखि नही लीआ त्रिण ओलै लाखु छपाइआ ।। ३ ।। मसतकि भागु होवै धुरि लिखिआ ता सतगुरु सेवा लाए। नानक रतन जवेहर पावै धनु धनु गुरमति हरि पाए ।। ४ ।। १ ।।

यदि किसी जीव का भाग्य उज्ज्वल हो, तभी वह हरि-नाम का जाप कर सकता है। नाम जपने से उसे सुख की प्राप्ति होती है और वह हरि-नाम में ही समा जाता है ।। १ ।। ऐ प्राणियो, गुरु की शरण लेकर, परमात्मा की भक्ति करो; तुम्हारे हृदय में ज्ञान का प्रकाश होगा, परमात्मा से लग्न लगेगी और गुरु के उपदेशों के द्वारा तुम प्रभु-नाम में ही विलीन हो जाओगे ।। १ ।। रहाउ ।। हरि का नाम सबके भीतर हीरे-जवाहिरात की तरह है और शरीर-सरोवर उनसे भरा पड़ा है। किन्तु जिसके माथे सौभाग्य की रेखा होगी, वही गुरु-उपदेश द्वारा उसे निकाल लेने में समर्थ होगा ।। २ ।। हरि-नाम रूपी रत्न, जवाहिर आदि शरीर से ही गुरु की सहायता से निकाले जाते हैं। ये लाखों का ख़ज़ाना तृण की ओट में पड़ा है, किन्तु मन के संकेतों पर चलनेवाला भाग्यहीन जीव उसे प्राप्त नहीं कर पाता ।। ३ ।। यदि आरम्भ से ही प्रभु ने मस्तक में भाग्य लिख दिया हो, तभी जीव सतगुरु की सेवा में लीन होता है। गुरु नानक कहते हैं, तब गुरु की सेवा में लगकर जीव शरीर के भीतर से ही हरि रूपी रत्न, जवाहिर आदि को पा लेता है ।। ४ ।। १ ।।

॥ रामकली महला ४ ॥ राम जना मिलि भइआ अनंदा हरि नीकी कथा सुनाइ । दुरमति मैलु गई सभ नीकलि सतसंगति मिलि बुधि पाइ ॥ १ ॥ राम जन गुरमति रामु बोलाइ । जो जो सुणै कहै सो मुकता राम जपत सोहाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जे वड भाग होवहि मुखि मसतकि हरि राम जना भेटाइ । दरसनु संत देहु करि किरपा सभु दालदु दुखु लहि जाइ ॥ २ ॥ हरि के लोग राम जन नीके भागहीण न सुखाइ । जिउ जिउ राम कहहि जन ऊचे नर निंदक डंसु लगाइ ॥ ३ ॥ ध्रिगु ध्रिगु नर निंदक जिन जन नही भाए हरि के सखा सखाइ । से हरि के चोर वेमुख मुख काले जिन गुर की पैज न भाइ ॥ ४ ॥ दइआ दइआ करि राखहु हरि जीउ हम दीन तेरी सरणाइ । हम बारिक तुम पिता प्रभ मेरे जन नानक बखसि मिलाइ ॥ ५ ॥ २ ॥

राम के प्रिय सेवकों की संगति में (सत्संगति में) परमानन्द प्राप्त होता है, क्योंकि वहाँ परमात्मा की उत्तम वार्ता कही, सुनी जाती है। इससे दुर्बुद्धि रूपी मलिनता धुल जाती है और सत्संगति में बैठकर जीव का विवेक प्रखर हो उठता है ॥ १ ॥ परमात्मा के सेवक गुरु के उपदेशानुसार ही हरि का नाम जपते हैं। जो-जो उसका नाम कहता, सुनता है, वह मुक्त हो जाता है, इहलोक में भी उसकी शोभा बढ़ती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि जीव के मुँह-माथे सौभाग्य हो तो हरि के भक्तजनों से उसका मेल हो जाता है। कृपापूर्वक उसे सन्तों के दर्शन प्राप्त होते हैं और उसका सम्पूर्ण दारिद्र्य दूर हो जाता है ॥ २ ॥ राम-भक्त लोग उत्तम होते हैं, स्वयं हरि को प्रिय होते हैं, किन्तु भाग्यहीन जीवों के लिए वे सुखद नहीं होते। ज्यों-ज्यों जीव परमात्मा का नाम जपते हैं, ऊँचे उठते चले जाते हैं, किन्तु निन्दक लोगों को इससे डंक लगता है अर्थात् पीड़ा पहुँचती है ॥ ३ ॥ उन निन्दक लोगों को धिक्कार है, जिन्हें हरिजन प्रिय नहीं लगते और न ही उनके साथी उन्हें भाते हैं। जिन्हें गुरु की प्रतिष्ठा अच्छी नहीं लगती, वे हरि के चोर होते हैं और उनका मुख काला होता है अर्थात् हर जगह उनका तिरस्कार होता है ॥ ४ ॥ हे मेरे प्रभु, हम तुम्हारी शरण में आए हैं, तुम दयालु हो, दया करके हमारी रक्षा करो। हम बालक हैं, तुम हमारे पिता हो; इसलिए हमारे अपराध क्षमा करके हमें अपनी शरण में लो ॥ ५ ॥ २ ॥

॥ रामकली महला ४ ॥ हरि के सखा साध जन नीके तिन ऊपरि हाथु वतावै । गुरमुखि साध सेई प्रभ भाए करि किरपा आपि मिलावै ॥ १ ॥ राम मोकउ हरि जन मेलि मनि

भावै । अमिउ अमिउ हरि रसु है मीठा मिलि संत जना मुखि पावै ।। १ ।। रहाउ ।। हरि के लोग राम जन ऊतम मिलि ऊतम पदवी पावै । हम होवत चेरी दास दासन की मेरा ठाकुरु खुसी करावै ।। २ ।। सेवक जन सेवहि से वडभागी रिद मनि तनि प्रीति लगावै । बिनु प्रीती करहि बहु बाता कूड़ु बोलि कूड़ो फलु पावै ।।३।। मोकउ धारि क्रिपा जगजीवन दाते हरि संत पगी ले पावै । हउ काटउ काटि बाढि सिरु राखउ जितु नानक संतु चड़ि आवै ।। ४ ।। ३ ।।

सन्तजन प्रभु के सखा होते हैं, वह उन पर अपना हाथ रखता है अर्थात् स्वयं उनकी रक्षा करता है। गुरु-उपदेशानुसार आचरण करनेवाले साधुजन को परमात्मा स्वयं कृपा करके अपने में विलीन कर लेता है ।। १ ।। हे प्रभु, मुझे हरि-सेवकों की संगति प्रदान करो, यही मुझे भाती है। हरि-रस अमृत के समान है, सन्तजनों की संगति में ही उसका पान सम्भव है ।। १ ।। रहाउ ।। सांसारिक जीव जब हरि के प्रिय जनों के सम्पर्क में आते हैं, तो वे भी उत्तम पदवी को प्राप्त होते हैं। मैं तो हरि के दासों की भी दासी होने को तत्पर हूँ, यदि उनकी कृपा से मेरा स्वामी प्रभु मुझ पर प्रसन्न हो ।। २ ।। जो प्रभु के सेवक तन-मन से उसी की प्रीति में लीन रहते हैं वे सौभाग्यशाली हैं, किन्तु सच्चे प्रेम के बिना जो लोग खाली बातें बनाते हैं उनकी बातें मिथ्या होती हैं और उसको मिथ्याफल की ही प्राप्ति होती है ।। ३ ।। हे जगजीवन-दाता, मुझ पर कृपा करके मुझे सन्तों के चरणों में स्थान दो। मैं अपना सिर काटकर अपने गुरु-सन्त के रास्ते पर डाल दूंगा, ताकि वह उस पर चरण धरकर निकल सके ।। ४ ।। ३ ।।

।। रामकली महला ४ ।। जेवड भाग होवहि वड मेरे जन मिलदिआ ढिल न लाईऐ । हरि जन अंम्रित कुंट सर नीके वडभागी तितु नावाईऐ ।।१।। राम मोकउ हरि जन कारै लाईऐ । हउ पाणी पखा पीसउ संत आगै पग मलि मलि धूरि मुखि लाईऐ ।। १ ।। रहाउ ।। हरि जन वडे वडे वड ऊचे जो सतगुर मेलि मिलाईऐ । सतगुर जेवडु अवरु न कोई मिलि सतगुर पुरख धिआईऐ ।। २ ।। सतगुर सरणि परे तिन पाइआ मेरे ठाकुर लाज रखाईऐ । इकि अपणै सुआइ आइ बहहि गुर आगै जिउ बगुल समाधि लगाईऐ ।। ३ ।। बगुला काग नीच की संगति जाइ

करंग बिखू मुखि लाईऐ । नानक मेलि मेलि प्रभ संगति मिलि संगति हंसु कराईऐ ॥ ४ ॥ ४ ॥

यदि भाग्य उत्तम हो तो परमात्मा के मिलने में कोई ढील नहीं रह जाती। हरि-सेवक अमृत के सरोवर हैं, कोई सौभाग्यपूर्वक ही उनमें स्नान कर पाता है ॥ १ ॥ हे परमात्मा, मुझे हरिजनों की सेवा प्रदान करो। मैं सन्तजनों के लिए पानी भरूँ, पंखा फेरूँ, और उनकी चक्की चलाते हुए भी उनके चरणों को मल-मल करके धोऊँ और चरणामृत ग्रहण करूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि के सेवक ऊँचे और महान् होते हैं, उन्हीं की कृपा से सतगुरु से मिलाप होता है। सतगुरु के समान और कोई नहीं, क्योंकि सतगुरु की को मिलकर ही जीव परमात्मा को जप सकता है ॥ २ ॥ जो जीव सतगुरु की शरण लेते हैं, वे प्रभु को पा लेते हैं, स्वयं परमात्मा उनकी लाज रखता है। जो लोग अपने स्वार्थ के लिए गुरु के आगे बैठते हैं, वे बगुले की तरह समाधि लगाते हैं ॥ ३ ॥ बगुले और कौए जैसे नीचों की संगति में जाकर मुर्दार या विष्ठा को मुँह लगाते हैं अर्थात् उनकी संगति में वे दुष्कर्म कमाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु, मुझे ऐसे सन्तहंसों की संगति प्रदान करो जो हमें तुम्हारे साथ मिला देने में समर्थ हों ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ रामकली महला ४ ॥ सतगुर दइआ करहु हरि मेलहु मेरे प्रीतम प्राण हरि राइआ। हम चेरी होइ लगह गुर चरणी जिनि हरि प्रभ मारगु पंथु दिखाइआ ॥ १ ॥ राम मै हरि हरि नामु मनि भाइआ। मै हरि बिनु अवरु न कोई बेली मेरा पिता माता हरि सखाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे इकु खिनु प्रान न रहहि बिनु प्रीतम बिनु देखे मरहि मेरी माइआ। धनु धनु वडभाग गुर सरणी आए हरि गुर मिलि दरसनु पाइआ ॥ २ ॥ मै अवरु न कोई सूझै बूझै मनि हरि जपु जपउ जपाइआ। नामहीण फिरहि से नकटे तिन घसि घसि नक वढाइआ ॥ ३ ॥ मोकउ जग जीवन जीवालि लै सुआमी रिद अंतरि नामु वसाइआ। नानक गुरू गुरू है पूरा मिलि सतिगुर नामु धिआइआ ॥४॥५॥

हे मेरे सतगुरु, दया करके मुझे मेरे प्राण-प्रिय-प्रियतम परमात्मा से मिला दो। हम दासी होकर गुरु के चरणों में पड़ी हैं; गुरु ही हमें परमात्मा तक पहुँचने का राह बता सकता है ॥ १ ॥ हे मेरे राम, हरि का नाम मुझे बहुत प्रिय लगता है; हरि के बिना मेरा कोई साथी, माता, पिता या सखा नहीं अर्थात् हरि ही मेरे माता-पिता और सखा-समान हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मेरी माता, अपने प्रियतम को देखे बिना मैं एक

क्षण के लिए भी नहीं जी सकती। वे सौभाग्यशाली जीव धन्य हैं जो गुरु की शरण में आकर हरि के दर्शन प्राप्त कर लेते हैं। (यहाँ गुरुजी बालिका के रूप में आह्वान कर रहे हैं।) ॥ २ ॥ मुझे और कोई नहीं सूझता, मेरा मन केवल तुम्हें जानता और केवल तुम्हारा ही नाम जपता है। नामहीन लोग अपमानित होते हैं और तिरस्कारपूर्वक जगह-जगह नाक घिसते हैं ॥ ३ ॥ हे जगज्जीवन परमात्मा, मेरे हृदय में नाम को बसाकर मुझे जिला लो। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव सच्चे गुरु को प्राप्त कर लेता है, वही उसकी सहायता से प्रभु-नाम को पाता है ॥४॥५॥

॥ रामकली महला ४ ॥ सतगुरु दाता वडा वड पुरखु है जितु मिलिऐ हरि उरधारे। जीअ दानु गुरि पूरैं दीआ हरि अंम्रित नामु समारे ॥ १ ॥ राम गुरि हरि हरि नामु कंठि धारे। गुरमुखि कथा सुणी मनि भाई धनु धनु वडभाग हमारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोटि कोटि तेतीस धिआवहि ता का अंतु न पावहि पारे। हिरदै काम कामनी मागहि रिधि मागहि हाथु पसारे ॥२॥ हरि जसु जपि जपु वडा वडेरा गुरमुखि रखउ उरिधारे। जेवडभाग होवहि ता जपीऐ हरि भउजलु पारि उतारे ॥ ३ ॥ हरि जन निकटि निकटि हरि जन है हरि राखै कंठि जन धारे। नानक पिता माता है हरि प्रभु हम बारिक हरि प्रतिपारे ॥ ४ ॥ ६ ॥

सतगुरु दाता है, महान् पुरुष है, जिसके मिलने से परमात्मा जीव के हृदय में आ बसता है। मुझे अपने गुरु से आत्मिक जीवन प्राप्त हुआ है और मैं हरि के नामामृत का सदा सिमरन करने लगा हूँ ॥ १ ॥ राम ही स्वयं गुरु है और उसी ने कृपा कर मेरे हृदय में नाम को स्थिर कर दिया है। गुरु के मुख से मैंने परमात्मा की रहस्य-कथा सुनी है, यह मेरा अहोभाग्य ही है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेंतीस कोटि देवता उसका ध्यान करते हैं, किन्तु कोई इसका रहस्य नहीं पा सकता। वे सब मन से काम के वश होने के कारण स्त्री की संगति और हाथ खोलकर धन-दौलत माँगते हैं ॥ २ ॥ हरि का यश उत्तमोत्तम है और गुरु की कृपा से ही उसे हृदय में धारण किया जा सकता है। यदि जीव का भाग्य उत्तम हो, तभी वह हरि-नाम जपता है और भवसागर से पार उतर सकता है ॥ ३ ॥ परमात्मा अपने सेवकों के समीपतर है और सेवक परमात्मा के समीप हैं, परमात्मा अपने सेवकों को गले से लगाकर रखता है। गुरु नानक कहते हैं

कि हे प्रभु, तुम हमारे प्रतिपालक माता-पिता हो, हम तुम्हारे बालक हैं, हमारी रक्षा करो ॥ ४ ॥ ६ ॥

रागु रामकली महला ५ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

किरपा करहु दीन के दाते मेरा गुणु अवगणु न बीचारहु कोई । माटी का किआ धोपै सुआमी माणस की गति एही ॥१॥ मेरे मन सतिगुरु सेवि सुखु होई । जो इछहु सोई फलु पावहु फिरि दूखु न विआपै कोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काचे भाडे साजि निवाजे अंतरि जोति समाई । जैसा लिखतु लिखिआ धुरि करतै हम तैसी किरति कमाई ॥ २ ॥ मनु तनु थापि कीआ सभु अपना एहो आवण जाणा । जिनि दीआ सो चिति न आवै मोहि अंधु लपटाणा ॥ ३ ॥ जिनि कीआ सोई प्रभु जाणै हरि का महलु अपारा । भगति करी हरि के गुण गावा नानक दासु तुमारा ॥ ४ ॥ १ ॥

हे दीनों पर दया करनेवाले परमात्मा, मुझ पर कृपा करना और मेरे गुणों-अवगुणों पर कोई ध्यान न देना । मिट्टी को धोने से नीचे मिट्टी की ही दूसरी परत निकलती है, लाभ कुछ नहीं होता । यही स्थिति मनुष्य के शरीर की है, इसमें गुण हैं ही नहीं, प्रकट कहाँ से होंगे ॥ १ ॥ हे मेरे मन, सतगुरु की सेवा करने से सुख प्राप्त होता है; मनोवाञ्छित फल प्राप्त होते हैं और मनुष्य को दोबारा कोई दुःख नहीं होता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु ने शरीर रूपी कच्चे बर्तनों को बनाया है और उनके भीतर अपनी ज्योति स्थापित की है । परमात्मा ने आरम्भ से ही जो आदेश लिख दिये हैं, हम उन्हीं पर अमल करते हैं ॥ २ ॥ हमने तन और मन को अपना बनाकर रखा हुआ है, यही हमारे जन्म-मरण का कारण है । जिसने यह तन-मन दिया है, जीव उसका स्मरण नहीं करता, बलात् अज्ञानान्धकार के मोह में लिपटा रहता है ॥ ३ ॥ जिन्होंने प्रभु का नाम जपा है, वे ही परमात्मा के दरबार से परिचित होते हैं । हे हरि, नानक तुम्हारा दास है, तुम्हारी ही भक्ति और गुणगान करता है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ पवहु चरणा तलि ऊपरि आवहु ऐसी सेव कमावहु । आपस ते ऊपरि सभ जाणहु तउ दरगह

सुखु पावहु ॥ १ ॥ संतहु ऐसी कथहु कहाणी । सुर पवित्र नर देव पवित्रा खिनु बोलहु गुरमुखि बाणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परपंचु छोडि सहज घरि बैसहु झूठा कहहु न कोई । सतिगुर मिलहु नवै निधि पावहु इन बिधि ततु बिलोई ॥ २ ॥ भरमु चुकावहु गुरमुखि लिव लावहु आतमु चीनहु भाई । निकटि करि जाणहु सदा प्रभु हाजरु किसु सिउ करहु बुराई ॥३॥ सतिगुरि मिलिऐ मारगु मुकता सहजे मिले सुआमी । धनु धनु से जन जिनी कलि महि हरि पाइआ जन नानक सद कुरबानी ॥ ४ ॥ २ ॥

ऐ जीवो, प्रभु की ऐसी सेवा करो कि उसके चरणों में बिछ जाओ; इसी विनम्रता से ऊँचे उठ सकते हो। सब जीवों को अपने से उच्च समझने में ही परमात्मा के दरबार में सुख की प्राप्ति होती है ॥ १ ॥ ऐ सन्तो, ऐसी कथा-वार्ता सुनाओ कि तुम्हारे मुख से क्षण भर के लिए गुरु की वाणी सुनकर सुर, नर, देव, सब पवित्र हो जाएँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संसार की किसी चीज़ को मिथ्या मत कहो, केवल संसार के छल-कपट छोड़ दो और तीनों गुणों के ऊपर परम-पद में स्थिर हो जाओ। सतगुरु से भेंट हो जाने पर वास्तविकता को समझो और नौ-निधियों को प्राप्त करो ॥ २ ॥ हे भाई, मन के भ्रमों को दूर करो, गुरु के उपदेशों में लीन रहो और आत्म-ज्ञान प्राप्त करो। परमात्मा को सदा अपने निकट समझो और किसी प्रकार की बुराई में न पड़ो ॥ ३ ॥ सतगुरु के मिलने से मुक्ति का रास्ता सहज हो जाता है और जीव अपने प्रभु से भेंट करता है। दास नानक कहते हैं कि कलियुग में जिसने प्रभु को पा लिया, वह धन्य है, नानक उस पर क़ुर्बान हैं ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ आवत हरख न जावत दूखा नह बिआपै मन रोगनी । सदा अनंदु गुरु पूरा पाइआ तउ उतरी सगल बिओगनी ॥ १ ॥ इह बिधि है मनु जोगनी । मोह सोगु रोगु लोगु न बिआपै तह हरि हरि हरि रस भोगनी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुरग पवित्रा मिरत पवित्रा पइआल पवित्र अलोगनी । आगिआकारी सदा सुखु भुंचै जत कत पेखउ हरि गुनी ॥२॥ नह सिवसकती जलु नही पवना तह अकारु नही मेदनी । सतिगुर जोग का तहा निवासा जह अविगत नाथु अगम धनी ॥ ३ ॥ तनु मनु हरि का धनु सभु हरि का हरि के

गुण हउ किआ गनी । कहु नानक हम तुम गुरि खोईहै अंभै अंभु मिलोगनी ॥ ४ ॥ ३ ॥

(जब मन हरि में लीन हो जाता है) तो धन के आने की खुशी या नष्ट होने का शोक नहीं रह जाता अर्थात् जीव अमीरी-ग़रीबी दोनों अवस्थाओं में सन्तुष्ट रहता है। सच्चे गुरु से भेंट हो जाने पर जीव चिर-आनन्द को प्राप्त होता है और उसके सब प्रकार के वियोग दूर हो जाते हैं ॥ १ ॥ इस प्रकार जिनका मन परमात्मा से जुड़ा है उन्हें शोक, वियोग और लज्जा का कोई आभास नहीं होता, वे तो शुद्ध हरि-रस का भोग करते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसके लिए स्वर्ग, संसार और पाताल भी पवित्र होते हैं, वह अलौकिक जीवन जीता है। प्रभु का आज्ञाकारी बनकर वह सुख भोगता है और सब ओर हरि को व्याप्त देखता है ॥ २ ॥ जहाँ न जड़ता है न चेतना; न जल है न पवन; न ही सृष्टि का कोई आकार है, वहीं जिस अवस्था में सतगुरु जीव को जोड़ता है वहाँ परमात्मा प्रकट है; और देवी-देवताओं से ऊपर उठकर जीव अपने अविनाशी स्वामी साक्षात् ब्रह्म से एकाकार हो जाता है ॥ ३ ॥ मेरा तन-मन-धन सब परमात्मा को समर्पित है, हरि के गुण अनन्त हैं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु ने तेरा-मेरा भाव नष्ट करके मुझे परमात्मा में इस प्रकार विलीन कर दिया है, जैसे जल, जल में समा जाता है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ त्रैगुण रहत रहै निरारी साधिक सिध न जानै । रतन कोठड़ी अंम्रित संपूरन सतिगुर कै खजानै ॥ १ ॥ अचरजु किछु कहणु न जाई । बसतु अगोचर भाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मोलु नाही कछु करणै जोगा किआ को कहै सुणावै । कथन कहण कउ सोझी नाही जो पेखै तिसु बणि आवै ॥ २ ॥ सोई जाणै करणैहारा कीता किआ बेचारा । आपणी गति मिति आपे जाणै हरि आपे पूर भंडारा ॥ ३ ॥ ऐसा रसु अंम्रितु मनि चाखिआ त्रिपति रहे आघाई । कहु नानक मेरी आसा पूरी सतिगुर की सरणाई ॥ ४ ॥ ४ ॥

हरि-नाम रूपी वस्तु तीनों गुणों से रहित और निराली है। सिद्धि-साधक भी इसका सही मूल्यांकन नहीं कर सकते। सतगुरु के कोष में रत्नों से भरा हुआ आगार है, जिसमें नाम रूपी रत्न सर्वाधिक देदीप्यमान् हैं ॥ १ ॥ इस आश्चर्यजनक कथा का वर्णन सम्भव नहीं है, क्योंकि यह नाम रूपी वस्तु मन-इन्द्रियों की पहुँच से बाहर अलौकिक तत्त्व है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इसका सही मूल्य डालनेवाला कोई नहीं, इसलिए इसके सम्बन्ध

में कहना-सुनना सम्भव नहीं। कहने-सुनने से इसकी समझ भी नहीं पड़ती, इसका सही अनुमान तो देखने से ही लगता है। जो इसे देख लेता है, उसका मन इसी में रम जाता है ॥ २ ॥ इन तथ्यों की यथार्थ स्थिति को स्वयं कर्तार ही जानता है, जीव बेचारा कुछ नहीं जान सकता। परमात्मा अपनी गति और स्थिति को स्वयं ही जानता है और नाम से भरे हुए भण्डारों को खुद ही समझता है ॥ ३ ॥ नाम का रस अमृत-समान मधुर और तृप्तिदायक है, जो इसे चखता है वह सन्तुष्ट हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु की शरण लेने पर ही मेरी सब आशाएँ परिपूर्ण हो गयी हैं ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ अंगीकारु कीआ प्रभि अपनै बैरी सगले साधे। जिनि बैरी है इहु जगु लूटिआ ते बैरी लै बाधे ॥ १ ॥ सतिगुरु परमेसरु मेरा। अनिक राज भोग रस माणी नाउ जपी भरवासा तेरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चीति न आवसि दूजी बाता सिर ऊपरि रखवारा। बेपरवाहु रहत है सुआमी इक नाम कै आधारा ॥ २ ॥ पूरन होइ मिलिओ सुखदाई ऊन न काई बाता। ततु सारु परम पदु पाइआ छोडि न कतहू जाता ॥ ३ ॥ बरनि न साकउ जैसा तू है साचे अलख अपारा। अतुल अथाह अडोल सुआमी नानक खसमु हमारा ॥ ४ ॥ ५ ॥

मेरे प्रभु ने मुझे स्वीकार कर लिया है और मेरे विरोधियों को दण्डित किया है। जिन शत्रुओं ने यह संसार लूटा है, उन्हें प्रभु की कृपा से पकड़ कर बाँध दिया गया है अर्थात् काम-क्रोधादि संयत हो गए हैं ॥ १ ॥ सतगुरु ही परमेश्वर है; उसमें दृढ़ विश्वास रखकर नाम जपनेवाला जीव मनोवांछित रस-भोगों को प्राप्त करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे मन में अब परमात्मा के अतिरिक्त दूसरी बातें नहीं आती, परमात्मा ही मेरे सिर पर चिर-रक्षक है। मैं, हे स्वामी, तुम्हारे नाम के सहारे बेपरवाह हो गया हूँ ॥ २ ॥ मुझमें अब पूर्णता आ गयी है; सुखदायी परमात्मा को मिलने से अब मुझमें कोई कमी नहीं रह गयी। मैंने तत्त्व रूपी परमपद को पा लिया है, अब उसे छोड़कर और कहीं नहीं जाता ॥ ३ ॥ हे मेरे सच्चे अलख अपार प्रभु, मैं तुम्हारा वर्णन नहीं कर सकता। गुरु नानक कहते हैं कि वह अतुल, अथाह और अबोल परमात्मा ही हमारा स्वामी है ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ तू दाना तू अबिचलु तूही तू

जाति मेरी पाती । तू अडोलु कदे डोलहि नाही ता हम कैसी ताती ॥ १ ॥ एकै एकै एक तूही । एकै एकै तू राइआ । तउ किरपा ते सुखु पाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तू सागरु हम हंस तुमारे तुम महि माणक लाला । तुम देवहु तिलु संक न मानहु हम भुंचह सदा निहाला ॥ २ ॥ हम बारिक तुम पिता हमारे तुम मुखि देवहु खीरा । हम खेलह सभि लाड लडावह तुम सद गुणी गहीरा ॥ ३ ॥ तुम पूरन पूरि रहे संपूरन हम भी संगि अघाए । मिलत मिलत मिलत मिलि रहिआ नानक कहणु न जाए ॥ ४ ॥ ६ ॥

हे प्रभु, तू मेरा पथ-प्रदर्शक है, मुझे दृढ़ता प्रदान करनेवाला है, मेरी जाति और मेरा वंश भी तू है। तुम दृढ़ हो, कभी डोलते नहीं, इसलिए तुम्हारे सहारे हमें क्या चिन्ता हो सकती है ॥ १ ॥ तुम अपने आप में एक ही हो, सबके एकमात्र स्वामी हो; तुम्हारी ही कृपा से हमें सब प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम सरोवर हो, हम तुम्हारे सहारे जीनेवाले हंस हैं, सब मोती-मानक हमें तुम्हीं से प्राप्त होते हैं। तुम देते हुए हमारे गुण-अवगुणों को नहीं देखते; तुमसे दान पाकर हम आनन्द मनाते हैं और तुम्हारे वरदानों का भोग करते हैं ॥ २ ॥ हम बालक हैं, तुम हमारे पिता हो, सदैव हमें भोजन देकर हमारा पालन-पोषण करते हो (मुख में दूध देते हो)। हम खेलते हैं, तुम हमें लाड़ करते हो और अपने गुणों के कारण हमेशा हमारी रक्षा करते हो ॥ ३ ॥ तुम पूर्ण हो, सब जगह व्याप्त हो, तुम्हारी संगति पाकर हम तृप्त हो गये हैं। गुरु नानक कहते हैं कि मिलते-मिलते हम पूरे तौर पर तुमसे मिल गए हैं; इस मिलनावस्था का वर्णन नहीं किया जा सकता ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ कर करि ताल पखावजु नैनहु माथै वजहि रबाबा । करनहु मधु बासुरी बाजै जिहवा धुनि आगाजा । निरति करे करि मनूआ नाचै आणे घूघर साजा ॥१॥ राम को निरतिकारी । पेखै पेखनहारु दइआला जेता साजु सीगारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आखार मंडली धरणि सबाई ऊपरि गगनु चंदोआ । पवनु विचोला करत इकेला जल ते ओपति होआ । पंच ततु करि पुतरा कीना किरत मिलावा होआ ॥२॥ चंदु सूरजु दुइ जरे चरागा चहु कुंट भीतरि राखे । दस पातउ पंच संगीता एकै भीतरि साथे । भिन भिन होइ भाव दिखावहि

सभहु निरारी भाखे ।। ३ ।। घरि घरि निरति होवै दिनु राती घटि घटि वाजै तूरा । एकि नचावहि एकि भवावहि इकि आइ जाइ होइ धूरा । कहु नानक सो बहुरि न नाचै जिसु गुरु भेटै पूरा ।। ४ ।। ७ ।।

तुम्हारी कीर्ति को गाते हुए, हमारे हाथ करताल बने हैं; आँखें तबले की जोड़ी हैं और मस्तक में रबाब बजता है। कान मीठी वंशी हैं और जिह्वा मधुर ध्वनि का उच्चारण करती है। मेरा मन नृत्य में प्रवृत्त रहता है और संस्कारों के घुँघरुओं की ताल पर नाचता है ।। १ ।। मैं प्रभु के दरबार का नर्तक हूँ, मैं जितना साज-शृंगार करता हूँ, वह सब दयालु परमात्मा देखता है ।। १ ।। रहाउ ।। ये सारी सृष्टि मेरे नृत्य का मंच है; इस पर आकाश का शामियाना तना हुआ है। मेरे श्वास पवन के रूप में सबको अलग-अलग करते हैं और मैं जल अर्थात् वीर्य से बना हूँ। मेरा शरीर पाँच तत्त्वों के मेल से बनाया गया है और मैं प्रभु के दरबार में नृत्य करनेवालों से अपने क्रमानुसार मिलाप प्राप्त करता हूँ अर्थात् मेरी अच्छी-बुरी संगति मेरे कर्मों का फल है ।। २ ।। चाँद-सूर्य दीये की तरह जलते हैं, जो कि चारों दिशाओं में अपना प्रकाश फैला रहे हैं। दस इन्द्रियाँ रूपी वेश्याएँ और पाँच विषय-विकार गायक हैं; ये सब शरीर के भीतर मेरे साथी बने बैठे हैं। ये सब अलग-अलग बोलियाँ बोलते हैं और भिन्न-भिन्न प्रकार के हाव-भाव दिखाते हैं ।। ३ ।। घर-घर में रात-दिन यही नित्य चलता है और सबके भीतर माया के बाजे बजते हैं। एक नाचते हैं, एक फेरी लेते हैं और एक आवागमन के चक्र में पड़े रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सच्चे गुरु को पा लेनेवाला जीव दोबारा इस नृत्य-चक्र में नहीं पड़ता ।। ४ ।। ७ ।।

।। रामकली महला ५ ।। ओअंकारि एक धुनि एकै एकै रागु अलापै । एका देसी एकु दिखावै एको रहिआ बिआपे । एका सुरति एका ही सेवा एको गुर ते जापै ।। १ ।। भलो भलो रे कीरतनीआ । राम रमा रामा गुन गाउ । छोडि माइआ के धंध सुआउ ।। १ ।। रहाउ ।। पंच बजित्र करे संतोखा सात सुरा लै चालै । बाजा माणु ताणु तजि ताना पाउ न बीगा घालै । फेरी फेरु न होवै कबही एकु सबदु बंधि पालै ।। २ ।। नारदी नरहर जाणि हदूरे । घूंघर खड़कु तिआगि विसूरे । सहज अनंद दिखावै भावै । एहु निरतिकारी जनमि न आवै ।।३।।

जेको अपने ठाकुर भावै। कोटि मधि एहु कीरतनु गावै। साध संगति की जावउ टेक। कहु नानक तिसु कीरतनु एक ॥४॥८॥

आध्यात्मिक कीर्तन करनेवाला केवल परमात्मा की ही ध्वनि अलापता है, उसी के राग गाता है। वह परमात्मा के ही देश का रहनेवाला हो और उसी सर्वव्यापक के दर्शन कराये, उसकी आत्मा प्रभु में ही एकाग्र हो, वह एक परमात्मा की ही सेवा में लीन रहे और परमात्मा रूपी गुरु से ही कीर्तन की शिक्षा प्राप्त करे। (गुरुजी कीर्तन के सही रूप की चर्चा करते हैं और ऐसे अध्यात्मवादियों का चित्रण प्रस्तुत कर रहे हैं, जो परमात्मा से एकाकार होने की ही कीर्तन का सही रूप मानते हैं।) ॥ १ ॥ ऐसा, कीर्तन करनेवाला उत्तम है, वह सदा राम के गुण गाता है और माया के बन्धनों और स्वार्थों का त्याग कर देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह सन्तोषादि पाँच गुणों के वादन बनाता है, और लीनता को सात स्वरों में ढालता है। स्वाभिमान का त्याग ही उसका बाजा है और अहंकार का त्याग ही टेक है, जिससे वह कीर्तन के स्वरों के उतार-चढ़ाव प्रदान करता है। उसके आलाप में ऐसी तर्ज़ होती है कि उसकी अपनी फेरी (जन्म-मरण) मिट जाती है। वह परमात्मा के सच्चे शब्द को पल्ले बाँध लेता है ॥ २ ॥ वह नारद की भाँति परमात्मा को सदा उपस्थित मानता है और अपनी चिन्ताओं के त्याग के घुँघरुओं का स्वर पैदा करता है। सहज सुख ही उसके हाव-भाव होते हैं और ऐसा नर्तक पुनः जन्म नहीं लेता ॥ ३ ॥ जो कुछ अपने स्वामी को प्रिय होता है, करोड़ों में से कोई एकाध ही ऐसा कीर्तन करता है। मैं, गुरु नानक कहते हैं, साधु-संगति का सहारा लेता हूँ, क्योंकि वहाँ परमात्मा का कीर्तन होता है ॥ ४ ॥ ८ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ कोई बोलै राम राम कोई खुदाइ। कोई सेवै गुसईआ कोई अलाहि ॥ १ ॥ कारण करण करीम। किरपा धारि रहीम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोई नावै तीरथि कोई हज जाइ। कोई करै पूजा कोई सिरु निवाइ ॥२॥ कोई पड़ै बेद कोई कतेब। कोई ओढै नील कोई सुपेद ॥ ३ ॥ कोई कहै तुरकु कोई कहै हिंदू। कोई बाछै भिसतु कोई सुरगिंदू ॥४॥ कहु नानक जिनि हुकमु पछाता। प्रभ साहिब का तिनि भेदु जाता ॥ ५ ॥ ९ ॥

कोई परमात्मा को राम कहकर पुकारता है और कोई उसे खुदा कहता है। कोई गुसाईं की भक्ति करता है, तो कोई अल्लाह का नाम पुकारता है ॥ १ ॥ वह सबको बनानेवाला कर्ता-पुरुष स्वयं कृपालु है,

दया करनेवाला है और सब पर मेहरबान है ।। १ ।। रहाउ ।। (यहाँ गुरुजी हिन्दुओं और मुसलमानों के द्वारा परमात्मा के लिए प्रयुक्त संज्ञाओं को एक समान दर्शा रहे हैं।) कोई तीर्थ-स्नान करता है, कोई हज करने के लिए मक्का को सिधारता है। कोई पूजा करता है और कोई सज्दे में गिरता है ।। २ ।। कोई वेदों का अध्ययन करता है, कोई क़ुर्आन पढ़ता है। कोई नीले वस्त्र पहनता है और कोई सफ़ेद परिधान धारण करता है ।। ३ ।। कोई अपने को तुर्क कहता है और कोई हिन्दू कहलवाता है; कोई बिहिश्त की कामना करता है और कोई स्वर्ग चाहता है ।। ४ ।। गुरु नानक कहते हैं कि जिसने परमात्मा के हुक्म को पहचान लिया, वही आध्यात्मिक रहस्यों का वास्तविक जानकार होता है ।। ५ ।। ९ ।।

।। रामकली महला ५ ।। पवनै महि पवनु समाइआ । जोती महि जोति रलि जाइआ । माटी माटी होई एक । रोवनहारे की कवन टेक ।। १ ।। कउनु मूआ रे कउनु मूआ । ब्रहमगिआनी मिलि करहु बीचारा इहु तउ चलतु भइआ ।। १ ।। रहाउ ।। अगली किछु खबरि न पाई । रोवनहारु भि ऊठि सिधाई । भरम मोह के बांधे बंध । सुपनु भइआ भखलाए अंध ।। २ ।। इहु तउ रचनु रचिआ करतारि । आवत जावत हुकमि अपारि । नह को मूआ न मरणै जोगु । नह बिनसै अबिनासी होगु ।। ३ ।। जो इहु जाणहु सो इहु नाहि । जानणहारे कउ बलि जाउ । कहु नानक गुरि भरमु चुकाइआ । ना कोई मरै न आवै जाइआ ।। ४ ।। १० ।।

(मृत्यु अवश्यंभावी है, तब रोने से क्या लाभ ? यह तो एक प्राकृतिक विघटन मात्र होता है।) पवन का तत्त्व मनुष्य की मृत्यु पर अपने मूल पवन में ही समा जाता है। अग्नि का तत्त्व अग्नि में मिल जाता है और मिट्टी, मिट्टी से मिल जाती है, फिर रोने का आधार क्या रह जाता है अर्थात् फिर किस चीज़ के लिए रोया जा सकता है ।। १ ।। कौन मरा, कौन मर सकता है ? बड़े-बड़े ब्रह्मज्ञानियों ने मिलकर विचार किया है कि यह तो परमात्मा का बनाया हुआ चलन मात्र है ।। १ ।। रहाउ ।। आगे की हमें कुछ ख़बर नहीं होती, रोनेवाला भी आख़िर मर जाता है। हमने व्यर्थ के मोह और भ्रम के बन्धन बाँध रखे हैं, यह तो सपना था, टूट गया, अज्ञानांध लोगों के चिल्लाने से क्या होता है! ।। २ ।। यह रचना परमात्मा ने स्वयं बनायी है। इसमें जीव का आवागमन परमात्मा के आदेशानुसार होता है। न कोई अपने आप मरता है, न मरने योग्य है, जीव का वास्तविक

रूप कभी नहीं मरता, वह अविनाशी होता है ॥ ३ ॥ जो तुम इसे समझते हो, यह जीव वैसा नहीं है। जो इस तथ्य से परिचित है, मैं उस पर बलिहार जाता हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु ने जिसके भ्रमों को मिटा दिया है, उसका आवागमन सदा के लिए समाप्त हो जाता है ॥ ४ ॥ १० ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ जपि गोबिंदु गोपाल लालु। राम नाम सिमरि तू जीवहि फिरि न खाई महाकालु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोटि जनम भ्रमि भ्रमि भ्रमि आइओ। बडै भागि साध संगु पाइओ ॥ १ ॥ बिनु गुर पूरे नाही उधारु। बाबा नानकु आखै एहु बीचारु ॥ २ ॥ ११ ॥

हे जीव, परमात्मा का नाम जप। राम का नाम जपने से तू अमर हो जायेगा, काल तुझे खा सकने में असमर्थ होगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करोड़ों जन्मों से तुम भ्रम-भ्रमकर अब मानव-योनि को प्राप्त हुए हो; तुम्हारा बड़ा भाग्य है कि तुम्हें सन्तों की संगति भी मिली है ॥ १ ॥ गुरु के बिना, गुरु नानक विचारपूर्वक कहते हैं, किसी का उद्धार नहीं हो सकता ॥ २ ॥ ११ ॥

रागु रामकली महला ५ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि। चारि पुकारहि ना तू मानहि। खटु भी एका बात वखानहि। दसअसटी मिलि एको कहिआ। ता भी जोगी भेदु न लहिआ ॥ १ ॥ किंकुरी अनूप वाजै। जोगीआ मतवारो रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रथमे वसिआ सत का खेड़ा। त्रितीए महि किछु भइआ दुतेड़ा। दुतीआ अरधो अरधि समाइआ। एकु रहिआ ता एकु दिखाइआ ॥ २ ॥ एकै सूति परोए मणीए। गाठी भिनि भिनि भिनि भिनि तणीए। फिरती माला बहु बिधि भाइ। खिंचिआ सूतु त आई थाइ ॥ ३ ॥ चहु महि एकै मटु है कीआ। तह बिखड़े थान अनिक खिड़कीआ। खोजत खोजत दुआरे आइआ। ता नानक जोगी महलु घरु पाइआ ॥ ४ ॥ इउ किंकुरी आनूप वाजै। सुणि जोगी कै मनि मीठी लागै ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ १ ॥ १२ ॥

चारों वेद एक ही बात कहते हैं, लेकिन तुम नहीं मानते। छः शास्त्रों ने भी उसी एक परमात्मा का बखान किया है। अठारह पुराणों

में भी उसी ईश्वर का गुणगान है, तो भी साधारणतः मनुष्य को परमात्मा का रहस्य नहीं मिल पाया ॥ १ ॥ सारंगी का मधुर वादन हो रहा है, किन्तु योगी उन्मत्त हुआ उसके नाद-सौन्दर्य का रस नहीं ले पा रहा अर्थात् आत्म-रस बड़ा मधुर है, किन्तु मनुष्य उस ओर ध्यान नहीं देता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सबसे पहले सत्य का गाँव बसा अर्थात् सतयुग आया। फिर त्रेतायुग में उस स्थिति में अन्तर हुआ और द्वापर में धर्म का आधा भाग ही बचा। कलियुग में धर्म का एक ही पाँव बचा, किन्तु मोक्ष के लिए एक परमात्मा का नाम पर्याप्त माना गया ॥ २ ॥ शरीरों के मनके एक ही सूत्र में पिरोये गये हैं, किन्तु अलग-अलग गाँठों के कारण माला का रूप बदल गया है अर्थात् मनुष्यों में अलग-अलग व्यक्तित्व होने के कारण अनेक श्रेणियाँ बन गयी हैं। शरीरों की यह माला अनेक प्रकार से फेरी जा रही है अर्थात् यह सिलसिला कई तरह से चल रहा है; किन्तु जिस प्रकार माला में से धागा खींच लेने से सब मनके अलग-अलग पड़ जाते हैं, वैसे ही सब जीवों में से प्रभु की सत्ता अलग कर लेने से सब विभिन्न मूल-तत्त्वों में मिल जाते हैं ॥ ३ ॥ चारों युगों में मनुष्य-शरीर ही परमात्मा के रहने की जगह मानी गयी है। उस रहस्यात्मक मन्दिर में अनेक खिड़कियाँ हैं। जिसने खोजते-खोजते उस वास्तविक द्वार (दसवाँ द्वार) को प्राप्त कर लिया, वही योगी गुरु नानक के मतानुसार उस रहस्यमय मन्दिर में प्रवेश पा सका ॥ ४ ॥ इस प्रकार से उस सारंगी की अनुपम ध्वनि योगी के श्रवणों में रस घोलने लगती है और योगी उस रस में विभोर हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ १ ॥ १२ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ तागा करि कै लाई थिगली। लउ नाड़ी सूआ है असती। अंभै का करि डंडा धरिआ। किआ तू जोगी गरबहि परिआ ॥ १ ॥ जपि नाथु दिनु रैनाई। तेरी खिथा दो दिहाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गहरी बिभूत लाइ बैठा ताड़ी। मेरी तेरी मुंद्रा धारी। मागहि टूका त्रिपति न पावै। नाथु छोडि जाचहि लाज न आवै ॥ २ ॥ चलचित जोगी आसणु तेरा। सिङी वाजै नित उदासेरा। गुर गोरख की तै बूझ न पाई। फिरि फिरि जोगी आवै जाई ॥ ३ ॥ जिसनो होआ नाथु क्रिपाला। रहरासि हमारी गुर गोपाला। नामै खिथा नामै बसतरु। जन नानक जोगी होआ असथिरु ॥ ४ ॥ इउ जपिआ नाथु दिनु रैनाई। हुणि पाइआ गुरु गोसाई ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ २ ॥ १३ ॥

(मनुष्य का शरीर अलग-अलग चीज़ों से जोड़कर बनाया गया है, इसीलिए वह नश्वर है। योग के साधन प्रायः आडम्बर-पूर्ण होते हैं, सच्चा रास्ता हरि-नाम में लीन होने का है।) धागा बनाकर बिगुल सी लिया जाता है अर्थात् जो भिन्न अंगों को एक-दूसरे से जोड़ दिया जाता है। नाड़ियों की सिलाई करके हड्डियों के जोड़ जोड़े जाते हैं। रक्त-बिन्दु के प्रवाह से शरीर को सीधा किया जाता है, जो प्राकृतिक दण्ड का काम करता है। ऐ योगी, तुम्हारा सारा अहंकार बेकार है (तुम इन प्राकृतिक तथ्यों को बाहरी दिखावे से प्रस्तुत करते हो) ॥ १ ॥ उस परमात्मा को रात-दिन जपना ही वास्तविक योग है, उसी में लीन रहो, क्योंकि तुम्हारी शरीर रूपी झोली (खिंथा) दो दिन का खेल है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रंग-विभूति लगाकर कोई योगी बन बैठे; मेरे-तेरे भाव की मुद्राओं को धारण करे; माँगकर भोजन खाये और हमेशा असन्तुष्ट रहे; परमात्मा को छोड़कर दूसरों से माँगने जाए, यह शर्म की बात है ॥ २ ॥ अरे योगी, तुम्हारा आसन दोलायमान है अर्थात् तुम्हारा मन चंचल है। नित्य जीवन में उदास रहते हो और सींग का बाजा फूंकते हो, गुरु और परमात्मा के सत्य को कभी बूझ नहीं पाते। ऐसी दशा में रहनेवाले, ऐ योगी, तुम्हारा जन्म-मरण कभी मिट नहीं सकता ॥ ३ ॥ जिस पर परमात्मा कृपा करता है, वह परमात्मा रूपी धन से गुरु के सही ज्ञान का व्यापार करता है। उसकी झोली और वस्त्र हरि-नाम के होते हैं और गुरु नानक कहते हैं, वही योगी स्थिर-आसन होता है ॥ ४ ॥ जो लोग गुरु की कृपा से परमात्मा को पा लेते हैं, वे सदा रात-दिन परमात्मा का नाम जपते हैं ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ २ ॥ १३ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ करन करावन सोई। आन न दीसै कोई। ठाकुरु मेरा सुघड़ु सुजाना। गुरमुखि मिलिआ रंगु माना ॥ १ ॥ ऐसो रे हरि रसु मीठा। गुरमुखि किनै विरलै डीठा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निरमल जोति अंम्रितु हरि नाम। पीवत अमर भए निहकाम। तनु मनु सीतलु अगनि निवारी। अनद रूप प्रगटे संसारी ॥ २ ॥ किआ देवउ जा सभु किछु तेरा। सद बलिहारि जाउ लख बेरा। तनु मनु जीउ पिंडु दे साजिआ। गुर किरपा ते नीचु निवाजिआ ॥ ३ ॥ खोलि किवारा महलि बुलाइआ। जैसा सा तैसा दिखलाइआ। कहु नानक सभु पड़दा तूटा। हउ तेरा तू मै मनि वूठा ॥४॥३॥१४॥

करने-करानेवाला स्वयं परमात्मा ही है, कोई अन्य दीख नहीं पड़ता।

मेरा प्रभु बड़ा ही सुयोग्य और सुचेतन है, गुरु के माध्यम से जब कोई उसे पा लेता है, तो वह आनन्द-मग्न हो जाता है ॥ १ ॥ हरि-रस इतना मीठा है कि कोई विरला गुरुमुख ही उसका सही अनुभव कर सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आत्मा की ज्योति निर्मल है और हरि का नाम अमृत-समान है। जो लोग निष्काम-भाव से इसका सेवन करते हैं, वे अमर हो जाते हैं। उनके अन्तर्मन की तृष्णा रूपी अग्नि बुझ जाती है और तन-मन की शीतलता उपलब्ध होती है। संसार में उसके लिए साक्षात्-आनन्द प्रकट होता है ॥ २ ॥ हे प्रभु ! मैं तुम्हें क्या दे सकता हूँ, सब कुछ तुम्हारा ही तो है; मैं लाखों बार तुम पर बलिहार जाता हूँ। तुमने मुझे मन, प्राण और शरीर देकर बनाया है। गुरु-कृपा से मुझ सरीखे नीच को भी उसने सम्मानित किया है ॥ ३ ॥ उसने स्वयं अपना यथार्थ-ज्ञान देकर मुझे अपनी शरण में लिया है, अपने वास्तविक रूप का दर्शन करवाया है। गुरु नानक कहते हैं कि जब मैं तुम्हारी शरण में आ गया और तुम मेरे मन में बस गये, तो दोनों के बीच का परदा दूर हो गया है ॥ ४ ॥ ३ ॥ १४ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ सेवकु लाइओ अपुनी सेव। अंम्रितु नामु दीओ मुखि देव। सगली चिंता आपि निवारी। तिसु गुर कउ हउ सद बलिहारी ॥ १ ॥ काज हमारे पूरे सतगुर। बाजे अनहद तूरे सतगुर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ महिमा जा की गहिर गंभीर। होइ निहालु देइ जिसु धीर। जा के बंधन काटे राइ। सो नरु बहुरि न जोनी पाइ ॥ २ ॥ जा कै अंतरि प्रगटिओ आप। ता कउ नाही दूख संताप। लालु रतनु तिसु पालै परिआ। सगल कुटंब ओहु जनु लै तरिआ ॥ ३ ॥ ना किछु भरमु न दुबिधा दूजा। एको एकु निरंजन पूजा। जत कत देखउ आपि दइआल। कहु नानक प्रभ मिले रसाल ॥ ४ ॥ ४ ॥ १५ ॥

गुरु की कृपा से परमात्मा ने हमें अपनी सेवा में लगा लिया है और अमृत-सरीखा नाम हमारे मुख में दिया है। उसने स्वयं हमारी सब चिन्ताओं का निराकरण किया है, ऐसे गुरु पर मैं सदा क़ुर्बान हूँ ॥ १ ॥ सतगुरु ने हमारे सब कार्य पूरे किये हैं, उसी के कारण आनन्द के बाजे बज उठे हैं अर्थात् हमें आत्मिक आनन्द प्राप्त हुआ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसकी महिमा गहन-गम्भीर है, जिसे वह धैर्य देता है, वह निहाल हो उठता है। जिसके बन्धन स्वयं प्रभु ने काटे हैं, वह मनुष्य दोबारा कभी जन्म-मरण के चक्कर में नहीं पड़ता ॥ २ ॥ जिनके हृदय में परमात्मा स्वयं प्रकट हो

जाता है, उसे कभी कोई दुःख-सन्ताप नहीं होता। नाम रूपी रत्न उसकी झोली पड़ता है और उस सेवक का समूचा कुटुम्ब मुक्ति-लाभ करता है ॥३॥ इसमें किसी प्रकार के भ्रम या द्वैतभाव की दुबिधा को कोई स्थान नहीं, क्योंकि वह मायातीत परमात्मा एक है और वही एक सत्ता का स्वामी है। जिधर भी मैं देखता हूँ, वह दयालु प्रभु ही दीख पड़ता है और इस प्रकार, नानक कहते हैं कि वह रस-निधि परमात्मा साक्षात् हो जाता है ॥ ४ ॥ ४ ॥ १५ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ तन ते छुटकी अपनी धारी। प्रभ की आगिआ लगी पिआरी। जो किछु करै सु मनि मेरै मीठा। ता इहु अचरजु नैनहु डीठा ॥ १ ॥ अब मोहि जानी रे मेरी गई बलाइ। बुझि गई त्रिसन निवारी ममता गुरि पूरै लीओ समझाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि किरपा राखिओ गुरि सरना। गुरि पकराए हरि के चरना। बीस बिसुए जा मन ठहराने। गुर पारब्रहम एकै ही जाने ॥ २ ॥ जो जो कीनो हम तिस के दास। प्रभ मेरे को सगल निवास। ना को दूतु नही बैराई। गलि मिलि चाले एकै भाई ॥ ३ ॥ जाकउ गुरि हरि दीए सूखा। ता कउ बहुरि न लागहि दूखा। आपे आपि सरब प्रतिपाल। नानक रातउ रंगि गोपाल ॥४॥५॥१६॥

शरीर से अपनेपन की धारणा तभी छूट जाती है, जब हमें प्रभु की आज्ञा प्रिय लगने लगती है। परमात्मा का किया हुआ सब कुछ मुझे मीठा लगता है और तभी संसार का यह आश्चर्यजनक खेल मैं अपनी आँखों से देख पाता हूँ ॥ १ ॥ अब मुझे विश्वास हो गया है कि मेरी सब बलाएँ नष्ट हो चुकी हैं और पूरे गुरु ने मेरी तृष्णा को बुझा दिया है, ममता का निवारण कर दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मेरे सतगुरु! कृपा करके मुझे अपनी शरण दो और हरि के चरणों में लीनता प्रदान करो। मेरे मन को सौ-फ़ी-सदी परमात्मा का आधार मिल गया है और अब मैं गुरु और परब्रह्म में अभेद देखने लगा हूँ ॥ २ ॥ जिस-जिस जीव ने हरि-नाम का जाप किया है, मैं उसका दास हूँ, क्योंकि ऐसे सब जीवों में मेरे परमात्मा का निवास है। अब मेरे लिए न कोई शत्रु रह गया है, न वैरी है, क्योंकि मैं सबके साथ गले मिलकर चलने लगा हूँ ॥ ३ ॥ जिसको हरिगुरु ने सुख प्रदान किया है, उसे दोबारा कभी दुःख नहीं पहुँचता। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा अपने आप सबका प्रतिपालक है और हम सब उसी के रंग में रँगे हुए हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ १६ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ मुख ते पड़ता टीका सहित । हिरदै रामु नही पूरन रहत । उपदेसु करे करि लोक द्रिड़ावै । अपना कहिआ आपि न कमावै ॥ १ ॥ पंडित बेदु बीचारि पंडित । मन का क्रोधु निवारि पंडित ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आगै राखिओ सालगिरामु । मनु कीनो दहदिस बिस्रामु । तिलकु चरावै पाई पाइ । लोकु पचारा अंधु कमाइ ॥ २ ॥ खटु करमा अरु आसणु धोती । भागठि ग्रिहि पड़ै नित पोथी । माला फेरै मंगै बिभूत । इह बिधि कोइ न तरिओ मीत ॥ ३ ॥ सो पंडितु गुर सबदु कमाइ । त्रै गुण की ओसु उतरी माइ । चतुर बेद पूरन हरि नाइ । नानक तिस की सरणी पाइ ॥ ४ ॥ ६ ॥ १७ ॥

जो जीव मुख से तो अर्थोंसहित शास्त्रों का पाठ करता है, किन्तु हृदय में उसके नाम की सत्ता विद्यमान नहीं; लोगों को उपदेश करते हुए अपनी बात पर बल देता है, किन्तु अपने कहे अनुसार स्वयं ही आचरण नहीं करता (वह मक्कार है) ॥ १ ॥ हे पण्डित ! वेद-शास्त्रों पर सही तौर से विचार करो और मन के क्रोध को दूर करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपने आगे शालिग्राम की मूर्ति रखकर तुम्हारा मन दसों दिशाओं में भटकता फिरता है । शालिग्राम को तिलक देते हो, उसके चरणों में प्रणाम करते हो, यह सब तुम्हारा लोक-प्रचार ही है, तुम सत्य के प्रति अभी भी अन्धे हो ॥ २ ॥ षट्कर्म करते हो, आसन लगाते हो और निउली-धोती क्रियाएँ भी करते हो (किन्तु अपने आप में सन्तुष्ट नहीं हो पाते) । धनवान लोगों के यहाँ पोथी पढ़ते हो, माला फेरते हो और उनसे धन की माँग करते हो । किन्तु, ऐ मित्र, याद रखो, इस प्रकार किसी का उद्धार नहीं होता ॥ ३ ॥ जो पण्डित (ब्राह्मण) गुरु से शब्द प्राप्त कर उसकी कमाई करता है, वह त्रिगुणात्मक माया से ऊपर उठ जाता है । हरि-नाम में ही चारों वेदों का सार है, इसलिए गुरु नानक के मतानुसार नामी की शरण लेने में ही कल्याण है ॥ ४ ॥ ६ ॥ १७ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ कोटि बिघन नही आवहि नेरि । अनिक माइआ है ता की चेरि । अनिक पाप ताके पानीहार । जा कउ मइआ भई करतार ॥ १ ॥ जिसहि सहाई होइ भगवान । अनिक जतन उआ कै सरंजाम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करता राखै कीता कउनु । कीरी जीतो सगला भवनु । बेअंत महिमा ताकी केतक बरन । बलि बलि जाईऐ ताके चरन ॥२॥

तिन ही कीआ जपु तपु धिआनु। अनिक प्रकार कीआ तिनि दानु। भगतु सोई कलि महि परवानु। जाकउ ठाकुरि दीआ मानु ॥ ३ ॥ साध संगि मिलि भए प्रगास। सहज सूख आस निवास। पूरै सतिगुरि दीआ बिसास। नानक होए दासनि दास ॥ ४ ॥ ७ ॥ १८ ॥

जिस पर परमात्मा की दया हो जाती है, करोड़ों विघ्न उसके निकट नहीं आते। हर प्रकार की माया उसकी दासी हो जाती है और हर प्रकार के पाप उसके गुलाम बन जाते हैं ॥१॥ परमात्मा जिसका सहायी होता है, उसके सब प्रयत्न सफल हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि परमात्मा किसी का रक्षक हो तो जीव उसका क्या बिगाड़ सकता है। ऐसे में तो एक चींटी भी समूचे भुवन को जीत सकती है। उस प्रभु की अनन्त महिमा का कहाँ तक वर्णन करूँ; मैं तो उसके चरणों पर बार-बार बलिहार जाता हूँ ॥ २ ॥ जिसको परमात्मा सम्मान देता है, उसी का जप, तप, ध्यान स्वीकार होता है, वही सही अर्थों में दान करता है और ऐसा ही भक्त कलियुग में प्रवान होता है ॥ ३ ॥ सन्तों की संगति में मानव-मन को प्रकाश मिलता है, सहज भाव में जीव समा जाता है और उसकी आशाएँ पूर्ण हो जाती हैं। नानक उस सतगुरु के दासों का भी दास है, जो जीव का एकमात्र विश्वास बन सकता है ॥ ४ ॥ ७ ॥ १८ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ दोसु न दीजै काहू लोग। जो कमावनु सोई भोग। आपन करम आपे ही बंध। आवनु जावनु माइआ धंध ॥ १ ॥ ऐसी जानी संत जनी। परगासु भइआ पूरे गुर बचनी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तनु धनु कलतु मिथिआ बिसथार। हैवर गैवर चालनहार। राज रंग रूप सभि कूर। नाम बिना होइ जासी धूर ॥ २ ॥ भरमि भूले बादि अहंकारी। संगि नाही रे सगल पसारी। सोग हरख महि देह बिरधानी। साकत इव ही करत बिहानी ॥ ३ ॥ हरि का नामु अंम्रितु कलि माहि। एहु निधाना साधू पाहि। नानक गुरु गोविदु जिसु तूठा। घटि घटि रमईआ तिन ही डीठा ॥ ४ ॥ ८ ॥ १९ ॥

किसी अन्य को दोष मत दो, जो तुम कमाते हो वही तुम्हें भोगना है। अपने कर्मों के कारण ही तुम बँधे हो और माया के इस जन्म-मरण के चक्कर में पड़े हो ॥ १ ॥ सन्तजनों ने ऐसी सूझ दी है कि गुरु-वचनों से ही ज्ञान का सही प्रकाश मिलता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शरीर, धन और

स्त्री संसार के मिथ्या प्रसार हैं। हाथी-घोड़ों की सम्पत्ति नश्वर है। राज्य, भोग-विलास सब मिथ्या हैं। ये सब नाम के बिना धूल हो जाएँगे अर्थात् मिट जाएँगे ॥ २ ॥ लोग भ्रम में भटके हुए अहंकार के कारण वाद-विवाद करते हैं। संसार का यह सब प्रसार कभी किसी का साथ नहीं देता। हर्ष-शोक में ही शरीर वृद्ध हो जाता है और मायाधारी जीवों की आयु इसी प्रकार करते बीत जाती है ॥ ३ ॥ कलियुग में हरि का नाम ही एकमात्र अमृत है। सन्तों को यह पूँजी प्राप्त हुई है। गुरु नानक कहते हैं कि जिस पर परमात्मा सन्तुष्ट होता है, वह घट-घट में उसका साक्षात्कार करने लगता है ॥ ४ ॥ ८ ॥ १९ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ पंच सबद तह पूरन नाद। अनहद बाजे अचरज बिसमाद। केल करहि संत हरि लोग। पारब्रहम पूरन निरजोग ॥ १ ॥ सूख सहज आनंद भवन। साध संगि बैसि गुण गावहि। तह रोग सोग नही जनम मरन ॥१॥ रहाउ ॥ ऊहा सिमरहि केवल नामु। बिरले पावहि ओहु बिस्राम। भोजनु भाउ कीरतन आधारु। निहचल आसनु बेसुमारु ॥ २ ॥ डिगि न डोलै कतहू धावै। गुर प्रसादि को इहु महलु पावै। भ्रम भै मोह न माइआ जाल। सुंन समाधि प्रभू किरपाल ॥ ३ ॥ ता का अंतु न पारावारु। आपे गुपतु आपे पासारु। जा कै अंतरि हरि हरि सुआदु। कहनु न जाई नानक बिसमादु ॥ ४ ॥ ९ ॥ २० ॥

सत्संगति में पंच-शब्द का पूर्ण नाद होता है (आनन्द होता है), आश्चर्यजनक रूप से अनाहत ध्वनि की गूँज सुन पड़ती है और हरि के सन्तजन वहाँ क्रीड़ा करते हैं और अलिप्त-भाव से परमात्मा से जुड़ जाते हैं ॥ १ ॥ सत्संगति पूर्ण सहज सुख और आनन्द का स्थान है। सन्तों के सम्पर्क में बैठकर प्रभु का गुण गानेवाला जीव रोग, शोक और जन्म-मरण से मुक्त हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह जीव केवल प्रभु का नाम जपता है, विरले लोगों द्वारा प्राप्त उस मोक्षस्थल को प्राप्त कर लेता है। भक्तिभाव उसका भोजन बनता है और प्रभु का कीर्तिगान उसका सहारा होता है। उस अडोल आसन की प्रतिष्ठा अनन्त है ॥ २ ॥ वहाँ जीव कभी डिगता या डोलता नहीं, कहीं जाता भी नहीं; गुरु की कृपा से वह परमात्मा के घर को पा लेता है। वहाँ उसे भ्रम, भय, मोह या मायाजाल नहीं बाँधते, वह पूर्ण-स्थिर समाधि में प्रभु-कृपा का पात्र बनता है ॥ ३ ॥ उसका कोई और छोर या गहराई नहीं जानता। वह परमात्मा छिपा

हुआ भी है और सृष्टि के रूप में बिखरा हुआ भी। जो जीव अन्तर्मन में हरि के रस का स्वाद लेता है, गुरु नानक के मतानुसार उसका आश्चर्य अनिर्वचनीय होता है ॥ ४ ॥ ९ ॥ २० ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ भेटत संगि पारब्रहमु चिति आइआ। संगति करत संतोखु मनि पाइआ। संतह चरन माथा मेरो पउत। अनिक बार संतह डंडउत ॥ १ ॥ इहु मनु संतन कै बलिहारी। जाकी ओट गही सुखु पाइआ राखे किरपाधारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संतह चरण धोइ धोइ पीवा। संतह दरसु पेखि पेखि जीवा। संतह की मेरै मनि आस। संत हमारी निरमल रासि ॥ २ ॥ संत हमारा राखिआ पड़दा। संत प्रसादि मोहि कबहू न कड़दा। संतह संगु दीआ किरपाल। संत सहाई भए दइआल ॥ ३ ॥ सुरति मति बुधि परगासु। गहिर गंभीर अपार गुणतासु। जीअ जंत सगले प्रतिपाल। नानक संतह देखि निहाल ॥ ४ ॥ १० ॥ २१ ॥

गुरु के सम्पर्क में आकर मेरा मन परमात्मा में लग गया, सत्संगति का सन्तोष मुझे प्राप्त हुआ। मैं सन्तों के चरणों में मस्तक झुकाता हूँ और सन्तों को बार-बार दण्डवत प्रणाम करता हूँ ॥ १ ॥ यह मन सन्तों पर बलिहार है, क्योंकि उनका सहारा लेने से सुख मिलता है और कृपापूर्वक वे हमारी रक्षा करते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं सन्तों के चरण धोकर उसका चरणामृत लेता हूँ। सन्तों के दर्शन देख-देखकर ही मैं जीवित हूँ। मेरे मन में एकमात्र सन्तों की आशा है और वे ही हमारी मूल-राशि हैं ॥ २ ॥ सन्तों ने हमारा परदा बनाए रखा है। सन्तों की कृपा से ही मुझे कभी दुःख-सन्ताप नहीं होते। परमात्मा ने कृपापूर्वक जबसे सन्तों की संगति दी है, तबसे दयालु सन्त हमेशा मेरे सहायी हुए हैं ॥३॥ सन्तों की कृपा से मेरी आत्मा में विवेक और बुद्धि आलोकित हो उठे हैं; सन्त गहन-गम्भीर गुणों का भण्डार हैं। संसार में सभी जीव-जन्तुओं का प्रतिपालन उन्हीं के कारण होता है; इसीलिए गुरु नानक कहते हैं कि सन्तों के दर्शन मात्र से ही जीव निहाल हो जाता है ॥ ४ ॥ १० ॥ २१ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ तेरै काजि न ग्रिहु राजु मालु। तेरै काजि न बिखै जंजालु। इसट मीत जाणु सभ छलै। हरि हरि नामु संगि तेरै चलै ॥ १ ॥ राम नाम गुण गाइले मीता। हरि सिमरत तेरी लाज रहै। हरि सिमरत जमु कछु न

कहै ।। १ ।। रहाउ ।। बिनु हरि सगल निरारथ काम । सुइना रुपा माटी दाम । गुर का सबदु जापि मन सुखा । ईहा ऊहा तेरो ऊजल मुखा ।। २ ।। करि करि थाके वडे वडेरे । किनही न कीए काज माइआ पूरे । हरि हरि नामु जपै जनु कोइ । ता की आसा पूरन होइ ।। ३ ।। हरि भगतन को नामु अधारु । संती जीता जनमु अपारु । हरि संतु करे सोई परवाणु । नानक दासु ता कै कुरबाणु ।। ४ ।। ११ ।। २२ ।।

हे जीव, यह घर, राज्य और सम्पत्ति तुम्हारे काम नहीं आएँगे; संसार के माया-बन्धन भी तुम्हारे सहायक नहीं हो सकते। तुम्हारे इष्ट मित्र भी सब छल-रूप हैं; केवल परमात्मा का नाम ही तुम्हारे साथ चलेगा ।।१।। हे मित्र, तुम राम-नाम का गुण गा लो, हरि-सिमरन से ही तुम्हारी लाज बचेगी; हरि के सिमरन के कारण यमदूत भी तुम्हें कष्ट नहीं पहुँचा सकते ।। १ ।। रहाउ ।। हरि के बिना सब कामनाएँ निरर्थक हैं; सोना-चाँदी आदि मिट्टी के भाव की चीज़ें हैं। हे मन, तुम सुखपूर्वक गुरु का शब्द ग्रहण करो, इसी से यहाँ और वहाँ (इहलोक और परलोक) तुम्हारा मुख उज्ज्वल होगा ।। २ ।। अनेक मायावी यत्न कर-करके तुम्हारे पूर्वज थक चुके हैं, माया ने किसी का कार्य पूरा नहीं किया। जो जीव हरि का नाम जपते हैं, उनकी सब मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं ।। ३ ।। हरि-भक्तों को हरि-नाम का ही एकमात्र सहारा होता है। सन्तों की कृपा से उनका जन्म सफल हो जाता है; हरि का सन्त जो भी करता है, वह परमात्मा को स्वीकार होता है। गुरु नानक कहते हैं कि जीवों को ऐसे सन्तों पर क़ुर्बान हो जाना चाहिए ।। ४ ।। ११ ।। २२ ।।

।। रामकली महला ५ ।। सिंचहि दरबु देहि दुखु लोग । तेरै काजि न अवरा जोग । करि अहंकारु होइ वरतहि अंध । जम की जेवड़ी तू आगै बंध ।। १ ।। छाडि विडाणी ताति मूड़े । ईहा बसना राति मूड़े । माइआ के माते तै उठि चलना । राचि रहिओ तू संगि सुपना ।। १ ।। रहाउ ।। बाल बिवसथा बारिकु अंध । भरि जोबनि लागा दुरगंध । त्रितीअ बिवसथा सिंचे माइ । बिरधि भइआ छोडि चलिओ पछुताइ ।। २ ।। चिरंकाल पाई द्रुलभ देह । नाम बिहूणी होई खेह । पसू परेत मुगध ते बुरी । तिसहि न बूझै जिनि एह सिरी ।। ३ ।। सुणि करतार गोविंद गोपाल । दीन दइआल सदा किरपाल । तुमहि

छडावहु छुटकहि बंध । बखसि मिलावहु नानक जग अंध ।। ४ ।। १२ ।। २३ ।।

लोगों को दु:ख दे-देकर धन संचित होता है, किन्तु वह तुम्हारे काम नहीं आता, औरों के लिए ही रह जाता है। अज्ञान में अन्धे होने के कारण तुम्हें उस धन का अहंकार होता है, किन्तु वह यम के फन्दे के समान है, जिसमें तुम बँध जाते हो ॥१॥ ऐ मूर्ख, तू परायी चिन्ताओं को छोड़। संसार में तुझे सराय की तरह रात भर ठहरना है और अन्ततः माया की मस्ती में ही उठकर चल देना है। तू इस सपने-से संसार में क्यों लीन हो रहा है ? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बाल्यावस्था में बालक नासमझ होता है और यौवनावस्था में अनैतिक कार्यों में लिप्त हो जाता है। तीसरी अवस्था में धन एकत्रित करता है और वृद्धावस्था में सब कुछ छोड़कर चलते बनता है ॥ २ ॥ चिरकाल उपरान्त यह दुर्लभ मानव-देह मिली है, जो कि नाम के बिना मिट्टी में मिलती जा रही है। पशु, प्रेत आदि से भी यह निकृष्ट है, यदि इसमें रहकर भी जीव उस परमात्मा को नहीं बूझता जो संसार का स्रष्टा है ॥ ३ ॥ हे मेरे परमात्मा, हे गोविन्द गोपाल, मेरी विनती सुनो, तुम दीनदयालु हो, सदा अपने सेवकों पर कृपा करते हो। तुम्हीं हमारे बन्धन छुटवाओगे, तभी छूट सकते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु, हम पर कृपा करके हमें अपने संग मिला लो, अन्यथा हम तो अज्ञान के अँधेरे में भटक रहे हैं ॥ ४ ॥ १२ ॥ २३ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ करि संजोगु बनाई काछि । तिसु संगि रहिओ इआना राचि । प्रतिपारै नित सारि समारै । अंत की बार ऊठि सिधारै ॥ १ ॥ नाम बिना सभु झूठु परानी । गोविद भजन बिनु अवर संगि राते ते सभि माइआ मूठु परानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तीरथ नाइ न उतरसि मैलु । करम धरम सभि हउमै फैलु । लोक पचारै गति नही होइ । नाम बिहूणे चलसहि रोइ ॥ २ ॥ बिनु हरि नाम न टूटसि पटल । सोधे सासत्र सिम्रिति सगल । सो नामु जपै जिसु आपि जपाए । सगल फला से सूखि समाए ॥ ३ ॥ राखनहारे राखहु आपि । सगल सुखा प्रभ तुमरै हाथि । जितु लावहि तितु लागह सुआमी । नानक साहिबु अंतरजामी ॥ ४ ॥ १३ ॥ २४ ॥

परमात्मा ने अनेक तत्त्वों से इस शरीर का निर्माण किया है और ये नासमझ जीव उसी में लिप्त हैं। जीव इस शरीर का पोषण करता है और कई प्रकार से इसका ध्यान रखता है, किन्तु अन्ततः यह शरीर गिर ही

जाता है ॥१॥ हे प्राणी, नाम के बिना सब कुछ मिथ्या है। परमात्मा के भजन के बिना अन्य सम्पर्कों में लिप्त होना माया के द्वारा ठगा जाने के समान है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तीर्थों में स्नान करने से पापों का मैल नहीं उतरता। धर्म-कर्म के आडम्बरों से अहंकार का प्रसार होता है। लोगों को झूठी बातों से सन्तुष्ट कर देने से गति नहीं होती। नाम के अभाव में सब लोग यों ही पछताते रह जाते हैं ॥ २ ॥ हरि-नाम के बिना हमारे आवरण दूर नहीं होते; यह बात हमने शास्त्रों-स्मृतियों को पढ़ करके निष्कर्ष रूप में जान ली है। हरि-नाम भी वही जीव जप सकता है, जिसे परमात्मा यह सामर्थ्य देता है। (जो हरि का नाम जपता है) वह समस्त फलों का सुख प्राप्त करता है ॥ ३ ॥ परमात्मा सबका रक्षक है, वह रक्षा कर रहा है। जीव के समस्त सुख प्रभु तुम्हारे ही हाथ में है। हे स्वामी, तुम जिधर चाहो हमें लगा सकते हो, क्योंकि तुम अन्तर्यामी हो ॥४॥१३॥२४॥

॥ रामकली महला ५ ॥ जो किछु करै सोई सुखु जाना। मनु असमझु साधसंगि पतीआना। डोलन ते चूका ठहराइआ। सति माहि ले सति समाइआ ॥ १ ॥ दूखु गइआ सभु रोगु गइआ। प्रभ की आगिआ मन महि मानी महा पुरख का संगु भइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सगल पवित्र सरब निरमला। जो वरताए सोई भला। जह राखै सोई मुकति थानु। जो जपाए सोई नामु ॥ २ ॥ अठसठि तीरथ जह साध पग धरहि। तह बैकुंठु जह नामुउचरहि। सरब अनंद जब दरसनु पाईऐ। राम गुणा नित नित हरि गाईऐ ॥ ३ ॥ आपे घटि घटि रहिआ बिआपि। दइआल पुरख परगट परताप। कपट खुलाने भ्रम नाठे दूरे। नानक कउ गुर भेटे पूरे ॥ ४ ॥ १४ ॥ २५ ॥

जो जीव, परमात्मा के प्रति कुछ करता है, वही सुख का भागीदार होता है। मन नासमझ है, केवल सत्संगति में ही विश्वस्त होता है। सन्तों के सम्पर्क में उसकी चंचलता दूर हो जाती है और वह स्थिर हो जाता है और अन्ततः सत्यरूप होकर वह सत्य रूपी परमात्मा में ही समा जाता है ॥ १ ॥ जब जीव प्रभु की आज्ञा को मन में धारण कर लेता है और महापुरुषों की संगति करता है, तो उसके सब दुःख, रोग आदि दूर हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसका सर्वस्व पवित्र हो जाता है, सब कुछ निर्मल होता है; सब घटित होनेवाला उसके लिए भला होता है। जहाँ वह रहता है, वही उसका मुक्ति-स्थल है; जो कुछ वह जपता है, वही नाम है। (प्रभु-भक्त जीव नाम जपता, मुक्ति प्राप्त करता और प्रभु के रूपों में प्रसन्न

रहता है।) ॥२॥ जहाँ-जहाँ सन्तों के चरण पड़ते हैं वहीं सारे (अड़सठ) तीर्थ होते हैं; जहाँ बैठकर वह नाम उच्चारण करता है, वहीं वैकुण्ठ होता है। उसके दर्शन पाने से पूर्णानन्द की प्राप्ति होती है और जीव नित्य हरि-गुणगान करता है ॥ ३ ॥ वह प्रभु घट-घट में व्याप्त है, उस दयालु, परमपुरुष का प्रताप सब ओर प्रकट है। इसी कारण जीवों के कपाट खुल गये हैं और भ्रम दूर हो गये हैं। गुरु नानक कहते हैं कि पूरे गुरु से भेंट हो जाने पर सब प्रकार के (रहस्य प्रकट हो जाते हैं) ॥४॥१४॥२५॥

॥ रामकली महला ५ ॥ कोटि जाप ताप बिस्राम। रिधि बुधि सिधि सुरगिआन। अनिक रूप रंग भोग रसै। गुरमुखि नामु निमख रिदै वसै ॥ १ ॥ हरि के नाम की वडिआई। कीमति कहणु न जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सूरबीर धीरज मति पूरा। सहज समाधि धुनि गहिर गंभीरा। सदा मुकतु ता के पूरे काम। जा कै रिदै वसै हरि नाम ॥ २ ॥ सगल सूख आनंद अरोग। समदरसी पूरन निरजोग। आइ न जाइ डोलै कत नाही। जा कै नामु बसै मन माही ॥ ३ ॥ दीन दइआल गुपाल गोविंद। गुरमुखि जपीऐ उतरै चिंद। नानक कउ गुरि दीआ नामु। संतन की टहल संत का कामु ॥ ४ ॥ १५ ॥ २६ ॥

जिस हृदय में नाम निवास करता है, वहाँ करोड़ों जप-तप आकर रहने लगते हैं और रिद्धि, सिद्धि, बुद्धि और दिव्य ज्ञान भी वहीं मौजूद होते हैं। जीव अनेक प्रकार के रस भोगता है और गुरु की कृपा से अपने हृदय में हरि-नाम को उजागर करता है ॥ १ ॥ हरि के नाम की इतनी प्रतिष्ठा है कि उसका सही मूल्यांकन नहीं किया जा सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि-नाम को धारण करनेवाला जीव धैर्यवान, पराक्रमी और विवेकशील होता है। वह सहज समाधि में गम्भीर अनाहत नाद का श्रवण करता है। वह मुक्ति को प्राप्त करता है और उसकी सब कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं, क्योंकि उसके हृदय में सदा हरि-नाम बसता है ॥ २ ॥ सब प्रकार के सुखों, आनन्दों और आरोग्यों की उसे प्राप्ति होती है और वह निर्लेप समदर्शी-भाव से जीवन जीता है। जिसके मन में नाम बसता है, उसका आवागमन छूट जाता है और वह निश्चल हो जाता है ॥ ३ ॥ गुरु के उपदेशों से यदि जीव उस दीनदयालु गोविन्द प्रभु का नाम जपे तो उसकी सब चिन्ताएँ दूर हो जाती हैं। गुरु नानक को भी गुरु से (प्रभु से) हरि-नाम प्राप्त हुआ है, जिसे वे सन्तों की सेवा में और सन्तों के कार्य सँवारने में लगाए हुए हैं ॥ ४ ॥ १५ ॥ २६ ॥

।। रामकली महला ५ ।। बीज मंत्रु हरि कीरतनु गाउ । आगै मिली निथावे थाउ । गुर पूरे की चरणी लागु । जनम जनम का सोइआ जागु ।। १ ।। हरि हरि जापु जपला । गुर किरपा ते हिरदै वासै भउजलु पारि परला ।। १ ।। रहाउ ।। नामु निधानु धिआइ मन अटल । ता छूटहि माइआ के पटल । गुर का सबदु अंम्रित रसु पीउ । ता तेरा होइ निरमल जीउ ।। २ ।। सोधत सोधत सोधि बीचारा । बिनु हरि भगति नही छुटकारा । सो हरि भजनु साध कै संगि । मनु तनु रापै हरि कै रंगि ।। ३ ।। छोडि सिआणप बहु चतुराई । मन बिनु हरि नावै जाइ न काई । दइआधारी गोविद गुोसाई । हरि हरि नानक टेक टिकाई ।। ४ ।। १६ ।। २७ ।।

हरि का गुणगान ही बीजमन्त्र है, मैं उसी का कीर्तन करता हूँ। इससे मुझ बेसहारे को भी सहारा मिलता है। पूरे गुरु की चरणसेवा से मेरी जन्म-जन्म की अज्ञानता दूर हुई है ।।१।। मैंने हरि-नाम का जाप जपा है; गुरु की कृपा से मेरे हृदय में संसार-सागर को पार करवा देनेवाला परमात्मा निवास करने लगा है ।।१।।रहाउ।। जब मैं सुखों के भण्डार हरि-नाम का अटल ध्यान करता हूँ, तभी माया के बन्धन छूटते हैं। गुरु का अमृत-रस रूपी शब्द पान करने से आत्मा निर्मल होता है ।। २ ।। मैंने खोज-खोजकर यही निर्णय किया है कि हरिभक्ति के बिना छुटकारा नहीं। यह हरिभक्ति सन्तों के सम्पर्क में मिलती है और तभी तन-मन हरि के रंग में रँग जाता है ।। ३ ।। ऐ जीव, तू अपनी चतुराई और बुद्धिमत्ता को छोड़, तेरे मन को हरि-नाम के बिना और कोई सहारा नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि जब गोविन्द गुसाईं की कृपा होती है, तभी जीव को परमात्मा का सम्बल प्राप्त होता है ।। ४ ।। १६ ।। २७ ।।

।। रामकली महला ५ ।। संत कै संगि राम रंग केल । आगै जम सिउ होइ न मेल । अहंबुधि का भइआ बिनास । दुरमति होई सगली नास ।। १ ।। राम नाम गुण गाइ पंडित । करम कांड अहंकारु न काजै कुसल सेती घरि जाहि पंडित ।। १ ।। रहाउ ।। हरि का जसु निधि लीआ लाभ । पूरन भए मनोरथ साभ । दुखु नाठा सुखु घर महि आइआ । संत प्रसादि कमलु बिगसाइआ ।। २ ।। नाम रतनु जिनि पाइआ दानु । तिसु जन होए सगल निधान । संतोखु आइआ मनि पूरा पाइ ।

फिरि फिरि मागन काहे जाइ ॥ ३ ॥ हरि की कथा सुनत पवित । जिहवा बकत पाई गति मति । सो परवाणु जिसु रिदै वसाई । नानक ते जन ऊतम भाई ॥ ४ ॥ १७ ॥ २८ ॥

सन्तों के सम्पर्क में जीव राम के प्रेम का खेल खेलता है; इससे भविष्य में वह यमदूतों के सन्ताप से बच जाता है। उसके अहंकार का नाश हो जाता है और दुर्बुद्धि दूर होती है ॥ १ ॥ हे पंडित, राम-नाम का गुण गाओ; तुम्हारे कर्मकाण्ड और अहंकार किसी काम नहीं आएँगे, राम-नाम के कारण तुम सकुशल मुक्ति को पा जाओगे ॥१॥रहाउ॥ हरि का यश ही वह राशि है, जो लाभ में तुम्हें मिलेगी और तुम्हारे सब मनोरथ पूरे हो जाएँगे। दुःख नष्ट होगा और सब प्रकार के सुख प्राप्त होंगे। गुरु-सन्त की कृपा से हृदय रूपी कमल खिल गया है ॥ २ ॥ जिन जीवों ने दान में नाम रूपी रत्न प्राप्त किया है, उन जीवों को परमसुख की प्राप्ति हुई है। उनके मन में सन्तोष बस गया है और उन्हें परमपुरुष प्राप्त हुआ है। अब वे क्यों किसी के सामने हाथ पसारने जाएँगे ॥ ३ ॥ हरि की कथा श्रवण-पवित्र है; जो जिह्वा हरि-गुणगान करती है, वह सद्गति को प्राप्त होती है। जीभ की प्रत्येक मनोकामना पूर्ण हो जाती है और वह जीव संसार में भी उत्तम पद को प्राप्त करता है ॥४॥१७॥२८॥

॥ रामकली महला ५ ॥ गहु करि पकरी न आई हाथि । प्रीति करी चाली नही साथि । कहु नानक जउ तिआगि दई । तब ओह चरणी आइ पई ॥ १ ॥ सुणि संतहु निरमल बीचार । राम नाम बिनु गति नही काई गुरु पूरा भेटत उधार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब उस कउ कोई देवै मानु । तब आपस ऊपरि रखै गुमानु । जब उस कउ कोई मनि परहरै । तब ओहु सेवकि सेवा करै ॥ २ ॥ मुखि बेरावै अंति ठगावै । इकतु ठउर ओह कही न समावै । उनि मोहे बहुते ब्रहमंड । राम जनी कीनी खंड खंड ॥ ३ ॥ जो मागै सो भूखा रहै । इसु संगि राचै सु कछू न लहै । इसहि तिआगि सत संगति करै । वडभागी नानक ओहु तरै ॥ ४ ॥ १८ ॥ २९ ॥

माया को जब सप्रयास पकड़ने का यत्न किया तो यह हाथ से निकल गयी अर्थात् इसकी ग़ुलामी करने से यह किसी का साथ नहीं देती। प्रेम-पूर्वक इसने साथ नहीं दिया। गुरु नानक कहते हैं कि जो इसे त्यागता है, इसका तिरस्कार करता है, यह उसकी दासी बनकर चरणों में आ जाती

है ।। १ ।। हे सन्तो, यह निर्मल विचार सुनो कि राम-नाम के बिना गति नहीं और सच्चे गुरु के मिलन के बिना जीव का उद्धार सम्भव नहीं ।। १ ।। रहाउ ।। जब कोई माया को सम्मानित करता है, तो वह अपने आप पर गर्व करने लगती है । जब कोई अपने मन से उसे हटा देता है, तब वह दासी बनकर सेवा करने लगती है ।। २ ।। माया पहले तो आकर्षित करती है, किन्तु अन्त में धोखा दे जाती है। किसी एक जगह पर वह स्थिर नहीं रहती । उसने बहुत से खण्डों-ब्रह्माण्डों को मोह रखा है, किन्तु सन्तों ने उसे टुकड़े-टुकड़े कर दिया है ।। ३ ।। जो माँगता है, वह भूखा रहता है। माया के साथ प्रेम रचानेवाला कुछ भी नहीं पा सकता । जो इसको त्यागकर सत्संगति करता है, गुरु नानक के मतानुसार वह भाग्यशाली है और मुक्ति को प्राप्त करता है ।। ४ ।। १८ ।। २९ ।।

।। रामकली महला ५ ।। आतम रामु सरब महि पेखु। पूरन पूरि रहिआ प्रभ एकु। रतनु अमोलु रिदे महि जानु। अपनी वसतु तू आपि पछानु ।।१।। पी अंम्रितु संतन परसादि। वडे भाग होवहि तउ पाईऐ बिनु जिहवा किआ जाणै सुआदु ।। १ ।। रहाउ ।। अठदस बेद सुने कह डोरा। कोटि प्रगास न दिसै अंधेरा। पसू परीति घास संगि रचै। जिसु नही बुझावै सो कितु बिधि बुझै ।। २ ।। जानणहारु रहिआ प्रभु जानि। ओति पोति भगतन संगानि। बिगसि बिगसि अपुना प्रभु गावहि। नानक तिन जम नेड़ि न आवहि ।। ३ ।। १९ ।। ३० ।।

सबमें तू परमात्मा का रूप देख। सबमें वही पूर्णपरमात्मा व्याप्त है। उस अमूल्य रत्न को तुम अपने हृदय से ही खोज सकते हो; वह तुम्हारी अपनी वस्तु है, तुम्हें स्वयं उसे पहचानना होगा ।। १ ।। सन्तों की कृपा से प्रभु-नाम रूपी अमृत का पान कर। उस अमृत की प्राप्ति भाग्यशाली जीवों को ही होती है, किन्तु भक्ति की जिह्वा के बिना उसका स्वाद नहीं जाना जाता ।। १ ।। रहाउ ।। यह जीव अठारह पुराणों तथा चार वेदों की कथा सुनकर भी बहरा बना रहता है। करोड़ों प्रकाश होते हैं, किन्तु यह अन्धकार में अदृश्य ही बना रहता है। जीव रूपी पशु की प्रीति घास के संग रहती है, यदि वह प्रकट न हो तो कोई स्वयं उसे नहीं जान सकता ।। २ ।। ज्ञानवान जीव प्रभु को जानता है और पूरी तरह से भक्तों के साथ रहता है। प्रसन्न हो-होकर अपने परमात्मा का गुणगान करता है और गुरु नानक के मतानुसार यमदूत कभी उसके निकट नहीं आता ।। ३ ।। १९ ।। ३० ।।

॥ रामकली महला ५ ॥ दीनो नामु कीओ पवितु । हरि धनु रासि निरास इह बितु । काटी बंधि हरि सेवा लाए । हरि हरि भगति रा गुण गाए ।। १ ।। बाजे अनहद बाजा । रसकि रसकि गुण गावहि हरि जन अपनै गुरदेवि निवाजा ।। १ ।। रहाउ ।। आइ बनिओ पूरबला भागु । जनम जनम का सोइआ जागु । गई गिलानि साध कै संगि । मनु तनु रातो हरि कै रंगि ।। २ ।। राखे राखनहार दइआल । ना किछु सेवा ना किछु घाल । करि किरपा प्रभि कीनी दइआ । बूडत दुख महि काढि लइआ ।। ३ ।। सुणि सुणि उपजिओ मन महि चाउ । आठ पहर हरि के गुण गाउ । गावत गावत परम गति पाई । गुरप्रसादि नानक लिव लाई ।। ४ ।। २० ।। ३१ ।।

जो जीव राम-नाम का सहारा लेता है, वह पवित्र हो जाता है। हरि-नाम रूपी धन उसकी राशि बन जाता है और माया उससे निराश होकर दूर हट जाती है। गुरु की कृपा से माया के बन्धन कट जाते हैं और जीव हरिभक्ति में मस्त होकर राम का गुणगान करने लगता है ।। १ ।। अनाहत नाद होने लगा है और हरिजन गुरु द्वारा निर्दिष्ट होकर स्वाद ले-लेकर हरिगुण गाने लगते हैं ।।१।।रहाउ।। जीव का भाग्य जाग्रत् होता है और जन्म-जन्म का सोया हुआ ज्ञान उजागर होता है। हर प्रकार की घृणा साधु-संगति में नष्ट हो जाती है और तन-मन हरि-रंग में रच जाता है ।।२।। वह सर्वरक्षक परमात्मा दया करके हमारी रक्षा करता है, हमसे कोई सेवा और परिश्रम भी नहीं करवाता। वह तो अपने आप कृपा करके दया करता है और डूबते हुए जीव को दुःख से निकाल लेता है ।।३।। हरि की कीर्ति सुन-सुनकर मेरे मन में चाव उपजता है और मैं भी आठों प्रहर हरि का गुणगान करता हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु की कृपा से हरि-नाम में ऐसी प्रीति बनती है कि उसको जपते-जपते ही परमगति मिल जाती है ।। ४ ।। २० ।। ३१ ।।

॥ रामकली महला ५ ॥ कउडी बदलै तिआगै रतनु । छोडि जाइ ताहू का जतनु । सो संचै जो होछी बात । माइआ मोहिआ टेढउ जात ।। १ ।। अभागे तै लाज नाही । सुख सागर पूरन परमेसरु हरि न चेतिओ मन माही ।। १ ।। रहाउ ।। अंम्रितु कउरा बिखिआ मीठी । साकत की बिधि नैनहु डीठी । कूड़ि कपटि अहंकारि रीझाना । नामु सुनत जनु

बिछूअ डसाना ।। २ ।। माइआ कारणि सदही झूरै । मनि मुखि कबहि न उसतति करै । निरभउ निरंकार दातारु । तिसु सिउ प्रीति न करै गवारु ।। ३ ।। सभ साहा सिरि साचा साहु । वेमुहताजु पूरा पातिसाहु । मोह मगन लपटिओ भ्रम गिरह । नानक तरीऐ तेरी मिहर ।। ४ ।। २१ ।। ३२ ।।

जीव भोला है, जो कौड़ियों के बदले रत्नों को त्याग देता है। जो माया उसे छोड़ देती है, वह उसी को पाने का प्रयत्न करता है। जो निकृष्ट है, जीव उसी को संचित करता है और माया के अभिमान में टेढ़ा होकर चलता है ।। १ ।। उसका दुर्भाग्य है कि उसे माया का अनुसरण करने में भी लाज नहीं आती और वह सुखों के सागर परमेश्वर को अपने मन में चिन्तन नहीं कर पाता ।। १ ।। रहाउ ।। ऐसे जीव को अमृत (हरि-नाम) कड़वा लगता है और विष (माया) मीठा लगता है। मैंने ऐसे मायावी जीवों का हाल अपनी आँखों से देखा है। वह मिथ्या, कपट-पूर्ण और अहंकार में ही प्रसन्न होता है, किन्तु कानों में हरि-नाम के पड़ते ही उसे बिच्छू के डंक की तरह पीड़ा होती है ।। २ ।। माया के लिए वह सदा दौड़-भाग करता रहता है। मन से तो दूर मुँह से भी परमात्मा की स्तुति नहीं करता। वह ऐसा गँवार है कि निर्भय, निरंकार परमात्मा से भी प्रीति नहीं जोड़ता ।। ३ ।। वह राजाओं का भी राजा है, किसी पर वह आश्रित नहीं। राज-राजेन्द्र है; किन्तु मोह की मस्ती और भ्रम की गाँठ में बँधा रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसा जीव केवल तुम्हारी ही कृपा से मुक्त होता है ।। ४ ।। २१ ।। ३२ ।।

।। रामकली महला ५ ।। रैणि दिनसु जपउ हरि नाउ । आगै दरगह पावउ थाउ । सदा अनंदु न होवी सोगु । कबहू न बिआपै हउमै रोगु ।। १ ।। खोजहु संतहु हरि ब्रहम गिआनी । बिसमन बिसम भए बिसमादा परमगति पावहि हरि सिमरि परानी ।। १ ।। रहाउ ।। गनि मिनि देखहु सगल बीचारि । नाम बिना को सकै न तारि । सगल उपाव न चालहि संगि । भवजलु तरीऐ प्रभ कै रंगि ।। २ ।। देही धोइ न उतरै मैलु । हउमै बिआपै दुबिधा फैलु । हरि हरि अउखधु जो जनु खाइ । ता का रोगु सगल मिटि जाइ ।। ३ ।। करि किरपा पारब्रहम दइआल । मन ते कबहु न बिसरु गुोपाल । तेरे दास की होवा धूरि । नानक की प्रभ सरधा पूरि ।। ४ ।। २२ ।। ३३ ।।

ऐ जीव, रात-दिन हरि का नाम जपो, इसी से आगे प्रभु के दरबार में तुम्हें स्थान मिलेगा। तुम चिर-आनन्द को प्राप्त करोगे, तुम्हें कभी शोक नहीं होगा और न ही अहंकार का रोग तुम्हें लगेगा ॥ १ ॥ हे सन्तजनो, किसी ब्रह्मज्ञानी हरि-भक्त को खोजो। हरि के सिमरन से ही परमानन्द की प्राप्ति और उद्धार होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भलीभाँति गिनती-मिनती कर विचार करो, नाम के बिना किसी और साधन से उद्धार नहीं हो सकता। हर तरह के अन्य उपाय नहीं चल सकते, केवल प्रभु के रंग में ही संसार-सागर से पार हुआ जा सकता है ॥ २ ॥ शरीर को धोने से मन का मैल नहीं उतरता। अहंकार, दुबिधा आदि अधिक से अधिक विकसित होते हैं। केवल वे ही जीव, जो हरि-नाम की औषध का पान करते हैं, सब प्रकार के रोगों से मुक्त हो जाते हैं ॥ ३ ॥ हे दया के सागर परब्रह्म ! मुझ पर कृपा करो। मेरे मन से प्रभु का स्वरूप कभी दूर न हो, तेरे दासों की मैं चरणधूलि हो जाऊँ; यही गुरु नानक की चाह है, इसे पूर्ण करो ॥ ४ ॥ २२ ॥ ३३ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ तेरी सरणि पूरे गुरदेव। तुधु बिनु दूजा नाही कोइ। तू समरथु पूरन पारब्रहमु। सो धिआए पूरा जिसु करमु ॥ १ ॥ तरण तारण प्रभ तेरो नाउ। एका सरणि गही मन मेरै तुधु बिनु दूजा नाही ठाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जपि जपि जीवा तेरा नाउ। आगै दरगह पावउ ठाउ। दूखु अंधेरा मन ते जाइ। दुरमति बिनसै राचै हरि नाइ ॥ २ ॥ चरन कमल सिउ लागी प्रीति। गुर पूरे की निरमल रीति। भउ भागा निरभउ मनि बसै। अंम्रित नाम रसना नित जपै ॥ ३ ॥ कोटि जनम के काटे फाहे। पाइआ लाभु सचा धनु लाहे। तोटि न आवै अखुट भंडार। नानक भगत सोहहि हरि दुआर ॥ ४ ॥ २३ ॥ ३४ ॥

हे मेरे सच्चे गुरुदेव, मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ; मेरे लिए तुम्हारे अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं। तुम स्वयं समर्थ हो, परब्रह्म का रूप हो। कोई भाग्यशाली ही तुम्हारे ध्यान में मग्न होता है ॥ १ ॥ प्रभु का नाम तारणहार है, मेरे मन ने उसी एक प्रभु की शरण ग्रहण की है, उसके बिना मेरे लिए अन्य कोई सहारा नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, मैं तुम्हारा नाम जपकर ही जीवित हूँ। इसी से मुझे तुम्हारे दरबार में स्थान मिलेगा। मेरे मन से दुःख का अँधेरा दूर होगा और हरि-नाम का गान करने से मेरी कुबुद्धि नष्ट होगी ॥ २ ॥ तुम्हारे चरण-कमलों से ही

मेरी प्रीत लगी है। यही सच्चे गुरु ने मुझे शिक्षा दी है (कि मैं तुम्हारे चरणों में मन रमाऊँ)। मेरा भय दूर हो गया है, मन निर्भय विचरण करता है और मेरी जिह्वा नित्य अमृत-समान हरि-नाम का रस पान करती है ॥ ३ ॥ मेरे करोड़ों जन्मों के बन्धन अब खुल गये हैं, जीवन-व्यापार में अब मुझे सच्चा लाभ प्राप्त हुआ है। इस अनन्त भण्डार में कभी कमी नहीं आती, गुरु के भक्त सदा परमात्मा के द्वार पर ही शोभते हैं ॥ ४ ॥ २३ ॥ ३४ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ रतन जवेहर नाम। सतु संतोखु गिआन। सूख सहज दइआ का पोता। हरि भगता हवालै होता ॥ १ ॥ मेरे राम को भंडारु। खात खरचि कछु तोटि न आवै अंतु नही हरि पारावारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कीरतनु निरमोलक हीरा। आनंद गुणी गहीरा। अनहद बाणी पूंजी। संतन हथि राखी कूंजी ॥ २ ॥ सुंन समाधि गुफा तह आसनु। केवल ब्रहम पूरन तह बासनु। भगत संगि प्रभु गोसटि करत। तह हरख न सोग न जनम न मरत ॥ ३ ॥ करि किरपा जिसु आपि दिवाइआ। साध संगि तिनि हरि धनु पाइआ। दइआल पुरख नानक अरदासि। हरि मेरी वरतणि हरि मेरी रासि ॥ ४ ॥ २४ ॥ ३५ ॥

प्रभु का नाम रत्नों-जवाहिरातों जैसा है, उसकी प्राप्ति से जीव में सत्य, सन्तोष और ज्ञान के गुण जाग्रत् होते हैं। सहजावस्था में हरि की दया मिलती है और जीव को हरि-भक्तों के सम्पर्क में रखा जाता है ॥ १ ॥ मेरे राम का भण्डार इतना अनन्त है कि खाने-खर्चने से उसमें कोई कमी नहीं आती, वह तो पारावार है, उसका कोई अन्त नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु का कीर्तन अमूल्य रत्न के समान है, उसमें से गम्भीर आनन्द की प्राप्ति होती है। हरि का नाम अनाहत शब्द का खज़ाना है; इस खज़ाने की कुन्जी सन्तों के हाथ में है ॥ २ ॥ वहाँ वे अपने ही स्वरूप में स्थिर होते हैं; केवल ब्रह्म ही वहाँ बसा हुआ है। वहाँ परमात्मा भक्तों के साथ गोष्ठी करता है; वहाँ न प्रसन्नता होती है न शोक; न जन्म होता है न मरण की चिन्ता रहती है ॥ ३ ॥ वह परमात्मा स्वयं कृपा करके जिसको दिलाता है, वही सत्संगति के द्वारा हरि-धन को प्राप्त करता है। परम-दयालु और पालनहार परमात्मा से दास नानक की विनती है कि हे हरि, तुमको ही मेरा आचरण अर्पित है और तुम ही मेरे खज़ाना हो ॥ ४ ॥ २४ ॥ ३५

॥ रामकली महला ५ ॥ महिमा न जानहि बेद । ब्रहमे नही जानहि भेद । अवतार न जानहि अंतु । परमेसरु पारब्रहम बेअंतु ॥ १ ॥ अपनी गति आपि जानै । सुणि सुणि अवर वखानै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संकरा नही जानहि भेव । खोजत हारे देव । देवीआ नही जानै मरम । सभ ऊपरि अलख पारब्रहम ॥ २ ॥ अपनै रंगि करता केल । आपि बिछोरै आपे मेल । इकि भरमे इकि भगती लाए । अपणा कीआ आपि जणाए ॥ ३ ॥ संतन की सुणि साची साखी । सो बोलहि जो पेखहि आखी । नही लेपु तिसु पुंनि न पापि । नानक का प्रभु आपे आपि ॥ ४ ॥ २५ ॥ ३६ ॥

हरि अनन्त है, उसकी महिमा वेदों को भी ज्ञात नहीं, ब्रह्मा भी उसका भेद नहीं जानता । परमात्मा के अवतार कहलवानेवाले जीव भी उसका अन्त नहीं पा सकते, क्योंकि वह परमेश्वर बे-अन्त है ॥ १ ॥ वह अपनी गति स्वयं ही जानता है, अन्य लोग तो सुनी-सुनाई बातें करते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शिवजी सरीखे महादेव भी उसका भेद नहीं जानते, देवता लोग युद्धभूमि में पराजित हो गये, देवियाँ उसके मर्म को नहीं पहचानतीं; वह पारब्रह्म सबसे ऊँचा है, सबसे उन्नत है ॥ २ ॥ परमात्मा स्वेच्छा से लीला-धारी होता है । वह स्वयं संयोग या वियोग प्रदान करता है । कुछ को उसने भ्रम में डाल रखा है और कुछ जीवों को भक्ति का दान दिया है । वह अपना किया स्वयं ही जानता है ॥ ३ ॥ इसलिए, ऐ जीव, सन्तों की सच्ची शिक्षा सुनो, क्योंकि वे जो कुछ आँखों से देखते हैं वही कहते हैं । उस जीव को गुरु नानक पाप-पुण्य से इतर मानते हैं, जिन पर परमात्मा अपने को प्रकट करता है ॥ ४ ॥ २५ ॥ ३६ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ किछहू काजु न कीओ जानि । सुरति मति नाही किछु गिआनि । जाप ताप सील नही धरम । किछू न जानउ कैसा करम ॥ १ ॥ ठाकुर प्रीतम प्रभ मेरे । तुझ बिनु दूजा अवरु न कोई भूलह चूकह प्रभ तेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रिधि न बुधि न सिधि प्रगासु । बिखै बिआधि के गाव महि बासु । करणहार मेरे प्रभ एक । नाम तेरे की मन महि टेक ॥ २ ॥ सुणि सुणि जीवउ मनि इहु बिस्रामु । पाप खंडन प्रभ तेरो नामु । तू अगनतु जीअ का दाता । जिसहि जणावहि तिनि तू जाता ॥ ३ ॥ जो उपाइओ तिसु तेरी आस ।

सगल अराधहि प्रभ गुणतास। नानक दास तेरै कुरबाणु। बेअंत साहिबु मेरा मिहरवाणु ॥ ४ ॥ २६ ॥ ३७ ॥

(गुरुजी प्रार्थना करते हैं कि) मैंने जान-बूझकर कोई उत्तम कर्म नहीं किये। अपनी बुद्धि और आत्मा को ज्ञान के जल से नहीं धोया। मुझमें जप-तप, शील और धर्म की सामर्थ्य भी नहीं और न ही मुझे उचित कर्म का ज्ञान है ॥ १ ॥ किन्तु, हे मेरे स्वामी, हे मेरे प्रियतम, हम भूल करते हैं, समय से चूक जाते हैं, किन्तु हम तुम्हारे ही तो हैं, तुम्हारे बिना हमारा दूसरा कोई नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हमारे पास न तो रिद्धियों-सिद्धियों की शक्तियाँ हैं, न ज्ञान का आलोक है; विषय-विकारों के दुःखों के गाँव में हम रहते हैं। हे मेरे प्रभु, तुम ही करने योग्य हो, इसीलिए केवल तुम्हारे नाम का सहारा हमने मन में अपना रखा है ॥ २ ॥ मेरे मन में यही सन्तोष है कि तुम पापों का नाश करनेवाले हो, तुम असंख्य जीवों को जीवन देनेवाले हो; जिसे तुम अपनी पहचान देते हो, वही तुम्हें पहचान पाता है ॥ ३ ॥ जो इस धरती पर पैदा होता है, उसे तुम्हारा ही आश्रय है। सभी लोग तुम्हें गुणों का भण्डार मानकर तुम्हारी आराधना करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे तुम्हारी अनन्त कृपाओं और दयालुस्वामित्व के कारण तुम पर क़ुर्बान हैं ॥ ४ ॥ २६ ॥ ३७ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ राखनहार दइआल। कोटि भव खंडे निमख खिआल। सगल अराधहि जंत। मिलीऐ प्रभ गुर मिलि मंत ॥ १ ॥ जीअन को दाता मेरा प्रभु। पूरन परमेसुर सुआमी घटि घटि राता मेरा प्रभु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ता की गही मन ओट। बंधन ते होई छोट। हिरदै जपि परमानंद। मन माहि भए अनंद ॥ २ ॥ तारणतरण हरि सरण जीवन रूप हरि चरण। संतन के प्राण अधार। ऊचे ते ऊच अपार ॥ ३ ॥ सुमति सारु जितु हरि सिमरीजै। करि किरपा जिसु आपे दीजै। सूख सहज आनंद हरि नाउ। नानक जपिआ गुर मिलि नाउ ॥ ४ ॥ २७ ॥ ३८ ॥

वह परमात्मा सबका रक्षक है, एक बार उसका ध्यान करने से करोड़ों जन्मों का आवागमन मिट जाता है। सभी जीव-जन्तु उसी की आराधना करते हैं; हमें भी गुरु को मिलकर उसके उपदेश द्वारा प्रभु-मिलन को प्राप्त करना चाहिए ॥ १ ॥ मेरा प्रभु, सब जीवों का दाता है; वह पूर्णपरब्रह्म सबका स्वामी और घट-घट में व्याप्त है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे मन ने एकमात्र उसी का सहारा लिया है, इसीलिए मेरे

सब बन्धन छूट गये हैं। परमानन्द परमात्मा को हृदय में जपने से मन को परम-प्रसन्नता होती है ।। २ ।। हरि की शरण लेने में सबका उद्धार निहित है। हरि-चरणों में लीन जीवन ही सही चेतना है, हरि ही सन्तों का प्राणाधार है और ऊँचे से ऊँचा अपार तत्त्व है ।। ३ ।। वह बुद्धि श्रेष्ठ है, जिससे हरि का सिमरन सम्भव होता है। ऐसी बुद्धि की प्राप्ति प्रभु-कृपा से ही होती है। हरि-नाम द्वारा सहजानन्द की उपलब्धि होती है, इसीलिए गुरु नानक, गुरु के उपदेशानुसार नाम जपने को साध्य मानते हैं ।। ४ ।। २७ ।। ३८ ।।

।। रामकली महला ५ ।। सगल सिआनप छाडि । करि सेवा सेवक साजि । अपना आपु सगल मिटाइ । मन चिंदे सेई फल पाइ ।। १ ।। होहु सावधान अपुने गुर सिउ । आसा मनसा पूरन होवै पावहि सगल निधान गुर सिउ ।। १ ।। रहाउ ।। दूजा नही जानै कोइ । सतगुरु निरंजनु सोइ । मानुख का करि रूपु न जानु । मिली निमाने मानु ।। २ ।। गुर की हरि टेक टिकाइ । अवर आसा सभ लाहि । हरि का नामु मागु निधानु । ता दरगह पावहि मानु ।। ३ ।। गुर का बचनु जपि मंतु । एहा भगति सार ततु । सतिगुर भए दइआल । नानक दास निहाल ।। ४ ।। २८ ।। ३९ ।।

ऐ जीव, तू अपनी चंचल चतुराई को छोड़ और अपने आप को सेवक बनाकर सेवा में संलग्न रह। उस अवस्था में तुम्हारी सभी मनोकामनाएँ सुफलित होंगी ।। १ ।। अपने गुरु के साथ वृत्ति जोड़कर जीव अपनी सब मनोकामनाओं को तो पूर्ण करता ही है, बल्कि सब प्रकार की निधियों को भी प्राप्त करता है ।। १ ।। रहाउ ।। दूसरा कोई इस सत्य को नहीं पहचानता कि सतगुरु ही मायारहित ब्रह्म है। 'वह मनुष्य के रूप में आया है' —यही न समझ, बल्कि उसे निराश्रितों का आश्रय मान ।। २ ।। परमात्मा स्वयं गुरु के वचनों का रक्षक होता है। इसीलिए अन्य सब आशाओं को छोड़कर हरि-नाम की ही भिक्षा माँग, ताकि तुझे उसके दरबार में प्रतिष्ठा प्राप्त हो सके ।। ३ ।। गुरु के द्वारा दी हुई शिक्षाओं पर आचरण कर, यही भक्ति का सार तत्त्व है। सतगुरु की कृपा हो जाने से, गुरु नानक कहते हैं, जीव हर प्रकार से निहाल हो जाता है ।। ४ ।। २८ ।। ३९ ।।

।। रामकली महला ५ ।। होवै सोई भल मानु । आपना तजि अभिमानु । दिनु रैनि सदा गुन गाउ । पूरन इही

सुआउ ॥ १ ॥ आनंद करि संत हरि जपि । छाडि सिआनप बहु चतुराई । गुर का जपि मंतु निरमल ॥१॥ रहाउ ॥ एक की करि आस भीतरि । निरमल जपि नामु हरि हरि । गुर के चरन नमसकारि । भवजलु उतरहि पारि ॥ २ ॥ देवनहार दातार । अंतु न पारावार । जा कै घरि सरब निधान । राखनहार निदान ॥ ३ ॥ नानक पाइआ एहु निधान । हरे हरि निरमल नाम । जो जपै तिस की गति होइ । नानक करमि परापति होइ ॥ ४ ॥ २९ ॥ ४० ॥

संसार में जो घटित हो रहा है, उसी को अपने लिए श्रेष्ठ समझो और अपना अभिमान त्याग दो । रात-दिन सदा परमात्मा के गुण गाओ, इसी से जीव का प्रयोजन सफल होता है ॥ १ ॥ हे जीव, सन्तों की शरण लेकर परमात्मा का जाप करो; अपनी बुद्धि और चतुराई को गुरु के सम्मुख समर्पित कर निर्मल प्रभु-मन्त्र का जाप करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपने मन में केवल एक प्रभु का ही सहारा लो, निर्मल हरि-नाम का जाप करो, गुरु के चरणों में नमन करो और इस प्रकार संसार-सागर से मुक्ति प्राप्त करो ॥ २ ॥ प्रभु दाता है, उसकी देन का कोई आर-पार या अन्त नहीं । जिसके मन में वह गुणनिधि स्वयं वास करता है, अन्ततः उसकी रक्षा तो होती ही है ॥ ३ ॥ गुरु नानक को वह दिव्य प्रभु प्राप्त है, उसका निर्मल नाम गुरु नानक गान करते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि इस उज्ज्वल नाम के जपनेवाले का उद्धार हो जाता है; किन्तु इसकी उपलब्धि उसी (मनुष्य) को होती है, जिस पर प्रभु की कृपा हो जाती है ॥ ४ ॥ २९ ॥ ४० ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ दुलभ देह सवारि । जाहि न दरगह हारि । हलति पलति तुधु होइ वडिआई । अंत की बेला लए छडाई ॥ १ ॥ राम के गुन गाउ । हलतु पलतु होहि दोवै सुहेले । अचरज पुरखु धिआउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऊठत बैठत हरि जापु । बिनसै सगल संतापु । बैरी सभि होवहि मीत । निरमलु तेरा होवै चीत ॥ २ ॥ सभ ते ऊतम इहु करमु । सगल धरम महि स्रेसट धरमु । हरि सिमरनि तेरा होइ उधारु । जनम जनम का उतरै भारु ॥३॥ पूरन तेरी होवै आस । जम की कटीऐ तेरी फास । गुर का उपदेसु सुनीजै । नानक सुखि सहजि समीजै ॥ ४ ॥ ३० ॥ ४१ ॥

हे जीव, इस दुर्लभ शरीर की प्राप्ति को सफल बना लो, कहीं तुम्हें पराजित होकर न लौटना पड़े। इहलोक और परलोक में तुम्हारी प्रतिष्ठा होगी और अन्त समय भी तुम्हें मुक्ति प्राप्त होगी ॥ १ ॥ ऐ जीव, तुम राम के गुण गाओ जिससे तुम्हारे दोनों लोक सुखी हो जाएँगे, वही एकाग्रचित्त ध्यान परमात्मा में लगाओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उठते-बैठते हरि-नाम का जाप करो, इससे सब सन्ताप दूर हो जाएँगे। वैरी भी मित्र बनेंगे और तुम्हारा मन निर्मल हो जाएगा ॥ २ ॥ हरि-नाम का जाप ही सबसे उत्तम कर्म है, यही सब धर्मों में श्रेष्ठ धर्म है, क्योंकि हरि-सिमरन से तुम्हारा उद्धार होगा। और जन्म-जन्म का बोझ हल्का हो जाएगा ॥ ३ ॥ तेरी सब आशाएँ पूर्ण हो जाएँगी और तुम्हारी काल की फाँसी कट जाएगी। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु का उपदेश सुनने और उस पर आचरण करने से जीव सहज आनन्द को प्राप्त करता है ॥ ४ ॥ ३० ॥ ४१ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ जिस की तिस की करि मानु। आपन लाहि गुमानु। जिस का तू तिस का सभु कोइ। तिसहि अराधि सदा सुखु होइ ॥ १ ॥ काहे भ्रमि भ्रमहि बिगाने। नाम बिना किछु कामि न आवै मेरा मेरा करि बहुतु पछुताने ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जो करै सोई मनि लेहु। बिनु माने रलि होवहि खेह। तिस का भाणा लागै मीठा। गुर प्रसादि विरले मनि वूठा ॥ २ ॥ वेपरवाहु अगोचरु आपि। आठ पहर मन ता कउ जापि। जिसु चिति आए बिनसहि दुखा। हलति पलति तेरा ऊजल मुखा ॥ ३ ॥ कउन कउन उधरे गुन गाइ। गनणु न जाई कीम न पाइ। बूडत लोह साध संगि तरै। नानक जिसहि परापति करै ॥४॥३१॥४२॥

हे जीव, अपने अभिमान को त्यागकर केवल हरि की शरण में समर्पित हो जाओ। जिसके तुम हो, उसका सब कुछ है; इसलिए उसकी आराधना करने से ही तुम्हें सुख प्राप्त होगा ॥ १ ॥ ऐ मूर्ख जीव, इधर-उधर क्यों भटकता है ? मेरा-मेरा करने से तुम्हें पश्चात्ताप ही होगा, क्योंकि प्रभु के नाम के बिना कुछ भी सार्थक नहीं है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो-जो वह करता है, उसी को अपने लिए भला मान लो, क्योंकि ऐसा न मानने से सब कुछ नाश हो जाएगा। परमात्मा की इच्छा को सदा मधुर-भाव से ग्रहण करो, गुरु की कृपा से ही वह किसी विरले हृदय में वास करता है ॥ २ ॥ वह परमात्मा मन-वाणी का विषय नहीं है, आठों प्रहर मन से उसका जाप करो। जिस मन में वह उजागर हो जाएगा उसके

दुःख दूर हो जाएँगे और लोक-परलोक में उसका मुख उज्ज्वल होगा ।। ३ ।। कौन-कौन जीव प्रभु का गुणगान करने से उद्धार को नहीं प्राप्त हुए ! जो उसके गुण नहीं जानता, वह उसकी क़ीमत नहीं पा सकता । (ऐसे जीव को सन्तों की शरण लेनी चाहिए ।) डूबता लोहा भी सन्तों की संगति में तर जाता है, और यह सामर्थ्य गुरु-मतानुसार उसी को मिलती है, जिसे वह प्रभु कृपा करके स्वयं प्रदान करता है ।। ४ ।। ३१ ।। ४२ ।।

।। रामकली महला ५ ।। मन माहि जापि भगवंतु । गुरि पूरै इहु दीनो मंतु । मिटे सगल भै त्रास । पूरन होई आस ।। १ ।। सफल सेवा गुर देवा । कीमति किछु कहणु न जाई । साचे सचु अलख अभेवा ।। १ ।। रहाउ ।। करन करावन आपि । तिस कउ सदा मन जापि । तिस की सेवा करि नीत । सचु सहजु सुखु पावहि मीत ।। २ ।। साहिबु मेरा अति भारा । खिन महि थापिउथापनहारा । तिसु बिनु अवरु न कोई । जन का राखा सोई ।। ३ ।। करि किरपा अरदासि सुणीजै । अपणे सेवक कउ दरसनु दीजै । नानक जापी जपु जापु । सभ ते ऊच जा का परतापु ।। ४ ।। ३२ ।। ४३ ।।

मन में प्रभु-नाम का जाप करो, यही मेरे सतगुरु का उपदेश है । इससे सब प्रकार के भय और सन्ताप नष्ट हो जाते हैं और सब आशाएँ पूर्ण हो जाती हैं ।। १ ।। गुरु की सेवा में संलग्न होनेवाला जीव सदा सफल होता है; वह उस रहस्यात्मक अदृश्य सच्चाई को पा लेता है, जिसका बाहरी मूल्यांकन सम्भव नहीं ।। १ ।। रहाउ ।। वह परमात्मा स्वयं सब कुछ करनेवाला है । सदा उसी को मन में जपो । नित्य उसकी सेवा करो (नाम-जाप ही उसकी सेवा है), हे मित्र, ऐसा करने से तुम सहज सुख को प्राप्त कर लोगे ।। २ ।। मेरा स्वामी अत्यन्त महिमावान है, वह क्षण भर में ही निर्माण और विनाश कर सकने में समर्थ है । उसके बिना संसार में और कोई नहीं, वही सबका रक्षक है ।। ३ ।। गुरु नानक कहते हैं कि हे हरि, कृपा करके मेरी प्रार्थना सुनो और अपने दास को दर्शन दो । वे तो नित्य उस प्रभु-नाम का जाप करते हैं, जिसकी महिमा सर्वोच्च है ।। ४ ।। ३२ ।। ४३ ।।

।। रामकली महला ५ ।। बिरथा भरवासा लोक । ठाकुर प्रभ तेरी टेक । अवर छूटी सभ आस । अचिंत ठाकुर भेटे गुणतास ।। १ ।। एको नामु धिआइ मन मेरे । कारजु तेरा

होवै पूरा हरि हरि हरि गुण गाइ मन मेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुमही कारन करन। चरन कमल हरि सरन। मनि तनि हरि ओही धिआइआ। आनंद हरि रूप दिखाइआ ॥ २ ॥ तिसही की ओट सदीव। जा के कीने है जीव। सिमरत हरि करत निधान। राखनहार निदान ॥ ३ ॥ सरब की रेण होवीजै। आपु मिटाइ मिलीजै। अनदिनु धिआईऐ नामु। सफल नानक इहु कामु ॥ ४ ॥ ३३ ॥ ४४ ॥

इस संसार का भरोसा करना व्यर्थ है। हे स्वामी, मुझे केवल तुम्हारा ही सहारा है, मैंने अन्य सभी आशाएँ छोड़ दी हैं और गुणनिधि परमात्मा को मिलकर निश्चिन्त हो गया हूँ ॥ १ ॥ हे मेरे मन, केवल प्रभु-नाम का ध्यान कर, हरि-हरि गुण गाने से ही तेरे सभी कार्य सम्पन्न हो सकते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम सब कुछ करने में समर्थ हो, मैं तुम्हारे ही चरण-कमल की शरण आया हूँ, मुझे तन, मन से परमात्मा का ध्यान करने की शक्ति प्रदान करो। आनन्द रूपी परमात्मा का रूप देखकर ही मेरे मन को (धैर्य और सन्तोष) मिलता है ॥२॥ हमेशा उसी का आश्रय लो, जिसके बनाने से ही सभी जीवों का अस्तित्व है। हरि का सिमरन करने से ही समस्त निधियाँ प्राप्त होती हैं और अन्ततः परमेश्वर सम्हाल करता है ॥ ३ ॥ सबकी चरणधूलि बनकर रहिये, अहम्भाव का त्याग कर प्रभु में ही लीन हो जाइये। रात-दिन प्रभु-नाम का ध्यान कीजिए; गुरु नानक के मतानुसार यही कार्य सर्वोत्तम है ॥ ४ ॥ ३३ ॥ ४४ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ कारन करन करीम। सरब प्रतिपाल रहीम। अलह अलख अपार। खुदि खुदाइ वड बेसुमार ॥ १ ॥ ओंनमो भगवंत गुसाई। खालकु रवि रहिआ सरब ठाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जगंनाथ जगजीवन माधो। भउ भंजन रिद माहि अराधो। रिखीकेस गोपाल गोुविंद। पूरन सरबत्र मुकंद ॥ २ ॥ मिहरवान मउला तूही एक। पीर पैकांबर सेख। दिला का मालकु करे हाकु। कुरान कतेब ते पाकु ॥ ३ ॥ नाराइण नरहर दइआल। रमत राम घट घट आधार। बासुदेव बसत सभ ठाइ। लीला किछु लखी न जाइ ॥ ४ ॥ मिहर दइआ करि करनैहार। भगति बंदगी देहि सिरजणहार। कहु नानक गुरि खोए भरम। एको अलहु पारब्रहम ॥ ५ ॥ ३४ ॥ ४५ ॥

वह परमात्मा कृपालु है और सब कुछ करने योग्य है। सबका प्रतिपालक है, सब पर दया करता है। वह सर्वोच्च, अदृश्य और अपार है। वह स्वयंभू: है और उसकी गिनती महान् से महान्तर में होती है ॥ १ ॥ मैं भगवन्त प्रभु-स्वामी को नमस्कार करता हूँ। वह कर्ता व्यापक है, सब जगहों पर रमण करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह जगत का स्वामी है और संसार को जीवन देनेवाला है, मायापति माधव है। उस भवसंकट को दूर करनेवाले परमात्मा की आराधना करो। वह इन्द्रियातीत परमात्मा सर्वत्र पूर्ण और मुक्ति का दाता है ॥ २ ॥ हे प्रभु ! तुम मेहरबान, मुक्ति देनेवाले एकमात्र परमात्मा हो; शेख़, पीर, पैग़म्बर अनेक हो सकते हैं (किन्तु ख़ुदा एक है)। जीवों के हृदय में बैठा हुआ वह परमात्मा स्वयं जीवों का आह्वान करता है। वह धार्मिक पुस्तकों, वेद, क़ुर्आन आदि में नहीं मिलता, बल्कि हर दिल में से बोलकर अपने को व्यक्त करता है ॥ ३ ॥ वह नारायण नृसिंह-रूप में भी दयालु है और घट-घट में व्याप्त है। वासुदेव-रूप में वह सब जगह वास करता है, उसकी लीला का बखान नहीं किया जा सकता ॥ ४ ॥ हे मेरे कर्तार प्रभु ! मुझ पर दया करो और अपनी भक्ति तथा आराधना का दान दो। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के मिलन से सब प्रकार के भ्रम दूर हो जाते हैं और जीव परब्रह्म स्वयंभू: में (लीन हो जाता है) ॥ ५ ॥ ३४ ॥ ४५ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ कोटि जनम के बिनसे पाप। हरि हरि जपत नाही संताप। गुर के चरन कमल मनि वसे। महा बिकार तन ते सभि नसे ॥ १ ॥ गोपाल को जसु गाउ प्राणी। अकथ कथा साची प्रभ पूरन जोती जोति समाणी ॥१॥ रहाउ ॥ त्रिसना भूख सभ नासी। संत प्रसादि जपिआ अबिनासी। रैनि दिनसु प्रभ सेव कमानी। हरि मिलणै की एह नीसानी ॥ २ ॥ मिटे जंजाल होए प्रभ दइआल। गुर का दरसनु देखि निहाल। परापूरबला करमु बणि आइआ। हरि के गुण नित रसना गाइआ ॥ ३ ॥ हरि के संत सदा परवाणु। संत जना मसतकि नीसाणु। दास की रेणु पाए जे कोइ। नानक तिस की परमगति होइ ॥ ४ ॥ ३५ ॥ ४६ ॥

हरि का नाम जपने से करोड़ों जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं और जीव को कोई मानसिक सन्ताप नहीं रह जाता। गुरु के चरण-कमल मन में बसा लेने से शरीर के सब विकार दूर हो जाते हैं ॥ १ ॥ हे प्राणी ! तुम परमात्मा का यशोगान करो। पूर्णपरमात्मा की कथा अनिर्वचनीय

है, उसी की ज्योति में अपने आप को समा देना है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु की कृपा से जब अविनाशी परमात्मा का नाम जपते हैं, तो जीव की तृष्णा और कामना सब नष्ट हो जाती है। रात-दिन ऐसे जीव प्रभु की सेवा में रत रहते हैं; यही उसकी हरि-मिलन की निशानी होती है ॥ २ ॥ प्रभु की कृपा से सब जंजाल मिट जाते हैं, गुरु का दर्शन हो जाने से जीव आनन्द-मग्न हो जाता है। यह तो पूर्व के उत्तम कर्मों के कारण निर्मित होता है और जिह्वा द्वारा हरि के गुण गाता है ॥ ३ ॥ हरि को अपना भजन करनेवाले सदा स्वीकार होते हैं। सन्तों के माथे हरि स्वयं स्वीकृति का टीका देता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव हरि के दासों की चरणधूलि भी पा लेता है, उसको भी परमगति प्राप्त होती है ॥ ४ ॥ ३५ ॥ ४६ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ दरसन कउ जाईऐ कुरबानु। चरन कमल हिरदै धरि धिआनु। धूरि संतन की मसतकि लाइ। जनम जनम की दुरमति मलु जाइ ॥ १ ॥ जिसु भेटत मिटै अभिमानु। पारब्रहमु सभु नदरी आवै करि किरपा पूरन भगवान ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर की कीरति जपीऐ हरि नाउ। गुर की भगति सदा गुण गाउ। गुर की सुरति निकटि करि जानु। गुर का सबदु सति करि मानु ॥ २ ॥ गुर बचनी समसरि सुख दूख। कदे न बिआपै त्रिसना भूख। मनि संतोखु सबदि गुर राजे। जपि गोबिंदु पड़दे सभि काजे ॥ ३ ॥ गुरु परमेसरु गुरु गोविंदु। गुरु दाता दइआल बखसिंदु। गुर चरनी जा का मनु लागा। नानक दास तिसु पूरन भागा ॥४॥३६॥४७॥

परमात्मा के दर्शन पर क़ुर्बान जाओ, उसके चरण-कमल का ध्यान करो। सन्तों की चरणधूलि को मस्तक पर लगाओ, इससे जन्म-जन्म के दुष्कर्मों की मलिनता दूर हो जाती है ॥ १ ॥ जिसके मिलन से जीव के अहंकार का नाश होता है, वह परब्रह्म अपनी ही कृपा से साक्षात्कृत हो सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु का यश इसी में है कि हम हरि-नाम का जाप करें, गुरु की भक्ति परमात्मा के गुणगान में है; गुरु की स्मृति परमात्मा को अंग-संग जानने में है और गुरु के उपदेशों को निश्चयपूर्वक मान लेने में ही गुरु का सम्मान है ॥ २ ॥ गुरु के उपदेश के द्वारा सुख-दुःख के भाव एक समान महसूस होते हैं। गुरु की शरण लेने से तृष्णा और भूख शमित हो जाती है और मन में गुरु का शब्द स्थिर हो जाने से सन्तोष प्राप्त होता है। गोविन्द का नाम जपने से जीव के सब पर्दे ढक जाते हैं ॥ ३ ॥

गुरु ही परमेश्वर है, गुरु ही इन्द्रियातीत है; गुरु, दाता, दयालु और क्षमाशील है। गुरु नानक कहते हैं कि जिन जीवों का मन गुरु के चरणों में लग जाता है, वे बड़े भाग्यशाली होते हैं ॥ ४ ॥ ३६ ॥ ४७ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ किसु भरवासै बिचरहि भवन । मूड़ मुगध तेरा संगी कवन । रामु संगी तिसु गति नही जानहि । पंच बटवारे से मीत करि मानहि ॥ १ ॥ सो घरु सेवि जितु उधरहि मीत । गुण गोविंद रवीअहि दिनु राती साध संगि करि मन की प्रीति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जनमु बिहानो अहंकारि अरु वादि । त्रिपति न आवै बिखिआ सादि । भरमत भरमत महा दुखु पाइआ । तरी न जाई दुतर माइआ ॥ २ ॥ कामि न आवै सु कार कमावै । आपि बीजि आपे ही खावै । राखन कउ दूसर नही कोइ । तउ निसतरै जउ किरपा होइ ॥ ३ ॥ पतित पुनीत प्रभ तेरो नामु । अपने दास कउ कीजै दानु । करि किरपा प्रभ गति करि मेरी । सरणि गही नानक प्रभ तेरी ॥ ४ ॥ ३७ ॥ ४८ ॥

हे मूढ़ जीवात्मा ! तू किसके भरोसे जगत में विचरण करता है, तेरा संगी कौन है ? राम सदा तुम्हारे अंग-संग है, किन्तु तुमने उसकी स्थिति को जाना ही नहीं और जो काम-क्रोधादि पाँच चोर थे, उन्हें तुम मित्र मानते रहे ॥ १ ॥ ऐ मित्र ! उस प्रभु की सेवा करो, जिसकी कृपा से तुम्हारा उद्धार हो सकता है। प्रभु के गुणों को दिन-रात स्मरण करो और सन्तों की संगति में मन की प्रीति लगाओ (इसी में मुक्ति निहित है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रायः जीवों का समूचा जीवन वाद-विवाद और अहकार में बीत जाता है; उन्हें विषय-विकारों के स्वाद में तृप्ति नहीं मिलती। इधर-उधर भटकते हुए दुःख पाते हैं और दुस्तर माया की नदी को पार करने में असमर्थ रहते हैं ॥ २ ॥ जिस कार्य के लिए जीव को रोका जाता है, वही कार्य वह करता है। अपने ही प्रारब्ध कर्मों का फल वह भोगता है। कोई दूसरा उसका रक्षक नहीं हो सकता; उसका उद्धार तभी सम्भव है, जब स्वयं प्रभु उस पर कृपा करें ॥ ३ ॥ हे परमात्मा ! तुम्हारा नाम पतितों को भी पवित्र कर देता है, अपने दास को उसी नाम का दान दो। गुरु नानक ने तुम्हारी शरण ग्रहण की है, कृपा करके उसे परमगति प्रदान करो ॥ ४ ॥ ३७ ॥ ४८ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ इह लोके सुखु पाइआ । नही

भेटत धरमराइआ । हरि दरगह सोभावंत । फुनि गरभि नाही बसंत ॥१॥ जानी संत की मित्राई । करि किरपा दीनो हरि नामा पूरबि संजोगि मिलाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर कै चरणि चितु लागा । धंनि धंनि संजोगु सभागा । संत की धूरि लागी मेरै माथे । किलविख दुख सगले मेरे लाथे ॥ २ ॥ साध की सचु टहल कमानी । तब होए मन सुध परानी । जन का सफल दरसु डीठा । नामु प्रभू का घटि घटि वूठा ॥ ३ ॥ मिटाने सभि कलि कलेस । जिस ते उपजे तिसु महि परवेस । प्रगटे आनूप गोंविद । प्रभ पूरे नानक बखसंद ॥ ४ ॥ ३८ ॥ ४९ ॥

(जिस जीव ने प्रभु का नाम जपा है) उसे इस लोक में सुख प्राप्त होता है, धर्मराज के यहाँ उसका हिसाब-किताब मिट जाता है; वह हरि के दरबार में शोभा पाता है और कभी दोबारा संसार में जन्म नहीं लेता ॥१॥ सन्तों की मित्रता इसी में निहित है कि पूर्व-कर्मों के कारण उनसे मेल होता है और वे कृपा करके जीव को हरि-नाम में एकाग्र कर देते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह सौभाग्यशाली संयोग धन्य है, जिससे गुरु के चरणों में चित्त लीन हो जाता है। सन्तों की चरणधूलि माथे पर लगी है और मेरे सब दुःख, पाप दूर हो गये हैं ॥ २ ॥ सन्तों की सेवा सच्चा कर्म है, इससे प्राणी का मन शुद्ध होता है। सेवक को सर्वफलदायी दर्शन प्राप्त होता है और परमात्मा का नाम घट-घट में बसा है ॥ ३ ॥ सब दुःख, क्लेश दूर हुए हैं, जीव अपने उद्गम में प्रविष्ट हो गया है; परमात्मा का अनुपम रूप प्रकट हुआ है, जो अपने जीवों को क्षमादान देता है ॥४॥३८॥४९॥

॥ रामकली महला ५ ॥ गऊ कउ चारे सारदूलु । कउडी का लख हूआ मूलु । बकरी कउ हसती प्रतिपाले । अपना प्रभु नदरि निहाले ॥ १ ॥ क्रिपानिधान प्रीतम प्रभ मेरे । बरनि न साकउ बहु गुन तेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दीसत मासु न खाइ बिलाई । महा कसाबि छुरी सटि पाई । करणहार प्रभु हिरदै वूठा । फाथी मछुली का जाला तूटा ॥२॥ सूके कासट हरे चलूल । ऊचै थलि फूले कमल अनूप । अगनि निवारी सतिगुर देव । सेवकु अपनी लाइओ सेव ॥ ३ ॥ अकिरतघणा का करे उधारु । प्रभु मेरा है सदा दइआरु । संत जना का सदा सहाई । चरन कमल नानक सरणाई ॥ ४ ॥ ३९ ॥ ५० ॥

(यह पद उलटवासी के रूप में लिखा गया है, यहाँ माया और मन किस प्रकार आत्मा को भरमाते हैं, इसका चित्रण है।) गाय को सिंह चरा रहा है अर्थात् अहंकार रूपी सिंह अब निर्मल शक्ति बनकर इन्द्रियों रूपी गायों को चराता है। अब इन्द्रियाँ कुमार्ग पर नहीं जातीं, बल्कि सहायक होती हैं। शरीर का मोल जहाँ पहले कौड़ी था अब लाखों हो गया है। बकरी की पालना हाथी कर रहा है अर्थात् मन रूपी हाथी अब विकार रूपी बकरी का पालन करता है। (ये सब परिवर्तन तभी आते हैं, जब) प्रभु स्वयं कृपादृष्टि करता है ॥ १ ॥ हे मेरे प्रियतम, तुम दया और करुणा के भण्डार हो। मैं तुम्हारे अनन्त गुणों का बखान नहीं कर सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सामने दिखाई देनेवाला मांस भी बिल्ली नहीं खाती अर्थात् विषय रूपी मांस तृष्णा रूपी बिल्ली अंगीकार नहीं करती। प्रसिद्ध कसाई ने अब छुरी फेंक दी है अर्थात् क्रोध रूपी कसाई अब दूसरों के गले नहीं काटता। स्वयं सब कुछ करनेवाला प्रभु हृदय में आ बसा है। इसीलिए अब फँसी हुई मछली का जाल भी टूट गया है (यहाँ फँसी हुई मछली जीव को कहा गया है) ॥ २ ॥ लकड़ी की तरह सूखा हुआ हृदय अब हरित और कोमल हो गया है और ऊँचे मरुस्थल में भी कमल खिल गये हैं। अर्थात् हृदय रूपी मरुस्थल में आत्मा रूपी कमल खिल गये हैं। सतगुरु ने कृपा करके तृष्णा रूपी अग्नि शमित कर दी है और जीव को अपनी सेवा में अपना लिया है ॥ ३ ॥ परमात्मा कृतघ्न जीवों का भी उद्धार करता है, क्योंकि वह सदा सर्वदा सब पर दया करनेवाला है। गुरु नानक कहते हैं कि मैं उसी प्रभु के चरण-कमलों की शरण लेता हूँ, जो सदा सन्तजनों का सहायी बनता है ॥ ४ ॥ ३९ ॥ ५० ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ पंच सिंघ राखे प्रभि मारि। दस बिघिआड़ी लई निवारि। तीनि आवरत की चूकी घेर। साध संगि चूके भै फेर ॥ १ ॥ सिमरि सिमरि जीवा गोविंद। करि किरपा राखिओ दासु अपना सदा सदा साचा बखसिंद ॥१॥ रहाउ ॥ दाझि गए त्रिण पाप सुमेर। जपि जपि नामु पूजे प्रभ पैर। अनद रूप प्रगटिओ सभ थानि। प्रेम भगति जोरी सुख मानि ॥ २ ॥ सागरु तरिओ बाछर खोज। खेदु न पाइओ नह फुनि रोज। सिंधु समाइओ घटुके माहि। करणहार कउ किछु अचरजु नाहि ॥ ३ ॥ जउ छूटउ तउ जाइ पइआल। जउ काढिओ तउ नदरि निहाल। पाप पुंन हमरै वसि नाहि। रसकि रसकि नानक गुण गाहि ॥४॥४०॥५१॥

सन्तों की संगति पा जाने से परमात्मा की ऐसी कृपा होती है कि सिंह की तरह मनुष्य को खा जानेवाले काम-क्रोधादि पाँचों विकार दूर हो जाते हैं। बाघिन रूपी दसों इन्द्रियाँ वश में हो जाती हैं और तीनों गुणों का संचार-चक्र सदा के लिए टूट जाता है। सन्तों की संगति में हर प्रकार का भय दूर हो जाता है॥ १॥ ऐ जीव, तू सदा गोविन्द प्रभु का सिमरन कर। उसी कृपालु परमात्मा की कृपा से सेवकों की रक्षा हो सकती है॥ १॥ रहाउ॥ (उसकी कृपा से) पापों के सुमेरु पर्वत भी घास की तरह जल गये। यह तभी सम्भव हो सका, जब सेवकों ने प्रभु का नाम जपा और उसके चरणों की शरण ली। सब और जीव के लिए आनन्द प्रकट हुआ और उसे प्रेम-भक्ति में संलग्न होने से चिर सुख की प्राप्ति हुई॥ २॥ प्रभु-कृपा से जीव संसार-सागर को छोटे से गड्ढे की तरह आसानी से पार हो गया। उसे किसी प्रकार का खेद, शोक या सन्ताप नहीं रह गया। परमात्मा रूपी सिन्धु शरीर रूपी घट में समाया है, किन्तु उस परमात्मा के लिए इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं॥ ३॥ यदि परमात्मा से मेरे बन्धन टूट जाएँगे तो पाताल में जा गिरूँगा, किन्तु यदि तुम स्वयं कृपा करके मुझे सहारा दोगे तो निहाल हो जाऊँगा। गुरु नानक कहते हैं कि यद्यपि पाप-पुण्य अपने वश की बात नहीं है, तो भी रस ले-लेकर मैं उस परमात्मा के गुण गाता हूँ॥ ४॥ ४०॥ ५१॥

॥ रामकली महला ५॥ ना तनु तेरा ना मनु तोहि। माइआ मोहि बिआपिआ धोहि। कुदम करै गाडर जिउ छेल। अचिंतु जालु कालु चक्रु पेल॥ १॥ हरि चरन कमल सरनाइ मना। राम नामु जपि संगि सहाई गुरमुखि पावहि साचु धना॥ १॥ रहाउ॥ ऊने काज न होवत पूरे। कामि क्रोधि मदि सद ही झूरे। करै बिकार जीअरे कै ताई। गाफल संगि न तसूआ जाई॥ २॥ धरत धोह अनिक छल जानै। कउडी कउडी कउ खाकु सिरि छानै। जिनि दीआ तिसै न चेतै मूलि। मिथिआ लोभु न उतरै सूलु॥३॥ पारब्रहम जब भए दइआल। इहु मनु होआ साध रवाल। हसत कमल लड़ि लीनो लाइ। नानक साचै साचि समाइ॥ ४॥ ४१॥ ५२॥

हे जीव, न यह तन तुम्हारा है और न ही मन तुम्हारे वश में है। चारों ओर माया-मोह के कारण तुम छल-कपट में फँसे हुए हो। जिस प्रकार भेड़ के साथ उसका मेमना कलोल करता है और अकस्मात् ही अनजाने में जाल रूपी मृत्यु में फँस जाता है; ठीक इसी प्रकार मनुष्य भी अपने कर्मों को

नहीं पहचानता और अकस्मात् मारा जाता है ।। १ ।। इसीलिए, हे मन, हरि के चरण-कमलों की शरण में रहो; राम-नाम का जाप करो और गुरु की कृपा से सतनाम का धन प्राप्त करो ।। १ ।। रहाउ ।। अधूरे कार्य तब तक पूर्ण नहीं होते, काम, क्रोध, लोभादि में व्यक्ति संतप्त रहता है, जीवन की खातिर अनेक विकार अपना लेता है और ज़रा भी सन्तों की संगति में नहीं जाता (जब तक उसके सतकर्मों के कारण गुरु की कृपा उस पर नहीं हो जाती) ।। २ ।। लोगों के साथ ऐसा जीव द्रोह करता है, छल-कपट करता है और कौड़ी-कौड़ी के लिए सिर में खाक डलवाता है अर्थात् बदनाम होता है। जिसने इस संसार में उसे जन्म दिया है, उसको भी याद नहीं करता और झूठे लोभ में पड़ा दुःखों को सहन करता रहता है ।। ३ ।। जब परब्रह्म की कृपा होती है तो यह मन अपने आप सन्तों की चरणधूलि बन जाता है; गुरु नानक कहते हैं कि तब वह परमात्मा का दामन थामता है और सत्य में ही समा जाता है ।। ४ ।। ४१ ।। ५२ ।।

।। रामकली महला ५ ।। राजा राम की सरणाइ । निरभउ भए गोबिद गुन गावत साध संगि दुखु जाइ ।। १ ।। रहाउ ।। जा कै रामु बसै मन माही । सो जनु दुतरु पेखत नाही । सगले काज सवारे अपने । हरि हरि नामु रसन नित जपने ।। १ ।। जिस कै मसतकि हाथु गुरु धरै । सो दासु अदेसा काहे करै । जनम मरण की चूकी काणि । पूरे गुर ऊपरि कुरबाण ।। २ ।। गुरु परमेसरु भेटि निहाल । सो दरसनु पाए जिसु होइ दइआलु । पारब्रहमु जिसु किरपा करै । साध संगि सो भवजलु तरै ।। ३ ।। अंम्रितु पीवहु साध पिआरे । मुख ऊजल साचै दरबारे । अनद करहु तजि सगल बिकार । नानक हरि जपि उतरहु पारि ।। ४ ।। ४२ ।। ५३ ।।

प्रभु की शरण लो; उसके गुण गाते हुए सब दुःखों का नाश होता है और साधु-संगति में जीव निर्भय पद को प्राप्त करता है ।। १ ।। रहाउ ।। जिस जीव के मन में स्वयं परमात्मा निवास करता है, उसे कभी संसार-सागर से पार उतरने में कठिनाई नहीं होती। जो जीव नित्य अपनी जिह्वा से परमात्मा का नाम जपता है, उसके सब कार्य अपने आप संवर जाते हैं ।। १ ।। जिसके सिर पर गुरु का हाथ होता है, वह सेवक कोई चिन्ता नहीं करता अर्थात् वह चिन्ताओं से मुक्त हो जाता है। उसके जन्म-मरण की परवशता दूर हो जाती है और वह नित्य अपने गुरु पर न्योछावर होता है ।। २ ।। गुरु परमात्मा से मिलाकर जीव को निहाल

कर देता है; जिस पर वह दया करता है उसे दर्शन प्राप्त होते हैं। जिस जीव पर परब्रह्म की कृपा होती है, वह सन्तों की संगति में रहकर संसार-सागर से पार हो जाता है ॥ ३ ॥ हे साधु जीवात्माओ, नामामृत का पान करो; इससे तुम्हारा मुख उज्ज्वल होगा और सच्चे दरबार में प्रतिष्ठा मिलेगी। सब प्रकार के विकारों का त्याग कर ऐसा जीव आनन्द-मग्न होगा और गुरु नानक के मतानुसार प्रभु-नाम का जाप करके भव-जल से पार उतर जाएगा ॥ ४ ॥ ४२ ॥ ५३ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ ईंधन ते बैसंतरु भागै। माटी कउ जलु दहदिस तिआगै। ऊपरि चरन तलै आकासु। घट महि सिंधु कीओ परगासु ॥ १ ॥ ऐसा संम्रथु हरि जीउ आपि। निमख न बिसरै जीअ भगतन कै आठ पहर मन ता कउ जापि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रथमे माखनु पाछै दूधु। मैलू कीनो साबुनु सूधु। भै ते निरभउ डरता फिरै। होंदी कउ अणहोंदी हिरै ॥ २ ॥ देही गुपत बिदेही दीसै। सगले साजि करत जगदीसै। ठगणहार अणठगदा ठागै। बिनु वखर फिरि फिरि उठि लागै ॥ ३ ॥ संत सभा मिलि करहु बखिआण। सिम्रिति सासत बेद पुराण। ब्रहम बीचारु बीचारे कोइ। नानक ता की परम गति होइ ॥ ४ ॥ ४३ ॥ ५४ ॥

परमात्मा की अलौकिकता इसी में है कि उसकी इच्छा हो तो लकड़ी भी अपना जलने का स्वभाव छोड़ देती है और धरती के चारों ओर रहने वाला जल भी उसे डुबोता नहीं। शरीर रूपी पेड़ की जड़ें ऊपर हैं और सिर नीचे होता है, आत्मा में परमात्मा रूपी सिन्धु का प्रकाश अलौकिक चेतना को देनेवाला है ॥ १ ॥ यह सब कुछ कर सकनेवाला सामर्थ्य केवल परमात्मा में है। इसलिए सेवक को क्षण भर के लिए भी विस्तृत नहीं होना चाहिए और उसे आठों प्रहर मन में नाम स्मरण करना चाहिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (पहले दूध होता है, उसके मंथन से माखन प्राप्त किया जाता है, इसलिए माखन का मूल्य दूध से ज़्यादा है। जिस प्रकार माखन दूध का सार-तत्त्व है, उसी प्रकार सृष्टि का सार-तत्त्व परमात्मा है।) परमात्मा रूपी माखन का अस्तित्व पहले है, जबकि सृष्टि रूपी दूध का प्रसार बाद में होता है। मलिनता साबुन को शुद्ध करती है (माता के स्तनों का रक्त बच्चे के लिए दूध बन जाता है)। भय से निर्भयता डरती है (अर्थात् निर्भयता का रूप जीव से दुनिया डरती है)। होनी को अनहोनी ग्रस लेती है (अर्थात् प्रभु-कृपा से कर्मों का फल बदल जाता

है) ॥ २ ॥ जब तक शरीर शारीरिक चेतना में रहता है तब तक अशरीरी परमात्मा उसके लिए गुप्त रहता है और जब नाशवान शरीर का त्याग कर देता है तब परमात्मा के रहस्यों को पा लेता है और परमात्मा के बनाए सब तत्त्वों को जान लेता है। छल-कपट करनेवाली माया निश्छल जीव को ठग लेती है। धर्म की पूँजी के बिना जीव बार-बार आवागमन के चक्र में पड़ता है ॥ ३ ॥ ऐ जीव, सन्तों के सम्पर्क में रहकर इन रहस्यों पर विचार करो, स्मृतियाँ, शास्त्र और वेद-पुराण की पुस्तकों में भी अनेक विचार किये गये हैं, किन्तु उद्धार उसी का होता है जो परमात्मा की सत्ता पर विचार करता है ॥ ४ ॥ ४३ ॥ ५४ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ जो तिसु भावै सो थीआ। सदा सदा हरि की सरणाई प्रभ बिनु नाही आन बीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पुतु कलत्रु लखिमी दीसै इन महि किछू न संगि लीआ। बिखै ठगउरी खाइ भुलाना माइआ मंदरु तिआगि गइआ ॥ १ ॥ निंदा करि करि बहुतु विगूता गरभ जोनि महि किरति पइआ। पुरब कमाणे छोडहि नाही जमदूति ग्रासिओ महा भइआ ॥ २ ॥ बोलै झूठु कमावै अवरा त्रिसन न बूझै बहुतु हइआ। असाध रोगु उपजिआ संत दूखनि देह बिनासी महा खइआ ॥ ३ ॥ जिनहि निवाजे तिन ही साजे आपे कीने संत जइआ। नानक दास कंठि लाइ राखे करि किरपा पारब्रहम मइआ ॥ ४ ॥ ४४ ॥ ५५ ॥

जो उस परमात्मा को मंज़ूर होता है वही होता है, इसलिए सदा प्रभु की शरण लो, उसके बिना दूसरा कोई नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ स्त्री, पुत्र और लक्ष्मी आदि सब कुछ है, लेकिन कोई साथ नहीं चलता। जीव विषय-विकारों के नशे में सब कुछ भुला रखता है और माया के कारण अपने यथार्थ-घर से विमुख रहता है ॥ १ ॥ निन्दा कर-करके दुःखी होता है, और बार-बार अपने कर्मों के कारण योनि-चक्र में दुःख भोगना है। पूर्वकृत कर्म उसे छोड़ते नहीं, वह यमदूतों द्वारा ग्रसित होता है, जो कि महाभयानक हैं ॥ २ ॥ मिथ्या वचन करता है, तृष्णा में रत रहता है और लज्जास्पद कार्य करता है। असाध्य रोगों से सन्तों की निन्दा के परिणाम-स्वरूप उसका शरीर ढह जाता है ॥ ३ ॥ जिन पर परमात्मा की कृपा हो जाती है, वे ही सन्तों के सम्पर्क में विजयी होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि परब्रह्म कृपापूर्वक उन जीवों को गले से लगा लेता है ॥ ४ ॥ ४४ ॥ ५५ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ ऐसा पूरा गुरदेउ सहाई । जा का सिमरनु बिरथा न जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दरसनु पेखत होइ निहालु । जा की धूरि काटै जम जालु । चरन कमल बसे मेरे मन कै । कारज सवारे सगले तन के ॥ १ ॥ जा कै मसतकि राखै हाथु । प्रभु मेरो अनाथ को नाथु । पतित उधारणु क्रिपा निधानु । सदा सदा जाईऐ कुरबानु ॥ २ ॥ निरमल मंतु देइ जिसु दानु । तजहि बिकार बिनसै अभिमानु । एकु धिआईऐ साध कै संगि । पाप बिनासे नाम कै रंगि ॥ ३ ॥ गुरपरमेसुर सगल निवास । घटि घटि रवि रहिआ गुणतास । दरसु देहि धारउ प्रभ आस । नित नानकु चितवै सचु अरदासि ॥ ४ ॥ ४५ ॥ ५६ ॥

हमारा गुरुदेव नित्य हमारा सहायी है, उसका सिमरन कभी वृथा नहीं जाता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसके दर्शन करने मात्र से जीवन का कल्याण होता है, उसके चरणों की धूल यमदूतों के जाल को काट देती है; यदि उसके चरण-कमल मन में बसा लिये जाएँ तो समस्त कार्यों की पूर्ति हो जाती है ॥ १ ॥ मेरा प्रभु जिसके माथे पर हाथ धर देता है, वह अनाथ भी सनाथ हो जाता है; वह कृपा निधान पतितों का उद्धार करनेवाला है, इसलिए सदा हम उस पर क़ुर्बान जाते हैं ॥ २ ॥ गुरु जिसे निर्मल उपदेश का दान देता है, उसके विकार नष्ट हो जाते हैं और वह अभिमान का त्याग कर देता है। सन्तों के सम्पर्क में रहकर उस परमात्मा का ध्यान करना चाहिए; इससे प्रभु-नाम का रंग चढ़ने से पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ ३ ॥ गुरु-परमेश्वर सर्वव्यापक है, घर-घर में वह गुणों का भण्डार स्वयं विद्यमान है। गुरु नानक कहते हैं कि वह प्रभु मुझे दर्शन दे, मैं इसी आशा से बँधा बैठा हूँ और सच्चे मन से प्रभु के पास प्रार्थना करता हूँ ॥ ४ ॥ ४५ ॥ ५६ ॥

रागु रामकली महला ५ घरु २ दुपदे

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गावहु राम के गुण गीत । नामु जपत परम सुखु पाईऐ आवागउणु मिटै मेरे मीत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुण गावत होवत परगासु । चरन कमल महि होइ निवासु ॥ १ ॥ संत संगति महि होइ उधारु । नानक भवजलु उतरसि पारि ॥ २ ॥ १ ॥ ५७ ॥

प्रभु राम के गुण गाओ, क्योंकि ऐसा करने से, हे मेरे मित्र, आवागमन मिट जाता है और नाम जपने से परमसुख की उपलब्धि होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु का गुण गाने से ज्ञान का प्रकाश होता है और जीव परमात्मा के चरण-कमल में निवास करने लगता है ॥ १ ॥ सन्तों की संगति में उसका उद्धार हो जाता है और वह संसार-सागर से पार उतर जाता है ॥ २ ॥ १ ॥ ५७ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ गुरु पूरा मेरा गुरु पूरा । राम नाम जपि सदा सुहेले सगल बिनासे रोग कूरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एकु अराधहु साचा सोइ । जा की सरनि सदा सुखु होइ ॥१॥ नीद सुहेली नाम की लागी भूख । हरि सिमरत बिनसे सभ दूख ॥ २ ॥ सहजि अनंद करहु मेरे भाई । गुरि पूरै सभ चिंत मिटाई ॥ ३ ॥ आठ पहर प्रभ का जपु जापि । नानक राखा होआ आपि ॥ ४ ॥ २ ॥ ५८ ॥

मेरा गुरु परम है, सर्वोच्च है, मैंने उसके उपदेशानुसार राम-नाम जपकर परमसुख को प्राप्त किया है और मेरे समस्त मिथ्या रोग-शोक नष्ट हो गये हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उस एक परमात्मा की आराधना करो, उसकी शरण ग्रहण करने से जीव को परमसुख प्राप्त होता है ॥ १ ॥ शान्त निद्रा आती है, प्रभु-नाम की भूख जागती है और हरि-सिमरन करने से सब दुःख नष्ट हो जाते हैं ॥२॥ हे मेरे भाई, ऐसे में सहजावस्था का सुख प्राप्त होता है और गुरु की कृपा से सब चिन्ताएँ मिट जाती हैं ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि यदि तुम आठों प्रहर प्रभु का नाम जपो तो वह स्वयं तुम्हारा रक्षक हो जाता है ॥ ४ ॥ २ ॥ ५८ ॥

रागु रामकली महला ५ पड़ताल घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ नर नरह नमसकारं । जलन थलन बसुध गगन एक एकंकारं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरन धरन पुन पुनह करन । नहगिरह निरंहारं ॥ १ ॥ गंभीर धीर नाम हीर ऊच मूच अपारं । करन केल गुण अमोल नानक बलिहारं ॥ २ ॥ १ ॥ ५९ ॥

परमात्मा मनुष्यों में पुरुषोत्तम है, इसलिए हम उसको नमस्कार करते हैं । वह एक रूप सब जगह जल, थल, धरती, गगन में वास करता

है ॥१॥रहाउ॥ वह संहारकर्ता, पालनकर्ता और बार-बार संसार में जन्म देनेवाला है। उसका न कोई घर है और न ही वह भोजन करता है॥ १॥ वह गम्भीर, धैर्य-धन, समुज्ज्वल हीरा और सर्वोच्च अपार प्रभु है। वह अमूल्य गुणों वाला, कौतुक रचानेवाला है, नानक उस पर न्योछावर हैं॥ २॥ १॥ ५९॥

॥ रामकली महला ५ ॥ रूप रंग सुगंध भोग तिआगि चले माइआ छले कनिक कामिनी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भंडार दरब अरब खरब पेखि लीला मनु सधारै। नह संगि गामनी ॥ १ ॥ सुत कलत्र भ्रात मीत उरझि परिओ भरमि मोहिओ इह बिरख छामनी। चरन कमल सरन नानक सुखु संत भावनी ॥ २ ॥ २ ॥ ६० ॥

सब जीव स्वर्ण और कामिनी रूपी माया द्वारा छले जाकर अन्ततः रूप, रंग, गंध, भोग सबका त्याग कर देते हैं॥ १॥ रहाउ॥ धन के अनन्त भण्डार को देखकर मन को धैर्य मिलता है, किन्तु वह सब माया साथ नहीं चलती॥ १॥ जीव प्रायः पुत्र, पत्नी, मित्रादि में उलझा रहता है और भ्रम में पड़ा रहता है, किन्तु वह सब वृक्ष की छाया की तरह अस्थिर है। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव सन्तों में पूर्ण श्रद्धा रखकर चरण-कमल की शरण लेते हैं, वे परमसुख को प्राप्त करते हैं॥ २॥ २॥ ६०॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रागु रामकली महला ९ तिपदे । रे मन ओट लेहु हरि नामा। जा कै सिमरनि दुरमति नासै पावहि पदु निरबाना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बडभागी तिह जन कउ जानउ जो हरि के गुन गावै। जनम जनम के पाप खोइकै फुनि बैकुंठि सिधावै ॥ १ ॥ अजामलु कउ अंत काल मै नाराइन सुधि आई। जां गति कउ जोगीसुर बाछत सो गति छिन महि पाई ॥ २ ॥ नाहन गुनु नाहनि कछु बिदिआ धरमु कउनु गजि कीना। नानक बिरदु राम का देखो अभै दानु तिहि दीना ॥ ३ ॥ १ ॥

हे मन, प्रभु के नाम का सहारा लो; उसी के सिमरन से दुर्बुद्धि का नाश होता है और परमपद की प्राप्ति होती है॥ १॥ रहाउ॥ वह मनुष्य भाग्यशाली है, जो प्रभु के नाम का गुण गाता है अर्थात् प्रभु-नाम का गुणगान करनेवाले को भाग्यशाली जानो। उसके जन्म-जन्म के पाप दूर

हो जाते हैं, अन्ततः वह वैकुण्ठ में जाता है ।। १ ।। (गुरुजी यहाँ पौराणिक घटनाओं का हवाला देते हैं।) अजामिल को अन्तकाल में नारायण की याद आयी। नारायण का सिमरन करने मात्र से ही उसे क्षण भर में वह पद प्राप्त हो गया, जिसे बड़े-बड़े योगीश्वर भी कामना करते रह जाते हैं, किन्तु प्राप्त नहीं कर पाते ।। २ ।। हाथी में क्या गुण, विद्या या धन था जो प्रभु के कृपालु स्वभाव के कारण अभयदान को प्राप्त कर गया ।। ३ ।। १ ।।

।। रामकली महला ९ ।। साधो कउनु जुगति अब कीजै । जा ते दुरमति सगल बिनासै राम भगति मनु भीजै ।। १ ।। रहाउ ।। मनु माइआ मै उरझि रहिओ है बूझै नह कछु गिआना । कउनु नामु जगु जा कै सिमरै पावै पदु निरबाना ।। १ ।। भए दइआल क्रिपाल संत जन तब इह बात बताई । सरब धरम मानो तिह कीए जिह प्रभ कीरति गाई ।। २ ।। राम नाम नर निसिबासुर मै निमख एक उरधारै । जम को त्रासु मिटै नानक तिह अपुनो जनमु सवारै ।। ३ ।। २ ।।

हे सज्जनो, ऐसी कौन सी युक्ति अपनायी जा सकती है, जिससे सब प्रकार की दुर्मति दूर हो और मन राम-भक्ति में लीन हो सके ? ।। १ ।। रहाउ ।। जीव मन-माया में उलझा हुआ है, यथार्थ ज्ञान से वंचित है। संसार में ऐसी कौन सी शक्ति है, जिसका सिमरन करने से निर्वाण पद की प्राप्ति होती है ? ।। १ ।। जब कृपालु सन्तजन दया करते हैं तो इस रहस्य की बात को बता देते हैं कि जो जीव प्रभु का कीर्तिगान करता है, यह समझिए कि वह सब धर्म-कर्म में प्रवीण हो गया है।। २ ।। जो जीव सदा रात-दिन और क्षण-क्षण राम-नाम को हृदय में धारण करते हैं, गुरु नानक कहते हैं कि उसे यमों का भय नहीं रह जाता और उसका जन्म सँवर जाता है ।। ३ ।। २ ।।

।। रामकली महला ९ ।। प्रानी नाराइनि सुधि लेहु । छिनु छिनु अउध घटै निसबासुर ब्रिथा जातु है देह ।। १ ।। रहाउ ।। तरनापो बिखिअन सिउ खोइओ बालपनु अगिआना । बिरध भइओ अजहू नही समझै कउनु कुमति उरझाना ।। १ ।। मानस जनमु दीओ जिह ठाकुर सो तै किउ बिसराइओ । मुकति होत नर जा कै सिमरै निमख न ता को गाइओ ।। २ ।। माइआ को मदु कहा करतु है संगि न काहू जाई । नानक कहत चेति चिंतामनि होइ है अंति सहाई ।। ३ ।। ३ ।। ८१ ।।

हे प्राणी, भगवान का स्मरण करो। रात-दिन क्षण-क्षण करके तुम्हारी आयु घट रही है और तुम्हारी शारीरिक शक्ति वृथा हो रही है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुमने अपना बचपन अज्ञान में खो दिया और यौवन में विषय-विकारों में पड़े रहे। वृद्धावस्था में आने पर भी नहीं समझ पाए, मलिन कार्यों में उलझे रहे ॥ १ ॥ जिस परमात्मा ने तुम्हें मनुष्य-जन्म दिया, तुमने उसे ही विस्मृत कर दिया। जिसके स्मरण मात्र से मुक्ति मिल जाती है, तुमने उसका भजन क्यों नहीं किया ॥ २ ॥ माया का क्या अहंकार करते हो, यह तो किसी के संग नहीं जाती। गुरु नानक कहते हैं कि उस चिन्तामणि का भजन करो, वही सब चिन्ताओं से मुक्त कर अन्ततः तुम्हारा सहायक होगा ॥ ३ ॥ ३ ॥ ८१ ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

॥ रामकली महला १ असटपदीआ ॥ सोई चंदु चड़हि से तारे सोई दिनीअरु तपत रहै। सा धरती सो पउणु झुलारे जुग जीअ खेले थाव कैसे ॥ १ ॥ जीवन तलब निवारि। होवै परवाणा करहि धिङाणा कलि लखण वीचारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कितै देसि न आइआ सुणीऐ तीरथ पासि न बैठा। दाता दानु करे तह नाही महल उसारि न बैठा ॥ २ ॥ जे को सतु करे सो छीजै तप घरि तपु न होई। जे को नाउ लए बदनावी कलि के लखण एई ॥ ३ ॥ जिसु सिकदारी तिसहि खुआरी चाकर केहे डरणा। जा सिकदारै पवै जंजीरी ता चाकर हथहु मरणा ॥ ४ ॥ आखु गुणा कलि आईऐ। तिहु जुग केरा रहिआ तपावसु जे गुण देहि त पाईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कलि कलवाली सरा निबेड़ी काजी क्रिसना होआ। बाणी ब्रहमा बेदु अथरबणु करणी कीरति लहिआ ॥ ५ ॥ पति विणु पूजा सत विणु संजमु जत विणु काहे जनेऊ। नावहु धोवहु तिलकु चड़ावहु सुच विणु सोच न होई ॥ ६ ॥ कलि परवाणु कतेब कुराणु। पोथी पंडित रहे पुराण। नानक नाउ भइआ रहमाणु। करि करता तू एको जाणु ॥ ७ ॥ नानक नामु मिलै वडिआई एदू उपरि करमु नही। जे घरि होदै मंगणि जाईऐ फिरि ओलामा मिलै तही ॥ ८ ॥ १ ॥

(किसी तीर्थस्थान पर किसी पण्डित के मुँह से यह सुनकर कि कलियुग आया हुआ है, इसलिए धर्म की ग्लानि हो रही है। गुरुजी ने बताया है कि सूर्य, चाँद, सितारे कुछ भी तो नहीं बदला, यह तो मनुष्य का स्वभाव है जो उसे कुटिलता की ओर ले जा रहा है।) वही चाँद है, सितारे भी उसी प्रकार चमकते हैं और सूर्य भी तपता है; धरती भी वही है, उस पर हवा भी चलती है और युग जीवों को बदल रहा है, यह कैसे सम्भव है ? ॥१॥ जीवन की कामनाएँ त्याग दो (कलियुग अपने आप दूर हो जाएगा)। जो यहाँ बल प्रयोग करता है, उसी की सामाजिक स्वीकृति कलियुग का लक्षण है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कभी ऐसा नहीं सुना गया कि कलियुग किसी देश-विशेष में आया था या किसी तीर्थ पर बैठा देखा गया था। जहाँ कोई दाता दान कर रहा हो, वहाँ भी कलियुग नहीं है और न ही कहीं महल बनाकर वहाँ रहता है ॥ २ ॥ कलियुग के लक्षण ये हैं कि यदि जीव सत्य-धर्म पर आचरण करता है, तो ख़राब होता है; किसी प्राप्ति के लिए परिश्रम करता है तो सफल नहीं होता, यदि प्रभु का नाम लेता है तो बदनाम हो जाता है ॥ ३ ॥ जो कोई पदासीन होता है उसका अपमान होता है, नौकरों को उसका भय नहीं रह जाता। जब भी कभी अधिकारियों को पकड़ा जाता है तो वे नौकरों के हाथ मारे जाते हैं अर्थात् नौकर बेवफ़ा हो जाते हैं और अपने स्वामियों के साथ विश्वासघात करते हैं —ये ही सब कलियुग के लक्षण हैं ॥ ४ ॥ कलियुग आया है तो परमात्मा का गुणगान कर। पहले तीन युगों का न्याय समाप्त हो गया है, अब तो इस युग में हरि-गुणगान ही सर्वोत्तम उपलब्धि है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस अशान्त कलियुग में न्याय का बीड़ा शरह ने उठा लिया है और क़ाज़ी लोग नीले कपड़े पहनने के कारण कृष्ण के समान माने जाते हैं। आज की वाणी ब्रह्मा का अथर्व वेद है और हरि का नाम ही इसमें आचरण का अंग है ॥ ५ ॥ दिखावे के धर्माडम्बर हम बहुत करते हैं, किन्तु विश्वास के बिना पूजा, सत्य के बिना संयम और यतीत्व के बिना जनेऊ धारण करना आदि बातें बेकार हैं। नहा-धोकर तिलक लगा लेने से कुछ नहीं होता, जीवन में पवित्रता के बिना कभी जीवन निर्मल नहीं हो सकता ॥ ६ ॥ कलियुग में क़ुर्आन और हदीस की मान्यता है, पण्डितों के वचन और पोथी-पुराण आदि अब तिरस्कृत हो गये हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे भाई, प्रभु का नाम ही कृपानिधान है, तुम उसी रचनाकार को एकमात्र रूप में स्वीकार करो। (लोग समय-समय पर उसका नाम बदलते रहते हैं, किन्तु वह हमेशा एक ही है) ॥ ७ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि इस युग में हरि-नाम ही सर्वोच्च है। इससे बढ़कर कोई कृपा नहीं हो सकती। घर में वस्तु के रहते यदि कोई माँगने जाये तो उसे उलाहने ही मिला करते हैं ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ रामकली महला १ ॥ जगु परबोधहि मड़ी बधावहि । आसणु तिआगि काहे सचु पावहि । ममता मोहु कामणि हितकारी । ना अउधूती ना संसारी ॥ १ ॥ जोगी बैसि रहहु दुबिधा दुखु भागै । घरि घरि मागत लाज न लागै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गावहि गीत न चीनहि आपु । किउ लागी निवरै परतापु । गुर कै सबदि रचै मन भाइ । भिखिआ सहज वीचारी खाइ ॥ २ ॥ भसम चड़ाइ करहि पाखंडु । माइआ मोहि सहहि जम डंडु । फूटै खापरु भीख न भाइ । बंधनि बाधिआ आवै जाइ ॥ ३ ॥ बिंदु न राखहि जती कहावहि । माई मागत त्रै लोभावहि । निरदइआ नही जोति उजाला । बूडत बूड़े सरब जंजाला ॥ ४ ॥ भेख करहि खिंथा बहु थटूआ । झूठो खेलु खेलै बहु नटूआ । अंतरि अगनि चिंता बहु जारे । विणु करमा कैसे उतरसि पारे ॥ ५ ॥ मुंद्रा फटक बनाई कानि । मुकति नही बिदिआ बिगिआनि । जिहवा इंद्री सादि लुभाना । पसू भए नही मिटै नीसाना ॥ ६ ॥ त्रिबिधि लोगा त्रिबिधि जोगा । सबदु वीचारै चूकसि सोगा । ऊजलु साचु सु सबदु होइ । जोगी जुगति वीचारे सोइ ॥ ७ ॥ तुझ पहि नउनिधि तू करणै जोगु । थापि उथापे करे सु होगु । जतु सतु संजमु सचु सु चीतु । नानक जोगी त्रिभवण मीतु ॥ ८ ॥ २ ॥

हे योगी, तू संसार को उपदेश देता है और खा-पीकर अपने शरीर रूपी समाधि को बढ़ा रहा है। तूने अपनी स्थिरता को त्याग दिया है तो तुझे क्योंकर परम-सत्य की उपलब्धि हो सकती है। तू ममता, मोह और स्त्री के प्रेम में फँसा हुआ है, न वैरागी रह गया है और न ही संसारी बन पाया है ॥ १ ॥ हे योगी, यदि तुम स्थिर आसन लगा लो तो तुम्हारी दुबिधा के दुःख दूर हो सकते हैं। क्या तुम्हें घर-घर माँगते लाज नहीं लगती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दिखावे के गीत गाते हो, किन्तु अपने आपको नहीं पहचानते। ऐसे में जो विशेष परिताप तुम्हारे भीतर है, वह क्योंकर दूर हो सकता है ? यदि तुम मन में गुरु की वाणी के प्रति प्रेम उपजा लो तो तुम्हें यथार्थ ज्ञान की भिक्षा का अन्न प्राप्त होगा ॥ २ ॥ विभूति लगाकर तू पाखण्ड करता है, तभी तो माया-मोह में यमदूतों का दण्ड सहन करता है। तेरा हृदय रूपी भिक्षा-पात्र टूटा हुआ है, इसीलिए उसमें प्रेम की भिक्षा नहीं पड़ती और तुम माया के बन्धनों में बँधे हुए आवागमन में पड़े रह जाते हो ॥ ३ ॥ वीर्य की रक्षा नहीं कर सकते, फिर भी यती कहलवाते हो; तीनों गुणों में

मोहित होकर माया माँगते फिरते हो। तुममें दया नहीं है, इसीलिए तुम ईश्वरीय-ज्योति से वंचित हो और संसार के जाल में ऊब-डूब रहे हो ॥ ४॥ अनेक प्रकार के वेश बनाते हो और कफ़नी पहन अनेक आडम्बर रचते हो। मदारी की तरह झूठे खेल खेलते हो। मन के भीतर चिन्ताओं की अग्नि दहकती है; सच है, सत्कर्मों के बिना किसी का उद्धार नहीं होता ॥ ५॥ कानों में काँच की मुद्राएँ पहन लेते हो, किन्तु विद्या से बेगाना रहने के कारण मुक्ति नहीं मिलती। जीभ तथा इन्द्रियों के स्वाद में मोहित हुआ है, इसीलिए पशु ही है, पशु के चिह्नों से मुक्त नहीं हुआ ॥ ६ ॥ संसारी लोगों की तरह योगी भी तीन गुणों वाली माया के चक्कर में फँसे रहते हैं। यदि कोई शब्द का ज्ञान प्राप्त कर लेता है तो उसके शोक मिट जाते हैं। क्योंकि वह शब्द उज्ज्वल तथा सच्चा होता है, इसलिए उसका ज्ञान रखनेवाला योगी भी युक्ति का ज्ञाता होता है ॥ ७ ॥ तुम्हारे पास नौ निधियाँ मौजूद हैं, तुम उन्हें पा भी सकते हो। जो (ईश्वर) बनाता और बनाकर बिगाड़ता है, उसी के किये सब कुछ होता है। इसलिए गुरु नानक कहते हैं कि जो योगी मन से निर्मल, यतीत्व और संयम को धारण करता है, वह तीनों लोकों का सुमित्र होता है ॥ ८ ॥ २ ॥

॥ रामकली महला १ ॥ खटु मटु देही मनु बैरागी। सुरति सबदु धुनि अंतरि जागी। वाजै अनहदु मेरा मनु लीणा। गुर बचनी सचि नामि पतीणा ॥ १ ॥ प्राणी राम भगति सुखु पाईऐ। गुरमुखि हरि हरि मीठा लागै हरि हरि नामि समाईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माइआ मोहु बिबरजि समाए। सतिगुरु भेटै मेलि मिलाए। नामु रतनु निरमोलकु हीरा। तितु राता मेरा मनु धीरा ॥ २ ॥ हउमै ममता रोगु न लागै। राम भगति जम का भउ भागै। जमु जंदारु न लागै मोहि। निरमल नामु रिदै हरि सोहि ॥ ३ ॥ सबदु बीचारि भए निरंकारी। गुरमति जागे दुरमति परहारी। अनदिनु जागि रहे लिव लाई। जीवन मुकति गति अंतरि पाई ॥ ४ ॥ अलिपत गुफा महि रहहि निरारे। तसकर पंच सबदि संघारे। परघर जाइ न मनु डोलाए। सहज निरंतरि रहउ समाए ॥५॥ गुरमुखि जागि रहे अउधूता। सद बैरागी ततु परोता। जगु सूता मरि आवै जाइ। बिनु गुर सबद न सोझी पाइ ॥ ६ ॥ अनहद सबदु वजै दिनु राती। अविगत की गति गुरमुखि जाती। तउ जानी जा सबदि पछानी। एको रवि रहिआ निरबानी ॥७॥

सुंन समाधि सहजि मनु राता। तजि हउ लोभा एको जाता।
गुर चेले अपना मनु मानिआ। नानक दूजा मेटि समानिआ।।८।।३।।

शरीर के छः चक्रों (मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्ध तथा आज्ञाचक्र) में से जब श्वास ऊपर आता है तो मन संयमित हो जाता है और भीतर आत्मा शब्द की ध्वनि में रम जाता है। अनाहत नाद बजने लगता है और नित्य फुंकारनेवाला मन रूपी नाग मस्त हो जाता है। गुरु के वचनों से सत्य नाम में विश्वास जगता है ।। १ ।। हे प्राणी, पूर्णसुख केवल राम-भक्ति में ही लगता है। हरि का नाम जब गुरु के द्वारा उजागर होता है, मधुर लगता है; जीव इसी हरि-नाम में समा जाता है ।। १ ।। रहाउ ।। ऐसे समय सत्गुरु से भेंट हो जाने पर माया-मोह के बन्धनों को तोड़कर जीव परमात्मा में तल्लीन हो जाता है। उसका मन हरि-नाम रूपी अमूल्य रत्नों की रंगत में रँग जाता है, स्थिर हो जाता ।। २ ।। (तब) जीव को अहम्-भाव और मोह-ममता का रोग नहीं सालता; राम की भक्ति से यम का भय दूर हो जाता है। ज़ालिम यम मुझे नहीं सताता और मैं हृदय में निर्मल हरि-नाम को बसाकर सुशोभित होता हूँ ।। ३ ।। हम लोग शब्द के रहस्य को समझकर विकारों से रहित हो गये हैं और परमात्मा के जीव कहलाते हैं। गुरु के उपदेशों पर आचरण करने से दुर्बुद्धि का नाश हो गया है; परमजागृति को पाकर आत्मा सदैव प्रभु में ध्यानस्थ रहता है और अन्ततः जीवन में मोक्षपद की प्राप्ति होती है ।। ४।। शरीर रूपी गुफा में आत्मा अलिप्त हो जाता है; शब्द के सहारे काम-क्रोधादि पाँचों शत्रुओं की हत्या कर देता है। तब सत्यलोक में जाते हुए मन दोलायमान नहीं होता और सहज में ही आत्मा अनन्त प्रभु में समा जाता है ।। ५ ।। गुरुमुख रूपी त्यागी चिरजागरण को प्राप्त करते हैं और तत्त्व को अपने मन में धारण कर परमवैराग्य को पा जाते हैं। सारा संसार विषय-विकारों की निद्रा में खोया आवागमन की मिट्टी में पड़ा है, गुरु के उपदेशों के बिना उसे ज्ञान की उपलब्धि नहीं हो सकती ।। ६ ।। हमारे भीतर दिन-रात अनाहत ध्वनि झंकृत होती है, केवल कोई गुरुमुख ही उस अविनाशी परमात्मा के स्वर को पहचान सकता है। जो शब्द की धुन को पहचानता है, वही इस तथ्य को समझ सकता है कि एकमात्र निर्लिप्त प्रभु ही सर्वव्यापक है ।। ७ ।। सहज में ही गुरुमुख जीव शून्य समाधि को प्राप्त होता है और लोभ तथा अहंकार का त्याग कर देता है। गुरु नानक कहते हैं कि आत्मा और परमात्मा जब एक हो जाते हैं, तो उनमें द्वैत का भाव मिट जाता है ।। ८ ।। ३ ।।

।। रामकली महला १ ।। साहा गणहि न करहि बीचारु।
साहे ऊपरि एकंकारु। जिसु गुरु मिलै सोई बिधि जाणै।

गुरमति होइ त हुकमु पछाणै ।। १ ।। झूठु न बोलि पाडे सचु कहीऐ । हउमै जाइ सबदि घरु लहीऐ ।। १ ।। रहाउ ।। गणि गणि जोतकु कांडी कीनी । पड़ै सुणावै ततु न चीनी । सभसै ऊपरि गुर सबदु बीचारु । होर कथनी बदउ न सगली छारु ।। २ ।। नावहि धोवहि पूजहि सैला । बिनु हरि राते मैलो मैला । गरबु निवारि मिलै प्रभु सारथि । मुकति प्रान जपि हरि किरतारथि ।। ३ ।। वाचै वादु न बेदु बीचारै । आपि डुबै किउ पितरा तारै । घटि घटि ब्रहमु चीनै जनु कोइ । सतिगुरु मिलै त सोझी होइ ।। ४ ।। गणत गणीऐ सहसा दुखु जीऐ । गुर की सरणि पवै सुखु थीऐ । करि अपराध सरणि हम आइआ । गुर हरि भेटे पुरबि कमाइआ ।। ५ ।। गुर सरणि न आईऐ ब्रहमु न पाईऐ । भरमि भुलाईऐ जनमि मरि आईऐ । जमदरि बाधउ मरै बिकारु । ना रिदै नामु न सबदु अचारु ।। ६ ।। इकि पाधे पंडित मिसर कहावहि । दुबिधा राते महलु न पावहि । जिसु गुर परसादी नामु अधारु । कोटि मधे को जनु आपारु ।। ७ ।। एकु बुरा भला सचु एकै । बूझु गिआनी सतगुर की टेकै । गुरमुखि विरली एको जाणिआ । आवणु जाणा मेटि समाणिआ ।। ८ ।। जिन कै हिरदै एकंकारु । सरब गुणी साचा बीचारु । गुर कै भाणै करम कमावै । नानक साचे साचि समावै ।। ९ ।। ४ ।।

मुहूर्त निकलवाना या पुराने रीति-रिवाजों की गणना व्यर्थ है, क्योंकि स्वयं ब्रह्म इस समूची गणना से ऊपर है। जिसे गुरु की प्राप्ति हो जाती है, वह सब विधि-विधान का जानकार हो जाता है और प्रभु के हुक्म को पहचानते हुए गुरु-मति को धारण करता है ।। १ ।। हे पण्डित, झूठ न बोलकर सच कहो, क्योंकि इससे अहम्भाव दूर होता है और प्रभु के दरबार में रसाई (पहुँच) होती है ।। १ ।। रहाउ ।। मुहूर्तों और ग्रहों की गणना करके ज्योतिषी कुण्डली बनाते हैं; कुण्डली का अध्ययन दूसरों को भी बताते हैं, किन्तु स्वयं वास्तविकता से अनभिज्ञ होते हैं। सबसे ऊपर गुरु द्वारा दिया गया शब्द का ज्ञान है, मैं अन्य बातें नहीं कहता क्योंकि वे धूल के समान हैं ।। २ ।। नहा-धोकर ब्राह्मण लोग पत्थर की मूर्तियों का पूजन करते हैं; जब तक वे वास्तव में परमात्मा को नहीं पहचान लेते, तब तक सब मलिनता के अतिरिक्त कुछ भी हाथ नहीं लगता। यदि जीव अहंकार को छोड़कर सार्थक ढंग से प्रभु से मिलाप कर ले तो हरि-नाम जपते हुए

वह मुक्ति को प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ वेदों के ज्ञान के बिना बेकार वाद-विवाद करता है; खुद तो डूबा है, अपने पूर्वजों का नाम भी डुबा रहा है। जीव घट-घट में प्रभु का आभास पाने लगता है और सतिगुरु के मिलने से ज्ञान प्राप्त कर लेता है ॥ ४ ॥ ग्रहों की गणना में मन हमेशा शंकाओं में झूलता और दुःख सहन करता है; यदि व्यक्ति गुरु की शरण ले तो सुख प्राप्त हो सकता है। अपराध करके भी जब हम अपने आपको गुरु के चरणों में समर्पित कर देते हैं, तो प्रारब्ध के फलस्वरूप तथा गुरु की कृपा से हरि से भेंट हो जाती है ॥ ५ ॥ जब तक हम गुरु की शरण नहीं लेते, ब्रह्म को प्राप्त नहीं कर सकते, भ्रमजाल में फँसे रहते हैं और जन्म-मरण का चक्र भोगते हैं। विषय-विकारों के कारण बाँधकर यम के द्वार पर फेंक दिये जाते हैं; न हृदय में प्रभु-नाम उपजता है और न हमारा आचरण गुरुपदेशानुसार हो पाता है ॥ ६ ॥ जो लोग पाधे-पण्डितों के कहने पर आचरण करते हैं वे दुबिधा में पड़े रहते हैं, परमात्मा की यथार्थता को नहीं पहचानते। गुरु की कृपा से जिसे हरि-नाम का आधार मिल जाता है, ऐसा विरल जीव करोड़ों में कोई एक होता है ॥ ७ ॥ वह परमात्मा निश्चय ही अपने आप में बुरा भी है और भला भी; किन्तु इस रहस्य को कोई ज्ञानवान व्यक्ति सतिगुरु की कृपा से ही जान सकता है। गुरु की कृपा से जो इसे जान लेता है, उसका आवागमन मिट जाता है और वह परमात्मा में ही लीन हो जाता है ॥ ८ ॥ जिनके हृदय में परब्रह्म निवास करता है वे सर्वगुणसम्पन्न होते हैं और उनका चिन्तन सच्चा होता है। जो जीव गुरु की इच्छानुसार कर्म करते हैं, वे नानक के मतानुसार परमसत्य में ही समा जाते हैं ॥ ९ ॥ ४ ॥

॥ रामकली महला १ ॥ हठु निग्रहु करि काइआ छीजै । वरतु तपनु करि मनु नही भीजै । राम नाम सरि अवरु न पूजै ॥ १ ॥ गुरु सेवि मना हरि जन संगु कीजै । जमु जंदारु जोहि नही साकै सरपनि डसि न सकै हरि का रसु पीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वादु पड़ै रागी जगु भीजै । त्रैगुण बिखिआ जनमि मरीजै । राम नाम बिनु दूखु सहीजै ॥ २ ॥ चाड़सि पवनु सिघासनु भीजै । निउली करम खटु करम करीजै । राम नाम बिनु बिरथा सासु लीजै ॥ ३ ॥ अंतरि पंच अगनि किउ धीरजु धीजै । अंतरि चोरु किउ सादु लहीजै । गुरमुखि होइ काइआ गड़ु लीजै ॥ ४ ॥ अंतरि मैलु तीरथ भरमीजै । मनु नही सूचा किआ सोच करीजै । किरतु पइआ दोसु का कउ दीजै ॥ ५ ॥ अंनु न खाहि देही दुखु दीजै । बिनु गुर गिआन

त्रिपति नही थीजै । मनमुखि जनमै जनमि मरीजै ॥ ६ ॥ सतिगुर पूछि संगति जन कीजै । मनु हरि राचै नही जनमि मरीजै । राम नाम बिनु किआ करमु कीजै ॥ ७ ॥ ऊंदर दूंदर पासि धरीजै । धुर की सेवा रामु रवीजै । नानक नामु मिलै किरपा प्रभ कीजै ॥ ८ ॥ ५ ॥

हठयोग द्वारा इन्द्रिय-निग्रह करके शरीर क्षीण हो जाता है; व्रत, तप और उपवास द्वारा मन सुसंस्कृत नहीं होता। राम-नाम के बराबर कोई दूसरा साधन उपयुक्त नहीं है ॥ १ ॥ हे मन, सन्तों की संगति में रहकर गुरु-सेवा में रत रहो। हरि-रस का पान करने से अत्याचारी यम तुम्हारी तरफ़ देख भी नहीं सकेगा और माया रूपी सर्पिणी तुम्हें डस नहीं पायेगी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कलह के कारण सन्तप्त जगत राग-संगीत आदि से अपने मन को प्रसन्न करता है, तीन गुणों के विष में जन्मता और मरता है और राम-नाम की उपलब्धि के बिना हमेशा दुःख सहा करता है ॥ २ ॥ लोभी लोग प्राणायाम करते हैं और इस प्रकार आनन्द का रस लेते हैं। निउली कर्म करते हैं और हठयोग के छहों साधनों को अपनाते हैं, किन्तु प्रभु-नाम के बिना हमारा श्वास लेना भी बेकार है ॥ ३ ॥ मन के भीतर हमेशा काम-क्रोधादि पाँच अग्नियाँ जलती रहती हैं, फिर जीव को धैर्य कैसे मिल सकता है? भीतर तो कामादि चोर बसते हैं, जीवन का वास्तविक आस्वादन क्योंकर मिल सकता है? गुरु का अनुसरण करने से ही जीवात्मा शरीर रूपी दुर्ग पर विजय पा सकता है ॥ ४ ॥ मन में मलिनता बनी रहती है, तीर्थों में भटकने का क्या लाभ; मन निर्मल नहीं होता तो शरीर से शौचादि करने का क्या लाभ? सच तो यह है कि प्रारब्ध का फल हमें मिलता है, हम किसे दोष दे सकते हैं ॥ ५ ॥ उपवास करनेवाले अन्न का सेवन न करके शरीर को दुःख पहुँचाते हैं, गुरु-ज्ञान के बिना जीवन में कभी तृप्ति नहीं होती; मनमुख जन्म लेता है और मर जाता है, उसका जीवन व्यर्थ है ॥ ६ ॥ सच्चा सेवक सतिगुरु के आदेश से ही सत्संगति करता है, उसका मन हरि-प्रभु में लीन होता है, इसलिए वह आवागमन से बच जाता है। राम-नाम के बिना कोई भी अन्य कर्म व्यर्थ है ॥ ७ ॥ भीतर ही भीतर चूहे की तरह शोर मचानेवाले मन के संकल्पों-विकल्पों को दूर करो, ताकि मन स्थिर हो सके और जीव हरि-भजन की सच्ची सेवा को ग्रहण कर सके। गुरु नानक कहते हैं कि इस सच्चे नाम की उपलब्धि केवल प्रभु-कृपा से ही सम्भव है ॥ ८ ॥ ५ ॥

॥ रामकली महला १ ॥ अंतरि उतभुजु अवरु न कोई । जो कहीऐ सो प्रभ ते होई । जुगह जुगंतरि साहबु सचु सोई ।

उतपति परलउ अवरु न कोई ।। १ ।। ऐसा मेरा ठाकुरु गहिर गंभीरु। जिनि जपिआ तिन ही सुखु पाइआ हरि कै नामि न लगै जम तीरु ।। १ ।। रहाउ ।। नामु रतनु हीरा निरमोलु । साचा साहिबु अमरु अतोलु । जिहवा सूची साचा बोलु । घरि दरि साचा नाही रोलु ।। २ ।। इकि बन महि बैसहि डूगरि असथानु । नामु बिसारि पचहि अभिमानु । नाम बिना किआ गिआन धिआनु । गुरमुखि पावहि दरगहि मानु ।। ३ ।। हठु अहंकारु करै नही पावै । पाठ पड़ै ले लोक सुणावै । तीरथि भरमसि बिआधि न जावै । नाम बिना कैसे सुखु पावै ।। ४ ।। जतन करै बिंदु किवै न रहाई । मनूआ डोलै नरके पाई । जमपुरि बाधो लहै सजाई । बिनु नावै जीउ जलि बलि जाई ।।५।। सिध साधिक केते मुनि देवा । हठि निग्रहि न त्रिपतावहि भेवा । सबदु वीचारि गहहि गुर सेवा । मनि तनि निरमल अभिमान अभेवा ।। ६ ।। करमि मिलै पावै सचु नाउ । तुम सरणागति रहउ सुभाउ । तुम ते उपजिओ भगती भाउ । जपु जापउ गुरमुखि हरि नाउ ।। ७ ।। हउमै गरबु जाइ मन भीनै । झूठि न पावसि पाखंडि कीनै । बिनु गुर सबद नही घरु बारु । नानक गुरमुखि ततु बीचारु ।। ८ ।। ६ ।।

सृष्टि की उत्पत्ति इस प्रभु के अतिरिक्त और किसी में नहीं; जो भी कहते हैं, सब प्रभु के द्वारा ही होता है। युग युगान्तर से परमात्मा एक है, उत्पत्ति और प्रलय उसी के माध्यम से होते हैं ।। १ ।। मेरा स्वामी इतना अथाह और गम्भीर है कि जो भी उसका नाम जपता है वह सुखी होता है। नाम का साधक यम के निशाने से बच जाता है ।। १ ।। रहाउ ।। हरि-नाम एक अनमोल रत्न के समान है, सच्चा परमात्मा ही अमर और अतुल्य है। जिसे नाम-रत्न प्राप्त होता है, उसकी जिह्वा पवित्र होती है और उसकी वाणी सच्ची होती है। उसका हृदय रूपी घर स्थिर हो जाता है, वहाँ कोई अव्यवस्था नहीं रह जाती ।। २ ।। कुछ लोग वनों में बैठते तथा पर्वतों पर तपस्या करते हैं। वे नाम का त्याग करके अभिमान में सन्तप्त रहते हैं। हरि-नाम के बिना ज्ञान-ध्यान का कोई मोल नहीं, सच्चे गुरुमुख को ही प्रभु के दरबार में प्रतिष्ठा मिलती है ।। ३ ।। हठ-पूर्वक अहंकार करने से जीव परमात्मा से और दूर हटता है; पोथियों का पाठ केवल दुनिया को सुनाने को किया जाता है; तीर्थों पर भ्रमण करने से शरीर की व्याधि नहीं जाती, हरि-नाम के बिना कोई क्योंकर सुख पा सकता

है ॥ ४ ॥ यत्न करने पर भी वासना उभरती है, वीर्य की रक्षा नहीं हो पाती; मन अस्थिर रहता है और जीव नरक में जाता है। यमपुर में बँधकर दण्डित होता है और प्रभु-नाम के बिना जीव जलता रहता है ॥ ५ ॥ जितने सिद्ध-साधक और ऋषि-मुनि और देवता हैं, वे सब हठ-निग्रह द्वारा अपनी आत्मा को तृप्त नहीं कर सकते। जो जीव गुरु के आश्रय शब्द के रहस्य को जान लेते हैं, वे ही सही अर्थों में गुरु की सेवा करते हैं और अभिमान-रहित होकर तन-मन से निर्मल हो जाते हैं ॥ ६ ॥ प्रभु की कृपा द्वारा जिसे गुरु मिल जाता है और वह सच्चे नाम का रहस्य बता देता है, तो वह प्रभु की शरण में आकर भले स्वभाव को ग्रहण करता है। उसमें भक्ति-भावना पैदा होती है और वह सदैव गुरु के उपदेशानुसार हरि-नाम का जाप करता है ॥ ७ ॥ मन से अहम्भाव के दूर हो जाने से प्रसन्नता मिलती है, पाखण्डों के करने या मिथ्याचरण से प्रभु की प्राप्ति नहीं होती। गुरु के उपदेशों के अनुसरण के बिना जीव को कोई आधार नहीं मिलता। इसीलिए गुरु नानक कहते हैं कि जीवात्मा को गुरु के भरोसे ब्रह्म-तत्त्व का विचार करना चाहिए ॥ ८ ॥ ६ ॥

॥ रामकली महला १ ॥ जिउ आइआ तिउ जावहि बउरे जिउ जनमे तिउ मरणु भइआ। जिउ रस भोग कीए तेता दुखु लागै नामु विसारि भवजलि पइआ ॥ १ ॥ तनु धनु देखत गरबि गइआ। कनिक कामनी सिउ हेतु वधाइहि की नामु विसारहि भरमि गइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जतु सतु संजमु सीलु न राखिआ प्रेत पिंजर महि कासटु भइआ। पुंनु दानु इसनानु न संजमु साध संगति बिनु बादि जइआ ॥ २ ॥ लालचि लागै नामु बिसारिओ आवत जावत जनमु गइआ। जा जमु धाइ केस गहि मारै सुरति नही मुखि काल गइआ ॥ ३ ॥ अहिनिसि निंदा ताति पराई हिरदै नामु न सरब दइआ। बिनु गुर सबद न गति पति पावहि राम नाम बिनु नरकि गइआ ॥ ४ ॥ खिन महि वेस करहि नटूआ जिउ मोह पाप महि गलतु गइआ। इत उत माइआ देखि पसारी मोह माइआ कै मगनु भइआ ॥ ५ ॥ करहि बिकार विथार घनेरे सुरति सबद बिनु भरमि पइआ। हउमै रोगु महा दुखु लागा गुरमति लेवहु रोगु गइआ ॥ ६ ॥ सुख संपति कउ आवत देखै साकत मनि अभिमानु भइआ। जिस का इहु तनु धनु सो फिरि लेवै अंतरि सहसा दूखु पइआ ॥ ७ ॥ अंति कालि किछु साथि न चालै जो दीसै सभु तिसहि मइआ।

आदि पुरखु अपरंपरु सो प्रभु हरि नामु रिदै लै पारि पइआ ॥८॥ मूए कउ रोवहि किसहि सुणावहि भै सागर असरालि पइआ। देखि कुटंबु माइआ ग्रिह मंदरु साकतु जंजालि परालि पइआ ॥९॥ जा आए ता तिनहि पठाए चाले तिनै बुलाइ लइआ। जो किछु करणा सो करि रहिआ बखसणहारै बखसि लइआ ॥ १० ॥ जिनि एहु चाखिआ राम रसाइणु तिन की संगति खोजु भइआ। रिधि सिधि बुधि गिआनु गुरू ते पाइआ मुकति पदारथु सरणि पइआ ॥ ११ ॥ दुखु सुखु गुरमुखि समकरि जाणा हरख सोग ते बिरकतु भइआ। आपु मारि गुरमुखि हरि पाए नानक सहजि समाइ लइआ ॥ १२ ॥ ७ ॥

हे मूर्ख जीव, जैसे आये हो वैसे ही जाना है; जैसे जन्मे थे, वैसे ही मर जाओगे। जितना रस-भोग तुमने किया, उतना ही दुःख बढ़ा, क्योंकि हरि-नाम को भुलाकर तुम संसार में ही फँस गये ॥ १ ॥ देखते-देखते माया-बद्ध जीव का तन-धन सब अहंकार में ही बह गया। समृद्धि और स्त्रीभोग में ही रत रहे, हरि-नाम को विस्मृत करने से भ्रम में सब कुछ नाश हो गया ॥१॥रहाउ॥ आत्मा के सुन्दर गुण, शील, संयम और यतीत्व तथा सत्य कुछ भी नहीं रखा और मन के भीतर निर्मलता क्षीण हो गयी अर्थात् प्रेत जैसे शरीर में कोमल भाव लकड़ी की तरह कठोर हो गये। पुण्यदान, निर्मलता, संयम और सन्तों की संगति के बिना जीवन व्यर्थ हो गया ॥ २ ॥ लोभ में पड़े रहकर तुमने परमात्मा के नाम को भुला दिया है, इसीलिए आवागमन के चक्र में पड़े रह जाते हो। अन्ततः जब यमदूत बालों को पकड़कर मारते हैं, तो होश नहीं रहता और यम के मुँह में चला जाता है ॥ ३ ॥ रात-दिन निन्दा और दूसरों की चुगली करता है, ईर्ष्या में जलता है, किन्तु हृदय में न तो प्रभु-नाम आता है और न सब पर दया करने की भावना जाग्रत् होती है। गुरु के बिना उसकी कोई गति नहीं रह जाती और राम-नाम के बिना वह नरक में जाता है ॥ ४ ॥ क्षण-क्षण वह भेस बदलता है, मदारी की तरह तमाशे दिखाता है और मोह-पाप में डूबा रहता है; इधर-उधर चारों ओर माया का प्रसार देखकर वह मग्न रहता है ॥ ५ ॥ अनेक प्रकार के कार्य-प्रसार करता है, किन्तु शब्द के ज्ञान के बिना आत्मा भ्रम में पड़ा रहता है। अहंकार के रोग में महा-दुःख उठाता है, केवल गुरुमत को पाकर ही इस रोग से मुक्त हुआ जा सकता है ॥ ६ ॥ घर में सुख-सम्पत्ति को आते देख माया से प्यार करनेवाला जीव मन में अभिमान करने लगता है। जिस प्रभु ने यह सब तन-मन-धन दिया है, उसी में शंका करते हुए दुःखों को भोगता है ॥ ७ ॥

अन्तकाल में कुछ भी साथ नहीं चलता, जो कुछ भी दीख पड़ता है, वह सब माया है। वह आदि-पुरुष अगम है, उसी परमात्मा का नाम हृदय में धारण करने से जीव का उद्धार होता है ॥ ८ ॥ मृत्यु के बाद रोकर किसे सुनाते हो, संसार-सागर भयंकर और दुस्तर है; अपने घर-मन्दिर को तथा कुटुम्ब-सम्बन्धियों को माया के घेरे में देखकर मनमुख स्वयं भी उन्हीं निकम्मे कामों में व्यस्त होता है ॥ ९ ॥ जब मनुष्य संसार में आता है तो परमात्मा ही के द्वारा भेजा जाता है, और जब यहाँ से जाता है तो उसी के बुलाने से जाता है। जो कुछ वह करवाता है वही करता है और वह कृपालु परमात्मा स्वयं ही उसे बख़्श लेता है ॥ १० ॥ जो जीव, हरि-नाम रूपी रसायन का भोग कर लेता है, वह परमात्मा को सत्संगति में खोजता है। रिद्धि, सिद्धि, बुद्धि और ज्ञान गुरु की शरण में आकर पाता है और मुक्ति का साधन बनाता है ॥ ११ ॥ सच्चा गुरुमुख दुःख-सुख को एक समान मानकर हर्ष-शोक से निर्लिप्त रहता है; अहंकार को मारकर गुरुपदेशानुसार वह परमात्मा को प्राप्त करता है और सहजावस्था में समा जाता है ॥ १२ ॥ ७ ॥

॥ रामकली दखणी महला १ ॥ जतु सतु संजमु साच द्रिड़ाइआ साच सबदि रसि लीणा ॥१॥ मेरा गुरु दइआलु सदा रंगि लीणा। अहिनिसि रहै एक लिव लागी साचे देखि पतीणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रहै गगन पुरि द्रिसटि समैसरि अनहत सबदि रंगीणा ॥२॥ सतु बंधि कुपीन भरिपुरि लीणा जिहवा रंगि रसीणा ॥ ३ ॥ मिलै गुर साचे जिनि रचु राचे किरतु वीचारि पतीणा ॥ ४ ॥ एक महि सरब सरब महि एका एह सतिगुरि देखि दिखाई ॥ ५ ॥ जिनि कीए खंड मंडल ब्रहमंडा सो प्रभु लखनु न जाई ॥ ६ ॥ दीपक ते दीपकु परगासिआ त्रिभवण जोति दिखाई ॥७॥ सचै तखति सच महली बैठे निरभउ ताड़ी लाई ॥ ८ ॥ मोहि गइआ बैरागी जोगी घटि घटि किंगुरी वाई ॥ ९ ॥ नानक सरणि प्रभू की छूटे सतिगुर सचु सखाई ॥ १० ॥ ८ ॥

गुरु ने जीव को सत्य और संयम में स्थिर किया, जिससे वह शब्द में रस लेने लगा ॥ १ ॥ मेरा गुरु बड़ा दयालु है, सदा अपने रंग में मुझे रँग लेता है। रात-दिन मुझे उसी की प्रीति लगी रहती है, परमसत्य को देखने का विश्वास मुझे उसी के सहारे में मिला है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु हमेशा दशम द्वार में विचरण करता है, सबके प्रति समान दृष्टि रखता है

और अनाहत शब्द में रत रहता है ॥ २ ॥ गुरु सत्य की कौपीन धारण कर परमात्मा में लीन रहता है और उसकी जिह्वा सदा हरि-नाम में पगी रहती है ॥ ३ ॥ सच्चे गुरु को मिलकर जो परमात्मा में विश्वास लाते हैं वे सत्कर्मों में लीन हो जाते हैं ॥ ४ ॥ परमात्मा सबमें समाया हुआ है और सब कुछ परमात्मा में समाया हुआ है, यह तथ्य सतिगुरु ही बता सकता है ॥ ५ ॥ जिस परमात्मा ने सब खण्ड-ब्रह्माण्ड रचे हैं, वह आँखों से दीख नहीं पड़ता ॥ ६ ॥ गुरु दीपक से दीपक को जलाकर उस तीनों लोकों से न्यारी ज्योति को दिखा देता है ॥ ७ ॥ वह ज्योतिस्वरूप प्रभु निर्भय भाव से सत्य-खण्ड में ध्यानस्थ रहता है ॥ ८ ॥ जब जीव सतिगुरु का सहारा लेकर मोह-माया का त्याग कर देता है, तो वह सच्चा योगी बन जाता है और उसके भीतर किंगरी बज उठती है ॥ ९ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि गुरु की सच्ची शिक्षा पाकर जब जीवात्मा प्रभु की शरण लेता है, तभी मुक्ति को प्राप्त करता है ॥ १० ॥ ८ ॥

॥ रामकली महला १ ॥ अउहठि हसत मड़ी घरु छाइआ धरणि गगन कल धारी ॥ १ ॥ गुरमुखि केती सबदि उधारी संतहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ममता मारि हउमै सोखै त्रिभवणि जोति तुमारी ॥ २ ॥ मनसा मारि मनै महि राखै सतिगुर सबदि वीचारी ॥ ३ ॥ सिङी सुरति अनाहदि वाजै घटि घटि जोति तुमारी ॥ ४ ॥ परपंच बेणु तही मनु राखिआ ब्रहम अगनि परजारी ॥ ५ ॥ पंच ततु मिलि अहिनिसि दीपकु निरमल जोति अपारी ॥ ६ ॥ रवि ससि लउके इहु तनु किंगुरी वाजै सबदु निरारी ॥ ७ ॥ सिव नगरी महि आसणु अउधू अलखु अगंमु अपारी ॥ ८ ॥ काइआ नगरी इहु मनु राजा पंच वसहि वीचारी ॥ ९ ॥ सबदि रवै आसणि घरि राजा अदलु करे गुणकारी ॥ १० ॥ कालु बिकालु कहे कहि बपुरे जीवत मूआ मनु मारी ॥ ११ ॥ ब्रहमा बिसनु महेस इक मूरति आपे करता कारी ॥ १२ ॥

(यह पद सही अर्थों में आध्यात्मिक योगी की प्रशस्ति में कहा गया है।) मढ़ी रूपी शरीर को घर बनाकर हृदय को माँगने के लिए हाथ बनाया है। अर्थात् जैसे योगी हाथों पर अन्नादि की भिक्षा माँगते हैं, वैसे ही यहाँ हृदय रूपी हाथ शरीर रूपी घर से मूल अन्न की भिक्षा माँग रहा है। इस प्रकार आध्यात्मिक योगी धरती, आकाश सब जगह परमात्मा की कला को देखता है ॥ १ ॥ गुरु के द्वारा असंख्य लोग शब्द की कमायी

कर उद्धार को प्राप्त होते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ममता को मारकर जब आत्मा अहंकार को सुखा देता है, तो तीनों लोकों में उसकी ज्योति विकसित होती है ॥ २ ॥ वह सतिगुरु के उपदेशों पर विचार करते हुए अपनी कामनाओं को संयत करता है और मन में गुरु को धारण करता है ॥ ३ ॥ बाहरी सिंगी को बजाने की अपेक्षा आत्मा में अनाहत नाद का श्रवण कर घट-घट में प्रभु की ज्योति को देखता है ॥ ४ ॥ सारे संसार को वीणा समझकर उसमें मन को रखा है और ब्रह्म की अग्नि उसमें प्रदीप्त की है ॥५॥ पाँचों तत्त्व मिलकर शरीर को प्राप्त करते हैं और भीतर परमात्मा की ज्योति प्रकाशित हुई है ॥ ६ ॥ सूर्य और चाँद इस वीणा के दो तूंबे हैं और शरीर में शब्द की किंगरी बजती है, अर्थात् हर साँस पर प्रभु का नाम जपा जाता है ॥ ७ ॥ सत्यखण्ड में अर्थात् आत्ममण्डल में स्वयं परमात्मा का अदृश्य और अगम्य आसन है ॥ ८ ॥ शरीर रूपी नगरी में मन राजा है और पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ विचारवान होकर वहाँ रहती हैं ॥ ९ ॥ मन रूपी राजा हृदयासन पर बैठकर शब्द में रमण करता है और गुणवृद्धि द्वारा न्याय करने लगता है ॥ १० ॥ मृत्यु और जीवन मन को मार लेनेवाले जीव को कुछ नहीं कह सकते ॥ ११ ॥ ब्रह्मा, विष्णु और महेश वह परमात्मा ही है और वही सब कार्य करता है ॥ १२ ॥

काइआ सोधि तरै भव सागरु आतम ततु वीचारी ॥ १३ ॥ गुर सेवा ते सदा सुखु पाइआ अंतरि सबदु रविआ गुणकारी ॥१४॥ आपे मेलि लए गुण दाता हउमै त्रिसना मारी ॥ १५ ॥ त्रै गुण मेटे चउथै वरतै एहा भगति निरारी ॥ १६ ॥ गुरमुखि जोग सबदि आतमु चीनै हिरदै एकु मुरारी ॥ १७ ॥ मनूआ असथिरु सबदे राता एहा करणी सारी ॥ १८ ॥ बेदु बादु न पाखंडु अउधू गुरमुखि सबदि बीचारी ॥१९॥ गुरमुखि जोगु कमावै अउधू जतु सतु सबदि वीचारी ॥ २० ॥ सबदि मरै मनु मारे अउधू जोग जुगति वीचारी ॥ २१ ॥ माइआ मोहु भवजलु है अवधू सबदि तरै कुल तारी ॥ २२ ॥ सबदि सूर जुग चारे अउधू बाणी भगति वीचारी ॥ २३ ॥ एहु मनु माइआ मोहिआ अउधू निकसै सबदि वीचारी ॥२४॥ आपे बखसे मेलि मिलाए नानक सरणि तुमारी ॥ २५ ॥ ९ ॥

आध्यात्मिक तत्त्व की बात यह है कि जो शरीर के भीतर खोज करता है वही संसार-सागर में तैर पाता है ॥ १३ ॥ गुरु की सेवा करने से सदा उसे सुख मिलता है और वह गुणयुक्त शब्द में हमेशा रमा रहता

है ॥ १४ ॥ गुणों का दाता वह प्रभु हमारे अहंकार और तृष्णा को नाश कर स्वयं जीव को अपने में मिला लेता है ॥ १५ ॥ सच्ची भक्ति वही है जिसमें जीव तीनों गुणों का मोह छोड़कर चौथे पद में विचरण करने लगता है ॥ १६ ॥ गुरुमुख का वास्तविक योग शब्द द्वारा आत्मा को खोजना और हृदय में परमात्मा को धारण करना है ॥ १७ ॥ जब मन स्थिर हो जाता है, जीव शब्द में लीन होता है तभी कर्म श्रेष्ठ होते हैं ॥ १८ ॥ उस समय न तो वेदों के वाद-विवाद का अभिमान रहता है, न आडम्बर-पाखण्ड करता है, केवल गुरु के द्वारा शब्द के रहस्यों में लीन हो जाता है ॥ १९ ॥ गुरुमुख जो योग कमाता है उसमें तप, सत्य और शब्द की वास्तविक जानकारी के प्रयास शामिल हैं ॥ २० ॥ शब्द के द्वारा वह मन को मारकर मोह-माया से विरक्त होता है और इस प्रकार योग की वास्तविक युक्ति को अपनाता है ॥ २१ ॥ यह संसार सब माया-मोह है, सच्चा योगी इसमें शब्द की नौका पर तैरता और अपने पूरे कुटुम्ब को पार लगाता है ॥ २२ ॥ शब्द के द्वारा वह चारों युगों में शूरवीर बनता है और साधना के द्वारा वाणी को समझता है ॥ २३ ॥ मन-माया में डूबा हुआ जीव केवल शब्द-विचार के द्वारा ही निकल पाता है ॥ २४ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि शरण में आनेवाले जीव को परमात्मा बख़्श लेता है और अपने में लीन कर लेता है ॥ २५ ॥ ९ ॥

रामकली महला ३ असटपदीआ

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सरमै दीआ मुंद्रा कंनी पाइ जोगी खिथा करि तू दइआ । आवणु जाणु बिभूति लाइ जोगी ता तीनि भवण जिणि लइआ ॥१॥ ऐसी किंगुरी वजाइ जोगी । जितु किंगुरी अनहदु वाजै हरि सिउ रहै लिव लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतु संतोखु पतु करि झोली जोगी अंम्रित नामु भुगति पाई । धिआन का करि डंडा जोगी सिंङी सुरति वजाई ॥ २ ॥ मनु द्रिड़ु करि आसणि बैसु जोगी ता तेरी कलपणा जाई । काइआ नगरी महि मंगणि चड़हि जोगी ता नामु पलै पाई ॥ ३ ॥ इतु किंगुरी धिआनु न लागै जोगी ना सचु पलै पाइ । इतु किंगुरी सांति न आवै जोगी अभिमानु न विचहु जाइ ॥४॥ भउ भाउ दुइ पत लाइ जोगी इहु सरीरु करि डंडी । गुरमुखि होवहि ता तंती वाजै इन बिधि त्रिसना खंडी ॥५॥ हुकमु बूझै सो जोगी कहीऐ

एकस सिउ चितु लाए। सहसा तूटै निरमलु होवै जोग जुगति इव पाए ॥ ६ ॥ नदरी आवदा सभु किछु बिनसै हरि सेती चितु लाइ। सतिगुर नालि तेरी भावनी लागै ता इह सोझी पाइ ॥ ७ ॥ एहु जोगु न होवै जोगी जि कुटंबु छोडि परभवणु करहि। ग्रिह सरीर महि हरि हरि नामु गुर परसादी अपणा हरि प्रभु लहहि ॥ ८ ॥ इहु जगतु मिटी का पुतला जोगी इसु महि रोगु वडा त्रिसना माइआ। अनेक जतन भेख करे जोगी रोगु न जाइ गवाइआ ॥ ९ ॥ हरि का नामु अउखधु है जोगी जिसनो मंनि वसाए। गुरमुखि होवै सोई बूझै जोग जुगति सो पाए ॥ १० ॥ जोगै का मारगु बिखमु है जोगी जिसनो नदरि करे सो पाए। अंतरि बाहरि एको वेखै विचहु भरमु चुकाए ॥ ११ ॥ विणु वजाई किंगुरी वाजै जोगी सा किंगुरी वजाइ। कहै नानकु मुकति होवहि जोगी साचे रहहि समाइ ॥ १२ ॥ १ ॥ १० ॥

(योग के वास्तविक उपकरणों की बात यहाँ करते हैं।) ऐ योगी, तुम्हें यदि मुद्राएँ धारण करनी है तो उद्यम की करो और दया का खिन्था (कफ़नी) पहनो। जन्म-मरण की लीला की सूझ-बूझ रूपी विभूति शरीर पर लगाओ तो तुम तीनों लोकों पर विजय पा सकते हो ॥ १ ॥ ऐ योगी, ऐसी वीणा बजाओ कि उसके अनाहत स्वर से तुम्हारे हृदय में प्रभु की लग्न लग जाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सत्य और सन्तोष की झोली और पात्र बनाओ और अमृत-नाम का भोजन करो। ध्यान रूपी दण्ड धारण करते हुए आत्मा रूपी सिंगी को फूँको ॥ २ ॥ ऐ योगी, मन की दृढ़ता का आसन लगाओ, तब तुम्हारी कल्पनाओं का अन्त होगा। शरीर रूपी नगरी के भीतर भिक्षाटन के लिए निकलो, तभी तुम्हारी झोली में हरि-नाम की भिक्षा पड़ेगी ॥ ३ ॥ तुम्हारी वीणा के बजाने से तुम्हें तब तक शान्ति नहीं मिल सकती, जब तक कि तुम सत्य को न पा जाओ। इस लीला से ध्यान भी स्थिर नहीं हो सकता जब तक कि तुम अपने भीतर से अभिमान को न निकाल दो ॥ ४ ॥ परमात्मा का भय और भक्ति-भाव रूपी दो पलड़े बनाकर, ऐ योगी, अपने शरीर को डण्डी बना लो। गुरु का आश्रय लेकर इसके तारों को झनझनाओ तभी तृष्णा खण्डित हो सकेगी ॥ ५ ॥ जो व्यक्ति प्रभु के हुक्म को पहचानता है और परमात्मा से ही लग्न लगाता है, वही सच्चा योगी है; उसके संशय दूर हो जाते हैं और वह निर्मल भाव से योग की युक्ति को पा जाता

है ।। ६ ।। उसके लिए दृश्यमान जगत मिट जाता है और हरि से उसकी वृत्ति जुड़ जाती है, किन्तु यह सूझ उसे तभी मिलती है, जब सतिगुरु पर उसकी पूर्ण श्रद्धा होती है ।। ७ ।। ऐ योगी, कुटुम्ब-परिवार को छोड़कर इधर-उधर भटकते फिरना योग नहीं है । शरीर रूपी घर में ही परमात्मा और परमात्मा का नाम विद्यमान है, गुरु की कृपा से तुम उसे ढूँढ़ लो ।। ८ ।। यह संसार मिट्टी का पुतला है और इसमें तृष्णा तथा माया का रोग लगा हुआ है । हे योगी, तुम अनेक भेस बना-बनाकर भी यदि प्रयास करते रहो तो भी ये रोग दूर नहीं होता ।। ९ ।। ऐ योगी, हरि का नाम औषध है जिसको सेवन करने से रोग दूर होता है; गुरु की कृपा द्वारा ज्ञान प्राप्त होता है और इस तरह सच्ची योग की युक्ति प्राप्त होती है ।। १० ।। हे योगी, वास्तविक योग का मार्ग बड़ा कठिन है; जिस पर प्रभु की कृपा होती है, वही इस योग को प्राप्त कर सकता है । अन्दर-बाहर वह एक ही प्रभु को देखता है और उसके सब भ्रम दूर हो जाते हैं ।। ११ ।। ऐ योगी, तुम उस तिंगुरी को बजाओ जो बिना बजाए ही बजती है । गुरु नानक कहते हैं कि ऐसा करने से तुम्हारी मुक्ति हो जाएगी और तुम परमसत्य में समा जाओगे ।। १२ ।। १ ।। १० ।।

।। रामकली महला ३ ।। भगति खजाना गुरमुखि जाता सतिगुरि बूझि बुझाई ।। १ ।। संतहु गुरमुखि देइ वडिआई ।।१।। रहाउ ।। सचि रहहु सदा सहजु सुखु उपजै कामु क्रोधु विचहु जाई ।। २ ।। आपु छोडि नाम लिव लागी ममता सबदि जलाई ।। ३ ।। जिस ते उपजै तिस ते बिनसै अंते नामु सखाई ।। ४ ।। सदा हजूरि दूरि नह देखहु रचना जिनि रचाई ।। ५ ।। सचा सबदु रवै घट अंतरि सचे सिउ लिव लाई ।। ६ ।। सतसंगति महि नामु निरमोलकु वडै भागि पाइआ जाई ।। ७ ।। भरमि न भूलहु सतिगुरु सेवहु मनु राखहु इक ठाई ।। ८ ।। बिनु नावै सभ भूली फिरदी बिरथा जनमु गवाई ।। ९ ।। जोगी जुगति गवाई हंढै पाखंडि जोगु न पाई ।। १० ।। सिव नगरी महि आसणि बैसै गुरसबदी जोगु पाई ।। ११ ।। धातुरबाजी सबदि निवारे नामु वसै मनि आई ।। १२ ।। एहु सरीरु सरवरु है संतहु इसनानु करे लिव लाई ।। १३ ।। नामि इसनानु करहि से जन निरमल सबदे मैलु गवाई ।। १४ ।। त्रैगुण अचेत नामु चेतहि नाही बिनु नावै बिनसि जाई ।। १५ ।। ब्रहमा बिसनु महेसु त्रै मूरति त्रिगुणि

भरमि भुलाई ।। १६ ।। गुरपरसादी त्रिकुटी छूटै चउथै पदि लिव लाई ।। १७ ।। पंडित पड़हि पड़ि वादु वखाणहि तिना बूझ न पाई ।। १८ ।। बिखिआ माते भरमि भुलाए उपदेसु कहहि किसु भाई ।। १६ ।। भगत जना की ऊतम बाणी जुगि जुगि रही समाई ।। २० ।। बाणी लागै सो गति पाए सबदे सचि समाई ।। २१ ।। काइआ नगरी सबदे खोजे नामु नवंनिधि पाई ।। २२ ।। मनसा मारि मनु सहजि समाणा बिनु रसना उसतति कराई ।। २३ ।। लोइण देखि रहे बिसमादी चितु अदिसटि लगाई ।।२४।। अदिसटु सदा रहै निरालमु जोती जोति मिलाई ।। २५ ।। हउ गुरु सालाही सदा आपणा जिनि साची बूझ बुझाई ।। २६ ।। नानकु एक कहै बेनंती नावहु गति पति पाई ।। २७ ।। २ ।। ११ ।।

सतिगुरु के द्वारा सुझाए जाने पर गुरुमुख को भक्ति का ख़ज़ाना प्राप्त होता है ।। १ ।। गुरु के द्वारा ही सन्तों के मार्ग पर चलनेवाले को प्रतिष्ठा मिलती है (पाखण्ड के द्वारा योग नहीं कमाया जा सकता) । वास्तविक योग गुरु की संगति और माया-तृष्णा आदि के अन्त से प्राप्त होता है ।। १ ।। रहाउ ।। सदा सत्य को स्वीकार करो, सहजावस्था में आनन्द पाओ और मन से काम-क्रोधादि को हटा दो ।। २ ।। अहंकार को छोड़कर प्रभु-नाम में ध्यान लगाओ और गुरु के शब्दों के द्वारा ममत्व-भाव को जला दो ।। ३ ।। जो इस सृष्टि को पैदा करता है वही इसका नाश भी करता है, इसलिए अन्त में हरि-नाम ही सहायक होता है ।। ४ ।। सृष्टि की रचना करनेवाला सदा हमारे सम्मुख है, कभी दूर नहीं होता ।। ५ ।। सच्चा शब्द शरीर में हमेशा ध्वनि पैदा करता है और परमसत्य ब्रह्म के साथ जीव की लग्न होती है ।। ६ ।। सत्संगति में रहकर अनमोल हरि-नाम की प्राप्ति सौभाग्य से होती है ।। ७ ।। इसलिए शंकाओं में न भूलो, सतिगुरु की सेवा करो और मन को स्थिर बनाओ ।। ८ ।। जिन लोगों ने हरि-नाम को नहीं पहचाना वे बेकार भटकते फिरते हैं और जीवन व्यर्थ गँवा देते हैं ।। ९ ।। वास्तविक योग की युक्ति अगर इधर-उधर भटककर गँवा दी तो पाखण्ड में योग-उपलब्धि सम्भव नहीं होगी ।। १० ।। परमात्मा की नगरी सचखण्ड में बैठकर स्थिरचित्त भजन करनेवाला जीव गुरु की कृपा से योग-युक्ति को प्राप्त कर लेता है ।। ११ ।। गुरु के शब्दों द्वारा माया को दूर करो तो हृदय में नाम बसता है ।। १२ ।। यही शरीर ही निर्मल सरोवर है, इसी में स्नान करो और प्रभु में ध्यान लगाओ ।। १३ ।। जो जन नाम रूपी

सरोवर में ध्यान लगाते हैं वे निर्मल हो जाते हैं और गुरु के उपदेश से मैल को काट देते हैं ॥ १४ ॥ त्रिगुणी जीव बेसमझ होने के कारण नाम का ध्यान नहीं करते और हरि-नाम के बिना नष्ट हो जाते हैं ॥ १५ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, महेश की त्रिमूर्ति भी इन्हीं तीनों गुणों में भटकती फिरती है ॥ १६ ॥ तीनों गुणों में भटकने का बन्धन केवल गुरु-कृपा से छूट सकता है और जीव का ध्यान परम-पद में लीन हो जाता है ॥ १७ ॥ पण्डितजन धर्म-ग्रन्थों को पढ़ते और वाद-विवाद का बखान करते रहते हैं, किन्तु प्रभु की सूझ उन्हें नहीं मिलती ॥ १८ ॥ ऐसे लोग माया में मदहोश होते हैं, उन्हें क्या उपदेश दिया जाए ॥ १९ ॥ भक्तजनों की वाणी उत्तम होती है, जो युग-युग से प्रकट हो रही है ॥ २० ॥ जो इस वाणी में विश्वास लाता है उसका उद्धार हो जाता है और वह गुरु के शब्दों में समा जाता है ॥२१॥ शरीर रूपी नगरी में शब्द के सहारे खोज करने पर हरि-नाम रूपी नव-निधि प्राप्त होती है ॥ २२ ॥ तब वह मन को संयत करता है और सहजावस्था को पाकर बिना जिह्वा के ही प्रभु का स्तुतिगान करने लगता है ॥ २३ ॥ आँखें विस्मित होकर देखती हैं और मन हरि में तल्लीन होता है ॥ २४ ॥ वह प्रभु अदृष्ट है। सदा निर्लिप्त रहता है, उसकी ज्योति से अपनी ज्योति मिला ली है ॥ २५ ॥ ऐसी सच्ची विद्या देनेवाले अपने गुरु पर मैं न्योछावर हूँ ॥ २६ ॥ गुरु नानक विनती करते हैं कि इसी प्रकार के योग-साधन में जीव का उद्धार और प्रतिष्ठा है ॥ २७ ॥ २ ॥ ११ ॥

॥ रामकली महला ३ ॥ हरि की पूजा दुलंभ है संतहु कहणा कछू न जाई ॥ १ ॥ संतहु गुरमुखि पूरा पाई। नामो पूज कराई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि बिनु सभु किछु मैला संतहु किआ हउ पूज चड़ाई ॥ २ ॥ हरि साचे भावै सा पूजा होवै भाणा मनि बसाई ॥ ३ ॥ पूजा करै सभु लोकु संतहु मनमुखि थाइ न पाई ॥ ४ ॥ सबदि मरै मनु निरमलु संतहु एह पूजा थाइ पाई ॥ ५ ॥ पवित पावन से जन साचे एक सबदि लिव लाई ॥ ६ ॥ बिनु नावै होर पूज न होवी भरमि भुली लोकाई ॥ ७ ॥ गुरमुखि आपु पछाणै संतहु राम नामि लिव लाई ॥८॥ आपे निरमलु पूज कराए गुर सबदी थाइ पाई ॥९॥ पूजा करहि परु बिधि नही जाणहि दूजै भाइ मलु लाई ॥ १० ॥ गुरमुखि होवै सु पूजा जाणै भाणा मनि वसाई ॥ ११ ॥ भाणे ते सभि सुख पावै संतहु अंते नामु सखाई ॥ १२ ॥ अपणा

आपु न पछाणहि संतहु कूड़ि करहि वडिआई ।। १३ ।। पाखंडि कीनै जमु नही छोडै लै जासी पति गवाई ।। १४ ।। जिन अंतरि सबदु आपु पछाणहि गति मिति तिन ही पाई ।। १५ ।। एहु मनूआ सुंन समाधि लगावै जोती जोति मिलाई ।। १६ ।। सुणि सुणि गुरमुखि नामु वखाणहि सत संगति मेलाई ।। १७ ।। गुरमुखि गावै आपु गवावै दरि साचै सोभा पाई ।। १८ ।। साची बाणी सचु वखाणै सचि नामि लिव लाई ।। १९ ।। भै भंजनु अति पाप निखंजनु मेरा प्रभु अंति सखाई ।। २० ।। सभु किछु आपे आपि वरतै नानक नामि वडिआई ।। २१ ।। ३ ।। १२ ।।

हे सज्जनो, परमात्मा की आराधना दुर्लभ है, इसकी महत्ता अवर्णनीय है ।।१।। पूरा परमेश्वर गुरु के द्वारा ही मिलता है और गुरु हरि-नाम की आराधना ही करवाता है ।। १ ।। रहाउ ।। परमात्मा के बिना शेष सब कुछ मलिन है, और किसी भी चीज़ की आराधना नहीं की जा सकती ।। २ ।। जो कुछ परमात्मा को रुचता है, उसी के अनुसार सही उपासना होती है और प्रभु-इच्छा को मन में बसा लेना ही परमात्मा की पूजा होती है ।। ३ ।। सब लोग आराधना करते हैं, किन्तु मनमुख होने के कारण उनकी पूजा स्वीकार नहीं होती ।। ४ ।। यदि वे गुरु के शब्दों के अनुसार जीवित भाव से मरें तो मन निर्मल हो जाता है, इस तरह की पूजा स्वीकार होती है ।। ५ ।। जो जन सच्चे शब्द में लग्न लगाते हैं, वे परमपवित्र हो जाते हैं ।। ६ ।। नाम-आराधना के बिना और कोई पूजा स्वीकार नहीं होती, जगत यों ही भ्रम और शंकाओं में भूला रहता है ।। ७ ।। गुरु के अनुसार आचरण करने से आत्म-ज्ञान मिलता है और राम-नाम में ध्यान लगता है ।। ८ ।। परमात्मा स्वयं गुरुमुखों से हरि-नाम की आराधना करवाता है और गुरु के शब्द का ज्ञान होने पर जीव मोक्ष-लाभ करता है ।। ९ ।। जो लोग विधि को जाने बग़ैर पूजा करते हैं, वे द्वैत-भाव के कारण मन को मलिन कर लेते हैं ।। १० ।। यदि जीव गुरु का दामन थाम ले और प्रभु-इच्छा को मन में बसा ले तो वही ही जीव पूजा की वास्तविक विधि जाननेवाला होता है ।। ११ ।। प्रभु-इच्छा पर आश्रित रहनेवाला व्यक्ति सब सुखों को प्राप्त करता है और अन्ततः हरि-नाम उसका सहायक होता है ।। १२ ।। जो अपने आपको नहीं पहचानता उसकी प्रतिष्ठा मिथ्या होती है ।। १३ ।। पाखण्ड करने से यमदूतों से पीछा नहीं छुड़वाया जा सकता, अन्ततः उनके हाथों अपमानित होना पड़ता है ।। १४ ।। जिन्होंने गुरु के शब्द द्वारा आत्म-उपलब्धि प्राप्त की है, उन्हें ही मुक्ति की मर्यादा का ज्ञान होता है ।। १५ ।।

उनका मन निर्विकार भाव से समाधिस्थ हो जाता है और उनकी आत्म-ज्योति परम-ज्योति में लीन हो जाती है ॥ १६ ॥ जो लोग सत्संगति में गुरु द्वारा नाम-महिमा सुनते और दूसरों को भी बताते हैं ॥ १७ ॥ वे गुरु-कृपा से हरि-नाम का बखान करते और परमात्मा के दरबार में शोभा पाते हैं ॥ १८ ॥ गुरु की वाणी सच्ची है, उसका बखान करना भी सत्य है और प्रभु के सच्चे नाम में चित्त लगाना भी उचित है ॥ १९ ॥ क्योंकि मेरा प्रभु निर्भयता प्रदान करनेवाला और पापों को दूर करनेवाला है; अन्त में वही सबका सहायक होता है ॥ २० ॥ गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम की प्रतिष्ठा वही है कि सब कुछ अपने आप में सम्पूर्ण होता है और यथावस्था स्थितियाँ घटित होती हैं ॥ २१ ॥ ३ ॥ १२ ॥

॥ रामकली महला ३ ॥ हम कुचल कुचील अति अभिमानी मिलि सबदे मैलु उतारी ॥ १ ॥ संतहु गुरमुखि नामि निसतारी । सचा नामु वसिआ घट अंतरि करतै आपि सवारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पारस परसे फिरि पारसु होए हरि जीउ अपणी किरपा धारी ॥ २ ॥ इकि भेख करहि फिरहि अभिमानी तिन जूऐ बाजी हारी ॥ ३ ॥ इकि अनदिनु भगति करहि दिनु राती राम नामु उरिधारी ॥ ४ ॥ अनदिनु राते सहजे माते सहजे हउमै मारी ॥ ५ ॥ भै बिनु भगति न होई कबही भै भाइ भगति सवारी ॥ ६ ॥ माइआ मोहु सबदि जलाइआ गिआनि तति बीचारी ॥ ७ ॥ आपे आपि कराए करता आपे बखसि भंडारी ॥ ८ ॥ तिस किआ गुणा का अंतु न पाइआ हउ गावा सबदि वीचारी ॥ ९ ॥ हरि जीउ जपी हरि जीउ सालाही विचहु आपु निवारी ॥ १० ॥ नामु पदारथु गुर ते पाइआ अखुट सचे भंडारी ॥ ११ ॥ अपणिआ भगता नो आपे तुठा अपणी किरपा करि कलधारी ॥ १२ ॥ तिन साचे नाम की सदा भुख लागी गावनि सबदि वीचारी ॥ १३ ॥ जीउ पिंडु सभु किछु है तिस का आखणु बिखमु बीचारी ॥ १४ ॥ सबदि लगे सेई जन निसतरे भउजलु पारि उतारी ॥ १५ ॥

हम लोग मलिन हैं, कपटी हैं, अभिमानी हैं, केवल हरि-नाम से मिलकर ही हमारी कुटिलता दूर होती है ॥ १ ॥ हे सज्जनो, गुरु के शब्दों द्वारा नाम की आराधना से ही भवसागर से पार हुआ जाता है। परमात्मा का सच्चा नाम हृदय में बसा लेने से परमात्मा अपने आप जीवों

को सँवार लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पारस के छूने से लोहा तो सोना हो जाता है, किन्तु सन्त रूपी पारस के स्पर्श से परमात्मा की कृपा पाकर जीव सोना नहीं खुद पारस हो जाता है ॥ २ ॥ मनमुख लोग दिखावे के वेश बनाते हैं, अभिमान में पगे रहते हैं और जीवन की बाज़ी जुए में हार बैठते हैं ॥ ३ ॥ दूसरी ओर गुरमुख लोग सदा रात-दिन भक्ति करते और राम-नाम को हृदय में धारण करते हैं ॥ ४ ॥ वे प्रभु के रंग में रँगे होते हैं, सहजावस्था में आनन्द मनाते हैं और सहज ही अपने अहम्‌भाव को दूर कर देते हैं ॥ ५ ॥ हरि के भय के बिना भक्ति कभी भी नहीं हो सकती; भय-भाव से भक्ति-भाव सँवरता है ॥६॥ ज्ञान-तत्त्व को पाने से और गुरु के शब्दों पर विचार करने से माया-मोह नष्ट हो जाता है ॥ ७ ॥ परमात्मा अपने आप सब कुछ करता और स्वयं ही सबको बख़्शनेवाला है ॥ ८ ॥ उस प्रभु के गुणों का कोई अन्त नहीं, केवल गुरु के शब्द को विचार सकनेवाला जीव ही उसके गुण गा सकता है ॥ ९ ॥ यहाँ अहंकार को त्यागकर जीव को हरि-भजन करना और परमात्मा के गुणगान करने होते हैं ॥ १० ॥ हरि-नाम अखुट भण्डार है जिसकी उपलब्धि गुरु से होती है ॥ ११ ॥ परमात्मा अपने भक्तों पर सन्तुष्ट होता है और कृपापूर्वक शक्ति को ग्रहण करता है ॥ १२ ॥ उसे सदा सच्चे हरि-नाम की भूख रहती है और वह शब्द-ज्ञान को पाकर उसका गुणगान करता है ॥ १३ ॥ जीवात्मा और शरीर सब कुछ ईश्वर का दिया हुआ है, इसकी विचारपूर्वक व्याख्या कठिन है ॥ १४ ॥ जो जीव शब्द का सहारा लेते हैं, उनका कल्याण होता है और वे संसार-सागर से पार उतरते हैं ॥ १५ ॥

बिनु हरि साचे को पारि न पावै बूझै को वीचारी ॥ १६ ॥ जो धुरि लिखिआ सोई पाइआ मिलि हरि सबदि सवारी ॥ १७ ॥ काइआ कंचनु सबदे राती साचै नाइ पिआरी ॥ १८ ॥ काइआ अंम्रिति रही भरपूरे पाईऐ सबदि बीचारी ॥१९॥ जो प्रभ खोजहि सेई पावहि होरि फूटि मूए अहंकारी ॥२०॥ बादी बिनसहि सेवक सेवहि गुर कै हेति पिआरी ॥ २१ ॥ सो जोगी ततु गिआनु बीचारे हउमै त्रिसना मारी ॥ २२ ॥ सतिगुरु दाता तिनै पछाता जिसनो क्रिपा तुमारी ॥ २३ ॥ सतिगुरु न सेवहि माइआ लागे डूबि मूए अहंकारी ॥ २४ ॥ जिचरु अंदरि सासु तिचरु सेवा कीचै जाइ मिलीऐ राम मुरारी ॥ २५ ॥ अनदिनु जागत रहै दिनु राती अपने प्रिअ प्रीति पिआरी ॥ २६ ॥ तनु मनु वारी

वारि घुमाई अपने गुर विटहु बलिहारी ॥ २७ ॥ माइआ मोहु बिनसि जाइगा उबरे सबदि वीचारी ॥ २८ ॥ आपि जगाए सेई जागे गुर कै सबदि वीचारी ॥ २६ ॥ नानक सेई मूए जि नामु न चेतहि भगत जीवे वीचारी ॥ ३० ॥ ४ ॥ १३ ॥

परमात्मा के सहारे के बिना कोई कितनी भी बौद्धिक उपलब्धि कर ले, वह संसार से पार नहीं पा सकता ॥ १६ ॥ प्रारब्ध में जो कुछ लिखा होता है जीव को वही मिलता है, किन्तु वह हरि-नाम की शक्ति से उसे सँवार लेता है ॥ १७ ॥ प्रभु के शब्द में रँगी हुई काया सोने की तरह स्वस्थ और सुन्दर होती है ॥ १८ ॥ शब्द के विचार से जो परम-ज्ञान प्राप्त होता है, उससे शरीर अमृत से भर जाता है ॥ १९ ॥ जो प्रभु को खोजते हैं वे ही पाते हैं, अन्य सब तो अहंकार के कारण मार्ग में ही मिट जाते हैं ॥ २० ॥ विवादों में पड़नेवाले नष्ट हो जाते हैं, गुरु के सच्चे सेवक प्रेम-प्यार द्वारा उसे पा जाते हैं ॥ २१ ॥ गुरुमुख सच्चा योगी होता है, जो अहम्भाव और तृष्णा को मारकर तत्त्वज्ञान को पा लेता है ॥ २२ ॥ सच्चे गुरु की पहचान भी उसी को होती है, जिस पर परमात्मा की कृपा होती है ॥ २३ ॥ जो सत्गुरु की सेवा नहीं करते, माया के झंझटों में लीन रहते हैं, वे अहंकार में डूब मरते हैं ॥ २४ ॥ इसलिए जीव को चाहिए कि जब तक उसके भीतर साँस चलती है, वह गुरु की सेवा करे, इसी से वह परमात्मा से मिलाप कर सकता है ॥ २५ ॥ वह रात-दिन सदैव अपने प्रिय प्रभु की प्रीति में जाग्रत् रहता है ॥ २६ ॥ तन-मन उस पर न्योछावर करता है और नित्य अपने गुरु पर बलिहारी जाता है ॥ २७ ॥ उसका माया-मोह नष्ट हो जाएगा और जब वह शब्द द्वारा परमात्मा का विचार करेगा तो उसका उद्धार हो जाएगा ॥ २८ ॥ जिसे परमात्मा जागरण की शक्ति देता है वही गुरु का शब्द विचार कर जागृति को प्राप्त करता है ॥ २९ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि मनमुख हरि-नाम से विमुख होकर मरता है और भक्त प्रभु के नाम पर विचार कर अमर हो जाता है ॥ ३० ॥ ४ ॥ १३ ॥

॥ रामकली महला ३ ॥ नामु खजाना गुर ते पाइआ त्रिपति रहे आघाई ॥ १ ॥ संतहु गुरमुखि मुकति गति पाई । एकु नामु वसिआ घट अंतरि पूरे की वडिआई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे करता आपे भुगता देदा रिजकु सबाई ॥ २ ॥ जो किछु करणा सो करि रहिआ अवरु न करणा जाई ॥ ३ ॥ आपे साजे स्रिसटि उपाए सिरि सिरि धंधै लाई ॥ ४ ॥ तिसहि

सरेवहु ता सुखु पावहु सतिगुरि मेलि मिलाई ॥ ५ ॥ आपणा आपु आपि उपाए अलखु न लखणा जाई ॥ ६ ॥ आपे मारि जीवाले आपे तिसनो तिलु न तमाई ॥ ७ ॥ इकि दाते इकि मंगते कीते आपे भगति कराई ॥ ८ ॥ से वडभागी जिनी एको जाता सचे रहे समाई ॥ ९ ॥ आपि सरूपु सिआणा आपे कीमति कहणु न जाई ॥ १० ॥ आपे दुखु सुखु पाए अंतरि आपे भरमि भुलाई ॥ ११ ॥ वडा दाता गुरमुखि जाता निगुरी अंध फिरै लोकाई ॥ १२ ॥ जिनी चाखिआ तिना सादु आइआ सतिगुरि बूझ बुझाई ॥ १३ ॥ इकना नावहु आपि भुलाए इकना गुरमुखि देइ बुझाई ॥ १४ ॥ सदा सदा सालाहिहु संतहु तिस दी वडी वडिआई ॥ १५ ॥ तिसु बिनु अवरु न कोई राजा करि तपावसु बणत बणाई ॥ १६ ॥ निआउ तिसै का है सद साचा विरले हुकमु मनाई ॥ १७ ॥ तिसनो प्राणी सदा धिआवहु जिनि गुरमुखि बणत बणाई ॥ १८ ॥ सतिगुर भेटै सो जनु सीझै जिसु हिरदै नामु वसाई ॥ १९ ॥ सचा आपि सदा है साचा बाणी सबदि सुणाई ॥ २० ॥ नानक सुणि वेखि रहिआ विसमादु मेरा प्रभु रविआ स्रब थाई ॥२१॥५॥१४॥

हरि-नाम का भण्डार गुरु से पाया है, जिससे हमें पूर्णतृप्ति मिली है ॥ १ ॥ हे सज्जनो, गुरु के द्वारा ही मुक्तावस्था पायी जाती है। हरि-नाम हृदय में बसता है, यही पूरे गुरु की महिमा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा स्वयं करने योग्य है, स्वयं भोक्ता भी है और सबको रोजी देता है ॥ २ ॥ जो कुछ करना चाहिए वही वह करता है, किसी अन्य से कुछ नहीं किया जा सकता ॥ ३ ॥ वह रचनाकार है, सृष्टि को उत्पन्न करता है और बना-बनाकर सबको अपने-अपने कार्य में लगाता है ॥ ४ ॥ कोई जीव सच्चे सत्गुरु से भेंट कर जब उसी की उपासना करता है तो वह परमसुख को प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ परमात्मा स्वयंभू है, किसी का बनाया हुआ नहीं; वह रहस्यमय है, असूझ है ॥ ६ ॥ वह स्वयं सबको मृत्यु देनेवाला है, सबको जीवन भी वही देता है, उसे कोई लोभ भटका नहीं सकता ॥ ७ ॥ किसी को उसने दाता बनाया है, किसी को भिखारी और कुछ जीवों को उसने भक्ति प्रदान की है ॥ ८ ॥ वे लोग भाग्यशाली हैं, जिन्होंने उसे पहचान लिया है और जो उसी सत्य में समा गये हैं ॥ ९ ॥ वह स्वयं सुन्दर रूप वाला और सुयोग्य है, उसका मोल नहीं डाला जा सकता ॥ १० ॥ जीवों में दुःख-सुख पैदा करनेवाला

वही है, वही उनको भ्रम में डालता है ।। ११ ।। कोई गुरुमुख ही उस दातार प्रभु को पहचान पाता है, निगुरा व्यक्ति अन्धा है, यों ही भटकता फिरता है ।। १२ ।। जिन लोगों ने सतिगुरु से सच्चे परमात्मा का ज्ञान पा लिया है, वे ही उसका वास्तविक स्वाद जानते हैं ।। १३ ।। कुछ जीवों को वह स्वयं नाम से विमुख कर देता है और कुछ को गुरु द्वारा हरि-नाम की सूझ प्रदान करता है ।। १४ ।। हे सज्जनो, उसके बड़प्पन और महिमा का सदैव गान करो ।। १५ ।। उसके बिना और कोई संसार का शासक नहीं है, वही सबका न्याय करता है ।। १६ ।। उसका न्याय सदा सच्चा होता है, किन्तु वह किसी विरल जीव को ही अपने हुक्म में बाँधता है ।। १७ ।। इसलिए हे प्राणी, तुम सदा उसका ध्यान करो, जिसने गुरु के द्वारा अपना हुक्म मनवाने की विधि बनायी है ।। १८ ।। जो जीव सतिगुरु से मिलन प्राप्त कर लेते हैं, वे हृदय में हरि-नाम को बसाकर सफल हो जाते हैं ।। १९ ।। वह सदा सच्चा है, उसकी वाणी सच्ची है और उसका शब्द नित्य झंकृत होता है ।। २० ।। गुरु नानक को यह सब कुछ देख-सुनकर आश्चर्य होता है कि प्रभु सब जगह व्याप्त है, हर चीज में विद्यमान है ।। २१ ।। ५ ।। १४ ।।

रामकली महला ५ असटपदीआ

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। किनही कीआ परविरति पसारा । किनही कीआ पूजा बिसथारा । किनही निवल भुइअंगम साधे । मोहि दीन हरि हरि आराधे ।। १ ।। तेरा भरोसा पिआरे । आन न जाना वेसा ।। १ ।। रहाउ ।। किनही ग्रिहु तजि वणखंडि पाइआ । किनही मोनि अउधूतु सदाइआ । कोई कहतउ अनंनि भगउती । मोहि दीन हरि हरि ओट लीती ।। २ ।। किनही कहिआ हउ तीरथ वासी । कोई अंनु तजि भइआ उदासी । किनही भवनु सभ धरती करिआ । मोहि दीन हरि हरि दरि परिआ ।। ३ ।। किनही कहिआ मै कुलहि वडिआई । किनही कहिआ बाह बहु भाई । कोई कहै मै धनहि पसारा । मोहि दीन हरि हरि आधारा ।। ४ ।। किनही घूघर निरति कराई । किनहू वरत नेम माला पाई । किनही तिलकु गोपी चंदन लाइआ । मोहि दीन हरि हरि हरि धिआइआ ।। ५ ।। किनही सिध बहु चेटक लाए । किनही

भेख बहु थाट बनाए । किनही तंत मंत बहु खेवा । मोहि दीन हरि हरि हरि सेवा ॥ ६ ॥ कोई चतुरु कहावै पंडित । को खटु करम सहित सिउ मंडित । कोई करै आचार सुकरणी । मोहि दीन हरि हरि हरि सरणी ॥ ७ ॥ सगले करम धरम जुग सोधे । बिनु नावै इहु मनु न प्रबोधे । कहु नानक जउ साध संगु पाइआ । बूझी त्रिसना महा सीतलाइआ ॥ ८ ॥ १ ॥

कुछ लोग प्रवृत्त्यात्मक गतिविधियों में संलग्न रहते हैं, कुछ लोग पूजा-भाव से कर्माडम्बर करते हैं। कुछ योगी निउली कर्म और कुण्डलिनी को जाग्रत् करने के प्रयास करते हैं, किन्तु मैं तो केवल हरि-नाम की आराधना ही करता हूँ ॥ १ ॥ हे प्रियतम, मुझे केवल तुम्हारा ही भरोसा है, अन्य किसी भी वेश में मुझे विश्वास नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कुछ लोग गृहस्थी का त्याग कर वनों में जाकर साधना करते हैं। कुछ लोग मौनी साधु और अवधूत योगी कहलवाते हैं, कुछ लोग कहते हैं कि वे परमात्मा के अनन्य भक्त हैं, किन्तु मैं बेचारा तो केवल हरि की ओट लिये बैठा हूँ ॥२॥ कोई अपने आपको तीर्थवासी कहलाता है, कोई अन्न का त्याग कर विरक्त हुआ बैठा है। कोई सारी धरती का भ्रमण करता है, किन्तु मैंने तो सच्चे परमात्मा के द्वार पर ही ज्योति जला ली है ॥ ३ ॥ कोई अपने वंश की प्रतिष्ठा के कारण बड़ा बनता है, कोई अपने मददगारों के कारण बहुबली बनता है। कोई धन का प्रसार करते हुए अपने को ऊँचा समझता है, किन्तु मुझ दीन का तो एकमात्र आश्रय परमात्मा ही है ॥ ४ ॥ कुछ घुँघरू बाँधकर नाचते हैं, इस प्रकार प्रभु को सन्तुष्ट करना चाहते हैं; कुछ नियम, व्रत, उपवासादि के चक्र में जीते हैं। कुछ गोपीचन्दन का तिलक लगाकर अपना कल्याण हुआ समझते हैं, लेकिन मुझ दीन ने तो केवल हरि-हरि-नाम का ही ध्यान किया है ॥ ५ ॥ कुछ लोग सिद्धि-साधना करके अनेक चमत्कार दिखाते हैं, कुछ बहुवेशधारी बनकर अनेक आडम्बर रचते हैं। कुछ लोगों ने तन्त्र-मन्त्रादि भी चलाये हैं, किन्तु मैं तो हरि-नाम जपने और हरि-सेवा में रत रहने में ही कल्याण समझता हूँ ॥ ६ ॥ कोई पण्डित-चतुर कहलाता है, कुछ जीव शास्त्रों के बताये छः कर्मों में रत रहते हैं। कुछ लोग सत्कर्मों पर आचरण भी करते हैं, लेकिन मुझ दीन-हीन व्यक्ति ने तो केवल हरि की शरण ली है ॥ ७ ॥ मैंने हर युग के धर्मों-कर्मों को परखा है, किन्तु नाम के बिना किसी धर्म या कर्म से यह मन विवेकपूर्ण नहीं होता। नानक कहते हैं कि जो सत्संगति के सम्पर्क में आया उसकी तृष्णा-अग्नि बुझ गयी और वह सदा के लिए शान्तचित्त हो गया ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ इसु पानी ते जिनि तू घरिआ। माटी का ले देहुरा करिआ। उकति जोति लै सुरति परीखिआ। मात गरभ महि जिनि तू राखिआ ॥ १ ॥ राखनहारु सम्हारि जना। सगले छोडि बीचार मना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनि दीए तुधु बाप महतारी। जिनि दीए भ्रात पुत हारी। जिनि दीए तुधु बनिता अरु मीता। तिसु ठाकुर कउ रखि लेहु चीता ॥ २ ॥ जिनि दीआ तुधु पवनु अमोला। जिनि दीआ तुधु नीरु निरमोला। जिनि दीआ तुधु पावकु बलना। तिसु ठाकुर की रहु मन सरना ॥ ३ ॥ छतीह अंम्रित जिनि भोजन दीए। अंतरि थान ठहरावन कउ कीए। बसुधा दीओ बरतनि बलना। तिसु ठाकुर के चिति रखु चरना ॥ ४ ॥ पेखन कउ नेत्र सुनन कउ करना ॥ हसत कमावन बासन रसना। चरन चलन कउ सिरु कीनो मेरा। मन तिसु ठाकुर के पूजहु पैरा ॥ ५ ॥ अपवित्र पवित्रु जिनि तू करिआ। सगल जोनि महि तू सिरि धरिआ। अब तू सीझु भावै नही सीझै। कारजु सवरै मन प्रभु धिआईजै ॥६॥ ईहा ऊहा एकै ओही। जत कत देखीऐ तत तत तोही। तिसु सेवत मनि आलसु करै। जिसु विसरिऐ इक निमख न सरै ॥ ७ ॥ हम अपराधी निरगुनीआरे। ना किछु सेवा ना करमा रे। गुरु बोहिथु वडभागी मिलिआ। नानक दास संगि पाथर तरिआ ॥ ८ ॥ २ ॥

जिसने जीव को रक्त-बूंद से पैदा किया है उसी ने मिट्टी की देह भी जीव के रहने के लिए बनायी है। उसी ने तर्क की ज्योति और परीक्षा की सूझ देकर तुम्हें माता के गर्भ में रखा है ॥ १ ॥ इसलिए ऐ जीव, तू अपने रक्षक तथा बनानेवाले का स्मरण कर; मन के अन्य सब विचारों का तिरस्कार कर दे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस परमात्मा ने तुम्हें माता-पिता दिये हैं, जिसने तुम्हें प्रिय भाई और सखा दिये हैं, और जिसने तुम्हें पत्नी और मित्र दिये हैं; तुम उसी परमात्मा को अपने हृदय में धारण करो ॥ २ ॥ जिस परमात्मा ने तुम्हें अमूल्य वायु प्रदान की है, जिसने निर्मल जल दिया है, जिसने तुम्हें जलाने की शक्ति वाली पावक प्रदान की है; तुम उसी सर्वोच्च स्वामी की शरण लो ॥ ३ ॥ जिसने तुम्हें छत्तीस प्रकार के अमृत-समान भोजन दिये हैं; इस भोजन को पेट में रखने के लिए स्थान बनाया है। जिस प्रभ ने तुम्हें धरती दी है और बर्तन-बेलन आदि

सामान दिया है, तुम्हें उसी परमात्मा के चरणों को हृदय में धारण करना चाहिए ॥ ४ ॥ जिसने तुम्हें देखने को नेत्र और सुनने को कान दिये हैं, कर्म करने को हाथ, नाक और जिह्वा दी है। गति के लिए चरण दिये हैं और मेरु के समान शीर्ष दिया है, हे मन, तुम उसी स्वामी के चरणों का पूजन करो ॥ ५ ॥ जिस परमात्मा ने तुम सरीखे अपवित्र को पवित्र कर दिया, जिसने चौरासी लाख योनियों में से तुम्हें शिरोमणि बनाया; मनुष्य-जन्म लेकर अब तुम इसे सफल करो या नहीं, ये तुम्हारे वश में है। संसार के सब काम केवल मन में प्रभु का ध्यान करने से ही सँवर जाते हैं ॥ ६ ॥ यहाँ इहलोक में और वहाँ परलोक में वह परमात्मा ही व्याप्त है। जिधर-किधर भी देखते हैं वहाँ वह प्रभु ही दीख पड़ता है। उसकी सेवा करने में जो तुम्हारे मन में आलस्य आता है, (वह अनुचित है क्योंकि) उसको विस्मृत करके एक क्षण के लिए भी हमारा गुज़र नहीं ॥ ७ ॥ हम अपराधी हैं, गुणहीन हैं; न हमने प्रभु का ध्यान किया है और न ही हमारे कर्म उत्तम हैं। गुरु रूपी जहाज़ तो भाग्य से ही प्राप्त होता है और गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के साथ पत्थर-समान निकृष्ट जीव भी तर जाते हैं ॥ ८ ॥ २ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ काहू बिहावै रंग रस रूप। काहू बिहावै माइ बाप पूत। काहू बिहावै राज मिलख वापारा। संत बिहावै हरि नाम अधारा ॥ १ ॥ रचना साचु बनी। सभ का एकु धनी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काहू बिहावै बेद अरु बादि। काहू बिहावै रसना सादि। काहू बिहावै लपटि संगि नारी। संत रचे केवल नाम मुरारी ॥ २ ॥ काहू बिहावै खेलत जूआ। काहू बिहावै अमली हूआ। काहू बिहावै परदरब चुोराए। हरि जन बिहावै नाम धिआए ॥ ३ ॥ काहू बिहावै जोग तप पूजा। काहू रोग सोग भरमीजा। काहू पवन धार जात बिहाए। संत बिहावै कीरतनु गाए ॥ ४ ॥ काहू बिहावै दिनु रैनि चालत। काहू बिहावै सो पिड़ु मालत। काहू बिहावै बाल पड़ावत। संत बिहावै हरि जसु गावत ॥ ५ ॥ काहू बिहावै नट नाटिक निरते। काहू बिहावै जीआ इह हिरते। काहू बिहावै राज महि डरते। संत बिहावै हरि जसु करते ॥ ६ ॥ काहू बिहावै मता मसूरति। काहू बिहावै सेवा जरूरति। काहू बिहावै सोधत जीवत। संत बिहावै हरि रसु पीवत ॥ ७ ॥ जितु को लाइआ तित ही लगाना। ना को

मूड़ु नही को सिआना। करि किरपा जिसु देवै नाउ। नानक ता कै बलि बलि जाउ ॥ ८ ॥ ३ ॥

किसी की ज़िन्दगी मौज-मज़े और रंग-रूप में गुज़रती है, कोई माँ-बाप-पुत्रादि के साथ सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करता है। किसी का समय शासन और सम्पत्ति के व्यापार में गुज़रता है, किन्तु सन्तों का जीवन हरि-नाम के आश्रय से ही बीतता है ॥ १ ॥ सृष्टि की यह रचना सत्यब्रह्म ने की है और वही एक सबका स्वामी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कुछ जीव वेदों-शास्त्रों को पढ़ने और वाद-विवाद करने में समय काटते हैं, कुछ लोगों की ज़िन्दगी जिह्वा के स्वाद में बीत जाती है। कुछ विलासी जीव नारी-संयोग में ही जीते हैं, किन्तु सन्तजन प्रभु का नाम लेकर ही जीवन जीते हैं ॥ २ ॥ कुछ लोग जुआ खेलकर ज़िन्दगी बिताते हैं, कुछ लोग मादक द्रव्यों के सेवन में ज़िन्दगी काटते हैं; कुछ दूसरों का धन चुरा लेने में ही जीवन की सफलता मानते हैं, किन्तु हरिजन परमात्मा का नाम जपने में ही सुख पाते हैं ॥ ३ ॥ कोई योग, तप और पूजा में लीन है और कोई रोग, शोक और भ्रमों में फँसा है। कई लोग योगासन द्वारा प्राणायाम करते हुए ज़िन्दगी बिताते हैं, किन्तु सन्तजन परमात्मा का कीर्तन करते हुए ज़िन्दगी काटते हैं ॥ ४ ॥ कुछ लोग रात-दिन यात्रा करते हुए वक़्त काटते हैं और कुछ लोग रणांगण में डटकर ज़िन्दगी काटते हैं। कुछ बच्चों को शिक्षा देकर समय बिताते हैं, किन्तु सन्तजन हरि का यशोगान करते हुए जीवन बिता देते हैं ॥ ५ ॥ कुछ लोग नट की तरह नाट्य-लीला में रत रहते हुए समय बिताते हैं और कुछ लोग जीवों को नष्ट करने में ज़िन्दगी व्यतीत करते हैं। कुछ लोग राज-भक्ति में व खौफ़ में समय काटते हैं, किन्तु सन्तजन हरि का यशगान करते हुए समय व्यतीत करते हैं ॥ ६ ॥ कुछ लोग ऐसे भी हैं जो दूसरों को परामर्श देते हुए ज़िन्दगी काटते हैं और कुछ दूसरों की आवश्यकताओं के कारण उनके सहायक होते हैं। कुछ लोग अपने जीवन को संशोधित करते हुए जीवन व्यतीत करते हैं, किन्तु सन्तों का जीवन हरि के अमृत-रस का पान करते बीतता है ॥ ७ ॥ जिधर वह परमात्मा लगाता है उधर ही हमें लगना होगा। इसमें मूर्ख या बुद्धिमान की कोई उपलब्धि नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि कृपापूर्वक वह जिसे नाम-दान देता है, हम उसके ऊपर बार-बार क़ुर्बान हैं ॥ ८ ॥ ३ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ दावा अगनि रहे हरि बूट। मात गरभ संकट ते छूट। जा का नामु सिमरत भउ जाइ। तैसे संत जना राखै हरिराइ ॥ १ ॥ ऐसे राखनहार दइआल।

जत कत देखउ तुम प्रतिपाल ।। १ ।। रहाउ ।। जलु पीवत जिउ तिखा मिटंत । धन बिगसै ग्रिहि आवत कंत । लोभी का धनु प्राण अधारु । तिउ हरि जन हरि हरि नाम पिआरु ।। २ ।। किरसानी जिउ राखै रखवाला । मात पिता दइआ जिउ बाला । प्रीतमु देखि प्रीतमु मिलि जाइ । तिउ हरि जन राखै कंठि लाइ ।। ३ ।। जिउ अंधुले पेखत होइ अनंद । गूंगा बकत गावै बहु छंद । पिंगुल परबत परते पारि । हरि कै नामि सगल उधारि ।। ४ ।। जिउ पावक संगि सीत को नास । ऐसे प्राछत संत संगि बिनास । जिउ साबुनि कापर ऊजल होत । नाम जपत सभु भ्रमु भउ खोत ।। ५ ।। जिउ चकवी सूरज की आस । जिउ चात्रिक बूंद की पिआस । जिउ कुरंक नाद करन समाने । तिउ हरि नाम हरि जन मनहि सुखाने ।। ६ ।। तुमरी क्रिपा ते लागी प्रीति । दइआल भए ता आए चीति । दइआधारी तिनि धारणहार । बंधन ते होई छुटकार ।। ७ ।। सभि थान देखे नैण अलोइ । तिसु बिनु दूजा अवरु न कोइ । भ्रम भै छूटे गुरपरसाद । नानक पेखिओ सभु बिसमाद ।। ८ ।। ४ ।।

जैसे दावाग्नि में कई छोटे-छोटे पौधे जलने से बच जाते हैं, जैसे माता के गर्भ में संकट सहनेवाला बच्चा अन्ततः बचकर बाहर आ जाता है; जिसका नाम स्मरण करने से भय दूर हो जाता, वही परमात्मा सदा भक्तजनों की रक्षा करता है ।। १ ।। वह परमात्मा दयालु और सबका रक्षक है, इधर-उधर कहीं भी वह तुम्हारा पोषण कर रहा है ।। १ ।। रहाउ ।। जिस प्रकार से जल पीने से प्यास दूर होती है, जैसे पति के घर में आ जाने से पत्नी प्रसन्न होती है; जिस प्रकार लोभी का धन उसे प्राणों से भी प्रिय होता है, वैसे ही परमात्मा का नाम सन्तजनों को प्रिय होता है ।। २ ।। खेतों का रक्षक जैसे खेती की रक्षा करता है, माता-पिता जैसे बच्चे पर दया करते हैं; स्त्री प्रियतम को देखकर उसी में विलीन हो जाती है, वैसे ही परमात्मा हमेशा प्रिय भक्तों को गले से लगाकर रखता है ।। ३ ।। जिस प्रकार अन्धे को देखने की शक्ति मिल जाने से आनन्द होता है, गूँगे को बोलने के सामर्थ्य से उल्लास का गीत गाने की इच्छा होती है; जैसे पंगुले को पर्वत लाँघ जाने की ख़ुशी होती है वैसे ही हरि के नाम में सभी ख़ुशियाँ निहित हैं, सबका उद्धार उसी में है ।। ४ ।। जिस प्रकार से अग्नि के साथ शीतलता नष्ट हो जाती है

वैसे ही सन्तों की संगति में पाप नष्ट हो जाते हैं। ज्यों साबुन लगाने से कपड़ा निर्मल होता है, त्यों नाम जपने से सब प्रकार के भ्रमों का नाश हो जाता है ॥ ५ ॥ जैसे चकवी को सूर्य की आशा होती है, जैसे चातक को स्वाति-बूँद की प्यास होती है, जैसे मृग को संगीत का आकर्षण होता है, वैसे ही सन्तों को हरि-नाम जपने से परमसुख मिलता है ॥ ६ ॥ तुम्हारी कृपा से ही जीव तुमसे प्रीति करता है, तुम्हारी दया से ही वह तुम्हें हृदय में धारण करता है, इसलिए हे दयालु, जीव के हृदय में घर करके तुम उसे बन्धनों से मुक्त करो ॥ ७ ॥ मैंने आँखें खोलकर सब जगहों का निरीक्षण किया है, उस प्रभु के बिना और दूसरा कोई नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु की कृपा से ही जीव के भ्रम और भय छूटते हैं और वह परमात्मा के अलौकिक रूप का चमत्कार देखता है ॥ ८ ॥ ४ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ जीअ जंत सभि पेखीअहि प्रभ सगल तुमारी धारना ॥ १ ॥ इहु मनु हरि कै नामि उधारना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खिन महि थापि उथापे कुदरति सभि करते के कारना ॥ २ ॥ कामु क्रोधु लोभु झूठु निंदा साधू संगि बिदारना ॥ ३ ॥ नामु जपत मनु निरमल होवै सूखे सूखि गुदारना ॥ ४ ॥ भगत सरणि जो आवै प्राणी तिसु ईहा ऊहा न हारना ॥ ५ ॥ सूख दूख इसु मन की बिरथा तुमही आगै सारना ॥ ६ ॥ तू दाता सभना जीआ का आपन कीआ पालना ॥ ७ ॥ अनिक बार कोटि जन ऊपरि नानकु वंञै वारना ॥ ८ ॥ ५ ॥

हे प्रभु, सभी जीव-जन्तु तुम्हारे ही द्वारा रचे हुए हैं ॥ १ ॥ मन में केवल हरि-नाम को स्थिर करने से ही उद्धार सम्भव हो सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह रचनाकार क्षण में ही बनाता और मिटाता है, समूची प्रकृति उसी की रचना है ॥ २ ॥ काम, क्रोध, लोभ, झूठ और निन्दा ये सब विकार साधु-संगति में दूर हो जाते हैं ॥ ३ ॥ नाम जपने से मन निर्मल होता है और सारी आयु सुख में व्यतीत होती है ॥ ४ ॥ जो प्राणी गुरुमुख की शरण लेता है, वह इहलोक या परलोक में कहीं भी पराजित नहीं होता ॥ ५ ॥ सुख-दुःख सब मन की अवस्थाएँ हैं, जो परमात्मा के सम्मुख पेश करनी हैं ॥ ६ ॥ वह सभी जीवों का पोषक है और अपने विरद के अनुसार सबकी रक्षा करता है ॥ ७ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि मैं ऐसे हरिजनों पर (जो प्रभु को समर्पित होते हैं) सदैव क़ुर्बान हूँ ॥ ८ ॥ ५ ॥

रामकली महला ५ असटपदी

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। दरसनु भेटत पाप सभि नासहि हरि सिउ देइ मिलाई ।। १ ।। मेरा गुरु परमेसरु सुखदाई । पारब्रहम का नामु द्रिड़ाए अंते होइ सखाई ।। १ ।। रहाउ ।। सगल दूख का डेरा भंना संत धूरि मुखि लाई ।। २ ।। पतित पुनीत कीए खिन भीतरि अगिआनु अंधेरु वंञाई ।। ३ ।। करण कारण समरथु सुआमी नानक तिसु सरणाई ।। ४ ।। बंधन तोड़ि चरन कमल द्रिड़ाए एक सबदि लिव लाई ।।५।। अंध कूप बिखिआ ते काढिओ साच सबदि बणि आई ।। ६ ।। जनम मरण का सहसा चूका बाहुड़ि कतहु न धाई ।। ७ ।। नाम रसाइणि इहु मनु राता अंम्रितु पी त्रिपताई ।। ८ ।। संत संगि मिलि कीरतनु गाइआ निहचल वसिआ जाई ।। ९ ।। पूरै गुरि पूरी मति दीनी हरि बिनु आन न भाई ।। १० ।। नामु निधानु पाइआ वडभागी नानक नरकि न जाई ।। ११ ।। घाल सिआणप उकति न मेरी पूरै गुरू कमाई ।। १२ ।। जप तप संजम सुचि है सोई आपे करे कराई ।। १३ ।। पुत्र कलत्र महा बिखिआ महि गुरि साचै लाइ तराई ।। १४ ।। अपणे जीअ तै आपि सम्हाले आपि लीए लड़ि लाई ।। १५ ।। साच धरम का बेड़ा बांधिआ भवजलु पारि पवाई ।। १६ ।। बेसुमार बेअंत सुआमी नानक बलि बलि जाई ।। १७ ।। अकाल मूरति अजूनी संभउ कलि अंधकार दीपाई ।। १८ ।। अंतरजामी जीअन का दाता देखत त्रिपति अघाई ।। १९ ।। एकंकारु निरंजनु निरभउ सभ जलि थलि रहिआ समाई ।। २० ।। भगति दानु भगता कउ दीना हरि नानक जाचै माई ।। २१ ।। १ ।। ६ ।।

गुरु के दर्शन और मिलन से सब पाप नष्ट हो जाते हैं और वह जीव को परमात्मा से मिला देता है ।। १ ।। मेरा गुरु और परमेश्वर सुख देनेवाला है; ब्रह्म का नाम जपाता है और अन्तकाल में हमेशा सहायी होता है ।। १ ।। रहाउ ।। सतिगुरु की ओर उन्मुख होने से सब प्रकार के दुःखों का नाश हो जाता है ।। २ ।। क्षण भर में ही वह पतितों को पवित्र कर देता है और अज्ञान का अन्धकार दूर करता है ।। ३ ।। गुरु करण-कारण है, समर्थ है, इसलिए गुरु नानक उसकी शरण लेने को कहते

हैं ॥ ४ ॥ गुरु संसार के बन्धनों को तोड़कर परमात्मा के चरण-कमल में लग्न लगवाता है और शब्द में चित्त को स्थिर करता है ॥ ५ ॥ माया के अन्धे कुएँ में से निकालकर सच्चे हरि-नाम के साथ लगाता है ॥ ६ ॥ उसके दर्शनों से जन्म-मरण का संशय दूर होता है, पुनः किसी प्रकार की भटकन नहीं रहती ॥ ७ ॥ जीव का मन राम-रसायन में भीज जाता है और वह नाम-अमृत का पानकर तृप्तिलाभ करता है ॥ ८ ॥ यदि जीव सन्तों की संगति में मिलकर प्रभु का कीर्तिगान करे तो वह अपने लक्ष्य पर पहुँच जाता है ॥ ९ ॥ सच्चे गुरु ने हमें योग्य सूझ दी है कि परमात्मा के बिना अन्य कोई हमारा सहायक नहीं हो सकता ॥१०॥ गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव सौभाग्यवश हरि-नाम के ख़ज़ाने को पा लेता है वह कभी नरक में नहीं जाता ॥ ११ ॥ जीव का परिश्रम या सूझ-बूझ यहाँ कोई लाभ नहीं पहुँचाती, केवल गुरु-कृपा ही से सब कुछ सम्भव हो पाता है ॥ १२ ॥ जप-तप-संयम आदि निर्मल कर्म तो हैं लेकिन होता वही है जो गुरु स्वयं करवाता है ॥ १३ ॥ पुत्र, स्त्री मायावी नशे के समान हैं, केवल सच्चा गुरु ही जीव को मंज़िल पर पहुँचा सकता है ॥ १४ ॥ वह अपने दीक्षित जीवों को स्वयं सँभालता है और अपनी ओट में बनाए रखता है ॥ १५ ॥ गुरु ने सत्य और धर्म की नाव बनायी है, जिसमें चढ़ाकर वह अपने जीवों को संसार-सागर से पार लगाता है ॥ १६ ॥ वह अगम्य है, अनन्त है, उसका सार नहीं जाना जा सकता, नानक पुनःपुनः उस पर न्योछावर है ॥ १७ ॥ वह अकाल-रूप है, अयोनि है और स्वयंभू है; कलियुग में उसने अन्धकार को प्रकाश में बदल दिया है ॥ १८ ॥ वह अन्तर्यामी परमात्मा सब जीवों का दाता है, उसके दर्शन मात्र से तृप्ति हो जाती है ॥ १९ ॥ वह स्वयं अद्वैत है, मायातीत है, और निर्भय होकर जल-थल में सब जगह व्याप्त है ॥ २० ॥ गुरु नानक कहते हैं कि हे भाई, वह सबको भक्ति-दान देता है, अतः उसी से याचना करो ॥ २१ ॥ १ ॥ ६ ॥

॥ रामकली महला ५ सलोकु ॥ सिखहु सबदु पिआरिहो जनम मरन की टेक । मुख ऊजलु सदा सुखी नानक सिमरत एक ॥ १ ॥ मनु तनु राता राम पिआरे हरि प्रेम भगति बणि आई संतहु ॥ १ ॥ सतिगुरि खेप निबाही संतहु । हरिनामु लाहा दास कउ दीआ सगली त्रिसन उलाही संतहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खोजत खोजत लालु इकु पाइआ हरि कीमति कहणु न जाई संतहु ॥ २ ॥ चरन कमल सिउ लागो धिआना साचै दरसि समाई संतहु ॥ ३ ॥ गुण गावत गावत

भए निहाला हरि सिमरत व्रिपति अघाई संतहु ॥ ४ ॥
आतमरामु रविआ सभ अंतरि कत आवै कत जाई संतहु ॥ ५ ॥
आदि जुगादी हैभी होसी सभ जीआ का सुखदाई संतहु ॥ ६ ॥
आपि बेअंतु अंतु नही पाईऐ पूरि रहिआ सभ ठाई संतहु ॥ ७ ॥
मीत साजन मालु जोबनु सुत हरि नानक बापु मेरी माई संतहु ॥ ८ ॥ २ ॥ ७ ॥

हे मेरे गुरु के प्यारे शिष्यो, तुम्हें गुरु के शब्द से प्यार है, यही तुम्हारे जन्म-मरण का सहारा है। तुम सदा प्रभु का स्मरण करते हो इसी से तुम उज्ज्वल-मुख हो ॥ १ ॥ हे सन्तो, तुम्हारा तन-मन हरि के प्रेम और भक्ति में लिप्त है ॥ १ ॥ सतिगुरु ने तुम्हारा सौदा बना दिया है अर्थात् जन्म सफल हो गया है। तुम्हें दास जानकर हे सन्तो, हरि-नाम का लाभ दिया है और तुम्हारी समस्त तृष्णा दूर कर दी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे सन्तो, खोजते-खोजते तुम्हें एक अत्यन्त मूल्यवान रत्न (नाम-रत्न) प्राप्त हुआ है, इसका सही मूल्यांकन कोई नहीं कर सकता ॥ २ ॥ परमात्मा के चरण-कमल में ध्यान लगा है और परमात्मा के सत्यरूप के दर्शन तुम्हें हुए हैं ॥ ३ ॥ प्रभु के गुण गा-गाकर तुम निहाल हो रहे हो, हरि-नाम का सिमरन करने से तुम्हें परमतृप्ति मिली है ॥ ४ ॥ परमात्मा सर्वव्यापक है, तुम्हें भीतर से ही प्राप्त हो गया है; तुम्हें अब कहीं आना-जाना नहीं है ॥ ५ ॥ हे सन्तो, युग-युग से उस प्रभु का अस्तित्व है, और रहेगा भी ! वह सब जीवों के लिए सुखदायी है ॥ ६ ॥ वह प्रभु अनन्त है, कोई उसका अन्त नहीं पा सकता, वह स्वयं सब जगह समाया हुआ है ॥ ७ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि वह परमात्मा ही मेरा मित्र, साजन, माता, पिता और धन-दौलत सब कुछ है ॥ ८ ॥ २ ॥ ७ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ मन बच क्रमि राम नामु चितारी। घूमन घेरि महा अति बिखड़ी गुरमुखि नानक पारि उतारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंतरि सूखा बाहरि सूखा हरि जपि मलन भए दुसटारी ॥ १ ॥ जिस ते लागे तिनहि निवारे प्रभ जीउ अपणी किरपा धारी ॥ २ ॥ उधरे संत परे हरि सरनी पचि बिनसे महा अहंकारी ॥ ३ ॥ साधू संगति इहु फलु पाइआ इकु केवल नामु अधारी ॥ ४ ॥ न कोई सूरु न कोई हीणा सभ प्रगटी जोति तुम्हारी ॥ ५ ॥ तुम्ह समरथ अकथ अगोचर रविआ एकु मुरारी ॥ ६ ॥ कीमति कउणु करे तेरी

करते प्रभ अंतु न पारावारी ॥ ७ ॥ नाम दानु नानक वडिआई तेरिआ संत जना रेणारी ॥ ८ ॥ ३ ॥ ८ ॥ २२ ॥

मैं मन, वचन और कर्म से हरि-नाम का स्मरण करता हूँ, मेरी जीवन-नौका भँवर में पड़ी थी, जहाँ गुरु की कृपा से अब वह पार उतरी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मुझे बाहर-भीतर सब प्रकार से सुख प्राप्त हुआ और हरि-नाम जपने से काम-क्रोधादि दुष्ट दलित हुए ॥ १ ॥ जिस परमात्मा से वे दुःख लगे थे, अब उसी की कृपा से वे दूर हो गये हैं ॥ २ ॥ जो लोग सन्तों की संगति में हरि की शरण में आये, उनका उद्धार हुआ, किन्तु अहंकार के वश में जीनेवाले अन्ततः नष्ट हो गये ॥ ३ ॥ साधुओं की संगति में मुख्यतः मुझे यही फल मिला कि मैं केवल नाम के आश्रय ही जीने लगा ॥ ४ ॥ संसार में सब ओर तुम्हारी ही ज्योति प्रकट है, इसलिए न तो कोई बलवान है और न कोई कमज़ोर ॥ ५ ॥ तुम समर्थ हो, अकथनीय और हमारी पहुँच से बाहर हो तथा सर्वव्यापक हो ॥ ६ ॥ प्रभु अनन्त है, अपार है, कोई उसका सही मूल्यांकन नहीं कर सकता ॥ ७ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम पाकर जीव तुम्हारी ही स्तुति करते हैं और तुम्हारे सन्तजनों की चरण-धूलि हो जाते हैं ॥ ८ ॥ ३ ॥ ८ ॥ २२ ॥

रामकली महला ३ अनंदु

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ अनंदु भइआ मेरी माए सतिगुरू मै पाइआ । सतिगुरु त पाइआ सहज सेती मनि वजीआ वाधाईआ । राग रतन परवार परीआ सबद गावण आईआ । सबदो त गावहु हरी केरा मनि जिनी वसाइआ । कहै नानकु अनंदु होआ सतिगुरू मै पाइआ ॥ १ ॥ ए मन मेरिआ तू सदा रहु हरि नाले । हरि नालि रहु तू मंन मेरे दूख सभि विसारणा । अंगीकारु ओहु करे तेरा कारज सभि सवारणा । सभना गला समरथु सुआमी सो किउ मनहु विसारे । कहै नानकु मंन मेरे सदा रहु हरि नाले ॥ २ ॥ साचे साहिबा किआ नाही घरि तेरै । घरि त तेरै सभु किछु है जिसु देहि सु पावए । सदा सिफति सलाह तेरी नामु मनि वसावए । नामु जिन कै मनि वसिआ वाजे सबद घनेरे । कहै नानकु सचे साहिब किआ नाही घरि तेरै ॥ ३ ॥ साचा नामु मेरा आधारो । साचु नामु अधारु मेरा जिनि भुखा सभि गवाईआ ।

करि सांति सुख मनि आइ वसिआ जिनि इछा सभि पुजाईआ। सदा कुरबाणु कीता गुरू विटहु जिस दीआ एहि वडिआईआ। कहै नानकु सुणहु संतहु सबदि धरहु पिआरो। साचा नामु मेरा आधारो ॥ ४ ॥ वाजे पंच सबद तितु घरि सभागै। घरि सभागै सबद वाजे कला जितु घरि धारीआ। पंच दूत तुधु वसि कीते कालु कंटकु मारिआ। धुरि करमि पाइआ तुधु जिन कउ सि नामि हरि कै लागे। कहै नानकु तह सुखु होआ तितु घरि अनहद वाजे ॥ ५ ॥ साची लिवै बिनु देह निमाणी। देह निमाणी लिवै बाझहु किआ करे वेचारीआ। तुधु बाझु समरथ कोइ नाही क्रिपा करि बनवारीआ। एस नउ होरु थाउ नाही सबदि लागि सवारीआ। कहै नानकु लिवै बाझहु किआ करे वेचारीआ ॥ ६ ॥ आनंदु आनंदु सभु को कहै आनंदु गुरू ते जाणिआ। जाणिआ आनंदु सदा गुर ते क्रिपा करे पिआरिआ। करि किरपा किलविख कटे गिआन अंजनु सारिआ। अंदरहु जिन का मोहु तुटा तिन का सबदु सचै सवारिआ। कहै नानकु एहु अनंदु है आनंदु गुर ते जाणिआ ॥ ७ ॥ बाबा जिसु तू देहि सोई जनु पावै। पावै त सो जनु देहि जिसनो होरि किआ करहि वेचारिआ। इकि भरमि भूले फिरहि दहदिसि इकि नामि लागि सवारिआ। गुरपरसादी मनु भइआ निरमलु जिना भाणा भावए। कहै नानकु जिसु देहि पिआरे सोई जनु पावए ॥ ८ ॥

हे भाई, मुझे सच्चा सतिगुरु प्राप्त हुआ है, इसलिए मैं आनन्द-मग्न हूँ। सहजभाव से प्रेम में रत रहते हुए मैंने सतिगुरु को प्राप्त किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि मेरे मन में खुशियों के खज़ाने खुल गये हैं। रत्नों-जैसे अमूल्य राग-रागनियाँ तथा उन्हें गानेवाली परियाँ खुशी के गीत गाने मेरे मन में आयी हैं, जिससे मन में परमात्मा का आभास होने लगा है। जिन्होंने मन में हरि को बसा लिया है, वह सब आकर हमारे संग प्रभु-प्रशस्ति के गीत गाएँ। गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु की प्राप्ति मेरे लिए परमानन्द का कारण बनी है। (आनन्द की यह वाणी गुरु अमरदासजी ने अपने पौत्र आनन्द के जन्म पर सन् १५५४ में लिखी थी। आम सांसारिक खुशियों के समय संगीत और गाना-बजाना होता है। इस वाणी में गुरुजी ने आध्यात्मिक उपलब्धियों की खुशी को मानवीय

अनुभवों के बीच आयी ख़ुशियों से उपमा दी है। सारी चर्चा आलंकारिक है। परमात्मा से मिलन एक अनिर्वचनीय आनन्द का कारण है और यह सुख गुरुवाणी से प्राप्त है। इन्हीं तथ्यों को आनन्द की इस वाणी में गुरुजी ने अपने ढंग से प्रस्तुत किया है।)॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, तू सदा हरि से प्रीत लगाए रख, क्योंकि उसके संग प्रीत लगाने से वह तेरे सब दुःखों को भुला देगा। वह सब प्रकार से तेरी सहायता करता है और तेरे कार्यों को सँवारता है। वह मालिक सब प्रकार से समर्थ है, तू उसे क्यों मन से विसारता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मेरे मन, तू सदा हरि के साथ बना रह ॥ २ ॥ हे मेरे सच्चे स्वामी, तुम्हारे घर क्या नहीं है ? तुम्हारे घर तो सब कुछ है। किन्तु जिसे तुम देते हो वही पा सकता है। जो जीव सदा तुम्हारी कीर्तिगान करता है और मन में तुम्हारे नाम को बसाता है, उनके मन में नाम के बसने के साथ-साथ अनेक आध्यात्मिक नाद बजने लगते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि मेरे सच्चे मालिक हमारे घर सब कुछ है, जिसे चाहो उसे दो ॥ ३ ॥ प्रभु का सच्चा नाम ही मेरा सहारा है। यह सच्चा हरि-नाम ही मेरा ऐसा सहारा है, जिसने मेरी सब तृष्णाओं को दूर कर दिया हैं। इसके मन में आने से मुझे शान्ति और सुख प्राप्त हुआ है और मेरी सब आकांक्षाएँ पूर्ण हो गयी हैं। मैं अपने गुरु पर से सदा क़ुर्बान जाता हूँ, जिसके कारण यह सब प्रतिष्ठा मुझे मिली है। गुरु नानक कहते हैं कि हे सन्तो, गुरु के शब्द से प्यार करो और सच्चे प्रभु के नाम का सहारा लो ॥ ४ ॥ हे प्रभु, मेरे मन में सौभाग्यपूर्वक पाँचों शब्दों का संगीत जाग उठा है। जहाँ तुमने अपनी कृपा प्रदान की है, वहीं मन भाग्यशाली ख़ुशियों से भर गया है। तुमने काम-क्रोधादि पाँचों दूतों को वश में कर लिया है और काल का काँटा दूर किया है। तुम्हारे कारण जिनके भाग्य में हरि-नाम शुरू से ही डाल दिया गया है, हे हरि, वे तुम्हारे नाम का नित्य गान करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिसके हृदय में अमृत-वाणी की ध्वनि जाग्रत् हुई, उसे परमसुख की प्राप्ति हुई है ॥ ५ ॥ परमात्मा के साथ सच्ची लग्न के बिना यह शरीर व्यर्थ है। लग्न के बिना बेचारी देह किस काम की है। तुम्हारे बिना, हे वाहि-गुरु, कौन समर्थ है, जो हम पर कृपा करे। हमारे शरीर को और कोई सहारा ही नहीं, केवल शब्द की लय में ही उसे सँवारा जा सकता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु की लग्न के बिना बेचारी देह व्यर्थ है ॥ ६ ॥ आनन्द की बातें तो सब करते हैं, किन्तु वास्तविक आनन्द की जानकारी गुरु से ही प्राप्त होती है। गुरु जब अपने प्रिय पात्रों पर कृपा करता है, तो आध्यात्मिक आनन्द की उपलब्धि होती है। गुरु कृपा करके हमारे पापों का नाश कर देता है और हमारे ज्ञान-नेत्रों पर सूझ का अंजन लगाता है; जिससे जीव मोह-माया से अलग हो जाता है और उसे जीवन की

सही चेतना प्राप्त होती है। गुरु नानक कहते हैं कि यही दशा आनन्द की दशा है और इसकी प्राप्ति गुरु के माध्यम से ही होती है ॥ ७ ॥ हे परमात्मा, जिसे तुम देते हो वही जीव प्राप्त कर सकता है। प्राप्ति तुम्हारी इच्छा पर है; जिसे भी देते हो उसी को मिलती है। दूसरा कोई क्या कर सकता है। कुछ जीव ऐसे हैं, जो भ्रम में पड़े चतुर्दिक् भटकते रहते हैं और कुछ जीव ऐसे भी हैं, जो हरि-नाम के रस में पगे अपने जीवन को सँवार लेते हैं। जिन जीवों को परमात्मा की इच्छा शिरोधार्य होती है, वे गुरु-कृपा से निर्मल-चित्त हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा जिसे देता है वही जीव पा सकता है ॥ ८ ॥

आवहु संत पिआरिहो अकथ की करह कहाणी। करह कहाणी अकथ केरी कितु दुआरै पाईऐ। तनु मनु धनु सभु सउपि गुर कउ हुकमि मंनिऐ पाईऐ। हुकमु मंनिहु गुरू केरा गावहु सची बाणी। कहै नानकु सुणहु संतहु कथिहु अकथ कहाणी ॥ ९ ॥ ए मन चंचला चतुराई किनै न पाइआ। चतुराई न पाइआ किनै तू सुणि मंन मेरिआ। एह माइआ मोहणी जिनि एतु भरमि भुलाइआ। माइआ त मोहणी तिनै कीती जिनि ठगउली पाईआ। कुरबाणु कीता तिसै विटहु जिनि मोहु मीठा लाइआ। कहै नानकु मन चंचल चतुराई किनै न पाइआ ॥ १० ॥ ए मन पिआरिआ तू सदा सचु समाले। एहु कुटंबु तू जि देखदा चलै नाही तेरै नाले। साथि तेरै चलै नाही तिसु नालि किउ चितु लाईऐ। ऐसा कंमु मूले न कीचै जितु अंति पछोताईऐ। सतिगुरू का उपदेसु सुणि तू होवै तेरै नाले। कहै नानकु मन पिआरे तू सदा सचु समाले ॥ ११ ॥ अगम अगोचरा तेरा अंतु न पाइआ। अंतो न पाइआ किनै तेरा आपणा आपु तू जाणहे। जीअ जंत सभि खेलु तेरा किआ को आखि वखाणए। आखहि त वेखहि सभु तू है जिनि जगतु उपाइआ। कहै नानकु तू सदा अगंमु है तेरा अंतु न पाइआ ॥ १२ ॥ सुरि नर मुनि जन अंम्रितु खोजदे सु अंम्रितु गुर ते पाइआ। पाइआ अंम्रितु गुरि क्रिपा कीनी सचा मनि वसाइआ। जीअ जंत सभि तुधु उपाए इकि वेखि परसणि आइआ। लबु लोभु अहंकारु चूका सतिगुरू भला भाइआ। कहै नानकु जिसनो आपि तुठा तिनि अंम्रितु गुर ते पाइआ ॥ १३ ॥

भगता की चाल निराली। चाला निराली भगताह केरी बिखम मारगि चलणा। लबु लोभु अहंकारु तजि त्रिसना बहुतु नाही बोलणा। खंनिअहु तिखी वालहु निकी एतु मारगि जाणा। गुरपरसादी जिनी आपु तजिआ हरि वासना समाणी। कहै नानकु चाल भगता जुगहु जुगु निराली ॥ १४ ॥ जिउ तू चलाइहि तिव चलह सुआमी होरु किआ जाणा गुण तेरे। जिव तू चलाइहि तिवै चलह जिना मारगि पावहे। करि किरपा जिन नामि लाइहि सि हरि हरि सदा धिआवहे। जिसनो कथा सुणाइहि आपणी सि गुरदुआरै सुखु पावहे। कहै नानकु सचे साहिब जिउ भावै तिवै चलावहे ॥ १५ ॥ एहु सोहिला सबदु सुहावा। सबदो सुहावा सदा सोहिला सतिगुरू सुणाइआ। एहु तिन कै मंनि वसिआ जिन धुरहु लिखिआ आइआ। इकि फिरहि घनेरे करहि गला गली किनै न पाइआ। कहै नानकु सबदु सोहिला सतिगुरू सुणाइआ ॥ १६ ॥

(गुरु अमरदास इसके आगे आनन्द की वाणी में परमात्मा का स्तुति-गान करने को कहते हैं और बताते हैं कि यह स्तुतिगान क्योंकर किया जा सकता है।) हे सन्तो, आओ मिल-बैठकर उस अनिर्वचनीय परमात्मा की बातें करें। उस अकथनीय की बातें करके यह जानें कि उसे क्योंकर पाया जा सकता है। (इसका ढंग यह है कि) तन-मन-धन हम सब कुछ गुरु को सौंपकर केवल उसके आदेशों का पालन करने लगें। गुरु की आज्ञा का पालन करें और उसकी सच्ची वाणी का गान करें, तो गुरु नानक कहते हैं कि हे सन्तो, उस अनिर्वचनीय परमात्मा की कथा कहने का हक़ हमें मिलता है ॥ ९ ॥ हे मन, चंचलता और चतुराई से आज तक किसी को परमात्मा नहीं मिला। ऐ मेरे मन, ध्यान देकर सुन कि परमात्मा की प्राप्ति में चतुराई बेकार है। इस तरह के भ्रम मोहिनी माया के द्वारा डाले जाते हैं। ये मोहिनी माया ही जीवों को ठगती है और पथभ्रष्ट कर देती है। मैं तो उस पर क़ुर्बान हूँ जो इस मुँह की मिठास को दूर कर देता है। गुरु नानक कहते हैं कि चंचलता, चतुराई से प्रभु नहीं मिलता (इसके लिए समर्पण-भाव की अपेक्षा होती है) ॥ १० ॥ हे मेरे प्यारे मन, तुम सदा सत्य को धारण करो, उसी का स्मरण करो, क्योंकि यह कुटुम्ब-परिवार, जिसे तुम अपना समझते हो, तुम्हारा साथ देनेवाला नहीं है। जो तुम्हारे साथ नहीं चलेगा, उससे लग्न लगाने का क्या लाभ ? इसलिए ऐसा काम कभी नहीं करना चाहिए, जिससे बाद में पछताना पड़े। तू सतिगुरु का उपदेश श्रवण कर, यह तेरा

साथ देगा। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ प्यारे मन, तू सदा सत्य को धारण कर ॥ ११ ॥ हे परमात्मा, तू अगम्य और अगोचर है, तेरा अन्त कोई नहीं जानता, अपने आपको केवल तू ही पहचानता है। ये जीव-जन्तु सब तुम्हारा ही खेल है, फिर भला ये क्या बता सकते हैं। देखना और कहना सब तुम्हारा सामर्थ्य है, क्योंकि तुम्हींने इस समूचे संसार को पैदा किया है। गुरु नानक कहते हैं कि तुम सदा हमारी पहुँच से बाहर हो, तुम्हारा अन्त कोई नहीं जानता ॥ १२ ॥ देवता, ऋषि, मुनि और मनुष्य सब अमरता की खोज कर रहे हैं, किन्तु वह अमृत-तत्त्व गुरु से प्राप्त हुआ है। सत्य को मन में बसा लेने पर गुरु की कृपा से अमृत की प्राप्ति होती है। सभी जीव-जन्तु तुम्हींने पैदा किये हैं, किन्तु उनमें से कोई विरला ही गुरु की शरण लेता है। ऐसे जीव का अहंकार, लोभ और मोह समाप्त हो जाता है और उसे गुरु की शरण ही भाती है। गुरु नानक कहते हैं कि जिस पर प्रभु प्रसन्न हो जाता है, वही गुरु से अमृत प्राप्त करता है ॥ १३ ॥ भक्तों का आचरण संसार से अलग होता है, वे हमेशा कठोर पथ के पथिक होते हैं, इसीलिए उनकी चाल निराली होती है। वे लोभ, मोह, अहंकार, तृष्णा आदि को त्यागकर स्थिर हो जाते हैं और उनकी वाचालता भी शान्त हो जाती है। उनका मार्ग तलवार से भी तेज़ और बाल से भी अधिक बारीक होता है। गुरु की कृपा से जिन्होंने अहम्‌भाव का त्याग कर दिया है, उन्हीं में हरि की श्रद्धा वास करती है। गुरु नानक कहते हैं कि भक्तों की चाल युग-युग से निराली रही है ॥ १४ ॥ हे मेरे मालिक, जैसे तुम चलाते हो, मुझे वैसे ही चलना है; इससे अधिक मैं तुम्हारे गुणों से परिचित नहीं हूँ। जैसे तुम चलाते हो और जिस मार्ग पर तुम डालते हो उसी पर चलना मेरा लक्ष्य है। कृपा करके जिसे तुम अपने नाम से बाँध लेते हो, वह सदा हरि-नाम का ध्यान करने लगता है। जिसे तुम अपनी कथा सिखा देते हो, वही गुरु का आश्रय लेकर सुखों को प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि हे मेरे सच्चे स्वामी, तुम जैसा चाहते हो वैसे ही जीवों को चलाते हो ॥ १५ ॥ ये यशोगान की वाणी ही परमात्मा को प्रिय है। सतिगुरु के द्वारा सुनाया गया यह यशोगान सदा सबको प्रिय है। जिन जीवों को परमात्मा के दरबार में ही यह वरदान प्राप्त हो जाता है, उन्हीं के मन में यह कीर्तिगान निवास करता है। शेष बहुत घूमते और बातें करते हैं। बातों से किसी को नहीं मिलता। गुरु नानक कहते हैं कि वाणी का कीर्तिगान केवल सतिगुरु से ही उपलब्ध होता है ॥ १६ ॥

पवितु होए से जना जिनी हरि धिआइआ। हरि धिआइआ पवितु होए गुरमुखि जिनी धिआइआ। पवितु माता पिता कुटंब

सहित सिउ पवितु संगति सबाईआ । कहदे पवितु सुणदे पवितु से पवितु जिनी मंनि वसाइआ । कहै नानकु से पवितु जिनी गुरमुखि हरि हरि धिआइआ ।। १७ ।। करमी सहजु न ऊपजै विणु सहजै सहसा न जाइ । नह जाइ सहसा कितै संजमि रहे करम कमाए । सहसै जीउ मलीणु है कितु संजमि धोता जाए । मंनु धोवहु सबदि लागहु हरि सिउ रहहु चितु लाइ । कहै नानकु गुरपरसादी सहजु उपजै इह सहसा इव जाइ ।। १८ ।। जीअहु मैले बाहरहु निरमल । बाहरहु निरमल जीअहु त मैले तिनी जनमु जूऐ हारिआ । एह तिसना वडा रोगु लगा मरणु मनहु विसारिआ । वेदा महि नामु उतमु सो सुणहि नाही फिरहि जिउ बेतालिआ । कहै नानकु जिन सचु तजिआ कूड़े लागे तिनी जनमु जूऐ हारिआ ।। १९ ।। जीअहु निरमल बाहरहु निरमल । बाहरहु त निरमल जीअहु निरमल सतिगुर ते करणी कमाणी । कूड़ की सोइ पहुचै नाही मनसा सचि समाणी । जनमु रतनु जिनी खटिआ भले से वणजारे । कहै नानकु जिन मंनु निरमलु सदा रहहि गुर नाले ।।२०।। जे को सिखु गुरू सेती सनमुखु होवै । होवै त सनमुखु सिखु कोई जीअहु रहै गुर नाले । गुर के चरन हिरदै धिआए अंतर आतमै समाले । आपु छडि सदा रहै परणै गुर बिनु अवरु न जाणै कोए । कहै नानकु सुणहु संतहु सो सिखु सनमुखु होए ।। २१ ।। जे को गुर ते वेमुखु होवै बिनु सतिगुर मुकति न पावै । पावै मुकति न होरथै कोई पुछहु बिबेकीआ जाए । अनेक जूनी भरमि आवै विणु सतिगुर मुकति न पाए । फिरि मुकति पाए लागि चरणी सतिगुरू सबदु सुणाए । कहै नानकु वीचारि देखहु विणु सतिगुर मुकति न पाए ।। २२ ।। आवहु सिख सतिगुरू के पिआरिहो गावहु सची बाणी । बाणी त गावहु गुरू केरी बाणीआ सिरि बाणी । जिन कउ नदरि करमु होवै हिरदै तिना समाणी । पीवहु अंम्रितु सदा रहहु हरि रंगि जपिहु सारिगपाणी । कहै नानकु सदा गावहु एह सची बाणी ।। २३ ।। सतिगुरू बिना होर कची है बाणी । बाणी त कची सतिगुरू बाझहु होर कची बाणी । कहदे कचे सुणदे कचे कचीं आखि वखाणी । हरि हरि नित करहि रसना कहिआ कछू न जाणी । चितु जिन

का हिरि लइआ माइआ बोलनि पए रवाणी। कहै नानकु सतिगुरू बाझहु होर कची बाणी ॥ २४ ॥

जिन जीवों ने हरि का ध्यान किया वे पवित्र हो गये। गुरु के द्वारा हरि का ध्यान करनेवाले जीवों का जीवन पवित्र हो गया। उसका जीवन माता-पिता, कुटुम्ब-सहित पवित्र होता है और जिस संगति में वह बैठता है वह भी पवित्र हो जाती है। उसकी चर्चा करने-सुननेवाले भी पवित्र हो जाते हैं और जो उसे मन में बसा लेते हैं वे भी पवित्र होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव गुरु के माध्यम से हरि-नाम का ध्यान करता है, वह निश्चित तौर पर पवित्र हो जाता है ॥ १७ ॥ कर्म-काण्ड आदि करने से कभी सहज आनन्द की प्राप्ति नहीं होती। और सहज-अवस्था प्राप्ति किये बिना मन के संशयों का नाश नहीं होता। कितने भी भिन्न-भिन्न तरीक़ों से कर्म-काण्ड करने पर भी संशय दूर नहीं होता। जीव संशय के कारण मलिन हो गया है, किस तरीक़े से इसे निर्मल किया जा सकता है। मन को गुरु के शब्द-जल से धोओ और परमात्मा में ध्यान लगाओ; तभी गुरु नानक कहते हैं, गुरु की कृपा से सहज की प्राप्ति होगी और इसी से संशय का नाश होगा ॥ १८ ॥ जो लोग बाहर से उजले और भीतर से मलिन होते हैं अर्थात् जिनका मन दूषित और शरीर निर्मल होता है, वे जुए में जीवन की बाज़ी को हार देते हैं। उन्हें तृष्णा का महारोग लगा होता है, वे अपनी मृत्यु को भी विस्मृत कर देते हैं। वे लोग श्रुति में कही गयी बातों में हरि-नाम की महिमा को भुलाकर भूत-प्रेत की तरह दूसरी बातों में भटकते रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो सत्य को त्यागकर मिथ्या में विचरण करते हैं, वे अपने जीवन को जुए की बाज़ी में हार देते हैं ॥ १९ ॥ किन्तु जो जीव मन और कर्म दोनों से पवित्र हैं अर्थात् जो बाहर-भीतर उजले हैं, वे सतिगुरु के आदेशानुसार कमाई करते हैं, अर्थात् गुरु के उपदेशों पर आचरण करते हैं। वहाँ मिथ्या बात की चर्चा नहीं होती, उनका मन सदैव सत्य में ही रमा रहता है। वे सौदागर भले हैं, जो मानव-जीवन-जन्म रूपी रत्न का सही मोल डालते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिन जीवों का मन निर्मल है, वे सदा गुरु की शरण में बने रहते हैं ॥ २० ॥ यदि कोई सिक्ख गुरु की ओर उन्मुख रहे, गुरु की शरण में विराजे तो उसकी आत्मा सदा गुरु के ध्यान में ही बनी रहती है। वह गुरु के चरणों को हृदय में धारण करता है और अन्तरात्मा में सदा उसे याद करता रहता है। वह अहम्भाव का त्याग कर देता है और गुरु के सिवाय दूसरे किसी का सहारा नहीं लेता। गुरु नानक कहते हैं कि हे सन्तो, ऐसा सिक्ख ही वास्तव में गुरुमुख कहलाता है ॥ २१ ॥ जो कोई जीव गुरु से विमुख होता है वह सतिगुरु

के बिना कभी मुक्ति नहीं पाता। मुक्ति किसी अन्य जगह उसे नहीं मिल सकती, भले ही आप प्रतिभाशाली महात्माओं और प्रभु-प्राप्त जीवों से पूछ देखो। वह चाहे अनेक योनियों में भटकता रहे, किन्तु सतिगुरु के बिना उसे मुक्ति नहीं मिल सकती। जीव को यदि मुक्ति पाना है तो सतिगुरु की शरण में जाकर शब्द का अभ्यास करना होगा। गुरु नानक कहते हैं कि विचार कर देख लो, सतिगुरु के बिना मुक्ति नहीं मिल सकती ॥ २२ ॥ हे सतिगुरु के प्यारे सिक्खो, आओ मिलकर सच्ची वाणी का गान करो। (यहाँ सच्ची वाणी पहुँचे हुए सन्तों-महात्माओं तथा गुरुओं की वाणी को कहा गया है। जो लोग ढोंगी थे, वे भी गुरुओं की नक़ल में वाणी कहने लगे थे— उनकी 'वाणी' को कच्ची वाणी कहा गया है।) प्रभु के प्रिय गुरुमुखों की वाणी है, शिरोमणि है; यह वाणी केवल उन्हीं जीवों के हृदय में समाती है, जिन पर परमात्मा की कृपादृष्टि होती है। वे ही जीव नामामृत का पान करते हैं, हरि-रंग में उल्लास मानते तथा प्रभु का यशोगान करते हैं। इसलिए गुरु नानक कहते हैं कि सदा सच्ची वाणी का गान करो ॥ २३ ॥ सतिगुरु की वाणी के अतिरिक्त अन्य सब वाणी-सर्जन कच्ची वाणी है। सतिगुरु के मुखारविन्द से उच्चरित वाणी ही सच्ची है, अन्य सब कच्ची वाणी है। जो लोग मिथ्या (कच्ची) वाणी का उच्चारण करते हैं, या श्रवण करते हैं, वे भी कच्चे हैं और उनका वाणी-उच्चारण भी मिथ्या है। (उक्त मिथ्या वाणी का उच्चारण करनेवाले) जिह्वा से तो हरि-हरि करते हैं, किन्तु उनके मन-मस्तिष्क पर उसका कोई प्रभाव नहीं होता। उसका मन तो माया ने चुराया होता है, वे केवल जीभ ही चलाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु द्वारा उच्चारित वाणी के अतिरिक्त शेष सब वाणी कच्ची है ॥ २४ ॥

गुर का सबदु रतंनु है हीरे जितु जड़ाउ। सबदु रतनु जितु मंनु लागा एहु होआ समाउ। सबद सेती मनु मिलिआ सचै लाइआ भाउ। आपे हीरा रतनु आपे जिसनो देइ बुझाइ। कहै नानकु सबदु रतनु है हीरा जितु जड़ाउ ॥ २५ ॥ सिव सकति आपि उपाइ कै करता आपे हुकमु वरताए। हुकमु वरताए आपि वेखै गुरमुखि किसै बुझाए। तोड़े बंधन होवै मुकतु सबदु मंनि वसाए। गुरमुखि जिसनो आपि करे सु होवै एकस सिउ लिव लाए। कहै नानकु आपि करता आपे हुकमु बुझाए ॥ २६ ॥ सिम्रिति सासत्र पुंन पाप बीचारदे ततै सार न जाणी। ततै सार न जाणी गुरू बाझहु ततै सार न जाणी।

तिही गुणी संसारु भ्रमि सुता सुतिआ रैणि विहाणी। गुर किरपा ते से जन जागे जिना हरि मनि वसिआ बोलहि अंम्रित बाणी। कहै नानकु सो ततु पाए जिसनो अनदिनु हरि लिव लागै जागत रैणि विहाणी ॥ २७ ॥ माता के उदर महि प्रतिपाल करे सो किउ मनहु विसारीऐ। मनहु किउ विसारीऐ एवडु दाता जि अगनि महि आहारु पहुचावए। ओसनो किहु पोहि न सकी जिस नउ आपणी लिव लावए। आपणी लिव आपे लाए गुरमुखि सदा समालीऐ। कहै नानकु एवडु दाता सो किउ मनहु विसारीऐ ॥ २८ ॥ जैसी अगनि उदर महि तैसी बाहरि माइआ। माइआ अगनि सभ इको जेही करतै खेलु रचाइआ। जा तिसु भाणा ता जंमिआ परवारि भला भाइआ। लिव छुड़की लगी त्रिसना माइआ अमरु वरताइआ। एह माइआ जितु हरि विसरै मोहु उपजै भाउ दूजा लाइआ। कहै नानकु गुर परसादी जिना लिव लागी तिनी विचे माइआ पाइआ ॥ २९ ॥ हरि आपि अमुलकु है मुलि न पाइआ जाइ। मुलि न पाइआ जाइ किसै विटहु रहे लोक विललाइ। ऐसा सतिगुरु जे मिलै तिसनो सिरु सउपीऐ विचहु आपु जाइ। जिसदा जीउ तिसु मिलि रहै हरि वसै मनि आइ। हरि आपि अमुलकु है भाग तिना के नानका जिन हरि पलै पाइ ॥ ३० ॥ हरि रासि मेरी मनु वणजारा। हरि रासि मेरी मनु वणजारा सतिगुर ते रासि जाणी। हरि हरि नित जपिहु जीअहु लाहा खटिहु दिहाड़ी। एहु धनु तिना मिलिआ जिन हरि आपे भाणा। कहै नानकु हरि रासि मेरी मनु होआ वणजारा ॥ ३१ ॥ ए रसना तू अनरसि राचि रही तेरी पिआस न जाइ। पिआस न जाइ होरतु कितै जिचरु हरि रसु पलै न पाइ। हरि रसु पाइ पलै पीऐ हरि रसु बहुड़ि न त्रिसना लागै आइ। एहु हरि रसु करमी पाईऐ सतिगुरु मिलै जिसु आइ। कहै नानकु होरि अनरस सभि वीसरे जा हरि वसै मनि आइ ॥ ३२ ॥

गुरु का शब्द हीरे-रत्न के समान है, उसी में मन जोड़ो। हरि-नाम (शब्द) रूपी रत्न में मन लगा है और अन्ततः उसी में लीन हो गया है। शब्द में मन के लीन हो जाने से सच्चे प्रभु से परमप्रेम हुआ है। शब्द का उद्गम हरि स्वयं ही हीरा-रत्न है, अपने-आप जीवों को विवेक प्रदान

करता है और वही स्वयं उसी हीरे-रत्न रूपी शब्द में रमने के लिए मन को प्रेरित करता है —ऐसा गुरु नानक का मत है ॥ २५ ॥ परमात्मा ने शिव और शक्ति (पुरुष और प्रकृति अथवा महाचेतन और माया) को स्वयं उत्पन्न किया है और अब स्वयं ही सबको हुक्म की डोरी (आदेशात्मक नियन्त्रण) में बाँध रखा है। हुक्म द्वारा परिचालित सब जीवों को स्वयं देखता तथा गुरु के द्वारा दूसरों को भी झुकाता है। यदि कोई जीव उसके नाम (शब्द) को मन में बसा लेता है, तो उसके बन्धन टूट जाते हैं, वह मुक्त होता है। गुरु के द्वारा वह स्वयं जिस पर कृपा करता है, वही उस परमतत्त्व से जुड़ता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह स्वयं कर्तार है और उसी के आदेश से सृष्टि नियंत्रण में चलती है ॥ २६ ॥ धर्म-शास्त्र और स्मृतियाँ पाप-पुण्य पर तो विचार करते हैं, किन्तु तत्त्व-ज्ञान की जानकारी किसी में नहीं। गुरु के बिना तत्त्व-ज्ञान की जानकारी कोई अन्य नहीं दे सकता। सारा संसार तीन गुणों (सत्, रज, तम गुण) के भ्रम में भटका है; अज्ञान की अँधेरी रात में सब जीव पक्की नींद सो रहे हैं। मात्र वे ही जीव जग पाये हैं, जिन पर गुरु की कृपा हुई है; उनके मन में हरि-नाम बसा है, वे नित्य अमृत-वाणी का उच्चारण करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव रात-दिन हरि की ध्यान में रहता और आध्यात्मिक जागृति में जीता है, वही परमतत्त्व को पहचानता है ॥ २७ ॥ जो प्रभु माता के गर्भ में भी हमारा पोषण करता है, उसे क्यों मन से भुलाते हो ! वह महान् दाता, जो गर्भाग्नि में भी आहार पहुँचाता है, क्योंकर भुलाया जा सकता है ? जिसे वह अपनी प्रीति के बन्धन प्रदान करता है, उसे कोई नहीं पहुँच सकता। अपनी प्रीति भी वह स्वयं ही प्रदान करता है, गुरु के द्वारा उसे चिर-स्मरणीय बनाया जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह महान् दाता मन से क्यों विस्मृत हो ॥ २८ ॥ जैसी गर्भ की अग्नि है, वैसी ही बाहर माया की जलन है। माया और गर्भाग्नि एक सरीखी हैं, यही सृजनहार का खेल है। जैसा उसे स्वीकार हुआ, वैसे ही परिवार में जन्म लिया और सबकी ख़ुशी का कारण बना। माया का छल प्रमाणित हुआ, गर्भ में परमात्मा से लगी लग्न बाहर आते ही तृष्णा में बदल गयी। यह 'माया' ऐसी चीज़ है, जिससे परमात्मा विस्मृत होता, सांसारिक मोह जगता है तथा प्रभु को छोड़कर अन्यों से लग्न लगती है। गुरु नानक कहते हैं कि जिन्हें गुरु-कृपा से प्रभु की लग्न लग जाती है, वे संसार के (कीच में भी कमल के समान) तत्त्व-ज्ञान पा लेते हैं ॥ २९ ॥ परमात्मा अमूल्य है, उसका मोल निश्चित नहीं किया जा सकता। लोग प्रयास कर-करके हार गये, किन्तु उसका सही मोल कोई नहीं पा सका। यदि सच्चा सतिगुरु प्राप्त हो जाय और जीव उसके प्रति समर्पित हो, तभी उसका अहम् नष्ट होता है। तब जीव

अपने मूल को पहचानता है, जीव के मन में हरि बसता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु अमूल्य है; जो उसे पा लेते हैं, वे भाग्यशाली हैं ॥ ३० ॥ मेरा मन व्यापारी है, हरि-नाम उसकी व्यापारिक राशि है। इस राशि की पहचान मुझे सतिगुरु से प्राप्त हुई है। मन से नित्य मैं हरि-हरि-नाम का जाप करता और प्रतिदिन का लाभ ले लेता हूँ। यह व्यापारिक धन (हरि-नाम) केवल उन्हीं जीवों को प्राप्त है, जिन्हें स्वयं परमात्मा स्वेच्छा से प्रदान करता है। गुरु नानक कहते हैं कि मेरा व्यापारी मन हरि-नाम-राशि का व्यापार करता है ॥ ३१ ॥ ऐ मेरी जिह्वा, तू अन्य रसों में लगी है, इसीलिए तेरी प्यास नहीं बुझती। यह अमित प्यार तब तक नहीं बुझ सकता, जब तक तू हरि-नाम का रस नहीं पान कर लेती। एक बार हरि-नाम का रस पान कर लेने से फिर कभी तृष्णा नहीं जगती। यह हरि-रस सत्कर्मों के फलस्वरूप सतिगुरु की कृपा से प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि जब हरि-रस की लग्न लगती है, तब अन्य सब रस अपने-आप छूट जाते हैं ॥ ३२ ॥

ए सरीरा मेरिआ हरि तुम महि जोति रखी ता तू जग महि आइआ। हरि जोति रखी तुधु विचि ता तू जग महि आइआ। हरि आपे माता आपे पिता जिनि जीउ उपाइ जगतु दिखाइआ। गुर परसादी बुझिआ ता चलतु होआ चलतु नदरी आइआ। कहै नानकु स्रिसटि का मूलु रचिआ जोति राखी ता तू जग महि आइआ ॥ ३३ ॥ मनि चाउ भइआ प्रभ आगमु सुणिआ। हरि मंगलु गाउ सखी ग्रिहु मंदरु बणिआ। हरि गाउ मंगलु नित सखीए सोगु दूखु न विआपए। गुर चरन लागे दिन सभागे आपणा पिरु जापए। अनहत बाणी गुर सबदि जाणी हरि नामु हरि रसु भोगो। कहै नानकु प्रभु आपि मिलिआ करण कारण जोगो ॥ ३४ ॥ ए सरीरा मेरिआ इसु जग महि आइकै किआ तुधु करम कमाइआ। कि करम कमाइआ तुधु सरीरा जा तू जग महि आइआ। जिनि हरि तेरा रचनु रचिआ सो हरि मनि न वसाइआ। गुर परसादी हरि मंनि वसिआ पूरबि लिखिआ पाइआ। कहै नानकु एहु सरीरु परवाणु होआ जिनि सतिगुर सिउ चितु लाइआ ॥ ३५ ॥ ए नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी हरि बिनु अवरु न देखहु कोई। हरि बिनु अवरु न देखहु कोई नदरी हरि निहालिआ। एहु विसु संसारु तुम देखदे एहु हरि का रूपु है हरि रूपु नदरी आइआ। गुर

परसादी बुझिआ जा वेखा हरि इकु है हरि बिनु अवरु न कोई। कहै नानकु एहि नेत्र अंध से सतिगुरि मिलिऐ दिब द्रिसटि होई ॥ ३६ ॥ ए स्रवणहु मेरिहो साचै सुनणै नो पठाए। साचै सुनणै नो पठाए सरीरि लाए सुणहु सति बाणी। जितु सुणी मनु तनु हरिआ होआ रसना रसि समाणी। सचु अलख विडाणी ता की गति कही न जाए। कहै नानकु अंम्रित नामु सुणहु पवित्र होवहु साचै सुनणै नो पठाए ॥ ३७ ॥ हरि जीउ गुफा अंदरि रखि कै वाजा पवणु वजाइआ। वजाइआ वाजा पउण नउ दुआरे परगटु कीए दसवा गुपतु रखाइआ। गुरदुआरै लाइ भावनी इकना दसवा दुआरु दिखाइआ। तह अनेक रूप नाउ नवनिधि तिसदा अंतु न जाई पाइआ। कहै नानकु हरि पिआरै जीउ गुफा अंदरि रखि कै वाजा पवणु वजाइआ ॥ ३८ ॥ एहु साचा सोहिला साचै घरि गावहु। गावहु त सोहिला घरि साचै जिथै सदा सचु धिआवहे। सचो धिआवहि जा तुधु भावहि गुरमुखि जिना बुझावहे। इहु सचु सभना का खसमु है जिसु बखसे सो जनु पावहे। कहै नानकु सचु सोहिला सचै घरि गावहे ॥ ३९ ॥ अनदु सुणहु वडभागीहो सगल मनोरथ पूरे। पारब्रहमु प्रभु पाइआ उतरे सगल विसूरे। दूख रोग संताप उतरे सुणी सची बाणी। संत साजन भए सरसे पूरे गुर ते जाणी। सुणते पुनीत कहते पवितु सतिगुरु रहिआ भरपूरे। बिनवंति नानकु गुर चरण लागे बाजे अनहद तूरे ॥ ४० ॥ १ ॥

ऐ मेरे शरीर, परमात्मा ने तुम्हारे में अपनी ज्योति के अंश स्थापित किये हैं, तभी तुम प्रस्तुत रूप में जगत की शोभा बन पाये हो। प्रभु ने तुम्हें ज्योति दी है, तभी तुम जगत में आये हो। परमात्मा स्वयं ही तुम्हारा माता-पिता है, उसी ने तुम्हें वर्तमान अनुभव प्रदान किया है। गुरु-कृपा से ऐसा चमत्कार हुआ कि यह समूचा संसार तमाशा-रूप दीख पड़ने लगा। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु ने सृष्टि का मूल ज्योति से ही रचा है, उसी ज्योति का अंश तुममें रखा है, तभी तुम संसार में आये हो ॥ ३३ ॥ प्रभु-आगमन की बात सुनकर मन में चाव बढ़ा है अर्थात् परमात्मा के नाम के मन में प्रवेश होने से चाव बढ़ गया है। यह शरीर (घर) ही मन्दिर बना है, हे सखियो, सब मिलकर परमात्मा का मंगल-गान गाओ।

हे सखियो, नित्य प्रभु के मंगल-गीत गाने से जीवन में शोक-दुःख नहीं व्यापता। गुरु के चरणों में शरण लेने से जीवन में सौभाग्य जन्मता है और परमात्मा (अपना प्रियतम) की अनुभूति होने लगती है। गुरु के शब्द द्वारा अनाहत वाणी का आनन्द मिला है, प्रभु-मिलन का रस पाया है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरुमुखों को करन-कारन (समर्थ) परमात्मा स्वयं ही मिलता है ॥ ३४ ॥ ऐ मेरे शरीर, तुमने इस संसार में आकर क्या कर्म किया है ? जबसे तुम संसार में आये हो, क्या कर्म कमाया है ? जिस प्रभु ने तुम्हें रचा है, उस परमात्मा को ही तुमने मन में नहीं बसाया। गुरु की कृपा से मन में हरि बसा है और पूर्व-लिखित फल प्राप्त हुआ है। गुरु नानक कहते हैं कि यदि इस शरीर में रहकर जीवात्मा सतिगुरु में मन लगा ले, तो शरीर-प्राप्ति सिद्ध हो जायगी ॥ ३५ ॥ ऐ मेरे नेत्रो, हरि ने तुम्हें प्रकाश (दृष्टि) दिया है, उसके अतरिक्त अन्य किसी को मत देखो। प्रभु के अतिरिक्त अन्य को मत देखो, उसी के प्रसाद से तुम्हें दृष्टि प्राप्त हुई है। यह समूचा विश्व, जो तुम देख रहे हो, हरि का ही रूप है, हरि-रूप में ही दीख पड़ता है। गुरु की कृपा से हरि के एक-रूप होने का ज्ञान मिला है, उसके बिना और कोई नहीं। नानक कहते हैं कि ये नेत्र तब तक अन्धे हैं, जब तक कि सतिगुरु के मिलाप से इन्हें दिव्य दृष्टि प्राप्त नहीं हो जाती ॥ ३६ ॥ ऐ मेरे कानो, तुम्हें सत्य की वाणी सुनने को नियत किया गया है। तुम्हें शरीर के साथ इसीलिए लगाया गया है कि तुम नित्य सत्य की वाणी का श्रवण करो। जिसने उस वाणी का श्रवण किया है, उसका तन-मन सुवासित हो गया है, उसकी जिह्वा हरि-रस में लीन हो गयी है। परमसत्य एवं अदृश्य आश्चर्यवान परमात्मा की गति बड़ी विचित्र है। इसीलिए गुरु नानक कहते हैं कि तुम्हें सत्य की वाणी सुनने को यहाँ भेजा गया है, उसी अमृत-रस का श्रवण करो ॥ ३७ ॥ हरि ने जीवात्मा को शरीर रूपी गुफा में रखकर श्वास-प्रश्वास का बाजा बजाया है, अर्थात् आत्मा को शरीर में स्थिर करके उसमें श्वास चलने लगा है। इस श्वास का बाजा सुनने के लिए प्रभु ने नौ द्वार (शरीर के बाहरी छिद्र) प्रकट रखे हैं और दसवाँ द्वार गुप्त रखा है। जो जीव गुरु में विश्वास बनाते हैं, उन्हें दसवाँ द्वार भी प्रकट हो जाता है। वहाँ तरह-तरह के रूपों तथा नौ निधियों वाला हरि-नाम निवसित है, जिसका अन्त नहीं पाया जा सकता। गुरु नानक कहते हैं कि प्यारे हरि ने आत्मा को शरीर की गुफा में रखकर उसमें श्वास फूँक दिया है ॥ ३८ ॥ परमसत्य सत्य प्रभु का सच्चा यशोगान हृदय रूपी घर में नित्य गाओ। उस हृदय-मन्दिर में प्रभु का कीर्तिगान करो, जहाँ सदैव परमात्मा का ध्यान बना रहता है। गुरु के माध्यम से जो जीव सच्चे परमात्मा का ध्यान

करते हैं, वे ही परमात्मा को प्रवाण होते हैं। यह परमसत्य ही सबका स्वामी है; जिसे वह कृपापूर्वक देता है, वही पाता है। गुरु नानक कहते हैं कि हृदय-मन्दिर में सत्य रूपी प्रभु का यश गाओ ॥ ३९ ॥ हे भाग्यशाली जीवो, 'अनंदु' वाणी को सुनो, इससे तुम्हारे सब मनोरथ पूरे होते हैं; परब्रह्म प्रभु की प्राप्ति होती है और सब दुःख-संताप दूर हो जाते हैं। सच्ची वाणी के श्रवण से त्रैताप का नाश होता है। यह सत्य-रूप वाणी गुरु से मिलती है, इससे सन्त-महात्मा उल्लास में विकसित हो जाते हैं। इस वाणी का उच्चारण करनेवाले पवित्र होते हैं, सुननेवाले भी पवित्र हो जाते हैं और उन्हें सब जगह वाहिगुरु व्याप्त दीख पड़ता है। गुरु नानक विनती करते हैं कि जो जीव गुरु की शरण लेते हैं, उन्हें पूर्ण आनन्द प्राप्त होता है (उनके हृदय में अनाहत नाद के बाजे बजने लगते हैं) ॥ ४० ॥ १ ॥

रामकली सदु

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जगि दाता सोइ भगति वछलु तिहु लोइ जीउ। गुर सबदि समावए अवरु न जाणै कोइ जीउ। अवरो न जाणहि सबदि गुर कै एकु नामु धिआवहे। परसादि नानक गुरू अंगद परम पदवी पावहे। आइआ हकारा चलणवारा हरि राम नामि समाइआ। जगि अमरु अटलु अतोलु ठाकुरु भगति ते हरि पाइआ ॥ १ ॥ हरि भाणा गुर भाइआ गुरु जावै हरि प्रभ पासि जीउ। सतिगुरु करे हरि पहि बेनती मेरी पैज रखहु अरदासि जीउ। पैज राखहु हरि जनह केरी हरि देहु नामु निरंजनो। अंति चलदिआ होइ बेली जमदूत कालु निखंजनो। सतिगुरू की बेनती पाई हरि प्रभि सुणी अरदासि जीउ। हरि धारि किरपा सतिगुरु मिलाइआ धनु धनु कहै साबासि जीउ ॥ २ ॥ मेरे सिख सुणहु पुत भाईहो मेरै हरि भाणा आउ मै पासि जीउ। हरि भाणा गुर भाइआ मेरा हरि प्रभु करे साबासि जीउ। भगतु सतिगुरु पुरखु सोई जिसु हरि प्रभ भाणा भावए। आनंद अनहद वजहि वाजे हरि आपि गलि मेलावए। तुसी पुत भाई परवारु मेरा मनि वेखहु करि निरजासि जीउ। धुरि लिखिआ परवाणा फिरै नाही गुरु जाइ हरि प्रभ पासि जीउ ॥ ३ ॥ सतिगुरि भाणै आपणै बहि

परवारु सदाइआ। मत मै पिछै कोई रोवसी सो मै मूलि न भाइआ। मितु पैझै मितु बिगसै जिसु मित की पैज भावए। तुसी वीचारि देखहु पुत भाई हरि सतिगुरू पैनावए। सतिगुरू परतखि होदै बहि राजु आपि टिकाइआ। सभि सिख बंधप पुत भाई रामदास पैरी पाइआ ॥ ४ ॥ अंते सतिगुरु बोलिआ मै पिछै कीरतनु करिअहु निरबाणु जीउ। केसो गोपाल पंडित सदिअहु हरि हरि कथा पड़हि पुराणु जीउ। हरि कथा पड़ीऐ हरि नामु सुणीऐ बेबाणु हरि रंगु गुर भावए। पिंडु पतलि किरिआ दीवा फुल हरिसरि पावए। हरि भाइआ सतिगुरु बोलिआ हरि मिलिआ पुरखु सुजाणु जीउ। रामदास सोढी तिलकु दीआ गुर सबदु सचु नीसाणु जीउ ॥ ५ ॥ सतिगुरु पुरखु जि बोलिआ गुरसिखा मंनि लई रजाइ जीउ। मोहरी पुतु सनमुखु होइआ रामदासै पैरी पाइ जीउ। सभ पवै पैरी सतिगुरू केरी जिथै गुरू आपु रखिआ। कोई करि बखीली निवै नाही फिरि सतिगुरू आणि निवाइआ। हरि गुरहि भाणा दीई वडिआई धुरि लिखिआ लेखु रजाइ जीउ। कहै सुंदरु सुणहु संतहु सभु जगतु पैरी पाइ जीउ ॥ ६ ॥ १ ॥

['सदु' इस वाणी का नाम है। 'सदु' का अर्थ है, बुलावा— मृत्यु का आह्वान। गुरु अमरदासजी के ज्योति-जोति समाने के समय बाबा सुन्दर ने इस वाणी का उच्चारण किया। मृत्यु के समय अन्तिम उपदेश के रूप में यह वाणी प्रस्तुत है।] संसार का दाता वह प्रभु है, जो तीनों लोकों में भक्ति का चाहवान है। वह गुरुवाणी में समाया है, गुरुवाणी के अतिरिक्त उसे और कोई नहीं जानता। जो जीव गुरुवाणी द्वारा प्रभु-नाम का स्मरण करते हैं, वे ही हरि को पहचानते हैं। यह अनन्य भक्ति-पद गुरु नानक से गुरु अंगद ने तथा उनसे गुरु अमरदास ने प्राप्त किया। जब मृत्यु का आह्वान हुआ तो गुरु (अमरदास) प्रभु के नाम में समा गये। (गुरु अमरदास ने) जगत में उस अटल, अमर, अडोल परमात्मा को भक्ति से प्राप्त किया था ॥ १ ॥ परमात्मा की इच्छा (परलोक-गमन की) गुरुजी (अमरदास) को स्वीकार हुई और वे परमात्मा के पास जाने को तैयार हुए। सतिगुरु (अमरदासजी) ने हरि के पास अपनी रक्षा की प्रार्थना की। हरिजनों की रक्षा के लिए विनती की और साथ मायातीत प्रभु-नाम की भिक्षा भी माँगी। जिससे यमदूतों की शक्ति को भी व्यर्थ कर देनेवाला प्रभु अन्तकाल में उनका

सहायी हो सके ! सतिगुरु की प्रार्थना को वाहिगुरु परमात्मा ने स्वीकार किया और कृपापूर्वक गुरु (अमरदासजी) को हरि ने अपने में विलीन कर लिया ॥ २ ॥ मेरे शिष्यो, सम्बन्धियो, भाइयो, सुनो (गुरु अमरदास के शब्दों में कहा गया है), मुझे प्रभु ने अपने पास आने का आह्वान किया है। मुझे (गुरु को) हरि का आदेश स्वीकार है, इसी में परमात्मा की प्रसन्नता है। सच्चा भक्त और गुरुमुख वही है, जिसे हरि-इच्छा सदैव शिरोधार्य होती है। तब अनाहत-नाद की मधुर ध्वनि गुंजरित होती है और जीव प्रभु से गले मिलता है। तुम सब मेरे सम्बन्धी, पुत्र, परिवार हो, मन में निश्चय करके यह जान लो कि परमात्मा के दरबार से दिया गया आदेश टाला नहीं जा सकता, और मैं (गुरु अमरदास) प्रभु के निकट जा रहा हूँ ॥ ३ ॥ सतिगुरु (अमरदासजी) ने अपनी इच्छा से अपने परिवार के सब सदस्यों को अपने निकट बुलाया और कहा कि मेरे बाद किसी का रोना मुझे स्वीकार नहीं है। जिसे मित्र से प्यार होता है, वह मित्र की प्रतिष्ठा बढ़ने पर प्रसन्न होता है और मुझे प्रभु अपने निकट बुलाकर सम्मानित कर रहा है (इसलिए मेरे सम्मानित होने पर मेरे शुभाकांक्षियों को रोना नहीं चाहिए)। (आप लोगों के मार्ग-दर्शन के लिए) प्रत्यक्ष सतिगुरु गद्दी पर विराजमान है (अर्थात् गुरु रामदास गद्दी पर विराजते हैं, गुरु अमरदास ने अपने जीवन में ही गुरु अमरदास की गद्दी प्रदान की थी।) आप सबको अब गुरु रामदास की चरण-शरण लेनी चाहिए ॥ ४ ॥ अन्त में गुरु अमरदास ने कहा कि उनके बाद केवल परमात्मा का कीर्तन किया जाय। (हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार ब्राह्मण को बुलाकर गरुड़पुराण की कथा करवाने के सम्बन्ध में उन्होंने कहा।) स्वयं परमात्मा ही रीति-कर्म पूरा करनेवाला ब्राह्मण है, उसी के ध्यान में हरि-नाम-संकीर्तन गरुड़पुराण की कथा होगी। हरि-कथा पढ़ो, हरि-नाम सुनो और हरि-प्रेम की अरथी पर मुझे ले जाओ, यही प्रभु को प्रिय है। (अन्य रीति-रिवाज) पिण्ड भरवाना, दिया करना, फूल-पत्तों का चढ़ावा करना आदि सब सत्संग में जुड़कर बैठने में होगा (अर्थात् उक्त सब रिवाजों के बजाय सत्संग में मिल बैठो और परमात्मा का गुण-कथन करो)। मैं (गुरु अमरदास) जो भी कह रहा हूँ, वह प्रभु की इच्छा है, और मैं उसी परमपुरुष में विलीन होने जा रहा हूँ। सोढी रामदास (चौथे गुरु) गुरु-गद्दी पर आसीन हैं, उनका आदेश ही अब आप लोगों के लिए मान्य है ॥ ५ ॥ सतिगुरु अमरदास ने जो भी कहा, शिष्यों ने उनकी इच्छा को शिरोधार्य किया। उन्होंने अपने पुत्र मोहरीजी को सामने बुलाकर (गुरु) रामदास के पाँव छूने को कहा। सब शिष्य बारी-बारी सतिगुरु रामदास के पाँव पड़े, जहाँ गुरु अमरदास ने अपनी ज्योति स्थापित की थी। यदि कोई ईर्ष्यावश चरणों में नहीं झुका, उसे भी गुरु ने

स्वयं बुलाकर शरण में लिया। परमात्मा ने भी गुरु की इच्छा का सत्कार किया और उनकी (गुरु रामदास की) वाणी को सम्मानित किया। (बाबा) सुन्दर कहते हैं कि ऐ सज्जनो, सुनो। इस प्रकार सारे संसार में नये गुरु (रामदासजी) का सत्कार हुआ ॥ ६ ॥ १ ॥

रामकली महला ५ छंत

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ साजनड़ा मेरा साजनड़ा निकटि खलोइअड़ा मेरा साजनड़ा। जानीअड़ा हरि जानीअड़ा नैण अलोइअड़ा हरि जानीअड़ा। नैण अलोइआ घटि घटि सोइआ अति अंम्रित प्रिअ गूड़ा। नालि होवंदा लहि न सकंदा सुआउ न जाणै मूड़ा। माइआ मदि माता होछी बाता मिलणु न जाई भरम धड़ा। कहु नानक गुर बिनु नाही सूझै हरि साजनु सभ कै निकटि खड़ा ॥ १ ॥ गोबिंदा मेरे गोबिंदा प्राण अधारा मेरे गोबिंदा। किरपाला मेरे किरपाला दान दातारा मेरे किरपाला। दान दातारा अपर अपारा घट घट अंतरि सोहनिआ। इक दासी धारी सबल पसारी जीअ जंत लै मोहनिआ। जिसनो राखै सो सचु भाखै गुर का सबदु बीचारा। कहु नानक जो प्रभ कउ भाणा तिसही कउ प्रभु पिआरा ॥ २ ॥ माणो प्रभ माणो मेरे प्रभ का माणो। जाणो प्रभु जाणो सुआमी सुघड़ु सुजाणो। सुघड़ सुजाना सद परधाना अंम्रितु हरि का नामा। चाखि अघाणे सारिग पाणे जिन कै भाग मथाना। तिन ही पाइआ तिनहि धिआइआ सगल तिसै का माणो। कहु नानक थिरु तखति निवासी सचु तिसै दीबाणो ॥ ३ ॥ मंगला हरि मंगला मेरे प्रभ कै सुणीऐ मंगला। सोहिलड़ा प्रभ सोहिलड़ा अनहद धुनीऐ सोहिलड़ा। अनहद वाजे सबद अगाजे नित नित जिसहि वधाई। सो प्रभु धिआईऐ सभु किछु पाईऐ मरै न आवै जाई। चूकी पिआसा पूरन आसा गुरमुखि मिलु निरगुनीऐ। कहु नानक घरि प्रभ मेरे कै नित नित मंगलु सुनीऐ ॥ ४॥ १ ॥

मेरा प्रभु-साजन सदैव मेरे निकट बसता है। वह (परमात्मा) मुझे अतिप्रिय है, मैं उसे अपने नेत्रों में बसा देखता हूँ। मैंने उसे आँखों में देखा है, वह घट-घट में निवसित है, वह अमृत के समान अतिमधुर और

प्रिय है। अपने साथ बसते हरि को महसूस नहीं कर सकता; जीव इतना गँवार है कि उसे जीवन का प्रयोजन ही ज्ञात नहीं। माया के अहम् में उन्मत्त होकर निकृष्ट बातें करता है तथा भ्रम में भटकते रहने के कारण परमात्मा से मिल नहीं पाता। गुरु नानक कहते हैं कि वह हरि-साजन यद्यपि सबके निकट बसता है, फिर भी गुरु के बिना किसी को नहीं सूझता ॥ १ ॥ मेरा गोविन्द (प्रभु) मेरे जीवन का एकमात्र सहारा है। वह मुझ पर अत्यन्त कृपालु है, मुझे सब कुछ उसी ने प्रदान किया है। वह दातार सबका पोषक है और घट-घट में शोभायमान है। उसकी एक दासी (माया) है, जो बलपूर्वक सब जगह दखल रखती है और सब जीव-जन्तु उसके द्वारा मोहित हैं। जिसको स्वयं स्वामी सहारा दे, वही सत्य का उच्चारण करता है। गुरुजी कहते हैं कि जो प्रभु-इच्छानुसार चलन करता है, वही प्रभु को प्रिय होता है ॥ २ ॥ मुझे अपने प्रभु का गौरव है; वह सब कुछ का जानकार है, चतुर और सुयोग्य है। वह सुयोग्य और सुविज्ञ है, उस हरि का नाम अमृत के समान है। जिनके मस्तक में भाग्य की उज्ज्वल रेखाएँ हैं, वे प्रभु (सारंग-पाणि) का संग पाकर तृप्त हो जाते हैं। वे ही उसे प्राप्त करते हैं, वे ही उसका ध्यान लगाते हैं, उन्हें ही उस हरि का गौरव है। गुरुजी कहते हैं, वह वाहिगुरु शाश्वत है और उसका दरबार सत्य है ॥ ३ ॥ मेरा परमात्मा कल्याणकारी है, सब उसके मंगल-गान को सुनो। प्रभु का यशोगान अनाहत ध्वनि के माध्यम से होता है। अनाहत ध्वनि प्रकट होती है और नित्य कल्याण की बधाई बजती है। उस प्रभु का ध्यान करने से सब कुछ प्राप्त होता है और जीव आवागमन से छूट जाता है। जीवन की अतृप्त पिपासा नष्ट होती है, आशाएँ पूर्ण होती हैं; आप भी गुरु के द्वारा उस निर्गुण ब्रह्म को पाओ। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा मेरे घट में बसता है, हम सब नित्य-नित्य उसका यशोगान सुनें ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ हरि हरि धिआइ मना खिनु न विसारीऐ। राम रामा राम रमा कंठि उरधारीऐ। उरधारि हरि हरि पुरखु पूरनु पारब्रहमु निरंजनो। भै दूरि करता पाप हरता दुसह दुख भव खंडनो। जगदीस ईस गुोपाल माधो गुण गोविंद वीचारीऐ। बिनवंति नानक मिलि संगि साधू दिनसु रैणि चितारीऐ ॥ १ ॥ चरन कमल आधारु जन का आसरा। मालु मिलख भंडार नामु अनंत धरा। नामु नरहर निधानु जिन कै रस भोग एक नराइणा। रस रूप रंग अनंत बीठल सासि सासि धिआइणा। किलविख हरणा नाम पुनह चरणा नामु जम की

त्रास हरा। बिनवंति नानक रासि जन की चरन कमलह आसरा ॥ २ ॥ गुण बेअंत सुआमी तेरे कोइ न जानई। देखि चलत दइआल सुणि भगत वखानई। जीअ जंत सभि तुझु धिआवहि पुरख पति परमेसरा। सरब जाचिक एकु दाता करुणामै जगदीसरा। साधू संतु सुजाणु सोई जिसहि प्रभ जी मानई। बिनवंति नानक करहु किरपा सोइ तुझहि पछानई ॥३॥ मोहि निरगुण अनाथु सरणी आइआ। बलि बलि बलि गुरदेव जिनि नामु द्रिड़ाइआ। गुरि नामु दीआ कुसलु थीआ सरब इछा पुंनीआ। जलने बुझाई सांति आई मिले चिरी विछुंनिआ। आनंद हरख सहज साचे महा मंगल गुण गाइआ। बिनवंति नानक नामु प्रभ का गुर पूरे ते पाइआ ॥ ४ ॥ २ ॥

हे मन, नित्य हरि-नाम का जाप करो, क्षण-भर के लिए भी उसे न विसारो (विस्मृत करो), राम-राम-नाम नित्य गाओ और हृदय में धारण करके रखो। मायातीत परमात्मा को, जो पूर्णपुरुष है, हृदय में धारण करो। वह भय दूर करनेवाला, पापों को नष्ट करनेवाला तथा असह्य दुःखों को खण्डित करनेवाला है। संसार के मालिक उस ईश्वर के गुणों का विचार करें। गुरु नानक कहते हैं कि साधु-संगति में रहकर रात-दिन परमात्मा का चिन्तन करें ॥ १ ॥ प्रभु के चरण-कमल ही सेवकों का आसरा हैं। उस परमात्मा का नाम ही धन-सम्पत्ति है, उसी को धारण किया है। यही नाम जीव की निधियाँ हैं और इसी का रस-भोग हमारा अनन्त लक्ष्य है। रूप, रंग और रस का अन्तहीन कोष परमात्मा का नाम है, श्वास-श्वास जिसका ध्यान करना है। यह नाम पापों का हरण करनेवाला प्रायश्चित्त है और इसी से यम का भय दूर होता है। गुरु नानक विनती करते हैं कि सेवकों को प्रभु के चरण-कमलों का ही आश्रय है और उसका नाम ही उनकी मूल राशि है ॥२॥ हे प्रभु, तुम्हारे अनन्त गुणों को कोई नहीं जानता। तुम्हारे चमत्कारों, दया और उदारता को भक्तों के आख्यानों में ही सुना जाता है। सब जीव-जन्तु तुम्हारा ही ध्यान करते हैं, और तुम जीवात्माओं के पति परमपुरुष हो। तुम संसार के स्वामी और करुणामय दाता हो, सब तुम्हारे सम्मुख याचक हैं। जिसे तुम, हे प्रभु, प्रतिष्ठा देते हो वही साधु-सन्त सुजान बनता है। गुरु नानक के मतानुसार जिस पर तुम्हारी कृपा होती है, वही तुमको पहचानता है ॥ ३ ॥ मैं गुणहीन, निराश्रित तुम्हारी शरण में आया हूँ। अपने गुरुदेव पर बार-बार न्योछावर हूँ, जिसने मुझे प्रभु-नाम जपने का सामर्थ्य दिया है। गुरु ने मुझे नाम दिया है, जिससे मुझे सुख-आनन्द प्राप्त हुआ

और मेरी सब इच्छाएँ पूर्ण हो गयीं। उसने मेरी सब जलन दूर कर दी है और युग-युग से बिछुड़े हुए मिला दिये हैं। जब हरि-गुणों के सहर्ष गीत गाये, तो सहजावस्था के सच्चे आनन्द की प्राप्ति हुई। प्रभु का यह नाम, गुरु नानक के मतानुसार सच्चे गुरु से ही पाया है ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ रामकली महला ५ ॥ रुणझुणो सबदु अनाहदु नित उठि गाईऐ संतन कै। किलविख सभि दोख बिनासनु हरि नामु जपीऐ गुर मंतन कै। हरि नामु लीजै अमिउ पीजै रैणि दिनसु अराधीऐ। जोग दान अनेक किरिआ लगि चरण कमलह साधीऐ। भाउ भगति दइआल मोहन दूख सगले परहरै। बिनवंति नानक तरै सागरु धिआइ सुआमी नरहरै ॥ १ ॥ सुख सागर गोबिंद सिमरणु भगत गावहि गुण तेरे राम। अनद मंगल गुर चरणी लागे पाए सूख घनेरे राम। सुख निधानु मिलिआ दूख हरिआ क्रिपा करि प्रभि राखिआ। हरि चरण लागा भ्रमु भउ भागा हरि नामु रसना भाखिआ। हरि एकु चितवै प्रभु एकु गावै हरि एकु द्रिसटी आइआ। बिनवंति नानक प्रभि करी किरपा पूरा सतिगुरु पाइआ ॥ २ ॥ मिलि रहीऐ प्रभ साध जना मिलि हरि कीरतनु सुनीऐ राम। दइआल प्रभू दामोदर माधो अंतु न पाईऐ गुनीऐ राम। दइआल दुखहर सरणि दाता सगल दोख निवारणो। मोह सोग विकार बिखड़े जपत नाम उधारणो। सभि जीअ तेरे प्रभू मेरे करि किरपा सभ रेण थीवा। बिनवंति नानक प्रभ मइआ कीजै नामु तेरा जपि जीवा ॥ ३ ॥ राखि लीए प्रभि भगत जना अपणी चरणी लाए राम। आठ पहर अपना प्रभु सिमरह एको नामु धिआए राम। धिआइ सो प्रभु तरे भवजल रहे आवण जाणा। सदा सुखु कलिआण कीरतनु प्रभ लगा मीठा भाणा। सभ इछ पुंनी आस पूरी मिले सतिगुर पूरिआ। बिनवंति नानक प्रभि आपि मेले फिरि नाही दूख विसूरिआ ॥४॥३॥

नित्य प्रातः उठकर सन्तों की संगति में अनाहत शब्द का मीठा-मीठा गीत गाएँ। इससे सब प्रकार के पाप और दोष नाश होते हैं —ऐसे हरि-नाम को गुरु की मन्त्रणा से जपें। हरि-नाम अमृत के समान है, रात-दिन इसकी आराधना करके अमृत-पान करें। परमात्मा के चरण-कमल में शरण पाकर योग, दान आदि कर्म सम्पन्न हो जाते हैं। और दयालु प्रभु की भक्ति और प्रेम सब दुःखों को दूर करते हैं। गुरु नानक

के मतानुसार नरहरि स्वामी अर्थात् परमात्मा का ध्यान करने से जीव भव-सागर को पार कर लेता है ।। १ ।। हे सुखों के सागर प्रभु, सब भक्त तुम्हारा सिमरन करते और गुणगान करते हैं। गुरु के चरणों में लगकर तुम्हें आनन्द मिलता है, उनका कल्याण होता है और वे परमसुख को प्राप्त करते हैं। प्रभु उन पर कृपा करता है, जिससे उन्हें सुख-निधि प्राप्त होती है और उनका सब दुःख दूर हो जाता है। हरि के चरणों में लगने से भ्रम-भय दूर होता है और जिह्वा द्वारा जीव हरि-नाम का बखान करता है। वह मात्र हरि का चिन्तन करता है. हरि के गुण गाता है और हरि को ही देखता है। गुरु नानक कहते हैं कि उस पर परमात्मा की कृपा होती है, तभी उसे पूरा सतिगुरु प्राप्त होता है ।। २ ।। साधु-संगति में मिलकर रहो और हरि-कीर्तन सुनो। वह प्रभु दयालु है, माया का स्वामी है, उसके गुणों का अन्त नहीं पाया जाता। वह परमात्मा दयालु है, दुःखों का हरण करनेवाला और शरण में आनेवाले जीव के सब दोषों का निवारण करनेवाला है। शोक, मोह और कठोर विकार, सब उसका नाम जपने से ही दूर हो जाते हैं। हे मेरे प्रभु, सभी जीव तुम्हारे हैं, मैं तुम्हारी चरणधूल हूँ, मुझ पर भी कृपा करो। नानक विनती करते हैं कि हे परमात्मा, मुझ पर कृपा करो ताकि मैं तुम्हारा नाम लेकर जी सकूँ ।। ३ ।। प्रभु ने स्वयं भक्तजनों की रक्षा की और उन्हें अपनी शरण में लिया है। वे आठों पहर अपने परमात्मा का नाम सिमरन करते और ध्यानस्थ रहते हैं। जो परमात्मा का ध्यान करते हैं, उनका जन्म-मरण चुक जाता है और वे भवसागर से पार हो जाते हैं। वे सदा परमात्मा के कीर्तन में ही कुशल-मंगल खोजते हैं और उन्हें प्रभु की इच्छा सर्वप्रिय होती है। पूरे सतिगुरु के मिलने पर उनकी सब आशाएँ-इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं। गुरु नानक विनती करते हैं कि तब किसी प्रकार का दुःख-सन्ताप नहीं रह जाता ।। ४ ।। ३ ।।

।। रामकली महला ५ छंत ।। सलोकु ।। चरन कमल सरणागती अनद मंगल गुण गाम। नानक प्रभु आराधीऐ बिपति निवारण राम ।। १ ।। छंतु ।। प्रभ बिपति निवारणो तिसु बिनु अवरु न कोइ जीउ। सदा सदा हरि सिमरीऐ जलि थलि महीअलि सोइ जीउ। जलि थलि महीअलि पूरि रहिआ इक निमख मनहु न वीसरै। गुरचरन लागे दिन सभागे सरब गुण जगदीसरै। करि सेव सेवक दिनसुरैणी तिसु भावै सो होइ जीउ। बलि जाइ नानकु सुखह दाते परगासु मनि तनि होइ जीउ ।। १ ।। सलोकु ।। हरि सिमरत मनु तनु सुखी बिनसी

दुतीआ सोच । नानक टेक गुोपाल की गोविंद संकट मोच ॥१॥ छंतु ॥ भै संकट काटे नाराइण दइआल जीउ । हरि गुण आनंद गाए प्रभ दीनानाथ प्रतिपाल जीउ । प्रतिपाल अचुत पुरखु एको तिसहि सिउ रंगु लागा । कर चरन मसतकु मेलि लीने सदा अनदिनु जागा । जीउ पिंडु ग्रिहु थानु तिसका तनु जोबनु धनु मालु जीउ । सद सदा बलि जाइ नानक सरब जीआ प्रतिपाल जीउ ॥ २ ॥ सलोकु ॥ रसना उचरै हरि हरे गुण गोविंद वखिआन । नानक पकड़ी टेक एक परमेसरु रखै निदान ॥ १ ॥ छंतु ॥ सो सुआमी प्रभु रखको अंचलि ता कै लागु जीउ । भजु साधू संगि दइआलदेव मन की मति तिआगु जीउ । इक ओट कीजै जीउ दीजै आस इक धरणी धरै । साध संगे हरि नाम रंगे संसारु सागरु सभु तरै । जनम मरण बिकार छूटे फिरि न लागै दागु जीउ । बलि जाइ नानकु पुरख पूरन थिरु जा का सोहागु जीउ ॥ ३ ॥ सलोकु ॥ धरम अरथ अरु काम मोख मुकति पदारथ नाथ । सगल मनोरथ पूरिआ नानक लिखिआ माथ ॥ १ ॥ छंतु ॥ सगल इछ मेरी पुंनीआ मिलिआ निरंजन राइ जीउ । अनदु भइआ वडभागीहो ग्रिहि प्रगटे प्रभ आइ जीउ । ग्रिहि लाल आए पुरबि कमाए ता की उपमा किआ गणा । बेअंत पूरन सुख सहज दाता कवन रसना गुण भणा । आपे मिलाए गहि कंठि लाए तिसु बिना नही जाइ जीउ । बलि जाइ नानकु सदा करते सभ महि रहिआ समाइ जीउ ॥ ४ ॥ ४ ॥ रागु रामकली महला ५ ॥ रण झुंझनड़ा गाउ सखी हरि एकु धिआवहु । सतिगुरु तुम सेवि सखी मनि चिंदिअड़ा फलु पावहु ।

॥ सलोकु ॥ गुरु के पावन चरणों की ओट में आनन्द-मंगल-रूप परमात्मा के गुण गाएँ । नानक कहते हैं, विपत्तियों का निवारण करनेवाले प्रभु की आराधना करें ॥ १ ॥ छंतु ॥ परमात्मा विपत्तियों का निवारण करनेवाला है और उसके बिना अन्य कोई नहीं है। जल, थल और आकाश में हर जगह व्याप्त उस परमात्मा का नित्य सिमरन करिये । जल, थल, आकाश में व्याप्त वह प्रभु क्षण भर के लिए भी मन से विस्मृत न हो । सर्वगुणसम्पन्न परमात्मा का नाम स्मरण करने से हमारा भाग्य उदय होता है और जीव गुरु के चरणों में शरण पाता है। दिन-रात उसी सेव्य प्रभु की

सेवा में लगो; क्योंकि जो वह चाहता है, वही होता है। गुरु नानक कहते हैं कि दातार प्रभु पर क़ुर्बान हो जाने से तन-मन में सुख और प्रकाश छा जाता है ॥ १ ॥ सलोकु ॥ परमात्मा के स्मरण करने से तन-मन सुखी होता है और अन्य सब प्रकार की चिन्ता दूर होती है। नानक कहते हैं कि परमात्मा का आसरा लो, वही गोविन्द सब संकटों को दूर करनेवाला है ॥ १ ॥ छंतु ॥ मेरे नारायण, दयालु परमात्मा ने सब संकट काट दिये हैं। मैं आनन्दपूर्वक अपने प्रतिपालक प्रभु दीनानाथ के गुण गाता हूँ। अच्युत परमपुरुष प्रतिपालक एक परमात्मा ही है, मैं उसी के प्रेम में रँगा हूँ। उसके पाँव पकड़ने और सिर को उसके चरणों में झुकाने से उसने मुझे अपने साथ मिला लिया है और मुझे चिर-जागृति प्राप्त हुई है। यह जीव, शरीर, गृहस्थ, तन, यौवन और धन-माल सब उसी का है। नानक-मतानुसार वह सब जीवों का प्रतिपालक है, इसलिए हम सब उस पर सदा बलिहार जाते हैं ॥ २ ॥ सलोकु ॥ जीभ से हरि-नाम का सिमरन और गोविन्द के गुणों का बखान करो। गुरु नानक ने उसी एक परमेश्वर का सहारा लिया है और उसी की ओट में सुखी है ॥ १ ॥ छंतु ॥ वह स्वामी प्रभु, सबका रक्षक है। उसी का दामन थाम लो। हे भले जीव, मन की प्रेरणाओं को त्यागकर साधुओं की संगति और प्रभु का नाम अपनाओ। केवल एक ही परमात्मा का सहारा लो और धरती के सहारे परमात्मा की आशा करो। साधुओं की संगति में हरि-नाम के प्रेम द्वारा संसार-सागर को सब पार कर लेते हैं। उन जीवों के जन्म-मरण के विकार दूर हो जाते हैं और फिर उनमें कोई दोष पैदा नहीं होता। नानक उस पूर्णपुरुष पर बलिहार हैं, जिसका सुहाग स्थिर है अर्थात् शाश्वत परमात्मा पर वे न्योछावर हैं ॥ ३ ॥ सलोकु ॥ जीवन के चार पदार्थ धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सब उस परमात्मा में ही उपलब्ध हैं। नानक कहते हैं कि भाग्य से जिसे प्रभु मिल जाता है, उसके सब मनोरथ पूरे हो जाते हैं ॥ १ ॥ छंतु ॥ मायातीत ब्रह्म के मिल जाने से मेरी सब इच्छाएँ पूर्ण हो गयी हैं। सौभाग्य उदय होने से परमानन्द हुआ है और परमात्मा घर में ही प्रकट हो गये हैं। पूर्व कर्मों के फलानुसार घर में ही वह प्रभु प्राप्त हुआ है, जिसकी कोई उपमा नहीं की जा सकती। वह परमात्मा अनन्त सहज सुख देनेवाला है, उसके गुणों का गान मैं किस जिह्वा से करूँ? वह स्वयं अपने साथ मिलाता है, पकड़कर गले से लगा लेता है, उसके बिना हमारे लिए और कौन सी जगह है? गुरु नानक सदा उस कर्तार पर बलिहार हैं, जो सब जगह व्याप्त है ॥ ४ ॥ ४ ॥ रागु रामकली महला ५ ॥ हे सखियो, उस परमात्मा का ध्यान करो और मीठे-मीठे स्वर में उसकी कीर्ति गाओ। सतिगुरु की सेवा में रत रहकर मनोवांछित फलों को प्राप्त करो।

रामकली महला ५ रुती सलोकु

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। करि बंदन प्रभ पारब्रहम बाछउ साधह धूरि । आपु निवारि हरि हरि भजउ नानक प्रभ भरपूरि ।। १ ।। किलबिख काटण भै हरण सुख सागर हरि राइ । दीन दइआल दुख भंजनो नानक नीत धिआइ ।। २ ।। छंतु ।। जसु गावहु वडभागीहो करि किरपा भगवंत जीउ । रुती माह मूरत घड़ी गुण उचरत सोभावंत जीउ । गुण रंगि राते धंनि ते जन जिनी इक मनि धिआइआ । सफल जनमु भइआ तिन का जिनी सो प्रभु पाइआ । पुंन दान न तुलि किरिआ हरि सरब पापा हंत जीउ । बिनवंति नानक सिमरि जीवा जनम मरण रहंत जीउ ।। १ ।।

परब्रह्म परमेश्वर के पास वन्दना करते हुए मैं उससे सन्तों की चरण-धूल माँगता हूँ । मैं अपने अहंभाव को त्यागकर हरि-नाम का भजन करता हूँ और परमात्मा को सब स्थानों पर व्याप्त देखता हूँ ।। १ ।। परमात्मा पापों का नाश करनेवाला और भय को हरण करनेवाला है और सदैव परमसुख का दाता है । नानक कहते हैं कि वे ऐसे दीनदयालु, दुःखों को काटनेवाले प्रभु का नित्य ध्यान करते हैं ।।२।।छंतु।। हे सौभाग्यशाली जीवो, परमात्मा की कृपा पाकर उसका निरन्तर यशोगान करो । समस्त ऋतुओं, महीनों, मुहूर्तों और घड़ियों में उस शोभावान परमात्मा के गुणों का उच्चारण करो । जो जीव उसके गुणों के रंग में रँग जाते हैं, वे एकचित्त होकर उसी प्रभु का ध्यान करते हैं । उनका जन्म सफल हो जाता है और वे प्रभु को प्राप्त कर लेते हैं । पुण्य-दान करने की क्रियाएँ हरि-नाम के बराबर नहीं होतीं, क्योंकि वह तो सब पापों का अन्त कर देनेवाला है । इसीलिए गुरु नानक विनती करते हैं कि ऐ जीवो, परमात्मा का सिमरन करो, उससे जन्म-मरण का चक्र समाप्त होगा ।। १ ।।

।। सलोक ।। उदमु अगमु अगोचरो चरन कमल नमसकार । कथनी सा तुधु भावसी नानक नाम अधार ।। १ ।। संत सरणि साजन परहु सुआमी सिमरि अनंत । सूके ते हरिआ थीआ नानक जपि भगवंत ।। २ ।। छंतु ।। रुति सरस बसंत माह चेतु वैसाख सुख मासु जीउ । हरि जीउ नाहु मिलिआ मउलिआ मनु तनु सासु जीउ । घरि नाहु निहचलु अनदु सखीए चरन

कमल प्रफुलिआ। सुंदरु सुघड़ु सुजाणु बेता गुण गोविंद अमुलिआ। वडभागि पाइआ दुखु गवाइआ भई पूरन आस जीउ। बिनवंति नानक सरणि तेरी मिटी जम की त्रास जीउ ॥ २ ॥

॥ सलोक ॥ जिस उद्यम के द्वारा हरि के पवित्र चरणों में नमन किया जा सके, वही उद्यम दैवी है और वही अगम और अगोचर है। नानक का कथन है कि हे परमात्मा, तुम्हें वे ही बातें प्रिय होती हैं, जिनमें तुम्हारा नाम सदा बना रहता है॥ १॥ हे सज्जनो, सन्तों की शरण लो और अपने अनन्त ठाकुर का सिमरन करो। गुरु नानक कहते हैं कि भगवन्त का नाम जपने से सूखा जीवन भी हरा हो जाता है अर्थात् निष्क्रिय जीवन में चेतना उभरती है ॥२॥ छंतु ॥ बसन्त की सरस ऋतु चैत्र-वैशाख के महीनों में सुख देनेवाली होती है। (इस ऋतु में) हरि रूपी पति से जीवात्मा रूपी नायिका का मिलन होता है और उसका तन-मन-श्वास सब सुगन्धित हो उठता है। घर में पति के आकर रहने से अत्यन्त आनन्द की प्राप्ति होती है और जीवात्मा रूपी स्त्री पति के पावन चरण-कमलों से छूकर खुशी के आसमान को छू लेती है। मेरा पति-परमेश्वर सुन्दर, सुघड़ और सुजान है और उसके गुण भी अमूल्य हैं। उस पति को स्त्री बड़े भाग्य से प्राप्त करती है, उसे पाकर उसकी सब आशाएँ पूर्ण हो जाती हैं और पति की शरण में आने के कारण, नानक कहते हैं कि उसका यमदूतों का भय भी नष्ट हो जाता है॥ २॥

॥ सलोक ॥ साध संगति बिनु भ्रमि मुई करती करम अनेक। कोमल बंधन बाधीआ नानक करमहि लेख ॥ १ ॥ जो भाणे से मेलिआ विछोड़े भी आपि। नानक प्रभ सरणागती जा का वड परतापु ॥ २ ॥ छंतु ॥ ग्रीखम रुति अति गाखड़ी जेठ अखाड़ै घाम जीउ। प्रेम बिछोहु दुहागणी द्रिसटि न करी राम जीउ। नह द्रिसटि आवै मरत हावै महा गारबि मुठीआ। जल बाझु मछुली तड़फड़ावै संगि माइआ रुठीआ। करि पाप जोनी भैभीत होई देइ सासन जाम जीउ। बिनवंति नानक ओट तेरी राखु पूरन काम जीउ ॥ ३ ॥

॥ सलोक ॥ सन्तों की संगति पाए बग़ैर मैं अनेक कर्म-काण्डों में फँसी भ्रम-जाल में उलझी जीवन को व्यर्थ गँवा रही थी। माया-मोह के बन्धनों में मैं (जीव-स्त्री) अपने कर्मों के फलस्वरूप बँधी थी ॥१॥ जब उसकी इच्छा हुई तो उसने मुझे अपने संग मिला लिया, उसी ने बिछोड़ा भी दिया

था। गुरु नानक कहते हैं कि अब मैं उसी महाप्रतापी परमात्मा की शरण में आया हूँ ॥ २ ॥ छंतु ॥ आगामी दो महीने ज्येष्ठ और आषाढ़ में कठोर ग्रीष्म ऋतु होती है, जिसमें तीखी गर्मी का सामना करना पड़ता है। यह ग्रीष्म ऋतु प्रियतम से वियोग की प्रतीक है; प्रियतम-पति अपनी आत्मा रूपी स्त्री की ओर दृष्टि भी नहीं उठाता। क्योंकि उसे हरि रूपी पति के दर्शन नहीं होते, इसलिए वह दुःख में तड़पती है और अहंकार में लुट गयी है। उसकी दशा परमात्मा से रूठी और माया-बन्धनों में पड़ी ऐसी होती है, जैसे जल-विहीन मछली हो। वह जीवन भर पाप करने के कारण भयभीत होती है और यमदूतों के शासन में प्रताड़ित होती है। नानक विनय करते हैं कि हे परमात्मा, मुझे अपनी शरण में रखकर मेरी सब मनोकामनाएँ पूर्ण करो ॥ ३ ॥

॥ सलोक ॥ सरधा लागी संगि प्रीतमै इकु तिलु रहणु न जाइ। मन तन अंतरि रवि रहे नानक सहजि सुभाइ ॥ १ ॥ करु गहि लीनी साजनहि जनम जनम के मीत। चरनह दासी करि लई नानक प्रभ हित चीत ॥ २ ॥ छंतु ॥ रुति बरसु सुहेलीआ सावण भादवे आनंद जीउ। घण उनवि वुठे जल थल पूरिआ मकरंद जीउ। प्रभ पूरि रहिआ सरब ठाई हरि नाम नवनिधि ग्रिह भरे। सिमरि सुआमी अंतरजामी कुल समूहा सभि तरे। प्रिअ रंगि जागे नह छिद्र लागे क्रिपालु सद बखसिंदु जीउ। बिनवंति नानक हरि कंतु पाइआ सदा मनि भावंदु जीउ ॥ ४ ॥

॥ सलोक ॥ प्रियतम का प्यार जब श्रद्धामय हो जाता है, तो क्षण भर भी उसके बग़ैर जिया नहीं जाता। गुरु नानक कहते हैं कि तब प्रभु सहज में ही जीव के तन-मन में बसता है और उसके आनन्द का कारण बनता है ॥ १ ॥ साजन-प्रभु, जो जीव का जन्म-जन्म का मित्र है, उसकी बाँह पकड़कर उसे सहारा देता है और उसका हितचिन्तन करते हुए (जीवात्मा रूपी स्त्री को) अपने चरणों की दासी बना लेता है, अर्थात् चरणों में शरण देता है ॥ २ ॥ छंतु ॥ तीसरी ऋतु वर्षा की है। यह सुखदायी ऋतु सावन-भादों के महीनों में आनन्द का कारण बनती है। इस ऋतु में घटाएँ उमड़-उमड़कर बरसती हैं और जल-थल में सुगन्धि भर देती हैं। परमात्मा भी जल ही की तरह सब जगह व्याप्त है और इस प्रकार रहता है, जैसे फूलों में रस समाया रहता है। परमात्मा के नाम रूपी निधियों से हृदय रूपी घर भर जाता है। इस ऋतु में जीव को उस अन्तर्यामी प्रभु का सिमरन करना चाहिए, जिससे उसका समूचा वंश तिर जाता है। प्रिय के रंग में मग्न होकर जीव दोषमुक्त हो जाता है

और कृपालु परमात्मा सदा उस पर कृपा करता है। नानक विनती करते हैं कि प्रियतम हरि को प्राप्त कर लेनेवाला जीव मन में परम-आनन्द को पा लेता है ॥ ४ ॥

॥ सलोक ॥ आस पिआसी मै फिरउ कब पेखउ गोपाल। है कोई साजनु संत जनु नानक प्रभ मेलणहार ॥ १ ॥ बिनु मिलबे सांति न ऊपजै तिलु पलु रहणु न जाइ। हरि साधह सरणागती नानक आस पुजाइ ॥ २ ॥ छंतु ॥ रुति सरद अडंबरो असू कतके हरि पिआस जीउ। खोजंती दरसनु फिरत कब मिलीऐ गुणतास जीउ। बिनु कंत पिआरे नह सूख सारे हार कंङण ध्रिगु बना। सुंदरि सुजाणि चतुरि बेती सास बिनु जैसे तना। ईत उत दहदिस अलोकन मनि मिलन की प्रभ पिआस जीउ। बिनवंति नानक धारि किरपा मेलहु प्रभ गुणतास जीउ ॥ ५ ॥

॥ सलोक ॥ मैं इस आशा से इधर-उधर प्रभु के दर्शनों की खोज कर रही हूँ कि कभी उसके दर्शनों से मेरी प्यास बुझ सकेगी। कोई ऐसा सज्जन पुरुष हो, जो हमें सन्तों की संगति में मिला सकता हो ! ॥ १ ॥ प्रभु-प्रियतम को मिले बिना मुझे शान्ति नहीं है और क्षण भर के लिए भी मुझसे रहा नहीं जाता। नानक कहते हैं, हरि की शरण लेने पर ही मेरी आशाएँ पूर्ण हो सकती हैं ॥ २ ॥ छंतु ॥ शरत् ऋतु का आगमन असूज (कुआर) और कार्तिक के महीनों में बड़ी सज-धज से होता है। साथ ही यह ऋतु परमात्मा के प्यार की प्यास जगाती है। जीवात्मा रूपी गुनहगार स्त्री प्रभु के मिलने और उसका दर्शन पाने के लिए खोज में भटकती फिरती है। प्यारे प्रियतम के बिना उसे सब सुख धूल-समान लगते हैं और हार-कंगन आदि आभूषण व्यर्थ महसूस होते हैं। सुन्दर साजन स्वयं सब कुछ जानता है कि उसके अभाव में जीवात्मा की स्थिति प्राण-विहीन शरीर-जैसी होती है। इधर-उधर दसों दिशाओं में वह अपने प्रियतम को खोजती है, उसी के मिलन की प्यास में तड़पती है। गुरु नानक विनती करते हैं कि कृपा करके, हे गुणागार प्रभु, मुझे दर्शन दो और अपने में अन्तर्हित कर लो ॥ ५ ॥

॥ सलोक ॥ जलणि बुझी सीतल भए मनि तनि उपजी सांति। नानक प्रभ पूरन मिले दुतीआ बिनसी भ्रांति ॥ १ ॥ साध पठाए आपि हरि हम तुम ते नाही दूरि। नानक भ्रम भै

मिटि गए रमण राम भरपूरि ॥ २ ॥ छंतु ॥ रुति सिसीअर सीतल हरि प्रगटे मंघर पोहि जीउ । जलनि बुझी दरसु पाइआ बिनसे माइआ ध्रोह जीउ । सभि काम पूरे मिलि हजूरे हरि चरण सेवकि सेविआ । हार डोर सीगार सभि रस गुण गाउ अलख अभेविआ । भाउ भगति गोविंद बांछत जमु न साकै जोहि जीउ । बिनवंति नानक प्रभि आपि मेली तह न प्रेम बिछोह जीउ ॥ ६ ॥

॥ सलोक ॥ (प्रियतम के मिलन से) विरहिणी की जलन बुझ जाती है, वह शीतल हो जाती है और उसके तन-मन में शान्ति उपजती है। गुरु नानक कहते हैं कि एक तो परमात्मा की उपलब्धि होती है और दूसरे सब प्रकार की भ्रान्ति दूर हो जाती है ॥ १ ॥ परमात्मा ने यह बताने के लिए कि वह हमसे दूर नहीं है, सन्तों को इस धरा पर भेजा है। उनके दर्शन से, नानक के मतानुसार सब प्रकार के भय और भ्रम मिट गये हैं और स्वयं परमात्मा चतुर्दिक् व्याप्त हो गया है ॥ २ ॥ छंतु ॥ मगसर (अगहन) और पूस के महीनों में अति शीतल शिशिर ऋतु आती है, जिसमें जीवात्मा रूपी स्त्री प्रियतम का दर्शन पाकर सन्ताप-मुक्त होती है और मोह-माया के बन्धन टूट जाते हैं। हरि की चरण-सेवा में आकर परमात्मा के साक्षात्कार से सब कार्य सम्पन्न हो जाते हैं। उस अनन्त रहस्यमय परमात्मा के गुण गाते हुए हार-श्रृंगार का आनन्द भी जीवात्मा रूपी स्त्री को मिलने लगता है। वह अपने प्रियतम के लिए जिस भाव-भक्ति का प्रदर्शन करती है, उससे यमदूत भी उसकी ओर देखने का साहस नहीं करते। गुरु नानक कहते हैं कि जब परमात्मा आतमा को स्वयं में मिलाता है, तो कभी दुबारा वियोग नहीं होता ॥ ६ ॥

॥ सलोक ॥ हरि धनु पाइआ सोहागणी डोलत नाही चीत । संत संजोगी नानका ग्रिहि प्रगटे प्रभ मीत ॥ १ ॥ नाद बिनोद अनंद कोड प्रिअ प्रीतम संगि बने । मन बांछत फल पाइआ हरि नानक नाम भने ॥ २ ॥ छंतु ॥ हिमकर रुति मनि भावती माघु फगणु गुणवंत जीउ । सखी सहेली गाउ मंगलो ग्रिहि आए हरि कंत जीउ । ग्रिहि लाल आए मनि धिआए सेज सुंदरि सोहीआ । वणु त्रिणु त्रिभवण भए हरिआ देखि दरसन मोहीआ । मिले सुआमी इछ पुंनी मनि जपिआ निरमल मंत जीउ । बिनवंति नानक नित करहु रलीआ हरि मिले स्रीधर कंत जीउ ॥ ७ ॥

।। सलोक ।। जिस सुहागिन नारी को हरि रूपी पति मिल जाता है उसका मन स्थिर हो जाता है, वह कभी नहीं डोलती। नानक कहते हैं कि सन्तों की संगति में ही परमात्मा रूपी मित्र हृदय में ही प्रकट हो जाता है ।। १ ।। संगीत, विनोद और हर्षोल्लास, सब प्रियतम की संगति में ही मिलते हैं। नानक कहते हैं, परमात्मा के नाम का जाप करने से सबको मनोवाञ्छित फल की प्राप्ति होती है ।। २ ।। छंतु ।। माघ-फाल्गुन के महीनों में मनभावनी हिमकर ऋतु आती है। पति-प्रियतम के हृदय में वास करने की यह ऋतु कल्याणकारी है, इसलिए, ऐ सखियो, सब मंगल-गान करो। घर में पति का आगमन हुआ है, मन में उसी का ध्यान आच्छादित है और मैंने उसी के संयोग के लिए सुन्दर सेज सजायी है। उसके आगमन से तीनों लोकों की वनस्पति खिल उठी है और उसके दर्शनों ने मुझे मोहित कर लिया है। प्रभु-पति के मिलने से मेरी सब इच्छाएँ पूर्ण हो गयी हैं और मैंने उसी का निर्मल मन्त्र हृदय में जपा है। गुरु नानक विनती करते हैं कि परमात्मा-पति को पाकर जीव-स्त्री को नित्य उल्लासमय रस-भोग करना चाहिए ।। ७ ।।

।। सलोक ।। संत सहाई जीअ के भवजल तारणहार। सभ ते ऊचे जाणीअहि नानक नाम पिआर ।। १ ।। जिन जानिआ सेई तरे से सूरे से बीर। नानक तिन बलिहारणै हरि जपि उतरे तीर ।। २ ।। छंतु ।। चरण बिराजित सभ ऊपरे मिटिआ सगल कलेसु जीउ। आवण जावण दुख हरे हरि भगति कीआ परवेसु जीउ। हरि रंगि राते सहजि माते तिलु न मन ते बीसरै। तजि आपु सरणी परे चरनी सरब गुण जगदीसरै। गोविंद गुण निधि स्रीरंग सुआमी आदि कउ आदेसु जीउ। बिनवंति नानक मइआ धारहु जुगु जुगो इक वेसु जीउ ।।८।।१।।

।। सलोक ।। सब जीवों के संसार-सागर से पार होने में सन्तजन सहायी होते हैं। नानक का मत है कि हरि-नाम से प्यार करनेवाला जीव सबसे ऊँचा होता है ।। १ ।। जिन्होंने परमात्मा को पहचाना है, वे वास्तव में शूरवीर हैं और इस संसार से मुक्त हो जाते हैं। नानक कहते हैं कि हम उन पर न्योछावर हैं, जो परमात्मा का नाम जपकर किनारे जा लगते हैं ।। २ ।। छंतु ।। हरि के चरणों में मन लगाने से सब दुःख दूर हो जाते हैं, हरि-चरण ही सर्वोच्च हैं। जो लोग उनके प्रति भक्ति करते हैं, उनका आवागमन का दुःख मिट जाता है। हरि के प्रेम में रँगकर वे सहजावस्था को प्राप्त होते हैं और क्षण भर के लिए भी परमात्मा को विस्मृत नहीं करते। इसलिए, ऐ जीवो, अहंभाव का त्याग कर

जगदीश्वर के चरणों की शरण लो। वह गोविन्द सबका स्वामी है, उसी को हमारा नम्र नमन है। गुरु नानक प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभु, हम पर कृपा करो और युग-युग तक कृपा बनाए रखो ॥ ८ ॥ १ ॥

रामकली महला १ दखणी ओअंकारु

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ ओअंकारि ब्रहमा उतपति। ओअंकारु कीआ जिनि चिति। ओअंकारि सैल जुग भए। ओअंकारि बेद निरमए। ओअंकारि सबदि उधरे। ओअंकारि गुरमुखि तरे। ओनम अखर सुणहु बीचारु। ओनम अखरु त्रिभवण सारु ॥ १ ॥ सुणि पाडे किआ लिखहु जंजाला। लिखु राम नाम गुरमुखि गोपाला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ससै सभु जगु सहजि उपाइआ तीनि भवन इक जोती। गुरमुखि वसतु परापति होवै चुणि लै माणक मोती। समझै सूझै पड़ि पड़ि बूझै अंति निरंतरि साचा। गुरमुखि देखै साच समाले बिनु साचे जगु काचा ॥२॥ धधै धरमु धरे धरमापुरि गुणकारी मनु धीरा। धधै धूलि पड़ै मुखि मसतकि कंचन भए मनूरा। धनु धरणीधरु आपि अजोनी तोलि बोलि सचु पूरा। करते की मिति करता जाणै कै जाणै गुरु सूरा ॥ ३ ॥ ङिआनु गवाइआ दूजा भाइआ गरबि गले बिखु खाइआ। गुर रसु गीत बाद नही भावै सुणीऐ गहिर गंभीरु गवाइआ। गुरि सचु कहिआ अंम्रितु लहिआ मनि तनि साचु सुखाइआ। आपे गुरमुखि आपे देवै आपे अंम्रितु पीआइआ ॥४॥ एको एकु कहै सभु कोई हउमै गरबु विआपै। अंतरि बाहरि एकु पछाणै इउ घरु महलु सिञापै। प्रभु नेड़ै हरि दूरि न जाणहु एको स्रिसटि सबाई। एकंकारु अवरु नही दूजा नानक एकु समाई ॥ ५ ॥ इसु करते कउ किउ गहि राखउ अफरिओ तुलिओ न जाई। माइआ के देवाने प्राणी झूठि ठगउरी पाई। लबि लोभि मुहताजि विगूते इब तब फिरि पछुताई। एकु सरेवै ता गति मिति पावै आवणु जाणु रहाई ॥ ६ ॥

परब्रह्म परमात्मा से ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई, उसने परब्रह्म को अपने हृदय में धारण किया। परब्रह्म परमात्मा ने ही पर्वतों का निर्माण किया और युग तथा काल-खण्ड बनाए। ओंकार ने वेदों की रचना की और

उसी ने शब्द द्वारा संसार का उद्धार किया। गुरु के आदेशों पर आचरण करने से तथा ओंकार का नाम जपने से जीव तर गये। 'ओम्' अक्षर का भाव सुनिये। यह अक्षर तीन लोकों का सार है ॥ १ ॥ हे पाण्डेय, सुनो, सांसारिक जंजाल की बातें क्या लिखते हो, लिखना ही है तो गुरु-द्वारा राम-नाम लिखो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ 'स' अक्षर द्वारा प्रभु ने समूचा जगत उत्पन्न किया है और तीनों लोकों में एक ही ज्योति को स्थापित किया है। गुरु के द्वारा ही जीवात्मा नाम-पदार्थ को प्राप्त करता और मूल्यवान चीज़ों को प्राप्त कर लेता है। जीवात्मा भलीभाँति शिक्षा पाकर यह समझ लेता है कि वह सच्चा परमात्मा जीव के अन्दर ही विद्यमान है। गुरु के द्वारा ही उस साक्षात् सत्य को वह पा सकता है, उस सत्य के अतिरिक्त शेष सारा संसार कच्चा है ॥ २ ॥ 'ध' अक्षर से सत्संगति में जीवात्मा स्थिर होता है और मन में धैर्य धारण करता है। प्रभु की चरण-धूल मुख-मस्तक पर पड़ती है तो लोहा भी कंचन हो जाता है अर्थात् निकृष्ट जीव उत्कृष्ट बनता है। वह परमात्मा धन्य है, जो अयोनी है और हर प्रकार से पूर्ण और सच्चा है। कर्तार की गति स्वयं कर्तार ही जानता है या गुरु उसे पहचान सकता है ॥ ३ ॥ द्वैत-भाव को अपनाकर जीव अपने ज्ञान को गँवाता है और अभिमान का विष गले उतार लेता है। गुरु के कीर्तन का रस उसके लिए व्यर्थ होता है और गुरु के वचनों को सुनना नहीं चाहता। अपनी समूची गहनता और गम्भीरता को खो बैठता है। जो जीव, गुरु के सत्य वचन पर विश्वास लाता है, वह अमृत-नाम को प्राप्त करता है और उसके तन-मन में सच्चाई का सुख छा जाता है। गुरु के आदेश पर आचरण करने से स्वयं गुरु ही उसे नामामृत का पान करवाता है ॥ ४ ॥ एक ही बात सब महापुरुषों ने कही है कि अहंकारी व्यक्ति में अभिमान व्यापता है; किन्तु जो व्यक्ति भीतर-बाहर एक प्रभु को ही पहचानते हैं, वे ईश्वर के हुज़ूर को प्राप्त करते हैं। परमात्मा सबके निकट है, उसे दूर मत समझो; समूची सृष्टि में वही परमात्मा समाया हुआ है। वह एक परब्रह्म अद्वैत है, नानक के मतानुसार हम सबको उसी में समा जाना है ॥ ५ ॥ उस कर्तार को मैं क्योंकर पकड़ूँ, न तो वह पकड़ा जाता है और न ही तौला जा सकता है। माया के दीवाने जीव उसके द्वारा छले जा रहे हैं और मिथ्या जीवन जीते हैं। लोभ-मोह में पड़े वे निरन्तर आवश्यकताओं को बढ़ाते हैं और अब तक पछताते रहते हैं। यदि कोई उसकी आराधना करे और प्रभु की गति का अन्दाज़ा लगा सके तो वह आवागमन से मुक्त हो सकता है ॥ ६ ॥

एकु अचारु रंगु इकु रूपु। पउण पाणी अगनी असरूपु। एको भवरु भवै तिहु लोइ। एको बूझै सूझै पति होइ। गिआनु

धिआनु ले समसरि रहै। गुरमुखि एकु विरला को लहै। जिसनो देइ किरपा ते सुखु पाए। गुरू दुआरै आखि सुणाए ॥७॥ ऊरम धूरम जोति उजाला। तीनि भवण महि गुर गोपाला। ऊगविआ असरूपु दिखावै। करि किरपा अपुनै घरि आवै। ऊनवि बरसै नीझर धारा। ऊतम सबदि सवारणहारा। इसु एके का जाणै भेउ। आपे करता आपे देउ ॥ ८ ॥ उगवै सूरु असुर संघारै। ऊचउ देखि सबदि बीचारै। ऊपरि आदि अंति तिहु लोइ। आपे करै कथै सुणै सोइ। ओहु बिधाता मनु तनु देइ। ओहु बिधाता मनि मुखि सोइ। प्रभु जग जीवनु अवरु न कोइ। नानक नामि रते पति होइ ॥ ९ ॥ राजन राम रवै हितकारि। रण महि लूझै मनूआ मारि। राति दिनंति रहै रंगि राता। तीनि भवन जुग चारे जाता। जिनि जाता सो तिसही जेहा। अति निरमाइलु सीझसि देहा। रहसी रामु रिदै इक भाइ। अंतरि सबदु साचि लिव लाइ ॥ १० ॥ रोसु न कीजै अंम्रितु पीजै रहणु नही संसारे। राजे राइ रंक नही रहणा आइ जाइ जुग चारे। रहण कहण ते रहै न कोई किसु पहि करउ बिनंती। एकु सबदु राम नाम निरोधरु गुरु देवै पति मती ॥११॥ लाज मरंती मरि गई घूघटु खोलि चली। सासु दिवानी बावरी सिर ते संक टली। प्रेमि बुलाई रली सिउ मन महि सबदु अनंदु। लालि रती लाली भई गुरमुखि भई निचिंदु ॥ १२ ॥

वह परमात्मा आचार, रंग और रूप में हमेशा स्थिर है अर्थात् कर्म, रंग, रूपादि उसी के बनाये हुए हैं और वही अग्नि, पवन और पानी में भी विद्यमान है। जीवात्मा भी वही है और वही तीनों लोकों में भ्रमता है। उस एक को पहचान लेने में ही जीव को प्रतिष्ठा प्राप्त होती है। ज्ञान-ध्यान को प्राप्त करनेवाला जीवात्मा सन्तुलित होता है और कोई विरला ही जीव गुरु के द्वारा उस एक परमात्मा को प्राप्त करता है। जिस पर उसकी कृपा होती है, वह सुख पाता है और गुरु के द्वारा यथार्थ को कह सकने का सामर्थ्य प्राप्त कर सकता है ॥ ७ ॥ जल-थलादि में उसी ज्योति का प्रकाश है और तीनों लोकों में वही परमात्मा विद्यमान है। इसी प्रकाश में गुरु के द्वारा प्रकट होकर वह अपना रूप दिखाता है और कृपापूर्वक हृदय में निवास करता है। उसकी कृपा की घटाएँ झुककर निरन्तर बरसती हैं और वह अपने शब्द द्वारा सबका कल्याण करता है। जो इस अद्वैत का भेद जान लेता है, वह आप ही कर्ता के समान देवत्व

को प्राप्त होता है ।। ८ ।। जब प्रभु-नाम रूपी सूर्य उदित होता है, तो जीव कामादि दैत्यों को मार लेता है। वह ऊँची दृष्टि से शब्द पर विचार करता है, तब उसे तीनों लोकों के आदि-अन्त में वही एक परमात्मा करता, कहता और सुनता दीख पड़ता है। वह विधाता स्वयं तन-मन देनेवाला है और मन तथा मुख में वही निवास करता है। परमात्मा जगत का जीवन है, उसके अतिरिक्त और कोई नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव नाम के रंग में रँग जाता है, वह प्रतिष्ठा प्राप्त करता है ।। ९ ।। जो प्रभु का हितकारी होकर उसका नाम जपता है, वह संसार-युद्ध में डटकर मन को मार लेता है। रात-दिन प्रभु के प्रेम-रंग में मस्त रहता है; तीनों लोकों और चारों युगों में उसकी ख्याति होती है। जो उसे जान लेता है, वह उसी का रूप हो जाता है; माया-रहित होकर वह जीवन-मुक्ति प्राप्त करता है। हृदय में निरन्तर राम को बसाकर वह प्रसन्न होता है और मन में परमात्मा के शब्द पर ध्यान लगाकर वह सत्य का ज्ञान कर लेता है ।। १० ।। इसलिए वाहिगुरु से मान न करो, उसके नामामृत का पान करो; क्योंकि यह संसार मिथ्या है, इसमें हमें नहीं रहना है। राजा-रंक किसी को भी यहीं नहीं रहना है, युग-युग से यहाँ आने-जाने का नाता रहा है। कठिनाई तो यह है कि सब यहीं रहने की बातें करते हैं, मैं किसके पास अपना दुःख कह सकता हूँ, राम-नाम का एक शब्द ही ऐसा है, जिसका प्रभाव नकारा नहीं जा सकता। इसकी प्राप्ति प्रतिष्ठित बुद्धि द्वारा गुरु से होती है ।। ११ ।। मुझे संताप देनेवाली मेरी लोक-लाज मर गयी है और अब मैं प्रकट होकर माया-मुक्त-रूप में जीता हूँ। अविद्या रूपी मेरी सास पगला गयी है, इसलिए अब उसका भी मुझे भय नहीं। मेरे पति-परमेश्वर ने अब खुशी से मुझे अपने पास बुलाया है, इसलिए अब मैं गुरु के द्वारा निश्चिन्त होकर उसी के प्रेम में उन्मादिनी हो रही हूँ (इस पद में गुरुजी ने माया-मुक्त जीव की चर्चा की है, जो प्रेम-विभोर होकर अपने प्रभु में लीन हो जाता है।) ।। १२ ।।

लाहा नामु रतनु जपि सारु। लबु लोभु बुरा अहंकारु। लाड़ी चाड़ी लाइतबारु। मनमुखु अंधा मुगधु गवारु। लाहे कारणि आइआ जगि। होइ मजूरु गइआ ठगाइ ठगि। लाहा नामु पुंजी वेसाहु। नानक सची पति सचा पातिसाहु ।। १३ ।। आइ विगूता जगु जम पंथु। आई न मेटण को समरथु। आथि सैल नीच घरि होइ। आथि देखि निवै जिसु दोइ। आथि होइ ता मुगधु सिआना। भगति बिहूना जगु बउराना। सभ

महि वरतै एको सोइ। जिस नो किरपा करे तिसु परगटु होइ ॥ १४ ॥ जुगि जुगि थापि सदा निरवैरु। जनमि मरणि नही धंधा धैरु। जो दीसै सो आपे आपि। आपि उपाइ आपे घट थापि। आपि अगोचरु धंधै लोई। जोग जुगति जगजीवनु सोई। करि आचारु सचु सुखु होई। नाम विहूणा मुकति किव होई ॥ १५ ॥ विणु नावै वेरोधु सरीर। किउ न मिलहि काटहि मन पीर। वाट वटाऊ आवै जाइ। किआ ले आइआ किआ पलै पाइ। विणु नावै तोटा सभ थाइ। लाहा मिलै जा देइ बुझाइ। वणजु वापारु वणजै वापारी। विणु नावै कैसी पति सारी ॥ १६ ॥ गुण वीचारे गिआनी सोइ। गुण महि गिआनु परापति होइ। गुणदाता विरला संसारि। साची करणी गुर वीचारि। अगम अगोचरु कीमति नही पाइ। ता मिलीऐ जा लए मिलाइ। गुणवंती गुण सारे नीत। नानक गुरमति मिलीऐ मीत ॥ १७ ॥ कामु क्रोधु काइआ कउ गालै। जिउ कंचन सोहागा ढालै। कसि कसवटी सहै सु ताउ। नदरि सराफ वंनीस चड़ाउ। जगतु पसू अहंकालु कसाई। करि करतै करणी करि पाई। जिनि कीती तिनि कीमति पाई। होर किआ कहीऐ किछु कहणु न जाई ॥ १८ ॥

हरि-नाम रूपी रत्न को जपना ही वास्तविक लाभ है। लोभ, मोह और अहंकार बुरे हैं। किसी को लगाकर कोई बात कहना, चिढ़ाने के लिए किसी से छेड़खानी करना या चुगली खाना मनमुख जीवों का कार्य है, जो आज्ञानान्ध और मूर्ख होते हैं। संसार में जीव का आगमन सच्चा लाभ कमाने के लिए हुआ है, किन्तु यह जीव मज़दूरी में फँसकर मिथ्या जीवन-यापन करता और निरन्तर ठगा जाता है। सच्चा लाभ तो हरि-नाम की पूँजी से होता है; उसी की कमायी करने से सच्ची प्रतिष्ठा मिलती है और वह शासकों का भी शासक परमात्मा प्रसन्न होता है ॥१३॥ संसार में आकर जीव यम के रास्ते पर चलने से नाश को प्राप्त होता है। माया के प्रभाव को मिटाने के लिए किसी में सामर्थ्य नहीं। इसकी कृपा (माया) यदि नीच पर भी हो जाए, तो अमीर-ग़रीब दोनों उसके सामने झुकते हैं। उसकी कृपा से मूर्ख-गँवार भी सूझवान माने जाते हैं, किन्तु भक्ति के बिना सारा संसार व्यर्थ भटक रहा है (और माया की कृपा का पात्र बनना चाहता है)। वास्तव में सबमें एक परमात्मा ही व्याप्त है; जिस पर वह कृपा करता है, उस पर अपने आप को प्रकट कर देता

है ।। १४ ।। युग-युग से वह निर्वैर प्रभु स्थिर है । वह जन्म-मरण से मुक्त है और सांसारिक धन्धों में नहीं फँसता । जो कुछ भी दृश्यमान है, वह उसी का रूप है । उसी ने उसे उत्पन्न किया है और उसी की कृपा से संसार में सब कुछ स्थापित है । वह स्वयं इन्द्रियातीत है, जबकि समूचा जगत अनेक धन्धों में लगा हुआ है । वह जगत का जीवन परमात्मा योग की युक्तियों में भी है और उत्तम कर्मों में भी वही विद्यमान है । नाम-विहीन जीव को कभी मुक्ति प्राप्त नहीं होती, उच्चारण से ही सच्चा सुख मिलता है ।। १५ ।। हरि-नाम के बिना शरीर अनियन्त्रित हो जाता है; इसलिए क्यों न प्रभु-नाम का सहारा लिया जाए, ताकि मन की पीड़ा कट जाए । इस रास्ते पर जीव रूपी पथिक बार-बार आता-जाता है । वह क्या लेकर आता है और यहाँ क्या कमा लेता है ? नाम के बिना सब घाटा ही घाटा है । किसी प्रकार का कोई लाभ नहीं मिलता । जीव रूपी व्यापारी का सही व्यापार हरि-नाम की पूँजी से ही होता है, उसके बिना उसकी प्रतिष्ठा नहीं हो सकती ।। १६ ।। जो जीव प्रभु के गुणों का विचार करता है, वही ज्ञानी है । हरि के गुणों में से ही ज्ञान प्राप्त होता है । संसार में कोई विरला ही जीव गुणों का दाता होता है और गुरु के आदेशानुसार सच्ची करनी करता है । वह प्रभु और उसके गुण अगम और अगोचर हैं, उसकी क़ीमत नहीं पायी जा सकती । वही जीव उसे प्राप्त कर सकता है, जिसे वह स्वयं अपने निकट मिला लेता है । नानक कहते हैं, गुणवान आत्मा नित्य उसके गुणों को याद करता है और गरु के बताए हुए मार्ग पर आचरण करते हुए अपने परममित्र हरि से मिल जाता है । (गुणों का सही विचार यही है कि बुरे कार्यों को छोड़ दिया जाए, क्योंकि शरीर के भोगों में पड़े रहने से जीव निःशक्त और बेकार हो जाता है, उसे गुरु के आश्रय हरि-नाम की शरण लेनी चाहिए, जिससे वह अमर होता है) ।। १७ ।। काम-क्रोधादि विकार शरीर को उसी तरह गला देते हैं, जैसे सोने को सुहागा पिघला देता है । सोना भी जब कसौटी पर कसा जाता है और अग्नि का ताप सहन करता है, तभी सराफ़ की दृष्टि में खरा उतरता है (इसीलिए शरीर के कंचन को खरा बनाए रखने के लिए काम-क्रोधादि विकारों से बचना चाहिए) । जगत पशु-रूप है और अहंकार रूपी क़साई काल का रूप है । उसने सृष्टि की रचना करके जीवों के हाथ ही उनकी करनी सौंप दी है, अर्थात् जो जैसा करते हैं वैसा फल पाते हैं । जिस परमात्मा ने सृष्टि की रचना की है, वही इसका मूल्यांकन कर सकता है । और कोई क्या कह सकता है, कुछ कहा नहीं जाता ।। १८ ।।

खोजत खोजत अंम्रितु पीआ । खिमा गही मनु सतगुरि दीआ ।

खरा खरा आखै सभु कोइ । खरा रतनु जुग चारे होइ । खात पीअंत मूए नही जानिआ । खिन महि मूए जा सबदु पछानिआ । असथिरु चीतु मरनि मनु मानिआ । गुर किरपा ते नामु पछानिआ ।। १९ ।। गगन गंभीरु गगनंतरि वासु । गुण गावै सुख सहजि निवासु । गइआ न आवै आइ न जाइ । गुरपरसादि रहै लिव लाइ । गगनु अगंमु अनाथु अजोनी । असथिरु चीतु समाधि सगोनी । हरि नामु चेति फिरि पवहि न जूनी । गुरमति सारु होर नाम बिहूनी ।। २० ।। घर दर फिरि थाकी बहुतेरे । जाति असंख अंत नही मेरे । केते मात पिता सुत धीआ । केते गुर चेले फुनि हूआ । काचे गुर ते मुकति न हूआ । केती नारि वरु एकु समालि । गुरमुखि मरणु जीवणु प्रभ नालि । दहदिस ढूढि घरै महि पाइआ । मेलु भइआ सतिगुरू मिलाइआ ।। २१ ।। गुरमुखि गावै गुरमुखि बोलै । गुरमुखि तोलि तुोलावै तोलै । गुरमुखि आवै जाइ निसंगु । परहरि मैलु जलाइ कलंकु । गुरमुखि नाद बेद बीचारु । गुरमुखि मजनु चजु अचारु । गुरमुखि सबदु अंम्रितु है सारु । नानक गुरमुखि पावै पारु ।। २२ ।। चंचलु चीतु न रहई ठाइ । चोरी मिरगु अंगूरी खाइ । चरन कमल उरधारे चीत । चिरु जीवनु चेतनु नित नीत । चिंतत ही दीसै सभु कोइ । चेतहि एकु तही सुखु होइ । चिति वसै राचै हरि नाइ । मुकति भइआ पति सिउ घरि जाइ ।। २३ ।। छीजै देह खुलै इक गंढि । छेआनित देखहु जगि हंढि । धूप छाव जे सम करि जाणै । बंधन काटि मुकति घरि आणै । छाइआ छूछी जगतु भुलाना । लिखिआ किरतु धुरे परवाना । छीजै जोबनु जरूआ सिरि कालु । काइआ छीजै भई सिबालु ।। २४ ।।

निरन्तर खोज करने पर ही हरिनामामृत पिया जाता है; सतिगुरु से इसकी प्राप्ति तभी होती है, जब जीव विनम्रतापूर्वक क्षमाभावना ग्रहण करता है। सब कोई उसे उत्तम और उत्कृष्ट कहता है; चारों युगों में वही एकमात्र विशुद्ध रत्न है। दुनिया के जीव खाने-पीने में ही मर गये, किन्तु परमात्मा को नहीं पहचान पाए। जिन लोगों ने शब्द को पहचान लिया, वे क्षण भर में ही अहंकार से मुक्त हो गये; उनका मन स्थिर हो गया और उन्हें यह विचित्र मरण अच्छा लगा। उन पर गुरु की कृपा हुई

और उन्होंने हरि-नाम को पहचान लिया ॥१९॥ हृदय रूपी गगन में, जब आकाश-पाताल में व्याप्त वाहिगुरु आ बसा, तो उसके गुणों का कीर्तन करने से सहजानन्द प्राप्त हुआ। वह परमात्मा अयोनि है, जन्म-मरण से परे है। जीव उसमें गुरु की कृपा से ही मन लगाता है। आकाशवत् व्यापक परमात्मा सबसे ऊपर है; उसका कोई स्वामी नहीं, वह अयोनि में अयोनि है। उसमें गुण-सहित मन को लीन करना ही समाधि है। हरि-नाम को जपनेवाला जीव दुबारा योनि-चक्र में नहीं पड़ता, केवल गुरुमति ही श्रेष्ठ है, शेष सब मत हरि-नाम से विहीन है ॥ २० ॥ अनेक घरों-द्वारों पर फिरकर अब मैं थक गया हूँ, जिन जातियों में से मैं गुजरा हूँ, उनका कोई अन्त नहीं। (यहाँ आत्मा अपने जन्म-मरण पर विचार कर रहा है।) कितनी ही बार माता-पिता, पुत्र-पुत्री बना हूँ और कितनी ही बार गुरु और फिर शिष्य भी बना हूँ। किन्तु कच्चे और मिथ्या गुरु मिलने के कारण आज तक मोक्ष को नहीं प्राप्त कर सका। यह समझो कि परमात्मा ही एकमात्र पति है, उसकी अनेक स्त्रियाँ हैं और गुरुमुख जीवात्माओं अर्थात् सती स्त्रियों का मरना-जीना प्रभु-पति के साथ ही होता है। दसों दिशाओं में ढूँढ़कर भी अन्ततः उसे हृदय में ही ढूँढ़ा जा सका है, केवल सतिगुरु की कृपा से ही जीव उसे मिल पाता है ॥ २१ ॥ गुरु के आदेशों पर आचरण करनेवाला जीव परमात्मा का ही गुणगान करता है, उसी की बोली बोलता है; हरि की परख करता और करवाता है। गुरुमुख जीव निर्भय होकर जीता है, मलिनता और दोषों को दूर कर देता है। गुरुवाणी ही उसके लिए नाद-वेद का विचार है और गुरु की शरण ही उसके लिए समान सुकृत्य और आचरण है। गुरुमुख के लिए प्रभु का शब्द ही श्रेष्ठ नाम-अमृत है और गुरु नानक के मतानुसार गुरुमुख ही मोक्ष को प्राप्त करता है ॥ २२ ॥ अस्थिर-चित्त जीव कभी सही स्थान को प्राप्त नहीं करता। ऐसा जीव रूपी हरिण, बाघ रूपी वनस्पति को चरता है। किन्तु जो जीव परमात्मा के चरण-कमल को हृदय में धारण करता है, वह दीर्घायु और नित्य परम-चेतना को प्राप्त करता है। आज सब कोई चिन्तातुर दीख पड़ता है, किन्तु सुखी वही है जो एकमात्र प्रभु की चिन्ता करता है। जिन लोगों के हृदय में हरि-नाम बसता है और जो उसके प्रेम में रत रहते हैं, वे मुक्त हो जाते हैं और प्रभु के दरबार में सम्मान प्राप्त करते हैं ॥ २३ ॥ शरीर के छूटने से अवयवों की जो गाँठ बँधी थी, मानो वह खुल जाती है। इसी प्रक्रिया में जगत क्षय होता रहता है। जो दुःख-सुख को एक समान मानते हैं, वे बन्धन काटकर घर में ही मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं। माया खोखली है, फिर भी संसार उसी में बँधा है। हमारे कर्मानुसार फल आरम्भ से ही जीव को प्राप्त होता है। यौवन मिट जाता है, बुढ़ापा आता है और फिर सिर पर मृत्यु गरजने लगती है। शरीर मिट जाता है और काई

की तरह बिखर जाता है। (जैसे पानी के ऊपर जमी हुई काई पानी को हिला देने से बिखर जाती है, वैसे ही शरीर बुढ़ापे में बिखर जाता है।) ॥ २४ ॥

जापै आपि प्रभू तिहु लोइ। जुगि जुगि दाता अवरु न कोइ। जिउ भावै तिउ राखहि राखु। जसु जाचउ देवै पति साखु। जागतु जागि रहा तुधु भावा। जा तू मेलहि ता तुझै समावा। जैजैकारु जपउ जगदीस। गुरमति मिलीऐ बीस इकीस॥ २५ ॥ झखि बोलणु किआ जग सिउ वादु। झूरि मरै देखै परमादु। जनमि मूए नही जीवण आसा। आइ चले भए आस निरासा। झुरि झुरि झखि माटी रलि जाइ। कालु न चांपै हरि गुन गाइ। पाई नवनिधि हरि कै नाइ। आपे देवै सहजि सुभाइ॥ २६ ॥ जिआनो बोलै आपे बूझै। आपे समझै आपे सूझै। गुर का कहिआ अंकि समावै। निरमल सूचे साचो भावै। गुरु सागरु रतनी नही तोट। लाल पदारथ साचु अखोट। गुरि कहिआ सा कार कमावहु। गुर की करणी काहे धावहु। नानक गुरमति साचि समावहु॥ २७ ॥ टूटै नेहु कि बोलहि सही। टूटै बाह दुहू दिस गही। टूटि परीति गई बुर बोलि। दुरमति परहरि छाडी ढोलि। टूटै गंठि पड़ै वीचार। गुर सबदी घरि कारजु सारि। लाहा साचु न आवै तोटा। त्रिभवण ठाकुरु प्रीतमु मोटा॥ २८ ॥ ठाकहु मनूआ राखहु ठाइ। ठहकि मुई अवगुणि पछुताइ। ठाकुरु एकु सबाई नारि। बहुते वेस करे कूड़िआरि। पर घरि जाती ठाकि रहाई। महलि बुलाई ठाक न पाई। सबदि सवारी साचि पिआरी। साई सोहागणि ठाकुरि धारी॥ २९ ॥ डोलत डोलत हे सखी फाटे चीर सीगार। डाहपणि तनि सुखु नही बिनु डर बिणठी डार। डरपि मुई घरि आपणै डीठी कंति सुजाणि। डरु राखिआ गुरि आपणै निरभउ नामु वखाणि। डूगरि वासु तिखा घणी जब देखा नही दूरि। तिखा निवारी सबदु मंनि अंम्रितु पीआ भरपूरि। देहि देहि आखै सभु कोई जै भावै तै देइ। गुरू दुआरै देवसी तिखा निवारै सोइ॥ ३० ॥

ऐसे जीव को प्रभु के अतिरिक्त तब और कोई अन्य तीनों लोकों में

दिखायी नहीं देता। चारों युगों में वही एक दाता है और कोई नहीं। जैसे उसे रुचता है वैसे ही वह सबको रखता है। मैं अर्थात् जीव उसका गुण-कीर्तन करता है और वह प्रतिष्ठा तथा विश्वास देता है। जैसा उसे पसन्द है, वैसी ही जागृति वह सबको देता है। जब उसका मिलन होता है तो जीव उसी में समा जाता है। हे संसार के स्वामी, मैं नित्य तुम्हारी जय-जयकार करता हूँ, और गुरु-कृपा से निश्चय ही मैं तुममें विलीन हो सकूँगा ॥ २५ ॥ जो जीव माया में झख मारते हैं, वे संसार के झगड़ों में पड़े रहते हैं। यह जीव का उन्माद है, जब वह उसे देखता है तो अपने आप में दुःखी हो जाता है। वह जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है, लेकिन उसे वास्तविक जीवन की आशा नहीं होती। आने-जाने में ही उसकी आशा निराशा में बदल जाती है, संताप में दुःख उठाते-उठाते वह मिट्टी में मिल जाता है, किन्तु यदि वह हरि का गुण गाता तो काल के जबड़ों से बच सकता है। हरि के नाम से जीव को नवनिधियों की प्राप्ति होती है, जो स्वेच्छा से हरि उसे प्रदान करता है ॥ २६ ॥ प्रभु की जानकारी के लिए ज्ञान भी प्रभु से ही प्राप्त होता है। वह अपने आप हर चीज़ को समझता-बूझता है। वह गुरु का कहा सिर व आँखों पर स्वीकार करता है और निर्मल भाव से सच्चे परमात्मा को भा जाता है। गुरु सागर है, उसमें रत्नों की कोई कमी नहीं। उसके पास मूल्यवान पदार्थ अन्तहीन हैं। अतः गुरु जो भी कहता है वैसा ही करो। गुरु की बाहरी क्रियाओं पर मत जाओ, क्योंकि वे क्रियाएँ उसके बाहरी रूप को प्रस्तुत करती हैं, उसका भीतरी वास्तविक स्वरूप हमारी समझ में नहीं आता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के आदेशानुसार आचरण करते हुए सच्चे परमात्मा में लीन रहो ॥ २७ ॥ सम्मुख होकर बोलने से प्रेम टूट जाता है अर्थात् प्रभु का हुक्म मानने में ही सुख है। दो तरफ़ से खींचने पर जैसे बाँह टूट जाती है, वैसे ही बुरा बोलने से प्रीति टूट जाती है। कुबुद्धि वाली स्त्री को उसका पति छोड़ देता है। टूटी हुई गाँठ समझदारी और विचार से पुनः बाँधी जा सकती है अर्थात् यदि मनुष्य भूल के सम्बन्ध में विचार करे तो टूटा सम्बन्ध फिर जुड़ जाता है। गुरु के शब्दों से मानव के समूचे कार्य सम्पन्न हो जाते हैं। सत्य के लाभ में कभी कमी नहीं आती, इसी से तीनों लोकों का स्वामी परमात्मा प्रकट दीख पड़ने लगता है ॥ २८ ॥ ऐ जीवो, अपने मन को एक स्वामी में स्थिर कर के रखो। संसार के लोग बेकार ही आपस में टकरा-टकराकर मरते हैं। वह स्वामी ही एकमात्र पुरुष है, अन्य सब लोग स्त्रीवत् हैं और मिथ्या भाव से अलग-अलग रूप धारण करते हैं। पराये घर में प्रेम लगाने पर इस जीवात्मा रूपी स्त्री को रोका गया है, किन्तु अपने प्रियतम के महल में जाने पर इसे कोई नहीं रोकता। शब्द के द्वारा शृंगारित और

सत्य के द्वारा स्वीकृत सुहागिनी जीवात्मा रूपी स्त्री प्रभु-पति के द्वारा सनाथ कर दी जाती है ॥२९॥ इधर-उधर भटकने और बहकने के कारण आत्मा रूपी स्त्री के प्रभु-मिलन के आधार सब नष्ट हो जाते हैं। ईर्ष्या में सुख नहीं मिलता, और प्रभु के भय के बिना सब तत्त्व नष्ट हो जाता है। दुनिया के भय से आत्मा का जब बुरा हाल हो जाता है और वहाँ अपने स्वामी का आश्रय ढूँढ़ने लगती है, तो उस पर प्रभु की कृपादृष्टि होती है। गुरु से उसे निर्भय हरि-नाम प्राप्त होता है और उसकी सब दुबिधा दूर हो जाती है। आत्मा रूपी स्त्री महसूस करती है कि जब तक वह अहंकार रूपी पर्वत पर रहती थी, तब तक उसे तृष्णा परेशान करती थी; किन्तु जब उसने गुरु की सहायता से आँख खोलकर देखा, तो परमात्मा को अपने निकट ही हृदय में प्राप्त कर लिया। तब समूची तृष्णा दूर हो गयी और हरि-नामामृत मन में भर गया है। परमात्मा के द्वार पर सब जीव उसकी कृपा की माँग करते हैं; किन्तु जिस पर उसकी इच्छा होती है, उसी पर कृपा करता है। गुरु के आदेशों पर आचरण करनेवाले पर प्रभु की कृपा भी होती है और उसकी तृष्णा भी दूर हो जाती है ॥ ३० ॥

ढंढोलत ढूढत हउ फिरी ढहि ढहि पवनि करारि। भारे ढहते ढहि पए हउले निकसे पारि। अमर अजाची हरि मिले तिनकै हउ बलि जाउ। तिन की धूड़ि अघुलीऐ संगति मेलि मिलाउ। मनु दीआ गुरि आपणै पाइआ निरमल नाउ। जिनि नामु दीआ तिसु सेवसा तिसु बलिहारै जाउ। जो उसारे सो ढाहसी तिसु बिनु अवरु न कोइ। गुर परसादी तिसु संम्हला ता तनि दूखु न होइ ॥ ३१ ॥ णा को मेरा किसु गही णा को होआ न होगु। आवणि जाणि विगूचीऐ दुबिधा विआपै रोगु। णाम विहूणे आदमी कलर कंध गिरंति। विणु नावै किउ छूटीऐ जाइ रसातलि अंति। गणत गणावै अखरी अगणतु साचा सोइ। अगिआनी मतिहीणु है गुर बिनु गिआनु न होइ। तूटी तंतु रबाब की वाजै नही विजोगि। विछुड़िआ मेलै प्रभू नानक करि संजोग ॥ ३२ ॥ तरवरु काइआ पंखि मनु तरवरि पंखी पंच। ततु चुगहि मिलि एक से तिन कउ फास न रंच। उडहि त बेगुल बेगुले ताकहि चोग घणी। पंख तुटे फाही पड़ी अव गुणि भीड़ बणी। बिनु साचे किउ छूटीऐ हरि गुण करमि मणी। आपि छडाए छूटीऐ वडा आपि धणी। गुरपरसादी छूटीऐ किरपा आपि करेइ। अपणै हाथि वडाईआ जै भावै तै

देइ ॥ ३३ ॥ थर थर कंपै जीअड़ा थान विहूणा होइ । थानि मानि सचु एकु है काजु न फीटै कोइ । थिरु नाराइणु थिरु गुरू थिरु साचा बीचारु । सुरि नर नाथह नाथु तू निधारा आधारु । सरबे थान थनंतरी तू दाता दातारु । जह देखा तह एकु तू अंतु न पारावारु । थान थनंतरि रवि रहिआ गुर सबदी वीचारि । अणमंगिआ दानु देवसी वडा अगम अपारु ॥ ३४ ॥ दइआ दानु दइआलु तू करि करि देखणहारु । दइआ करहि प्रभ मेलि लैहि खिन महि ढाहि उसारि । दाना तू बीना तुही दाना कै सिरि दानु । दालद भंजन दुख दलण गुरमुखि गिआनु धिआनु ॥३५॥ धनि गइऐ बहि झूरीऐ धन महि चीतु गवार । धनु विरली सचु संचिआ निरमलु नामु पिआरि । धनु गइआ ता जाण देहि जे राचहि रंगि एक । मनु दीजै सिरु सउपीऐ भी करते की टेक । धंधा धावत रहि गए मन महि सबदु अनंदु । दुरजन ते साजन भए भेटे गुर गोविंद । बनु बनु फिरती ढूढती बसतु रही घरि बारि । सतिगुरि मेली मिलि रही जनम मरण दुखु निवारि ॥ ३६ ॥

प्रभु की खोज में मैं बहुत भटका हूँ, किन्तु संसार-सागर के किनारे पर ही गिरकर रह गया हूँ। जिनके पास पापों का बोझ था, वह वहीं गिरे रहे; किन्तु जो पाप-मुक्त थे वे पार निकल गये। उन्हें अमर और अतुल हरि की प्राप्ति हो गयी, मैं उनके बलिहार जाता हूँ। उनकी चरण-धूल से ही मोक्ष की प्राप्ति होती है और जीव सतिसंगति का लाभ पा जाता है। जिन्होंने अपने गुरु के माध्यम से अपना मन परमात्मा के हवाले कर दिया है, उन्हें निर्मल हरि-नाम की प्राप्ति हुई है। जिसने परमात्मा का नाम दिया है, मैं उसी की सेवा करूँगा और उसी पर न्योछावर हो जाऊँगा। जो बनाता है, वही गिराता भी है, उसके बिना दूसरा कोई नहीं। गुरु की कृपा से मैं उसी का स्मरण करता हूँ, मुझे किसी प्रकार का दुःख नहीं हो सकता ॥ ३१ ॥ (उस परमात्मा के अतिरिक्त) मेरा कोई नहीं, मैं किसकी शरण लूँ ? न कोई है, न कोई होगा। आवागमन में ही जीव पीड़ित होता रहता है और दुबिधा के रोग में कष्ट उठाता है। नाम-विहीन जीव बालू की दीवार की तरह गिर जाते हैं। नाम के बिना किसी प्रकार से बचाव नहीं, अन्ततः जीव को रसातल में जाना होता है। जीव उस अनन्त परमात्मा को गिनती के अक्षरों द्वारा बखानता है। वह ही उसकी अज्ञानता और मतिहीनता है, क्योंकि गुरु के बिना ज्ञान नहीं

होता। परमात्मा से बिछुड़े हुए जीव टूटे हुए तार वाले रबाब की तरह होते हैं, केवल परमात्मा ही कोई सुअवसर बनाकर उन्हें संयोग का सुख प्रदान करता है ।।३२।। शरीर एक पेड़ है और मन इस पर विहार करने वाला पक्षी है। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ अन्य पक्षी हैं। ये पाँचों एक परमात्मा से मिलकर तत्त्वज्ञान का दाना चुगते हैं और इन्हें कोई फन्दा नहीं डालता। जो ज़्यादा शीघ्रता करते हैं और अधिक दाना देखकर जल्दी-जल्दी उड़ते हैं, उनके पक्ष टूट जाते हैं; वे फन्दे में फँसते हैं और इसी अवगुण के कारण उन पर मुसीबत आती है। सच्चे परमात्मा के बिना वे उस फन्दे से नहीं छूट पाते। हरि-गुण रूपी मणि परमात्मा की कृपा से ही प्राप्त होती है। वह स्वामी जिसे चाहे, उसे बन्धन-मुक्त कर सकता है। गुरु की कृपा से परमात्मा का प्रसाद भी प्राप्त होता है, क्योंकि उसकी इच्छा सर्वोपरि है, चाहे जिस पर कृपा करे ।। ३३ ।। जब जीव स्थान-च्युत होता है, तो थर-थर काँपता है। स्थान और सम्मान में स्थिर रहनेवाला एक परमात्मा ही है, उसके अपने पक्ष में होने से बना हुआ कार्य कभी नहीं बिगड़ता। वह परमात्मा, उसी का स्वरूप गुरु और उत्तम आध्यात्मिक विचार सदा स्थिर रहते हैं। देवों, मनुष्यों और ऋषि-मुनियों का स्वामी एकमात्र परमात्मा ही है, वह निराश्रितों का आश्रय है। सभी स्थानों पर वह व्याप्त है और सबका दाता है। जहाँ भी दृष्टि उठती है, वहाँ तू ही तू है, तेरा कोई अन्त नहीं। उस सर्वव्यापक को सिर्फ़ गुरु-शब्दों द्वारा ही विचारा जा सकता है। वह इतना महान् है कि बिन माँगे ही सबको देता है ।। ३४ ।। हे परमात्मा, तुम दयालु हो, दया का दान करनेवाले हो और सबकी सम्हाल करते हो। यदि तुम्हारी दया हो तो क्षण भर में ही जीव तुममें विलीन होता है; तुम ही बनाने और विनाश करनेवाले हो। तुम्हीं ज्ञाता हो, दर्शक हो और दाताओं के दाता हो। तुम निर्धन के धन हो, दुःखों को दूर करनेवाले हो और गुरु-कृपा से ज्ञान-ध्यान के प्रदायक हो ।। ३५ ।। धन के नाश से लोग बहुत दुःखी होते हैं, मूर्खों का चित्त हमेशा धन में ही लगा रहता है। पवित्र हरि-नाम रूपी धन तो कोई विरला ही संचित करता है। यदि उस धन से जीव का प्यार हो जाए, तो बाहरी धन नष्ट होने पर भी जीव पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। मन देने और सिर सौंपने के बाद भी समर्पित जीव केवल परमात्मा का सहारा ढूँढ़ता है। परिणामतः दुनिया-धन्धे चुक जाते हैं और मन में प्रभु के शब्द का आनन्द गूँजने लगता है। जीव दुर्जन से सज्जन बन जाता है और परमात्मा से मिलाप प्राप्त करता है। जिस वस्तु को पहले जंगल-जंगल ढूँढ़ता था, उसी को जीव घर में ही प्राप्त कर लेता है। सतिगुरु की कृपा से सत्य से उसका मिलाप हो जाता है और वह जन्म-मरण के दुःखों से मुक्त हो जाता है ।। ३६ ।।

ना ना करत न छूटीऐ विणु गुण जमपुरि जाहि। ना तिसु एहु न ओहु है अवगुणि फिरि पछुताहि। ना तिसु गिआनु न धिआनु है ना तिसु धरमु धिआनु। विणु नावै निरभउ कहा किआ जाणा अभिमानु। थाकि रही किव अपड़ा हाथ नही ना पारु। ना साजन से रंगुले किसु पहि करी पुकार। नानक प्रिउ प्रिउ जे करी मेले मेलणहारु। जिनि विछोड़ी सो मेलसी गुर कै हेति अपारि॥ ३७॥ पापु बुरा पापी कउ पिआरा। पापि लदे पापे पासारा। पर हरि पापु पछाणै आपु। ना तिसु सोगु विजोगु संतापु। नरकि पड़ंतउ किउ रहै किउ बंचै जम कालु। किउ आवण जाणा वीसरै झूठु बुरा खैकालु। मनु जंजाली वेड़िआ भी जंजाला माहि। विणु नावै किउ छूटीऐ पापे पचहि पचाहि॥ ३८॥ फिरि फिरि फाही फासै कऊआ। फिरि पछुताना अब किया हूआ। फाथा चोग चुगै नही बूझै। सतगुरु मिलै त आखी सूझै। जिउ मछुली फाथी जम जालि। विणु गुर दाते मुकति न भालि। फिरि फिरि आवै फिरि फिरि जाइ। इक रंगि रचै रहै लिव लाइ। इव छूटै फिरि फास न पाइ॥ ३९॥ बीरा बीरा करि रही बीर भए बैराइ। बीर चले घरि आपणै बहिण बिरहि जलि जाइ। बाबुल कै घरि बेटड़ी बाली बालै नेहि। जे लोड़हि वरु कामणी सतिगुरु सेवहि तेहि। बिरलो गिआनी बूझणउ सतिगुरु साचि मिलेइ। ठाकुर हाथि वडाईआ जै भावै तै देइ। बाणी बिरलउ बीचारसी जे को गुरमुखि होइ। इह बाणी महापुरख की निज घरि वासा होइ॥ ४०॥ भनि भनि घड़ीऐ घड़ि घड़ि भजै ढाहि उसारै उसरे ढाहै। सर भरि सोखै भी भरि पोखै समरथ वेपरवाहै। भरमि भुलाने भए दिवाने विणु भागा किआ पाईऐ। गुरमुखि गिआनु डोरी प्रभि पकड़ी जिन खिंचै तिन जाईऐ। हरिगुण गाइ सदा रंगि राते बहुड़ि न पछोताईऐ। भभै भालहि गुरमुखि बूझहि ता निज घरि वासा पाईऐ। भभै भउजलु मारगु विखड़ा आस निरासा तरीऐ। गुरपरसादी आपो चीन्है जीवतिआ इव मरीऐ॥ ४१॥ माइआ माइआ करि मुए माइआ किसै न साथि। हंसु चलै उठि डुमणो माइआ भूली आथि। मनु

झूठा जमि जोहिआ अवगुण चलहि नालि। मन महि मनु उलटो मरै जे गुण होवहि नालि। मेरी मेरी करि मुए विणु नावै दुखु भालि। गड़ मंदर महला कहा जिउ बाजी दीबाणु। नानक सचे नाम विणु झूठा आवण जाणु। आपे चतुरु सरूपु है आपे जाणु सुजाणु॥ ४२॥

नाना प्रकार के कर्म-काण्ड करते हुए गुण-विहीन जीव मुक्ति-लाभ नहीं कर सकता, उसे यमपुर जाना ही पड़ता है। गुणहीन जीव के लिए न यह लोक सार्थक है, न परलोक में उसकी गति है; केवल पश्चात्ताप ही उसके हाथ आता है। ऐसे निकृष्ट जीव में धर्म की प्रवृत्ति नहीं होती और न ही कोई ज्ञान-ध्यान होता है। परमात्मा के नाम के बिना कोई निर्भय नहीं हो सकता और अहंकार के दुःख को उक्त कोटि का जीव समझ नहीं पाता। इसीलिए वह इधर-उधर भटकता हुआ थक जाता है, उसे संसार-सागर के आर-पार या गहराई का कोई अनुमान नहीं हो पाता। प्रभु-प्रियतम से उसका प्यार भी नहीं होता, सहायता के लिए किसको पुकारें। गुरु नानक कहते हैं कि यदि वह प्रिय-प्रिय करके व्याकुलता से अपने प्यारे को पुकारे, तो सम्भवतः वह मिलाने में समर्थ परमात्मा उसे भी अपने साथ मिला ले। जो वियोग देता है, वही गुरु की कृपा से संयोग भी प्रदान कर सकता है॥ ३७॥ यद्यपि पाप बुरी चीज़ है, तो भी पापी को प्रिय होती है; क्योंकि वह पाप की ही लदान करता है और पाप का ही व्यापार करता है। यदि वह पाप-कर्म को छोड़कर अपने आप को पहचाने अर्थात् आत्म-ज्ञान प्राप्त करे, तो उसका समस्त शोक, वियोग और सन्ताप दूर हो जाता है। नरकों में जाता हुआ जीव क्योंकर बच सकता है, यमकाल को क्योंकर टाल सकता है, अपने आवागमन से क्योंकर मुक्त हो सकता है और क्षय करनेवाले मिथ्या कर्मों से क्यों बच सकता है? मन के फन्दों ने उसे घेर रखा है और वह जगत-जाल में फँसा हुआ है। प्रभु के नाम के बिना वह क्योंकर मुक्त हो सकता है? वह तो पापों के जाल में फँसा ही गल-सड़ जाता है॥ ३८॥ कौए-जैसी मलिन वृत्ति वाला जीव बार-बार फन्दे में फँसता है, पछताता है और अपने कर्मों पर स्वार्थांध होकर विचार करता है। दाना चुगने के लोभ में उसे फन्दा दिखायी नहीं देता; यदि वह किसी सच्चे गुरु की शरण ले, तो उसकी ज्ञान की आँख खुल जाती है। उसकी स्थिति यम के जाल में फँसी मछली के समान होती है। गुरु के बिना उसकी मुक्ति की कोई आशा नहीं की जा सकती; वह बार-बार जन्म और मरण के चक्र में फँसा रहता है। यदि वह एक प्रभु से प्यार बना ले और उसी के रंग में रँग जाए, तो वह ऐसी मुक्ति को प्राप्त कर लेता है कि दुबारा कभी

नहीं फँसता ।। ३९ ।। (इस पद में आत्मा को भाई और शरीर को बहिन कहा गया है। मरते समय जब आत्मा बिछुड़ने लगता है, तो बहिन उसे पुकारती है, किन्तु आत्मा रूपी भाई उसे पहचानता भी नहीं। आत्मा अपने घर चला जाता है और शरीर रूपी बहिन उसके विरह में जलकर राख हो जाती है।) हे भाई, हे भाई, करके वह पुकारती है, किन्तु भाई पराया-सा बनकर उसे पहचानता भी नहीं। भाई अपने सच्चे घर की ओर चला जाता है और बहिन उसके विरह में तड़प-तड़पकर जल मरती है। पिता के घर में अर्थात् संसार में जीव रूपी स्त्री विवाह-योग्य कन्या है। वह लड़की परमात्मा रूपी पति से मिलना चाहती है; किन्तु जो वर उसे अपेक्षित है, उसके लिए गुरु की सहायता आवश्यक होती है। कोई विरला जीव ही सतिगुरु को खोजकर सच्चाई का ज्ञान प्राप्त करता है अर्थात् कोई विरली कामिनी ही मन-चाहा पति प्राप्त कर पाती है। परमात्मा के हाथ सब प्रकार का सामर्थ्य है, चाहे जिसकी मनोकामना पूरी करे। गुरु के आदेशानुसार आचरण करने पर कोई विरला जीव ही गुरुवाणी को विचारता है। यह महापुरुषों की वाणी जो सही तौर पर विचार लेता है, वह अपने सच्चे घर में निवास करने लगता है ।। ४० ।। परमात्मा, सर्जन और विसर्जन दोनों कलाओं में समर्थ है। वह बनाता और तोड़ता है, नाश के बाद फिर निर्माण करता है। संसार-सागर को भरकर सुखा देता है, सूखे को फिर भरता है अर्थात् वह जीवों को पैदा करता है, मारता है और फिर पैदा करता है। वह सब बातों में समर्थ है और बेपरवाह है। जो जीव भ्रम में भटकते रहते हैं, वे माया के उन्माद में जीते हैं; भाग्यहीन होने के कारण उन्हें कुछ प्राप्त नहीं होता। गुरु के आदेशों पर आचरण करनेवाला जीव ज्ञानवान् होता है, उसकी डोरी प्रभु के हाथ होती है; वह जिधर खींचता है, उधर खिचता है। वह हरि का गुण गाते हुए उसी के प्यार में रँग जाता है, पुनः उसे कोई पश्चात्ताप नहीं होता। गुरु के द्वारा जब वह परमात्मा को खोजता और पा लेता है, तब वह परमात्मा में ही लीन हो जाता है। संसार-सागर का मार्ग कठिन है, यहाँ आशा और निराशा में जीव उलझा रहता है, किन्तु यदि गुरु की कृपा से वह अपने को पहचान ले तो उसे जीवन-मुक्ति प्राप्त होती है ।। ४१ ।। सारा संसार माया-माया की रट लगा रहा है, किन्तु माया किसी का साथ नहीं देती। आत्मा रूपी हंस यहाँ से उदास होकर उड़ जाता है, किन्तु माया यहीं भूली रहती है। मन झूठा है, दुःखी करता है और सदैव अवगुणों को बढ़ाता है, किन्तु जो जीव संसार से मन को विरक्त कर ले, वह गुणवान् हो जाता है। संसार के जीव मेरी-मेरी करते हुए मर जाते हैं; हरि-नाम के बिना दुःखी होते हैं। गढ़, प्रासाद और भव्य-भवन कहाँ रह जाते हैं; सारी दीवानी ही जुए की बाज़ी मात्र है।

गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा के सच्चे नाम के बिना आत्मा का आवागमन भी मिथ्या है। प्रभु स्वयं चतुर है, सुन्दर है और सबकी जान-पहचान रखनेवाला है ॥ ४२ ॥

जो आवहि से जाहि फुनि आइ गए पछुताहि। लख चउरासीह मेदनी घटै न वधै उताहि। से जन उबरे जिन हरि भाइआ। धंधा मुआ विगूती माइआ। जो दीसै सो चालसी किस कउ मीतु करेउ। जीउ समपउ आपणा तनु मनु आगै देउ। असथिरु करता तू धणी तिसही की मै ओट। गुण की मारी हउ मुई सबदि रती मनि चोट ॥ ४३ ॥ राणा राउ न को रहै रंगु न तुंगु फकीरु। वारी आपो आपणी कोइ न बंधै धीर। राहु बुरा भीहावला सर डूगर असगाह। मै तनि अवगण झुरि मुई विणु गुण किउ घरि जाह। गुणीआ गुण ले प्रभ मिले किउ तिन मिलउ पिआरि। तिन ही जैसी थी रहां जपि जपि रिदै मुरारि। अवगुणी भरपूर है गुण भी वसहि नालि। विणु सतगुर गुण न जापनी जिचरु सबदि न करे बीचारु ॥ ४४ ॥ लसकरीआ घर संमले आए वजहु लिखाइ। कार कमावहि सिरि धणी लाहा पलै पाइ। लबु लोभु बुरिआईआ छोडे मनहु विसारि। गड़ि दोही पातिसाह की कदे न आवै हारि। चाकरु कहीऐ खसम का सउहे उतर देइ। वजहु गवाए आपणा तखति न बैसहि सेइ। प्रीतम हथि वडिआईआ जै भावै तै देइ। आपि करे किसु आखीऐ अवरु न कोइ करेइ ॥ ४५ ॥ बीजउ सूझै को नही बहै दुलीचा पाइ। नरक निवारणु नरह नरु साचउ साचै नाइ। वणु त्रिणु ढूढत फिरि रही मन महि करउ बीचारु। लाल रतन बहु माणकी सतिगुर हाथि भंडारु। ऊतमु होवा प्रभु मिलै इक मनि एकै भाइ। नानक प्रीतम रसि मिले लाहा लै परथाइ। रचना राचि जिनि रची जिनि सिरिआ आकारु। गुरमुखि बेअंतु धिआईऐ अंतु न पारावारु ॥ ४६ ॥ ड़ाड़ै रूड़ा हरि जीउ सोई। तिसु बिनु राजा अवरु न कोई। ड़ाड़ै गारुड़ु तुम सुणहु हरि वसै मन माहि। गुरपरसादी हरि पाईऐ मतु को भरमि भुलाहि। सो साहु साचा जिसु हरि धनु रासि। गुरमुखि पूरा तिसु साबासि। रूड़ी बाणी हरि पाइआ

गुर सबदी बीचारि। आपु गइआ दुखु कटिआ हरि वरु पाइआ नारि ॥ ४७ ॥ सुइना रुपा संचीऐ धनु काचा बिखु छारु। साहु सदाए संचि धनु दुबिधा होइ खुआरु। सचिआरी सचु संचिआ साचउ नामु अमोलु। हरि निरमाइलु ऊजलो पति साची सचु बोलु। साजनु मीतु सुजाणु तू तू सरवरु तू हंसु। साचउ ठाकुरु मनि वसै हउ बलिहारी तिसु। माइआ ममता मोहणी जिनि कीती सो जाणु। बिखिआ अंम्रितु एकु है बूझै पुरखु सुजाणु ॥ ४८ ॥

संसार में जो पैदा होता है, उसकी मृत्यु अवश्यम्भावी है, जीव आवागमन में ही पछताता रहता है। उनके लिए चौरासी लाख योनियों वाली यह सृष्टि है जो कभी घटती-बढ़ती नहीं। जिन्हें परमात्मा चाहता है, वे लोग मुक्त हो जाते हैं, कामनाएँ नाश होने पर माया अपने आप चुक जाती है। संसार में जो कुछ भी दृश्य है, वह सब नश्वर है, मित्र किसे बनाया जा सकता है। ऐसा मित्र, जिसे तन-मन-प्राण सब कुछ अर्पित किया जा सके, कहाँ मिल सकता है? हे मालिक, तुम ही सबको स्थिर करनेवाले हो, इसलिए मैं तुम्हारी ही ओट लेता हूँ। अहंभाव केवल हरि-गुण-गान से ही मरता है और परमात्मा के शब्द से प्यार करने पर मन जाग्रत् होता है ॥ ४३ ॥ संसार में मृत्यु सबको खा जाती है; राजा-रंक, अमीर-फ़क़ीर, कोई नहीं बच पाता; सब अपनी-अपनी बारी से दुनिया से चले जाते हैं, कोई उन्हें नहीं रोक सकता। मृत्यु का रास्ता बड़ा भयानक है, उस मार्ग पर असीम पर्वत और तालाब हैं। मैं अपने अवगुणों के कारण व्यग्र-भाव से सन्ताप उठा रहा हूँ। गुणों के बग़ैर किसी को मोक्ष सम्भव नहीं। गुणी जीव तो गुणों के कारण प्रभु से मिलता है, किन्तु मैं किस प्रकार प्यार धारण करके उस तक पहुँच सकता हूँ। यह तो तभी सम्भव होगा, जब मैं हृदय में परमात्मा का नाम जप-जपकर मुक्त-आत्माओं जैसी करनी करूँ। दुनिया में असंख्य अवगुण हैं, गुण भी वहीं साथ-साथ बसते हैं; किन्तु सतिगुरु की सहायता के बिना गुणों पर विचार नहीं किया जा सकता और न ही गुणों को ग्रहण किया जा सकता है ॥ ४४ ॥ सेना के सैनिक हर समय आदेशपालन के लिए तैयार रहते हैं और उनका वेतन यथासमय उनके घर की देख-रेख के लिए पहुँचता रहता है। वे स्वामी के नाम पर हर प्रकार का कार्य करते हैं और लाभ उठाते हैं। लोभ, मोह आदि बुराइयों को मन से त्याग देते हैं। ये शरीर परमात्मा का दुर्ग है, इसमें बैठकर युद्ध की योजना करनेवाले कभी पराजित नहीं होते। उन्हें आप परमात्मा का सेवक

कहिये, वे कभी प्रभु का सामना नहीं करते (विरोध नहीं करते), वे अहम्-भाव का त्याग कर देते हैं और कभी अपने को साधारण से ऊँचे पद का नहीं समझते। प्रियतम-परमात्मा के हाथ सब प्रतिष्ठा बनी है, वह जिसे चाहे उसे प्रदान करता है। ऐसा वह स्वयं करता है, कोई अन्य नहीं करता, इसलिए किसी को भी दोष नहीं दिया जा सकता ॥ ४५ ॥ परमात्मा के अतिरिक्त दूसरा ऐसा कोई नहीं दीखता जो इस शासन को सम्हाल सके। सांसारिक नरक को वह परमात्मा ही दूर कर सकता है, जिसका नाम भी सच्चा है। मैं जंगल-जंगल उसको ढूँढ़ता रहा, मन में उसी के विचारों में खोया रहा, किन्तु रत्नों का वह भण्डार मुझे नहीं मिल सका। उस भण्डार की चाबी सतिगुरु के हाथ है, यदि मैं जीवन में उत्तमता को अपना लूँ और स्थिर-चित्त होकर एक परमात्मा को ही अपना लूँ तो प्रभु से मिलाप हो सकता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा की उपलब्धि केवल प्यार से ही सम्भव है और तभी जीवों का परलोक सँवर सकता है। जिस मालिक ने सृष्टि की रचना की है और संसार के सभी आकारों का निर्माण किया है, उस अनन्त का कोई पारावार नहीं, केवल गुरु के आश्रय में ही उसका ध्यान किया जा सकता है और अन्ततः उसकी उपलब्धि हो सकती है ॥ ४६ ॥ 'ड़' अक्षर परमात्मा के सौन्दर्य का द्योतक है, क्योंकि उसके बिना संसार में और कोई शान सम्भव नहीं है। 'ड़' अक्षर का विषमारक मन्त्र अर्थात् गुरु-मन्त्र को सुनने से मन में हरि-नाम का वास होता है। गुरु की कृपा से ही परमात्मा की उपलब्धि होती है, इसमें किसी को कोई संशय नहीं होना चाहिए। वही जीव सच्चा साहूकार है, जिसके पास हरि-नाम रूपी धन की राशि होती है, वही सच्चा गुरुमुख होता है, वही सराहनीय है। गुरु के शब्दों को विचार कर सुन्दर वाणी द्वारा ही हरि को पाया जा सकता है, तब आत्मा रूपी स्त्री का अहम्भाव दूर हो जाता है, संकट कट जाते हैं और उसे हरि रूपी पति की प्राप्ति होती हैं ॥ ४७ ॥ लोग सोना-चाँदी एकत्रित करते हैं, किन्तु यह धन मिथ्या है, विष और राख के समान होता है। धन संचित करके वे साहूकार कहलाते हैं, किन्तु द्वैत-भाव में संलग्न होने के कारण अन्ततः पछताते हैं। किन्तु सच्चे लोग सत्य का संग्रह करते हैं और अमूल्य हरि-नाम को प्राप्त करते हैं। हरि का नाम निर्मल और उज्ज्वल है, उसका सम्मान और वाणी भी सच्ची है। वही हमारा साजन, मित्र और मार्ग-प्रदर्शक है; वही सरोवर है और वही हंस भी है। जिसके हृदय में ऐसा सच्चा स्वामी निवास करता है, मैं उस पर न्योछावर हूँ। माया, ममता और मोह की साकारता है, जिसने उसे बनाया है वही रहस्य को जानता है; किन्तु जो परमपुरुष परमात्मा को ही जान लेता है, उसके लिए अमृत और विष अर्थात् दुःख और सुख सब समान हो जाते हैं ॥४८॥

खिमा विहूणे खपि गए खूहणि लख असंख। गणत न आवै किउ गणी खपि खपि मुए बिसंख। खसमु पछाणै आपणा खूलै बंधु न पाइ। सबदि महली खरा तू खिमा सचु सुख भाइ। खरचु खरा धनु धिआनु तू आपे वसहि सरीरि। मनि तनि मुखि जापै सदा गुण अंतरि मनि धीर। हउमै खपै खपाइसी बीजउ वथु विकारु। जंत उपाइ विचि पाइअनु करता अलगु अपारु ॥ ४९ ॥ स्रिसटे भेउ न जाणै कोइ। स्रिसटा करै सु निहचउ होइ। संपै कउ ईसरु धिआईऐ। संपै पुरबि लिखे की पाईऐ। संपै कारणि चाकर चोर। संपै साथि न चालै होर। बिनु साचे नही दरगह मानु। हरि रसु पीवै छुटै निदानि ॥ ५० ॥ हेरत हेरत हे सखी होइ रही हैरानु। हउ हउ करती मै मुई सबदि रवै मनि गिआनु। हार डोर कंकन घणे करि थाकी सीगारु। मिलि प्रीतम सुखु पाइआ सगल गुणा गलि हारु। नानक गुरमुखि पाईऐ हरि सिउ प्रीति पिआरु। हरि बिनु किनि सुखु पाइआ देखहु मनि बीचारि। हरि पड़णा हरि बुझणा हरि सिउ रखहु पिआरु। हरि जपीऐ हरि धिआईऐ हरि का नामु अधारु ॥ ५१ ॥ लेखु न मिटई हे सखी जो लिखिआ करतारि। आपे कारणु जिनि कीआ करि किरपा पगु धारि। करते हथि वडिआईआ बूझहु गुर बीचारि। लिखिआ फेरि न सकीऐ जिउ भावी तिउ सारि। नदरि तेरी सुखु पाइआ नानक सबदु वीचारि। मनमुख भूले पचि मुए उबरे गुर बीचारि। जि पुरखु नदरि न आवई तिस का किआ करि कहिआ जाइ। बलिहारी गुर आपणे जिनि हिरदै दिता दिखाइ ॥ ५२ ॥ पाधा पड़िआ आखीऐ बिदिआ बिचरै सहजि सुभाइ। बिदिआ सोधै ततु लहै राम नाम लिव लाइ। मनमुखु बिदिआ बिक्रदा बिखु खटे बिखु खाइ। मूरखु सबदु न चीनई सूझ बूझ नह काइ ॥ ५३ ॥ पाधा गुरमुखि आखीऐ चाटड़िआ मति देइ। नामु समालहु नामु संगरहु लाहा जग महि लेइ। सची पटी सचु मनि पड़ीऐ सबदु सु सारु। नानक सो पड़िआ सो पंडितु बीना जिसु राम नामु गलि हारु ॥ ५४ ॥ १ ॥

जिन जीवों में क्षमा का भाव नहीं है, उनका समुदाय सदा सन्ताप में मरता है। उनकी गणना सम्भव नहीं है, वे असंख्य यों ही खप जाते हैं; किन्तु क्षमाशील जीव अपने मालिक को पहचान लेते हैं, उनके बन्धन खुल जाते हैं और फिर वे बन्धनयुक्त नहीं होते। वे लोग शब्द द्वारा पवित्र होकर परमात्मा के घर में प्रवेश करने के अधिकारी हो जाते हैं और क्षमा तथा सत्य के गुण उनमें अपने आप उभर जाते हैं। इसलिए तुम ध्यान रूपी धन का व्यय करो, तब तुम अपने आप परमात्मा के दरबार में स्थिति प्राप्त कर लोगे। ऐसे में तन-मन सुखी हो जाता है। हृदय में गुणों का निवास होता है और मन में धैर्य उपजता है। परमात्मा के बिना अन्य सब चीज़ें बेकार हैं, उनमें पड़नेवाला जीव अहम्भाव में ही खप जाता है। उस परमात्मा ने ही सारे जीवों को पैदा कर, अपना आप उनमें स्थिर किया है और सबको अलग-अलग रूप-आकार भी दिया है ॥ ४९ ॥ सृष्टि रचनेवाले का भेद कोई नहीं जानता। जो कुछ वह स्रष्टा करता है, वह निश्चय ही पूर्ण होता है। जो लोग धन के लोभ में ईश्वर का ध्यान करते हैं, वे भटके हुए जीव हैं, क्योंकि धन-सम्पत्ति तो पूर्व लिखे कर्मानुसार मिलती है। धन के लिए नौकरी या चोरी करने का क्या लाभ, धन तो कभी साथ नहीं चलता। सच्चे हरि-प्रेम के बिना परमात्मा के दरबार में सम्मान प्राप्त नहीं होता। आखिर छुटकारा तो परमात्मा के प्रेम से ही होता है ॥ ५० ॥ ज्ञानयुक्त अवस्था में वैचित्र्य देख-देखकर आत्मा को आश्चर्य होता है। उसके भीतर अहम् का भाव नष्ट हो जाता है और मन में वह प्रभु का स्मरण करता है। बाहर के श्रृंगार-प्रसाधन हार-कंगनादि से विरक्ति हो जाती है और जीव आध्यात्मिक गुणों की माला पहनकर प्रियतम के मिलन-सुख को पा जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि से हमारा प्यार गुरु के द्वारा ही होता है। मन में विचारकर देखो कि हरि के अतिरिक्त किससे सुख प्राप्त हो सकता है। इसलिए जीव का पढ़ना और बूझना केवल हरि-नाम ही होना चाहिए। उसी से मन में प्यार उपजना चाहिए। हरि को जपना, हरि का ध्यान करना और एकमात्र उसी का सहारा लेना जीव का लक्ष्य है ॥ ५१ ॥ परमात्मा ने मनुष्य के कर्मों में जो लिखा है, वह कभी मिट नहीं सकता। जिसने इस समूचे कारण को बनाया है, वही कृपापूर्वक हृदय में स्वयं प्रवेश करता है। उसी के हाथ हमारा सम्मान और प्रतिष्ठा है। आप विचारपूर्वक विश्लेषण करके देख लें! भाग्य का लेख बदला नहीं जा सकता, जैसे भी हो वह तो पूर्ण होकर रहेगा। गुरु नानक के मतानुसार शब्द का विचार करने से जीव परमात्मा की कृपा द्वारा सुख प्राप्त करता है। मनमुख भटकते हैं और भटकते ही रह जाते हैं। गुरुमुख सही ज्ञान प्राप्त कर मुक्ति को पा लेते हैं। जिसे परमपुरुष दीख नहीं पड़ता,

उसके सम्बन्ध में क्या बयान किया जाए ? मैं तो अपने गुरु पर न्योछावर हूँ, जिसने मुझे हृदय में ही प्रभु को दिखा दिया है ।। ५२ ।। पण्डित-पाधे, जो अपने को ज्ञानवान् कहते हैं, सहज ही अपनी विद्या की डींग मारते हैं । किन्तु वे सच्ची विद्या का ज्ञान नहीं रखते, जिसका अनुष्ठान करने से ज्ञानतत्त्व की प्राप्ति होती है और परमात्मा में ध्यान लगता है । मनमुख जीव विद्या कहकर उसका विक्रय करता है, जिसके व्यापार में विष ही विष खाने-कमाने का अवसर रह जाता है । ऐसा पण्डित मूर्ख है, उसे किसी प्रकार की कोई सूझ-बूझ नहीं ।। ५३ ।। सच्चा पण्डित वही है, जो गुरु के आदेशानुसार आचरण करता है और जिज्ञासुओं को ज्ञान-दान देता है । वहाँ हरि-नाम का संग्रह करता है, हरि-नाम का ही व्यापार करता है और संसार में सच्चे लाभ को प्राप्त करता है । श्रेष्ठ-चित्त होकर उत्तम शब्द की विद्या को वह मन में धारण करता है । गुरु नानक कहते हैं कि वही व्यक्ति सच्चा पढ़ा-लिखा पण्डित है, जो सदैव राम-नाम को कण्ठ लगाए रखता है ।। ५४ ।। १ ।।

रामकली महला १ सिध गोसटि

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। सिध सभा करि आसणि बैठे संत सभा जैकारो । तिसु आगै रहरासि हमारी साचा अपर अपारो । मसतकु काटि धरी तिसु आगै तनु मनु आगै देउ । नानक संतु मिलै सचु पाईऐ सहज भाइ जसु लेउ ।। १ ।। किआ भवीऐ सचि सूचा होइ । साच सबद बिनु मुकति न कोइ ।। १ ।। रहाउ ।। कवन तुमे किआ नाउ तुमारा कउनु मारगु कउनु सुआओ । साचु कहउ अरदासि हमारी हउ संत जना बलि जाओ । कह बैसहु कह रहीऐ बाले कह आवहु कह जाहो । नानकु बोलै सुणि बैरागी किआ तुमारा राहो ।। २ ।। घटि घटि बैसि निरंतरि रहीऐ चालहि सतिगुर भाए । सहजे आए हुकमि सिधाए नानक सदा रजाए । आसणि बैसणि थिरु नाराइणु ऐसी गुरमति पाए । गुरमुखि बूझै आपु पछाणै सचे सचि समाए ।। ३ ।। दुनीआ सागरु दुतरु कहीऐ किउकरि पाईऐ पारो । चरपटु बोलै अउधू नानक देहु सचा बीचारो । आपे आखै आपे समझै तिसु किआ उतरु दीजै । साचु कहहु तुम पारगरामी तुझु किआ बैसणु दीजै ।। ४ ।। जैसे जल महि

कमलु निरालमु मुरगाई नैसाणे। सुरति सबदि भवसागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे। रहहि इकांति एको मनि वसिआ आसा माहि निरासो। अगमु अगोचरु देखि दिखाए नानकु ता का दासो॥ ५॥ सुणि सुआमी अरदासि हमारी पूछउ साचु बीचारो। रोसु न कीजै उतरु दीजै किउ पाईऐ गुरदुआरो। इहु मनु चलतउ सच घरि बैसै नानक नामु अधारो। आपे मेलि मिलाए करता लागै साचि पिआरो॥ ६॥ हाटी बाटी रहहि निराले रूखि बिरखि उदिआने। कंद मूलु अहारो खाईऐ अउधू बोलै गिआने। तीरथि नाईऐ सुखु फलु पाईऐ मैलु न लागै काई। गोरखपूतु लोहारीपा बोलै जोग जुगति बिधि साई॥ ७॥ हाटी बाटी नीद न आवै पर घरि चितु न डोलाई। बिनु नावै मनु टेक न टिकई नानक भूख न जाई। हाटु पटणु घरु गुरू दिखाइआ सहजे सचु वापारो। खंडित निद्रा अलप अहारं नानक ततु बीचारो॥ ८॥

[कहते हैं कि अचलबटाला तथा गोरखहाट में गुरु नानक की मुलाक़ात अपनी यात्राओं के दौरान सिद्ध-योगियों से हुई। योगियों से जो चर्चा गुरु नानक ने की, वही इस वाणी 'सिद्ध-गोष्ठी' में दी गयी है। यह वाणी सम्वाद-रूपा है, इसमें दोनों दलों के प्रश्न और उत्तर प्रस्तुत करते हुए गुरु नानक ने अपने दार्शनिक दृष्टिकोण को स्पष्ट किया है।]
(सिद्ध-योगी गुरु नानक की सभा में आये और) सभा में आकर सिद्ध आसन लगाकर बैठ गये और बोले कि उस सन्त-सभा को उनका नमस्कार है। (गुरु नानक ने उत्तर दिया कि) हम तो केवल उस परमसत्य अपार प्रभु को ही नमस्कार करते हैं; अपना शीश काटकर उसकी भेंट चढ़ाते हैं और तन-मन उसी को समर्पित करते हैं। परमसन्तों के मिलाप से ही वह सत्यस्वरूप परमात्मा प्राप्त होता है और उसी से प्रतिष्ठा मिलती है॥ १॥ योगियों की तरह इधर-उधर घूमते रहने से क्या प्राप्त हो सकता है और सच्चे शब्द की प्राप्ति के बिना किसी की मुक्ति सम्भव नहीं॥ १॥ रहाउ॥ (योगियों ने पूछा—) आप कौन हैं, आपका नाम क्या है, आपका पंथ और प्रयोजन क्या है? कृपा करके हमें सच-सच बताइये, यह हमारी प्रार्थना है, हम सन्तजनों पर नित्य बलिहार जाते हैं। ऐ, बालक (गुरु नानक को सम्बोधित किया गया है) तुम कहाँ रहते हो और कहाँ आते-जाते हो? गुरु नानक कहते हैं कि उन वैरागियों ने उनसे उनके पंथ के बारे में पूछा॥ २॥ (गुरु नानक ने उत्तर दिया—) जो प्रभु सबके हृदय में बसता है, हम उसी के अस्तित्व में ध्यानस्थ रहते हैं

और सतिगुरु के बताए रास्ते पर चलते हैं। सहज स्वभाव से ही हम इधर आ निकले हैं, प्रभु-प्रेरणा होगी तो यहाँ से चले जाएँगे, क्योंकि हम तो सदा प्रभु की इच्छा में चलनेवाले हैं। इस आसन पर विराजने में भी गुरु की शिक्षा के कारण हमने सदा परमात्मा को ही स्थिर माना है। जो गुरु के आदेशों पर आचरण करते हैं, वे अपने आप को पहचान लेते हैं और परम-सत्य में ही विलीन हो जाते हैं ॥ ३ ॥ (योगियों ने पुनः प्रश्न किया—) यह संसार-सागर बड़ा दुस्तर है, कहो, इससे क्योंकर पार हुआ जा सकता है ? चरपटनाथ ने कहा कि हे अवधूत नानक, इस सत्य पर प्रकाश डालो। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ योगी, तुमने इस संसार को दुस्तर कहा है, फिर भला इसका क्या उत्तर हो सकता है ? सच-सच कहो, ऐ दिव्यदृष्टि वाले महापुरुष, तुम्हें इस विचार-सारणी में क्या बहने दें ? अर्थात् तुमने तो संसार के सम्बन्ध में पहले ही फ़ैसला दे दिया है और इससे विरक्त होकर अलग हट गये हो। ऐसा करके ही तुमने अपने आप को संसार से पार हुआ मान लिया है, फिर भला तुम्हारे प्रश्न की क्या सार्थकता है ? ॥ ४ ॥ (अब गुरुजी योगी के प्रश्न का उत्तर देते हैं—) जैसे जल में कमल निर्लिप्त रहता है और जैसे मुर्ग़ाबी नदी के ऊपर तैरती है और फिर भी उसके पंख नहीं भीगते, वैसे ही संसार में निर्लेप रहना चाहिए अर्थात् संसार में रहते हुए भी विरक्त-भाव से जिएँ। अपनी आत्मा को शब्द-ब्रह्म में जोड़कर प्रभु-नाम में रमते हुए संसार-सागर को तरा जा सकता है। एकान्त-भाव से मन में हरि को बसाकर, राग में विरागी बने रहकर जो महापुरुष उस अगम, अगोचर प्रभु को देखता और दूसरे को भी दिखाने का सामर्थ्य रखता है, गुरु नानक उसकी दासता स्वीकार करते हैं ॥ ५ ॥ (योगी पुनः प्रश्न करते हुए कहते हैं,) हे स्वामी, हमारी विनती सुनो, हम सच-सच तुम्हारा विचार जानना चाहते हैं। बिना किसी प्रकार का रोष किये धैर्यपूर्वक हमें बताइए कि गुरु का सहयोग क्योंकर प्राप्त किया जा सकता है ? गुरु नानक उत्तर देते हैं कि यदि हरि-नाम का आश्रय लिया जाए, तो यह चंचल मन स्थिर हो जाता है; और सच्चे प्रभु में प्यार होने से वह अपने आप गुरु से मिलाप करवा देता है ॥ ६ ॥ (योगी कहते हैं,) हम लोग घरों और नगरों से विरक्त होकर जंगलों में और पेड़ों के नीचे निवास करते हैं, कन्द-मूल खाकर निर्वाह करते हैं और अवधूत योगियों से ज्ञान का उपदेश प्राप्त करते हैं। तीर्थों में स्नान करते, सुख रूपी फल को प्राप्त करते हैं, हमें किसी प्रकार का कोई मैल भी नहीं छू गया। मैं लोहारीपा का शिष्य गोरखनाथ कहता हूँ कि योग की वास्तविक रीति यही है अर्थात् वैराग्य का ही नाम योग है ॥ ७ ॥ (गुरुजी इस पर ताड़ना करते हुए कहते हैं—) घर, नगरादि में जीव यदि अविद्या की नींद न सोये और परनारी या परधन को देखकर उसका चित्त दोलायित न हो (तो

वही वैराग्य है), किन्तु हरि-नाम के बिना मन स्थिर नहीं होता और जीव की तृष्णा का अन्त नहीं होता। गुरु ने मेरे भीतर ही वह नगर और स्थल दिखा दिये हैं, जहाँ सहज में ही सत्य का व्यापार होता है। तत्त्व का ज्ञान हो जाने पर अविद्या की नींद अपने आप शमित हो जाती है और भोजन की अधिक आवश्यकता नहीं रहती (तृष्णा मर जाती है) ॥ ८ ॥

दरसनु भेख करहु जोगिंद्रा मुंद्रा झोली खिथा। बारह अंतरि एकु सरेवहु खटु दरसन इक पंथा। इन बिधि मनु समझाईऐ पुरखा बाहुड़ि चोट न खाईऐ। नानकु बोलै गुरमुखि बूझै जोग जुगति इव पाईऐ ॥ ९ ॥ अंतरि सबदु निरंतरि मुद्रा हउमै ममता दूरि करी। कामु क्रोधु अहंकारु निवारै गुर कै सबदि सु समझ परी। खिथा झोली भरिपुरि रहिआ नानक तारै एकु हरी। साचा साहिबु साची नाई परखै गुर की बात खरी ॥ १० ॥ ऊंधउ खपरु पंच भू टोपी। कांइआ कड़ासणु मनु जागोटी। सतु संतोखु संजमु है नालि। नानक गुरमुखि नामु समालि ॥ ११ ॥ कवनु सु गुपता कवनु सु मुकता। कवनु सु अंतरि बाहरि जुगता। कवनु सु आवै कवनु सु जाइ। कवनु सु त्रिभवणि रहिआ समाइ ॥ १२ ॥ घटि घटि गुपता गुरमुखि मुकता। अंतरि बाहरि सबदि सु जुगता। मनमुखि बिनसै आवै जाइ। नानक गुरमुखि साचि समाइ ॥ १३ ॥ किउकरि बाधा सरपनि खाधा। किउकरि खोइआ किउकरि लाधा। किउकरि निरमलु किउकरि अंधिआरा। इहु ततु बीचारै सु गुरू हमारा ॥ १४ ॥ दुरमति बाधा सरपनि खाधा। मनमुखि खोइआ गुरमुखि लाधा। सतिगुरु मिलै अंधेरा जाइ। नानक हउमै मेटि समाइ ॥ १५ ॥ सुंन निरंतरि दीजै बंधु। उडै न हंसा पड़ै न कंधु। सहज गुफा घरु जाणै साचा। नानक साचे भावै साचा ॥ १६ ॥

हे योगीराज, परमात्मा के दर्शन को ही तुम योगमत का असली भेस बनाओ तथा प्रभु के नाम की मुद्रा, झोली तथा कफनी पहनो। भीतर-बाहर छः दर्शनों को ही परमात्मा का पंथ बनाओ और अपने बारह पंथों में केवल एक परमात्मा का ही नाम जपो। यदि इस प्रकार तुम अपने मन को समझा सको तो दुबारा किसी प्रकार की चोट तुम्हें नहीं लगेगी। गुरु नानक कहते हैं कि वास्तविक योग-युक्ति को कोई गुरुमुख जीव ही समझ

सकता है ।। ९ ।। यदि हृदय में भलीभाँति शब्द का रमण हो तो वही वास्तविक मुद्रा होगी और झोली, कफनी आदि परमात्मा के भरपूर दर्शन का नाम हो तो एकमात्र हरि-नाम से जीव संसार से तर जाता है। प्रभु सच्चा है और उसी के सच्चे नाम के कारण जीव गुरु के उपदेश को परख लेता है कि वह सच्ची बात कह रहा है ।। १० ।। सांसारिक विषय-विकारों से उलटा हुआ मन खप्पर है तथा पाँच तत्त्वों के दैवी गुणों को ग्रहण करना ही टोपी है; शरीर का सजग रहना ही कुश का आसन है और मन को वश कर लेना ही लँगोटी है। सत्य, सन्तोष और संयम को अपने सेवक बना लेना आवश्यक है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसा करनेवाला जीव ही गुरु की कृपा से नाम-स्मरण कर सकता है ।। ११ ।। (योगी पुनः प्रश्न करते हैं कि) वह रहस्यमय और मुक्त परम-आत्मा कौन है ? और वह कौन है, जो भीतर और बाहर से जुड़ा हुआ है ? वह कौन सा तत्त्व है, जो जीवन में आता और जाता है; और वह कौन है, जो नित्य तीनों लोकों में समाया रहता है ? ।। १२ ।। (गुरु नानक उत्तर देते हैं कि) जो घट-घट में रमता है, वही गुप्त रहस्यमय भी है और केवल गुरुमुख जीव ही परम-मुक्त है। जो भीतर-बाहर अर्थात् तन-मन से शब्द के साथ जुड़ा हुआ है, वह भी मुक्त है। मनमुख जीव नाशवान है और जीवन में नित्य आता-जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि केवल गुरुमुख जीव ही सत्य में समा जाते हैं ।। १३ ।। (योगी पुनः प्रश्न करते हैं कि) यह जीव क्योंकर बँधा हुआ है और माया रूपी सर्पिणी ने इसे क्योंकर निगल रखा है ? यह जीव अपने आप को खोकर कैसे पुनः प्राप्त कर सकता है ? यह कैसे निर्मल हो सकता है ? अज्ञान के अन्धकार से कैसे मुक्त हो सकता है ? आप इन तत्त्वों पर विचार करके हमें गुरुवत समझाएँ ।। १४ ।। (गुरु नानक उत्तर देते हैं—) यह जीव कुबुद्धि के बन्धन में बँधा है और माया रूपी सर्पिणी ने इसे डसा हुआ है। मन के पीछे लगने से जीव सब कुछ खो बैठता है, किन्तु गुरु के आदेशों पर आचरण करने से वह पुनः प्राप्त कर लेता है। यदि जीव का सतिगुरु से मिलाप हो जाए, तो उसके अज्ञान का अन्धकार दूर हो जाता है और वह अपने अहंकार का त्याग करके उस सत्यस्वरूप प्रभु में समा जाता है ।। १५ ।। मन को यदि शून्यावस्था में टिका दो तो फिर वह नहीं डोलता, न मृत्यु होती है और न ही शरीर का अन्त होता है अर्थात् जीव जीवन-मुक्ति को पा जाता है। सहजावस्था को जब जीव अपना घर बना लेता है तो, गुरु नानक कहते हैं, वह स्वयं सत्यस्वरूप परमात्मा के समान सत्यस्वरूप हो जाता है ।। १६ ।।

किसु कारणि ग्रिहु तजिओ उदासी। किसु कारणि इहु

भेखु निवासी। किसु वखर के तुम वणजारे। किउकरि साथु लंघावहु पारे ॥ १७ ॥ गुरमुखि खोजत भए उदासी। दरसन कै ताई भेख निवासी। साच वखर के हम वणजारे। नानक गुरमुखि उतरसि पारे ॥ १८ ॥ कितु बिधि पुरखा जनमु वटाइआ। काहे कउ तुझु इहु मनु लाइआ। कितु बिधि आसा मनसा खाई। कितु बिधि जोति निरंतरि पाई। बिनु दंता किउ खाईऐ सारु। नानक साचा करहु बीचारु ॥ १९ ॥ सतिगुर कै जनमे गवनु मिटाइआ। अनहति राते इहु मनु लाइआ। मनसा आसा सबदि जलाई। गुरमुखि जोति निरंतरि पाई। त्रैगुण मेटे खाईऐ सारु। नानक तारे तारणहारु ॥ २० ॥ आदि कउ कवनु बीचारु कथीअले सुंन कहा घर वासो। गिआन की मुद्रा कवन कथीअले घटि घटि कवन निवासो। काल का ठीगा किउ जलाईअले किउ निरभउ घरि जाईऐ। सहज संतोख का आसणु जाणै किउ छेदे बैराईऐ। गुर कै सबदि हउमै बिखु मारै ता निजघरि होवै वासो। जिनि रचि रचिआ तिसु सबदि पछाणै नानकु ता का दासो ॥ २१ ॥ कहा ते आवै कहा इहु जावै कहा इहु रहै समाई। एसु सबद कउ जो अरथावै तिसु गुर तिलु न तमाई। किउ ततै अविगतै पावै गुरमुखि लगै पिआरो। आपे सुरता आपे करता कहु नानक बीचारो। हुकमे आवै हुकमे जावै हुकमे रहै समाई। पूरे गुर ते साचु कमावै गति मिति सबदे पाई ॥ २२ ॥ आदि कउ बिसमादु बीचारु कथीअले सुंन निरंतरि वासु लीआ। अकलपत मुद्रा गुर गिआनु बीचारीअले घटि घटि साचा सरब जीआ। गुरबचनी अविगति समाईऐ ततु निरंजनु सहजि लहै। नानक दूजी कार न करणी सेवै सिखु सु खोजि लहै। हुकमु बिसमादु हुकमि पछाणै जीअ जुगति सचु जाणै सोई। आपु मेटि निरालमु होवै अंतरि साचु जोगी कहीऐ सोई ॥ २३ ॥ अविगतो निरमाइलु उपजे निरगुण ते सरगुणु थीआ। सतिगुर परचै परम पदु पाईऐ साचै सबदि समाइ लीआ। एके कउ सचु एका जाणै हउमै दूजा दूरि कीआ। सो जोगी गुर सबदु पछाणै अंतरि कमलु प्रगासु थीआ। जीवतु मरै ता सभु किछु सूझै अंतरि

जाणै सरब दइआ । नानक ताकउ मिलै वडाई आपु पछाणै सरब जीआ ।। २४ ।।

(योगियों ने पुनः पूछा—) तब, हे विरागी, तुमने किस कारण अपने घर को त्यागा है और किसलिए यह भेस बनाए घूम रहे हो ? किस सौदे का व्यापार करते हो और क्योंकर अपने अनुयायियों को संसार से पार उतरने का आह्वान करते हो ? ।। १७ ।। (गुरु नानक उत्तर देते हैं—) गुरु-पथ पर चलनेवाले गुरुमुखों की तलाश में मैंने यह उदासी-भेस बनाया है । उनका दर्शन करने के लिए ही मैंने वेश धारण किया है । सत्य के सौदे का मैं व्यापार करता हूँ और मेरा विश्वास है कि गुरु का दामन थामनेवाला प्रत्येक जीव संसार-सागर से पार उतर जाता है ।।१८।। (योगियों ने पुनः पूछा—) हे पुरुष, तुमने किस प्रकार अपने जीवन को बदल लिया है ? तुमने किसमें अपनी वृत्ति लगायी है ? आशाओं-तृष्णाओं का अन्त कैसे किया है और किस प्रकार तुमने परमात्मा की अनन्त-ज्योति को पाया है ? दाँतों के बिना कोई विचार रूपी लोहे को कैसे चबा सकता है ? हे नानक, इस तथ्य पर ठीक-ठीक विचार करो ।।१९।। (गुरु नानक बताते हैं—) अपने सतिगुरु की शरण में आकर मैंने अपने जीवन को पूर्णतः बदल लिया है अर्थात् सतिगुरु की शरण मिलने से मेरा आवागमन मिट गया है । मैंने अपना मन अनाहत नाद में जोड़ा है और शब्द की शक्ति से आशाओं, तृष्णाओं को जला दिया है । परमात्मा की अनन्त ज्योति की प्राप्ति मुझे गुरु के द्वारा हुई है । विकार रूपी लोहे के चने चबाने के लिए त्रिगुणातीत दाँतों की अपेक्षा होती है अर्थात् तीनों गुणों को मिटाकर ही विकारों से ऊँचा उठा जा सकता है । ऐसा करने से वह तारनहार प्रभु स्वयं ही संसार के बन्धन काट देता है ।। २० ।। (योगी पुनः प्रश्न करते हैं—) रचना के आरम्भ में क्या स्थिति थी ? इस सम्बन्ध में आप क्या कहते हैं ? उस समय शब्द-ब्रह्म कहाँ बसता था ? ज्ञान की मुद्राएँ क्या हैं अर्थात् ज्ञान-प्राप्ति के साधन कौन-कौन से हैं और घट-घट में कौन निवास करता है ? काल की चोट क्योंकर दूर हो सकती है और क्योंकर जीव निर्भय होकर अपने घर जा सकता है ? सहज सन्तोष का आसन कौन प्राप्त करता है ? और पंच विकार रूपी शत्रुओं को कैसे नष्ट किया जा सकता है ? (गुरु नानक उत्तर देते हैं—) जो जीव गुरु के शब्द द्वारा अपने अहंभाव रूपी विष को नष्ट कर देता है, वही अपने घर में प्रवेश पा सकता है । इस रचना के रचयिता को गुरु के शब्द द्वारा ही पहचाना जा सकता है और जो उसे पहचान लेता है, नानक उसकी दासता स्वीकार करते हैं ।। २१ ।। जीव कहाँ से आता है, कहाँ जाता है और किसमें समाता है ? इस विचार का जो अर्थ बता सके वही सच्चा गुरु है ।

उसे किसी प्रकार का किञ्चित् मात्र भी लोभ नहीं होता। (पुनः प्रश्न है कि) व्यक्तित्व-रहित वास्तविकता अर्थात् परमात्मा को कैसे पाया जाए और गुरु के द्वारा प्यार का सम्बन्ध कैसे जुड़े ? जो प्रभु स्वयं श्रोता और कर्ता है, हे नानक, उसका विचार बताओ। (गुरु नानक उत्तर देते हैं—) जीव प्रभु के हुक्म से आता है, हुक्म से ही जाता है और हुक्म में ही समाया रहता है। पूरे गुरु की शरण में आकर वह यथार्थज्ञान को प्राप्त करता है और गुरु के शब्दों द्वारा उसकी गति को जान लेता है ॥ २२ ॥ (पिछले प्रश्नों का उत्तर देते हुए नानक कहते हैं कि) आदिम अवस्था पर विचार करना मात्र विस्मय है, उसका क्या बयान किया जाए ? उस समय शून्य ने शून्य में ही वास किया था। गुरु की शिक्षा को ग्रहण कर कल्पना-रहित होना ही मुद्राएँ धारण करने के समान है और सबको जीवन देनेवाला प्रभु घट-घट में रमा हुआ है। गुरु के वचनों से ही जीव अविगत प्रभु में समा जाता है और तब सहज में ही निरञ्जन तत्त्व को प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि दूसरा कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं, गुरु-सिक्ख जिस तत्त्व का सेवन करते हैं, उसी को खोज लो। प्रभु का हुक्म अकथनीय है, उसकी पहचान प्रभु-इच्छा में जीने से ही होती है और इस प्रकार से जीवन-युक्ति का ज्ञान प्राप्त होता है। जो जीव अपने अहम् को मिटाकर संसार से निर्लिप्त हो जाता है और जिसके भीतर केवल सत्य निवास करता है, वही वास्तव में योगी है ॥२३॥ परमात्मा व्यक्ति-रहित स्थिति से स्वयं ही निर्मल रूप में प्रकट हुआ और निर्गुण से सगुण दिखने लगा। जिस जीव का मन सतिगुरु द्वारा प्रबोधित होता है, वह परमपद को प्राप्त करता है और सत्य शब्द में समा जाता है। एक परमात्मा को मात्र एक ही रूप में देखे और अहंकार और द्वैत-भाव को दूर करे, तो वह जीव सच्चा योगी बनकर गुरु के शब्द को पहचानता और अपने हृदय-कमल में परम-पावन ज्योति को जलाकर प्रकाश करता है। जीव यदि जीवित ही मरना सीख ले, तो वह सर्वज्ञाता बन जाए और सब पर दया करनेवाले परमात्मा को अपने भीतर ही देख सके। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव अपने को सभी जीवों में देखता है अर्थात् सबमें एक ही ज्योति का दर्शन करता है; परमात्मा की ओर से उसी को प्रतिष्ठा मिलती है ॥२४॥

साचौ उपजै साचि समावै साचे सूचे एक मइआ। झूठे आवहि ठवर न पावहि दूजै आवागउणु भइआ। आवागउणु मिटै गुर सबदी आपे परखै बखसि लइआ। एका बेदन दूजै बिआपी नामु रसाइणु वीसरिआ। सो बूझै जिसु आपि बुझाए गुर कै सबदि सु मुकतु भइआ। नानक तारे

तारणहारा हउमै दूजा परहरिआ ॥ २५ ॥ मनमुखि भूलै जम की काणि । पर घरु जोहै हाणे हाणि । मनमुखि भरमि भवै बेबाणि । वेमारगि मूसै मंत्रि मसाणि । सबदु न चीनै लवै कुबाणि । नानक साचि रते सुखु जाणि ॥ २६ ॥ गुरमुखि साचे का भउ पावै । गुरमुखि बाणी अघड़ु घड़ावै । गुरमुखि निरमल हरि गुण गावै । गुरमुखि पवित्रु परम पदु पावै । गुरमुखि रोमि रोमि हरि धिआवै । नानक गुरमुखि साचि समावै ॥ २७ ॥ गुरमुखि परचै बेद बीचारी । गुरमुखि परचै तरीऐ तारी । गुरमुखि परचै सु सबदि गिआनी । गुरमुखि परचै अंतर बिधि जानी । गुरमुखि पाईऐ अलख अपारु । नानक गुरमुखि मुकति दुआरु ॥ २८ ॥ गुरमुखि अकथु कथै बीचारि । गुरमुखि निबहै सपरवारि । गुरमुखि जपीऐ अंतरि पिआरि । गुरमुखि पाईऐ सबदि अचारि । सबदि भेदि जाणै जाणाई । नानक हउमै जालि समाई ॥ २९ ॥ गुरमुखि धरती साचै साजी । तिस महि ओपति खपति सु बाजी । गुर कै सबदि रपै रंगु लाइ । साचि रतउ पति सिउ घरि जाइ । साच सबद बिनु पति नही पावै । नानक बिनु नावै किउ साचि समावै ॥ ३० ॥ गुरमुखि असटसिधी सभि बुधी । गुरमुखि भवजलु तरीऐ सच सुधी । गुरमुखि सर अपसर बिधि जाणै । गुरमुखि परविरति नरविरति पछाणै । गुरमुखि तारे पारि उतारे । नानक गुरमुखि सबदि निसतारे ॥ ३१ ॥ नामे राते हउमै जाइ । नामि रते सचि रहे समाइ । नामि रते जोग जुगति बीचारु । नामि रते पावहि मोख दुआरु । नामि रते त्रिभवण सोझी होइ । नानक नामि रते सदा सुखु होइ ॥ ३२ ॥

गुरुमुख जीव सत्यस्वरूप परमात्मा से उपजते हैं और उसी में समा जाते हैं। जो सत्य के संयोग से निर्मल होते हैं, वे सत्य से एकाकार हो जाते हैं। झूठे लोग आते हैं, किन्तु द्वैत-भावना के कारण उन्हें कोई ठिकाना नहीं मिलता और अन्ततः वे आवागमन-चक्र में पड़े रहते हैं। आवागमन का नाश केवल गुरु-उपदेश से ही सम्भव है और गुरु अपने आप जीव की जाँच करता और उस पर कृपा करता है। द्वैतभाव की पीड़ा का एकमात्र निदान हरि-नाम रूपी रसायन है, किन्तु इसकी जानकारी उसी को

होती है, जो गुरु के उपदेश द्वारा जीवन-मुक्त हो चुका होता है। गुरु नानक कहते हैं कि जब जीव अहम्भाव और द्वैत-भावना का त्याग कर देता है, तो परमात्मा स्वयं उसका कल्याण करता है ॥ २५ ॥ मन की मति पर डोलनेवाला जीव काल-चक्र का मोहताज हो जाता है; वह सदैव दूसरों के धन-दारा की ओर ताकता है, जिसमें घाटा ही घाटा होता है। मनमुख जीव भ्रम के जंगलों में भटकते रहते हैं। श्मशान में मन्त्र-जाप करनेवाले योगी कुपथगामी हैं, इसलिए उनकी आध्यात्मिकता की सम्पत्ति लुट जाती है। गुरु के वचनों को नहीं समझता, दुर्वचनों का प्रयोग करता है, किन्तु नानक कहते हैं कि जो जीव सत्य के रंग में रँग जाते हैं, वे परमसुख को प्राप्त होते हैं ॥ २६ ॥ (अब गुरु नानक गुरुमुख की विशेषताएँ बताते हैं।) गुरु के आदेशानुसार आचरण करनेवाला अर्थात् गुरुमुख सत्यस्वरूप परमात्मा के भय को मानता है। गुरुमुख गुरु की वाणी द्वारा असाध्य मन को भी वश में कर लेता है। गुरुमुख निर्मल भाव से परमात्मा के गुण गाता है और पवित्र परमपद को प्राप्त करता है। गुरुमुख का रोम-रोम परमात्मा का ध्यान करता है; इसीलिए गुरु नानक कहते हैं कि गुरुमुख सत्यस्वरूप परमात्मा में ही समा जाता है ॥ २७ ॥ गुरुमुख गुरु के आदेशों द्वारा मन को साध लेता है, जो वेद-विचार द्वारा प्राप्त ज्ञान के समान है। गुरुमुख मन को साध लेने पर संसार-सागर से तर जाता है; मन के साधने से वह ज्ञानी होता है; मन के साधने से ही वह भीतर की आध्यात्मिक युक्तियों को जान लेता है। गुरुमुख जीव उस अलख अपार परमात्मा को पा लेता है, और गुरुमुख मुक्ति का वह द्वार है (जिसमें प्रवेश मिल जाने से परमशान्ति प्राप्त होती है) ॥ २८ ॥ गुरुमुख विवेक और अभ्यास द्वारा अकथनीय तत्त्वों का भी कथन कर सकता है, गुरुमुख परिवार-सहित रहते हुए भी परम की साधना करता है। गुरुमुख मन में प्रेम-भाव को धारण कर प्रभु का नाम जपता है और गुरु के द्वारा शब्द और आचार को प्राप्त करता है। शब्द द्वारा विंधकर वह स्वयं परम का जानकार हो जाता है और यह जानकारी दूसरों को भी दे सकता है। नानक कहते हैं कि गुरुमुख अहम्भाव को जलाकर स्वयं प्रभु में लीन हो जाता है ॥ २९ ॥ गुरुमुख-स्तर को प्राप्त करने के लिए स्वयं परमात्मा ने धरातल तैयार किया है। उस धरातल पर जीवों का पैदा होना या मरना स्वयं परमात्मा का खेल है। गुरुमुख गुरु के शब्दों और प्रेम के रंग में रँगा होता है; परमसत्य में लीन होने के कारण वह ससम्मान अपने घर जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि सच्चे शब्द के बिना किसी को प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं होती और न ही प्रभु-नाम के बिना कोई परमसत्य में लीन हो सकता है ॥ ३० ॥ गुरुमुख गुरु का अनुयायी होने के कारण आठों सिद्धियाँ और विवेक को प्राप्त करता है; सत्य की

जानकारी होने के कारण गुरुमुख भवसागर से पार हो जाता है। गुरुमुख को अच्छे और बुरे की जानकारी होती है, वह ग्रहण और त्याग की स्थितियों को जानता है। गुरुमुख औरों को भवसागर से पार करता है, किन्तु गुरु नानक कहते हैं कि वह जीवों का निस्तार गुरु की शब्द-शक्ति से करता है (अपनी किसी ताक़त से नहीं) ॥ ३१ ॥ वह हरि-नाम में रँगा होता है, जिससे उसके अहम्भाव का नाश हो जाता है। नाम में रँगा होने से वह सत्यस्वरूप ब्रह्म में लीन होता है। नाम में प्रवृत्त होने से ही योग की युक्ति में वह सफल होता है और हरि-नाम के कारण ही वह मोक्ष के द्वार तक पहुँच जाता है। हरि-नाम के प्यार से उसे तीनों लोकों की सूझ प्राप्त होती है, इसीलिए गुरु नानक कहते हैं कि नाम से प्यार करने के कारण सदा सुख होता है ॥ ३२ ॥

नामि रते सिध गोसटि होइ। नामि रते सदा तपु होइ। नामि रते सचु करणी सारु। नामि रते गुण गिआन बीचारु। बिनु नावै बोलै सभु वेकारु। नानक नामि रते तिन कउ जैकारु ॥ ३३ ॥ पूरे गुर ते नामु पाइआ जाइ। जोग जुगति सचि रहै समाइ। बारह महि जोगी भरमाए संनिआसी छिअ चारि। गुर कै सबदि जो मरि जीवै सो पाए मोख दुआरु। बिनु सबदै सभि दूजै लागे देखहु रिदै बीचारि। नानक वडे से वडभागी जिनी सचु रखिआ उरधारि ॥ ३४ ॥ गुरमुखि रतनु लहै लिव लाइ। गुरमुखि परखै रतनु सुभाइ। गुरमुखि साची कार कमाइ। गुरमुखि साचे मनु पतीआइ। गुरमुखि अलखु लखाए तिसु भावै। नानक गुरमुखि चोट न खावै ॥ ३५ ॥ गुरमुखि नामु दानु इसनानु। गुरमुखि लागै सहजि धिआनु। गुरमुखि पावै दरगह मानु। गुरमुखि भउ भंजनु परधानु। गुरमुखि करणी कार कराए। नानक गुरमुखि मेलि मिलाए ॥ ३६ ॥ गुरमुखि सासत्र सिम्रिति बेद। गुरमुखि पावै घट घटि भेद। गुरमुखि वैर विरोध गवावै। गुरमुखि सगली गणत मिटावै। गुरमुखि राम नाम रंगि राता। नानक गुरमुखि खसमु पछाता ॥ ३७ ॥ बिनु गुर भरमै आवै जाइ। बिनु गुर घाल न पवई थाइ। बिनु गुर मनूआ अति डोलाइ। बिनु गुर त्रिपति नाही बिखु खाइ। बिनु गुर बिसीअरु डसै मरि वाट। नानक गुर बिनु घाटे घाट ॥ ३८ ॥ जिसु गुरु मिलै

तिसु पारि उतारै। अवगण मेटै गुणि निसतारै। मुकति महा सुख गुर सबदु बीचारि। गुरमुखि कदे न आवै हारि। तनु हटड़ी इहु मनु वणजारा। नानक सहजे सचु वापारा ॥ ३६ ॥ गुरमुखि बांधिओ सेतु बिधातै। लंका लूटी दैत संतापै। रामचंदि मारिओ अहिरावणु। भेदु बभीखण गुरमुखि परचाइणु। गुरमुखि साइरि पाहण तारे। गुरमुखि कोटि तेतीस उधारे ॥ ४० ॥

(आगामी कुछ पदों में गुरुजी नाम या शब्द का अभ्यास करने के परम-फल की चर्चा करते हैं। इकतीसवाँ पद भी इसी तथ्य को प्रकट करता है।) नाम में प्रवृत्त होने से ही सिद्धों से हुई गोष्ठी सफल है अर्थात् समूची चर्चा की सार्थकता हरि-नाम में ही है। हरि-नाम का अभ्यास ही तपस्या है और यही श्रेष्ठतर कर्म है। हरि-नाम का प्यार जीव में गुणों और ज्ञान का वर्धक होता है; नाम के बिना अन्य कुछ भी बोलना व्यर्थ है। गुरु नानक कहते हैं कि जो लोग नाम में लीन होते हैं, उनका जय-जयकार होता है ॥ ३३ ॥ यह नाम का रहस्य सच्चे सतिगुरु से ही जाना जा सकता है। सत्य में समा जाना ही योग की वास्तविक युक्ति है। योगी लोग अपने बारह वर्गों और संन्यासी अपने दस सम्प्रदायों में ही भटकते रहते हैं, किन्तु जो गुरु के शब्द की जानकारी पाकर जीवित ही मृत्यु को प्राप्त कर लेता है, वह मुक्त हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि विचार कर देखो कि गुरु के शब्दों के बिना जीव द्वैतभाव में भटकते हैं; केवल वे ही भाग्यशाली हैं, जिन्होंने परमसत्य को अपने हृदय में धारण कर रखा है ॥ ३४ ॥ गुरुमुख जीव हरि-नाम रूपी रत्न में मन लगाकर प्रभु को प्राप्त करता है। इस रत्न को गुरुमुख सहज ही परख लेता है और हमेशा सत्कर्मों की कमायी करता है। गुरुमुख सत्यस्वरूप प्रभु पर विश्वास रखता है और उसकी इच्छानुसार जब हरि की कृपा होती है, तो वह अदृश्य को भी उसके प्रति दृश्य बना देता है। गुरु नानक का मत है कि इस दिशा की ओर बढ़ता हुआ जीव कभी पराजित नहीं होता ॥ ३५ ॥ गुरुमुख हरि-स्मरण, सबके साथ बाँटकर खाने तथा परिश्रम करके निर्मल कमायी करने में विश्वास रखता है। गुरुमुख सहज ही परमात्मा के ध्यान में मग्न रहता है, इसीलिए उसे परमात्मा के दरबार में प्रतिष्ठा मिलती है। गुरुमुख निर्भय होता है और सच्चे परमात्मा को प्राप्त करता है। गुरुमुख गुरु के आदेशों के अनुसार ही कृत्य करता है और परमात्मा के साथ मिलाप प्राप्त कर लेता है ॥ ३६ ॥ गुरुमुख शास्त्रों, स्मृतियों और वेदों के ज्ञान को जानता है और उसे घट-घट के भेद का ध्यान होता है अर्थात् वह अन्तर्यामी हो जाता है। गुरुमुख निजी वैर-विरोधों

का त्याग कर देता है, क्योंकि वह लोगों के व्यवहार की गिनती नहीं रखता। गुरुमुख हरि-नाम के रंग में रँग जाता है और अपने प्रभु को पहचान लेता है ।। ३७ ।। निगुरा जीव भ्रम में पड़ा आवागमन का शिकार होता है। गुरु के बिना उसका कोई भी श्रम सफल नहीं हो पाता। गुरु के बिना मन सदा दोलायमान रहता है, गुरु के बिना जीव को मायावी विष खा-खाकर कभी तृप्ति नहीं होती; गुरु के बिना विकारों का सर्प जीव को डस जाता है और वह हरि-नाम पहुँचने से पहले रास्ते में मर जाता है। इसीलिए गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के बिना हमेशा घाटा ही घाटा है ।। ३८ ।। जिसे गुरु मिल जाता है, वह इस संसार-सागर से पार उतर जाता है। उसमें गुणों का विस्तार होने से अवगुण मिट जाते हैं। गुरु के शब्दों पर विचार करने से जीव को महासुख की प्राप्ति होती है, गुरुमुख कभी पराजित होकर नहीं आता। गुरु नानक कहते हैं कि शरीर की दुकान पर मन रूपी व्यापारी सच्चाई का व्यापार करने लगता है ।।३९।। जब उसे गुरु प्राप्त हो जाता है। गुरुमुख के लिए स्वयं परमात्मा अपने और उसके बीच में पुल बना देता है, जैसा कि मुक्त जीव राम के कारण प्रभु-कृपा से सागर पर ही पुल बनाया जा सका। मन के रामचन्द्र ने देह रूपी लंका को लूट लिया और उसके भीतर काम, क्रोधादि दैत्यों का नाश किया। गुरुमुख रूपी रामचन्द्र ने अहंकार रूपी रावण को मारा और विभीषण रूपी गुरु के द्वारा वास्तविक भेद का ज्ञान प्राप्त किया। गुरुमुख उसी तरह से पापी पत्थरों को संसार-सागर में तैरा देता है, जैसे रामचन्द्र ने सागर पर पुल बनाने के लिए पत्थर तैरा दिये थे। गुरुमुख असंख्य जीवों का उद्धार कर देता है ।। ४० ।।

गुरमुखि चूकै आवण जाणु। गुरमुखि दरगह पावै माणु। गुरमुखि खोटे खरे पछाणु। गुरमुखि लागै सहजि धिआनु। गुरमुखि दरगह सिफति समाइ। नानक गुरमुखि बंधु न पाइ ।। ४१ ।। गुरमुखि नामु निरंजन पाए। गुरमुखि हउमै सबदि जलाए। गुरमुखि साचे के गुण गाए। गुरमुखि साचै रहै समाए। गुरमुखि साचि नामि पति ऊतम होइ। नानक गुरमुखि सगल भवण की सोझी होइ ।। ४२ ।। कवण मूलु कवण मति वेला। तेरा कवणु गुरू जिस का तू चेला। कवण कथा ले रहहु निराले। बोलै नानकु सुणहु तुम बाले। एसु कथा का देइ बीचारु। भवजलु सबदि लंघावणहारु ।।४३।। पवन अरंभु सतिगुर मति वेला। सबदु गुरू सुरति धुनि चेला। अकथ कथा ले रहउ निराला। नानक जुगि जुगि गुर गोपाला। एकु

सबदु जितु कथा वीचारी । गुरमुखि हउमै अगनि निवारी ।। ४४ ।। मैण के दंत किउ खाईऐ सारु । जितु गरबु जाइ सु कवणु आहारु । हिवै का घरु मंदरु अगनि पिराहनु । कवन गुफा जितु रहै अवाहनु । इत उत किस कउ जाणि समावै । कवन धिआनु मनु मनहि समावै ।। ४५ ।। हउ हउ मै मै विचहु खोवै । दूजा मेटै एको होवै । जगु करड़ा मनमुखु गावारु । सबदु कमाईऐ खाईऐ सारु । अंतरि बाहरि एको जाणै । नानक अगनि मरै सतिगुर कै भाणै ।। ४६ ।। सच भै राता गरबु निवारै । एको जाता सबदु वीचारै । सबदु वसै सचु अंतरि हीआ । तनु मनु सीतलु रंगि रंगीआ । कामु क्रोधु बिखु अगनि निवारे । नानक नदरी नदरि पिआरे ।। ४७ ।। कवन मुखि चंदु हिवै घरु छाइआ । कवन मुखि सूरजु तपै तपाइआ । कवन मुखि कालु जोहत नित रहै । कवन बुधि गुरमुखि पति रहै । कवनु जोधु जो कालु संघारै । बोलै बाणी नानकु बीचारै ।। ४८ ।।

गुरुमुख जीव का आवागमन मिट जाता है, उसे परमात्मा की दरगाह में सम्मान प्राप्त होता है। गुरुमुख जीव को खोटे-खरे की सही पहचान होती है और सहजावस्था में उसका ध्यान निरन्तर बना रहता है। परमात्मा का गुणगान करते हुए गुरुमुख जीव उसी में विलीन हो जाता है और मोह-माया के बन्धन उसका मार्ग रोधन नहीं कर सकते ।। ४१ ।। गुरुमुख मायातीत ब्रह्म के नाम का जाप करता है और गुरु के शब्द द्वारा अहंकार-भाव को जला देता है। गुरुमुख सच्चे परमात्मा के गुण गाता है और उसी में समा जाता है। सच्चे प्रभु का नाम जपने के कारण गुरुमुख को उत्तम सम्मान प्राप्त होता है और वह चौदह भुवनों और तीनों लोकों की जानकारी रखता है ।। ४२ ।। (योगियों ने पुनः प्रश्न किया—) जीवन का मूल कहाँ है और इस समय कौन सा धर्म प्रमुख कहा जाना चाहिए ? किन विचारों के कारण आप निर्लेप रहते हैं, यह भी बताइए ? योगियों ने यह भी कहा कि ऐ लड़के, यह भी बताओ कि तुमने जो संसार-सागर को शब्द द्वारा पार करने की बात कही है, वह क्योंकर सम्भव हो सकती है ? ।। ४३ ।। (गुरु नानक ने उत्तर दिया—) प्राणी ही रचना के मूल हैं और आज का धर्म सत्गुरु के प्रति समर्पण का धर्म है। शब्द स्वयं गुरु-रूप है और उसमें आत्मा को ध्यानस्थ करना ही शिष्यत्व है। मैं उस अकथनीय परमात्मा की कथा को हृदय में धारण कर, जो युग-युग में

अपरिवर्तनीय है, इस माया के संसार से निर्लिप्त रहता हूँ। गुरु नानक ने कहा कि युग-युग से परमात्मा का शब्द ही गुरु है। यही वह शब्द है, जिसके द्वारा परमात्मा का स्वरूप निश्चित किया जा सकता है। गुरु के द्वारा जीव अहंकार की अग्नि को दूर कर सकता है ॥ ४४ ॥ (योगियों ने पुनः कहा,) मोम के दाँतों से लोहा कैसे खाया जा सकता है, अर्थात् आत्मिक निर्मलता के रहते, अहंकार का नाश कैसे किया जा सकता है ? जिसमें से अहम् दूर हो गया हो, उसका आहार क्या होगा, जबकि यह दुनिया बर्फ़ का घर है और इसमें अग्नि का लिबास पहने रहते हैं अर्थात् तामसी मन बर्फ़ की तरह नाशवान् शरीर में रहता है। वह कौन सी गुफा है, जहाँ स्थिर ध्यान लगाना अनिवार्य है ? आख़िर वह कौन है, जिसे सर्वव्यापक मानकर उसमें लीन हुआ जा सके ? किसका ध्यान करने से मन अपने आप में समाया रह सकता है ? ॥४५॥ (गुरु नानक उत्तर देते हैं—) जीव अहंकार और स्व की भावना को बीच से खो दे, द्वैत-भाव को मिटाकर एकात्मभाव बनाए, तब मनमुख जीव अपने गँवारूपन को छोड़कर कठोर संसार रूपी लोहे को शब्द की शक्ति से खा सकता है। यदि जीव अपने भीतर और बाहर प्रभु की एकमात्र शक्ति को पहचान ले, तो सतिगुरु की दया से उसकी तामसी वृत्तियों की अग्नि शमित हो जाती है ॥ ४६ ॥ परमात्मा के रंग में रत रहकर जो जीव गर्व का निवारण करता है; एक ही परमात्मा के सत्य को अपनाता और शब्द का विचार करता है, तो उसके अन्तर्मन में शब्द ध्वनित होता है और उसका तन-मन सुखी, शीतल और प्रभु-रंग में रंगीन हो जाता है। वह काम, क्रोध और विषय-विकारों की अग्नि दूर करता है और तब उस पर परमात्मा की कृपा होती है ॥ ४७ ॥ (योगी पुनः प्रश्न करते हैं—) किस तरह चन्द्रमा (मनुष्य का मन) शीत का घर तथा अन्धकारमय बना रहता है; किस तरह प्रकाशित सूर्य (ज्ञानी) प्रचण्ड होता है ? वह कौन सा ढंग है, जिससे काल की कुदृष्टि को दूर किया जा सकता है ? वह कौन सा तरीक़ा है, जिससे गुरुमुखों के द्वारा जीव का सम्मान बना रहता है ? ऐसा योद्धा कौन है, जो काल को मार सके ? इन सभी प्रश्नों पर गुरु नानक विचार करते हैं और उनका उत्तर इस प्रकार देते हैं ॥ ४८ ॥

सबदु भाखत ससि जोति अपारा। ससि घरि सूरु वसै मिटै अंधिआरा। सुखु दुखु सम करि नामु अधारा। आपे पारि उतारणहारा। गुर परचै मनु साचि समाइ। प्रणवति नानकु कालु न खाइ ॥ ४९ ॥ नाम ततु सभ ही सिरि जापै। बिनु नावै दुखु कालु संतापै। ततो ततु मिलै मनु मानै। दूजा

जाइ इकतु घरि आनै। बोलै पवना गगनु गरजै। नानक निहचलु मिलणु सहजै ॥ ५० ॥ अंतरि सुंनं बाहरि सुंनं त्रिभवण सुंनमसुंनं। चउथे सुंनै जो नरु जाणै ता कउ पापु न पुंनं। घट घटि सुंन का जाणै भेउ। आदि पुरखु निरंजन देउ। जो जनु नाम निरंजन राता। नानक सोई पुरखु बिधाता ॥ ५१ ॥ सुंनो सुंनु कहै सभु कोई। अनहत सुंनु कहा ते होई। अनहत सुंनि रते से कैसे। जिस ते उपजे तिस ही जैसे। ओइ जनमि न मरहि न आवहि जाहि। नानक गुरमुखि मनु समझाहि ॥ ५२ ॥ नउ सर सुभर दसवै पूरे। तह अनहत सुंन वजावहि तूरे। साचै राचे देखि हजूरे। घटि घटि साचु रहिआ भरपूरे। गुपती बाणी परगटु होइ। नानक परखि लए सचु सोइ ॥ ५३ ॥ सहज भाइ मिलीऐ सुखु होवै। गुरमुखि जागै नीद न सोवै। सुंन सबदु अपरंपरि धारै। कहते मुकतु सबदि निसतारै। गुर की दीखिआ से सचि राते। नानक आपु गवाइ मिलण नही भ्राते ॥ ५४ ॥ कुबुधि चवावै सो कितु ठाइ। किउ ततु न बूझै चोटा खाइ। जमदरि बाधे कोइ न राखै। बिनु सबदै नाही पति साखै। किउकरि बूझै पावै पारु। नानक मनमुखि न बुझै गवारु ॥ ५५ ॥ कुबुधि मिटै गुर सबदु बीचारि। सतिगुरु भेटै मोख दुआर। ततु न चीनै मनमुखु जलि जाइ। दुरमति विछुड़ि चोटा खाइ। मानै हुकमु सभे गुण गिआन। नानक दरगह पावै मानु ॥ ५६ ॥

शब्द के गान करने से चन्द्र उज्ज्वल हो उठता है (हृदय में प्रकाश होता है)। यदि चन्द्र के घर सूर्य का निवास हो जाए अर्थात् मन में ज्ञान उजागर हो तो सब अन्धकार दूर हो सकता है। यदि जीव हरि-नाम का सहारा ले तो उसके लिए सुख-दुःख समान हो जाते हैं और वह प्रभु पर आश्रित हो जाता है। वह प्रभु ही संसार-सागर से पार उतारनेवाला है। गुरु में विश्वास लाने से ही मन सत्यस्वरूप परमात्मा में स्थिर होता है और तब कोई काल-शक्ति जीव को नहीं खा सकती ॥ ४९ ॥ हरि-नाम का तत्त्व सबसे ऊँचा है, उसके बिना काल के दुःखों और सन्तापों का बोझ जीव पर बना रहता है। जीवात्मा का तत्त्व, परमात्मा के तत्त्व से मिलता है तो मन स्थिर हो जाता है; द्वैत-भाव को छोड़कर एकनिष्ठ हो

जाता है। तब प्राण उल्लसित होते हैं और आकाश में गर्जन होने लगती है अर्थात् दशम द्वार ध्वनित हो उठता है। यही मिलन की अवस्था है, यहाँ मन निश्चल हो जाता है और सहज में ही हरि से भेंट हो जाती है ॥ ५० ॥ जीव शून्यावस्था को प्राप्त करता है। अपने भीतर-बाहर तीनों लोकों में उसी शून्य प्रभु के दर्शन करता है। जब वह चतुर्थावस्था अर्थात् तुरीयापद में पहुँचता है, तो उसका कर्म पाप-पुण्य की सीमाओं से मुक्त हो जाता है। जो सभी शरीरों में व्याप्त परमात्मा का भेद जान लेता है और उसी शून्य रूपी प्रभु को अपने भीतर भी देखता है, वह उस आदिपुरुष निरंजन के स्वरूप से परिचित हो जाता है। जो लोग ऐसे निरंजन के नाम में रत रहते हैं, वे विधाता के समान ही सशक्त हो जाते हैं ॥ ५१ ॥ सब लोक शून्य अर्थात् नाम-रूप-रहित परमात्मा की चर्चा करते हैं, किन्तु सिर्फ़ कहने से ही नाम-रहित प्रभु की प्राप्ति कैसे हो सकती है ? अनाहत शून्य में वे कैसे लीन हो सकते हैं ? वे तो नाम-रूप में से उपजते हैं, इसलिए वैसे ही होते हैं (अर्थात् नाम ले-लेकर पुकारने से जो रूप बनता है, वह जीव के लिए भी वैसा ही आधार प्रदान करता है)। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव गुरु के द्वारा मन को सही दिशा देता है, वह आवागमन से मुक्त हो जाता है और जन्म-मरण के चक्कर से छूट जाता है ॥ ५२ ॥ नौ द्वारों को पूर्णतः भरकर जो दशम द्वार को भी भर लेता है अर्थात् जिसकी इन्द्रियाँ इतनी सन्तुष्ट हो जाती हैं कि उसकी शारीरिक भूख उसके मन को अस्थिर नहीं करती और जिसकी आत्मिक वृत्ति भी परमात्मा के नाम से भर जाती है, वही आत्म-मण्डल के गीत गाता है अर्थात् पूर्ण-आनन्द लाभ करता है। वह परमात्मा को साक्षात् कर लेता है और घट-घट में भरपूर सत्य का दर्शन करता है। उसे वाणी के रहस्य स्पष्ट हो जाते हैं और वह पूर्णसत्य को भलीभाँति परख लेता है ॥ ५३ ॥ गुरु के आदेशों पर आचरण करनेवाला जीव सहज स्थिति को प्राप्त करता है और परमसुखी रहता है। वह सदैव चैतन्य रहता है, अज्ञानता की निद्रा उसे मूढ़ नहीं बनाती। अजपा हरि-नाम उसे अनन्त परमात्मा में स्थिर करता है और वह नाम जपता हुआ मुक्त हो जाता है तथा अन्य जीवों को भी शब्द-राह दिखाता है। गुरु की दीक्षा लेकर वह दूसरों को भी सत्य में लीन होने का उपदेश देता है; उसके प्रभु-मिलन में अहंभाव का अन्त हो चुका होता है, इसलिए वह परमात्मा से अभेद हो जाता है ॥ ५४ ॥ जो जीव अज्ञानी है, उसका क्या ठिकाना ? वह तो तत्त्व का जानकार नहीं होता, इसलिए ठोकरें खाता है; यमदूतों के द्वारा उसे बाँध लिया जाता है और कोई उसका रक्षक नहीं होता। गुरु के शब्द को प्राप्त किये बग़ैर उसका कोई सम्मान या विश्वास नहीं होता। आख़िर मनमुख और गँवार होने के कारण वह उस रहस्य की जानकारी

क्योंकर प्राप्त कर सकता है (जब तक कि वह गुरु का आश्रय नहीं लेता) ॥ ५५ ॥ अज्ञानता का नाश गुरु के शब्दों से ही सम्भव है। सच्चे सतिगुरु की भेंट से ही मोक्ष की सम्भावना होती है। जो व्यक्ति मनमुखी है, वह तत्त्व को नहीं समझ सकता और अन्ततः जीवन को व्यर्थ गँवा देता है; दुर्बुद्धि के कारण प्रभु से दूर भटकता रह जाता है। यदि वह परमात्मा के हुक्म में आचरण करे तो सभी गुणों और ज्ञान का स्वामी हो सकता है। गुरु नानक कहते हैं कि तब उसे परमात्मा के दरबार में सम्मान भी प्राप्त हो सकता है ॥ ५६ ॥

साचु वखरु धनु पलै होइ। आपि तरै तारे भी सोइ। सहजि रता बूझै पति होइ। ता की कीमति करै न कोइ। जह देखा तह रहिआ समाइ। नानक पारि परै सच भाइ ॥ ५७ ॥ सु सबद का कहा वासु कथीअले जितु तरीऐ भवजलु संसारो। त्रै सत अंगुल वाई कहीऐ तिसु कहु कवनु अधारो। बोलै खेलै असथिरु होवै किउकरि अलखु लखाए। सुणि सुआमी सचु नानकु प्रणवै अपणे मन समझाए। गुरमुखि सबदे सचि लिव लागै करि नदरी मेलि मिलाए। आपे दाना आपे बीना पूरै भागि समाए ॥ ५८ ॥ सु सबद कउ निरंतरि वासु अलखं जह देखा तह सोई। पवन का वासा सुंन निवासा अकल कला धर सोई। नदरि करे सबदु घट महि वसै विचहु भरमु गवाए। तनु मनु निरमलु निरमल बाणी नामो मंनि वसाए। सबदि गुरू भवसागरु तरीऐ इत उत एको जाणै। चिहनु वरनु नही छाइआ माइआ नानक सबदु पछाणै ॥ ५९ ॥ त्रैसत अंगुल वाई अउधू सुंन सचु आहारो। गुरमुखि बोलै ततु विरोलै चीनै अलख अपारो। त्रै गुण मेटै सबदु वसाए ता मनि चूकै अहंकारो। अंतरि बाहरि एको जाणै ता हरि नामि लगै पिआरो। सुखमना इड़ा पिंगुला बूझै जा आपे अलखु लखाए। नानक तिहु ते ऊपरि साचा सतिगुर सबदि समाए ॥ ६० ॥ मन का जीउ पवनु कथीअले पवनु कहा रसु खाई। गिआन की मुद्रा कवन अउधू सिध की कवन कमाई। बिनु सबदै रसु न आवै अउधू हउमै पिआस न जाई। सबदि रते अंम्रित रसु पाइआ साचे रहे अघाई। कवन बुधि जितु असथिरु रहीऐ कितु भोजनि त्रिपतासै। नानक दुखु सुखु सम करि जापै सतिगुर

ते कालु न ग्रासै ।। ६१ ।। रंगि न राता रसि नही माता । बिनु गुर सबदै जलि बलि ताता । बिंदु न राखिआ सबदु न भाखिआ । पवनु न साधिआ सचु न अराधिआ । अकथ कथा ले सम करि रहै । तउ नानक आतमराम कउ लहै ।। ६२।। गुरपरसादी रंगे राता । अंम्रितु पीआ साचे माता । गुर वीचारी अगनि निवारी । अपिउ पीओ आतम सुखु धारी । सचु अराधिआ गुरमुखि तरु तारी । नानक बूझै को वीचारी ।। ६३ ।। इहु मनु मैगलु कहा बसीअले कहा बसै इहु पवना । कहा बसै सु सबदु अउधू ता कउ चूकै मन का भवना । नदरि करे ता सतिगुरु मेले ता निज घरि वासा इहु मनु पाए । आपै आपु खाइ ता निरमलु होवै धावतु वरजि रहाए । किउ मूलु पछाणै आतमु जाणै किउ ससि घरि सूरु समावै । गुरमुखि हउमै विचहु खोवै तउ नानक सहजि समावै ।। ६४ ।।

जिसके पास सत्य की राशि और आचरण का बल होता है, वह स्वयं मुक्त होता है, अपने साथ अन्य लोगों को भी मुक्त कर लेता है। वह पूर्णब्रह्म में लीन रहता है, उसकी पूर्ण जानकारी रखता है, जिसकी संसार में कोई और सही क़ीमत नहीं डाल सकता। वह जिधर भी देखता है, प्रभु को समाया हुआ देखता है और सच्चे भाव से उसी पर आश्रित रहता है ।।५७।। (योगियों का प्रश्न है—) जिस शब्द से संसार-सागर को पार किया जा सकता है, वह कहाँ रहता है? दस अंगुल प्रमाण में जानेवाला श्वास किस आधार पर चलता है? जो शक्ति भीतर बोलती और लीला करती है, वह क्योंकर स्थिर हो सकती है और अदृश्य परमात्मा को देख सकती है? (नानक उत्तर देते हैं—) ऐ स्वामी, सुनो, मैं अपने अनुभव से कहता हूँ कि गुरु के आदेश पर आचरण करने से सत्यस्वरूप शब्द में जीव लीन हो सकता है और परमात्मा की कृपा से आत्मा-परमात्मा का मिलन भी हो सकता है। वास्तव में परमात्मा ही सत्य का सही जानकार है, वही उसे देखता है और कृपापूर्वक सही पात्र को उसका ज्ञान भी देता है ।।५८।। यद्यपि वह शब्द अर्थात् हरि-नाम सर्वव्यापक है तथा अदृश्य है, तथापि वह परमात्मा की सर्वव्यापी ज्योति है, जिधर देखो वही विद्यमान दीख पड़ता है। जैसे हवा सर्वव्यापक है, किन्तु दीख नहीं पड़ती, वैसे ही सुन्न परमात्मा भी है (योगियों ने पवन की चर्चा श्वास-रूप में की थी, किन्तु गुरुजी हवा के रूप में कर रहे हैं)। यदि वह सर्वव्यापी परमात्मा कृपा कर दे, तो मन के भीतर से ही शब्द की ज्योति उजागर हो जाती है और जीव के भीतर से सब भ्रम दूर हो जाते हैं। उसका तन-मन

निर्मल हो जाता है और हरि-नाम को मन में बसाने से उसकी वाणी भी पवित्र हो जाती है। शब्द रूपी गुरु के द्वारा भव-सागर से पार हुआ जा सकता है, किन्तु गुरु और शब्द-ब्रह्म में अभेद जानना अनिवार्य है। जो जीव शब्द को पहचान लेता है, वह परमात्मा के चिह्न-वर्ण को नहीं खोजता, बल्कि छाया-माया से ऊपर उठ जाता है ॥ ५९ ॥ ऐ योगियो, दस अंगुल प्रमाण में चलनेवाले श्वासों द्वारा हरि का नाम जपना और सत्य वचन करना, यही श्वास का आश्रय है। गुरुमुख तत्त्व का अवगाहन करता है और उस अदृश्य तथा अपार परमात्मा को जान लेता है। माया के तीनों गुणों को मिटाकर हरि-नाम का सहारा लेता है, तो मन में से अहंकार दूर हो जाता है। जो जीव भीतर और बाहर प्रभु की ही सत्ता को स्वीकार करता है, वही सच्चे अर्थों में हरि-नाम से प्यार करता है। जब हरि से साक्षात्कार होता है, तो जीव इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना आदि नाड़ियों के योगाभ्यास से प्राप्त होनेवाले ज्ञान को सहज ही पा लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह परमात्मा इन तीनों नाड़ियों के सिल्‌सिले से ऊपर है और उसमें सतिगुरु के शब्द द्वारा ही समाया जा सकता है ॥ ६० ॥ (योगी पुनः प्रश्न करते हैं—) पवन मनुष्य का प्राण है, किन्तु पवन का आधार क्या है ? ज्ञान प्राप्त करने की मर्यादा क्या है ? (गुरुजी उत्तर देते हैं—) हे योगियो, गुरु के शब्द के बिना श्वास स्थिर नहीं होता और न ही अहंकार की तृष्णा दूर होती है। जो जीव, शब्द के रस में लीन हो जाते हैं, वे सत्यस्वरूप हरि-नाम की तृप्ति प्राप्त करते हैं। (पुनः प्रश्न है—) किस प्रकार का विवेक प्राप्त करके हम मन को स्थिर कर सकते हैं और प्राणों का वह कौन सा भोजन है, जिसे पाकर हमें तृप्ति मिलती है ? (गुरु नानक कहते हैं—) सुख की लालसा और दुःख का भय मन को भटकाता है, जब दोनों को समान समझा जाए तो मन स्थिर हो जाता है और जीव मृत्यु के भय से भी मुक्त हो जाता है ॥ ६१ ॥ जो जीव हरि-रंग में नहीं रँगा, वह रस से वञ्चित रह गया। गुरु के शब्दों के विना वह हमेशा सन्तप्त रहा। वह अपने यतीत्व की रक्षा न कर सका, क्योंकि उसे गुरु के शब्द का सहारा नहीं मिला। क्योंकि सत्यस्वरूप परमात्मा का नाम उसने नहीं जपा, इसीलिए वह प्राणों को स्थिर नहीं कर सका। यदि वह हरि की अकथनीय कथा को सुन-सुनकर दुःख-सुख की संवेदनाओं को समान कर लेता, तो हरि को पा जाता और अपने आप को भी पहचान लेता ॥ ६२ ॥ गुरु की कृपा से ही जीव हरि-नाम में रँगता है और हरि-नाम के अमृत का पान करके वह सच्चे प्रभु में विलीन हो सकता है। गुरु के आदेशों का पालन करने से ही तृष्णा की अग्नि बुझती है; हरिनामामृत पीने से आत्मा को परमसुख प्राप्त होता है। सत्यस्वरूप परमात्मा की आराधना

करने से गुरु के द्वारा जीव संसार-सागर को पार कर लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि इस तथ्य को कोई विवेकी ही समझ सकता है ।।६३।। (योगी पुनः प्रश्न करते हैं कि) यह मन रूपी अहंकारी हाथी कहाँ रहता है और श्वास का मूल स्थान क्या है ? ऐ फ़क़ीर, नानक, हमें बताओ कि वह शब्द कहाँ रहता है, जिससे मन का भटकाव दूर हो जाता है ? (गुरु नानक कहते हैं कि) परमात्मा की कृपा हो तो सतिगुरु से भेंट होती है और तब यह मन अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान लेता है। जीव अपने अहंकार का नाश करने के बाद ही निर्मल हो पाता है और अस्थिर चित्त को स्थिर कर पाता है। (योगी पुनः पूछते हैं—) जीव अपने मूल को क्योंकर पहचान सकता है और चन्द्र के घर सूर्य क्योंकर समा सकता है अर्थात् तृष्णा की शीतलता में ज्ञान की गरिमा कैसे पैदा हो सकती है ? (पुनः गुरुजी का उत्तर है—) गुरु के आदेशों पर आचरण करने से जब जीव भीतर से अहंकार को दूर कर देता है, तभी वह सहज अवस्था में समा पाता है ।। ६४ ।।

इहु मनु निहचलु हिरदै वसीअले गुरमुखि मूलु पछाणि रहै । नाभि पवनु घरि आसणि बैसै गुरमुखि खोजत ततु लहै । सु सबदु निरंतरि निज घरि आछै त्रिभवण जोति सु सबदि लहै । खावै दूख भूख साचे की साचे ही त्रिपतासि रहै । अनहद बाणी गुरमुखि जाणी बिरलो को अरथावै । नानकु आखै सचु सुभाखै सचि रपै रंगु कबहू न जावै ।। ६५ ।। जा इहु हिरदा देह न होती तउ मनु कैठै रहता । नाभि कमल असथंभु न होतो ता पवनु कवन घरि सहता । रूपु न होतो रेख न काई ता सबदि कहा लिव लाई । रकतु बिंदु की मड़ी न होती मिति कीमति नही पाई । वरनु भेखु असरूपु न जापी किउकरि जापसि साचा । नानक नामि रते बैरागी इब तब साचो साचा ।। ६६ ।। हिरदा देह न होती अउधू तउ मनु सुंनि रहै बैरागी । नाभि कमलु असथंभु न होतो ता निज घरि बसतउ पवनु अनरागी । रूपु न रेखिआ जाति न होती तउ अकुलीणि रहतउ सबदु सुसारु । गउनु गगनु जब तबहि न होतउ त्रिभवण जोति आपे निरंकारु । वरनु भेखु असरूपु सु एको एको सबदु विडाणी । साच बिना सूचा को नाही नानक अकथ कहाणी ।। ६७ ।। कितु कितु बिधि जगु उपजै पुरखा कितु कितु दुखि बिनसि जाई । हउमै विचि जगु

उपजै पुरखा नामि विसरिऐ दुखु पाई। गुरमुखि होवै सु गिआनु ततु बीचारै हउमै सबदि जलाए। तनु मनु निरमलु निरमल बाणी साचै रहै समाए। नामे नामि रहै बैरागी साचु रखिआ उरिधारे। नानक बिनु नावै जोगु कदे न होवै देखहु रिदै बीचारे ॥ ६८ ॥ गुरमुखि साचु सबदु बीचारै कोइ। गुरमुखि सचु बाणी परगटु होइ। गुरमुखि मनु भीजै विरला बूझै कोइ। गुरमुखि निज घरि वासा होइ। गुरमुखि जोगी जुगति पछाणै। गुरमुखि नानक एको जाणै ॥ ६९ ॥ बिनु सतिगुर सेवे जोगु न होई। बिनु सतिगुर भेटे मुकति न कोई। बिनु सतिगुर भेटे नामु पाइआ न जाइ। बिनु सतिगुर भेटे महा दुखु पाइ। बिनु सतिगुर भेटे महा गरबि गुबारि। नानक बिनु गुर मुआ जनमु हारि ॥ ७० ॥ गुरमुखि मनु जीता हउमै मारि। गुरमुखि साचु रखिआ उरधारि। गुरमुखि जगु जीता जम कालु मारि बिदारि। गुरमुखि दरगह न आवै हारि। गुरमुखि मेलि मिलाए सुो जाणै। नानक गुरमुखि सबदि पछाणै ॥ ७१ ॥ सबदै का निबेड़ा सुणि तू अउधू बिनु नावै जोगु न होई। नामे राते अनदिनु माते नामै ते सुखु होई। नामै ही ते सभु परगटु होवै नामे सोझी पाई। बिनु नावै भेख करहि बहुतेरे सचै आपि खुआई। सतिगुर ते नामु पाईऐ अउधू जोग जुगति ता होई। करि बीचारु मनि देखहु नानक बिनु नावै मुकति न होई ॥ ७२ ॥ तेरी गति मिति तू है जाणहि किआ को आखि वखाणै। तू आपे गुपता आपे परगटु आपे सभि रंग माणै। साधिक सिध गुरू बहु चेले खोजत फिरहि फुरमाणै। मागहि नामु पाइ इह भिखिआ तेरे दरसन कउ कुरबाणै। अबिनासी प्रभि खेलु रचाइआ गुरमुखि सोझी होई। नानक सभि जुग आपे वरतै दूजा अवरु न कोई ॥ ७३ ॥

यह मन जब स्थिर हो जाता है, तो अपने ही स्वरूप में निश्चित रहता है और गुरु के द्वारा जीव अपने मूल को पहचान लेता है। तब यह नाभि रूपी घर में पवन के आसन पर विराजता है अर्थात् एकाग्र हो जाता है। और गुरुमुख जीव तत्त्व को पा लेता है। निरन्तर जीवन्त शब्द को हृदय में बसाकर वह तीनों लोकों की ज्योति प्रभु को साक्षात् कर लेता है। सत्यस्वरूप परमात्मा की भूख दुःखों को खा जाती है और परमसत्य

की तृप्ति प्राप्त होती है। कोई गुरुमुख जीव ही उस अनाहत वाणी को पहचानता और उसके अर्थ लगा सकता है। गुरु नानक कहते हैं, उस जीव की जिह्वा से निकलनेवाला प्रत्येक शब्द सत्य होता है और उसके सम्पर्क में आनेवाला भी हरि-रंग में ऐसे रँग जाता है कि वह रंग कभी फीका नहीं पड़ता ॥ ६५ ॥ (योगी पुनः प्रश्न करते हैं—) जब यह हृदय और शरीर नहीं थे, तब यह मन कहाँ रहता था? और जब नाभि-कमल का आश्रय नहीं था, तो श्वास किस स्थान पर रहते थे? जब कोई रूप-आकार नहीं था, तो शब्द द्वारा किसके प्रति लग्न लगायी जाती थी? जब रक्त-बूँद का शरीर ही नहीं था, तो परमात्मा की गति-मिति क्योंकर जानी जा सकती थी? जब कोई रंग-रूप ही दीख नहीं पड़ता था, तो सत्यस्वरूप परमात्मा को कौन पहचानता था? (गुरुजी उत्तर देते हैं। अन्तिम प्रश्न का उत्तर पद की इसी अन्तिक पंक्ति में दिया गया है—) गुरु नानक कहते हैं कि यदि प्रभु के नाम से प्यार करें और उसी में तल्लीन रहें, तो हर समय, हर जगह वही दीख पड़ने लगता है ॥ ६६ ॥ जब हृदय और शरीर नहीं था, तो मन निराकार शून्य ब्रह्म में स्थिर रहता था। जब नाभि-कमल का आश्रय नहीं था, तब पवन अपने ही स्वरूप में रत वहीं निवसित था। जब रूप, रेखा या जाति नहीं थी, तब तत्त्व-रूप शब्द कुल-रहित निर्गुण परमात्मा में बसता था। जब धरती और आकाश नहीं थे, तब भी तीनों लोकों में उस निरंकार की ज्योति विद्यमान थी। वर्ण, वेश, रूप आदि सब उस आश्चर्यजनक प्रभु की ही देन हैं, इसीलिए नानक कहते हैं कि सत्यस्वरूप अनिर्वचनीय परमात्मा को पहचाने बग़ैर कोई जीव पावनता को नहीं पा सकता ॥ ६७ ॥ (योगी पुनः प्रश्न करते हैं—) ऐ महापुरुष, यह बताओ कि संसार किस-किस प्रकार से उपजता है और किस-किस प्रकार संसार के दुःख नष्ट हो सकते हैं? (गुरुजी उत्तर देते हैं—) यह संसार अहंकार की भावना से पैदा होता है और हरि-नाम को विस्मृत करने से दुःख बढ़ते हैं। यदि कोई जीव गुरु के आदेशों के अनुसार ज्ञान-तत्त्व को विचारकर शब्द की शक्ति से अहंकार को जला दे, तो उसका तन-मन निर्मल हो जाता है और वह सत्यस्वरूप परमात्मा में ही लीन होता है। हरि-नाम को उपजे हुए जो जीव सत्य में मन को टिकाता है, वही मुक्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम के बिना योग की कोई मर्यादा नहीं, ज़रा मन में विचारकर देखो ॥ ६८ ॥ गुरु के द्वारा यदि सत्यस्वरूप शब्द को कोई जान सके, तो उसी गुरुमुख पर मूल सत्य वाणी द्वारा प्रकट होता है। गुरु के द्वारा मन परमात्मा में लीन होता है, कोई विरला ही इस तथ्य को जानता है। तब गुरुमुख जीव का अपने असली घर में अर्थात् परमात्मा के निकट निवास होता है। योगी भी योग की युक्ति को गुरु के द्वारा ही पहचान सकते हैं, क्योंकि गुरु

नानक का मत है कि गुरुमुख और परमात्मा अभेद होते हैं ॥ ६९ ॥ सतिगुरु की सेवा के बिना योग नहीं कमाया जा सकता। सतिगुरु की भेंट के बिना मुक्ति भी सम्भव नहीं, क्योंकि सतिगुरु को मिले बिना हरि-नाम की पहचान ही नहीं हो पाती। सतिगुरु से भेंट न होने पर जीव को अनेक दुःखों का सामना करना पड़ता है, वह अभिमान की बाढ़ में बह जाता है; सचमुच गुरु के बिना जीव व्यर्थ ही जन्म गँवा देता है ॥ ७० ॥ गुरुमुख अहंभाव को मारकर मन जीत लेता है, गुरुमुख सदा सत्य को हृदय में धारण करता है। मौत का डर दूर करके गुरुमुख जगत को जीत लेता है, काल से भी कभी पराजित नहीं होता। गुरुमुख संयोग से जिस जीव को भी गुरु से मिला देता है, गुरु नानक कहते हैं, वह भी शब्द को पहचानने लगता है ॥ ७१ ॥ ऐ अवधूत, शब्द की समूची चर्चा का सार यह है कि हरि-नाम के बिना किसी प्रकार की योग-साधना सम्भव नहीं। जो लोग हरि-नाम में सदा रत रहते हैं, उन्हें परमसुख की उपलब्धि होती है। शब्द से ही सब कुछ प्रकट होता है और इसी से ज्ञान का प्रकाश मिलता है। हरि-नाम के बिना दिखावे के अनेक रूप भी मनुष्य को भटकाते हैं, इसलिए, ऐ योगियो, सतिगुरु से नाम का रहस्य जानने से ही योग की साधना हो पाती है। गुरु नानक कहते हैं कि मन में विचारकर देखो कि हरि-नाम के विना जीव की मुक्ति सम्भव ही नहीं ॥७२॥ (अन्तिम पद में गुरुजी समूचे ज्ञान का आधार उस परमात्मा को मानते हुए कहते हैं—) हे प्रभु, अपनी स्थिति और मर्यादा से तुम स्वयं ही सबको परिचित करवा सकते हो, तुम्हीं उसके जानकार हो। तुम स्वयं ही रहस्यमय हो, स्वेच्छापूर्वक दूसरे पर प्रकट भी होते हो और सब रंगों में संसार के पोषक हो। बड़े-बड़े साधक, सिद्ध, गुरु-शिष्य तुम्हारी ही इच्छा से तुम्हें ही खोजते फिरते हैं; तुमसे तुम्हारे नाम की भिक्षा माँगते हैं और तुम्हारे दर्शनों पर क़ुर्बान होते हैं। अविनाशी परमात्मा ने जगत का यह समूचा खेल रचाया है, इसकी जानकारी गुरु के द्वारा ही सम्भव है। गुरु नानक कहते हैं कि सारे संसार में वह परमात्मा स्वयं व्याप्त है, उसके अतिरिक्त दूसरा और कोई नहीं ॥ ७३ ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

रामकली की वार महला ३ जोधै वीरै पूरबाणी की धुनी ॥ सलोकु म० ३ ॥ सतिगुरु सहजै दा खेतु है जिसनो लाए भाउ। नाउ बीजे नाउ उगवै नामे रहै समाइ। हउमै एहो बीजु है सहसा गइआ विलाइ। ना किछु बीजे न उगवै जो बखसे सो

खाइ । अंभै सेती अंभु रलिआ बहुड़ि न निकसिआ जाइ । नानक गुरमुखि चलतु है वेखहु लोका आइ । लोकु कि वेखै बपुड़ा जिसनो सोझी नाहि । जिसु वेखाले सो वेखै जिसु वसिआ मन मांहि ।। १ ।। म० ३ ।। मन मुखु दुख का खेतु है दुखु बीजे दुखु खाइ । दुख विचि जंमै दुखि मरै हउमै करत विहाइ । आवणु जाणु न सुझई अंधा अंधु कमाइ । जो देवै तिसै न जाणई दिते कउ लपटाइ । नानक पूरबि लिखिआ कमावणा अवरु न करणा जाइ ।। २ ।। म० ३ ।। सतिगुरि मिलिऐ सदा सुखु जिसनो आपे मेले सोइ । सुखै एहु बिबेकु है अंतरु निरमलु होइ । अगिआन का भ्रमु कटीऐ गिआनु परापति होइ । नानक एको नदरी आइआ जह देखा तह सोइ ।। ३ ।। पउड़ी ।। सचै तखतु रचाइआ बैसण कउ जांई । सभु किछु आपे आपि है गुर सबदि सुणाई । आपे कुदरति साजीअनु करि महल सराई । चंदु सूरजु दुइ चानणे पूरी बणत बणाई । आपे वेखै सुणे आपि गुर सबदि धिआई ।। १ ।।

।। सलोकु म० ३ ।। (इस वार में सतिगुरु की बड़ाई की गयी है और बताया गया है कि सतिगुरु ही हरि-नाम का बीज बोता है और उसी के बताये रास्ते पर चलकर जीवात्मा हरि-नाम की फ़सल काटता है ।) सतिगुरु स्थिरता और शान्ति का प्रत्यक्ष और साकार रूप है, उसमें विश्वास लाने से पूर्ण-शान्ति लाभ होती है । वह हरि-नाम का बीज बोता है, हरि-नाम ही उसमें से पैदा होता है और हरि-नाम में ही वह समा जाता है । अहंभाव संशयों का बीज था, जिसका बीजना अब अनपेक्षित है । इसीलिए गुरुमुख अब अहम् का बीज नहीं बीजता और न ही वह उगता है; जो कुछ प्रभु के हुक्म से उसे मिलता है, वह उसी में सन्तुष्ट रहता है । गुरुमुख जीव परमात्मा से पानी में पानी की तरह मिल जाता है, दुबारा कभी अलग नहीं होता । गुरु नानक कहते हैं कि यह गुरुमुखों की लीला है, इसे देखिए— किन्तु लोग बेचारे क्या देखेंगे, उन्हें तो यथार्थ की सूझ ही नहीं । परमात्मा स्वयं जिसके मन में बसा है, वही देख सकता है, उसी को तथ्य की सूझ है ।। १ ।। म० ३ ।। मनमुख जीव दुःखों का खेत है, दुःख बीजता है और दुःख ही भोगता है । वह दुःखों में पैदा होता है, दुःखों में ही मर जाता है; उसकी सारी आयु अहंकार में ही बीतती है । उसे आवागमन का जीवन नहीं सूझता, बल्कि और आगे वह अन्धी कमायी में विश्वास करता है । परमात्मा से नित्यप्रति जो कुछ मिलता है, उसे

नहीं पहचानता; बल्कि जिस माया में उसे बन्धनयुक्त किया गया है, वह उसी में चिपटकर अपने को सुखी समझने लगता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो कुछ उसके लिए पूर्वलिखित है, वह उसी में कर्म करता है, अन्य कुछ नहीं कर सकता ।। २ ।। म० ३ ।। जिस पर परमात्मा की कृपा हो जाती है, उसे सच्चा गुरु मिल जाता है और वह परमसुख को प्राप्त कर लेता है। वास्तविक सुख का स्वरूप यही है कि उसका हृदय निर्मल हो जाता है। वह अज्ञान का भ्रम काटता है और उसे ज्ञान प्राप्त होता है। तब गुरु नानक कहते हैं, वह स्थिति आ जाती है कि उस पर परमात्मा की कृपा होती है और वह जिधर देखता है, उधर परमात्मा को पाता है ।। ३ ।। पउड़ी ।। सत्यस्वरूप परमात्मा ने यह संसार रूपी तख़्त अपने बैठने का स्थान बनाया है। वह सब कुछ अपने आप करता है और गुरु के शब्द द्वारा ही जाना जा सकता है। समूची प्रकृति उसने स्वयं बनायी है और स्वयं उसमें व्याप्त है। रचना को पूर्ण करने के लिए उसने चन्द्र और सूर्य-जैसे दीपक बनाये हैं। वह स्वयं सबको देखता-सुनता है। गुरु के शब्दों में ध्यानस्थ होने से (उसे पाया जा सकता है) ।। १ ।।

वाहु वाहु सचे पातिसाह तू सची नाई ।। १ ।। रहाउ ।। ।। सलोकु ।। कबीर महिदी करिकै घालिआ आपु पीसाइ पीसाइ । तै सह बात न पुछीआ कबहू न लाई पाइ ।। १ ।। म० ३ ।। नानक महिदी करि कै रखिआ सो सहु नदरि करेइ । आपे पीसै आपे घसै आपे ही लाइ लएइ । इहु पिरम पिआला खसम का जै भावै तै देइ ।। २ ।। पउड़ी ।। वेकी स्रिसटि उपाईअनु सभ हुकमि आवै जाइ समाही । आपे वेखि विगसदा दूजा को नाही । जिउ भावै तिउ रखु तू गुर सबदि बुझाही । सभना तेरा जोरु है जिउ भावै तिवै चलाही । तुधु जेवड मै नाहि को किसु आखि सुणाई ।। २ ।।

हे सत्य के साक्षात् रूप, प्रभु, तुम सत्य-नाम होने के कारण सत्य हो ।। १ ।। रहाउ ।। सलोकु ।। हमने तो अपने को मेंहदी बनाकर रखा है अर्थात् प्रभु को पाने के लिए अनेक साधन अपनाए हैं। जब भी उसकी कृपा होगी अपने आप पीसकर हमें चरणों से लगा लेगा (अर्थात् परमात्मा के चरणों में लगाने के लिए जीव को पूर्णसमर्पण-भाव की अपेक्षा है)। तो भी अब तक परमात्मा ने हमारी बात नहीं पूछी और अपने चरणों में हमें नहीं लगाया ।। १ ।। म० ३ ।। गुरु नानक कहते हैं कि यदि अपने को मेंहदी करके रखा है, तो किसी न किसी दिन प्रभु की कृपा जरूर होगी, तब वह अपने आप मेंहदी को पीसकर, घिसकर अपने अंग लगा लेगा।

यही प्रियतम का प्रेम-संकेत है। जब उसे स्वीकार होता है, वह प्रेमाभिलाषी जीव को देता है। (यहाँ पहला पद कबीर का है, जिसमें उसने मेंहदी बनकर रहने पर परमात्मा को उलाहना दिया है कि वह क्यों अब तक उसे चरणों में जगह नहीं दे सका। दूसरे पद में गुरु नानक ने समर्पण के साथ आश्वासन भी प्रकट किया है कि जब उसकी इच्छा होगी, वह जीव को अपना लेगा) ॥२॥ पउड़ी ॥ भिन्न-भिन्न प्रकार की सृष्टि उस परमात्मा ने पैदा करके अपने हुक्म में आने-जाने को बाँध दी है। वह उसे देखता है और प्रसन्न होता है, उसके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है। जैसे प्रभु को अच्छा लगता है, वैसे वह सबको रखता है और गुरु के शब्दों द्वारा उसे जीवन की सूझ होती है। सब पर तुम्हारा अंकुश है; जैसा तुम चाहते हो, वैसा सबको चलाते हो। तुम्हारे बराबर मैं वड़ा नहीं हूँ, इसलिए मैं क्या कह सकता हूँ ? ॥ २ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ भरमि भुलाई सभु जगु फिरी फावी होई भालि। सो सहु सांति न देवई किआ चलै तिसु नालि। गुरपरसादी हरि धिआईऐ अंतरि रखीऐ उरधारि। नानक घरि बैठिआ सहु पाइआ जा किरपा कीती करतारि ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ धंधा धावत दिनु गइआ रैणि गवाई सोइ। कूड़ु बोलि बिखु खाइआ मनमुखि चलिआ रोइ। सिरै उपरि जम डंडु है दूजै भाइ पति खोइ। हरि नामु कदे न चेतिओ फिरि आवण जाणा होइ। गुर परसादी हरि मनि वसै जम डंडु न लागै कोइ। नानक सहजे मिलि रहै करमि परापति होइ ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ इकि आपणी सिफती लाइअनु दे सतिगुर मती। इकना नो नाउ बखसिओनु असथिरु हरि सती। पउणु पाणी बैसंतरो हुकमि करहि भगती। एना नो भउ अगला पूरी बणत बणती। सभु इको हुकमु वरतदा मंनिऐ सुखु पाई ॥ ३ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ सारा संसार संशयों में भटकता है, मैं सत्य को ढूँढ़-ढूँढ़कर थक गया हूँ। जब तक वह प्रियतम स्वयं शान्ति नहीं देता, तब तक उसके साथ कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं चल सकती। गुरु की कृपा से ही परमात्मा का नाम जपा जा सकता है और उसे हृदय में धारण कर रखा जा सकता है। गुरु नानक कहते हैं (गुरु मिल जाए तो), परमात्मा की कृपा से घर बैठे ही उसे पाया जा सकता है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ संसार के धन्धों में पड़े हम सारा दिन बिता देते हैं, रात सोने में बीत जाती है; झूठ का विष हम नित्य खाते रहते हैं और

परिणामतः मन के संकेतों पर चलते हुए अन्तकाल में रोते रह जाते हैं। तब सिर पर यम का डण्डा होता है और परमात्मा को छोड़कर द्वैतभाव में हम अपना सम्मान खो बैठते हैं। हरि-नाम का सिमरन कभी नहीं करते और निरन्तर आवागमन के चक्र में फँसे रह जाते हैं। यदि गुरु की कृपा हो जाए और परमात्मा मन में बसने लगे, तो यम के डण्डे का कोई भय नहीं रह जाता; किन्तु गुरु नानक कहते हैं कि सहज में स्थिर होने की यह अवस्था एकमात्र प्रभु-कृपा से ही उपलब्ध होती है ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा कुछ लोगों को सतिगुरु के उपदेश द्वारा अपने गुणगान में संलग्न करता है और कुछ लोगों को हरि-नाम में प्रीति द्वारा अपने सत्य-स्वरूप में स्थिर करता है। प्रकृति के सभी तत्त्व पवन, पानी, अग्नि आदि प्रभु के हुक्म में चलते हैं, मानो हरि-भक्ति में लीन हैं। इन्हें प्रभु में पूरी आस्था है, इसलिए वे पूरी तरह आदेश का पालन करते हैं। सारे संसार में एक परमात्मा का ही हुक्म सर्वोपरि है, उसी के अनुसार जीवनचर्या में सुख होता है ॥ ३ ॥

॥ सलोकु ॥ कबीर कसउटी राम की झूठा टिकै न कोइ। राम कसउटी सो सहै जो मरजीवा होइ ॥१॥ म०३॥ किउकरि इहु मनु मारीऐ किउकरि मिरतकु होइ। कहिआ सबदु न मानई हउमै छडै न कोइ। गुरपरसादी हउमै छुटै जीवन मुकतु सो होइ। नानक जिसनो बखसे तिसु मिलै तिसु बिघनु न लागै कोइ॥ २ ॥ म० ३ ॥ जीवत मरणा सभु को कहै जीवन मुकति किउ होइ। भै का संजमु जे करे दारू भाउ लाएइ। अनदिनु गुण गावै सुख सहजे बिखु भवजलु नामि तरेइ। नानक गुरमुखि पाईऐ जाकउ नदरि करेइ ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ दूजा भाउ रचाइओनु त्रै गुण वरतारा। ब्रहमा बिसनु महेसु उपाइअनु हुकमि कमावनि कारा। पंडित पड़दे जोतकी ना बूझहि बीचारा। सभु किछु तेरा खेलु है सचु सिरजणहारा। जिसु भावै तिसु बखसि लैहि सचि सबदि समाई ॥ ४ ॥

॥ सलोकु ॥ कबीरजी कहते हैं कि परमात्मा की परख इतनी पूर्ण है कि मर्यादाहीन झूठा जीव उसके सम्मुख टिक नहीं सकता। परमात्मा के मानदण्ड पर वे ही पूरे उतरते हैं, जो जीवन-मुक्त होते हैं अर्थात् जो संसार की ओर से मरकर भी प्रभु में जीते हैं ॥१॥ म० ३ ॥ प्रश्न उठता है कि इस मन को किस प्रकार मारा जाए कि यह संसार की ओर से मृत अर्थात् विरत हो जाए ? परमात्मा के शब्द का उपदेश

कोई मानता नहीं और न ही कोई अहंभाव को छोड़ता है। केवल उन्हीं जीवों की अहम्-भावना मिटती है, जिन पर गुरु की कृपा होती है; अन्ततः वे ही जीवन-मुक्ति को प्राप्त करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वह मुक्ति-दाता जिस पर कृपा करके मुक्ति-दान करता है, वही मुक्त होता है, उसके मार्ग में कोई विघ्न नहीं रह जाता ॥ २ ॥ म० ३ ॥ जीते-जी मरने की बातें सब करते हैं, किन्तु जीवित-भाव से मरना क्योंकर सम्भव है ? यदि जीव प्रभु के प्रेम में भय रूपी संयम पर आचरण करे और प्रेम-भाव की ओषधि का प्रयोग करे; नित्य दिन-रात प्रभु के गुण गाए, वह सहज में ही सुखपूर्वक विष रूपी संसार को हरि-नाम द्वारा तर जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि यह शक्ति उसमें तभी आती है, जब वह गुरु के द्वारा बताये मार्ग पर चलता है और उस पर परमात्मा की कृपा होती है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ जो जीव द्वैतभाव में मग्न रहते हैं, वे परमात्मा के त्रिगुणात्मक फन्दे से कभी छूट नहीं पाते। संसार में सब ओर माया (त्रिगुणात्मक) का विस्तार है; यहाँ तक कि ब्रह्मा-विष्णु-महेश की रचना भी उसी के अन्तर्गत है और वे भी प्रभु के हुक्मानुसार ही कर्म कमाते हैं। बड़े-बड़े विद्याविद् और ज्योतिषी भी उस तथ्य पर विचार कर सकने में असमर्थ हैं। वह सर्जक स्वयं सत्यस्वरूप है और समूचा विश्व उसकी लीला है; वह जिसे चाहे उसे अपने सत्यस्वरूप में लीन करके मुक्त कर लेता है ॥ ४ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ मन का झूठा झूठु कमावै। माइआ नो फिरै तपा सदावै। भरमे भूला सभि तीरथ गहै। ओहु तपा कैसे परमगति लहै। गुरपरसादी को सचु कमावै। नानक सो तपा मोखंतरु पावै ॥ १ ॥ म० ३ ॥ सो तपा जि इहु तपु घाले। सतिगुर नो मिलै सबदु समाले। सतिगुर की सेवा इहु तपु परवाणु। नानक सो तपा दरगहि पावै माणु ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ राति दिनसु उपाइअनु संसार की वरतणि। गुरमती घटि चानणा आनेरु बिनासणि। हुकमे ही सभ साजीअनु रविआ सभ वणि त्रिणि। सभु किछु आपे आपि है गुरमुखि सदा हरि भणि। सबदे ही सोझी पई सचै आपि बुझाई ॥ ५ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ संसार में तपस्वी कहलानेवाले जीव माया के फेर में मन से झूठे हैं, इसलिए सदा झूठ का ही व्यापार करते हैं। भ्रम में भूलकर ऐसा तपस्वी तीर्थों पर घूमता फिरता है; भला ऐसा तपस्वी परमगति को क्योंकर प्राप्त कर सकता है। गुरु की कृपा से जो सत्यस्वरूप को पहचानने लगता है, वही तपस्वी मोक्ष को प्राप्त होता

है ॥१॥ म० ३ ॥ वह तपस्वी, जो सतिगुरु से भेंट कर शब्द के अभ्यास की तपस्या करता है; उसका तप सतिगुरु की सेवा के नाते परमात्मा द्वारा स्वीकृत होता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसे ही तपस्वी को प्रभु के दरबार में सम्मान प्राप्त होता है ॥२॥ पउड़ी ॥ संसार के कार्य-व्यापार के लिए रात और दिन पैदा किए गये हैं, गुरु के उपदेशों से ही जीव के हृदय में प्रकाश होता है जो कि अज्ञान रूपी अँधेरे को नष्ट करता है। परमात्मा ने हुक्म से ही समूची सर्जना की है और स्वयं वह तिनके-तिनके में व्याप्त है। सब कुछ परमात्मा के अपने वश में है, जीव को तो केवल गुरु के द्वारा हरि-नाम जपने का आदेश है; क्योंकि हरि-नाम से ही सत्य का ज्ञान प्राप्त होता है और सत्य स्वयं अपने को प्रकट करता है ॥ ५ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ अभिआगत एहि न आखीअनि जिन के चित महि भरमु। तिसदै दितै नानका तेहो जेहा धरमु। अभै निरंजनु परम पदु ताका भूखा होइ। तिसका भोजनु नानका विरला पाए कोइ ॥ १ ॥ म० ३ ॥ अभिआगत एहि न आखीअनि जि पर घरि भोजनु करेनि। उदरै कारणि आपणे बहले भेख करेनि। अभिआगत सेई नानका जि आतम गउणु करेनि। भालि लहनि सहु आपणा निज घरि रहणु करेनि ॥२॥ ॥ पउड़ी ॥ अंबरु धरति विछोड़िअनु विचि सचा असराउ। घरु दरु सभो सचु है जिसु विचि सचा नाउ। सभु सचा हुकमु वरतदा गुरमुखि सचि समाउ। सचा आपि तखतु सचा बहि सचा करे निआउ। सभु सचो सचु वरतदा गुरमुखि अलखु लखाई ॥ ६ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ साधु-फ़क़ीर उनको नहीं कहा जा सकता, जिनके मन में भ्रम है। ऐसे फ़क़ीरों को दिया हुआ दान का फल भी वैसा ही होता है अर्थात् भ्रम में पड़े हुए साधु को दिए दान का फल भी बुरा है। निर्भय और पावन प्रभु की प्राप्ति, जो कि परमपद है, उसका भूखा साधु, जो उसी की भिक्षा चाहता है, सही है; ऐसे अभ्यागत को उसका अपेक्षित भोजन देने में कोई विरल सतिगुरु ही समर्थ होता है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ अभ्यागत उन लोगों को नहीं कहा जाता, जो दूसरों के घर पर भोजन करते हैं, ऐसे लोग तो अपने पेट के लिए अनेक भेस बनाते रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सच्चे अभ्यागत (साधु-फ़क़ीर) वे ही हैं, जो आत्मा के भाव में लीन रहते हैं; अपने परमात्मा को खोजते हैं और प्रभु-पति की शरण में निवास करते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ आकाश

और धरती में परमात्मा ने एक अन्तराल बनाया है। दोनों के बीच में जो कुछ भी है, उसे अपनी शक्ति का सहारा दे रखा है। वह घर-द्वार सब सत्य है, जिसमें सत्यस्वरूप परमात्मा का नाम लिया जाता है। सब ओर सच्चे परमात्मा का हुक्म व्याप्त है, गुरु के द्वारा ही जीव उस सत्य में लीन हो सकता है। वह सत्यस्वरूप परमात्मा स्वयं सत्य के सिंहासन पर विराजमान है और सच्चा न्याय करता है। सब ओर उसी का सत्यस्वरूप व्याप्त है और उस अदृश्य को केवल गुरु की कृपा से ही देखा जा सकता है ॥ ६ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ रैणाइर माहि अनंतु है कूड़ी आवै जाइ। भाणै चलै आपणै बहुती लहै सजाइ। रैणाइर महि सभु किछु है करमी पलै पाइ। नानक नउनिधि पाईऐ जे चलै तिसै रजाइ ॥ १ ॥ म० ३ ॥ सहजे सतिगुरु न सेविओ विचि हउमै जनमि बिनासु। रसना हरि रसु न चखिओ कमलु न होइओ परगासु। बिखु खाधी मनमुखु मुआ माइआ मोहि विणासु। इकसु हरि के नाम विणु ध्रिगु जीवणु ध्रिगु वासु। जा आपे नदरि करे प्रभु सचा ता होवै दासनि दासु। ता अनदिनु सेवा करे सतिगुरू की कबहि न छोडै पासु। जिउ जल महि कमलु अलिपतो वरतै तिउ विचे गिरह उदासु। जन नानक करे कराइआ सभु को जिउ भावै तिव हरि गुणतासु ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ छतीह जुग गुबारु सा आपे गणत कीनी। आपे स्रिसटि सभ साजीअनु आपि मति दीनी। सिम्रिति सासत साजिअनु पाप पुंन गणत गणीनी। जिसु बुझाए सो बुझसी सचै सबदि पतीनी। सभु आपे आपि वरतदा आपे बखसि मिलाई ॥ ७ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ संसार-सागर में ही अनन्त ईश्वर का निवास है और वही सत्य है, शेष सब आवागमनमयी सृष्टि मिथ्या है। स्वेच्छाचारी जीवों को दण्ड मिलता है। इस सागर में सब कुछ प्राप्य है, लेकिन उसकी उपलब्धि प्रभु-कृपा से ही होती है। गुरु नानक कहते हैं कि यदि जीव प्रभु की इच्छा पर समर्पित हो जाए, तो वह विश्व की समस्त निधियों को पा जाता है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ जो जीव पूर्ण प्रेममय होकर सतिगुरु की सेवा में लीन नहीं होते, उनका जन्म अहंकार में ही नष्ट हो जाता है। जो जिह्वा से हरि-नाम के रस को नहीं चखते, उनका हृदय रूपी कमल कभी विकसित नहीं होता। वे विषय-विकार रूपी विष को खाकर

स्वेच्छा से मरते हैं और मोह-माया के कारण नष्ट हो जाते हैं। एकमात्र हरि-नाम के बिना संसार में रहने और जीने को धिक्कार है। जब प्रभु स्वयं कृपा करता है, तो जीव उसका दासानुदास बन जाता है; रात-दिन सतिगुरु की सेवा करता है और कभी उसके सहारे को नहीं छोड़ता। जिस प्रकार जल में कमल अलिप्त रहता है, वैसे ही वह गृहस्थी में भी उदासीन बन जाता है। दास नानक कहते हैं कि वह सब कुछ अपने आप करने में समर्थ है; जैसी उसकी इच्छा होती है, वैसा ही गुणों का भण्डार वह परमात्मा जीव को प्रदान करता है॥ २॥ पउड़ी॥ छत्तीस युगों अर्थात् अनेक युगों तक अन्धकार छाया रहा, फिर उसने स्वयं ही अपने को प्रकट किया और समूची सृष्टि का निर्माण करके दुनिया को विवेक का दान दिया। स्मृतियाँ, शास्त्र बनाये और पाप-पुण्य के हिसाब-किताब दुनिया को दिये। सच्चे शब्द में विश्वास लाकर जिसने चाहा, इस तथ्य को जान लिया। क्योंकि सत्यस्वरूपी वह शब्द सब जगह व्याप्त है और कृपापूर्वक जब चाहता है जीव को अपने में मिला लेता है॥ ७॥

॥ सलोक म० ३ ॥ इहु तनु सभो रतु है रतु बिनु तंनु न होइ। जो सहि रते आपणै तिन तनि लोभ रतु न होइ। भै पइऐ तनु खीणु होइ लोभ रतु विचहु जाइ। जिउ बैसंतरि धातु सुधु होइ तिउ हरि का भउ दुरमति मैलु गवाइ। नानक ते जन सोहणे जो रते हरि रंगु लाइ॥ १॥ म० ३॥ रामकली रामु मनि वसिआ ता बनिआ सीगारु। गुर कै सबदि कमलु बिगसिआ ता सउपिआ भगति भंडारु। भरमु गइआ ता जागिआ चूका अगिआन अंधारु। तिसनो रूपु अति अगला जिसु हरि नालि पिआरु। सदा रवै पिरु आपणा सोभावंती नारि। मनमुखि सीगारु न जाणनी जासनि जनमु सभु हारि। बिनु हरि भगती सीगारु करहि नित जंमहि होइ खुआरु। सैसारै विचि सोभ न पाइनी अगै जि करे सु जाणै करतारु। नानक सचा एकु है दुहु विचि है संसारु। चंगै मंदै आपि लाइअनु सो करनि जि आपि कराए करतारु॥ २॥ म० ३॥ बिनु सतिगुर सेवे सांति न आवई दूजी नाही जाइ। जे बहुतेरा लोचीऐ विणु करमा पाइआ न जाइ। अंतरि लोभु विकारु है दूजै भाइ खुआइ। तिन जंमणु मरणु न चुकई हउमै विचि दुखु पाइ। जिनी सतिगुर सिउ चितु लाइआ सो खाली कोई नाहि। तिन जम की तलब न होवई ना ओइ दुख सहाहि। नानक गुरमुखि

उबरे सचै सबदि समाहि ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ आपि अलिपतु सदा रहै होरि धंधै सभि धावहि । आपि निहचलु अचलु है होरि आवहि जावहि । सदा सदा हरि धिआईऐ गुरमुखि सुखु पावहि । निजघरि वासा पाईऐ सचि सिफति समावहि । सचा गहिर गंभीरु है गुर सबदि बुझाई ॥ ८ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ यह समूचा शरीर रक्त का बना हुआ है, बिना रक्त के शरीर नहीं चलता । किन्तु जो जीव अपने परमात्मा में लीन हो जाते हैं, उन्हें न शरीर का लोभ रहता है, न रक्त का । परमात्मा के भय में जीने से शरीर क्षीण होता है और उसमें से लोभ रूपी रक्त दूर हो जाता है । (जीव की स्थिति ऐसी होती है) जैसे अग्नि धातु को शुद्ध कर देती है, वैसे परमात्मा का भय रूपी अग्नि दुर्मति रूपी मैल को दूर कर देती है । गुरु नानक कहते हैं कि वे जीव सुन्दर कहलाते हैं, जो हरि के प्रेम में रँग जाते हैं ॥ १ ॥ म० ३ ॥ 'राग रामकली' में प्रभु की वाणी का गान करने से परमात्मा हृदय में निवास करता है, वही जीव का वास्तविक श्रृंगार है । गुरु के शब्द से हृदय-कमल विकसित होता है और उसमें राशि-राशि भक्ति उदित होती है । जीव का भ्रम नष्ट हो जाता है और वह अज्ञानान्धकार को दूर करके चिर-जाग्रत् अवस्था को प्राप्त करता है । जिस जीव को हरि से प्यार होता है, वह अति सुन्दर आत्मिक रूप को प्राप्त करता है और शोभावती स्त्री के समान नित्य अपने पति (प्रभु) के साथ रमण करता है । मनमुख जीव आध्यात्मिक श्रृंगार का स्वरूप नहीं जानते, इसीलिए अमूल्य मनुष्य-जन्म को गँवा बैठते हैं । जो जीव हरि-भक्ति के अतिरिक्त कोई अन्य प्रकार का श्रृंगार करता है, वह नित्य आवागमन में ख्वार होता है । संसार में उसे कोई शोभा नहीं मिलती, आगे परमात्मा ही जाने । गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा ही एक-मात्र सत्य है, दो की संज्ञा (जन्म और मरण) तो संसार के लिए है । अच्छे और बुरे कर्मों में वही प्रेरणा निहित है और प्रभु स्वयं ही सब कुछ करने और करानेवाला है ॥ २ ॥ म० ३ ॥ सतिगुरु की सेवा के बिना शान्ति नहीं आती और न ही कोई ऐसी दूसरी जगह है (जहाँ सहारा मिल सके)। जिसे हम बहुत कुछ चाहते हैं, वह भी कर्मों के बिना प्राप्त नहीं हो सकता । मन में लोभ के विकार से द्वैतभाव पैदा होता है (और जीव उसमें ख्वार हो जाता है); इसके जन्म-मरण का चक्कर समाप्त नहीं होता और वह अहंकार में पड़ा दुःख प्राप्त करता है । जो जीव सतिगुरु से लग्न लगा लेते हैं, वे भरपूर हो जाते हैं; उन्हें यम पीड़ा नहीं पहुँचा सकता और न ही किसी अन्य प्रकार का दुःख सहना पड़ता है । गुरु नानक कहते हैं कि गुरुमुख जीव सच्चे शब्द का आश्रय लेकर मोक्ष को प्राप्त होते हैं ॥ ३ ॥

।। पउड़ी ।। वह परमात्मा स्वयं सांसारिक परिवर्तन से अलिप्त रहता है और अन्य सब (उसी के संकेत पर) अपने-अपने कार्य-व्यापार में लगे रहते हैं। वह स्वयं निश्चल है, स्थिर है, और सब जन्म-मरण के चक्कर के कारण अस्थिर हैं। इसलिए सदा-सदा गुरुमुख को उस परमात्मा का ध्यान करना चाहिए, उसी से उसे सुख मिलता है। ऐसा करने से वह अपने वास्तविक घर को प्राप्त होता है और सत्यस्वरूप परमात्मा के गुण गाता है। वह सत्यस्वरूप प्रभु बड़ा गहन और गम्भीर है, केवल गुरु की शिक्षा से ही उसे जाना जा सकता है ।। ८ ।।

।। सलोक म० ३ ।। सचा नामु धिआइ तू सभो वरतै सचु। नानक हुकमै जो बुझै सो फलु पाए सचु। कथनी बदनी करता फिरै हुकमु न बूझै सचु। नानक हरि का भाणा मंने सो भगतु होइ विणु मंने कचु निकचु ।। १ ।। म० ३ ।। मनमुख बोलि न जाणनी ओना अंदरि कामु क्रोधु अहंकारु। ओइ थाउ कुथाउ न जाणनी उन अंतरि लोभु विकारु। ओइ आपणै सुआइ आइ बहि गला करहि ओना मारे जमु जंदारु। अगै दरगह लेखै मंगिऐ मारि खुआरु कीचहि कूड़िआर। एह कूड़ै की मलु किउ उतरै कोई कढहु इहु वीचारु। सतिगुरु मिलै ता नामु दिड़ाए सभि किलविख कटणहारु। नामु जपे नामो आराधे तिसु जन कउ करहु सभि नमसकारु। मलु कूड़ी नामि उतारीअनु जपि नामु होआ सचिआरु। जन नानक जिस दे एहि चलत हहि सो जीवउ देवणहारु ।। २ ।। पउड़ी ।। तुधु जेवडु दाता नाहि किसु आखि सुणाईऐ। गुरपरसादी पाइ जिथहु हउमै जाईऐ। रस कस सादा बाहरा सची वडिआईऐ। जिसनो बखसे तिसु देइ आपि लए मिलाईऐ। घट अंतरि अंम्रितु रखिओनु गुरमुखि किसै पिआई ।। ९ ।।

।। सलोक म० ३ ।। ऐ जीवो, तुम सच्चे परमात्मा के नाम का ध्यान करो, तभी सब ओर सत्य का माहौल बनेगा। गुरु नानक कहते हैं, जो जीव, प्रभु की आज्ञा में रहकर परमात्मा को जपता है, वही सत्य का मधुर फल चख सकता है। मुँहज़बानी बातें करनेवाला जो परमात्मा के हुक्म में नहीं बँधा है, कभी सत्य को नहीं पहचान सकता। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा की इच्छानुसार की गयी भक्ति ही स्वीकृत होती है, उसके बिना जीव पूर्णत: व्यर्थ और कच्चा रहता है ।।१।। म० ३ ।। मनमुख जीव कभी मधुर वाणी नहीं कहते, क्योंकि उनके भीतर काम-क्रोध

और अहंकार का निवास होता है। वे उचितानुचित स्थान की परख नहीं कर सकते, वे मन में लोभ के विकार से पीड़ित होते हैं। वह अपने स्वार्थ में अनेक बातें करते हैं और अन्तत: अत्याचारी यमदूतों द्वारा दण्ड के पात्र होते हैं। परमात्मा की दरगाह में तो कर्मों का हिसाब माँगा जानेवाला है, उत्तम कर्म नहीं होंगे तो वहाँ जीव को मार-पीटकर ख्वार किया जाता है। यह मिथ्या-व्यवहार की मलिनता क्योंकर दूर हो सकती है, इस पर विचार किया जाना चाहिए। यदि सतिगुरु मिल जाये और वह पापों के मैल को दूर करनेवाले हरि-नाम की दृढ़ शिक्षा दे तो नाम को जपने और नाम की आराधना करने से वह जीव सबके लिए सत्कार्य हो जाता है, उसे नमस्कार है। मिथ्या व्यवहार की मलिनता हरि-नाम के जल से ही दूर होती है और हरि-नाम को जपकर ही जीव सत्यस्वरूप बनता है। गुरु नानक कहते हैं कि जिस परमात्मा की ऐसी लीलाएँ हैं, वही दाता-प्रभु अटल है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, तुम्हारे समान बड़ा और कोई दाता नहीं है, जिसका गुणगान किया जा सके। तुम्हारी प्राप्ति गुरु की कृपा से अहम्-भाव का नाश कर लेने से होती है। वह परमात्मा संसार के रसों से ऊपर है और उसका सच्चा स्वरूप सराहनीय है। जिस पर वह कृपा करता है, उसे अपना रूप देता है और अपने में ही मिला लेता है। जीव के भीतर परमात्मा ने अमृत रखा है, गुरु के द्वारा कोई भी उस अमृत का पान कर सकता है ॥ ९ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ बाबाणीआ कहाणीआ पुत सपुत करेनि। जि सतिगुर भावै सु मंनि लैनि सेई करम करेनि। जाइ पुछहु सिम्रिति सासत बिआस सुक नारद बचन सभ स्रिसटि करेनि। सचै लाए सचि लगे सदा सचु समालेनि। नानक आए से परवाणु भए जि सगले कुल तारेनि ॥ १ ॥ म० ३ ॥ गुरू जिना का अंधुला सिख भी अंधे करम करेनि। ओइ भाणै चलनि आपणै नित झूठो झूठु बोलेनि। कूड़ु कुसतु कमावदे परनिंदा सदा करेनि। ओइ आपि डुबे परनिंदका सगले कुल डोबेनि। नानक जितु ओइ लाए तितु लगे उइ बपुड़े किआ करेनि ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ सभ नदरी अंदरि रखदा जेती सिसटि सभ कीती। इकि कूड़ि कुसति लाइअनु मनमुख विगूती। गुरमुखि सदा धिआईऐ अंदरि हरि प्रीती। जिन कउ पोतै पुंनु है तिन्ह वातिसिपीती। नानक नामु धिआईऐ सचु सिफति सनाई ॥१०॥

॥ सलोक म० ३ ॥ सुपूत जन अपने पूर्वजों की कथा कहते और उनकी लीक पर चलते हैं। सतिगुरु की इच्छा को सर्वोपरि मानकर वे

मान लेते हैं और उसी के अनुसार कर्म करते हैं। समूची सृष्टि को उपदेश देनेवाले वेदों, शास्त्रों, स्मृतियों, व्यासदेव, शुकदेव तथा नारदादि से पूछकर देख लो, वे भी यही बात कहेंगे। सत्य में मन लगाने से सत्य ही उपलब्ध होता है और जीव सदा सत्य का स्मरण करता है। गुरु नानक कहते हैं कि सत्य के इस घेरे में जो लोग आ जाते हैं, वे परमात्मा द्वारा स्वीकृत होते हैं और अपने समूचे कुल के मोक्ष का कारण बनते हैं ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ जिनका गुरु झूठा है, वे भी झूठे कर्म कमाते हैं। वे स्वेच्छाचारी कर्म करते हैं और नित्य मिथ्या-अभ्यास में रत रहते हैं। मिथ्या और अवाञ्छनीय काम करते हैं, परनिन्दा में लीन रहते हैं। ऐसे परनिन्दक, स्वयं तो डूबते ही हैं, समूचे वंश को डुबो देते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे बेचारे भी क्या कर सकते हैं ? उन्हें जिधर लगाया जाता है, वे उधर ही लग जाते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा ने जितनी सृष्टि बनायी है, सबको अपनी दृष्टि में रखता है। कुछ को मन के संकेतों में चलाकर वह व्यर्थ व अवाञ्छनीय कार्यों में ख़राब करता है और कुछ को गुरु के द्वारा अपनी आराधना में लगाता है और उनके भीतर अपने लिए प्रेम जगा लेता है। जिनके पास पुण्य है, उनके मुख से सदा प्रभु का गुणगान निकलता है; इसीलिए गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम का ध्यान करने से जीव सत्यस्वरूप प्रभु की स्तुति में लीन हो जाता है ॥ १० ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ सती पापु करि सतु कमाहि। गुर दीखिआ घरि देवण जाहि। इसतरी पुरखै खटिऐ भाउ। भावै आवउ भावै जाउ। सासतु बेदु न मानै कोइ। आपो आपै पूजा होइ। काजी होइ कै बहै निआइ। फेरे तसबी करे खुदाइ। वढी लै कै हकु गवाए। जे को पुछै ता पड़ि सुणाए। तुरक मंत्रु कनि रिदै समाहि। लोक मुहावहि चाड़ी खाहि। चउका दे कै सुचा होइ। ऐसा हिंदू वेखहु कोइ। जोगी गिरही जटा बिभूत। आगै पाछै रोवहि पूत। जोगु न पाइआ जुगति गवाई। कितु कारणि सिरि छाई पाई। नानक कलि का एहु परवाणु। आपे आखणु आपे जाणु ॥ १ ॥ म० १ ॥ हिंदू कै घरि हिंदू आवै। सूतु जनेऊ पड़ि गलि पावै। सूतु पाइ करे बुरिआई। नाता धोता थाइ न पाई। मुसलमानु करे वडिआई। विणु गुर पीरै को थाइ न पाई। राहु दसाइ ओथै को जाइ। करणी बाझहु भिसति न पाइ। जोगी कै घरि जुगति दसाई। तितु कारणि कनि मुंद्रा पाई। मुंद्रा पाइ फिरै संसारि। जिथै

किथै सिरजणहारु । जेते जीअ तेते वाटाऊ । चीरी आई ढिल न काऊ । एथै जाणै सु जाइ सिञाणै । होरु फकड़ु हिंदू मुसलमाणै । सभना का दरि लेखा होइ । करणी बाझहु तरै न कोइ । सचो सचु वखाणै कोइ । नानक अगै पुछ न होइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि का मंदरु आखीऐ काइआ कोटु गड़ु । अंदरि लाल जवेहरी गुरमुखि हरि नामु पड़ु । हरि का मंदरु सरीरु अति सोहणा हरि हरि नामु दिड़ु । मनमुख आपि खुआइअनु माइआ मोह नित कड़ु । सभना साहिबु एकु है पूरै भागि पाइआ जाई ॥ ११ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ दानी लोग पाप द्वारा धन एकत्रित करके दान करते हैं। कलियुग के गुरु सेवकों को उनके घर पर शिक्षा देने जाते हैं। स्त्री पुरुष से उसकी कमाई के लिए प्रेम करती है। (यदि कमाई न हो तो) कोई कहीं आये, कहीं भी जाये, कोई चिन्ता नहीं होती। शास्त्र-वेदादि को कोई नहीं मानता, सब अपने-अपने स्वार्थ की पूजा करते हैं। (गुरुजी आगे कलियुग के न्यायाधिकार की चर्चा करते हैं, यह गुरु-कालीन परिस्थितियों का चित्रण भी है।) क़ाज़ी न्यायाधीश बनकर न्याय के लिए बैठता है, ऊपरी मन से खुदा का नाम लेता और माला फेरता है, किन्तु रिश्वत लेकर अन्याय के पक्ष में निर्णय दे देता है। यदि कोई विरोध करे या कारण पूछे तो उसे शरह का कोई न कोई बिन्दु पढ़कर सुना देता है। तुर्कजन इस्लामी-कलिमे को कानों और मन में बसाते हैं, किन्तु लोगों को लूटते और निन्दा-चुगली करते हैं। हिन्दू लोग चौका-लेपन तो करते हैं, किन्तु निर्मलता किसी विरले में ही दीख पड़ती है। योगी लोग जटाओं में विभूति डालकर भी गृहस्थ बने हुए हैं और आगे-पीछे यतीत्व को भंग करते और सन्तानों को जन्म देते हैं। (कोई इनसे पूछे कि) सही अर्थों में योगी तो बन नहीं पाए, युक्ति सीखी नहीं, फिर किसलिए सिर में राख डाल बैठे ? गुरु नानक कहते हैं कि कलियुग की यही मर्यादा है कि कहने वाला ही स्वयं जाननेवाला होता है ॥ १ ॥ म० १ ॥ (हिन्दुओं के पाखण्डों को संकेत करते हैं,) हिन्दुओं के घर ब्राह्मण आता है और मन्त्रों का पाठ करते हुए गले में जनेऊ पहनाता है। ऐसा हिन्दू सूत्र को धारण करके भी बुरे कर्म करता है, तो उसके बाहरी नहाने-धोने की पवित्रता को कहीं कोई ठिकाना नहीं मिलता। मुसलमान अपने को दीनवाले कहकर अपनी प्रशंसा करते है, किन्तु गुरु के बिना वे भी खुदा को क़बूल नहीं होते। सही रास्ता पूछकर वहाँ कोई विरला ही पहुँचता है। सत्कर्मों के बिना किसी को स्वर्ग प्राप्त नहीं होता। योग-युक्ति जानने के लिए योगियों की

शरण ली जाती है और परमात्मा की प्राप्ति के लिए कानों में मुद्राएँ पहनी जाती हैं। किन्तु मुद्राएँ पहनकर संसार में भटकते रहते हैं, (यह नहीं जानते कि) वह सर्जक परमात्मा तो हर जगह मौजूद है। जितने भी जीव परमात्मा-पथ के पथिक हैं, वे मृत्यु का निमन्त्रण आने पर किसी प्रकार की ढील नहीं करते। जो इस संसार में परमात्मा को पहचान लेते हैं, वे ही आगे भी उसे प्राप्त करते हैं। अन्य सब हिन्दू-मुसलमान व्यर्थ हैं, यम के दरबार में सबका हिसाब-किताब होगा; उत्तम कर्मों के बिना कोई मुक्त नहीं हो सकेगा। किन्तु यदि कोई सत्यस्वरूप प्रभु में लीन होगा, नानक कहते हैं कि उसे आगे कोई नहीं पूछेगा ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ शरीर को परमात्मा के रहने का स्थान, बल्कि उसका दुर्ग कहना चाहिए। गुरु के द्वारा यदि हरि-नाम की शिक्षा पा ली जाए, तो शरीर के भीतर हीरे-जवाहर जैसे अमूल्य गुण मिल जाएँगे। परमात्मा के रहने का यह घर-शरीर सुन्दर है, हरि-नाम द्वारा इसकी सुन्दरता में अभिवृद्धि होती है। किन्तु मनमुख लोग नित्य मोह-माया में दुःखी होते हुए अपने आप को ख़्वार करते हैं। मालिक तो सबका एक ही है, किन्तु उसकी प्राप्ति केवल सौभाग्य-शाली को ही होती है ॥ ११ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ ना सति दुखीआ ना सति सुखीआ ना सति पाणी जंत फिरहि। ना सति मूंड मुडाई केसी ना सति पड़िआ देस फिरहि। ना सति रुखी बिरखी पथर आपु तछावहि दुख सहहि। ना सति हसती बधे संगल ना सति गाईं घाहु चरहि। जिसु हथि सिधि देवै जे सोई जिसनो देइ तिसु आइ मिलै। नानक ता कउ मिलै वडाई जिसु घट भीतरि सबदु रवै। सभि घट मेरे हउ सभना अंदरि जिसहि खुआई तिसु कउणु कहै। जिसहि दिखाला वाटड़ी तिसहि भुलावै कउणु। जिसहि भुलाई पंध सिरि तिसहि दिखावै कउणु ॥ १ ॥ ॥ म० १ ॥ सो गिरही जो निग्रहु करै। जपु तपु संजमु भीखिआ करै। पुंन दान का करे सरीरु। सो गिरही गंगा का नीरु। बोलै ईसरु सति सरूपु। परम तंत महि रेख न रूपु ॥ २ ॥ म० १ ॥ सो अउधूती जो धूपै आपु। भिखिआ भोजनु करै संतापु। अउहठ पटण महि भीखिआ करै। सो अउधूती सिव पुरि चड़ै। बोलै गोरखु सति सरूप। परम तंत महि रेख न रूप ॥ ३ ॥ म० १ ॥ सो उदासी जि पाले उदासु। अरध उरध करे निरंजन वासु। चंद सूरज की पाए गंढि।

तिसु उदासी का पड़ै न कंधु। बोलै गोपीचंदु सति सरूपु। परम तंत महि रेख न रूपु ॥ ४ ॥ म० १ ॥ सो पाखंडी जि काइआ पखाले। काइआ की अगनि ब्रहमु परजाले। सुपनै बिंदु न देई झरणा। तिसु पाखंडी जरा न मरणा। बोलै चरपटु सति सरूपु। परम तंत महि रेख न रूपु ॥ ५ ॥ ॥ म० १ ॥ सो बैरागी जि उलटे ब्रहमु। गगन मंडल महि रोपै थंमु। अहिनिसि अंतरि रहै धिआनि। ते बैरागी सत समानि। बोलै भरथरि सति सरूपु। परम तंत महि रेख न रूपु ॥ ६ ॥ म० १ ॥ किउ मरै मंदा किउ जीवै जुगति। कंन पड़ाइ किआ खाजै भुगति। आसति नासति एको नाउ। कउणु सु अखरु जितु रहै हिआउ। धूप छाव जे समकरि सहै। ता नानकु आखै गुरु को कहै। छिअ वरतारे वरतहि पूत। ना संसारी ना अउधूत। निरंकारि जो रहै समाइ। काहे भीखिआ मंगणि जाइ ॥ ७ ॥ पउड़ी ॥ हरि मंदरु सोई आखीऐ जिथहु हरि जाता। मानस देह गुर बचनी पाइआ सभु आतम रामु पछाता। बाहरि मूलि न खोजीऐ घर माहि बिधाता। मनमुख हरि मंदर की सार न जाणनी तिनी जनमु गवाता। सभ महि इकु वरतदा गुर सबदी पाइआ जाई ॥ १२ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ (यहाँ गुरुजी ने समाज में प्रचलित कतिपय मिथ्या रीति-रिवाजों का खण्डन किया है।) दुःख उठाने में या आनन्द-मग्न होने में जीव की सिद्धि नहीं है। पानी में जलचरों की तरह डुबकियाँ लगाने में भी जीव को सिद्धि प्राप्त नहीं होती। सिर पर से बाल मुँड़वा देने पर भी कोई सिद्धि नहीं और न ही देश में यत्र-तत्र शिक्षा-प्राप्ति के लिए ठोकरें खाने में सिद्धि मिलती है। वृक्षों, पत्थरों की उपासना अथवा उन्हीं की तरह स्थिर हो जाने में कोई सिद्धि नहीं है। करवत (आरा) द्वारा अपने आप को कटवाने और दुःख सहने में भी किसी को सिद्धि नहीं मिलती। सांसारिक ऐश्वर्य की प्राप्ति अर्थात् द्वार पर हाथी बाँध लेने से भी सिद्धि नहीं होती और न ही पशुओं को चराकर निर्धन जीवन व्यतीत करने में सिद्धि है। सिद्धि जिस परमात्मा के हाथ है, वही जिसे प्रदान करे वह सिद्ध हो सकता है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसके हृदय में हरि-नाम का स्मरण होता है, उसी को बड़ाई मिलती है, वही सिद्ध है, परमात्मा सब घरों में विद्यमान है; जिसे वह भुलावा दे, उसे कोई दूसरा क्योंकर राह दिखा सकता है। और जिसे वह मार्ग दिखाए, उसे कौन

भुला सकता है। जिस जीव को शुरू से ही उसने भुला दिया है, वह कभी सही रास्ते पर नहीं लग सकता ॥ १ ॥ म० १ ॥ (यहाँ गुरुजी ने गृहस्थ के लक्षण दिये हैं।) गृहस्थ वही है, जो इन्द्रियों को पापों की ओर से संयत करने का प्रयास करता है और जप-तप और संयम की भिक्षा करता है अर्थात् जो परमात्मा से जप-तप-संयम की माँग करता है। जो पुण्य-दान का शरीर बनाता है अर्थात् जो पुण्य और दान द्वारा अपने अस्तित्व को सार्थक करता है, वह गृहस्थ गंगाजल की तरह पवित्र है। सच्चा गृहस्थ ईश्वर को सत्यस्वरूप मानता है और परमतत्त्व को निर्गुण ब्रह्म के रूप में स्वीकार करता है ॥ २ ॥ म० १ ॥ अवधूत की सही पहचान यही है कि वह अहम्भाव को जला देता है। सन्ताप को भिक्षा का भोजन बनाता है और हृदय रूपी नगर में भिक्षा माँगने निकलता है। ऐसा अवधूत वाहिगुरु के देश में प्रविष्ट होता है और गोरख अर्थात् परमात्मा को सत्यस्वरूप मानता और परमतत्त्व को निर्गुण ब्रह्म-रूप में स्वीकार करता है ॥ ३ ॥ ॥ म० १ ॥ (अब गुरुजी उदासी के लक्षण बताते हैं।) उदासी अर्थात् विरक्त जीव वही है, जो विरक्ति को स्वीकार करता है और इधर-उधर सब जगह परमात्मा का वास स्वीकार करता है। अपने भीतर चाँद और सूर्य का समन्वय करता है अर्थात् सहृदयता की शीतलता और विवेक की गरिमा को एकत्रित करता है। ऐसे उदासी का शरीर कभी गलित नहीं होता; वह परमात्मा को सत्यस्वरूप मानता है और परमतत्त्व को निर्गुण ब्रह्म के रूप में स्वीकार करता है ॥ ४ ॥ म० १ ॥ सच्चा वामीमतानुयायी वह है, जो शरीर को निर्मल बनाने के लिए पापों को धोता है और शरीर की अग्नि में ब्रह्म को प्रकाशित करता है, स्वप्न में भी वीर्य को नहीं गँवाता, ऐसा वामी बुढ़ापे और मृत्यु पर विजय पा लेता है। वह भी परमात्मा को सत्यस्वरूप मानता है और परमतत्त्व को निर्गुण ब्रह्म के रूप में स्वीकार करता है ॥ ५ ॥ म० १ ॥ सच्चा वैरागी वह है, जो ब्रह्म को मन की ओर उलटता है अर्थात् परमात्मा को अन्तर में प्रकट करता है। सहस्रदल-कमल में स्थिर होता है और रात-दिन अन्तर्ध्यान रहता है। ऐसा वैरागी स्वयं वाहिगुरु-रूप हो जाता है; परमात्मा को सत्यस्वरूप पहचानता है और परमतत्त्व को निर्गुण ब्रह्म के रूप में स्वीकार करता है। (उपर्युक्त सलोकों में आये शब्द ईसरु, गोरखु, गोपीचन्द, चरपटु और भर्तृहरि आदि को कुछ विद्वानों ने व्यक्तियों के नामों से जोड़ा है। यह सच भी है कि इन नामों के व्यक्ति उदासी, विरागी, वामी या योगी थे। किन्तु हमारा मत है कि प्रत्येक सलोक में उक्त संज्ञाएँ केवल परमात्मद्योतक हैं, व्यक्तिवाचक नहीं।) ॥ ६ ॥ म० १ ॥ कान छिदवाकर भोजन करने से क्या विशेष लाभ है ? इससे बुराई क्योंकर मर सकती है और सही जीवन की युक्ति कैसे मिल सकती है ? वह कौन सा अक्षर है, जिस पर मन

स्थिर हो सकता है ? आस्तिक-नास्तिक तो एक ही बात है। (वह अक्षर केवल हरि-नाम ही हो सकता है।) जो व्यक्ति धूप-छावँ को समान रूप में स्वीकार करता है अर्थात् दुःख-सुख से अतीत रहता है, वही गुरु बन कर तुम्हें राह दिखा सकता है। सामान्यतः लोग उपर्युक्त छः प्रकार के आचरणों में शिष्य बनकर व्यवहार करते हैं, किन्तु वे न अच्छे गृहस्थ बन पाते हैं और न ही वैरागी। जो जीव सच्चे परमात्मा में तल्लीन रहता है, उसे दर-दर पर भीख माँगने की आवश्यकता नहीं पड़ती ॥ ७ ॥ ॥ पउड़ी ॥ हरि-मन्दिर उसी को कहा जाता है, जहाँ से हरि की जान-पहचान हो; मनुष्य-देह ही वह स्थान है, जहाँ से गुरु के उपदेश द्वारा वाहिगुरु को पहचाना जा सकता है। इसलिए परमात्मा को बाहर खोजने की आवश्यकता नहीं, परमात्मा हृदय में ही बसता है। मनमुख जीव हरि-मन्दिर के सत्य को नहीं जानता, अतः जीवन को व्यर्थ गँवा देता है। सब जीवों में वह एक परमात्मा ही बसता है, जो कि गुरु के आदेशानुसार आचरण करने पर पाया जाता है ॥ १२ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ मूरखु होवै सो सुणै मूरख का कहणा। मूरख के किआ लखण है किआ मूरख का करणा। मूरखु ओहु जि मुगधु है अहंकारे मरणा। एतु कमाणै सदा दुखु दुख ही महि रहणा। अति पिआरा पवै खूहि किहु संजमु करणा। गुरमुखि होइ सु करे वीचारु ओसु अलिपतो रहणा। हरि नामु जपै आपि उधरै ओसु पिछै डुबदे भी तरणा। नानक जो तिसु भावै सो करे जो देइ सु सहणा ॥ १ ॥ म० १ ॥ नानकु आखै रे मना सुणीऐ सिख सही। लेखा रबु मंगेसीआ बैठा कढि वही। तलबा पउसनि आकीआ बाकी जिना रही। अजराईलु फरेसता होसी आइ तई। आवणु जाणु न सुझई भीड़ी गली फही। कूड़ निखुटे नानका ओड़कि सचि रही ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ हरि का सभु सरीरु है हरि रवि रहिआ सभु आपै। हरि की कीमति ना पवै किछु कहणु न जापै। गुरपरसादी सालाहीऐ हरि भगती रापै। सभु मनु तनु हरिआ होइआ अहंकारु गवापै। सभु किछु हरि का खेलु है गुरमुखि किसै बुझाई ॥ १३ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ मूर्ख की कही बात मूर्ख ही समझता है। मूर्ख के चिह्न मूर्ख का आचरण ही होते हैं। मूर्ख अज्ञानी होता है और अहंकार में विचरता है। इस प्रकार के कर्मों से वह दुःखों को अर्जित

करता है और दु:ख में ही जीता है। यदि कोई प्रिय मित्र भी कुएँ में गिर रहा हो अर्थात् बुराई की ओर प्रवृत्त हो तो उसका कोई निदान होना ही चाहिए। यदि साथी गुरुमुख होगा, तो वह कुएँ में गिरते हुए मूर्ख मित्र को छोड़कर अलग हो जाएगा। उस समय स्थिति का यही इलाज है। हरि-नाम का जाप करनेवाले जीव अलग होकर स्वयं तो मुक्त होता ही है, साथ ही कुएँ में डूबते हुए या बुराई में प्रवृत्त होनेवाले मूर्ख जीव को भी बचा लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसे में विवेकवान् व्यक्ति जो कहे वैसा ही करना चाहिए और जो दे, उसके प्रति सहनशील रहना चाहिए ॥ १ ॥ म० १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि हे मन, सही शिक्षा को सुनो। परमात्मा जब आलेख पुस्तक निकालकर हिसाब-किताब माँगेगा तो मनमुख जीवों को बुलाकर हिसाब-किताब चुकता किया जाएगा, तब यमदूत कष्ट देने के लिए उन जीवों के पीछे लगेगा; उन्हें आना-जाना नहीं सूझेगा, तंग गली में वे फँसकर रह जाएँगे। गुरु नानक कहते हैं कि मिथ्या-व्यवहारी जीव अन्ततः पराजित हो जाते हैं, आखिर सत्य में ही बचाव है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा सब शरीरों में और सब जगह व्याप्त है। परमात्मा का मोल नहीं डाला जा सकता और न ही उसके सम्बन्ध में कुछ कहना सूझता है। गुरु की कृपा से ही उसका गुणगान सम्भव होता है और जीव हरि-भक्ति के रंग में रँग जाता है। वह अहंकार को त्यागकर तन-मन से उल्लसित हो उठता है। यह सब प्रभु की लीला है, जो गुरु की कृपा द्वारा ही जानी जा सकती है ॥ १३ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ सहंसर दान दे इंद्रु रोआइआ। परसरामु रोवै घरि आइआ। अजै सु रोवै भीखिआ खाइ। ऐसी दरगह मिलै सजाइ। रोवै रामु निकाला भइआ। सीता लखमणु विछुड़ि गइआ। रोवै दहसिरु लंक गवाइ। जिनि सीता आदी डउरू वाइ। रोवहि पांडव भए मजूर। जिन कै सुआमी रहत हदूरि। रोवै जनमेजा खुइ गइआ। एकी कारणि पापी भइआ। रोवहि सेख मसाइक पीर। अंति कालि मतु लागै भीड़। रोवहि राजे कंन पड़ाइ। घरि घरि मागहि भीखिआ जाइ। रोवहि किरपन संचहि धनु जाइ। पंडित रोवहि गिआनु गवाइ। बाली रोवै नाहि भतारु। नानक दुखीआ सभु संसारु। मंने नाउ सोई जिणि जाइ। अउरी करम न लेखै लाइ ॥ १ ॥ म० २ ॥ जपु तपु सभु किछु मंनिऐ अवरि कारा सभि बादि। नानक मंनिआ मंनीऐ बुझीऐ गुर परसादि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ काइआ हंस धुरि मेलु करतै

लिखि पाइआ। सभ महि गुपतु वरतदा गुरमुखि प्रगटाइआ। गुण गावै गुण उचरै गुण माहि समाइआ। सची बाणी सचु है सचु मेलि मिलाइआ। सभु किछु आपे आपि है आपे देइ वडिआई ॥ १४ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ इन्द्र को सहस्र-भगा होने का अभिशाप देकर परमात्मा ने ही रुलाया (इन्द्र को गौतम ऋषि ने यह शाप दिया था, क्योंकि इन्द्र ने छल से उसकी पत्नी अहल्या से संयोग प्राप्त किया था), परशुराम को अपने ही घर पछताना पड़ा था (परशुराम का बल श्रीराम के सम्मुख शेष हो गया था), अज, जो श्रीराम का बाबा था, अपनी ही दान दी गयी लीद खाकर पछताया था। परमात्मा के दरबार में सबको यथा-कर्म दण्ड मिलता है। यहाँ तक कि श्रीराम को भी देश-निकाला मिला, सीता और लक्ष्मण बिछुड़ गये। रावण लंका को गँवाकर पछताया, जिसने फ़क़ीर का रूप बदलकर सीता को हर लिया था। पाँचों पाण्डव मज़दूरी करते पछताते रहे, जबकि स्वयं श्रीकृष्ण उनके निकट रहे थे। जनमेजय कुपथ पर पड़ा पछताता रहा, एक ही ग़लती के कारण उसे पापी होकर बदला चुकाना पड़ा। बड़े-बड़े शेख़, पीर इसीलिए दुःखी रहते हैं कि सम्भवतः अन्त में कोई मुसीबत आ पड़े। भर्तृहरि-सरीखे राजा कान फड़वाकर भी पछताते रहे, घर-घर में जाकर भिक्षा माँगनी पड़ी। कृपण जन धन-संग्रह करके भी रोते हैं, ज्ञानी लोग ज्ञान को गँवाकर रोते हैं। लड़की पति के बिना पछताती है। गुरु नानक कहते हैं कि कोई कुछ भी करे, सारा संसार किसी न किसी कारणवश दुःखी है। जो हरि-नाम को जपता है, वही विजेता होता है, अन्य कोई कार्य प्रभु के लेखे में नहीं गिना जाता ॥ १ ॥ म० २ ॥ हरि का नाम मानने में ही सब प्रकार के जप-तप निहित हैं, अन्य सब कार्य व्यर्थ हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम को माननेवाला ही गुरु-कृपा से आदर पाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ शरीर और आत्मा का मेल परमात्मा ने स्वयं बनाया है। वह स्वयं सबमें व्याप्त है, सिर्फ़ गुरु के द्वारा ही उसे प्रगट किया जा सकता है। जो जीव प्रभु के गुण गाता है, गुणों का उच्चारण करता है और गुणों में ही समाया रहता है, वह सच्ची गुरुवाणी द्वारा स्वयं सत्य-रूप हो जाता और दूसरों को भी परमात्मा के साथ मिला देता है। परमात्मा सब कुछ स्वयं ही है और अपनी इच्छा से ही वह योग्य जीवों को बड़ाई प्रदान करता है ॥ १४ ॥

॥ सलोक म० २ ॥ नानक अंधा होइ कै रतना परखण जाइ। रतना सार न जाणई आवै आपु लखाइ ॥ १ ॥

।। म० २ ।। रतना केरी गुथली रतनी खोली आइ । वखर तै वणजारिआ दुहा रही समाइ । जिन गुणु पलै नानका माणक वणजहि सेइ । रतना सार न जाणनी अंधे वतहि लोइ ।। २ ।। ।। पउड़ी ।। नउ दरवाजे काइआ कोटु है दसवै गुपतु रखीजै । बजर कपाट न खुलनी गुर सबदि खुलीजै । अनहद वाजे धुनि वजदे गुर सबदि सुणीजै । तितु घट अंतरि चानणा करि भगति मिलीजै । सभ महि एकु वरतदा जिनि आपे रचन रचाई ।।१५।।

।। सलोक म० २ ।। गुरु नानक कहते हैं कि अन्धा व्यक्ति यदि रत्नों को परखने जाए तो वह रत्न तो क्या परखेगा, अपनी मूर्खता प्रकट कर लौट आएगा अर्थात् विवेकहीन जीव परमतत्त्व का पारखी नहीं हो सकता ।। १ ।। म० २ ।। रत्नों की थैली कोई जौहरी ही खोल और पहचान सकता है अर्थात् हरि-नाम के रत्न की थैली गुरु रूपी जौहरी ही खोलता है । गुरुमुखों के मन में यह सौदा समा जाता है; क्योंकि जिसके पास गुण है, गुरु नानक कहते हैं कि वही हरिनाम-रत्न का व्यापार कर सकता है । जो लोग रत्नों की पहचान नहीं जानते अर्थात् अज्ञानी हैं, वे अन्धों की तरह संसार में भटकते रहते हैं ।। २ ।। पउड़ी ।। यह शरीर नौ दरवाज़ों का दुर्ग है, इसमें दसवाँ दरवाज़ा गुप्त रखा गया है । यह द्वार बहुत कठिन है, केवल गुरु के शब्दों से ही खोला जा सकता है । भीतर अनाहत ध्वनि गुंजरित होती है, जिसके स्वर को पकड़ने के लिए गुरु की वाणी का ही सहारा होता है । जो इस ध्वनि को सुन लेता है, उसके अन्तर्मन में प्रकाश हो जाता है और वह भक्ति-भाव में लीन होता है । वह परमात्मा ही समूची रचना का सृजन करनेवाला है और सबमें स्वयं व्याप्त है ।। १५ ।।

।। सलोक म० २ ।। अंधे कै राहि दसिऐ अंधा होइ सु जाइ । होइ सुजाखा नानका सो किउ उझड़ पाइ । अंधे एहि न आखीअनि जिन मुखि लोइण नाहि । अंधे सेई नानका खसमहु घुथे जाहि ।। १ ।। म० २ ।। साहिबि अंधा जो कीआ करे सुजाखा होइ । जेहा जाणै तेहो वरतै जे सउ आखै कोइ । जिथै सु वसतु न जापई आपे वरतउ जाणि । नानक गाहकु किउ लए सकै न वसतु पछाणि ।।२।। म० २।। सो किउ अंधा आखीऐ जि हुकमहु अंधा होइ । नानक हुकमु न बुझई अंधा कहीऐ सोइ ।। ३ ।। पउड़ी ।। काइआ अंदरि गड़ु कोटु है सभि दिसंतर देसा । आपे ताड़ी लाईअनु सभ महि परवेसा । आपे स्रिसटि

साजीअनु आपि गुपतु रखेसा। गुर सेवा ते जाणिआ सचु परगटीएसा। सभु किछु सचो सचु है गुरि सोझी पाई ॥ १६ ॥

॥ सलोक म० २ ॥ अन्धे के रास्ता बताने पर अन्धा ही मार्ग समझ सकता है। आँखों वाला व्यक्ति पथभ्रष्ट नहीं होता। अन्धा वह नहीं है, जिसके चेहरे में आँखें नहीं होतीं; परमात्मा से पथभ्रष्ट होनेवाले ही अन्धे होते हैं ॥ १ ॥ म० २ ॥ परमात्मा ने जिसे अन्धा किया है, वह परमात्मा के ही करने पर दृष्टिवान् हो सकता है। अन्धा जो जानता है वही करता है, भले ही उसे कोई कुछ भी कहे। जहाँ वास्तविक तत्त्व को नहीं पहचाना जाता, वहाँ निश्चय ही अहंभाव का चलन होता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो ग्राहक किसी वस्तु को पहचान नहीं पाता, वह उसकी खरीददारी कैसे करेगा ॥ २ ॥ म० २ ॥ उस जीव को अन्धा क्यों कहा जाए जो प्रभु-इच्छा से अन्धा हो गया हो। वास्तविक अन्धा तो वह है जो प्रभु की इच्छा को नहीं पहचानता ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ शरीर के भीतर सभी प्रकार के दुर्ग और भवन तथा देश-देश की वस्तुएँ मौजूद हैं (जो भी चीज़ें मनुष्य पैदा करता है, मूलतः वे उसके भीतर से ही निकलती हैं)। परमात्मा ने स्वयं निर्गुण रूप में समाधि लगायी थी और स्वयं ही गुणाकार होकर सबमें प्रविष्ट हुआ बैठा है। वह स्वयं सृष्टि को बनाता है और अपने आप को गुप्त रखता है। जो जीव गुरु की सेवा करता है, उसी के लिए वह प्रगट होता है। गुरुजी का विश्वास है कि गुरु के द्वारा विवेक जाग्रत् होने पर सब कुछ सत्य ही प्रगट होता है ॥१६॥

॥ सलोक म० १ ॥ सावणु राति अहाड़ु दिहु कामु क्रोधु दुइ खेत। लबु वत्र दरोगु बीउ हाली राहकु हेत। हलु बीचारु विकार मण हुकमी खटे खाइ। नानक लेखै मंगिऐ अउतु जणेदा जाइ ॥ १ ॥ म० १ ॥ भउ भुइ पवितु पाणी सतु संतोखु बलेद। हलु हलेमी हाली चितु चेता वत्र वखत संजोगु। नाउ बीजु बखसीस बोहल दुनीआ सगल दरोग। नानक नदरी करमु होइ जावहि सगल विजोग ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मनमुखि मोहु गुबारु है दूजै भाइ बोलै। दूजै भाइ सदा दुखु है नित नीरु विरोलै। गुरमुखि नामु धिआईऐ मथि ततु कढोलै। अंतरि परगासु घटि चानणा हरि लधा टोलै। आपे भरमि भुलाइदा किछु कहणु न जाई ॥ १७ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ (मनमुख जीवों की खेती कैसी होती है, इस पर विचार करते हैं।) सावनी और आषाढ़ी दो फ़सलें रात और दिन के रूप

में हैं, जिनमें काम और क्रोध की खेती होती है। लोभ का बीज बोया जाता है और मोह उसका हलवाहा बनता है। विकृत विचारों का हल चलाया जाता है और प्रभु की इच्छा से मिलनेवाले कर्म-फल का भोग किया जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसा मनमुख कृषक अन्ततः जीवन में व्यर्थ प्रमाणित होता है ॥ १ ॥ म० १ ॥ यदि वह भाव की भूमि को निर्मलता के जल से सींचे और सत्य-सन्तोष के बैल बनाए; विनम्रता का हल चलाए और मन में हलवाहा बनकर प्रभु-स्मरण की भली भूमि बनाकर प्रभु के साथ संयोग को बीजने के वक़्त को पहचाने और संसार को मिथ्या मानकर हरि-नाम का बीज बो दे, तो गुरु नानक कहते हैं कि उस पर प्रभु की कृपा होगी और उसके सब वियोग दूर हो जाएँगे ॥२॥ पउड़ी ॥ मनमुख के भीतर मोह होता है, इसलिए वह सदैव द्वैत-भाव में विचरता है। द्वैत-भाव में विचरने में सदा दुःख होता है, यह जल के मन्थन के समान है, जिसमें से कुछ उपलब्ध होने की आशा नहीं होती। यदि गुरु के द्वारा हरि-नाम का ध्यान किया जाए, तो तत्त्व का मन्थन सम्भव होता है और परिणामतः हृदय में प्रकाश हो जाता है और ढूँढ़ने से वही परमात्मा मिल जाता है। ऊपर के भ्रम सब उसने स्वयं पैदा किए हैं, जिनके सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता ॥ १७ ॥

॥ सलोक म० २ ॥ नानक चिंता मति करहु चिंता तिसही हेइ । जल महि जंत उपाइअनु तिना भि रोजी देइ । ओथै हटु न चलई ना को किरस करेइ । सउदा मूलि न होवई ना को लए न देइ । जीआ का आहारु जीअ खाणा एहु करेइ । विचि उपाए साइरा तिना भि सार करेइ । नानक चिंता मत करहु चिंता तिसही हेइ ॥ १ ॥ म० १ ॥ नानक इहु जीउ मछुली झीवरु त्रिसना कालु । मनूआ अंधु न चेतई पड़ै अचिंता जालु । नानक चितु अचेतु है चिंता बधा जाइ । नदरि करे जे आपणी ता आपे लए मिलाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ से जन साचे सदा सदा जिनी हरि रसु पीता । गुरमुखि सचा मनि वसै सचु सउदा कीता । सभु किछु घर ही माहि है वडभागी लीता । अंतरि त्रिसना मरि गई हरि गुण गावीता । आपे मेलि मिलाइअनु आपे देइ बुझाई ॥ १८ ॥

॥ सलोक म० २ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि चिन्ता मत करो, क्योंकि परमात्मा स्वयं सबकी चिन्ता करता है। जल में उसने जितने जीव पैदा किए हैं, उन सबको भी वह भोजन देता है। वहाँ कोई दुकान नहीं चलती और न ही कोई खेती-बाड़ी करता है। कोई सौदेबाज़ी भी

नहीं होती, कोई लेन-देन वहाँ नहीं है; वहाँ कुछ जीवों का आहार अन्य जीवों को बना दिया जाता है। जो जीव समुद्रों में पैदा किए हैं, उनकी भी सार-ख़बर वह लेता है। इसलिए चिन्ता मत करो, क्योंकि परमात्मा सबकी चिन्ता करता है ॥ १ ॥ म० १ ॥ नानक कहते हैं कि यह जीव मछली है और तृष्णा रूपी काल मछुआ है। मन अन्धा है, इसलिए असावधानीपूर्वक उसके जाल में फँस जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि लापरवाही के कारण यह जीव बँधा फिरता है; यदि इस पर प्रभु की कृपा हो जाए तो इसका प्रभु से संयोग हो सकता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिन जीवों ने हरि-नाम का रसपान किया है, वे सदा सत्य-रूप हो जाते हैं। गुरु के द्वारा उनके मन में सत्यस्वरूप परमात्मा निवास करता है और वे सत्य का सौदा करते हैं। वास्तव में सब कुछ हृदय में ही विद्यमान है, कोई भाग्यशाली जीव ही इसे प्राप्त करता है। हरि का गुण गाने से उसकी तृष्णा नष्ट हो जाती है और परमात्मा स्वयं उसे अपने में लीन कर लेता है ॥ १८ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ वेलि पिंञाइआ कति वुणाइआ। कटि कुटि करि खुंबि चड़ाइआ। लोहा वढे दरजी पाड़े सूई धागा सीवै। इउ पति पाटी सिफती सीपै नानक जीवत जीवै। होइ पुराणा कपड़ु पाटै सूई धागा गंढै। माहु पखु किहु चलै नाही घड़ी मुहतु किछु हंढै। सचु पुराणा होवै नाही सीता कदे न पाटै। नानक साहिबु सचो सचा तिचरु जापी जापै ॥ १ ॥ ॥ म० १ ॥ सच की काती सचु सभु सारु। घाड़त तिस की अपर अपार। सबदे साण रखाई लाइ। गुण की थेकै विचि समाइ। तिसदा कुठा होवै सेखु। लोहू लबु निकथा वेखु। होइ हलालु लगै हकि जाइ। नानक दरि दीदारि समाइ ॥ २ ॥ ॥ म० १ ॥ कमरि कटारा बंकुड़ा बंके का असवारु। गरबु न कीजै नानका मतु सिरि आवै भारु ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ सो सतसंगति सबदि मिलै जो गुरमुखि चलै। सचु धिआइनि से सचे जिन हरि खरचु धनु पलै। भगत सोहनि गुण गावदे गुरमति अचलै। रतन बीचारु मनि वसिआ गुर कै सबदि भलै। आपे मेलि मिलाइदा आपे देइ वडिआई ॥ १९ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ (यहाँ कपास से कपड़ा बनाने और उसके प्रयोग का रूपक प्रस्तुत किया जा रहा है।) कपास की बेलकर रूई को काता और बुना जाता है। तब काट-कूटकर भट्ठी पर चढ़ाया जाता है।

अच्छे दर्ज़ी के द्वारा कैंची से काटकर सूई-धागे से सिया जाता है। इसी तरह खोया हुआ सम्मान परमात्मा के गुणगान द्वारा पुनः प्राप्त कर लिया जाता है। यदि कपड़ा पुराना होकर फट जाए तो सूई-धागा लेकर उसे पुनः सी लिया जाता है, किन्तु ऐसा कपड़ा ज़्यादा देर नहीं टिकता। कुछ ही समय में पुनः फट जाता है अर्थात् महीना-पन्द्रह दिन न चलकर घड़ी-मुहूर्त में ही पुनः फट जाता है। सत्य कभी पुराना नहीं होता और एक बार सीने पर दुबारा नहीं फटता। अभिप्राय यह है कि बाहरी ढंगों से बनाया सुन्दरतर कपड़ा भी पुराना हो जाता और फट जाता है; किन्तु जो जीव सत्य की ओढ़नी ओढ़ लेते हैं, वे कभी उससे वञ्चित नहीं होते। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा तभी सत्यस्वरूप दीख पड़ता है, जब निरन्तर उसका नाम जपा जाए ॥ १ ॥ म० १ ॥ (मनुष्य-जीवन में हलाल का स्वरूप बताते हैं। पशु को काट देना हलाल नहीं। जीवन में हलाल का सही स्वरूप परमात्मा के दरबार में पहुँचने में है।) छुरी समूचे तौर पर सत्य की बनी हुई हो और उसे विशेष अपार भाव से निर्मित किया जाए। शब्द की सान पर उसे तेज़ किया जाए और गुणों की म्यान में रखा जाए तो उस छुरी से यदि शेख़ को हलाल किया जाय और उसमें लोभ रूपी रक्त निकल जाए; तभी वह हलाल होकर हक़ अर्थात् सत्यस्वरूप परमात्मा से जाकर मिल जाता है और उसके दर्शनों द्वारा ही उसके दरबार में स्थान पाता है ॥ २ ॥ म० १ ॥ जिसकी कमर में सुन्दर कटार है और जो सुन्दर घोड़े पर सवार है, उसे गर्व नहीं करना चाहिए, कहीं इससे उसके सिर पर पाप का बोझ न आ जाए ॥३॥ पउड़ी ॥ जो जीव गुरुमुखों के रास्ते पर चलता है, वह परमात्मा के शब्द में मिलकर सत्संगति का रस पाता है। जिनके पास हरि-नाम रूपी धन है, वे ही वास्तव में सत्य में ध्यानस्थ होते हैं। भक्तजन गुरुमति में स्थिर होकर परमात्मा के गुण गाते हुए ही शोभते हैं। गुरु के शब्दों को मन में विचार कर ही वे श्रेष्ठ बनते हैं। ऐसे जीवों को परमात्मा अपने आप से मिला लेता है और बड़ाई देता है ॥ १९ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ आसा अंदरि सभु को कोइ निरासा होइ। नानक जो मरि जीविआ सहिला आइआ सोइ ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ ना किछु आसा हथि है केउ निरासा होइ। किआ करे एह बपुड़ी जां भुोलाए सोइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ ध्रिगु जीवणु संसार सचे नाम बिनु। प्रभु दाता दातार निहचलु एहु धनु। सासि सासि आराधे निरमलु सोइ जनु। अंतरजामी अगमु रसना एकु भनु। रवि रहिआ सरबति नानकु बलि जाई ॥ २० ॥

।। सलोक म० ३ ।। सारा संसार आशा में जी रहा है, कोई विरला ही निराशा को ग्रहण करता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो मरकर जी लेता है, वही आध्यात्मिक सफलता को प्राप्त करता है।। १ ।। ।। म० ३ ।। आशा के हाथ में कुछ नहीं, निराशा भी बेकार ही है; क्योंकि सब कुछ परमात्मा के हाथ में है। जब वह भुलाता है तो ये बेचारी आशा-निराशा क्या कर सकती है ! ।। २ ।। पउड़ी ।। प्रभु के सच्चे नाम के बिना संसार में जीने को धिक्कार है। सबको यथायोग्य देनेवाला दाता प्रभु ऐसा धन है कि श्वास-श्वास उसकी आराधना करनेवाला जीव निर्मल होता है। अन्तर्यामी अगम प्रभु को याद करो, वह सब जगह व्याप्त है और नानक उसी पर क़ुर्बान है।। २० ।।

।। सलोकु म० १ ।। सरवर हंस धुरे ही मेला खसमै एवै भाणा। सरवर अंदरि हीरा मोती सो हंसा का खाणा। बगुला कागु न रहई सरवरि जे होवै अति सिआणा। ओना रिजकु न पइओ ओथै ओन्हा होरो खाणा। सचि कमाणै सचो पाईऐ कूड़ै कूड़ा माणा। नानक तिन कौ सतिगुरु मिलिआ जिना धुरे पैया परवाणा ।। १ ।। साहिबु मेरा उजला जेको चिति करेइ। नानक सोई सेवीऐ सदा सदा जो देइ। नानक सोई सेवीऐ जितु सेविऐ दुखु जाइ। अवगुण वंञनि गुण रवहि मनि सुखु वसै आइ ।। २ ।। पउड़ी ।। आपे आपि वरतदा आपि ताड़ी लाईअनु। आपे ही उपदेसदा गुरमुखि पतीआईअनु। इकि आपे उझड़ि पाइअनु इकि भगती लाइअनु। जिसु आपि बुझाए सो बुझसी आपे नाइ लाईअनु। नानक नामु धिआईऐ सची वडिआई ।। २१ ।। १ ।। सुधु ।।

।। सलोकु म० १ ।। गुरु रूपी सरोवर तथा गुरुमुख रूपी हंसों का मेल परमात्मा ने शुरू से ही बना रखा है। सरोवर के भीतर के हीरा-मोती हंसों का भोजन हैं। बगुला या कौआ चाहे कितना भी सयाना हो, कभी सरोवर में नहीं रहता। उनका भोजन वहाँ नहीं है। सत्य की कमायी करने से ही सत्य की प्राप्ति होती है और मिथ्या की कमायी करने से मिथ्या उत्पन्न होता है। गुरु नानक कहते हैं कि उन्हीं को गुरु की प्राप्ति होती है, जिनके लिए आरम्भ से ही ऐसी योजना मौजूद हो ।। १ ।। मेरा प्रभु, उज्ज्वल है, यदि मन में उसका स्मरण किया जाए (तो वह उज्ज्वलता हमें प्राप्त होती है)। नानक कहते हैं कि उस परमात्मा का गुण गाओ, जिससे दुःखों का निवारण

होता है और जिससे अवगुण नष्ट होकर मन में सुखपूर्वक गुणों का वास होता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा स्वयं अपने आप में लीन है और सबमें व्याप्त भी है। वही सर्वोत्तम उपदेशक है और गुरु के द्वारा अपनी बात का विश्वास करवाता है। कुछ जीवों को अपने आप पथभ्रष्ट करता है और कुछ को भक्ति में लगाता है। जिसे वह अपनी पहचान देता है वही उसे पहचान सकता है, और जिसे वह हरि-नाम से जोड़ता है वही जुड़ सकता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम का ध्यान करनेवाला जीव ही सच्ची बड़ाई प्राप्त करता है ॥ २१ ॥ १ ॥ सुधु ॥

रामकली की वार महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सलोक म० ५ ॥ जैसा सतिगुरु सुणीदा तैसो ही मै डीठु। विछुड़िआ मेले प्रभू हरि दरगह का बसीठु। हरि नामो मंत्रु द्रिड़ाइदा कटे हउमै रोगु। नानक सतिगुरु तिना मिलाइआ जिना धुरे पइआ संजोगु ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ इकु सजणु सभि सजणा इकु वैरी सभि वादि। गुरि पूरै देखालिआ विणु नावै सभ बादि। साकत दुरजन भरमिआ जो लगे दूजै सादि। जन नानकि हरि प्रभु बुझिआ गुर सतिगुर कै परसादि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ थटणहारै थाटु आपे ही थटिआ। आपे पूरा साहु आपे ही खटिआ। आपे करि पासारु आपे रंग रटिआ। कुदरति कीम न पाइ अलख ब्रहमटिआ। अगम अथाह बेअंत परै परटिआ। आपे वड पातिसाहु आपि वजीरटिआ। कोइ न जाणै कीम केवडु मटिआ। सचा साहिबु आपि गुरमुखि परगटिआ ॥ १ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ गुरु के सम्बन्ध में जैसा हमने सुना था, देखने पर उसे वैसा ही पाया। वह परमात्मा से बिछुड़े हुए जीवों को पुनः मिला देता है और परमात्मा के दरबार में जीवों का मध्यस्थ बनकर सहयोग देता है। वह (गुरु) हरि-नाम का उपदेश देकर उसका जाप करवाता है और अहंभाव का रोग दूर करता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसा सच्चा गुरु केवल उन्हीं जीवों को मिलता है, जिनका संयोग शुरू से ही लिखा होता है ॥ १ ॥ म० ५ ॥ यदि एक परमात्मा मित्र बन जाए, तो सभी मित्र हो जाते हैं; यदि उससे वैर हो तो सभी शत्रु हो जाते हैं। पूरे गुरु के सम्पर्क में ही यह ज्ञात होता है कि हरि-नाम के बिना

सब कुछ व्यर्थ है। द्वैत-भाव में पड़े मायावी जीव शाक्त और दुर्जन होते हैं और आवागमन में भटकते रहते हैं। दास नानक कहते हैं कि परमात्मा का ज्ञान गुरु की कृपा से ही होता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सृजनहार ने समूची रचना स्वयं ही की है; वह स्वयं श्रेष्ठ है और अपने व्यापार में लाभ उठानेवाला भी वही है। सारा प्रसार उसी का है और वह स्वयं प्रसार के रंगों में मिला हुआ है। अलख ब्रह्म की लीलाओं की कोई क़ीमत नहीं डाल सकता; वह अगम, अथाह, अनन्त और परे से परे है। वह बादशाह है, वज़ीर भी स्वयं ही है; कोई इसके स्थान का मूल्यांकन नहीं कर पाता। ऐसा सच्चा परमात्मा गुरु की सहायता द्वारा ही प्रगट होता है ॥ १ ॥

॥ सलोकु म० ५ ॥ सुणि सजण प्रीतम मेरिआ मै सतगुरु देहु दिखालि। हउ तिसु देवा मनु आपणा नित हिरदै रखा समालि। इकसु सतिगुर बाहरा ध्रिगु जीवणु संसारि। जन नानक सतिगुरु तिना मिलाइओनु जिन सदही वरतै नालि ॥ १ ॥ म० ५ ॥ मेरै अंतरि लोचा मिलण की किउ पावा प्रभ तोहि। कोई ऐसा सजणु लोड़ि लहु जो मेले प्रीतमु मोहि। गुरि पूरै मेलाइआ जत देखा तत सोइ। जन नानक सो प्रभु सेविआ तिसु जेवडु अवरु न कोइ ॥२॥ पउड़ी ॥ देवणहारु दातारु कितु मुखि सालाहीऐ। जिसु रखै किरपा धारि रिजकु समाहीऐ। कोइ न किसही वसि सभना इक धर। पाले बालक वागि दे कै आपि कर। करदा अनद बिनोद किछू न जाणीऐ। सरब धार समरथ हउ तिसु कुरबाणीऐ। गाईऐ राति दिनंतु गावण जोगिआ। जो गुर की पैरी पाहि तिनी हरि रसु भोगिआ ॥ २ ॥

॥ सलोकु म० ५ ॥ हे मेरे प्रियतम, परमात्मा, मुझे (कृपा करके) सतिगुरु से मिला दो। मैं अपना हृदय उसे अर्पित कर दूँगा और सदा मन में उसे स्थिर करके रखूँगा। सतिगुरु के बिना संसार में जीने को धिक्कार है। गुरु नानक कहते हैं कि जिन्हें सतिगुरु मिल जाता है, वह सदा उनका साथ देता है ॥ १ ॥ म० ५ ॥ मेरे भीतर मिलन की चाहत है, हे प्रभु, मैं तुम्हें कैसे पा सकता हूँ ? कोई ऐसा सज्जन खोजना है, जो मुझे मेरे प्रियतम को मिला दे। पूरा गुरु ही समर्थ है, जिसने मुझे उससे मिलाया है और अब मैं जिधर देखता हूँ उधर मुझे वही दीख पड़ता है। दास नानक ने उसी परमात्मा की सेवा में अपने को समर्पित किया है,

जिसके बराबर अन्य कोई नहीं है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ देनेवाले दाता प्रभु की किस मुख से सराहना करें ? जिस पर वह कृपा करता है, उसे सब कुछ देता है, पहुँचाता है। कोई किसी के वश में नहीं, सभी का एक ही आश्रय है। वह सब जीवों को बालकों की तरह हाथ देकर पालता है। वह अनेक लीलाएँ और खेल रचाता है, जीव उस सम्बन्ध में कुछ नहीं जानता। वह सबका धारक है, समर्थ है, मैं उस पर नित्य क़ुर्बान जाता हूँ। रात-दिन उसके गुण गाओ, वह गुणगान के योग्य है। जो गुरु के चरणों की शरण लेते हैं, वे ही हरि-रस का आनन्द लेते हैं ॥ २ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ भीड़हु मोकलाई कीतीअनु सभ रखे कुटंबै नालि। कारज आपि सवारिअनु सो प्रभ सदा सभालि। प्रभु मात पिता कंठि लाइदा लहुड़े बालक पालि। दइआल होए सभ जीअ जंत्र हरि नानक नदरि निहाल ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ विणु तुधु होरु जि मंगणा सिरि दुखा कै दुख। देहि नामु संतोखीआ उतरै मन की भुख। गुरि वणु तिणु हरिआ कीतिआ नानक किआ मनुख ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सो ऐसा दातारु मनहु न वीसरै। घड़ी न मुहतु चसा तिसु बिनु ना सरै। अंतरि बाहरि संगि किआ को लुकि करै। जिसु पति रखै आपि सो भवजलु तरै। भगतु गिआनी तपा जिसु किरपा करै। सो पूरा परधानु जिसनो बलु धरै। जिसहि जराए आपि सोई अजरु जरै। तिसही मिलिआ सचु मंत्रु गुर मनि धरै ॥ ३ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ उसी परमात्मा ने कृपापूर्वक तंगी दूर की की अर्थात् दुःखों, मुसीबतों से बचाया, वह सारे कुटुम्ब-सहित हमारी रक्षा करता है। इस तरह का परमात्मा, जो सदा हमारे कार्यों को सम्पन्न करता है, उसका नित्य स्मरण करो। परमात्मा माता-पिता की तरह हमें गले से लगाता और छोटे बच्चों की तरह पालता है। गुरु नानक कहते हैं कि जब वह परमात्मा कृपा करता है, तो अन्य सभी लोग भी दयालु हो जाते हैं ॥ १ ॥ म० ५ ॥ हे प्रभु, तुम्हारे बिना तुमसे कुछ और माँगना सिर पर दुःखों का बोझ उठाने के समान है। मुझे नाम-दान देकर सन्तुष्ट करो ताकि मन की भूख नष्ट हो सके। गुरु नानक कहते हैं कि मनुष्य के हाथ कुछ नहीं, सब वन, तृण उसी ने हरा-भरा कर रखा है ॥२॥ ॥ पउड़ी ॥ वह दाता प्रभु कभी मन से विस्मृत नहीं होना चाहिए। घड़ी, मुहूर्त या क्षण भर में भी उसके बग़ैर हमारा गुज़र नहीं। वह

अन्दर-बाहर हमारे संग-साथ रहता है, उससे छिपकर कोई क्या कर सकता है। जिस पर वह दया करता है, उसे संसार-सागर से पार लगा देता है। भक्त, ज्ञानी या तपस्वी जिस पर भी उसकी कृपा होती है, वह प्रधान हो जाता है अर्थात् उसका बल पाकर वह समर्थ हो उठता है। जिसे वह सहनशक्ति देता है, वही असह्य को सहन कर सकता है। सच्चा परमात्मा उसी को मिलता है, जो अपने मन में गुरु के उपदेशों को स्थिर कर लेता है ॥ ३ ॥

॥ सलोकु म० ५ ॥ धंनु सु राग सु रंगड़े आलापत सभ तिख जाइ। धंनु सु जंत सुहावड़े जो गुरमुखि जपदे नाउ। जिनी इक मनि इकु अराधिआ तिन सद बलिहारै जाउ। तिन की धूड़ि हम बाछदे करमी पलै पाइ। जो रते रंगि गोविद कै हउ तिन बलिहारै जाउ। आखा बिरथा जीअ की हरि सजणु मेलहु राइ। गुरि पूरै मेलाइआ जनम मरण दुखु जाइ। जन नानक पाइआ अगम रूपु अनत न काहू जाइ ॥१॥ ॥ म० ५ ॥ धंनु सु वेला घड़ी धंनु धनु मूरतु पलु सारु। धंनु सु दिनसु संजोगड़ा जितु डिठा गुर दरसारु। मन कीआ इछा पूरीआ हरि पाइआ अगम अपारु। हउमै तुटा मोहड़ा इकु सचु नामु आधारु। जनु नानकु लगा सेव हरि उधरिआ सगल संसारु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सिफति सलाहणु भगति विरले दितीअनु। सउपे जिसु भंडार फिरि पुछ न लीतीअनु। जिसनो लगा रंगु से रंगि रतिआ। ओना इको नामु अधारु इका उन भतिआ। ओना पिछै जगु भुंचै भोगई। ओना पिआरा रबु ओनाहा जोगई। जिसु मिलिआ गुरु आइ तिनि प्रभु जाणिआ। हउ बलिहारी तिन जि खसमै भाणिआ ॥ ४ ॥

॥ सलोकु म० ५ ॥ वे सुन्दर राग धन्य हैं (राग में लिखी वाणी से अभिप्राय है), जिनके गायन से सब तृष्णा दूर हो जाती है। वे जीव भी धन्य हैं, जो गुरु के द्वारा प्रभु का नाम जपते हैं। जो मन में सदा एक प्रभु की आराधना करते हैं, उन पर मैं क़ुर्बान हूँ। हम उनकी चरण-धूल चाहते हैं, जो प्रभु-कृपा से ही मिलती है। जो परमात्मा के रंग में रँगे हुए हैं, मैं उन पर बलिहार जाता हूँ। उनके पास मैं अपने मन की व्यथा कहकर, प्रभु-मिलन का रास्ता उनसे जानना चाहता हूँ।

(यदि वे) मुझे पूरे गुरु से मिला दें, (तो) मेरा जन्म-मरण का दुःख दूर हो जाएगा। दास नानक कहते हैं कि इस प्रकार उन्होंने प्रभु के अगम रूप को प्राप्त किया है, अब वह कहीं और आशा नहीं रखते ॥१॥ म० ५ ॥ वह समय, वह घड़ी, वह मुहूर्त और वह क्षण श्रेष्ठ है; वह दिन भी और वह अवसर भी धन्य है, जब गुरु का दर्शन प्राप्त होता है। (उसके दर्शन से) मन की इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं और अगम अपार परमात्मा मिलता है। सच्चे नाम का आधार लेने से अहंभाव और मोह-माया के बन्धन कट जाते हैं। दास नानक कहते हैं कि हरि की सेवा में लगने से सारा संसार तर जाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा ने भक्ति और यश कुछ विरले लोगों को दिया है। वह भण्डार उनको सौंपकर दुबारा उसका हिसाब-किताब नहीं माँगता। जिसे परमात्मा से प्रेम होता है, वह उसके प्रेम-रंग में ही रत हो जाता है। उनके लिए हरि-नाम ही उनका सहारा है, वही उनका भोजन है। उन्हीं के कारण संसार भोग भोगता है, उन्हें परमात्मा से प्यार होता है वह उन्हीं के योग्य होता है। जिन जीवों को गुरु की प्राप्ति हो जाती है, वे परमात्मा को पहचान लेते हैं। मैं उन जीवों पर बलिहार जाता हूँ, जो अपने स्वामी को प्रिय होते हैं ॥ ४ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ हरि इकसै नालि मै दोसती हरि इकसै नालि मै रंगु। हरि इको मेरा सजणो हरि इकसै नालि मै संगु। हरि इकसै नालि मै गोसटे मुहु मैला करै न भंगु। जाणै बिरथा जीअ की कदे न मोड़ै रंगु। हरि इको मेरा मसलती भंनण घड़न समरथु। हरि इको मेरा दातारु है सिरि दातिआ जग हथु। हरि इकसै दी मै टेक है जो सिरि सभना समरथु। सतिगुरि संतु मिलाइआ मसतकि धरि कै हथु। वडा साहिबु गुरू मिलाइआ जिनि तारिआ सगल जगतु। मन कीआ इछा पूरीआ पाइआ धुरि संजोग। नानक पाइआ सचु नामु सदही भोगे भोग ॥ १ ॥ म० ५ ॥ मनमुखा केरी दोसती माइआ का सनबंधु। वेखदिआ ही भजि जानि कदे न पाइनि बंधु। जिचरु पैननि खावन्हे तिचरु रखणि गंढु। जितु दिनि किछु न होवई तितु दिनि बोलनि गंधु। जीअ की सार न जाणनी मनमुख अगिआनी अंधु। कूड़ा गंढु न चलई चिकड़ि पथर बंधु। अंधे आपु न जाणनी फकड़ु पिटनि धंधु। झूठै मोहि लपटाइआ हउ हउ करत बिहंधु। क्रिपा करे जिसु आपणी धुरि पूरा करमु करेइ। जन नानक से जन उबरे जो

सतिगुर सरणि परे ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो रते दीदार सेई सचु हाकु। जिनी जाता खसमु किउ लभै तिना खाकु। मनु मैला वेकारु होवै संगि पाकु। दिसै सचा महलु खुलै भरम ताकु। जिसहि दिखाले महलु तिसु न मिलै धाकु। मनु तनु होइ निहालु बिंदक नदरि झाकु। नउनिधि नामु निधानु गुर कै सबदि लागु। तिसै मिलै संत खाकु मसतकि जिसै भागु ॥ ५ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ एकमात्र हरि से ही मेरी दोस्ती है और एकमात्र उसी से मेरा प्यार है। हे लोगो, हरि ही एकमात्र मेरा है और केवल उसी के साथ मेरा सम्पर्क है। परमात्मा ही के साथ मैं विचार-विमर्श करता हूँ, वह कभी मेरी बातों से मुँह नहीं मोड़ता। वह जीव की व्यथा को जानता है, इसलिए प्यार के नाते को तोड़ता नहीं। परमात्मा ही एकमात्र मेरा सलाहकार है, जो स्वयं बनाने-तोड़ने में समर्थ है। परमात्मा ही दाता है और वही संसार के दानियों के सिर पर हाथ रखता है। एकमात्र हरि का ही मुझे सहारा है, वही सर्वोत्तम और समर्थ है। सच्चे गुरु ने मेरे मस्तक पर कृपा का हाथ रखकर मुझे प्रभु से मिला दिया है। उसने बड़े स्वामी परमात्मा से मुझे मिला दिया है, जो सारे संसार का तारणहार है। यह मिलाप मेरे भाग्य में ही था कि इससे मेरे मन की सब इच्छाएँ पूर्ण हो गयी हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिसने सच्चा हरि-नाम प्राप्त कर लिया है, वह सदा मिलन का आनन्द प्राप्त करता है ॥ १ ॥ म० ५ ॥ मनमुख लोगों से की हुई दोस्ती माया का सम्बन्ध है; वे देखते-देखते दूर हो जाते हैं, सम्बन्धों को दृढ़ नहीं रखते। जब तक खाना-पहनना मिलता रहता है, तब तक उनका जोड़ बना रहता है। जिस दिन कुछ नहीं रह जाता, वे गाली बकने लगते हैं। मनमुख जीव आत्मा की गहराई को नहीं पहचानते, वे अज्ञानी और अन्धे होते हैं। उनका मिथ्या-सम्बन्ध कीचड़ और पत्थर के जोड़ के समान होता है (जो देर तक नहीं चलता)। वे अन्धे होते हैं, अपने आप को नहीं पहचानते, बेकार धन्धे पीटा करते हैं। झूठे मोह में मैं, मैं करते हुए उनकी आयु बीत जाती है। जिस पर परमात्मा कृपा करता है, अपने यहाँ से ही उसको भाग्य-बल प्रदान करता है। दास नानक कहते हैं कि सतिगुरु की शरण लेनेवाले जीव ही मुक्ति को प्राप्त करते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो प्रभु के दर्शन पाकर उसी के रंग में रँग जाते हैं, वे सत्य की पुकार करते हैं। जिन लोगों ने परमात्मा को पहचान लिया है, उनकी चरण-धूल कहाँ मिल सकती है! उनकी संगति में मैला और

विकृत मन भी पवित्र हो जाता है; सत्यस्वरूप परमात्मा का घर दीख पड़ता है और भ्रम के द्वार खुल जाते हैं। जिसे वह अपने घर का परिचय देता है, उसे कहीं धक्के नहीं मिलते। परमात्मा थोड़ी भी कृपादृष्टि से देखे तो तन-मन आनन्दित हो उठता है। उसके नाम में ही नौ निधियों की उपलब्धि होती है। यह तभी सम्भव है, जब जीव गुरु के शब्दों में लग्न लगाता है। जिसके माथे पर सत्कर्मों के कारण भाग्य-रेखा होती है, उसी को सन्तों की चरण-धूल प्राप्त होती है ॥ ५ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ हरणाखी कू सचु वैणु सुणाई जो तउ करे उधारणु। सुंदर बचन तुम सुणहु छबीली पिरु तैडा मनसाधारणु। दुरजन सेती नेहु रचाइओ दसि विखा मै कारणु। ऊणी नाही झूणी नाही नाही किसै विहूणी। पिरु छैलु छबीला छडि गवाइओ दुरमति करमि विहूणी। ना हउ भुली ना हउ चुकी ना मै नाही दोसा। जितु हउ लाई तितु हउ लगी तू सुणि सचु संदेसा। साई सोहागणि साई भागणि जै पिरि किरपा धारी। पिरि अउगण तिस के सभि गवाए गल सेती लाइ सवारी। करमहीण धन करै बिनंती कदि नानक आवै वारी। सभि सुहागणि माणहि रलीआ इक देवहु राति मुरारी ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ काहे मन तू डोलता हरि मनसा पूरणहारु। सतिगुरु पुरखु धिआइ तू सभि दुख विसारणहारु। हरि नामा आराधि मन सभि किलविख जाहि विकार। जिन कउ पूरबि लिखिआ तिन रंगु लगा निरंकार। ओनी छडिआ माइआ सुआवड़ा धनु संचिआ नामु अपारु। अठे पहर इकतै लिवै मंनेनि हुकमु अपारु। जनु नानकु मंगै दानु इकु देहु दरसु मनि पिआरु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिसु तू आवहि चिति तिसनो सदा सुख। जिसु तू आवहि चिति तिसु जम नाहि दुख। जिसु तू आवहि चिति तिसु कि काड़िआ। जिसदा करता मित्रु सभि काज सवारिआ। जिसु तू आवहि चिति सो परवाणु जनु। जिसु तू आवहि चिति बहुता तिसु धनु। जिसु तू आवहि चिति सो वडपरवारिआ। जिसु तू आवहि चिति तिनि कुल उधारिआ ॥ ६ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ हे मृगनयनी जीवात्मा रूपी स्त्री, मैं तुम्हें वह सच्ची बात बताता हूँ, जो तुम्हारा उद्धार कर सकती है। हे सुन्दरी, तुम

यह सुन्दर वचनों को सुनो, तुम्हारा प्रियतम ही तुम्हारे मन का आश्रय है। तुमने दुर्जनों के साथ प्रेम रचाया है अर्थात् काम-क्रोधादि में लीन रहती हो, इसका कारण तो मुझे समझाओ।] (आत्मा उत्तर देती है—) मैं किसी बात में कम नहीं हूँ, फिर भी अपने सुन्दर प्रियतम को छोड़कर अपने दुष्कर्मों के कारण मैं अभावों में प्रताडित हूँ। मैंने कोई भूल-चूक अपनी ओर से नहीं की, मेरा इसमें कोई दोष भी नहीं। सत्य तो यह है कि उसने मुझे स्वयं भुलाया है। जिस पर प्रियतम की कृपा होती है, वही सुहागिन स्त्री होती है। प्रियतम उसके सब अवगुणों को भूलकर उसे गले से लगाकर सँवार देता है। मैं भाग्यहीन स्त्री विनती करती हूँ कि उसकी कृपादृष्टि प्राप्त करने की मेरी बारी कब आएगी। सब सुहागिन स्त्रियाँ आनन्द मनाती हैं, हे प्रभु, मुझे भी एक रात के लिए सम्मान प्रदान करो ॥ १ ॥ म० ५ ॥ ऐ मन, तू क्यों दोलायमान होता है, परमात्मा स्वयं सब इच्छाओं को पूर्ण करनेवाला है। तू समर्थ सत्गुरु का ध्यान कर, वह तेरे सब दुःखों को दूर कर देगा। मन में हरि-नाम की आराधना करने से सब पाप और विकार दूर हो जाते हैं। जिनके भाग्य में आरम्भ से ही लिखा है, उन्हीं को परमात्मा का प्रेम प्राप्त होता है। वे जीव माया का स्वाद त्यागकर अपार हरि-नाम के धन का संचय करते हैं; आठों प्रहर उसी एक प्रभु के प्रेम में लीन रहते हैं और उसके हुक्म का पालन करते हैं। दास नानक यही वरदान माँगता है कि उस प्रभु का दर्शन प्राप्त हो और मन में उसका प्यार बस जाए ॥२॥ पउड़ी॥ जिसके हृदय में, हे प्रभु, तुम प्रकट होते हो वह सदा सुखी होता है। जिसके मन में तुम निवास करते हो, उसे यमदूतों की त्रास नहीं होती। जो तुम्हें मन में धारण करते हैं, उन्हें क्या चिन्ता ? परमात्मा स्वयं जिसका मित्र होता है, उसका सब कार्य सँवर जाता है। जिसके मन में तू है, वह व्यक्ति आध्यात्मिक स्वीकृति को पा लेता है। जिसके मन में, हे प्रभु, तुम रहते हो, वह धन-धान्य से सम्पन्न हो जाता है और उसका परिवार फलता-फूलता है। (सच तो यह है कि) जिसके हृदय में परमात्मा निवास करता है, वह अपने साथ-साथ सारे वंश का उद्धार कर देता है ॥ ६ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ अंदरहु अंना बाहरहु अंना कूड़ी कूड़ी गावै। देही धोवै चक्र बणाए माइआ नो बहु धावै। अंदरि मैलु न उतरै हउमै फिरि फिरि आवै जावै। नींद विआपिआ कामि संतापिआ मुखहु हरि हरि कहावै। बैसनो नामु करम हउ जुगता तुह कुटे किआ फलु पावै। हंसा विचि बैठा बगु न बणई नित बैठा मछी नो तार लावै। जा हंस सभा वीचारु

करि देखनि ता बगा नालि जोड़ु कदे न आवै। हंसा हीरा मोती चुगणा बगु डडा भालण जावै। उडरिआ वेचारा बगुला मतु होवै मंञु लखावै। जितु को लाइआ तित ही लागा किसु दोसु दिचै जा हरि एवै भावै। सतिगुरु सरवरु रतनी भरपूरे जिसु प्रापति सो पावै। सिख हंस सरवरि इकठे होए सतिगुर कै हुकमावै। रतन पदारथ माणक सरवरि भरपूरे खाइ खरचि रहे तोटि न आवै। सरवर हंसु दूरि न होई करते एवै भावै। जन नानक जिस दै मसतकि भागु धुरि लिखिआ सो सिखु गुरू पहि आवै। आपि तरिआ कुटंब सभि तारे सभा स्रिसटि छडावै ॥ १ ॥ म० ५ ॥ पंडितु आखाए बहुती राही कोरड़ मोठ जिनेहा। अंदरि मोहु नित भरमि विआपिआ तिसटसि नाही देहा। कूड़ी आवै कूड़ी जावै माइआ की नित जोहा। सचु कहै ता छोहो आवै अंतरि बहुता रोहा। विआपिआ दुरमति कुबुधि कुमूड़ा मनि लागा तिसु मोहा। ठगै सेती ठगु रलि आइआ साथु भि इको जेहा। सतिगुरु सराफु नदरी विचदो कढै तां उघड़ि आइआ लोहा। बहुतेरी थाई रलाइ रलाइ दिता उघड़िआ पड़दा अगै आइ खलोहा। सतिगुर की जे सरणी आवै फिरि मनूरहु कंचनु होहा। सतिगुरु निरवैरु पुत्र सत्र समाने अउगण कटे करे सुधु देहा। नानक जिसु धुरि मसतकि होवै लिखिआ तिसु सतिगुर नालि सनेहा। अंम्रित बाणी सतिगुर पूरे की जिसु किरपालु होवै तिसु रिदै वसेहा। आवण जाणा तिस का कटीऐ सदा सदा सुखु होहा ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ जो तुधु भाणा जंतु सो तुधु बुझई। जो तुधु भाणा जंतु सु दरगह सिझई। जिसनो तेरी नदरि हउमै तिसु गई। जिसनो तू संतुसटु कलमल तिसु खई। जिसकै सुआमी वलि निरभउ सो भई। जिसनो तू किरपालु सचा सो थिअई। जिसनो तेरी मइआ न पोहै अगनई। तिसनो सदा दइआलु जिनि गुर ते मति लई ॥ ७ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ (किन्तु) जो जीव बाहर-भीतर से अज्ञानी और अन्धा है, झूठमूठ ही प्रभु के गुण गाता है; शरीर को धो लेता है और मस्तक पर चक्र-चिह्नादि बना लेता है, वह माया के धन को प्राप्त होता

है। उसके मन का मैल दूर नहीं होता और वह अहम्-भाव के कारण बार-बार संसार में आता-जाता है। यों तो वहाँ निद्रा में मग्न और कामादि द्वारा सन्तप्त होता है, तो भी मुख से हरि-हरि बोलता है। नाम तो वह वैष्णव रखता है, किन्तु अहम् द्वारा प्रेरित रहता है। भला इस प्रकार छिलकों को कूटने से चावल तो नहीं मिल सकता। यदि बगुला हंसों में बैठ भी जाए, तो वह हंस नहीं बन जाता, उसकी दृष्टि तो मछली में ही गड़ी रहती है। जब हंस-सभा में विचारकर देखते हैं, तब बगुलों से उनकी तुलना सम्भव नहीं है; क्योंकि हंस हीरा-मोती चुगता है, जबकि बगुला मेंढकियों को ढूँढ़ता है। बेचारा बगुला इसीलिए उड़ जाता है कि कहीं उसका रहस्य खुल न जाए। जिसको जिस प्रकार से लगाया गया है वह उसी में लगा है; किसी को क्या दोष दें, प्रभु को ऐसा ही भाता है। सत्गुरु रूपी सरोवर में रत्न भरे पड़े हैं; जिसे प्राप्त होते हैं, वही पा सकता है। शिष्य रूपी हंस उसी सरोवर पर इकट्ठे होते हैं और सत्गुरु के हुक्म में रहते हैं। सरोवर के रत्नों, मोतियों को भोगते हैं और उसमें कभी कोई कमी नहीं आती। सरोवर से हंस दूर नहीं जाते अर्थात् शिष्य सत्गुरु के निकट ही रहते हैं, परमात्मा को ऐसा ही स्वीकार है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसके मस्तिष्क में भाग्य-रेखा होती है, वे ही शिष्य गुरु की शरण में आते हैं। वे स्वयं मुक्त होते हैं, परिवार को भी मुक्त कर लेते हैं और सबको संसार छुड़वा देते हैं ॥ १ ॥
॥ म० ५ ॥ पंडित लोग अनेक शास्त्रों के ज्ञाता होने के कारण मोठ-जैसे कठोर हो जाते हैं। उनके भीतर नित्य मोह और भ्रम व्याप्त होता है। उनकी स्थिति कहीं टिकती नहीं। वे मिथ्या में आते-जाते हैं और नित्य माया की आशा लगाए रखते हैं। उन्हें यदि सत्य बात कही जाए तो वे खीझ उठते हैं और मन में क्रुद्ध होते हैं। उनमें मूर्खता और दुर्मति व्याप्त होती है और उनके मन में मोह बना रहता है। वे कामादिक ठगों से मिलकर ठगी-जैसा कार्य करते हैं। यदि सतिगुरु-जैसा पारखी उनकी परख करे, तो लोहा सोने से अलग दीखने लगता है। अनेक जगहों पर मिश्रण भी हो जाना है, किन्तु ज्योंही परदा खुलता है, वास्तविकता प्रगट हो जाती है। यदि वह सत्गुरु की शरण ले, तो लोहा फिर से सोना हो जाता है। सत्गुरु को किसी से वैर नहीं, उसके लिए पुत्र और शत्रु एक समान होते हैं; वह सबके अवगुण काटकर देह को शुद्ध कर देता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु से ही जिसके भाग में लिखा हो उसी को सत्गुरु से प्रेम होता है। गुरु की वाणी अमृत-समान है; जिस पर प्रभु की कृपा होती है, उसी के मन में गुरु के शब्दों का निवास होता है। उसका आवागमन मिट जाता है और वह सदा-सदा परमसुख को प्राप्त करता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, जैसा तुम्हें रुचता है, जीव को वैसी

ही सूझ मिलती है; जैसा तुम्हें रुचता है, जीव के लिए वही सफलता है। जिस पर तुम्हारी कृपादृष्टि होती है, उस जीव का अहम्-भाव नष्ट हो जाता है। जिस पर (तुम) प्रभु सन्तुष्ट होते हो, उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं। हे स्वामी, तुम जिसके पक्ष में हो, वह निर्भय होता है; जिस पर तुम्हारी कृपा है, वही सत्यस्वरूप हो जाता है। जिस पर तुम्हारी दया है, वह तृष्णा की अग्नि में नहीं पड़ता। (किन्तु यह दया किस पर होती है) जो गुरु के उपदेशानुसार आचरण करता है, उसी पर प्रभु सदैव दयालु होते हैं ॥ ७ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ करि किरपा किरपाल आपे बखसि लै। सदा सदा जपी तेरा नामु सतिगुर पाइ पै। मन तन अंतरि वसु दूखा नासु होइ। हथ देइ आपि रखु विआपै भउ न कोइ। गुण गावा दिनु रैणि एतै कंमि लाइ। संत जना कै संगि हउमै रोगु जाइ। सरब निरंतरि खसमु एको रवि रहिआ। गुरपरसादी सचु सचो सचु लहिआ। दइआ करहु दइआल अपणी सिफति देहु। दरसनु देखि निहाल नानक प्रीति एह ॥ १ ॥ म० ५ ॥ एको जपीऐ मनै माहि इकस की सरणाइ। इकसु सिउ करि पिरहड़ी दूजी नाही जाइ। इको दाता मंगीऐ सभु किछु पलै पाइ। मनि तनि सासि गिरासि प्रभु इको इकु धिआइ। अंम्रितु नामु निधानु सचु गुरमुखि पाइआ जाइ। वड भागी ते संत जन जिन मनि वुठा आइ। जलि थलि महीअलि रवि रहिआ दूजा कोई नाहि। नामु धिआई नामु उचरा नानक खसम रजाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिसनो तू रखवाला मारे तिसु कउणु। जिसनो तू रखवाला जिता तिनै भैणु। जिसनो तेरा अंगु तिसु मुखु उजला। जिसनो तेरा अंगु सु निरमली हूं निरमला। जिसनो तेरी नदरि न लेखा पुछीऐ। जिसनो तेरी खुसी तिनि नउनिधि भुंचीऐ। जिसनो तू प्रभ वलि तिसु किआ मुहछंदगी। जिसनो तेरी मिहर सु तेरी बंदिगी ॥ ८ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ हे कृपानिधि परमात्मा, हम पर कृपा करके हमारा उद्धार करो। सतिगुरु के चरणों में शरण लेकर हम सदा तुम्हारा ही नाम जपते हैं। तुम हमारे तन-मन में निवास करो, जिससे दुःखों का नाश हो। हाथ देकर हमारी रक्षा करो, हमें कोई भय व्याप्त न हो ! हे प्रभु,

हमें तुम इसी काम में लगाए रखो कि हम रात-दिन तुम्हारा गुणगान करते रहें। सन्तों की संगति में हमारा अहम्-रोग दूर हो ! सबके भीतर एक परमात्मा ही रमण करता है। गुरु की कृपा द्वारा हमने सच्चे हरि के सत्यस्वरूप को पहचाना है। हे दयालु, दयापूर्वक हमें अपने यशोगान का सामर्थ्य प्रदान करो। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा के साथ हमारा ऐसा प्यार है कि हम उसका दर्शन करके ही मुग्ध हो जाते हैं ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ एक परमात्मा की ही हम आराधना करते हैं और उसी की शरण लेते हैं। उसी एक से हमें प्यार करना है, दूसरा कोई स्थान हमारे लिए नहीं है। वही एकमात्र दाता है, उसी से माँगने पर सब कुछ प्राप्त हो सकता है। श्वास-श्वास तथा खाते-पीते सब समय हम तन-मन से उसी एक प्रभु की आराधना करें, तभी गुरु के द्वारा हमें सुख-निधि अमृत-नाम की प्राप्ति होती है। वे सन्तजन सौभाग्यशाली हैं, जिनके मन में परमात्मा बसता है। वही एक जल, थल एवं आकाश में व्याप्त है, दूसरा कोई नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु की इच्छा से ही हरि-नाम उच्चारा जाता तथा उसकी आराधना की जाती है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे परमात्मा, जिसके तुम रक्षक हो, उसे कौन मार सकता है; जिसके तुम रक्षक हो, मानो उसने सारे संसार को जीत लिया है। जिसे, हे प्रभु, तुम्हारा सहारा है, वह उज्ज्वल-मुख जीव है; जिसे तुम्हारा अवलम्ब है, वह निर्मलों में भी निर्मल है। जिस पर तुम्हारी कृपा है, धर्मराज भी उसका हिसाब नहीं पूछता; जिसने तुम्हें प्रसन्न कर लिया है, वह संसार की नौ निधियों का भोग करता है। हे प्रभु, तुम जिसके पक्ष में हो, उसे कोई आकांक्षा नहीं रहती; जिस पर तुम्हारी कृपा होती है, वही तुम्हारी बंदगी कर पाता है ॥ ८ ॥

॥ सलोक महला ५ ॥ होहु क्रिपाल सुआमी मेरे संतां संगि विहावे। तुधहु भुले सि जमि जमि मरदे तिन कदे न चुकनि हावे ॥ १ ॥ म० ५ ॥ सतिगुरु सिमरहु आपणा घटि अवघटि घट घाट। हरि हरि नामु जपंतिआ कोइ न बंधै वाट ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तिथै तू समरथु जिथै कोइ नाहि। ओथै तेरी रख अगनी उदर माहि। सुणि कै जम के दूत नाइ तेरै छडि जाहि। भउजलु बिखमु असगाहु गुर सबदी पारि पाहि। जिन कउ लगी पिआस अंम्रितु सेइ खाहि। कलि महि एहो पुंनु गुण गोविंद गाहि। सभसै नो किरपालु सम्हाले साहि साहि। बिरथा कोइ न जाइ जि आवै तुधु आहि ॥ ९ ॥

॥ सलोक महला ५ ॥ हे मेरे कृपानिधान परमात्मा, ऐसी कृपा करो

कि मेरा सम्पर्क सन्तजनों से बना रहे। जो जीव तुमसे विमुख होते हैं, वे कभी दुःख-मुक्त नहीं हो पाते ॥ १ ॥ म० ५ ॥ सदा अपने सतिगुरु (परमात्मा) का स्मरण करो; रास्ता कठिन हो या आसान, घाटी हो या पर्वत, सब जगह उसी का नाम जपो। हरि-नाम जपने से कोई मार्ग नहीं रूँध सकता अर्थात् हरि-नाम जपनेवाले जीव का पथ प्रशस्त होता है, कोई नहीं रोक सकता ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जहाँ किसी का वश नहीं चलता, वहाँ, हे प्रभु, तुम समर्थ हो। मातृ-गर्भ की अग्नि में भी तुम्हीं रक्षा करते हो। तुम्हारा नाम सुनकर तो यमदूत भी छोड़ जाते हैं। यह विषम संसार-सागर असीम है, केवल गुरु के शब्दों से ही इसका पार पाया जा सकता है। जिन्हें (तुम्हारे नाम की) लालसा है, वे ही अमृत-फल खाते हैं। कलियुग में प्रभु का गुण गाना ही एकमात्र पुण्य है। ऐसे सब जीवों पर तुम्हारी कृपा होती है, श्वास-श्वास तुम उनकी सम्हाल करते हो। जो भी श्रद्धापूर्वक तुम्हारी शरण में आता है, निष्फल नहीं जाता ॥ ९ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ दूजा तिसु न बुझाइहु पारब्रहम नामु देहु आधारु। अगमु अगोचरु साहिबो समरथु सचु दातारु। तू निहचलु निरवैरु सचु सचा तुधु दरबारु। कीमति कहणु न जाईऐ अंतु न पारावारु। प्रभ छोडि होरु जि मंगणा सभु बिखिआ रस छारु। से सुखीए सचु साह से जिन सचा बिउहारु। जिना लगी प्रीति प्रभ नाम सहज सुख सारु। नानक इकु आराधे संतन रेणारु ॥ १ ॥ म० ५ ॥ अनद सूख बिस्राम नित हरि का कीरतनु गाइ। अवर सिआणप छाडि देहि नानक उधरसि नाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ ना तू आवहि वसि बहुतु घिणावणे। ना तू आवहि वसि बेद पड़ावणे। ना तू आवहि वसि तीरथि नाईऐ। ना तू आवहि वसि धरती धाईऐ। ना तू आवहि वसि कितै सिआणपै। ना तू आवहि वसि बहुता दानु दे। सभु को तेरै वसि अगम अगोचरा। तू भगता कै वसि भगता ताणु तेरा ॥ १० ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ हे परमात्मा, जिसे तुम हरि-नाम का आश्रय देते हो, उसे पुनः किसी और पर आश्रित न करो। सत्यस्वरूप परमात्मा अगम अगोचर तथा सबका समर्थ स्वामी है। तुम (हे प्रभु,) निश्चल, निर्वैर हो, तुम्हारा स्थान ही सत्य (सचखण्ड) है। उसका सही मोल नहीं डाला जा सकता, वह अनन्त और असीम है। प्रभु को छोड़कर विषय-रसों की माँग सब धूल है। जिनका आचरण-व्यवहार सत्य है, वे ही सुखी एवं सच्चे

सम्पत्तिशाली हैं। जिन्हें प्रभु-नाम से प्रीति है, वे ही सहज आनन्द का रहस्य समझते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सन्तों की चरण-धूल लेकर केवल एक प्रभु की ही आराधना करनी (चाहिए) है ॥१॥ म० ५ ॥ नित्य हरि का यशोगान करने से ही सुख और आनन्द प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि जीव हरि-नाम द्वारा ही मुक्त होता है, अन्य बुद्धिमत्ता छोड़ो (वह व्यर्थ है) ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ संसार के प्रति घृणा करने से, हे प्रभु, तुम वश में नहीं आते; न ही वेद-शास्त्र पढ़ने से तुम्हें वश में किया जा सकता है। तीर्थों में स्नान करने से भी तुम्हें वश में नहीं लाया जा सकता, न ही धरती पर चलते रहने का व्रत लेने से तुम वश होते हो। किसी अन्य योग्यता अथवा कौशल से भी तुम वश में नहीं आते, अधिक दान देने से भी तुम वश में नहीं होते। हे अगम अगोचर परमेश्वर, सब कुछ तुम्हारे वश में है और तुम भक्तों के वश में हो— भक्तों को तुम्हारा ही बल है ॥ १० ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ आपे वैदु आपि नाराइणु। एहि वैद जीअ का दुखु लाइण। गुर का सबदु अंम्रित रसु खाइण। नानक जिसु मनि वसै तिस के सभि दूख मिटाइण ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ हुकमि उछलै हुकमे रहै। हुकमे दुखु सुखु समकरि सहै। हुकमे नामु जपै दिनु राति। नानक जिसनो होवै दाति। हुकमि मरै हुकमे ही जीवै। हुकमे नान्हा वडा थीवै। हुकमे सोग हरख आनंद। हुकमे जपै निरोधर गुरमंत। हुकमे आवणु जाणु रहाए। नानक जाकउ भगती लाए ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ हउ तिसु ढाढी कुरबाणु जि तेरा सेवदारु। हउ तिसु ढाढी बलिहार जि गावै गुण अपार। सो ढाढी धनु धंनु जिसु लोड़े निरंकारु। सो ढाढी भागठु जिसु सचा दुआर बारु। ओहु ढाढी तुधु धिआइ कलाणे दिनु रैणार। मंगै अंम्रित नामु न आवै कदे हारि। कपड़ भोजनु सचु रहदा लिवै धार। सो ढाढी गुणवंतु जिसनो प्रभ पिआरु ॥ ११ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ वह नारायण (परमात्मा) ही सबका वैद्य (रोग-मुक्त करनेवाला) है। ये संसार के वैद्य तो आत्मा को दुःखी करते हैं। गुरु का शब्द अमृत-रस का भोग है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसके मन में यह (गुरु-शब्द) बसता है, उसके सब दुःख मिट जाते हैं ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ मनुष्य (जो कुछ भी करता है, प्रभु-इच्छा में करता है) हुक्म में ही उछलता है और परमात्मा के आदेश से ही स्थिर होता है। हुक्मानुसार

समान-भाव से सुख-दुःख सहता है। प्रभु का हुक्म होता है, तभी मनुष्य रात-दिन हरि-नाम जपता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह जिसे चाहता है, उसे देता है। मनुष्य उसी के हुक्म में जीता और मरता है, उसी के हुक्म से छोटा-बड़ा बनता है (रंक-राजा होता है)। प्रभु की इच्छा में ही हर्ष, शोक और आनन्द मिलता है। परमात्मा के हुक्म से ही मनुष्य सुरक्षात्मक गुरु-मन्त्र जपता है। हुक्मानुसार जिसे वह अपनी भक्ति देता है, उस मनुष्य का आवागमन मिट जाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मैं उस ढाढ़ी (प्रभु का यशोगान करनेवाला, चारण) पर क़ुर्बान हूँ, जो तुम्हारा सेवक है। मैं उस ढाढ़ी पर बलिहार जाता हूँ, जो तुम्हारे अपार गुणों का गान करता है। जो ढाढ़ी परमात्मा की खोज करता है, वह धन्य है। वह ढाढ़ी भाग्यशाली है, जो सत्य के दरबार में विश्राम करता है। ऐसा ढाढ़ी रात-दिन तुम्हारा गुणगान करता है, वह तुम्हारे अमृत-नाम की माँग करता है और कभी पराजित नहीं होता। परमसत्य ही उसका अन्न-वस्त्र है और वह सदा हृदय में हरि को धारण करता है। प्रभु से सच्चा प्यार करनेवाला ढाढ़ी ही सही अर्थों में गुणवान् है ॥ ११ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ अंम्रित बाणी अमिउ रसु अंम्रितु हरि का नाउ। मनि तनि हिरदै सिमरि हरि आठ पहर गुण गाउ। उपदेसु सुणहु तुम गुर सिखहु सचा इहै सुआउ। जनमु पदारथु सफलु होइ मन महि लाइहु भाउ। सूख सहज आनदु घणा प्रभ जपतिआ दुखु जाइ। नानक नामु जपत सुखु ऊपजै दरगह पाईऐ थाउ ॥ १ ॥ म० ५ ॥ नानक नामु धिआईऐ गुरु पूरा मति देइ। भाणै जप तप संजमो भाणै ही कढि लेइ। भाणै जोनि भवाईऐ भाणै बखस करेइ। भाणै दुखु सुखु भोगीऐ भाणै करम करेइ। भाणै मिटी साजि कै भाणै जोति धरेइ। भाणै भोग भोगाइदा भाणै मनहि करेइ। भाणै नरकि सुरगि अउतारे भाणै धरणि परेइ। भाणै ही जिसु भगती लाए नानक विरले हे ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ वडिआई सचे नाम की हउ जीवा सुणि सुणे। पसू परेत अगिआन उधारे इक खणे। दिनसु रैणि तेरा नाउ सदा सद जापीऐ। त्रिसना भुख विकराल नाइ तेरै ध्रापीऐ। रोगु सोगु दुखु वंञै जिसु नाउ मनि वसै। तिसहि परापति लालु जो गुर सबदी रसै। खंड ब्रहमंड बेअंत उधारणहारिआ। तेरी सोभा तुधु सचे मेरे पिआरिआ ॥ १२ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ गुरु की वाणी अमृतमयी है, इसका स्वाद अमृत-सम है और परमात्मा का नाम भी अमृत है। (इसलिए) ऐ मनुष्य, तन, मन, हृदय से आठों प्रहर हरि का स्मरण करो, उसका गुण गाओ। जीवन का सच्चा लक्ष्य ही यह है कि तुम गुरु की शरण लेकर उसका उपदेश सुनो। मन में प्यार लाने से तुम्हारा जन्म सफल होगा। प्रभु-नाम जपने से दुःख नष्ट होंगे और सहज सुख एवं परमानन्द की प्राप्ति होगी। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम जपने से सुख मिलता है और मनुष्य परमात्मा की शरण में स्थान पाता है ॥ १ ॥ म० ५ ॥ गुरु नानक का मत है कि (मनुष्य को) गुरु के उपदेश में हरि-नाम की आराधना करनी चाहिए। (किन्तु यह सब हरि-इच्छा है। 'भाणा' विशुद्ध प्रभु-इच्छा के लिए प्रयुक्त शब्द है। 'हुकुम' के पीछे नियमित क्रम का संकेत है, 'भाणा' स्वेच्छाचारिता है।) प्रभु-इच्छा से ही मनुष्य जप-तप, संयम करता है और उसी की इच्छा से वह कर्म-काण्ड के बन्धनों से मुक्त होता है। प्रभु-इच्छा से ही मनुष्य जन्म-मरण के चक्र में पड़ता है, उसी की इच्छा से उसका उद्धार होता है। परमात्मा की इच्छा में ही मनुष्य सुख-दुःख भोगता तथा कर्म करता है। इस शरीर की रचना करके बीच में प्राणों की ज्योति प्रभु-इच्छा से ही स्थापित की जाती है। परमात्मा अपनी इच्छा से ही किसी को भोग-विलास में डालता और किसी को रोकता है। प्रभु-इच्छा से ही नरक-स्वर्ग मिलता है, उसी में धरती पर पतन होता है। परमात्मा स्वेच्छा से ही मनुष्यों को भक्ति में रत करता है, किन्तु गुरु नानक कहते हैं कि ऐसे जीव (भक्ति प्राप्त करनेवाले) कोई विरल ही होते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सच्चे प्रभु-नाम की बड़ाई सुन-सुनकर ही मैं जीवित हूँ। हरि-नाम क्षण भर में ही पशु (अच्छे-बुरे की जानकारी से विहीन) और प्रेत (जान-बूझकर बुरा कर्म करनेवाले) वृत्ति वाले जीवों का उद्धार करता है। रात-दिन, हे प्रभु, हम तुम्हारा नाम जपते हैं; तुम्हारे नाम से तृष्णा की भयंकर भूख शमित होती है। जिसके मन में तुम्हारा नाम बसता है, उसके रोग-शोक, दुःख सब दूर हो जाते हैं। जो गुरु-शब्दों में रस लेता है, उसे परमानन्द प्राप्त होता है। हे अनन्त खण्डों-ब्रह्मण्डों का उद्धार करनेवाले प्रभु, हे मेरे प्यारे, तुम्हारी शोभा तुम्हीं से है (अर्थात् तुम अनुपम हो) ॥ १२ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ मित्रु पिआरा नानक जी मै छडि गवाइआ रंगि कसुंभै भुली। तउ सजण की मै कीम न पउदी हउ तुधु बिनु अढु न लहदी ॥ १ ॥ म० ५ ॥ ससु विराइणि नानक जीउ ससुरा वादी जेठो पउ पउ लूहै। हभे भसु पुणेदे वतनु जा मै सजणु तू है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिसु तू वुठा चिति

तिसु दरदु निवारणो। जिसु तू वुठा चिति तिसु कदे न हारणो। जिसु मिलिआ पूरा गुरू सु सरपर तारणो। जिसनो लाए सचि तिसु सचु सम्हालणो। जिसु आइआ हथि निधानु सु रहिआ भालणो। जिसनो इको रंगु भगतु सो जानणो। ओहु सभना की रेणु बिरही चारणो। सभि तेरे चोज विडाण सभु तेरा कारणो ॥ १३ ॥

॥ सलोक म० ५॥ गुरु नानक कहते हैं कि मायावी मिथ्या रंगों में भटककर मैंने अपने प्यारे मित्र अर्थात् परमात्मा को खो दिया है। मैंने प्रभु-प्रियतम का मोल नहीं डाला, जबकि (उसके) तुम्हारे बिना मेरा मूल्य दमड़ी भी नहीं रह जाता ॥ १ ॥ म० ५ ॥ (आत्मा रूपी स्त्री, प्रियतम-प्रभु से कहती है।) मेरी सास (अविद्या) वैरी है, ससुर (देह-अध्यास) झगड़ालू है और ज्येष्ठ (यमराज) बार-बार मुझे संताप पहुँचाता है। किन्तु यदि तुम मेरे मित्र (पक्ष में) हो जाओ, तो सब धूल फाँकते फिरें अर्थात् मुझे उनकी परवाह नहीं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिसके मन में तुम बसे हो, उसके सब कष्ट दूर होते हैं। जिसके मन में, हे परमात्मा, तुम बसे हो, वह कहीं पराजित नहीं होता। जिसे पूरा गुरु मिल जाता है, उसका अवश्य ही उद्धार होता है। जिसे सत्य से अनुराग होता है, वह सत्यस्वरूप परमात्मा का स्मरण करता है। जिसे परमात्मा के नाम का खज़ाना मिल जाता है, उसका भटकना समाप्त हो जाता है। जो एक परमात्मा के रंग में ही लीन होता है, वही भक्त है। वह सबकी चरण-धूल (विनम्रता) बनता एवं प्रभु-चरणों का प्रेमी होता है। हे प्रभु, ये सब तुम्हारे ही बनाए आश्चर्य हैं और तुम्हीं इनके कारणभूत हो ॥ १३ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ उसतति निंदा नानक जी मै हभ वञाई छोड़िआ हभु किझु तिआगी। हभे साक कूड़ावे डिठे तउ पलै तैडै लागी ॥ १ ॥ म० ५ ॥ फिरदी फिरदी नानक जीउ हउ फावी थीई बहुतु दिसावर पंधा। ता हउ सुखि सुखाली सुती जा गुर मिलि सजणु मै लधा ॥२॥ पउड़ी ॥ सभे दुख संताप जां तुधहु भुलीऐ। जे कीचनि लख उपाव तां कही न घुलीऐ। जिसनो विसरै नाउ सु निरधनु कांढीऐ। जिसनो विसरै नाउ सु जोनी हांढीऐ। जिसु खसमु न आवै चिति तिसु जमु डंडु दे। जिसु खसमु न आवी चिति रोगी से गणे। जिसु खसमु न आवी चिति सु खरो अहंकारीआ। सोई दुहेला जगि जिनि नाउ विसारीआ ॥ १४ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ (गुरु नानक कहते हैं कि) मैंने सब स्तुति-निन्दा छोड़ दी है, सबसे विरक्त हो गया हूँ। सब सम्बन्धों में मुझे मिथ्यापन दीख पड़ा है, इसीलिए मैंने (सबको छोड़कर) तुम्हारा दामन थाम लिया है ॥ १ ॥ म० ५ ॥ (गुरु नानक कहते हैं कि) संसार में भटकते-भटकते मैं व्याकुल हो गयी हूँ, परदेसों में भी अनेकधा भटकी हूँ। मुझे वास्तविक सुख तभी लब्ध हुआ, जब गुरु के द्वारा मैंने साजन-प्रभु को पा लिया ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ तुमसे विमुख होनेवाले सब दुःख-संताप भोगते हैं। अनेक प्रयास करने पर भी वे रोग-मुक्त नहीं होते। जिसे तुम्हारा नाम विस्मृत होता है, वही निर्धन है; जिसे नाम विस्मृत होता है, वह योनियों में भ्रमता है। जो मन में अपने स्वामी को धारण नहीं करता, वह यमदूतों द्वारा दण्डित होता है। वास्तविक रोगी तो वह है, जिसके मन में प्रभु-पति की मूर्ति विद्यमान नहीं होती; जिसके मन में प्रभु-स्वामी नहीं विराजता, वह बड़ा अहंकारी होता है। संसार में रहकर हरि-नाम भुलाने वाला ही दुःखी होता है ॥ १४ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ तैडी बंदसि मै कोइ न डिठा तू नानक मनि भाणा। घोलि घुमाई तिसु मित्र विचोले जै मिलि कंतु पछाणा ॥ १ ॥ म० ५ ॥ पाव सुहावे जां तउ धिरि जुलदे सीसु सुहावा चरणी। मुखु सुहावा जां तउ जसु गावै जीउ पइआ तउ सरणी ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मिलि नारी सत संगि मंगलु गावीआ। घर का होआ बंधानु बहुड़ि न धावीआ। बिनठी दुरमति दुरतु सोइ कूड़ावीआ। सीलवंति परधानि रिदै सचावीआ। अंतरि बाहरि इकु इक रीतावीआ। मनि दरसन की पिआस चरण दासावीआ। सोभा बणी सीगारु खसमि जां रावीआ। मिलीआ आइ संजोगि जां तिसु भावीआ ॥ १५ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ हे प्रभु, तुम्हारे सरीखा मैंने कोई नहीं देखा, तुम, हे प्रभु, (गुरु नानक कहते हैं कि) मेरे मन को भाते हो। उस मध्यस्थ मित्र (गुरु) पर मैं क़ुर्बान जाता हूँ, जिसके सम्पर्क में आने से मैंने परमात्मा को पहचाना है ॥ १ ॥ म० ५ ॥ वे ही पाँव शुभ हैं, जो तुम्हारी दिशा में चलते हैं; वही शीष उत्तम है, जो प्रभु के चरणों में झुकता है। तुम्हारा यशोगान करूँ, तभी मुख सुहाता है; आत्मा की शोभा तभी होती है, जब वह तुम्हारी शरण लेता है ॥२॥ पउड़ी ॥ सत्संगति पाकर सब इन्द्रियों ने मिलकर उल्लास-गीत गाए; इससे मन स्थिर हो गया, भटकना समाप्त हो गया। दुर्मति नष्ट हुई और अब मिथ्या मोह समीप नहीं आता। जीव-स्त्री अब शुभ आचरण वाली हो गयी है और

उसके हृदय में सत्य वास करता है। भीतर-बाहर उसने एक ही युक्ति अपना ली है; मन में दर्शनों की प्यास लिये वह (प्रभु के) चरणों की दासी बनी है। स्वामी के साथ रमण का अवसर पाने में ही उसकी शोभा और शृंगार निहित है। जब उसकी कृपा होती है, वह दर्शन देता और जीव-स्त्री संयोग पाती है। (इस 'पउड़ी' में सत्संगति में आने से जीवात्मा में क्या परिवर्तन आते हैं, इसका संकेत है। अन्ततः जीवात्मा रूपी स्त्री प्रभु-कृपा से उसका संयोग प्राप्त कर लेती है।) ॥ १५ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ हभि गुण तैडे नानक जीउ मै कू थीए मै निरगुण ते किआ होवै। तउ जेवडु दातारु न कोई जाचकु सदा जाचोवै ॥ १ ॥ म० ५ ॥ देह छिजंदड़ी ऊणम झूणा गुरि सजणि जीउ धराइआ। हभे सुख सुहेलड़ा सुता जिता जगु सबाइआ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ वडा तेरा दरबारु सचा तुधु तखतु। सिरि साहा पातिसाहु निहचलु चउरु छतु। जो भावै पारब्रहम सोई सचु निआउ। जे भावै पारब्रहम निथावे मिलै थाउ। जो कीन्ही करतारि साई भली गल। जिन्ही पछाता खसमु से दरगाह मल। सही तेरा फुरमानु किनै न फेरीऐ। कारणकरण करीम कुदरति तेरीऐ ॥ १६ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि मुझ गुण-हीन से तो क्या हो सकता था, सब तुम्हारे ही गुण मुझे मिल गये हैं। सचमुच तुमसे बड़ा कोई दानी नहीं, जिससे याचक सदा याचना करता रहता है ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ शरीर जीर्ण हुआ है, (मन) ख़ाली और चिन्तातुर है, (ऐसे में) मेरे गुरु ने मुझे सान्त्वना दी है। (परिणामतः) सहज ही मैंने सब सुख प्राप्त कर लिये हैं और (इस प्रकार) सारा संसार जीत लिया है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे परमात्मा, तुम्हारा दरबार महान् है, तुम्हारा अस्तित्व ही एकमात्र सत्य है। वह शाहों का शाह (सम्राट्) है और निश्चल छत्र धारण किए हुए है (दुनिया के बादशाहों का छत्र अस्थिर होता है)। जो उस परब्रह्म को स्वीकार है, वही सच्चा न्याय होता है। परब्रह्म को स्वीकार हो, तो बेघर को ठिकाना मिल जाता है; परमात्मा जो कुछ करता है, वही भला होता है। जो अपने स्वामी को पहचान लेता है, वही उसके दरबार में प्रवेश का अधिकारी बनता है। तुम्हारा (परमात्मा का) आदेश निर्णयात्मक होता है, टाला नहीं जा सकता। तुम ही सबके कर्ता, रचयिता एवं कृपानिधान हो, समूची प्रकृति तुम्हारी ही है ॥ १६ ॥

।। सलोक म० ५ ।। सोइ सुणंदड़ी मेरा तनु मनु मउला नामु जपंदड़ी लाली। पंधि जुलंदड़ी मेरा अंदरु ठंढा गुर दरसनु देखि निहाली ।। १ ।। म० ५ ।। हठ मंझाहू मै माणकु लधा। मुलि न घिधा मैकु सतिगुरि दिता। ढूंढ वञाई थीआ थिता। जनमु पदारथु नानक जिता ।। २ ।। पउड़ी ।। जिस कै मसतकि करमु होइ सो सेवा लागा। जिसु गुर मिलि कमलु प्रगासिआ सो अनदिनु जागा। लगा रंगु चरणारबिंद सभु भ्रमु भउ भागा। आतमु जिता गुरमती आगंजत पागा। जिसहि धिआइआ पारब्रहमु सो कलि महि तागा। साधू संगति निरमला अठसठि मजनागा। जिसु प्रभु मिलिआ आपणा सो पुरखु सभागा। नानक तिसु बलिहारणै जिसु एवड भागा ।। १७ ।।

।। सलोक म० ५ ।। तुम्हारा (प्रभु का) नाम सुनने से मेरा तन-मन प्रफुल्लित हुआ है और नाम जपने से मुझमें उल्लास जगा है। तुम्हारे निर्धारित मार्ग पर चलने से मेरा हृदय शीतल हुआ है और सत्गुरु के दर्शनों से मैं निहाल हुई हूँ ।। १ ।। म० ५ ।। हृदय में मैंने नाम-रत्न पा लिया है। यह मैंने मोल नहीं लिया, मुझे कृपापूर्वक सत्गुरु ने दिया है। मेरी खोज समाप्त हुई है और मुझे स्थिरता मिल गयी है। गुरु नानक कहते हैं कि मैंने जन्म का मूल पदार्थ पा लिया है अर्थात् इस प्रकार मेरा जीवन सफल हो गया है ।। २ ।। पउड़ी ।। जिसका भाग्य बली होता है, वही प्रभु की सेवा में संलग्न होता है। गुरु से मिलकर जिसका हृदय-कमल विकसित होता है, वह सदा जाग्रत् है। प्रभु के चरणों में प्रेम होने से उसका भ्रम-भय सब नष्ट हो जाता है। गुरु के उपदेशों से वह अपने को जीत लेता तथा (आगंजत) अटूट परमात्मा को पाता है। कलियुग में वही स्थिर है, जो परब्रह्म की आराधना करता है। साधु-संगति में वह ऐसी निर्मलता प्राप्त करता है, मानो ६८ तीर्थों का स्नान कर लिया हो। जिसे प्रभु मिलता है, वही मनुष्य भाग्यशाली है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसे बड़े भाग्यवान् व्यक्ति पर वे क़ुर्बान जाते हैं ।। १७ ।।

।। सलोक म० ५ ।। जां पिरु अंदरि तां धन बाहरि। जां पिरु बाहरि तां धन माहरि। बिनु नावै बहु फेर फिराहरि। सतिगुरि संगि दिखाइआ जाहरि। जन नानक सचे सचि समाहरि ।। १ ।। म० ५ ।। आहर सभि करदा फिरै आहरु

इकु न होइ। नानक जितु आहरि जगु उधरै विरला बूझै कोइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ वडी हू वडा अपारु तेरा मरतबा। रंग परंग अनेक न जापन्हि करतबा। जीआ अंदरि जीउ सभु किछु जाणला। सभु किछु तेरै वसि तेरा घरु भला। तेरै घरि आनंदु वधाई तुधु घरि। माणु महता तेजु आपणा आपि जरि। सरब कला भरपूरु दिसै जत कता। नानक दासनि दासु तुधु आगै बिनवता ॥ १८ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ जब प्रियतम प्रभु ने हृदय में प्रवेश किया, तो माया रूपी स्त्री वहाँ से बाहर हो गयी। जब प्रिय बाहर था, स्त्री (माया) चंचल बनी थी (प्रभु-प्राप्ति से पूर्व की स्थिति में माया मनुष्य को नचा रही थी)। हरि-नाम के बिना माया मनुष्य को अनेक भ्रमों में भटका रही थी। गुरु नानक कहते हैं कि जब सत्गुरु ने प्रकट में सहयोग दिया तो जीव सत्य में समा गया ॥ १ ॥ म० ५ ॥ संसार में जीव अनेक धन्धे करता है, किन्तु प्रभु-शरण का धन्धा नहीं अपनाता। गुरु नानक कहते हैं कि जिस कर्म (धन्धा) से संसार का उद्धार होता है, वह कोई विरला ही जानता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे परमात्मा, तुम्हारा पद बड़े से बड़ा है। सब रंग-बिरंगी लीलाएँ तुम्हारी ही हैं। जीवों के भीतर तुम्हारी ही प्राण-शक्ति है, तुम सर्वज्ञाता हो। सब कुछ तुम्हारे ही वश में है, यह घर (संसार) भी, जिसमें तुम्हारा निवास है, भला है। तुम्हारे घर में ही सब आनन्द और हर्षोल्लास है। तुम अपनी मान-बड़ाई तथा यश को स्वयं भोगते हो अर्थात् तुम्हारी तुलना में कोई और नहीं है। जिधर तक दृष्टि जाती है, तुम्हीं सर्व-कला-भरपूर दीख पड़ते हो। (इसीलिए) तुम्हारे दासों के दास गुरु नानक तुम्हारे ही सम्मुख विनती करते हैं ॥ १८ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ छतड़े बाजार सोहनि विचि वपारीए। वखरु हिकु अपारु नानक खटे सो धणी ॥ १ ॥ ॥ महला ५ ॥ कबीरा हमरा को नही हम किस हू के नाहि। जिनि इहु रचनु रचाइआ तिसही माहि समाहि ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ सफलिउ बिरखु सुहावड़ा हरि सफल अंम्रिता। मनु लोचै उन्ह मिलण कउ किउ वंञै घिता। वरना चिहना बाहरा ओहु अगमु अजिता। ओहु पिआरा जीअ का जो खोल्है भिता। सेवा करी तुसाड़ीआ मै दसिहु मिता। कुरबाणी वंञा वारणै बले बलि किता। दसनि संत पिआरिआ सुणहु लाइ चिता।

जिसु लिखिआ नानक दास तिसु नाउ अंम्रितु सतिगुरि दिता ॥ १९ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ ब्रह्माण्ड में सब धरतियाँ और नक्षत्र, जिन पर गगन की छत बनी है, परमात्मा के नगर के बाज़ार हैं और बीच में व्यापार करनेवाले परमात्मा के आकांक्षी जीव हैं। तुम्हारा नाम रूपी अनन्त सौदे का व्यापार होता है; जो कमा ले, वही धनवान् हो जाता है ॥ १ ॥ महला ५ ॥ (यह कबीरजी का श्लोक है—)कबीरजी कहते हैं कि यहाँ हमारा कोई नहीं, न ही हम किसी के हैं। जिसने यह समूची रचना रचायी है, सबको उसी में समा जाना है ॥२॥ पउड़ी ॥ परमात्मा एक सुन्दर वृक्ष है, जिसे नामामृत-फल लगता है। मन उस फल को पाना चाहता है, उसे क्योंकर पाया जा सकता है ? वह (परमात्मा) रंग-रूप, चिह्न-विहीन है, वह अपराजेय है। जीवात्मा उस रहस्यों का उद्घाटन करनेवाले को चाहता है, (इसीलिए) हर प्रकार से वह उसकी सेवा में तल्लीन रहता है। उसने अपना सर्वस्व उस पर क़ुर्बान कर दिया है और नित्य उस पर बलिहार जाता है। प्रेम से भरे सन्तजन उसके गुण बताते हैं, मन लगाकर सुनो। गुरु नानक के मतानुसार उक्त अमृत-फल उसी को मिलता है, जिसे सत्गुरु देना चाहता है ॥ १९ ॥

॥ सलोक महला ५ ॥ कबीर धरती साध की तसकर बैसहि गाहि। धरती भारि न बिआपई उन कउ लाहू लाहि ॥१॥ महला ५ ॥ कबीर चावल कारणे तुख कउ मुहली लाइ। संगि कुसंगी बैसते तब पूछे धरमराइ ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ आपे ही वड परवारु आपि इकातीआ। आपणी कीमति आपि आपे ही जातीआ। सभु किछु आपे आपि आपि उपंनिआ। आपणा कीता आपि आपि वरंनिआ। धंनु सु तेरा थानु जिथै तू वुठा। धंनु सु तेरे भगत जिन्ही सचु तूं डिठा। जिसनो तेरी दइआ सलाहे सोइ तुधु। जिसु गुर भेटे नानक निरमल सोई सुधु ॥ २० ॥

॥ सलोक महला ५॥ सत्संगति की धरती पर दुराचारी तस्कर लोग आ बैठे हैं। (कबीरजी कहते हैं,) धरती को उनका कोई बोझ नहीं, तस्करों को लाभ ही लाभ है (अर्थात् सत्संगति में आनेवाले दुष्टों को भी लाभ ही मिलता है, सत्संगति सबके लिए समान प्रभाव डालनेवाला तथ्य है।) ॥ १ ॥ महला ५ ॥ (कबीरजी कहते हैं,) चावल के कारण भूसी को भी मूसलों से कूटा जाता है। कुसंगति में बैठनेवालों को

धर्मराज दण्ड देता ही है (अर्थात् जो कुसंगति में पड़ जाता है, वह भला ही क्यों न हो, धर्मराज के दण्ड का अधिकारी होता है) ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा का बहुत बड़ा परिवार है, और वह अकेला भी है (सब गुण परमात्मा के हैं, वह निर्गुण भी है)। वह अपने महत्त्व (मोल) को स्वयं ही जानता है। सब कुछ वह स्वयं है, अपने को भी उसने स्वयं उपजाया है (वह स्वयम्भू है)। अपनी रचना को वह स्वयं ही वर्णित कर सकता है। वह स्थान धन्य है, जहाँ तुम बसते हो। वे तुम्हारे भक्त भी धन्य हैं, जो तुम्हारे सत्यस्वरूप को देखते हैं। जिस पर तुम्हारी दया होती है, वही तुम्हारा गुणगान करता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु से जिसकी भेंट हो जाती है, वही निर्मल होता है ॥ २० ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ फरीदा भूमि रंगावली मंझि विसूला बागु। जो नर पीरि निवाजिआ तिन्हा अंच न लाग ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ फरीदा उमर सुहावड़ी संगि सुवंनड़ी देह। विरले केई पाईअन्हि जिन्हा पिआरे नेह ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जपु तपु संजमु दइआ धरमु जिसु देहि सु पाए। जिसु बुझाइहि अगनि आपि सो नामु धिआए। अंतरजामी अगम पुरखु इक द्रिसटि दिखाए। साध संगति कै आसरै प्रभ सिउ रंगु लाए। अउगण कटि मुखु उजला हरि नामि तराए। जनम मरण भउ कटिओनु फिरि जोनि न पाए। अंध कूप ते काढिअनु लड़ु आपि फड़ाए। नानक बखसि मिलाइअनु रखे गलि लाए ॥ २१ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ (इसमें गुरुजी फ़रीदजी की उदासीनता का उत्तर देते हैं।) यह धरती रँगीली और आनन्दमयी है, किन्तु इस पर माया का विषैला उद्यान सुविकसित है। जो जीव गुरु की शरण में हैं, उन्हें यह आँच नहीं सताती ॥ १ ॥ म० ५ ॥ मानव-जीवन सुन्दर है, यह शरीर भी सुन्दर है। इसका सही उपयोग वे विरले लोग ही करते हैं, जिन्हें अपने प्रिय (परमात्मा) से प्यार होता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जप, तप, दया, धर्म और संयम के गुण उसी में उपजते हैं, जिसे प्रभु देता है। जो अहंकार की अग्नि को बुझाता है, वही हरि-नाम की आराधना कर पाता है। अन्तर्यामी अगम पुरुष परमात्मा की कृपादृष्टि होती है, तो गुरु के आश्रय जीव में परमात्मा का प्यार पैदा होता है। उसके (जीव के) अवगुण कट जाते हैं, मुख उजला होता है और हरि-नाम द्वारा उसका उद्धार हो जाता है। जन्म-मरण का भय दूर होता है, वह पुनः योनि-चक्र में नहीं पड़ता। प्रभु स्वयं अपना दामन थमाकर जीव को माया के

अन्धकार से निकालता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा जीव को कृपापूर्वक अपने में मिलाता और गले से लगाकर रखता है ॥ २१ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ मुहबति जिसु खुदाइ दी रता रंगि चलूलि। नानक विरले पाईअहि तिसु जन कीम न मूल ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ अंदरु विधा सचि नाइ बाहरि भी सचु डिठोमि। नानक रविआ हभ थाइ वणि त्रिणि त्रिभवणि रोमि ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ आपे कीतो रचनु आपे ही रतिआ। आपे होइओ इकु आपे बहु भतिआ। आपे सभना मंझि आपे बाहरा। आपे जाणहि दूरि आपे ही जाहरा। आपे होवहि गुपतु आपे परगटीऐ। कीमति किसै न पाइ तेरी थटीऐ। गहिर गंभीरु अथाहु अपारु अगणतु तूं। नानक वरतै इकु इको इकु तूं ॥ २२ ॥ १ ॥ सुधु

॥ सलोक म० ५ ॥ परमात्मा के प्यार में जो लीन है, वह गूढ़ रंग में रँग गया है। गुरु नानक कहते हैं कि उस व्यक्ति की क़ीमत कोई विरला ही जान सकता है ॥ १ ॥ म० ५ ॥ भीतर सत्यस्वरूप प्रभु का नाम है और मैं बाहर भी चतुर्दिक् सत्य ही देखता हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि वह (परमात्मा) वन-तृण, त्रिभुवन, रोम-रोम में हर स्थान पर व्याप्त है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ प्रभु ने स्वयं रचना की है, (और अपनी रचना में) वह आप ही व्याप्त है। वह एक है, अनेक भाँति वह प्रकट होता है। वही सबमें विद्यमान है, सबके बाहर भी वही है। वह सबसे अलग है, सबमें प्रकट भी वही है। अपने आप वह गुप्त या प्रकट होता है। तुम्हारी (उसकी) रचना का रहस्य कोई नहीं जानता। तुम गहिर, गंभीर, अथाह, अपार और अनन्त हो। गुरु नानक कहते हैं, सब ओर एक तुम ही तुम व्याप्त (दीखते) हो ॥ २२ ॥ १ ॥ सुधु

रामकली की वार राइ बलवंडि तथा सतै डूमि आखी

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ नाउ करता कादरु करे किउ बोलु होवै जोखीवदै। देगुना सति भैण भराव है पारंगति दानु पड़ीवदै। नानकि राजु चलाइआ सचु कोटु सताणी नीवदै। लहणे धरिओनु छतु सिरि करि सिफती अंम्रितु पीवदै। मति गुर आतमदेव दी खड़गि जोरि पराकुइ जीअदै। गुरि चेले

रहरासि कोई नानकि सलामति थीवदै । सहि टिका दितोसु जीवदै ॥ १ ॥

[राय बलवंड तथा सत्ता गुरु अंगदजी के दरबार में कीर्तन-गान करनेवाले थे। उन्होंने एक बार अहंकार में गुरुजी का अपमान कर दिया था। अभिशप्त हुए, बाद में क्षमा-दान लेकर गुरुओं की स्तुति करते रहे। 'वार' की प्रथम पाँच पउड़ियाँ गुरु अंगददेव की स्तुति में हैं, शेष तीन पउड़ियों में उन्होंने अपने जीवन-काल में हुए पूर्व और उत्तर के गुरुओं की स्तुति की है।]

(चारण-परम्परा का पालन इस प्रकार की वाणी में बराबर हुआ है, इन्होंने गुरुओं को पौराणिक नायकों से उपमा दी है।) जब परमात्मा स्वयं किसी बात का निर्णय करता है, तो उसका तोल नहीं किया जा सकता अर्थात् उस पर कोई आपत्ति सम्भव नहीं। मनुष्य के दैवी गुण ही सच्चे बहिन-भाई हैं, अन्ततः प्रभु-दान प्राप्त करनेवाले की ही तूती बोलती है। (गुरु अंगद अर्थात् भाई लहणा को गुरु-गद्दी मिलेगी, यह ईश्वरीय निर्णय था, इसलिए किसी को आपत्ति क्योंकर हो सकती है? पुनः गुरु नानक के पुत्र गुरु-गद्दी माँगते थे, किन्तु दैवी गुणों के कारण भाई लहणा उसके अधिकारी हुए।) गुरु नानक ने गुरुमत का यह राज्य स्थापित किया और बड़ी मज़बूत नींव पर यह सत्य का दुर्ग निर्माण किया। भाई लहणा (बाद में गुरु अंगददेव) के सिर पर गुरु-पद का छत्र धरा और उन्होंने भी परमात्मा का यशोगान करके हरिनामामृत पान किया। (गुरु अंगद को) परमात्मा के ज्ञान रूपी खड्ग के बल से आत्मिक शक्ति प्राप्त हुई। गुरु नानक ने जीते-जी अपने सेवक लहणा को प्रणाम किया, जीवित रहते उसे तिलक दिया ॥ १ ॥

लहणे दी फेराईऐ नानका दोही खटीऐ। जोति ओहा जुगति साइ सहि काइआ फेरि पलटीऐ। झुलै सु छतु निरंजनी मलि तखतु बैठा गुर हटीऐ। करहि जि गुर फुरमाइआ सिल जोगु अलूणी चटीऐ। लंगरु चलै गुर सबदि हरि तोटि न आवी खटीऐ। खरचे दिति खसंम दी आप खहदी खैरि दबटीऐ। होवै सिफति खसंम दी नूरु अरसहु कुरसहु झटीऐ। तुधु डिठे सचे पातिसाह मलु जनम जनम दी कटीऐ। सचु जि गुरि फुरमाइआ किउ एदू बोलहु हटीऐ। पुत्री कउलु न पालिओ करि पीरहु कंन मुरटीऐ। दिलि खोटै आकी फिरन्हि बंन्हि भारु उचाइन्हि छटीऐ। जिनि आखी सोई करे जिनि कीती तिनै थटीऐ। कउणु हारे किनि उवटीऐ ॥ २ ॥

गुरु नानक की जगह अब भाई लहणा (गुरु अंगददेव) की दोही (घोषणा) की गयी, जो कि विश्व में लोक-जनित हुई। भाव और प्रकाशन-विधि वही है, प्रभु ने केवल उनका शरीर ही बदला है। गुरु का सिंहासन उन्होंने ग्रहण किया, उनके शीश पर परब्रह्म का छत्र झूलता है। वे (गुरु अंगद) गुरु नानक के हुक्म में ही सब कुछ करते हैं; परमात्मा से जुड़ने का रास्ता कितना भी नीरस क्यों न हो, वे उसी पर चले। गुरु के हुक्म से प्रभु का लंगर चलता है, उसमें कभी कोई कमी नहीं आयी। वे अपने स्वामी से प्राप्त नाम की भिक्षा खाते-ख़र्चते हैं, माँगनेवालों को उसी में से ख़ूब भिक्षा-दान भी करते हैं। परमात्मा का गुणगान होता है और सूर्य-चन्द्रादि ईश्वरीय मण्डलों से नूर बरसता है। हे सच्चे पातिसाह (भाव— हे गुरु अंगददेव), तुम्हारे दर्शनों से ही जन्म-जन्म के पाप कट जाते हैं। जब गुरु नानक ने गुरु अंगद को गुरु मान लेने का सत्य घोषित कर दिया, तो कोई इससे क्योंकर मुँह फेर सकता है ? पुत्रों ने उनका क़ौल (कथन) नहीं माना और उनसे विमुख हो गए। वे खोटे दिल के हैं, पापों का बोझ लादे फिरते हैं। जिसने गुरु के आदेश का निर्द्वन्द्व पालन किया, वह गद्दी पर आसीन किया गया। (देख लें, भाई लहणा और गुरु-पुत्रों में) अन्ततः कौन पराजित हुआ और कौन जीत गया ।। २ ।।

जिनि कीती सो मंनणा को सालु जिवाहे साली। धरमराइ है देवता लै गला करे दलाली। सतिगुरु आखै सचा करे सा बात होवै दरहाली। गुर अंगद दी दोही फिरी सचु करतै बंधि बहाली। नानकु काइआ पलटु करि मलि तखतु बैठा सैडाली। दरु सेवे उमति खड़ी मसकलै होइ जंगाली। दरि दरवेसु खसंम दै नाइ सचै बाणी लाली। बलवंड खीवी नेक जन जिसु बहुती छाउ पत्राली। लंगरि दउलति वंडीऐ रसु अंम्रितु खीरि घिआली। गुरसिखा के मुख उजले मनमुख थीए पराली। पए कबूलु खसंम नालि जां घाल मरदी घाली। माता खीवी सहु सोइ जिनि गोइ उठाली ।। ३ ।।

जिसने (गुरु अंगद ने) आदेश-पालन किया, वही सर्व-मान्य हो गया, चावल और भूसी में से क्या श्रेष्ठ है, यह निर्णय बड़ा आसान है। (इसी प्रकार गुरु अंगद एवं गुरु नानक-पुत्रों में निर्णय आसान है)। धर्मराज देवता दोनों पक्षों के गुण देखकर दलील-युक्त न्याय करता है। जो सतिगुरु (गुरु अंगद) कहते हैं, परमात्मा झटपट उसे पूर्ण कर देता है— वह बात तुरन्त पूरी होती है। गुरु अंगद की घोषणा हुई तो प्रभु ने उस घोषणा

की एकदम पुष्टि कर दी। गुरु नानक स्वयं ही शरीर बदलकर गुरु-आसन पर आसीन है और सैकड़ों अंगों में उसकी साधु-संगति का प्रसार हो रहा है। सिक्खों के समुदाय द्वार पर खड़े प्रशस्ति-गान करते हैं, मलिन जीवों के पाप दूर हो जाने से उनमें उज्ज्वलता आ गयी है। अपने स्वामी अर्थात् गुरु नानक के द्वार के भिखारी को सच्चे हरि-नाम की लाली चढ़ी है। बलवंड चारण कहता है कि खीवी (गुरु अंगददेव की पत्नी) नेक और स्नेहशील है, जिसकी घनी पत्राली छावँ में सबको सुख मिलता है। गुरु (अंगद) के लंगर में नित्य अमृत-समान घृतयुक्त खीर वितरित होती है। गुरमुखों के मुख उज्ज्वल हैं, मनमुख तो पराली (धान-विहीन) की नाईं तेज-रहित हैं। अपने स्वामी गुरु नानक के साथ गुरु अंगद ने मर्दों वाला सही व्यवहार किया। माता खीवी के स्वामी (गुरु अंगद) ऐसे हैं, जिन्होंने समूची पृथ्वी का बोझ उठा रखा है ॥ ३ ॥

होरिंओ गंग वहाईऐ दुनिआई आखै किकिओनु। नानक ईसरि जगनाथि उचहदी वैणु विरिकिओनु। माधाणा परबतु करि नेत्रि बासकु सबदि रिड़किओनु। चउदह रतन निकालिअनु करि आवागउणु चिलकिओनु। कुदरति अहि वेखालीअनु जिणि ऐवड पिड ठिणकिओनु। लहणे धरिओनु छत्रु सिरि असमानि किआड़ा छिकिओनु। जोति समाणी जोति माहि आपु आपै सेती मिकिओनु। सिखां पुत्रां घोखि कै सभ उमति वेखहु जिकिओनु। जां सुधोसु तां लहणा टिकिओनु ॥ ४ ॥

जगत कहता है कि (गुरु नानक ने) और ही तरह गंगा बहा दी है (अर्थात् स्वयं अपने सेवक को गद्दी पर बिठाकर उसे प्रणाम किया है)। जगन्नाथ परमपुरुष गुरु नानक ने अतिश्रेष्ठ वचन कहा है। उन्होंने आत्मा रूपी मथनी से एकाग्रता रूपी वासुकी की रस्सी डालकर, गुरु के शब्द को मथने का आयोजन किया है। (यहाँ देवों-दानवों द्वारा समुद्र-मंथन के प्रसंग का संकेत है।) ऐसा करके उन्होंने गुण रूपी चौदह रत्न निकाले हैं और इस आवागमनमय संसार को चमका दिया है। प्रकृति ने ऐसी लीला की है कि गुरु के महान् शरीर को भी भलीभाँति परखकर देखा है। अन्ततः भाई लहणे के सिर पर छत्र धरा और उसे आकाश से भी ऊँचा उठा दिया। गुरु नानक की ज्योति गुरु अंगद की ज्योति में समा गयी और द्वैत का अन्त हो गया। सिक्खों और पुत्रों की भलीभाँति परख कर गुरुजी ने यह काम किया। जब भली प्रकार परख हो गयी, तभी लहणा को सिंहासनासीन किया गया ॥ ४ ॥

फेरि वसाइआ फेरु आणि सतिगुरि खाडूरु। जपु तपु संजमु नालि तुधु होरु मुचु गरूरु। लबु विणाहे माणसा जिउ पाणी बूरु। वहिऐ दरगह गुरू की कुदरती नूरु। जितु सु हाथ न लभई तूं ओहु ठरूरु। नउनिधि नामु निधानु है तुधु विचि भरपूरु। निंदा तेरी जो करे सो वंञै चूरु। नेड़ै दिसै मात लोक तुधु सुझै दूरु। फेरि वसाइआ फेरु आणि सतिगुरि खाडूरु ।। ५।।

भाई फेरू के पुत्र (गुरु अंगदजी) ने पुनः खडूर में आकर निवास किया। जप, तप, संयम सब उनके साथ हैं, अन्य सब संसार अहंकारमय है। लोभ मनुष्यों को उसी प्रकार बरबाद कर देता है, जैसे पानी को 'बूर' नष्ट कर देता है। गुरु के दरबार में आने से उज्ज्वलता और निर्मलता मिली है। हे गुरु, तुम वह शांति-सागर हो, जिसकी कोई गहराई नहीं जानता। नव-निधि के समान हरि-नाम तुममें विराजता है; जो तुम्हारी निन्दा करता है, वह मिट जाता है। इहलोक के लोग तो समीप की वस्तुएँ ही देखते हैं, तुम्हें परोक्ष भी दृश्यमान है। फिर भाई फेरू के पुत्र गुरुजी ने खडूर बसाया। ('बूर' पानी के ऊपर छा जाने वाला काई की जाति का एक पदार्थ है, जो हल्के गुलाबी-से रंग का होता है) ।। ५ ।।

सो टिका सो बैहणा सोई दीबाणु। पियू दादे जेविहा पोता परवाणु। जिनि बासकु नेत्रै घतिआ करि नेही ताणु। जिनि समुंदु विरोलिआ करि मेरु मधाणु। चउदह रतन निकालिअनु कीतोनु चानाणु। घोड़ा कीतो सहज दा जतु कीओ पलाणु। धणखु चड़ाइओ सत दा जस हंदा बाणु। कलि विचि धू अंधारु सा चड़िआ रैभाणु। सतहु खेतु जमाइओ सतहु छावाणु। नित रसोई तेरीऐ घिउ मैदा खाणु। चारे कुंडां सुझीओसु मन महि सबदु परवाणु। आवा गउणु निवारिओ करि नदरि नीसाणु। अउतरिआ अउतारु लै सो पुरखु सुजाणु। झखड़ि वाउ न डोलई परबतु मेराणु। जाणै बिरथा जीअ की जाणी हू जाणु। किआ सालाही सचे पातिसाह जां तु सुघड़ु सुजाणु। दानु जि सतिगुर भावसी सो सते दाणु। नानक हंदा छत्रु सिरि उमति हैराणु। सो टिका सो बैहणा सोई दीबाणु। पियू दादे जेविहा पोत्रा परवाणु ।। ६ ।।

वही तिलक, वही सिंहासन और वही दरबार वाला पौत्र (गुरु

अमरदास) भी पिता (गुरु अंगद) एवं दादा (गुरु नानक) के समान मान्य और पूज्य है। जिसने वासुकी नाग को रस्सी बनाकर और सुमेरु पर्वत को मथनी करके अपनी शक्ति से सागर को मथ डाला। चौदह रत्नों अर्थात् गुणों को निकालकर जिसने चतुर्दिक् प्रकाश फैला दिया। जिसने सहज प्रेम का घोड़ा बनाकर उस पर यतीत्व की काठी बनायी है; सत्य के धनुष पर जिसने यश का बाण साधा है और जो कलियुग के भयंकर अंधकार में रश्मिरथी बनकर निकला है। उसने सद्‌गुणों के खेत पर सत् की छत डाली है। उसकी रसोई में नित्य घी, मैदा और शक्कर का प्रसाद होता है। मन में उसकी वाणी में विश्वास बना लेने से चारों दिशाओं की सूझ मिल जाती है। जिस पर उसकी कृपादृष्टि हो जाती है, उसका आवागमन छूट जाता है। यह परमपुरुष स्वयं अवतरित हुआ है, जो किसी भी प्रकार की मुसीबत में अस्थिर नहीं होता, सुमेरु के समान निश्चल है। वह जीवों की व्यथा जाननेवाला अन्तर्यामी है; जब तुम, हे सतिगुरु, स्वयं सब कुछ जाननेवाले हो, मैं तुम्हारी क्या स्तुति करूँ? जो गुरु को ठीक रुचता है, वही सही दान है। गुरु नानकदेव वाला छत्र ही इनके सिर पर देखकर सिक्ख-सेवक आश्चर्य में हैं; वही तिलक, वही सिंहासन और वही दरबार वाला पौत्र भी पिता और दादा के समान मान्य और पूज्य है॥ ६॥

धंनु धंनु रामदास गुरु जिनि सिरिआ तिनै सवारिआ। पूरी होई करामाति आपि सिरजणहारै धारिआ। सिखी अतै संगती पारब्रहमु करि नमसकारिआ। अटलु अथाहु अतोलु तू तेरा अंतु न पारावारिआ। जिन्ही तूं सेविआ भाउ करि से तुधु पारि उतारिआ। लबु लोभु कामु क्रोधु मोहु मारि कढे तुधु सपरवारिआ। धंनु सु तेरा थानु है सचु तेरा पैसकारिआ। नानकु तू लहणा तू है गुरु अमरु तू वीचारिआ। गुरु डिठा तां मनु साधारिआ॥ ७॥

हे गुरु रामदास, तुम धन्य हो। जिस परमात्मा ने तुम्हें रचा, उसी ने तुम्हें सम्मान भी प्रदान किया। रचयिता की लीला तुम्हें इस रूप में स्थापित करके पूरी हो गयी। सिक्खों-सेवकों ने तुम्हें परब्रह्म का रूप मानकर नमन किया है। तुम अटल, अथाह और गम्भीर हो, तुम्हारा रहस्य कोई नहीं समझ पाया। जिन्होंने प्रेमपूर्वक तुम्हारी सेवा की, उनका तुमने उद्धार किया। काम, क्रोध, लोभ, मोहादि को तुमने सपरिवार खदेड़ दिया है। तुम्हारा स्थान धन्य है और तुम्हारा किया समूचा प्रसार सत्य है। तुम्हीं गुरु नानक, गुरु अंगद या गुरु

अमरदास हो। गुरु-रूप में तुम्हारे दर्शन से ही मन को अवलम्ब मिला है ॥ ७ ॥

चारे जागे चहु जुगी पंचाइणु आपे होआ। आपीन्है आपु साजिओनु आपे ही थंम्हि खलोआ। आपे पटी कलम आपि आपि लिखणहारा होआ। सभ उमति आवण जावणी आपे ही नवा निरोआ। तखति बैठा अरजन गुरू सतिगुर का खिवै चंदोआ। उगवणहु तै आथवणहु चहु चकी कीअनु लोआ। जिन्ही गुरू न सेविओ मनमुखा पइआ मोआ। दूणी चऊणी करामाति सचे का सचा ढोआ। चारे जागे चहु जुगी पंचाइणु आपे होआ ॥ ८ ॥

प्रथम चार गुरु अपने-अपने युग में ज्योतिर्मान हुए और अब यह पाँचवाँ (गुरु अर्जुनदेव) भी उन्हीं का रूप हुआ है। उन्होंने अपने को आप निर्मित किया (स्वयंभू) और सबका सहारा बने। वे स्वयं ही क़लम, पट्टी और लिखनेवाले बने अर्थात् कर्ता, कर्म एवं करण वे स्वयं ही हैं। सब सिक्ख-संगत आवागमन की शिकार है, केवल गुरु स्वयं सदैव अजर है। गुरु अर्जुनदेव सिंहासन पर बैठे हैं, उनका चन्द्रमुख ज्योतिर्मान है। इससे पूर्व से पश्चिम तक चतुर्दिक् उजाला हो गया है। जिन मनमुखों ने गुरु की सेवा नहीं की, वे नष्ट हुए। सत्यस्वरूप परमात्मा की ओर से तुम्हें दोगुणी-चौगुणी आध्यात्मिक शक्ति विशेष उपहार है। प्रथम चार गुरु अपने-अपने युग में ज्योतिर्मान हुए और अब पाँचवाँ भी उन्हीं का रूप हुआ है ॥ ८ ॥

रामकली बाणी भगता की। कबीर जीउ

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ काइआ कलालनि लाहनि मेलउ गुर का सबदु गुड़ु कीनु रे। त्रिसना कामु क्रोधु मद मतसर काटि काटि कसु दीनु रे ॥१॥ कोई है रे संतु सहज सुख अंतरि जाकउ जपु तपु देउ दलाली रे। एक बूंद भरि तनु मनु देवउ जो मदु देइ कलाली रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भवन चतुरदस भाठी कीन्ही ब्रहम अगनि तनि जारी रे। मुद्रा मदक सहज धुनि लागी सुखमन पोचनहारी रे ॥ २ ॥ तीरथ बरत नेम सुचि संजम रवि ससि गहनै देउ रे। सुरति पिआल सुधा रसु अंम्रितु

एहु महा रसु पेउ रे ॥ ३ ॥ निझर धार चुऐ अति निरमल इह रस मनूआ रातो रे । कहि कबीर सगले मद छूछे इहै महा रसु साचो रे ॥ ४ ॥ १ ॥

(यहाँ कबीरजी मदिरा ढालने की प्रसंग-चर्चा के माध्यम से हरि-रस-मद की बात कर रहे हैं।) काया रूपी मदिरा की भट्ठी में मदिरा ढालने के लिए क्या-क्या सामग्री एकत्रित करनी होगी? गुरु के शब्द को गुड़ बनाया है। तृष्णा, काम, क्रोध, अहंकार, ईर्ष्या आदि को काट-काटकर पेड़ों की छाल की जगह प्रयोग किया है (अर्थात् गुरु-संगति की मिठास और दुर्गुणों की काट करके जो मदिरा ढाली जायगी, उससे हरि-रस अधिक मादक होगा) ॥ १ ॥ (अब मदिरा ढालने पर कर देना पड़ता है, इस पर कबीरजी का कथन है।) किसी ऐसे प्रभु-प्रेमी सन्त को, जिसके भीतर सहज का आनन्द विद्यमान हो, अपने जप-तप की दलाली दो। यदि (सन्त रूपी) कलाली उक्त प्रकार का हरि-मद पिला दे, तो जन्म भर के लिए समूचा तन-मन उसी को अर्पित कर दो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चौदह भुवनों (जगत्) की भट्ठी बनाई है, शरीर के भीतर प्रभु-प्रेम की ज्योति की अग्नि जलाई है। भबके में से कशीद करने के लिए मटकी का ढकना सहज की ध्वनि में ध्यानस्थ होने तथा सुषुम्ना की एकाग्रता का है ॥ २ ॥ इस पर जो शराब निकलेगी उसे पाने के लिए मैं इड़ा-पिंगला के सुरों को भी गिरवी रखता हूँ; और इस प्रकार मदिरा के अमृत का एक प्याला पीता हूँ ॥ ३ ॥ इस तरह निर्मल रस की धार बहती है, जिसे पाकर मन मग्न होता है। कबीरजी कहते हैं कि अन्य सब प्रकार के मद थोथे हैं, केवल यही महारस सच्चा है ॥ ४ ॥ १ ॥

गुड़ु करि गिआनु धिआनु करि महूआ भउ भाठी मन धारा । सुखमन नारी सहज समानी पीवै पीवनहारा ॥ १ ॥ अउधू मेरा मनु मतवारा । उनमद चढा मदन रसु चाखिआ त्रिभवन भइआ उजिआरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुइ पुर जोरि रसाई भाठी पीउ महा रसु भारी । कामु क्रोधु दुइ कीए जलेता छूटि गई संसारी ॥ २ ॥ प्रगट प्रगास गिआन गुर गंमित सतिगुर ते सुधि पाई । दासु कबीरु तासु मद माता उचकि न कबहू जाई ॥ ३ ॥ २ ॥

(मदिरा के रूपक में ही एक अन्य पद) ज्ञान का गुड़ हो, ध्यान का महुआ हो और मन की भावना की भट्ठी हो। सुषुम्ना अर्थात् एकाग्रता की नलकी सहज में समाई हो, जिससे बूँद-बूँद झरनेवाले हरि-रस रूपी मद

को कोई भाग्यशाली ही पीता है ।।१।। ऐ योगियो, मेरा मन इसी (हरि-रस रूपी) मद से मस्त (मतवाला) है । इस उल्लासमय मादक रस को पीकर हतबुद्धि होने की अपेक्षा मेरे लिए तीनों लोक प्रकाशमान् हो गये हैं ।। १ ।। रहाउ ।। धरती और आकाश के दो पाट मिलाकर अर्थात् समूचे संसार की भट्ठी बनायी है और उक्त महारस-पान किया है । काम-क्रोध को ईंधन बनाया है, जिससे मेरी सांसारिकता छूट गयी है ।।२।। गुरु के निकट जाने और उसके उपदेश पर आचरण करने से मुझे सूझ प्राप्त हुई है । कबीरजी कहते हैं कि वे तो हरि-मद की मस्ती में लीन हैं, उनका यह नशा कभी नहीं उतरता ।। ३ ।। २ ।।

तूं मेरो मेरु परबतु सुआमी ओट गही मै तेरी । ना तुम डोलहु ना हम गिरते रखि लीनी हरि मेरी ।। १ ।। अब तब जब कब तुही तुही । हम तुअ परसाद सुखी सदही ।।१।।रहाउ।। तोरे भरोसे मगहर बसिओ मेरे तन की तपति बुझाई । पहिले दरसनु मगहर पाइओ फुनि कासी बसे आई ।। २ ।। जैसा मगहरु तैसी कासी हम एकै करि जानी । हम निरधन जिउ इहु धनु पाइआ मरते फूटि गुमानी ।। ३ ।। करै गुमानु चुभहि तिसु सूला को काढन कउ नाही । अजै सु चोभ कउ बिलल बिलाते नरके घोर पचाही ।। ४ ।। कवनु नरकु किआ सुरगु बिचारा संतन दोऊ रादे । हम काहू की काणि न कढते अपने गुर परसादे ।। ५ ।। अब तउ जाइ चढे सिंघासनि मिले है सारिंगपानी । राम कबीरा एक भए है कोइ न सकै पछानी ।। ६ ।। ३ ।।

हे स्वामी, तुम मेरे लिए सुमेरु पर्वत के समान हो, मैंने तुम्हारा ही सहारा लिया है (अर्थात् हरि-सरीखा मेरा शक्तिशाली आश्रय है) । तुम निश्चल हो, अडोल हो, इसीलिए तुम्हारे सहारे रहने पर हम भी स्थिर हैं, तुम्हीं हमारे रक्षक हो ।। १ ।। अब और जब, तब तुम ही मेरे लिए सब कुछ हो । तुम्हारी ही कृपा से हम सदा सुख लाभ करते हैं ।।१।। रहाउ ।। तुम्हारे ही भरोसे मैं मगहर (एक नगर, जिसके सम्बन्ध में कथन है कि वहाँ मरनेवाला नरक-वासी होता है) में रहने लगा हूँ, तुम्हीं ने मेरे तन के कष्ट दूर किये हैं । पहले मगहर में ही, हे प्रभु, तुम्हारे दर्शन किये हैं, फिर काशी में आकर बसा हूँ ।। २ ।। (तुम्हारे भरोसे) मेरे लिए जैसा मगहर है, वैसी ही काशी है, दोनों एक समान हैं । हम निर्धनों को तुम्हारी कृपा से यह उपलब्धि हुई है, अहंकारीजन भटक-भटककर मर

जाते हैं ॥ ३ ॥ अहंकार करनेवाले को काँटे लगते हैं, कोई निकालनेवाला नहीं होता । वे इस जन्म में भी उसी चुभन में तड़पते हैं और आगे जाकर नरक में पड़ते हैं ॥ ४ ॥ नरक हो या स्वर्ग, सन्तों के लिए दोनों व्यर्थ हैं । हम किसी के मुहताज नहीं हैं, अपने गुरु की कृपा के आश्रय जीते हैं ॥ ५ ॥ अब तो परमात्मा से भेंट हो जाने से हम सिंहासनारूढ़ होते हैं, जिससे प्रभु और कबीर दोनों एक हो गये हैं, अलग करके कोई नहीं पहचान सकता ॥ ६ ॥ ३ ॥

संता मानउ दूता डानउ इह कुटवारी मेरी । दिवस रैनि तेरे पाउ पलोसउ केस चवर करि फेरी ॥ १ ॥ हम कूकर तेरे दरबारि । भउकहि आगै बदनु पसारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूरब जनम हम तुम्हरे सेवक अब तउ मिटिआ न जाई । तेरे दुआरै धुनि सहज की माथै मेरे दगाई ॥ २ ॥ दागे होहि सु रन महि जूझहि बिनु दागे भगि जाई । साधू होइ सु भगति पछानै हरि लए खजानै पाई ॥ ३ ॥ कोठरे महि कोठरी परम कोठी बीचारि । गुरि दीनी बसतु कबीर कउ लेवहु बसतु सम्हारि ॥ ४ ॥ कबीरि दीई संसार कउ लीनी जिसु मसतकि भागु । अंम्रित रसु जिनि पाइआ थिरु ता का सोहागु ॥ ५॥४॥

सन्तों को सम्मान देता हूँ, दुष्टों को दण्ड देता हूँ, यही मेरी कोतवाली (कोतवाल होने का कर्तव्य) है । दिन-रात तुम्हारे चरणों की सेवा करता हूँ और अपने केशों का चँवर बनाकर झुलाता हूँ ॥ १ ॥ हम तुम्हारे दरबार के कुत्ते हैं, मुँह लम्बा कर भौंका करते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (दैन्य-भाव से कबीर अपने को परमात्मा का कुत्ता तक कह देते हैं ।) हम पूर्व जन्म से ही तुम्हारे सेवक हैं, अब हम कैसे हट सकते हैं ? तुम्हारे द्वार पर सहज-ध्वनि का वादन होता है और मेरे माथे पर तुम्हारा ग़ुलाम होने का चिह्न दागा हुआ है (अर्थात् मैं तुम्हारा सेवक हूँ) ॥ २ ॥ जिन पर स्वामी का चिह्न होता है, वे ही डटकर लड़ते हैं, अन्य सिपाही तो भीड़ पड़ने पर भाग जाते हैं । सच्चा साधु ही भक्ति को पहचानता है और हरि के कोष में सम्मिलित होता है ॥ ३ ॥ शरीर रूपी कोठे में हृदय रूपी कोठरी है, जो विवेक द्वारा परमतत्त्व से प्रभावित होती है । गुरु ने हरिनाम-रूप वस्तु कबीर को दी है, उसे सम्हालकर सुरक्षित रखना ही है ॥ ४ ॥ कबीर ने यही हरि-नाम रूपी वस्तु संसार को दी, जो कि भाग्यशाली जीवों ने प्राप्त की । जिन्होंने इस नाम रूपी अमृत-रस को पाया है, उनका सुहाग (प्रभु-स्वामी) हमेशा स्थिर है ॥ ५ ॥ ४ ॥

जिह मुख बेदु गाइत्री निकसै सो किउ ब्रहमनु बिसरु करै। जा कै पाइ जगतु सभु लागै सो किउ पंडितु हरि न कहै ॥ १ ॥ काहे मेरे बाम्हन हरि न कहहि। रामु न बोलहि पाडे दोजकु भरहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपन ऊच नीच घरि भोजनु हठे करम करि उदरु भरहि। चउदस अमावस रचि रचि मांगहि कर दीपकु लै कूप परहि ॥ २ ॥ तूं ब्रहमनु मै कासीक जुलहा मुहि तोहि बराबरी कैसे कै बनहि। हमरे राम नाम कहि उबरे बेद भरोसे पांडे डूबि मरहि ॥ ३ ॥ ५ ॥

ब्राह्मण मानते हैं कि ब्रह्मा के मुख से वेदों और गायत्री का जन्म हुआ है, फिर उसको विस्मृत क्यों करते हैं। सारा संसार जिसके चरणों की शरण चाहता है, पण्डित उस हरि का नाम क्यों नहीं जपता ? ॥ १ ॥ हे ब्राह्मण, क्यों तुम हरि का नाम नहीं लेते ? हे पण्डित, यदि तू राम-नाम नहीं आराधेगा, तो नरक में जायेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपने को ऊँचा कहता है, फिर भी नीचों के घर भोजनार्थ जाता है, क्या पेट भरने मात्र के लिए यह हठ-कर्म नहीं ? अमावस, पूर्णिमा आदि के नाम पर घर-घर माँगता है; हाथ में दिया लेकर भी कुएँ में गिरता है ॥ २ ॥ तुम ब्राह्मण हो, मैं काशी का जुलाहा हूँ, मुझमें और तुममें क्या बराबरी ? हम तो राम-नाम जपते हुए उबरते हैं, वेद-शास्त्रों के भरोसे रहनेवाला पण्डित मझधार में डूब मरता है ॥ ३ ॥ ५ ॥

तरवरु एकु अनंत डार साखा पुहप पत्र रस भरीआ। इह अंम्रित की बाड़ी है रे तिनि हरि पूरै करीआ ॥ १ ॥ जानी जानी रे राजा राम की कहानी। अंतरि जोति राम परगासा गुरमुखि बिरलै जानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भवरु एकु पुहप रस बीधा बारह ले उरधरिआ। सोरह मधे पवनु झकोरिआ आकासे फरु फरिआ ॥ २ ॥ सहज सुंनि इकु बिरवा उपजिआ धरती जलहरु सोखिआ। कहि कबीर हउ ता का सेवकु जिनि इहु बिरवा देखिआ ॥ ३ ॥ ६ ॥

परमात्मा एक पेड़ है, संसार के जीव इसकी अनन्त शाखाएँ, पुष्प-पत्र-रस आदि हैं। यह संसार रूपी वाटिका अमृतमयी है, परमात्मा ने स्वयं इसे बनाया है ॥१॥ हमने राजा राम की कहानी जान ली है। अन्तर्मन की ज्योति में राम का प्रकाश है, जो कि कुछ विरले जीवों को ही प्राप्त होता है ॥१॥रहाउ॥ जीव रूपी भ्रमर ब्रह्म रूपी पुष्प के रस का

माता होकर हृदय-कमल में ही टिक जाता है। तब वह सोलह-दल-कमल वाले दशम द्वार में ले जाकर श्वास द्वारा झकझोरा गया, तो लक्ष्य-फल मिला ॥ २ ॥ सहजावस्था-रूप शून्य में केवल वाहिगुरु रूपी पौधा पैदा किया है और धरती ने मेघ सोख लिया है। कबीरजी कहते हैं कि जिस व्यक्ति ने यह पौधा देखा है, वे उसके दास हैं ॥ ३ ॥ ६ ॥

मुंद्रा मोनि दइआ करि झोली पत्र का करहु बीचारु रे। खिथा इहु तनु सीअउ अपना नामु करउ आधारु रे ॥ १ ॥ ऐसा जोगु कमावहु जोगी। जप तप संजमु गुरमुखि भोगी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बुधि बिभूति चढावउ अपुनी सिंगी सुरति मिलाई। करि बैरागु फिरउ तनि नगरी मन की किंगुरी बजाई ॥ २ ॥ पंच ततु लै हिरदै राखहु रहै निरालम ताड़ी। कहतु कबीरु सुनहु रे संतहु धरमु दइआ करि बाड़ी ॥ ३ ॥ ७ ॥

मौन, शान्ति की मुद्राएँ पहनो, दया की कफ़नी बनाओ और पात्र का विचार करो। विषय-विकारों की ओर से शरीर को संयत कर लेना ही खिथा करो और हरि-नाम की आधारी बनाओ ॥१॥ हे योगी, (यदि) तुम ऐसा मार्मिक योग कमाओ तो गुरु के द्वार पर तुम जप, तप, संयम का भोग करोगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बुद्धि की विभूति लगाओ और आत्मा की सिंगी बजाओ; मन की किंगुरी बजाते हुए शरीर की नगरी में भिक्षाटन करो ॥२॥ पाँच तत्त्वों के सभी गुणों के स्वभाव को अपना साथी बनाओ और उसी में स्थिर समाधि करो। कबीरजी कहते हैं कि हे सन्तो, दया-धर्म की वाटिका बनाओ (और उसी में बैठकर साधना करो) ॥ ३ ॥ ७ ॥

कवन काज सिरजे जग भीतरि जनमि कवन फलु पाइआ। भवनिधि तरन तारन चिंतामनि इक निमख न इहु मनु लाइआ ॥ १ ॥ गोबिंद हम ऐसे अपराधी। जिनि प्रभि जीउ पिंडु था दीआ तिस की भाउ भगति नही साधी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परधन परतन परती निंदा पर अपबादु न छूटै। आवागवनु होतु है फुनि फुनि इहु परसंगु न तूटै ॥ २ ॥ जिह घर कथा होत हरि संतन इक निमख न कीन्हो मै फेरा। लंपट चोर दूत मतवारे तिन संगि सदा बसेरा ॥ ३ ॥ काम क्रोध माइआ मद मतसर ए संपै मो माही। दइआ धरमु अरु गुर की सेवा ए सुपनंतरि नाही ॥ ४ ॥ दीन दइआल क्रिपाल दमोदर भगति

बछल भै हारी । कहत कबीर भीर जन राखहु हरि सेवा करउ तुम्हारी ।। ५ ।। ८ ।।

संसार में हमें किसलिए पैदा किया गया और जन्म लेने का हमें क्या फल हुआ, यदि क्षण भर के लिए भी हमने संसार-सागर से पार करनेवाले परमात्मा में मन नहीं लगाया ।।१।। हे परमात्मा, हम ऐसे अपराधी हैं; जिस परमात्मा ने हमें शरीर और प्राण दिए, उसमें कोई भाव-भक्ति नहीं रखी ।। १ ।। रहाउ ।। (हम कभी) पराए धन, पराए शरीर, परायी स्त्री, परायी निन्दा तथा व्यर्थ के विवादों को नहीं छोड़ पाए; इसीलिए हमारा आवागमन नहीं छूट पाया और पुनःपुनः आने का यह प्रसंग नहीं टूटा ।।२।। जिस घर में नित्य हरि-कथा होती है, वहाँ क्षण भर के लिए भी मैंने फेरा नहीं किया । सदा लंपटों, चोरों तथा दुष्टों की संगति में ही बना रहा ।। ३ ।। काम, क्रोध, माया और अहंकार आदि की संपत्ति ही मुझमें है, किन्तु दया, धर्म और गुरु की सेवा आदि गुण मैंने सपने में भी नहीं अपनाए ।। ४ ।। परमात्मा दीनदयालु, कृपालु, भक्त-वत्सल और निर्भय है । कबीरजी कहते हैं कि हे प्रभु, अपने दास को कठिनाइयों से बचा लो, मैं सदा तुम्हारी सेवा में रत रहूँगा ।। ५ ।। ८ ।।

जिह सिमरनि होइ मुकति दुआरु । जाहि बैकुंठि नही संसारि । निरभउ कै घरि बजावहि तूर । अनहद बजहि सदा भरपूर ।। १ ।। ऐसा सिमरनु करि मन माहि । बिनु सिमरन मुकति कत नाहि ।। १ ।। रहाउ ।। जिह सिमरन नाही ननकारु । मुकति करै उतरै बहु भारु । नमसकारु करि हिरदै माहि । फिरि फिरि तेरा आवनु नाहि ।। २ ।। जिह सिमरनि करहि तू केल । दीपकु बांधि धरिओ बिनु तेल । सो दीपकु अमरकु संसारि । काम क्रोध बिखु काढीले मारि ।।३।। जिह सिमरनि तेरी गति होइ । सो सिमरनु रखु कंठि परोइ । सो सिमरनु करि नही राखु उतारि । गुरपरसादी उतरहि पारि ।। ४ ।। जिह सिमरनि नाही तुहि कानि । मंदरि सोवहि पटंबर तानि । सेज सुखाली बिगसै जीउ । सो सिमरनु तू अनदिनु पीउ ।। ५ ।। जिह सिमरन तेरी जाइ बलाइ । जिह सिमरन तुझु पोहै न माइ । सिमरि सिमरि हरि हरि मनि गाईऐ । इहु सिमरनु सतिगुर ते पाईऐ ।। ६ ।। सदा सदा सिमरि दिनु राति । ऊठत बैठत सासि गिरासि । जागु सोइ

सिमरन रस भोग। हरि सिमरनु पाईऐ संजोग ॥ ७ ॥ जिह सिमरन नाही तुझु भार। सो सिमरनु राम नाम अधारु। कहि कबीर जाका नही अंतु। तिस के आगे तंतु न मंतु ॥ ८ ॥ ९ ॥

जिसके स्मरण में मुक्ति-द्वार की उपलब्धि है, जिसकी कृपा से हरिपुर-वास के बाद दुबारा संसार में आगमन नहीं होता। जो प्रभु निर्भय है और जिसके घर में विजय-वादन बजते हैं तथा सदा अनाहत ध्वनि होती है ॥१॥ उसी परमात्मा का स्मरण मन में नित्य करो। स्मरण के बिना कोई मुक्ति-लाभ नहीं करता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसके स्मरण से जीव को कोई रोक-टोक नहीं होती, वह मुक्ति देता है और उसकी कृपा से जगत के सब बोझ दूर होते हैं। उसे अपने हृदय में नित्य प्रणाम करो, (ऐसा करने से) तुम्हारा आवागमन चुक जायेगा ॥२॥ जिसके स्मरण करने में हर्षोल्लास होता है, उसी ने तुम्हारे भीतर ज्ञान का दीपक बाँध रखा है, जो तेल के बिना ज्योतिर्मान् होता है। उस दीपक के प्रज्वलन से संसार में अमरता मिलती है और वह काम-क्रोध के विषैले अन्धकार को दूर कर देता है ॥३॥ जिस प्रभु के स्मरण से तुम्हारी गति होती है, वही स्मरण सदा कण्ठ में धारण करो। उसके स्मरण को कभी अपने से दूर न करो, तभी गुरु-कृपा से (संसार-सागर से) पार उतरोगे ॥ ४ ॥ जिस परमात्मा के स्मरण से तुम्हें कोई वंचना नहीं रह जाती, प्रासादों में निश्चिन्त रेशमी चादर तान कर सोते हो; सुखद सेज पर आनन्द प्राप्त करते हो, उसी का स्मरण रात-दिन करो ॥ ५ ॥ जिस परमात्मा के स्मरण से तुम्हारे सब कष्ट दूर होते हैं, जिसके स्मरण से तुम्हें माया नहीं बाँधती, उसी हरि का स्मरण मन में नित्य करो; इस स्मरण का रहस्य सतिगुरु से प्राप्त होता है ॥ ६ ॥ रात-दिन प्रभु का सिमरन करो, उठते-बैठते, श्वास-श्वास उसे याद करो; जागते-सोते हरिनाम-रस का भोग करो, उसी हरि के स्मरण से प्रभु से संयोग प्राप्त होता है ॥ ७ ॥ जिस परमात्मा के स्मरण से तुम सांसारिक बोझों से मुक्त होते हो, जिसके स्मरण से तुम्हें राम-नाम का आधार मिलता है; कबीरजी कहते हैं कि जो अनन्त है, उसके स्मरण से उत्तम कोई मन्त्र-तन्त्र सिद्ध नहीं होता ॥ ८ ॥ ९ ॥

रामकली घरु २ बाणी कबीर जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ बंधचि बंधनु पाइआ। मुकतै गुरि अनलु बुझाइआ। जब नख सिख इहु मनु चीन्हा। तब

अंतरि मजनु कीन्हा ॥ १ ॥ पवनपति उनमनि रहनु खरा। नही मिरतु न जनमु जरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उलटीले सकति सहारं। पैसीले गगन मझारं। बेधीअले चक्र भुअंगा। भेटीअले राइ निसंगा ॥ २ ॥ चूकीअले मोह मइआसा। ससि कीनो सूर गिरासा। जब कुंभकु भरिपुरि लीणा। तह बाजे अनहद बीणा ॥ ३ ॥ बकतै बकि सबदु सुनाइआ। सुनतै सुनि मंनि बसाइआ। करि करता उतरसि पारं। कहै कबीरा सारं ॥ ४ ॥ १ ॥

बाँधनेवाली माया ने (जीव पर) अनेक बन्धन लगाए हैं, किन्तु मुक्त गुरु ने तृष्णा की अग्नि बुझा दी। जब मन समूचे नख-शिख को जान लिया, तभी अन्तर्मुखी होकर उसने निर्मलता प्राप्त की (स्नान किया) ॥ १ ॥ तब मन सहजावस्था को प्राप्त हुआ और जन्म, मृत्यु तथा बुढ़ापे से मुक्त हो गया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माया की ओर से उलट कर मन को सहारा मिल गया है और वह गगन (शून्य) में स्थिर हुआ है। कुण्डलिनी ने छः चक्रों को बेध लिया और मन निर्भय प्रभु से मिल गया ॥ २ ॥ माया-मोह दूर हुआ है, शशि ने सूर्य को (शान्ति ने परिताप को) ग्रस लिया है। जब श्वास को कुम्भक क्रिया द्वारा भीतर खींचा, तो अनाहत ध्वनि गूँज उठी ॥ ३ ॥ गुरु रूपी वक्ता ने शब्द का ज्ञान दिया, श्रोता जीव ने मन को शून्य में स्थिर किया, मन में प्रभु का नाम जप-जपकर जीव पार उतर गया, कबीरजी कहते हैं कि यही (आध्यात्मिक जीवन का) सार है ॥ ४ ॥ १ ॥

चंदु सूरजु दुइ जोति सरूपु। जोती अंतरि ब्रहमु अनूपु ॥ १ ॥ करु रे गिआनी ब्रहम बीचारु। जोती अंतरि धरिआ पसारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हीरा देखि हीरे करउ आदेसु। कहै कबीर निरंजन अलेखु ॥ २ ॥ २ ॥

चन्द्र और सूर्य दोनों प्रकाश-रूप हैं, किन्तु दोनों में ज्योति परमात्मा की ही है ॥१॥ ऐ ज्ञानी, ब्रह्म का विचार करो, उसी की ज्योति में समूचा प्रसार है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हीरे की चमक देखकर मैं हीरे (परमात्मा) को प्रणाम करता हूँ (क्योंकि हीरे में उसी प्रभु की चमक है)। कबीरजी कहते हैं कि ब्रह्म मायातीत और अलेख है ॥ २ ॥ २ ॥

दुनीआ हुसीआर बेदार जागत मुसीअत हउ रे भाई। निगम हुसीआर पहरूआ देखत जमु ले जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥

नींबु भइओ आंबु आंबु भइओ नींबा केला पाका झारि। नालीएर फलु सेबरि पाका मूरख मुगध गवार ॥ १ ॥ हरि भइओ खांडु रेतु महि बिखरिओ हसतीं चुनिओ न जाई। कहि कमीर कुल जाति पांति तजि चीटी होइ चुनि खाई ॥ २ ॥ ३ ॥

दुनिया होशियार और जागरूक है, फिर भी जागते हुए भी वह ठगी जा रही है। वेद-शास्त्र रूपी होशियार पहरेदारों के देखते हुए भी यम हमें पकड़े लिये जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मूर्ख-गँवार लोगों के लिए आम के पेड़ पर नींबू और नींबू के पेड़ पर आम लगते हैं; केला झाड़ (पेड़) पर ही पकता है, सिंबल पर नारियल लगते हैं अर्थात् मूर्खों को क्या पता कि कहाँ क्या पैदा होता है ? ॥ १ ॥ परमातमा रूपी चीनी रेत में बिखरी पड़ी है जीव रूपी हाथी (अहंकार-युक्त) से यह चीनी चुगी नहीं जा सकती। कबीरजी कहते हैं कि कुल या जाति-पाँति का अहंकार छोड़कर जीव रूपी चींटी (विनम्रतायुक्त) ही उस मिठास को पा सकती है ॥ २ ॥ ३ ॥

बाणी नामदेउ जीउ की रामकली घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ आनीले कागदु काटीले गूडी आकास मधे भरमीअले। पंच जना सिउ बात बतऊआ चीतु सु डोरी राखीअले ॥१॥ मनु राम नामा बेधीअले। जैसे कनिक कला चितु मांडीअले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आनीले कुंभु भराईले ऊदक राजकुआरि पुरंदरीए। हसत बिनोद बीचार करती है चीतु सु गागरि राखीअले ॥ २ ॥ मंदरु एकु दुआर दस जा के गऊ चरावन छाडीअले। पांच कोस पर गऊ चरावत चीतु सु बछरा राखीअले ॥ ३ ॥ कहत नामदेउ सुनहु तिलोचन बालकु पालन पउढीअले। अंतरि बाहरि काज बिरूधी चीतु सु बारिक राखीअले ॥ ४ ॥ १ ॥

(पतंग और डोर का प्रतीक लेकर श्री नामदेव आध्यात्मिक भाव प्रकट करते हैं।) काग़ज़ लाकर और काटकर पतंग बनायी, जो आकाश के बीच उड़ती फिरती है। (उड़ानेवाला) यारों-दोस्तों से बातचीत करता रहता है, किन्तु उसका चित्त सदा डोर में बना रहता है ॥१॥ मन राम-नाम में बिद्ध है, जैसे सुनार स्वर्ण-कला में मन रमाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥

राजकुमारियाँ (नवयुवतियाँ) घड़ा लाकर पानी भरतीं और भरकर चलती हुई हँसतीं, विनोद करती हैं, किन्तु उनका चित्त सदा गागर में रहता है ।।२।। दस द्वारों वाले घर में से गाय को चरने के लिए भेजा जाता है। पाँच कोस की दूरी पर चरते हुए भी गाय का चित्त घर में बँधे अपने बछड़े में रहता है ।। ३ ।। नामदेवजी कहते हैं कि हे त्रिलोचन भक्तजी, स्त्री बालक को झूले में लिटा देती है, अन्दर-बाहर काम करती फिरती है, किन्तु उसका मन सदैव अपने बच्चे में रहता है। (भाव यह है कि जीव का मन भी प्रभु में उसी प्रकार दृढ़ रहना चाहिए, जैसे उपर्युक्त उदाहरणों में कार्यमग्न लोगों का ध्यान रहता है।) ।। ४ ।। १ ।।

बेद पुरान सासत्र आनंता गीत कबित न गावउगो। अखंड मंडल निरंकार महि अनहद बेनु बजावउगो ।। १ ।। बैरागी रामहि गावउगो। सबदि अतीत अनाहदि राता आकुल कै घरि जाउगो ।। १ ।। रहाउ ।। इड़ा पिंगुला अउरु सुखमना पउनै बंधि रहाउगो। चंदु सूरजु दुइ समकरि राखउ ब्रहम जोति मिलि जाउगो ।। २ ।। तीरथ देखि न जल महि पैसउ जीअ जंत न सतावउगो। अठसठि तीरथ गुरू दिखाए घट ही भीतरि न्हाउगो ।। ३ ।। पंच सहाई जन की सोभा भलो भलो न कहावउगो। नामा कहै चितु हरि सिउ राता सुंन समाधि समाउगो ।। ४ ।। २ ।।

वेद, पुराण, शास्त्र और गीता अनन्त हैं, किन्तु इनका यशोगान करने की अपेक्षा मैं अखंड मंडलों के स्वामी मायातीत ब्रह्म के अनाहत शब्द में ध्यान लगाऊँगा ।। १ ।। वीतरागी निर्लिप्त रहकर मैं प्रभु के गुण गाऊँगा। शब्द की त्रिगुणातीत अनाहत ध्वनि में लीन रहकर मैं कुलातीत ब्रह्म के निकट जाऊँगा ।। १ ।। रहाउ ।। इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना में प्राणों को बाँधने की क्रिया को त्यागकर मैं चन्द्र और सूर्य की ज्योति से ऊपर उठकर ब्रह्म की ज्योति में मिल जाऊँगा ।। २ ।। तीर्थों पर जाकर स्नान करने में मेरी कोई रुचि नहीं, इस प्रकार मैं जलचरों को भी नहीं सताऊँगा। मेरे गुरु ने शरीर के भीतर ही मुझे अड़सठ तीर्थ दिखा दिए हैं, मैं अन्तर्मुखता में ही स्नान करूँगा ।। ३ ।। खुशामदियों की वाहवाह से अप्रभावित रहूँगा, नामदेवजी कहते हैं कि मैं हरि में दृढ़-चित्त होकर अफुर (अविचल) समाधी में लीन रहूँगा ।। ४ ।। २ ।।

माइ न होती बापु न होता करमु न होती काइआ। हम नही होते तुम नही होते कवनु कहां ते आइआ ।।१।। राम कोइ

न किसही केरा । जैसे तरवर पंखि बसेरा ॥१॥ रहाउ ॥ चंदु न होता सूरु न होता पानी पवनु मिलाइआ । सासतु न होता बेदु न होता करमु कहां ते आइआ ॥ २ ॥ खेचर भूचर तुलसी माला गुर परसादी पाइआ । नामा प्रणवै परम ततु है सतिगुर होइ लखाइआ ॥ ३ ॥ ३ ॥

जब माँ, बाप, कर्म, काया नहीं थे, हम-तुम न थे, तब धीरे-धीरे कौन कहाँ से आ गया ?॥ १ ॥ कोई किसी का नहीं था, पेड़ पर रात्रि-बसेरे के पक्षियों की तरह सब रहते थे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चन्द्र-सूर्य नहीं थे, पानी और पवन के तत्त्वों को भी परमात्मा ने अपने ही भीतर आलम्बन दे रखा था । शास्त्र-वेद भी न थे; फिर यह कर्म कहाँ से बना ? ॥ २ ॥ प्राणायाम की खेचरी-भूचरी मुद्राएँ तथा तुलसी-माला मुझे गुरु-कृपा से ही मिली हैं । नामदेवजी कहते हैं कि परम-तत्त्व की प्राप्ति केवल सतिगुरु के द्वारा ही होती है ॥ ३ ॥ ३ ॥

॥ रामकली घरु २ ॥ बानारसी तपु करै उलटि तीरथ मरै अगनि दहै काइआ कलपु कीजै । असुमेध जगु कीजै सोना गरभ दानु दीजै राम नाम सरि तऊ न पूजै ॥ १ ॥ छोडि छोडि रे पाखंडी मन कपटु न कीजै । हरि का नामु नित नितहि लीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गंगा जउ गोदावरि जाईऐ कुंभि जउ केदार न्हाईऐ गोमती सहस गऊ दानु कीजै । कोटि जउ तीरथ करै तनु जउ हिवाले गारै राम नाम सरि तऊ न पूजै ॥ २ ॥ असुदान गजदान सिहजा नारी भूमिदान ऐसो दानु नित नितहि कीजै । आतम जउ निरमाइलु कीजै आप बराबरि कंचनु दीजै राम नाम सरि तऊ न पूजै ॥ ३ ॥ मनहि न कीजै रोसु जमहि न दीजै दोसु निरमल निरबाण पदु चीन्हि लीजै । जसरथ राइ नंदु राजा मेरा रामचंदु प्रणवै नामा ततु रसु अंम्रितु पीजै ॥ ४ ॥ ४ ॥

यदि जीव बनारस में तप करे, प्राणायाम करे, तीर्थस्थान पर मृत्यु का आह्वान करे, अपने को अग्नि में दहन करे या योग-साधनों द्वारा काया-कल्प करे; अश्वमेध यज्ञ करे, स्वर्ण का गुप्त-दान दे, तो भी वह राम-नाम की तुलना में नहीं पहुँचता ॥ १ ॥ ऐ पाखण्डी, यह सब कर्मकाण्ड और मन के कपटों को त्यागो और नित्य-नित्य हरि-नाम की आराधना करो ॥१॥ रहाउ ॥ यदि जीव गंगा-गोदावरी पर कुम्भ की तीर्थ-यात्रा करे,

केदारनाथ के दर्शन करे, गोमती में स्नान करे या हज़ार गायों का दान करे; करोड़ों तीर्थों का पुण्य-लाभ करे, शरीर हिमालय में गला दे, तो भी वह राम-नाम की ऊँचाइयों को नहीं पा सकता ॥ २ ॥ यदि जीव अश्व-दान, गज-दान, सुन्दर श्रृंगारयुत नारी-दान, भूमि-दान आदि अनेक दान नित्य करे; आत्म-बलिदान करे या कंचन का तुला-दान करे, तो भी वह राम-नाम की श्रेष्ठता को नहीं पा सकता ॥ ३ ॥ (अब ठीक आचरण का संकेत देते हैं।) यमदूतों को दोष न देते हुए, मन के रोष का निवारण करो, निर्मल निर्वाण-पद को पहचानो। दशरथ-पुत्र राम (भाव—परमात्मा) के चरणों में शरण लो, नामदेव कहते हैं, तभी तत्त्व (परम) का अमृत-रसपान कर सकोगे ॥ ४ ॥ ४ ॥

रामकली बाणी रविदास जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ पड़ीऐ गुनीऐ नामु सभु सुनीऐ अनभउ भाउ न दरसै। लोहा कंचनु हिरन होइ कैसे जउ पारसहि न परसै ॥ १ ॥ देव संसै गांठि न छूटै। काम क्रोध माइआ मद मतसर इन पंचहु मिलि लूटे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हम बड कबि कुलीन हम पंडित हम जोगी संनिआसी। गिआनी गुनी सूर हम दाते इह बुधि कबहि न नासी ॥ २ ॥ कहु रविदास सभै नही समझसि भूलि परे जैसे बउरे। मोहि अधारु नामु नाराइन जीवन प्रान धन मोरे ॥ ३ ॥ १ ॥

पढ़ने, मनन करने तथा प्रभु-नाम के श्रवण से भी ज्ञान-प्रेमस्वरूप परमात्मा के दर्शन नहीं होते। लोहा स्वर्ण क्योंकर हो सकता है, जब तक कि वह पारस का स्पर्श न करे ॥ १ ॥ हे प्रभु, संशय की गाँठ नहीं खुलती। काम, क्रोध, माया, मद, मत्सर, यह पाँचों मिलकर लूट रहे हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपने बड़े कवि होने, कुलीन होने, पंडित, योगी या संन्यासी होने, ज्ञानी, गुणी, शूरवीर या दाता होने की बुद्धि कभी नष्ट नहीं हुई ॥ २ ॥ रविदासजी कहते हैं कि उक्त अहंकार को सब नहीं पहचानते और बावले बने फिरते हैं। मुझे तो केवल नारायण का ही आश्रय है। वही मेरा जीवन, प्राण और धन है ॥ ३ ॥ १ ॥

रामकली बाणी बेणी जीउ की

१ ओं सतिगुर प्रसादि। इड़ा पिंगुला अउर सुखमना

तीनि बसहि इक ठाई । बेणी संगमु तह पिरागु मनु मजनु करे तिथाई ॥ १ ॥ संतहु तहा निरंजन रामु है । गुरगमि चीनै बिरला कोइ । तहां निरंजनु रमईआ होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ देवसथानै किआ नीसाणी । तह बाजे सबद अनाहद बाणी । तह चंदु न सूरजु पउणु न पाणी । साखी जागी गुरमुखि जाणी ॥ २ ॥ उपजै गिआनु दुरमति छीजै । अंम्रित रसि गगनंतरि भीजै । एसु कला जो जाणै भेउ । भेटै तासु परम गुरदेउ ॥ ३ ॥ दसम दुआरा अगम अपारा परम पुरख की घाटी । उपरि हाटु हाट परि आला आले भीतरि थाती ॥ ४ ॥ जागतु रहै सु कबहु न सोवै । तीन तिलोक समाधि पलोवै । बीज मंत्रु लै हिरदै रहै । मनूआ उलटि सुंन महि गहै ॥ ५ ॥ जागतु रहै न अलीआ भाखै । पाचउ इंद्री बसि करि राखै । गुर की साखी राखै चीति । मनु तनु अरपै क्रिसन परीति ॥६॥ कर पलव साखा बीचारे । अपना जनमु न जूऐ हारे । असुर नदी का बंधै मूलु । पछिम फेरि चड़ावै सूरु । अजरु जरै सु निझरु झरै । जगंनाथ सिउ गोसटि करै ॥ ७ ॥ चउमुख दीवा जोति दुआर । पलू अनत मूलु बिचकारि । सरब कला ले आपे रहै । मनु माणकु रतना महि गुहै ॥ ८ ॥ मसतकि पदमु दुआलै मणी । माहि निरंजनु त्रिभवण धणी । पंच सबद निरमाइल बाजे । ढुलके चवर संख घन गाजे । दलि मलि दैतहु गुरमुखि गिआनु । बेणी जाचै तेरा नामु ॥ ६ ॥

इड़ा, पिंगला तथा सुषुम्ना, जहाँ एक स्थल पर बसती हैं, वहीं त्रिवेणी संगम (प्रयाग) है, मन को उसी जगह स्नान करना है (अर्थात् अनुभवों के संगम-स्थल पर ही प्रभु का दर्शन सम्भव है) ॥ १ ॥ हे सन्तो, वहीं मायातीत ब्रह्म का निवास है। गुरु तक पहुँचकर कोई विरला ही इस तथ्य को पहचानता है कि वहीं निरंजन रमण करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस देवस्थान की, जहाँ परमात्मा का अनुभव होता है, क्या निशानी है? वहाँ अनाहत ध्वनि बजती है। (वहाँ इतनी पूर्णता है कि) बाहरी चन्द्र, सूर्य, पवन, पानी की कोई अपेक्षा नहीं रहती। कोई गुरुमुख जीव ही उसका प्रकट साक्षी होता है ॥२॥ ज्ञान के उपजने से दुर्मति नष्ट हो जाती है। जीव गगन से ऊपर (दशम द्वार के पार) नामामृत का रस-पान करके प्रसन्न होता है। इस कला का रहस्य जो

जानता है, वही गुरुदेव से मिलाप करता है ।। ३ ।। दशम द्वार (आँखों के बीच का अन्तिम चक्र। शेष नौ द्वार बाहरी हैं, दशम द्वार जीव को अन्तर्मुखता प्रदान करता है। नौ द्वार हैं— दो आँखें, दो कान, दो नासिकाएँ, एक मुँह और दो इन्द्रिय-रन्ध्र) अगम अपार है, वहीं परब्रह्म का स्थान है। सर्वोत्तम योनि मनुष्य है, उसमें विवेक-केन्द्र मस्तिष्क है और उसमें भी दशम द्वार में परम उपलब्धि की थाती मौजूद है ।। ४ ।। इस थाती को पा लेनेवाला सदा जाग्रत् रहता है, कभी नहीं सोता। उसकी समाधि में त्रिगुणमयी सृष्टि प्रभाव-हीन रहती है। हरि-नाम रूपी मन्त्र का बीज हृदय में जमता है और बहिर्मुखी मन उलटकर शून्य में स्थिर होता है ।। ५ ।। वह जीव सदा जागता है, कभी मिथ्या आचरण नहीं करता, पाँचों इन्द्रियों को निरोध करता है; गुरु के उपदेश को सदा चित्त में धारण करता है और प्रभु की प्रीति में तन-मन अर्पित कर देता है ।। ६ ।। हाथों को शरीर रूपी वृक्ष के पत्ते और शाखाएँ माने (अर्थात् शाखाओं द्वारा पेड़ के फैलाव की तरह हाथों द्वारा सेवा करता हुआ मानवता का फैलाव करे), अपने मनुष्य-जन्म को जुए में न हार दे; दुर्विचारों की नदी के प्रवाह को रोके, पश्चिम से फेरकर सूर्य चढ़ावे अर्थात् अज्ञानान्धकार दूर करके ज्ञान का प्रकाश करे तथा अजर अवस्था को जरे, तो उसे दशम द्वार से झरनेवाला अमृत-लाभ होता है और वह प्रभु से भेंट कर लेता है ।। ७ ।। उस (दशम) द्वार पर चौमुखा ज्ञान-दीप बलता है, मूल (परमात्मा) उसके केन्द्र में है, जबकि पल्लव (बाहरी सृष्टि) चतुर्दिक् फैले हैं। सर्वशक्तिमान् परमात्मा वहीं बसता है, मन का शुद्धिकरण करनेवाला योगी वहीं हरि-रत्न को पा सकता है ।। ८ ।। मस्तिष्क में कमल और आसपास रत्न हैं, तीनों लोकों का स्वामी परब्रह्म उसी कमल में निवास करता है। वहाँ निर्मल पाँच ध्वनियाँ ध्वनित होती हैं। वहाँ चँवर डुलते एवं शंखनाद होता है (आत्मिक आनन्द के प्रतीक हैं चँवर और शंख)। गुरु द्वारा ज्ञान प्राप्त करनेवाला जीव काम-क्रोधादि दैत्यों को दलित करता है। बेणीजी कहते हैं कि वे तो केवल परमात्मा के नाम की याचना करते हैं ।। ९ ।।

राग नट नाराइन महला ४

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

मेरे मन जपि अहिनिसि नामु हरे। कोटि कोटि दोख बहु कीने सभ परहरि पासि धरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि हरि नामु जपहि आराधहि सेवक भाइ खरे। किलबिख दोख गए सभ नीकरि जिउ पानी मैलु हरे ॥१॥ खिनु खिनु नरु नाराइनु गावहि मुखि बोलहि नर नरहरे। पंच दोख असाध नगर महि इकु खिनु पलु दूरि करे ॥ २ ॥ वडभागी हरि नामु धिआवहि हरि के भगत हरे। तिनकी संगति देहि प्रभ जाचउ मै मूड़ मुगध निसतरे ॥ ३ ॥ क्रिपा क्रिपा धारि जगजीवन रखि लेवहु सरनि परे। नानकु जनु तुमरी सरनाई हरि राखहु लाज हरे ॥ ४ ॥ १ ॥

हे मेरे मन, रात-दिन हरि का नाम जपो। तुम्हारे द्वारा किए करोड़ों दोषों-पापों के बंधन हरि-नाम के द्वारा दूर होंगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दास्य-भाव से हरि-हरि-नाम की आराधना करो, इससे पाप-दोष इस प्रकार धुल जाते हैं, जैसे पानी मैल काटता है ॥ १ ॥ जो जीव परमात्मा का गुणगान करते और मुँह से हरि-हरि बोलते हैं, उनके शरीर रूपी नगर में बसनेवाले काम-क्रोधादि पाँच असाध्य रोग क्षण भर में ही दूर होते हैं ॥ २ ॥ भाग्यशाली जीव ही हरि-नाम जपते हैं, हरि-भक्त ही आनन्द पाते हैं। हे प्रभु, मैं याचना करता हूँ, मुझ मूर्ख-गँवार को ऐसे हरि-भक्तों की संगति प्रदान करो, जिससे मेरा उद्धार हो ॥ ३ ॥ हे जगजीवन, कृपालु, कृपा करके मुझे शरण में लो; गुरु नानक कहते हैं कि दास तुम्हारी शरण में है, उसकी लाज रख लो ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ नट महला ४ ॥ राम जपि जन रामै नामि रले। राम नामु जपिओ गुर बचनी हरि धारी हरि क्रिपले ॥१॥ रहाउ ॥ हरि हरि अगम अगोचरु सुआमी जन जपि मिलि सलल सलले।

हरि के संत मिलि राम रसु पाइआ हम जन कै बलि बलले ।।१।। पुरखोतमु हरि नामु जनि गाइओ सभि दालद दुख दलले । विचि देही दोख असाध पंच धातू हरि कीए खिन परले ।। २ ।। हरि के संत मनि प्रीति लगाई जिउ देखै ससि कमले । उनवै घनु घन घनिहरु गरजै मनि बिगसै मोर मुरले ।। ३ ।। हमरै सुआमी लोच हम लाई हम जीवह देखि हरि मिले । जन नानक हरि अमल हरि लाए हरि मेलहु अनद भले ।। ४ ।। २ ।।

ऐ जीवो, राम का नाम जपो, उसी के नाम में लीन रहो। गुरु के उपदेश द्वारा तथा हरि-कृपा से राम-नाम की आराधना करो ।। १ ।। रहाउ ।। प्रभु अगम, अगोचर है; ऐ जीव, उसी स्वामी के जाप द्वारा उसमें ऐसा लीन हो जाओ, जैसे जल में जल मिल जाता है। हरि के सन्तों से भेंट होने से अध्यात्म-रस मिलता है, अतः सेवक (मैं) उन पर बलिहार जाता है ।। १ ।। जिन जीवों ने पुरुषोत्तम प्रभु का नाम गाया, उनका सब दुःख-दारिद्र्य नष्ट हो गया। शरीर के काम-क्रोधादि पाँच असाध्य विषयों को हरि ने क्षण भर में ही नष्ट कर दिया ।। २ ।। जैसे कुमुदिनी चन्द्र को देखकर विकसित होती है, वैसे ही सन्तजन को देख प्रफुल्लित होते हैं; घटाएँ झुकती हैं (प्रभु-प्यार उमड़ता है), बादल ख़ूब गरजते हैं (अनाहत नाद होता है) और मनःमयूर चहकने लगता है (मन आध्यात्मिक आनन्द में लीन हो जाता है) ।। ३ ।। हे स्वामी, हमें तुम्हारी ही आवश्यकता है, हम तुम्हारे अर्थात् हरि के दर्शन करके ही जीते हैं; गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम का नशा पीकर हरि का मिलन-आनन्द प्राप्त होता है ।। ४ ।। २ ।।

।। नट महला ४ ।। मेरे मन जपि हरि हरि नामु सखे । गुर परसादी हरि नामु धिआइओ हम सतिगुर चरन पखे ।। १ ।। रहाउ ।। ऊतम जगंनाथ जगदीसुर हम पापी सरनि रखे । तुम वडपुरख दीन दुख भंजन हरि दीओ नामु मुखे ।।१।। हरि गुन ऊच नीच हम गाए गुर सतिगुर संगि सखे । जिउ चंदन संगि बसै निंमु बिरखा गुन चंदन के बसखे ।। २ ।। हमरे अवगन बिखिआ बिखै के बहु बार बार निमखे । अवगनिआरे पाथर भारे हरि तारे संगि जनखे ।। ३ ।। जिन कउ तुम हरि राखहु सुआमी सभ तिन के पाप क्रिखे । जन नानक के दइआल प्रभ सुआमी तुम दुसट तारे हरणखे ।। ४ ।। ३ ।।

हे मेरे मन, हरि-नाम ही सच्चा मित्र है, उसकी आराधना करो। हरि-नाम की आराधना गुरु की कृपा से होती है, इसलिए हम गुरु के चरण धोते (सेवा-लीन) हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जगन्नाथ, जगदीश्वर सर्वोत्तम है, जो हम सरीखे पापियों को शरण देता है। हे हरि, तुम परमपुरुष हो, दीन-दुखियों के दुःख-भंजक हो, (कृपा करके) मुझे नाम जपने का (सामर्थ्य) दो ॥ १ ॥ गुरु मित्र से मिलकर हम सरीखे नीच जीवों ने भी उच्चतर हरि का गुणगान किया है; (हमारी स्थिति ऐसी हो गयी है) जैसे चन्दन के संग नीम का वृक्ष भी चन्दन के गुण ग्रहण कर लेता है ॥ २ ॥ हमारे अवगुण माया-विषयक थे, जो अनेकधा हमने पुनरावर्तित किए थे; किन्तु भक्तजनों के साथ हम भारी पत्थर के समान अवगुणी भी तर गये ॥ ३ ॥ हे स्वामी, तुम जिनके रक्षक हो, उनके सब पाप दूर कर देते हो। गुरु नानक कहते हैं कि तुम अपने सेवकों के ऐसे प्रभु हो, जिसने हिरण्यकशिपु-सरीखे दुष्टों का भी उद्धार कर दिया ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ नट महला ४ ॥ मेरे मन जपि हरि हरि राम रंगे। हरि हरि क्रिपा करी जगदीसुरि हरि धिआइओ जन पगि लगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जनम जनम के भूल चूक हम अब आए प्रभ सरनगे। तुम सरणागति प्रतिपालक सुआमी हम राखहु वड पापगे ॥ १ ॥ तुमरी संगति हरि को को न उधरिओ प्रभ कीए पतित पवगे। गुन गावत छीपा दुसटारिओ प्रभि राखी पैज जनगे ॥ २ ॥ जो तुमरे गुन गावहि सुआमी हउ बलि बलि बलि तिनगे। भवन भवन पवित्र सभि कीए जह धूरि परी जन पगे ॥ ३ ॥ तुमरे गुन प्रभ कहि न सकहि हम तुम वड वड पुरख वडगे। जन नानक कउ दइआ प्रभ धारहु हम सेवह तुम जन पगे ॥ ४ ॥ ४ ॥

हे मन, राम के प्यार में हरि-हरि-नाम जपो। परमात्मा ने तुम पर कृपा की है, तुम उसके चरणों की शरण लेकर हरि-नाम की आराधना करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जन्म-जन्म से हम भूले पड़े थे, अब प्रभु की शरण में आये हैं। हे स्वामी, तुम प्रतिपालक और शरणागत पर कृपा करनेवाले हो, हम-से पापियों की भी रक्षा करो ॥ १ ॥ हे हरि, तुम्हारी संगति में कौन-कौन पार नहीं उतर गया? तुम तो पतितों को पावन कर देनेवाले हो। गुण गानेवाले दुष्ट छीपा (भक्त नामदेव) का तुमने उद्धार किया, हे प्रभु, मुझ दास की भी लाज रख लो ॥२॥ हे प्रभु, जो तुम्हारे गुण गाते हैं, मैं उनके नित्य बलिहार जाता हूँ। वे घर-स्थान

सब पावन हो गये हैं, जहाँ-जहाँ तुम्हारे दासों की चरण-धूल पड़ी है ॥ ३ ॥ हे परमात्मा, तुम इतने बड़े परमपुरुष हो कि हम तुम्हारे गुणों का सही कथन नहीं कर सकते। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु, हम पर ऐसी दया करो कि हम तुम्हारे सेवकों की चरण-सेवा कर सकें ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ नट महला ४ ॥ मेरे मन जपि हरि हरि नामु मने। जगंनाथि किरपा प्रभि धारी मति गुरमति नाम बने ॥१॥रहाउ॥ हरि जन हरि जसु हरि हरि गाइओ उपदेसि गुरू गुर सुने। किलबिख पाप नाम हरि काटे जिव खेत क्रिसानि लुने ॥ १ ॥ तुमरी उपमा तुमही प्रभ जानहु हम कहि न सकहि हरि गुने। जैसे तुम तैसे प्रभ तुमही गुन जानहु प्रभ अपुने ॥ २ ॥ माइआ फास बंध बहु बंधे हरि जपिओ खुल खुलने। जिउ जल कुंचरु तदूऐ बांधिओ हरि चेतिओ मोख मुखने ॥ ३ ॥ सुआमी पारब्रहम परमेसरु तुम खोजहु जुग जुगने। तुमरी थाह पाई नही पावै जन नानक के प्रभ वडने ॥ ४ ॥ ५ ॥

हे मन, हरि-नाम में विश्वास बनाकर उसकी आराधना करो। परमात्मा की कृपा से ही हमारी मति गुरु-उपदेश द्वारा हरिनामोन्मुख हुई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के उपदेशों को सुनकर ही हरि के सेवकों ने हरि का यशोगान किया है; हरि के नाम से उनके पाप यों कट गये हैं, जैसे कृषक खेती काट लेता है ॥ १ ॥ हे प्रभु, तुम्हारी उपमा तुम स्वयं ही हो, हम हरि के गुण-कथन में असमर्थ हैं। तुम जैसे हो, प्रभु, वैसे तुम ही हो, तुम्हीं अपने गुण सही तौर पर जानते हो ॥ २ ॥ जीव माया के अनेक बन्धनों में फँसा है, हरि-नाम की आराधना से ही उसकी मुक्ति होती है—जैसे हाथी को जल में तेंदुए ने ग्रस लिया था, मुख से हरि-नाम-जाप से ही वह बच पाया था (प्रचलित कथन मगरमच्छ द्वारा हाथी का पाँव ग्रसने का है) ॥ ३ ॥ हे परब्रह्म, स्वामी, परमेश्वर, युग-युग से हम तुम्हें खोज रहे हैं। (गुरु नानक कहते हैं कि) तुम्हारे बड़प्पन का कोई अन्त नहीं ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ नट महला ४ ॥ मेरे मन कलि कीरति हरि प्रवणे। हरि हरि दइआलि दइआ प्रभ धारी लगि सतिगुर हरि जपणे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि तुम वड अगम अगोचर सुआमी सभि धिआवहि हरि रुड़णे। जिन कउ तुम्हरे वड कटाख है

ते गुरमुखि हरि सिमरणे ॥ १ ॥ इह परपंचु कीआ प्रभ सुआमी सभु जग जीवनु जुगणे। जिउ सललै सलल उठहि बहु लहरी मिलि सललै सलल समणे ॥ २ ॥ जो प्रभ कीआ सु तुमही जानहु हम नह जाणी हरि गहणे। हम बारिक कउ रिद उसतति धारहु हम करह प्रभू सिमरणे ॥३॥ तुम जलनिधि हरि मानसरोवर जो सेवै सभ फलणे। जनु नानकु हरि हरि हरि हरि बांछै हरि देवहु करि क्रिपणे ॥ ४ ॥ ६ ॥

हे मन, कलियुग में प्रभु का कीर्ति-गान ही स्वीकृत है; हरि ने दया धारण की है, तुम भी गुरु के आश्रय हरि-नाम का जाप करने लगो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि महान् अगम अगोचर है, उसी सुन्दर प्रभु का ध्यान करो। जिन पर तुम्हारी कृपा-दृष्टि है, वे गुरुमुख ही हरि का स्मरण करते हैं ॥ १ ॥ प्रभु ने सृष्टि का यह समूचा प्रपंच रचा है, वह जगत का जीवन है और सब के साथ भीतर से ऐसे जुड़ा हुआ है, जैसे जल में उठनेवाली अनेक तरंगें अन्ततः जल में ही समाई रहती हैं ॥२॥ प्रभु ने हमारे लिए जो कुछ भी किया है, वह स्वयं ही जानता है, हम उसकी गहराई को नहीं पा सकते। हे प्रभु, हम बालक हैं, तुम्हारा स्मरण करते हैं, हमारे हृदय में अपनी स्तुति को जगाओ ॥ ३ ॥ हे परमात्मा, तुम सागर हो, तुम मानसरोवर हो; जो तुम्हारी सेवा में आता है, वह कृतफल हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि हे हरि, मेरी माँग 'हरि' अर्थात् तुम्हारी ही है, कृपापूर्वक मुझे अपना-आप प्रदान करो ॥ ४ ॥ ६ ॥

नट नाराइन महला ४ पड़ताल

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मेरे मन सेव सफल हरि घाल। ले गुर पग रेन रवाल। सभि दालिद भंजि दुख दाल। हरि हो हो हो नदरि निहाल ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि का ग्रिहु हरि आपि सवारिओ हरि रंग रंग महल बेअंत लाल लाल हरि लाल। हरि आपनी क्रिपा करी आपि ग्रिहि आइओ हम हरि की गुर कीई है बसीठी हम हरि देखे भई निहाल निहाल निहाल निहाल ॥ १ ॥ हरि आवते की खबरि गुरि पाई मनि तनि आनदो आनंद भए हरि आवते सुने मेरे लाल हरि लाल। जनु नानकु हरि हरि मिले भए गलतान हाल निहाल निहाल ॥ २ ॥ १ ॥ ७ ॥

हे मन, हरि की सेवा करके अपना कर्म सफल कर लो, गुरु के चरणों की धूल ग्रहण करो; तुम्हारे सब दुःख-दारिद्र्य नष्ट हो जायँगे, परमात्मा की कृपा-दृष्टि तुम पर होगी ।। १ ।। रहाउ ।। यह शरीर परमात्मा का घर है, परमात्मा ने स्वयं बनाया है, जिसमें अनेक हीरे-जवाहर छिपे पड़े हैं। हरि ने कृपापूर्वक इस घर में रहना स्वीकार किया है, जिससे हम हरि का गुणगान करते हैं । गुरु की मध्यस्थता से ही हमने हरि के दर्शन किए हैं, जिससे हम परमनिहाल हुए हैं ।। १ ।। गुरु से हमने हरि के आने का समाचार पाया है, और प्यारे की उपलब्धि का परम आनन्द मिला है; गुरु नानक कहते हैं कि हरि के मिलाप से हम मग्न हुए हैं, जिससे हमें परम सुख मिला है ।। २ ।। १ ।। ७ ।।

।। नट महला ४ ।। मन मिलु संत संगति सुभवंती । सुनि अकथ कथा सुखवंती । सभ किलबिख पाप लहंती । हरि हो हो हो लिखतु लिखंती ।। १ ।। रहाउ ।। हरि कीरति कलजुग विचि ऊतम मति गुरमति कथा भजंती । जिनि जनि सुणी मनी है जिनि जनि तिसु जन कै हउ कुरबानंती ।। १ ।। हरि अकथ कथा का जिनि रसु चाखिआ तिसु जन सभ भूख लहंती । नानक जन हरि कथा सुणि त्रिपते जपि हरि हरि हरि होवंती ।। २ ।। २ ।। ८ ।।

ऐ मन, सन्तों की कल्याणमयी संगति में मिलो, उनसे परमात्मा की अनिर्वचनीय गाथा सुनो, तभी तुम्हारे सब पाप दूर होंगे । परमात्मा शुभ कर्मों और भाग्यालेख द्वारा प्राप्त हो जाता है ।। १ ।। रहाउ ।। कलियुग में हरि का यशोगान तथा गुरु-उपदेशों के अनुसार आचरण से ही उत्तम विवेक उपजता है । जिन जीवों ने उसे (प्रभु-कीर्ति को) सुना और मनन किया है, उन पर मैं क़ुर्बान हूँ ।।१।। जिस जीव ने हरि की अकथ-कथा का रस चखा है, उनकी भूख मिट गयी है । गुरु नानक कहते हैं कि भक्तजन हरि-हरि-नाम जपते एवं हरि-कथा सुनते हुए परमतृप्ति को प्राप्त होते हैं ।। २ ।। २ ।। ८ ।।

।। नट महला ४ ।। कोई आनि सुनावै हरि की हरि गाल । तिस कउ हउ बलि बलि बाल । सो हरि जनु है भल भाल । हरि हो हो हो मेलि निहाल ।। १ ।। रहाउ ।। हरि का मारगु गुर संति बताइओ गुरि चाल दिखाई हरि चाल । अंतरि कपटु चुकावहु मेरे गुर सिखहु निहकपट कमावहु हरि की हरि घाल निहाल निहाल निहाल ।। १ ।। ते गुर के सिख मेरे हरि प्रभि

भाए जिना हरि प्रभु जानिओ मेरा नालि। जन नानक कउ मति हरि प्रभि दीनी हरि देखि निकटि हदूरि निहाल निहाल निहाल निहाल ॥ २ ॥ ३ ॥ ६ ॥

कोई आकर मुझे हरि-कथा सुनाए, तो मैं उस पर नित्य क़ुर्बान जाऊँ। वह प्रभु परमोत्तम है, उसे मिलकर जीव निहाल हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोई परमसन्त गुरु ही प्रभु का मार्ग बताता और हरि-मिलन के पथ पर चलना सिखाता है। ऐ जीवो, मन के भीतर से कपट दूर करो, निष्कपट भाव से हरि-प्राप्ति के लिए परिश्रम करो, इसी में आनन्द-प्राप्ति होगी ॥ १ ॥ वे गुरु-शिष्य ही मेरे परमात्मा को स्वीकृत हैं, जिन्होंने हरि को नित्य अंग-संग माना है। गुरु नानक कहते हैं कि जिन्हें प्रभु-प्रेम की सूझ मिलती है, वह हरि को निकट और प्रत्यक्ष देखकर निहाल हो उठते हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ ९ ॥

रागु नट नाराइन महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ राम हउ किआ जाना किआ भावै। मनि पिआस बहुतु दरसावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सोई गिआनी सोई जनु तेरा जिसु ऊपरि रुच आवै। क्रिपा करहु जिसु पुरख बिधाते सो सदा तुधु धिआवै ॥ १ ॥ कवन जोग कवन गिआन धिआना कवन गुनी रीझावै। सोई जनु सोई निज भगता जिसु ऊपरि रंगु लावै ॥ २ ॥ साई मति साई बुधि सिआनप जितु निमख न प्रभु बिसरावै। संत संगि लगि एहु सुखु पाइओ हरि गुन सद ही गावै ॥ ३ ॥ देखिओ अचरजु महा मंगल रूप किछु आन नही दिसटावै। कहु नानक मोरचा गुरि लाहिओ तह गरभ जोनि कह आवै ॥ ४ ॥ १ ॥

हे प्रभु, मुझे क्या पता कि तुम्हें क्या भाता है, मेरे मन में तो तुम्हारे दर्शन की उत्कट प्यास है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस पर तुम्हारी दया-दृष्टि होती है, वही जीव ज्ञान पाकर तुम्हारा बन जाता है। हे विधाता, जिस पर तुम्हारी कृपा होती है, वह सदैव तुम्हारी आराधना करता है ॥ १ ॥ (मैं नहीं जानता कि तुम) किस योग, ध्यान, ज्ञान या गुण पर रीझते हो! जिस पर तुम्हारा प्यार होता है, वही सेवक तुम्हारा प्रिय भक्त बन जाता है ॥ २ ॥ वही बुद्धिमत्ता है, वही सूझयुक्त योग्यता है, जिससे परिचालित

जीव क्षण भर के लिए भी तुम्हें विस्मृत नहीं करता। सन्तों की संगति में नित्य प्रभु-गुण-गान का सुख प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ (ऐसा होने पर) आश्चर्यमय, महा कल्याणप्रद परमात्मा के दर्शन होते हैं, (उसके अतिरिक्त) अन्य कुछ नहीं दीख पड़ता। गुरु नानक कहते हैं कि जब स्वयं सतिगुरु जीव की मलिनता दूर करता है (ज़ंग उतार देता है), तो वह पुनः योनि-चक्र में क्योंकर आ सकता है ॥ ४ ॥ १ ॥

नट नाराइन महला ५ दुपदे

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ उलाहनो मै काहू न दीओ। मन मीठ तुहारो कीओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आगिआ मानि जानि सुखु पाइआ सुनि सुनि नामु तुहारो जीओ। ईहां ऊहा हरि तुमही तुमही इहु गुर ते मंत्रु द्रिड़ीओ ॥१॥ जब ते जानि पाई एह बाता तब कुसल खेम सभ थीओ। साध संगि नानक परगासिओ आन नाही रे बीओ ॥ २ ॥ १ ॥ २ ॥

मैं किसी को उलाहना नहीं देता, (क्योंकि) मेरे मन को तुम्हारा किया मीठा लगता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्हारे आदेशानुसार आचरण करने से सुख मिलता है, मैं तो तुम्हारा ही नाम सुन-सुनकर जीवित हूँ। हे प्रभु, यहाँ-वहाँ सर्वत्र तुम्हीं हो, यह तथ्य मुझे गुरु ने सुझाया है ॥ १ ॥ जब से मैंने यह बात जान ली है, तब से सब कुशल-क्षेम है। गुरु नानक कहते हैं कि साधु-सगति (गुरु की संगति) में ही सूझ का यह आलोक उपजता है, दूसरा अन्य कोई नहीं ॥ २ ॥ १ ॥ २ ॥

॥ नट महला ५ ॥ जा कउ भई तुमारी धीर। जम की त्रास मिटी सुखु पाइआ निकसी हउमै पीर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तपति बुझानी अंम्रित बानी त्रिपते जिउ बारिक खीर। मात पिता साजन संत मेरे संत सहाई बीर ॥ १ ॥ खुले भ्रम भीति मिले गोपाला हीरै बेधे हीर। बिसम भए नानक जसु गावत ठाकुर गुनी गहीर ॥ २ ॥ २ ॥ ३ ॥

जिसे मात्र तुम्हारा ही सहारा है, उसके लिए यम का भय दूर हो गया; अहम् का परिताप दूर होकर उसे पूर्ण सुख प्राप्त हुआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अमृतमयी गुरु-वाणी से उसका संताप दूर हुआ और वह इस प्रकार तृप्त हो गया, जैसे बालक दुग्धपान से तृप्त हो जाता है। सन्तजन ही मेरे माता,

पिता, साजन, भाई और सहायी हैं ॥ १ ॥ भ्रम के बन्द किवाड़ खुल गये और हीरे-सरीखा कठोर मेरा हृदय प्रभु रूपी हीरे द्वारा ही बिंध गया (हीरा ही हीरे को बेधता है) । गुरु नानक कहते हैं कि गहन गुणवान् प्रभु स्वामी के गुणगान से अति आनन्द प्राप्त हुआ है ॥ २ ॥ २ ॥ ३ ॥

॥ नट महला ५ ॥ अपना जनु आपहि आपि उधारिओ । आठ पहर जन कै संगि बसिओ मन ते नाहि बिसारिओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बरनु चिहनु नाही किछु पेखिओ दास का कुलु न बिचारिओ । करि किरपा नामु हरि दीओ सहजि सुभाइ सवारिओ ॥ १ ॥ महा बिखमु अगनि का सागरु तिस ते पारि उतारिओ । पेखि पेखि नानक बिगसानो पुनह पुनह बलिहारिओ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

अपने सेवकों का परमात्मा खुद ही उद्धार करता है । आठों प्रहर वह भक्तों के अंग-संग रहता है और कभी उन्हें विस्मृत नहीं करता ॥ १॥रहाउ॥ परमात्मा ने मेरा रंग-रूप, जाति-वर्ण कुछ नहीं जाँचा, मेरे वंश का भी कोई विचार नहीं किया; मात्र कृपा करके ही मुझे नाम दिया और सहज में ही अपना लिया ॥ १ ॥ यह संसार विषम तृष्णाग्नि का सागर है, इससे (प्रभु ने मुझे) पार उतारा । गुरु नानक कहते हैं कि उसी प्रभु को देख-देखकर मैं प्रफुल्लित हूँ और बार-बार उस पर बलिहार जाता हूँ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

॥ नट महला ५ ॥ हरि हरि मन महि नामु कहिओ । कोटि अप्राध मिटहि खिन भीतरि ता का दुखु न रहिओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खोजत खोजत भइओ बैरागी साधू संगि लहिओ । सगल तिआगि एक लिव लागी हरि हरि चरन गहिओ ॥ १ ॥ कहत मुकत सुनते निसतारे जो जो सरनि पइओ । सिमरि सिमरि सुआमी प्रभु अपुना कहु नानक अनद भइओ ॥२॥४॥५॥

मन में हरि का नाम जपने से क्षण भर में ही करोड़ों अपराध दूर होते हैं और जीव पापों के दुःख से मुक्त हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (मैं) प्रभु को खोजते-खोजते बौरा गया था, अन्ततः वह सन्तों की संगति में ही प्राप्त हुआ है । (मैंने) सबको छोड़कर एक प्रभु में ही वृत्ति लगाई है और केवल परमात्मा के चरणों की ही शरण ली है ॥१॥ जो-जो जीव शरण में आए, जिन्होंने तुम्हारा नाम जपा, वे मुक्त हो गये, (नाम) सुननेवालों का भी उद्धार हुआ । गुरु नानक कहते हैं कि अपने स्वामी परमात्मा का नाम स्मरण करने से ही परम आनन्द मिला है ॥२॥४॥५॥

॥ नट महला ५ ॥ चरन कमल संगि लागी डोरी । सुख सागर करि परम गति मोरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंचला गहाइओ जन अपुने कउ मनु बीधो प्रेम की खोरी । जसु गावत भगति रसु उपजिओ माइआ की जाली तोरी ॥ १ ॥ पूरन पूरि रहे किरपा निधि आन न पेखउ होरी । नानक मेलि लीओ दासु अपुना प्रीति न कबहू थोरी ॥ २ ॥ ५ ॥ ६ ॥

हे सुखसागर प्रभु, तुम्हारे चरणों में मेरी रति है, मुझे परमगति प्रदान करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुमने अपने सेवक को दामन थमाया है, उसका (सेवक का) मन तुम्हारे प्यार की चाहत में बँधा है। तुम्हारा यश गाते हुए भक्ति की सरसता उपजी है, माया के बंधन टूट गये हैं ॥ १ ॥ कृपानिधि प्रभु पूर्णता से सर्वत्र व्याप्त है, उसके अतिरिक्त मैं अन्य किसी को नहीं देखता। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु स्वयं ही अपने दास को अपने संग मिलाते हैं, यह प्रीति कभी कम नहीं होती ॥ २ ॥ ५ ॥ ६ ॥

॥ नट महला ५ ॥ मेरे मन जपु जपि हरि नाराइण । कबहू न बिसरहु मन मेरे ते आठ पहर गुन गाइण ॥१॥ रहाउ ॥ साधू धूरि करउ नित मजनु सभ किलबिख पाप गवाइण । पूरन पूरि रहे किरपानिधि घटि घटि दिसटि समाइणु ॥ १ ॥ जाप ताप कोटि लख पूजा हरि सिमरण तुलि न लाइण । दुइ कर जोड़ि नानकु दानु मांगै तेरे दासनि दास दसाइणु ॥ २ ॥ ६ ॥ ७ ॥

हे मेरे मन, तुम हरि-प्रभु का नाम जपो। वह परमात्मा कभी मेरे मन से विस्मृत नहीं होता, आठों प्रहर मैं उसका गुण गाता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं साधुओं (सन्तों) की चरण-धूल में नित्य स्नान करके सब पापों को धो डालता हूँ। कृपानिधि प्रभु पूर्णता से सर्वत्र व्याप्त है, वह सब में समाया हुआ दृष्टिगोचर होता है ॥ १ ॥ करोड़ों जप-तप और लाखों प्रकार की पूजा-आराधना भी हरि-सिमरन की तुलना में नहीं ठहरते। गुरु नानक कहते हैं कि वे दोनों हाथ जोड़कर उसके दासों के दासों का दास होने की कामना करते हैं ॥ २ ॥ ६ ॥ ७ ॥

॥ नट महला ५ ॥ मेरै सरबसु नामु निधानु । करि किरपा साधू संगि मिलिओ सतिगुरि दीनो दानु ॥१॥रहाउ॥ सुखदाता दुख भंजनहारा गाउ कीरतनु पूरन गिआनु । कामु क्रोधु लोभु खंड खंड कीन्हे बिनसिओ मूड़ अभिमानु ॥ १ ॥

किआ गुण तेरे आखि वखाणा प्रभ अंतरजामी जानु। चरन कमल सरनि सुखसागर नानकु सद कुरबानु ॥ २ ॥ ७ ॥ ८ ॥

हरि-नाम की निधि ही मेरा सब कुछ है। सतिगुरु ने कृपापूर्वक मुझे सन्तों की संगति का दान दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ विवेकपूर्ण भाव से सुखदाता तथा दुःखों को दूर करनेवाले प्रभु का कीर्तन-गान करो; इससे काम, क्रोध, लोभ आदि खण्डित होते एवं मूढ़तापूर्ण अभिमान दूर होता है ॥ १ ॥ हे अन्तर्यामी, सर्वज्ञाता प्रभु, तुम्हारे क्या गुण कहूँ ? गुरु नानक कहते हैं कि तुम्हारे चरण शरणागत के लिए सुख का सागर हैं, वे नित्य उन पर क़ुर्बान हैं ॥ २ ॥ ७ ॥ ८ ॥

॥ नट महला ५ ॥ हउ वारि वारि जाउ गुर गोपाल ॥१॥ रहाउ ॥ मोहि निरगुन तुम पूरन दाते दीनानाथ दइआल ॥१॥ ऊठत बैठत सोवत जागत जीअ प्रान धन माल ॥ २ ॥ दरसन पिआस बहुतु मनि मेरै नानक दरस निहाल ॥ ३ ॥ ८ ॥ ९ ॥

मैं अपने गुरु द्वारा बताए प्रभु पर नित्य क़ुर्बान हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं गुणहीन हूँ, तुम दया के सिंधु और सर्वप्रदाता हो ॥ १ ॥ उठते-बैठते, सोते-जागते, तुम्हीं मेरे प्राण-धन हो ॥२॥ (गुरु नानक कहते हैं कि) मेरे मन में तुम्हारे दर्शनों की उत्कट इच्छा है, हे कृपालु, दर्शन देकर निहाल करो ॥ ३ ॥ ८ ॥ ९ ॥

नट पड़ताल महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ कोऊ है मेरो साजनु मीतु। हरि नामु सुनावै नीत। बिनसै दुखु बिपरीति। सभु अरपउ मनु तनु चीतु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोई विरला आपन कीत। संगि चरन कमल मनु सीत। करि किरपा हरि जसु दीत ॥१॥ हरि भजि जनमु पदारथु जीत। कोटि पतित होहि पुनीत। नानक दास बलि बलि कीत ॥ २ ॥ १ ॥ १० ॥

कोई मेरा शुभाशंसी मित्र है, जो नित्य मुझे हरि-नाम सुनावे ? इससे उलटे कर्मों के कारण होनेवाले मेरे दुःख नष्ट होंगे। मैं (हरि-नाम सुनानेवाले पर) अपना तन, मन, चित्त, सब कुछ अर्पित करता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोई विरला जीव ही ऐसा होता है, जो प्रभु के चरण-कमल से अपने मन को बाँधे रखता है। प्रभु की कृपा से उसे ही यश दिया जाता

है ॥ १ ॥ हरि-भजन से मनुष्य-जन्म सफल किया है, कोटि-कोटि पतित जीव उससे (प्रभु-कृपा से) पवित्र हो जाते हैं, गुरु नानक उस पर सदा बलिहार जाते हैं ॥ २ ॥ १ ॥ १० ॥

नट असटपदीआ महला ४

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ राम मेरे मनि तनि नामु अधारे। खिनु पलु रहि न सकउ बिनु सेवा मै गुरमति नामु सम्हारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि हरि हरि हरि हरि मनि धिआवहु मै हरि हरि नामु पिआरे। दीन दइआल भए प्रभ ठाकुर गुर कै सबदि सवारे ॥ १ ॥ मधसूदन जगजीवन माधो मेरे ठाकुर अगम अपारे। इक बिनउ बेनती करउ गुर आगै मै साधू चरन पखारे ॥ २ ॥ सहस नेत्र नेत्र है प्रभ कउ प्रभु एको पुरखु निरारे। सहस मूरति एको प्रभु ठाकुरु प्रभु एको गुरमति तारे ॥ ३ ॥ गुरमति नामु दमोदरु पाइआ हरि हरि नामु उरि धारे। हरि हरि कथा बनी अति मीठी जिउ गूंगा गटक सम्हारे ॥ ४ ॥ रसना साद चखै भाइ दूजै अति फीके लोभ बिकारे। जो गुरमुखि साद चखहि राम नामा सभ अनरस साद बिसारे ॥ ५ ॥ गुरमति राम नामु धनु पाइआ सुणि कहतिआ पाप निवारे। धरमराइ जमु नेड़ि न आवै मेरे ठाकुर के जन पिआरे ॥ ६ ॥ सास सास सास है जेते मै गुरमति नामु सम्हारे। सासु सासु जाइ नामै बिनु सो बिरथा सासु बिकारे ॥ ७ ॥ क्रिपा क्रिपा करि दीन प्रभ सरनी मोकउ हरि जन मेलि पिआरे। नानक दासनि दासु कहतु है हम दासन के पनिहारे ॥ ८ ॥ १ ॥

हे राम, तुम्हीं मेरे मन और तन का आधार हो। (तुम्हारे बिना) मैं क्षण भर भी नहीं रह सकता, गुरु के उपदेशानुसार नित्य तुम्हारा नाम जपता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि-हरि-नाम मैं नित्य मन में ध्यान करता हूँ, हरि का नाम मुझे अत्यन्त प्रिय है। मेरे स्वामी ने कृपापूर्वक मुझे गुरु के शब्दों द्वारा सँवार दिया है ॥ १ ॥ हे वाहिगुरु, तुम जगत के जीवन और मेरे अगम, अपार स्वामी हो। एक प्रार्थना मैं करता हूँ (मुझे यह दान दें) कि मैं सन्तों के चरण धो सकूँ अर्थात् चरणों की सेवा कर सकूँ ॥ २ ॥

सहस्रों नेत्र (लोगों के) उस प्रभु के ही नेत्र हैं, फिर भी वह परमपुरुष सबसे निराला है। सहस्रों रूपाकार उसी प्रभु के हैं, जो गुरुमति के द्वारा सबका उद्धार करता है ॥ ३ ॥ गुरु के उपदेश से ही परमात्मा मिला है और हरि-नाम को हृदय में धारण करने से ही (ऐसा सम्भव होता है)। जिस प्रकार गूँगा व्यक्ति रस ले-लेकर मधुर पय-पान करता है, उसी प्रकार मैं प्रभु के स्मरण में आनन्द पाता हूँ ॥ ४ ॥ यदि मेरी जिह्वा हरि के अतिरिक्त द्वैत-भाव में किसी और का स्वाद ले, तो सब व्यर्थ लोभ और विकार मात्र होगा। जो गुरु की कृपा से हरि-नाम का स्वाद चख लेता है, वह अन्य सब रसों को त्याग देता है ॥ ५ ॥ गुरु के उपदेश से राम-नाम का धन प्राप्त हुआ है, उसके कहने-सुनने मात्र से पापों का निवारण हो जाता है। मेरे स्वामी के प्रिय भक्तों के निकट धर्मराज के यमदूत भी नहीं आते ॥ ६ ॥ श्वास-श्वास में मैं गुरु के उपदेशों द्वारा (बताए मार्ग पर चलते हुए) नाम-स्मरण करता हूँ, जो श्वास हरि-नाम के बिना बीतता है, वह व्यर्थ में निष्फल जाता है ॥७॥ हे कृपालु प्रभु, मैं तुम्हारी शरण में हूँ, मुझ पर कृपा करो और सतिगुरु से भेंट करवा दो। गुरु नानक कहते हैं कि वे (उन हरिजनों के) उनके दासों के दासों का भी पानी ढोनेवाले हैं ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ नट महला ४ ॥ राम हम पाथर निरगुनीआरे। क्रिपा क्रिपा करि गुरू मिलाए हम पाहन सबदि गुर तारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुर नामु द्रिड़ाए अति मीठा मैलागरु मलगारे। नामै सुरति वजी है दहदिसि हरि मुसकी मुसक गंधारे ॥ १ ॥ तेरी निरगुण कथा कथा है मीठी गुरि नीके बचन समारे। गावत गावत हरि गुन गाए गुन गावत गुरि निसतारे ॥ २ ॥ बिबेकु गुरू गुरू समदरसी तिसु मिलीऐ संक उतारे। सतिगुर मिलिऐ परम पदु पाइआ हउ सतिगुर कै बलिहारे ॥ ३ ॥ पाखंड पाखंड करि करि भरमे लोभु पाखंडु जगि बुरिआरे। हलति पलति दुखदाई होवहि जम कालु खड़ा सिरि मारे ॥४॥ उगवै दिनसु आलु जालु सम्हालै बिखु माइआ के बिसथारे। आई रैनि भइआ सुपनंतरु बिखु सुपनै भी दुख सारे ॥ ५ ॥ कलरु खेतु लै कूड़ु जमाइआ सभ कूड़ै के खलवारे। साकत नर सभि भूख भुखाने दरि ठाढे जम जंदारे ॥ ६ ॥ मनमुख करजु चड़िआ बिखु भारी उतरै सबदु वीचारे। जितने करज करज के मंगीए करि सेवक पगि लगि वारे ॥ ७ ॥ जगंनाथ

सभि जंत्र उपाए नकि खीनी सभ नथ हारे । नानक प्रभ खिचै तिव चलीऐ जिउ भावै राम पिआरे ।। ८ ।। २ ।।

हे प्रभु, हम गुणहीन पत्थर के समान हैं; तुमने कृपा करके हमें गुरु से मिलाप करवाया और गुरु के शब्द से हम जडबुद्धि भी तिर गए ।। १ ।। रहाउ ।। सतिगुरु ने अति मधुर और चन्दन से भी अधिक शीतल और सुगंधित हरि-नाम का जाप करवाया; नाम से ही मुझे दसों दिशाओं की सूझ मिली है और मलयजहरि की गंध सब ओर फैल गयी है ।। १ ।। हे त्रिगुणातीत प्रभु, तुम्हारी मीठी कथा गुरु के सुन्दर वचनों के द्वारा गायी जाती है; तुम्हारा ही गुण गाते हुए गुरु-द्वारा हमारा उद्धार होता है ।। २ ।। गुरु विवेकपूर्ण है, गुरु समदर्शी है, उससे मिलाप होने से ही सब शंकाएँ दूर हो जाती हैं । गुरु के मिलाप से परमपद की प्राप्ति होती है, इसलिए मैं सदा उस पर क़ुर्बान हूँ ।। ३ ।। जगत में लोग पाखण्ड करते, लोभ-भ्रम की बुराइयों को अपनाते हैं, जो (उनके लिए) लोक-परलोक में दु:खदायी होती हैं और उन्हें यम का दण्ड सहना पड़ता है ।। ४ ।। दिन चढ़ते ही (हम) घर-बाहर के धंधों में लीन हो जाते हैं और मिथ्या माया-युक्त कार्यों का विस्तार करते हैं । रात आती है, तो सपनों में खोकर भी माया के दुःख ही झेलते हैं ।। ५ ।। शरीर रूपी अनुर्वर धरती में मिथ्या का बीज बोकर सब मायावी खिलवाड़ किया है; माया-प्रिय जीव सब भूखे, दीन-हीन होते हैं और यम उनके द्वार पर खड़ा रहता है (ऋण वापस लेनेवाले के समान) ।। ६ ।। मनमुख जीव पर तृष्णा के अनेक ऋण चढ़ते हैं, जो मात्र गुरु-शब्द-विचार से उतरते हैं । क़र्ज और क़र्ज़ की माँग करनेवालों को गुरु ने अपना चरण-सेवक बना लिया है ।। ७ ।। जगत के स्वामी ने ही सब जीवों को उपजाया तथा सबकी नकेल अपने अधीन की है । गुरु नानक कहते हैं कि वह जैसे खींचता है, जैसा प्रिय प्रभु को जँचता है, वैसा ही सब चलते हैं ।। ८ ।। २ ।।

।। नट महला ४ ।। राम हरि अंम्रितसरि नावा रे । सतिगुरि गिआनु मजनु है नीको मिलि कलमल पाप उतारे ।।१।। रहाउ ।। संगति का गुनु बहुतु अधिकाई पड़ि सूआ गनक उधारे । परसन परस भए कुबिजा कउ लै बैकुंठि सिधारे ।। १ ।। अजामल प्रीति पुत्र प्रति कीनी करि नाराइण बोलारे । मेरे ठाकुर कै मनि भाइ भावनी जम कंकर मारि बिदारे ।। २ ।। मानुखु कथै कथि लोक सुनावै जो बोलै सो न बीचारे । सत संगति मिलै त दिड़ता आवै हरि राम नामि निसतारे ।। ३ ।। जब लगु जीउ पिंडु है साबतु तब लगि किछु न समारे । जब

घर मंदरि आगि लगानी कढि कूपु कढै पनिहारे ॥ ४ ॥ साकत सिउ मन मेलु न करीअहु जिनि हरि हरि नामु बिसारे । साकत बचन बिछूआ जिउ डसीऐ तजि साकत परै परारे ॥५॥ लगि लगि प्रीति बहु प्रीति लगाई लगि साधू संगि सवारे । गुर के बचन सति सति करि माने मेरे ठाकुर बहुतु पिआरे ॥६॥ पूरबि जनमि परचून कमाए हरि हरि हरि नामि पिआरे । गुरप्रसादि अंम्रित रसु पाइआ रसु गावै रसु वीचारे ॥ ७ ॥ हरि हरि रूप रंग सभि तेरे मेरे लालन लाल गुलारे । जैसा रंगु देहि सो होवै किआ नानक जंत विचारे ॥ ८ ॥ ३ ॥

हे मेरे राम, तुमने मुझे नामामृत के सरोवर में स्नान करवाया है; सतिगुरु के ज्ञान रूपी उत्तम स्नान से सब पापों की मलिनता दूर होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सत्संगति का बड़ा गुण है, (जैसे) तोता पढ़ाती हुई गणिका का उद्धार हो गया । (पौराणिक प्रसंग है ।) कुब्जा (कंस की दासी) पर प्रसन्न होकर प्रभु ने पाँव के अँगूठे के स्पर्श मात्र से उसे वैकुण्ठ भेज दिया ॥१॥ अजामिल ने पुत्र के प्रेम में उसे नारायण कहकर बुलाया, (तो इसी से) मेरे स्वामी के मन भा गया और उसके लिए आए यमदूतों को मार भगाया ॥२॥ मनुष्य अनेक बातें करता और दुनिया को सुनाता है, किन्तु जो कहता है उस पर विचार नहीं करता । सत्संगति में रहने से मन में दृढ़ता आती है और राम-नाम के द्वारा उद्धार होता है ॥ ३ ॥ जब तक शरीर स्वस्थ-सप्राण है, तब तक तो प्रभु को याद नहीं करता, और जब घर-मन्दिर में आग लग जाती है तब कुआँ खोदने भागता है अर्थात् जब 'अंगं गलितं पलितम् मुण्डम्' की स्थिति आ जाती है, तब हरि-नाम जपने की सोचता है ॥ ४ ॥ ऐ मन, ऐसे मायावी लोगों की संगति न कर, जिन्होंने हरि-नाम को बिसार दिया हो । मायावी के वचन बिच्छू के-से डंक होते हैं, उसे परे ही रखो (समीप न आने दो) ॥ ५ ॥ संसार के लगाव में बहुत प्रीति पा ली (किन्तु वह व्यर्थ है), सन्तों के चरणों की शरण लो; गुरु के वचनों को सत्य मानो और प्यारे स्वामी से प्यार करो ॥ ६ ॥ गत जीवन में थोड़े भले कर्म कमाए थे, (उन्हीं के पुरस्कार-रूप) अब गुरु-कृपा द्वारा अमरत्व प्रदान करनेवाला अमृत-रस-नाम प्राप्त हुआ है, उसी को गाता और विचारता हूँ ॥ ७ ॥ हे हरि, तुम्हारे प्रताप का रंग अत्यन्त लाल है; (गुरु नानक कहते हैं,) तुम जिसे जो रंग देते हो, जीव वैसा ही हो जाता है; जीवों के वश में क्या है (अर्थात् जीवों के वश में तो कुछ नहीं) ॥ ८ ॥ ३ ॥

॥ नट महला ४ ॥ राम गुर सरनि प्रभू रखवारे ।

जिउ कुंचरु तदूऐ पकरि चलाइओ करि ऊपरु कढि निसतारे ॥१॥ रहाउ ॥ प्रभ के सेवक बहुतु अति नीके मनि सरधा करि हरि धारे । मेरे प्रभि सरधा भगति मनि भावै जन की पैज सवारे ॥ १ ॥ हरि हरि सेवकु सेवा लागै सभु देखै ब्रहम पसारे । एकु पुरखु इकु नदरी आवै सभ एका नदरि निहारे ॥२॥ हरि प्रभु ठाकुरु रविआ सभ ठाई सभु चेरी जगतु समारे । आपि दइआलु दइआ दानु देवै विचि पाथर कीरे कारे ॥ ३ ॥ अंतरि वासु बहुतु मुसकाई भ्रमि भूला मिरगु सिङ्हारे । बनु बनु ढूढि ढूढि फिरि थाकी गुरि पूरै घरि निसतारे ॥ ४ ॥ बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे । गुरु बाणी कहै सेवकु जनु मानै परतखि गुरू निसतारे ॥ ५ ॥ सभु है ब्रहमु ब्रहमु है पसरिआ मनि बीजिआ खावारे । जिउ जन चंद्रहांसु दुखिआ ध्रिसटबुधी अपुना घरु लूकी जारे ॥ ६ ॥ प्रभ कउ जनु अंतरि रिद लोचै प्रभ जन के सास निहारे । क्रिपा क्रिपा करि भगति द्रिड़ाए जन पीछै जगु निसतारे ॥ ७ ॥ आपन आपि आपि प्रभु ठाकुरु प्रभु आपे स्रिसटि सवारे । जन नानक आपे आपि सभु वरतै करि क्रिपा आपि निसतारे ॥ ८ ॥ ४ ॥

हे राम, गुरु की शरण में आने से प्रभु रक्षक होता है, जैसे अन्त समय ग्राह द्वारा पकड़े हाथी की सूँड़ ऊँची करके उसे बचाया था (पौराणिक संदर्भ— गज-ग्राह-प्रसंग) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के सेवक बड़े भले हैं, जो मन में श्रद्धा-पूर्वक हरि को धारण करते हैं। मेरे प्रभु को जीव की श्रद्धा-भक्ति ही पसन्द है, वह अपने भक्तों की इज़्ज़त रखता है ॥ १ ॥ परमात्मा की सेवा में संलग्न भक्त सर्वत्र प्रभु का ही प्रसार देखता है। (जिधर देखते हैं, वही) परमपुरुष दीख पड़ता है, जो अपने भक्तों पर कृपा-दृष्टि डालता है ॥ २ ॥ मेरा स्वामी परमात्मा सर्वत्र रमण करता और समूचे संसार को अपना दास मानकर पोषण करता है। वह दयालु है, पत्थर के भीतर के कीड़े को भी दयापूर्वक पालता है ॥ ३ ॥ मृग के भीतर गंध है, उसकी सुवास चतुर्दिक् फैल रही है, किन्तु वह व्यर्थ इधर-उधर सींग मारता फिरता है। मैं वन-वन, स्थान-स्थान पर गुरु को ढूँढ़कर थक गया हूँ, किन्तु मेरा उद्धार पूरे गुरु द्वारा ही सम्भव है ॥ ४ ॥ गुरु की वाणी ही गुरु है और गुरु ही गुरुवाणी है, जिसमें अमृत भरा हुआ है। यदि गुरु की कही वाणी को प्रत्यक्ष में जीव स्वीकार कर ले, तो परोक्ष में अनेक गुरुवाणी की आराधना करनेवालों की पूजा के कारण जीवों का

कलियुग में उद्धार होता है ॥ ५ ॥ सब कुछ वहीं की स्मृतियों में नहीं कहना होता, बल्कि ब्रह्म के प्रसार देखते एवं कर्म-बीज का फल भोगते हुए भी जीना होता है। ज्यों चन्द्रहास पर कृपा होने के कारण धृष्टबुद्धि अपनी ही अग्नि में जल मरा ॥ ६ ॥ प्रभु का भक्त हृदय में नित्य उसी को चाहता है, किन्तु परमात्मा श्वास-श्वास उसकी रक्षा करता है। कृपा-पूर्वक विगत विवाहाचरण से हटकर भक्ति में लगाता है और अपने भक्तों की खातिर संसार का बोझ बँटाता है ॥७॥ प्रभु स्वयं ही स्वामी है, ज़रा यहाँ से निवृत्त हो सकें तो अपने रास्ते को अनुकूल बना लेंगे। नानक दास कहते हैं कि दुनिया का समूचा प्रसार हरि की ही देन है ॥ ८ ॥ ४ ॥

॥ नट महला ४ ॥ राम करि किरपा लेहु उबारे। जिउ पकरि द्रोपती दुसटां आनी हरि हरि लाज निवारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि किरपा जाचिक जन तेरे इकु मागउ दानु पिआरे। सतिगुर की नित सरधा लागी मोकउ हरि गुरु मेलि सवारे ॥ १ ॥ साकत करम पाणी जिउ मथीऐ नित पाणी झोल झुलारे। मिलि सत संगति परमपदु पाइआ कढि माखन के गटकारे ॥ २ ॥ नित नित काइआ मजनु कीआ नित मलि मलि देह सवारे। मेरे सतिगुर के मनि बचन न भाए सभ फोकट चार सीगारे ॥ ३ ॥ मटकि मटकि चलु सखी सहेली मेरे ठाकुर के गुन सारे। गुरमुखि सेवा मेरे प्रभ भाई मै सतिगुर अलखु लखारे ॥ ४ ॥ नारी पुरखु पुरखु सभ नारी सभु एको पुरखु मुरारे। संत जना की रेनु मनि भाई मिलि हरि जन हरि निसतारे ॥ ५ ॥ ग्राम ग्राम नगर सभ फिरिआ रिद अंतरि हरि जन भारे। सरधा सरधा उपाइ मिलाए मोकउ हरि गुर गुरि निसतारे ॥ ६ ॥ पवन सूतु सभु नीका करिआ सतिगुरि सबदु वीचारे। निज घरि जाइ अंम्रित रसु पीआ बिनु नैना जगतु निहारे ॥ ७ ॥ तउ गुन ईस बरनि नही साकउ तुम मंदर हम निक कीरे। नानक क्रिपा करहु गुर मेलहु मै रामु जपत मन धीरे ॥ ८ ॥ ५ ॥

हे राम, कृपापूर्वक मुझे उबार लो, जिस प्रकार द्रौपदी को दुष्टों द्वारा लाया जाने पर परमात्मा ने सदा अपने भक्त की लाज रखी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे दाता, हम तुम्हारे द्वार के भिक्षुक हैं, हम पर कृपा करो; हमें ऐसे सतिगुरु-मिलन की चाह है, जो हमें हरि से मिलाकर

सँवार ले ॥ १ ॥ मायापरक मिथ्या कर्म तो केवल पानी मथने के समान हैं, हम पानी मथते हैं, किन्तु सत्संगति में परमपद पाकर मक्खन-लाभ करते हैं अर्थात् अमृत-रस-भोग करते हैं ॥ २ ॥ शरीर को धोकर नित्य सँवारते हैं, किन्तु जब तक हमारे कर्म सतिगुरु को स्वीकार नहीं होते, हमारा सुन्दर शृंगार भी निरर्थक है ॥ ३ ॥ हे सखी, स्वामी के गुणों की स्मृति में सोल्लास जीवन जिओ; गुरु-पथ पर चलकर की गयी सेवा मेरे प्रभु को प्रिय है, मुझे उस अगम प्रभु का ज्ञान सतिगुरु ने ही करवाया ॥ ४ ॥ जो प्रकृति का स्वामी है, वही सब नारियों (जीवों) का स्वामी है, वह परमात्मा ही सबका स्वामी (पुरुष) है; सन्तजनों की चरण-धूल पाकर ही हरि-भक्ति में गति करते हैं ॥ ५ ॥ उस (प्रभु) की खोज में मैं ग्राम-ग्राम, नगर-नगर सब भ्रमण करता रहा, सन्तजनों ने भीतर से ही उसे खोजकर दिखा दिया। गुरु ने मन में श्रद्धा उपजाकर हरि से भेंट करवायी ॥ ६ ॥ सतिगुरु के शब्दों पर विचार करते हुए यह जन्म (प्राण-सूत्र) सफल किया है और अपने निजी घर में जाकर (परमगति पाकर) अमृत-रस का पान करते हुए बिना चर्म-चक्षुओं के ही संसार के मिथ्यापन को (ज्ञान-नेत्रों से) देख लिया है ॥ ७ ॥ हे प्रभु, हम तुम्हारे महान् गुणों का वर्णन नहीं कर सकते, तुम्हारे घर में हम तो छोटे से कीड़े के समान हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे परमात्मा, हम पर कृपा करो, गुरु से मिलन करवा दो ताकि हम भी हरि-नाम का जाप करके धैर्य-लाभ कर सकें ॥ ८ ॥ ५ ॥

॥ नट महला ४ ॥ मेरे मन भजु ठाकुर अगम अपारे। हम पापी बहु निरगुणीआरे करि किरपा गुरि निसतारे ॥ रहाउ ॥ साधू पुरख साध जन पाए इकु बिनउ करउ गुर पिआरे। राम नामु धनु पूजी देवहु सभु तिसना भूख निवारे ॥ १ ॥ पचै पतंगु म्रिग भ्रिंग कुंचर मीन इक इंद्री पकरि सघारे। पंच भूत सबल है देही गुरु सतिगुरु पाप निवारे ॥ २ ॥ सासत्र बेद सोधि सोधि देखे मुनि नारद बचन पुकारे। राम नामु पड़हु गति पावहु सत संगति गुरि निसतारे ॥ ३ ॥ प्रीतम प्रीति लगी प्रभ केरी जिव सूरजु कमलु निहारे। मेर सुमेर मोरु बहु नाचै जब उनवै घन घनहारे ॥ ४ ॥ साकत कउ अंम्रित बहु सिंचहु सभ डाल फूल बिसु कारे। जिउ जिउ निवहि साकत नर सेती छेड़ि छेड़ि कढै बिखु खारे ॥ ५ ॥ संतन संत साध मिलि रहीऐ गुण बोलहि परउपकारे। संतै संतु मिलै मनु बिगसै जिउ जल मिलि कमल सवारे ॥ ६ ॥ लोभ

लहरि सभु सुआनु हलकु है हलकिओ सभहि बिगारे। मेरे ठाकुर कै दीबानि खबरि होई गुरि गिआनु खड़गु लै मारे ॥७॥ राखु राखु राखु प्रभ मेरे मै राखहु किरपा धारे। नानक मै धर अवर न काई मै सतिगुरु गुरु निसतारे ॥ ८ ॥ ६ ॥ छका १

हे मन, अगम अपार प्रभु-स्वामी का भजन करो; हम पापी और गुण-हीन हैं, वही कृपापूर्वक हमको गुरु से मिला देता है ॥ रहाउ ॥ जिन्हें साधु-पुरुष (परमात्मा) प्राप्त है, उन्हीं गुरु-प्रिय जीवों से मेरी प्रार्थना है कि मुझे भी राम-नाम-धन की पूँजी दान दें और मेरी तृष्णा-क्षुधा का निवारण करें ॥ १ ॥ पतंगा, मृग, भँवरा, हाथी और मछली, सब एक-एक इन्द्रिय-दोष के कारण नष्ट होते हैं, मेरी देह में तो पाँच-पाँच तत्त्व और इन्द्रियाँ हैं, केवल सतिगुरु ही इनके (इन्द्रियों के) पापों का निवारण कर सकता है। (पतंगा दीपक की ज्योति के प्रकाश के कारण, मृग नादासक्ति के कारण, भँवरा पुष्प-गंध के कारण, हाथी काम-वासना के कारण और मछली लोभ के कारण फँसते हैं।) ॥ २ ॥ मैंने शास्त्रों, वेदों का अवलोकन भी किया है, नारद-सरीखे मुनियों के वचनों का विश्लेषण भी किया है, (सब एक ही बात कहते हैं कि) राम-नाम-स्मरण से ही गति मिलती है और गुरु की शरण में ही उद्धार निहित है ॥ ३ ॥ प्रभु-प्रियतम के साथ ऐसी प्रीति लगी है, जैसे कमल निरन्तर सूर्य को देखता है, जैसे घटाएँ उमड़ने पर जंगलों, पर्वतों में प्रसन्नतापूर्वक मोर झूम उठते हैं ॥ ४ ॥ मनमुख जीव को अमृत-जल से भी सींचो, उसके शाखा, पत्र-पुष्प सब विषैले ही होते हैं; ज्यों-ज्यों भले व्यक्ति मनमुख से विनम्रतापूर्वक व्यवहार करते हैं, त्यों-त्यों वह अनुचित छेड़-छाड़ द्वारा कटुवचन कहता है ॥ ५ ॥ सन्तों की साधु-संगति में नित्य परोपकार के गुण व्यक्त होते हैं; साधु-संगति में भले व्यक्तियों का मन ऐसे खिल उठता है, जैसे जल में कमल सँवर जाता है ॥ ६ ॥ लोभ की लहर में बहनेवाला व्यक्ति पागल कुत्ते के समान होता है, जो सबको (काट-काटकर) वही रोग लगा देता है। जब उसकी सूचना मेरे स्वामी के दरबार में पहुँचती है, तो वह ज्ञान-खड्ग लेकर उसकी (लोभ की) हत्या कर देता है ॥ ७ ॥ हे कृपालु, मेरी रक्षा करो, मुझे बचाओ; (हे नानक) मेरा अन्य कोई सहारा नहीं, मेरा उद्धार सतिगुरु ही करेंगे ॥ ८ ॥ ६ ॥ छका १ ॥ (छका छः पदों का संग्रह होता है। यहाँ महला ४ की छः 'असटपदियाँ' संग्रह की गयी हैं।)

रागु मालीगउड़ा महला ४

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

अनिक जतन करि रहे हरि अंतु नाही पाइआ। हरि अगम अगम अगाधि बोधि आदेसु हरि प्रभ राइआ ॥१॥ रहाउ ॥ कामु क्रोधु लोभ मोहु नित झगरते झगराइआ। हम राखु राखु दीन तेरे हरि सरनि हरि प्रभि आइआ ॥ १ ॥ सरणागती प्रभि पालते हरि भगति वछलु नाइआ। प्रहिलादु जनु हरनाखि पकरिआ हरि राखि लीओ तराइआ ॥ २ ॥ हरि चेति रे मन महलु पावण सभ दूख भंजनु राइआ। भउ जनम मरन निवारि ठाकुर हरि गुरमती प्रभु पाइआ ॥ ३ ॥ हरि पतित पावन नामु सुआमी भउ भगत भंजनु गाइआ। हरि हारु हरि उरिधारिओ जन नानक नामि समाइआ ॥ ४ ॥ १ ॥

हम पाप-भरे जीवन में अनेक यत्न करते रहते हैं, किन्तु परमात्मा नहीं मिलता। वह (परमात्मा) अगम है, उसकी जानकारी असूझ है, ऐसे पुरुषोत्तम हरि को प्रणाम है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नित्य हम काम, क्रोध, लोभ, मोह के झगड़ों में पड़े रहते हैं; हे दीनदयालु, हम तुम्हारी शरण में हैं, हमारी रक्षा करो ॥ १ ॥ हे प्रभु, तुम्हारा नाम भक्तवत्सल है, तुम शरणागत की रक्षा करते हो— प्रह्लाद को जब हिरण्यकशिपु ने पकड़ा था, तो तुम्हीं ने उसकी रक्षा करके उद्धार किया था ॥ २ ॥ हे मन, प्रभु के दरबार में प्रवेश प्राप्त करने के लिए दुःख-भंजन पुरुषोत्तम प्रभु का स्मरण करो; संसार में जन्म-मरण के कष्टों के निवारक परमात्मा की प्राप्ति केवल गुरु के आदेशों पर आचरण करने से ही होती है ॥ ३ ॥ मेरे स्वामी का नाम पतितपावन है, भक्तों ने इसे भवभयभंजन कहकर गान किया है। (इसीलिए) गुरु नानक कहते हैं कि उन्होंने हरि-नाम रूपी माला को अपने हृदय रूपी गले में पहन लिया है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ मालीगउड़ा महला ४ ॥ जपि मन राम नामु सुखदाता। सत संगति मिलि हरि सादु आइआ गुरमुखि ब्रहमु पछाता ॥१ ॥

रहाउ ।। वडभागी गुर दरसनु पाइआ गुरि मिलिऐ हरि प्रभु जाता । दुरमति मैलु गई सभ नीकरि हरि अंम्रिति हरिसरि नाता ।। १ ।। धनु धनु साध जिन्ही हरि प्रभु पाइआ तिन्ह पूछउ हरि की बाता । पाइ लगउ नित करउ जुदरीआ हरि मेलहु करमि बिधाता ।। २ ।। लिलाट लिखे पाइआ गुरु साधू गुर बचनी मनु तनु राता । हरि प्रभु आइ मिले सुखु पाइआ सभ किलविख पाप गवाता ।। ३ ।। राम रसाइणु जिन्ह गुरमति पाइआ तिन्ह की ऊतम बाता । तिन की पंक पाईऐ वडभागी जन नानकु चरनि पराता ।। ४ ।। २ ।।

हे मन, सुखदायी हरि-नाम का जाप करो । सत्संगति में ही हरि-रस का स्वाद है, गुरु के द्वारा ही ब्रह्म की पहचान होती है ।। १ ।। रहाउ ।। भाग्य से गुरु का दर्शन मिलता है और गुरु को मिलकर ही हरि-प्रभु की जानकारी होती है । (तब) दुर्मति की मलिनता दूर होती है और (हम) हरि रूपी अमृत-जल में स्नान करते हैं ।। १ ।। वे सन्त धन्य हैं, जिन्होंने हरि को पा लिया है, उन्हीं से हरि का परिचय प्राप्त करो । नित्य उनके चरण पकड़ो, कठोर अनुनय-विनय करो, ताकि वे कृपापूर्वक विधाता से भेंट करवा दें ।। २ ।। मस्तक पर लिखे भाग्यानुसार गुरु प्राप्त होता है और हम तन-मन से उसी में रत होते हैं; (तभी) हरि-प्रभु से भेंट होती है और सब पाप नष्ट हो जाते हैं ।। ३ ।। जिन्होंने गुरु-मतानुसार हरि-नाम रूपी रसायन प्राप्त किया है, उनकी स्थिति उत्तम है; दास नानक उनके चरणों में पड़े हैं, उनकी चरण-धूल बड़े भाग्य से मिलती है ।। ४ ।। २ ।।

।। मालीगउड़ा महला ४ ।। सभि सिध साधिक मुनि जना मनि भावनी हरि धिआइओ । अपरंपरो पारब्रहमु सुआमी हरि अलखु गुरू लखाइओ ।। १ ।। रहाउ ।। हम नीच मधिम करम कीए नही चेतिओ हरि राइओ । हरि आनि मेलिओ सतिगुरू खिनु बंध मुकति कराइओ ।। १ ।। प्रभि मसतके धुरि लीखिआ गुरमती हरि लिव लाइओ । पंच सबद दरगह बाजिआ हरि मिलिओ मंगलु गाइओ ।। २ ।। पतित पावनु नामु नरहरि मंदभागीआं नही भाइओ । ते गरभ जोनी गालीअहि जिउ लोनु जलहि गलाइओ ।। ३ ।। मति देहि हरि प्रभ अगम ठाकुर गुरचरन मनु मै लाइओ । हरि राम नामै रहउ लागो जन नानक नामि समाइओ ।। ४ ।। ३ ।।

सब सिद्ध-साधक और ऋषि-मुनि वड़ी श्रद्धा से हरि-नाम की आराधना करते हैं। (किन्तु) अपरंपार अदृश्य परब्रह्म हरि को गुरु ही दिखाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हम नीच हैं, निम्न कर्म करते हैं, पुरुषोत्तम हरि का स्मरण नहीं करते। गुरु ने हरि को मिला दिया तो क्षण भर में बंधन-मुक्त हो गए ॥ १ ॥ प्रभ ने शुरू से ही जो कुछ भाग्य में लिखा था, उसी के अनुसार गुरु-उपदेश द्वारा परमात्मा में लग्न लगी। (जिससे) दशम द्वार के भीतर पाँचों नाद सुनाई देने लगे और प्रभु-मिलन हो जाने से मंगल-गान गाए गए ॥ २ ॥ परमात्मा पतित-पावन है, किन्तु दुर्भाग्यशाली लोगों को यह नहीं भाता। (ऐसे लोगों ने) अपना मनुष्य-जन्म गँवा लिया (और दुःखों में तड़पते रहे), ज्यों जले पर नमक छिड़क गया हो ॥ ३ ॥ गुरु के चरणों में मन लगाने से मुझे अगम ठाकुर का ज्ञान होता है; गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम स्मरण करो, उसके नाम में ही लीन रहो ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ मालीगउड़ा महला ४ ॥ मेरा मनु राम नामि रसि लागा। कमल प्रगासु भइआ गुरु पाइआ हरि जपिओ भ्रमु भउ भागा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भै भाइ भगति लागो मेरा हीअरा मनु सोइओ गुरमति जागा। किलबिख खीन भए सांति आई हरि उरधारिओ वडभागा ॥ १ ॥ मनमुख रंगु कसुंभु है कचूआ जिउ कुसम चारि दिन चागा। खिन महि बिनसि जाइ परतापै डंडु धरमराइ का लागा ॥ २ ॥ सत संगति प्रीति साध अति गूड़ी जिउ रंगु मजीठ बहु लागा। काइआ कापरु चीर बहु फारे हरि रंगु न लहै सभागा ॥ ३ ॥ हरि चाहिओ रंगु मिलै गुरु सोभा हरि रंगि चलूलै रांगा। जन नानकु तिन के चरन पखारै जो हरि चरनी जनु लागा ॥ ४ ॥ ४ ॥

मेरा मन प्रभु-नाम के रस में पगा है; गुरु के मिलन से हृदय-कमल विकसित हुआ है और हरि-नाम जपने से मेरे सब भ्रम-भय दूर हो गए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा सुप्त मन गुरु के उपदेशों से जगा है और प्रभु के भय तथा भक्ति-भाव में रत है। सौभाग्य से हरि-प्रभु को हृदय में धारण करने से मेरे पाप क्षीण हो गए हैं और मन में शांति उपजी है ॥ १ ॥ मनमुख जीव पर चढ़ा रंग कुसुंभ के समान कच्चा होता है, जैसे फूल की बहार चार दिन की होती है। धर्मराज का दण्ड छूते ही क्षण भर में वह नष्ट होता और परिताप सहता है ॥ २ ॥ सत्संगति में उपजनेवाली प्रीति का रंग मजीठ के रंग की तरह प्रगाढ़ होता है। काया रूपी कपड़ा

(जिसे हरि-नाम के मजीठ-रंग में रँग लिया गया है) फट तो जाता है, किन्तु बेरंग नहीं होता अर्थात् दुःख उठाते हुए भी उसमें की प्रफुल्लता खत्म नहीं होती ॥ ३ ॥ गुरु-मिलन से हरि-रंग चढ़ता है और उसकी (जीव की) शोभा खूब गूढ़े रंग-सी हो जाती है। जो जन हरि-चरणों में समर्पित हैं, दास नानक उनके चरण धोते हैं ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ मालीगउड़ा महला ४ ॥ मेरे मन भजु हरि हरि नामु गुपाला। मेरा मनु तनु लीनु भइआ राम नामै मति गुरमति राम रसाला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमति नामु धिआईऐ हरि हरि मनि जपीऐ हरि जप माला। जिन्हके मसतकि लीखिआ हरि मिलिआ हरि बनमाला ॥ १ ॥ जिन्ह हरि नामु धिआइआ तिन्ह चूके सरब जंजाला। तिन्ह जमु नेड़ि न आवई गुरि राखे हरि रखवाला ॥ २ ॥ हम बारिक किछू न जाणहू हरि मात पिता प्रतिपाला। करु माइआ अगनि नित मेलते गुरि राखे दीन दइआला ॥ ३ ॥ बहु मैले निरमल होइआ सभ किलबिख हरि जसि जाला। मनि अनदु भइआ गुरु पाइआ जन नानक सबदि निहाला ॥ ४ ॥ ५ ॥

हे मेरे मन, हरि-नाम का भजन करो; गुरुमति का रस पाकर मेरा मन-तन राम-नाम में लीन हो गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के उपदेशानुसार हमें अपने मन में हरि-नाम की माला जपनी है और प्रभु-नाम की आराधना करनी है। जिनका भाग्य बलवान है, उन्हें पूर्णब्रह्म मिल जाता है ॥ १ ॥ जिन जीवों ने हरि का नाम जपा है, उनके जीवन के सब बन्धन कट गए हैं, यमदूत उनके समीप नहीं आ सकता, स्वयं परमात्मा उनका रक्षक होता है ॥ २ ॥ हम अबोध बालक हैं, प्रभु हमारा माता-पिता के समान पोषण करता है। (इससे पूर्व) मन सदा माया की अग्नि में जलता रहता था, अब दीनदयालु प्रभु ने हमारी रक्षा की है ॥ ३ ॥ हम मलिन थे, प्रभु ने हमारे पापों को जलाकर हमें निर्मल बना दिया है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु-मिलन से मन आनंदित हो उठा है और उसके शब्द से जीव निहाल हो गया है ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ मालीगउड़ा महला ४ ॥ मेरे मन हरि भजु सभ किलबिख काट। हरि हरि उरधारिओ गुरि पूरै मेरा सीसु कीजै गुर वाट ॥१॥ रहाउ ॥ मेरे हरि प्रभ की मै बात सुनावै तिसु मनु देवउ कटि काट। हरि साजनु मेलिओ गुरि पूरै गुर

बचनि बिकानो हटि हाट ॥ १ ॥ मकर प्रागि दानु बहु कीआ सरीरु दीओ अध काटि । बिनु हरिनाम को मुकति न पावै बहु कंचनु दीजै कटि काट ॥ २ ॥ हरि कीरति गुरमति जसु गाइओ मनि उघरे कपट कपाट । त्रिकुटी फोरि भरमु भउ भागा लज भानी मटुकी माट ॥ ३ ॥ कलजुगि गुरु पूरा तिनि पाइआ जिन धुरि मसतकि लिखे लिलाट । जन नानक रसु अंम्रितु पीआ सभ लाथी भूख तिखाट ॥ ४ ॥ ६ ॥ छका १

हे मेरे मन, हरि-भजन से सब किल्विष (पाप) नष्ट होते हैं; मैंने प्रभु-नाम को हृदय में धारण किया है और (मेरी अभिलाषा है कि) मेरा सिर सदा पूर्णगुरु के पथ पर झुका रहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो मुझे मेरे परमात्मा की बात सुनाए, मैं हृदय काटकर उसे दे दूंगा। गुरु मुझे हरि-साजन से मिला देता है, उसके वचन पर तो मैं हाट-बाज़ार पर बिकने को तत्पर हूँ ॥ १ ॥ मकर राशि के सूर्य-ग्रहण पर प्रयाग में जाकर मैंने कितना दान किया, काशी में करवत लेकर शरीर आधा कटवाया, किन्तु हरि-नाम के बिना मुक्ति नहीं मिली, भले ही स्वर्ण का दान किया हो ॥ २ ॥ गुरु के उपदेशानुसार हरि-कीर्ति-गान करने से मन के संकीर्ण द्वार खुल गए, तीनों गुणों की सृष्टि का भ्रम तोड़कर मेरी लोक-लाज रूपी मटकी (मिट्टी की) टूट गयी (अर्थात् मैं सब भ्रमों-बंधनों से मुक्त हो गया) ॥ ३ ॥ कलियुग में पूर्णगुरु से उसी का मिलन सम्भव है, जिसके ललाट की भाग्यरेखाएँ गहरी होती हैं। गुरु नानक कहते हैं, प्रभु-नाम का रसामृत पान करने से सब भूख-प्यास शमित हो जाती है ॥४॥६॥छका१

मालीगउड़ा महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रे मन टहल हरि सुख सार । अवर टहला झूठीआ नित करै जमु सिरि मार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिना मसतकि लीखिआ ते मिले संगार । संसारु भउजलु तारिआ हरि संत पुरख अपार ॥ १ ॥ नित चरन सेवहु साध के तजि लोभ मोह बिकार । सभु तजहु दूजी आसड़ी रखु आस इक निरंकार ॥ २ ॥ इकि भरमि भूले साकता बिनु गुर अंध अंधार । धुरि होवना सु होइआ को न मेटणहार ॥३॥

अगम रूपु गोबिंद का अनिक नाम अपार। धनु धंनु ते जन नानका जिन हरि नामा उरिधार ॥ ४ ॥ १ ॥

हे मन, परमात्मा की सेवा में ही सब सुख निहित हैं; अन्य (देव-देवियों या मनुष्यों की) सेवाएँ मिथ्या हैं, यमदूतों का दण्ड बराबर सिर पर रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनका भाग्य बली है, वे सत्संगति को प्राप्त करते हैं; सन्तों की संगति में परमपुरुष परमात्मा को पहचानते एवं संसार-सागर से पार हो जाते हैं ॥ १ ॥ लोभ, मोह और विकारों का त्याग कर नित्य सन्तों की चरण-सेवा करो; अन्य सब आशाओं-तृष्णाओं का त्याग करके एक प्रभु पर आशा रखो ॥२॥ मनमुख (साकत प्रायः शक्ति के पुजारी को कहते हैं, गुरुवाणी में इस शब्द का सामान्य प्रयोग मनमुख अर्थात् स्वेच्छाचारी के लिए हुआ है) जीव गुरु के बिना नेत्रहीन अन्धों की तरह भ्रम के अँधेरे में भटकते हैं; परमात्मा के दरबार से जो लिखा है, वही होता है, कोई उसे मिटा नहीं सकता ॥ ३ ॥ परमात्मा का रूप अपरिमित है और उसके असंख्य नाम हैं; गुरु नानक कहते हैं कि वे जीव धन्य हैं, जो हृदय में हरि-नाम को धारण किए हैं ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ मालीगउड़ा महला ५ ॥ राम नाम कउ नमसकार। जासु जपत होवत उधार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कै सिमरनि मिटहि धंध। जा कै सिमरनि छूटहि बंध। जा कै सिमरनि मूरख चतुर। जा कै सिमरनि कुलह उधर ॥ १ ॥ जा कै सिमरनि भउ दुख हरै। जा कै सिमरनि अपदा टरै। जा कै सिमरनि मुचत पाप। जा कै सिमरनि नही संताप ॥ २ ॥ जा कै सिमरनि रिद बिगास। जा कै सिमरनि कवला दासि। जा कै सिमरनि निधि निधान। जा कै सिमरनि तरे निदान ॥ ३ ॥ पतित पावनु नामु हरी। कोटि भगत उधारु करी। हरि दास दासा दीनु सरन। नानक माथा संत चरन ॥ ४ ॥ २ ॥

राम-नाम प्रणम्य है, जिसके जपने से जीव का उद्धार हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसके स्मरण से मायावी धंधों से छुटकारा होता है, जिसके सिमरन से जीव की बन्धन-मुक्ति होती है, जिसकी आराधना से मूर्ख भी चतुर हो जाते हैं, जिसके स्मरण से समूचे वंश का उद्धार होता है ॥ १ ॥ जिसके सिमरन से संसार के दुःख दूर होते हैं, जिसके स्मरण से मुसीबतें टलती हैं, जिसके सिमरन से पाप कटते हैं और जिसकी आराधना से कोई संताप नहीं रह जाता ॥ २ ॥ जिसके स्मरण से हृदय

विकसित होता है, जिसके सिमरन से लक्ष्मी दासी बन जाती है, जिसकी आराधना से नौ निधियों की प्राप्ति होती है और अन्ततः जिसके स्मरण से ही मोक्ष होता है ॥ ३ ॥ वह हरि-नाम पतित-पावन है, उससे करोड़ों भक्तों का उद्धार हुआ है। मैं दीन हरि के दासों के दासों की शरण में आया हूँ, (नानक कहते हैं कि) मेरा माथा सदा सन्तों के चरणों में झुका है ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ मालीगउड़ा महला ५ ॥ ऐसो सहाई हरि को नाम। साध संगति भजु पूरन काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बूडत कउ जैसे बेड़ी मिलत। बूझत दीपक मिलत तिलत। जलत अगनी मिलत नीर। जैसे बारिक मुखहि खीर ॥ १ ॥ जैसे रण महि सखा भ्रात। जैसे भूखे भोजन मात। जैसे किरखहि बरस मेघ। जैसे पालन सरनि सेघ ॥ २ ॥ गरुड़ मुखि नही सरप त्रास। सूआ पिंजरि नही खाइ बिलासु। जैसो आंडो हिरदे माहि। जैसो दानो चकी दराहि ॥ ३ ॥ बहुतु ओपमा थोर कही। हरि अगम अगम अगाधि तुही। ऊच मूचौ बहु अपार। सिमरत नानक तरे सार ॥ ४ ॥ ३ ॥

हरि-नाम ऐसा सहायक है कि साधु-संगति (सत्संग) में इसका भजन करने से सब कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे डूबते हुए व्यक्ति को नौका मिल जाए, जैसे बुझते दीपक को तेल मिल सके, जैसे अग्नि में जल रहे व्यक्ति को पानी मिले या जैसे भूखे बालक के मुख में दूध का घूँट प्राप्त हो ॥ १ ॥ जैसे युद्ध में मित्र या भाई का सहारा मिल सके, जैसे भूखे को माता द्वारा परसा भोजन मिले, जैसे खेती को बादल का बरसना मिल जाए, जैसे किसी को सिंह का संरक्षण प्राप्त हो ॥ २ ॥ जैसे गरुड़-मन्त्र जपनेवाले को सर्प का भय नहीं रहता, पिंजरे में सुरक्षित तोते को बिलाव नहीं खा पाता, कूँज (क्रौञ्च) पक्षी अण्डों को हृदय में ही स्मरण द्वारा सेता है और जैसे चक्की की किल्ली का सहारा लेनेवाले दाने पिसने से बचे रहते हैं ॥ ३ ॥ (हरि के द्वारा प्राप्य सुरक्षा-सम्बन्धी) असंख्य उपमाएँ हैं, मैंने थोड़ी ही कही हैं; वह अगम, अगाध अगोचर है, वह ऊँचे से ऊँचा और अनन्त है, उसको स्मरण करने मात्र से (गुरु नानक कहते हैं कि) लोहा भी तिर जाता है अर्थात् लोहे-सरीखे भारी पापों वाले जीवों का भी उद्धार होता है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ मालीगउड़ा महला ५ ॥ इही हमारै सफल काज। अपुने दास कउ लेहु निवाजि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरन संतह

माथ मोर। नैनि दरसु पेखउ निसि भोर। हसत हमरे संत टहल। प्रान मनु धनु संत बहल॥ १॥ संत संगि मेरे मन की प्रीति। संत गुन बसहि मेरै चीति। संत आगिआ मनहि मीठ। मेरा कमलु बिगसै संत डीठ॥ २॥ संत संगि मेरा होइ निवासु। संतन की मोहि बहुतु पिआस। संत बचन मेरे मनहि संत। संत प्रसादि मेरे बिखै हंत॥ ३॥ मुकति जुगति एहा निधान। प्रभ दइआल मोहि देवहु दान। नानक कउ प्रभ दइआ धारि। चरन संतन के मेरे रिदे मझारि॥४॥४॥

हे प्रभु, आप अपने दास को शरण दो, इसी से हमारे सब कार्य सफल हो जाते हैं॥ १॥ रहाउ॥ मेरा मस्तक नित्य सन्तों के चरणों में नत है, रात-दिन मेरे नैन उसी को देखते हैं; हमारे हाथ संतों की सेवा में लीन हैं और मन-धन-प्राण सब सन्तों को अर्पित हैं॥ १॥ मेरा मन सन्तों की प्रीति में रत है, सन्तों के गुण मेरे मन में घर कर गए हैं, सन्तों की आज्ञा मुझे मधुर लगती है। सन्तों के दर्शन मात्र से मेरा हृदय-कमल विकसित हो जाता है॥ २॥ मुझे सन्तों की संगति में निवास प्रिय है, सन्तों की संगति की मुझे उत्कट प्यास है। सन्तों के वचनों को मैं मन में मन्त्र की नाईं स्मरण करता हूँ, मेरे सब विषय-विकार सन्तों की कृपा से ही मिट गए हैं॥३॥ यही (सन्तों, गुरु की संगति) मुक्ति का द्वार और सुखों का कोष है। मुझे प्रभु की दया का दान दो। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु, मुझ पर दया करके मेरे हृदय में सन्तों की चरण-रति दृढ़ बनाओ॥४॥४॥

॥ मालीगउड़ा महला ५॥ सभ कै संगी नाही दूरि। करनकरावन हाजरा हजूरि॥ १॥ रहाउ॥ सुनत जीओ जासु नामु। दुख बिनसे सुख कीओ बिस्रामु। सगल निधि हरि हरि हरे। मुनि जन ता की सेव करे॥ १॥ जा कै घरि सगले समाहि। जिस ते बिरथा कोइ नाहि। जीअ जंत्र करे प्रतिपाल। सदा सदा सेवहु किरपाल॥ २॥ सदा धरमु जा कै दीबाणि। बेमुहताज नही किछु काणि। सभ किछु करना आपन आपि। रे मन मेरे तू ता कउ जापि॥ ३॥ साध संगति कउ हउ बलिहार। जासु मिलि होवै उधारु। नाम संगि मन तनहि रात। नानक कउ प्रभि करी दाति॥ ४॥ ५॥

परमात्मा सबके अंग-संग है, दूर नहीं, सब कुछ स्वयं ही करता और

प्रत्यक्ष दृश्यमान् है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसका नाम सुनकर हम जीवित हैं, (जिसके नाम से) दुःख नष्ट होते और सुख उपलब्ध होता है। (उसका नाम ही) नौ निधियों के समान है, इसीलिए मुनिजन भी उसी 'नामी' की सेवा में लीन हैं ॥ १ ॥ जिसके (परमात्मा के) अन्तर्गत सब समाते हैं, जिससे अलग कुछ नहीं है, जो सब जीव-जन्तुओं का पोषण करता है, मैं सदा उसी कृपानिधान की सेवा करूँ ॥ २ ॥ जिसके दरबार में सदा धर्मन्याय होता है, जो कभी किसी वस्तु से वंचित नहीं, जो सब कुछ करनेवाला स्वयं ही है; ऐ मेरे मन, तुम भी उसकी आराधना करो ॥ ३ ॥ मैं सन्तों की संगति पर क़ुर्बान हूँ, जिसको मिलकर (सत्संगति में) जीवों का उद्धार होता है, (जिनके सम्पर्क में) मन सदा हरि-नाम में रत रहता है, हे प्रभु, दास नानक को ऐसा (सत्संगति का) दान प्रदान करो ॥ ४ ॥ ५ ॥

मालीगउड़ा महला ५ दुपदे

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हरि समरथ की सरना । जीउ पिंडु धनु रासि मेरी प्रभ एक कारनकरना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिमरि सिमरि सदा सुखु पाईऐ जीवणै का मूलु । रवि रहिआ सरबत ठाई सूखमो असथूल ॥ १ ॥ आल जाल बिकार तजि सभि हरि गुना निति गाउ । कर जोड़ि नानकु दानु मांगै देहु अपना नाउ ॥ २ ॥ १ ॥ ६ ॥

मैं समर्थ हरि की शरण में हूँ, वही एक सर्व-कर्ता मेरा तन, मन, धन और प्राण है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उस प्रभु का नित्य स्मरण करते हुए जीवन का मूल सुख उपलब्ध होता है। वह परमात्मा सूक्ष्म और स्थूल, सब जगह व्याप्त है ॥ १ ॥ घर के व्यर्थ के धंधे एवं विकृत विचारों को त्याग कर सदा परमात्मा के गुण गाओ। गुरु नानक हाथ जोड़कर यही दान माँगते हैं कि उन्हें नाम-दान (हरिनाम-दान) मिले ॥ २ ॥ १ ॥ ६ ॥

॥ मालीगउड़ा महला ५ ॥ प्रभ समरथ देव अपार । कउनु जानै चलित तेरे किछु अंतु नाही पार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इक खिनहि थापि उथापदा घड़ि भंनि करनैहारु । जेत कीन उपारजना प्रभु दानु देइ दतार ॥ १ ॥ हरि सरनि आइओ दासु तेरा प्रभ ऊच अगम मुरार । कढि लेहु भउजल बिखम ते जनु नानकु सद बलिहार ॥ २ ॥ २ ॥ ७ ॥

प्रभु देवाधिदेव और समर्थ है, उसके अनन्त और अपार चरित्र को

कौन जानता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह (परमात्मा) क्षण भर में ही स्थापित को विस्थापित करने एवं बनाने-मिटानेवाला है; जितना निर्माण उसने किया है, वह सबको अपेक्षित सामग्री भी देता है ॥ १ ॥ हे ऊँचे, अपार प्रभु, तुम्हारा यह दास, तुम्हारी शरण में आया है; दास नानक सदा बलिहार हैं, उन्हें इस भव-जल से मुक्त करो ॥ २ ॥ २ ॥ ७ ॥

॥ मालीगउड़ा महला ५ ॥ मनि तनि बसि रहे गोपाल । दीन बांधव भगति वछल सदा सदा क्रिपाल ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आदि अंते मधि तू है प्रभ बिना नाही कोइ । पूरि रहिआ सगल मंडल एकु सुआमी सोइ ॥ १ ॥ करनि हरि जसु नेत्र दरसनु रसनि हरि गुन गाउ ॥ बलिहारि जाए सदा नानकु देहु अपणा नाउ ॥ २ ॥ ३ ॥ ८ ॥

मेरे तन-मन में प्रभु बसे हुए हैं; वे दीन-बंधु, भक्त-वत्सल एवं सदैव कृपालु हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे परमात्मा, आदि, मध्य और अन्त में तुम ही हो, तुम्हारे अतिरिक्त और कोई नहीं। वही मालिक समूचे ब्रह्माण्ड में व्याप्त है ॥ १ ॥ मैं कानों द्वारा हरि-यश सुनता, आँखों द्वारा हरि का स्वरूप देखता एवं मुख द्वारा हरि-गुण गाता हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि (हे प्रभु,) उन्हें अपने नाम का दान दो, वे तुम पर क़ुर्बान हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ ८ ॥

मालीगउड़ा बाणी भगत नामदेव जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ धनि धंनि ओ राम बेनु बाजै । मधुर मधुर धुनि अनहत गाजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धनि धनि मेघा रोमावली । धनि धनि क्रिसन ओढै कांबली ॥ १ ॥ धनि धनि तू माता देवकी । जिह ग्रिह रमईआ कवलापती ॥२॥ धनि धनि बनखंड बिंद्राबना । जह खेलै स्री नाराइना ॥ ३ ॥ बेनु बजावै गोधनु चरै । नामे का सुआमी आनद करै ॥ ४ ॥ १ ॥

(इस पद में श्रीकृष्ण के उदात्त कार्यों के माध्यम से परमात्मा की महिमा का गान हुआ है।) प्रभु की बंसी का नाद धन्य है, उसकी मधुर ध्वनि अनाहत नाद के समान है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेंढ़े की वह ऊन धन्य है, जिसकी कामरी श्रीकृष्ण ने ओढ़ी है ॥ १ ॥ हे माता देवकी, तुम धन्य

हो, जिसके घर स्वयं कमलापति परमात्मा अवतरित हुआ है ।। २ ।। वह वन-स्थल और वृन्दावन भी धन्य है, जहाँ श्रीनारायण ने स्वयं क्रीडा की ।। ३ ।। जहाँ वह वंशी बजाता, गायें चराता और (नामदेव का स्वामी) आनन्द मनाता है (वह सब जगह धन्य है ।) ।। ४ ।। १ ।।

मेरो बापु माधउ तू धनु केसौ सांवलीओ बीठुलाइ ।। १ ।। रहाउ ।। कर धरे चक्र बैकुंठ ते आए गज हसती के प्रान उधारीअले । दुहसासन की सभा द्रोपती अंबर लेत उबारीअले ।। १ ।। गोतम नारि अहलिआ तारी पावन केतक तारीअले । ऐसा अधमु अजाति नामदेउ तउ सरनागति आईअले ।। २ ।। २ ।।

मेरे पिता, केशव, साँवले बीठल, ।। १ ।। रहाउ ।। हाथ में सुदर्शन-चक्र धारण कर वैकुण्ठ से आकर तुमने गज के प्राणों का उद्धार किया । दुःशासन की सभा में द्रौपदी को निर्वसना होने से बचा लिया ।।१।। तुमने गौतम-पत्नी अहल्या को मोक्ष प्रदान किया और कितनों का ही उद्धार करके उन्हें पावन कर दिया । इसीलिए अधम, अजाति यह नामदेव तुम्हारी शरण में आया है ।। २ ।। २ ।।

सभै घट रामु बोलै रामा बोलै । राम बिना को बोलै रे ।। १ ।। रहाउ ।। एकल माटी कुंजर चीटी भाजन हैं बहु नाना रे । असथावर जंगम कीट पतंगम घटि घटि रामु समाना रे ।। १ ।। एकल चिंता राखु अनंता अउर तजहु सभ आसा रे । प्रणवै नामा भए निहकामा को ठाकरु को दासा रे ।।२।।३।।

सर्व जीवों और शरीरों में परमात्मा व्याप्त है, उसके अतिरिक्त वहाँ और कौन बोलता है ! ।। १ ।। रहाउ ।। मिट्टी एक ही है, हाथी से लेकर चींटी तक असंख्य प्रकार के बर्तन उसी से बने हैं । जड, जंगम, कीट-पतंगों आदि सबमें राम समाया हुआ है ।। १ ।। मुझे अब उस अनन्त परमात्मा का ही ध्यान है, अन्य सब आशाएँ मैंने तोड़ दी हैं । संत नामदेव कहते हैं कि वे निष्काम हो गये हैं, अब स्वामी और दास एक हो गये हैं (अर्थात् प्रभु सब जगह व्याप्त है, नामदेव उसी व्याप्ति में लीन हो गए हैं ।) ।। २ ।। ३ ।।

राग मारू महला १ घरु १ चउपदे

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

॥ सलोकु ॥ साजन तेरे चरन की होइ रहा सद धूरि । नानक सरणि तुहारीआ पेखउ सदा हजूरि ॥ १ ॥ सबद ॥ पिछहु राती सदड़ा नामु खसम का लेहि । खेमे छत्र सराइचे दिसनि रथ पीड़े । जिनी तेरा नामु धिआइआ तिन कउ सदि मिले ॥ १ ॥ बाबा मैं करमहीण कूड़िआर । नामु न पाइआ तेरा । अंधा भरमि भूला मनु मेरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साद कीते दुख परफुड़े पूरबि लिखे माइ । सुख थोड़े दुख अगले दूखे दूखि विहाइ ॥ २ ॥ विछुड़िआ का किआ वीछुड़ै मिलिआ का किआ मेलु । साहिबु सो सालाहीऐ जिनि करि देखिआ खेलु ॥ ३ ॥ संजोगी मेलावड़ा इनि तनि कीते भोग । विजोगी मिलि विछुड़े नानक भी संजोग ॥ ४ ॥ १ ॥

हे प्रियतम, मैं सदा तुम्हारे चरणों की धूल बना रहूँ । तुम्हारी शरण में आकर सदा तुम्हें साक्षात् सम्मुख देखता रहूँ ॥ १ ॥ सबद ॥ जिन जीवों को रात्रि के पिछले प्रहर में परमात्मा की ओर से आह्वान होता है, वे ही प्रभु का नाम लेते हैं । उनके लिए ख़ैमे, छत्र, क़नातें और रथ सदा तैयार रहते हैं अर्थात् उन्हें सम्मान प्राप्त होता है । जो तुम्हारा नाम जपते हैं, उन्हें सम्मुख बुलाकर देता है अर्थात् उनकी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं ॥ १ ॥ ऐ भाई, मैं तो भाग्यहीन, मिथ्या-भोगी हूँ । तुम्हारे नाम के बिना मेरा अज्ञानी और अंधा मन भ्रम में भटकता रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माया द्वारा प्रेरित स्वादों के कारण ही दुःख बढ़े । सुख थोड़े हैं, दुःख अत्यधिक हैं और सारी आयु दुःख में ही बीतती है ॥ २ ॥ जो प्रभु से विलग हैं, उनको इससे अधिक वियोग क्या होगा, और जो परमात्मा से मिले हैं, उनके लिए इससे बड़ा मिलन क्या होगा ? उस परमात्मा की प्रशस्ति कीजिए, जिसने यह समूचा खेल रचा है ॥ ३ ॥ संयोगवश मनुष्य-जन्म में परमात्मा से मिलाप हुआ, किन्तु शरीर धारण करने पर सांसारिक भोगों

की प्रवृत्ति में मिलन भी वियोग में बदल गया। परन्तु, हे नानक, संयोग पुनः भी हो सकता है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ मारू महला १ ॥ मिलि मात पिता पिंडु कमाइआ। तिनि करतै लेखु लिखाइआ। लिखु दाति जोति वडिआई। मिलि माइआ सुरति गवाई ॥ १ ॥ मूरख मन काहे करसहि माणा। उठि चलणा खसमै भाणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तजि साद सहज सुखु होई। घर छडणे रहै न कोई। किछु खाजै किछु धरि जाईऐ। जे बाहुड़ि दुनीआ आईऐ ॥ २ ॥ सजु काइआ पटु हढाए। फुरमाइसि बहुतु चलाए। करि सेज सुखाली सोवै। हथी पउदी काहे रोवै ॥ ३ ॥ घर घुंमणवाणी भाई। पाप पथर तरणु न जाई। भउ बेड़ा जीउ चड़ाऊ। कहु नानक देवै काहू ॥ ४ ॥ २ ॥

माता-पिता के सम्भोग से शरीर प्राप्त किया, उसमें परमात्मा ने अपनी इच्छा के लेख उकेर (लिख) दिए। परमात्मा द्वारा लिखे ये लेख परम-ज्योति और समादर के थे अर्थात् ये ईश्वरीय गुणों के लेख थे, किन्तु मनुष्य ने कर्मानुसार वियोग अर्थात् विलगता को प्राप्त किया और माया के मोह-पाश में बँधकर प्रभु का ज्ञान शेष कर लिया ॥ १ ॥ ऐ मूर्ख मन, तू किस बात का मान करता है ? अन्ततः तुझे ईश्वरेच्छा पर संसार से विदा लेनी ही है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बाहरी स्वादों को छोड़ो, सहजावस्था का आनन्द लो; यह घर तो छोड़ना ही है, इसमें कोई स्थायी नहीं रहता। यदि फिर भी दुनियावी घरों में आना हो, तो उसमें कुछ लाभ लें और शेष बचाकर रखें, ताकि दो बार उसी घर अर्थात् देह में आना ही न पड़े ॥ २ ॥ मनुष्य शरीर रूपी कपड़े को बनाता-सँवारता और दिखावे के आदेश देता है। सुखपूर्वक सेज सजाकर सोता है, किन्तु जब यमदूतों का हाथ उस तक पहुँचता है, तब क्यों रोता है अर्थात् तब रोना ही पड़ता है ॥ ३ ॥ संसार में मनुष्य का घर भँवर है, सिर पर पापों का पत्थर रखकर इस भँवर को तैरकर पार कर सकना पड़ा कठिन है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रेम-भाव रूपी कश्ती में ही जीव संसार के जल-भँवर को पार कर सकता है। किन्तु ध्यान रहे कि यह कश्ती परमात्मा किसी विरले जीव को ही देता है ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ मारू महला १ घरु १ ॥ करणी कागदु मनु मसवाणी बुरा भला दुइ लेख पए। जिउ जिउ किरतु चलाए तिउ चलीऐ तउ गुण नाही अंतु हरे ॥१॥ चित चेतसि की नही बावरिआ।

हरि बिसरत तेरे गुण गलिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जाली रैनि जालु दिनु हूआ जेती घड़ी फाही तेती । रसि रसि चोग चुगहि नित फासहि छूटसि मूड़े कवन गुणी ॥ २ ॥ काइआ आरणु मनु विचि लोहा पंच अगनि तितु लागि रही । कोइले पाप पड़े तिसु ऊपरि मनु जलिआ संन्ही चिंत भई ॥ ३ ॥ भइआ मनूरु कंचनु फिरि होवै जे गुरु मिलै तिनेहा । एकु नामु अंम्रितु ओहु देवै तउ नानक त्रिसटसि देहा ॥ ४ ॥ ३ ॥

हमारा आचरण काग़ज़ है, मन स्याही की दवात है (लिखने का साधन) और उसके द्वारा बुरे-भले दो प्रकार के लेख (आचरण) लिखे जाते हैं। ये लेख हमारा स्वभाव बन जाता है। इस स्वभाव को सुधारने के लिए व्यक्ति को गुण-वृद्धि की अपेक्षा है। परमात्मा गुण-निधि है, उसके गुण अनन्त हैं ॥ १ ॥ ऐ बावरे मन, उसे याद करो, उसके (प्रभु के) विस्मृत करने से जीव के सब गुण नष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हमारे लिए रात और दिन का जाल बिछा है, हर समय हमारे पतन के लिए कोई न कोई बाधा सम्मुख खड़ी ही रहती है। ख़ूब स्वाद ले-लेकर हम दाना चुगते (कर्म करते) और जाल में फँसते हैं। हे मूर्ख, तुम किन गुणों से मुक्त होगे ? ॥ २ ॥ शरीर भट्ठी है, मन लोहा है और काम-क्रोधादि पंचाग्नि में वह जल रहा है। पाप के कोयले पड़-पड़कर मन को जलाते हैं और चिन्ता रूपी पकड़ से उसे उलट-पुलट किया जा रहा है ॥ ३ ॥ यदि सच्चा गुरु मिल जाय, तो वह मन रूपी लोहे को स्वर्ण बना दे। गुरु नानक कहते हैं कि वह ऐसा नामामृत दे, जिससे शरीर स्थिर हो जाय ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ मारू महला १ ॥ बिमल मझारि बससि निरमल जल पदमनि जावल रे । पदमनि जावल जल रस संगति संग दोख नही रे ॥ १ ॥ दादर तू कबहि न जानसि रे । भखसि सिबालु बससि निरमल जल अंम्रितु न लखसि रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बसु जल नित न वसत अलीअल मेर चचा गुन रे । चंद कुमुदनी दूरहु निवससि अनभउ कारनि रे ॥ २ ॥ अंम्रित खंडु दूधि मधु संचसि तू बन चातुर रे । अपना आपु तू कबहु नछोडसि पिसन प्रीति जिउ रे ॥ ३ ॥ पंडित संगि वसहि जन मूरख आगम सास सुने । अपना आपु तू कबहु न छोडसि सुआन पूछि जिउ रे ॥ ४ ॥ इकि पाखंडी नामि न राचहि इकि हरि हरि

चरणी रे। पूरबि लिखिआ पावसि नानक रसना नामु जपि रे॥ ५ ॥ ४ ॥

निर्मल सरोवर में निर्मल जल के भीतर कमल और मेंढक दोनों हैं (अर्थात् मनुष्य के भीतर कमल और मेंढक दोनों प्रकार की प्रवृत्तियाँ हैं), किन्तु कमल मेंढक की संगति में रहकर भी उसके दोषों से मुक्त रहता है ॥ १ ॥ मेंढक कभी नहीं समझ पाता, वह अमृत-जल में बसकर भी सेवार खाता है, अमृत नहीं देखता [अर्थात् मनमुख जीव माया की गंदगी में जीता है, अपने भीतर के अमृत-तत्त्व (हरि-नाम) को नहीं पहचानता] ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेंढक (मनमुख) जल में रहता है (फिर भी कमल के रस का पान नहीं कर पाता, जबकि) भँवरे ऊपर से आकर उसके रस का पान करते हैं। (शुभ जीव दूर से आकर भी सन्तों की संगति में गुण ग्रहण करते हैं, मूर्ख-गँवार जीव संतों के निकट रहकर भी कोई लाभ नहीं उठा पाते।) चाँद को दूर से ही देखकर अपने मधुर अनुभवों के कारण कुमुदिनियाँ शीश झुका लेती हैं (अर्थात् उत्तम जीव सन्त की संगति की आशा से ही प्रसन्न हो उठते हैं) ॥ २ ॥ जल में अपने को चतुर समझनेवाले मेंढक! तुम्हें मालूम ही नहीं कि अमृत, मिश्री, दूध और मधु जैसे मधुर पदार्थ भी आकर्षक खाद्य हैं, तुम तो जोंक की प्रीति की नाईं कभी अपना स्वभाव नहीं भूलते (जैसे थन पर चिपकी जोंक दूध नहीं रक्त का चूषण करती है, जैसे मेंढक कमल का सौरभ-रस-पान करने की अपेक्षा कीचड़ की गंदगी ही खाता है, वैसे ही मनमुख जीव हरि-नामामृत को छोड़कर माया का विष पीता है।) ॥ ३ ॥ पंडित की संगति में रहनेवाला मूर्ख प्रतिदिन वेद-शास्त्र सुनता है, किन्तु (स्वभाव-वश) उससे शिक्षा ग्रहण नहीं करता, ठीक इसी प्रकार मनमुख जीव अपना स्वभाव नहीं त्यागता, उसकी गति कुत्ते की दुम-सरीखी होती है (जो कभी सीधी नहीं होती) ॥ ४ ॥ (संसार में) कोई पाखण्डी जीवन व्यतीत करता है और हरि-नाम नहीं जपता, कोई हरि-चरणों में ही अपनी गति मानता है; गुरु नानक कहते हैं कि सब कर्मानुकूल फल पाते हैं, इसलिए (हर समय) प्रभु का नाम जपो ॥ ५ ॥ ४ ॥

॥ मारू महला १ ॥ सलोकु ॥ पतित पुनीत असंख होहि हरि चरनी मनु लाग। अठसठि तीरथ नामु प्रभ नानक जिसु मसतकि भाग ॥ १ ॥ सबदु ॥ सखी सहेली गरबि गहेली। सुणि सह की इक बात सुहेली ॥ १ ॥ जो मै बेदन सा किसु आखा माई। हरि बिनु जीउ न रहै कैसे राखा माई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउ दोहागणि खरी रंञाणी। गइआ सु जोबनु धन पछुताणी ॥ २ ॥ तू दाना साहिबु सिरि मेरा। खिजमति

करी जनु बंदा तेरा ।। ३ ।। भणति नानकु अंदेशा एही । बिनु दरसन कैसे रवउ सनेही ।। ४ ।। ५ ।।

प्रभु के चरणों में मन लगाने से असंख्य पतित जीव भी पवित्र होते हैं । जिनका भाग्य उज्ज्वल है, नानक कहते हैं, उनके लिए प्रभु-नाम अड़सठ तीर्थों के पुण्य के बराबर है ।। १ ।। सबदु ।। हे अहंकारमयी सखी, पति-प्रभु की सुखदायी बातें सुनो ।। १ ।। हे माँ, अपनी पीड़ा किससे कहूँ, प्रभु के बिना प्राण नहीं रहते, कैसे बचाऊँ ? ।। १ ।। रहाउ ।। मैं प्रभु-पति के वियोग में अत्यन्त दु:खी हूँ, मेरी स्थिति गत-यौवना स्त्री की नाईं है, मुझे यही पछतावा है ।। २ ।। तुम, हे प्रभु, सुमेरु से भी ऊँचे हो, महान् हो; मैं तो तुम्हारी सेवा में दास-मात्र हूँ ।। ३ ।। गुरु नानक कहते हैं कि चिन्ता यही है कि तुम्हारे दर्शनों के बिना मैं तुम्हारे प्रेम-रस का भोग कैसे करूँ ? ।। ४ ।। ५ ।।

।। मारू महला १ ।। मुल खरीदी लाला गोला मेरा नाउ सभागा । गुर की बचनी हाटि बिकाना जितु लाइआ तितु लागा ।। १ ।। तेरे लाले किआ चतुराई । साहिब का हुकमु न करणा जाई ।। १ ।। रहाउ ।। मा लाली पिउ लाला मेरा हउ लाले का जाइआ । लाली नाचै लाला गावै भगति करउ तेरी राइआ ।। २ ।। पीअहि त पाणी आणी मीरा खाहि त पीसण जाउ । पखा फेरी पैर मलोवा जपत रहा तेरा नाउ ।। ३ ।। लूणहरामी नानकु लाला बखसिहि तुधु वडिआई । आदि जुगादि दइआपति दाता तुधु विणु मुकति न पाई ।।४।।६।।

मैं तो प्रभु का मोल लिया दास हूँ और तुम्हारी सेवा में भाग्यशाली हो गया हूँ । गुरु के उपदेश से मैं बाज़ार में बिका हूँ (अर्थात् अपने को सेवक बनाया है); गुरु ने जिधर मुझे लगाया, मैं उधर ही लगा हूँ ।। १ ।। दास का चातुर्य ही क्या? मैं तो तुम्हारा आदेश भी ठीक से पालन नहीं कर पाता ।। १ ।। रहाउ ।। मेरी माता तुम्हारी दासी थी, मेरा पिता भी दास था और मैं उन दासों की सन्तान हूँ (अर्थात् मेरा संस्कार ही तुम्हारी दासता का है)। हे मेरे महाराज, मैं तो उस परिवार से हूँ, जहाँ मेरे माता-पिता दासी-दास बनकर तुम्हारी भक्ति में नाचते-गाते रहे हैं ।। २ ।। हे मालिक, तुम्हें प्यास हो तो पानी लाऊँ, तुम खाओ तो पीसने बैठूँ (अर्थात् जो तुम कहो, मुझे वही कार्य करना है) । तुम्हारी सेवा में पंखा हिलाऊँ, तुम्हारे चरण मल दूँ और सदैव तुम्हारा नाम जपता रहूँ ।। ३ ।। गुरु नानक कहते हैं कि मैं तो नमकहराम दास हूँ, तुम यदि कृपापूर्वक मेरे

अवगुणों को क्षमा कर दो, तो यह तुम्हारा बड़प्पन है। तुम्हीं आदि-अनादि दया के स्वामी हो, तुम्हारे बिना मुझे मुक्ति नहीं मिल सकती ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ मारू महला १ ॥ कोई आखै भूतना को कहै बेताला। कोई आखै आदमी नानकु वेचारा ॥ १ ॥ भइआ दिवाना साह का नानकु बउराना। हउ हरि बिनु अवरु न जाना ॥१॥ रहाउ ॥ तउ देवाना जाणीऐ जा भै देवाना होइ। एकी साहिब बाहरा दूजा अवरु न जाणै कोइ ॥ २ ॥ तउ देवाना जाणीऐ जा एका कार कमाइ। हुकमु पछाणै खसम का दूजी अवर सिआणप काइ ॥ ३ ॥ तउ देवाना जाणीऐ जा साहिब धरे पिआरु। मंदा जाणै आप कउ अवरु भला संसारु ॥४॥७॥

(गुरु नानक अपने सम्बन्ध में कहते हैं,) बेचारे नानक को कोई प्रेत कहता है, कोई बेताल और कोई आदमी कह देता है ॥ १ ॥ (वास्तव में) नानक तो अपने परमात्मा का दीवाना है; उसी के लिए पागल है, परमात्मा के अतिरिक्त अन्य किसी को नहीं जानता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो परमात्मा के भय में पगला जाय, उसी को दीवाना समझना चाहिए। वह (ऐसा दीवाना) मालिक से बाहर अन्य कुछ भी नहीं जाना ॥ २ ॥ तभी किसी को दीवाना समझो, जब वह एक ही में लीन हो; बस अपने मालिक के आदेश का पालन करे, अन्य कोई योग्यता किस काम की ? ॥ ३ ॥ तभी (उसे) दीवाना समझो, जब (वह) परमात्मा के प्रेम में ही रत रहे और अपने को बुरा तथा संसार को भला कहता रहे। (पद में गुरुजी ने ईश्वर-प्रेम में रत सच्चे दीवाने का स्वरूप बताया है।) ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ मारू महला १ ॥ इहु धनु सरब रहिआ भरपूरि। मनमुख फिरहि सि जाणहि दूरि ॥ १ ॥ सो धनु वखरु नामु रिदै हमारै। जिसु तू देहि तिसै निसतारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ न इहु धनु जलै न तसकरु लै जाइ। न इहु धनु डूबै न इसु धन कउ मिलै सजाइ ॥ २ ॥ इसु धन की देखहु वडिआई। सहजे माते अनदिनु जाई ॥ ३ ॥ इक बात अनूप सुनहु नर भाई। इसु धन बिनु कहहु किनै परम गति पाई ॥ ४ ॥ भणति नानकु अकथ की कथा सुणाए। सतिगुरु मिलै त इहु धनु पाए ॥ ५ ॥ ८ ॥

हरि-नाम रूपी धन सर्वत्र व्याप्त है, किन्तु मनमुख (स्वेच्छाचारी) जीव इसे दूर मानते (और इधर-उधर भटकते फिरते) हैं॥ १ ॥ हरि-नाम

रूपी सामग्री का हृदय में बसना ही हमारा धन है; जिसे परमात्मा यह धन देता है, वह मुक्त हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह धन न आग में नष्ट होता है और न इसे चोर-डाकू ले जा सकते हैं। इस धन के नष्ट होने से न दीवालिया पिटता है और न ही इसके कारण कोई दण्ड-विधान बनता है ॥ २ ॥ इस धन की महानता यह है कि धनी का प्रत्येक दिन सहज की मस्ती में बीतता है ॥ ३ ॥ ऐ मनुष्य, (इसके सम्बन्ध में) एक अनुपम बात सुनो ! भला कहो, इस धन के बिना कौन परमगति को प्राप्त कर सका है ! ॥ ४ ॥ गुरु नानक अकथ ब्रह्म की अनिर्वचनीय कथा कहते हुए बताते हैं कि यदि मनुष्य को सच्चा गुरु प्राप्त हो, तभी वह इस धन को पा सकता है ॥ ५ ॥ ८ ॥

॥ मारु महला १ ॥ सूर सरु सोसि लै सोम सरु पोखि लै जुगति करि मरतु सु सनबंधु कीजै। मीन की चपल सिउ जुगति मनु राखीऐ उडै नह हंसु नह कंधु छीजै ॥ १ ॥ मूड़े काइचे भरमि भुला। नह चीनिआ परमानंदु बैरागी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अजर गहु जारि लै अमर गहु मारि लै भ्राति तजि छोडि तउ अपिउ पीजै। मीन की चपल सिउ जुगति मनु राखीऐ उडै नह हंसु नह कंधु छीजै ॥ २ ॥ भणति नानकु जनो रवै जे हरि मनो मन पवन सिउ अंम्रितु पीजै। मीन की चपल सिउ जुगति मनु राखीऐ उडै नह हंसु नह कंधु छीजै ॥ ३ ॥ ९ ॥

ऐ मनुष्य, तमोगुणी स्वभाव को सुखा दो, सतोगुण का पोषण करो, और इस प्रकार युक्तिपूर्वक जीवित मृत्यु को पाने का आयोजन करो। (इड़ा-पिंगला से होते हुए सुषुम्ना में प्राण स्थिर करो और इस प्रकार जीवन-मुक्ति पाओ।) इस युक्ति से मछली की-सी चपलता वाले मन को संयत किया जा सकता है, जिससे (आवागमन छूट जाता है) न आत्मा मरती है, न शरीर गिरता है ॥ १ ॥ ऐ मूर्ख, तुम किस भ्रम में भटक रहे हो, निर्लिप्त और परम आनन्दस्वरूप परमात्मा को नहीं पहचानते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चिर-यौवना माया को पकड़कर जला दो, अमर मोह को मार दो, भ्रांतियों का त्याग कर हरि-नाम रूपी अमृत-रस का पान करो। इस युक्ति से मछली की-सी चपलता वाले मन को संयत किया जा सकता है, जिससे न आत्मा मरती है, न शरीर गिरता है ॥ २ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि जो जन श्वास-श्वास इस अमृत का पान करते (हरि-नाम जपते) हैं, वे इस युक्ति से मछली की-सी चपलता वाले मन को संयत कर लेते हैं, जिससे न उनकी आत्मा मरती है, न शरीर गिरता है ॥ ३ ॥ ९ ॥

॥ मारू महला १ ॥ माइआ मुई न मनु मुआ सरु लहरी मै मतु । बोहिथु जल सिरि तरि टिकै साचा वखरु जितु । माणकु मन महि मनु मारसी सचि न लागै कतु । राजा तखति टिकै गुणी भै पंचाइण रतु ॥ १ ॥ बाबा साचा साहिबु दूरि न देखु । सरब जोति जगजीवना सिरि सिरि साचा लेखु ॥१॥ रहाउ ॥ ब्रहमां बिसनु रिखी मुनी संकरु इंदु तपै भेखारी । मानै हुकमु सोहै दरि साचै आकी मरहि अफारी । जंगम जोध जती संनिआसी गुरि पूरै वीचारी । बिनु सेवा फलु कबहु न पावसि सेवा करणी सारी ॥ २ ॥ निधनिआ धनु निगुरिआ गुरु निमाणिआ तू माणु । अंधुलै माणकु गुरु पकड़िआ निताणिआ तू ताणु । होम जपा नही जाणिआ गुरमती साचु पछाणु । नाम बिना नाही दरि ढोई झूठा आवण जाणु ॥ ३ ॥ साचा नामु सलाहीऐ साचे ते त्रिपति होइ । गिआन रतनि मनु माजीऐ बहुड़ि न मैला होइ । जब लगु साहिबु मनि वसै तब लगु बिघनु न होइ । नानक सिरु दे छुटीऐ मनि तनि साचा सोइ ॥ ४ ॥ १० ॥

मोह-माया और मन की चंचलता का कोई अन्त नहीं, और इस संसार-सागर में भयंकर तूफ़ान उठ रहे हैं। शरीर रूपी जहाज़ उस पर तभी टिका रह सकता है, यदि उसमें सत्य (नाम) का सौदा भरा होगा अर्थात् मोह-माया की उत्ताल तरंगों में हरि-नाम से भरा शरीर ही बचेगा। हरि-नाम रूपी माणिक्य, जो भीतर ही है, मन को वश करता है और नाम की सत्यता के कारण शरीर रूपी जहाज़ में कोई छिद्र भी पैदा नहीं होता। जीवात्मा (राजा) वाहिगुरु की कृपा से पाँचों गुणों का अर्जन (सत्य, सन्तोष, दया, धर्म और धीरज) करता है और उन्हीं गुणों के कारण वह सिंहासनासीन (महत्त्वयुक्त) रहता है ॥ १ ॥ ऐ लोगो, सच्चे परमात्मा को अपने से दूर मत समझो, सबमें जगजीवन (परमात्मा) की ज्योति विद्यमान है और प्रत्येक के मस्तक पर कर्मों का आलेख मौजूद है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, महेश (देवता) और ऋषि, मुनि, इन्द्र, तपस्वी और अवधूत, इनमें से जो भी प्रभु के हुक्म में चलता है, वही सच्चे प्रभु के दरबार में सम्मानित होता है। अधिकार के अहम् में अकड़फूँ करनेवाले जन्म-मरण में पड़े रहेंगे। सच्चे गुरु के आदेश से ही पता चलता है कि योगी, योद्धा, यती, संन्यासी आदि प्रभु-सेवा के बिना फल के अधिकारी नहीं बनते, अतः सेवा करना ही श्रेष्ठ उपलब्धि है ॥ २ ॥ हे परमात्मा, तुम धनहीनों के धन,

गुरुहीनों के लिए गुरु और अनाथों के नाथ हो। मैं अज्ञानी, अंधे ने गुरु का दामन पकड़ा है, वही निराश्रितों का आश्रय है। होम या जप करने वाले प्रभु के स्वरूप को नहीं पहचानते, केवल गुरु के उपदेश से ही परमात्मा की जानकारी मिलती है। हरि-नाम के बिना किसी को प्रभु के दरबार में स्थान प्राप्त नहीं होता, मिथ्यापन में आवागमन में ही रहना होता है॥ ३॥ मन सच्चे हरि-नाम का गुण गाओ, उसी में तृप्ति है। यदि ज्ञान-रत्न से मन को माँज लिया जाय, तो वह पुनः मैला नहीं होता। जब तक मन में परमात्मा का ध्यान बना रहता है, जीव को कोई विघ्न नहीं होता। गुरु नानक कहते हैं कि जिनके मन-तन में सच्चा प्रभु बसता है, वे ही आत्मार्पण द्वारा मुक्ति-लाभ करते हैं॥ ४॥ १०॥

॥ मारू महला १॥ जोगी जुगति नामु निरमाइलु ता कै मैलु न राती। प्रीतम नाथु सदा सचु संगे जनम मरण गति बीती॥ १॥ गुसाई तेरा कहा नामु कैसे जाती। जा तउ भीतरि महलि बुलावहि पूछउ बात निरंती॥ १॥ रहाउ॥ ब्रहमणु ब्रहमु गिआन इसनानी हरि गुण पूजे पाती। एको नामु एकु नाराइणु त्रिभवण एका जोती॥ २॥ जिहवा डंडी इहु घटु छाबा तोलउ नामु अजाची। एको हाटु साहु सभना सिरि वणजारे इक भाती॥ ३॥ दोवै सिरे सतिगुरू निबेड़े सो बूझै जिसु एक लिव लागी जीअहु रहै निभराती। सबदु वसाए भरमु चुकाए सदा सेवकु दिनु राती॥ ४॥ ऊपरि गगनु गगन परि गोरखु ता का अगमु गुरू पुनि वासी। गुर बचनी बाहरि घरि एको नानकु भइआ उदासी॥ ५॥ ११॥

जो योगी निर्मल हरि-नाम की युक्ति करता है, उसमें रत्ती भर भी मलिनता नहीं रह जाती। प्रियतम परमात्मा का परमसत्य जिसके संग है, उसकी जन्म-मरण की गति समाप्त हो जाती है॥ १॥ हे स्वामी, तुम्हारा नाम कैसा है और क्योंकर जाना जा सकता है; यदि तुम भीतर प्रवेश करने की आज्ञा दो, तो मैं अभेदता की बात पूछूँ!॥ १॥ रहाउ॥ ब्राह्मण वह है, जो ब्रह्म-ज्ञान रूपी स्नान करता है और हरिगुण-गान रूपी पत्र-पुष्प से पूजा करता है; जो एक ही प्रभु-नाम को जपता और त्रिभुवन में एक परमात्मा की ज्योति को ही मानता है॥ २॥ जिह्वा की डण्डी पर हृदय के पलड़ों से अतोल हरि-नाम को तोलो (अर्थात् हृदय-कमल पर स्थिर होकर जिह्वा से हरि-नाम का जाप करो)। परमात्मा का द्वार दुकान है, जिसका स्वामी वह प्रभु स्वयं है, सब एक भाँति के गुरुमुख बनजारे वहीं

एकत्रित होते हैं ।। ३ ।। लोक-परलोक, दोनों सिरों को सतिगुरु ही निपटाता है; इस तथ्य की जानकारी केवल वही पाता है, जो भ्रम-रहित होकर एक परमात्मा में तल्लीन होता है या जो मन में गुरु-शब्दों को धारण करता एवं भ्रमजाल को तोड़कर दिन-रात सेवा में रत होता है ।। ४ ।। सर्वोपरि गगन (दशम द्वार) है, वहाँ आत्मा रूपी गोरख का निवास है, और परमात्मा रूपी परमगुरु भी वहीं आत्मा का सहवासी है । गुरु नानक कहते हैं कि वहाँ जीव के लिए घर और बाहर एक समान स्थिति में होते हैं, जिसके कारण वह वास्तव में उदासी बन जाता है ।। ५ ।। ११ ।।

रागु मारू महला १ घरु ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। अहिनिसि जागै नीद न सोवै । सो जाणै जिसु वेदन होवै । प्रेम के कान लगे तन भीतरि वैदु कि जाणै कारी जीउ ।। १ ।। जिसनो साचा सिफती लाए । गुरमुखि विरले किसै बुझाए । अंम्रित की सार सोई जाणै जि अंम्रित का वापारी जीउ ।। १ ।। रहाउ ।। पिर सेती धन प्रेमु रचाए । गुर कै सबदि तथा चितु लाए । सहज सेती धन खरी सुहेली त्रिसना तिखा निवारी जीउ ।। २ ।। सहसा तोड़े भरमु चुकाए । सहजे सिफती धणखु चड़ाए । गुर कै सबदि मरै मनु मारे सुंदरि जोगा धारी जीउ ।। ३ ।। हउमै जलिआ मनहु विसारे । जमपुरि वजहि खड़ग करारे । अब कै कहिऐ नामु न मिलई तू सहु जीअड़े भारी जीउ ।। ४ ।। माइआ ममता पवहि खिआली । जमपुरि फासहिगा जमजाली । हेत के बंधन तोड़ि न साकहि ता जमु करे खुआरी जीउ ।। ५ ।। ना हउ करता ना मै कीआ । अंम्रितु नामु सतिगुरि दीआ । जिसु तू देहि तिसै किआ चारा नानक सरणि तुमारी जीउ ।।६।।१।।१२।।

(प्रेम की पीड़ा पानेवाला जीव) रात-दिन जाग्रतावस्था में रहता है, कभी अज्ञानता की निद्रा नहीं सोता; जो जीव प्रेम के तीरों से घायल है, वैद्य उसका क्या निदान करेगा, वही जानता है, जिसके शरीर को तीर का आघात पहुँचता है ।। १ ।। वह सच्चा प्रभु जिसे अपने गुणगान में लगाता है, (उसकी महिमा) कोई विरला गुरुमुख ही समझता है, क्योंकि अमृत का व्यापारी ही अमृत के महत्त्व को जानता है अर्थात् प्रेमी ही प्रेम का मोल जानता है ।। १ ।। रहाउ ।। जैसे स्त्री अपने पति के संग प्रेम रचाती है, वैसे ही

जीव भी गुरु के शब्दों में मन रमाए। तब वह जीव-स्त्री पूर्ण आनन्द को पाकर सुखी होती है और उसकी तृष्णाओं की प्यास मिट जाती है ।। २ ।। जीव सब शंकाओं को दूर करके भ्रम को मिटा ले, तो सहज में ही हरि-यश के धनुष का चिल्ला चढ़ाए अर्थात् सामान्य प्रवृत्ति से (विशेष यत्न से नहीं) यश में तत्पर रहता है। वह गुरु के उपदेशानुसार मन को मारे और इस प्रकार के सुन्दर योग का आधार ले ।। ३ ।। अहंकार की जलन में जो मन से (प्रभु-नाम को) विस्मृत करे, वह यमपुर में खड्ग से कठोर दण्ड का भागी होता है। मार पड़ते समय माँगने से हरि-नाम नहीं मिलता, तब तो, ऐ जीव, तुझे दण्ड सहन करना ही पड़ेगा ।। ४ ।। मनुष्य मोह-माया के विचारों में संलग्न होता है, (परिणामस्वरूप) यमपुर के फंदों में फँसता है; वह मोह के बंधन नहीं तोड़ पाता, जिसके कारण यमराज उसे तंग करता है ।। ५ ।। न मैंने पहले कुछ किया है और न ही अब कर रहा हूँ, यह अमृतमय हरि-नाम तो सतिगुरु ने कृपापूर्वक मुझे दिया है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसे, हे प्रभु, तुम देते हो, उसे अन्य प्रयास की ज़रूरत ही क्या है ? वह तो तुम्हारी शरण में आ गया है (जैसा चाहो, वैसा निदान करो) ।। ६ ।। १ ।। १२ ।।

मारू महला ३ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। जह बैसालहि तह बैसा सुआमी जह भेजहि तह जावा। सभ नगरी महि एको राजा सभे पवितु हहि थावा ।। १ ।। बाबा देहि वसा सच गावा। जा ते सहजे सहजि समावा ।। १ ।। रहाउ ।। बुरा भला किछु आपस ते जानिआ एई सगल विकारा। इहु फुरमाइआ खसम का होआ वरतै इहु संसारा ।। २ ।। इंद्री धातु सबल कहीअत है इंद्री किस ते होई। आपे खेल करै सभि करता ऐसा बूझै कोई ।।३।। गुरपरसादी एक लिव लागी दुबिधा तदे बिनासी। जो तिसु भाणा सो सति करि मानिआ काटी जम की फासी ।। ४ ।। भणति नानकु लेखा मागै कवना जा चूका मनि अभिमाना। तासु तासु धरमराइ जपतु है पए सचे की सरना ।। ५ ।। १ ।।

हे मेरे मालिक, तुम जहाँ बिठाओगे, वहीं बैठूंगा; जहाँ भेजोगे, वहीं जाऊँगा। समूची सृष्टि का एक ही मालिक है और उसकी बनायी प्रत्येक जगह पवित्र है ।। १ ।। बाबा, मुझे तो कोई ऐसी सत्संगति में बसा ले,

एकत्रित होते हैं ॥ ३ ॥ लोक-परलोक, दोनों सिरों को सतिगुरु ही निपटाता है; इस तथ्य की जानकारी केवल वही पाता है, जो भ्रम-रहित होकर एक परमात्मा में तल्लीन होता है या जो मन में गुरु-शब्दों को धारण करता एवं भ्रमजाल को तोड़कर दिन-रात सेवा में रत होता है ॥ ४ ॥ सर्वोपरि गगन (दशम द्वार) है, वहाँ आत्मा रूपी गोरख का निवास है, और परमात्मा रूपी परमगुरु भी वहीं आत्मा का सहवासी है। गुरु नानक कहते हैं कि वहाँ जीव के लिए घर और बाहर एक समान स्थिति में होते हैं, जिसके कारण वह वास्तव में उदासी बन जाता है ॥ ५ ॥ ११ ॥

रागु मारू महला १ घरु ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ अहिनिसि जागै नीद न सोवै। सो जाणै जिसु वेदन होवै। प्रेम के कान लगे तन भीतरि वैदु कि जाणै कारी जीउ ॥ १ ॥ जिसनो साचा सिफती लाए। गुरमुखि विरले किसै बुझाए। अंम्रित की सार सोई जाणै जि अंम्रित का वापारी जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पिर सेती धन प्रेमु रचाए। गुर कै सबदि तथा चितु लाए। सहज सेती धन खरी सुहेली त्रिसना तिखा निवारी जीउ ॥ २ ॥ सहसा तोड़े भरमु चुकाए। सहजे सिफती धणखु चड़ाए। गुर कै सबदि मरै मनु मारे सुंदरि जोगा धारी जीउ ॥ ३ ॥ हउमै जलिआ मनहु विसारे। जमपुरि वजहि खड़ग करारे। अब कै कहिऐ नामु न मिलई तू सहु जीअड़े भारी जीउ ॥ ४ ॥ माइआ ममता पवहि खिआली। जमपुरि फासहिगा जमजाली। हेत के बंधन तोड़ि न साकहि ता जमु करे खुआरी जीउ ॥ ५ ॥ ना हउ करता ना मै कीआ। अंम्रितु नामु सतिगुरि दीआ। जिसु तू देहि तिसै किआ चारा नानक सरणि तुमारी जीउ ॥६॥१॥१२॥

(प्रेम की पीड़ा पानेवाला जीव) रात-दिन जाग्रतावस्था में रहता है, कभी अज्ञानता की निद्रा नहीं सोता; जो जीव प्रेम के तीरों से घायल है, वैद्य उसका क्या निदान करेगा, वही जानता है, जिसके शरीर को तीर का आघात पहुँचता है ॥ १ ॥ वह सच्चा प्रभु जिसे अपने गुणगान में लगाता है, (उसकी महिमा) कोई विरला गुरुमुख ही समझता है, क्योंकि अमृत का व्यापारी ही अमृत के महत्त्व को जानता है अर्थात् प्रेमी ही प्रेम का मोल जानता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे स्त्री अपने पति के संग प्रेम रचाती है, वैसे ही

जीव भी गुरु के शब्दों में मन रमाए। तब वह जीव-स्त्री पूर्ण आनन्द को पाकर सुखी होती है और उसकी तृष्णाओं की प्यास मिट जाती है ॥ २ ॥ जीव सब शंकाओं को दूर करके भ्रम को मिटा ले, तो सहज में ही हरि-यश के धनुष का चिल्ला चढ़ाए अर्थात् सामान्य प्रवृत्ति से (विशेष यत्न से नहीं) यश में तत्पर रहता है। वह गुरु के उपदेशानुसार मन को मारे और इस प्रकार के सुन्दर योग का आधार ले ॥ ३ ॥ अहंकार की जलन में जो मन से (प्रभु-नाम को) विस्मृत करे, वह यमपुर में खड्ग से कठोर दण्ड का भागी होता है। मार पड़ते समय माँगने से हरि-नाम नहीं मिलता, तब तो, ऐ जीव, तुझे दण्ड सहन करना ही पड़ेगा ॥ ४ ॥ मनुष्य मोह-माया के विचारों में संलग्न होता है, (परिणामस्वरूप) यमपुर के फंदों में फँसता है; वह मोह के बंधन नहीं तोड़ पाता, जिसके कारण यमराज उसे तंग करता है ॥ ५ ॥ न मैंने पहले कुछ किया है और न ही अब कर रहा हूँ, यह अमृतमय हरि-नाम तो सतिगुरु ने कृपापूर्वक मुझे दिया है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसे, हे प्रभु, तुम देते हो, उसे अन्य प्रयास की ज़रूरत ही क्या है? वह तो तुम्हारी शरण में आ गया है (जैसा चाहो, वैसा निदान करो) ॥ ६ ॥ १ ॥ १२ ॥

मारू महला ३ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जह बैसालहि तह बैसा सुआमी जह भेजहि तह जावा। सभ नगरी महि एको राजा सभे पवितु हहि थावा ॥ १ ॥ बाबा देहि वसा सच गावा। जा ते सहजे सहजि समावा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बुरा भला किछु आपस ते जानिआ एई सगल विकारा। इहु फुरमाइआ खसम का होआ वरतै इहु संसारा ॥ २ ॥ इंद्री धातु सबल कहीअत है इंद्री किस ते होई। आपे खेल करै सभि करता ऐसा बूझै कोई ॥ ३ ॥ गुरपरसादी एक लिव लागी दुबिधा तदे बिनासी। जो तिसु भाणा सो सति करि मानिआ काटी जम की फासी ॥ ४ ॥ भणति नानकु लेखा मागै कवना जा चूका मनि अभिमाना। तासु तासु धरमराइ जपतु है पए सचे की सरना ॥ ५ ॥ १ ॥

हे मेरे मालिक, तुम जहाँ बिठाओगे, वहीं बैठूँगा; जहाँ भेजोगे, वहीं जाऊँगा। समूची सृष्टि का एक ही मालिक है और उसकी बनायी प्रत्येक जगह पवित्र है ॥ १ ॥ बाबा, मुझे तो कोई ऐसी सत्संगति में बसा ले,

जिसके कारण स्वतः ही मैं सहजावस्था में समा जाऊँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बुरे-भले की जानकारी से ही आत्मीयता विचारों का कारण बनती है। यह समूचा संसार प्रभु की इच्छा से बँधा है ॥ २ ॥ काम-क्रोधादि वासनाओं के बीच लोक-मानस इन्द्रिय-रस और वीर्य को सबल कहता है, किन्तु इन्द्रियाँ कहाँ से हुईं ? (सच तो यह है कि) परमात्मा स्वयं ही यह खेल खेलता है; ऐसा ज्ञान प्राप्त कर लेनेवाला व्यक्ति कोई विरला ही होता है ॥ ३ ॥ गुरु की कृपा से जीव का प्रेम प्रभु में होता है और उसकी दुबिधाएँ नष्ट हो जाती हैं। उसकी इच्छा को सर्वोपरि मान लेने से ही यमराज की फाँसी से छुटकारा होता है ॥ ४ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि जब मन से अहंकार ही चुक गया, तो अब कौन लेखा मान सकता है ? हमने ऐसे परम सत्य की शरण ली है कि जिसकी उपस्थिति में स्वयं धर्मराज भी त्राहिमाम् पुकारता है ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ आवण जाणा ना थीऐ निज घरि वासा होइ। सचु खजाना बखसिआ आपे जाणै सोइ ॥ १ ॥ ए मन हरि जीउ चेति तू मनहु तजि विकार। गुर कै सबदि धिआइ तू सचि लगी पिआरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐथै नावहु भुलिआ फिरि हथु किथाऊ न पाइ। जोनी सभि भवाईअनि बिसटा माहि समाइ ॥ २ ॥ वडभागी गुरु पाइआ पूरबि लिखिआ माइ। अनदिनु सची भगति करि सचा लए मिलाइ ॥ ३ ॥ आपे स्रिसटि सभ साजीअनु आपे नदरि करेइ। नानक नामि वडिआईआ जै भावै तै देइ ॥ ४ ॥ २ ॥

उस जीव का आवागमन चुक जाता है, वह अपने प्रभु की शरण (असली घर) में निवास करता है; जिसे परमात्मा सत्य-निधि (हरि-नाम) सौंपता है, वही इस तथ्य को जानता है ॥ १ ॥ हे मन, तुम विकारों का त्याग कर हरि-नाम का स्मरण करो; सच्चे परमात्मा से प्यार करते हुए गुरु के शब्दों की उपासना करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस जन्म में यदि परमात्मा का नाम भुलाया, तो कहीं अन्यत्र हाथ नहीं लगेगा। (तब जीव चौरासी लाख) योनियों में भ्रमता रह जायगा और गन्दगी में समाएगा ॥ २ ॥ हे भाई, पूर्व लिखे प्रारब्धानुसार भाग्यशाली जीवों को सतिगुरु प्राप्त हुआ है, वे रात-दिन प्रभु की सच्ची भक्ति करते हैं और अन्ततः उसी में विलीन हो जाते हैं ॥ ३ ॥ (परमात्मा ने) स्वयं ही समूची सृष्टि रची है, वही स्वयं सब पर कृपा-दृष्टि रखता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम जपने पर ही सम्मान मिलता है; जैसा रुचता है, वैसा वह करता है (जिसे चाहता है, उसे वह सम्मान देता है) ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ पिछले गुनह बखसाइ जीउ अब तू मारगि पाइ । हरि की चरणी लागि रहा विचहु आपु गवाइ ॥१॥ मेरे मन गुरमुखि नामु हरि धिआइ । सदा हरि चरणी लागि रहा इक मनि एकै भाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ना मै जाति न पति है ना मै थेहु न थाउ । सबदि भेदि भ्रमु कटिआ गुरि नामु दीआ समुझाइ ॥ २ ॥ इहु मनु लालच करदा फिरै लालचि लागा जाइ । धंधै कूड़ि विआपिआ जमपुरि चोटा खाइ ॥ ३ ॥ नानक सभु किछु आपे आपि है दूजा नाही कोइ । भगति खजाना बखसिओनु गुरमुखा सुखु होइ ॥ ४ ॥ ३ ॥

गत पापों को क्षमा करवाकर अब तुम सही रास्ते पर चलते हो। भीतर से अहंभाव को दूर कर तुम अब हरि-चरणों की शरण में लगे हो ॥ १ ॥ मेरे मन, तुम गुरु के आदेशानुसार परमात्मा के नाम की आराधना करो। सदा एकाग्रचित्त और एक-भाव होकर परमात्मा के चरणों में लगे रहो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरी जाति ऊँची नहीं थी, मेरा कोई सम्मान नहीं था, न ही मेरी कोई पहचान या स्थान था, किन्तु गुरु द्वारा नाम-रहस्य समझा दिया जाने पर मेरे सब भ्रम दूर हो गए ॥ २ ॥ यह मन तो लालची है, लोभीवत् इधर-उधर मारा-मारा फिरता है। मिथ्या धंधों में चोट खाता है और अन्ततः यमपुर में तिरस्कृत होता है ॥३॥ गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा सब कुछ स्वयं ही है, दूसरा अन्य कोई नहीं। गुरुमुख को वह भक्ति रूपी सम्पत्ति प्रदान करता है, जो परम सुख का आधार है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ सचि रते से टोलि लहु से विरले संसारि । तिन मिलिआ मुखु उजला जपि नामु मुरारि ॥ १ ॥ बाबा साचा साहिबु रिदै समालि । सतिगुरु अपना पुछि देखु लेहु वखरु भालि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इकु सचा सभ सेवदी धुरि भागि मिलावा होइ । गुरमुखि मिले से न विछुड़हि पावहि सचु सोइ ॥ २ ॥ इकि भगती सार न जाणनी मनमुख भरमि भुलाइ । ओना विचि आपि वरतदा करणा किछू न जाइ ॥३॥ जिसु नालि जोरु न चलई खले कीचै अरदासि । नानक गुरमुखि नामु मनि वसै ता सुणि करे साबासि ॥ ४ ॥ ४ ॥

संसार में ऐसे लोग विरले ही हैं, जो सत्य के प्यार में रँगे हैं, चाहे ढूँढ़कर देख लो। ऐसे (मुक्त जीवों के) मिलाप से मुख उज्ज्वल होता

है, वे प्रभु का नाम जपते हैं ॥ १ ॥ बाबा, सच्चे परमात्मा को सदा मन में याद करो। अपने गुरु से पूछ-परखकर (हरि-नाम का) सौदा कर लो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सारी सृष्टि एक उसी परमात्मा की उपासना करती है, प्रारब्ध में ही लिखा हो, तो उससे (प्रभु से) मिलाप होता है। जो जीव गुरु के माध्यम से अग्रसर होते हैं, वे कभी वियुक्त नहीं रहते, परम सत्य को प्राप्त कर लेते हैं ॥ २ ॥ मनमुख जीव भ्रमों में भटकते रहते हैं, भक्ति का सही स्वरूप नहीं पहचानते। उस स्थिति में परमात्मा की इच्छा बली है, कुछ किया नहीं जा सकता ॥ ३ ॥ जिसके सम्मुख मनुष्य का बल शेष हो जाय, उसके सामने तो विनती ही करनी चाहिए। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा जिसके मन में हरि-नाम बस जाता है, उसी को शाबाश है (अर्थात् वह प्रशंसनीय है) ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ मारू ते सीतलु करे मनूरहु कंचनु होइ। सो साचा सालाहीऐ तिसु जेवडु अवरु न कोइ ॥ १ ॥ मेरे मन अनदिनु धिआइ हरि नाउ। सतिगुर कै बचनि अराधि तू अनदिनु गुण गाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि एको जाणीऐ जा सतिगुरु देइ बुझाइ। सो सतिगुरु सालाहीऐ जिदू एह सोझी पाइ ॥ २ ॥ सतिगुरु छोडि दूजै लगे किआ करनि अगै जाइ। जमपुरि बधे मारीअहि बहुती मिलै सजाइ ॥ ३ ॥ मेरा प्रभु वेपरवाहु है ना तिसु तिलु न तमाइ। नानक तिसु सरणाई भजि पउ आपे बखसि मिलाइ ॥ ४ ॥ ५ ॥

उस परमात्मा की स्तुति करो, जिससे बड़ा और कोई नहीं, जो परितप्त (हृदय) को शीतल तथा लोहे को कंचन कर देता है ॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, तुम रात-दिन हरि-नाम की आराधना करो। सदैव सतिगुरु के वचनों को स्वीकारते हुए उसका गुण-गान करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सच्चा गुरुमुख वही है, जो जीव को गुरु से मिला दे और सच्चा सतिगुरु वही है, जो प्रभु का ज्ञान करवा सके (उसी की आशंसा कीजिए) ॥ २ ॥ जो जीव सतिगुरु की संगति का त्याग कर और की शरण ढूँढ़ते हैं, वे आगे क्या करेंगे। यमपुरी में बाँधकर उनकी पिटाई की जाती है, उन्हें ख़ूब दण्ड मिलता है ॥ ३ ॥ मेरा परमात्मा बड़ा बे-परवाह है, उसे तिल भर भी कोई लोभ नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि भागकर ऐसे प्रभु की शरण लो, वह स्वयं ही कृपापूर्वक (विगत पापों को) क्षमा कर देगा और अपने में विलीन कर लेगा ॥ ४ ॥ ५ ॥

मारू महला ४ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। जपिओ नामु सुक जनक गुर बचनी हरि हरि सरणि परे । दालदु भंजि सुदामे मिलिओ भगती भाइ तरे । भगति वछलु हरि नामु क्रितारथु गुरमुखि क्रिपा करे ।। १ ।। मेरे मन नामु जपत उधरे । ध्रू प्रहिलादु बिदरु दासी सुतु गुरमुखि नामि तरे ।। १ ।। रहाउ ।। कलजुगि नामु प्रधानु पदारथु भगत जना उधरे । नामा जैदेउ कबीरु त्रिलोचनु सभि दोख गए चमरे । गुरमुखि नामि लगे से उधरे सभि किलबिख पाप टरे ।। २ ।। जो जो नामु जपै अपराधी सभि तिन के दोख परहरे । बेसुआ रवत अजामलु उधरिओ मुखि बोलै नाराइणु नरहरे । नामु जपत उग्र सैणि गति पाई तोड़ि बंधन मुकति करे ।। ३ ।। जन कउ आपि अनुग्रहु कीआ हरि अंगीकारु करे । सेवक पैज रखै मेरा गोविदु सरणि परे उधरे । जन नानक हरि किरपा धारी उरधरिओ नामु हरे ।। ४ ।। १ ।।

शुकदेव और जनक-सरीखे ऋषियों ने गुरु के उपदेशानुसार हरि-नाम का जाप किया और परमात्मा की शरण ली । सुदामा भक्ति-भाव से मुक्त हुआ, उसका दारिद्र्य दूर हो गया । भक्ति को प्यार करनेवाले हरि का नाम जीव को सफल मनोरथ बनाता है, किन्तु (यह तभी सम्भव है, जब) गुरु के द्वारा कृपापूर्वक इसकी प्राप्ति होती है ।।१।। हे मेरे मन, हरि-नाम जपनेवालों का उद्धार होता है, जैसे ध्रुव, प्रह्लाद और दासी-सुत विदुर गुरु के द्वारा नाम पाकर तिर गए ।। १ ।। रहाउ ।। कलियुग में हरि-नाम ही प्रधान है, इसकी भक्ति करनेवालों का उद्धार हुआ है; (यथा) नामदेव, जयदेव, कबीर, त्रिलोचन और (रविदास) चमार के सब दोष दूर हुए हैं । जो गुरुमुख जीव हरि-नाम में रत हैं, उनका उद्धार हुआ है और उनके सब पाप नष्ट हो गए हैं ।। २ ।। यदि अपराधी (पापी-विकारी) जीव भी नाम जपते हैं, तो उनके दोष कट जाते हैं । (जैसे) वेश्यागामी अजामिल मुख से नारायण बोलने मात्र से ही मुक्ति पा गया । (कंस के पिता) उग्रसेन ने हरि-नाम जपने से ही बन्धन तोड़कर गति पायी थी ।। ३ ।। सेवक पर प्रभु स्वयं कृपा करता और उसका पक्ष लेता है । मेरा परमात्मा अपने सेवकों की लाज रखता है, उसकी शरण लेनेवाले को मोक्ष मिलता है । गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम को हृदय में धारण करनेवाले पर प्रभु की विशिष्ट कृपा होती है ।। ४ ।। १ ।।

॥ मारू महला ४ ॥ सिध समाधि जपिओ लिव लाई साधिक मुनि जपिआ। जती सती संतोखी धिआइआ मुखि इंद्रादिक रविआ। सरणि परे जपिओ ते भाए गुरमुखि पारि पइआ ॥ १ ॥ मेरे मन नामु जपत तरिआ। धंना जटु बालमीकु बटवारा गुरमुखि पारि पइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुरि नर गण गंधरबे जपिओ रिखि बपुरै हरि गाइआ। संकरि ब्रहमै देवी जपिओ मुखि हरि हरि नामु जपिआ। हरि हरि नामि जिना मनु भीना ते गुरमुखि पारि पइआ ॥ २ ॥ कोटि कोटि तेतीस धिआइओ हरि जपतिआ अंतु न पाइआ। बेद पुराण सिम्रिति हरि जपिआ मुखि पंडित हरि गाइआ। नामु रसालु जिना मनि वसिआ ते गुरमुखि पारि पइआ ॥ ३ ॥ अनत तरंगी नामु जिन जपिआ मै गणत न करि सकिआ। गोबिदु क्रिपा करे थाइ पाए जो हरि प्रभ मनि भाइआ। गुरि धारि क्रिपा हरि नामु द्रिड़ाइओ जन नानक नामु लइआ ॥ ४ ॥ २ ॥

सिद्ध (साधना में सफलता-प्राप्त) और साधक (साधना में प्रवृत्त) योगियों ने समाधिस्थ होकर प्रेमपूर्वक हरि-नाम का जाप किया और प्रभु में वृत्ति लगायी है। यतियों, दानियों और सन्तुष्टि-जीवियों ने परमात्मा का ध्यान किया है, इन्द्रादि ने भी मुख से उसी का नाम जपा है। शरण में आकर नाम-जाप करनेवाले उसे भाते हैं और गुरु के उपदेश ग्रहण करनेवालों को मोक्ष मिलता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, हरि-नाम जपने से जीव भव-सागर से पार हो जाता है; (जैसे) धन्ना जाट ओर वाल्मीकि डाकू गुरु द्वारा नाम-जाप से पार हो गए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुर, नर, गण-गंधर्व तथा बेचारे ऋषियों, सबने हरि-नाम जपा और हरि-गुण गाया है। स्वयं शिवजी, ब्रह्मा तथा भगवति अपने मुख से हरि का नाम जपते हैं। हरि-नाम से जिनका हृदय सुवासित है, वे गुरु के द्वारा उद्धार को प्राप्त होते हैं ॥ २ ॥ तेंतीस कोटि देवताओं ने भी अनन्त हरि-नाम का जाप किया है; वेदों, पुराणों और स्मृतियों के विद्वान् पण्डितों ने भी हरि-गुण का ही गान किया है। हरि-नाम रूपी सरसता जिसके मन में बस गयी है, वही गुरु के उपदेशों पर आचरण करने से मुक्ति को पाता है ॥ ३ ॥ मन के भीतर जिसने असंख्य तरंगों वाले प्रभु का नाम जपा है, उसकी गणना सम्भव नहीं है। यदि प्रभु की इच्छा हो तो वह परमात्मा की कृपा से अपना मूल स्थान (सचखंड) ग्रहण कर पाता है। अतः गुरु नानक कहते हैं कि जब गुरु कृपापूर्वक हरि-नाम दृढ़ करवाता है, तभी जीव नाम-जाप में समर्थ होता है ॥ ४ ॥ २ ॥

मारू महला ४ घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। हरि हरि नामु निधानु लै गुरमति हरि पति पाइ । हलति पलति नालि चलदा हरि अंते लए छडाइ । जिथै अवघट गलीआ भीड़ीआ तिथै हरि हरि मुकति कराइ ।। १ ।। मेरे सतिगुरा मै हरि हरि नामु द्रिड़ाइ । मेरा मात पिता सुत बंधपो मै हरि बिनु अवरु न माइ ।। १ ।। रहाउ ।। मै हरि बिरही हरि नामु है कोई आणि मिलावै माइ । तिसु आगै मै जोदड़ी मेरा प्रीतमु देइ मिलाइ । सतिगुरु पुरखु दइआल प्रभु हरि मेले ढिल न पाइ ।। २ ।। जिन हरि हरि नामु न चेतिओ से भागहीण मरि जाइ । ओइ फिरि फिरि जोनि भवाईअहि मरि जंमहि आवै जाइ । ओइ जमदरि बधे मारीअहि हरि दरगह मिलै सजाइ ।। ३ ।। तू प्रभु हम सरणागती मोकउ मेलि लैहु हरिराइ । हरि धारि क्रिपा जग जीवना गुर सतिगुर की सरणाइ । हरि जीउ आपि दइआलु होइ जन नानक हरि मेलाइ ।। ४ ।। १ ।। ३ ।।

हे सतिगुरु, जो तुम्हारी शिक्षा द्वारा सर्व-सुख-प्रदाता हरि-नाम को प्राप्त करता है, वह हर जगह सम्मानित होता है। लोक-परलोक में परमात्मा उसके अंग-संग रहता है और अन्त में (सब आवागमन से) मुक्त कर लेता है। जहाँ का मार्ग कठिन और रास्ते तंग हैं, वहाँ परमात्मा ही सहायक होता है (अर्थात् हर मुसीबत में प्रभु सहायता करता है) ।। १ ।। हे मेरे सतिगुरु, मुझे पक्की तरह हरि-नाम का रहस्य समझा दें। हे माँ, हरि के बिना मेरे माता-पिता, सुत, बन्धु अन्य कोई नहीं ।। १ ।। रहाउ ।। हे माँ, मैं प्रभु का दीवाना हूँ, कोई मुझे हरि-नाम से मिला दे, मैं उसके सम्मुख अतीव विनम्रता से विनती करता हूँ कि वह मुझे मेरे प्रियतम से मिला दे। (ऐसा व्यक्ति) मेरा दयालु सतिगुरु ही है, जो मुझे प्रभु से मिलाने में ढील नहीं करता ।। २ ।। जिस भाग्यहीन जीव ने हरि-नाम का भजन नहीं किया, वह मृतक के समान है। वह पुनःपुनः विविध योनियों में भटकता और आवागमन में पड़ा रहता है। वह यमराज के द्वार पर बँधा रहता है और प्रभु के दरबार में भी दण्ड का भागी बनता है ।। ३ ।। हे हरि महाराज, तुम प्रभु हो, मैं तुम्हारा शरणागत हूँ, कृपा करके मुझे अपने संग मिला लो। हे जगजीवन हरि, कृपा धारण कर मुझे किसी सच्चे गुरु की शरण दो। गुरु नानक कहते हैं कि हरि स्वयं दयालु है, वही दयापूर्वक अपने सेवक को अपने में लीन करता है ।। ४ ।। १ ।। ३ ।।

॥ मारू महला ४ ॥ हउ पूंजी नामु दसाइदा को दसे हरि धनु रासि । हउ तिसु विटहु खन खंनीऐ मै मेले हरि प्रभ पासि । मै अंतरि प्रेमु पिरंम का किउ सजणु मिलै मिलासि ॥१॥ मन पिआरिआ मित्रा मै हरि हरि नामु धनु रासि । गुरि पूरै नामु द्रिड़ाइआ हरि धीरक हरि साबासि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि हरि आपि मिलाइ गुरु मै दसे हरि धनु रासि । बिनु गुर प्रेमु न लभई जन वेखहु मनि निरजासि । हरि गुर विचि आपु रखिआ हरि मेले गुर साबासि ॥ २ ॥ सागर भगति भंडार हरि पूरे सतिगुर पासि । सतिगुरु तुठा खोलि देइ मुखि गुरमुखि हरि परगासि । मनमुखि भाग विहूणिआ तिख मुईआ कंधी पासि ॥३॥ गुरु दाता दातारु है हउ मागउ दानु गुर पासि । चिरी विछुंना मेलि प्रभ मै मनि तनि वडड़ी आस । गुर भावै सुणि बेनती जन नानक की अरदासि ॥ ४ ॥ २ ॥ ४ ॥

हरि-नाम ही मेरी पूँजी है, कोई मुझे हरि-नाम की राशि बता दे; मेरा कण-कण उस पर बलिहार है, जो मुझे मेरे परमात्मा से मिला दे। मेरे मन के भीतर प्रियतम का अनन्त प्रेम विद्यमान है, मुझे मेरा साजन क्योंकर मिलेगा, कि मैं उसी में लीन हो सकूँ ॥ १ ॥ हे मेरे प्रिय मित्र, मेरे मन, मेरी एकमात्र पूँजी हरि-नाम है। मेरे गुरु ने मुझे उसका दृढ़ ज्ञान दिया है, वही (हरि) मेरा धीरज है, उसे नित्य नमन है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सच्चा गुरु ही मुझे प्रभु से मिलाता है और वही मुझे हरि-धन प्रदान करता है। गुरु के बिना परमात्मा से प्यार नहीं उपजता; ऐ जीवो, मन में निर्णय लेकर देखो। हरि ने गुरु में अपने-आप को प्रक्षेपित किया है, उस हरि को मिला देनेवाले गुरु को शाबाश है ॥ २ ॥ परमात्मा भक्ति का भण्डार है, गहन सागर है और उसकी जानकारी पूर्ण सतिगुरु से ही प्राप्य है। सतिगुरु संतुष्ट हो तो वह गुरमुखों को उपदेश द्वारा प्रभु का आलोक प्रदान करता है। मनमुख (स्वेच्छाचारी जीव) भाग्यहीन होते हैं, अमृत प्रवाह के किनारे पर भी प्यासे मरते हैं ॥ ३ ॥ गुरु सर्वस्व-प्रदाता है, मैं उसी के पास दान माँगता हूँ कि हे सतिगुरु, मुझ चिर-वियुक्त को पुनः परमात्मा से मिला दो, मेरे मन में यही वड़ी आशा है। हे गुरु, दास नानक की विनती सुनो (और उसे प्रभु-प्रियतम से मिला दो) ॥ ४ ॥ २ ॥ ४ ॥

॥ मारू महला ४ ॥ हरि हरि कथा सुणाइ प्रभ गुरमति हरि रिदै समाणी । जपि हरि हरि कथा वडभागीआ हरि उतम

पदु निरबाणी। गुरमुखा मनि परतीति है गुरि पूरै नामि समाणी ॥ १ ॥ मन मेरे मै हरि हरि कथा मनि भाणी। हरि हरि कथा नित सदा करि गुरमुखि अकथ कहाणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मै मनु तनु खोजि ढंढोलिआ किउ पाईऐ अकथ कहाणी। संत जना मिलि पाइआ सुणि अकथ कथा मनि भाणी। मेरै मनि तनि नामु अधारु हरि मै मेले पुरखु सुजाणी ॥ २ ॥ गुर पुरखै पुरखु मिलाइ प्रभ मिलि सुरती सुरति समाणी। वडभागी गुरु सेविआ हरि पाइआ सुघड़ सुजाणी। मनमुख भाग विहूणिआ तिन दुखी रैणि विहाणी ॥३॥ हम जाचिक दीन प्रभ तेरिआ मुखि दीजै अम्रित बाणी। सतिगुरु मेरा मित्रु प्रभ हरि मेलहु सुघड़ सुजाणी। जन नानक सरणागती करि किरपा नामि समाणी ॥ ४ ॥ ३ ॥ ५ ॥

गुरु के पावन उपदेश से हरि-प्रभु की अनिर्वचनीय कथा मेरे हृदय में समा गयी है। कोई भाग्यशाली जीव ही हरि-कथा का श्रवण कर निर्वाण-पद को प्राप्त करता है। गुरुमुख जीवों के मन में परम विश्वास के कारण हरि-नाम की लीनता सहज ही होती है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, मुझे हरि-कथा बड़ी प्रिय है। मैं गुरु के उपदेशानुसार नित्य प्रभु की अनिर्वचनीय कथा को समझता और ग्रहण करता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैंने अपना मन-तन खोजकर देखा है कि प्रभु की अकथ कथा कहाँ से प्राप्य है; सन्तजनों (सतिगुरु-संगति) के मिलाप से ही वह प्रिय और रोचक हरि-कथा उपलब्ध होती है। मेरे मन-तन का एकमात्र आधार हरि-नाम ही है, हरि-नाम से ही मैं उस परमपुरुष से मिलाप कर सकता हूँ ॥ २ ॥ गुरु ने परमपुरुष हरि से मिला दिया, प्रभु-दर्शनों से जीवात्मा (रूपी स्त्री) परमात्मा में समा गयी। भाग्यशाली जीव हरि-सेवा द्वारा ही सुजान पुरुष में रत होता है, जबकि मनमुख भाग्यहीन होता है, वह दुःखों में ही समय काटता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, हम तुम्हारे दीन-हीन याचक हैं, हमारे मुख में अपनी अमृत-वाणी को ढाल दो। मेरे प्यारे मित्र सतिगुरु, परमपुरुष प्रभु से मेरी भेंट करवा दो। गुरु नानक कहते हैं कि वे तुम्हारी (प्रभु की) शरण में आए हैं, कृपापूर्वक उन्हें हरि-नाम की लीनता प्रदान करो ॥ ४ ॥ ३ ॥ ५ ॥

॥ मारू महला ४ ॥ हरि भाउ लगा बैरागीआ वडभागी हरि मनि राखु। मिलि संगति सरधा ऊपजै गुर सबदी हरि रसु चाखु। सभु मनु तनु हरिआ होइआ गुरबाणी हरि गुण भाखु ॥ १ ॥ मन पिआरिआ मित्रा हरि हरि नाम रसु चाखु।

गुरि पूरै हरि पाइआ हलति पलति पति राखु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि हरि नामु धिआईऐ हरि कीरति गुरमुखि चाखु । तनु धरती हरि बीजीऐ विचि संगति हरि प्रभ राखु । अंम्रितु हरि हरि नामु है गुरि पूरै हरि रसु चाखु ॥ २ ॥ मनमुख त्रिसना भरि रहे मनि आसा दहदिस बहु लाखु । बिनु नावै ध्रिगु जीवदे विचि बिसटा मनमुख राखु । ओइ आवहि जाहि भवाईअहि बहु जोनी दुरगंध भाखु ॥ ३ ॥ त्राहि त्राहि सरणागती हरि दइआ धारि प्रभ राखु । संत संगति मेलापु करि हरिनामु मिलै पति साखु । हरि हरि नामु धनु पाइआ जन नानक गुरमति भाखु ॥ ४ ॥ ४ ॥ ६ ॥

जिन भाग्यशाली विरक्त जीवों का हरि से प्रेम है, श्रेष्ठ प्रभु ने उसकी सदैव रक्षा की है। सत्संगति में विचरण से प्रभु में श्रद्धा पैदा होती है और गुरु के शब्दों से हरि-रस का आस्वादन मिलता है। गुरुवाणी में हरि-गुणों के उच्चारण द्वारा जीव का सब तन-मन प्रफुल्लित हो जाता है ॥ १ ॥ हे मेरे प्रिय मित्र, मेरे मन, हरि-नाम का रस चखो, इहलोक और परलोक में गुरु द्वारा प्राप्त प्रभु, हमारी लाज रखो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि-नाम का ध्यान करो, गुरुवाणी द्वारा परमात्मा की स्तुति का स्वाद लो; शरीर को धरती बनाकर उसमें हरि-नाम का बीज बोओ, हरि-प्रभु सत्संगति में अपने को व्यक्त करता है। हरि-नाम अमृत है, पूर्णगुरु से उपदेश द्वारा ही उस अमृत का आस्वादन होता है ॥ २ ॥ मनमुख जीव तृष्णाओं से भरे रहते हैं, दसों दिशाओं में असंख्य आशाएँ बनी रहती हैं; हरि-नाम के बिना उनका जीवन धिक् है, मनमुख गंदगी में रहते हैं। वे आवागमन में पड़े रहते हैं और अनेक योनियों की दुर्गन्ध में बँधकर जीते हैं ॥ ३ ॥ हे प्रभु, त्राहिमाम्, मैं तुम्हारी शरण में हूँ, दया करके मेरी रक्षा करो। सन्तों की संगति प्रदान करो, जहाँ से हरि-नाम पाकर मेरा विश्वास और सम्मान बढ़ सके। दास नानक कहते हैं कि उन्हें गुरु के उपदेश से ही हरि-नाम रूपी धन प्राप्त हुआ है ॥ ४ ॥ ४ ॥ ६ ॥

मारू महला ४ घरु ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हरि हरि भगति भरे भंडारा । गुरमुखि रामु करे निसतारा । जिस नो क्रिपा करे मेरा सुआमी सो हरि के गुण गावै जीउ ॥ १ ॥ हरि हरि क्रिपा करे

बनवाली। हरि हिरदै सदा सदा समाली। हरि हरि नामु जपहु मेरे जीअड़े जपि हरि हरि नामु छडावै जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुख सागरु अंम्रितु हरि नाउ। मंगत जनु जाचै हरि देहु पसाउ। हरि सति सति सदा हरि सति हरि सति मेरै मनि भावै जीउ ॥ २ ॥ नवे छिद्र स्रवहि अपवित्रा। बोलि हरि नाम पवित्र सभि किता। जे हरि सुप्रसंनु होवै मेरा सुआमी हरि सिमरत मलु लहि जावै जीउ ॥ ३ ॥ माइआ मोहु बिखमु है भारी। किउ तरीऐ दुतरु संसारी। सतिगुरु बोहिथु देइ प्रभु साचा जपि हरि हरि पारि लंघावै जीउ ॥ ४ ॥ तू सरबत्र तेरा सभु कोई। जो तू करहि सोई प्रभ होई। जनु नानकु गुण गावै बेचारा हरि भावै हरि थाइ पावै जीउ ॥५॥१॥७॥

हरि-भक्ति के भंडार भरे पड़े हैं, जो जीव गुरु द्वारा (भक्ति करता है), प्रभु उसका निस्तार करता है। जिस जीव पर मेरे परमात्मा की कृपा होती है, वही हरि-गुण गाता है ॥ १ ॥ बनवारी (परमात्मा) जिस पर कृपा करता है, वह सदा उसे मन में याद करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि-नाम अमृत-समान सुख का सागर है, जो जन भिखारी की नाईं याचना करता है, उसी पर वह कृपा करता है। प्रभु परमसत्य है, वही सत्य मुझे भाता है ॥ २ ॥ शरीर के नौ छिद्रों से अपवित्रता स्रवित होती है, हरि-नाम के भजन से सब पवित्र होता है। यदि परमात्मा सन्तुष्ट हो जाय, तो उसके स्मरण मात्र से सब अपवित्रता (मलिनता) दूर हो जाती है ॥ ३ ॥ मोह-माया का आडम्बर बड़ा कठिन है; यह दुस्तर संसार-सागर क्योंकर तैरा जा सकता है ? परमात्मा कृपापूर्वक यदि सच्चे गुरु रूपी जहाज़ से मिला दे, और उसके उपदेशानुसार जीव हरि-भजन करे, तो वह (संसार-सागर) से पार हो सकता है ॥ ४ ॥ हे प्रभु, तुम सर्वत्र व्याप्त हो, सब कुछ तुम्हारा ही है, जो तुम करते हो, वही सम्पन्न होता है। दास नानक इसीलिए उसके गुण गाता है, ताकि उसके मन में दया उपजे और वह उसे सचखण्ड में स्थान दे ॥ ५ ॥ १ ॥ ७ ॥

॥ मारू महला ४ ॥ हरि हरि नामु जपहु मन मेरे। सभि किलविख काटै हरि तेरे। हरि धनु राखहु हरि धनु संचहु हरि चलदिआ नालि सखाई जीउ ॥ १ ॥ जिस नो क्रिपा करे सो धिआवै। नित हरि जपु जापै जपि हरि सुखु पावै। गुर परसादी हरि रसु आवै जपि हरि हरि पारि लंघाई जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निरभउ निरंकारु सतिनामु। जग महि स्रेसटु ऊतम

कामु । दुसमन दूत जम कालु ठेह मारउ हरि सेवक नेड़ि न जाई जीउ ।। २ ।। जिसु उपरि हरि का मनु मानिआ । सो सेवकु चहु जुग चहु कुंट जानिआ । जे उसका बुरा कहै कोई पापी तिसु जम कंकरु खाई जीउ ।। ३ ।। सभ महि एकु निरंजन करता । सभि करि करि वेखै अपणे चलता । जिसु हरि राखै तिसु कउणु मारै जिसु करता आपि छडाई जीउ ।। ४ ।। हउ अनदिनु नामु लई करतारे । जिनि सेवक भगत सभे निसतारे । दसअठ चारि वेद सभि पूछहु जन नानक नामु छडाई जीउ ।। ५ ।। २ ।। ८ ।।

हे मेरे मन, हरि का नाम जपो, परमात्मा तुम्हारे सब पाप दूर कर देगा। हरि रूपी धन का संचय करो, हरि-धन को सम्हालो, सदा वह तुम्हारे साथ चलता और सहायक होता है ।। १ ।। उसका भजन वही कर सकता है, जिस पर वह कृपा करता है। वह नित्यप्रति हरि-नाम जपता हुआ सुख प्राप्त करता है। गुरु की कृपा से उसे हरि-रसास्वादन मिलता है और हरि जपने से वह (संसार-सागर से) पार लाँघता है ।। १ ।। रहाउ ।। परमात्मा निर्भय है, मायातीत है और उसका नाम ही एकमात्र सत्य है। उसका नाम जपना ही संसार में श्रेष्ठतर कार्य है। यों तो यमदूत शत्रुता-पूर्वक जीवों को पटककर मारते हैं, किन्तु वे हरि-सेवक के निकट नहीं आते ।। २ ।। जिस पर परमात्मा का मन पसीजता है, उस सेवक को सच्चा ज्ञान प्राप्त होता है और वह चतुर्दिक् जानकारी पा लेता है। यदि कोई पापी उसका (हरि-सेवक का) बुरा चाहता है, उसे यमराज के दास खा जाते हैं ।। ३ ।। सब जीवों में वही मायातीत ब्रह्म व्याप्त है। वह अनेक लीलाएँ करता और उन्हें देखता है। परमात्मा जिसकी रक्षा करता है, कोई शक्ति उसे मार नहीं सकती, परमात्मा स्वयं उन्हें (हर मुसीबत से) छुड़ा लेता है ।। ४ ।। मैं सदा उस सर्वकर्ता परमात्मा का नाम लेता हूँ, जो अपने सब सेवकों-भक्तों का निस्तार करता है। गुरु नानक कहते हैं कि अठारह पुराणों और चारों वेदों का मत भी यही है कि परमात्मा का नाम सबका मोक्ष-दाता है ।। ५ ।। २ ।। ८ ।।

मारू महला ५ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। डरपै धरति अकासु नखयत्रा सिर ऊपरि अमरु करारा । पउणु पाणी बैसंतरु डरपै डरपै इंद्रु

बिचारा ॥ १ ॥ एका निरभउ बात सुनी । सो सुखीआ सो सदा सुहेला जो गुर मिलि गाइ गुनी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ देहधार अरु देवा डरपहि सिध साधिक डरि मुइआ । लखचउरासीह मरि मरि जनमे फिरि फिरि जोनी जोइआ ॥२॥ राजसु सातकु तामसु डरपहि केते रूप उपाइआ । छल बपुरी इह कउला डरपै अति डरपै धरमराइआ ॥ ३ ॥ सगल समग्री डरहि बिआपी बिनु डर करणैहारा । कहु नानक भगतन का संगी भगत सोहहि दरबारा ॥ ४ ॥ १ ॥

धरती, आकाश, नक्षत्र सब भय में विचरते हैं, सबके सिर पर परमात्मा का कठोर आदेश (हुक्म) है । पवन, पानी, अग्नि तथा देवराज इन्द्र भी उसी के भय में चलते हैं ॥ १ ॥ एक बात सुनी है कि निर्भय केवल परमात्मा ही है । (अतः) वही सुखी और प्रसन्न रहता है, जो गुरु के मिलाप से सदा परमात्मा के गुण गाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ देहधारी जीव और देवता, जगत में साधना करनेवाले और सिद्ध जीव उसी के भय में मरे जा रहे हैं । चौरासी लाख योनियों में मरते-जन्मते और पुनःपुनः अलग-अलग योनियों में धकेले जाते हैं ॥ २ ॥ तीनों गुणों (सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण) में विचरण करते हुए अनेक रूप जीव डर में जीते हैं । माया स्वयं छल-रूप होकर भी डरती है, धर्मराज भी निर्भय नहीं ॥ ३ ॥ समूची सृष्टि कर्ता के भय में विचरती है, केवल रचयिता (परमात्मा) ही निर्भय है । गुरु नानक कहते हैं कि भक्त के सम्पर्क में आनेवाला भी भक्त बनकर प्रभु के दरबार में विराजता है अर्थात् गुरु की संगति पाकर जीव निर्भय हो जाता है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ पांच बरख को अनाथु ध्रू बारिकु हरि सिमरत अमर अटारे । पुत्र हेति नाराइणु कहिओ जम कंकर मारि बिदारे ॥ १ ॥ मेरे ठाकुर केते अगनत उधारे । मोहि दीन अलप मति निरगुण परिओ सरणि दुआरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बालमीकु सुपचारो तरिओ बधिक तरे बिचारे । एक निमख मन माहि अराधिओ गजपति पारि उतारे ॥ २ ॥ कीनी रखिआ भगत प्रहिलादै हरनाखस नखहि बिदारे । बिदरु दासी सुतु भइओ पुनीता सगले कुल उजारे ॥ ३ ॥ कवन पराध बतावउ अपुने मिथिआ मोह मगनारे । आइओ साम नानक ओट हरि की लीजै भुजा पसारे ॥ ४ ॥ २ ॥

पाँच वर्ष का बालक ध्रुव हरि-नाम का स्मरण करता हुआ अमर पद को प्राप्त हुआ। पुत्र के हित जिसने प्रभु का नाम लिया था (अजामिल), उसकी रक्षा के लिए भी परमात्मा ने अन्त समय आनेवाले यमदूतों को मार भगाया ॥१॥ मेरे स्वामी प्रभु ने असंख्य जीवों का उद्धार किया है; मैं दीन, अल्प-मति गुणहीन भी (हे प्रभु,) तुम्हारी शरण में आ पड़ा हूँ (मेरा भी उद्धार करो) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वाल्मीकि, श्वपच तथा बधिक जैसे नीच जीवों का भी उसने उद्धार किया है; क्षण भर ही के लिए हाथी ने हरि-नाम लिया था, हरि ने उसकी भी ग्राह से रक्षा की ॥ २ ॥ भक्त प्रह्लाद की रक्षा की, (उसके अनाचारी पिता) हिरण्यकशिपु को नखों से ही चीर डाला। दासी-सुत विदुर पर कृपा करके उसे पावनता प्रदान की और उसके समूचे कुल का उद्धार कर दिया ॥३॥ मैं अपना क्या अपराध बताऊँ, मैं तो आजीवन मिथ्या मोह में मग्न रहा हूँ। (गुरु नानक कहते हैं कि) अब तुम्हारा सहारा लेने तुम्हारी शरण में आया हूँ, भुज पसारकर मुझे सहारा दो (मेरा भी उद्धार करो) ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ वित नवित भ्रमिओ बहु भाती अनिक जतन करि धाए। जो जो करम कीए हउ हउमै तेते भए अजाए ॥ १ ॥ अवर दिन काहू काज न लाए। सो दिनु मोकउ दीजै प्रभ जीउ जा दिन हरि जसु गाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पुत्र कलत्र ग्रिह देखि पसारा इस ही महि उरझाए। माइआ मद चाखि भए उदमाते हरि हरि कबहु न गाए ॥ २ ॥ इह बिधि खोजी बहु परकारा बिनु संतन नही पाए। तुम दातार वडे प्रभ संम्रथ मागन कउ दानु आए ॥ ३ ॥ तिआगिओ सगला मानु महता दास रेण सरणाए। कहु नानक हरि मिलि भए एकै महा अनंद सुख पाए ॥ ४ ॥ ३ ॥

मैं धन के निमित्त भ्रमता रहा हूँ, अनेक प्रकार से प्रयत्न किए हैं। जो-जो भी कर्म मैंने अहंभाव से प्रेरित होकर किए हैं, वे सब व्यर्थ गए हैं ॥ १ ॥ अन्य दिन किसी प्रकार सार्थक नहीं; हे प्रभु, मुझे वह दिन दीजिए, जिस दिन मैं हरि-यश-गान कर सकूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पुत्र, पत्नी और गृहस्थी का प्रसाद देखकर मैं सदा इसी में उलझा रहा। माया-मोह के आस्वादन में ही मग्न रहा, हरि-नाम कभी नहीं गाया ॥ २ ॥ इस प्रकार अनेकधा परमात्मा की खोज की है, किन्तु सन्तों की संगति के बिना वह किसी को नहीं मिलता। हे स्वामी, तुम सबसे बड़े दाता हो, तुम्हीं से माँगने मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ ॥ ३ ॥ सब मान-अभिमान त्यागकर मैं चरण-धूल-तुल्य तुम्हारी शरण में आया हूँ। (गुरु नानक

कहते हैं कि) मुझे हरि-मिलन से महा आनन्द और परमसुख की प्राप्ति हुई है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ कवन थान धीरिओ है नामा कवन बसतु अहंकारा । कवन चिहन सुनि ऊपरि छोहिओ मुख ते सुनि करि गारा ॥ १ ॥ सुनहु रे तू कउनु कहा ते आइओ । एती न जानउ केतीक मुदति चलते खबरि न पाइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहनसील पवन अरु पाणी बसुधा खिमा निभराते । पंच तत मिलि भइओ संजोगा इन महि कवन दुराते ॥ २ ॥ जिनि रचि रचिआ पुरखि बिधातै नाले हउमै पाई । जनम मरणु उसही कउ है रे ओहा आवै जाई ॥ ३ ॥ बरनु चिहनु नाही किछु रचना मिथिआ सगल पसारा । भणति नानकु जब खेलु उझारै तब एकै एकंकारा ॥ ४ ॥ ४ ॥

बड़प्पन कहाँ रहता है और अहंकार कहाँ बसता है ? मुँह से गाली सुनकर तुम्हें क्या चोट पहुँची है (जो इतना क्रुद्ध हो रहे हो) ॥ १ ॥ सुनो रे भाई, तुम कौन हो और कहाँ से आए हो; इतना भी नहीं जानते कि आए कितनी मुद्दत हुई और यहाँ से चलने की खबर भी नहीं मिलती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पवन और पानी सहनशील हैं, धरती निस्सन्देह क्षमाशील है । इन्हीं पाँचों तत्त्वों के संयोग से तुम बने हो, इनमें क्या बुराई है ? ॥ २ ॥ जिस विधाता ने पाँचों तत्त्वों को रचकर शरीर बनाया है, उसी ने उसमें मोह-ममता भी भर दी है । हे भाई, यह जन्म-मरण उसी को है, वही आता-जाता है ॥ ३ ॥ यह समूची रचना मिथ्या का प्रसार है, इसका कोई स्थिर वर्ण या चिह्न नहीं है । गुरु नानक कहते हैं कि (यह सब उसका खेल है) जब वह यह खेल निरस्त करता है, तो बस एक वही मायातीत रह जाता है ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ मान मोह अरु लोभ विकारा बीओ चीति न घालिओ । नाम रतनु गुणा हरि बणजे लादि वखरु लै चालिओ ॥ १ ॥ सेवक की ओड़कि निबही प्रीति । जीवत साहिबु सेविओ अपना चलते राखिओ चीति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसी आगिआ कीनी ठाकुरि तिसते मुखु नही मोरिओ । सहजु अनंदु रखिओ ग्रिह भीतरि उठि उआहू कउ दउरिओ ॥ २ ॥ आगिआ महि भूख सोई करि सूखा सोग हरख नही जानिओ । जो जो हुकमु भइओ साहिब का सो माथै ले मानिओ ॥ ३ ॥

भइओ क्रिपालु ठाकुरु सेवक कउ सवरे हलत पलाता । धंनु सेवकु सफलु ओहु आइआ जिनि नानक खसमु पछाता ॥ ४ ॥ ५ ॥

मान, मोह, लोभ, विकार और द्वैतभाव में जो जीव मन नहीं रचाता, जो केवल नाम-रत्न और प्रभु के गुणों का ही विनिमय करता है और पुनः नाम की सामग्री लादकर ही परलोक सिधारता है ॥ १ ॥ उस सेवक की प्रीति ही अन्ततः निभती है, जो जीवित अवस्था में अपने परमात्मा को याद करता तथा मरते हुए भी उसी को मन में रखता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ स्वामी की ओर से जो भी आदेश मिला, उसने कभी उससे मुँह नहीं मोड़ा; यदि उसने घर में रखा तो वहीं आनन्द माना और यदि उठने को कहा तो वहीं उठकर भाग खड़ा हुआ ॥ २ ॥ भूख के दिनों में भी उसका आदेश समझकर सुख माना, किसी प्रकार का हर्ष-शोक अनुभव नहीं किया। जो-जो स्वामी का हुक्म हुआ, वही शिरोधार्य किया ॥ ३ ॥ जब परमात्मा सेवक पर कृपा करता है, तो उसका इहलोक-परलोक दोनों सँवर जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि स्वामी को पहचान लेनेवाला सेवक धन्य है, वही सफल-जीवन है ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ खुलिआ करमु क्रिपा भई ठाकुर कीरतनु हरि हरि गाई । स्रमु थाका पाए बिस्रामा मिटि गई सगली धाई ॥ १ ॥ अब मोहि जीवन पदवी पाई । चीति आइओ मनि पुरखु बिधाता संतन की सरणाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कामु क्रोधु लोभु मोहु निवारे निवरे सगल बैराई । सद हजूरि हाजरु है नाजरु कतहि न भइओ दूराई ॥ २ ॥ सुख सीतल सरधा सभ पूरी होए संत सहाई । पावन पतित कीए खिन भीतरि महिमा कथनु न जाई ॥ ३ ॥ निरभउ भए सगल भै खोए गोबिद चरण ओटाई । नानकु जसु गावै ठाकुर का रैणि दिनसु लिव लाई ॥ ४ ॥ ६ ॥

भाग्य खुल गया, प्रभु की कृपा हुई, जिससे अब हरि-नाम की कीर्ति करता हूँ। श्रम की थकावट (बेकार भगदड़) चुक गयी, जीवन में स्थिरता आयी और समूची भटकन शान्त हो गयी ॥१॥ अब मुझे जीवन-पद प्राप्त हुआ है, मन जगत के विधाता परमपुरुष में लगा है और सन्तों की शरण प्राप्त हुई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (मैंने— जीव ने) काम, क्रोध, लोभ, मोहादि का निवारण किया है, सब वैर-विरोध त्याग दिए हैं। परमात्मा (मेरे लिए) सदा साक्षात् प्रत्यक्ष है, कहीं कभी दूर नहीं होता ॥२॥ सन्तों (गुरु) की सहायता से मुझे सुख-शान्ति मिली, (हृदय)

शीतल हुआ, श्रद्धा सब पूर्ण हुई है। उसकी महिमा अकथनीय है, क्षण भर में ही वह अनेक पतितों को पावन कर देता है ॥ ३ ॥ परमात्मा के चरणों का सहारा लेने से मेरे समूचे भय नष्ट हो गए हैं और मैं निर्भय हो गया हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि रात-दिन उसी में लग्न लगाकर (मैं) स्वामी का यशोगान करता हूँ ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ जो समरथु सरब गुण नाइकु तिस कउ कबहु न गावसि रे। छोडि जाइ खिन भीतरि ताकउ उआ कउ फिरि फिरि धावसि रे ॥ १ ॥ अपुने प्रभ कउ किउ न समारसि रे। बैरी संगि रंग रसि रचिआ तिसु सिउ जीअरा जारसि रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कै नामि सुनिऐ जमु छोडै ता की सरणि न पावसि रे। काढि देइ सिआल बपुरे कउ ता की ओट टिकावसि रे ॥ २ ॥ जिस का जासु सुनत भव तरीऐ ता सिउ रंगु न लावसि रे। थोरी बात अलप सुपने की बहुरि बहुरि अटकावसि रे ॥ ३ ॥ भइओ प्रसादु क्रिपा निधि ठाकुर संत संगि पति पाई। कहु नानक त्रैगुण भ्रमु छूटा जउ प्रभ भए सहाई ॥ ४ ॥ ७ ॥

ऐ मनुष्य, तुम समर्थ, सर्वगुणसम्पन्न परमात्मा को कभी याद नहीं करते; जिसे क्षण भर में छोड़ जाना है, तुम पुनःपुनः उसी को पाने का प्रयत्न करते हो ॥ १ ॥ ऐ मूर्ख जीव, अपने परमात्मा को क्यों याद नहीं करते, शत्रुओं से (सांसारिक ईर्ष्या-तृष्णा से) मन लगाया है, उसी की ओर तुम्हारा मन झुका रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसका नाम-श्रवण मात्र से यमदूत छोड़कर भाग जाते हैं, क्यों तुम उसकी शरण नहीं लेते! भोले जीव जगत के गीदड़ को निकाल बाहर करो, इसकी क्या ओट लेते हो? अर्थात् परमात्मा रूपी सिंह की शरण लो, जगत के गीदड़ का सहारा लेने का क्या लाभ? ॥ २ ॥ जिसका यशोगान सुनकर संसार से मुक्ति मिलती है, उससे प्रेम नहीं करते हो। जो थोड़ी सी बात स्वप्नवत् है, तुम बार-बार उसी में मन टिकाते हो ॥ ३ ॥ कृपानिधि प्रभु की कृपा होने से सत्संगति की प्राप्ति होती है, उसी से सम्मान मिलता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु की सहायता मिलने पर त्रिगुणात्मक माया के सब भ्रम दूर हो जाते हैं ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ अंतरजामी सभ बिधि जानै तिस ते कहा दुलारिओ। हसत पाव झरे खिन भीतरि अगनि संगि लै जारिओ ॥ १ ॥ मूड़े तै मन ते रामु बिसारिओ। लूणु खाइ

करहि हरामखोरी पेखत नैन बिदारिओ ।। १ ।। रहाउ ।। असाध रोगु उपजिओ तन भीतरि टरत न काहू टारिओ । प्रभ बिसरत महा दुखु पाइओ इहु नानक ततु बीचारिओ ।। २ ।। ८ ।।

अन्तर्यामी प्रभु सब कुछ जानता है, उससे क्या छिपाते हो। हाथ-पाँव तो क्षण भर में झड़ जाते हैं और अग्नि में जला दिए जाते हैं ।। १ ।। हे मूर्ख, तुमने मन से प्रभु का नाम भुला दिया है। नमक खाकर हरामखोरी करते हो, (परिणामतः) आँखों देखते-देखते (यमदूत) तुम्हें चीर देंगे ।। १ ।। रहाउ ।। तुम्हारे शरीर में असाध्य रोग उपजा है, किसी प्रकार उसका निदान नहीं है। गुरु नानक विचारते हैं कि प्रभु को विस्मृत करने से महादुःख प्राप्त होता है ।। २ ।। ८ ।।

।। मारू महला ५ ।। चरन कमल प्रभ राखे चीति । हरिगुण गावह नीता नीत । तिसु बिनु दूजा अवरु न कोऊ । आदि मधि अंति है सोऊ ।। १ ।। संतन की ओट आपे आपि ।। १ ।। रहाउ ।। जा कै वसि है सगल संसारु । आपे आपि आपि निरंकारु । नानक गहिओ साचा सोइ । सुखु पाइआ फिरि दूखु न होइ ।। २ ।। ९ ।।

(सुख इसमें है कि) प्रभु के चरण-कमलों को हृदय में धारण करो और नित्यप्रति हरि का गुणगान करो। उसके अतिरिक्त कोई अन्य नहीं है। वही आदि, मध्य और अन्त में विद्यमान है ।। १ ।। सन्तों की ओट में ही वह परमात्मा स्वयं निवसित है ।। १ ।। रहाउ ।। सारा संसार जिसके वश में है, वही अपने-आप में मायातीत है। गुरु नानक ने उसी का दामन पकड़ा है, उससे ऐसा सुख प्राप्य है कि पुनः दुःख नहीं होता ।।२।।९।।

मारू महला ५ घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। प्रान सुखदाता जीअ सुखदाता तुम काहे बिसारिओ अगिआनथ । होछा मदु चाखि होए तुम बावर दुलभ जनमु अकारथ ।। १ ।। रे नर ऐसी करहि इआनथ । तजि सारंगधर भ्रमि तू भूला मोहि लपटिओ दासी संगि सानथ ।। १ ।। रहाउ ।। धरणीधरु तिआगि नीच कुल सेवहि हउ हउ करत बिहावथ । फोकट करम करहि अगिआनी मनमुखि अंध कहावथ ।। २ ।। सति होता असति करि मानिआ

जो बिनसत सो निहचलु जानथ। पर की कउ अपनी करि पकरी ऐसे भूल भुलानथ ॥ ३ ॥ खत्री ब्राहमण सूद वैस सभ एकै नामि तरानथ। गुरु नानकु उपदेसु कहतु है जो सुनै सो पारि परानथ ॥ ४ ॥ १ ॥ १० ॥

हे अज्ञानी मनुष्य, तुमने अपने अज्ञान के कारण प्राणों और आत्मा को सुख देनेवाले (परमात्मा) को क्यों भुला रखा है। माया का हीन नशा करके तुम बावरे हो रहे हो, दुर्लभ मानव-जन्म को व्यर्थ गँवा दिया है ॥ १ ॥ हे मनुष्य, तुमने ऐसी नासमझी की है कि साक्षात् प्रभु को छोड़कर दासी (माया) के संग नातेदारी के भ्रम में पड़े हो ॥ १ ॥-रहाउ ॥ परमात्मा को त्यागकर नीच कुल की सेवा करते हो और आयु भर अहंकार में बिताते हो। अज्ञान तथा स्वेच्छाचारिता में व्यर्थ के कर्म करते हो और मनमुख कहलवाते हो ॥ २ ॥ असत्य को सत्य मानते रहे, नश्वर को स्थिर समझा और पराई को अपनी समझकर पकड़े रहे, ऐसे ही भुलावे में जिए ॥ ३ ॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, सब एक प्रभु के नाम से ही मुक्ति पाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो इस तथ्यात्मक उपदेश को समझता है, वही (संसार-सागर से) पार हो जाता है ॥ ४ ॥ १ ॥ १० ॥

॥ मारू महला ५ ॥ गुपतु करता संगि सो प्रभु डहकावए मनु खाइ। बिसारि हरि जीउ बिखै भोगहि तपत थंम गलि लाइ ॥ १ ॥ रे नर काइ परग्रिहि जाइ। कुचल कठोर कामि गरधभ तुम नही सुनिओ धरमराइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिकार पाथर गलहि बाधे निंद पोट सिराइ। महा सागरु समुदु लंघना पारि न परना जाइ ॥ २ ॥ कामि क्रोधि लोभि मोहि बिआपिओ नेत्र रखे फिराइ। सीसु उठावन न कबहू मिलई महा दुतर माइ ॥ ३ ॥ सूरु मुकता ससी मुकता ब्रहम गिआनी अलिपाइ। सुभावत जैसे बैसंतर अलिपत सदा निरमलाइ ॥ ४ ॥ जिसु करमु खुलिआ तिसु लहिआ पड़दा जिनि गुर पहि मंनिआ सुभाइ। गुरि मंत्रु अवखधु नामु दीना जन नानक संकट जोनि न पाइ ॥ ५ ॥ २ ॥ रे नर इन बिधि पारि पराइ। धिआइ हरि जीउ होइ मिरतकु तिआगि दूजा भाउ ॥ रहाउ दूजा ॥ २ ॥ ११ ॥

जो कार्य तुम छिपाकर करते हो, परमात्मा हर समय साथ होने के कारण (उन्हें जान लेता है), तुम केवल मनुष्यों को ही धोखा दे सकते

हो। प्रभु को भूलकर विषय-भोग में जीवन जीना, गर्म स्तम्भों को गले से लगाना है ॥ १ ॥ हे मनुष्य, क्यों पराए घरों की खाक छानते हो (पर-स्त्री का पीछा करते हो)! अरे गन्दे, कठोर, कामुक गधे (मूर्ख), क्या तुमने धर्मराज का नाम नहीं सुना (क्या तुम धर्मराज से नहीं डरते)? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ विकारों का पत्थर तुमने गले से बाँधा है और निन्दा की गाँठ सिर पर रखी है; ऐसे में संसार का महासागर तुमको पार करना है, कैसे पार करोगे? ॥ २ ॥ व्याप्त काम, क्रोध, लोभ, मोहादि ने वास्तविकता के प्रति तुम्हारी आँखें फेर दी हैं। महा दुस्तर माया की ओर से तुम्हें शीश उठाना नहीं मिलता अर्थात् माया तुम्हें सही दिशा की ओर सोचने ही नहीं देती ॥ ३ ॥ ब्रह्मज्ञानी जीव सूर्य और चन्द्र की भाँति अलिप्त होता है (जैसे चाँद-सूरज अच्छी-बुरी सब वस्तुओं पर प्रकाश डालते हुए भी निर्लिप्त होते हैं, वैसे ही ब्रह्मज्ञानी बुरी संगति में भी कीच में कमल-समान अनासक्त रहता है)। उसका स्वभाव अग्नि की तरह का होता है, जो सदा अलिप्त और निर्मल करनेवाली होती है ॥ ४ ॥ जिसने सहज ही गुरु का उपदेश मान लिया, उसका भाग्य जगा और उसके लिए भ्रम का पर्दा दूर हो गया। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु ने हरि-नाम रूपी मन्त्र की दवाई खिलाकर योनि-चक्र के रोग से मुक्ति दिला दी ॥५॥२॥ हे मनुष्य, इसी प्रकार मुक्ति मिलती है— द्वैतभाव का त्याग करके, जीवित ही मृत्यु को पाकर हरि-नाम में ध्यानस्थ होने से ॥२॥११॥

॥ मारू महला ५ ॥ बाहरि ढूढन ते छूटि परे गुरि घर ही माहि दिखाइआ था। अनभउ अचरज रूपु प्रभ पेखिआ मेरा मनु छोडि न कतहू जाइआ था ॥ १ ॥ मानकु पाइओ रे पाइओ हरि पूरा पाइआ था। मोलि अमोलु न पाइआ जाई करि किरपा गुरू दिवाइआ था ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अदिसटु अगोचरु पारब्रहमु मिलि साधू अकथु कथाइआ था। अनहद सबदु दसम दुआरि वजिओ तह अंम्रित नामु चुआइआ था ॥ २ ॥ तोटि नाही मनि त्रिसना बूझी अखुट भंडार समाइआ था। चरण चरण चरण गुर सेवे अघड़ु घड़िओ रसु पाइआ था ॥ ३ ॥ सहजे आवा सहजे आवा सहजे मनु खेलाइआ था। कहु नानक भरमु गुरि खोइआ ता हरि महली महलु पाइआ था ॥४॥३॥१२॥

(गुरु की शरण लेनेवाला जीव) परमात्मा को इधर-उधर ढूँढ़ने से बच गया, गुरु ने उसे घर ही में (मन के भीतर ही) सत्य के दर्शन करवा दिए। मैंने अनुभव द्वारा प्रभु का आश्चर्यजनक ज्ञान-स्वरूप देख लिया

है, अब मेरा मन उसे छोड़कर कहीं और नहीं जाता ॥ १ ॥ मैंने तो पूर्ण परब्रह्म रूपी माणिक्य को पा लिया है। मेरी उपलब्धि गुरु की कृपा से हुई है, अन्यथा यह इतनी अमूल्य है कि किसी मोल नहीं मिल सकती ॥१॥ रहाउ ॥ सन्तों की संगति में (गुरु के सम्पर्क में) अदृष्ट, अगोचर और अकथनीय ब्रह्म की जानकारी मिली है; दशम द्वार में अनाहत शब्द की ध्वनि हो उठी और अमृत-नाम स्रवित हुआ ॥ २ ॥ किसी वस्तु का अभाव न रहा, तृष्णा नष्ट हुई और कभी समाप्त न होनेवाला नाम-भण्डार प्राप्त हुआ। गुरु के चरणों की सेवा में अनपढ़ और बेसुरा मन सँवर गया ॥ ३ ॥ (अब) सहज (स्थिर और शांत स्थिति) में आना-जाना और सहज में ही मन को रमाना है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु ने सब भ्रम दूर करके हृदय-मन्दिर में ही परमात्मा के महलों तक पहुँचा दिया है ॥ ४ ॥ ३ ॥ १२ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ जिसहि साजि निवाजिआ तिसहि सिउ रुच नाहि। आन रूती आन बोईऐ फलु न फूलै ताहि ॥ १ ॥ रे मन वत्र बीजण नाउ। बोइ खेती लाइ मनूआ भलो समउ सुआउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खोइ खहड़ा भरमु मन का सतिगुर सरणी जाइ। करमु जिस कउ धुरहु लिखिआ सोई कार कमाइ ॥ २ ॥ भाउ लागा गोबिद सिउ घाल पाई थाइ। खेति मेरै जंमिआ निखुटि न कबहू जाइ ॥ ३ ॥ पाइआ अमोलु पदारथो छोडि न कतहू जाइ। कहु नानक सुखु पाइआ त्रिपति रहे आघाइ ॥ ४ ॥ ४ ॥ १३ ॥

जिसने तुम्हें बनाकर स्थापित किया है, तुम्हें उसी से कोई प्यार नहीं। जैसे अन्य ऋतु में यदि अन्य बीज बोया जाय, तो उसे फूल या फल कुछ नहीं लगता (ऐसे ही ग़लत भाव में रुचि लेने से कोई फल नहीं पाता) ॥ १ ॥ रे मन, यह मनुष्य-जन्म हरि-नाम रूपी बीज बोने का समय है। मन लगाकर समयानुसार हरि-नाम की खेती करने से ही यथार्थ लाभ होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन की हठ और भ्रम का त्याग कर सतिगुरु की शरण लो। जिसके भाग्य में परमात्मा ने आदि से ही ऐसी सम्भावना लिखी है, वही ऐसा उत्तम कर्म कमाता है ॥ २ ॥ परमात्मा से प्यार होने से समूची प्रभु-सेवा सफल होती है। मेरे अन्तःकरण रूपी खेत में प्रभु-प्रेम की फ़सल तैयार हुई है, वह कभी कम नहीं होती ॥ ३ ॥ इसी से अमूल्य पदार्थ (परमेश्वर) प्राप्त हुआ है, जो अब हमें छोड़कर नहीं जाता। गुरु नानक कहते हैं कि इससे परमसुख मिला है, जो

(इहलोक में) तृप्ति देता है और (परलोक में भी) सन्तुष्ट रखता है ॥ ४ ॥ ४ ॥ १३ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ फूटो आंडा भरम का मनहि भइओ परगासु । काटी बेरी पगह ते गुरि कीनी बंदि खलासु ॥ १ ॥ आवण जाणु रहिओ । तपत कड़ाहा बुझि गइआ गुरि सीतल नामु दीओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब ते साधू संगु भइआ तउ छोडि गए निगहार । जिस की अटक तिस ते छुटी तउ कहा करै कोटवार ॥ २ ॥ चूका भारा करम का होए निहकरमा । सागर ते कंढै चड़े गुरि कीने धरमा ॥ ३ ॥ सचु थानु सचु बैठका सचु सुआउ बणाइआ । सचु पूंजी सचु वखरो नानक घरि पाइआ ॥ ४ ॥ ५ ॥ १४ ॥

भ्रम का अंडा फूट गया है और मन में सत्य का आलोक हुआ है (अर्थात् मन पर चढ़ा भ्रम का पर्दा दूर हो गया है), गुरु ने पाँव की बेड़ी काट दी है और जीव को मुक्त श्वास लेने के योग्य बना दिया है ॥ १ ॥ अब जीव का आवागमन छूट गया है। हृदय रूपी कड़ाही का ताप गुरु द्वारा दिए शीतल प्रभु-नाम से दूर हो गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब से सन्तों (गुरु) का सम्पर्क मिला है, यमदूतों ने पीछा छोड़ दिया है। जिसने बन्धन दिए थे, जब उसी ने काट दिए, तो कोतवाल (यमराज) क्या करेगा ॥ २ ॥ पूर्व कर्मों का बोझ चुक गया, जीव निष्कर्म हुआ। संसार-सागर के तट पर आ लगे और गुरु के सहारे पुण्यकर्म करने लगे ॥ ३ ॥ जीव का जीवन-प्रयोजन ही सत्य हो गया, उसका उठना-बैठना सत्य में ही निहित हुआ। गुरु नानक कहते हैं कि उस जीव ने सत्य की पूँजी से केवल सत्य का सौदा ही अपने हृदय रूपी घर में भरा ॥ ४ ॥ ५ ॥ १४ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ बेदु पुकारै मुख ते पंडत कामामन का माठा । मोनी होइ बैठा इकांती हिरदै कलपन गाठा । होइ उदासी ग्रिहु तजि चलिओ छुटकै नाही नाठा ॥ १ ॥ जीअ की कै पहि बात कहा । आपि मुकतु मोकउ प्रभु मेले ऐसो कहा लहा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तपसी करि कै देही साधी मनूआ दहदिस धाना । ब्रहमचारि ब्रहमचजु कीना हिरदै भइआ गुमाना । संनिआसी होइ कै तीरथि भ्रमिओ उसु महि क्रोधु बिगाना ॥ २ ॥ घूंघर बाधि भए रामदासा रोटीअन के ओपावा । बरत नेम

करम खट कीने बाहरि भेख दिखावा। गीत नाद मुखि राग अलापे मनि नही हरि हरि गावा ॥ ३ ॥ हरख सोग लोभ मोह रहत हहि निरमल हरि के संता। तिन की धूड़ि पाए मनु मेरा जा दइआ करे भगवंता। कहु नानक गुरु पूरा मिलिआ तां उतरी मन की चिंता ॥ ४ ॥ मेरा अंतरजामी हरि राइआ। सभु किछु जाणै मेरे जीअ का प्रीतमु बिसरि गए बकबाइआ ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ ६ ॥ १५ ॥

पण्डित मुख से वेदों की बातें करता है, श्रम करने से दूर भागता है; मौनी (मौन धारण करनेवाला) एकान्त में समाधि लगाता है, किन्तु मन में कल्पनाओं की गाँठ बँधी रहती है। उदासी (विरक्त) घर का त्याग तो करता है, किन्तु मन से सदा भटकता रहता है ॥ १ ॥ मन की बात किसे कहूँ? ऐसा कोई कहाँ से पाऊँ, जो स्वयं मुक्त हो और मुझे भी परमात्मा से मिला दे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तपस्या करके शरीर की साधना तो हुई, किन्तु मन तो चतुर्दिक् भटकता ही रहा। ब्रह्मचारी ने ब्रह्मचर्य की रक्षा की, किन्तु मन में अहंकार जग गया। संन्यासी होकर तीर्थों पर भटकता रहा, किन्तु मन से मूर्खतापूर्ण क्रोध न धुला ॥ २ ॥ पाँव में घुँघरू बाँधकर रामदासी बने, किन्तु वह भी रोटी पाने का साधन है। व्रत, नियम तथा षट्कर्म किए, बाहरी दिखावा बनाए रखा; मुख से गीत, राग और गान किए, किन्तु मन से कभी हरि-नाम का गान नहीं किया ॥३॥ निर्मल प्रभु के निर्लिप्त-भावी सन्त हर्ष-शोक, लोभ-मोह से रहित होते हैं; यदि परमात्मा की कृपा हो जाय, तभी उनकी चरण-धूल प्राप्त होती है। गुरु नानक कहते हैं कि जब पूरा गुरु मिलता है, तो मन की सब चिन्ताएँ मिट जाती हैं ॥ ४ ॥ मेरा परमात्मा अन्तर्यामी है, वह मेरा प्रियतम मेरे मन की सब बातें जानता है, मेरी व्यर्थ की बकवाद बातें अब दूर हो गयी हैं ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ ६ ॥ १५ ॥ (इस पद में गुरुजी ने भेसधारी साधुओं की क्रियाओं पर व्यंग्य करते हुए सच्चे मार्ग का निर्देश किया है।)

॥ मारू महला ५ ॥ कोटि लाख सरब को राजा जिसु हिरदै नामु तुमारा। जा कउ नामु न दीआ मेरै सतिगुरि से मरि जनमहि गावारा ॥ १ ॥ मेरे सतिगुर ही पति राखु। चीति आवहि तब ही पति पूरी बिसरत रलीऐ खाकु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रूप रंग खुसीआ मन भोगण तेते छिद्र विकारा। हरि का नामु निधानु कलिआणा सूख सहजु इहु सारा ॥ २ ॥ माइआ रंग बिरंग खिनै महि जिउ बादर की छाइआ। से लाल

भए गूड़ै रंगि राते जिन गुरमिलि हरि हरि गाइआ ।। ३ ।। ऊच मूच अपार सुआमी अगम दरबारा । नामो वडिआई सोभा नानक खसमु पिआरा ।। ४ ।। ७ ।। १६ ।।

हे प्रभु, जिसके हृदय में तुम्हारा नाम है, वह लाखों-करोड़ों, बल्कि सबका सिरमौर है । किन्तु जिसे किसी सतिगुरु ने नाम-रहस्य नहीं बताया, वह मूर्ख जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है ।। १ ।। मेरा गुरु ही सबकी लाज रखता है, उसका नाम मन में आते ही जीव को सम्मान प्राप्त होता है और यदि नाम विस्मृत हो जाय, जो जीव मिट्टी में मिल जाता है ।। १ ।। रहाउ ।। रूप, रंग, खुशी और मन के सब भोग केवल दोष-विकार ही हैं । केवल परमात्मा का नाम ही सुखद, कल्याण-प्रद एवं श्रेष्ठ ऐश्वर्यदायी है ।। २ ।। माया अनेक विधि आकर्षक है, किन्तु बादल की छाया की नाईं क्षण-भंगुर है । वे जीव परम प्रेम के रंग में रत होते हैं, जो गुरु-मिलन से हरि-नाम का गान करते हैं ।। ३ ।। उस प्रभु का दरबार ऊँचा, बड़ा और अपार है । गुरु नानक कहते हैं कि स्वामी का प्यार उसके नाम के आदर और शोभा में निहित है ।। ४ ।। ७ ।। १६ ।।

मारू महला ५ घरु ४

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। ओअंकारि उतपाती । कीआ दिनसु सभ राती । वणु त्रिणु त्रिभवण पाणी । चारि बेद चारे खाणी । खंड दीप सभि लोआ । एक कवावै ते सभि होआ ।। १ ।। करणैहारा बूझहु रे । सतिगुरु मिलै त सूझै रे ।। १ ।। रहाउ ।। त्रै गुण कीआ पसारा । नरक सुरग अवतारा । हउमै आवै जाई । मनु टिकणु न पावै राई । बाझु गुरू गुबारा । मिलि सतिगुर निसतारा ।। २ ।। हउ हउ करम कमाणे । ते ते बंध गलाणे । मेरी मेरी धारी । ओहा पैरि लोहारी । सो गुरमिलि एकु पछाणै । जिसु होवै भागु मथाणै ।। ३ ।। सो मिलिआ जि हरि मनि भाइआ । सो भूला जि प्रभू भुलाइआ । नह आपहु मूरखु गिआनी । जि करावै सु नामु वखानी । तेरा अंतु न पारावारा । जन नानक सद बलिहारा ।। ४ ।। १ ।। १७ ।।

वाहिगुरु (परमात्मा) से ही समूची उत्पत्ति हुई है; रात, दिन, वन, वनस्पति, तीनों लोक और पानी, सब उसी ने बनाए हैं । परमात्मा ने

अपने शब्द से (हुक्म से) ही चारों वेद, चारों प्रकार के जीव (अण्डज, भूमज, स्वेदज, उदरज) और खण्ड दीप एवं सब लोक निर्मित किए हैं ॥१॥ निर्माता अर्थात् सबके रचयिता को जानो, किन्तु उसकी सूझ हमें सतिगुरु से ही मिलती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा ने सारा संसार तीनों गुणों (सत्, रज, तम्) के प्रसार से बनाया है; नरक, स्वर्ग एवं अवतार तीनों गुणों में ही विचरते हैं और अहंभाव में जन्मते-मरते रहते हैं। मन रत्ती भर नहीं टिकता, गुरु के बिना सब व्यर्थ है, केवल सतिगुरु के मिलन से ही निस्तार सम्भव है ॥ २ ॥ अभिमान-युक्त कर्म जितने भी किए जाते हैं, गले में उतने ही बन्धन पड़ते जाते हैं। जो जीव मैं-मेरी को धारण करता है, अपने पाँवों में लोहे की बेड़ी पहन लेता है। जिसके मस्तक में उज्ज्वल भाग्य-रेखा विद्यमान होती है, वही गुरु से मिलकर एक ब्रह्म को पहचानता है ॥ ३ ॥ जो प्रभु के मन भाता है, वही उसे मिल पाता है और जिसे परमात्मा भुला देता है, वह सबके द्वारा भुला दिया जाता है। अपने-आप न कोई मूर्ख है, न ज्ञानी है; जिसे वह सामर्थ्य देता है, वही नाम का आख्यान करता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा अनन्त है, उसकी गहनता कोई नहीं जानता, इसलिए वे उस पर सदा क़ुर्बान हैं ॥४॥१॥१७॥

॥ मारू महला ५ ॥ मोहनी मोहि लीए त्रै गुनीआ। लोभि विआपी झूठी दुनीआ। मेरी मेरी करि कै संची अंत की बार सगल ले छलीआ ॥ १ ॥ निरभउ निरंकारु दइअलीआ। जीअ जंत सगले प्रतिपलीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एकै स्रमु करि गाडी गडहै। एकहि सुपनै दामु न छडहै। राजु कमाइ करी जिनि थैली ता कै संगि न चंचलि चलीआ ॥ २ ॥ एकहि प्राण पिंड ते पिआरी। एक संची तजि बाप महतारी। सुत मीत भ्रात ते गुहजी ता कै निकटि न होई खलीआ ॥ ३ ॥ होइ अउधूत बैठे लाइ तारी। जोगी जती पंडित बीचारी। ग्रिहि मड़ी मसाणी बन महि बसते ऊठि तिना कै लागी पलीआ ॥ ४ ॥ काटे बंधन ठाकुरि जा के। हरि हरि नामु बसिओ जीअ ता कै। साध संगि भए जन मुकते गति पाई नानक नदरि निहलीआ ॥ ५ ॥ २ ॥ १८ ॥

माया ने त्रिगुणात्मक समूचे संसार को मोह लिया है, सारी दुनिया मिथ्या लोभ में रत है। लोग मेरी-मेरी कहकर इसका (माया का) संचय करते हैं, अन्त समय वही सबको छल लेती है ॥ १ ॥ परमात्मा निर्भय, मायातीत और दयालु है; वही सब जीव, जन्तुओं का पोषण करता

है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोई श्रम से एकत्रित करके गढ़े में दबा लेता है, कोई सपने में भी दमड़ी नहीं छोड़ता। जो अधिकारपूर्वक कमाकर थैलियाँ भर लेते हैं, यह चंचल माया उनका साथ भी नहीं देती ॥ २ ॥ यह माया किसी को अपने शरीर-प्राण से भी प्यारी है, कोई माँ-बाप का त्याग करके भी माया एकत्रित करता है; कोई पुत्र, मित्र, भाइयों से भी इसे छिपाकर रखता है, किन्तु अन्ततः यह उसका साथ भी नहीं देती ॥ ३ ॥ कोई योगी बनकर समाधि लगाकर बैठते हैं, किन्तु योगी, यति और पण्डित, सब की सोच माया से इतर नहीं होती। घर में, श्मशान या वन में रहनेवाले सभी जीवों का दामन माया ने थाम रखा है ॥ ४ ॥ स्वयं स्वामी जिसके बन्धन काट देता है, उसी के हृदय में हरि-नाम बसता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव गुरु की शरण लेते हैं, वे ही मुक्ति लाभ करते हैं और परमात्मा उन्हीं पर कृपादृष्टि डालता है ॥ ५ ॥ २ ॥ १८ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ सिमरहु एकु निरंजन सोऊ। जाते बिरथा जात न कोऊ। मात गरभ महि जिनि प्रतिपारिआ। जीउ पिंडु दे साजि सवारिआ। सोई बिधाता खिनु खिनु जपीऐ। जिसु सिमरत अवगुण सभि ढकीऐ। चरण कमल उर अंतरि धारहु। बिखिआ बन ते जीउ उधारहु। करण पलाह मिटहि बिललाटा। जपि गोविद भरमु भउ फाटा। साध संगि विरला को पाए। नानकु ता कै बलि बलि जाए ॥ १ ॥ राम नामु मनि तनि आधारा। जो सिमरै तिस का निसतारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मिथिआ वसतु सति करि मानी। हितु लाइओ सठ मूड़ अगिआनी। काम क्रोध लोभ मद माता। कउडी बदलै जनमु गवाता। अपना छोडि पराइऐ राता। माइआ मद मन तन संगि जाता। त्रिसन न बूझै करत कलोला। ऊणी आस मिथिआ सभि बोला। आवत इकेला जात इकेला। हम तुम संगि झूठे सभि बोला। पाइ ठगउरी आपि भुलाइओ। नानक किरतु न जाइ मिटाइओ ॥२॥ पसु पंखी भूत अरु प्रेता। बहुबिधि जोनी फिरत अनेता। जह जानो तह रहनु न पावै। थान बिहून उठि उठि फिरि धावै। मनि तनि बासना बहुतु बिसथारा। अहंमेव मूठो बेचारा। अनिक दोख अरु बहुतु सजाई। ता की कीमति कहणु न जाई। प्रभ बिसरत नरक महि पाइआ। तह मात

न बंधु न मीत न जाइआ । जिस कउ होत क्रिपाल सुआमी । सो जनु नानक पारगरामी ॥ ३ ॥ भ्रमत भ्रमत प्रभ सरनी आइआ । दीनानाथ जगतपित माइआ । प्रभ दइआल दुख दरद बिदारण । जिसु भावै तिसही निसतारण । अंध कूप ते काढनहारा । प्रेम भगति होवत निसतारा । साध रूप अपना तनु धारिआ । महा अगनि ते आपि उबारिआ । जप तप संजम इसते किछु नाही । आदि अंति प्रभ अगम अगाही । नामु देहि मागै दासु तेरा । हरि जीवन पदु नानक प्रभु मेरा ॥ ४ ॥ ३ ॥ १६ ॥

उस मायातीत ब्रह्म का स्मरण करो, जिससे अलग कोई नहीं। जिसने (परमात्मा ने) माता के गर्भ में प्रतिपालन किया और प्राण-शरीर देकर सबको सँवारा है; उसी विधाता का नाम हर क्षण जपो, जिसके सिमरन से मनुष्य के सब अवगुण ढक जाते हैं। उस प्रभु के चरण-कमल हृदय में धारण करो, विषय-विकारों के बियाबान से आत्मा को बचाओ; इससे दुनिया का समूचा करुण प्रलाप और रुदन मिट जायगा और गोविंद-नाम के जपने से सब भ्रम-भय नष्ट हो जायँगे। साधु की संगति (गुरु का सम्पर्क) किसी विरले जीव को ही प्राप्त है और गुरु नानक ऐसे जीव पर बलिहार जाते हैं ॥ १ ॥ मेरे तन-मन को एकमात्र राम-नाम का ही सहारा है; जो इस नाम का स्मरण करता है, उसका उद्धार हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नश्वर वस्तु को मनुष्य सत्य समझ बैठता है, मूर्ख-अज्ञानी जीव उसी से प्रेम करता है। वह काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि में लीन है, अतः कौड़ी-बदले हीरे-जैसा मनुष्य-जन्म गँवा बैठता है। मनुष्य अपने परमात्मा को छोड़कर पराए (कालाधीन) में रत होता है और माया के अविवेक में बँधा आत्मा को शरीर के साथ जन्मता-मरता समझता है। तृष्णा की व्यापकता को नहीं समझता, उसी में भूला कल्लोल करता है। उसकी आशाएँ व्यर्थ और वचन मिथ्या होते हैं। वह अकेला आता है और अकेला ही जाता है। हमारे-तुम्हारे साथ मिथ्या भाषण करता है। परमात्मा ने ही माया का यह भ्रम खड़ा करके अपने को छिपाया है। गुरु नानक कहते हैं कि जीव का कर्मफल कभी नहीं मिटता ॥२॥ अनीतिकर जीव पशु, पक्षी, भूत-प्रेत आदि अनेक योनियों में डोलता रहता है। जहाँ-जहाँ भी जाता है, वहीं टिक नहीं पाता। स्थानच्युत होकर इधर-उधर भटकता है। तन-मन की इच्छाओं का बड़ा व्यापक विस्तार है, बेचारा गुमान द्वारा ठगा जाता है अर्थात् अभिमान के कारण लुटता है। मनुष्य में अनेक दोष हैं, तरह-तरह का दण्ड वह भोगता है, उसका सही

मूल्यांकन नहीं हो पाता। परमात्मा को भुलाकर नरक की यातनाएँ सहन करता है; माता, बन्धु, मित्र या स्त्री, कोई उसको सहयोग नहीं देते। गुरु नानक कहते हैं कि केवल वही पार होता है, जिस पर परमात्मा की असीम कृपा होती है ॥ ३ ॥ योनि-चक्र में भ्रमते-भटकते जब जीव परमात्मा की शरण में आता है; परमात्मा, जो कि दीनानाथ और संसार के माता-पिता हैं, सब पर दया करते और दुःख-दर्द को नष्ट करते हैं। जिस पर उसकी कृपा हो, उसी का उद्धार होता है। वह संसार रूपी अन्धे कुएँ से निकालनेवाला और प्रेम-भक्ति हेतु मुक्ति-प्रदाता है। परमात्मा ही सन्तों के रूप में शरीर धारण करता है, जगत की मायाग्नि से वही बचाता है। यह जीव जप, तप, संयमादि कुछ नहीं कर सकता, उसके लिए आदि-अन्त वह परम अगाध परमात्मा ही है। अतः गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा उनके लिए जीवनदायी है; इसलिए वे उससे केवल उसी का नाम माँगते हैं ॥ ४ ॥ ३ ॥ १९ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ कत कउ डहकावहु लोगा मोहन दीन किरपाई ॥ १ ॥ ऐसी जानि पाई। सरणि सूरो गुर दाता राखै आपि वडाई ॥१॥रहाउ॥ भगता का आगिआकारी सदा सदा सुखदाई ॥ २ ॥ अपने कउ किरपा करीअहु इकु नामु धिआई ॥ ३ ॥ नानकु दीनु नामु मागै दुतीआ भरमु चुकाई ॥ ४ ॥ ४ ॥ २० ॥

ऐ लोगो, अब मुझे क्या ठगते हो, अब तो मुझ पर मोहन (प्रभु) की कृपा है ॥ १ ॥ मुझे ऐसी समझ आ गयी है कि गुरु दाता है, अपनी शरण में आनेवालों की सूरमा की नाईं रक्षा करता और उन्हें बड़ाई देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह भक्तों की बात मान लेनेवाला और सदा सुखदायी है ॥ २ ॥ हे प्रभु, अपने दास पर कृपा करो और अपने नाम की आराधना की शक्ति दो ॥ ३ ॥ (गुरु नानक कहते हैं कि) मैं दीन तुमसे नाम-दान माँगता हूँ, मेरे द्वैत-भ्रम को दूर कर दो ॥ ४ ॥ ४ ॥ २० ॥

॥ मारू महला ५ ॥ मेरा ठाकुरु अति भारा। मोहि सेवकु बेचारा ॥ १ ॥ मोहनु लालु मेरा। प्रीतम मन प्राना। मोकउ देहु दाना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सगले मै देखे जोई। बीजउ अवरु न कोई ॥ २ ॥ जीअन प्रतिपालि समाहै। है होसी आहे ॥ ३ ॥ दइआ मोहि कीजै देवा। नानक लागो सेवा ॥ ४ ॥ ५ ॥ २१ ॥

मेरा स्वामी परमात्मा गुरु गम्भीर है, मैं उसका अकिंचन् सेवक मात्र हूँ ॥ १ ॥ मोहन मेरा प्रियतम, मुझे मन-प्राण से भी प्यारा है, वही मुझे अपना नाम-दान प्रदान करे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैंने सबको आज़माकर देख लिया है, (उसके अतिरिक्त) दूसरा कोई नहीं ॥ २ ॥ वह सब जीवों को पालता और रोज़ी पहुँचाता है— वह है, होगा और था ॥ ३ ॥ गुरु नानक विनती करते हैं कि हे प्रभु, मुझ पर कृपा करके अपनी सेवा में स्वीकार करो ॥ ४ ॥ ५ ॥ २१ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ पतित उधारन तारन । बलि बलि बले बलि जाईऐ । ऐसा कोई भेटै संतु जितु हरि हरे हरि धिआईऐ ॥१॥ मोकउ कोइ न जानत । कहीअत दासु तुमारा । एहा ओट आधारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सरब धारन प्रतिपारन इक बिनउ दीना । तुमरी बिधि तुमही जानहु तुम जल हम मीना ॥ २ ॥ पूरन बिसथीरन सुआमी आहि आइओ पाछै । सगलो भू मंडल खंडल प्रभ तुमही आछै ॥ ३ ॥ अटल अखइओ देवा मोहन अलख अपारा । दानु पावउ संता संगु नानक रेनु दासारा ॥ ४ ॥ ६ ॥ २२ ॥

हे पतितों का उद्धार करने एवं मुक्ति देनेवाले प्रभु, हम तुम पर क़ुर्बान हैं । कोई ऐसा सन्त मिले, (कि जिसके सम्पर्क में) हरि-हरि-नाम की आराधना करें ॥१॥ मुझे कोई नहीं जानता, तुम्हारा दास कहलवाता हूँ, यही मेरा अवलम्ब है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे सर्वाश्रय और सबके प्रतिपालक, मैं दीन तुमसे एक विनती करता हूँ । तुम्हारी युक्तियाँ तुम्हीं जानो, मेरे लिए तो तुम जल हो और मैं मीन हूँ ॥ २ ॥ हे पूर्ण प्रसार के स्वामी, मैं बड़ी चाह से तुम्हारे पीछे आया हूँ । धरती के सभी प्रभाग और नक्षत्र, हे प्रभु, तुम स्वयं हो ॥ ३ ॥ मेरा मोहन (परमात्मा) अटल, अनश्वर, अदृश्य और अपार है, इसलिए गुरु नानक विनती करते हैं कि उन्हें सन्तों की संगति तथा भक्तों की चरण-धूल का दान मिले ॥ ४ ॥ ६ ॥ २२ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ त्रिपति आघाए संता । गुर जाने जिन मंता । ता की किछु कहनु न जाई । जा कउ नाम बडाई ॥ १ ॥ लालु अमोला लालो । अगह अतोला नामो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अविगत सिउ मानिआ मानो । गुरमुखि ततु गिआनो । पेखत सगल धिआनो । तजिओ मन ते

अभिमानो ।। २ ।। निहचलु तिन का ठाणा । गुर ते महलु पछाणा । अनदिनु गुर मिलि जागे । हरि की सेवा लागे ।।३।। पूरन त्रिपति अघाए । सहज समाधि सुभाए । हरि भंडारु हाथि आइआ । नानक गुर ते पाइआ ।। ४ ।। ७ ।। २३ ।।

वे साधुजन तृप्त हो गए, उन्हें पूर्ण सन्तोष हुआ, जिन्होंने गुरु का उपदेश सुना और स्वीकार किया है । जो हरि-नाम की बड़ाई करता है, उसका महत्त्व कहा नहीं जा सका ।। १ ।। मेरा प्रियतम अमूल्य रत्न है, उसका नाम गहन और अतुल्य है ।। १ ।। रहाउ ।। अविनाशी परमात्मा से जिनका मन रमा है, उन गुरमुखों को तत्त्व का ज्ञान होता है । संसार में सब कुछ देखते हुए भी उनका ध्यान परमात्मा में लगा रहता है, क्योंकि उन्होंने मन से अहम् का त्याग कर दिया है ।। २ ।। उनका स्थान निश्चल होता है, वे गुरु से अपने असली घर की जानकारी पा लेते हैं । वे प्रतिदिन गुरु के सम्पर्क में जाग्रत् रहते और हरि की सेवा में रत होते हैं ।। ३ ।। वे पूर्ण सन्तोष और तृप्ति पाते और सहज आनन्दावस्था में मग्न रहते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि गुरु की कृपा से उन्हें हरि-नाम का अखुट भण्डार हाथ लगा है ।। ४ ।। ७ ।। २३ ।।

मारू महला ५ घरु ६ दुपदे

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। छोडि सगल सिआणपा मिलि साध तिआगि गुमानु । अवरु सभु किछु मिथिआ रसना राम राम वखानु ।। १ ।। मेरे मन करन सुणि हरि नामु । मिटहि अघ तेरे जनम जनम के कवनु बपुरो जामु ।। १ ।। रहाउ ।। दूख दीन न भउ बिआपै मिलै सुख बिस्रामु । गुरप्रसादि नानकु बखानै हरि भजनु ततु गिआनु ।। २ ।। १ ।। २४ ।।

हे मनुष्य, अपनी बुद्धि का गुमान छोड़कर सन्तों की शरण लो । संसार में अन्य सब कुछ मिथ्या है, अतः जीभ से राम-नाम की चर्चा करो ।। १ ।। हे मेरे मन, कानों से हरि-नाम का श्रवण करो, (इससे) तुम्हारे जन्म-जन्म के पाप धुल जायँगे, (हरि-नाम के सम्मुख) बेचारे यमदूतों का क्या सामर्थ्य ! ।। १ ।। रहाउ ।। (नाम जपनेवालों को) दुःख, दीनता, भय आदि प्रतीत ही नहीं होता, नित्य सुख-विश्राम लब्ध होता है । गुरु नानक कहते हैं कि जीव गुरु की कृपा से ही हरि-भजन द्वारा तत्त्व-दर्शन को समझ पाता है ।। २ ।। १ ।। २४ ।।

॥ मारू महला ५ ॥ जिनी नामु विसारिआ से होत देखे खेह । पुत्र मित्र बिलास बनिता तूटते ए नेह ॥ १ ॥ मेरे मन नामु नित नित लेह । जलत नाही अगनि सागर सूखु मनि तनि देह ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिरख छाइआ जैसे बिनसत पवन झूलत मेह । हरि भगति द्रिड़ु मिलु साध नानक तेरै कामि आवत एह ॥ २ ॥ २ ॥ २५ ॥

जिन जीवों ने हरि-नाम विस्मृत कर दिया, वे धूल में मिल गए। उनके लिए तो पुत्र, मित्र और स्त्री की रंगरलियों का आकर्षण भी टूट जाता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, नित्य प्रभु-नाम की आराधना करो, इससे मन, तन कीमिया हो जाते हैं, अग्नि उसे जला नहीं सकती, सागर में भी वे सूखे रह सकते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे वृक्ष की छाया नष्ट हो जाती है, जैसे पवन मेघों को उड़ा देता है। (गुरु नानक कहते हैं कि) अनश्वरता के लिए गुरु की दया से हरि-भक्ति दृढ़ होती है और अन्ततः यही काम आने की चीज़ है ॥ २ ॥ २ ॥ २५ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ पुरखु पूरन सुखह दाता संगि बसतो नीत । मरै न आवै न जाइ बिनसै बिआपत उसन न सीत ॥१॥ मेरे मन नाम सिउ करि प्रीति । चेति मन महि हरि हरि निधाना एह निरमल रीति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ क्रिपाल दइआल गोपाल गोबिद जो जपै तिसु सीधि । नवल नवतन चतुर सुंदर मनु नानक तिसु संगि बीधि ॥ २ ॥ ३ ॥ २६ ॥

पूर्ण परब्रह्म, परमपुरुष, सुखदाता प्रभु नित्य अपने भक्त जीवों के संग बसता है। वह न मरता-जीता है, न नष्ट होता है, और न ही उस पर शीतोष्ण अनुभूतियों का कोई प्रभाव होता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, राम से प्रीति लगाओ; मन में हरि-नाम की उपासना ही जीवन की निर्मल युक्ति है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कृपालु, दयालु परमात्मा का नाम जो जपेगा, वही प्रत्यक्ष सफलता प्राप्त करेगा। गुरु नानक कहते हैं कि उनका नवल और चतुर मन परमात्मा के राग में ही बिंध गया है ॥ २ ॥ ३ ॥ २६ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ चलत बैसत सोवत जागत गुर मंत्रु रिदै चितारि । चरण सरण भजु संगि साधू भवसागर उतरहि पारि ॥ १ ॥ मेरे मन नामु हिरदै धारि । करि प्रीति मनु तनु लाइ हरि सिउ अवर सगल विसारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥

जीउ मनु तनु प्राण प्रभ के तू आपन आपु निवारि । गोविद भजु सभि सुआरथ पूरे नानक कबहु न हारि ॥ २ ॥ ४ ॥ २७ ॥

ऐ मनुष्य, चलते, बैठते, सोते, जागते सदा गुरु द्वारा बताया हरि-मन्त्र अपने हृदय में धारण करो। गुरु की संगति में हरि-चरणों का भजन करने से जीव संसार-सागर से पार होता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, हरि-नाम को हृदय में धारण करो। अन्य सब सम्बल छोड़कर तन-मन से हरि की प्रीति को ग्रहण करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्हारी आत्मा, मन, तन और प्राण, सब परमात्मा के ही तो हैं, तुम अपनत्व को दूर करो। गुरु नानक कहते हैं कि गोविंद के नाम का भजन करने से सब आवश्यकताएँ पूर्ण होती हैं और मनुष्य किसी क्षेत्र में भी पराजित नहीं होता ॥ २ ॥ ४ ॥ २७ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ तजि आपु बिनसी तापु रेण साधू थीउ । तिसहि परापति नामु तेरा करि क्रिपा जिसु दीउ ॥ १ ॥ मेरे मन नामु अंम्रितु पीउ । आन साद बिसारि होछे अमरु जुगु जुगु जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु इक रस रंग नामा नामि लागी लीउ । मीतु साजनु सखा बंधपु हरि एकु नानक कीउ ॥ २ ॥ ५ ॥ २८ ॥

हे मनुष्य, तुम स्वाभिमान को त्यागो, तुम्हारे सब कष्ट दूर होंगे। सन्तों (गुरु) की चरण-धूल बनो। परमात्मा का नाम उसी को प्राप्त होता है, जिस पर सविशेष कृपा करके वह स्वयं प्रदान करता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, हरिनाम-अमृत का पान करो। अन्य निकृष्ट स्वादों का त्याग करके प्रभु के हुक्मानुसार युग-युग तक स्थिर जीवन जीओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि-नाम के रस में दृढ़ लग्न ही नामी (परमात्मा) का प्रेम उपजाती है। गुरु नानक कहते हैं कि एकमात्र परमात्मा को ही अपना साजन, मित्र और रिश्तेदार मानो ॥ २ ॥ ५ ॥ २८ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ प्रतिपालि माता उदरि राखै लगनि देत न सेक । सोई सुआमी ईहा राखै बूझु बुधि बिबेक ॥ १ ॥ मेरे मन नाम की करि टेक । तिसहि बूझु जिनि तू कीआ प्रभु करण कारण एक ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चेति मन महि तजि सिआणप छोडि सगले भेख । सिमरि हरि हरि सदा नानक तरे कई अनेक ॥ २ ॥ ६ ॥ २९ ॥

जो परमात्मा माता के गर्भ में जीव का प्रतिपालन करता है, किंचित् कष्ट नहीं होने देता। वही स्वामी यहाँ हमारी रक्षा करता है, अपनी

विवेक-बुद्धि से विचार कर देखो ॥ १ ॥ हे मेरे मन, हरि-नाम का सहारा लो और उसी को स्मरण करो, जो सबका कर्ता है और जिसने तुम्हें भी बनाया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मनुष्य, ज़रा होश में आओ, सब प्रकार का बनावटीपन और तर्क-वितर्क छोड़ दो। गुरु नानक कहते हैं कि सदा हरि-नाम की आराधना करो, जिससे अनेक जीवों का उद्धार हुआ है ॥ २ ॥ ६ ॥ २९ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ पतित पावन नामु जा को अनाथ को है नाथु। महा भउजल माहि तुलहो जा को लिखिओ माथ ॥ १ ॥ डूबे नाम बिनु खन साथ। करणकारणु चिति न आवै दे करि राखै हाथ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साध संगति गुण उचारण हरि नाम अंम्रित पाथ। करहु क्रिपा मुरारि माधउ सुणि नानक जीवै गाथ ॥ २ ॥ ७ ॥ ३० ॥

जो प्रभु अनाथों का स्वामी है और जिसका नाम पतित-पावन (पापियों को पवित्र कर देनेवाला) है, वही उन जीवों को भवसागर से पार पहुँचाने के लिए तुलहा (लकड़ी के लट्ठों का बँधा तख्ता, जिस पर बैठकर लोग नदी पार करते हैं) है, जिनका भाग्य बली है (और जिनके प्रारब्ध में प्रभु-मिलन निहित है) ॥ १ ॥ हरि-नाम के बिना अनेक जीवात्मा डूब मुए; वह सर्वकर्ता, जो हाथ देकर सबकी रक्षा करता है, उनके मन में नहीं आता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तों की संगति में परमात्मा का गुणगान और हरिनामामृत ही प्रशस्त पथ है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा उन पर कृपा करे, वे तो उसी के उपदेश सुनकर सप्राण रहते हैं ॥ २ ॥ ७ ॥ ३० ॥

मारू अंजुली महला ५ घरु ७

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ संजोगु विजोगु धुरहु ही हूआ। पंच धातु करि पुतला कीआ। साहै कै फुरमाइअड़े जी देही विचि जीउ आइ पइआ ॥ १ ॥ जिथै अगनि भखै भड़हारे। ऊरध मुख महा गुबारे। सासि सासि समाले सोई ओथै खसमि छडाइ लइआ ॥ २ ॥ विचहु गरभै निकलि आइआ। खसमु विसारि दुनी चितु लाइआ। आवै जाइ भवाईऐ जोनी रहणु न कितही थाइ भइआ ॥ ३ ॥ मिहरवानि रखि लइअनु आपे।

जीअ जंत सभि तिस के थापे । जनमु पदारथु जिणि चलिआ नानक आइआ सो परवाणु थिआ ॥ ४ ॥ १ ॥ ३१ ॥

परमात्मा से संयोग होना या परमात्मा से बिछुड़ जाना, प्रभु-इच्छा के अधीन है । मनुष्य-शरीर पाँच तत्त्वों से बना है और परमात्मा के हुक्मानुसार उस शरीर में जीव आ पड़ा है ॥ १ ॥ जहाँ लपलपाती अग्नि जलती है (गर्भाग्नि का संकेत है) और जीव उलटे मुँह होता है (गर्भ में बच्चे की स्थिति), वहाँ भी श्वास-श्वास वह रक्षा करता और जीव को (गर्भ की मुसीबत से) छुड़ा लेता है ॥ २ ॥ जब गर्भ से निकल आया है, तो जीव ने स्वामी को भुलाकर दुनिया में मन रमा लिया है । परिणामत: आवागमन और योनि-चक्र में भटकता है, कोई टिकाव (स्थिरता) उसमें नहीं रही है ॥ ३ ॥ कृपालु परमात्मा ने उसे स्वयं ही बचाया है, सब जीव-जन्तु उसी के बनाए हुए हैं । गुरु नानक कहते हैं कि जिसने जन्म-पदार्थ को जीत लिया है अर्थात् जिसने जीवन को हरि-नाम के रंग में सफल कर लिया है, वह प्रभु के दरबार में स्वीकृत होता है ॥ ४ ॥ १ ॥ ३१ ॥

वैदो न वाई भैणो न भाई एको सहाई रामु हे ॥ १ ॥ कीता जिसो होवै पापां मलो धोवै सो सिमरहु परधानु हे ॥ २ ॥ घटि घटे वासी सरब निवासी असथिरु जा का थानु हे ॥ ३ ॥ आवै न जावै संगे समावै पूरन जा का कामु हे ॥ ४ ॥ भगत जना का राखणहारा । संत जीवहि जपि प्रान अधारा । करन कारन समरथु सुआमी नानकु तिसु कुरबानु हे ॥ ५ ॥ २ ॥ ३२ ॥

यहाँ न कोई हमारा वैद्य है, न रक्षक; न कोई बहिन है न भाई, केवल परमात्मा ही एकमात्र सहायी है ॥ १ ॥ जिस परमात्मा का किया सब होता है, जो हमारे पापों का मैल धो डालता है, उसी सर्वप्रमुख का स्मरण करो ॥ २ ॥ जो घट-घट में बसता और सर्वव्यापक है, जिसका स्थान युग-युगान्त तक स्थिर है ॥ ३ ॥ जो कहीं आता-जाता नहीं, जो सबकी कामना पूर्ण करता है ॥ ४ ॥ जो भक्तजनों का रक्षक है, जिसका नाम जपकर ही सन्तजन जीवित हैं और जो उनके प्राणों का एकमात्र आधार है । गुरु नानक उस समर्थ सर्वकर्ता पर सदैव क़ुर्बान हैं ॥ ५ ॥ २ ॥ ३२ ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मारू महला ९ ॥ हरि को नामु सदा सुखदाई । जा कउ सिमरि अजामलु उधरिओ गनका

हू गति पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंचाली कउ राज सभा मै राम नाम सुधि आई । ता को दूख हरिओ करुनामै अपनी पैज बढाई ॥ १ ॥ जिह नर जसु किरपा निधि गाइओ ता कउ भइओ सहाई । कहु नानक मै इही भरोसै गही आन सरनाई ॥ २ ॥ १ ॥

(हरि-नाम की महिमा कहते हैं,) परमात्मा का नाम सदा सुख देनेवाला है । जिस नाम का स्मरण करने से अजामिल का उद्धार हुआ और गणिका-सरीखी पतिता परमगति को प्राप्त हुई (वह महान् हरि-नाम सुखद है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कौरवों की राज-सभा में द्रौपदी ने हरि-नाम का स्मरण किया, तो करुणामय प्रभु ने अपने विरद की लाज रखते हुए उसके दुःखों का हरण किया ॥ १ ॥ जो मनुष्य कृपा-निधि परमात्मा का यश गाता है, वह सदा उसका सहायक होता है । गुरु नानक कहते हैं कि उन्होंने भी इसी आशा से परमात्मा की शरण ग्रहण की है ॥ २ ॥ १ ॥

॥ मारू महला ९ ॥ अब मै कहा करउ री माई । सगल जनमु बिखिअनि सिउ खोइआ सिमरिओ नाहि कन्हाई ॥१॥ रहाउ ॥ काल फास जब गर मै मेली तिह सुधि सभ बिसराई । राम नाम बिनु या संकट मै को अब होत सहाई ॥१॥ जो संपति अपनी करि मानी छिन मो भई पराई । कहु नानक यह सोच रही मनि हरि जसु कबहू न गाई ॥ २ ॥ २ ॥

हे माँ, अब मैं क्या करूँ ? समूचा जन्म मैंने विषय-विकारों में खो दिया, किन्तु परमात्मा का नाम नहीं जपा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काल ने जब मेरे गले में फंदा डाला, तो उसकी सब सुधि जाती रही । ऐसे संकट में अब परमात्मा के नाम के अतिरिक्त और कौन सहायक हो सकता है ॥१॥ जिस सम्पदा को जीव अपनी समझता है, वह क्षण भर में ही पराई हो जाती है । गुरु नानक कहते हैं कि उस समय यही सोच मन में बनी रहती है कि क्यों परमात्मा का नाम नहीं जपा ! ॥ २ ॥ २ ॥

॥ मारू महला ९ ॥ माई मै मन को मानु न तिआगिओ । माइआ के मदि जनमु सिराइओ राम भजनि नही लागिओ ॥१॥ रहाउ ॥ जम को डंडु परिओ सिर ऊपरि तब सोवत तै जागिओ । कहा होत अब कै पछुताए छूटत नाहिन भागिओ ॥१॥ इह चिंता उपजी घट मै जब गुरचरनन अनुरागिओ । सुफलु जनमु नानक तब हूआ जो प्रभ जस मै पागिओ ॥ २ ॥ ३ ॥

हे माँ, मैंने अपने मन का गर्व नहीं त्यागा; माया के नशे में जीवन बिता दिया, राम के भजन में कभी नहीं लगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (अब जबकि) यमदूतों का दण्ड सिर पर पड़ा है तो मैं जैसे सोते से जगा हूँ; अब क्या हो सकता है? अब तो भागकर भी नहीं छूटा जा सकता ॥ १ ॥ जब गुरु के चरणों में प्रेम हुआ, तब हृदय में यह चिन्ता उपजी कि जन्म तभी सफल हो सकता है (गुरु नानक कहते हैं), जब जीव प्रभु-यशोगान में संलग्न हो ॥ २ ॥ ३ ॥

मारू असटपदीआ महला १ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ बेद पुराण कथे सुणे हारे मुनी अनेका। अठसठि तीरथ बहु घणा भ्रमि थाके भेखा। साचो साहिबु निरमलो मनि मानै एका ॥ १ ॥ तू अजरावरु अमरु तू सभ चालणहारी। नामु रसाइणु भाइ लै परहरि दुखु भारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि पड़ीऐ हरि बुझीऐ गुरमती नामि उधारा। गुरि पूरै पूरी मति है पूरै सबदि बीचारा। अठसठि तीरथ हरिनामु है किलविख काटणहारा ॥ २ ॥ जलु बिलोवै जलु मथै ततु लोड़ै अंधु अगिआना। गुरमती दधि मथीऐ अंम्रितु पाईऐ नामु निधाना। मनमुख ततु न जाणनी पसू माहि समाना ॥ ३ ॥ हउमै मेरा मरी मरु मरि जंमै वारोवार। गुर कै सबदे जे मरै फिरि मरै न दूजी वार। गुरमती जगजीवनु मनि वसै सभि कुल उधारणहार ॥ ४ ॥ सचा वखरु नामु है सचा वापारा। लाहा नामु संसारि है गुरमती वीचारा। दूजै भाइ कार कमावणी नित तोटा सैसारा ॥ ५ ॥ साची संगति थानु सचु सचे घर बारा। सचा भोजनु भाउ सचु सचु नामु अधारा। सची बाणी संतोखिआ सचा सबदु वीचारा ॥ ६ ॥ रस भोगण पातिसाहीआ दुख सुख संघारा। मोटा नाउ धराईऐ गलि अउगण भारा। माणस दाति न होवई तू दाता सारा ॥ ७ ॥ अगम अगोचरु तू धणी अविगतु अपारा। गुरसबदी दरु जोईऐ मुकते भंडारा। नानक मेलु न चूकई साचे वापारा ॥ ८ ॥ १ ॥

वेदों-पुराणों की कथाएँ कहते-सुनते अनेक ऋषि-मुनि पराजित हुए

हैं। वेषधारी साधु अठसठ तीर्थों पर भटकते-भटकते थके हैं। (किन्तु) सच्चा निर्मल स्वामी एक ही है, जो मन ही में विद्यमान है ॥ १ ॥ हे परमात्मा, तुम अजर हो, तुम अमर हो, अन्य सब लोग नश्वर हैं। जो प्रेमपूर्वक तुम्हारे नाम की ओषधि का नियमित सेवन करते हैं, उनके भारी दुःख दूर हो जाते हैं ॥१॥रहाउ॥ गुरु-मतानुसार हरि-नाम पढ़ने और समझने से जीव का उद्धार होता है। पूरे गुरु के सम्पर्क में मनुष्य का विवेक पूर्ण होता और शब्द का ज्ञान होता है। हरि-नाम ही अठसठ तीर्थों के समान पाप-विमोचन है ॥ २ ॥ पानी का मंथन करने से अज्ञानांध मूर्ख यह जीव तत्त्व प्राप्त करना चाहता है। गुरुमत रूपी दुग्ध-मंथन से ही हरि-नाम रूपी तत्त्व-अमृत की उपलब्धि होती है। मनमुख जीव इस तत्त्व को नहीं समझते, पशुता के स्वभाव को ही बनाए रखते हैं ॥ ३ ॥ जो जीव अहम् एवं अधिकार भावना की मृत्यु में मरता है, वह बार-बार जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है। किन्तु जो गुरु के शब्दों की पहचान में मरता है, वह दोबारा कभी नहीं मरता (मुक्त हो जाता है)। वह समूचे कुल का उद्धारक परमात्मा गुरु के उपदेशानुसार आचरण करने से ही मन में बसता है ॥ ४ ॥ हरि-नाम ही सत्य का सौदा है और हरि-नाम ही सच्चा व्यापार है। गुरु-मतानुसार इस संसार में प्रभु-नाम जपना ही मूल लाभ है, किन्तु जो जीव द्वैत-भाव में कर्म करते हैं, वे नित्य संसार में घाटे का सौदा किया करते हैं ॥ ५ ॥ जो जीव सच्ची संगति में, सच्चे स्थान और सच्चे घर-बार को प्राप्त करते हैं; जो सच्चे भाव से, सच्चे नाम के सहारे हरि-नाम का ही सच्चा भोजन करते हैं; वे सच्ची वाणी का सन्तोष और सच्चे शब्द की जानकारी प्राप्त करते हैं ॥ ६ ॥ जो बादशाहत का रस भोगते और दुःख-सुख के उतार-चढ़ाव को सहते हैं; जो नाम के तो बड़े हैं, किन्तु गले में अवगुणों का बोझ ढोते हैं— (सच तो यह है कि) मनुष्य का दिया दान व्यर्थ है, वास्तविक दाता (प्रभु) तुम ही हो ॥ ७ ॥ परमात्मा अगम, अगोचर, अविनाशी, अपार स्वामी है; गुरु के शब्द से ही यदि परमात्मा के द्वार की खोज करें, तभी वह मुक्ति का भण्डार प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह मिलाप सच्चा व्यापार है, जो कभी अन्त नहीं होता ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ मारू महला १ ॥ बिखु बोहिथा लादिआ दीआ समुंद मंझारि। कंधी दिसि न आवई ना उरवारु न पारु। वंझी हाथि न खेवटू जलु सागरु असरालु ॥ १ ॥ बाबा जगु फाथा महा जालि। गुरपरसादी उबरे सचा नामु समालि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरू है बोहिथा सबदि लंघावणहारु। तिथै

पवणु न पावको ना जलु ना आकारु। तिथै सचा सचि नाइ भवजल तारणहारु॥ २॥ गुरमुखि लंघे से पारि पए सचे सिउ लिव लाइ। आवागउणु निवारिआ जोती जोति मिलाइ। गुरमती सहजु ऊपजै सचे रहै समाइ॥ ३॥ सपु पिड़ाई पाईऐ बिखु अंतरि मनि रोसु। पूरबि लिखिआ पाईऐ किसनो दीजै दोसु। गुरमुखि गारड़ु जे सुणे मंने नाउ संतोसु॥ ४॥ मागर मछु फहाईऐ कुंडी जालु वताइ। दुरमति फाथा फाहीऐ फिरि फिरि पछोताइ। जंमणु मरणु न सुझई किरतु न मेटिआ जाइ॥ ५॥ हउमै बिखु पाइ जगतु उपाइआ सबदु वसै बिखु जाइ। जरा जोहि न सकई सचि रहै लिव लाइ। जीवन मुकतु सो आखीऐ जिसु विचहु हउमै जाइ॥ ६॥ धंधै धावत जगु बाधिआ ना बूझै वीचारु। जंमण मरणु विसारिआ मनमुख मुगधु गवारु। गुरि राखे से उबरे सचा सबदु वीचारि॥ ७॥ सूहटु पिंजरि प्रेम कै बोलै बोलणहारु। सचु चुगै अंम्रितु पीऐ उडै त एका वार। गुरि मिलिऐ खसमु पछाणीऐ कहु नानक मोख दुआरु॥ ८॥ २॥

(संसार में रहनेवाले) मनमुख जीवों ने अपना जीवन रूपी जहाज़ विषय-विकारों के विष से लादकर संसार-सागर में डाला है। यह संसार-सागर बड़ा गहन है, इसका कोई किनारा नहीं दिखता, न इसका आर-पार है (अर्थात् यह सागर अन्तहीन है)। इस जहाज़ का न कोई मल्लाह है, और न ही उसके हाथ में जहाज़ चलानेवाला कोई उपकरण है (अर्थात् सांसारिक जीवों का जीवन रूपी जहाज़ भयंकर संसार-सागर में दिशाहीन भटक रहा है), सागर भी अथाह है॥ १॥ बाबा, सारा संसार माया के महाजाल में फँसा है। गुरु की कृपा से हरिनाम-स्मरण करने से ही इससे छुटकारा सम्भव है॥ १॥ रहाउ॥ (संसार-सागर से पार होने के लिए सही जहाज़ सतिगुरु है और उसका शब्द पार करवाने का सामर्थ्य है। (जहाज़ को चलाने के लिए पवन या अग्नि की अपेक्षा होती है, किन्तु) इस जहाज़ में न पवन है, न अग्नि से यह चलता है, इसे ठेलनेवाला जल भी नहीं और न ही इसका अपना कोई आकार है। केवल सच्चा हरि-नाम ही इस जहाज़ को भव-सागर से पार लगाता है॥ २॥ गुरुमुख जीव (गुरु के आदेशानुसार आचरण करनेवाले) ही परमात्मा से लग्न लगाकर इससे पार होते हैं। उनका आवागमन समाप्त हो जाता है और उनकी ससीम ज्योति प्रभु की असीम ज्योति में मिल जाती

है। गुरु का आदेश-पालन से जीव स्थिरता की दशा को प्राप्त होता और सत्य में ही समा जाता है ॥ ३ ॥ जैसे साँप को पिटारी में बन्द कर देने से भी उसके भीतर का विष और आक्रोश समाप्त नहीं होता (मन रूपी सर्प की यही दशा है। मन को बलात् संयमित करने के प्रयास में उसके भीतर की चंचल प्रवृत्ति को नहीं रोका जा सकता), किन्तु यह तो उसका प्रारब्ध है (अर्थात् कर्मानुसार उसका स्वभाव है), दोष किसे दिया जा सकता है। मन रूपी सर्प का विष दूर करने का एक ही तरीक़ा है, गुरु के शब्द का गारुड़-मन्त्र सुनने से परमशान्ति-पद प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ [सागर में मगरमच्छ होते हैं, संसार-सागर में भी ऐसे मगरमच्छ (मनोविकार) हैं।] मगरमच्छ को पकड़ने के लिए शिकारी कुंडी में मांस लगाकर या जाल डालकर उसे फँसा लेते हैं। वह अपनी कुमति के कारण जाल में फँसता और पुनःपुनः पश्चात्ताप करता है; वह जन्म-मरण के चक्र से अनभिज्ञ रहता और अपने प्रारब्धयुक्त स्वभाव को मिटाने में असमर्थ रहता है ॥ ५ ॥ परमात्मा ने यह संसार-सागर अहंकार के विष से ही पैदा किया है; यह विष केवल प्रभु-शब्द से ही उतरता है। जो जीव सत्यस्वरूप परमात्मा में रत रहते हैं, उन्हें जरा-मृत्यु, कुछ भी कष्टकर नहीं होता। भीतर से अहम् को नष्ट कर देनेवाला जीव जीवन्मुक्त-पद को पाता है ॥ ६ ॥ सारा संसार अपने-अपने धंधे से बँधा पड़ा है, इसके रहस्य को कोई विचार नहीं पाता। मूर्ख-गँवार जीव जन्म-मरण के तथ्य को विस्मृत करके (संसार के प्रवाह में बहता है)। जो जीव सच्चे हरि-नाम का स्मरण करते हैं, गुरु उनकी रक्षा करता है, उनका उद्धार हो जाता है ॥ ७ ॥ जीव रूपी तोता जब प्रभु के प्रति प्रेम की बोली बोलने लगता, सत्यज्ञान का अमृत पीता और उड़ता है, तो एक ही बार में अपने लक्ष्य को पा लेता है (जन्म-मरण से मुक्त होता है)। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के मिलाप से ईश्वर की प्राप्ति है और ईश्वरोपलब्धि ही मोक्ष का मार्ग है ॥ ८ ॥ २ ॥

॥ मारू महला १ ॥ सबदि मरै ता मारि मरु भागो किसु पहि जाउ। जिस कै डरि भै भागीऐ अंम्रितु ता को नाउ। मारहि राखहि एकु तू बीजउ नाही थाउ ॥ १ ॥ बाबा मै कुचीलु काचउ मतिहीन। नाम बिना को कछु नही गुरि पूरै पूरी मति कीन ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अवगणि सुभर गुण नही बिनु गुण किउ घरि जाउ। सहजि सबदि सुखु ऊपजै बिनु भागा धनु नाहि। जिन कै नामु न मनि वसै से बाधे दूख सहाहि ॥ २ ॥ जिनी नामु विसारिआ से कितु आए संसारि। आगै पाछै सुखु

नही गाडे लादे छारु । विछुड़िआ मेला नही दूखु घणो जम दुआरि ॥ ३ ॥ अगै किआ जाणा नाहि मै भूले तू समझाइ । भूले मारगु जो दसे तिस कै लागउ पाइ । गुर बिनु दाता को नही कीमति कहणु न जाइ ॥ ४ ॥ साजनु देखा ता गलि मिला साचु पठाइओ लेखु । मुखि धिमाणै धन खड़ी गुरमुखि आखी देखु । तुधु भावै तू मनि वसहि नदरी करमि विसेखु ॥ ५ ॥ भूख पिआसो जे भवै किआ तिसु मागउ देइ । बीजउ सूझै को नही मनि तनि पूरनु देइ । जिनि कीआ तिनि देखिआ आपि वडाई देइ ॥ ६ ॥ नगरी नाइकु नवतनो बालकु लील अनूपु । नारि न पुरखु न पंखणू साचउ चतुरु सरूपु । जो तिसु भावै सो थीऐ तू दीपकु तू धूपु ॥ ७ ॥ गीत साद चाखे सुणे बाद साद तनि रोगु । सचु भावै साचउ चवै छूटै सोग विजोगु । नानक नामु न वीसरै जो तिसु भावै सु होगु ॥ ८ ॥ ३ ॥

मृत्यु को शब्द से मारो (अर्थात् शब्द द्वारा मृत्यु-भय से मुक्त होओ), अन्यथा इससे भागकर कहाँ जाओगे। जिसके भय से स्वयं भय डरता है, वही अमृत (अर्थात् अमर कर देनेवाला— प्रभु) कहलाता है। मारने, जिलानेवाला, हे परमात्मा, एक तुम ही हो, दूसरा (हमारे लिए) कोई स्थान नहीं ॥ १ ॥ हे बाबा, मैं मलिन, अस्थिर और मतिहीन हूँ; हरि-नाम के बिना कोई कुछ नहीं, पूर्णगुरु ने ही मुझे यह विवेक प्रदान किया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (मैं) अवगुणों से भरपूर हूँ, (मुझमें) कोई गुण नहीं; गुण-हीन होकर (मैं) अपने वास्तविक घर अर्थात् प्रभु की शरण में क्योंकर जाऊँ ? सहजानुभूति में ही सुख उपजता है, किन्तु यह सुख-राशि भाग्यहीन व्यक्ति को नहीं मिलती। जिन जीवों के मन में प्रभु-नाम का निवास नहीं, वे (यमदूतों द्वारा) बँधे, दुःख सहन करते हैं ॥ २ ॥ जिन्होंने परमात्मा के नाम को विस्मृत कर दिया है, वे संसार में क्यों आए हैं ! उनके लिए आगे-पीछे कहीं सुख नहीं, वे तो गन्दगी ढोनेवाले ठेले मात्र हैं (अर्थात् पापों से भरे हैं)। वे एक बार परमात्मा से बिछुड़े हैं, तो दोबारा उनका मिलन नहीं होता और वे यम के द्वार पर अनेक दुःख सहन करते हैं ॥ ३ ॥ आगे की स्थिति को (मैं) नहीं समझता; बार-बार भूल जाता हूँ और तुम पुनःपुनः समझाते हो। जो मुझ भूले हुए को मार्ग बता देगा, (मैं) उसी की चरण-शरण लूँगा। (सच तो यह है कि) गुरु के सिवा और कोई दाता नहीं, उसका सही मूल्यांकन कोई नहीं कर सकता ॥ ४ ॥ यदि प्रभु-साजन को देख पाऊँ, तो उसके गले लग जाऊँ और उसके पास सच्चा जीवन व्यतीत करने की प्रतिज्ञा करूँ। आत्मा

रूपी स्त्री मुँह लटकाए विचारों में खोई हुई खड़ी है; ऐ स्त्री, उस साजन को गुरु के द्वारा अपनी आँखों से देख। जब उसकी कृपा होती है, तभी वह मन में आन बसता है और कृपा-दृष्टि मात्र से ही (उसे) विशेष कृपा प्रदान कर देता है ॥५॥ जो (मिथ्या वेषधारी स्वयं) भूखे-प्यासे घूमते हैं, उनसे क्या माँगना हुआ, और वे क्या दे सकते हैं? देनेवाला दूसरा कोई नहीं दीखता; जो तन-मन में व्याप्त है, वही सब कुछ देता है, जिन्होंने हरि-नाम की कमाई की है, उन्होंने उसे साक्षात् पाया है, उसी ने (परमात्मा ने) ही उन्हें बड़ाई दी है ॥ ६ ॥ शरीर रूपी नगरी का स्वामी लीलाधर नवीन बालक (नित्य नयी लीलाएँ करने के कारण परमात्मा को बालक कहा गया) है। वह नारी, पुरुष, पक्षी आदि की सीमाओं से परे विशिष्ट स्वरूप का धारक है। जो उसे रुचता है, वही होता है; वह दीपक और सुगन्ध, सब स्वयं ही है (अर्थात् आलोक एवं गंध वही है) ॥ ७ ॥ (जो जीव) अनाहत नाद का स्वाद चख लेता है, शारीरिक संयोग-वियोग के रोगों को काटता और व्यर्थ के स्वादों को त्याग देता है, उसे सत्य में प्रेम होता है, वह सत्य बोलता है और उसके सब शोक-वियोग दूर हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि (जीव को) हरि-नाम कभी विस्मृत नहीं होना चाहिए, परमात्मा को जो रुचता है, वही होता है ॥ ८ ॥ ३ ॥

॥ मारू महला १ ॥ साची कार कमावणी होरि लालच बादि। इहु मनु साचै मोहिआ जिहवा सचि सादि। बिनु नावै को रसु नही होरि चलहि बिखु लादि ॥ १ ॥ ऐसा लाला मेरे लाल को सुणि खसम हमारे। जिउ फुरमावहि तिउ चला सचु लाल पिआरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनदिनु लाले चाकरी गोले सिरि मीरा। गुर बचनी मनु वेचिआ सबदि मनु धीरा। गुर पूरे साबासि है काटै मन पीरा ॥ २ ॥ लाला गोला धणी को किआ कहउ वडिआईऐ। भाणै बखसे पूरा धणी सचु कार कमाईऐ। विछुड़िआ कउ मेलि लए गुर कउ बलि जाईऐ ॥ ३ ॥ लाले गोले मति खरी गुर की मति नीकी। साची सुरति सुहावणी मनमुख मति फीकी। मनु तनु तेरा तू प्रभू सचु धीरक धुरकी ॥ ४ ॥ साचै बैसणु उठणा सचु भोजनु भाखिआ। चिति सचै वितो सचा साचा रसु चाखिआ। साचै घरि साचै रखे गुर बचनि सुभाखिआ ॥ ५ ॥ मनमुख कउ आलसु घणो फाथे ओजाड़ी। फाथा चुगै नित चोगड़ी लगि बंधु विगाड़ी।

गुरपरसादी मुकतु होइ साचे निज ताड़ी ॥ ६ ॥ अनहति लाला बेधिआ प्रभ हेति पिआरी । बिनु साचे जीउ जलि बलउ झूठे वेकारी । बादि कारा सभि छोडीआ साची तरु तारी ॥७॥ जिनी नामु विसारिआ तिना ठउर न ठाउ । लालै लालचु तिआगिआ पाइआ हरि नाउ । तू बखसहि ता मेलि लैहि नानक बलि जाउ ॥ ८ ॥ ४ ॥

केवल सत्यनाम की कमाई करो, अन्य सब मोह व्यर्थ हैं । अपने मन में सत्यस्वरूप परमात्मा का मोह पैदा करो, जिह्वा को उसी के स्वाद में लीन रखो; (स्मरण रहे कि) हरि-नाम के बिना कोई सरसता नहीं, (अन्य आकर्षणों में फँसनेवाले) अन्य सब विष लादकर चलते हैं ॥ १ ॥ हे मेरे स्वामी (खसम), मेरे लालजी, मुझे ऐसा सेवक जानो, कि जो आपके आदेश पर सदा स्थिर चलता रहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मुझ सेवक को तो रात-दिन (तुम्हारी) चाकरी ही करनी है, मेरे सिर पर तुम्हारा स्वामित्व है । मैंने गुरु के वचनानुसार तुम्हारे पास अपना मन बेच दिया है, उसी के शब्दों से मन को धैर्य प्राप्त हुआ है । उसी सच्चे गुरु को इसका समूचा श्रेय है, जो मन की सब वेदनाओं को काट देता है ॥ २ ॥ हरि रूपी स्वामी के सेवक की क्या बड़ाई करें; वह सदा अपने स्वामी की इच्छा में चलता और सत्य की कमाई करता है । सतिगुरु पर (हम) बलिहार जाते हैं, जो बिछुड़ी आत्माओं को पुनः परमात्मा से मिला देता है ॥ ३ ॥ गुरु का सही आदेश पाने के कारण सेवक की बुद्धि भी निर्मल है । उसकी वृत्ति भी निर्मल हो गयी है, किन्तु जो जीव गुरु के प्रति अविश्वस्त हैं, उनकी बुद्धि हीन होती है (वे मतिहीन हैं) । यह तन-मन सब तुम्हारा है, हे प्रभु, तुम सबका धैर्य बँधानेवाले हो ॥४॥ जीव का उठना-बैठना, भोजन खाना, सब सत्य के वातावरण में हो; उसके मन में सत्य हो, उनकी कमाई सत्य हो और वे सत्यामृत का ही रस चखें; (तो) गुरु के शुभ वचनों का अनुकरण करते हुए वे सत्यस्वरूप परमात्मा के सच्चे घर में वास करते हैं ॥ ५ ॥ मनमुख जीव को हरि-नाम का आलस्य होता है, इसीलिए वह संसार के उजाड़-मोह में फँसा रहता है । वह सांसारिक पदार्थों का दाना चुगने में मग्न होकर प्रभु से सम्बन्ध बिगाड़ लेता है । वह गुरु की कृपा से अपने सच्चे स्वरूप में ध्यानस्थ होकर ही मुक्त होता है ॥ ६ ॥ परमात्मा का सेवक सदा अपने स्वामी के प्रेम-प्यार में बिंधा रहता है । सच्चे परमात्मा से विमुख रहनेवाले झूठे और विकारी हैं, उनका मन सदा त्रयताप में जलता है । (अतः) व्यर्थ के काम छोड़कर सत्य की तैराकी करो (अर्थात् सत्य की लहरों में तैरो) ॥ ७ ॥ जिन्होंने हरि-नाम की उपेक्षा की है, उन्हें

कोई ठिकाना नहीं। जो सेवक लोभ-मोह का त्याग करके हरि-नाम को प्राप्त करते हैं, तुम (हे प्रभु) कृपापूर्वक उन्हें अपने में आत्मसात् कर लेते हो, (गुरु नानक इसीलिए तुम पर) बलिहार जाते हैं ॥ ८ ॥ ४ ॥

॥ मारू महला १ ॥ लालै गारबु छोडिआ गुर कै भै सहजि सुभाई। लालै खसमु पछाणिआ वडी वडिआई। खसमि मिलिऐ सुखु पाइआ कीमति कहणु न जाई ॥ १ ॥ लाला गोला खसम का खसमै वडिआई। गुरपरसादी उबरे हरि की सरणाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लाले नो सिरिकार है धुरि खसमि फुरमाई। लालै हुकमु पछाणिआ सदा रहै रजाई। आपे मीरा बखसि लए वडी वडिआई ॥ २ ॥ आपि सचा सभु सचु है गुर सबदि बुझाई। तेरी सेवा सो करे जिसनो लैहि तू लाई। बिनु सेवा किनै न पाइआ दूजै भरमि खुआई ॥ ३ ॥ सो किउ मनहु विसारीऐ नित देवै चड़ै सवाइआ। जीउ पिंडु सभु तिसदा साहु तिनै विचि पाइआ। जा क्रिपा करे ता सेवीऐ सेवि सचि समाइआ ॥ ४ ॥ लाला सो जीवतु मरै मरि विचहु आपु गवाए। बंधन तूटहि मुकति होइ त्रिसना अगनि बुझाए। सभ महि नामु निधानु है गुरमुखि को पाए ॥ ५ ॥ लाले विचि गुणु किछु नही लाला अवगणिआरु। तुधु जेवडु दाता को नही तू बखसणहारु। तेरा हुकमु लाला मंने एह करणी सारु ॥ ६ ॥ गुरु सागरु अंम्रितसरु जो इछे सो फलु पाए। नामु पदारथु अमरु है हिरदै मंनि वसाए। गुर सेवा सदा सुखु है जिसनो हुकमु मनाए ॥ ७ ॥ सुइना रुपा सभ धातु है माटी रलि जाई। बिनु नावै नालि न चलई सतिगुरि बूझ बुझाई। नानक नामि रते से निरमले साचै रहे समाई ॥ ८ ॥ ५ ॥

गुरु के भय एवं शांत स्वभाव से प्रभावित होकर सेवक ने गर्व छोड़ दिया और अपने ख़सम (स्वामी) को पहचान लिया, यही उसकी बड़ाई है। स्वामी को मिलकर उसे अपरिमित सुख मिला, जिसका मोल नहीं डाला जा सकता ॥ १ ॥ सेवक स्वामी का अनुसरण करता है, इसलिए स्वामी की बड़ाई ही (उसकी बड़ाई है)। वह गुरु की कृपा से हरि-शरण में आकर (संसार-सागर से) तिर जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सेवक का कर्तव्य स्वामी का आदेश पालना है, प्रभु ने शुरू से ही जो हुक्म दिया है, उसको पालना ही सेवक के सिर है। सेवक हुक्म को पहचानता और

सदा ईश्वरेच्छा में रहता है। उसका स्वामी अपने बड़प्पन के कारण ही उसे बख्श लेता है ॥ २ ॥ परमात्मा सत्यस्वरूप है, उससे सम्बद्ध सब सत्य है और वह गुरु के शब्दों से ही जाना जा सकता है। हे प्रभु, तुम्हारी सेवा भी वही कर सकता है, जिसे तुम अपने संग लगा लेते हो। सेवा के बिना सब द्वैत-भाव में भटकते रहते हैं, प्रभु किसी को नहीं मिलता ॥ ३ ॥ जिस परमात्मा की देन नित्य अभिवृद्धिशील रहती है, उसका विस्मरण क्यों किया जाय ! यह शरीर प्राण उसी का तो है, उसी ने इसके भीतर श्वास रखा है। यदि वह कृपा करे, तभी उसकी सेवा हो सकती है और जीव (सेवक) सत्य में समा जाता है ॥४॥ परमात्मा का वास्तविक सेवक वह है, जो जीवित ही मृत्यु को प्राप्त करता और भीतर से अहम् के भाव का दमन करता है। उसके बन्धन टूट जाते हैं, तृष्णा की अग्नि शमित होती है और वह मुक्त होता है। सर्वोच्च सुख-निधि हरि-नाम में ही विद्यमान है, जिसे कोई विरला जीव ही गुरु के द्वारा प्राप्त करता है ॥ ५ ॥ सेवक में अपना कोई गुण नहीं, वह गुणहीन है। तुम्हारे बराबर, हे परमात्मा, कोई दाता नहीं, तुम सबसे बड़े क्षमाशील हो। सेवक तुम्हारी आज्ञा को शिरोधार्य करे, उसके लिए यह श्रेष्ठ कर्म है ॥ ६ ॥ गुरु हरि-नाम रूपी अमृत का सरोवर है, उससे स्वेच्छापूर्वक फल की प्राप्ति होती है। यह हरि-नाम रूपी पदार्थ अमर है, इसे अपने हृदय में बसा लो। गुरु की सेवा में रहने तथा उसका हुक्म मानने में सदा सुख है ॥ ७ ॥ सोना, चाँदी आदि धातुएँ माया-समान हैं, सब मिट्टी में मिल जाती हैं; हरि-नाम के बिना कुछ साथ नहीं चलता, सच्चे गुरु ने मुझे यह सूझ दी है। अतः गुरु नानक कहते हैं कि जो हरि-नाम जपते हैं, वे निर्मल होते और सत्यस्वरूप परमात्मा में ही लीन हो जाते हैं ॥ ८ ॥ ५ ॥

॥ मारू महला १ ॥ हुकमु भइआ रहणा नही धुरि फाटे चीरै। एहु मनु अवगणि बाधिआ सहु देह सरीरै। पूरै गुरि बखसाईअहि सभि गुनह फकीरै ॥ १ ॥ किउ रहीऐ उठि चलणा बुझु सबद बीचारा। जिसु तू मेलहि सो मिलै धुरि हुकमु अपारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ तू राखहि तिउ रहा जो देहि सु खाउ। जिउ तू चलावहि तिउ चला मुखि अंम्रित नाउ। मेरे ठाकुर हथि वडिआईआ मेलहि मनि चाउ ॥ २ ॥ कीता किआ सालाहीऐ करि देखै सोई। जिनि कीआ सो मनि वसै मै अवरु न कोई। सो साचा सालाहीऐ साची पति होई ॥३॥ पंडितु पड़ि न पहुचई बहु आल जंजाला। पाप पुंन दुइ संगमे खुधिआ जम काला। विछोड़ा भउ वीसरै पूरा रखवाला ॥ ४ ॥

जिन की लेखै पति पवै से पूरे भाई । पूरे पूरी मति है सची वडिआई । देदे तोटि न आवई लै लै थकि पाई ।। ५ ।। खार समुद्रु ढंढोलीऐ इकु मणीआ पावै । दुइ दिन चारि सुहावणा माटी तिसु खावै । गुरु सागरु सति सेवीऐ दे तोटि न आवै ।। ६ ।। मेरे प्रभ भावनि से ऊजले सभ मैलु भरीजै । मैला ऊजलु ता थीऐ पारस संगि भीजै । वंनी साचे लाल की किनि कीमति कीजै ।। ७ ।। भेखी हाथ न लभई तीरथि नही दाने । पूछउ बेद पड़ंतिआ मूठी विणु माने । नानक कीमति सो करे पूरा गुरु गिआने ।। ८ ।। ६ ।।

प्रभु के हुक्मानुसार मृत्यु का संदेश आ गया है, अब यहाँ नहीं रहना है (फटी चिट्ठी का अभिप्राय पंजाबी संस्कारों के अनुसार मृत्यु का संदेश देनेवाली चिट्ठी होता है) । यह मन अपने अवगुणों के कारण शरीर में बँधा दुःख सहता है । जिस दास के अवगुण सच्चे गुरु के द्वारा क्षमा करवा लिये गए हैं, वह इन दुःखों से बच जाता है ।। १ ।। यहाँ से तो जाना ही है, स्थिर कैसे रहा जा सकता हे ? ज़रा गुरु के शब्दों को सोच-समझकर देखें । जिसे तुम अपने में मिलाते हो, वही मिल पाता है —ऐसा सदा से बना नियम है ।। १ ।। रहाउ ।। हे परमात्मा, जैसे तुम रखोगे, मैं रहूँगा और जो दोगे, वही खाऊँगा । जैसा तुम चलाओगे, मैं वैसे ही तुम्हारा अमृत-नाम मुख में धारण करके चलूँगा । सब प्रदेय मेरे स्वामी के हाथ है, वह स्वेच्छापूर्वक जहाँ कहीं रुचता है, मिलन प्रदान करता है ।। २ ।। पैदा किए गए जीव का क्या बड़प्पन है ? उसकी देखभाल तो अब भी पैदा करनेवाला ही करता है । जिसने पैदा किया है, वही मन में बसता है, उसके अतिरिक्त और कुछ नहीं । उसी सत्यस्वरूप परमात्मा की प्रशस्ति करो, उसी में हमारा सच्चा सम्मान है ।। ३ ।। पण्डित (धर्मग्रन्थों को) पढ़-पढ़कर भी उस तक नहीं पहुँच पाता, घर के कार्यों-धन्धों में (फँसा रहता है) । वह पाप-पुण्य के बन्धनों तथा यमकाल और भूख के कष्टों में पड़ता है । यदि सम्पूर्ण रक्षक गुरु मिल जाय, तो बिछुड़ने का भय ही नष्ट हो जाय ।। ४ ।। जिनकी मर्यादा सुरक्षित होती है, वे पूर्णता को पा लेते हैं । पूर्णता में रहते हुए पूर्ण विवेक को पाकर जीव प्रशस्ति को प्राप्त होता है । देनेवाले (दाता प्रतिमान) को कभी कोई कमी नहीं आती, लेनेवाले जीव ले-लेकर थक जाते हैं ।। ५ ।। खारे समुद्र की खोज करने से कोई एकाध रत्न मिल जाता है (अर्थात् गुरु ऐसे रत्नों की खान है, जिसमें कोई कमी नहीं आती) । दो दिन के लिए पुरुष सुहावना होता है, अन्ततः उसे मिट्टी निगल जाती है । (किन्तु)

यदि सच्चे समुद्र गुरु की सेवा में रत हों तो कभी कोई अभाव नहीं ग्रसता ॥ ६ ॥ जो जीव मेरे परमात्मा को स्वीकार हैं, वे ही उज्ज्वल हैं, अन्य सब मैल में भरे हैं। मैला तभी उज्ज्वल हो सकता है, जब वह किसी पारस रूपी गुरु की शरण ले ले। हरि-नाम रूपी सच्चे रत्न के प्राप्त होने से जो रंग जीव पर चढ़ता है, वह अमूल्य है ॥ ७ ॥ आडम्बर-वेष करने, तीर्थ-व्रत-दान करने से भी इस रत्न का मोल नहीं पड़ता। वेद-पाठियों से पूछो, इस तथ्य को न मानने से जगत के जीव लुट रहे हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिसे पूरा गुरु तथा उससे सच्चे ज्ञान का लाभ होता है, वही उसकी (प्रभु रूपी रत्न की) क़ीमत डाल सकता है ॥ ८ ॥ ६ ॥

॥ मारू महला १ ॥ मनमुखु लहरि घरु तजि विगूचै अवरा के घर हेरै। ग्रिह धरमु गवाए सतिगुरु न भेटै दुरमति घूमन घेरै। दिसंतरु भवै पाठ पड़ि थाका त्रिसना होइ वधेरै। काची पिंडी सबदु न चीनै उदरु भरै जैसे ढोरै ॥ १ ॥ बाबा ऐसी रवत रवै संनिआसी। गुर कै सबदि एक लिव लागी तेरै नामि रते त्रिपतासी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घोली गेरू रंगु चड़ाइआ वसत्र भेख भेखारी। कापड़ फारि बनाई खिंथा झोली माइआ धारी। घरि घरि मागै जगु परबोधै मनि अंधै पति हारी। भरमि भुलाणा सबदु न चीनै जूऐ बाजी हारी ॥ २ ॥ अंतरि अगनि न गुर बिनु बूझै बाहरि पूअर तापै। गुर सेवा बिनु भगति न होवी किउकरि चीनसि आपै। निंदा करि करि नरक निवासी अंतरि आतम जापै। अठसठि तीरथ भरमि विगूचहि किउ मलु धोपै पापै ॥ ३ ॥ छाणी खाकु बिभूत चड़ाई माइआ का मगु जोहै। अंतरि बाहरि एकु न जाणै साचु कहे ते छोहै। पाठु पड़ै मुखि झूठो बोलै निगुरे कीमति ओहै। नामु न जपई किउ सुखु पावै बिनु नावै किउ सोहै ॥ ४ ॥ मूंडु मुडाइ जटा सिख बाधी मोनि रहै अभिमाना। मनूआ डोलै दहदिस धावै बिनु रत आतम गिआना। अंम्रितु छोडि महा बिखु पीवै माइआ का देवाना। किरतु न मिटई हुकमु न बूझै पसूआ माहि समाना ॥ ५ ॥ हाथ कमंडलु कापड़ीआ मनि त्रिसना उपजी भारी। इसत्री तजि करि कामि विआपिआ चितु लाइआ पर नारी। सिख करे करि सबदु न चीनै लंपटु है बाजारी। अंतरि बिखु बाहरि निभराती ता जमु करे खुआरी ॥ ६ ॥

सो संनिआसी जो सतिगुर सेवै विचहु आपु गवाए । छादन भोजन की आस न करई अचिंतु मिलै सो पाए । बकै न बोलै खिमा धनु संग्रहै तामसु नामि जलाए । धनु गिरही संनिआसी जोगी जि हरि चरणी चितु लाए ॥ ७ ॥ आस निरास रहै संनिआसी एकसु सिउ लिव लाए । हरि रसु पीवै ता साति आवै निजघरि ताड़ी लाए । मनूआ न डोलै गुरमुखि बूझै धावतु वरजि रहाए । ग्रिहु सरीरु गुरमती खोजे नामु पदारथु पाए ॥ ८ ॥ ब्रहमा बिसनु महेसु सरेसट नामि रते वीचारी । खाणी बाणी गगन पताली जंता जोति तुमारी । सभि सुख मुकति नाम धुनि बाणी सचु नामु उरधारी । नाम बिना नही छूटसि नानक साची तरु तू तारी ॥ ९ ॥ ७ ॥

मनमुख जीव वैराग्य के मिथ्या आवेश में घर का त्याग करता और फिर (पेट भरने को) दूसरों के घरों में ताकता है । वह गृहस्थ-धर्म को नहीं निबाह पाता, सच्चे गुरु से उसकी भेंट नहीं होती, व्यर्थ मोह के भँवर में पड़ा रह जाता है । वह देश-देश में भटकता है, धर्मग्रंथों के पाठ से विचलित होकर नित्य तृष्णा का शिकार बना रहता है । इस अस्थिर (कच्चे) शरीर में रहकर परमात्मा के शब्द को नहीं पहचानता और पशुवत् जीवन जीता है ॥ १ ॥ हे बाबा, संन्यासी को ऐसा जीवन-ढंग बनाना चाहिए कि उसे गुरु-शब्दों में परम रति हो और एकमात्र परमात्मा का नाम जपने से संतुष्ट रहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गेरू रंग घोलकर भगवे कपड़े पहन लेने का (संन्यासी) आडम्बर करता है । कपड़ों को फाड़कर गुदड़ी बनाता और फिर भी मायाधारी बना रहता है । लोगों को उपदेश देता और द्वार-द्वार पर भिक्षा माँगता है; अज्ञान के कारण मन का अन्धा वह संन्यासी अपमानित होता है । वह भ्रम में भटकता हुआ प्रभु के शब्द से अनजान बना रहता और जीवन की बाज़ी हार देता है ॥ २ ॥ मन के भीतर की (तृष्णा की) अग्नि गुरु के बिना नहीं बुझती, बाहर वह धूनी लगाता और अग्नि (पंचाग्नि) तापता है । (सच यह है कि) गुरु-सेवा के बिना भक्ति नहीं होती, जीव अपने को क्योंकर पहचान सकता है ! दूसरों की निन्दा करता हुआ, वह नरक का वासी बनता और भीतर प्रगाढ़ अज्ञानान्धकार को पालता है । अठसठ तीर्थों पर भटकते हुए भी उसके मन में भ्रम (द्वैत-भाव) बना रहता है, पापों का मैल नहीं धो पाता ॥ ३ ॥ शरीर पर भभूत लगाकर दुनिया की खाक छानता और माया-पथ का अनुसरण करता है । बाहर-भीतर (सब जगह व्याप्त) प्रभु को नहीं पहचानता, सत्य सुनने पर गुस्सा करता है । धर्मग्रंथों का पाठ करता,

मुख से मिथ्या भाषण करता और निगुरे (गुरु-हीन) का जीवन जीता है अर्थात् गुरु-विहीन जीव का ऐसा ही आडम्बरपूर्ण आचरण होता है। हरि-नाम नहीं जपता, तो सुख क्योंकर मिले और बिना नाम के उसकी क्या शोभा हो ? ॥ ४ ॥ (इसी प्रकार मौनी, मुण्डी आदि का चित्र है) सिर मुँड़ाकर या सिर पर जटाएँ बाँधकर (कुछ लोग) साभिमान मौन बने रहते हैं। प्रभु के ज्ञान में रत हुए बिना उसका मन दसों दिशाओं में अस्थिर डोलता है। वह माया का दीवाना अमृत (हरिनाम-रस) को छोड़कर विष-पान (मोह-बन्धनों में) करता है। उसके स्वभावगत कर्म (ऐसा करने से) कभी नहीं मिटते, वह प्रभु-इच्छा को कभी नहीं पहचानता और पशुवत् जीवन जीनेवाले मनमुखों में ही सम्मिलित रहता है ॥ ५ ॥ हाथ में कमंडल और गले में फटा चोला पहनकर कापड़िया तो बने, किन्तु मन में भारी तृष्णा उपजी रहती है। अपनी स्त्री का त्याग करके भी कामवासना में ग्रस्त रहे, पर-नारी में मन रमाते रहे; दूसरों को उपदेश देते, किन्तु गुरु-शब्द का ज्ञान न होने से फिर भी सांसारिक पदार्थों में आकृष्ट बाज़ारी की नाईं जीते हैं। उनके भीतर विषय (वासनात्मकता) होता है, बाहर से वे शान्त होने का प्रयास करते हैं —ऐसे जीव यमदूतों के दण्ड से नहीं बच पाते ॥ ६ ॥ सच्चा संन्यासी वह है, जो सतिगुरु की सेवा करता एवं भीतर से अहंभाव का नाश करता है। वह वस्त्र-भोजन की आशा से इधर-उधर नहीं भटकता, जो स्वतः प्रभु की कृपा से मिल जाय, उसी पर सन्तुष्ट होता है। वह व्यर्थ की भाषणबाज़ी नहीं करता, क्षमा-धन का संग्रह करता है और तामसी वृत्तियों का अन्त कर देता है। हरि (परमात्मा) में चित्त लगानेवाला गृहस्थ हो, संन्यासी या योगी हो, धन्य है ॥ ७ ॥ सच्चा संन्यासी आशाओं से विरक्त रहता एवं एकमात्र परमात्मा में लग्न लगाता है। प्रभु के नामामृत का पान करता तथा अपने सच्चे घर (हृदय-कमल) में समाधि लगाता है (प्रभु में स्थिर रहता है)। वह गुरु के द्वारा ज्ञान प्राप्त करता है और उसका चंचल मन स्थिरता पाता है। वह गुरु-मतानुसार शरीर रूपी घर के भीतर ही (परमात्मा को) खोज लेता है और प्रभु-नाम का अमर पदार्थ प्राप्त करता है ॥ ८ ॥ ब्रह्मा, विष्णु और शिवजी की श्रेष्ठता इसी में है कि वे प्रभु-नाम को पहचानते तथा उसी में रत थे। हे मालिक, सब लोकों, वहाँ की बोलियों और आकाश-पाताल तथा वहाँ के समस्त जीव-जन्तुओं में तुम्हारी ही ज्योति है। सब मुक्तियों (मुक्तियाँ चार होती हैं, सामीप्य, सारूप्य, सालोक्य और सायुज्य) का सुख हरि-नाम के उच्चारण में है, इसलिए सच्चे परमात्मा का नाम मन में स्थिर करता हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु-नाम के बिना कोई नहीं छूटता, (इसलिए) इसी में सच्चा संतरण करो ॥ ९ ॥ ७ ॥

॥ मारू महला १ ॥ मात पिता संजोगि उपाए रकतु बिंदु मिलि पिंडु करे । अंतरि गरभ उरधि लिव लागी सो प्रभु सारे दाति करे ॥ १ ॥ संसारु भवजलु किउ तरै । गुरमुखि नामु निरंजनु पाईऐ अफरिओ भारु अफारु टरै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ते गुण विसरि गए अपराधी मै बउरा किआ करउ हरे । तू दाता दइआलु सभै सिरि अहिनिसि दाति समारि करे ॥ २ ॥ चारि पदारथ लै जगि जनमिआ सिव सकती घरि वासु धरे । लागी भूख माइआ मगु जोहै मुकति पदारथु मोहि खरे ॥ ३ ॥ करण पलाव करे नही पावै इत उत ढूढत थाकि परे । कामि क्रोधि अहंकारि विआपे कूड़ कुटंब सिउ प्रीति करे ॥ ४ ॥ खावै भोगै सुणि सुणि देखै पहिरि दिखावै काल घरे । बिनु गुर सबद न आपु पछाणै बिनु हरि नाम न कालु टरे ॥ ५ ॥ जेता मोहु हउमै करि भूले मेरी मेरी करते छीनि खरे । तनु धनु बिनसै सहसै सहसा फिरि पछुतावै मुखि धूरि परे ॥ ६ ॥ बिरधि भइआ जोबनु तनु खिसिआ कफु कंठु बिरूधो नैनहु नीरु ढरे । चरण रहे कर कंपण लागे साकत रामु न रिदै हरे ॥७॥ सुरति गई काली हू धउले किसै न भावै रखिओ घरे । बिसरत नाम ऐसे दोख लागहि जमु मारि समारे नरकि खरे ॥ ८ ॥ पूरब जनम को लेखु न मिटई जनमि मरै का कउ दोसु धरे । बिनु गुर बादि जीवणु होरु मरणा बिनु गुर सबदै जनमु जरे ॥ ९ ॥ खुसी खुआर भए रस भोगण फोकट करम विकार करे । नामु विसारि लोभि मूलु खोइओ सिरि धरमराइ का डंडु परे ॥ १० ॥ गुरमुखि राम नाम गुण गावहि जा कउ हरि प्रभु नदरि करे । ते निरमल पुरख अपरंपर पूरे ते जग महि गुर गोविंद हरे ॥ ११ ॥ हरि सिमरहु गुर बचन समारहु संगति हरि जन भाउ करे । हरि जन गुरु परधानु दुआरै नानक तिन जन की रेणु हरे ॥ १२ ॥ ८ ॥

माता और पिता के संयोग से रक्त और वीर्य ने मिलकर मनुष्य का शरीर बनाया । माता के गर्भ में उलटे पड़े जीव को जिसकी लग्न लगी थी, वही प्रभु (बाहर भी) सम्हाल करता और दात (दान) देता है ॥ १ ॥ संसार रूपी सागर क्योंकर तरा जा सकता है ! गुरु के द्वारा यदि प्रभु का नाम प्राप्त हो तो इस अहंकारी जीव का बोझ टल

जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मुझ अपराधी को प्रभु के दिए वे सब गुण भूल गए, हे परमात्मा, मैं मूर्ख क्या करूँ ! तुम दाता हो, सब पर कृपा करते हो और दिन-रात सबकी रक्षा करते हो ॥ २ ॥ मनुष्य संसार में चार पदार्थों (काम, अर्थ, धर्म, मोक्ष) की कामना लेकर जन्म लेता है और आत्मा (शिव) माया (शक्ति) के घर में वास करती है। अपनी तृष्णाओं की पूर्ति के लिए वह माया का ही रास्ता देखता है और मोह के कारण वह मुक्ति पदार्थ (चतुर्थ लक्ष्य) गँवा बैठता है ॥ ३ ॥ अनेक करुण प्रलाप करता है, किन्तु खोई वस्तु प्राप्त नहीं होती, इधर-उधर ढूँढ़ता श्रमित होता है। उसमें (मनुष्य में) काम, क्रोध, अहंकार व्याप्त होता है और वह अपने मिथ्या कुटुम्ब की प्रीति में बँधा रहता है ॥ ४ ॥ इस मृत्यु के घर (संसार) में रहकर वह खाता, भोगता, सुनता, देखता और पहनता है (अर्थात् रस-भोग करते हुए भी अन्ततः मरना अनिवार्य है)। गुरु के शब्द के बिना (किसी जीव को) आत्मोपलब्धि नहीं होती, परमात्मा के नाम के बिना काल से मुक्ति नहीं मिलती ॥ ५ ॥ जितना भी अहंकार या मोह में भूले रहो, अधिकार जतलाओ, किन्तु यथासमय काल सब छीनकर ले जाता है। सहसा ही तन, धन सब नष्ट हो जायगा; मुँह में धूल पड़ेगी और मनुष्य हाथ मलता रह जायगा ॥ ६ ॥ यौवन का अन्त होता है, वृद्धावस्था आ जाती है, कफ़ से गला रुकता तथा आँखों से नीर ढलने लगता है। चरण चल नहीं पाते, हाथ काँपने लगते हैं, फिर भी मनमुख जीव परमात्मा को हृदय में नहीं बसाता ॥ ७ ॥ सूझ नष्ट हुई है, काले बाल सफ़ेद हो गए हैं और कोई उसे घर में रखना नहीं चाहता। हरि-नाम को भुला देने से ऐसे अनेक दोष उपजते हैं और यमदूत मारते एवं नरक में स्थान देते हैं ॥ ८ ॥ गत जन्म के कर्मों का प्रभाव नहीं जाता, (उसी के अनुसार) मनुष्य जन्मता-मरता है, दोष किसे दिया जाय ! गुरु की प्राप्ति के बग़ैर जीवन व्यर्थ है, गुरु के शब्द के बिना जीवन मरण के समान है और समूचा जन्म ही जल जाता है ॥ ९ ॥ ख़ुशियों में जो सांसारिक रसों को भोगना हुआ, वह भी अन्ततः व्यर्थ का विकार ही सिद्ध हुआ। हरि-नाम को विस्मृत करके लोभ के कारण मूलधन भी खो दिया और सिर पर यमदूतों का दण्ड सहन करना पड़ा ॥ १० ॥ जिस पर परमात्मा की कृपा होती है, वह गुरु के द्वारा प्रभु-नाम के गुण गाता है; वह निर्मल पुरुष अतीन्द्रिय सुखों को पाता और संसार में गुरु तथा प्रभु का ही रूप हो जाता है ॥ ११ ॥ जो मनुष्य गुरु के शब्दों को अंगीकार करता और सत्संगति में रहकर प्यारपूर्वक परमात्मा का नाम जपता है। उस हरिजन के लिए गुरु प्रधान होता है, गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु, वे भी ऐसे हरिजनों की चरण-धूल हैं ॥ १२ ॥ ८ ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। मारू काफी महला १ घरु २ ।। आवउ वंञउ डुंमणी किती मित्र करेउ । सा धन ढोई न लहै वाढी किउ धीरेउ ।। १ ।। मैडा मनु रता आपनड़े पिर नालि । हउ घोलि घुमाई खंनीऐ कीती हिक भोरी नदरि निहालि ।। १ ।। रहाउ ।। पेईअड़ै डोहागणी साहुरड़ै किउ जाउ । मै गलि अउगण मुठड़ी बिनु पिर झूरि मराउ ।। २ ।। पेईअड़ै पिरु संमला साहुरड़ै घरि वासु । सुखि सवंधि सोहागणी पिरु पाइआ गुणतासु ।। ३ ।। लेफु निहाली पट की कापड़ु अंगि बणाइ । पिर मुती डोहागणी तिन डुखी रैणि विहाइ ।। ४ ।। किती चखउ साडड़े किती वेस करेउ । पिर बिनु जोबनु बादि गइअमु वाढी झूरेदी झूरेउ ।। ५ ।। सचे संदा सदड़ा सुणीऐ गुर वीचारि । सचे सचा बैहणा नदरी नदरि पिआरि ।। ६ ।। गिआनी अंजनु सच का डेखै डेखणहारु । गुरमुखि बूझै जाणीऐ हउमै गरबु निवारि ।। ७ ।। तउ भावनि तउ जेहीआ मू जेहीआ कितीआह । नानक नाहु न वीछुड़ै तिन सचै रतड़ीआह ।।८।।१।।६।।

(आत्मा कहती है—) मैं अस्थिर-चित्त हुई आती-जाती हूँ और कितने ही लोगों से मित्रता भी बनाती हूँ। किन्तु मुझ वियोगिनी को (परमात्मा-पति से बिछुड़ी स्त्री को) कहीं आश्रय नहीं मिलता, मैं क्योंकर धैर्य धारण करूँ ? ।। १ ।। मेरा मन अपने प्रियतम में रत है। यदि वह एक कृपा-दृष्टि मुझ पर करे तो मैं उस पर क़ुर्बान हो जाऊँ, उसके लिए टुकड़े-टुकड़े हो जाऊँ ।। १ ।। रहाउ ।। पीहर में (इस जन्म में) त्यक्ता हूँ, ससुराल (पति के निकट) कैसे जाऊँ ? मैं तो अपने ही अवगुणों के मोह में फँसी हूँ और प्रियतम के बिना तड़प-तड़प कर मर रही हूँ ।। २ ।। यदि पीहर में प्रियतम को याद करूँ (इस लोक में परमात्मा को याद करूँ), तभी ससुराल में (प्रभु-लोक में) सुख-पूर्वक बस सकती हूँ। सुहागिनी जीवात्माएँ अपने गुणागार पति-परमात्मा के साथ सुखपूर्वक सोती हैं अर्थात् जिन जीवों ने परमात्मा का नाम जपा था, वे उसकी शरण पा गए हैं ।। ३।। (अन्य) लिहाफ़, गद्दे, रेशमी कपड़े और इस प्रकार के अनेक सुख भी एकत्रित कर लें, किन्तु पति से त्यक्ता होने के कारण वे रात भर दुःखी ही रहती हैं ।। ४ ।। वह कितने भी स्वाद चख ले, कितने भेस बना ले, किन्तु प्रियतम के बिना उसका यौवन व्यर्थ है, त्यक्ता तो विलाप ही करती (रहती) है ।। ५ ।। गुरु-प्रदत्त सूझ द्वारा सच्चे का उपदेश सुनें, सच्चे की प्रीति

भी सच्ची है; यदि उसकी कृपा-दृष्टि हो, तभी उसकी प्रीति मिलती है ॥ ६ ॥ गुरु से ज्ञान प्राप्त करनेवाला सत्य का अंजन लगाकर देखनहार परमात्मा को देखता है। गुरु के द्वारा ही अहंकार का गुमान त्यागकर वह उसे जान पाता है ॥ ७ ॥ जो तुम्हें (हे परमात्मा-पति,) रुचती हैं; वे तुम्हारी-जैसी हैं, मेरे-जैसी तो अनेक हैं (आत्मा परमात्मा से कहती है कि जिन पर उसकी कृपा होती है, वे उसी के समान हो जाती हैं)। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीवात्माएँ परमात्मा के साथ सच्ची प्रीति बना लेती हैं, उनका नाह (पति-परमात्मा) उनसे कभी जुदा नहीं होता ॥ ८ ॥ १ ॥ ९ ॥

॥ मारू महला १ ॥ ना भैणा भरजाईआ ना से ससुड़ीआह। सचा साकु न तुटई गुरु मेले सहीआह ॥ १ ॥ बलिहारी गुर आपणे सद बलिहारै जाउ। गुर बिनु एता भवि थकी गुरि पिरु मेलिमु दितमु मिलाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ फुफी नानी मासीआ देर जेठानड़ीआह। आवनि वंञनि ना रहनि पूर भरे पहीआह ॥ २ ॥ मामे तै मामाणीआ भाइर बाप न माउ। साथ लडे तिन नाठीआ भीड़ घणी दरीआउ ॥ ३ ॥ साचउ रंगि रंगावलो सखी हमारो कंतु। सचि विछोड़ा ना थीऐ सो सहु रंगि रवंतु ॥ ४ ॥ सभे रुती चंगीआ जितु सचे सिउ नेहु। सा धन कंतु पछाणिआ सुखि सुती निसि डेहु ॥ ५ ॥ पतणि कूके पातणी वंञहु ध्रुकि विलाड़ि। पारि पवंदड़े डिठु मै सतिगुर बोहिथि चाड़ि ॥ ६ ॥ हिकनी लदिआ हिकि लदि गए हिकि भारे भर नालि। जिनी सचु वणंजिआ से सचे प्रभ नालि ॥७॥ ना हम चंगे आखीअह बुरा न दिसै कोइ। नानक हउमै मारीऐ सचे जेहड़ा सोइ ॥ ८ ॥ २ ॥ १० ॥

बहिनों, भाभियों तथा सासों में से कोई रहनेवाला नहीं, सच्चा नाता केवल परमात्मा का है, जो कभी नहीं टूटता। यह सम्बन्ध गुरु के द्वारा ही मिलता है ॥ १ ॥ मैं अपने गुरु पर बार-बार बलिहार हूँ, गुरु ने मुझे अपने संग आत्मसात् करके प्रभु से मिला दिया है —उसके बिना व्यर्थ भटकती थक गयी थी (क्योंकि गुरुजी अपने को जीवात्मा के रूप में पेश करते हैं, इसलिए स्त्रीलिंग क्रिया-प्रयोग हुआ है।) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ फूफी, नानी, मौसी, देवर, जेठानी आदि सम्बन्ध में आने-जाने के हैं, ऐसे नातेदारों के समूह मार्ग में मिलते और बिछुड़ते हैं ॥ २ ॥ मामा, मामी, भाई, बाप या माँ के सम्बन्ध भी ऐसे अतिथियों

जैसे हैं, जिनके क़ाफ़िले लदे ही रहते हैं। संसार-सागर में आवागमन की ऐसी भीड़ बनी रहती है ॥ ३ ॥ ऐ सखी, मेरा सच्चा पति बड़ा रँगीला और मायावी है। जो उस स्वामी का प्यार से स्मरण करती है, वह उस सत्यस्वरूप से कभी नही बिछुड़ती ॥ ४ ॥ वे सब ऋतुएँ सुन्दर हैं, जिनमें प्रभु-पति से प्यार उमड़ता है। जो स्त्री अपने पति को पहचान लेती है, वह दिन-रात उसके संयोग में सुखपूर्वक जीती है ॥ ५ ॥ (संसार-सागर के किनारे) गुरु रूपी मल्लाह पुकारकर कह रहा है कि दौड़कर आओ और पार हो जाओ। जिन्हें गुरु ने नाम के जहाज़ पर चढ़ा लिया, उन्हें मैंने पार होते देखा है ॥ ६ ॥ एक ऐसे जीव हैं, जिन्होंने ज्ञान का भार लादा है; एक ऐसे हैं जो ज्ञान का बोझ लादकर पार उतर गए हैं; ऐसे भी हैं जो पाप का बोझ लादे बीच में डूब रहे हैं, किन्तु जिन्होंने सत्य को पहचानता है, वे सत्यस्वरूप परमात्मा में लीन होते हैं ॥ ७ ॥ न मैं अच्छा कहलाता हूँ, न मुझे कोई बुरा दीखता है; गुरु नानक कहते हैं कि जो अहम्भाव को मारता है, वह सत्यस्वरूप प्रभु सरीखा ही हो जाता है ॥ ८ ॥ २ ॥ १० ॥

॥ मारू महला १ ॥ ना जाणा मूरखु है कोई ना जाणा सिआणा। सदा साहिब कै रंगे राता अनदिनु नामु वखाणा ॥१॥ बाबा मूरखु हा नावै बलि जाउ। तू करता तू दाना बीना तेरै नामि तराउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मूरखु सिआणा एकु है एक जोति दुइ नाउ। मूरखा सिरि मूरखु है जि मंने नाही नाउ ॥ २ ॥ गुरदुआरै नाउ पाईऐ बिनु सतिगुर पलै न पाइ। सतिगुर कै भाणै मनि वसै ता अहिनिसि रहै लिव लाइ ॥ ३ ॥ राजं रंगं रूपं मालं जोबनु ते जूआरी। हुकमी बाधे पासै खेलहि चउपड़ि एका सारी ॥ ४ ॥ जगि चतुरु सिआणा भरमि भुलाणा नाउ पंडित पड़हि गावारी। नाउ विसारहि बेदु समालहि बिखु भूले लेखारी ॥ ५ ॥ कलर खेती तरवर कंठे बागा पहिरहि कजलु झरै। एहु संसारु तिसै की कोठी जो पैसै सो गरबि जरै ॥ ६ ॥ रयति राजे कहा सबाए दुहु अंतरि सो जासी। कहत नानकु गुर सचे की पउड़ी रहसी अलखु निवासी ॥ ७ ॥ ३ ॥ ११ ॥

मैं किसी को मूर्ख या सयाना नहीं जानता, मैं तो सदा प्रभु के प्यार में रँगा प्रतिदिन उसका नाम उच्चारता हूँ ॥ १ ॥ मैं मूर्ख हूँ, हरि-नाम पर क़ुर्बान जाता हूँ; हे परमात्मा, तुम रचयिता हो, तुम योग्य और समर्थ हो, मैं तुम्हारे ही नाम से मुक्ति की आशा करता

हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मूर्ख-सयाना एक समान ही होते हैं, उन दोनों में नाम-भेद होते हुए भी एक ही ज्योति कार्यान्वित है। जो हरि-नाम की सत्ता को नहीं मानता, वह मूर्खों का भी मूर्ख है ॥ २ ॥ परमात्मा का नाम-रहस्य गुरु के द्वारा ही जाना जाता है, बिना सतिगुरु किसी के पल्ले नहीं पड़ता। जो सतिगुरु के आदेशानुसार आचरण करते हैं, वे दिन-रात उसी में रत होते हैं ॥ ३ ॥ राज्य, रंग, रूप, माल, यौवन आदि उपलब्धियों के कारण हम जुआरी बने फिरते हैं। वे सृष्टि रूपी चौपड़ पर गिट्टियाँ बने खेल के भागीदार बनते हैं ॥ ४ ॥ जग में जीव वाणी के कारण चतुर-सयाना है, किन्तु वह भ्रम में भूला पड़ा है और पंडित मूर्खता-पूर्वक पोथियों का अध्ययन करता रह जाता है। वह हरि-नाम को विस्मृत करके वेद पढ़ता है, जिसके लेखक स्वयं पथ भूले पड़े हैं ॥ ५ ॥ परती धरती, नदी-तट का पेड़ और उद्यानों में कपड़ों पर झरती कालिमा अस्थिरता के द्योतक हैं। यह संसार तृष्णा की कोठरी है, जो इसमें प्रवेश करता है, वह गर्व में जलता है ॥ ६ ॥ राजा-प्रजा सब कहाँ हैं (भाव यह है कि वे स्थिर नहीं हैं), जो धरती और आकाश के दो पाटों में विद्यमान हैं, अन्ततः उन सबका नाश हो जाने का है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु का उपदेश है कि वह अलख परमात्मा ही एकमात्र स्थिर है (अन्य सब अस्थिरता है) ॥ ७ ॥ ३ ॥ ११ ॥

मारू महला ३ घरु ५ असटपदी

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जिसनो प्रेमु मंनि वसाए। साचै सबदि सहजि सुभाए। एहा वेदन सोई जाणै अवरु कि जाणै कारी जीउ ॥ १ ॥ आपे मेले आपि मिलाए। आपणा पिआरु आपे लाए। प्रेम की सार सोई जाणै जिसनो नदरि तुमारी जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दिब द्रिसटि जागै भरमु चुकाए। गुरपरसादि परमपदु पाए। सो जोगी इह जुगति पछाणै गुर कै सबदि बीचारी जीउ ॥ २ ॥ संजोगी धन पिर मेला होवै। गुरमति विचहु दुरमति खोवै। रंग सिउ नित रलीआ माणै अपणे कंत पिआरी जीउ ॥ ३ ॥ सतिगुर बाझहु वैदु न कोई। आपे आपि निरंजनु सोई। सतिगुर मिलिऐ मरै मंदा होवै गिआन बीचारी जीउ ॥ ४ ॥ एहु सबदु सारु जिसनो लाए। गुरमुखि त्रिसना भुख गवाए। आपण लीआ किछू न पाईऐ करि

किरपा कल धारी जीउ ॥५॥ अगम निगमु सतिगुरू दिखाइआ। करि किरपा अपनै घरि आइआ। अंजन माहि निरंजनु जाता जिन कउ नदरि तुमारी जीउ ॥ ६ ॥ गुरमुखि होवै सो ततु पाए। आपणा आपु विचहु गवाए। सतिगुर बाझहु सभु धंधु कमावै वेखहु मनि वीचारी जीउ ॥ ७ ॥ इकि भ्रमि भूले फिरहि अहंकारी। इकना गुरमुखि हउमै मारी। सचै सबदि रते बैरागी होरि भरमि भुले गावारी जीउ ॥ ८ ॥ गुरमुखि जिनी नामु न पाइआ। मनमुखि बिरथा जनमु गवाइआ। अगै विणु नावै को बेली नाही बूझै गुर बीचारी जीउ ॥ ९ ॥ अम्रित नामु सदा सुखदाता। गुरि पूरै जुग चारे जाता। जिसु तू देवहि सोई पाए नानक ततु बीचारी जीउ ॥ १० ॥ १ ॥

जिसके मन में परमात्मा प्रेम उपजाता है, वह उसके सच्चे शब्द के कारण सहज ही उसमें रम जाता है। इस प्रेम की वेदना भी वही परमात्मा ही जानता है और इसकी ओषधि अन्य कोई क्या जाने! (अर्थात् ओषधि भी उसी को मालूम है) ॥ १ ॥ वह प्रभु स्वयं ही अपने प्रेम में लगाता है, सत्संगति के माध्यम से अपने संग मिला लेता है, सत्संगति भी वह स्वयं ही बनाता है। किन्तु तुम्हारे प्रेम का सार वही जान सकता है, जिस पर तुम्हारी कृपादृष्टि होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीव में आत्मिक दृष्टि उपजने पर सब भ्रम दूर होते हैं, गुरु की कृपा से वह परमपद को प्राप्त होता है। गुरु के शब्दों को विचारनेवाला योगी ही इस युक्ति को पहचानता है ॥ २ ॥ संयोगवश ही स्त्री और पुरुष का मेल होता है (आत्मा-परमात्मा मिलते हैं)। गुरु-मत के कारण मन की कुबुद्धि का नाश होता है और जीवात्मा (रूपी स्त्री) प्रेम में पगी अपने पति (प्रभु) के संग रंगरलियाँ मनाती है ॥ ३ ॥ (प्रेम की पीड़ा का) सतिगुरु के सिवा कोई दूसरा वैद्य नहीं हो सकता। वह मायातीत ब्रह्म का ही स्वरूप है। ऐसे सतिगुरु को मिलने से मन्दा स्वभाव मरता है और जीव ज्ञान का विचारक बनता है ॥ ४ ॥ गुरु का शब्द (उपदेश) श्रेष्ठ है, परमात्मा जिसे इसमें प्रवृत्त करता है, वह गुरुमुख, गुरु के द्वारा सब आशाओं-तृष्णाओं से मुक्त हो जाता है। अपने करने से कुछ प्राप्त नहीं होता, कृपापूर्वक जब वह सर्वशक्तिमान् करता है (तभी कुछ सम्भव हो पाता है) ॥ ५ ॥ वेद-शास्त्रों का तत्त्व गुरु ने बता दिया और जीव प्रभु की कृपा से अपने वास्तविक घर में आन पहुँचा। जिन पर, हे प्रभु, तुम्हारी कृपा हुई, उन्होंने संसार में रहते हुए ही मायातीत ब्रह्म को जान लिया ॥ ६ ॥ गुरु-मत पर आचरण करने से

ही तत्त्व-ज्ञान प्राप्त होता है, वह जीव (गुरुमुख) भीतर से अहम् को आमूल नष्ट कर देता है। मन में विचारकर देखो, सतिगुरु के बिना सब व्यर्थ का धंधा पीटते हैं (अर्थात् कुछ रचनात्मक आध्यात्मिक कार्य नहीं करते) ॥ ७ ॥ कुछ लोग ऐसे हैं, जो अहंकार और भ्रम में भटकते हैं, कुछ लोग ऐसे भी हैं, जिन्होंने गुरु के द्वारा अहंकार का नाश कर दिया है। अनासक्त जीव सच्चे उपदेशों द्वारा परिचालित होते हैं, अन्य सब भ्रमों में भूले भटकते रह जाते हैं ॥ ८ ॥ जिसे गुरु द्वारा हरि-नाम रहस्य का ज्ञान नहीं मिला, वह मनमुख है और उसका जीवन व्यर्थ होता है। किसी सतिगुरु से दीक्षा लेकर जानो कि इहलोकोपरान्त प्रभु-नाम के अतिरिक्त और कोई सहायक नहीं है ॥ ९ ॥ परमात्मा का अमृत-सम नाम सदैव सुख देनेवाला है, चारों युगों में इसकी जानकारी केवल गुरु से ही प्राप्य है। गुरु नानक कहते हैं कि हे परमात्मा, जिसे तुम यह भेद-ज्ञान देते हो, वही जानता है और तत्त्व का विचारक हो जाता है ॥ १० ॥ १ ॥

मारू महला ५ घरु ३ असटपदीआ

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ लख चउरासीह भ्रमते भ्रमते दुलभ जनमु अब पाइओ ॥१॥ रे मूड़े तू होछै रसि लपटाइओ। अंम्रितु संगि बसतु है तेरै बिखिआ सिउ उरझाइओ ॥१॥रहाउ॥ रतन जवेहर बनजनि आइओ कालरु लादि चलाइओ ॥ २ ॥ जिह घर महि तुधु रहना बसना सो घरु चीति न आइओ ॥ ३ ॥ अटल अखंड प्राण सुखदाई इक निमख नही तुझु गाइओ ॥ ४ ॥ जहा जाणा सो थानु विसारिओ इक निमख नही मनु लाइओ ॥५॥ पुत्र कलत्र ग्रिह देखि समग्री इस ही महि उरझाइओ ॥ ६ ॥ जितु को लाइओ तित ही लागा तैसे करम कमाइओ ॥ ७॥ जउ भइओ क्रिपालु ता साधसंगु पाइआ जन नानक ब्रहमु धिआइओ ॥ ८ ॥ १ ॥

चौरासी लाख योनियों में भ्रमते-भ्रमते अब दुर्लभ योनि मानव-जन्म प्राप्त हुआ है ॥ १ ॥ अरे मूर्ख, तुम अब भी निकम्मे, नीरस कार्यों में रत हो। यद्यपि परमात्मा रूपी अमृत सदा तुम्हारे भीतर निवसित है, किन्तु तुम माया रूपी विष में लिपटे हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मनुष्य, तुम रत्नों-जवाहिरों का व्यवसाय करने आए थे, यहाँ आकर

निकृष्ट सौदों में पड़ गए (अनुपजाऊ=कल्लर) ॥ २ ॥ जिस घर में (परमात्मा के हुजूर में) तुम्हें रहना था, उस घर का तुमने कभी विचार ही नहीं किया ॥ ३ ॥ उस अटल, अखण्ड प्राणों को सुख देनेवाले परमात्मा का यशोगान तुमने क्षण भर के लिए भी नहीं किया ॥ ४ ॥ जहाँ जाना था, उस जगह की उपेक्षा कर दी, निमिष-मात्र के लिए भी उसमें मन नहीं लगाया ॥ ५ ॥ पुत्र, स्त्री तथा गृहस्थी की सामग्री में ही उलझ कर रह गया ॥ ६ ॥ जिधर किसी ने लगा दिया, उधर ही लगा और वैसे ही कर्म कमाए ॥ ७ ॥ किन्तु जब परमात्मा की कृपा हुई, सन्तों की संगति प्राप्त हुई, और तब, गुरु नानक कहते हैं, जीव ने परमात्मा का ध्यान करना सीख लिया ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ करि अनुग्रहु राखि लीनो भइओ साधू संगु । हरि नाम रसु रसना उचारै मिसट गूड़ा रंगु ॥ १ ॥ मेरे मान को असथानु । मीत साजन सखा बंधपु अंतरजामी जानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संसार सागरु जिनि उपाइओ सरणि प्रभ की गही । गुर प्रसादी प्रभु अराधे जम कंकरु किछु न कही ॥ २ ॥ मोख मुकति दुआरि जा कै संत रिदा भंडारु । जीअ जुगति सुजाणु सुआमी सदा राखणहारु ॥ ३ ॥ दूख दरद कलेस बिनसहि जिसु बसै मन माहि । मिरतु नरकु असथान बिखड़े बिखु न पोहै ताहि ॥ ४ ॥ रिधि सिधि नवनिधि जा कै अंम्रिता परवाह । आदि अंते मधि पूरन ऊच अगम अगाह ॥५॥ सिध साधिक देव मुनि जन बेद करहि उचारु । सिमरि सुआमी सुख सहजि भुंचहि नही अंतु पारावारु ॥ ६ ॥ अनिक प्राछत मिटहि खिन महि रिदै जपि भगवान । पावना ते महा पावन कोटि दान इसनान ॥ ७ ॥ बल बुधि सुधि पराण सरबसु संतना की रासि । बिसरु नाही निमख मन ते नानक की अरदासि ॥ ८ ॥ २ ॥

परमात्मा ने कृपा करके जीव की रक्षा की और सन्तों की संगति प्रदान की। जीव ने जिह्वा से हरि-नाम उच्चारण किया और अनूठे प्रगाढ़ रंग में रँगा गया ॥ १ ॥ मेरा मन उसी में आश्रय पाता है। वह अन्तर्यामी परमात्मा ही मेरा मित्र, सखा, सम्बन्धी और प्रियतम है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस प्रभु ने यह समूची सृष्टि उपजायी है, मैंने उसी परमात्मा की शरण ग्रहण की है। गुरु की कृपा से मैंने परमात्मा की आराधना की, एतदर्थ यम के दूत मुझे कुछ नहीं कह सके ॥ २ ॥

परमात्मा का द्वार मोक्षदायी है, और मोक्ष का भण्डार सन्तों के हृदय में है। वह परमात्मा जीवन-युक्ति बतानेवाला सच्चा सविवेक स्वामी और सदैव रक्षक है ॥ ३ ॥ जिसके मन में वह बसता है, उसके सब दुःख, दर्द, क्लेश चुक जाते हैं। स्वयं मृत्यु, कठोर नरक स्थान तथा विषैली माया उसका कोई अनिष्ट नहीं कर सकते ॥ ४ ॥ अमृत के प्रवाह परमात्मा के साथ ही सब ऋद्धि-सिद्धि (करामाती शक्तियाँ) और नौ निधियाँ उपलब्ध हो जाती हैं। वह अगम, अथाह प्रभु आदि, मध्य और अन्त, हर जगह पूर्ण है ॥ ५ ॥ सिद्धि-प्राप्त, साधक तथा देवता, ऋषि-मुनि, जो वेदों का उच्चारण करते हैं, वे परमात्मा का स्मरण करके उल्लासमय जीवन जीते हैं, किन्तु प्रभु का अन्त (रहस्य) नहीं पा सकते ॥ ६ ॥ हृदय में भगवान का जाप करने से क्षण भर में ही अनेक पाप नष्ट हो जाते हैं। वह प्रभु करोड़ों दान-स्नान और पवित्रताओं से भी पवित्रतर है ॥ ७ ॥ सन्तों के लिए परमात्मा का नाम ही मूलधन है; उनके लिए वही बल, बुद्धि, प्राण और सब कुछ है। गुरु नानक प्रार्थना करते हैं कि वह परमात्मा उन्हें क्षण भर के लिए भी विस्मृत न हो ॥ ८ ॥ २ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ ससत्रि तीखणि काटि डारिओ मनि न कीनो रोसु। काजु उआ को ले सवारिओ तिलु न दीनो दोसु ॥ १ ॥ मन मेरे राम रउ नित नीति। दइआल देव क्रिपाल गोबिंद सुनि संतना की रीति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरण तलै उगाहि बैसिओ स्रमु न रहिओ सरीरि। महा सागरु नह विआपै खिनहि उतरिओ तीरि ॥ २ ॥ चंदन अगर कपूर लेपन तिसु संगे नही प्रीति। बिसटा मूत्र खोदि तिलु तिलु मनि न मनी बिपरीति ॥ ३ ॥ ऊच नीच बिकार सुक्रित संलगन सभ सुख छत्र। मित्र सत्रु न कछू जानै सरब जीअ समत ॥ ४ ॥ करि प्रगासु प्रचंड प्रगटिओ अंधकार बिनास। पवित्र अपवित्रह किरण लागे मनि न भइओ बिखादु ॥ ५ ॥ सीत मंद सुगंध चलिओ सरब थान समान। जहा सा किछु तहा लागिओ तिलु न संका मान ॥ ६ ॥ सुभाइ अभाइ जु निकटि आवै सीतु ता का जाइ। आप पर का कछु न जाणै सदा सहजि सुभाइ ॥७॥ चरण सरण सनाथ इहु मनु रंगि राते लाल। गोपाल गुण नित गाउ नानक भए प्रभ किरपाल ॥ ८ ॥ ३ ॥

(यहाँ पेड़ का दृष्टान्त देते हुए गुरुजी ने उपदेश दिया है।) (सन्तजन पेड़-जैसे सहिष्णु होते हैं) लोग उन्हें तेज़ हथियार से काट डालते हैं, किन्तु वे मन में क्रोध नहीं करते। वे कटकर भी उनका काज सँवारते हैं और तिल भर भी उन्हें दोष नहीं देते ॥ १ ॥ हे मेरे मन, नित्य-प्रति प्यारे परमात्मा का नाम जपनेवाले तथा कृपालु गोविन्द का गुण गानेवाले सन्तों की रीति को सुनो (अर्थात् सुनकर उस पर आचरण करो) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मल्लाह ने उसी की (कटे पेड़ की) नाव बनाई, और यात्रियों की ग्राहकता को दबा बैठा, फिर भी उससे (पेड़ के अस्तित्व से) यात्रियों का श्रम ही दूर हुआ (पेड़ ने फिर भी लोगों की थकावट दूर की)। (इसी प्रकार सन्तों का अनिष्ट करने की इच्छा वाले को भी) यह महान् संसार-सागर कष्ट नहीं पहुँचाता, वह क्षण भर में ही पार उतर जाता है ॥ २ ॥ (सन्त धरती की तरह होते हैं) उसे चन्दन, अगरु और कर्पूर के लेपन या सुगन्धि से कोई प्रीति नहीं और न ही मल, मूत्र, फेंकने अथवा तिल-तिल खोदने से उसका कोई विरोध है ॥ ३ ॥ (सन्त आकाश की नाईं होते हैं) आकाश ऊँच, नीच, विकृत, सुकृत सब पर समान सन्तुलित रूप से छत्र की तरह छाया है। वह किसी का मित्र या शत्रु नहीं, सब जीवों के लिए समान है ॥ ४ ॥ (सन्त सूर्य के समान हैं) वह प्रचण्ड समुज्ज्वल आलोक देकर समूचा अन्धकार दूर करता है। उसकी किरणें पवित्र-अपवित्र सबका बराबर स्पर्श करती हैं और किसी प्रकार का विषाद मन में नहीं लातीं ॥ ५ ॥ (सन्त वायु की तरह हैं) शीतल, मन्द, सुगन्धित बयार सब जगह एक-समान बहती है। जहाँ भी कोई अच्छी-बुरी चीज़ है, वह सबका निःशंक स्पर्श करती है ॥ ६ ॥ (सन्त अग्नि के समान समदर्शी होते हैं) अच्छे या बुरे भाव से जो भी अग्नि के निकट आता है, वह सबको गरिमा देती है। वह सदा ऐसे सहज स्वभाव की होती है कि उसमें अपने-पराए का कोई भेद नहीं होता ॥ ७ ॥ (इसी प्रकार सन्तों की) चरण-शरण में आनेवाला प्रत्येक जीव सनाथ होता अर्थात् सहारा पा लेता है, और परमात्मा के प्रेम में रँग जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा सन्तों के माध्यम से ही कृपा करता है, नित्य उसका गुणगान करते रहो ॥ ८ ॥ ३ ॥

मारू महला ५ घरु ४ असटपदीआ

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ चादना चादनु आंगनि प्रभ जीउ अंतरि चादना ॥ १ ॥ आराधना अराधनु नीका हरि हरि नामु अराधना ॥ २ ॥ तिआगना तिआगनु नीका कामु क्रोधु लोभु

तिआगना ॥ ३ ॥ मागना मागनु नीका हरि जसु गुर ते मागना ॥ ४ ॥ जागना जागनु नीका हरि कीरतन महि जागना ॥ ५ ॥ लागना लागनु नीका गुर चरणी मनु लागना ॥ ६ ॥ इह बिधि तिसहि परापते जा कै मसतकि भागना ॥ ७ ॥ कहु नानक तिसु सभु किछु नीका जो प्रभ की सरनागना ॥ ८ ॥ १ ॥ ४ ॥

(हृदय रूपी) आँगन में हुए प्रकाश में सच्चा प्रकाश वही है, जिससे मन के भीतर प्रभु का आलोक हो सके ॥ १ ॥ आराधनाओं में उत्तम आराधना वही है, जिसमें परमात्मा के नाम की आराधना निहित हो ॥ २ ॥ सर्व त्यागों में उत्तम त्याग काम, क्रोध, लोभादि का त्याग है ॥ ३ ॥ माँगों में उत्तम माँग गुरु से हरि के यशोगान की माँग है ॥ ४ ॥ जागने में उत्तम जागना हरि-कीर्तन में रत रहकर जागना है ॥ ५ ॥ लगने में उत्तम लगना गुरु के चरणों में लगना है ॥ ६ ॥ इस प्रकार जिनके मस्तक की रेखाओं में सौभाग्य निहित है, उसे प्रभु की प्राप्ति होती है ॥ ७ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि उस जीव के लिए सब कुछ उत्तम है, जो परमात्मा की शरण में आ जाता है ॥ ८ ॥ १ ॥ ४ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ आउ जी तू आउ हमारै हरि जसु स्रवन सुनावना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुधु आवत मेरा मनु तनु हरिआ हरि जसु तुम संगि गावना ॥ १ ॥ संत क्रिपा ते हिरदै वासै दूजा भाउ मिटावना ॥ २ ॥ भगत दइआ ते बुधि परगासै दुरमति दूख तजावना ॥३॥ दरसनु भेटत होत पुनीता पुनरपि गरभि न पावना ॥ ४ ॥ नउनिधि रिधि सिधि पाई जो तुमरै मनि भावना ॥ ५ ॥ संत बिना मै थाउ न कोई अवर न सूझै जावना ॥ ६ ॥ मोहि निरगुन कउ कोइ न राखै संता संगि समावना ॥ ७ ॥ कहु नानक गुरि चलतु दिखाइआ मन मधे हरि हरि रावना ॥ ८ ॥ २ ॥ ५ ॥

हे सन्तजनो, आप आओ और परमात्मा का मधुर यशोगान हमें कानों से सुनाओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपके आने से मेरा तन-मन उल्लसित होता है और आपकी संगति (सत्संगति) में ही प्रभु का यशोगान कर पाता हूँ ॥ १ ॥ सन्तों की कृपा से हृदय में प्रभु का वास होता है और द्वैत-भाव मिटता है ॥ २ ॥ सन्तों की दया से जीव की बुद्धि उज्ज्वल होती है

और दुर्मति के कारण होनेवाले दुःखों का निवारण होता है ॥ ३ ॥ उनके दर्शन करने मात्र से पवित्र होते हैं और पुनः गर्भ में आने से मुक्ति मिलती है ॥ ४ ॥ जो सन्तों के मन को भा जाते हैं, उन्हें ऋद्धि-सिद्धि तथा नवनिधियाँ उपलब्ध होती हैं ॥ ५ ॥ सन्तों के सिवा मुझे और कोई ठिकाना नहीं, कहीं और जा सकना मुझे सूझता भी नहीं ॥ ६ ॥ मुझ निर्गुण को कोई संरक्षण नहीं देता, हे सन्तो, मुझे तो आप ही के साथ संलग्न रहना है ॥ ७ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि यह गुरु की ही लीला है, जो वह मन में ही परमात्मा से भेंट करवा देता और प्रभु-रमण का उल्लास प्रदान करता है ॥ ८ ॥ २ ॥ ५ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ जीवना सफल जीवन सुनि हरि जपि जपि सद जीवना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पीवना जितु मनु आघावै नामु अंम्रित रसु पीवना ॥ १ ॥ खावना जितु भूख न लागै संतोखि सदा त्रिपतीवना ॥ २ ॥ पैनणा रखु पति परमेसुर फिरि नागे नही थीवना ॥ ३ ॥ भोगना मन मधे हरि रसु संत संगति महि लीवना ॥ ४ ॥ बिनु तागे बिनु सूई आनी मनु हरि भगती संगि सीवना ॥ ५ ॥ मातिआ हरि रस महि राते तिसु बहुड़ि न कबहू अउखीवना ॥ ६ ॥ मिलिओ तिसु सरब निधाना प्रभि क्रिपालि जिसु दीवना ॥ ७ ॥ सुखु नानक संतन की सेवा चरण संत धोइ पीवना ॥ ८ ॥ ३ ॥ ६ ॥

जीने की सफलता उसी जीवन में है, जो परमात्मा का नाम जपते हुए जीना होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन की तृप्ति उसी पीने में है, जिसमें नामामृत-रस का पान किया जाता है ॥ १ ॥ भोजन में सन्तोष द्वारा तृप्ति पाना ही ऐसा खाना है कि पुनः भूख नहीं रह जाती ॥ २ ॥ पहनना वही सफल है, जिसमें पति-परमेश्वर मेरी (परमात्मा) लाज-रक्षा करता है और दुबारा मैं आश्रय-हीन नहीं होता ॥ ३ ॥ भोगने में वही उत्तम भोगना होता है, जब हम सन्तों की संगति में नाम-रस-पान करते हैं ॥ ४ ॥ सूई-धागा लाए बिना ही मन को हरि-भक्ति के साथ सी देना होता है अर्थात् मन को परमात्मा की भक्ति में तल्लीन रखना होता है ॥ ५ ॥ हरि-रस के नशे में इतनी मस्ती होती है कि वह नशा पुनः कभी नहीं टूटता ॥ ६ ॥ कृपालु प्रभु ने कृपापूर्वक जिसे दिया, उसी को वह सर्व-निधान प्रभु प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि सन्तों की सेवा में उनका चरणामृत पान करने में ही सुख है ॥ ८ ॥ ३ ॥ ६ ॥

मारू महला ५ घरु ८ अंजुलीआ

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। जिसु ग्रिहि बहुतु तिसै ग्रिहि चिंता । जिसु ग्रिहि थोरी सु फिरै भ्रमंता । दुहू बिवसथा ते जो मुकता सोई सुहेला भालीऐ ।। १ ।। ग्रिह राज महि नरकु उदास करोधा । बहुबिधि बेद पाठ सभि सोधा । देही महि जो रहै अलिपता तिसु जन की पूरन घालीऐ ।। २ ।। जागत सूता भरमि विगूता । बिनु गुर मुकति न होईऐ मीता । साधसंगि तुटहि हउ बंधन एको एकु निहालीऐ ।। ३ ।। करम करै त बंधा नह करै त निंदा । मोह मगन मनु विआपिआ चिंदा । गुरप्रसादि सुखु दुखु सम जाणै घटि घटि रामु हिआलीऐ ।। ४ ।। संसारै महि सहसा बिआपै । अकथ कथा अगोचर नही जापै । जिसहि बुझाए सोई बूझै ओहु बालक वागी पालीऐ ।।५।। छोडि बहै तउ छूटै नाही । जउ संचै तउ भउ मन माही । इसही महि जिस की पति राखै तिसु साधू चउरु ढालीऐ ।। ६ ।। जो सूरा तिसही होइ मरणा । जो भागै तिसु जोनी फिरणा । जो वरताए सोई भल मानै बुझि हुकमै दुरमति जालीऐ ।। ७ ।। जितु जितु लावहि तितु तितु लगना । करि करि वेखै अपणे जचना । नानक के पूरन सुखदाते तू देहि त नामु समालीऐ ।। ८ ।। १ ।। ७ ।।

जिस घर में अधिक माया होती है, उस घर में उसके चुराए जाने की चिन्ता होती है। जिस घर में माया थोड़ी है, वे लोग उसकी तलाश में भ्रमते-फिरते हैं। इन दोनों स्थितियों से जो मुक्त है, वही परम सुखी है ।। १ ।। वेद-शास्त्रादि का अवगाहन कर देखा है कि गृहस्थी के ऐश्वर्य में नरक है और उदासीनता में क्रोध बढ़ता है, किन्तु जो शारीरिक स्थिति में भी निर्लेप रहता है, उसका परिश्रम सफल है ।। २ ।। मनुष्य जागते-सोते भ्रमों में ही भटकता रहता है। गुरु के बिना, ऐ मित्र, मुक्ति कभी प्राप्त नहीं होती। सन्तों की संगति में मेरे माया-बंधन कट गए हैं और मैंने एक परमात्मा से साक्षात्कार कर लिया है ।। ३ ।। जीव यदि कर्म करता है, तो बंधनों में पड़ता है, कर्म नहीं करता, तो लोग निंदा करते हैं—इसीलिए मोह-ग्रस्त मन चिन्तातुर होता है। गुरु की कृपा से, सुख-दुःख को समान समझता और प्रत्येक हृदय में परमात्मा को महसूस करता है ।। ४ ।। संसार में संशयों का भ्रम व्याप्त है, परमात्मा की अकथनीय

कथा उसे पता नहीं चलती, परमात्मा उसे बालक की तरह पालता है, जिसे वह बताता है, वही समझता है ॥ ५ ॥ छोड़ बैठने से भी माया छूटती नहीं। एकत्र करनेवाले के मन में भय पैदा करती है। माया में ही परमात्मा जिसकी लाज रखता है, उस सन्त के माथे यश रूपी चँवर झूलता है ॥ ६ ॥ सूरमा वही है, जो जीवित-भाव से मर जाय; जो इस मृत्यु से भागे, उसे अनेक योनियों में भ्रमना होता है। परमेश्वर के दिए सुख-दुःख को भला करके मानता, तथा प्रभु के हुकुमानुसार आचरण से दुर्मति को निवारण करता है ॥ ७ ॥ परमात्मा जहाँ कहीं कर्म-संलग्न करे, वहीं लगना होता है; वह प्रभु बना-बनाकर अपनी पसन्द के मुताबिक़ देखता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ सुखदाता परमात्मा, अपने नाम-स्मरण का सामर्थ्य प्रदान कर, उसी को जपकर (जीवन जिएँगे) ॥ ८ ॥ १ ॥ ७ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ बिरखै हेठि सभि जंत इकठे। इकि तते इकि बोलनि मिठे। असतु उदोतु भइआ उठि चले जिउ जिउ अउध विहाणीआ ॥ १ ॥ पाप करेदड़ सरपर मुठे। अजराईलि फड़े फड़ि कुठे। दोजकि पाए सिरजणहारै लेखा मंगै बाणीआ ॥ २ ॥ संगि न कोई भईआ बेबा। मालु जोबनु धनु छोडि वञेसा। करण करीम न जातो करता तिल पीड़े जिउ घाणीआ ॥ ३ ॥ खुसि खुसि लैदा वसतु पराई। वेखै सुणे तेरै नालि खुदाई। दुनीआ लबि पइआ खात अंदरि अगली गल न जाणीआ ॥ ४ ॥ जमि जमि मरै मरै फिरि जंमै। बहुतु सजाइ पइआ देसि लंमै। जिनि कीता तिसै न जाणी अंधा ता दुखु सहै पराणीआ ॥ ५ ॥ खालक थावहु भुला मुठा। दुनीआ खेलु बुरा रुठ तुठा। सिदकु सबूरी संतु न मिलिओ वतै आपण भाणीआ ॥ ६ ॥ मउला खेल करे सभि आपे। इकि कढे इकि लहरि विआपे। जिउ नचाए तिउ तिउ नचनि सिरि सिरि किरत विहाणीआ ॥ ७ ॥ मिहर करे ता खसमु धिआई। संता संगति नरकि न पाई। अम्रित नाम दानु नानक कउ गुण गीता नित वखाणीआ ॥ ८ ॥ २ ॥ ८ ॥

(यहाँ पेड़ तथा विश्राम करनेवाले यात्रियों के दृष्टांत से संसार की नश्वरता बताई गई है।) पेड़ के नीचे सब जीव इकट्ठे बैठते हैं; कुछ गर्म स्वभाव के हैं और कुछ मिष्ट-भाषी हैं। अस्त हुए सूर्य के उदय होने (अर्थात् जीवन की रात्रि बीत जाने) पर, ज्यों-ज्यों अवधि (आयु) गुज़रती

है, सब उठकर अपने-अपने मार्ग चल देते हैं ।। १ ।। जो पाप करते थे, वे अवश्य लुट गए और धर्मराज ने उन्हें पकड़-पकड़कर दण्ड दिया। परमात्मा ने उन्हें नरक में भेज दिया और धर्मराज वणिक् ने उनसे हिसाब-किताब माँगा (कर्मलेख पूछा) ।। २ ।। कोई बहिन-भाई साथ नहीं देता। माल-यौवन-धन सब छोड़कर (जीव को) चला जाना होता है। उसने (जीव ने) कृपालु कर्ता प्रभु को नहीं पहचाना, तो (धर्मराज) इसे तिलों की तरह कोल्हू में पीस देता है अर्थात् नरकों आदि में दण्ड देता है ।। ३ ।। खुशी-खुशी मनुष्य पराई वस्तु को अपना लेता है (समझता है कि कोई देख नहीं रहा, किन्तु) देखने, सुननेवाला प्रभु हर समय उसके साथ है। माया के लोभ में वह संसार के गढ़े में पड़ा है, अगली बात नहीं जानता अर्थात् परलोक के लिए कोई सत्कर्मों की कमाई नहीं करता ।।४।। (परिणामतः) जीव पैदा होता और मरता, मरता और जन्मता है, लम्बे आवागमन-चक्र का दण्ड पाता है। (फिर भी) जिसने बनाया है, उस परमात्मा को नहीं पहचानता, अज्ञानांध हुआ नित्य दुःख सहन करता है ।। ५ ।। वह (जीव) परमात्मा से विमुख होकर लुटा है। संसार का खेल विकृत है, इसमें माया के प्रभाव से वह बार-बार रूठता-मानता है, किन्तु सिद्क़ (सत्यनिष्ठ),सन्तोष-प्रदाता सन्त गुरु की शरण नहीं लेता और स्वेच्छाचारिता में जीता है ।। ६ ।। परमात्मा सब खेल स्वयं रचाता है। कुछ (जीवों) को मुक्ति देता है और कुछ माया के प्रवाह में बहते चले जाते हैं। जैसा वह नचाता है (अर्थात् जैसा करने की प्रेरणा देता है), जीव वैसा ही नाचता है, प्रत्येक जीव के सिर पर उसका कर्मफल लिखा है ।। ७ ।। यदि उसकी कृपा हो जाए तो (जीव) अपने स्वामी का ध्यान करता है। सन्तों की संगति में आने के कारण कभी नरक में नहीं जाता। गुरु नानक कहते हैं कि वह अमृतमय हरि-नाम को प्राप्त करता और नित्य परमात्मा के गुण गाता है ।। ८ ।। २ ।। ८ ।।

मारू सोलहे महला १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। साचा सचु सोई अवरु न कोई । जिनि सिरजी तिन ही फुनि गोई । जिउ भावै तिउ राखहु रहणा तुम सिउ किआ मुकराई हे ।। १ ।। आपि उपाए आपि खपाए । आपे सिरि सिरि धंधै लाए । आपे वीचारी गुणकारी आपे मारगि लाई हे ।। २ ।। आपे दाना आपे बीना । आपे आपु उपाइ पतीना । आपे पउणु पाणी बैसंतरु आपे मेलि मिलाई

है।। ३।। आपे ससि सूरा पूरो पूरा। आपे गिआनि धिआनि गुरु सूरा। कालु जालु जमु जोहि न साकै साचे सिउ लिव लाई है ।।४।। आपे पुरखु आपे ही नारी। आपे पासा आपे सारी। आपे पिड़ बाधी जगु खेलै आपे कीमति पाई है ।। ५ ।। आपे भवरु फुलु फलु तरवरु। आपे जलु थलु सागरु सरवरु। आपे मछु कछु करणी करु तेरा रूपु न लखणा जाई है ।। ६ ।। आपे दिनसु आपे ही रैणी ।। आपि पतीजै गुर की बैणी। आदि जुगादि अनाहदि अनदिनु घटि घटि सबदु रजाई है ।। ७ ।। आपे रतनु अनूपु अमोलो। आपे परखे पूरा तोलो। आपे किसही कसि बखसे आपे दे लै भाई है ।। ८ ।। आपे धनखु आपे सर बाणा। आपे सुघड़ु सरूपु सिआणा। कहता बकता सुणता सोई आपे बणत बणाई है ।।९।। पउणु गुरू पाणी पित जाता। उदर संजोगी धरती माता। रैणि दिनसु दुइ दाई दाइआ जगु खेलै खेलाई है ।। १० ।। आपे मछुली आपे जाला। आपे गऊ आपे रखवाला। सरब जीआ जगि जोति तुमारी जैसी प्रभि फुरमाई है ।। ११ ।। आपे जोगी आपे भोगी। आपे रसीआ परम संजोगी। आपे वेबाणी निरंकारी निरभउ ताड़ी लाई है ।। १२ ।। खाणी बाणी तुझहि समाणी। जो दीसै सभ आवण जाणी। सेई साह सचे वापारी सतिगुरि बूझ बुझाई है ।। १३ ।। सबदु बुझाए सतिगुरु पूरा। सरब कला साचे भरपूरा। अफरिओ वेपरवाहु सदा तू ना तिसु तिलु न तमाई है ।। १४ ।। कालु बिकालु भए देवाने। सबदु सहज रसु अंतरि माने। आपे मुकति त्रिपति वर दाता भगति भाइ मनि भाई है ।। १५ ।। आपि निरालमु गुरगम गिआना। जो दीसै तुझ माहि समाना। नानकु नीचु भिखिआ दरि जाचै मै दीजै नामु वडाई है ।। १६ ।। १ ।।

परमसत्य परमात्मा ही एकमात्र सत्य है, अन्य कोई नहीं। जो इस सृष्टि की रचना करता है, वही पुनः इसे नष्ट करता है। जैसे उसे रुचता है, वैसे ही रहना होता है, उससे कोई बहाना नहीं चलता ।। १ ।। वह प्रभु स्वयं पैदा करता है, अपने-आप खपा भी देता है; हर एक को अलग-अलग कर्मों में लगा रखा है। वह गुणागार प्रभु अपने-आप सबका ध्यान रखता है, सबको ठीक (उचित) रास्ते पर लगाता है ।। २ ।।

परमात्मा स्वयं ही सबका जानकार है, सबको देखनेवाला है और अजूबा सृष्टि उपजाकर संतुष्ट होता है। पवन, पानी, अग्नि के रूप में भी वह स्वयं है, और वही सबके संयोग-वियोग का आधार है ॥ ३ ॥ चन्द्र-सूर्य भी वही है, वही परमपूर्ण है। ज्ञान तथा ध्यान का प्रदाता ज्ञान-सूर्य गुरु भी वह प्रभु ही है। जिसने (जिस जीव ने) उस सच्चे परमात्मा से प्यार किया है, उसे मृत्यु और यमदूत कोई दुःख नहीं पहुँचा सकते ॥ ४ ॥ संसार में स्त्री और पुरुष के रूप में भी परमात्मा स्वयं ही है, वही चौपड़ है और उसकी गोटियाँ भी वही परमात्मा है [अर्थात् संसार रूपी चौपड़ का खेल तथा खेली जानेवाली गोटियाँ (जीव) सब परमात्मा का ही रूप हैं]। वह स्वयं ही हठपूर्वक काल-रूप बना संसार का खेल खेलता है, उधर जिज्ञासु बनकर प्रभु का मोल पहचानने का प्रयास करनेवाला भी वह स्वयं ही है ॥ ५ ॥ भँवरा, पेड़, फूल और फल के रूप में भी परमात्मा स्वयं मौजूद है, वही जल, थल, सागर और सरोवर में है; मछलियों, कछुओं में भी वही कर्ता विद्यमान है, फिर भी उसका रूप अदृश्य है। (अर्थात् जिज्ञासु रूपी भँवरा, वैराग्य रूपी पेड़ पर, धर्म रूपी फूल और ज्ञान रूपी फल, सब परमात्मा के ही रूप हैं। नाम रूपी जल का स्थल, ज्ञान का सागर तथा सत्संगति रूपी मानसरोवर वही परमात्मा है। मत्स्यावतार एवं कच्छपावतार के रूप में भी वही सर्वकर्ता मौजूद है, फिर भी उसका रूप-दर्शन दुर्लभ है।) ॥ ६ ॥ ज्ञान का दिन तथा अज्ञानांधकारमयी रात्रि अर्थात् दिन-रात वह परमात्मा ही है; गुरु के वचनों से सन्तोष लाभ करनेवाला भी वही है। सदा एक रूप, दिन-रात एक रस रहनेवाले प्रभु का अनाहत शब्द (हुक्म) घट-घट में गुंजरित है (सब उसी के हुक्म में रहते हैं) ॥ ७ ॥ अनुपम अमूल्य रत्न (वैराग्य रूपी) वही परमात्मा है, उसे परखने और सही तोलनेवाला गुरु भी वही है। अपने-आप सबको कसौटी पर कसकर वह किसी को क्षमा-दान देता और किसी को दण्डित करता है ॥ ८ ॥ धनुष और बाण चलानेवाले बहेलिये के रूप में वही परमात्मा है, वह अपने-आप में चतुर, समझदार और स्वरूपवान् है। कहता, वक्ता, श्रोता सब कुछ वह स्वयं है और यह समूची रचना उसी की बनायी हुई है ॥ ९ ॥ पवन गुरु के समान है, पानी मानो पिता है, उदर के संयोग से धरती को माता कहा जा सकता है; रात-दिन जैसे बच्चा बहलाने वाले दाई-दाया (सेवक-सेविका) हैं और समूचा संसार और इसके सभी जीव-जन्तु (रात-दिन की गोद में) खेल रहे हैं। (इस रूपक द्वारा गुरुजी ने संसार में जीवन बितानेवाले जीवों की नियति की चर्चा की है।) ॥ १० ॥ हे परमात्मा, तुम स्वयं मछली और उसको फाँसनेवाले जाल हो (अर्थात् जीव और माया सभी प्रभु के ही रूप हैं), गाय और उसके रक्षक भी तुम ही हो (अर्थात् भोले-भाले जीव और उनके संरक्षक, हे प्रभु, तुम्हीं हो)।

संसार के सब जीवों में, हे परमात्मा, तुम्हारी ही ज्योति है; जैसी तुमने आज्ञा की है, सृष्टि वैसी ही चल रही है ।। ११ ।। योगी, भोगी, रसिक तथा संयोगी, सब परमात्मा के ही भिन्न रूप हैं; हे मालिक, मौन, मायातीत, निर्भय समाधि में लीन रहनेवाले रूप भी तुम्हारे ही हैं ।। १२ ।। विभिन्न जातियों के जीव तथा उनकी भाषाएँ, सब तुम्हीं में समा जाती हैं। जो कुछ भी दृश्य है, वह सब आने-जानेवाला (नश्वर) तत्त्व है। जिनको सतिगुरु ने ज्ञान दिया है, वे ही सृष्टि में सत्य का व्यापार करते हैं ।। १३ ।। पूरा सतिगुरु ही शब्द का ज्ञान देता हुआ बताता है कि वह परमात्मा सर्वकलासम्पन्न है। हे परमात्मा, तुम अगम और बे-परवाह हो, तुम्हें तिल भर भी किसी वस्तु की चाह नहीं ।। १४ ।। जो जीव शब्द के रस का पान कर स्थिर-चित्त हो जाते हैं, उनके लिए जन्म-मरण (काल-विकाल) मृतप्राय हो जाते हैं। उनकी भक्ति-भावना से परमात्मा तुष्ट होकर अपने-आप उन्हें मुक्ति की तृप्ति प्रदान करता है ।। १५ ।। निर्लिप्त परमात्मा का ज्ञान गुरु के पास पहुँचकर ही प्राप्त होता है। जो कुछ भी दृश्य है, हे प्रभु, उसे तुम्हीं में समाना है। गुरु नानक कहते हैं कि वे परमात्मा के द्वार पर भिक्षा माँगते हैं, उन्हें प्रभु-नाम की बड़ाई का दान दो ।। १६ ।। १ ।।

।। मारू महला १ ।। आपे धरती धउलु अकासं। आपे साचे गुण परगासं। जती सती संतोखी आपे आपे कार कमाई हे ।। १।। जिसु करणा सो करि करि वेखै। कोइ न मेटै साचे लेखै। आपे करे कराए आपे आपे दे वडिआई हे ।। २ ।। पंच चोर चंचल चितु चालहि। पर घर जोहहि घरु नही भालहि। काइआ नगरु ढहै ढहि ढेरी बिनु सबदै पति जाई हे ।। ३ ।। गुर ते बूझै त्रिभवणु सूझै। मनसा मारि मनै सिउ लूझै। जो तुधु सेवहि से तुध ही जेहे निरभउ बाल सखाई हे ।। ४ ।। आपे सुरगु मछु पइआला। आपे जोति सरूपी बाला। जटा बिकट बिकराल सरूपी रूपु न रेखिआ काई हे ।। ५ ।। बेद कतेबी भेदु न जाता। ना तिसु मात पिता सुत भ्राता। सगले सैल उपाइ समाए अलखु न लखणा जाई हे ।। ६ ।। करि करि थाकी मीत घनेरे। कोइ न काटै अवगुण मेरे। सुरि नर नाथु साहिबु सभना सिरि भाइ मिलै भउ जाई हे ।। ७ ।। भूले चूके मारगि पावहि। आपि भुलाइ तू है समझावहि। बिनु नावै मै अवरु न दीसै नावहु गति मिति पाई हे ।। ८ ।। गंगा जमुना केल

केदारा। कासी कांती पुरी दुआरा। गंगा सागरु बेणी संगमु अठसठि अंकि समाई हे ॥ ९ ॥ आपे सिध साधिकु वीचारी। आपे राजनु पंचा कारी। तखति बहै अदली प्रभु आपे भरमु भेदु भउ जाई हे ॥ १० ॥ आपे काजी आपे मुला। आपि अभुलु न कबहू भुला। आपे मिहर दइआपति दाता ना किसै को बैराई हे ॥ ११ ॥ जिसु बखसे तिसु दे वडिआई। सभसै दाता तिलु न तमाई। भरपुरि धारि रहिआ निहकेवलु गुपतु प्रगटु सभ ठाई हे ॥ १२ ॥ किआ सालाही अगम अपारै। साचे सिरजणहार मुरारै। जिसनो नदरि करे तिसु मेले मेलि मिलै मेलाई हे ॥ १३ ॥ ब्रहमा बिसनु महेसु दुआरै। ऊभे सेवहि अलख अपारै। होर केती दरि दीसै बिललादी मै गणत न आवै काई हे ॥ १४ ॥ साची कीरति साची बाणी। होर न दीसै बेद पुराणी। पूंजी साचु सचे गुण गावा मै धर होर न काई हे ॥ १५ ॥ जुगु जुगु साचा है भी होसी। कउणु न मूआ कउणु न मरसी। नानकु नीचु कहै बेनंती दरि देखहु लिव लाई हे ॥ १६ ॥ २ ॥

हे परमात्मा, तुम आप ही धरती हो, धरती के धारक कथित बैल भी हो और आकाश भी; स्वयं अपने गुणों के प्रकाशक हो। समूचा यतीत्व, सतीत्व और सन्तोष तुम्हारा है, तुम्हीं सब कार्यों के कर्ता हो ॥ १ ॥ तुम्हीं रचयिता हो, सब कुछ बना-बनाकर देखते हो; तुम्हारे सच्चे और पावन आलेख को कोई नहीं मिटा सकता। तुम्हीं सब कुछ करने में समर्थ हो, अपना-आप अपने कृत्यों की बड़ाई (दूसरों को भी) देते हो ॥ २ ॥ चित्त को नित्य पाँच चोर (काम-क्रोधादि) चंचल बनाते हैं; (उनके प्रभाव में) जीव पराए घरों (देवी-देवताओं की शरण अथवा पर-स्त्री आदि) में ताकता है, अपने स्वरूप को नहीं पहचानता। शरीर की नगरी का अन्ततः विनाश होता है, वह ढहकर मिट्टी की ढेरी-सम हो जाती है और गुरु के शब्द-रहित होने के कारण मनुष्य अपनी इज़्ज़त खो देता है ॥ ३ ॥ गुरु का उपदेश पा जानेवालों को त्रिभुवन की सूझ पड़ती है, वह वासनाओं का अन्त करके मन के चांचल्य से युद्ध करता है। जो निश्छल चित्त से, हे परमात्मा, तुम्हारी सेवा करते हैं, वे तुम्हारा ही रूप हो जाते हैं और तुम भी निर्भय भाव से सदा (बचपन से ही) उनसे मित्रता निभाते हो ॥ ४ ॥ हे परमात्मा, (तीनों लोकों का स्वरूप तुममें निहित है) स्वर्गलोक, इहलोक और पाताललोक, सब तुम्हीं हो। तुम्हीं ज्योति-

स्वरूप तरुण सौंदर्य हो और विकट भयानक जटाओं वाला भयावह रूप भी तुम्हारा है। वास्तव में (सब रूप तुम्हारे होकर भी) तुम्हारा कोई रूप नहीं, कोई रेखा या चिह्न नहीं ॥ ५ ॥ वेदों, क़ुर्आन आदि में तुम्हारा मूल रहस्य नहीं मिलता। तुम्हारा कोई माता-पिता या भाई नहीं। बड़े-बड़े पर्वतों को तुमने बनाया और विलीन कर दिया; तुम अदृश्य हो, दीख नहीं पड़ते ॥ ६ ॥ मैंने अनेक से मित्रता गाँठी, किन्तु कोई मेरे अवगुणों को नहीं काट पाया। देवताओं, महापुरुषों और योगियों, सबसे मेरा स्वामी श्रेष्ठ है; जो प्यार से स्मरण करता है, वह निर्भय हो जाता है ॥ ७ ॥ मार्ग-भ्रष्ट भले जीवों को तुम सही रास्ता देते हो। उनका अहम्भाव मिटाकर तुम अपना सत्यस्वरूप उन्हें समझाते हो। मुझे, हे प्रभु, तुम्हारे नाम के अतिरिक्त और कोई कल्याणदा दीख नहीं पड़ता; जिसने तुम्हारी गति और मर्यादा प्राप्त की है, वह तुम्हारे नाम से ही की है ॥ ८ ॥ (समस्त तीर्थ प्रभु के ही अंग हैं) गंगा, यमुना, वृन्दावन, केदारनाथ, काशी, मथुरा, द्वारिकापुरी, गंगासागर, त्रिवेणी-संगम तथा अन्य सब अठसठ तीर्थ तुम्हारे ही स्वरूप में समाए हुए हैं ॥ ९ ॥ हे दाता, तुम्हीं सिद्ध, साधक और वैचारिक हो; पंच-सभा में विराजनेवाले राजा-महाराजा भी तुम्हीं हो। तुम स्वयं भ्रम-भेद को बाद करनेवाले सिंहासनासीन न्यायाधीश हो ॥ १० ॥ तुम स्वयं ही क़ाज़ी-मुल्ला आदि हो, किन्तु तुम कभी भूलते नहीं, निर्भूल हो। तुम स्वयं सब पर दया, करुणा करनेवाले एवं सबको सम्मान देनेवाले हो— किसी के साथ तुम्हारा वैर नहीं ॥ ११ ॥ जिस पर तुम्हारी कृपा होती है, उसे सम्मान देते हो; सबके दाता हो, तुम्हें तिल भर भी कोई कामना नहीं। विशुद्ध रूप में तुम्हीं सर्वव्याप्त हो, गुप्त और प्रकट तुम्हीं हो ॥ १२ ॥ तुम सरीखे अगम अपार परमात्मा की क्या सराहना करूँ। तुम सच्चे सर्जक और समर्थ प्रभु हो; जिस पर कृपा करते हो, उसे दर्शन देकर अपने में ही मिला लेते (आत्मसात्) हो ॥ १३ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, शिव, (त्रिदेव) सब तुम्हारे द्वार पर (चिरौरी करते हैं) खड़े-खड़े तुम अलख-अपार परमात्मा की सेवा में रहते हैं। और अनेक (शक्तियाँ-सिद्धियाँ) भी तुम्हारे द्वार पर (दया पाने के लिए) बिलखती हैं, जिनकी गिनती मुझसे संभव नहीं है ॥ १४ ॥ तुम्हारी कीर्ति सत्य है, तुम्हारी वाणी का सच्चा स्वरूप है; वेद, पुराणों में भी और कुछ नहीं दीखता (तुम्हारी कीर्ति के अतिरिक्त) सत्यस्वरूप परमात्मा ही मेरी पूंजी है, मैं उसी सच्चे प्रभु के गुण गाता हूँ; उसके अतिरिक्त मेरा कोई आश्रय नहीं ॥ १५ ॥ युग-युग से तुम सत्यस्वरूप हो और भविष्य में भी सत्य ही रहोगे! (अन्य सबमें) कौन नहीं मर गया, कौन नहीं मरेगा! गुरु नानक कहते हैं कि दास-रूप में

उनकी यही विनती है कि उनका प्यार तुमसे रहे और वे तुम्हारे ही द्वार पर बने रह सकें ।। १६ ।। २ ।।

।। मारू महला १ ।। दूजी दुरमति अंनी बोली । काम क्रोध की कची चोली । घरि वरु सहजु न जाणै छोहरि बिनु पिर नीद न पाई हे ।। १ ।। अंतरि अगनि जलै भड़कारे । मनमुखु तके कुंडा चारे । बिनु सतिगुर सेवे किउ सुखु पाईऐ साचे हाथि वडाई हे ।। २ ।। कामु क्रोधु अहंकारु निवारे । तसकर पंच सबदि संघारे । गिआन खड़गु लै मन सिउ लूझै मनसा मनहि समाई हे ।। ३ ।। मा की रकतु पिता बिदु धारा । मूरति सूरति करि आपारा । जोति दाति जेती सभ तेरी तू करता सभ ठाई हे ।। ४ ।। तुझ ही कीआ जंमण मरणा । गुर ते समझ पड़ी किआ डरणा । तू दइआलु दइआ करि देखहि दुखु दरदु सरीरहु जाई हे ।। ५ ।। निज घरि बैसि रहे भउ खाइआ । धावत राखे ठाकि रहाइआ । कमल बिगास हरे सर सुभर आतम रामु सखाई हे ।। ६ ।। मरणु लिखाइ मंडल महि आए । किउ रहीऐ चलणा परथाए । सचा अमरु सचे अमरापुरि सो सचु मिलै वडाई हे ।। ७ ।। आपि उपाइआ जगतु सबाइआ । जिनि सिरिआ तिनि धंधै लाइआ । सचै ऊपरि अवर न दीसै साचे कीमति पाई हे ।। ८ ।। ऐथै गोइलड़ा दिन चारे । खेलु तमासा धुंधूकारे । बाजी खेलि गए बाजीगर जिउ निसि सुपनै भखलाई हे ।। ९ ।। तिन कउ तखति मिली वडिआई । निरभउ मनि वसिआ लिव लाई । खंडी ब्रहमंडी पाताली पुरीई त्रिभवण ताड़ी लाई हे ।। १० ।। साची नगरी तखतु सचावा । गुरमुखि साचु मिलै सुखु पावा । साचे साचै तखति वडाई हउमै गणत गवाई हे ।। ११ ।। गणत गणीऐ सहसा जीऐ । किउ सुखु पावै दूऐ तीऐ । निरमलु एकु निरंजनु दाता गुर पूरे ते पति पाई हे ।।१२।। जुगि जुगि विरली गुरमुखि जाता । साचा रवि रहिआ मनु राता । तिस की ओट गही सुखु पाइआ मनि तनि मैलु न काई हे ।। १३ ।। जीभ रसाइणि साचै राती । हरि प्रभु संगी भउ न भराती । स्रवण स्रोत रजे गुर बाणी जोती जोति मिलाई हे ।। १४ ।। रखि रखि पैर धरे पउ धरणा । जत कत देखउ

तेरी सरणा। दुखु सुखु देहि तू है मनि भावहि तुझही सिउ बणि आई हे ॥ १५ ॥ अंत कालि को बेली नाही। गुरमुखि जाता तुधु सालाही। नानक नामि रते बैरागी निजघरि ताड़ी लाई हे ॥ १६ ॥ ३ ॥

द्वैत-भाव के कारण जीव रूपी स्त्री कुबुद्धि में अन्धी और बहरी हुई है। उसने काम-क्रोधादि की नश्वर चोली पहन रखी है (अर्थात् उसका शरीर कामादि द्वारा जर्जरित है)। मूर्ख स्त्री नहीं जानती कि (प्रभु-) पति का स्वरूप और प्रेम उसके भीतर है, बिना पति के वह रात भर व्याकुल अनिद्रा में जीती है ॥ १ ॥ (ऐसी मनमुखी जीवात्मा रूपी स्त्री के) मन में तृष्णा की विकट अग्नि प्रज्वलित है और वह स्वेच्छाचारिणी (सहायता के लिए) चारों ओर देखती है। सतिगुरु की शरण लिये बिना सुख क्योंकर प्राप्त हो सकता है, समूची बड़ाई उसी के हाथ है (जिसे चाहे दे) ॥ २ ॥ यदि जीवात्मा काम, क्रोध तथा अहंकार का निवारण करे, गुरु के उपदेशानुसार आचरण करते हुए काम-क्रोधादि पंच-विकारों का संहार करे, ज्ञान की कृपाण लेकर मन से संघर्ष करे (मन की चंचलता को मारे), तो उसकी सब वासनाएँ मन में ही समाप्त हो जायँ ॥ ३ ॥ माता के शुक्राणु ने जब पिता का वीर्य धारण किया, तब हे अपार परमात्मा, तुमने एक सुन्दर साकार मूर्ति को बनाया। उसमें की ज्योति तुम्हारी ही ज्योति का अंश है, तुम्हीं सब जगह पूर्ण-कर्ता हो ॥ ४ ॥ जगत में जन्म-मरण सब तुम्हारा ही खेल है। गुरु के द्वारा (मुझे) यह रहस्य समझ आया है, इसलिए अब इससे (जन्म-मरण से) मुझे कोई भय नहीं। तुम परम दयालु हो, जिसकी ओर दया-दृष्टि से देखते हो, उसके शरीर से सब दुःख-दर्द मिट जाता है ॥ ५ ॥ (जो जीव) अपने यथार्थ को पहचान कर निर्भय हो गए हैं, (जिन्होंने) चंचल मन को स्थिर किया और उसे यथार्थ के सत्यस्वरूप में लीन कर लिया, उनका हृदय-रूप कमल विकसित हुआ। इन्द्रियाँ रूपी सरोवर हरे-भरे होकर जल से भरपूर हो गए अर्थात् उसे पूर्ण आनन्द प्राप्त हुआ। परम ब्रह्म उसका मित्र बन गया ॥ ६ ॥ संसार में जीव मृत्यु का भाग्य-लेख लिखवाकर आते हैं। वे यहाँ अमर क्योंकर हो सकते हैं, उन्हें तो परलोक जाना ही होता है। परमात्मा का हुक्म ही एकमात्र सत्य है, अमर जीव (हुक्म माननेवाले) परमात्मा की शरण (उसी की नगरी— सचखण्ड) में रहते हैं और वहाँ सत्य को नित्य बड़ाई मिलती है ॥ ७ ॥ परमात्मा ने स्वयं समूचा जगत उपजाया है। जिसने उपजाया है, वही कर्मानुसार सबको यथोचित कार्य सौंपता है। उस सत्यस्वरूप परमात्मा के ऊपर अन्य कोई नहीं सूझता, उसी ने यथार्थ का सही मूल्यांकन किया है अर्थात् जगत के यथार्थ को भी

वही जानता है ॥ ८ ॥ यहाँ तो चार दिन का अस्थायी वास है । सब खेल-तमाशा अँधेरे का ही है; जब जीव रूपी बाज़ीगर खेल निपटाकर चला जाता है, तो सारा विगत रात के सपने में बड़बड़ाया-सा प्रतीत होता है । (भाव यह है कि संसार मिथ्या है, इसमें का जीवन स्वप्न की सत्यता के समान है ।) ॥ ९ ॥ उन मनुष्यों को तुम्हारे स्वरूप की प्राप्ति रूपी बड़ाई प्राप्त हुई है, हे निर्भय, तुम मन में बसे हो, उन्होंने तुममें वृत्ति लगायी है । नव-खण्डों, ब्रह्माण्डों, पातालों, चौदह पुरियों आदि ने तुम्हें तीनों लोकों में पूर्ण जानकर समाधि लगायी है ॥ १० ॥ शरीर रूपी नगरी में हृदय रूपी तख़्त पर सत्य विराजता है । गुरु के द्वारा यदि जीव उस सत्य को पहचान ले तो परम सुख की प्राप्ति होती है । सत्य को पहचान कर जीव सत्य में ही विलीन होता और अहम्-युक्त कर्मों को धो डालता है ॥ ११ ॥ कर्मों की गिनती करने से आत्मा को अनेक संशय उपजते हैं, द्वैत अथवा अन्य भाव में उसे कोई सुख नहीं मिलता । वह मायातीत दाता प्रभु एकमात्र निर्मल है, उसकी शरण पूर्णगुरु से ही प्राप्त है ॥ १२ ॥ युग-युग में किसी विरले ने गुरु के द्वारा परमात्मा को जाना है और उस सत्यस्वरूप सर्वव्यापक में मन रमाया है । (मैंने भी) उसी का सहारा लिया है, सुख को पाकर मेरा तन-मन निर्मल हो गया है ॥ १३ ॥ सत्य-स्वरूप प्रभु के गुण रूपी रसों में जीभ रस-मग्न है, परमात्मा का नैकट्य पाकर कोई भ्रम-भय नहीं रह गया है । श्रवण गुरु की वाणी द्वारा तृप्त हुए हैं और आत्मा परमात्मा से मिल गयी है ॥ १४ ॥ धरती पर सोच-समझ कर पाँव धरे हैं (अर्थात् विचारवान् जीवन व्यतीत करते हैं), जिधर-किधर भी, हे परमात्मा, तुम्हारी ही शरण ली है; दुःख या सुख जो भी दो, तुम्हीं मन को रुचते हो, हमारी गति अब तुम पर ही है ॥ १५ ॥ अन्तकाल में तुम्हारे सिवा कोई मित्र नहीं, हमने गुरु द्वारा यह तथ्य जान लिया है, इसलिए तुम्हारा ही गुणगान करते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि इसीलिए वे हरिनाम-लीनता का वैराग्य लिये हुए परमात्मा के हुज़ूर में समाधि लगाते हैं अर्थात् परमात्मा का ही ध्यान करते हैं ॥ १६ ॥ ३ ॥

॥ मारू महला १ ॥ आदि जुगादी अपर अपारे । आदि निरंजन खसम हमारे । साचे जोग जुगति वीचारी साचे ताड़ी लाई हे ॥ १ ॥ केतड़िआ जुग धुंधूकारै । ताड़ी लाई सिरजणहारै । सचु नामु सची वडिआई साचै तखति वडाई हे ॥ २ ॥ सतजुगि सतु संतोखु सरीरा । सति सति वरतै गहिर गंभीरा । सचा साहिबु सचु परखै साचै हुकमि चलाई हे ॥ ३ ॥ सत संतोखी सतिगुरु पूरा । गुर का सबदु मने सो

सूरा । साची दरगह साचु निवासा मानै हुकमु रजाई हे ॥४॥ सतजुगि साचु कहै सभु कोई । सचि वरतै साचा सोई । मनि मुखि साचु भरम भउ भंजनु गुरमुखि साचु सखाई हे ॥ ५ ॥ त्रेतै धरम कला इक चूकी । तीनि चरण इक दुबिधा सूकी । गुरमुखि होवै सु साचु वखाणै मनमुखि पचै अवाई हे ॥ ६ ॥ मनमुखि कदे न दरगह सीझै । बिनु सबदै किउ अंतरु रीझै । बाधे आवहि बाधे जावहि सोझी बूझ न काई हे ॥ ७ ॥ दइआ दुआपुरि अधी होई । गुरमुखि विरला चीनै कोई । दुइ पग धरमु धरे धरणीधर गुरमुखि साचु तिथाई हे ॥ ८ ॥ राजे धरमु करहि परथाए । आसा बंधे दानु कराए । राम नाम बिनु मुकति न होई थाके करम कमाई हे ॥ ६ ॥ करम धरम करि मुकति मंगाही । मुकति पदारथु सबदि सलाही । बिनु गुर सबदै मुकति न होई परपंचु करि भरमाई हे ॥ १० ॥ माइआ ममता छोडी न जाई । से छूटे सचु कार कमाई । अहिनिसि भगति रते वीचारी ठाकुर सिउ बणि आई हे ॥ ११ ॥ इकि जप तप करि करि तीरथ नावहि । जिउ तुधु भावै तिवै चलावहि । हठि निग्रहि अपतीजु न भीजै बिनु हरि गुर किनि पति पाई हे ॥ १२ ॥ कलीकाल महि इक कल राखी । बिनु गुर पूरे किनै न भाखी । मनमुखि कूड़ु वरतै वरतारा बिनु सतिगुर भरमु न जाई हे ॥ १३ ॥ सतिगुरु वेपरवाहु सिरंदा । ना जम काणि न छंदा बंदा । जो तिसु सेवे सो अबिनासी ना तिसु कालु संताई हे ॥ १४ ॥ गुर महि आपु रखिआ करतारे । गुरमुखि कोटि असंख उधारे । सरब जीआ जग जीवनु दाता निरभउ मैलु न काई हे ॥ १५ ॥ सगले जाचहि गुर भंडारी । आपि निरंजनु अलख अपारी । नानकु साचु कहै प्रभ जाचै मै दीजै साचु रजाई हे ॥ १६ ॥ ४ ॥

(युग-युग में बदलती हुई धार्मिक वृत्ति की चर्चा करते हुए गुरुजी इस पद में बता रहे हैं कि धर्म की पहचान विरले लोगों को ही गुरु के माध्यम से होती है।) हे अपर-अपार, अनन्त और युग-युग से सक्रिय परमात्मा, हे मायातीत स्वामी, मैं तुम्हारे साथ जुड़ने की युक्ति विचारता हूँ तथा तुम्हारे सत्यस्वरूप में ध्यान लगाता हूँ ॥ १ ॥ कितने ही युग अन्धकारमय शून्य था। सृष्टि-सृजन से पूर्व परमात्मा निर्गुण रूप में

उसी शून्य में समाधि लगाए बैठा था। उसका नाम, उसका स्थान और उसका गुणगान, सब सत्य थे ।। २ ।। (फिर सगुण रूप में उसने युग उपजाए।) सत्ययुग में मनुष्यों (शरीरों) में सत्य और सन्तोष भरा था। सत्य का गम्भीर प्रसार चतुर्दिक् था। स्वयं प्रभु को सत्य से परखा जाता और सृष्टि उस सत्य के हुक्म से ही चलती थी ।। ३ ।। सतिगुरु पूर्ण सन्तोषी था। जो गुरु के उपदेश में विचरता था, वह कामादि शत्रुओं का विजेता सूरमा था। परमात्मा के सच्चे घर में सत्य-नाम के कारण ही निवास मिलता था, किन्तु तुम्हारा नाम, हे ईश्वर, उन्हीं को प्राप्त था, जो तुम्हारा हुक्म मानते थे ।। ४ ।। सत्ययुग में सब सत्य बोलते थे; किन्तु सच्चा वही होता था, जो सत्य-नाम की आराधना करता था। (सत्ययुग के लोगों के) मन और मुख में सत्य विराजता था, इससे उनका भ्रम-भय आदि टूट जाता था। यही गुरमुखों (सत्पुरुषों) का सत्य सहायक होता था ।। ५ ।। त्रेतायुग में धर्म की एक शक्ति (कला) नष्ट हो गयी (धर्म रूपी बैल के चार पैरों में से एक पैर टूट गया)। धर्म तीन चरणों पर ही खड़ा रह गया, चौथी स्थिति दुबिधा ने ले ली। गुरमुख जीव (गुरु-मतानुसार आचरण करनेवाला) ही सत्य को पहचानता था, मनमुख (स्वेच्छाचारी) व्यर्थ की बातों में खपता था ।। ६ ।। मनमुख प्रभु के हुज़ूर में कभी सफल नहीं होता था। परमात्मा के नाम के बिना हृदय क्योंकर विकसित होता ! (ऐसे मनमुख) मोह-माया के बन्धनों में बँधे आते थे, बँधे ही चले जाते थे, उन्हें कोई आध्यात्मिक सूझ-बूझ प्राप्त नहीं होती थी ।। ७ ।। द्वापरयुग में दया नामक कला (शक्ति) दूर हो जाने से धर्म की शक्ति आधी रह गयी थी। कोई विरला गुरुमुख ही उस समय यथार्थ को पहचानता था। धर्म धरती पर केवल दो ही पैरों से खड़ा था, गुरु के द्वारा ही सत्य की प्राप्ति सम्भव थी ।। ८ ।। राजा-महाराजा किसी न किसी निमित्त से ही धर्म-कर्म करते थे। दान-दक्षिणा भी आशाओं-तृष्णाओं में बँधे कर देते थे, किन्तु वे सब प्रकार के कर्म करते हुए भी असफल थे, परमात्मा के नाम के बग़ैर मुक्ति नहीं मिलती थी ।। ९ ।। वे कर्मकाण्डी धर्म में विचरते हुए मुक्ति माँगते थे, किन्तु मुक्ति तो प्रभु के शब्द का कीर्तिगान करने से मिलती थी। गुरु के उपदेशों के बिना मुक्ति नहीं थी, वे यों ही जगत के प्रपंचों में भ्रमते थे ।। १० ।। माया-ममता के भाव छोड़े नहीं जाते थे। वे तो केवल सच्चा कर्म कमाने से ही छूटते थे। भक्तजन रात-दिन मालिक के विचार में रत रहते थे, उनमें प्रभु के लिए प्रीति बन आयी थी ।। ११ ।। कुछ लोग (ऐसे थे जो) जप-तप करते और तीर्थों पर स्नान करते थे। जैसा, हे परमेश्वर, तुम्हें रुचता था, वैसा ही तुम उन्हें चलाते थे। मन-इन्द्रियों को रोकने से चंचल मन संयमित नहीं था। हरिगुण-गान के बिना प्रभु के दरबार में

कोई सम्मानित नहीं होता था (अर्थात् गुरु के द्वारा हरिनाम-रहस्य जानने पर ही मन संयमित होता था।) ॥ १२ ॥ कलियुग में आकर धर्म एक ही पग पर स्थिर हुआ, अर्थात् उसमें धर्म की एक ही शक्ति (कला) रह गयी। उसे सच्चे गुरु के बिना कोई नहीं समझा पाया। मनमुखों का मिथ्या आचरण है, गुरु के बिना भ्रम दूर नहीं होते ॥ १३ ॥ सतिगुरु तो सृजनहार परमात्मा का रूप है; उसे यमदूतों का कोई भय नहीं, न ही मनुष्यों की मुहताजी है। जो उसकी सेवा करता है, वह अविनाशी पद को प्राप्त होता है, अन्यथा काल उसे दुःख पहुँचाता है ॥ १४ ॥ परमात्मा ने गुरु में अपने-आप को प्रकट किया है और गुरु के माध्यम से करोड़ों जीवों को पार किया (मुक्ति दी) है। परमात्मा संसार में समस्त जीवों को जीवन देनेवाला है, वह निर्भय और निर्मल है (उसमें कोई विकार नहीं, वह सत् है) ॥ १५ ॥ सब गुरु के भंडार में से याचना करते हैं। परमात्मा स्वयं मायातीत, अनन्त तथा अलक्ष्य है। गुरु नानक सच कहते हैं कि हे सच्चे हुक्म करनेवाले प्रभु, मुझे सत्य का दान दो ॥ १६ ॥ ४ ॥

॥ मारू महला १ ॥ साचै मेले सबदि मिलाए। जा तिसु भाणा सहजि समाए। त्रिभवण जोति धरी परमेसरि अवरु न दूजा भाई हे ॥ १ ॥ जिस के चाकर तिस की सेवा। सबदि पतीजै अलख अभेवा। भगता का गुणकारी करता बखसि लए वडिआई हे ॥ २ ॥ दे दे तोटि न आवै साचे। लै लै मुकरि पउदे काचे। मूलु न बूझहि साचि न रीझहि दूजै भरमि भुलाई हे ॥ ३ ॥ गुरमुखि जागि रहे दिन राती। साचे की लिव गुरमति जाती। मनमुख सोइ रहे से लूटे गुरमुखि साबतु भाई हे ॥ ४ ॥ कूड़े आवै कूड़े जावै। कूड़े राती कूड़ु कमावै। सबदि मिले से दरगह पैधे गुरमुखि सुरति समाई हे ॥ ५ ॥ कूड़ि मुठी ठगी ठगवाड़ी। जिउ वाड़ी ओजाड़ि उजाड़ी। नाम बिना किछु सादि न लागै हरि बिसरिऐ दुखु पाई हे ॥ ६ ॥ भोजनु साचु मिलै आघाई। नाम रतनु साची वडिआई। चीनै आपु पछाणै सोई जोती जोति मिलाई हे ॥ ७ ॥ नावहु भुली चोटा खाए। बहुतु सिआणप भरमु न जाए। पचि पचि मुए अचेत न चेतहि अजगरि भारि लदाई हे ॥ ८ ॥ बिनु बाद बिरोधहि कोई नाही। मै देखालिहु तिसु सालाही। मनु तनु अरपि मिलै जगजीवनु हरि सिउ बणत बणाई हे ॥ ९ ॥

प्रभ की गति मिति कोइ न पावै। जे को वडा कहाइ वडाई खावै। साचे साहिब तोटि न दाती सगली तिनहि उपाई हे ॥ १० ॥ वडी वडिआई वे परवाहे। आपि उपाए दानु समाहे। आपि दइआलु दूरि नही दाता मिलिआ सहजि रजाई हे ॥ ११ ॥ इकि सोगी इकि रोगि विआपे। जो किछु करे सु आपे आपे। भगति भाउ गुर की मति पूरी अनहदि सबदि लखाई हे ॥ १२ ॥ इकि नागे भूखे भवहि भवाए। इकि हठु करि मरहि न कीमति पाए। गति अविगत की सार न जाणै बूझै सबदु कमाई हे ॥ १३ ॥ इकि तीरथि नावहि अंनु न खावहि। इकि अगनि जलावहि देह खपावहि। राम नाम बिनु मुकति न होई कितु बिधि पारि लंघाई हे ॥ १४ ॥ गुरमति छोडहि उझड़ि जाई। मनमुखि रामु न जपै अवाई। पचि पचि बूडहि कूडु कमावहि कूड़ि कालु बैराई हे ॥ १५ ॥ हुकमे आवै हुकमे जावै। बूझै हुकमु सो साचि समावै। नानक साचु मिलै मनि भावै गुरमुखि कार कमाई हे ॥ १६ ॥ ५ ॥

(गुरु-उपदेशानुसार आचरण करने से मनुष्य में आध्यात्मिक जागृति उपजती है।) गुरु ने जिसे उपदेश द्वारा अपनाया है, हे सत्यस्वरूप प्रभु, तुम उसी को अपने में विलीन कर लेते हो। हे दाता, तुम्हें उसकी वृत्ति रुचती है, जिससे वह सहज परमानन्द को प्राप्त होता है। परमात्मा ने तीनों लोकों को आलोकित करनेवाली ज्योति हमारे भीतर रखी है, जिस कारण अब और कुछ नहीं भाता ॥ १ ॥ जिसके दास हैं, यदि उसी की सेवा करें (तो स्वामी प्रसन्न रहता है)। वह अलक्ष्य, रहस्यमय परमात्मा अपने ही शब्द की आराधना से प्रसन्न होता है। हे सृजनहार, तुम भक्तों के लिए कल्याणकारी हो। (उनके अवगुण को देखकर) क्षमा करते हो, यही तुम्हारी महिमा है ॥ २ ॥ सच्चे प्रभु को देते हुए कोई कमी नहीं आती, किन्तु हम जीव कृतघ्न हैं, अस्थिर हैं, इसलिए ले-लेकर भी मुकर जाते हैं। वे अपने मूल को नहीं पहचानते, सृष्टि के सत्य से प्रीति नहीं करते (परमात्मा से प्रेम नहीं करते, उसे पहचानते नहीं), वे सब द्वैत-भाव के कारण भ्रम-जाल में फँसे रहते हैं ॥ ३ ॥ गुरु-मतानुसार आचरण करनेवाले रात-दिन जाग्रत् हैं अर्थात् उन्हें चिर-जागृति प्राप्त है। उन्होंने गुरु के द्वारा सत्यस्वरूप परमात्मा से प्रीति करना सीख लिया है। मनमुख मोह-निद्रा में सोये होने के कारण कामादि चोरों द्वारा लुटते हैं और गुरुमुख जाग्रतावस्था के कारण सकुशल रहते हैं ॥ ४ ॥ (मनमुख जीव)

संसार में मिथ्या का आचरण लेकर आते और मिथ्यात्व में ही व्यवहार करते हुए मर जाते हैं। वे मिथ्या से प्यार करते हैं और दुराचरण में लीन रहते हैं। जो गुरु की शरण लेते हैं, शब्द के रहस्य को समझते हैं, वे परमात्मा के दरबार में पहुँच जाते हैं और उनकी आत्मा प्रभु में विलीन हो जाती है ॥ ५ ॥ (मनमुखी जीवात्मा) मिथ्या मोह में जकड़ी हुई कामादिक ठगों द्वारा ठगी जाती है; जैसे पशु आदि बाड़ी को उजाड़ देते हैं, वैसे ही उनकी शरीर रूपी बाड़ी उजड़ जाती है। हरि-नाम के बिना संसार में कोई रस नहीं, परमात्मा को विस्मृत करने में दुःख ही दुःख है ॥ ६ ॥ सत्य का भोजन (सच्चे शब्द की ख़ुराक) पाकर ही तृप्ति मिलती है। हरि-नाम अमूल्य रत्न है; जो उसकी महिमा जानता है, वही अपने को पहचानता और प्रभु की ज्योति में विलीन होता है ॥ ७ ॥ जो जीवात्मा हरि-नाम से विमुख होता है, वही बार-बार दुःखी होता है। अनेक चतुराइयों से भी वह भ्रम-मुक्त नहीं होता। वे मूर्ख बेसमझी में सड़ते हैं, विवेक से शून्य रहने के कारण पापों का बड़ा बोझ लादे फिरते हैं ॥ ८ ॥ वादों और विरोधों से कोई बचा नहीं है। कोई मुझे ऐसा दिखला दे तो मैं उसकी प्रशंसा करूँ और तन-मन उसको भेंट करूँ, ताकि मुझे विश्व-प्राण प्रभु मिल जाय और परमात्मा के साथ मेरी बात बन जाय ॥ ९ ॥ परमात्मा की गति और रहस्यों को कोई नहीं जानता। यदि कोई अपने बड़प्पन की बातें करे भी तो वही अभिमान उसे खा जाता है। सच्चे परमात्मा को देने में कभी कोई कमी नहीं आती, सारी सृष्टि उसी ने पैदा की है ॥ १० ॥ उस बेपरवाह प्रभु की बड़ी महिमा है। वह सबको उपजाकर दैनिक आहार भी पहुँचाता है। दयालु परमात्मा किसी से दूर नहीं, वह स्वतः ही (अकस्मात्) प्राप्त हो जाता है (भीतर ढूँढ़ने की जरूरत है) ॥ ११ ॥ संसार में कोई शोकातुर है, कोई रुग्ण है; केवल वही जो कुछ करता है, स्वतन्त्र होकर करता है। जिन्हें प्रेम-भक्ति प्राप्त होती है, वे गुरु की सुशिक्षा के कारण परमात्मा के अनाहत शब्द को पहचानते और दूसरों को भी दिखाने में समर्थ होते हैं ॥ १२ ॥ कुछ नंगे-भूखे घूमते हैं, कुछ प्रभु का स्वरूप पहचानने में असमर्थ हठपूर्वक मृत्यु को गले लगाने जाते हैं। वे गति या बन्धन (मुक्ति या आवागमन) का रहस्य नहीं समझते। केवल जिन गुरुमुखों ने शब्द की कमाई की होती है, वे ही इस तथ्य को जानते हैं ॥ १३ ॥ कुछ लोग तीर्थों में स्नान करते एवं उपवास करते हैं। दूसरे अग्नि तापते और शरीर सुखाते हैं। हरि-नाम के बिना किसी को मुक्ति नहीं मिलती, वे किस प्रकार संसार-सागर से पार हो सकते हैं? ॥ १४ ॥ गुरु के उपदेश से विमुख होनेवाले कुमार्ग-गामी हो जाते हैं। मनमुखी जीव स्वेच्छाचार के कारण प्रभु का नाम नहीं

जपते। वे मिथ्या आचरण के कारण माया में ही डूब मरते हैं। मिथ्या के कारण काल उनका शत्रु हो जाता है ॥ १५ ॥ प्रत्येक जीव प्रभु के हुक्म में उपजता, प्रभु के हुक्म में ही मरता है। जो उस हुक्म का रहस्य जान लेता है, वह ज्ञान पा जाता है और सत्य में ही लीन होता है। गुरु नानक कहते हैं कि वे भी गुरुमुख होकर कर्मशील रह सकें और प्रभु के हुक्म को मानकर जी सकें (यही उनकी अभिलाषा है।) ॥ १६ ॥ ५ ॥

॥ मारू महला १ ॥ आपे करता पुरखु बिधाता। जिनि आपे आपु उपाइ पछाता। आपे सतिगुरु आपे सेवकु आपे स्रिसटि उपाई हे ॥ १ ॥ आपे नेड़ै नाही दूरे। बूझहि गुरमुखि से जन पूरे। तिन की संगति अहिनिसि लाहा गुर संगति एह वडाई हे ॥ २ ॥ जुगि जुगि संत भले प्रभ तेरे। हरि गुण गावहि रसन रसेरे। उसतति करहि परहरि दुखु दालदु जिन नाही चिंत पराई हे ॥ ३ ॥ ओइ जागत रहहि न सूते दीसहि। संगति कुल तारे साचु परीसहि। कलिमल मैलु नाही ते निरमल ओइ रहहि भगति लिव लाई हे ॥४॥ बूझहु हरि जन सतिगुर बाणी। एहु जोबनु सासु है देह पुराणी। आजु कालि मरि जाईऐ प्राणी हरि जपु जपि रिदै धिआई हे ॥५॥ छोडहु प्राणी कूड़ कबाड़ा। कूड़ु मारे कालु उछाहाड़ा। साकत कूड़ि पचहि मनि हउमै दुहु मारगि पचै पचाई हे ॥ ६ ॥ छोडिहु निंदा ताति पराई। पड़ि पड़ि दझहि साति न आई। मिलि सत संगति नामु सलाहहु आतम रामु सखाई हे ॥ ७ ॥ छोडहु काम क्रोधु बुरिआई। हउमै धंधु छोडहु लंपटाई। सतिगुर सरणि परहु ता उबरहु इउ तरीऐ भवजलु भाई हे ॥ ८ ॥ आगै बिमल नदी अगनि बिखु झेला। तिथै अवरु न कोई जीउ इकेला। भड़ भड़ अगनि सागरु दे लहरी पड़ि दझहि मनमुखताई हे ॥ ६ ॥ गुर पहि मुकति दानु दे भाणै। जिनि पाइआ सोई बिधि जाणै। जिन पाइआ तिन पूछहु भाई सुखु सतिगुर सेव कमाई हे ॥ १० ॥ गुर बिनु उरझि मरहि बेकारा। जमु सिरि मारे करे खुआरा। बाधे मुकति नाही नर निंदक डूबहि निंद पराई हे ॥ ११ ॥ बोलहु साचु पछाणहु अंदरि। दूरि नाही देखहु करि नंदरि। बिघनु नाही गुरमुखि तरु तारी इउ भवजलु पारि लंघाई हे ॥१२॥

देही अंदरि नामु निवासी। आपे करता है अबिनासी। ना जीउ मरै न मारिआ जाई करि देखै सबदि रजाई हे ॥ १३ ॥ ओहु निरमलु है नाही अंधिआरा। ओहु आपे तखति बहै सचिआरा। साकत कूड़े बंधि भवाईअहि मरि जनमहि आई जाई हे ॥ १४ ॥ गुर के सेवक सतिगुर पिआरे। ओइ बैसहि तखति सु सबदु वीचारे। ततु लहहि अंतरगति जाणहि सतसंगति साचु वडाई हे ॥ १५ ॥ आपि तरै जनु पितरा तारे। संगति मुकति सु पारि उतारे। नानकु तिस का लाला गोला जिनि गुरमुखि हरि लिव लाई हे ॥ १६ ॥ ६ ॥

(परमात्मा स्वयं सर्वस्व है, यह गुरु से ही जाना जाता है।) परमात्मा स्वयं ही रचयिता है, पुनः अपने-आप सबको कर्मरत करनेवाला और उनके कर्मों को सही पहचान देनेवाला है। वह स्वयं सतिगुरु-रूप है, सेवक-रूप भी वही है; कर्मानुसार सृष्टि की रचना भी उसी ने की है ॥ १ ॥ वह निकटतर है, दूर नहीं। जो गुरु के द्वारा उसे जान लेते हैं, वे ही पूर्णपुरुष हैं। उनकी संगति में रात-दिन लाभ होता है, किन्तु गुरु की संगति में ही यह महिमा मिलती है ॥ २ ॥ हे प्रभु, तुम्हारे भक्त भी युग-युग से भले हैं, जो नित्य रस-मग्न होकर जिह्वा से तुम्हारा यशोगान करते हैं। वे तुम्हारी स्तुति करके सब दुःख-दारिद्र्य से मुक्त हो जाते हैं और उन्हें पराया भय नहीं रह जाता ॥ ३ ॥ वे ज्ञान में सदा जाग्रत् रहते हैं, सुप्त नहीं दीखते। वे समूची संगति (सम्पर्क में आनेवालों) को तार देते हैं और नित्य सत्य का प्रचार करते हैं। उन्हें कलियुग की मलिनता नहीं लगती, वे निर्मल होते हैं, नित्य प्रेम-भक्ति में लीन रहते हैं ॥ ४ ॥ हे हरिजनो, सतिगुरु से वाणी का उपदेश प्राप्त करो— ये यौवन श्वास नश्वर हैं, शरीर पुराना हो चुका है। आज या कल प्रत्येक प्राणी मर जाने का है, इसलिए, ऐ हरिजनो, हृदय में नित्य परमात्मा के नाम की आराधना करो ॥ ५ ॥ हे प्राणी, मिथ्या गप्पों को त्यागो। मिथ्यावाची को काल एक ही छलाँग में हड़प लेता है। पदार्थवादी जीव मिथ्यापन में ही जलते हैं, उनके मन में अहंकार विराजता है और वे द्वैत-पथ पर स्वयं पीड़ित होते तथा दूसरों को पीड़ित करते हैं ॥ ६ ॥ इसलिए पराई निन्दा-स्तुति को छोड़ो; जो ईर्ष्याग्नि में पड़-पड़कर जलते हैं, उन्हें कभी शान्ति नहीं मिलती। जो सत्संगति में बैठकर हरि-नाम जपते हैं, या हरि-नाम का कीर्ति-गान करते हैं, परमात्मा स्वयं उनका अभिन्न मित्र बन जाता है ॥ ७ ॥ काम-क्रोधादि बुराइयों को त्यागो, अहंता, ममता और व्यर्थ के धन्धों की क्रियाशीलता को छोड़ो। सतिगुरु

की शरण लेने में ही उद्धार है, संसार-सागर से इसी प्रकार पार हुआ जा सकता है ॥ ८ ॥ आगे यम-मार्ग पर विशुद्ध अग्नि की नदी है, जिसमें से विष की लपटें निकलती हैं, वहाँ कोई अन्य साथी नहीं होता, जीव को अकेला ही जाना होता है। वह अग्नि का सागर भड़कती हुई ज्वालाओं से भरा है, मनमुख (स्वेच्छाचारी) जीव उसी में गिरकर जलते हैं ॥ ९ ॥ गुरु के पास मुक्ति का रहस्य है, जो वह अपनी रुचि से देता है। जिन जीवों को (गुरु के द्वारा) मुक्ति मिली है, वे ही इसकी मूल विधि जानते हैं। हे भले जनो, तुम भी उनसे पूछो, जिन्होंने प्राप्त किया है; सतिगुरु की सेवा कमाने में ही परमसुख उपलब्ध है ॥ १० ॥ गुरु के बिना जीव विकारों में उलझ-उलझकर मरता है। परिणामतः यम उनके सिर पर दण्ड-प्रहार करता तथा उन्हें ख्वार करता है। हे लोगो, विकारों के बन्धन में पड़े हुए के लिए मुक्ति प्राप्य नहीं है, वे पराई निन्दा के प्रवाह में डूब मरते हैं ॥ ११ ॥ इसलिए सदा सत्य भाषण करो और अपने अन्तर में ही इसे (सत्य को) पहचानो। ध्यान की दृष्टि से देखो, वह तुमसे दूर नहीं। गुरु के द्वारा संसार-सागर को तिरने वाले के लिए कोई विघ्न नहीं होता, वे इस प्रकार पार लाँघ जाते हैं ॥ १२ ॥ शरीर के भीतर ही नामी (परमात्मा) निवास करता है। वह अविनाशी प्रभु स्वयं सर्वकर्ता है। जीव (परमात्मा का स्वरूप या अंश) कभी नहीं मरता, न मारा जाता है। वह परमात्मा शब्द द्वारा सृजन कर-करके देखता है अर्थात् अपनी रचना का संरक्षक भी होता है ॥ १३ ॥ वह (अंशी) निर्मल है, उसमें अज्ञान का अंधकार नहीं रहता। वह सत्यस्वरूप स्वयं सत्य के सिंहासन पर विराजता है। मनमुख जीव माया-बन्धनों में पड़े भ्रमते हैं, जन्म-मरण के चक्र में दुःख उठाते हैं ॥ १४ ॥ गुरु की सेवा में रत जीव ही सतिगुरु को प्रिय हैं। वे स्वस्वरूप के सिंहासन पर विराजते हैं अर्थात् शब्द का विचार करते हुए वे निज स्वरूप में स्थित होते हैं। वे तत्त्व को पहचानकर अन्तर्गति पाते हैं, इसलिए सत्संगति में उनकी महिमा होती है ॥ १५ ॥ वे स्वयं तो मुक्त होते ही हैं, संग-संग अपने पितरों को भी मुक्त करवाते हैं। उनकी संगति में आनेवाले भी मुक्त होकर कइयों के तारनहार बनते हैं। गुरु नानक ऐसे गुरु द्वारा परमात्मा में लीन होनेवाले सत्पुरुषों के सेवक हैं ॥ १६ ॥ ६ ॥

॥ मारू महला १ ॥ केते जुग वरते गुबारै। ताड़ी लाई अपर अपारै। धुंधूकारि निरालमु बैठा ना तदि धंधु पसारा हे ॥ १ ॥ जुग छतीह तिनै वरताए। जिउ तिसु भाणा तिवै चलाए। तिसहि सरीकु न दीसै कोई आपे अपर अपारा

हे ॥ २ ॥ गुपते बूझहु जुग चतुआरे । घटि घटि वरतै उदर मझारे । जुगु जुगु एका एकी वरतै कोई बूझै गुर वीचारा हे ॥ ३ ॥ बिंदु रकतु मिलि पिंडु सरीआ । पउणु पाणी अगनी मिलि जीआ । आपे चोज करे रंग महली होर माइआ मोह पसारा हे ॥ ४ ॥ गरभ कुंडल महि उरध धिआनी । आपे जाणै अंतरजामी । सासि सासि सचु नामु समाले अंतरि उदर मझारा हे ॥ ५ ॥ चारि पदारथ लै जगि आइआ । सिव सकती घरि वासा पाइआ । एकु विसारे ता पिड़ हारे अंधुलै नामु विसारा हे ॥ ६ ॥ बालकु मरै बालक की लीला । कहि कहि रोवहि बालु रंगीला । जिस का सा सो तिन ही लीआ भूला रोवणहारा हे ॥ ७ ॥ भरि जोबनि मरि जाहि कि कीजै । मेरा मेरा करि रोवीजै । माइआ कारणि रोइ विगूचहि ध्रिगु जीवणु संसारा हे ॥ ८ ॥ काली हू फुनि धउले आए । विणु नावै गथु गइआ गवाए । दुरमति अंधुला बिनसि बिनासै मूठे रोइ पूकारा हे ॥ ९ ॥ आपु वीचारि न रोवै कोई । सतिगुरु मिलै त सोझी होई । बिनु गुर बजर कपाट न खूलहि सबदि मिलै निसतारा हे ॥ १० ॥ बिरधि भइआ तनु छीजै देही । रामु न जपई अंति सनेही । नामु विसारि चलै मुहि कालै दरगह झूठु खुआरा हे ॥ ११ ॥ नामु विसारि चलै कूड़िआरो । आवत जात पड़ै सिरि छारो । साहुरड़ै घरि वासु न पाए पेईअड़ै सिरि मारा हे ॥ १२ ॥ खाजै पैझै रली करीजै । बिनु अभ भगती बादि मरीजै । सर अपसर की सार न जाणै जमु मारे किआ चारा हे ॥ १३ ॥ परविरती नरविरति पछाणै । गुर कै संगि सबदि घरु जाणै । किसही मंदा आखि न चलै सचि खरा सचिआरा हे ॥ १४ ॥ साच बिना दरि सिझै न कोई । साच सबदि पैझै पति होई । आपे बखसि लए तिसु भावै हउमै गरबु निवारा हे ॥ १५ ॥ गुर किरपा ते हुकमु पछाणै । जुगह जुगंतर की बिधि जाणै । नानक नामु जपहु तरु तारी सचु तारे तारणहारा हे ॥ १६ ॥ १ ॥ ७ ॥

जब वह अपरम्पार परमेश्वर शून्य में समाधिस्थ था, तब कई युग अन्धकार में बीत गए। वह निर्गुण ब्रह्म निर्लिप्त होकर उस अन्धकार में

विराजता था, उस समय कार्य-क्षेत्र का कोई प्रसार न था ।। १ ।। उसने तब अनेक युगों का प्रचलन किया और जैसे-जैसे उसे रुचा, वैसे-वैसे उन्हें रूपायित कर दिया । उसका कोई प्रतिद्वन्द्वी दिखाई नहीं पड़ता, वह स्वयं ही ब्रह्म का परा-स्वरूप है, अनन्त है ।। २ ।। चारों युगों में परमात्मा गुप्त रहकर भी व्याप्त है । प्रत्येक जीव के हृदय में वह बसता है । युग-युग से वही एक चतुर्दिक् व्याप्त है । कोई विरला जीव गुरु से विवेक प्राप्त करके ही उसे जान सकता है ।। ३ ।। पितृ-वीर्य एव मातृ-रज को मिलाकर शरीर का सृजन हुआ । पवन, पानी आदि तत्त्वों ने मिलकर जीव खड़ा कर दिया । फिर वही प्रभु उस शरीर रूपी रंग-महल में लीला-धर बनकर समा गया; अन्य सब तो मोह-माया का प्रसार मात्र है ।। ४ ।। गर्भ में जीव ऊर्ध्वावस्था में लटका हुआ अन्तर्यामी प्रभु को अपना रक्षक मानता था । पेट के भीतर वह श्वास-श्वास सत्यस्वरूप परमात्मा का नाम याद करता था ।। ५ ।। चार पदार्थों (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) को प्राप्त करने का आदर्श लेकर जीव संसार में आया और उसने (शिव ने) माया के घर में (शक्ति के घर) निवास किया । एक परमात्मा को भुलाकर जन्म व्यर्थ गँवाता और विवेक-हीन हुआ हरि-नाम से विमुख रहता है ।। ६ ।। बालक की मृत्यु पर उसकी लीलाओं को याद करते और उसे रँगीला बालक कह-कहकर लोग रोते हैं । जिसका भेजा हुआ था, उसी ने वापस बुला लिया, रोनेवाला (उसे अपना समझने की) भूल करता है ।। ७ ।। यदि वह भरपूर यौवन में मरता, तो क्या कर लिया जाता— मेरा-मेरा करके रो लिया होता । यह सब ख्वारी माया के कारण ही तो है, संसार में ऐसे मोहपूर्ण जीवन को धिक्कार है ।। ८ ।। काले केशों से अब सफ़ेद हो गए अर्थात् यौवन से बुढ़ापा आ गया । किन्तु हरि-नाम के बिना जीव ने अपनी पूँजी (शक्ति) भी गँवा दी । दुर्मति के कारण अज्ञानांध जीव स्वयं नाश को प्राप्त होता एवं दूसरों को नाश करता है । छला जाने पर रो-रोकर विलाप करता है ।। ९ ।। अपनी स्थिति को विचारकर कोई नहीं रोता । सतिगुरु से भेंट होने से ही ज्ञान लब्ध होता है । गुरु के बिना मुक्ति-मार्ग के कठोर द्वार नहीं खुलते, शब्द के रहस्य को जान लेने से निस्तार होता है ।। १० ।। शरीर बूढ़ा हो जाता है और शरीर जीर्ण होकर टूटने लगता है । फिर अन्तिम समय के मित्र प्रभु का नाम नहीं जपता । ऐसा मिथ्यावादी मुँह-काला जीव हरि-नाम से विमुख होने के कारण परमात्मा के सम्मुख तिरस्कृत होता है ।। ११ ।। जो झूठे जीव प्रभु के नाम को विसार कर चले हैं, वे जन्म-मरण के चक्र में पड़े हैं; उनके शीश में मिट्टी पड़ती है (अर्थात् उनका तिरस्कार होता है), उन्हें ससुराल (परलोक) में कोई स्थान नहीं और पीहर (इहलोक में) भी निरादृत होते हैं ।। १२ ।। जीव खा-पहनकर मौज मनाता है । हृदय की भक्ति

के बिना बेकार विवादों में मरता है; उसे भले-बुरे की पहचान नहीं रहती; यमदूतों द्वारा दण्डित होता है, उसके सम्मुख कोई चारा नहीं चलता ॥ १३ ॥ जीव प्रवृत्ति तथा निवृत्ति की स्थितियों को पहचाने, गुरु के सम्पर्क में अपने यथार्थ रूप की जानकारी पाए, किसी को बुरा समझ कर दुर्व्यवहार न करे, तब कहीं जीवन के सत्य को पाकर ज्ञानवान् होता है ॥ १४ ॥ सत्य की जानकारी के बग़ैर कोई सफलता नहीं मिलती। सच्चे शब्द को जान लेने से महिमा बढ़ती है। जब उस परमात्मा को रुचता है, तो वह अपने-आप जीव को बख्श लेता और अहम्भाव का गर्व निवारण कर देता है ॥ १५ ॥ परमात्मा के हुक्म (ईश्वरेच्छा) की सही जानकारी गुरु की कृपा से होती है, वह युगों में प्रचलित मोक्ष-मार्गों (ज्ञान-मार्ग, भक्ति-मार्ग आदि) को पहचानता है, (किन्तु इस युग में) गुरु नानक कहते हैं कि मात्र हरि-नाम जपने से संसार-सागर तरा जाता है— वह सत्यस्वरूप परमात्मा जीव को स्वयं मुक्ति-दान देता है ॥ १६ ॥ १ ॥ ७ ॥

॥ मारू महला १ ॥ हरि सा मीतु नाही मै कोई। जिनि तनु मनु दीआ सुरति समोई। सरब जीआ प्रतिपालि समाले सो अंतरि दाना बीना हे ॥ १ ॥ गुरु सरवरु हम हंस पिआरे। सागर महि रतन लाल बहु सारे। मोती माणक हीरा हरि जसु गावत मनु तनु भीना हे ॥ २ ॥ हरि अगम अगाहु अगाधि निराला। हरि अंतु न पाईऐ गुर गोपाला। सतिगुर मति तारे तारणहारा मेलि लए रंगि लीना हे ॥ ३ ॥ सतिगुर बाझहु मुकति किनेही। ओहु आदि जुगादी राम सनेही। दरगह मुकति करे करि किरपा बखसे अवगुण कीना हे ॥ ४ ॥ सतिगुरु दाता मुकति कराए। सभि रोग गवाए अंम्रित रसु पाए। जमु जागाति नाही करु लागै जिसु अगनि बुझी ठरु सीना हे ॥ ५ ॥ काइआ हंस प्रीति बहु धारी। ओहु जोगी पुरखु ओह सुंदरि नारी। अहिनिसि भोगै चोज बिनोदी उठि चलतै मता न कीना हे ॥ ६ ॥ स्रिसटि उपाइ रहे प्रभ छाजै। पउण पाणी बैसंतरु गाजै। मनूआ डोलै दूत संगति मिलि सो पाए जो किछु कीना हे ॥ ७ ॥ नामु विसारि दोख दुख सहीऐ। हुकमु भइआ चलणा किउ रहीऐ। नरक कूप महि गोते खावै जिउ जल ते बाहरि मीना हे ॥ ८ ॥ चउरासीह नरक साकतु भोगाईऐ। जैसा कीचै तैसो पाईऐ। सतिगुर बाझहु मुकति न होई किरति

बाधा ग्रसि दीना हे ॥ ९ ॥ खंडेधार गली अति भीड़ी । लेखा लीजै तिल जिउ पीड़ी । मात पिता कलत्र सुत बेली नाही बिनु हरि रस मुकति न कीना हे ॥ १० ॥ मीत सखे केते जग माही । बिनु गुर परमेसर कोई नाही । गुर की सेवा मुकति पराइणि अनदिनु कीरतनु कीना हे ॥ ११ ॥ कूड़ु छोडि साचे कउ धावहु । जो इछहु सोई फलु पावहु । साच वखर के वापारी विरले लै लाहा सउदा कीना हे ॥ १२ ॥ हरि हरि नामु वखरु लै चलहु । दरसनु पावहु सहजि महलहु । गुरमुखि खोजि लहहि जन पूरे इउ समदरसी चीना हे ॥ १३ ॥ प्रभ बेअंत गुरमति को पावहि । गुर कै सबदि मन कउ समझावहि । सतिगुर की बाणी सति सति करि मानहु इउ आतम रामै लीना हे ॥ १४ ॥ नारद सारद सेवक तेरे । त्रिभवणि सेवक वडहु वडेरे । सभ तेरी कुदरति तू सिरि सिरि दाता सभु तेरो कारणु कीना हे ॥ १५ ॥ इकि दर सेवहि दरदु वञाए । ओइ दरगह पैधे सतिगुरू छडाए । हउमै बंधन सतिगुरि तोड़े चितु चंचलु चलणि न दीना हे ॥ १६ ॥ सतिगुर मिलहु चीनहु बिधि साई । जितु प्रभु पावहु गणत न काई । हउमै मारि करहु गुर सेवा जन नानक हरि रंगि भीना हे ॥ १७ ॥ २ ॥ ८ ॥

परमात्मा के समान मेरा कोई अन्य मित्र (हितचिन्तक) नहीं। जिसने मुझे तन-मन दिया है और मेरे भीतर (अपने अंश रूप में) आत्मा स्थापित की है। जो समस्त जीवों का प्रतिपालक और संरक्षक है। वह अन्तर्यामी तथा सूझवान हमारे भीतर ही विद्यमान है ॥ १ ॥ गुरु सरोवर है और हम (उस पर आश्रित) हंस हैं। (गुरु) सागर है और उसमें (सद्‌गुण एवं हरि-यश रूपी) बहुत से रत्न-जवाहिरात प्राप्य हैं। हरि का यशोगान ही मोती-माणिक्य के समान है, जिससे तन-मन तृप्त हो जाता है ॥ २ ॥ परमात्मा अगम, अथाह, अगाध और सबसे निराला है। उस सबके गुरु, पृथ्वीपति परमात्मा का अन्त (रहस्य) किसी ने नहीं पाया। वह तारनहार प्रभु सतिगुरु की ओर उन्मुख होने से अपने प्रेम में लीन कर लेता है और मुक्ति प्रदान करता है ॥ ३ ॥ सतिगुरु के बिना क्योंकर मुक्ति मिले ! वह युग-युग से प्रभु से अभेद है। वही कृपापूर्वक हमारे अवगुणों को क्षमा करके परमात्मा के सम्मुख हमें मुक्ति दिलवाता है ॥ ४ ॥ सतिगुरु ही मुक्ति का दाता है; सब विपत्तियों को दूर करके वह हमें अमृत-रस चखाता है (अमृत-रस अर्थात् नाम-रस का आस्वादन करवाता

है)। यमदूत रूपी अधिकारी उस पर (गुरु द्वारा अपनाए जीव पर) कर नहीं लेता (उसे दण्ड नहीं देता), उसकी तृष्णा रूपी अग्नि बुझ जाती है और उसका सीना ठण्डा होता है (अर्थात् वह शान्त, शीतल और ताप-मुक्त हो जाता है) ॥ ५ ॥ आत्मा रूपी हंस ने शरीर से बहुत प्यार किया। वह जीवात्मा तो योगी पुरुष (संयत और योगी की नाईं न रुकनेवाला) है और शरीर सुन्दर स्त्री के समान है। जीव विलासी बनकर दिन-रात शरीर रूपी सुन्दरी को भोगता है, किन्तु चलते समय (मृत्यु-काल) वह उससे कोई परामर्श नहीं लेता ॥ ६ ॥ परमात्मा ने यह समूची सृष्टि उपजाई है और इसी में व्याप्त हो रहा है। वह पवन, पानी, अग्नि आदि तत्त्वों के माध्यम से प्रकट है। किन्तु मन कामादि दूतों की संगति में अस्थिर दोलायित रहता और अपने कर्मों का फल पाता है ॥ ७ ॥ (समस्त जीव) हरि-नाम को विस्मृत करने के अपराध में दुःख सहन करते हैं; जब चलने का आदेश आता है (मृत्यु-समय) तो क्योंकर रहा जा सकता है! तब वे जल-विहीन मछली की तरह तड़पते हुए नरक-कुण्ड में गोते खाते हैं ॥ ८ ॥ गुरु से विमुख जीव को चौरासी लाख योनियों का नरक भोगना पड़ता है। जैसे कर्म किए होते हैं, वैसी उपलब्धि होती है। सतिगुरु के बिना कर्मों का बँधा जीव ग्रस लिया जाता है, मुक्ति नहीं प्राप्त कर सकता ॥ ९ ॥ आगे (जहाँ से आत्मा को गुज़रना है) की गली बड़ी तंग और तलवार की धार के समान तीखी होगी। वहाँ तिलों की तरह कोल्हू में पिराकर हिसाब लिया जायगा। वहाँ माता-पिता, पत्नी-पुत्र, सज्जन-मित्र कोई अपना नहीं होता; हरिनाम-रस-पान के बिना वहाँ मुक्ति सम्भव नहीं होती ॥ १० ॥ जगत में मित्र, संगी-साथी चाहे जितने हों, किन्तु गुरु-परमेश्वर के बिना कोई सहायक नहीं होता। गुरु की सेवा से ही मुक्ति सम्भव है, (अतः) दिन-रात हरि-कीर्तन करो ॥ ११ ॥ (जीव) झूठे को छोड़कर सत्य को पाने जाता है, तो वह इच्छानुसार फल पा लेता है। वह सत्य रूपी सामग्री का व्यापार करता है; कोई विरला जीव ही लाभ की शर्तों पर यह सौदा कर पाता है ॥ १२ ॥ हरि के नाम की सामग्री लेकर चलो (अर्थात् हरि-नाम जपते हुए जिओ), तो सहज ही परमात्मा के दर्शन होंगे। (जीवात्मा को चाहिए कि) वह गुरुमुख सन्त को खोजकर उसकी सेवा में रहे, तभी वह समदर्शी परमात्मा को पहचान सकता है ॥ १३ ॥ अनन्त प्रभु के रहस्य को कोई गुरुमुख ही (गुरु के उपदेशों से) प्राप्त करता है। (कोई विरला ही) गुरु के शब्दों में विश्वास लाकर मन को समझाता है। सतिगुरु की वाणी को परम सत्य स्वीकार करो, तभी सर्वव्यापक चेतना (परमात्मा) में लीन हो सकोगे ॥ १४ ॥ नारद-से मुनि और सरस्वती-सी दैवी शक्तियाँ तुम्हारी ही (परमात्मा की) सेवा में हैं। त्रिभुवन के बड़े से बड़े लोक तुम्हारे ही दास हैं। हे परमात्मा, सब तुम्हारी

ही रचना है, तुम सब जीवों के आपूरक हो और सब कुछ तुम्हारा ही किया होता है ।। १५ ।। एकमात्र तुम्हारे द्वार पर सेवा करनेवाले सब कष्टों से मुक्त हो जाते हैं। सतिगुरु उनके बंधन काट देता है और वे प्रभु के घर में प्रविष्ट होते हैं। अहंकार के सब स्वार्थयुत बन्धन गुरु ने तोड़ दिये हैं और मन की चंचलता को स्थिर कर दिया है ।। १६ ।। जीव सतिगुरु को पा सके, ऐसा उद्यम करो। उस परमात्मा को पा लेने से कर्म का सब हिसाब-किताब समाप्त हो जाता है। इसलिए (तुम भी) अहंकार-भाव को त्यागकर गुरु की सेवा में संलग्न हो जाओ; गुरु नानक कहते हैं (ऐसा करने से) सारा संसार उसके प्रेम में मग्न होता है ।। १७ ।। २ ।। ८ ।।

।। मारू महला १ ।। असुर सघारण रामु हमारा। घटि घटि रमईआ रामु पिआरा। नाले अलखु न लखीऐ मूले गुरमुखि लिखु वीचारा हे ।। १ ।। गुरमुखि साधू सरणि तुमारी। करि किरपा प्रभि पारि उतारी। अगनि पाणी सागरु अति गहरा गुरु सतिगुरु पारि उतारा हे ।। २ ।। मनमुख अंधुले सोझी नाही। आवहि जाहि मरहि मरि जाही। पूरबि लिखिआ लेखु न मिटई जमदरि अंधु खुआरा हे ।। ३ ।। इकि आवहि जावहि घरि वासु न पावहि। किरत के बाधे पाप कमावहि। अंधुले सोझी बूझ न काई लोभु बुरा अहंकारा हे ।। ४ ।। पिर बिनु किआ तिसु धन सीगारा। पर पिर राती खसमु विसारा। जिउ बेसुआ पूत बापु को कहीऐ तिउ फोकट कार विकारा हे ।। ५ ।। प्रेत पिंजर महि दूख घनेरे। नरकि पचहि अगिआन अंधेरे। धरमराइ की बाकी लीजै जिनि हरि का नामु विसारा हे ।। ६ ।। सूरजु तपै अगनि बिखु झाला। अपतु पसू मनमुखु बेताला। आसा मनसा कूड़ु कमावहि रोगु बुरा बुरिआरा हे ।। ७ ।। मसतकि भारु कलर सिरि भारा। किउकरि भवजलु लंघसि पारा। सतिगुरु बोहिथु आदि जुगादी राम नामि निसतारा हे ।।८।। पुत्र कलत्र जगि हेतु पिआरा। माइआ मोहु पसरिआ पासारा। जम के फाहे सतिगुरि तोड़े गुरमुखि ततु बीचारा हे ।।९।। कूड़ि मुठी चालै बहु राही। मनमुखु दाझै पड़ि पड़ि भाही। अंम्रित नामु गुरू वडदाणा नामु जपहु सुख सारा हे ।। १० ।। सतिगुरु तुठा सचु द्रिड़ाए। सभि दुख मेटे मारगि पाए। कंडा पाइ न गडई मूले जिसु सतिगुरु राखणहारा हे ।। ११ ।। खेहू

खेह रलै तनु छीजै। मनमुखु पाथरु सैलु न भीजै। करण पलाव करे बहुतेरे नरकि सुरगि अवतारा हे ॥ १२ ॥ माइआ बिखु भुइअंगम नाले। इनि दुबिधा घर बहुते गाले। सतिगुर बाझहु प्रीति न उपजै भगति रते पतीआरा हे ॥ १३ ॥ साकत माइआ कउ बहु धावहि। नामु विसारि कहा सुखु पावहि। त्रिहु गुण अंतरि खपहि खपावहि नाही पारि उतारा हे ॥१४॥ कूकर सूकर कहीअहि कूड़िआरा। भउकि मरहि भउ भउ भउ हारा। मनि तनि झूठे कूड़ु कमावहि दुरमति दरगह हारा हे ॥ १५ ॥ सतिगुरु मिलै त मनूआ टेकै। राम नामु दे सरणि परेकै। हरि धनु नामु अमोलकु देवै हरि जसु दरगह पिआरा हे ॥ १६ ॥ राम नामु साधू सरणाई। सतिगुर बचनी गति मिति पाई। नानक हरि जपि हरि मन मेरे हरि मेले मेलणहारा हे ॥१७॥३॥९॥

परमात्मा असुरों (विकारों) का संहारक है। वह प्रिय प्रभु सबमें व्याप्त है। अदृश्य परमात्मा सबके साथ है, किन्तु निपट अदृश्य है; परन्तु गुरु की वाणी में उसका वर्णन है और उसी के माध्यम से उस पर विचार सम्भव है ॥ १ ॥ हे प्रभु, तुम्हारी शरण लेनेवाला ही गुरुमुख या साधु है। जो उस समर्थ गुरु की कृपा हो, तो परमात्मा जीव को संसार से पार लगाता है। विषय-विकारों की अग्नि और तृष्णा के जल का यह गहरा सागर केवल सतिगुरु ही के द्वारा पार उतरा जा सकता है ॥ २ ॥ मनमुख जीव अविवेकी और अज्ञानांध होता है। वह निरन्तर आवागमन में पड़ा जन्मता-मरता है। पूर्व लिखे प्रारब्ध-कर्म नहीं मिटते, यमदूत दण्ड देकर अज्ञानी को कष्ट पहुँचाते हैं ॥ ३ ॥ कुछ जीव आवागमन में पड़े रहते हैं, उन्हें कभी परमात्मा के दरबार में स्थान नहीं मिलता। प्रारब्ध के अनुसार ही वे पाप कमाते हैं। वे अज्ञानांध होने के कारण सूझ-रहित होकर लोभ-अहंकार के शिकार होते हैं ॥ ४ ॥ परमात्मा रूपी पति के बिना जीवात्मा रूपी स्त्री का शृंगार व्यर्थ है। वह पर-पुरुष में आसक्त है, अपने पति की उपेक्षा करती है (अर्थात् परमात्मा को छोड़ मन माया में आसक्त है)। उसका कार्य-व्यापार ऐसा व्यर्थ हो जाता है, जैसे वेश्या-पुत्र के पिता के सम्बन्ध में अनिश्चय होता है (अर्थात् उसके कर्म अनिश्चित-तथा गर्हित होते हैं) ॥ ५ ॥ मन रूपी प्रेत के रहने के पिंजरे अर्थात् शरीर में अनेक दुःख हैं। अज्ञान तथा अविवेक के कारण ऐसे शरीर नरक-यातना भोगते हैं। हरि का नाम विस्मृत करनेवाले को धर्मराज का दण्ड सहना पड़ता है ॥ ६ ॥ यम-मार्ग पर सूर्य-ताप की प्रखर अग्नि का कुण्ड है, वहाँ के पेड़ों के पत्ते उस अग्नि की लपटों में जल जाते हैं। मनमुख

जीव पशु के समान बे-ताल (बे-सहारा) और प्रतिष्ठाहीन हो जाता है। वह आशाओं-तृष्णाओं के आवरण में लिपटा मिथ्या की कमाई करता हुआ उसी बुरे रोग से पीड़ित होता है ॥ ७ ॥ उसके सिर पर पापों की परती का बोझ है। (ऐसे में) वह संसार-सागर से क्योंकर पार उतर सकता है? सतिगुरु ही (आदि-अनादि से) वह जहाज़ है, जो परमात्मा के नाम-जाप द्वारा इससे पार लगा देता है ॥ ८ ॥ वह जीव पुत्र, पत्नी, जगत के प्यार आदि में ही फँसा रहता है। माया-मोह के प्रसार में संलग्न रहता है। यमदूतों के बाँधे बंधन केवल सतिगुरु तोड़ता है और जीव गुरु के द्वारा ही तत्त्व-विचार का सामर्थ्य प्राप्त करता है ॥ ९ ॥ मिथ्या की ठगी हुई यह दुनिया (एक परमात्मा को छोड़कर) अनेक रास्तों पर चलती है। मनमुख जीव आग में पड़कर जलता है। केवल गुरु ही विवेकशील है, वह परमात्मा के अमृत-नाम का दाता है। उसके द्वारा प्रभु-नाम-जाप से महती प्रसन्नता होती है, वही सुख का सार है ॥ १० ॥ सतिगुरु संतुष्ट होकर सत्य का भेद बताता है; सब दुःखों को मिटाकर जीव को सुमार्ग दिखाता है। सतिगुरु जिसका संरक्षक होता है, उसके पाँव में काँटा भी नहीं चुभता ॥ ११ ॥ शरीर के मिटने पर मिट्टी मिट्टी में मिल जाती है; मनमुख पत्थर के समान होता है, इसलिए अप्रभावित रहता है। बार-बार नरक-स्वर्ग में पड़ता और करुण प्रलाप करता है (किन्तु सब व्यर्थ।) ॥ १२ ॥ मन रूपी सर्प में माया का विष है, इन्हीं दुबिधाओं में अनेक घर (जीवात्माएँ) बरबाद होते हैं (विकारों के कारण जीव विनाशोन्मुख होता है)। किन्तु सतिगुरु के बिना जीव और प्रभु में प्रीति नहीं उपजती और वह (सतिगुरु) सेवा-भक्ति से संतुष्ट होता है ॥ १३ ॥ मनमुख जीव माया के आकर्षणों में पड़ता है। हरि-नाम को विस्मृत करके वह क्या सुख पाता है? वह इस त्रिगुणी संसार में ही खप जाता है, इससे पार नहीं उतर पाता ॥ १४ ॥ कुत्ते एवं सुअर का-सा मिथ्या जीवन जीता है। इधर-उधर भटकता हुआ भयभीत वह कूकर-जीव यों ही भौंक मरता है। तन-मन से उसी मिथ्या में जीता है और अविवेक के कारण परमात्मा के हुज़ूर में पराजित होता है ॥ १५ ॥ यदि सतिगुरु से उसकी भेंट हो, तो उसका मन स्थिर हो, वह राम-नाम की शरण में पड़े, तो उसे गुरु से हरिनाम-धन की प्राप्ति हो —यही हरिनाम-यश परमात्मा की दरगाह में स्वीकृत है ॥ १६ ॥ राम-नाम जपने तथा सन्तों की शरण लेने से गुरुवाणी द्वारा सुगति और मर्यादा मिलती है। (इसीलिए) गुरु नानक कहते हैं कि हे मन, तुम हरि-नाम का जाप करो, वही जीव को परमात्मा से संयुक्त करने में समर्थ है ॥ १७ ॥ ३ ॥ ९ ॥

॥ मारू महला १ ॥ घरि रहु रे मन मुगध इआने ।

राम जपहु अंतरगति धिआने । लालच छोडि रचहु अपरंपरि इउ पावहु मुकति दुआरा हे ॥ १ ॥ जिसु बिसरिऐ जमु जोहणि लागै । सभि सुख जाहि दुखा फुनि आगै । राम नामु जपि गुरमुखि जीअड़े एहु परम ततु वीचारा हे ॥ २ ॥ हरि हरि नामु जपहु रसु मीठा । गुरमुखि हरि रसु अंतरि डीठा । अहिनिसि राम रहहु रंगि राते एहु जपु तपु संजमु सारा हे ॥३॥ राम नामु गुरबचनी बोलहु । संत सभा महि इहु रसु टोलहु । गुरमति खोजि लहहु घरु अपना बहुड़ि न गरभ मझारा हे ॥४॥ सचु तीरथि नावहु हरि गुण गावहु । ततु वीचारहु हरि लिव लावहु । अंत कालि जमु जोहि न साकै हरि बोलहु रामु पिआरा हे ॥ ५ ॥। सतिगुरु पुरखु दाता वडदाणा । जिसु अंतरि साचु सु सबदि समाणा । जिस कउ सतिगुरु मेलि मिलाए तिसु चूका जम भै भारा हे ॥ ६ ॥ पंच ततु मिलि काइआ कीनी । तिस महि राम रतनु लै चीनी । आतम रामु रामु है आतम हरि पाईऐ सबदि वीचारा हे ॥ ७ ॥ सत संतोखि रहहु जन भाई । खिमा गहहु सतिगुर सरणाई । आतमु चीनि परातमु चीनहु गुर संगति इहु निसतारा हे ॥ ८ ॥ साकत कूड़ कपट महि टेका । अहिनिसि निंदा करहि अनेका । बिनु सिमरन आवहि फुनि जावहि ग्रभ जोनी नरक मझारा हे ॥ ९ ॥ साकत जम की काणि न चूकै । जम का डंडु न कबहू मूकै । बाकी धरम राइ की लीजै सिरि अफरिओ भारु अफारा हे ॥१०॥ बिनु गुर साकतु कहहु को तरिआ । हउमै करता भवजलि परिआ । बिनु गुर पारु न पावै कोई हरि जपीऐ पारि उतारा हे ॥ ११ ॥ गुर की दाति न मेटै कोई । जिसु बखसे तिसु तारे सोई । जनम मरण दुखु नेड़ि न आवै मनि सो प्रभु अपर अपारा हे ॥१२॥ गुर ते भूले आवहु जावहु । जनमि मरहु फुनि पाप कमावहु । साकत मूड़ अचेत न चेतहि दुखु लागै ता रामु पुकारा हे ॥ १३ ॥ सुखु दुखु पुरब जनम के कीए । सो जाणै जिनि दातै दीए । किस कउ दोसु देहि तू प्राणी सहु अपणा कीआ करारा हे ॥१४॥ हउमै ममता करदा आइआ । आसा मनसा बंधि चलाइआ । मेरी मेरी करत किआ ले चाले बिखु लादे छार बिकारा हे ॥१५॥

हरि की भगति करहु जन भाई। अकथु कथहु मनु मनहि समाई। उठि चलता ठाकि रखहु घरि अपनै दुखु काटे काटणहारा हे॥ १६॥ हरि गुर पूरे की ओट पराती। गुरमुखि हरि लिव गुरमुखि जाती। नानक राम नामि मति ऊतम हरि बखसे पारि उतारा हे॥ १७॥ ४॥ १०॥

हे मूर्ख-गँवार मन, अपने यथार्थ घर में स्थिर रहो; राम-नाम का जाप करो और अन्तर्मुख होकर प्रभु में ध्यान लगाओ। जीवन की लालसाओं का त्याग कर परमसत्य में लीन हो जाओ, और इस प्रकार मुक्ति का द्वार प्राप्त करो॥ १॥ जिसको भुलाने से यम कष्ट देने लगता है, सुखों का नाश होता और जीव पुनः दुःखों में घिरता है। (इसलिए) हे जीव, तुम गुरु के द्वारा परमात्मा का नाम जपो और परम-तत्त्व का चिन्तन करो॥ २॥ हे जीव, परमात्मा के अनूठे नाम-जाप का रस लो, गुरमुख जीव तो अपने अन्तर्मन में ही हरि-रस देखते अर्थात् स्वाद लेते हैं। रात-दिन प्रभु के प्रेम में लीन रहो, यही श्रेष्ठ जप, तप, संयमादि है॥३॥ गुरु के उपदेशानुसार राम-नाम जपो। सन्तों की संगति में इसका (राम-नाम का) विशिष्ट रस खोजो। गुरु के मतानुसार अपना ही घर (अन्तर्मुख) खोज लो तो दो बार गर्भ-योनि में आने से मुक्ति मिल जाती है॥ ४॥ सत्य के तीर्थ पर स्नान करके परमात्मा के गुण गाओ। तत्त्व-चिन्तना का विचार करो और परमात्मा में मन रमाओ। इससे अन्तकाल में यमदूत दण्ड नहीं दे सकते। अन्ततः प्यार से राम की लग्न में रहो॥ ५॥ सतिगुरु सर्वोच्च दाता पुरुष है। जिसके मन में सत्य है, वही उसके शब्द (नाद) में समाता है। जिसे सतिगुरु परमात्मा से मिला देता है, उसका यमों का भय समाप्त हो जाता है॥ ६॥ यह शरीर पाँच तत्त्वों के सम्मिलन से बना है, उसमें प्रभु की विद्यमानता को पहचानो। आत्मा (जीव) ही परमात्मा है, परमात्मा आत्मा है, इस तथ्य की सूझ गुरु के शब्दों के ज्ञान से होती है॥ ७॥ ऐ हरिजनो, सत्य और सन्तोष के गुणों में जिओ और सतिगुरु की शरण लेकर क्षमा ग्रहण करो। आत्म-प्रकाश द्वारा परमात्मा को पहचानो; यह व्यापार गुरु की संगति में ही संभव है॥ ८॥ मनमुख मिथ्या, कपट आदि में ही मग्न रहता है। रात-दिन अनेकों की निन्दा करता है; हरि-सिमरन के बग़ैर पुनःपुनः गर्भ-योनि के नरक में आता-जाता है॥ ९॥ पदार्थवादी जीव के लिए मृत्यु-भय बना ही रहता है, यमदूतों का दण्ड भी नहीं चुकता और (उस) अहंकार-जन्य जीव के सिर पर सदैव पापों का बोझ पड़ा रहता है और वह धर्मराज के दण्ड का शिकार होता है॥ १०॥ कहो, गुरु के बिना भी कोई साकत (मनमुख जीव) पार हुआ है? वह तो अहंकार के कारण संसार-सागर में डूबता

है। गुरु के बिना किसी का कल्याण नहीं, हरि-नाम जपने से ही संसार-सागर से पार हुआ जा सकता है ॥ ११ ॥ गुरु की कृपा को कोई नहीं रोक सकता; जिस पर उसकी दया हो, उसी को पार करता है। उसे जन्म-मरण के दुःख का ध्यान भी नहीं आता, उसका मन अपार प्रभु में स्थिर हो जाता है ॥ १२ ॥ जो जीव गुरु से भटके हुए हैं, वे आवागमन का दुःख भोगते हैं, जन्मते-मरते और पुनःपुनः पाप की कमाई करते हैं। मनमुख जीव विवेकहीनता के कारण होश में नहीं आते, किन्तु जब दुःख से कातर हो जाते हैं, तो प्रभु को पुकारने लगते हैं ॥ १३ ॥ जीव को प्राप्त सुख-दुःख सब पूर्वजन्म के प्रारब्ध के कारण होते हैं, जो दाता प्रभु इन दुःखों-सुखों को बाँटता है, वही इस तथ्य से परिचित है (कर्म और फल से वही परिचित है)। ऐ प्राणी, सब कुछ तुम्हारा अपना ही किया-कराया है, दोष किसको दोगे ? ॥ १४ ॥ जीव मैं-मेरी के भाव में प्रताड़ित धरती पर आता है। यहाँ आशाओं-तृष्णाओं में बँधा चलता है। मेरी-मेरी करता हुआ भी वह विकारों की विष तथा मलिन कर्मों की राख के अतिरिक्त क्या लादकर चलेगा ॥ १५ ॥ हे भाई, हरि की भक्ति करो। मन की अस्थिरता को संयत करके परमात्मा का गुण गाओ। चंचल मन को नियन्त्रित करके अपने यथार्थ घर में टिकाओ, दुःख काटनेवाला (परमात्मा) तुम्हारे सब दुःखों को काट देगा ॥ १६ ॥ परमात्मा रूपी पूर्णगुरु की ओट ली है। गुरुमुख जीव को गुरु द्वारा ही हरि की लग्न प्राप्त हुई है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु के नाम से बुद्धि निर्मल होती है और परमात्मा जीव को (संसार-सागर से) पार लगा देता है ॥ १७ ॥ ४ ॥ १० ॥

॥ मारू महला १॥ सरणि परे गुरदेव तुमारी। तू समरथु दइआलु मुरारी। तेरे चोज न जाणै कोई तू पूरा पुरखु बिधाता हे ॥ १ ॥ तू आदि जुगादि करहि प्रतिपाला। घटि घटि रूपु अनूपु दइआला। तिउ तुधु भावै तिवै चलावहि सभु तेरो कीआ कमाता हे ॥ २ ॥ अंतरि जोति भली जगजीवन। सभि घट भोगै हरि रसु पीवन। आपे लेवै आपे देवै तिहु लोई जगत पित दाता हे ॥ ३ ॥ जगतु उपाइ खेलु रचाइआ। पवणै पाणी अगनी जीउ पाइआ। देही नगरी नउ दरवाजे सो दसवा गुपतु रहाता हे ॥ ४ ॥ चारि नदी अगनी असराला। कोई गुरमुखि बूझै सबदि निराला। साकत दुरमति डूबहि दाझहि गुरि राखे हरि लिव राता हे ॥ ५ ॥ अपु तेजु वाइ प्रिथमी आकासा। तिन महि पंच तसु घरि वासा। सतिगुर सबदि रहहि रंगि राता

तजि माइआ हउमै भ्राता हे ।। ६ ।। इहु मनु भीजै सबदि पतीजै । बिनु नावै किआ टेक टिकीजै । अंतरि चोरु मुहै घरु मंदरु इनि साकति दूतु न जाता हे ।।७।। दुंदर दूत भूत भीहाले । खिचो ताणि करहि बेताले । सबद सुरति बिनु आवै जावै पति खोई आवत जाता हे ।।८।। कूड़ु कलरु तनु भसमै ढेरी । बिनु नावै कैसी पति तेरी । बाधे मुकति नाही जुग चारे जमकंकरि कालि पराता हे ।। ९ ।। जमदरि बाधे मिलहि सजाई । तिसु अपराधी गति नही काई । करण पलाव करे बिललावै जिउ कुंडी मीनु पराता हे ।। १० ।। साकतु फासी पड़ै इकेला । जम वसि कीआ अंधु दुहेला । राम नाम बिनु मुकति न सूझै आजु कालि पचि जाता हे ।। ११ ।। सतिगुर बाझु न बेली कोई । ऐथै ओथै राखा प्रभु सोई । राम नामु देवै करि किरपा इउ सललै सलल मिलाता हे ।। १२ ।। भूले सिख गुरू समझाए । उझड़ि जादे मारगि पाए । तिसु गुर सेवि सदा दिनु राती दुख भंजन संगि सखाता हे ।। १३ ।। गुर की भगति करहि किआ प्राणी । ब्रहमै इंद्रि महेसि न जाणी । सतिगुरु अलखु कहहु किउ लखीऐ जिसु बखसे तिसहि पछाता हे ।। १४ ।। अंतरि प्रेमु परापति दरसनु । गुरबाणी सिउ प्रीति सु परसनु । अहिनिसि निरमल जोति सबाई घटि दीपकु गुरमुखि जाता हे ।। १५ ।। भोजन गिआनु महारसु मीठा । जिनि चाखिआ तिनि दरसनु डीठा । दरसनु देखि मिले बैरागी मनु मनसा मारि समाता हे ।। १६ ।। सतिगुरु सेवहि से परधाना । तिन घट घट अंतरि ब्रहमु पछाना । नानक हरि जसु हरि जन की संगति दीजै जिन सतिगुरु हरि प्रभु जाता हे ।। १७ ।। ५ ।। ११ ।।

हे गुरुदेव (यहाँ प्रभु को ही गुरुदेव कहा गया है), हम तुम्हारी शरण में हैं; तुम समर्थ और दयालु हो। तुम्हारी लीलाएँ अगम्य हैं, तुम्हीं सबके रचयिता हो ।। १ ।। युग-युग से तुम्हीं सबका प्रतिपालन कर रहे हो। हे दयालु, प्रत्येक शरीर में तुम्हारा ही अनुपम रूप विद्यमान है। जैसे तुम्हें रुचता है, वैसा ही चलाते हो— सब तुम्हारा ही किया-कराया है ।। २ ।। हे जगजीवन, सबके भीतर तुम्हारी ही ज्योति आलोकित है; तुम्हीं सब शरीरों को भोगते और उनके रसास्वादन को मानते हो। तुम्हीं तीनों लोकों के पिता और दाता हो, इसलिए समूचा लेन-देन स्वयं

ही करते हो ॥ ३ ॥ तुमने इस संसार की रचना करके यह खेल रचाया है। पवन, पानी, अग्नि आदि तत्त्वों से शरीर बनाकर उसमें जीव स्थापित किया है। शरीर रूपी नगरी में नौ द्वार प्रकट किए और दसवाँ गुप्त रखा है (अर्थात् शरीर में आँख, नाक, कान आदि द्वार तो प्रकट हैं, किन्तु आत्मोपलब्धि का भीतरी द्वार गुप्त है —उसी को पाना लक्ष्य है) ॥ ४ ॥ अग्नि की चार भयानक नदियाँ हैं (हिंसा, मोह, लोभ, और क्रोध)। शब्द द्वारा संसार से निर्लिप्त रहनेवाला कोई गुरुमुख ही इस तथ्य को जानता है। मायावी जीव उन नदियों में डूबता और जलता है, गुरुमुखों को गुरु की रक्षा प्राप्त होती है, वे प्रभु-प्रेम में लीन रहते हैं ॥ ५ ॥ जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी और आकाश आदि पंच तत्त्वों में जो सतोगुणी वृत्ति है, गुरुमुख उसी में वास करता है। वह सतिगुरु के शब्द-प्रेम में लीन रहता और माया, अहंकार तथा भ्रमों का त्याग कर देता है ॥ ६ ॥ यह मन जब शब्द में भीगता है, तभी इसमें विश्वास जगता है। किन्तु हरि-नाम के बिना वह (मन) स्थिर नहीं होता; मायावी जीवों के शरीर-मन्दिर को अहंकार रूपी चोर लूटता है और वे इस तथ्य से अनभिज्ञ रहते हैं ॥ ७ ॥ काम-क्रोधादि द्वन्द्वी दूत बड़े भयानक हैं; वे बे-मुहार प्रेतों की तरह खींचतान करते हैं। जब तक सुरत-शब्द का योग नहीं होता (अर्थात् आत्मा शब्द में नहीं रमती), तब तक जीव अपनी प्रतिष्ठा खोकर आवागमन के चक्र में पड़ा रहता है ॥ ८ ॥ शरीर मिथ्या है, जर्जरित होकर भस्म की ढेरी हो जाता है, प्रभु के नाम के बिना उसकी (शरीर की) कोई मर्यादा नहीं। ऐसे (नाम-विहीन) मनुष्य बन्धनों में पड़े रहते हैं, उन्हें चारों युगों में मुक्ति उपलब्ध नहीं होती, यम के दूत उसे ख़ूब पहचानते हैं ॥ ९ ॥ यमराज के द्वार पर उन्हें दण्ड मिलता है, ऐसे अपराधियों की कोई गति नहीं। वे (आवागमन में) फँसे इस प्रकार करुण-प्रलाप करते हैं, जैसे मछली कुण्डी में फँसकर तड़पती हैं ॥ १० ॥ ऐसा मायावी जीव यमों के फन्दे में पड़ता और दुःख उठाता है। वह आज-कल में मिट जाता है, प्रभु के नाम के बिना उसे मुक्ति नहीं मिलती ॥ ११ ॥ सतिगुरु के सिवाय कोई सच्चा मित्र नहीं। इहलोक और परलोक दोनों जगह वह स्वामी रक्षा करता है। कृपा-पूर्वक प्रभु-नाम का भेद समझाता और इस प्रकार तत्त्व को मूल से मिला देता है (जीव और ब्रह्म दोनों में तत्त्व-अभेद है, दोनों में अंश-अंशी सम्बन्ध है, जैसे जल, जल में मिलकर एक होता है, वैसे ही जीव ब्रह्म में मिलकर एक हो जाता है।) ॥ १२ ॥ शिष्य भूल भी करता है, तो गुरु उसे समझा देता है; ग़लत दिशा में जाता है, तो गुरु उसका पथ-प्रदर्शन करता है। ऐसा गुरु दुःख-भंजन और परम हितैषी है, दिन-रात उसकी सेवा में मग्न रहो ॥ १३ ॥ साधारण जीव गुरु की भक्ति क्या करेगा, जो

स्वयं ब्रह्मा, विष्णु और शिव भी इसकी सार नहीं जान पाए। सतिगुरु (परमात्मा) अदृश्य है, उसे क्योंकर देखा जा सकता है! जिस पर स्वयं उसकी कृपा होती है, वही उसे पहचान पाता है ॥ १४ ॥ जिसके अन्तर्मन में (परमात्मा के लिए) प्रेम होता है, वही उसके प्रत्यक्ष दर्शन करता है। जिसे गुरुवाणी से प्यार होता है, वही उसके उल्लासमयी स्पर्शन की अनुभूति प्राप्त करता है। ऐसे गुरुमुख जीव का मन रात-दिन निर्मल ज्योति से प्रकाशित रहता है ॥ १५ ॥ ज्ञान रूपी भोजन अत्यन्त मधुर और सरस है, जो इस भोजन को चखते हैं, वे प्रभु को प्रत्यक्ष पा लेते हैं। वे प्रेमी जीव प्रभु-दर्शनों में मग्न होते और मन की आशा-तृष्णा को मार लेते हैं ॥ १६ ॥ सतिगुरु की सेवा में प्रवृत्त जीव ही प्रधान है; वे घट-घट (प्रत्येक जीव में) में ब्रह्म का स्वरूप निरखते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव गुरु के द्वारा प्रभु को जान लेते हैं, वे हरि का यशोगान करते और हरिजनों की संगति में मग्न रहते हैं ॥ १७ ॥ ५ ॥ ११ ॥

॥ मारू महला १ ॥ साचे साहिब सिरजणहारे। जिनि धर चक्र धरे वीचारे। आपे करता करि करि वेखै साचा वेपरवाहा हे ॥ १ ॥ वेकी वेकी जंत उपाए। दुइ पंदी दुइ राह चलाए ॥ गुर पूरे विणु मुकति न होई सचु नामु जपि लाहा हे ॥ २ ॥ पड़हि मनमुख परु बिधि नही जाना। नामु न बूझहि भरमि भुलाना। लैकै बढी देनि उगाही दुरमति का गलि फाहा हे ॥ ३ ॥ सिम्रिति सासत्र पड़हि पुराणा। वादु वखाणहि ततु न जाणा। विणु गुर पूरे ततु न पाईऐ सच सूचे सचु राहा हे ॥ ४ ॥ सभ सालाहे सुणि सुणि आखै। आपे दाना सचु पराखै। जिन कउ नदरि करे प्रभु अपनी गुरमुखि सबदु सलाहा हे ॥ ५ ॥ सुणि सुणि आखै केती बाणी। सुणि कहीऐ को अंतु न जाणी। जाकउ अलखु लखाए आपे अकथ कथा बुधि ताहा हे ॥ ६ ॥ जनमे कउ वाजहि वाधाए। सोहिलड़े अगिआनी गाए। जो जनमै तिसु सरपर मरणा किरतु पइआ सिरि साहा हे ॥ ७ ॥ संजोगु विजोगु मेरै प्रभि कीए। स्रिसटि उपाइ दुखा सुख दीए। दुख सुख ही ते भए निराले गुरमुखि सीलु सनाहा हे ॥ ८ ॥ नीके साचे के वापारी। सचु सउदा लै गुर वीचारी। सचा वखरु जिसु धनु पलै सबदि सचै ओमाहा हे ॥ ९ ॥ काची सउदी तोटा आवै। गुरमुखि वणजु

करे प्रभ भावै। पूंजी साबतु रासि सलामति चूका जम का फाहा हे ॥ १० ॥ सभु को बोलै आपण भाणै। मनमुखु दूजै बोलि न जाणै। अंधुले की मति अंधली बोली आइ गइआ दुखु ताहा हे ॥ ११ ॥ दुख महि जनमै दुख महि मरणा। दूखु न मिटै बिनु गुर की सरणा। दूखी उपजै दूखी बिनसै किआ लै आइआ किआ लै जाहा हे ॥ १२ ॥ सची करणी गुर की सिरकारा। आवणु जाणु नही जम धारा। डाल छोडि ततु मूलु पराता मनि साचा ओमाहा हे ॥ १३ ॥ हरि के लोग नही जमु मारै। ना दुखु देखहि पंथि करारै। राम नामु घट अंतरि पूजा अवरु न दूजा काहा हे ॥ १४ ॥ ओड़ु न कथनै सिफति सजाई। जिउ तुधु भावहि रहहि रजाई। दरगह पैधे जानि सुहेले हुकमि सचे पातिसाहा हे ॥ १५ ॥ किआ कहीऐ गुण कथहि घनेरे। अंतु न पावहि वडे वडेरे। नानक साचु मिलै पति राखहु तू सिरि साहा पातिसाहा हे ॥ १६ ॥ ६ ॥ १२ ॥

परमात्मा स्वयं सृजनहार है, जिसने धरती के गोलाकार को बड़ी योग्यता से उठा रखा है। वही सबका कर्ता है, वही सबको बनाता और सबकी सम्हाल करता है, फिर भी वह सत्यस्वरूप प्रभु बे-परवाह है ॥ १ ॥ उसने तरह-तरह के जीव-जन्तु पैदा किए हैं। दो प्रकार की शिक्षा वाले जीवों (गुरुमुखों और मनमुखों) को दो अलग रास्तों (अच्छे और बुरे) पर लगाया है। (फिर भी) पूर्णगुरु के बिना किसी की मुक्ति नहीं, सच्चे प्रभु का नाम जपने में ही लाभ है ॥ २ ॥ मनमुख जीव भी (वेद-शास्त्र) पढ़ते हैं, किन्तु युक्ति नहीं समझते। वे भ्रमों में भूले रहकर हरि-नाम के रहस्य को नहीं समझ पाते। रिश्वतें लेकर झूठी साक्षियाँ भरते हैं, दुर्मति का फन्दा उनके गले में पड़ा रहता है ॥ ३ ॥ (कुछ ऐसे भी हैं, जो) स्मृतियाँ, शास्त्र, पुराण आदि पढ़ते हैं; वे वाद-विवाद तो करते हैं, किन्तु यथार्थ तत्त्व को नहीं समझते। सच्चे गुरु के बिना तत्त्व की जानकारी नहीं मिलती, सच्चे निर्मल जीव सत्य को ही अपना राह मानते हैं ॥ ४ ॥ सब लोग गुरु-ज्ञान को सुनते और सराहते हैं, गुरु का नाम स्वयं ही सत्य को परखता है। जिन पर प्रभु की कृपा-दृष्टि होती है, वे गुरु के द्वारा परमात्मा के शब्द की सराहना करते हैं ॥ ५ ॥ अनेक जन इस नाद को सुन-सुनकर ही व्याख्यायित करते हैं, किन्तु सुनकर कहने मात्र से कोई इसका रहस्य नहीं पा सकता। जिसके प्रति वह अदृश्य स्वयं प्रकट करता है, वही उस अकथ्य कथा को कहने का सामर्थ्य प्राप्त

करता है ।। ६ ।। जन्म पर बाजे बजते और वधाइयाँ मिलती हैं, अज्ञान में लोग खुशी के गीत गाते हैं। (वे नहीं जानते कि) जो पैदा हुआ है, उसे मरना अवश्य है; उसके माथे कर्मानुसार मृत्यु निश्चित कर दी गयी है ।। ७ ।। मिलने-बिछुड़ने की स्थितियाँ परमात्मा ने स्वयं बनायी हैं; सृष्टि को पैदा करके सबके लिए दु:ख-सुख बनाए हैं। जो गुरु के अनुकूल आचरण का कवच धारण करते हैं, वे ही सुख-दु:ख से अप्रभावित रहते हैं ।। ८ ।। सत्य के व्यापारी ही भले हैं, वे गुरुमत रूपी सत्य के सौदे का व्यापार करते हैं। जिसके पास हरि-नाम रूपी राशि होती है, वे ही सत्य का सौदा प्राप्त करते हैं और उन्हें गुरु के उपदेशों से बराबर उत्साह बना रहता है ।। ९ ।। कच्चे सौदे में घाटा रहता है (अर्थात् मिथ्या का आचरण करनेवाले हानि उठाते हैं)। जो गुरु-मतानुसार संसार में व्यापार करता (आचरण करता) है, वही प्रभु को रुचता है। उसकी पूँजी सुरक्षित होती है, उसकी क्रीत सामग्री सही होती है और उसे यमदूतों का भय (घाटे या विनाश का डर) नहीं रह जाता ।। १० ।। सब कोई स्वेच्छा से बोलते हैं, मनमुख जीव द्वैत-भाव के कारण हरि-नाम बोलना नहीं जानते। अज्ञानांध होने के कारण उसकी बोली भी पथ-भ्रष्ट करती है। वह जन्म-मरण के चक्र में दु:ख सहता है ।। ११ ।। वे दु:ख में जन्मते और दु:ख में मरते हैं, सतिगुरु की शरण लिये बिना उनका दु:ख दूर नहीं हो सकता। वे दु:खी आते हैं, दु:खी ही चले जाते हैं; संसार में आकर भी वे क्या ले जाते हैं (क्या लाभ होता है उन्हें ?) ।। १२ ।। जो जीव गुरु की प्रजा हैं अर्थात् गुरु की शरण लेते हैं, उनके कर्म सत्यनिष्ठ होते हैं। उनका आवागमन चुक जाता है और उन पर यमराज की कोई व्यवस्था लागू नहीं होती। उन्होंने माया रूपी शाखाओं को छोड़कर परमात्मा रूपी मूल का आश्रय लिया है, उनके मन में पूर्ण उत्साह रहता है (सत्य-निष्ठ कर्म करने का) ।। १३ ।। हरिजनों पर यमदूतों का कोई अधिकार नहीं होता। वे कठोर मार्ग के दु:ख नहीं देखते (अर्थात् वे सुरक्षित होते हैं)। वे अन्तर्मुखी होकर मन में ही परमात्मा की आराधना करते हैं, उनके लिए अन्य किसी का कोई अस्तित्व नहीं होता ।। १४ ।। प्रभु का यशोगान करनेवालों की उपलब्धियों का अन्त नहीं; जैसे प्रभु को रुचता है, वे वैसे ही प्रभु-इच्छा में प्रसन्न रहते हैं। वे सच्चे पातिशाह (परमात्मा) के आदेश से दरगाह (यहाँ सचखण्ड) में सम्मानित होते और परम सुख पाते हैं ।। १५ ।। परमात्मा के अनेक गुणों का कथन करते हैं, उनका क्या कहा जाय ! बड़े-बड़े महापुरुष उनका रहस्य नहीं जान पाए। गुरु नानक विनती करते हैं कि हे सच्चे पातिशाह, (उन्हें भी) सत्य में अपनाकर उनके सम्मान की रक्षा करो और (अपनी शरण में) संरक्षण दो ।। १६ ।। ६ ।। १२ ।।

।। मारू महला १ दखणी ।। काइआ नगरु नगर गड़ अंदरि। साचा वासा पुरि गगनंदरि। असथिरु थानु सदा निरमाइलु आपे आपु उपाइदा ।। १ ।। अंदरि कोट छजे हट नाले। आपे लेवै वसतु समाले। बजर कपाट जड़े जड़ि जाणै गुर सबदी खोलाइदा ।। २ ।। भीतरि कोट गुफा घर जाई। नउ घर थापे हुकमि रजाई। दसवै पुरखु अलेखु अपारी आपे अलखु लखाइदा ।। ३ ।। पउण पाणी अगनी इक वासा। आपे कीतो खेलु तमासा। बलदी जलि निवरै किरपा ते आपे जलनिधि पाइदा ।। ४ ।। धरति उपाइ धरी धरमसाला। उतपति परलउ आपि निराला। पवणै खेलु कीआ सभ थाई कला खिचि ढाहाइदा ।। ५ ।। भार अठारह मालणि तेरी। चउरु ढुलै पवणै लै फेरी। चंदु सूरजु दुइ दीपक राखे ससि घरि सूरु समाइदा ।। ६ ।। पंखी पंच उडरि नही धावहि। सफलिओ बिरखु अंम्रित फलु पावहि। गुरमुखि सहजि रवै गुण गावै हरि रसु चोग चुगाइदा ।। ७ ।। झिलमिलि झिलकै चंदु न तारा। सूरज किरणि न बिजुलि गैणारा। अकथी कथउ चिहनु नही कोई पूरि रहिआ मनि भाइदा ।। ८ ।। पसरी किरणि जोति उजिआला। करि करि देखै आपि दइआला। अनहद रुणझुणकारु सदा धुनि निरभउ कै घरि वाइदा ।। ९ ।। अनहदु वाजै भ्रमु भउ भाजै। सगल बिआपि रहिआ प्रभु छाजै। सभ तेरी तू गुरमुखि जाता दरि सोहै गुण गाइदा ।। १० ।। आदि निरंजनु निरमलु सोई। अवरु न जाणा दूजा कोई। एकंकारु वसै मनि भावै हउमै गरबु गवाइदा ।। ११ ।। अंम्रितु पीआ सतिगुरि दीआ। अवरु न जाणा दूआ तीआ। एको एकु सु अपरपरंपरु परखि खजानै पाइदा ।।१२।। गिआनु धिआनु सचु गहिर गंभीरा। कोइ न जाणै तेरा चीरा। जेती है तेती तुधु जाचै करमि मिलै सो पाइदा ।। १३ ।। करमु धरमु सचु हाथि तुमारै। वेपरवाह अखुट भंडारै। तू दइआलु किरपालु सदा प्रभु आपे मेलि मिलाइदा ।।१४।। आपे देखि दिखावै आपे। आपे थापि उथापे आपे। आपे जोड़ि विछोड़े करता आपे मारि जीवाइदा ।। १५ ।। जेती है तेती तुधु अंदरि। देखहि आपि

बैसि बिजमंदरि । नानकु साचु कहै बेनंती हरि दरसनि सुखु पाइदा ॥ १६ ॥ १ ॥ १३ ॥

नगरों और गढ़ों के बीच मनुष्य-शरीर भी एक नगर है। गगनन्तर पुरी अर्थात् नगर के भीतरी प्रकोष्ठ (दशम द्वार) में सच्चा परमात्मा निवास करता है। यह स्थिर स्थान सदा निर्मल है और यहाँ प्रभु सदा अपने-आप को टिकाता है ॥ १ ॥ इस गढ़ में घरों की दीर्घाएँ और बाज़ार मौजूद हैं (अर्थात् शरीर में विभिन्न कमल और इन्द्रियाँ हैं), जहाँ आत्मा रूपी वस्तु की सम्हाल होती है। इस गढ़ पर कठोर द्वार जड़े हैं। वह प्रभु ही उन द्वारों को बन्द करता है और स्वयं ही गुरु-शब्दों द्वारा उनको खोलता है ॥ २ ॥ शरीर रूपी गढ़ में दशम द्वार रूपी गुफा है, जहाँ परमात्मा ने अपनी जगह बना रखी है। बाहर के नौ द्वार (आँख-कान आदि इन्द्रियाँ) भी परमात्मा ने हुक्मानुसार बनाए हैं। दशम द्वार में वह अलक्ष्य, अपार ब्रह्म (सत्पुरुष) विद्यमान है, वह अपने को स्वयं ही व्यक्त अथवा अव्यक्त करता है ॥ ३ ॥ पवन, पानी, अग्नि आदि तत्त्व समूचे ब्रह्माण्ड में मौजूद हैं और यह तमाशा रूपी बाह्याकार भी उसने स्वयं बनाया है। जलती हुई अग्नि जो पानी से बुझ जाती है, वह उसकी कृपा से सागर में जलती भी है (बड़वाग्नि) ॥ ४ ॥ धरती बनाकर इसे धर्म की कर्मभूमि बना दिया है। उत्पत्ति और प्रलय वह स्वयं करता है, किन्तु आप दोनों से निराला रहता है। सब जगह पवन (यहाँ श्वास) का खेल रचा है, मन आने पर स्वयं ही अपनी शक्ति को निरस्त कर सब कुछ क्षय कर देता है ॥ ५ ॥ अठारह भार वनस्पति ही तुम्हारी मालिन है, पवन का फेरी लेना ही मानो तुम पर चँवर झुलाना है; चन्द्र और सूर्य के मिस तुम्हारे घर के दीपक जलते हैं, चन्द्र-सूर्य के घर में समा जाता है अर्थात् चन्द्र-सूर्य से प्रकाश लेता है (ज्ञान की गरिमा से मन को शीतलता मिलती है) ॥ ६ ॥ गुरुमुख रूपी वृक्ष की ज्ञानेन्द्रियाँ रूपी पक्षी उड़कर कहीं नहीं जाते (अर्थात् गुरुमुख की ज्ञानेन्द्रियाँ स्थिर होती हैं); इससे वृक्ष सफल होता और अमृत-फल प्राप्त करता है। गुरु के द्वारा (ऐसा जीव) परमात्मा के गुण गाता, सहजावस्था में रमण करता और प्रभु-नाम-रस का आस्वादन करता है ॥ ७ ॥ परमात्मा की ज्योति देदीप्यमान है, भले ही वहाँ चाँद-सितारे न हों। वहाँ इतना प्रकाश होता है कि आसमान में सूर्य और बिजली भी पराजित हो जाते हैं। यह वह अकथ्य अवस्था है, जिसका कोई चिह्न-चक्र नहीं होता और जहाँ वह मन-भावन प्रभु नित्य अनुभूत होता है ॥ ८ ॥ ज्ञान की किरणों के प्रसार से आत्मा की ज्योति परमोज्ज्वल हो जाती है। वह दयालु प्रभु यह सब निर्मित करता और उसे संरक्षण देता है। अनाहत

ध्वनि का अनूठा स्वर उस निर्भय प्रभु के घर में गुंजरित होता है ॥ ९ ॥ जिस जीव में अनाहत शब्द सुनने का सामर्थ्य पैदा हो जाता है, उसके सब भ्रम-भय नष्ट हो जाते हैं। सब स्थानों पर व्याप्त रहनेवाला परमात्मा हम पर भी छाया है। सब कुछ तुम्हारा है, गुरु के द्वारा ही तुम्हारी पहचान होती है; तुम्हारा गुण गानेवाला ही तुम्हारे द्वार पर समादर प्राप्त करता है ॥ १० ॥ परमात्मा आदि, मायातीत और निर्मल है; उसके अतिरिक्त किसी दूसरे को मैं नहीं जानता, एक ब्रह्म ही मन में बसता और भीतर से अहंकार को गँवाता है ॥ ११ ॥ जीव सच्चे गुरु का दिया अमृत पान करता है, तब वह दूसरा-तीसरा (अर्थात् अन्य किसी भी शक्ति को) स्वीकार नहीं करता। वह एक ही अनन्त और परे से परे है, उसी को परखकर जीव को (अपने कोष में जोड़ना) ग्रहण करना है ॥ १२ ॥ विवेक-ज्ञानपूर्वक सत्यस्वरूप अथाह प्रभु में ध्यान करने पर भी कोई उसके समूचे विस्तार को नहीं समझ पाता। जो भी है, वह तुमसे याचित है; तुम्हारी कृपा से जो मिले, वही जीव की उपलब्धि होती है ॥ १३ ॥ धर्म-कर्म निश्चय ही तुम्हारे हाथ हैं; तुम बे-परवाह हो, तुम्हारे भण्डारों में कभी कोई कमी नहीं आती ! हे प्रभु, तुम स्वयं दयालु-कृपालु हो और अपने-आप जीवों को अपने में विलीन कर लेते हो ॥ १४ ॥ जिसे तुम (हे परमात्मा,) अपना दर्शन देते हो, वही देखता है, तुम्हीं बनाते और मिटाते हो। तुम्हीं संयोग और विरह का कारण हो, स्वयं ही सबको मारते-जिलाते हो ॥ १५ ॥ जितना भी जो कुछ है, वह तुम्हारे भीतर है। तुम स्वयं अपने मन्दिर (शरीर) में बैठे समस्त लीला देखते हो। गुरु नानक विनती करते हैं कि हे परमात्मा, तुम्हारे दर्शन से ही सुख प्राप्त होता है ॥ १६ ॥ १ ॥ १३ ॥

॥ मारू महला १ ॥ दरसनु पावा जे तुधु भावा। भाइ भगति साचे गुण गावा। तुधु भाणे तू भावहि करते आपे रसन रसाइदा ॥ १ ॥ सोहनि भगत प्रभू दरबारे। मुकतु भए हरि दास तुमारे। आपु गवाइ तेरै रंगि राते अनदिनु नामु धिआइदा ॥ २ ॥ ईसरु ब्रहमा देवी देवा। इंद्र तपे मुनि तेरी सेवा। जती सती केते बनवासी अंतु न कोई पाइदा ॥ ३ ॥ विणु जाणाए कोइ न जाणै। जो किछु करे सु आपण भाणै। लख चउरासीह जीअ उपाए। भाणै साह लवाइदा ॥ ४ ॥ जो तिसु भावै सो निहचउ होवै। मनमुखु आपु गणाए रोवै। नावहु भुला ठउर न पाए आइ जाइ दुखु पाइदा ॥५॥ निरमल काइआ ऊजल हंसा। तिसु विचि नामु निरंजन अंसा। सगले

दूख अंम्रितु करि पीवै बाहुड़ि दूखु न पाइदा ॥ ६ ॥ बहु सादहु दूखु परापति होवै । भोगहु रोग सु अंति विगोवै । हरखहु सोगु न मिटई कबहू विणु भाणे भरमाइदा ॥ ७ ॥ गिआन विहूणी भवै सबाई । साचा रवि रहिआ लिव लाई । निरभउ सबदु गुरू सचु जाता जोती जोति मिलाइदा ॥ ८ ॥ अटलु अडोलु अतोलु मुरारे । खिन महि ढाहे फेरि उसारे । रूपु न रेखिआ मिति नही कीमति सबदि भेदि पतीआइदा ॥ ९ ॥ हम दासन के दास पिआरे । साधिक साच भले वीचारे । मंने नाउ सोई जिणि जासी आपे साचु द्रिड़ाइदा ॥ १० ॥ पलै साचु सचे सचिआरा । साचे भावै सबदु पिआरा । त्रिभवणि साचु कला धरि थापी साचे ही पतीआइदा ॥ ११ ॥ वडा वडा आखै सभु कोई । गुर बिनु सोझी किनै न होई । साचि मिलै सो साचे भाए ना वीछुड़ि दुखु पाइदा ॥ १२ ॥ धुरहु विछुंने धाही रुंने । मरि मरि जनमहि मुहलति पुंने । जिसु बखसे तिसु दे वडिआई मेलि न पछोताइदा ॥ १३ ॥ आपे करता आपे भुगता । आपे त्रिपता आपे मुकता । आपे मुकति दानु मुकतीसरु ममता मोहु चुकाइदा ॥ १४ ॥ दाना कै सिरि दानु वीचारा । करणकारण समरथु अपारा । करि करि वेखै कीता अपणा करणी कार कराइदा ॥ १५ ॥ से गुण गावहि साचे भावहि । तुझ ते उपजहि तुझ माहि समावहि । नानकु साचु कहै बेनंती मिलि साचे सुखु पाइदा ॥ १६ ॥ २ ॥ १४ ॥

यदि तुम्हें स्वीकार हो, तभी दर्शन प्राप्त होते हैं । भक्ति-भाव से हम तुम्हारे गुण गाते हैं । तुम्हारी इच्छा होने पर ही, हे कर्ता-पुरुष, तुम हमें प्रिय लगते हो और तुम्हीं हमारी रसना में अपने गुणों का रस पैदा करते हो ॥ १ ॥ भक्तजन हरि के दरबार में सुशोभित होते हैं । हे प्रभु, तुम्हारी शरण में आनेवाले (दासता स्वीकार करनेवाले) ही मुक्ति-लाभ करते हैं । वे अपने अहम्-भाव का त्याग करके तुम्हारे ही रंग में लीन होते और रात-दिन तुम्हारा नाम जपते हैं ॥ २ ॥ शिव, ब्रह्मा तथा अन्य देवी-देवता, इन्द्र, तपस्वी तथा मुनिजन, सब तुम्हारी ही सेवा में लीन हैं । अन्य यती-सती और वनवासी भी (तुम्हारी सेवा में संलग्न हैं) किन्तु तुम्हारा भेद किसी ने नहीं पाया ॥ ३ ॥ तुम्हारे द्वारा जानकारी दिए बग़ैर कोई तुम्हें नहीं जान पाता, जो भी तुम करते हो, वह स्वेच्छा

से करते हो। चौरासी लाख योनियाँ तुमने अपने इच्छा से बनायी हैं, और जिसे चाहते हो, उसे श्वास लेने की अनुमति देते हो ॥ ४ ॥ जो तुम्हें रुचता है, वह निश्चय ही होता है। मनमुख जीव अपनी सत्ता का अभिमान करते हैं, इसलिए दुःखों में रोते हैं। किन्तु जो जीव तुम्हारे नाम को विस्मृत किए हैं, उन्हें कोई सहारा नहीं मिलता; वे आवागमन में सदा दुःखी होते रहते हैं ॥ ५ ॥ गुरुमुख जीवों की काया निर्मल होती है और आत्मा भी उज्ज्वल होती है। उनमें हरि-नाम, जो कि परमात्मा का ही स्वरूप है, विद्यमान है। वे सब दुःखों को अमृत-समान स्वीकार कर लेते हैं, इसलिए पुनः दुःख नहीं पाते ॥ ६ ॥ अधिक स्वाद-ग्रस्त होने से अधिक दुःख मिलता है; भोग-विलास रोग पैदा करते हैं, इसलिए (स्वादों में पड़ा जीव) अन्ततः ख्वार होता है। मिथ्या प्रसन्नता से शोक उपजता है, जो कभी नहीं मिटता; जीव तुम्हारी इच्छा को सहर्ष स्वीकार न कर सकने के कारण ही भ्रमों में भटकता है ॥ ७ ॥ सारी दुनिया ज्ञान के बिना भटकती फिरती है। सत्यस्वरूप परमात्मा भीतर ही रहस्यात्मकता में मग्न रहता है। गुरु के शब्द द्वारा निर्भय होकर जीव सत्य के यथार्थ स्वरूप को पहचानता और आत्मिक ज्योति को परमात्मा की परमज्योति में विलीन कर देता है ॥ ८ ॥ परमात्मा स्थिर, अनुपम और अतुलनीय है, वह क्षण भर में ही सब नाश करके पुनः निर्माण कर सकता है। उसकी कोई रूप-रेखा या परिमाण नहीं, वह अमूल्य है और गुरु-शब्द द्वारा उसका रहस्य पाकर ही जीव उसमें आस्था बनाता है ॥ ९ ॥ हे प्यारे परमात्मा, हम सच्चे विचारवान् साधकों के दासों के भी दास हैं। जो हरि-नाम में विश्वास लाता है, वही विजयी होता है; उसको भी सत्य का सही ज्ञान वह अपने-आप करवाता है ॥ १० ॥ हे सत्यस्वरूप परमात्मा, जिसके दामन में सत्य संकलित है, वही 'सचियार' कहलाता है; तुम्हें भी वे ही जीव रुचते हैं, जिन्हें शब्द से प्यार होता है। परमात्मा ने तीनों भुवनों में सत्य को शक्ति-रूप में स्थिर किया है; मनुष्य पर सत्य-ग्राही होने पर ही उसकी कृपा होती है ॥ ११ ॥ सब कोई (परमात्मा को) बड़ा (महान्) कहता है, किन्तु गुरु के बिना उसके तथ्यों का ज्ञान किसी को नहीं होता। जो मनुष्य सत्य में लीन होता है, वही सत्यस्वरूप परमात्मा को रुचता है, अन्यथा वह विरह-दुःख में तड़पता रह जाता है ॥ १२ ॥ जो जीव गुरू से बिछुड़े होते हैं, वे छाती पीटकर रोते हैं और अवधि-विशेष के पूर्ण होने पर बार-बार जन्मते-मरते हैं। जिस पर तुम कृपा करते हो, उसे प्रतिष्ठा प्रदान करके अपने संग मिला लेते हो— वह कभी नहीं पछताता ॥ १३ ॥ वह प्रभु स्वयं कर्ता है और भोक्ता भी वही है। वह सबमें तृप्त है और निर्लिप्त भी वही है। वही मुक्ति देनेवाला मुक्तीश्वर है और वही जीवों में से मोह-ममता दूर करता

है ।। १४ ।। तुम्हारा दान (मुक्ति-दान) सर्व अनुष्ठानों से श्रेष्ठ है; तुम्हीं सब कुछ करने योग्य तथा अपार सामर्थ्यवान् हो। तुम्हीं अपनी कृति को बनाकर उसे देखते और कर्मानुसार फल-वितरण करते हो ।। १५ ।। सत्यस्वरूप परमात्मा को जो भाते हैं, वे ही उसके गुण गाते हैं। वे तुमसे ही उपजते और तुम्हीं में विलीन हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सत्य यह है कि सच्चे प्रभु को मिलकर ही परम सुखोपलब्धि होती है ।। १६ ।। २ ।। १४ ।।

।। मारू महला १ ।। अरबद नरबद धुंधूकारा। धरणि न गगना हुकमु अपारा। ना दिनु रैनि न चंदु न सूरजु सुंन समाधि लगाइदा ।। १ ।। खाणी न बाणी पउण न पाणी। ओपति खपति न आवण जाणी। खंड पताल सपत नही सागर नदी न नीरु वहाइदा ।। २ ।। ना तदि सुरगु मछु पइआला। दोजकु भिसतु नही खै काला। नरकु सुरगु नही जंमणु मरणा ना को आइ न जाइदा ।। ३ ।। ब्रहमा बिसनु महेसु न कोई। अवरु न दीसै एको सोई। नारि पुरखु नही जाति न जनमा ना को दुखु सुखु पाइदा ।। ४ ।। ना तदि जती सती बनवासी। ना तदि सिध साधिक सुखवासी। जोगी जंगम भेखु न कोई नाको नाथु कहाइदा ।। ५ ।। जप तप संजम ना ब्रत पूजा। ना को आखि वखाणै दूजा। आपे आपि उपाइ विगसै आपे कीमति पाइदा ।। ६ ।। ना सुचि संजमु तुलसी माला। गोपी कानु न गऊ गुोआला। तंतु मंतु पाखंडु न कोई ना को वंसु वजाइदा ।। ७ ।। करम धरम नही माइआ माखी। जाति जनमु नही दीसै आखी। ममता जालु कालु नही माथै ना को किसै धिआइदा ।। ८ ।। निंदु बिंदु नही जीउ न जिंदो। ना तदि गोरखु ना माछिंदो। ना तदि गिआनु धिआनु कुल ओपति ना को गणत गणाइदा ।। ९ ।। वरन भेख नही ब्रहमण खत्री। देउ न देहुरा गऊ गाइत्री। होम जग नही तीरथि नावणु ना को पूजा लाइदा ।। १० ।। ना को मुला ना को काजी। ना को सेखु मसाइकु हाजी। रईअति राउ न हउमै दुनीआ ना को कहणु कहाइदा ।। ११ ।। भाउ न भगती ना सिव सकती। साजनु मीतु बिंदु नही रकती। आपे साहु आपे वणजारा साचे एहो भाइदा ।। १२ ।। बेद कतेब न सिंम्रिति सासत। पाठ पुराण

उदै नही आसत । कहता बकता आपि अगोचरु आपे अलखु लखाइदा ॥ १३ ॥ जा तिसु भाणा ता जगतु उपाइआ । बाझु कला आडाणु रहाइआ । ब्रहमा बिसनु महेसु उपाए माइआ मोहु वधाइदा ॥ १४ ॥ विरले कउ गुरि सबदु सुणाइआ । करि करि देखै हुकमु सबाइआ । खंड ब्रहमंड पाताल अरंभे गुपतहु परगटीआइदा ॥ १५ ॥ ता का अंतु न जाणै कोई । पूरे गुर ते सोझी होई । नानक साचि रते बिसमादी बिसम भए गुण गाइदा ॥ १६ ॥ ३ ॥ १५ ॥

(इस पद में गुरुजी ने सृष्टि-रचना से पूर्व की स्थिति का वर्णन किया है। तब कोई नहीं था, केवल ब्रह्म ही निर्गुण रूप में समाधिस्थ था।) अरबों-शंखों वर्ष पूर्व सृष्टि-जैसा कुछ नहीं था, केवल अन्धकार था। उस समय न धरती थी, न आकाश था, केवल अनन्त प्रभु का हुक्म (आदेश) ही व्याप्त था। न दिन था, न रात थी, चाँद-सूर्य भी नहीं थे; केवल ब्रह्म ही निर्गुण रूप में शून्य में समाधिस्थ था ॥ १ ॥ तब न तो जीवों की कोटि विद्यमान थी, न उनकी वाणी थी, पवन-पानी भी नहीं थे। न उपज होती थी, न मौत आती थी; आवागमन को कोई नहीं पहचानता था। चौदह खण्ड, सात पाताल, सागर, नदियाँ या जल-प्रवाह, कुछ भी न था ॥ २ ॥ तब न स्वर्ग था, न इहलोक या पाताल थे। नरक-स्वर्ग नहीं थे और न ही क्षयकारी काल था। नरक-स्वर्ग में दण्ड-पुरस्कार पाने की स्थिति या जन्म-मरण, आना-जाना कुछ भी न था ॥ ३ ॥ कोई ब्रह्मा, विष्णु, महेश न थे। उस परब्रह्म के अतिरिक्त और कोई न सूझता था। नारी-पुरुष कोई न था, जाति-जन्म का कोई भेद-भाव न था, न किसी को दुःख-सुख ही अनुभव होता था ॥ ४ ॥ तब कोई यती, सती, वनवासी न था; तब न कोई कठोर साधक थे और न ही सुखवासी विलासी थे। योगी, शैव (जंगम) आदि का भेस बनानेवाले भी तब कोई न थे, न कोई नाथ योगी कहलवाता था ॥ ५ ॥ जप, तप, संयम, व्रत, पूजा आदि के उपचारों का भी कोई स्थान न था; द्वैत-भाव की चर्चा करनेवाला भी कोई न था। तब वही अकेला आप ही था, वह अपने-आप में प्रसन्न था और स्वयं ही अपना सही मूल्यांकन करने में समर्थ था ॥ ६ ॥ निर्मलता-पावनता, संयम या तुलसी की माला के आडम्बर की भी कोई अपेक्षा न थी; गो-गोपी-गोपाल और स्वयं कृष्ण कन्हैया भी अनस्तित्व में थे। तन्त्र-मन्त्र, पाखण्ड आदि का कोई स्थान न था, वंशी का वादक (कृष्ण) भी न था ॥ ७ ॥ कर्म-काण्ड न था, माया की मक्खी (माया को भिनभिनानेवाली सर्वव्यापक

दिखाने के लिए तिरस्कारपूर्वक उसे मक्खी कहा है) न थी, जाति-जन्मादि भी कहीं दीख नहीं पड़ते थे। न ममता का जाल था, न सिर पर काल का दण्ड था और न ही कोई किसी की आराधना करता था ॥ ८ ॥ न कोई किसी की निन्दा करता था, न किसी का तिरस्कार था, और न ही जीव-प्राण थे। तब गोरख और मछन्दरनाथ-सरीखे योगी न थे। तब ज्ञान, ध्यान, वंशोत्पत्ति अथवा कर्मों का आलेख कुछ भी न था ॥ ९ ॥ जाति-वर्ण का भेद न था, कोई ब्राह्मण-क्षत्रिय न थे। देवता न था, देवल न था, गाय या गायत्री (मन्त्र) न थे। कोई होम, यज्ञ, तीर्थ-स्नान अथवा पूजा की व्यवस्था भी न थी ॥ १० ॥ कोई मुल्ला-क़ाज़ी न था; शेख़, हाजी न थे; न कोई राजा था, न कोई प्रजा; दुनिया में रहनेवाले न थे, न उनका अभिमान था ॥ ११ ॥ भाव-भक्ति का कोई आधार न था, जड-चेतन भी कुछ न था। साजन-मित्र न थे, माता के शुक्राणु तथा पिता के वीर्याणु (संरचना प्रक्रिया के आधार) न थे। तब वह निर्गुण ब्रह्म स्वयं ही व्यापारी, व्यापार और ख़रीदार था— वही हो रहा था, जो उस परमसत्य को भाता था ॥ १२ ॥ वेद, क़ुर्आन, स्मृतियाँ, शास्त्र कुछ न थे, पुराणों का पाठ अथवा उदय-अस्त कुछ न था। कहता-वक्ता वह अगम-अगोचर ब्रह्म ही था, दृश्य-अदृश्य वह स्वयं था ॥ १३ ॥ जब उसे इच्छा हुई, तो उसने (ब्रह्म ने) संसार को उपजाया। समूची संरचना को बिना आधार व्यवस्थित किया। ब्रह्मा, विष्णु, महेश (अर्थात् पैदा करने, पोषण करने एवं संहार करने की शक्तियाँ) पैदा किए और चतुर्दिक् माया-मोह का प्रसार किया ॥ १४ ॥ किसी विरले जीव को ही गुरु का शब्द प्राप्त हुआ है। उस प्रभु का हुक्म सब जगह व्याप्त है, वही सबको रच-रचकर सम्हाल कर रहा है। खण्डों, ब्रह्माण्डों और पातालों की रचना शुरू की और धीरे-धीरे सब गुप्त तत्त्वों को प्रकट किया ॥ १५ ॥ उस सृष्टि का रहस्य कोई नहीं जानता, (वही जान सकता है, जिसे) सच्चे गुरु से ज्ञान की प्राप्ति हुई हो। गुरु नानक कहते हैं कि जो इस आश्चर्यजनक रचना के सत्य में आबद्ध हुए, वे आनन्द-मग्न होकर प्रभु के गुण गाने लगे ॥ १६ ॥ ३ ॥ १५ ॥

॥ मारू महला १ ॥ आपे आपु उपाइ निराला। साचा थानु कीओ दइआला। पउण पाणी अगनी का बंधनु काइआ कोटु रचाइदा ॥ १ ॥ नउ घर थापे थापणहारै। दसवै वासा अलख अपारै। साइर सपत भरे जलि निरमलि गुरमुखि मैलु न लाइदा ॥ २ ॥ रवि ससि दीपक जोति सबाई। आपे करि वेखै वडिआई। जोति सरूप सदा सुखदाता सचे सोभा

पाइदा ॥ ३ ॥ गड़ महि हाट पटण वापारा । पूरै तोलि तोलै वणजारा । आपे रतनु विसाहे लेवै आपे कीमति पाइदा ॥ ४ ॥ कीमति पाई पावणहारै । वे परवाह पूरे भंडारै । सरब कला ले आपे रहिआ गुरमुखि किसै बुझाइदा ॥ ५ ॥ नदरि करे पूरा गुरु भेटै । जम जंदारु न मारै फेटै । जिउ जल अंतरि कमलु बिगासी आपे बिगसि धिआइदा ॥ ६ ॥ आपे वरखै अंम्रित धारा । रतन जवेहर लाल अपारा । सतिगुरु मिलै त पूरा पाईऐ प्रेम पदारथु पाइदा ॥ ७ ॥ प्रेम पदारथु लहै अमोलो । कबही न घाटसि पूरा तोलो । सचे का वापारी होवै सचो सउदा पाइदा ॥ ८ ॥ सचा सउदा विरला को पाए । पूरा सतिगुरु मिलै मिलाए । गुरमुखि होइ सु हुकमु पछाणै मानै हुकमु समाइदा ॥ ९ ॥ हुकमे आइआ हुकमि समाइआ । हुकमे दीसै जगतु उपाइआ । हुकमे सुरगु मछु पइआला हुकमे कला रहाइदा ॥ १० ॥ हुकमे धरती धउल सिरि भारं । हुकमे पउण पाणी गैणारं । हुकमे सिव सकती घरि वासा हुकमे खेल खेलाइदा ॥ ११ ॥ हुकमे आडाणे आगासी । हुकमे जल थल त्रिभवण वासी । हुकमे सास गिरास सदा फुनि हुकमे देखि दिखाइदा ॥ १२ ॥ हुकमि उपाए दस अउतारा । देव दानव अगणत अपारा । मानै हुकमु सु दरगह पैझै साचि मिलाइ समाइदा ॥ १३ ॥ हुकमे जुग छतीह गुदारे । हुकमे सिध साधिक वीचारे । आपि नाथु नथीं सभ जा की बखसे मुकति कराइदा ॥ १४ ॥ काइआ कोटु गड़ै महि राजा । नेब खवास भला दरवाजा । मिथिआ लोभु नाही घरि वासा लबि पापि पछुताइदा ॥ १५ ॥ सतु संतोखु नगर महि कारी । जतु सतु संजमु सरणि मुरारी । नानक सहजि मिलै जगजीवनु गुरसबदी पति पाइदा ॥ १६ ॥ ४ ॥ १६ ॥

अपने-आप परमात्मा सब कुछ उत्पन्न करके स्वयं अलग हो गया है और उस दयालु प्रभु ने अपना स्थान सचखण्ड में बना लिया है। पवन, पानी, अग्नि आदि तत्त्वों को बाँधकर शरीर रूपी गढ़ की रचना की है ॥ १ ॥ उस रचयिता ने शरीर में नौ द्वारों की स्थापना की और स्वयं उस अलख-अपार प्रभु ने दशम द्वार में अपने लिए स्थान बनाया। गुरुमुख के सातों सरोवर (पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ तथा मन और बुद्धि) नामामृत-

जल से भर दिए हैं और अब वह कभी मलिन नहीं होता ॥ २ ॥ रवि और चन्द्र दीपक हैं, किन्तु इनमें प्रभु की ही ज्योति विद्यमान है। सब में रचयिता का ही बड़प्पन है। वह सुखदाता परमात्मा ज्योति-स्वरूप है, सत्य के माध्यम से ही कोई उसके निकट शोभा पा सकता है ॥ ३ ॥ इस शरीर रूपी गढ़ में नगर, बाज़ार और वहाँ का व्यापार, सब कुछ मौजूद है। वणजारा स्वयं (परमात्मा) पूरा तोलकर व्यापार करता है। रत्नों का (सत्य को पहचाननेवाले) ख़रीदार भी वह स्वयं है और ख़ुद ही उनकी क़ीमत निश्चित करनेवाला अनुभवी व्यापारी भी वही है ॥ ४ ॥ जब कोई क़ीमत पानेवाला उस बे-परवाह के अक्षय भण्डारों की क़ीमत समझ लेता है, तब वह जानता है कि अपनी समस्त शक्तियों-सहित वही सब जगह व्याप्त है और कोई गुरुमुख जीव ही उसे पहचानता है ॥ ५ ॥ वह कृपा करे तो पूरे गुरु से भेंट होती है और अत्याचारी यमदूतों की चोटों से बचाव हो जाता है। जिस प्रकार जल में कमल खिलता है, वैसे ही (परमात्मा भी) स्वयं जिज्ञासु रूप होकर अपनी आराधना करता है। (कमल जल से उपजता है, जिज्ञासु परमात्मा से बनता है, उसी का रूप होता है— तत्त्व अभेद है।) ॥ ६ ॥ वह प्रभु स्वयं अमृत की धारा बनकर बरसता है; अपार रत्न, जवाहिर, माणिक्य उसी के स्वरूप में हैं। किन्तु उसकी प्राप्ति तभी होती है, जब सतिगुरु से भेंट हो और उसे हृदय का समूचा प्रेम-रस अर्पित कर दिया जाय ॥ ७ ॥ जो अमूल्य प्रेम पदार्थ को ग्रहण करता है, वह कभी क्षय नहीं होता, सदैव पूरा (तोलता) उतरता है। वह सत्य का व्यापारी होता है और सत्य का पदार्थ ही भरता है ॥ ८ ॥ सत्य का सौदा भरनेवाला कोई विरला ही होता है; (उसके लिए यह तभी सम्भव होता है जब) वह किसी पूरे सतिगुरु से भेंट करता है। गुरुमत पर आचरण करनेवाला ही प्रभु के हुक्म को पहचानता है, मानता है और उसी में विलीन हो जाता है ॥ ९ ॥ मनुष्य हुक्म में जन्मता है और हुक्म में ही क्षय हो जाता है। समूचा दृश्य संसार भी हुक्म में उपजा है। स्वर्ग, इहलोक, पाताललोक, सब हुक्म में बँधे हैं, शक्ति-धर हुक्म से ही शक्ति धारण करता है ॥ १० ॥ बैल के सिर पर धरती का बोझ हुक्म (ईश्वरेच्छा) से है, पवन, पानी, आकाश, सब हुक्म में बँधे चल रहे हैं। ईश्वरेच्छा से ही शिव (जीवात्मा) शक्ति (माया) के घर में निवास करता है और यह समूचा खेल हुक्म से ही रचा गया है ॥ ११ ॥ हुक्म से ही सब आकाशों का विकास हुआ है, जल-थल तथा तीनों लोक हुक्म से अस्तित्व में हैं। मनुष्य ईश्वरेच्छा से ही श्वास-ग्रास लेता (प्राण चलता है) और हुक्म से ही वह देखता-दिखाता है अर्थात् उसकी दृष्टि भी ईश्वरेच्छा से ही काम करती है ॥ १२ ॥ (आज तक सर्व-स्वीकृत) दसों अवतार ईश्वरेच्छा का ही परिणाम हैं;

असंख्य अपार देव-दानव हुक्म की ही उत्पत्ति हैं। जो हुक्म पहचानता है (ईश्वरेच्छा शिरोधार्य करता है), वह परमात्मा की दरगाह में प्रतिष्ठित होता है और सत्य में ही विलीन हो जाता है॥ १३॥ परमात्मा ने स्वयं हुक्म में ही छत्तीस युग सुन्न-समाधि में बिताए; सब सिद्ध-साधक उसी के हुक्म में बँधे हैं। परमात्मा स्वयं सबका स्वामी है. समूची सृष्टि उसकी इच्छा में बँधी है, जिस पर उसकी कृपा होती है, वह मुक्ति-लाभ करता है॥ १४॥ शरीर रूपी दुर्ग में मन राजा है। कर्मेन्द्रियाँ नायब हैं, ज्ञानेन्द्रियाँ खास़ सेवक (ख़वास) हैं और मुख उसका द्वार है। किन्तु मिथ्या लोभ तथा लोभ से उपजनेवाले पाप के कारण वह पछताता एवं अपने वास्तविक घर (परमात्मा की शरण) में वास नहीं कर पाता॥ १५॥ शरीर-नगर में सत्य-सन्तोष रूपी उसके कारिंदे हैं। वे यतीत्व, सतीत्व एवं संयम द्वारा (मन को) परमात्मा की शरण में लाते हैं। गुरु नानक कहते हैं, तब गुरु-कृपा से वह जगजीवन प्रभु सहज ही मिलता और जीव को शरण में ग्रहण करता है॥ १६॥ ४॥ १६॥

॥ मारू महला १॥ सुंन कला अपरंपरि धारी। आपि निरालमु अपर अपारी। आपे कुदरति करि करि देखै सुंनहु सुंनु उपाइदा॥ १॥ पउणु पाणी सुंनै ते साजे। स्रिसटि उपाइ काइआ गड़ राजे। अगनि पाणी जीउ जोति तुमारी सुंने कला रहाइदा॥ २॥ सुंनहु ब्रहमा बिसनु महेसु उपाए। सुंने वरते जुग सबाए। इसु पद वीचारे सो जनु पूरा तिसु मिलीऐ भरमु चुकाइदा॥ ३॥ सुंनहु सपत सरोवर थापे। जिनि साजे वीचारे आपे। तितु सतसरि मनूआ गुरमुखि नावै फिरि बाहुड़ि जोनि न पाइदा॥ ४॥ सुनहु चंदु सूरजु गैणारे। तिस की जोति त्रिभवण सारे। सुंने अलख अपार निरालमु सुंने ताड़ी लाइदा॥ ५॥ सुंनहु धरति अकासु उपाए। बिनु थंमा राखे सचु कल पाए। त्रिभवण साजि मेखुली माइआ आपि उपाइ खपाइदा॥ ६॥ सुंनहु खाणी सुंनहु बाणी। सुंनहु उपजी सुंनि समाणी। उतभुजु चलतु कीआ सिरि करतै बिसमादु सबदि देखाइदा॥ ७॥ सुंनहु राति दिनसु दुइ कीए। ओपति खपति सुखा दुख दीए। सुख दुख ही ते अमरु अतीता गुरमुखि निजघरु पाइदा॥ ८॥ साम वेदु रुगु जुजरु अथरबणु। ब्रहमे मुखि माइआ है त्रैगुण। ता की कीमति कहि न सकै को तिउ बोले जिउ बोलाइदा॥ ९॥ सुंनहु सपत पाताल उपाए। सुंनहु

भवण रखे लिव लाए। आपे कारणु कीआ अपरंपरि सभु तेरो कीआ कमाइदा ॥ १० ॥ रज तम सत कल तेरी छाइआ। जनम मरण हउमै दुखु पाइआ। जिसनो क्रिपा करे हरि गुरमुखि गुणि चउथै मुकति कराइदा ॥११॥ सुंनहु उपजे दस अवतारा। स्रिसटि उपाइ कीआ पासारा। देव दानव गण गंधरब साजे सभि लिखिआ करम कमाइदा ॥ १२ ॥ गुरमुखि समझै रोगु न होई। इह गुर की पउड़ी जाणै जनु कोई। जुगह जुगंतरि मुकति पराइण सो मुकति भइआ पति पाइदा ॥ १३ ॥ पंच ततु सुंनहु परगासा। देह संजोगी करम अभिआसा। बुरा भला दुइ मसतकि लीखे पापु पुंनु बीजाइदा ॥ १४ ॥ ऊतम सतिगुर पुरख निराले। सबदि रते हरि रसि मतवाले। रिधि बुधि सिधि गिआनु गुरू ते पाईऐ पूरै भागि मिलाइदा ॥ १५ ॥ इसु मन माइआ कउ नेहु घनेरा। कोई बूझहु गिआनी करहु निबेरा। आसा मनसा हउमै सहसा नरु लोभी कूड़ु कमाइदा ॥ १६ ॥ सतिगुर ते पाए वीचारा। सुंन समाधि सचे घर बारा। नानक निरमल नादु सबद धुनि सचु रामै नामि समाइदा ॥ १७ ॥ ५ ॥ १७ ॥

परमात्मा ने परे से परे सुन्न समाधि धारण की थी (निर्गुण रूप में) और वह अपार ब्रह्म सबसे निर्लिप्त था। उस शून्य दशा से ही उसने जड प्रकृति को पैदा किया और इसकी लीला का आनन्द लेने लगा ॥ १ ॥ पवन-पानी आदि तत्त्व उसने शून्य में से (अफुर स्थिति— कुछ भी नहीं से) ही रचे, सृष्टि पैदा की और शरीर रूपी गढ़ में मन को राजा बनाकर बिठाया। अग्नि, पानी, जीव, सबमें तुम्हारी ज्योति विद्यमान है। तुमने रचना की समूची शक्ति शून्य में ही सँजो रखी थी ॥ २ ॥ शून्य से ही तुमने ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि पैदा किए, चारों युग पहले शून्य में ही विचरते थे। इस तथ्य को जो मनुष्य जान लेता है, वही पूर्ण ज्ञानवान् होता है, उसे भेंट करने मात्र से ही सब भ्रम दूर हो जाते हैं ॥ ३ ॥ परमात्मा ने शून्य से ही सातों सरोवर (पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, मन तथा बुद्धि) स्थापित किए। जिसने उनकी स्थापना की, वही उन पर विचार भी करता है (उनका संरक्षण करता है)। यदि मन उस सच्चे सरोवर (सन्तों की संगति) में स्नान कर ले, तो दुबारा योनि-बन्धन में नहीं पड़ता ॥ ४ ॥ प्रभु ने चाँद, सूर्य, आकाश, शून्य से पैदा किए हैं, त्रिभुवन में उसी की ज्योति प्रदीप्त है। वह स्वयं अदृश्य, अपार, निर्लिप्त

रूप में शून्य में समाधि लगाए बैठा है ॥ ५ ॥ उसने शून्य से ही धरती-आकाश उपजाए, सत्य की शक्ति द्वारा स्तम्भों के सहारे के बिना ही (आकाश को) रोके रखा। त्रिभुवन को पैदा करने में उसने माया की रस्सी बनाई (जिसने तीनों लोकों को बाँध रखा है) और सब कुछ स्वयं ही बनाता-खपाता रहता है ॥ ६ ॥ जीवों की सब कोटियाँ, उनकी वाणियाँ, सब शून्य से आयीं, सब शून्य से पैदा हुईं और शून्य में ही समा गयीं। सर्वप्रथम उद्‌भुज कोटि के जीव बने; उसने अपने शब्द (हुक्म) द्वारा यह आश्चर्य पूर्ण खेल दिया ॥ ७ ॥ दोनों रात-दिन शून्य से ही पैदा किए; जीवन-मृत्यु, सुख-दुःख, सब शून्य से जनमे। केवल गुरुमुख जीव ही सुख-दुःख से निर्लिप्त होकर अमर हुआ और अपने वास्तविक घर (परमात्मा का महल) में प्रविष्ट हो गया ॥ ८ ॥ साम, ऋक्, यजुः तथा अथर्व वेद, सब ब्रह्मा के मुख से त्रिगुणात्मक माया की उपज है। इस समूचे प्रपंच का मोल कोई नहीं डाल सका, जैसे तुमने (प्रभु ने) बुलवाया, जीव ने (मनुष्य ने) बोल दिया ॥ ९ ॥ शून्य से ही तुमने सातों पाताल पैदा किए, शून्य से चौदह भुवनों को उपजाकर अपने में लिप्त कर रखा है। हे अपरंपर, तुम्हीं ने सब किया है, तुम्हारे ही करने से सब होता है ॥ १० ॥ रजोगुण, तमोगुण तथा सतोगुण, सब तुम्हारी ही शक्तियों की छाया है। इन्हीं के अन्तर्गत जीव जन्म-मरण तथा अभिमान का दुःख पाता है। जिस पर प्रभु की कृपा होती है, वही गुरु द्वारा चौथे गुण को ग्रहण कर मुक्ति पाता है ॥ ११ ॥ शून्य से ही दसों अवतारों की उपज हुई, उसी से प्रभु ने सृष्टि उत्पन्न करके सब प्रसार किया है। उसने (शून्य से ही) देव, दानव, गन्धर्व बनाए हैं और कर्मानुसार फल सबको प्रदान किया है ॥ १२ ॥ गुरु के द्वारा सबको विवेक मिलता है और जागतिक विपत्तियों से छूट मिलती है। कोई सेवा-भावी मनुष्य ही गुरु के मार्ग पर चलता हुआ ज्ञान प्राप्त करता है। वही प्रभु युग-युग से मुक्ति का आधार है और उसी से जीव मुक्ति पाता और सम्मान लाभ करता है ॥ १३ ॥ पाँच तत्त्व भी शून्य से ही प्रकाश में आए हैं। जीव इन तत्त्वों से देह का संयोगी होकर कर्मों का अभ्यास करता है। तभी बुरे-भले कर्म उसके भाग्य में लिखे जाते हैं और पाप-पुण्य के बीज वपन होते हैं ॥ १४ ॥ जो हरि-रस में मग्न होकर ब्रह्म में रत हैं, वह सतिगुरु उत्तम पुरुष है और सबसे निराला होता है। रिद्धियों, सिद्धियों की शक्ति, बुद्धि तथा ज्ञान उत्तम भाग्य के कारण गुरु से ही प्राप्त होते हैं ॥ १५ ॥ माया के साथ मन का घनिष्ठ प्रेम है। इस तथ्य को कोई ज्ञानी ही बूझता और स्थिति को समझाता है। सामान्यतः लोभी मनुष्य आशा, तृष्णा, अहम् और संशय का शिकार होकर मिथ्या जीवन जीता है ॥ १६ ॥ सच्चे गुरु से विचार (विवेक)

प्राप्त करता है, जिससे जीव सत्य के घर में स्थिर हो जाता है अर्थात् शून्य में समाधिस्थ प्रभु का नैकट्य प्राप्त करता है। उस स्थिति में शब्द की ध्वनि के साथ निर्मल नाम का नाद सुनायी देता है और निश्चयपूर्वक वह हरि-नाम में समा जाता है ॥ १७ ॥ ५ ॥ १७ ॥

॥ मारू महला १ ॥ जह देखा तह दीन दइआला। आइ न जाई प्रभु किरपाला। जीआ अंदरि जुगति समाई रहिओ निरालमु राइआ ॥ १ ॥ जगु तिस की छाइआ जिसु बापु न माइआ। ना तिसु भैण न भराउ कमाइआ। ना तिसु ओपति खपति कुल जाती ओहु अजरावरु मनि भाइआ ॥२॥ तू अकाल पुरखु नाही सिरि काला। तू पुरखु अलेख अगंम निराला। सत संतोखि सबदि अति सीतलु सहज भाइ लिव लाइआ ॥ ३ ॥ त्रै वरताइ चउथै घरि वासा। काल बिकाल कीए इक ग्रासा। निरमल जोति सरब जगजीवनु गुरि अनहद सबदि दिखाइआ ॥४॥ ऊतम जन संत भले हरि पिआरे। हरि रस माते पारि उतारे। नानक रेण संत जन संगति हरि गुर परसादी पाइआ ॥ ५ ॥ तू अंतरजामी जीअ सभि तेरे। तू दाता हम सेवक तेरे। अंम्रित नामु क्रिपा करि दीजै गुरि गिआन रतनु दीपाइआ ॥ ६ ॥ पंच ततु मिलि इहु तनु कीआ। आतम राम पाए सुखु थीआ। करम करतूति अंम्रित फलु लागा हरि नाम रतनु मनि पाइआ ॥७॥ ना तिसु भूख पिआस मनु मानिआ। सरब निरंजनु घटि घटि जानिआ। अंम्रित रसि राता केवल बैरागी गुरमति भाइ सुभाइआ ॥ ८ ॥ अधिआतम करम करे दिनु राती। निरमल जोति निरंतरि जाती। सबदु रसालु रसन रसि रसना बेणु रसालु वजाइआ ॥ ९ ॥ बेणु रसाल वजावै सोई। जा की त्रिभवण सोझी होई। नानक बूझहु इह बिधि गुरमति हरि राम नामि लिव लाइआ ॥ १० ॥ ऐसे जन विरले संसारे। गुर सबदु वीचारहि रहहि निरारे। आपि तरहि संगति कुल तारहि तिन सफल जनमु जगि आइआ ॥ ११ ॥ घरु दरु मंदरु जाणै सोई। जिसु पूरे गुर ते सोझी होई। काइआ गड़ महल महली प्रभु साचा सचु साचा तखतु रचाइआ ॥ १२ ॥ चतुरदस हाट दीवे दुइ साखी। सेवक पंच नाही बिखु चाखी। अंतरि वसतु

अनूप निरमोलक गुरि मिलिऐ हरि धनु पाइआ ॥ १३ ॥ तखति बहै तखतै की लाइक । पंच समाए गुरमति पाइक । आदि जुगादी है भी होसी सहसा भरमु चुकाइआ ॥ १४ ॥ तखति सलामु होवै दिनु राती । इहु साचु वडाई गुरमति लिव जाती । नानक रामु जपहु तरु तारी हरि अंति सखाई पाइआ ॥ १५ ॥ १ ॥ १८ ॥

जहाँ तक दृष्टि जाती है, वहाँ दीन-दयालु परमात्मा का ही प्रसार दीखता है । वह समर्थ कृपालु प्रभु न कहीं आता है, न जाता है । जीवों के भीतर युक्तिपूर्वक वह निर्लिप्त हरि समाया रहता है ॥ १ ॥ यह संसार उस परमात्मा का प्रतिबिम्ब है, जिसका माँ-बाप कोई नहीं (अर्थात् उसके कोई जनक-जननी नहीं) । उस प्रभु का बहिन-भाई भी कोई नहीं । न वह पैदा होता है, न उसका क्षय होता है, न उसकी कोई कुल-जाति है; वह अजर-अमर है, सबके मन को भाता है ॥ २ ॥ हे प्रभु, तुम अकालपुरुष हो, तुम पर कोई क्षयकारी शक्ति नहीं । तुम अगम, अदृश्य तथा निराले हो । जो सहज भाव से तुममें ध्यान लगाता है, वह उसके शब्द से सत्य और सन्तोष प्राप्त करता है और जीव परम शीतल होता है ॥ ३ ॥ जिसने तीनों गुणों का विस्तार करके तुरीयावस्था में वास किया है; जन्म-मृत्यु को जिसने ग्रस लिया है; वह निर्मल ज्योति प्रभु समूचे जग का जीवन है, गुरु अपनी अनाहत वाणी द्वारा उसके दर्शन करवा सकता है ॥ ४ ॥ हे प्रभु, तुम्हारे प्रिय सन्तजन उत्तम हैं । तुम्हारे ही रस में मस्त होकर वे संसार-सागर से पार उतरे हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिन्होंने गुरु-संगति की कृपा से तुम्हें प्राप्त किया है, उन सन्तजनों की चरण-धूल मुझे प्रदान करो ॥ ५ ॥ हे परमात्मा, तुम अन्तर्यामी हो, सब जीव तुम्हारे हैं । तुम दाता हो, हम तुम्हारे सेवक हैं । हे प्रभु, हरि-नामामृत प्रदान करो । ऐ जीव, गुरु से ज्ञान-रत्न का आलोक पाओ ॥ ६ ॥ पाँच तत्त्वों से मिलकर शरीर बना है, उसमें परमात्मा का अंश आ जाने से सुख प्राप्त होता है । उत्तम, निष्काम कर्मों से प्रभु-नाम का फल मिलता है और नाम-रत्न की आराधना द्वारा हरि को पा लिया जाता है ॥ ७ ॥ जो तुममें, ऐ प्रभु, मन रमाता है, उसे कोई भूख-प्यास (आशा-तृष्णा) नहीं रह जाती और वह मायातीत ब्रह्म को घट-घट में देखने का सामर्थ्य पा लेता है । जो गुरु-मतानुसार आचरण करता है, वही अमृत-सम हरिनाम-रस में मग्न होकर आत्मानन्द में लीन हो जाता है ॥ ८ ॥ जो आध्यात्मिक उपलब्धियों के लिए रात-दिन निष्काम कर्म करता है, वही उस एक-रस परम निर्मल ज्योति परमात्मा को जानता है। जिसने विषय-रसों से हटकर परमात्मा के शब्द-

रस का आस्वादन किया है, उसने सुन्दर वंशीवाले (श्रीकृष्ण=प्रभु) को पा लिया है ॥ ९ ॥ त्रिभुवन की जानकारी रखनेवाला जीव ही रस-पूर्ण बाँसुरी बजाता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरुमत की विधि से ही हरि-नाम में मन लगता है ॥ १० ॥ संसार में ऐसे विरले लोग हैं, जो गुरु का शब्द विचारकर निराले रहते हैं। वे स्वयं मुक्त होते हैं, समूची संगति को भी मोक्ष प्रदान करते हैं, संसार में उन्हीं का जन्म सफल होता है ॥ ११ ॥ घर, दर, मन्दिर को वही जानता है (अर्थात् शरीर रूपी महल के भीतर), जिसे सच्चे गुरु का (ज्ञान) उपदेश प्राप्त होता है। शरीर रूपी महल का स्वामी जीवात्मा रूपी हरि सत्य के सिंहासन पर विराजता है ॥ १२ ॥ चौदह भुवन तथा सूर्य-चाँद के दो दीपक गवाह हैं कि सेवकों और पंचों ने विषपान नहीं किया। (क्योंकि) उनके भीतर अमूल्य हरि-नाम विद्यमान है, जो गुरु से मिलता है ॥ १३ ॥ सिंहासन पर योग्य पात्र ही बैठता है। (योग्य कौन है ?) वह दास, जिसके पंच-दोषों का अन्त हो गया हो और जिसने परमात्मा सम्बन्धी सब सन्देह-भ्रम आदि को दूर कर दिया हो ॥ १४ ॥ दिन-रात वह सिंहासन पर विद्यमान होता है और सब उसे सलाम करते हैं। गुरु के उपदेश में वृत्ति लगाने से उसे वह प्रतिष्ठा मिलती है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा को जपने से तुम संसार-सागर से तिर जाओगे। जिन्होंने उसका नाम जपा है, उन्होंने अन्ततः सहायी परमात्मा को पाया है ॥ १५ ॥ १ ॥ १८ ॥

॥ मारू महला १ ॥ हरि धनु संचहु रे जन भाई। सतिगुर सेवि रहहु सरणाई। तसकरु चोरु न लागै ता कउ धुनि उपजै सबदि जगाइआ ॥ १ ॥ तू एकंकारु निरालमु राजा। तू आपि सवारहि जन के काजा। अमरु अडोलु अपारु अमोलकु हरि असथिर थानि सुहाइआ ॥ २ ॥ देही नगरी ऊतम थाना। पंच लोक वसहि परधाना। ऊपरि एकंकारु निरालमु सुंन समाधि लगाइआ ॥ ३ ॥ देही नगरी नउ दरवाजे। सिरि सिरि करणैहारै साजे। दसवै पुरखु अतीतु निराला आपे अलखु लखाइआ ॥ ४ ॥ पुरखु अलेखु सचे दीवाना। हुकमि चलाए सचु नीसाना। नानक खोजि लहहु घरु अपना हरि आतम राम नामु पाइआ ॥ ५ ॥ सरब निरंजन पुरखु सुजाना। अदलु करे गुर गिआन समाना। कामु क्रोधु लै गरदनि मारे हउमै लोभु चुकाइआ ॥ ६ ॥ सचै थानि वसै निरंकारा। आपि

पछाणै सबदु वीचारा। सचै महलि निवासु निरंतरि आवण जाणु चुकाइआ ॥ ७ ॥ ना मनु चलै न पउणु उडावै। जोगी सबदु अनाहदु वावै। पंच सबद झुणकारु निरालमु प्रभि आपे वाइ सुणाइआ ॥ ८ ॥ भउ बैरागा सहजि समाता। हउमै तिआगी अनहदि राता। अंजनु सारि निरंजनु जाणै सरब निरंजनु राइआ ॥ ९ ॥ दुख भै भंजनु प्रभु अबिनासी। रोग कटे काटी जम फासी। नानक हरि प्रभु सो भउ भंजनु गुरि मिलिऐ हरि प्रभु पाइआ ॥ १० ॥ कालै कवलु निरंजनु जाणै। बूझै करमु सु सबदु पछाणै। आपे जाणै आपि पछाणै सभु तिस का चोजु सबाइआ ॥ ११ ॥ आपे साहु आपे वणजारा। आपे परखे परखणहारा। आपे कसि कसवटी लाए आपे कीमति पाइआ ॥ १२ ॥ आपि दइआलि दइआ प्रभि धारी। घटि घटि रवि रहिआ बनवारी। पुरखु अतीतु वसै निहकेवलु गुर पुरखै पुरखु मिलाइआ ॥ १३ ॥ प्रभु दाना बीना गरबु गवाए। दूजा मेटै एकु दिखाए। आसा माहि निरालमु जोनी अकुल निरंजनु गाइआ ॥ १४ ॥ हउमै मेटि सबदि सुखु होई। आपु वीचारे गिआनी सोई। नानक हरि जसु हरि गुण लाहा सत संगति सचु फलु पाइआ ॥ १५ ॥ २ ॥ १९ ॥

हे लोगो, हरि-नाम के धन का संचय करो। सतिगुरु की शरण लेकर उसी की सेवा में मग्न रहो। उस धन को कोई तस्कर-चोर नहीं ले सकते (कामादि का प्रभाव नहीं होता), क्योंकि हरिनाम-धन वाला व्यक्ति शब्द-ध्वनि के कारण सदैव जाग्रत् रहता है ॥ १ ॥ हे प्रभु, तुम एककार, निर्लिप्त और सर्वोपरि हो। तुम स्वयं अपने सेवकों के कार्य सँवारते हो। हे हरि, तुम अमर, अडोल, अमूल्य, अपार एवं स्थिर हो और सब स्थानों पर विराजते हो ॥ २ ॥ वही शरीर-नगरी उत्तम स्थान है, जहाँ सत्य-सन्तोष आदि पंच प्रधान बसते हैं (सन्तजन अपने शरीर में सत्य-सन्तोष आदि गुण बढ़ा लेते हैं, और वे ही वास्तव में शरीर का सही लाभ उठाते हैं)। उनसे ऊपर एक परमात्मा निर्लिप्त भाव से शून्य समाधि लगाए बैठा है ॥ ३ ॥ इस शरीर रूपी नगरी में नौ द्वार हैं, परमात्मा ने सबके लिए इसकी रचना की है। दशम द्वार में वह निर्लिप्त अकालपुरुष स्वयं विराजता है— वही अपने अदृश्य रूप को दृश्यमान् करता है ॥ ४ ॥ परमपुरुष अलख होकर भी सत्य का दीवान लगाता और अपनी इच्छा से सत्य के परवाने (आज्ञा-पत्र) चलाता है।

गुरु नानक कहते हैं कि हरि जीवात्मा के रूप में तुम्हारे भीतर ही विद्यमान है, (उसे पाने के लिए) अपने अन्तर्मन में ही खोजो ॥ ५ ॥ परमात्मा सबसे निर्लिप्त और साकार विवेक है। वह गुरु के ज्ञान द्वारा प्राप्त होता और सबका योग्य न्याय करता है। काम, क्रोधादि को गर्दन से पकड़कर पछाड़ता है और अभिमान, लोभ आदि को दूर करता है ॥ ६ ॥ मायातीत परमात्मा सत्य स्थान पर विराजता है। मात्र हरि-शब्द पर विचार करनेवाला जीव ही उसे पहचानता है। (पहचान लेने पर) जीव का आवागमन चुक जाता है और वह भी परम सत्य-खण्ड में निवास करने लगता है ॥ ७ ॥ उस जीव का मन स्थिर होता है और तृष्णा-पवन उसे नहीं उड़ा पाती। वह अलिप्त रूप में अनाहत नाद के वादन बजाता है; स्वयं प्रभु उसे पंच शब्द की झंकार बजाकर सुनाता है। (पाँचों खण्डों की पाँचों ध्वनियाँ वह सुनता और परमानन्द में स्थित होता है) ॥ ८ ॥ जीव प्रभु के भय और प्रेम में सहजावस्था में लीन होता है; वह अभिमान को त्यागकर अनाहत ध्वनि में एकाग्र होता है और ज्ञान रूपी अंजन लगाकर वह मायातीत निर्लिप्त और सर्वोपरि ब्रह्म को देखता है ॥ ९ ॥ प्रभु दुःखों और भय को नष्ट करनेवाला है, अनश्वर है; वह सबके रोगों को दूर करता और यम के बन्धनों को काटता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा भय-भंजन है और गुरु-मतानुसार आचरण करने से ही वह प्राप्त होता है ॥ १० ॥ परमात्मा को जान लेनेवाला काल को कवलित कर लेता है। वह हरि की कृपा को जानता और शब्द-ध्वनि को पहचानता है। (सच तो यह है कि) वही अपने को पहचानता और समझता है, चतुर्दिक् उसी की लीला प्रसरित है ॥ ११ ॥ (व्यापारी के उपकरणों का रूपक है।) वह प्रभु स्वयं ही साहूकार है, स्वयं व्यापारी भी है (पूँजी लगानेवाला तथा पूँजी से व्यापार करनेवाला); वह सही परीक्षक है, सबकी जाँच करता है। अपने-आप वह सामग्री की कसौटी-परख करता और अपने-आप ही उसका मोल डालता है ॥ १२ ॥ वह प्रभु दयावान् है, सब पर दया करता है। परमात्मा घट-घटवासी (सब शरीरों में बसनेवाला) है। वह निर्लिप्त विशुद्ध प्रभु केवल किसी परम सन्त गुरु की कृपा से ही मिलता है ॥ १३ ॥ परमात्मा विवेकी और सर्वदर्शी है, जीव के अभिमान को दूर करता है। द्वैत-भाव को मिटाकर एक परमात्मा को दिखाता है (गुरु), क्योंकि वह मनुष्य-योनि में होता हुआ भी आशा-तृष्णा से निर्लिप्त रहता है और सदैव मायातीत ब्रह्म की कीर्ति गाता है ॥ १४ ॥ वह (गुरु) जीव का अहम् मिटाकर उसे शब्दोन्मुखी करता है, जब वह आत्म-परिचय पा लेता है, तो ज्ञानी होता है। गुरु नानक कहते हैं कि सत्संगति में हरि-गुण तथा हरि-यश का लाभ लेने से सत्य का फल पाता है ॥ १५ ॥ २ ॥ १९॥

॥ मारू महला १ ॥ सचु कहहु सचै घरि रहणा । जीवत मरहु भवजलु जगु तरणा । गुरु बोहिथु गुरु बेड़ी तुलहा मन हरि जपि पारि लंघाइआ ॥१॥ हउमै ममता लोभ बिनासनु । नउ दर मुकते दसवै आसनु । ऊपरि परै परै अपरंपरु जिनि आपे आपु उपाइआ ॥ २ ॥ गुरमति लेवहु हरि लिव तरीऐ । अकलु गाइ जम ते किआ डरीऐ । जत जत देखउ तत तत तुमही अवरु न दुतीआ गाइआ ॥ ३ ॥ सचु हरि नामु सचु है सरणा । सचु गुरसबदु जितै लगि तरणा । अकथु कथै देखै अपरंपरु फुनि गरभि न जोनी जाइआ ॥ ४ ॥ सच बिनु सतु संतोखु न पावै । बिनु गुर मुकति न आवै जावै । मूल मंत्रु हरि नामु रसाइणु कहु नानक पूरा पाइआ ॥ ५ ॥ सच बिनु भवजलु जाइ न तरिआ । एहु समुंदु अथाहु महा बिखु भरिआ । रहै अतीतु गुरमति ले ऊपरि हरि निरभउ कै घरि पाइआ ॥ ६ ॥ झूठी जग हित की चतुराई । बिलम न लागै आवै जाई । नामु विसारि चलहि अभिमानी उपजै बिनसि खपाइआ ॥ ७ ॥ उपजहि बिनसहि बंधन बंधे । हउमै माइआ के गलि फंधे । जिसु राम नामु नाही मति गुरमति सो जमपुरि बंधि चलाइआ ॥ ८ ॥ गुर बिनु मोख मुकति किउ पाईऐ । बिनु गुर राम नामु किउ धिआईऐ । गुरमति लेहु तरहु भव दुतरु मुकति भए सुखु पाइआ ॥ ९ ॥ गुरमति क्रिसनि गोवरधन धारे । गुरमति साइरि पाहण तारे । गुरमति लेहु परम पदु पाईऐ नानक गुरि भरमु चुकाइआ ॥ १० ॥ गुरमति लेहु तरहु सचु तारी । आतम चीनहु रिदै मुरारी । जम के फाहे काटहि हरि जपि अकुल निरंजनु पाइआ ॥ ११ ॥ गुरमति पंच सखे गुर भाई । गुरमति अगनि निवारि समाई । मनि मुखि नामु जपहु जगजीवन रिद अंतरि अलखु लखाइआ ॥ १२ ॥ गुरमुखि बूझै सबदि पतीजै । उसतति निंदा किस की कीजै । चीनहु आपु जपहु जगदीसरु हरि जगंनाथु मनि भाइआ ॥१३॥ जो ब्रहमंडि खंडि सो जाणहु । गुरमुखि बूझहु सबदि पछाणहु । घटि घटि भोगे भोगणहारा रहै अतीतु सबाइआ ॥ १४ ॥ गुरमति बोलहु

हरि जसु सूचा। गुरमति आखी देखहु ऊचा। स्रवणी नामु सुणि हरि बाणी नानक हरि रंगि रंगाइआ ॥ १५ ॥ ३ ॥ २० ॥

यदि सच्चे घर (प्रभु की शरण) में रहना है, तो सत्य वचन कहो; यदि संसार-सागर को तिरना है, तो जीते-जी मरना सीखो (जीवन्मुक्त होओ)। हे मन, गुरु जहाज़ है, गुरु ही नौका या तुलहा (नदी पार करने के लिए लकड़ियाँ बाँधकर बनाया तख़्ता) है, उसी के द्वारा हरि-नाम जपने से संसार से पार हुआ जाता है ॥ १ ॥ जो जीव मैं-मेरी भावना तथा लोभ का नाश करता है, निम्न नौ द्वारों से विमुख होकर दशम द्वार में आसन जमाता है, वह परे से परे स्वयम्भू परमात्मा को पाता है ॥२॥ गुरुमत पर आचरण करने तथा प्रभु के गुण गाने से संसार-सागर से पार हुआ जा सकता है। रचनातीत परमात्मा का कीर्तिगान करनेवाला यमदूतों से क्यों डरे! वह तो जिधर-किधर देखता है, तुम ही तुम होते हो, अन्य किसी का वह क्यों चिन्तन करे! ॥ ३ ॥ हरि-नाम परम सत्य है, हरि की शरण भी परम सत्य है। गुरु का शब्द भी परम सत्य है, जिसके सहारे संसार से मुक्त हुआ जाता है। जो अकथनीय सत्य को कहता है और उस अपरंपर ब्रह्म को देख लेता है, वह पुनः गर्भ-योनि में नहीं आता ॥ ४ ॥ सत्य के बिना जीवात्मा में सत् और सन्तोष के गुण नहीं उपजते; गुरु के बिना मुक्ति नहीं मिलती, जीव आवागमन में पड़ा रहता है। हरि-नाम का मूल-मन्त्र रामबाण औषध है, जो, गुरु नानक कहते हैं, किसी सच्चे गुरु से ही प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ सत्य के बिना संसार-सागर से पार नहीं हुआ जा सकता। यह (संसार) विष-भरा अथाह सागर है। गुरुमत पर आचरण करनेवाला जीव (गुरुमुख) इस विषय-विकारों के विष से ऊपर उठकर और निर्भय होकर अपने सच्चे घर में स्थान पाता है ॥ ६ ॥ जगत-मोह की चतुराई मिथ्या है, इसके कारण जन्म-मरण में विलम्ब नहीं होता (अर्थात् यही आवागमन का कारण है)। जो अभिमानी जीव हरि-नाम को विस्मृत करके चलते हैं, वे जन्मते-मरते ख़्वार होते हैं ॥ ७ ॥ वे जीव उपजने-विनशने (जन्म-मरण) के बन्धन में बँधे रहते हैं। उनके गले में अभिमान और माया का फन्दा पड़ा रहता है। जो गुरु-मतानुसार राम-नाम को ग्रहण नहीं करता, यम उसे बाँधकर अपनी सीमाओं में ले जाते हैं ॥ ८ ॥ गुरु के बिना कोई मोक्ष-मुक्ति नहीं पा सकता। गुरु के बिना कोई राम-नाम का ध्यान नहीं कर पाता। (इसलिए) गुरु के आदेशों पर चलते हुए दुस्तर संसार-सागर से पार होकर मुक्ति-लाभ करो और परमसुख से जिओ ॥ ९ ॥ गुरु की शक्ति से ही (गुरु-मतानुसार जीवन जीने से) श्रीकृष्ण ने गोवर्द्धन को उठा लिया था, रामचन्द्रजी ने भी गुरु की शक्ति से ही सागर में पत्थर तैरा

दिए थे। गुरुमत की शक्ति से परमपद की उपलब्धि होती है, गुरु नानक कहते हैं कि गुरु ही भ्रमों को मिटाता है ॥ १० ॥ गुरुमत को ग्रहण करके सत्य के सागर में तरो। गुरुमत के द्वारा ही अपने-आप को पहचान कर अन्तर्मन में ही प्रभु के दर्शन सम्भव हैं। गुरु यम के फन्दों को काटता, जीव को हरि-नाम जपाता और मायातीत परमात्मा के दर्शन करवाता है ॥ ११ ॥ सन्तों, मित्रों और गुरु-भाइयों में पारस्परिक साझापन गुरुमत के ही कारण होता है। गुरुमत से जीव तृष्णा-अग्नि को दूर करता है। (इसलिए) ऐ जीवो, मन और मुख से जगजीवन प्रभु का नाम जपो, तभी हृदय में अदृश्य ब्रह्म के दर्शन होते हैं ॥ १२ ॥ जो जीव गुरु के द्वारा सूझ प्राप्त करता है, उसे हरि-नाम में आस्था होती है— वह किसी की स्तुति-निन्दा नहीं करता। वह आत्म-पहचान करता, जगदीश्वर का नाम जपता और परमात्मा को मन में धारण करता है ॥ १३ ॥ खण्डों-ब्रह्माण्डों में जो समाया हुआ है, उसे पहचानो। गुरु के द्वारा उसकी जानकारी पाओ और शब्द की पहचान करो। वह प्रभु प्रत्येक शरीर का भोग कर रहा है (अर्थात् सबमें व्याप्त है) और फिर भी सबसे निर्लिप्त है ॥ १४ ॥ गुरु-मतानुसार हरि का यश कथन करने से (जिह्वा) निर्मल होती है। गुरु-मतानुसार उच्चतम प्रभु के दर्शनों से आँखें पावन होती हैं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु-मतानुसार परमात्मा के अनाहत शब्द को सुनने से कान पवित्र होते हैं, और जीव आनन्द में मग्न होता है ॥ १५ ॥ ३ ॥ २० ॥

॥ मारू महला १ ॥ कामु क्रोधु परहरु पर निंदा। लबु लोभु तजि होहु निचिंदा। भ्रम का संगलु तोड़ि निराला हरि अंतरि हरि रसु पाइआ ॥ १ ॥ निसि दामनि जिउ चमकि चंदाइणु देखै। अहिनिसि जोति निरंतरि पेखै। आनंद रूपु अनूपु सरूपा गुरि पूरै देखाइआ ॥ २ ॥ सतिगुर मिलहु आपे प्रभु तारे। ससि घरि सूरु दीपकु गैणारे। देखि अदिसटु रहहु लिव लागी सभु त्रिभवणि ब्रहमु सबाइआ ॥ ३ ॥ अंम्रित रसु पाए त्रिसना भउ जाए। अनभउ पदु पावै आपु गवाए। ऊची पदवी ऊचो ऊचा निरमल सबदु कमाइआ ॥ ४ ॥ अद्रिसट अगोचरु नामु अपारा। अति रसु मीठा नामु पिआरा। नानक कउ जुगि जुगि हरि जसु दीजै हरि जपीऐ अंतु न पाइआ ॥ ५ ॥ अंतरि नामु परापति हीरा। हरि जपते मनु मन ते धीरा। दुघट घट भउ भंजनु पाईऐ बाहुड़ि जनमि न जाइआ ॥ ६ ॥

भगति हेति गुर सबदि तरंगा । हरि जसु नामु पदारथु मंगा । हरि भावै गुर मेलि मिलाए हरि तारे जगतु सबाइआ ॥ ७ ॥ जिनि जपु जपिओ सतिगुर मति वा के । जमकंकर कालु सेवक पग ता के । ऊतम संगति गति मिति ऊतम जगु भउजलु पारि तराइआ ॥ ८ ॥ इहु भवजलु जगतु सबदि गुर तरीऐ । अंतर की दुबिधा अंतरि जरीऐ । पंच बाण ले जम कउ मारै गगनंतरि धणखु चड़ाइआ ॥ ९ ॥ साकत नरि सबद सुरति किउ पाईऐ । सबद सुरति बिनु आईऐ जाईऐ । नानक गुरमुखि मुकति पराइणु हरि पूरै भागि मिलाइआ ॥१०॥ निरभउ सतिगुरु है रखवाला। भगति परापति गुर गोपाला। धुनि अनंद अनाहदु वाजै गुरसबदि निरंजनु पाइआ ॥ ११ ॥ निरभउ सो सिरि नाही लेखा । आपि अलेखु कुदरति है देखा । आपि अतीतु अजोनी संभउ नानक गुरमति सो पाइआ ॥ १२ ॥ अंतर की गति सतिगुरु जाणै । सो निरभउ गुर सबदि पछाणै । अंतरु देखि निरंतरि बूझै अनत न मनु डोलाइआ ॥ १३ ॥ निरभउ सो अभ अंतरि वसिआ । अहिनिसि नामि निरंजन रसिआ । नानक हरि जसु संगति पाईऐ हरि सहजे सहजि मिलाइआ ॥ १४ ॥ अंतरि बाहरि सो प्रभु जाणै । रहै अलिपतु चलते घरि आणै । ऊपरि आदि सरब तिहु लोई सचु नानक अम्रित रसु पाइआ ॥ १५ ॥ ४ ॥ २१ ॥

ऐ जीव, तुम काम, क्रोध तथा पर-निन्दा का त्याग करो । मोह-लोभादि को त्यागकर निश्चिन्त हो जाओ ! भ्रम के बन्धनों (शृंखलाओं) को तोड़कर निर्लिप्त भाव से अन्तर्मुखी होकर हरि-रस-पान करो ॥ १ ॥ रात्रि में दामिनी की चमक से जैसे आलोक होता है, उसी प्रकार अन्तर्मुखी होकर रात-दिन अपने भीतर प्रकाश की लौ को निहारो । (यह आलोक) पूर्ण आनन्द-रूप है, जो सच्चा गुरु ही दिखा सकता है ॥ २ ॥ सतिगुरु की शरण लेने से परमात्मा अपने-आप तार देता है । तुम्हारे हृदय रूपी आकाश के चन्द्र (बुद्धि) में गुरु-ज्ञान रूपी सूर्य का प्रकाश होता है । तब तुम अदृष्ट (परमात्मा) को देखते और उसी की लगन में मग्न होते हो और तुम्हें समूचे ब्रह्माण्ड में परमात्मा का ही रूप दीख पड़ता है ॥ ३ ॥ अमृत-रस (हरि-नाम) के पान से जैवीय तृष्णा नष्ट होती है, जीव अहम्-भाव का त्याग कर परमपद को प्राप्त करता है । इस उच्च पद पर पहुँचकर वह ऊँचे से ऊँचे निर्मल प्रभु के अनाहत शब्द

(नाद) का संगीत रस-पान करता है ।। ४ ।। परमात्मा का नाम अदृष्ट एवं इन्द्रियातीत है; वह अत्यन्त अनूठा और प्यारा है । हे प्रभु, नानक को युग-युग तक अपने यशोगान का सामर्थ्य प्रदान करना; हे हरि, तुम्हारा नाम अनन्त है, उसका भेद कोई नहीं जानता ।। ५ ।। जिन्होंने हरि-नाम जपा है, उनके अन्तर्मन में ज्ञान रूपी हीरा प्राप्त हुआ है । जो जीव गुरु के द्वारा हरि-नाम जपते हैं, उनके मन में धैर्य उपजता है । इससे कठिन मार्ग की कठिनाइयों को दूर करनेवाला (परमात्मा) प्राप्त होता है और पुनः जन्म नहीं लेना होता (अर्थात् उसका आवागमन चुक जाता है) ।। ६ ।। गुरु के शब्दों द्वारा भक्ति के लिए तरंग (उत्साह) तथा हरि-यश और नाम-पदार्थ की याचना करता हूँ । जब हरि को स्वीकार होता है, तभी सच्चे गुरु से भेंट होती है, वही परमात्मा समूचे संसार को तारता है ।। ७ ।। जिसने परमात्मा का नाम जपा है, उसे गुरुमत प्राप्त हुआ है । काल तथा यमराज के दूत उसके चरण-सेवक हुए हैं । उसकी संगति तथा जीवन-गति उत्तम होती है और वह संसार-सागर से पार उतर जाता है ।। ८ ।। यह संसार-सागर गुरु के शब्द से ही तिरा जाता है । (गुरु के शब्द से ही) भीतर की दुबिधा मन के भीतर ही जल जाती है । शुभ गुणों के पंच-बाण (सत्य, सन्तोष, दया, धर्म, धैर्य) लेकर वह जीव यम को मारता और दशम द्वार में शब्द रूपी धनुष टंकारता है ।। ९ ।। मनमुख जीव में शब्द की सूझ क्योंकर हो सकती है ! और आत्मा में शब्द की सूझ के बिना आवागमन बना रहता है । गुरु नानक कहते हैं कि केवल वह गुरुमुख ही मुक्ति का अधिकारी होता है, जिसे परमात्मा उत्तम कर्मों के कारण गुरु-संयोग प्रदान करता है ।। १० ।। निर्भय सतिगुरु (परमात्मा) सबका रक्षक है; उसी की दया से भक्ति प्राप्त होती है । गुरु के शब्द से ही जीव मायातीत ब्रह्म को पाता और अन्तर्मुखी होकर अनाहत नाद का श्रवण करता है ।। ११ ।। वास्तव में वही निर्भय है, जिसके सिर कर्मों का लेख नहीं (अर्थात् परमात्मा), उस कर्मलिख के बिना परमात्मा को उसी की लीलाओं के माध्यम से देखा जा सकता है । वह मोह-मायातीत, अयोनि तथा स्वयम्भू है, उसे केवल गुरु-मतानुसार आचरण करने से पाया जाता है ।। १२ ।। अन्तश्चेतना की मूल गति का ज्ञान गुरु से होता है; गुरु का शब्द पहचान लेनेवाला जीव भी (हरि के समान) निर्भय होता है । (वह जीव) अन्तर्मन में झाँककर अनन्त परमात्मा के दर्शन करता और स्थिर-चित्त रहता है (उसका मन नहीं डोलता) ।। १३ ।। जिसके हृदय में प्रभु स्वयं निवास करता है, वही यथार्थ में निर्भय है । वह रात-दिन मायातीत (निरंजन) के नाम-रस में लिप्त रहता है । गुरु नानक कहते हैं कि हरि-यशोगान करनेवालों की संगति पाकर जीव सहजानन्द-अवस्था को

पाता है ॥ १४ ॥ भीतर-बाहर की समूची स्थिति को परमात्मा जानता है। जीव को चाहिए कि वह संसार से निर्लिप्त रहे और चलायमान मन को अपने असली घर (दशम द्वार) में स्थिर करे। गुरु नानक कहते हैं कि तीनों लोकों से ऊपर हरि में विश्वास लाओ और अमृत-रस-नाम का पान करो ॥ १५ ॥ ४ ॥ २१ ॥

॥ मारू महला १ ॥ कुदरति करनैहार अपारा। कीते का नाही किछु चारा। जीअ उपाइ रिजकु दे आपे सिरि सिरि हुकमु चलाइआ ॥ १ ॥ हुकमु चलाइ रहिआ भरपूरे। किसु नेड़ै किसु आखां दूरे। गुपत प्रगट हरि घटि घटि देखहु वरतै ताकु सबाइआ ॥ २ ॥ जिस कउ मेले सुरति समाए। गुर सबदी हरि नामु धिआए। आनद रूप अनूप अगोचर गुर मिलिऐ भरमु जाइआ ॥ ३ ॥ मन तन धन ते नामु पिआरा। अंति सखाई चलणवारा। मोह पसार नही संगि बेली बिनु हरि गुर किनि सुखु पाइआ ॥ ४ ॥ जिस कउ नदरि करे गुरु पूरा। सबदि मिलाए गुरमति सूरा। नानक गुर के चरन सरेवहु जिनि भूला मारगि पाइआ ॥ ५ ॥ संत जनां हरि धनु जसु पिआरा। गुरमति पाइआ नामु तुमारा। जाचिकु सेव करे दरि हरि कै हरि दरगह जसु गाइआ ॥ ६ ॥ सतिगुरु मिलै त महलि बुलाए। साची दरगह गति पति पाए। साकत ठउर नाही हरि मंदर जनम मरै दुखु पाइआ ॥ ७ ॥ सेवहु सतिगुर समुंदु अथाहा। पावहु नामु रतनु धनु लाहा। बिखिआ मलु जाइ अंम्रितसरि नावहु गुर सर संतोखु पाइआ ॥ ८ ॥ सतिगुर सेवहु संक न कीजै। आसा माहि निरासु रहीजै। संसा दूख बिनासनु सेवहु फिरि बाहुड़ि रोगु न लाइआ ॥ ९ ॥ साचे भावै तिसु वडीआए। कउनु सु दूजा तिसु समझाए। हरि गुर मूरति एका वरतै नानक हरि गुर भाइआ ॥ १० ॥ वाचहि पुसतक वेद पुरानां। इक बहि सुनहि सुनावहि कानां। अजगर कपटु कहहु किउ खुल्है बिनु सतिगुर ततु न पाइआ ॥ ११ ॥ करहि बिभूति लगावहि भसमै। अंतरि क्रोधु चंडालु सु हउमै। पाखंड कीने जोगु न पाईऐ बिनु सतिगुर अलखु न पाइआ ॥ १२ ॥ तीरथ वरत नेम करहि उदिआना। जतु सतु संजमु कथहि गिआना। राम नाम बिनु किउ सुखु पाईऐ बिनु सतिगुर भरमु न जाइआ ॥ १३ ॥

निउली करम भुइअंगम भाठी । रेचक कुंभक पूरक मन हाठी । पाखंड धरमु प्रीति नही हरि सउ गुरसबद महारसु पाइआ ।।१४।। कुदरति देखि रहे मनु मानिआ । गुरसबदी सभु ब्रहमु पछानिआ । नानक आतम रामु सबाइआ गुर सतिगुर अलखु लखाइआ ।। १५ ।। ५ ।। २२ ।।

वह परमेश्वर अपार माया का रचयिता है, उस पर रचे हुए (मनुष्य) का कोई बल नहीं चलता। वह स्वयं जीवों को बनाता है, उन्हें रोज़ी पहुँचाता है और सबके ऊपर अपना नियन्त्रण बनाए रखता है ।। १ ।। वह परमात्मा सब पर भरपूर हुक्म चलाता है, उसे किसके समीप और किससे दूर कहा जा सकता है। वह परमात्मा गुप्त भी है, प्रकट भी है, घट-घट में सबके भीतर व्याप्त है ।। २ ।। जिसको उससे भेंट होती है, वह उसकी अन्तरात्मा में समा जाता है। वह जीव गुरु के आदेशानुसार हरि-नाम की आराधना करता है और अनुपम, अगोचर आनन्द को प्राप्त करता है। गुरु से भेंट होने से उसके सब भ्रम दूर हो जाते हैं ।। ३ ।। उससे तन, मन, धन से भी हरि-नाम प्यारा लगता है। (हरि-नाम) मृत्यु के समय भी सहायक होता है। मोह के प्रसार में परमात्मा के अतिरिक्त कोई संगी नहीं होता और न ही गुरु के बिना कोई सुख प्राप्त करता है ।। ४ ।। पूर्णगुरु जिस पर कृपा करता है, उसे गुरु-मतानुसार वह शूरवीर शब्द से मिलाता है। गुरु नानक कहते हैं कि उस गुरु के चरणों की पूजा करो, जिसने भ्रम में भूले जीवों को सही मार्ग दिखाया है ।। ५ ।। सन्तजनों को हरि का यशोगान प्रिय होता है; उसका (हरि का) नाम गुरु के उपदेशानुसार ही प्राप्त होता है। जीव-याचक हरि के द्वार पर उसकी चाकरी में रहकर उसी का यशोगान करता है ।। ६ ।। यदि सच्चा गुरु मिल जाय तो जीव परमात्मा के महलों में जा सकता है और उस सच्ची दरगाह में वह गति और मर्यादा-लब्ध होता है। किन्तु मनमुख जीव को हरि के द्वार पर कोई ठिकाना नहीं, वह जन्म-मरण के चक्र में दुःखी होता है ।। ७ ।। अथाह सागर के समान सतिगुरु की सेवा करो और उससे हरिनाम-रत्न-धन का लाभ प्राप्त करो। हरि-नाम रूपी अमृत-सरोवर में स्नान करने से विषय-विकारों का विष धुल जाता है और गुरु के द्वार पर सन्तोष प्राप्त होता है ।। ८ ।। सति-गुरु की सेवा में कोई संशय नहीं होना चाहिए; वहाँ आशा में निराश (मोह-माया में भी निष्काम-भावी) रहना चाहिए। संशय को, दुःखों को दूर करनेवाले परमात्मा की सेवा करो, उससे दुबारा मोह-माया का रोग नहीं लगता ।। ९ ।। सत्यस्वरूप परमात्मा को जो रुचता है, उसी को वह सम्मान देता है। कोई दूसरा उसे समझाने योग्य नहीं है। हरि

तथा गुरु का स्वरूप एक होकर विचरता है (हरि और गुरु में अभेद है), गुरु नानक कहते हैं कि हरि को गुरु और गुरु को हरि अच्छा लगता है ॥ १० ॥ कुछ वेद-पुराणों की पुस्तकें पढ़ते हैं, कुछ बैठकर सुनते और कानों में सुनाते हैं। कहो ऐसे में वह कठोर कपाट क्योंकर खुलें! सतिगुरु के बिना तत्त्व को कोई नहीं पा सकता ॥ ११ ॥ कुछ लोग देह में भस्म रमाते, विभूति करते हैं, किन्तु अन्तर्मन में अभिमान और चाण्डाल क्रोध भरा रहता है। ऐसा पाखण्ड करने से वे योग नहीं कमा सकते; सतिगुरु के बिना उस अदृश्य परमात्मा को किसी ने नहीं पाया ॥ १२ ॥ कुछ लोग जंगलों में तीर्थ-व्रत करते और नियम-संयम पालते हैं; इन्द्रिय-निरोध करते तथा यत-सत्-ज्ञान का कथन करते हैं। किन्तु वे भी हरि-नाम के बिना सुखी नहीं होते; सतिगुरु के बिना भ्रम नहीं मिटते ॥ १३ ॥ निऊली-कर्म करते तथा सुषुम्ना में से कुण्डलिनी को जगाते हैं। मन से हठपूर्वक रेचक, कुम्भक, पूरक (प्राणायाम की क्रियाएँ— श्वासों को भीतर भरना कुम्भक, श्वासों को भीतर रोकना पूरक तथा श्वास छोड़ना रेचक कहलाते हैं) क्रियाएँ करते हैं। किन्तु हरि से प्रीति के बिना ये सब पाखण्ड-कर्म हैं, गुरु के शब्द से लग्न लगाने में ही महारस की प्राप्ति होती है ॥ १४ ॥ कुछ लोग प्रभु की क़ुदरत देख-देखकर मन ही मन प्रसन्न होते हैं; गुरु के शब्द-ज्ञान से ब्रह्म को पहचानते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वह परमात्मा सबमें व्याप्त है, केवल सतिगुरु ही उस अदृश्य को दिखा सकता है ॥ १५ ॥ ५ ॥ २२ ॥

मारू सोलहे महला ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हुकमी सहजे स्रिसटि उपाई। करि करि वेखै अपणी वडिआई। आपे करे कराए आपे हुकमे रहिआ समाई हे ॥ १ ॥ माइआ मोहु जगतु गुबारा। गुरमुखि बूझै को वीचारा। आपे नदरि करे सो पाए आपे मेलि मिलाई हे ॥ २ ॥ आपे मेले दे वडिआई। गुर परसादी कीमति पाई। मनमुखि बहुतु फिरै बिललादी दूजै भाइ खुआई हे ॥ ३ ॥ हउमै माइआ विचे पाई। मनमुख भूले पति गवाई। गुरमुखि होवै सो नाइ राचै साचै रहिआ समाई हे ॥ ४ ॥ गुर ते गिआनु नाम रतनु पाइआ। मनसा मारि मन माहि समाइआ। आपे खेल करे सभि करता आपे देइ बुझाई हे ॥ ५ ॥ सतिगुरु सेवे आपु गवाए। मिलि प्रीतम सबदि सुखु पाए। अंतरि पिआरु

भगती राता सहजि मते बणि आई हे ॥ ६ ॥ दूख निवारणु गुर ते जाता । आपि मिलिआ जगजीवनु दाता । जिस नो लाए सोई बूझै भउ भरमु सरीरहु जाई हे ॥ ७ ॥ आपे गुरमुखि आपे देवै । सचै सबदि सतिगुरु सेवै । जरा जमु तिसु जोहि न साकै साचे सिउ बणि आई हे ॥ ८ ॥ त्रिसना अगनि जलै संसारा । जलि जलि खपै बहुतु विकारा । मनमुखु ठउर न पाए कबहू सतिगुर बूझ बुझाई हे ॥ ९ ॥ सतिगुरु सेवनि से वडभागी । साचै नामि सदा लिवलागी । अंतरि नामु रविआ निहकेवलु त्रिसना सबदि बुझाई हे ॥ १० ॥ सचा सबदु सची है बाणी । गुरमुखि विरलै किनै पछाणी । सचै सबदि रते बैरागी आवणु जाणु रहाई हे ॥ ११ ॥ सबदु बुझै सो मैलु चुकाए । निरमल नामु वसै मनि आए । सतिगुरु अपणा सद ही सेवहि हउमै विचहु जाई हे ॥ १२ ॥ गुर ते बूझै ता दरु सूझै । नाम विहूणा कथि कथि लूझै । सतिगुर सेवे की वडिआई त्रिसना भूख गवाई हे ॥ १३ ॥ आपे आपि मिलै ता बूझै । गिआन विहूणा किछू न सूझै । गुर की दाति सदा मन अंतरि बाणी सबदि वजाई हे ॥१४॥ जो धुरि लिखिआ सु करम कमाइआ । कोइ न मेटै धुरि फुरमाइआ । सतसंगति महि तिन ही वासा जिन कउ धुरि लिखि पाई हे ॥ १५ ॥ अपणी नदरि करे सो पाए । सचै सबदि ताड़ी चितु लाए । नानक दासु कहै बेनंती भीखिआ नामु दरि पाई हे ॥ १६ ॥ १ ॥

परमात्मा ने सहज ही हुक्म से सृष्टि पैदा की । अपनी महान् उपलब्धि का वह स्वयं साक्षी है । वह प्रभु स्वयं ही सब करने योग्य है और अपने हुक्म में ही व्याप्त है ॥ १ ॥ ससार में माया-मोह का अन्धकार है, कोई विरला जीव ही गुरु द्वारा मार्ग-दर्शन पाकर सत्य को जान सकता है । जिस पर परमात्मा की कृपा होती है, वही प्राप्त करता है; वह स्वयं जीव को गुरु से भेंट करवाता तथा अपने में विलीन कर लेता है ॥ २ ॥ परमात्मा स्वयं मिलाता है, किन्तु बड़ाई (जीव को) देता है । गुरु की कृपा से ही प्रभु का सही मूल्यांकन होता है । स्वेच्छाचारी (मनमुख) जीव दुःखी होते और परितप्त रहते हैं, क्योंकि वे द्वैतभाव में आनन्द खोजते हैं ॥ ३ ॥ जिन मनमुख जीवों ने माया और अभिमान को अपनाया है, वे मनमुख हैं, ग़लत रास्ते पर लगे हैं । कोई

गुरुमुख जीव ही हरि-नाम में लग्न लगाता और सत्यस्वरूप परमात्मा में समाहित होता है ॥ ४ ॥ गुरु से ज्ञान तथा हरि-नाम रूपी रत्न प्राप्त होते हैं और जीव आशाओं-तृष्णाओं को मारकर मन में शान्ति पाता है। वह कर्तार स्वयं ही सब लीला करता और उसकी जानकारी देता है ॥ ५ ॥ जो जीव सतिगुरु की सेवा करते हैं, वे अहम्-भाव से मुक्त हो जाते हैं, परमात्मा से मिलते तथा शब्द-ध्वनि के श्रवण में सुख पाते हैं। उनके भीतर प्यार उमड़ता है और वे भक्ति के रंग में सहजावस्था में मग्न होकर परमात्मा से ऐक्य पा लेते हैं ॥ ६ ॥ दुःखों को दूर करनेवाले परमात्मा की जानकारी गुरु से मिलती है। (इस जानकारी को पा लेने से) स्वयं जगत को जीवन देनेवाला प्रभु मिल जाता है। वही जीव इस तथ्य को बूझता है, जिसे उस प्रभु की लग्न होती है; उसके शरीर में से भय-भ्रम सब दूर हो जाते हैं ॥ ७ ॥ वह परमात्मा स्वेच्छा से गुरुमुखों की संगति प्रदान करता है; उसी सत्यस्वरूप के शब्द द्वारा जीव सतिगुरु की सेवा कर पाता है। जिसकी लग्न सच्चे प्रभु से होती है, उसे बुढ़ापा या यमों का भय नहीं रह जाता (ये उसकी ओर निहारते भी नहीं) ॥ ८ ॥ समूचा संसार तृष्णा की अग्नि में जल रहा है; जल-जलकर पीड़ित होता और विकारों में जीता है। ऐसे मनमुख को कहीं सहारा नहीं होता— सतिगुरु से ही यह ज्ञान मिलता है ॥ ९ ॥ सतिगुरु की सेवा करनेवाले भाग्यशाली होते हैं, उनकी लग्न सदा सच्चे हरि-नाम में लगी रहती है। उनके भीतर पावन प्रभु-नाम रमता है और वे शब्द की शक्ति द्वारा तृष्णा की अग्नि को बुझा लेते हैं ॥ १० ॥ गुरु की वाणी ब्रह्म के शब्दस्वरूप की नाईं सत्य है। यह वाणी कोई विरला गुरुमुख ही पहचान पाता है। जो सच्चे शब्द में लीन होते हैं, वे ही तृष्णामुक्त (वैरागी) हैं और जीवन-मरण के चक्र से ऊपर उठ जाते हैं ॥ ११ ॥ जो जीव शब्द के रहस्य को जान लेता है, उसकी समूची मलिनता दूर होती है। उसके मन में निर्मल हरि-नाम बसने लगता है। वह सदा अपने सतिगुरु की सेवा में रहता और अहंकार-रोग से मुक्त होता है ॥ १२ ॥ गुरु से ज्ञान प्राप्त करते हुए जीव परमात्मा के द्वार को खोज निकालता है। ज्ञान-विहीन जीव हरि-नाम के विरोधियों से संघर्ष करता एवं गुरु-सेवा में सम्मान पाता है। सतिगुरु सेवा में ही वह तृष्णा की भूख वहन नहीं करता, बल्कि उसकी तृष्णा-भूख का भी उन्नयन होता है ॥ १३ ॥ हरि की विशेष कृपा के कारण अब वे आपस में मिलते और तृष्णा की भूख को शान्त करवाता है ॥ १४ ॥ मनुष्य प्रारब्ध के अनुसार वही कर्म कर पाता है, जिसमें उसके प्रभु ने शुरू से ही उसकी गति बनाई होती है। परमात्मा के हुज़ूर से कही बात कोई टाल नहीं सकता। वे ही जीव सत्संगति में रहते हैं, जिनके भाग्य में शुरू से ही शुभ बरसता है ॥ १५ ॥

जिन जीवों पर वह दया-दृष्टि करता है, उनके हृदय सत्यस्वरूप शब्द में मग्न होते हैं। गुरु नानक विनती करते हैं कि हरि के द्वार पर ही हरि-नाम की उपलब्धि होती है ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ एको एकु वरतै सभु सोई। गुरमुखि विरला बूझै कोई। एको रवि रहिआ सभ अंतरि तिसु बिनु अवरु न कोई हे ॥ १ ॥ लख चउरासीह जीअ उपाए। गिआनी धिआनी आखि सुणाए। सभना रिजकु समाहे आपे कीमति होर न होई हे ॥ २ ॥ माइआ मोहु अंधु अंधारा। हउमै मेरा पसरिआ पासारा। अनदिनु जलत रहै दिनु राती गुर बिनु सांति न होई हे ॥ ३ ॥ आपे जोड़ि विछोड़े आपे। आपे थापि उथापे आपे। साचा हुकमु सचा पासारा होरनि हुकमु न होई हे ॥ ४ ॥ आपे लाइ लए सो लागै। गुरपरसादी जम का भउ भागै। अंतरि सबदु सदा सुखदाता गुरमुखि बूझै कोई हे ॥ ५ ॥ आपे मेले मेलि मिलाए। पूरबि लिखिआ सो मेटणा न जाए। अनदिनु भगति करे दिनु राती गुरमुखि सेवा होई हे ॥ ६ ॥ सतिगुरु सेवि सदा सुखु जाता। आपे आइ मिलिआ सभना का दाता। हउमै मारि त्रिसना अगनि निवारी सबदु चीनि सुखु होई हे ॥ ७ ॥ काइआ कुटंबु मोहु न बूझै। गुरमुखि होवै त आखी सूझै। अनदिनु नामु रवै दिनु राती मिलि प्रीतम सुखु होई हे ॥ ८ ॥ मनमुख धातु दूजै है लागा। जनमत की न मूओ आभागा। आवत जात बिरथा जनमु गवाइआ बिनु गुर मुकति न होई हे ॥ ९ ॥ काइआ कुसुध हउमै मलु लाई। जे सउ धोवहि ता मैलु न जाई। सबदि धोपै ता हछी होवै फिरि मैली मूलि न होई हे ॥ १० ॥ पंच दूत काइआ संघारहि। मरि मरि जंमहि सबदु न वीचारहि। अंतरि माइआ मोह गुबारा जिउ सुपनै सुधि न होई हे ॥ ११ इकि पंचा मारि सबदि है लागे। सतिगुरु आइ मिलिआ वडभागे। अंतरि साचु रवहि रंगि राते सहजि समावै सोई हे ॥ १२ ॥ गुर की चाल गुरू ते जापै। पूरा सेवकु सबदि सिञापै। सदा सबदु रवै घट अंतरि रसना रसु चाखै सचु सोई हे ॥ १३ ॥ हउमै मारे सबदि निवारे। हरि का नामु रखै उरिधारे।

एकसु बिनु हउ होरु न जाणा सहजे होइ सु होई हे ॥ १४ ॥ बिनु सतिगुर सहजु किनै नही पाइआ । गुरमुखि बूझै सचि समाइआ । सचा सेवि सबदि सच राते हउमै सबदे खोई हे ॥ १५ ॥ आपे गुण दाता बीचारी । गुरमुखि देवहि पकी सारी । नानक नामि समावहि साचै साचे ते पति होई हे ॥ १६ ॥ २ ॥

वह एक परमात्मा ही सर्वत्र व्याप्त है । कोई विरला मनुष्य ही गुरु के द्वारा उसे जान पाता है । वही एक सबके अन्तर्मन में व्याप्त है, उसके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं ॥ १ ॥ उसने चौरासी लाख प्रकार के जीव पैदा किए हैं । ज्ञानी-ध्यानी लोग इस तथ्य का उद्घाटन करते हैं कि वही सबको भोजन पहुँचाता है— वह अपनी उपमा स्वयं है, अन्य कोई नहीं ॥ २ ॥ संसार में मोह-माया का घोर अन्धकार है, अभिमान और ममत्व का प्रसार है, उसमें दिन-रात लोग जल रहे हैं, किन्तु गुरु के बिना वहाँ शान्ति (होने की बिलकुल आशा) नहीं ॥ ३ ॥ वही सबके संयोग और वियोग का कारण बनता है, वही सबको बनाता और नष्ट करता है । उस सत्यस्वरूप परमात्मा का हुक्म ही सर्वत्र चलता है, किसी अन्य में वह सामर्थ्य नहीं ॥ ४ ॥ जिसे वह अपने चरणों में आश्रय दे, वही लगता (आश्रित होता) है; गुरु की कृपा से उसका यमदूतों का भय (मृत्यु-भय) दूर हो जाता है । गुरु के द्वारा किसी विरले के मन में ही वह सुखदाता शब्द उजागर होता है ॥ ५ ॥ वह स्वेच्छा से ही जीवों को अपने में लीन करता है; उसके अनुसार जो हुक्म पहले से लिखा जा चुका है, वह मिट नहीं सकता । गुरु के आदेशानुसार आचरण से रात-दिन की भक्ति ही उसकी सेवा है ॥ ६ ॥ सतिगुरु की सेवा में सदैव सुख उपजता है, सर्व-दाता प्रभु अपने-आप (अपने भक्तों पर) प्रकट हो जाता है । ब्रह्म को पहचान लेने से परम सुख मिलता है; अहंकार, काम तथा तृष्णा की अग्नि दूर होती है ॥ ७ ॥ मनुष्य शरीर और परिवार के मोह में पड़ा इस तथ्य को नहीं पहचानता, यदि वह गुरु-आदेशों पर आचरण करे तो यही बात वह प्रत्यक्ष आँखों से देख सकता है । सदैव रात-दिन हरि-नाम का उच्चारण करने से मनुष्य प्रियतम प्रभु को मिलता और सुख प्राप्त करता है ॥ ८ ॥ मनमुख जीव (हरि को छोड़कर) दूसरे भाव में मग्न रहता है, वह अभागा पैदा होते ही क्यों न मर गया ! आवागमन में ही वह अपना जीवन व्यर्थ करता है, गुरु के बिना उसे मुक्ति लब्ध नहीं होती ॥ ९ ॥ उसका शरीर मलिन रहता है, अहंकार के मैल से पीड़ित होता है, सैकड़ों बार धोने से भी यह मैल नहीं छूटता । यदि उसकी आत्मा शब्द-जल से धुले तो वह निर्मल हो जाय और पुनः

कभी मलिन न हो ॥ १० ॥ पंचदूत (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) शरीर को कष्ट देते हैं, जीव जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है, शब्द-ब्रह्म को नहीं पहचानता। उसके मन में मोह-माया का अन्धकार इस प्रकार छाया होता है, जैसे स्वप्न में मनुष्य होश में नहीं रहता ॥ ११ ॥ जो जीव पाँचों (दूतों) को मारकर शब्द में लीन होते हैं, उन भाग्यशाली जीवों को सतिगुरु-प्राप्ति होती है। जो अपने हृदय में परमात्मा को प्रतिष्ठित करते हैं, प्रेम में रत रहते हैं, वे ही पूर्ण स्थिरता को प्राप्त होते हैं ॥ १२ ॥ गुरु की युक्ति गुरु से ही जानी जाती है, गुरु का सेवक शब्द को पहचानता है। जो सदा हृदय में परमात्मा का स्मरण करता है, वही जीभ से सत्य का मधुर रस चखता है ॥ १३ ॥ जो अहंकार को मारता और शब्द द्वारा दुर्गुणों को दूर करता है, दिल में परमात्मा का नाम अटल रखता है। वह उस एक प्रभु के अतिरिक्त और किसी को नहीं पहचानता, सहजभाव से समूची स्थिति को स्वीकार करता है ॥ १४ ॥ सतिगुरु के सहयोग के बिना किसी को पूर्ण ज्ञान नहीं होता। गुरु के द्वारा ही जीव परमात्मा को जानकर सत्य में लीन होता है। सत्यस्वरूप परमात्मा की सेवा द्वारा ही जीव ब्रह्म में रत होता और शब्द द्वारा अहंकार को नष्ट करता है ॥ १५ ॥ जो स्वयं प्रभु के गुणों का विचार करता एवं जिज्ञासुओं को भी समझाता है, उस गुरुमुख की बुद्धि श्रेष्ठ पक्की होती है। गुरु नानक कहते हैं कि वे सच्चे हरि-नाम में समा जाते हैं, सत्यस्वरूप ब्रह्म के हुजूर में उनकी प्रतिष्ठा होती है ॥ १६ ॥ २ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ जगजीवनु साचा एको दाता। गुरसेवा ते सबदि पछाता। एको अमरु एका पतिसाही जुगु जुगु सिरि कार बणाई हे ॥१॥ सो जनु निरमलु जिनि आपु पछाता। आपे आइ मिलिआ सुखदाता। रसना सबदि रती गुण गावै दरि साचै पति पाई हे ॥ २ ॥ गुरमुखि नामि मिलै वडिआई। मनमुखि निंदकि पति गवाई। नामि रते परम हंस बैरागी निज घरि ताड़ी लाई हे ॥ ३ ॥ सबदि मरै सोई जनु पूरा। सतिगुरु आखि सुणाए सूरा। काइआ अंदरि अंम्रितसरु साचा मनु पीवै भाइ सुभाई हे ॥ ४ ॥ पड़ि पंडितु अवरा समझाए। घर जलते की खबरि न पाए। बिनु सतिगुर सेवे नामु न पाईऐ पड़ि थाके सांति न आई हे ॥ ५ ॥ इकि भसम लगाइ फिरहि भेख धारी। बिनु सबदै हउमै किनि मारी। अनदिनु जलत रहहि दिनु राती भरमि भेखि भरमाई हे ॥ ६ ॥ इकि ग्रिह

कुटंब महि सदा उदासी। सबदि मुए हरि नामि निवासी। अनदिनु सदा रहहि रंगि राते भै भाइ भगति चितु लाई हे ॥ ७॥ मनमुखु निंदा करि करि विगुता। अंतरि लोभु भउकै जिसु कुता। जम कालु तिसु कदे न छोडै अंति गइआ पछुताई हे ॥ ८॥ सचै सबदि सची पति होई। बिनु नावै मुकति न पावै कोई। बिनु सतिगुर को नाउ न पाए प्रभि ऐसी बणत बणाई हे ॥ ९॥ इकि सिध साधिक बहुतु वीचारी। इकि अहिनिसि नामि रते निरंकारी। जिसनो आपि मिलाए सो बूझै भगति भाइ भउ जाई हे ॥ १०॥ इसनानु दानु करहि नही बूझहि। इकि मनूआ मारि मनै सिउ लूझहि। साचै सबदि रते इक रंगी साचै सबदि मिलाई हे ॥ ११॥ आपे सिरजे दे वडिआई। आपे भाणै देइ मिलाई। आपे नदरि करे मनि वसिआ मेरै प्रभि इउ फुरमाई हे॥१२॥ सतिगुरु सेवहि से जन साचे। मनमुख सेवि न जाणनि काचे। आपे करता करि करि वेखै जिउ भावै तिउ लाई हे ॥ १३॥ जुगि जुगि साचा एको दाता। पूरै भागि गुर सबदु पछाता। सबदि मिले से विछुड़े नाही नदरी सहजि मिलाई हे ॥ १४॥ हउमै माइआ मैलु कमाइआ। मरि मरि जंमहि दूजा भाइआ। बिनु सतिगुर सेवे मुकति न होई मनि देखहु लिव लाई हे ॥ १५॥ जो तिसु भावै सोई करसी। आपहु होआ ना किछु होसी। नानक नामु मिलै वडिआई दरि साचै पति पाई हे ॥ १६॥ ३॥

संसार को जीवन देनेवाला परमात्मा सबका दाता (सबको देने वाला) है। उसके शब्द-रूप की पहचान गुरु की सेवा द्वारा होती है। वह सबका सम्राट् है, उसी की आज्ञा सब ओर चलती है, सबके सिर पर उसका आदेश है (अर्थात् सब उसकी इच्छा से होता है) ॥ १॥ अपने-आप को पहचान लेनेवाला व्यक्ति ही निर्मल होता है। उसे सुखदाता प्रभु स्वयं मिल जाता है। उसकी जिह्वा शब्द के रंग में रँगकर प्रभु के गुण गाती है और वह परमात्मा के सम्मुख प्रतिष्ठित होता है ॥ २॥ गुरु के अनुसार आचरण करनेवाले को बड़ाई मिलती है, गुरु-विमुख निन्दक प्रतिष्ठा खो देता है। हरि-नाम में लीन जीव परम पुरुषत्व को प्राप्त होते और वैराग्यपूर्ण भाव से अपने वास्तविक घर में (परमात्मा में) ध्यानस्थ रहते हैं॥ ३॥ जो जीव शब्द में लीन होते हैं, वही पूर्णता को प्राप्त करते हैं; ऐसा शूरवीर सतिगुरु कहते हैं (यहाँ कामादि

को मार सकने में समर्थ होने के कारण गुरु को शूरवीर कहा गया है)। शरीर के भीतर दशम द्वार अमृत का सरोवर है, जहाँ मन प्रेम-भाव में मग्न होकर अमृत-पान करता है ॥ ४ ॥ पंडितजन पोथी पढ़-पढ़कर दूसरों को समझाते हैं, किन्तु अपना अन्तर्मन तृष्णा की आग में जलता है, इसकी उन्हें ख़बर नहीं होती। सतिगुरु की सेवा के बिना हरि-नाम नहीं मिलता। शास्त्रों के पाठ में शान्ति निहित नहीं ॥ ५ ॥ कुछ लोग वेष धारण कर, भस्म रमाए घूमते हैं; किन्तु शब्द की शक्ति के बिना अहंकार को कौन मार सकता है? वेष-भ्रम में घूमनेवाले जीव रात-दिन तृष्णा की अग्नि में जलते रहते हैं ॥ ६ ॥ कुछ लोग घर-परिवार में रहकर भी उदासीन (अनासक्त) होते हैं। वे गुरु के शब्द में लीन रहकर हरिनाम-स्मरण करते हैं। वे रात-दिन प्रभु-प्रेम में संलग्न रहते और प्रभु के भय और भक्ति में मन लगाए रखते हैं ॥ ७ ॥ मनमुख जीव पर-निन्दा में दुःखी होता है। उसके भीतर लोभ रूपी कुत्ता भौंकता है। यम-काल उसे कभी नहीं छोड़ता (कभी क्षमा नहीं करता); वह अन्त में पछताता रह जाता है ॥ ८ ॥ सच्चे शब्द में लीन होनेवाले जीव को सच्चा सम्मान प्राप्त होता है। हरि-नाम के बिना किसी को मुक्ति नहीं मिलती और सतिगुरु के बिना किसी को हरि-नाम नहीं मिलता, परमात्मा ने ऐसी ही व्यवस्था की है ॥ ९ ॥ कोई सिद्ध हैं, कोई साधना-रत (साधक) हैं, कुछ विवेकवान् हैं और कुछ दिन-रात निरंकार के नाम में लीन रहते हैं। परमात्मा जिसे स्वयं अपने में मिला लेता है, वही प्रभु-रहस्य की जानकारी पाता और भक्ति-भाव से भय-मुक्त होता है ॥ १० ॥ जो जीव स्नान-दान तो करते हैं, किन्तु विचार-शक्ति नहीं रखते; कुछ जीव मन को मारकर पुनः मन से ही संघर्ष करते हैं (कच्चे संकल्प के होते हैं)। कुछ लोग सत्यस्वरूप प्रभु के प्रेम में रँगे हैं; उन्होंने सच्चे ब्रह्म में वृत्ति लगाई होती है ॥ ११ ॥ वह प्रभु आप ही पैदा करता है और आप ही बड़ाई देता है। स्वेच्छा से अपने में मिला भी लेता है (वही); वह मन में बसता है, जब चाहे कृपा करता है, ऐसी प्रभु की व्यवस्था है ॥ १२ ॥ सतिगुरु का भजन करनेवाले जीव ही सच्चे हैं; मनमुख जीव सेवा-भाव को नहीं पहचानते, इसलिए कच्चे होते हैं। परमात्मा स्वयं ही लीला करता और यथेच्छ सबको चलाता है ॥ १३ ॥ परमात्मा युग-युग में सबका दाता है; गुरु-शब्द की जानकारी बड़े भाग्य से मिलती है। जो एक बार शब्द को पहचान लेता है, वह कभी परमात्मा से वियुक्त नहीं होता, वरन् ईश्वर-कृपा से सहजावस्था को प्राप्त होता है ॥ १४ ॥ अहंकारी एवं मायावी जीव मलिनता का जीवन जीते हैं, द्वैत-भाव में पड़े लोग जन्म-मरण के चक्र में पड़े रहते हैं। सतिगुरु की सेवा के बिना मुक्ति सम्भव नहीं—हे मन, ध्यानपूर्वक इस

तथ्य का मनन करके देखो ।। १५ ।। जो उसे रुचता है, वही करेगा। अपने-आप न कुछ हुआ है, न होगा। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम-स्मरण से बड़ाई मिलती है और जीव सच्चे प्रभु के दरबार में सम्मानित होता है ।। १६ ।। ३ ।।

।। मारू महला ३ ।। जो आइआ सो सभु को जासी। दूजै भाइ बाधा जम फासी। सतिगुरि राखे से जन उबरे साचे साचि समाई हे ।। १ ।। आपे करता करि करि वेखै। जिस नो नदरि करे सोई जनु लेखै। गुरमुखि गिआनु तिसु सभु किछु सूझै अगिआनी अंधु कमाई हे ।।२।। मनमुख सहसा बूझ न पाई। मरि मरि जंमै जनमु गवाई। गुरमुखि नामि रते सुखु पाइआ सहजे साचि समाई हे ।। ३ ।। धंधै धावत मनु भइआ मनूरा। फिरि होवै कंचनु भेटै गुरु पूरा। आपे बखसि लए सुखु पाए पूरै सबदि मिलाई हे ।। ४ ।। दुरमति झूठी बुरी बुरिआरि। अउगणिआरी अउगणिआरि। कची मति फीका मुखि बोलै दुरमति नामु न पाई हे ।। ५ ।। अउगणिआरी कंत न भावै। मन की जूठी जूठु कमावै। पिर का साउ न जाणै मूरखि बिनु गुर बूझ न पाई हे ।। ६ ।। दुरमति खोटी खोटु कमावै। सीगारु करे पिर खसम न भावै। गुणवंती सदा पिरु रावै सतिगुरि मेलि मिलाई हे ।। ७ ।। आपे हुकमु करे सभु वेखै। इकना बखसि लए धुरि लेखै। अनदिनु नामि रते सचु पाइआ आपे मेलि मिलाई हे ।। ८ ।। हउमै धातु मोह रसि लाई। गुरमुखि लिव साची सहजि समाई। आपे मेलै आपे करि वेखै बिनु सतिगुर बूझ न पाई हे ।। ९ ।। इकि सबदु वीचारि सदा जन जागे। इकि माइआ मोहि सोइ रहे अभागे। आपे करे कराए आपे होरु करणा किछू न जाई हे ।। १० ।। कालु मारि गुर सबदि निवारे। हरि का नामु रखै उरधारे। सतिगुर सेवा ते सुखु पाइआ हरि कै नामि समाई हे ।। ११ ।। दूजै भाइ फिरै देवानी। माइआ मोहि दुख माहि समानी। बहुते भेख करै नह पाए बिनु सतिगुर सुखु न पाई हे ।। १२ ।। किस नो कहीऐ जा आपि कराए। जितु भावै तितु राहि चलाए। आपे मिहरवानु सुखदाता जिउ भावै तिवै चलाई हे ।। १३ ।।

आपे करता आपे भुगता। आपे संजमु आपे जुगता। आपे निरमलु मिहरवानु मधुसूदनु जिसदा हुकमु न मेटिआ जाई हे ॥ १४ ॥ से वडभागी जिनी एको जाता। घटि घटि वसि रहिआ जगजीवनु दाता। इकथै गुपतु परगटु है आपे गुरमुखि भ्रमु भउ जाई हे ॥ १५ ॥ गुरमुखि हरि जीउ एको जाता। अंतरि नामु सबदि पछाता। जिसु तू देहि सोई जनु पाए नानक नामि वडाई हे ॥ १६ ॥ ४ ॥

जो इस संसार में जन्मा है, वह अवश्य जाएगा (मरेगा); वह हरि-विमुख होकर द्वैत-भावी होने के कारण यम की फाँसी में बँधा (दुःखी होगा)। सतिगुरु जिनका संरक्षक होता है, वे जन उबरते हैं और सत्य में समा जाते हैं ॥ १ ॥ परमात्मा स्वयं लीला करता और उस पर मुग्ध होता है। जिस पर उसकी कृपा-दृष्टि होती है, वही जीव स्वीकृत होता है। गुरु के द्वारा ज्ञान-प्राप्त जीवों को सब कुछ सूझता है, किन्तु मनमुख अज्ञानांध में ही धक्के खाता है ॥ २ ॥ मनमुख संशय में झूलता है और सत्य को नहीं पहचानता; इसलिए वह मर-मरकर पुनः जन्मता और इस प्रकार आवागमन में जन्म गँवाता है। गुरुमुख जीव नाम में लीन रहकर सुख पाते एवं सहज ही सत्पुरुष में समा जाते हैं ॥ ३ ॥ व्यर्थ के धन्धों में लगा रहने से मन निरर्थक लोहा-सा हो गया है, किन्तु यदि पूर्णगुरु से भेंट हो जाय, तो वह पुनः कंचन हो सकता है। वह परमात्मा अपने-आप जिसे बख्शता है, उसे शब्द से मिलाकर उसके लिए परम सुख का आधार बनता है ॥ ४ ॥ दुर्बुद्धि जीवात्मा रूपी स्त्री मिथ्या और बुरा जीवन भोगती है और महत् अवगुणों के मल से मलिन रहती है। नाम-विहीन होने के कारण उसकी बुद्धि अस्थिर और वाणी सार-हीन होती है ॥ ५ ॥ अवगुणों से भरी जीव-स्त्री प्रियतम परमात्मा को नहीं रुचती; वह मन से मिथ्या-व्यवहारी होती है, इसलिए झूठा आचरण करती है। वह मूर्ख प्रियतम के सम्पर्क का स्वाद नहीं जानती और बिना गुरु के इस स्वाद की पहचान हो भी नहीं सकती ॥ ६ ॥ दुर्बुद्धि जीव-स्त्री अनुचित कर्म करती है, मिथ्या शृंगार करती है, इसलिए प्रभु-पति को नहीं रुचती। (इसके विपरीत) गुणवंती जीव-स्त्री सदैव अपने प्रियतम के संग रमती है, उसे सतिगुरु अपने संग मिलाकर परमात्मा से गाँठ देता है ॥ ७ ॥ परमात्मा स्वयं अपने हुक्म की समूची रचना को देखता है और कुछ लोगों को मूल आदेशानुसार बख्श लेता (मोक्ष देता) है। वे दिन-रात हरि-नाम में मग्न रहकर सत्य को पहचानते और उसी में मिलकर विलीन होते हैं ॥ ८ ॥ अहंकार-बुद्धि वाली माया जीव को

मोह-रस में लगाती है, (किन्तु) गुरु के द्वारा मिला प्रभु-प्रेम सहज में ही जीव को अपने मूल से बाँध देता है। वह प्रभु स्वयं कर्ता और दर्शक है, (यह तथ्य) सतिगुरु के बिना नहीं जाना जा सकता ॥ ९ ॥ कुछ जीव शब्द का रहस्य जानकर चिर-जागृति को प्राप्त करते हैं और कुछ अभागे जीव मोह-माया में बँधे युग-युग से सुप्तावस्था में लीन हैं —सबके लिए वह स्वयं ही सब कुछ करता है, अन्य किसी के द्वारा कुछ नहीं किए बनता ॥ १० ॥ (जो जीव) गुरु-शब्द के शस्त्र से काल को मारकर दूर करता है और परमात्मा का नाम सदा हृदय में धारण करता है; उसे सतिगुरु-सेवा से सुख प्राप्त होता है और वह नित्य हरि-नाम में संलग्न रहता है ॥११ ॥ जो जीवात्मा द्वैत-भाव में दीवानी भ्रमती है, मोह-माया के दुःखों को भोगती है, वह अनेक वेष बनाती है, किन्तु सच्चे गुरु के बिना उसको सुख-उपलब्धि नहीं होती ॥ १२ ॥ जब वह प्रभु सब कुछ स्वयं करवाता है, तो शिकायत किससे की जाय ! जैसा उसे रुचता है, सबको वैसी ही राह चलाता है। वह परमात्मा अपने-आप सुखदायी कृपालु है और अपनी इच्छानुसार सबको चलाता है ॥ १३ ॥ वह कर्ता-भोक्ता स्वयं है; वह निर्लिप्त भी है और सबमें संयुक्त भी ! वह कृपालु निर्मल कर्ता-पुरुष है, उसका आदेश कभी मिटाया नहीं जा सकता ॥ १४ ॥ वे जीव भाग्यशाली हैं, जिन्होंने उस एक ब्रह्म को पहचाना है। वह संसार को जीवन देनेवाला दाता सर्वव्याप्त है— कहीं गुप्त है, कहीं प्रकट है; गुरुमुख का भ्रम तथा भय नष्ट हो जाता है ॥ १५ ॥ गुरु द्वारा हरि के एक ही रूप की जानकारी मिलती है और जीव अन्तर्मन में हरि-नाम जपते हुए शब्द को पहचान लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि हे परमात्मा, जिसे तुम उदारता-पूर्वक देते हो, वही प्राप्त करता है; इसी में परमात्मा के नाम का बड़प्पन निहित है ॥ १६ ॥ ४ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ सचु सालाही गहिर गंभीरै। सभु जगु है तिसही कै चीरै। सभि घट भोगवै सदा दिनु राती आपे सूख निवासी हे ॥ १ ॥ सचा साहिबु सची नाई। गुरपरसादी मंनि वसाई। आपे आइ वसिआ घट अंतरि तूटी जम की फासी हे ॥ २ ॥ किसु सेवी तै किसु सालाही। सतिगुरु सेवी सबदि सालाही। सचै सबदि सदा मति ऊतम अंतरि कमलु प्रगासी हे ॥ ३ ॥ देही काची कागद मिकदारा। बूंद पवै बिनसै ढहत न लागै बारा। कंचन काइआ गुरमुखि बूझै जिसु अंतरि नामु निवासी हे ॥ ४ ॥ सचा चउका सुरति की कारा। हरि नामु भोजनु सचु आधारा। सदा त्रिपति

पवित्रु है पावनु जितु घटि हरि नामु निवासी हे ।। ५ ।। हउ तिन बलिहारी जो साचै लागे । हरि गुण गावहि अनदिनु जागे । साचा सूखु सदा तिन अंतरि रसना हरि रसि रासी हे ।।६।। हरि नामु चेता अवरु न पूजा । एको सेवी अवरु न दूजा । पूरै गुरि सभु सचु दिखाइआ सचै नामि निवासी हे ।। ७ ।। भ्रमि भ्रमि जोनी फिरि फिरि आइआ । आपि भूला जा खसमि भुलाइआ । हरि जीउ मिलै ता गुरमुखि बूझै चीनै सबदु अबिनासी हे ।। ८ ।। कामि क्रोधि भरे हम अपराधी । किआ मुहु लै बोलह ना हम गुण न सेवा साधी । डुबदे पाथर मेलि लैहु तुम आपे साचु नामु अबिनासी हे ।। ९ ।। ना कोई करे न करणै जोगा । आपे करहि करावहि सु होइगा । आपे बखसि लैहि सुखु पाए सदही नामि निवासी हे ।। १० ।। इहु तनु धरती सबदु बीजि अपारा । हरि साचे सेती वणजु वापारा । सचु धनु जंमिआ तोटि न आवै अंतरि नामु निवासी हे ।। ११ ।। हरि जीउ अवगणिआरे नो गुणु कीजै । आपे बखसि लैहि नामु दीजै । गुरमुखि होवै सो पति पाए इकतु नामि निवासी हे ।। १२ ।। अंतरि हरि धनु समझ न होई । गुरपरसादी बूझै कोई । गुरमुखि होवै सो धनु पाए सद ही नामि निवासी हे ।। १३ ।। अनल वाउ भरमि भुलाई । माइआ मोहि सुधि न काई । मनमुख अंधे किछू न सूझै गुरमति नामु प्रगासी हे ।। १४ ।। मनमुख हउमै माइआ सूते । अपणा घरु न समालहि अंति विगूते । परनिंदा करहि बहु चिंता जालै दुखे दुखि निवासी हे ।। १५ ।। आपे करतै कार कराई । आपे गुरमुखि देइ बुझाई । नानक नामि रते मनु निरमलु नामे नामि निवासी हे ।। १६ ।। ५ ।।

मैं सत्यस्वरूप और गहन-गम्भीर परमात्मा की प्रशस्ति करता हूँ। सारा संसार उसी की सीमाओं में है। वही सब शरीरों को भोगता है अर्थात् सबमें व्याप्त है और रात-दिन अपने-आप में सुख मानता है ।। १ ।। वह प्रभु अपने सच्चे नाम के कारण सच्चा स्वामी है; गुरु की कृपा से उसे मन में बसाया जा सकता है। वह स्वेच्छा से जब अन्तर्मन में आकर बस जाता है, तो यम का फंदा कट जाता है ।। २ ।। मैं किसकी सेवा करूँ और किसकी प्रशंसा में गीत गाऊँ ? मैं गुरु की

सेवा करूँ तथा परमात्मा के शब्द की प्रशस्ति करूँगा, क्योंकि सच्चे शब्द से बुद्धि सदा उत्तम होती है और हृदय-कमल खिल उठता है ॥३॥ शरीर कागज़ के समान नश्वर है, बूँद भर पानी से नष्ट हो जाता है, इसे गिरते देर नहीं लगती; किन्तु जो जीव गुरु के द्वारा प्रभु की सूझ प्राप्त कर लेता है और जिसके मन में हरि-नाम बसता है, उसका शरीर स्वर्ण-सा सुन्दर और मूल्यवान हो जाता है ॥ ४ ॥ उनका घेरा (चौका) सत्य का होता है और वह उच्च प्रकृति की रेखाओं से खिंचता है। हरि-नाम ही उनका सच्चा आश्रय होता है और वही उनका भोजन है। जिन जीवों के भीतर पवित्र हरि-नाम बसता है, वे सदैव तृप्त और पवित्र होते हैं ॥ ५ ॥ मैं सच्चे प्रभु में लीन जीवों पर बलिहार हूँ; वे रात-दिन जाग्रतावस्था में रहकर परमात्मा का गुण गाते हैं। उनके भीतर सदा सच्चा सुख पनपता है और उनकी जिह्वा हरि-रस में पगी रहती है ॥ ६ ॥ मैं हरि-नाम का स्मरण करता हूँ, अन्य किसी पर मेरा विश्वास नहीं। मैं उसी एक सामर्थ्य की सेवा में हूँ, अन्य किसी दूसरे से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं। पूर्णसतिगुरु ही सत्य का उद्घाटन करते तथा जीव को सत्यनाम में संलग्न करते हैं ॥ ७ ॥ न जाने कहाँ-कहाँ तथा किस-किस योनि में भटककर यहाँ आया है। अपने को तो भूला ही है, ख़सम (प्रभु-प्रियतम) को भी भुलाया है। यदि प्रभु से साक्षात्कार हो जाय तो जीव गुरु के द्वारा अपने को संयत कर अविनाशी शब्द की सूझ प्राप्त करता है ॥ ८ ॥ हम (जीवों) में काम-क्रोध पूर्ण अपराध-भावना बनी है, हम क्या मुँह लेकर कुछ कहें! हममें न तो कोई गुण है और न ही हमने प्रभु की सेवा कमाई है। हे सच्चे अविनाशी नाम वाले प्रभु, पापों के कारण पत्थर-सम बोझिल हम डूब रहे हैं, हमारी रक्षा करो ॥ ९ ॥ (हममें कोई) कुछ नहीं करता, न ही हममें कर सकने का सामर्थ्य है, हे परमात्मा, तुम स्वयं ही जो करते हो, वही होता है। यदि तुम्हारी दया हो, तभी जीव सुखी हो सकता और सदैव हरि-नाम में प्रवृत्त रह सकता है ॥ १० ॥ इस शरीर रूपी धरती में अनन्त हरि-नाम का बीज डालो। हरि के सच्चे नाम का ही व्यापार करो। (इस सत्य के व्यापार में) सत्य-धन का लाभ होगा और अन्तर्मन में हरि-नाम का वास होगा ॥ ११ ॥ हे प्रभु, मुझ अवगुणी में कुछ गुण दें, अपने-आप कृपापूर्वक मुझे अपना नाम-रहस्य प्रदान करें। गुरु-आदेशानुसार आचरण करनेवाले को प्रतिष्ठा मिलती है और वह कैवल्य (हरिनाम-मग्न) स्थिति को प्राप्त करता है ॥ १२ ॥ हरि-धन (प्रभु का स्वरूप) जीव के भीतर ही विद्यमान है, किन्तु जीव को मालूम नहीं; गुरु-कृपा से ही कोई इस तथ्य से परिचित हो पाता है। कोई गुरु का अनुसरण करनेवाला ही भीतर से हरि-धन को प्राप्त करता और उसी में लीन होता है ॥ १३ ॥

मनुष्य तृष्णा रूपी अग्नि तथा वासना रूपी पवन के झकोरों में ही भटकता रहता है; मोह-माया में फँसा अपनी सुध-बुध खोया रहता है। वह मनमुख अज्ञानांध होने के कारण कुछ नहीं देखता। केवल गुरु का उपदेश माननेवाला ही हरिनाम-आलोक में अन्तर्दृष्टि प्राप्त करता है ॥ १४ ॥ मनमुख जीव अहंकार और माया में खिंचे रहते हैं, वे अपना असली घर (प्रभु-शरण) को नहीं पहचानते और अन्ततः ख्वार होते हैं। वे परनिन्दा तथा चिन्ताओं में जलते रहते और अनन्त दुःखों में निवास करते हैं ॥ १५ ॥ कर्तार (परमात्मा) स्वयं ही दया करे तो गुरु के द्वारा जीव सत्य का ज्ञान पा सकता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव हरि-नाम में संलग्न होते हैं, उनका चित्त निर्मल होता है और वे प्रभु के नाम में निवास करते हैं ॥ १६ ॥ ५ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ एको सेवी सदा थिरु साचा । दूजै लागा सभु जगु काचा । गुरमती सदा सचु सालाही साचे ही साचि पतीजै हे ॥ १ ॥ तेरे गुण बहुते मै एकु न जाता । आपे लाइ लए जगजीवनु दाता । आपे बखसे दे वडिआई गुरमति इहु मनु भीजै हे ॥२॥ माइआ लहरि सबदि निवारी । इहु मनु निरमलु हउमै मारी । सहजे गुण गावै रंगि राता रसना रामु रवीजै हे ॥ ३ ॥ मेरी मेरी करत विहाणी । मनमुखि न बूझै फिरै इआणी । जम कालु घड़ी मुहतु निहाले अनदिनु आरजा छीजै हे ॥ ४ ॥ अंतरि लोभु करै नही बूझै । सिर ऊपरि जम कालु न सूझै । ऐथै कमाणा सु अगै आइआ अंत कालि किआ कीजै हे ॥ ५ ॥ जो सचि लागे तिन साची सोइ । दूजै लागे मनमुखि रोइ । दुहा सिरिआ का खसमु है आपे आपे गुण महि भीजै हे ॥ ६ ॥ गुर कै सबदि सदा जनु सोहै । नाम रसाइणि इहु मनु मोहै । माइआ मोह मैलु पतंगु न लागै गुरमती हरिनामि भीजै है ॥ ७ ॥ सभना विचि वरतै इकु सोई । गुरपरसादी परगटु होई । हउमै मारि सदा सुखु पाइआ नाइ साचै अंम्रितु पीजै हे ॥ ८ ॥ किलबिख दूख निवारणहारा । गुरमुखि सेविआ सबदि वीचारा । सभु किछु आपे आपि वरतै गुरमुखि तनु मनु भीजै हे ॥ ९ ॥ माइआ अगनि जलै संसारे । गुरमुखि निवारै सबदि वीचारे । अंतरि सांति सदा सुखु पाइआ गुरमती नामु लीजै हे ॥ १० ॥

इंद्र इंद्रासणि बैठे जम का भउ पावहि । जमु न छोडै बहु करम कमावहि । सतिगुरु भेटै ता मुकति पाईऐ हरि हरि रसना पीजै हे ।। ११ ।। मनमुखि अंतरि भगति न होई । गुरमुखि भगति सांति सुखु होई । पवित्र पावन सदा है बाणी गुरमति अंतरु भीजै हे ।। १२ ।। ब्रहमा बिसनु महेसु वीचारी । त्रैगुण बधक मुकति निरारी । गुरमुखि गिआनु एको है जाता अनदिनु नामु रवीजै हे ।। १३ ।। बेद पड़हि हरिनामु न बूझहि । माइआ कारणि पड़ि पड़ि लूझहि । अंतरि मैलु अगिआनी अंधा किउकरि दुतरु तरीजै हे ।। १४ ।। बेद बाद सभि आखि वखाणहि । न अंतरु भीजै न सबदु पछाणहि । पुंनु पापु सभु बेदि द्रिड़ाइआ गुरमुखि अंम्रितु पीजै हे ।।१५।। आपे साचा एको सोई । तिसु बिनु दूजा अवरु न कोई । नानक नामि रते मनु साचा सचो सचु रवीजै हे ।। १६ ।। ६ ।।

मैं सदैव एकमात्र हरि का भजन करता हूँ, जो सच्चा और स्थिर है। सारा संसार, जो द्वैत-भाव में लीन है, कच्चा और अस्थिर है। गुरु-मतानुसार परम-सत्य का गुणगान करता हूँ, सच्चे भाव से ही सत्य में आस्था बनती है (जिनके मन में सत्य है, उन्हें ही सत्य में विश्वास होता है) ।। १ ।। हे प्रभु ! तुम्हारे गुण अनन्त हैं, मैंने उनमें से एक भी नहीं पहचाना, (फिर भी) ऐ जगत को जीवन देनेवाले, तुमने मुझ पर कृपा कर शरण दी है। गुरु-मतानुसार मन प्रभु में भीगता है तो प्रभु स्वयं ही कृपा करता और प्रतिष्ठा प्रदान करता है ।। २ ।। माया के प्रवाह को शब्द द्वारा दूर किया है, अहंकार को मारकर मन निर्मल हुआ है और अब सहजावस्था में स्थिर होकर प्रभु का गुण गाता, प्रेम के रंग में लीन, जिह्वा द्वारा निरन्तर राम-नाम भजता है ।। ३ ।। मैं-मेरी के चक्कर में, सारी आयु बीत गयी, मनमुख जीव बुद्धिहीन भटकते रहे किन्तु सत्य को नहीं पहचाना। (और उधर) यमराज अन्तिम घड़ी-मुहूर्त की प्रतीक्षा करता है और रात-दिन आयु घटती जा रही है ।। ४ ।। जीव अन्तर्मन में लोभ चुराए सत्य को नहीं पहचानता, उसे सिर पर गर्जन करता हुआ यम (मृत्यु) नहीं दीख पड़ता। (कर्मानुसार) जो कुछ कर्म किए हैं, वे ही आगे आएँगे, तब अन्तकाल में क्या कर सकेगा ! ।। ५ ।। जो जीव (परम) सत्य में लीन हैं, उन्हें सच्ची शोभा मिलती है। मनमुखी जीव द्वैत-भाव में ही रोते रह जाते हैं। वह परमात्मा दोनों छोरों (लोक-परलोक) का स्वामी है और जीव के सद्‌गुणों पर प्रसन्न होता है ।। ६ ।। जीव सदैव गुरु के शब्द का अनुकरण करने से सुशोभित होता

है, हरि-नाम रूपी उत्तम रस-सिक्ति में मन मोहित होता है। गुरु-मतानुसार इस सरस नाम के मोह के कारण उसे माया की मलिनता नहीं छू पाती ॥ ७ ॥ वह परमात्मा सबमें व्याप्त है, किन्तु उसका प्रत्यक्ष दर्शन गुरु-कृपा से ही होता है (सम्भव होता है)। अहंकार का दमन करके जो हरि-नामामृत का पान करते हैं, वे परम सुख-लाभ करते हैं ॥ ८ ॥ परमात्मा पापों के दुःखों को दूर करनेवाला है (किन्तु वह उसी पर दया करता है, जो) गुरु के द्वारा उसके शब्द-रहस्य को समझता है। गुरुमुख जीव तन-मन से शब्द-रस में विभोर रहता है, (वह जानता है कि) सब कुछ परमात्मा की स्वेच्छा से होता है ॥ ९ ॥ संसार में सब कहीं माया की आग जल रही है। केवल गुरुमुख जीव ही परमात्मा के शब्द का रहस्य जानकर इसे बुझा पाता है। गुरु-मतानुसार हरि-नाम का स्मरण करने से अन्तर्मन में सुख और शान्ति मिलती है ॥ १० ॥ इन्द्र-सरीखे देवराज भी अपने आसन पर मृत्यु के भय से त्रस्त रहते हैं; वे कितने ही उपचार करें, मृत्यु उन्हें नहीं छोड़ती, किन्तु सच्चे गुरु से भेंट हो जाने पर जिह्वा द्वारा हरिनाम-रस-पान करने से मुक्ति मिल जाती है ॥ ११ ॥ मनमुख जीव के मन में भक्ति-भाव नहीं होता, गुरुमुख जीव में भक्ति-भावना के कारण सुख-शान्ति होती है। गुरुमुखों का अन्तर्मन प्रभु-प्रेम से भीगा होता है और उनके वचन सदा पावन होते हैं। (यहाँ गुरुजी ने मनमुख और गुरुमुख जीवों का अन्तर स्पष्ट किया है।) ॥ १२ ॥ ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव भी तीनों गुणों में बँधे रहते हैं, मुक्ति उनसे दूर होती है। गुरुमुख के लिए ज्ञान का स्वरूप परमात्मा की पहचान करने तथा प्रतिदिन हरिनाम-स्मरण करने में निहित है ॥ १३ ॥ (पण्डित-गण) वेदों का पाठ करते हैं, किन्तु हरिनाम-रहस्य को नहीं समझते; माया के कारण वेदों को पढ़-पढ़कर पारस्परिक विवादों में पड़ते हैं। उनके अन्तर्मन में मोह का मैल (अज्ञानांधता) बना रहता है, भला वे इस दुस्तर संसार-सागर को क्योंकर तिर सकते हैं! ॥ १४ ॥ समस्त वेद वैचारिक विवादों का बखान करते हैं, जिससे न तो उनका हृदय शान्त होता है और न ही उन्हें प्रभु की इच्छा का रहस्य पता चलता है। वेदों में तो केवल पाप-पुण्य का दर्शन ही सुझाया गया है, किन्तु गुरुमुख का लक्ष्य हरिनामामृत-पान होता है ॥ १५ ॥ वह परमात्मा ही एकमात्र सत्य है, उसके बिना दूसरा अन्य कोई नहीं है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम में रत होने से मन में सत्य व्याप्त होता है और जीव सर्वदा सत्य का ही स्मरण करने लगता है ॥ १६ ॥ ६ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ सचै सचा तखतु रचाइआ । निज घरि वसिआ तिथै मोहु न माइआ । सद ही साचु वसिआ

घट अंतरि गुरमुखि करणी सारी हे ।। १ ।। सचा सउदा सचु वापारा । न तिथै भरमु न दूजा पसारा । सचा धनु खटिआ कदे तोटि न आवै बूझै को वीचारी हे ।। २ ।। सचै लाए से जन लागे । अंतरि सबदु मसतकि वडभागे । सचै सबदि सदा गुण गावहि सबदि रते वीचारी हे ।। ३ ।। सचो सचा सचु सालाही । एको वेखा दूजा नाही । गुरमति ऊचो ऊची पउड़ी गिआनि रतनि हउमै मारी हे ।। ४ ।। माइआ मोहु सबदि जलाइआ । सचु मनि वसिआ जा तुधु भाइआ । सचे की सभ सची करणी हउमै तिखा निवारी हे ।। ५ ।। माइआ मोहु सभु आपे कीना । गुरमुखि विरलै किनही चीना । गुरमुखि होवै सु सचु कमावै साची करणी सारी हे ।। ६ ।। कार कमाई जो मेरे प्रभ भाई । हउमै त्रिसना सबदि बुझाई । गुरमति सद ही अंतरु सीतलु हउमै मारि निवारी हे ।। ७ ।। सचि लगे तिन सभु किछु भावै । सचै सबदे सचि सुहावै । ऐथै साचे से दरि साचे नदरी नदरि सवारी हे ।।८।। बिनु साचे जो दूजै लाइआ । माइआ मोह दुख सबाइआ । बिनु गुर दुखु सुखु जापै नाही माइआ मोह दुखु भारी हे ।। ९ ।। साचा सबदु जिना मनि भाइआ । पूरबि लिखिआ तिनी कमाइआ । सचो सेवहि सचु धिआवहि सचि रते वीचारी हे ।।१०।। गुर की सेवा मीठी लागी । अनदिनु सूख सहज समाधी । हरि हरि करतिआ मनु निरमलु होआ गुर की सेव पिआरी हे ।। ११ ।। से जन सुखीए सतिगुरि सचे लाए । आपे भाणे आपि मिलाए । सतिगुरि राखे से जन उबरे होर माइआ मोह खुआरी हे ।। १२ ।। गुरमुखि साचा सबदि पछाता । ना तिसु कुटंबु ना तिसु माता । एको एकु रविआ सभ अंतरि सभना जीआ का आधारी हे ।। १३ ।। हउमै मेरा दूजा भाइआ । किछु न चलै धुरि खसमि लिखि पाइआ । गुर साचे ते साचु कमावहि साचै दूख निवारी हे ।। १४ ।। जा तू देहि सदा सुखु पाए । साचै सबदे साचु कमाए । अंदरु साचा मनु तनु साचा भगति भरे भंडारी हे ।। १५ ।। आपे वेखै हुकमि चलाए । अपणा भाणा आपि

कराए। नानक नामि रते बैरागी मनु तनु रसना नामि सवारी हे॥ १६॥ ७॥

सत्यस्वरूप परमात्मा ने अपने स्वरूप में ही अपना स्थान बनाया है; वह अपने निज स्वरूप में ही बसा है, जहाँ मोह-माया कुछ भी नहीं। गुरु के द्वारा श्रेष्ठ कृत्यों की प्रवृत्ति के कारण हृदय में वह सत्यस्वरूप प्रभु स्वयं बस जाता है॥ १॥ (तब जीव) सत्य की पूँजी से सत्य का व्यापार करता एवं द्वैत-भाव तथा भ्रम से मुक्त हो जाता है। सत्य का लाभ कमाने से कभी कमी नहीं पड़ती —यह तथ्य कोई विवेकशील व्यक्ति ही जान पाता है॥ २॥ सत्यस्वरूप प्रभु जिन जीवों को शरण में लेता है, वही उस दिशा में प्रवृत्त होते हैं। उनके भीतर परमात्मा का शब्द ध्वनित होता एवं मस्तक पर शुभ भाग्य-रेखाएँ उभरती हैं। वे विवेक-पूर्वक शब्द में रत होते एवं सदैव सत्यस्वरूप परमात्मा के गुण गाते हैं॥३॥ जो निश्चय करके सत्यस्वरूप परमात्मा का गुणगान करता है और एकमात्र प्रभु को ही देखता एवं द्वैत का तिरस्कार करता है। वह गुरु-मतानुसार अहम्-भाव को मारकर ज्ञान की उच्चतर सीढ़ी पर चढ़ जाता है॥ ४॥ (वह) प्रभु के शब्द द्वारा मोह-माया को जलाता है; जब प्रभु की कृपा होती है, तभी मन में सत्य का वास होता है। सच्चे परमात्मा की समूची रचना सच्ची है, वह अहम् की तृष्णा दूर करता है॥ ५॥ माया-मोह की रचना भी उसने स्वयं की है; (इस तथ्य को) कोई विरला गुरुमुख ही जान पाता है। गुरुमुख जीव सत्य की कमाई करते हैं, उनकी समूची करनी श्रेष्ठ होती है॥ ६॥ हे भाई, मेरे प्रभु ने जो रचना रचाई है, उसमें गुरु-शब्द के द्वारा अहम् की तृष्णा बुझाई जा सकती है। गुरु-मतानुसार अहम्-भाव का निवारण होता है और हृदय में सदा शीतलता आती है॥ ७॥ जो जीव सत्य में संलग्न होते हैं, उन्हें सब कुछ रुचता है। वे परमात्मा के सच्चे शब्द में विचरते और सत्य में ही शोभा पाते हैं। वे यहाँ सत्यमय होते हैं, प्रभु के द्वार पर भी सत्य द्वारा उनका स्वागत होता है। कृपालु परमात्मा कृपा-दृष्टि द्वारा उन्हें सँवार लेता है॥ ८॥ सच्चे के अतिरिक्त जो द्वैत-भाव में लीन होते हैं, वे मोह-माया के दुःखों में सर्वत्र घिरे रहते हैं। मोह-माया के दुःख भारी हैं, गुरु के बिना सुख-दुःख के कारणों को नहीं जाना जाता॥ ९॥ जिनके मन में प्रभु का शब्द रुचता है, वह पूर्व कर्मों का ही फल होता है। वे सत्यस्वरूप प्रभु की सेवा करते, सत्य का ध्यान करते और सदैव सत्य में ही रत रहते हैं॥ १०॥ उन्हें गुरु की सेवा मधुर लगती है, रात-दिन वे सुख पाते और सहज समाधि में लीन रहते हैं। हरि-हरि नाम-स्मरण करने से उनका मन निर्मल होता है और उन्हें गुरु की भक्ति प्यारी होती

है ॥ ११ ॥ जो जीव सच्चे सतिगुरु की शरण लेते हैं, वे परम सुखी होते हैं। परमात्मा स्वेच्छा से उन्हें अपने में लीन कर लेता है। सतिगुरु जिनकी रक्षा करता है, वे उबरते हैं, अन्य सब मोह-माया में ख्वार होते हैं ॥ १२ ॥ गुरुमुख परमात्मा को शब्द द्वारा पहचानते हैं। (स्वयम्भू प्रभु का) न तो कोई कुटुम्ब है और न ही उसकी कोई जननी है। वह एकमात्र परमात्मा ही सबमें व्याप्त है और वही सब जीवों का सहारा है ॥ १३ ॥ अहंकार तथा ममत्व द्वैत-भाव के अंग हैं। इनमें से कुछ भी साथ नहीं चलता —यह बात आरम्भ से ही प्रभु ने व्यक्त कर दी है। सच्चे गुरु की शरण लेकर जो जीव सत्य की कमाई करते हैं, उनका दुःख दूर हो जाता है ॥ १४ ॥ हे प्रभु, जिसे तुम देते हो, वह सदा सुख पाता है। वह सच्चे शब्द में रत होकर सत्य की कमाई करता है। उसके हृदय में सत्य व्याप्त होता है, उसका तन-मन सत्य में भीगता है और वह परमसत्य की भक्ति में लीन होता है ॥ १५ ॥ परमात्मा अपने-आप सब पर दृष्टि रखता और सब पर अपना हुक्म चलाता है। अपनी स्वेच्छा वह सब पर लागू करता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम में रत रहने वाले प्रेमी जीव जिह्वा द्वारा हरिनाम-स्मरण करते हुए तन-मन को सँवार लेते हैं ॥ १६ ॥ ७ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ आपे आपु उपाइ उपंना। सभ महि वरतै एकु परछंना। सभना सार करे जगजीवनु जिनि अपणा आपु पछाता हे ॥ १ ॥ जिनि ब्रहमा बिसनु महेसु उपाए। सिरि सिरि धंधै आपे लाए। जिसु भावै तिसु आपे मेले जिनि गुरमुखि एको जाता हे ॥२॥ आवागउणु है संसारा। माइआ मोहु बहु चितै बिकारा। थिरु साचा सालाही सदही जिनि गुर का सबदु पछाता हे ॥ ३ ॥ इकि मूलि लगे ओनी सुखु पाइआ। डाली लागे तिनी जनमु गवाइआ। अंम्रित फल तिन जन कउ लागे जो बोलहि अंम्रित बाता हे ॥ ४ ॥ हम गुण नाही किआ बोलह बोल। तू सभना देखहि तोलहि तोल। जिउ भावै तिउ राखहि रहणा गुरमुखि एको जाता हे ॥ ५ ॥ जा तुधु भाणा ता सची कारै लाए। अवगण छोडि गुण माहि समाए। गुण महि एको निरमलु साचा गुर कै सबदि पछाता हे ॥ ६ ॥ जह देखा तह एको सोई। दूजी दुरमति सबदे खोई। एकसु महि प्रभु एकु समाणा अपणै रंगि सद राता हे ॥ ७ ॥ काइआ कमलु है कुमलाणा। मनमुखु सबदु न

बुझै इआणा। गुरपरसादी काइआ खोजे पाए जगजीवनु दाता हे ॥ ८ ॥ कोट गही के पाप निवारे। सदा हरि जीउ राखै उरधारे। जो इछे सोई फलु पाए जिउ रंगु मजीठै राता हे ॥९॥ मनमुखु गिआनु कथे न होई। फिरि फिरि आवै ठउर न कोई। गुरमुखि गिआनु सदा सालाहे जुगि जुगि एको जाता हे ॥ १० ॥ मनमुखु कार करे सभि दुख सबाए। अंतरि सबदु नाही किउ दरि जाए। गुरमुखि सबदु वसै मनि साचा सद सेवे सुखदाता हे ॥ ११ ॥ जह देखा तू सभनी थाई। पूरै गुरि सभ सोझी पाई। नामो नामु धिआईऐ सदा सद इहु मनु नामे राता हे ॥ १२ ॥ नामे राता पवितु सरीरा। बिनु नावै डूबि मुए बिनु नीरा। आवहि जावहि नामु नही बूझहि इकना गुरमुखि सबदु पछाता हे ॥ १३ ॥ पूरै सतिगुरि बूझ बुझाई। विणु नावै मुकति किनै न पाई। नामे नामि मिलै वडिआई सहजि रहै रंगि राता हे ॥ १४ ॥ काइआ नगरु ढहै ढहि ढेरी। बिनु सबदै चूकै नही फेरी। साचु सलाहे साचि समावै जिनि गुरमुखि एको जाता हे ॥ १५ ॥ जिस नो नदरि करे सो पाए। साचा सबदु वसै मनि आए। नानक नामि रते निरंकारी दरि साचै साचु पछाता हे ॥ १६ ॥ ८ ॥

परमात्मा स्वयम्भू है, उसने अपने को स्वयं प्रकट किया है। वह प्रच्छन्न रूप में सबमें व्याप्त है। जिस मनुष्य ने अपने यथार्थ को पहचाना है, वह जानता है कि परमात्मा जगत का जीवन बनकर सबकी रक्षा करता है ॥ १ ॥ जिसने (हरि ने) ब्रह्मा, विष्णु और शिव उत्पन्न किए हैं, उसी ने सबको अपने-अपने धन्धे में लगाया है। जो गुरु के द्वारा उस एक का ज्ञान पा लेता है, उसे वह स्वेच्छापूर्वक अपने में लीन करता है ॥ २ ॥ सारा संसार जीवन-मरण के चक्र में है; मोह-माया में पड़ा अनेक विकारों का चिन्तन करता है। (किन्तु) जिसने गुरु का शब्द समझा है (रहस्य प्राप्त किया है), वह सच्चे परमात्मा को सदैव स्थायी शक्ति स्वीकार करता है ॥ ३ ॥ कुछ जीव जो मूल में परमात्मा की शरण लेते हैं, उन्हें सुख प्राप्त होता है। किन्तु जो (मूल को छोड़कर) शाखाओं अर्थात् बाहरी तत्त्वों का सहारा लेते हैं, वे जीवन में पराजित होते हैं। अमृत-फल उन्हीं जीवों को नसीब होता है, जो अमृतमयी वाणी (हरिनामोच्चारण) बोलते हैं ॥ ४ ॥ हममें कोई गुण नहीं, हम क्या कहें ? तुम सबको देखते-जाँचते हो और उनके कर्मों का हिसाब-किताब

रखते हो। तुम्हें जैसा रुचता है, वैसा ही सबको रखते हो। गुरु के द्वारा ही तुम्हें एक रूप में जाना जाता है ॥ ५ ॥ जब तुम्हें स्वीकार होता है, तभी सत्य-मार्ग पर लगाते हो। तब जीव अवगुणों से मुक्त होकर गुण-युक्त होता है। गुरु के शब्द को पहचानकर जीव गुण के अन्तर्गत उस सत्यस्वरूप निर्मल प्रभु को देखता है ॥ ६ ॥ जिधर देखें, उधर वही एक विद्यमान है। द्वैत की कुबुद्धि शब्द द्वारा नष्ट हुई है। मन (द्वैत को छोड़कर) एक परमात्मा को माननेवाली स्थिति में आया और उसमें वह हरि स्वयं आकर समा गया है ॥ ७ ॥ (दूसरी ओर मनमुख की स्थिति से तुलना करते हैं।) काया-कमल अर्थात् शरीर जर्जरित होता है, मनमुख जीव दुर्बुद्धि के कारण गुरु के शब्द को नहीं पहचानता। यदि वह भी गुरु की कृपा से अपने भीतर ही खोज करे तो उसे जगत का जीवन परमात्मा प्राप्त हो जाय ॥ ८ ॥ पापों से भरे शरीर रूपी दुर्ग में से जो पापों को निरस्त करता है और सदा हरि को हृदय में धारण करता है। वह इच्छापूर्वक फल पाता है— उस पर आध्यात्मिकता का पक्का रंग चढ़ता है ॥ ९ ॥ प्रभु से विमुख व्यक्ति ज्ञान की बातें करता है किन्तु उसे ज्ञान नहीं होता; वह बार-बार जन्म लेता है किन्तु उसे (मोक्ष) स्थान नहीं मिलता। गुरुमुख का ज्ञान यह है कि वह सदा हरि का गुणगान करता एवं सदैव एक प्रभु को व्याप्त देखता है ॥ १० ॥ मनमुख जीव कर्म करते हुए सब प्रकार के दुःखों को झेलता है। उसके भीतर शब्द का ज्ञान नहीं, वह हरि के द्वार पर क्योंकर जाय ? गुरुमुख के मन में सत्यस्वरूप परमात्मा का शब्द वास करता है और वह सदैव सुखदाता परमात्मा की सेवा में लीन रहता है ॥ ११ ॥ जिधर देखता हूँ, सब जगह तुम ही व्याप्त हो; यह सूझ मुझे पूर्णगुरु से प्राप्त हुई है। जब मेरा मन नाम-रंग में रँग गया है और मैं सदा हरि-नाम की उपासना करता हूँ ॥ १२ ॥ हरि-नाम में रत रहने से शरीर पवित्र होता है, नाम-विहीन जीव बिना पानी के डूब मरते हैं। वे आवागमन में पड़े हैं, हरि-नाम की सूझ उन्हें प्राप्त नहीं, किन्तु अन्य जीवों को गुरु के द्वारा शब्द की पहचान हो गई है ॥ १३ ॥ सच्चे सतिगुरु ने यह ज्ञान दिया है कि हरि-नाम के बिना किसी को मुक्ति नहीं मिलती। हरि-नाम में रत जीव को प्रतिष्ठा मिलती है और वह सहज में ही प्रभु-प्रेम में रँग जाता है ॥ १४ ॥ शरीर की नगरी अन्ततः खण्डहर हो जाती है (शरीर जर्जरित हो जाता है), किन्तु शब्द-रहस्य को समझे बग़ैर आवागमन का निस्तार नहीं होता। जो गुरु के द्वारा एक ब्रह्म का ज्ञान पा लेता है, वह सत्यस्वरूप परमात्मा का गुणगान करता एवं उसी में समा जाता है ॥ १५ ॥ जिस पर, हे प्रभु, तुम्हारी कृपा होती है, उसके हृदय में तुम्हारा सच्चा शब्द निवास करता है। गुरु नानक कहते

हैं कि हरि-नाम में रत रहनेवाले जीव मायातीत होकर सत्यस्वरूप परमात्मा को पहचानते और उसी के दरबार में प्रतिष्ठित होते हैं ॥ १६ ॥८॥

॥ मारू सोलहे ॥ आपे करता सभु जिसु करणा । जीअ जंत सभि तेरी सरणा । आपे गुपतु वरतै सभ अंतरि गुर कै सबदि पछाता हे ॥ १ ॥ हरि के भगति भरे भंडारा । आपे बखसे सबदि वीचारा । जो तुधु भावै सोई करसहि सचे सिउ मनु राता हे ॥ २ ॥ आपे हीरा रतनु अमोलो । आपे नदरी तोले तोलो । जीअ जंत सभि सरणि तुमारी करि किरपा आपि पछाता हे ॥ ३ ॥ जिस नो नदरि होवै धुरि तेरी । मरै न जंमै चूकै फेरी । साचे गुण गावै दिनु राती जुगि जुगि एको जाता हे ॥ ४ ॥ माइआ मोहि सभु जगतु उपाइआ । ब्रहमा बिसनु देव सबाइआ । जो तुधु भाणे से नामि लागे गिआनमती पछाता हे ॥ ५ ॥ पाप पुंन वरतै संसारा । हरखु सोगु सभु दुखु है भारा । गुरमुखि होवै सो सुखु पाए जिनि गुरमुखि नामु पछाता हे ॥ ६ ॥ किरतु न कोई मेटणहारा । गुर कै सबदे मोख दुआरा । पूरबि लिखिआ सो फलु पाइआ जिनि आपु मारि पछाता हे ॥ ७ ॥ माइआ मोहि हरि सिउ चितु न लागै । दूजै भाइ घणा दुखु आगै । मनमुख भरमि भुले भेखधारी अंतकालि पछुताता हे ॥ ८ ॥ हरि कै भाणै हरि गुण गाए । सभि किलबिख काटे दूख सबाए । हरि निरमल निरमल है बाणी हरि सेती मनु राता हे ॥ ९ ॥ जिस नो नदरि करे सो गुण निधि पाए । हउमै मेरा ठाकि रहाए । गुण अवगण का एको दाता गुरमुखि विरली जाता हे ॥ १० ॥ मेरा प्रभु निरमलु अति अपारा । आपे मेलै गुर सबदि वीचारा । आपे बखसे सचु द्रिड़ाए मनु तनु साचै राता हे ॥ ११ ॥ मनु तनु मैला विचि जोति अपारा । गुरमति बूझै करि वीचारा । हउमै मारि सदा मनु निरमलु रसना सेवि सुखदाता हे ॥ १२ ॥ गड़ काइआ अंदरि बहु हट बाजारा । तिसु विचि नामु है अति अपारा । गुर कै सबदि सदा दरि सोहै हउमै मारि पछाता हे ॥ १३ ॥ रतनु अमोलकु अगम अपारा । कीमति कवणु करे वेचारा । गुर कै सबदे तोलि तोलाए अंतरि सबदि पछाता

हे ।। १४ ।। सिम्रिति सासत्र बहुतु बिसथारा । माइआ मोहु पसरिआ पासारा । मूरख पड़हि सबदु न बूझहि गुरमुखि विरलै जाता हे ।। १५ ।। आपे करता करे कराए । सची बाणी सचु द्रिड़ाए । नानक नामु मिलै वडिआई जुगि जुगि एको जाता हे ।। १६ ।। ६ ।।

हे परमात्मा, तुम स्वयं सब कुछ करने तथा बनानेवाले हो, जीव-जन्तु सब तुम्हारी शरण में हैं। तुम स्वयं गुप्त भाव से सबके भीतर व्याप्त हो और केवल गुरु के उपदेश पर आचरण करने से ही पहचान में आते हो ।। १ ।। हे प्रभु, जिनको तुमने शब्द के विचार की शक्ति दी है, वे तुम्हारी भक्ति के भरे हुए भण्डार हैं। तुम्हारे सत्यस्वरूप में उनका मन रत रहता है और वे वही करते हैं, जो तुम्हें रुचिकर होता है ।। २ ।। अमूल्य हीरे-रत्नों के रूप में भी, हे हरि, तुम ही हो और अपनी कृपा-दृष्टि से उनका मूल्यांकन करनेवाले भी तुम हो। सभी जड़-चेतन जीव तुम्हारी शरण में हैं, कृपापूर्वक ही तुम अपने को उन पर प्रकट करते हो ।। ३ ।। जिस पर शुरू से ही तुम्हारी कृपा होती है, उसका जन्म-मरण का चक्र चुक जाता है। वह तुम्हारे सत्यस्वरूप के रात-दिन गुण गाता और युग-युग से तुम्हीं एक से जानकारी रखता है ।। ४ ।। माया, मोह और यह विश्व, सब कुछ (प्रभु ने स्वयं) पैदा किए हैं। ब्रह्मा, विष्णु तथा अन्य सब देवता भी उसी ने बनाए हैं। (इनमें से) जो तुम्हें प्रिय हुए, वे नाम-रंग में रच गए; उन्होंने सही ज्ञान (गुरुमत) द्वारा तुम्हें पहचान लिया ।। ५ ।। संसार में पाप और पुण्य का प्रसार है, हर्ष-शोक तथा सुख-दुःख का बाज़ार गर्म है। जो गुरु के द्वारा हरि-नाम को पहचानता है, वही गुरुमुख परम सुख को प्राप्त होता है ।। ६ ।। कर्मालेख कोई नहीं मिटा सकता, गुरु-मतानुसार आचरण ही मोक्ष का द्वार है। जो जीव अहम् का त्याग कर उसे पहचानते हैं, वे पूर्वलिखित फल प्राप्त करते हैं ।। ७ ।। माया-मोह के कारण जीवों का चित्त हरि में नहीं लगता; वे द्वैत-भाव में गहरा दुःखी होते हैं। वे मनमुखी जीव भ्रमों और कपट-वेषों में भटकते रहते हैं और अन्तकाल पछताते हैं ।। ८ ।। जो जीव हरि की रुचि के अनुसार उसका गुणगान करते हैं, उनके सब दुःख-पाप कट जाते हैं। परमात्मा निर्मल है, उसका शब्द भी निर्मल है, ऐसे निर्मल हरि के संग उनका मन प्रेम-मग्न होता है ।। ९ ।। जिस पर परमात्मा कृपा करता है, उसे गुण-निधि परमात्मा की प्राप्ति होती है। उसका अहम्-भाव तथा ममत्व रुद्ध होता है। वह परमात्मा ही गुण-अवगुण का देनेवाला है —इस तथ्य की जानकारी कोई विरला गुरुमुख ही रखता है ।। १० ।। मेरा परमात्मा अपार निर्मलता का कोष है। गुरु के

उपदेशों पर विचार करने से ही वह मिलता है। वही कृपापूर्वक जीवों में सत्य को पक्का करता एवं तन-मन सत्य के प्रेम में रँग देता है ॥ ११ ॥ यद्यपि मनुष्य का मन-तन मलिन है, फिर भी उसके भीतर की ज्योति अपार प्रकाशमान् है। इस तथ्य को कोई गुरुमत पर विचार करके ही जान सकता है। अहम्-भाव को मार देने से मन सदा निर्मल होता है और जिह्वा से उस सुखदाता प्रभु की सेवा (नाम-स्मरण) होती है ॥ १२ ॥ शरीर रूपी दुर्ग में मन, बुद्धि आदि अनेक हाट-बाज़ार हैं, उनमें हरि-नाम सामग्री का अपार व्यापार होता है। जो जीव अहम् को मार लेते हैं, वे गुरु के शब्द पर विचार करने से प्रभु के हुज़ूर में सुशोभित होते हैं ॥१३॥ अगम अपार परमेश्वर अमूल्य रत्न है, कौन विचारवान् उसका मोल डाल सकता है? उसे गुरु के शब्द से ही तोला जा सकता है— जिसने अन्तर्मन में शब्द के रहस्य को पहचान लिया है (वही सही तौर पर उसका मूल्यांकन कर सकता है) ॥ १४ ॥ शास्त्रों-स्मृतियों आदि में उसकी विस्तृत व्याख्याएँ हैं, किन्तु मोह-माया के व्यापक प्रसार के कारण मूर्ख जीव उन्हें पढ़ते तो हैं, उनका रहस्य नहीं समझते। कोई विरला गुरुमुख ही उसे जानता-समझता है ॥ १५ ॥ वह परमात्मा अपने-आप करने-कराने में समर्थ है, वही सच्ची वाणी के द्वारा यथार्थ को प्रकट करता है। गुरु नानक कहते हैं कि युग-युग से वही एक विचरता है, किन्तु प्रतिष्ठा हरि-नाम जपनेवाले की ही होती है ॥ १६ ॥ ९ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ सो सचु सेविहु सिरजणहारा। सबदे दूख निवारणहारा। अगमु अगोचरु कीमति नही पाई आपे अगम अथाहा हे ॥ १ ॥ आपे सचा सचु वरताए। इकि जन साचै आपे लाए। साचो सेवहि साचु कमावहि नामे सचि समाहा हे ॥ २ ॥ धुरि भगता मेले आपि मिलाए। सची भगती आपे लाए। साची बाणी सदा गुण गावै इसु जनमै का लाहा हे ॥ ३ ॥ गुरमुखि वणजु करहि परु आपु पछाणहि। एकस बिनु को अवरु न जाणहि। सचा साहु सचे वणजारे पूंजी नामु विसाहा हे ॥ ४ ॥ आपे साजे स्रिसटि उपाए। विरले कउ गुर सबदु बुझाए। सतिगुरु सेवहि से जन साचे काटे जम का फाहा हे ॥ ५ ॥ भंनै घड़े सवारे साजे। माइआ मोहि दूजै जंत पाजे। मनमुख फिरहि सदा अंधु कमावहि जम का जेवड़ा गलि फाहा हे ॥ ६ ॥ आपे बखसे गुर सेवा लाए। गुरमती नामु मंनि वसाए। अनदिनु नामु धिआए साचा इसु

जग महि नामो लाहा हे ॥ ७ ॥ आपे सचा सची नाई। गुरमुखि देवै मंनि वसाई। जिन मनि वसिआ से जन सोहहि तिन्न सिरि चूका काहा हे ॥ ८ ॥ अगम अगोचरु कीमति नही पाई। गुरपरसादी मंनि वसाई। सदा सबदि सालाही गुण दाता लेखा कोइ न मंगै ताहा हे ॥ ९ ॥ ब्रहमा बिसनु रुद्रु तिस की सेवा। अंतु न पावहि अलख अभेवा। जिन कउ नदरि करहि तू अपणी गुरमुखि अलखु लखाहा हे ॥ १० ॥ पूरै सतिगुरि सोझी पाई। एको नामु मंनि वसाई। नामु जपी तै नामु धिआई महलु पाइ गुण गाहा हे ॥ ११ ॥ सेवक सेवहि मंनि हुकमु अपारा। मनमुख हुकम न जाणहि सारा। हुकमे मंने हुकमे वडिआई हुकमे वेपरवाहा हे ॥ १२ ॥ गुरपरसादी हुकमु पछाणै। धावतु राखै इकतु घरि आणै। नामे राता सदा बैरागी नामु रतनु मनि ताहा हे ॥ १३ ॥ सभ जग महि वरतै एको सोई। गुरपरसादी परगटु होई। सबदु सलाहहि से जन निरमल निज घरि वासा ताहा हे ॥ १४ ॥ सदा भगत तेरी सरणाई। अगम अगोचर कीमति नही पाई। जिउ तुधु भावै तिउ तू राखहि गुरमुखि नामु धिआहा हे ॥ १५ ॥ सदा सदा तेरे गुण गावा। सचे साहिब तेरै मनि भावा। नानकु साचु कहै बेनंती सचु देवहु सचि समाहा हे ॥१६॥१॥१०॥

सत्यस्वरूप हरि सब कुछ स्वयं करता है, उसी की आराधना करो। वही गुरु के उपदेश द्वारा दुःखों को दूर करनेवाला है। वह अगम, अगोचर, अमूल्य है, वह अपने-आप में अगम और अथाह है ॥ १ ॥ वह सत्यस्वरूप परमात्मा सब ओर सत्य का विस्तार करता है। वही सेवकों को सत्य में प्रवृत्त करता है। हरि-नाम के सहारे जो जीव सत्य की उपासना करते, सत्य की कमाई करते हैं, वे अन्ततः सत्य में ही समा जाते हैं ॥ २ ॥ भक्तों की सत्संगति में वह स्वयं मिलता है, वही जीवों को सच्ची भक्ति में प्रवृत्त करता है। जो भगवान् के गुण गाते हैं, उनकी वाणी भी सत्य होती है और उन्होंने ही इस जन्म का सही लाभ उठाया होता है ॥ ३ ॥ गुरु-उपदेशानुसार आचरण करनेवाले अपने-आप को पहचानते हैं। उस एक ब्रह्म के अतिरिक्त वे अन्य किसी को नहीं जानते। उनका साहूकार (परमात्मा) तथा हरि-नाम की पूँजी दोनों सच्चे होते हैं, इसलिए उनका व्यापार (आचरण) भी सत्य का होता है ॥ ४ ॥ वह परमात्मा अपने-आप ही सृष्टि उत्पन्न करता है, सबको बनाता है। किन्तु

कोई विरला ही गुरु के ज्ञान द्वारा उसे समझता है। जो सत्य-प्रेमी जीव सतिगुरु की सेवा करते हैं, वे यम की फाँसी काट देते हैं (उनका मृत्यु-फन्दा कट जाता है) ॥ ५ ॥ परमात्मा अपने-आप तोड़ता, बनाता, सँवारता और सजाता है। सब जीवों को उसने माया-मोह और द्वैत-भाव में प्रवृत्त किया है। वे मनमुखी जीव अज्ञानान्धकार में भटकते फिरते हैं और उनके गले में सदा यम (मृत्यु) की शृंखला बँधी रहती है ॥ ६ ॥ उसकी रुचि हो तो वह स्वेच्छा से कृपापूर्वक किसी को गुरु की सेवा में प्रवृत्त करता है; गुरु के उपदेश द्वारा हरि-नाम उसके मन बसता है और वह रात-दिन उस सत्यनाम का ध्यान करने लगता है। इस जगत में हरि-नाम ही एकमात्र सच्ची कमाई है ॥ ७ ॥ परमात्मा सत्यस्वरूप है, उसका गुणगान भी सत्य है। गुणगान का यह सामर्थ्य गुरुमुख को प्राप्त है, जो इसे (हरि-नाम के गुणगान को) मन में बसाकर सुशोभित होते हैं, उन पर कोई विपत्ति नहीं रह जाती ॥ ८ ॥ परमात्मा मन-इन्द्रियों का विषय नहीं, कोई उसका मोल नहीं जान पाया। केवल गुरु-कृपा से ही वह जन के मन में बसता है। उस गुणों के दाता प्रभु के शब्द का सदा गुणगान करो, उससे कोई हिसाब-किताब नहीं माँगता ॥ ९ ॥ ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव उसी की सेवा में रत हैं, (फिर भी) उस परमात्मा का अन्त कोई नहीं पा सका। वह अदृश्य और अगम्य है। जिन पर तुम्हारी कृपा-दृष्टि होती है, वह गुरु के द्वारा उस अदृश्य को भी प्रकट में प्राप्त करता है ॥ १० ॥ जीव को पूर्णसतिगुरु से ही ज्ञान मिलता है; तब उस एक ब्रह्म का नाम मन में बसता है। नाम का ध्यान करने तथा नाम जपने से जीव प्रभु के गुणों पर विचार करते हुए परमात्मा-पति के महलों में प्रवेश करता है ॥ ११ ॥ सेवक बनकर जीव को उसके हुक्मानुसार सेवा-रत रहना है, मनमुख उसका हुक्म नहीं पहचानते, (किन्तु) हुक्म माननेवाले उसकी इच्छानुसार प्रतिष्ठा प्राप्त करते हैं— हुक्म के सामर्थ्य वाला स्वयं बे-परवाह है ॥ १२ ॥ हुक्म-रहस्य की पहचान गुरु की कृपा से होती है। वह चंचल मन को संयत करके एकाग्र स्थिर करता है। हरि-नाम में रत रहनेवाला प्रभु-प्रेमी सदा मन में नाम-स्मरण करता है ॥ १३ ॥ वह परमात्मा सारे संसार में व्याप्त है, (किन्तु) गुरु की कृपा से ही प्रकट होता है। जो जीव प्रभु-शब्द का गुण गाते हैं, वे निर्मल होते हैं, अपने सच्चे घर में उनका वास होता है (वे मुक्त हो जाते हैं) ॥ १४ ॥ भक्तजन सदा तुम्हारी शरण लेते हैं; (तुम) मन-इन्द्रियों से परे हो और जन तुम्हारा सही मोल नहीं जानते। जैसा तुम्हें रुचता है, वैसा तुम रखते हो; भक्त जीव गुरु के द्वारा ही तुम्हारी नामोपासना करते हैं ॥ १५ ॥ मैं, हे प्रभु, सदा तुम्हारे गुण गाऊँ और हे मेरे स्वामी,

(इसी तरह) तुम्हारे मन को आकर्षित कर सकूँ, तो गुरु नानक सत्य कहते हैं कि सत्य का ज्ञान दो ताकि मैं उसी सत्य में समा जाऊँ ॥१६॥१॥१०॥

॥ मारू महला ३ ॥ सतिगुरु सेवनि से वडभागी। अनदिनु साचि नामि लिव लागी। सदा सुखदाता रविआ घट अंतरि सबदि सचै ओमाहा हे ॥ १ ॥ नदरि करे ता गुरू मिलाए। हरि का नामु मंनि वसाए। हरि मनि वसिआ सदा सुखदाता सबदे मनि ओमाहा हे ॥ २ ॥ क्रिपा करे ता मेलि मिलाए। हउमै ममता सबदि जलाए। सदा मुकतु रहै इक रंगी नाही किसै नालि काहा हे ॥ ३ ॥ बिनु सतिगुर सेवे घोर अंधारा। बिनु सबदै कोइ न पावै पारा। जो सबदि राते महा बैरागी सो सचु सबदे लाहा हे ॥ ४ ॥ दुखु सुखु करतै धुरि लिखि पाइआ। दूजा भाउ आपि वरताइआ। गुरमुखि होवै सु अलिपतो वरतै मनमुख का किआ वेसाहा हे ॥ ५ ॥ से मनमुख जो सबदु न पछाणहि। गुर के भै की सार न जाणहि। भै बिनु किउ निरभउ सचु पाईऐ जमु काढि लएगा साहा हे ॥६॥ अफरिओ जमु मारिआ न जाई। गुर कै सबदे नेड़ि न आई। सबदु सुणे ता दूरहु भागै मतु मारे हरि जीउ वेपरवाहा हे ॥ ७ ॥ हरि जीउ की है सभ सिरकारा। एहु जमु किआ करे विचारा। हुकमी बंदा हुकमु कमावै हुकमे कढदा साहा हे ॥ ८ ॥ गुरमुखि साचै कीआ अकारा। गुरमुखि पसरिआ सभु पासारा। गुरमुखि होवै सो सचु बूझै सबदि सचै सुखु ताहा हे ॥ ९ ॥ गुरमुखि जाता करमि बिधाता। जुग चारे गुर सबदि पछाता। गुरमुखि मरै न जनमै गुरमुखि गुरमुखि सबदि समाहा हे ॥१०॥ गुरमुखि नामि सबदि सालाहे। अगम अगोचर वेपरवाहे। एक नामि जुग चारि उधारे सबदे नाम विसाहा हे ॥ ११॥ गुरमुखि सांति सदा सुखु पाए। गुरमुखि हिरदै नामु वसाए। गुरमुखि होवै सो नामु बूझै काटे दुरमति फाहा हे ॥ १२ ॥ गुरमुखि उपजै साचि समावै। ना मरि जंमै न जूनी पावै। गुरमुखि सदा रहहि रंगि राते अनदिनु लैदे लाहा हे ॥ १३ ॥ गुरमुखि भगत सोहहि दरबारे। सची बाणी सबदि सवारे। अनदिनु गुण गावै दिनु राती सहज सेती घरि जाहा हे ॥ १४ ॥ सतिगुरु

पूरा सबदु सुणाए। अनदिनु भगति करहु लिव लाए। हरि गुण गावहि सद ही निरमल निरमल गुण पातिसाहा हे ॥ १५ ॥ गुण का दाता सचा सोई। गुरमुखि विरला बूझै कोई। नानक जनु नामु सलाहे बिगसै सो नामु बेपरवाहा हे ॥१६॥२॥११॥

सतिगुरु की सेवा में रत रहनेवाले सौभाग्यशाली हैं। वे प्रतिदिन सत्य में विचरते हैं और उनकी वृत्ति हरि-नाम में लगी होती है। उनके हृदय में सुखदाता प्रभु विद्यमान रहता है, उन्हें सच्चे शब्द का उत्साह बना रहता है ॥ १ ॥ प्रभु कृपा करे तो गुरु से भेंट होती है, वह प्रभु-नाम मन में बसाता है। (जब) सुखदाता प्रभु मन में बसता है तो मन में शब्द का प्यार लहरा उठता है ॥ २ ॥ परमात्मा कृपा करे, तभी (जीवात्मा-परमात्मा का) मिलाप होता है। वह अपने शब्द द्वारा जीव का अहम् और ममता जला देता है। तब जीव सबसे वियुक्त होकर प्रभु के एक रंग में लीन होता है— अन्य सब झगड़ों से दूर हट जाता है ॥ ३ ॥ सतिगुरु की सेवा के बिना वह अज्ञान के घोर अन्धकार में रहता है। शब्द के रहस्य को जाने बिना कोई उसकी व्यापकता को नहीं समझता। जो जीव शब्द से प्यार करते हैं, वे प्रेमीजन शब्द से ही परमसत्य को पा लेते हैं ॥ ४ ॥ संसार में प्राप्त दुःख-सुख परमात्मा ने पहले से ही नियत किया है, द्वैत-भाव भी उसी ने प्रसारित किया है। गुरु के आदेश पर आचरण करनेवाला जीव उससे निर्लिप्त होकर जीता है, जबकि मनमुख का कोई विश्वास नहीं रहता ॥ ५ ॥ जो शब्द नहीं पहचानता, वही मनमुख है। वह गुरु के भय का महत्त्व भी नहीं जानता भय के बिना वह निर्भय सत्य (परमसत्य) क्योंकर पाया जा सकता है! यमदूत मार्ग में ही प्राण हरण कर लेता है ॥ ६ ॥ सशक्त यम यों ही मारा नहीं जा सकता, (किन्तु) गुरु के शब्द से वह निकट नहीं आता। शब्द सुनकर (प्रभु का नाम सुनकर) वह दूर से ही भाग जाता है, ताकि कहीं वह हरि के हाथों मारा न जाय ॥ ७ ॥ समूची हुकूमत प्रभु की है, इसमें यमदूत बेचारे क्या कर सकते हैं। मनुष्य भी हुक्म में बँधा चलता है और यम भी हुक्म से ही प्राण हरता है ॥ ८ ॥ गुरुमुख जानता है कि समूची साकार रचना परमात्मा की है, वह जानता है कि यह समूचा प्रसार हरि का है। जीव गुरुमुख बने, तभी सत्य को जान सकता है, सच्चे शब्द के प्यार में ही उसे परमसुख मिलता है ॥ ९ ॥ गुरुमुख जानता है कि विधाता कर्मानुसार फल देता है, वह गुरु के शब्द द्वारा चारों युगों को पहचानता है। गुरुमुख जन्म-मरण के चक्र से मुक्त होता है और वह नित्य शब्द में लीन रहता है ॥ १० ॥ गुरु-आदेश पर आचरण करने वाला जीव सदा हरि-नाम का गुण गाता है। वह मन-इन्द्रियों से परे उस

बे-परवाह परमात्मा के शब्द में एकाग्र (रहता) है। एक प्रभु के नाम ने चारों युगों को मोक्ष प्रदान किया है; शब्द द्वारा ही नाम का व्यापार होता है ॥ ११ ॥ गुरुमुख सदा सुख-शान्ति प्राप्त करता है। गुरुमुख के हृदय में हरि-नाम बसता है। गुरुमुख (गुरु के आदेशानुसार आचरण करनेवाला) होकर ही जीव प्रभुनाम-रहस्य को समझता और दुर्मति के फन्दों को काटता है ॥ १२ ॥ गुरुमुख जिस सत्य से उपजता है, उसी में समा जाता है; वह जन्म-मरण से परे होता है, योनि-चक्र में नहीं आता। गुरुमुख सदा प्रभु के रंग में रत रहकर रात-दिन लाभ उठाता है ॥ १३ ॥ गुरुमुख भक्ति-भाव के कारण नित्य प्रभु के दरबार में शोभता है, वह सच्ची गुरुवाणी और परमात्मा के शब्द द्वारा सँवारा जाता है। वह सदा रात-दिन प्रभु का गुण गाता है और परमानन्द में अपने असली घर (परमात्मा के दरबार में) जाता है ॥ १४ ॥ सतिगुरु से सच्चे शब्द का ज्ञान होता है, जीव रात-दिन उसी में मग्न रहता है। वह हरि-गुण गाकर निर्मल होता और निर्मल पूर्णब्रह्म में ही विलीन हो जाता है ॥१५॥ गुणों का दाता भी वह सच्चा परमात्मा ही है, (इस तथ्य को) कोई विरला गुरुमुख ही जानता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम का गुणगान करनेवाला सदा विकसता है, हरि-सरीखा बे-परवाह हो जाता है ॥ १६ ॥ २ ॥ ११ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ हरि जीउ सेविहु अगम अपारा। तिसदा अंतु न पाईऐ पारावारा। गुरपरसादि रविआ घट अंतरि तितु घटि मति अगाहा हे ॥ १ ॥ सभ महि वरतै एको सोई। गुरपरसादी परगटु होई। सभना प्रतिपाल करे जगजीवनु देदा रिजकु संबाहा हे ॥२॥ पूरै सतिगुरि बूझि बुझाइआ। हुकमे ही सभु जगतु उपाइआ। हुकमु मंने सोई सुखु पाए हुकमु सिरि साहा पातिसाहा हे ॥ ३ ॥ सचा सतिगुरु सबदु अपारा। तिसदै सबदि निसतरै संसारा। आपे करता करि करि वेखै देदा सास गिराहा हे ॥४॥ कोटि मधे किसहि बुझाए। गुर कै सबदि रते रंगु लाए। हरि सालाहहि सदा सुखदाता हरि बखसे भगति सलाहा हे ॥ ५ ॥ सतिगुरु सेवहि से जन साचे। जो मरि जंमहि काचनिकाचे। अगम अगोचरु वेपरवाहा भगति वछलु आथाहा हे ॥ ६ ॥ सतिगुरु पूरा साचु द्रिड़ाए। सचै सबदि सदा गुण गाए। गुणदाता वरतै सभ अंतरि सिरि सिरि लिखदा साहा हे ॥ ७ ॥ सदा हदूरि गुरमुखि जापै। सबदे

सेवै सो जनु ध्रापै । अनदिनु सेवहि सची बाणी सबदि सचै ओमाहा हे ॥८॥ अगिआनी अंधा बहु करम द्रिड़ाए । मनहठि करम फिरि जोनी पाए । बिखिआ कारणि लबु लोभु कमावहि दुरमति का दोराहा हे ॥ ६ ॥ पूरा सतिगुरु भगति द्रिड़ाए । गुर कै सबदि हरि नामि चितु लाए । मनि तनि हरि रविआ घट अंतरि मनि भीनै भगति सलाहा हे ॥ १० ॥ मेरा प्रभु साचा असुर संघारणु । गुर कै सबदि भगति निसतारणु । मेरा प्रभु साचा सद ही साचा सिरि साहा पातिसाहा हे ॥ ११ ॥ से भगत सचे तेरै मनि भाए । दरि कीरतनु करहि गुर सबदि सुहाए । साची बाणी अनदिनु गावहि निरधन का नामु वेसाहा हे ॥ १२ ॥ जिन आपे मेलि विछोड़हि नाही । गुर कै सबदि सदा सालाही । सभना सिरि तू एको साहिबु सबदे नामु सलाहा हे ॥ १३ ॥ बिनु सबदै तुधु नो कोई न जाणी । तुधु आपे कथी अकथ कहाणी । आपे सबदु सदा गुरु दाता हरिनामु जपि संबाहा हे ॥ १४ ॥ तू आपे करता सिरजणहारा । तेरा लिखिआ कोइ न मेटणहारा । गुरमुखि नामु देवहि तू आपे सहसा गणत न ताहा हे ॥ १५ ॥ भगत सचे तेरै दरवारे । सबदे सेवनि भाइ पिआरे । नानक नामि रते बैरागी नामे कारजु सोहा हे ॥ १६ ॥ ३ ॥ १२ ॥

हे भाई, अगम अपार परमात्मा की आराधना करो, उसका कोई अन्त नहीं, वह अथाह है। वह गुरु-कृपा से जिसके अन्तर्मन में बस जाता है, उसके भीतर अनन्त ज्ञान जाग्रत् होता है ॥ १ ॥ वही परमात्मा सबमें व्याप्त है, किन्तु गुरु-कृपा से प्रकट होता है। वही सबका प्रतिपालक है और सबको जीवन देता है ॥ २ ॥ पूर्णसतिगुरु ने ही यह जाना है और दूसरों को भी ज्ञान दिया है कि परमात्मा ने ही हुक्म द्वारा सब कुछ रचा है। जो हुक्म में विचरता है, वह सुख पाता है। यह हुक्म शाहों-बादशाहों के लिए भी अटल है ॥ ३ ॥ सच्चे सतिगुरु का उपदेश अपार है, उसके उपदेशानुसार विचरने से संसार को मुक्ति मिलती है। वह परमात्मा स्वयं सबको बनाता और संरक्षण देता है। वह श्वास-श्वास सबको पालता (भोजन देता) है ॥ ४ ॥ करोड़ों में से किसी विरले को ही उसका ज्ञान होता है। गुरु-उपदेश के प्रेम में कोई विरला ही रंग लाता है। सदा सुख देनेवाले परमात्मा का गुणगान करो, वही भक्तों का संरक्षक है ॥ ५ ॥ जो जन सतिगुरु की सेवा में

लगते हैं, वे ही सच्चे हैं। जो जन्म-मरण के चक्र में हैं, वे निपट अस्थिर और कच्चे होते हैं। वह परमात्मा अगम, अगोचर और अथाह भक्त-वत्सल है (उसी की शरण लो) ॥ ६ ॥ पूरा सतिगुरु ही सत्यस्वरूप परमात्मा का ज्ञान दृढ़ करवाता है। सदा उसके सच्चे नाम का गुण गाओ; वह गुण-दाता सबके हृदय में बसता है, सबके मस्तक पर वही भाग्य-रेखा खींचता है ॥ ७ ॥ गुरुमुख जीव सदा उसे अपने निकट पाते हैं। जो भी उसके शब्द की आराधना करता है, उसे वह प्राप्य है। वह रात-दिन उस सत्य-नाम को जपता है और उसी सत्य के उत्साह में मग्न रहता है ॥ ८ ॥ मनमुख अज्ञानी अन्ध-कर्म कमाता है। हठपूर्वक गर्हित कर्म करता हुआ बार-बार जन्म लेता है। विषय-विकारों के कारण वह लोभ-मोह की कमाई करता और दुर्मति के कारण अनिश्चय में रहता है ॥ ९ ॥ पूर्णगुरु जीव को भक्ति में दृढ़ करता है, गुरु के उपदेशानुसार जीव हरि-नाम में चित्त लगाता है। तन-मन में जो परमात्मा व्याप्त है, उसके संग मन भीगे तभी उसका गुणगान सम्भव है ॥ १० ॥ मेरा सच्चा परमात्मा आसुरी शक्तियों का नाश करनेवाला है, गुरु के उपदेशानुसार भक्ति करनेवालों को मोक्ष देता है। मेरा परमात्मा सच्चा है, परम सत्य है और शाहों-बादशाहों पर भी उसी की हुकूमत है ॥ ११ ॥ सत्य-रूप की भक्ति करनेवालों को तुम प्यार करते हो। वे गुरु की वाणी से सुशोभित होकर नित्य तुम्हारे द्वार पर कीर्ति-गान करते हैं। वह रात-दिन सच्ची वाणी का गान करते हैं और तुम्हारा नाम ही उनकी सच्ची पूँजी है ॥ १२ ॥ जिन्हें तुम अपनी शरण में लेते हो, उन्हें कभी वियुक्त नहीं करते; वे सदा गुरु के द्वारा तुम्हारे गुणों का गान करते हैं। सबके संरक्षक तुम्हीं एक हो और सब तुम्हारे ही नाम का कीर्ति-गान करते हैं ॥ १३ ॥ गुरु-उपदेश के बिना तुम्हें कोई नहीं पहचानता, तुम अपनी अकथनीय कथा स्वयं उजागर करते हो। तुम स्वयं ही गुरु बनकर उपदेश देते हो और खुद ही शब्द का उपदेश ग्रहण करनेवाले जिज्ञासु हो ॥ १४ ॥ तुम स्वयं सब कुछ रचने और करनेवाले हो। तुम्हारा लिखा कोई नहीं मिटा सकता अर्थात् तुम्हारी इच्छा के विरोध का सामर्थ्य किसी में नहीं। गुरु के अनुसार आचरण करनेवाले को तुम्हीं नाम-रहस्य देते हो, उसके लिए (नाम-रहस्य के ज्ञाता के लिए) फिर कर्मों या भ्रमों का कोई लेखा नहीं रह जाता ॥ १५ ॥ तुम्हारे सत्यस्वरूप के भक्त तुम्हारे दरबार में स्थान पाते हैं और गुरु का उपदेश मानने के कारण तुम्हें प्रिय हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव विषय-विकारों से विरक्त होकर तुम्हारे नाम में लीन होते हैं, उनके सब कार्य सहज ही सम्पन्न होते हैं ॥ १६ ॥ ३ ॥ १२ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ मेरै प्रभि साचै इकु खेलु रचाइआ । कोइ न किस ही जेहा उपाइआ । आपे फरकु करे वेखि विगसै सभि रस देही माहा हे ॥ १ ॥ वाजै पउणु तै आपि वजाए । सिव सकती देही महि पाए । गुरपरसादी उलटी होवै गिआन रतनु सबदु ताहा हे ॥ २ ॥ अंधेरा चानणु आपे कीआ । एको वरतै अवरु न बीआ । गुरपरसादी आपु पछाणै कमलु बिगसै बुधि ताहा हे ॥ ३ ॥ अपणी गहण गति आपे जाणै । होरु लोकु सुणि सुणि आखि वखाणै । गिआनी होवै सु गुरमुखि बूझै साची सिफति सलाहा हे ॥ ४ ॥ देही अंदरि वसतु अपारा । आपे कपट खुलावणहारा । गुरमुखि सहजे अंम्रितु पीवै त्रिसना अगनि बुझाहा हे ॥ ५ ॥ सभि रस देही अंदरि पाए । विरले कउ गुरु सबदु बुझाए । अंदरु खोजे सबदु सालाहे बाहरि काहे जाहा हे ॥ ६ ॥ विणु चाखे सादु किसै न आइआ । गुर कै सबदि अंम्रितु पीआइआ । अंम्रितु पी अमरापदु होए गुर कै सबदि रसु ताहा हे ॥ ७ ॥ आपु पछाणै सो सभि गुण जाणै । गुर कै सबदि हरि नामु वखाणै । अनदिनु नामि रता दिनु राती माइआ मोहु चुकाहा हे ॥ ८ ॥ गुर सेवा ते सभु किछु पाए । हउमै मेरा आपु गवाए । आपे क्रिपा करे सुखदाता गुर कै सबदे सोहा हे ॥ ९ ॥ गुर का सबदु अंम्रितु है बाणी । अनदिनु हरि का नामु वखाणी । हरि हरि सचा वसै घट अंतरि सो घटु निरमलु ताहा हे ॥ १० ॥ सेवक सेवहि सबदि सलाहहि । सदा रंगि राते हरि गुण गावहि । आपे बखसे सबदि मिलाए परमल वासु मनि ताहा हे ॥ ११ ॥ सबदे अकथु कथे सालाहे । मेरे प्रभ साचे वेपरवाहे । आपे गुण दाता सबदि मिलाए सबदै का रसु ताहा हे ॥ १२ ॥ मनमुखु भूला ठउर न पाए । जो धुरि लिखिआ सु करम कमाए । बिखिआ राते बिखिआ खोजै मरि जनमै दुखु ताहा हे ॥ १३ ॥ आपे आपि आपि सालाहे । तेरे गुण प्रभ तुझही माहे । तू आपि सचा तेरी बाणी सची आपे अलखु अथाहा हे ॥ १४ ॥ बिनु गुर दाते कोइ न पाए । लख कोटी जे करम कमाए । गुर किरपा ते घट अंतरि वसिआ सबदे सचु सालाहा हे ॥ १५ ॥ से जन मिले धुरि आपि मिलाए ।

साची बाणी सबदि सुहाए। नानक जनु गुण गावै नित साचे गुण गावह गुणी समाहा हे ॥ १६ ॥ ४ ॥ १३ ॥

मेरे सच्चे परमात्मा ने एक खेल रचाया है, कोई किसी दूसरे के समान पैदा नहीं किया। वह सबमें अन्तर डाल-डालकर प्रसन्न होता है, उसने सब रस शरीर में ही रखे हैं ॥ १ ॥ शरीर के भीतर पवन का बाजा (श्वास-प्रश्वास) उसी ने बजाया है। शरीर में ही शिव और शक्ति (ब्रह्मांश आत्मा तथा माया) का मेल किया है। गुरु-कृपा से यदि वह माया की ओर से निवृत्त हो तो जीव को ज्ञान-रत्न धन प्राप्त होता है ॥ २ ॥ परमात्मा ने स्वयं अन्धकार और प्रकाश बनाए हैं, वही एक सर्वत्र व्याप्त है, दूसरा कोई नहीं। जो गुरु-कृपा से आत्म-पहचान करता है, उसका हृदय-कमल विकसित होता और ज्ञान प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ अपनी गहराइयों-ऊँचाइयों को वह स्वयं ही जानता है, अन्य लोग तो केवल सुनी-सुनाई बातें कहा करते हैं। गुरु के द्वारा कोई ज्ञानवान् ही इन तथ्यों को पहचानता और उसका गुणगान करता है ॥ ४ ॥ शरीर के भीतर अपार वस्तुएँ हैं, उनका रहस्य बतानेवाला वही है। गुरुमुख जीव सहज में ही कृपा-अमृत पान करता है, उसकी तृष्णा-अग्नि बुझ जाती है ॥ ५ ॥ शरीर में सब रस विद्यमान हैं, गुरु-कथनों पर आचरण करनेवाला कोई विरला जीव ही इसे समझ पाता है। हृदय में खोज लेने से ही अनूठा नाद-श्रवण होता है, बाहर क्यों जाते हो ॥ ६ ॥ वस्तु को चखे बिना किसी को स्वाद नहीं आता, गुरु के उपदेशों से अमृत-रस की प्राप्ति होती है; अमृत पीकर अमरपद की प्राप्ति होती और जीव को गुरु के उपदेश से परम नाद-रस मिलता है ॥ ७ ॥ आत्म-पहचान करने वाला जीव प्रभु के सभी गुणों का ज्ञाता हो जाता है, वह गुरु के बताए अनुसार हरि-नाम का बखान करता है। वह रात-दिन सदा हरि-नाम में रत रहता और माया-मोह को दूर करता है ॥ ८ ॥ गुरु की सेवा (आज्ञा-पालन) से वह सब कुछ प्राप्त करता है। उसके अहम्-भाव और ममता नष्ट हो जाते हैं। उस पर सुखदाता प्रभु की कृपा होती और वह गुरु के उपदेशों से सुशोभित होता है ॥ ९ ॥ गुरु के उपदेश अमृतवाणी-सम हैं। जीव रात-दिन हरि-नाम का स्मरण करता है। उसके हृदय में सत्यस्वरूप परमात्मा बस जाता है, हृदय निर्मल हो जाता है ॥ १० ॥ भक्तजन प्रभु की सेवा में रत रहते और गुरु-उपदेश द्वारा परमात्मा के गुण गाते हैं। वे प्रभु के प्रेम में उसका कीर्तन करते हैं। वह परमात्मा स्वेच्छा से उन्हें अपनाता है, उनके अन्तर्मन में सुगन्धि बस जाती है ॥ ११ ॥ जो मनुष्य शब्द की शक्ति द्वारा अकथनीय परमात्मा का बखान करता और उसके गुण गाता है, उस मेरे सच्चे और बे-परवाह

स्वामी का ध्यान करता है, उसे वह गुणदाता प्रभु अपने-आप शब्द द्वारा अपने संग मिला लेता है— शब्द का रस भी वही लेता है ॥ १२ ॥ मनमुख जीव पथ-भ्रष्ट होता है, उसे कोई टिकाव नहीं मिलता, वह पूर्व-लेखानुसार भ्रष्ट कर्म कमाता रह जाता है। वह विषय-विकारों में मग्न, उन्हीं की खोज में आवागमन भोगता है ॥ १३ ॥ परमात्मा ही भक्त-रूप में अपने गुण गाता है। हे प्रभु, तुम्हारे गुण तुममें ही हैं (अन्य किसी में नहीं हैं)। हे परमात्मा, तुम सत्यस्वरूप हो, तुम्हारी वाणी सत्य है, तुम अलख और अथाह हो ॥ १४ ॥ गुरु रूपी दाता के बिना परमात्मा को कोई नहीं पा सकता, चाहे वह लाखों-करोड़ों सत्कर्म कमाता रहे। गुरु-कृपा से ही वह शरीर में बसा हुआ प्रभु प्रकट होता है और जीव उस सत्य की कीर्ति गाता है ॥ १५ ॥ वे भक्तजन ही परमात्मा से मिलाप प्राप्त करते हैं, जिन्हें वह स्वयं अपनाता है, वे सच्ची वाणी और परमात्मा के सच्चे शब्द से सुशोभित होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वह जीव नित्य सच्चे प्रभु के गुण गाता है और गुण गाते हुए गुणी में ही समा जाता है ॥ १६ ॥ ४ ॥ १३ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ निहचलु एकु सदा सचु सोई। पूरे गुर ते सोझी होई। हरि रसि भीने सदा धिआइनि गुरमति सीलु संनाहा हे ॥ १ ॥ अंदरि रंगु सदा सचिआरा। गुर कै सबदि हरि नामि पिआरा। नउनिधि नामु वसिआ घट अंतरि छोडिआ माइआ का लाहा हे ॥ २ ॥ रईअति राजे दुरमति दोई। बिनु सतिगुर सेवे एकु न होई। एकु धिआइनि सदा सुखु पाइनि निहचलु राजु तिनाहा हे ॥ ३ ॥ आवणु जाणा रखै न कोई। जंमणु मरणु तिसै ते होई। गुरमुखि साचा सदा धिआवहु गति मुकति तिसै ते पाहा हे ॥ ४ ॥ सचु संजमु सतिगुरू दुआरै। हउमै क्रोधु सबदि निवारै। सतिगुरु सेवि सदा सुखु पाईऐ सीलु संतोखु सभु ताहा हे ॥ ५ ॥ हउमै मोहु उपजै संसारा। सभु जगु बिनसै नामु विसारा। बिनु सतिगुर सेवे नामु न पाईऐ नामु सचा जगि लाहा हे ॥ ६ ॥ सचा अमरु सबदि सुहाइआ। पंच सबद मिलि वाजा वाइआ। सदा कारजु सचि नामि सुहेला बिनु सबदै कारजु केहा हे ॥ ७ ॥ खिन महि हसै खिन महि रोवै। दूजी दुरमति कारजु न होवै। संजोगु विजोगु करतै लिखि पाए किरतु न चलै चलाहा हे ॥ ८ ॥ जीवन मुकति गुर सबदु कमाए। हरि सिउ सद ही रहै समाए।

गुर किरपा ते मिलै वडिआई हउमै रोगु न ताहा हे ॥ ९ ॥ रस कस खाए पिंडु वधाए । भेख करै गुर सबदु न कमाए । अंतरि रोगु महा दुखु भारी बिसटा माहि समाहा हे ॥ १० ॥ बेद पड़हि पड़ि बादु वखाणहि । घट महि ब्रहमु तिसु सबदि न पछाणहि । गुरमुखि होवै सु ततु बिलोवै रसना हरि रसु ताहा हे ॥ ११ ॥ घरि वथु छोडहि बाहरि धावहि । मनमुख अंधे सादु न पावहि । अनरस राती रसना फीकी बोले हरि रसु मूलि न ताहा हे ॥ १२ ॥ मनमुख देही भरमु भतारो । दुरमति मरै नित होइ खुआरो । कामि क्रोधि मनु दूजै लाइआ सुपनै सुखु न ताहा हे ॥ १३ ॥ कंचन देही सबदु भतारो । अनदिनु भोग भोगे हरि सिउ पिआरो । महला अंदरि गैर महलु पाए । भाणा बुझि समाहा हे ॥ १४ ॥ आपे देवै देवणहारा । तिसु आगै नही किसै का चारा । आपे बखसे सबदि मिलाए तिस दा सबदु अथाहा हे ॥ १५ ॥ जीउ पिंडु सभु है तिसु केरा । सचा साहिबु ठाकुरु मेरा । नानक गुरबाणी हरि पाइआ हरि जपु जापि समाहा हे ॥ १६ ॥ ५ ॥ १४ ॥

परमात्मा ही एकमात्र स्थायी, स्थिर और निश्चल है, किन्तु इस तथ्य का ज्ञान गुरु से ही होता है। जो जीव हरि-नाम के रस में भीगे हैं, वे सदा उसके ध्यान में मग्न रहते हैं, गुरुमत द्वारा बना उनका सुशील आचरण ही उनका कवच है (रक्षक है) ॥ १ ॥ उनके अन्तर्मन में सदैव सत्य का रंग छलकता है, गुरु के उपदेशानुसार वे हरि-नाम को प्यार करते हैं। सर्व सुखों के भण्डार (नौ निधियों के समान) हरि-नाम उनके मन में बसता है और वे मायावी लाभों का त्याग कर देते हैं ॥ २ ॥ राजा, प्रजा सब द्वैत-भाव में बुद्धिहीन हैं, सतिगुरु की सेवा किए बिना (गुरु-आज्ञा पालन किए बिना) उस एक ब्रह्म का ज्ञान नहीं होता। जो जीव एक परमात्मा का ध्यान करते हैं, वे सदा सुखी हैं, उनका साम्राज्य सदा स्थिर हो जाता है ॥ ३ ॥ जन्म-मरण के चक्र से कोई नहीं बचता। सभी आवागमन के चक्र में रहते हैं। जो जीव गुरु के द्वारा सच्चे परमात्मा की सेवा करते हैं, वे ही सद्‌गति और मुक्ति को पाते हैं ॥ ४ ॥ सतिगुरु के द्वारा ही विषय-विकारों से संयम मिलता है, जीव शब्द द्वारा अहम्, क्रोध आदि का निवारण करता है। सतिगुरु की आज्ञा-पालन से सदा सुख प्राप्त होता है और जीव को शील, सन्तोष-सरीखे सद्‌गुण मिलते हैं ॥ ५ ॥ सांसारिक प्रवृत्तियों से जीव में अहंकार और मोह पैदा होते

हैं, हरि-नाम को विस्मृत कर देने से सारा जगत ही नष्ट हो जाता है। सतिगुरु के सेवा में रत हुए बग़ैर हरि-नाम की प्राप्ति नहीं होती, हरि-नाम ही संसार में आने का मूल लाभ है ॥ ६ ॥ परमात्मा का सच्चा अमर (हुक्म) शब्द में ही सुशोभित है, पंच शब्द (पाँच आन्तरिक नाद या ध्वनियाँ) में मिलकर ही जीव पूर्ण आनन्द को प्राप्त होता है (बाजा बजाता हैं)। उसका कार्य सदा सफल है और सच्चे हरि-नाम से वह सदा सुखी होता है; किन्तु शब्द के बिना कोई काम नहीं होता ॥ ७ ॥ वह जीव कभी हँसता और कभी रोता है। दुर्मति और द्वैत-भाव के कारण उसका कोई कार्य सम्पन्न नहीं होता। संयोग-वियोग परमात्मा ने पहले से ही निश्चित किये हैं, कर्म-फल को कभी टाला नहीं जा सकता ॥ ८ ॥ जीवन-मुक्ति गुरु के शब्द द्वारा ही मिलती है; वह जीव, जो जीवन-मुक्त होता है, सदा परमात्मा में समाया रहता है; उसे गुरु-कृपा से बड़ाई मिलती है और वह अहम् के रोग से मुक्त रहता है ॥ ९ ॥ षट्‌रस भोजन करने से मनुष्य शरीर बढ़ाता है; दिखावे आदि में संलग्न रहने के कारण गुरु के उपदेशों पर आचरण नहीं करता। वह मनुष्य चिर-रोगी और महादुःखी होता है, वह सदा विष्ठा के कीड़े के समान विषय-विकारों की मलिनता में ही रहता है ॥ १० ॥ पण्डितजन वेदों का अध्ययन करते हैं और फिर वाद-विवाद में लग जाते हैं, किन्तु शरीर के भीतर रहनेवाले ब्रह्म के हुक्म को नहीं पहचानते। गुरुमुख जीव ही तत्त्व-मंथन करता है और उसकी जिह्वा पर सदैव हरि-रस का आस्वादन रहता है अर्थात् अपनी जिह्वा से वह सदैव परमात्मा का नाम जपता है ॥ ११ ॥ घर की वस्तु को छोड़कर बाहर खोजने जाता है—ऐसा अज्ञानांध मनमुख परम-रस से वंचित रहता है। उसकी जिह्वा अन्य रसों में पगी फीका (मिथ्या) बोलती है, उसे कभी हरि-रस का स्वाद नहीं मिलता ॥ १२ ॥ मनमुख के जीव पर भ्रम का अधिकार होता है, वह दुर्मति में ही नित्य ख्वार होता है। उनका मन काम-क्रोधादि के कारण द्वैत-भाव में लीन रहता है; उसे स्वप्न में भी कभी सुख नहीं मिलता ॥ १३ ॥ जिस शरीर का स्वामी हरि-नाम होता है, वह कंचन-समान हो जाता है। वह प्यार में मत्त होकर रात-दिन परमात्मा की संगति का भोग करता है। स्थान-वंचित भटकते हुए जीव को भी उससे यथोचित स्थान प्राप्त होता है और वह प्रभु-इच्छा को जानकर उसी में समा जाता है ॥ १४ ॥ वह देने में समर्थ परमात्मा ही उसे सब देता है, उस पर कोई आपत्ति नहीं कर सकता। वह अपनी कृपा से ही जीव को अनन्त शब्द के संग मिला देता है। उसका हुक्म अथाह है ॥ १५ ॥ यह शरीर और इसके भीतर की आत्मा, सब उसी की देन है। वही सच्चा परमात्मा मेरा स्वामी है। गुरु नानक कहते हैं कि

गुरु के उपदेशानुसार आचरण से परमात्मा की प्राप्ति होती है और जीव उसको जपते हुए उसी में समा जाता है ॥ १६ ॥ ५ ॥ १४ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ गुरमुखि नाद बेद बीचारु । गुरमुखि गिआनु धिआनु आपारु । गुरमुखि कार करे प्रभ भावै गुरमुखि पूरा पाइदा ॥ १ ॥ गुरमुखि मनूआ उलटि परावै । गुरमुखि बाणी नादु वजावै । गुरमुखि सचि रते बैरागी निजघरि वासा पाइदा ॥ २ ॥ गुर की साखी अंम्रित भाखी । सचै सबदे सचु सुभाखी । सदा सचि रंगि राता मनु मेरा सचे सचि समाइदा ॥ ३ ॥ गुरमुखि मनु निरमलु सतसरि नावै । मैलु न लागै सचि समावै । सचो सचु कमावै सद ही सची भगति द्रिड़ाइदा ॥ ४ ॥ गुरमुखि सचु बैणी गुरमुखि सचु नैणी । गुरमुखि सचु कमावै करणी । सद ही सचु कहै दिनु राती अवरा सचु कहाइदा ॥ ५ ॥ गुरमुखि सची ऊतम बाणी । गुरमुखि सचो सचु वखाणी । गुरमुखि सद सेवहि सचो सचा गुरमुखि सबदु सुणाइदा ॥ ६ ॥ गुरमुखि होवै सु सोझी पाए । हउमै माइआ भरमु गवाए । गुर की पउड़ी ऊतम ऊची दरि सचै हरिगुण गाइदा ॥ ७ ॥ गुरमुखि सचु संजमु करणी सारु । गुरमुखि पाए मोख दुआरु । भाइ भगति सदा रंगि राता आपु गवाइ समाइदा ॥ ८ ॥ गुरमुखि होवै मनु खोजि सुणाए । सचै नामि सदा लिव लाए । जो तिसु भावै सोई करसी जो सचे मनि भाइदा ॥ ९ ॥ जा तिसु भावै सतिगुरू मिलाए । जा तिसु भावै ता मंनि वसाए । आपणै भाणै सदा रंगि राता भाणै मंनि वसाइदा ॥ १० ॥ मनहठि करम करे सो छीजै । बहुते भेख करे नही भीजै । बिखिआ राते दुखु कमावहि दुखे दुखि समाइदा ॥ ११ ॥ गुरमुखि होवै सु सुखु कमाए । मरण जीवण की सोझी पाए । मरणु जीवणु जो सम करि जाणै सो मेरे प्रभ भाइदा ॥ १२ ॥ गुरमुखि मरहि सु हहि परवाणु । आवण जाणा सबदु पछाणु । मरै न जंमै ना दुखु पाए मन ही मनहि समाइदा ॥ १३ ॥ से वडभागी जिनी सतिगुरु पाइआ । हउमै विचहु मोहु चुकाइआ । मनु निरमलु फिरि मैलु न लागै दरि सचै सोभा पाइदा ॥ १४ ॥ आपे करे कराए आपे । आपे

वेखै थापि उथापे । गुरमुखि सेवा मेरे प्रभ भावै सचु सुणि लेखै पाइदा ॥ १५ ॥ गुरमुखि सचो सचु कमावै । गुरमुखि निरमलु मैलु न लावै । नानक नामि रते वीचारी नामे नामि समाइदा ॥ १६ ॥ १ ॥ १५ ॥

गुरुमुख लोगों का सहज विचार ही वेद-वाणी के समान है, क्योंकि प्रभु का ध्यान करने से उनमें अपार ज्ञान उपजा होता है। गुरुमुख के कर्म प्रभु को प्रिय होते हैं, गुरुमुख ही सच्चे परमात्मा को पाता है ॥ १ ॥ गुरुमुख चंचल मन को उलटकर संयत करता है, गुरुमुख वाणी द्वारा नाद-श्रवण अर्थात् जाप-अभ्यास करता है। गुरुमुख सत्यस्वरूप परमात्मा में रत रहकर वीतरागी होता एवं अपने वास्तविक घर में निवास करता है (प्रभु की शरण में रहता है) ॥ २ ॥ (गुरुमुख) गुरु की शिक्षा को अमृत-सम मानता एवं सच्चे शब्द द्वारा सत्य को उच्चारता है। (गुरुमुख होने के नाते) मेरा मन सदा सत्य में रमता और सत्य में ही समाया रहता है ॥ ३ ॥ गुरुमुख का मन निर्मल होता है, वह सत्यस्वरूप सरोवर पर स्नान करता है, उसे विषय-विकारों का मैल नहीं लगता, वह सत्य से संलग्न होता है। वह सदा सत्य कर्म करता और सच्ची भक्ति की ही शिक्षा देता है ॥ ४ ॥ गुरुमुख के वचनों में सत्य होता है अर्थात् वह सदा सत्य बोलता है; उसकी आँखों में सत्य है अर्थात् वह सत्य को ही देखता है। गुरुमुख करनी द्वारा भी सदा सत्य की ही कमाई करता है। वह स्वयं सदा दिन-रात सत्य कहता और अन्यों से सत्य कहलवाता है ॥ ५ ॥ गुरुमुख की वाणी श्रेष्ठ सत्य से सम्पृक्त होती है। गुरुमुख सत्य द्वारा ही सत्य का बखान करता है। गुरुमुख सदा सत्यस्वरूप प्रभु की सेवा करता और सबको सच्चा शब्द सुनाता है ॥ ६ ॥ गुरुमुख की शरण लेनेवाले को ही आध्यात्मिक सूझ मिलती है, उसमें से अहंकार, माया और भ्रम दूर होते हैं। वह गुरु रूपी ऊँचे सोपान पर चढ़कर सत्यस्वरूप प्रभु के द्वार पर हरिगुण गाता है ॥ ७ ॥ गुरुमुख की जीवनयुक्ति ही सत्य की होती है, उसके कर्म श्रेष्ठ होते हैं और वह मोक्ष-द्वार को पा लेता है। वह भाव-भक्ति के रंग में रमता है और अभिमान त्यागकर परमात्मा में ही विलीन होता है ॥ ८ ॥ गुरुमुख मन की खोज करता और सच्चे नामी (हरि) में लग्न लगाता है। जो प्रभु को रुचता है, गुरुमुख वही करता है ॥ ९ ॥ जब परमात्मा की कृपा होती है, तो जीव सतिगुरु से भेंटता है; जब उसकी इच्छा होती है, तभी वह जीव के मन में बसता है। वह प्रभु-इच्छा से ही सदैव प्रसन्न रहता और उसकी इच्छा को ही मन में बसाता है ॥ १० ॥ जो मन के अनुकरण में कर्म करता है, वह नाश होता है। वह अनेक वेष बनाता है, किन्तु प्रभु के रंग में नहीं भीगता। वह

मिथ्या माया में रमण करता हुआ दुःखी होता और दुःख में ही समाया रहता है ॥ ११ ॥ (इसके विपरीत) जो गुरु का अनुयायी है, वह सुख कमाता है। जीवन-मरण का ज्ञान प्राप्त कर लेता है। (सत्य तो यह है कि) जो मरण और जीवन को एक-समान समझता है, वही प्रभु को प्रिय होता है ॥ १२ ॥ गुरु के अनुकरण में मरनेवाला जीव भी परमात्मा को स्वीकार होता है। वह जन्म-मरण को परमात्मा का ही शब्द (हुक्म) समझता है। उसका जन्म-मरण चुक जाता है, वह दुःखों से मुक्त होकर प्रभु की ज्योति में ही विलीन हो जाता है (अंश अंशी में मिल जाता है) ॥ १३ ॥ वे जीव भाग्यशाली हैं, जिन्हें सतिगुरु मिला है। उनके भीतर का अभिमान और मोह दूर हो जाता है। उसका मन निर्मल होता है, दुबारा उसे विषय-विकारों का मैल नहीं लगता। वह सच्चे परमात्मा के हुज़ूर में प्रतिष्ठित होता है ॥ १४ ॥ परमात्मा अपने-आप सब कुछ करता है, स्वयं ही बनाता और बिगाड़ता है। गुरुमुख की सेवा उसे प्रिय है, इसलिए उसकी सत्य की पहुँच को वह स्वीकार करता है ॥ १५ ॥ गुरुमुख सदैव सत्य का व्यवहार-आचरण करता है। गुरुमुख निर्मल रहता है, मैल नहीं लगाता। गुरु नानक कहते हैं कि वह नाम से प्यार करने के कारण विवेकशील होता और नाम के द्वारा ही नामी (परमात्मा) में समा जाता है ॥ १६ ॥ १ ॥ १५ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ आपे स्रिसटि हुकमि सभ साजी। आपे थापि उथापि निवाजी। आपे निआउ करे सभु साचा साचे साचि मिलाइदा ॥ १ ॥ काइआ कोटु है आकारा। माइआ मोहु पसरिआ पासारा। बिनु सबदै भसमै की ढेरी खेहू खेह रलाइदा ॥ २ ॥ काइआ कंचन कोटु अपारा। जिसु विचि रविआ सबदु अपारा। गुरमुखि गावै सदा गुण साचे मिलि प्रीतम सुखु पाइदा ॥ ३ ॥ काइआ हरि मंदरु हरि आपि सवारे। तिसु विचि हरि जीउ वसै मुरारे। गुर कै सबदि वणजनि वापारी नदरी आपि मिलाइदा ॥ ४ ॥ सो सूचा जि करोधु निवारे। सबदे बूझै आपु सवारे। आपे करे कराए करता आपे मंनि वसाइदा ॥ ५ ॥ निरमल भगति है निराली। मनु तनु धोवहि सबदि वीचारी। अनदिनु सदा रहै रंगि राता करि किरपा भगति कराइदा ॥ ६ ॥ इसु मन मंदर महि मनूआ धावै। सुखु पलरि तिआगि महा दुखु पावै। बिनु सतिगुर भेटे ठउर न पावै आपे खेलु कराइदा ॥ ७ ॥ आपि अपरंपरु

आपि वीचारी। आपे मेले करणी सारी। किआ को कार करे वेचारा आपे बखसि मिलाइदा ॥ ८ ॥ आपे सतिगुरु मेले पूरा। सचै सबदि महाबल सूरा। आपे मेले दे वडिआई सचे सिउ चितु लाइदा ॥ ९ ॥ घर ही अंदरि साचा सोई। गुरमुखि विरला बूझै कोई। नामु निधानु वसिआ घट अंतरि रसना नामु धिआइदा ॥ १० ॥ दिसंतरु भवै अंतरु नही भाले। माइआ मोहि बधा जम काले। जम की फासी कबहू न तूटै दूजै भाइ भरमाइदा ॥ ११ ॥ जपु तपु संजमु होरु कोई नाही। जब लगु गुर का सबदु न कमाही। गुर कै सबदि मिलिआ सचु पाइआ सचे सचि समाइदा ॥ १२ ॥ काम करोधु सबल संसारा। बहु करम कमावहि सभ दुख का पसारा। सतिगुर सेवहि से सुखु पावहि सचै सबदि मिलाइदा ॥ १३ ॥ पउणु पाणी है बैसंतरु। माइआ मोहु वरतै सभ अंतरि। जिनि कीते जा तिसै पछाणहि माइआ मोहु चुकाइदा ॥ १४ ॥ इकि माइआ मोहि गरबि विआपे। हउमै होइ रहे है आपे। जमकालै की खबरि न पाई अंति गइआ पछुताइदा ॥ १५ ॥ जिनि उपाए सो बिधि जाणै। गुरमुखि देवै सबदु पछाणै। नानक दासु कहै बेनंती सचि नामि चितु लाइदा ॥ १६ ॥ २ ॥ १६ ॥

परमात्मा ने हुक्म द्वारा समूची सृष्टि की रचना की है। वह आप ही सबको बनाता-बिगाड़ता है। अपने-आप सब न्याय करता और सत्यांश को मूल सत्य में मिलाता है ॥ १ ॥ शरीर एक दुर्ग है, उसमें मोह-माया का प्रसार है। शब्द (हरि-नाम) के बिना वह राख की ढेरी है, अन्ततः मिट्टी में ही मिल जाता है ॥ २ ॥ यह शरीर स्वर्ण का अपार मन्दिर है, जिसमें अनन्त ब्रह्मनाद रमा हुआ है; गुरुमुख जीव उसमें सत्यस्वरूप प्रभु को खोजता और उसका गुण गाते हुए सुखी होता है ॥ ३ ॥ शरीर हरि-मन्दिर है, प्रभु स्वयं अपने लिए इसकी रचना करता है और इसमें स्वयं निवास करता है। गुरु के उपदेशों पर आचरण करनेवाले जीवों पर कृपा-दृष्टि रखते हुए वह उन्हें अपने संग मिला लेता है ॥ ४ ॥ जो क्रोध का निवारण करता है, वही निर्मल है; वह शब्द (हुक्म) को पहचानकर अपने-आप को सँवारता है। परमात्मा उसके लिए सब कुछ करता और उसके मन में बसता है ॥ ५ ॥ निर्मल भक्ति सबसे अलग है, इसमें तन-मन के शुद्धिकरण के साथ-साथ प्रभु के शब्द का ज्ञान होता है। प्रतिदिन जीव परमात्मा के प्यार में लीन रहता और

उसकी कृपा से भक्ति करता है ॥ ६ ॥ मन के इस मन्दिर अर्थात् शरीर में मन भटकता है, वह आत्मिक सुख को त्यागकर दुःख पाता है। सतिगुरु से भेंट किए बिना जीव का कोई ठिकाना नहीं —यह सब खेल प्रभु ने स्वयं रचाया है ॥ ७ ॥ वह परमात्मा अपरम्पार है, वही समूचे विवेक का आधार है; वही भले कर्मों का सुअवसर जुटाता है। कोई बेचारा जीव क्या कर सकता है, स्वयं ही प्रभु कृपा करके उसे अपने में मिला लेता है ॥ ८ ॥ परमात्मा ही पूरे सतिगुरु से भेंट करवाता है और सच्चे शब्द द्वारा जीव को महाबली शूरमा बना देता है। अपने-आप वह परमात्मा से मिलाकर जीव को बड़ाई प्रदान करता और सत्य में दत्त-चित्त करता है ॥ ९ ॥ मनुष्य-शरीर में वही सत्यस्वरूप विद्यमान रहता है, इस तथ्य को कोई विरला ही समझता है। वह सुखों का कोष मन में ही बसा है, जीभ से उसका नाम जपा जाता है ॥ १० ॥ जीव (परमात्मा की खोज में) भीतर नहीं झाँकता, दिशा-दिशान्तर में भटकता है। परिणामतः माया-मोह में बँधा यम-काल का ग्रास होता है। वह द्वैत के भ्रम में रहता है, इसलिए उसके यम के बन्धन कभी नहीं कटते ॥ ११ ॥ जब तक गुरु का शब्द नहीं कमाया अर्थात् गुरु-उपदेश का पालन नहीं किया, तब तक कोई अन्य जप, तप, संयम सार्थक नहीं हो पाते। गुरु के उपदेश से ही सत्य का ज्ञान होता और जीव मूल सत्य में समा जाता है ॥ १२ ॥ संसार में काम-क्रोध की वृत्तियाँ बड़ी सबल हैं, (इनके प्रभावान्तर्गत किए गए) कर्मों से निरन्तर दुःखों का प्रसार होता है। जो सतिगुरु का अनुकरण करते हैं, वे हुक्म को पहचानकर सदा सुख प्राप्त करते हैं ॥ १३ ॥ पवन, पानी, अग्नि आदि तत्त्वों से बने शरीरों में माया-मोह का निवास है। जिस परमात्मा ने इन तत्त्वों का निर्माण किया है, उसे जान लेने से मोह का अन्त होता है ॥ १४ ॥ कुछ लोगों में मोह माया के कारण अभिमान होता है, वे अहंकार में ही रमते हैं; उन्हें यम-काल की जानकारी नहीं होती और अन्ततः पश्चात्ताप करते हुए मर जाते हैं ॥ १५ ॥ जिसने पैदा किये हैं, वही जीवन-युक्ति जानता और गुरु के द्वारा शब्द की पहचान-सामर्थ्य प्रदान करता है। गुरु नानक कहते हैं कि वही जीव (गुरु की शरण लेनेवाला) सत्यस्वरूप हरि-नाम में मन रमाता है ॥ १६ ॥ २ ॥ १६ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ आदि जुगादि दइआपति दाता। पूरे गुर कै सबदि पछाता। तुधु नो सेवहि से तुझहि समावहि तू आपे मेलि मिलाइदा ॥ १ ॥ अगम अगोचरु कीमति नही पाई। जीअ जंत तेरी सरणाई। जिउ तुधु भावै तिवै चलावहि

तू आपे मारगि पाइदा ॥ २ ॥ है भी साचा होसी सोई । आपे साजे अवरु न कोई । सभना सार करे सुखदाता आपे रिजकु पहुचाइदा ॥ ३ ॥ अगम अगोचरु अलख अपारा । कोइ न जाणै तेरा परवारा । आपणा आपु पछाणहि आपे गुरमती आपि बुझाइदा ॥ ४ ॥ पाताल पुरीआ लोअ आकारा । तिसु विचि वरतै हुकमु करारा । हुकमे साजे हुकमे ढाहे हुकमे मेलि मिलाइदा ॥ ५ ॥ हुकमै बूझै सु हुकमु सलाहे । अगम अगोचर वेपरवाहे । जेही मति देहि सो होवै तू आपे सबदि बुझाइदा ॥ ६ ॥ अनदिनु आरजा छिजदी जाए । रैणि दिनसु दुइ साखी आए । मनमुखु अंधु न चेतै मूड़ा सिर ऊपरि कालु रूआइदा ॥ ७ ॥ मनु तनु सीतलु गुरचरणी लागा । अंतरि भरमु गइआ भउ भागा । सदा अनंदु सचे गुण गावहि सचु बाणी बोलाइदा ॥ ८ ॥ जिनि तू जाता करम बिधाता । पूरै भागि गुरसबदि पछाता । जति पति सचु सचा सचु सोई हउमै मारि मिलाइदा ॥ ९ ॥ मनु कठोरु दूजै भाइ लागा । भरमे भूला फिरै अभागा । करमु होवै ता सतिगुरु सेवे सहजे ही सुखु पाइदा ॥ १० ॥ लख चउरासीह आपि उपाए । मानस जनमि गुर भगति द्रिड़ाए । बिनु भगती बिसटा विचि वासा बिसटा विचि फिरि पाइदा ॥ ११ ॥ करमु होवै गुरु भगति द्रिड़ाए । विणु करमा किउ पाइआ जाए । आपे करे कराए करता जिउ भावै तिवै चलाइदा ॥ १२ ॥ सिम्रिति सासत अंतु न जाणै । मूरखु अंधा ततु न पछाणै । आपे करे कराए करता आपे भरमि भुलाइदा ॥ १३ ॥ सभु किछु आपे आपि कराए । आपे सिरि सिरि धंधै लाए । आपे थापि उथापे वेखै गुरमुखि आपि बुझाइदा ॥ १४ ॥ सचा साहिबु गहिर गंभीरा । सदा सलाही ता मनु धीरा । अगम अगोचरु कीमति नही पाई गुरमुखि मंनि वसाइदा ॥ १५ ॥ आपि निरालमु होर धंधै लोई । गुरपरसादी बूझै कोई । नानक नामु वसै घट अंतरि गुरमती मेलि मिलाइदा ॥ १६ ॥ ३ ॥ १७ ॥

युग-युग से परमात्मा अगम अगोचर दयालु के रूप में विद्यमान है, किन्तु उसे पूरे गुरु के उपदेश से ही जाना जा सकता है। जो जीव, हे प्रभु, तुम्हें स्मरण करते हैं, वे तुम्हीं में विलीन हो जाते हैं; तुम

अपने-आप उन्हें अपने में मिला लेते हो ॥ १ ॥ अगम अगोचर प्रभु का सही ज्ञान किसी को नहीं (सही मोल कोई नहीं जानता); समस्त जीव-जन्तु, हे परमात्मा, तुम्हारी शरण में हैं; जैसा तुम्हें रुचता है, वैसा चलाते हो और सबको अलग-अलग राह लगाते हो ॥ २ ॥ परमात्मा सदा सत्यस्वरूप है, सत्य ही रहेगा; वही सबका निर्माण करता है और कोई नहीं। वह सुखदाता ईश्वर सबका संरक्षक है और सबको रोज़ी पहुँचाता है ॥ ३ ॥ परमात्मा अगम, अगोचर, अलक्ष्य और अपार है, कोई उसका पारावार (प्रसार) नहीं जानता। जो जीव आत्मोपलब्धि (आत्म-पहचान) करता है, वह गुरुमतानुसार आचरण द्वारा परमात्मा को भी पहचानता है ॥ ४ ॥ संसार में सब जगह पातालों, आकाशों, नगरों, लोकों और समस्त आकारों में हुक्म के रूप में परमात्मा ही बसता है। वह परमात्मा ही हुक्म से बनाता, मिटाता और परस्पर मेल-मिलाता है ॥ ५ ॥ जो परमात्मा के हुक्म को पहचानता है, वह उसी के गुण गाता है। वह अपहुँच, अतीन्द्रिय और बे-परवाह है। जैसी बुद्धि वह देता है, वैसा होता है। हे परमात्मा, तुम्हीं स्वेच्छा से अपने हुक्म की पहचान भी प्रदान करते हो ॥ ६ ॥ प्रतिदिन आयु घटती जाती है, रात-दिन इस तथ्य के साक्षी हैं। किन्तु मनमुख जीव अपनी मूढ़तावश अज्ञानांधकार में भटकता है और नहीं जानता कि मृत्यु समीप ही है, (कभी भी ग्रस सकती है) ॥ ७ ॥ गुरु-चरणों की शरण लेनेवाले जीव का तन-मन शीतल रहता है और अन्तर्मन का भय-भ्रम सब दूर होता है। ऐसा जीव सदा आनन्द में रहता, सत्यस्वरूप प्रभु के गुण गाता और सच्ची वाणी बोलता है ॥ ८ ॥ हे कर्मानुसार फल देनेवाले प्रभु, जिन्होंने तुम्हें पहचाना है, वे सौभाग्यपूर्वक गुरु के शब्द को भी पा लेते हैं (तुम्हारे हुक्म को गुरु के उपदेश से पहचानते हैं)। उनकी जाति-पाँति सब सत्य-स्वरूप परमात्मा ही होता है, जिसे वे अहम् त्यागकर प्राप्त करते हैं ॥ ९ ॥ मन कठोरता-वश द्वैत-भाव में लीन है और भाग्य-हीनता के कारण भ्रम में भटक रहा है। प्रभु की कृपा-दृष्टि हो तो वह सतिगुरु को प्राप्त करता और सहज में ही सुखी हो जाता है ॥ १० ॥ चौरासी लाख योनियों के जीवों को स्वयं परमात्मा ने पैदा किया है। मनुष्य-जन्म में ही गुरु-भक्ति सम्भव बनायी है। गुरु-भक्ति के बिना जीव मलिनता और विकारों में रहता और बार-बार उसी में जन्मता-मरता है ॥ ११ ॥ परमात्मा की कृपा-दृष्टि हो, तभी गुरु की भक्ति सम्भव है। ऊँचे श्रेष्ठ कर्मों के बग़ैर यह पुण्य स्थिति क्योंकर मिल सकती है! परमात्मा सब कुछ अपने-आप करता है और अपनी रुचि के अनुसार समस्त जगत को चलाता है ॥ १२ ॥ जीव स्मृतियों, शास्त्रों के चक्र में फँसा परमात्मा के रहस्य को नहीं जानता। मूर्खता और ज्ञानांधता के कारण जीव यथार्थ को नहीं

पहचानता। परमात्मा सब कुछ अपने-आप करता है और स्वेच्छा से ही जीव को भ्रम में भटकाता है ॥ १३ ॥ सब कुछ अपने-आप करता-कराता है, अपने-आप जीव को बनाता और कार्य से लगाता है। वह अपने-आप बनाता-मिटाता है और गुरु के उपदेशानुसार आचरण करनेवाले जीव पर ही आत्म-प्रकटीकरण करता है ॥ १४ ॥ सत्यस्वरूप परमात्मा अथाह और गम्भीर है, सदा उसका गुणगान करने से ही मन को धैर्य मिलता है। उस अगम अगोचर परमात्मा का सही मूल्यांकन नहीं हो पाता, केवल गुरु के द्वारा ही उसे मन में बसाया जा सकता है ॥ १५ ॥ परमात्मा स्वयं निर्लेप है, अन्य समस्त लोग धन्धे लगे हैं (कर्माधीन हैं), इस तथ्य को कोई गुरु की कृपा से ही समझ पाता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के मतानुसार आचरण करने से हृदय में हरि-नाम बसता और जीव प्रभु से भेंट करता है ॥ १६ ॥ ३ ॥ १७ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ जुग छतीह कीओ गुबारा। तू आपे जाणहि सिरजण हारा। होर किआ को कहै कि आखि वखाणै तू आपे कीमति पाइदा ॥ १ ॥ ओअंकारि सभ स्रिसटि उपाई। सभु खेलु तमासा तेरी वडिआई। आपे वेक करे सभि साचा आपे भंनि घड़ाइदा ॥२॥ बाजीगरि इक बाजी पाई। पूरे गुर ते नदरी आई। सदा अलिपतु रहै गुरसबदी साचे सिउ चितु लाइदा ॥ ३ ॥ बाजहि बाजे धुनि आकारा। आपि वजाए वजावणहारा। घटि घटि पउणु वहै इकरंगी मिलि पवणै सभ वजाइदा ॥ ४ ॥ करता करे सु निहचउ होवै। गुर कै सबदे हउमै खोवै। गुरपरसादी किसै दे वडिआई नामो नामु धिआइदा ॥ ५ ॥ गुर सेवे जेवडु होरु लाहा नाही। नामु मंनि वसै नामो सालाही। नामो नामु सदा सुखदाता नामो लाहा पाइदा ॥ ६ ॥ बिनु नावै सभ दुखु संसारा। बहु करम कमावहि वधहि विकारा। नामु न सेवहि किउ सुखु पाईऐ बिनु नावै दुखु पाइदा ॥ ७ ॥ आपि करे तै आपि कराए। गुर परसादी किसै बुझाए। गुरमुखि होवहि से बंधन तोड़हि मुकती कै घरि पाइदा ॥ ८ ॥ गणत गणै सो जलै संसारा। सहसा मूलि न चुकै विकारा। गुरमुखि होवै सु गणत चुकाए सचे सचि समाइदा ॥ ९ ॥ जे सचु देइ त पाए कोई। गुरपरसादी परगटु होई। सचु नामु सालाहे रंगि

राता गुर किरपा ते सुखु पाइदा ॥ १० ॥ जपु तपु संजमु नामु पिआरा । किलविख काटे काटणहारा । हरि कै नामि तनु मनु सीतलु होआ सहजे सहजि समाइदा ॥ ११ ॥ अंतरि लोभु मनि मैलै मलु लाए । मैले करम करे दुखु पाए । कूड़ो कूड़ु करे वापारा कूड़ु बोलि दुखु पाइदा ॥ १२ ॥ निरमल बाणी को मंनि वसाए । गुरपरसादी सहसा जाए । गुर कै भाणै चलै दिनु राती नामु चेति सुखु पाइदा ॥ १३ ॥ आपि सिरंदा सचा सोई । आपि उपाइ खपाए सोई । गुरमुखि होवै सु सदा सलाहे मिलि साचे सुखु पाइदा ॥ १४ ॥ अनेक जतन करे इंद्री वसि न होई । कामि करोधि जलै सभु कोई । सतिगुर सेवे मनु वसि आवै मन मारे मनहि समाइदा ॥ १५ ॥ मेरा तेरा तुधु आपे कीआ । सभि तेरे जंत तेरे सभि जीआ । नानक नामु समालि सदा तू गुरमती मंनि वसाइदा ॥ १६ ॥ ४ ॥ १८ ॥

प्रलयकाल में छत्तीस युगों तक सृष्टि में अन्धकार फैला रहा था, हे कर्ता, तुम्हीं सबकी गति पहचानते थे। (उस समय) और कौन कुछ कह सकता था, कौन उसकी व्याख्या कर सकता था? केवल तुम स्वयं ही उसकी गति-मिति को पहचानते थे ॥ १ ॥ परमात्मा ने सगुण होकर (तब) समूची सृष्टि पैदा की। संसार के समस्त वैचित्र्य तुम्हारी ही बड़ाई प्रकट करते हैं। तुम, हे सच्चे प्रभु, स्वयं ही सबको अलग-अलग करते और तोड़ते-बनाते हो ॥ २ ॥ लीलाधारी परमात्मा ने ऐसी लीला की, जिसका रहस्य पूरे गुरु के सम्पर्क में ही समझा जा सकता है। सदा अलिप्त रहनेवाले सत्यस्वरूप परमात्मा के संग गुरु-उपदेश से ही मन लगता है ॥ ३ ॥ आकार-रूप बाजा है, इसमें की ध्वनि (प्राण) ही इसका बजना है और भीतर की सत्ता-स्फूर्ति ही इसे बजानेवाला तत्त्व है। प्रत्येक शरीर में एकरस होकर श्वास चलता और सबका जागरण देता है ॥ ४ ॥ परमात्मा जो करे, वह निश्चय ही पूर्ण होता है। गुरु के उपदेश पर आचरण करने से जीव का अभिमान विलीन होता है। गुरु-कृपा से बड़ाई तन-मन से हरि-नाम के ध्याता को ही मिलती है ॥ ५ ॥ गुरु की सेवा से बड़ा अन्य कोई लाभ नहीं। (इससे) मन में हरि-नाम वास करता और जीव मुख से उसी का गुणगान करता है। हरि-नाम सदा सुख का दाता है और हरि-नाम का ध्यान करनेवाला ही सब प्रकार के लाभ उठाता है ॥ ६ ॥ हरि-नाम से वंचित सब संसार दुःखी है, (इसे बाद करके किए गए) सब कर्म विषय-विकारों को और भी बढ़ाते हैं। हरि-नाम का भजन किए बिना सुख क्योंकर मिलेगा, हरि-नाम के

बिना जीव दुःख ही दुःख पाता है ॥ ७ ॥ तुम्हीं ने सब जीव बनाए हैं, तुम्हीं उनसे सब करम करवाते हो। यह रहस्य गुरु-कृपा से कोई विरला ही जानता है। गुरुमुख होकर ही जीव बन्धन तोड़ता और मुक्ति को प्राप्त करता है ॥ ८ ॥ जो उदार नहीं अर्थात् जो गिनती-मिनती में पड़ा रहता है, वह संसार में जलता रहता है। उसके मन के संशय और विकार कदापि नहीं मिटते; यदि जीव गुरु के बताए मार्ग पर चले, तो उसकी अनुदारता मिट जाती है और वह सत्यस्वरूप परमात्मा में समा जाता है ॥ ९ ॥ जिसे सत्य का रहस्य प्रभु देता है, वही इसे समझ पाता है। गुरु की कृपा से ही यह तथ्य प्रकट होता है। वह सत्य के प्रेम में लीन, हरि-नाम का गुणगान करते हुए गुरु-कृपा से सुख प्राप्त करता है ॥ १० ॥ हरि-नाम का प्यार ही जप-तप और संयम है, इससे पाप नाश करनेवाला सब पापों का नाश करता है। हरि-नाम के जाप से तन-मन शीतल हुआ है, परिणामतः जीव सहज में ही निराकार प्रभु में विलीन हो जाता है ॥ ११ ॥ अन्तर्मन में लोभ है, इसलिए मन के मैला होने पर मैल लगता है। मलिन कर्म करने से ही जीव को दुःख उठाना पड़ता है। जीव मिथ्या आचरण करने और मिथ्या व्यवहार से ही दुःख पाता है ॥ १२ ॥ गुरु की निर्मल वाणी को कोई विरला ही मन में बसाता और गुरु-कृपा से संशय-मुक्त होता है। वह रात-दिन गुरु की इच्छा से आचरण करता और हरि-नाम का भजन करते हुए सुख पाता है ॥ १३ ॥ सत्यस्वरूप परमात्मा स्वयम्भू है, वही सब कुछ बनाता-मिटाता है। गुरुमुख जीव सदा उसका गुण-गान करता और सत्य में तल्लीन होकर परमसुख लाभ करता है ॥ १४ ॥ सामान्यतः अनेक यत्न करने पर भी इन्द्रिय-निरोध सम्भव नहीं; सब काम-क्रोधादि भावों में जलते हैं। केवल सतिगुरु की आज्ञा-पालन करने से मन वश में आता है और मन मारने से ही जीव प्रभु से ऐक्य प्राप्त कर सकता है ॥ १५ ॥ तेरा-मेरा की भावना भी परमात्मा की बनायी है, सब जन्तु (प्राणी) उसी के अधीन हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम का स्मरण करने तथा गुरु-मतानुसार आचरण से ही वह परमात्मा मन में प्रकट होता है ॥ १६ ॥ ४ ॥ १८ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ हरि जीउ दाता अगम अथाहा। ओसु तिलु न तमाइ वेपरवाहा। तिस नो अपड़ि न सकै कोई आपे मेलि मिलाइदा ॥ १ ॥ जो किछु करै सु निहचउ होई। तिसु बिनु दाता अवरु न कोई। जिस नो नाम दानु करे सो पाए गुरसबदी मेलाइदा ॥ २ ॥ चउदह भवण तेरे हट नाले।

सतिगुरि दिखाए अंतरि नाले । नावै का वापारी होवै गुरसबदी को पाइदा ।। ३ ।। सतिगुरि सेविऐ सहज अनंदा । हिरदै आइ वुठा गोविंदा । सहजे भगति करे दिनु राती आपे भगति कराइदा ।। ४ ।। सतिगुर ते विछुड़े तिनी दुखु पाइआ । अनदिनु मारीअहि दुखु सबाइआ । मथे काले महलु न पावहि दुख ही विचि दुखु पाइदा ।। ५ ।। सतिगुरु सेवहि से वडभागी । सहज भाइ सची लिवलागी । सचो सचु कमावहि सद ही सचै मेलि मिलाइदा ।। ६ ।। जिस नो सचा देइ सु पाए । अंतरि साचु भरमु चुकाए । सचु सचै का आपे दाता जिसु देवै सो सचु पाइदा ।। ७ ।। आपे करता सभना का सोई । जिस नो आपि बुझाए बूझै कोई । आपे बखसे दे वडिआई आपे मेलि मिलाइदा ।। ८ ।। हउमै करदिआ जनमु गवाइआ । आगै मोहु न चूकै माइआ । अगै जमकालु लेखा लेवै जिउ तिल घाणी पीड़ाइदा ।। ९ ।। पूरै भागि गुर सेवा होई । नदरि करे ता सेवे कोई । जमकालु तिसु नेड़ि न आवै महलि सचै सुखु पाइदा ।। १० ।। तिन सुखु पाइआ जो तुधु भाए । पूरै भागि गुर सेवा लाए । तेरै हथि है सभ वडिआई जिसु देवहि सो पाइदा ।। ११ ।। अंदरि परगासु गुरू ते पाए । नामु पदारथु मंनि वसाए । गिआन रतनु सदा घटि चानणु अगिआन अंधेरु गवाइदा ।। १२ ।। अगिआनी अंधे दूजै लागे । बिनु पाणी डुबि मूए अभागे । चलदिआ घरु दरु नदरि न आवै जम दरि बाधा दुखु पाइदा ।। १३ ।। बिनु सतिगुर सेवे मुकति न होई । गिआनी धिआनी पूछहु कोई । सतिगुरु सेवे तिसु मिलै वडिआई दरि सचै सोभा पाइदा ।। १४ ।। सतिगुर नो सेवे तिसु आपि मिलाए । ममता काटि सचि लिव लाए । सदा सचु वणजहि वापारी नामो लाहा पाइदा ।। १५ ।। आपे करे कराए करता । सबदि मरै सोई जनु मुकता । नानक नामु वसै मन अंतरि नामो नामु धिआइदा ।। १६ ।। ५ ।। १९ ।।

हरि अगम्य और अथाह दाता है, उसे किसी प्रकार की क्षुद्र लालसा नहीं, वह बे-परवाह है । उस तक तब तक किसी की पहुँच नहीं, जब तक कि वह अपने-आप जीव को अपने संग न मिला ले ।। १ ।। जो वह करता

है, वह निश्चय ही होता है, उसके बिना अन्य कोई दातृ-शक्ति में समर्थ नहीं। जिसे गुरु के उपदेश से हरि-नाम का ज्ञान होता है, उसी को वह प्राप्य होता है ॥ २ ॥ चौदहों भुवन परमात्मा के व्यापार-स्थल हैं, सच्चा गुरु जीव के भीतर से ही इसका रहस्य बता देने में समर्थ है। कोई विरला हरि-नाम का व्यापारी ही गुरु-उपदेश से इस तथ्य को समझता है ॥ ३ ॥ सतिगुरु की सेवा से सहज में ही सुख प्राप्त होता है। परमात्मा स्वयं हृदय में बस जाता है। और जीव को भक्ति में प्रवृत्त करता है, तो सहज ही रात-दिन जीव भक्ति-संलग्न हो जाता है ॥ ४ ॥ जो जीव सतिगुरु से बिछुड़ जाते हैं, वे दुःखी होते हैं। वे रात-दिन यमदूतों द्वारा दण्डित होते और उनके दुःखों में वृद्धि होती है। वे कलंकित होते हैं, उन्हें कोई स्थिर जगह नहीं मिलती, वे दुःख में ही दुःख भोगते रह जाते हैं ॥ ५ ॥ सतिगुरु की सेवा करनेवाले भाग्यशाली हैं। सत्य में स्वतः ही उनका प्यार हो जाता है। वे नित्य सत्य की कमाई करते और सत्य में ही विलीन होते हैं ॥ ६ ॥ सत्यस्वरूप परमात्मा जिसे अपनी संगति प्रदान करे, वही पाता है; वह उसके अन्तर्मन से भ्रम को दूर कर, सत्य को स्थापित करता है। प्रभु स्वयं ही सत्य का दाता है, जिसे वह देता है, वही प्राप्त करता है ॥ ७ ॥ परमात्मा स्वयं सबका बनानेवाला है; जिसे वह अपनी पहचान की शक्ति देता है, वही उसे जानता है। वह अपने-आप बड़ाई देता है और आप ही सबसे मेल बिठाता है ॥ ८ ॥ मनुष्य प्रायः अहंकार में जीवन भर विचरता है; उसका मोह-माया का आकर्षण कभी दूर नहीं होता। मृत्यूपरांत यमदूत हिसाब-किताब लेते हैं और दण्ड के नाते तिलों की नाईं कोल्हू में पीस देते हैं ॥ ९ ॥ किसी के अति शुभ कर्म हों, तभी वह गुरु की सेवा कर सकता है। किसी पर परमात्मा की कृपा-दृष्टि हो, तो भी वह गुरु-सेवा में प्रवृत्त हो सकता है। ऐसे साधक को यमराज के दण्ड का सामना नहीं करना पड़ता, वरन् वह अपने सच्चे घर (सचखंड) में सुखी रहता है ॥ १० ॥ जो जीव, हे प्रभु, तुम्हारी स्वीकृति पा सके हैं, वे ही सुखी हैं। वे सौभाग्यपूर्वक गुरु-सेवा में लीन हैं। हे परमात्मा, सब यश-कीर्ति तुम्हारे हाथ है, जिसे देते हो, वही पाता है ॥ ११ ॥ गुरु से अन्तःप्रकाश (ज्ञानालोक) प्राप्त होता है, मन में हरि-नाम की ध्वनि गुंजरित होती है। ज्ञान-रत्न को पाकर अन्तर्मन दीप्त हो उठता है, उसका अज्ञानांधकार नष्ट हो जाता है ॥ १२ ॥ अज्ञानी जीव सत्य को नहीं पहचानते, इसलिए द्वैत-भाव में लीन होते हैं; वे अभागे बिना पानी ही डूब मरते हैं। मृत्यु-समय उन्हें प्रभु के महलों में स्थान नहीं मिलता, वे यमदूतों द्वारा बाँधकर ले जाए जाते हैं, उन्हें सुख नहीं मिलता ॥ १३ ॥ सतिगुरु की सेवा में संलग्न हुए बिना मुक्ति नहीं मिलती, चाहे किसी भी ज्ञानी-ध्यानी

से पूछकर पुष्टि कर लो ! जो सतिगुरु की सेवा करता है, उसे बड़ाई मिलती है और वही अपने सच्चे घर, परमात्मा के हुज़ूर में शोभा पाता है ॥ १४ ॥ सतिगुरु-सेवी को परमात्मा अपने संग मिला लेता है, ममता के बन्धनों को काटकर वह सत्य में स्थिर हो जाता है; वह सदा सत्य का ही व्यापार करता है और हरि-नाम का लाभ कमाता है ॥ १५ ॥ परमात्मा खुद सब कुछ करता है; जो व्यक्ति शब्द द्वारा जीवित मृत्यु का वरण करता है, गुरु नानक कहते हैं कि उसके अन्तर्मन में हरि-नाम बसता है और वह हर समय नाम का जाप करता है ॥ १६ ॥ ५ ॥ १९ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ जो तुधु करणा सो करि पाइआ । भाणे विचि को विरला आइआ । भाणा मंने सो सुखु पाए भाणे विचि सुखु पाइदा ॥ १ ॥ गुरमुखि तेरा भाणा भावै । सहजे ही सुखु सचु कमावै । भाणे नो लोचै बहुतेरी आपणा भाणा आपि मनाइदा ॥ २ ॥ तेरा भाणा मंने सु मिलै तुधु आए । जिसु भाणा भावै सो तुझहि समाए । भाणे विचि वडी वडिआई भाणा किसहि कराइदा ॥ ३ ॥ जा तिसु भावै ता गुरू मिलाए । गुरमुखि नामु पदारथु पाए । तुधु आपणै भाणै सभ स्रिसटि उपाई जिस नो भाणा देहि तिसु भाइदा ॥ ४ ॥ मनमुखु अंधु करे चतुराई । भाणा न मंने बहुतु दुखु पाई । भरमे भूला आवै जाए घरु महलु न कबहू पाइदा ॥ ५ ॥ सतिगुरु मेले दे वडिआई । सतिगुर की सेवा धुरि फुरमाई । सतिगुर सेवे ता नामु पाए नामे ही सुखु पाइदा ॥ ६ ॥ सभ नावहु उपजै नावहु छीजै । गुर किरपा ते मनु तनु भीजै । रसना नामु धिआए रसि भीजै रस ही ते रसु पाइदा ॥ ७ ॥ महलै अंदरि महलु को पाए । गुर कै सबदि सचि चितु लाए । जिस नो सचु देइ सोई सचु पाए सचे सचि मिलाइदा ॥ ८ ॥ नामु विसारि मनि तनि दुखु पाइआ । माइआ मोहु सभु रोगु कमाइआ । बिनु नावै मनु तनु है कुसटी नरके वासा पाइदा ॥ ९ ॥ नामि रते तिन निरमल देहा । निरमल हंसा सदा सुखु नेहा । नामु सलाहि सदा सुखु पाइआ निजघरि वासा पाइदा ॥ १० ॥ सभु को वणजु करे वापारा । विणु नावै सभु तोटा संसारा । नागो आइआ नागो जासी विणु नावै दुखु पाइदा ॥ ११ ॥ जिस नो नामु देइ सो पाए । गुर कै सबदि हरि मंनि वसाए ।

गुर किरपा ते नामु वसिआ घट अंतरि नामो नामु धिआइदा ।।१२।। नावै नो लोचै जेती सभ आई । नाउ तिना मिलै धुरि पुरबि कमाई । जिनी नाउ पाइआ से वडभागी गुर कै सबदि मिलाइदा ।। १३ ।। काइआ कोटु अति अपारा । तिसु विचि बहि प्रभु करे वीचारा । सचा निआउ सचो वापारा निहचलु वासा पाइदा ।।१४।। अंतर घर बंके थानु सुहाइआ । गुरमुखि विरलै किनै थानु पाइआ । इतु साथि निबहै सालाहे सचे हरि सचा मंनि वसाइदा ।। १५ ।। मेरै करतै इक बणत बणाई । इसु देही विचि सभ वथु पाई । नानक नामु वणजहि रंगि राते गुरमुखि को नामु पाइदा ।। १६ ।। ६ ।। २० ।।

जो कुछ कर्मानुसार करना है, वह पहले ही हमने अपनी भाग्य-रेखाओं में पा लिया है, किन्तु हे परमात्मा, तुम्हारी इच्छा में ही प्रसन्न रहनेवाला कोई विरला ही होता है। किन्तु तुम्हारी इच्छा में जीनेवाला जीव सुखी होता है, प्रभु-इच्छा में ही सुख है ।। १ ।। गुरु के मतानुसार आचरण करनेवाले को प्रभु-इच्छा शोभती है। वह सहज में ही सत्यस्वरूप परमात्मा के सम्पर्क में सुख पाता है। सृष्टि के अनेक जीव प्रभु-इच्छा में रहना चाहते हैं, किन्तु यह भी तुम्हारी इच्छा से ही सम्भव होता है ।। २ ।। जो तुम्हारी इच्छा को सर्वोपरि मानते हैं, वे तुमसे ही आकर मिल जाते हैं। जिन्हें तुम्हारी इच्छा स्वीकार होती है, वह तुम्हीं में समा जाते हैं। प्रभु-इच्छा में यश मिलता है, प्रभु-इच्छा कोई विरला ही समझता है ।। ३ ।। जब प्रभु की इच्छा होती है, तो गुरु-मिलन होता है, गुरु के द्वारा जीव को हरिनाम-पदार्थ प्राप्त होता है। हे परमात्मा, तुमने स्वेच्छा से समूची सृष्टि उपजायी है; जिसे तुम स्वेच्छा से सामर्थ्य देते हो, वह तुम्हारी इच्छा का सत्कार करना सीखता है ।। ४ ।। मनमुख जीव मिथ्या चतुराई करता है, प्रभु की इच्छा न मानने के कारण वह दुःख पाता है। वह भ्रम में भूला जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है, कभी अपनी असली और सच्चे घर (सचखण्ड) में नहीं पहुँच पाता ।। ५ ।। सतिगुरु से भेंट हो, तो बड़ाई मिले। परमात्मा का विधान ही ऐसा है कि सतिगुरु की सेवा अनिवार्य है। सतिगुरु की सेवा से हरि-नाम का रहस्य प्रकट होता है और उससे सुख मिलता है ।। ६ ।। संसार में सब कुछ हरि-नाम से (परमात्मा द्वारा) उपजता है और हरि-नाम से ही विनष्ट होता है। गुरु की कृपा से तन-मन प्रफुल्लित होता है। जो जीव जिह्वा से हरि-नाम का जाप करते हैं, वे उसी रस में विभोर होकर रस-मग्न होते हैं ।। ७ ।। महल के भीतर महल (शरीर के भीतर हरि का स्थान) कौन पाता है ?

जो गुरु के उपदेश से मन को संयत करके सत्यस्वरूप परमात्मा में चित्त लगाता है (वही पाता है)। परमात्मा जिसे सत्य का ज्ञान देता है, वही सत्य को पाता है और स्वयं सत्य में ही विलीन हो जाता है ॥ ८ ॥ हरि-नाम की अवज्ञा से तन-मन दुःखी होते हैं, माया-मोह के कारण वे अस्वस्थ-चित्त रहते हैं। हरि-नाम के रसायन के बिना तन-मन कुष्ट रोग से पीड़ित होता है और नाम-विहीन जीव नरक में वास पाता है ॥ ९ ॥ हरि-नाम में रत रहनेवालों की देह निर्मल होती है, उनकी आत्मा निर्मल होती और प्रेम के कारण परमसुख को प्राप्त होती है। हरि-नाम का गुणगान करने से वे सदा सुखी होते और अन्ततः अपने मूल घर (प्रभु-शरण) में स्थिर रहते हैं ॥ १० ॥ सब कोई अलग-अलग प्रकार के व्यापार करते हैं, किन्तु हरि-नाम के बिना संसार में सब अभाव-ग्रस्त ही रहते हैं। हरि-नाम के बिना जीव खाली हाथ आया, खाली हाथ जायगा और दुःखी होगा ॥ ११ ॥ जिसे परमात्मा स्वयं हरि-नाम का योग दे, वही पा सकता है। गुरु के उपदेशों में विचरने से ही परमात्मा हृदय में निवास करता है। गुरु की कृपा से अन्तर्मन में हरि-नाम उजागर होता है, और जीव दत्तचित्त उसका भजन करता है ॥ १२ ॥ समूची सृष्टि हरि-नाम को चाहती है। किन्तु जिनके पूर्वकर्म शुभ हैं, वही नाम को प्राप्त करते हैं। जिन्हें हरि-नाम प्राप्त है, वे भाग्यशाली हैं, वे गुरु के उपदेश से ही हरि-नाम में संलग्न होते हैं ॥ १३ ॥ शरीर एक अपार दुर्ग के समान है, प्रभु स्वयं उसी में बैठा योजना करता है। सत्य का व्यापार एवं सत्य का न्याय करनेवाला जीव ही उसके निकट निश्चल वास कर पाता है ॥ १४ ॥ भीतर हृदय, मन, बुद्धि, रूप सब सुन्दर हैं, उस सुन्दर स्थान को कोई गुरुमुख ही पा सकता है। इस स्थान में जो पूरा उतरे (अर्थात् जो यहाँ स्थिर हो), वह सत्यस्वरूप परमात्मा को सदा अपने निकट ही देखता है। (मन में उसे बसा लेता है) ॥ १५ ॥ मेरे परमात्मा ने एक विधान ऐसा भी किया है कि इस शरीर में ही समूची सामग्री एकत्रित कर दी है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम का व्यापार करनेवाले प्रभु-प्रेम में मग्न रहते हैं, कोई गुरुमुख ही नाम-रहस्य को जानता है ॥ १६ ॥ ६ ॥ २० ॥

॥ मारू महला ३ ॥ काइआ कंचनु सबदु वीचारा। तिथै हरि वसै जिस दा अंतु न पारावारा। अनदिनु हरि सेविहु सची बाणी हरि जीउ सबदि मिलाइदा ॥ १ ॥ हरि चेतहि तिन बलिहारै जाउ। गुर कै सबदि तिन मेलि मिलाउ। तिन की धूरि लाई मुखि मसतकि सतसंगति बहि गुण गाइदा ॥ २ ॥ हरि के गुण गावा जे हरि प्रभ भावा। अंतरि हरि नामु सबदि

सुहावा । गुरबाणी चहु कुंडी सुणीऐ साचै नामि समाइदा ॥३॥ सो जनु साचा जि अंतरु भाले । गुर कै सबदि हरि नदरि निहाले । गिआन अंजनु पाए गुरसबदी नदरी नदरि मिलाइदा ॥ ४ ॥ वडै भागि इहु सरीरु पाइआ । माणस जनमि सबदि चितु लाइआ । बिनु सबदै सभु अंध अंधेरा गुरमुखि किसहि बुझाइदा ॥ ५ ॥ इकि कितु आए जनमु गवाए । मनमुख लागे दूजै भाए । एह वेला फिरि हाथि न आवै पगि खिसिऐ पछुताइदा ॥ ६ ॥ गुर कै सबदि पवित्रु सरीरा । तिसु विचि वसै सचु गुणी गहीरा । सचो सचु वेखै सभ थाई सचु सुणि मंनि वसाइदा ॥ ७ ॥ हउमै गणत गुरसबदि निवारे । हरि जीउ हिरदै रखहु उरधारे । गुर कै सबदि सदा सालाहे मिलि साचे सुखु पाइदा ॥ ८ ॥ सो चेते जिसु आपि चेताए । गुर कै सबदि वसै मनि आए । आपे वेखै आपे बूझै आपै आपु समाइदा ॥ ९ ॥ जिनि मन विचि वथु पाई सोई जाणै । गुर कै सबदे आपु पछाणै । आपु पछाणै सोई जनु निरमलु बाणी सबदु सुणाइदा ॥ १० ॥ एह काइआ पवितु है सरीरु । गुरसबदी चेतै गुणी गहीरु । अनदिनु गुण गावै रंगि राता गुण कहि गुणी समाइदा ॥ ११ ॥ एहु सरीरु सभ मूलु है माइआ । दूजै भाइ भरमि भुलाइआ । हरि न चेतै सदा दुखु पाए बिनु हरि चेते दुखु पाइदा ॥ १२ ॥ जि सतिगुरु सेवे सो परवाणु । काइआ हंसु निरमलु दरि सचै जाणु । हरि सेवे हरि मंनि वसाए सोहै हरि गुण गाइदा ॥१३॥ बिनु भागा गुरु सेविआ न जाइ । मनमुख भूले मुए बिललाइ । जिन कउ नदरि होवै गुर केरी हरि जीउ आपि मिलाइदा ॥ १४ ॥ काइआ कोटु पके हट नाले । गुरमुखि लेवै वसतु समाले । हरि का नामु धिआइ दिनु राती ऊतम पदवी पाइदा ॥ १५ ॥ आपे सचा है सुखदाता । पूरे गुर कै सबदि पछाता । नानक नामु सलाहे साचा पूरै भागि को पाइदा ॥ १६ ॥ ७ ॥ २१ ॥

हरि के हुक्म को पहचान लेने से शरीर स्वर्ण-सा सुन्दर हो जाता है । परमात्मा इसी शरीर में बसता है, उस अनन्त का ज्ञान (शरीर को सुन्दर बनाता है) । सच्ची गुरुवाणी के द्वारा प्रतिदिन परमात्मा की

सेवा करो, क्योंकि परमात्मा गुरुवाणी (शब्द) द्वारा ही मिलता है ॥ १ ॥ जो हरि का स्मरण करते हैं, मैं उन पर क़ुर्बान हूँ। गुरु की वाणी से ही उनसे मेरा मिलाप सम्भव है। उनकी चरण-धूल को मुख-मस्तक पर धारण कर मैं उनकी सत्संगति में बैठकर प्रभु का गुणगान करता हूँ ॥ २ ॥ हरि का गुणगान भी तभी सम्भव है, यदि हरि को स्वीकार हो। गुरुवाणी द्वारा हरि का नाम हमारे भीतर शोभता है। चतुर्दिक् गुरुवाणी ही गूंजती है और इस प्रकार (हम) हरि-नाम में समा जाते हैं ॥३॥ वही व्यक्ति सच्चा है, जो अपने हृदय में झाँककर देखता है। गुरुवाणी के ही द्वारा परमात्मा की कृपा मिलती है। गुरुवाणी द्वारा ज्ञान का अंजन हृदय-नेत्रों में लगा लेने से कृपालु परमात्मा कृपा-दृष्टि द्वारा अपने संग मिला लेता है ॥ ४ ॥ यह मनुष्य-शरीर बड़े भाग्य से मिला है। मनुष्य-जन्म में ही गुरुवाणी में मन स्थिर हो पाता है। गुरुवाणी के बिना सब अन्धकार है, इस तथ्य को कोई गुरुमुख ही जानता है ॥ ५ ॥ आखिर यहाँ किस काम से आए ? व्यर्थ जन्म गँवा दिया है। मन की प्रेरणा से द्वैत-भाव में लगे रहें —बाद में यह समय कभी हाथ नहीं लगेगा, एक बार पग फिसल गया तो सदा पछतावा रहेगा ॥ ६ ॥ गुरु की वाणी के श्रवण-गान से शरीर पवित्र होता है, उसमें सत्यस्वरूप गम्भीर गुणवान परमात्मा स्वयं निवास करता है। तब जीव सब ओर सत्य ही देखता, सुनता और मन में धारण करता है ॥ ७ ॥ गुरुवाणी द्वारा अभिमान और संसार की गिनती-मिनती का नाश होता है और परमात्मा स्वयं हृदय में निवास करता है। गुरु के उपदेशों से ही जीव परमात्मा का गुण गाता और सत्य में लीन होकर परमसुख प्राप्त करता है ॥ ८ ॥ परमात्मा जिसे चाहे, उसी को विवेक प्रदान करता है और गुरु-उपदेश पर आचरण करने से ही मन में आ बसता है। वही अपने को देखता और समझता है तथा स्व-स्वरूप में समाता है अर्थात् विलीन होनेवाला और जिसमें विलीन होना है, दोनों परमात्मा का ही रूप हैं— अंश, अंशी भेद है ॥ ९ ॥ जिसने हरि-नाम रूपी वस्तु मन में धारण की है, वह उसके रहस्य को जानता है। गुरु के उपदेश द्वारा ही उसे आत्मज्ञान होता है। जो मनुष्य आत्म-ज्ञान को पाता है, वही निर्मल होता और गुरुवाणी द्वारा सत्य का स्वरूप आत्मसात् करता है ॥१०॥ यह शरीर तभी पवित्र है, जब गुरु के शब्द की सहायता से वह गम्भीर गुणी प्रभु इसके भीतर से साक्षात् हो जाता है। मनुष्य प्रतिदिन प्रभु के प्यार में रँगकर परमात्मा के गुण गाते हुए गुणागार परमात्मा में ही समा जाता है ॥ ११ ॥ यदि यही शरीर द्वैत-भाव के कारण भ्रम में भटक जाता है, तो माया का मूल होता है (समूचे मायावी तन्त्र यहीं से आरम्भ होते हैं)। तब इसमें हरि की चेतना नहीं होती, जिसके बिना मनुष्य सदा दुःखी होता, दुःख पाता

है ॥ १२ ॥ जो सतिगुरु का स्मरण करता है, वही परमात्मा के दरबार में स्वीकृत होता है। सच्चे द्वार पर पहुँचकर उसकी काया और आत्मा दोनों निर्मल हो जाते हैं। हरि की सेवा में, हरि को मन में बसा लेने से तथा हरि के गुण गाने से ही मनुष्य शोभा पाता है ॥ १३ ॥ सद्भाग्य के बिना सतिगुरु की सेवा भी सम्भव नहीं, मनमुख जीव बिलख-बिलखकर मरते हैं; किन्तु जिन पर सतिगुरु की कृपा हो जाती है, परमात्मा स्वयं उन्हें अपने में मिला लेता है ॥ १४ ॥ शरीर एक दुर्ग के समान है, इसके भीतर (मूल वस्तु का) बाज़ार है। गुरु के उपदेशों पर आचरण करनेवाला सही वस्तु को ख़रीदता और गाँठ बाँध लेता है और रात-दिन हरि-नाम का ध्यान करता हुआ उत्तम पद को प्राप्त करता है ॥ १५ ॥ सत्यस्वरूप परमात्मा ही सुखदाता है; इसकी सही पहचान गुरुवाणी से ही सम्भव होती है। गुरु नानक कहते हैं कि सच्चा नाम-स्मरण करने से ही कोई भाग्यशाली उसे पहचानकर अपना सकता है ॥ १६ ॥ ७ ॥ २१ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ निरंकारि आकारु उपाइआ। माइआ मोहु हुकमि बणाइआ। आपे खेल करे सभि करता सुणि साचा मंनि वसाइदा ॥ १ ॥ माइआ माई त्रैगुण परसूति जमाइआ। चारे बेद ब्रहमे नो फुरमाइआ। वर्हे माह वार थिती करि इसु जग महि सोझी पाइदा ॥ २ ॥ गुर सेवा ते करणी सार। राम नामु राखहु उरिधार। गुरबाणी वरती जग अंतरि इसु बाणी ते हरि नामु पाइदा ॥ ३ ॥ वेदु पड़ै अनदिनु वाद समाले। नामु न चेतै बधा जम काले। दूजै भाइ सदा दुखु पाए त्रैगुण भरमि भुलाइदा ॥ ४ ॥ गुरमुखि एकसु सिउ लिव लाए। त्रिबिधि मनसा मनहि समाए। साचै सबदि सदा है मुकता माइआ मोहु चुकाइदा ॥ ५ ॥ जो धुरि राते से हुणि राते। गुरपरसादी सहजे माते। सतिगुरु सेवि सदा प्रभु पाइआ आपै आपु मिलाइदा ॥ ६ ॥ माइआ मोहि भरमि न पाए। दूजै भाइ लगा दुखु पाए। सूहा रंगु दिन थोड़े होवै इसु जादे बिलम न लाइदा ॥ ७ ॥ एहु मनु भै भाइ रंगाए। इतु रंगि साचे माहि समाए। पूरै भागि को इहु रंगु पाए गुरमती रंगु चड़ाइदा ॥८॥ मनमुखु बहुतु करे अभिमानु। दरगह कबही न पावै मानु। दूजै लागे जनमु गवाइआ बिनु बूझे दुखु पाइदा ॥ ९ ॥ मेरै प्रभि अंदरि आपु लुकाइआ।

गुरपरसादी हरि मिलै मिलाइआ। सचा प्रभु सचा वापारा नामु अमोलकु पाइदा ॥ १० ॥ इसु काइआ की कीमति किनै न पाई। मेरै ठाकुरि इह बणत बणाई। गुरमुखि होवै सु काइआ सोधै आपहि आपु मिलाइदा ॥ ११ ॥ काइआ विचि तोटा काइआ विचि लाहा। गुरमुखि खोजे वेपरवाहा। गुरमुखि वणजि सदा सुखु पाए सहजे सहजि मिलाइदा ॥ १२ ॥ सचा महलु सचे भंडारा। आपे देवै देवणहारा। गुरमुखि सालाहे सुखदाते मनि मेले कीमति पाइदा ॥ १३ ॥ काइआ विचि वसतु कीमति नही पाई। गुरमुखि आपे दे वडिआई। जिस दा हटु सोई वथु जाणै गुरमुखि देइ न पछोताइदा ॥ १४ ॥ हरि जीउ सभ महि रहिआ समाई। गुर परसादी पाइआ जाई। आपे मेलि मिलाए आपे सबदे सहजि समाइदा ॥ १५ ॥ आपे सचा सबदि मिलाए। सबदे विचहु भरमु चुकाए। नानक नामि मिलै वडिआई नामे ही सुखु पाइदा ॥१६॥८॥२२॥

निर्गुण परमात्मा ने ही समूची आकार-युक्त सृष्टि का निर्माण किया है। माया-मोह आदि विकारों को भी अपने हुक्म से पैदा किया है। यह समूचा दृश्य जगत्कर्ता की लीला है, सत्यस्वरूप प्रभु को मन में बसाने से ही (मोह नष्ट होता है) ॥ १ ॥ माया रूपी माता के गर्भ से (हरि पिता ने) त्रिगुणात्मक संसार पैदा किया। ब्रह्मा को चारों वेदों को प्रकट करने का फ़रमान दिया। तब इस संसार का काल का ज्ञान दिया अर्थात् वर्ष, मास, वार, तिथि आदि बनाए ॥ २ ॥ मनुष्य के कर्म गुरु-सेवा से श्रेष्ठ हो जाते हैं, (इसलिए) राम-नाम को हृदय में धारण कर रखो। संसार में गुरु-वाणी का चतुर्दिक् प्रसार हुआ और उसी वाणी से जीवों को हरि-नाम प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ वेदों का अध्ययन करनेवाला मनुष्य नित्य वाद-विवाद में प्रवृत्त होता है, वह हरि-नाम का स्मरण न करने के कारण यमराज की व्यवस्था में बँधा रह जाता है। द्वैत-भाव में उलझा दुःख पाता और तीन गुणों की रचना-भ्रम में भूला रहता है ॥ ४ ॥ गुरुमुख जीव एक परमात्मा से मिलकर उसमें तल्लीन होता है, तीनों प्रकार की (रजो, तमो, सतोगुणी) कामनाओं को नाश करता है। सच्चे गुरु-उपदेश में मुक्ति निहित है, इससे मोह-माया का परिवेश चुक जाता है ॥ ५ ॥ जो शुरू से ही परमात्मा के प्यार में संलग्न हैं, वे मनुष्य-जन्म में भी उसी में लीन रहते हैं। वे गुरु की कृपा से सहज ही हरि-नाम की मस्ती में रमे रहते हैं। सतिगुरु की सच्ची सेवा द्वारा ही अपने-आप

परमात्मा से मेल हो जाता है ॥ ६ ॥ मोह-माया और भ्रमों में पड़ा हुआ जीव प्रभु को नहीं पा सकता। वह द्वैत-भाव में रत होकर सदा दुःख पाता है। (किन्तु ध्यान रहे) कि खुशी का रंग थोड़े दिन के लिए होता है, इसे बीतते देर नहीं लगती ॥ ७ ॥ जो जीव अपने मन को हरि के भय और प्रेम में रँग लेता है, वह सत्यस्वरूप प्रभु के साथ एक-रंग हो जाता है। यह रंग सौभाग्य से मिलता है और गुरु-मतानुसार आचरण करने से ही चढ़ता है, अर्थात् प्रभु-प्रेम गुरुमुखों में ही उपजता है ॥ ८ ॥ मनमुख जीव अभिमानी होते हैं, उन्हें परमात्मा के दरबार में कभी सम्मान नहीं मिलता। वे सदैव द्वैत-भाव में जन्म गँवाते और बिना विवेक दुःखी होते रहते हैं ॥ ९ ॥ मेरे प्रभु ने सबके भीतर अपने-आप को छिपा रखा है, गुरु की कृपा से वह प्रकट में मिल भी जाता है; सत्यस्वरूप परमात्मा का समूचा कार्य-व्यापार सत्य है, अमूल्य हरि-नाम द्वारा ही प्राप्ति होती है (अर्थात् सत्य का ज्ञान होता है) ॥ १० ॥ इस शरीर का सही मूल्यांकन कोई नहीं कर पाया, मेरे स्वामी ने ऐसा ही विधान कर रखा है (काया के भीतर प्रभु स्वयं है, यदि सही मूल्यांकन किया होता, तो परमात्मा से ही मिलन हो जाता)। गुरुमुख जीव ही शरीर की सही खोज करता है (उसके भीतर छिपे परमात्मा को खोजता है) और स्वयं परमात्मा से मिल जाता है ॥ ११ ॥ शरीर में ही सब हानि-लाभ मौजूद हैं, गुरु के द्वारा ही उस बे-परवाह प्रभु को खोजा जा सकता है। गुरुमुख जीव इस व्यापार में सदा सुख लाभ करते और सहज ही उस परम स्थिति में मिल जाते हैं ॥ १२ ॥ परमात्मा के प्रासाद और भण्डार सब सत्य हैं, वह दाता स्वयं सबको सब कुछ देता है। गुरुमुख जीव सुखदाता प्रभु का गुण-गान करता और मन को उसी में रमाकर उसका सही मूल्यांकन करता है ॥ १३ ॥ शरीर में की मूल वस्तु का मोल कोई नहीं कर पाता, किसी गुरुमुख को स्वयं परमात्मा ही इसकी बड़ाई देता है। यह जिसकी दुकान है, वही इसमें रखी सामग्री को जानता है; जिसे गुरु के द्वारा यह सामग्री मिल जाती है, वह फिर पश्चात्ताप नहीं करता ॥ १४ ॥ परमात्मा सर्व-व्यापक है, सबमें समाया हुआ है। गुरु-कृपा से उसे प्रत्यक्ष में पाया जाता है। वह अपने-आप मिलाता तथा स्वयं ही शब्द-रूप में (नाद-रूप में) सर्वत्र समाया रहता है। (तात्पर्य यह कि सतिगुरु को वही मिलाता है और स्वयं ही शब्द के माध्यम से परमपद में पहुँचाता है।) ॥ १५ ॥ वाहिगुरु अपने-आप ही जीव को गुरु-उपदेश से मिलाता है और उपदेश देकर उसके अन्तर्मन के भ्रमों को नष्ट करता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम से ही प्रतिष्ठा मिलती है और हरि-नाम से ही सुख प्राप्त होता है ॥ १६ ॥ ८ ॥ २२ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ अगम अगोचर वेपरवाहे । आपे मिहरवान अगम अथाहे । अपड़ि कोइ न सकै तिस नो गुर सबदी मेलाइआ ॥ १ ॥ तुधु नो सेवहि जो तुधु भावहि । गुर कै सबदे सचि समावहि । अनदिनु गुण रवहि दिनु राती रसना हरि रसु भाइआ ॥२॥ सबदि मरहि से मरणु सवारहि । हरि के गुण हिरदै उरधारहि । जनमु सफलु हरि चरणी लागे दूजा भाउ चुकाइआ ॥ ३ ॥ हरि जीउ मेले आपि मिलाए । गुर कै सबदे आपु गवाए । अनदिनु सदा हरि भगती राते इसु जग महि लाहा पाइआ ॥४॥ तेरे गुण कहा मै कहणु न जाई । अंतु न पारा कीमति नही पाई । आपे दइआ करे सुखदाता गुण महि गुणी समाइआ ॥ ५ ॥ इसु जग महि मोहु है पासारा । मनमुखु अगिआनी अंधु अंधारा । धंधै धावतु जनमु गवाइआ बिनु नावै दुखु पाइआ ॥ ६ ॥ करमु होवै ता सतिगुरु पाए । हउमै मैलु सबदि जलाए । मनु निरमलु गिआनु रतनु चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥ ७ ॥ तेरे नाम अनेक कीमति नही पाई । सचु नामु हरि हिरदै वसाई । कीमति कउणु करे प्रभ तेरी तू आपे सहजि समाइआ ॥ ८ ॥ नामु अमोलकु अगम अपारा । ना को होआ तोलणहारा । आपे तोले तोलि तोलाए गुरसबदी मेलि तोलाइआ ॥ ९ ॥ सेवक सेवहि करहि अरदासि । तू आपे मेलि बहालहि पासि । सभना जीआ का सुखदाता पूरै करमि धिआइआ ॥ १० ॥ जतु सतु संजमु जि सचु कमावै । इहु मनु निरमलु जि हरि गुण गावै । इसु बिखु महि अंम्रितु परापति होवै हरि जीउ मेरे भाइआ ॥ ११ ॥ जिसनो बुझाए सोई बूझै । हरि गुण गावै अंदरु सूझै । हउमै मेरा ठाकि रहाए सहजे ही सचु पाइआ ॥ १२ ॥ बिनु करमा होर फिरै घनेरी । मरि मरि जंमै चुकै न फेरी । बिखु का राता बिखु कमावै सुखु न कबहू पाइआ ॥ १३ ॥ बहुते भेख करे भेखधारी । बिनु सबदै हउमै किनै न मारी । जीवतु मरै ता मुकति पाए सचै नाइ समाइआ ॥ १४ ॥ अगिआनु त्रिसना इसु तनहि जलाए । तिसदी बूझै जि गुर सबदु कमाए । तनु मनु सीतलु क्रोधु निवारे हउमै मारि समाइआ ॥ १५ ॥ सचा साहिबु सची वडिआई ।

गुर परसादी विरलै पाई । नानकु एक कहै बेनंती नामे नामि समाइआ ॥ १६ ॥ १ ॥ २३ ॥

वह बे-परवाह परमात्मा मन-इन्द्रियों का विषय नहीं, तथापि वह कृपालु गहर गम्भीर है। उस तक कोई नहीं पहुँच सकता, केवल गुरु के उपदेश से उससे भेंट सम्भव है ॥ १ ॥ हे प्रभु, जो तुम्हें रुचता है, वही तुम्हारी सेवा में रत होता है। वही गुरु के उपदेश से तुम्हारे सत्य-स्वरूप में समा जाता है। वह रात-दिन तुम्हारे गुण गाता एवं जिह्वा से नित्य तुम्हारे प्रेम का रस पान करता है ॥ २ ॥ जो जीव गुरु-उपदेश से जीवित ही मरना सीख लेते हैं, उनकी मृत्यु सँवर जाती है। वे परमात्मा के गुणों को अपने हृदय में बसा लेते हैं। वे द्वैत-भाव को मिटाकर प्रभु की शरण लेते और अपने जन्म को सार्थक कर लेते हैं ॥ ३ ॥ यह मिलन भी तभी सम्भव है, जो परमात्मा स्वयं अपने संग मिला ले। गुरु के उपदेश से जीव अभिमान का त्याग करता है और रात-दिन हरि-भक्ति के प्रेम में रत रहकर संसार में लाभ उठाता है ॥ ४ ॥ हे परमात्मा, मैं तुम्हारे गुण क्या कहूँ, कहने में असमर्थ हूँ। तुम अनन्त हो, तुम्हारा रहस्य नहीं कह सकता, न ही मैं तुम्हारी सही महत्ता स्थापित कर पाता हूँ। सुखदाता प्रभु स्वयं ही कृपा करे तो गुणों में समाहित गुणी का प्रत्यक्षीकरण सम्भव है ॥ ५ ॥ इस जगत में मोह का प्रसार है, मन की प्रेरणा से चलनेवाला अज्ञानांधकार में भटकता है। वह सांसारिक धन्धों में ही जन्म गँवा देता है, हरि-नाम के बिना सदा दुःखी होता है ॥ ६ ॥ प्रभु की कृपा हो, तभी सतिगुरु से भेंट होती है, वह उपदेश द्वारा अहंकार का मैल धो डालता है। मन निर्मल होता है, उसमें ज्ञान-रत्न का प्रकाश मिलता और अज्ञानांधकार नष्ट होता है ॥ ७ ॥ हे परमात्मा, तुम्हारे अनेक नाम हैं, सबका मोल नहीं किया जा सकता। तुम्हारे सच्चे नाम को हृदय में बसाना-मात्र ही लक्ष्य हो सकता है। हे परमात्मा, तुम्हारी क़ीमत कौन कहे ? तुम तो स्वयं ब्रह्मानन्द में लीन हो (अर्थात् सहज-स्थिति के धारक और प्रदायक हो) ॥ ८ ॥ तुम्हारा नाम अमूल्य और अपार है, उसको आज तक कोई नहीं परख सका। हे प्रभु, तुम स्वयं ही उसके पारखी हो, दूसरों को भी गुरु के उपदेश द्वारा उसकी परख का सामर्थ्य तुम्हीं प्रदान करते हो ॥ ९ ॥ सब (गुरुमुख) जीव तुम्हारी सेवा में लीन रहकर प्रार्थना करते हैं। तुम स्वयं कृपा करके उन्हें अपना नैकट्य देते हो। सब जीवों का सुख-दाता वह परमात्मा है, जिसका भजन सत्कर्मों के फलस्वरूप ही कोई करता है ॥ १० ॥ सत्य की कमाई करनेवाले का यतीत्व, सतीत्व और संयम सब उसी में पूरा हो जाता है। हरि का गुणगान करने मात्र से मन

निमल होता है। इस विषैले मायावी संसार में रहते हुए ही हरि-नाम रूपी अमृत मिल जाता है ॥ ११ ॥ परमात्मा जिसे जानकारी देता है, वही जानता है। परमात्मा का गुणगान करने से ही आन्तरिक ज्ञान मिलता है। जो जीव अहंकार तथा अभिमान को संयत करता है, वही सत्यस्वरूप को पाता है ॥ १२ ॥ भाग्य-विहीन बहुत लोग घूमते हैं; वे मरते और जन्मते हैं, उनका आवागमन नहीं मिटता। विषय-विकारों में रत व्यक्ति विष ही कमाता है, उसे कभी सुख नहीं मिलता ॥ १३ ॥ वेषधारी लोग अनेक बानक करते हैं, किन्तु गुरु के उपदेश बिना किसी का अहम्भाव दूर नहीं होता। यदि कोई जीते-जी मरना सीख जाए, तभी उसकी मुक्ति सम्भव होती है और वह हरि-नाम में समा जाता है ॥ १४ ॥ अज्ञान और तृष्णा की भावनाएँ इस शरीर को जलाती हैं; यह तृष्णा-अग्नि उसी की बुझती है, जो गुरु-उपदेश में विचरता है। उसका तन-मन शीतल हो जाता है, क्रोध-भाव शमित होता है और अहम्भाव का नाश कर वह प्रभु में ही विलीन हो जाता है ॥ १५ ॥ परमात्मा सत्यस्वरूप है, उसकी कीर्ति भी सत्य है और कोई विरला जीव ही गुरु की कृपा से उसे प्राप्त करता है। गुरु नानक विनती करते हैं कि मनुष्य हरि-नाम से ही हरि में समाता है (नाम द्वारा नाम में लीन होना— प्रथम 'नाम' गुरु-उपदेश तथा द्वितीय 'नाम' हरि-प्रभु की संज्ञा का द्योतक है।) ॥ १६ ॥ १ ॥ २३ ॥

॥ मारू महला ३ ॥ नदरी भगता लैहु मिलाए। भगत सलाहनि सदा लिव लाए। तउ सरणाई उबरहि करते आपे मेलि मिलाइआ ॥ १ ॥ पूरै सबदि भगति सुहाई। अंतरि सुखु तेरै मनि भाई। मनु तनु सची भगती राता सचे सिउ चितु लाइआ ॥ २ ॥ हउमै विचि सद जलै सरीरा। करमु होवै भेटे गुरु पूरा। अंतरि अगिआनु सबदि बुझाए सतिगुर ते सुखु पाइआ ॥ ३ ॥ मनमुखु अंधा अंधु कमाए। बहु संकट जोनी भरमाए। जम का जेवड़ा कदे न काटै अंते बहु दुखु पाइआ ॥४॥ आवण जाणा सबदि निवारे। सचु नामु रखै उरधारे। गुर कै सबदि मरै मनु मारे हउमै जाइ समाइआ ॥ ५ ॥ आवण जाणै परज विगोई। बिनु सतिगुर थिरु कोइ न होई। अंतरि जोति सबदि सुखु वसिआ जोती जोति मिलाइआ ॥ ६ ॥ पंच दूत चितवहि विकारा। माइआ मोह का एहु पसारा। सतिगुरु सेवे ता मुकतु होवै पंच दूत वसि आइआ ॥ ७ ॥ बाझु गुरू है मोहु गुबारा। फिरि फिरि डुबै वारोवारा। सतिगुर

भेटे सचु द्रिड़ाए सचु नामु मनि भाइआ ॥ ८ ॥ साचा दरु साचा दरवारा । सचे सेवहि सबदि पिआरा । सची धुनि सचे गुण गावा सचे माहि समाइआ ॥ ६ ॥ घरै अंदरि को घरु पाए । गुर कै सबदे सहजि सुभाए । ओथै सोगु विजोगु न विआपै सहजे सहजि समाइआ ॥ १० ॥ दूजै भाइ दुसटा का वासा । भउदे फिरहि बहु मोह पिआसा । कुसंगति बहहि सदा दुखु पावहि दुखो दुखु कमाइआ ॥ ११ ॥ सतिगुर बाझहु संगति न होई । बिनु सबदे पारु न पाए कोई । सहजे गुण रवहि दिनु राती जोती जोति मिलाइआ ॥ १२ ॥ काइआ बिरखु पंखी विचि वासा । अंम्रितु चुगहि गुर सबदि निवासा । उडहि न मूले न आवहि न जाही निजघरि वासा पाइआ ॥ १३ ॥ काइआ सोधहि सबदु वीचारहि । मोह ठगउरी भरमु निवारहि । आपे क्रिपा करे सुखदाता आपे मेलि मिलाइआ ॥ १४ ॥ सद ही नेड़ै दूरि न जाणहु । गुर कै सबदि नजीकि पछाणहु । बिगसै कमलु किरणि परगासै परगटु करि देखाइआ ॥ १५ ॥ आपे करता सचा सोई । आपे मारि जीवाले अवरु न कोई । नानक नामु मिलै वडिआई आपु गवाइ सुखु पाइआ ॥१६॥२॥२४॥

हे प्रभु, कृपापूर्वक अपने भक्तों को अपने संग मिला लो। भक्त-जन सदा तुम्हारे प्यार में तुम्हारा ही यश गाते हैं। तुम्हारी शरण में आकर ही उनका निस्तार है, हे कर्ता, कृपा करके उन्हें अपनी शरण दो। (अर्थात् अपने में ही मिला लो) ॥ १ ॥ भक्तजन गुरु के उपदेश में शोभते हैं, उनके अन्तर्मन परमसुख का अनुभव करते हैं और उनकी भक्ति तुम्हें प्रिय है। तन-मन से वे तुम्हारी सच्ची भक्ति में रत होते हैं और तुम्हीं में उनका मन संलग्न रहता है ॥ २ ॥ (जिन लोगों को भक्ति प्राप्त नहीं) उनका शरीर सदा अहंकार में जलता है। प्रभु की कृपा हो जाय अथवा भाग्य उत्तम हो तो उनकी भेंट किसी सच्चे गुरु से होती है; वह उनके अन्तर्मन का अज्ञान दूर करता है, तब कहीं सतिगुरु के माध्यम से वे सुख प्राप्त कर सकते हैं ॥ ३ ॥ मनमुख जीव अज्ञानांध होता है, व्यर्थ के कर्म कमाता है। अनेक योनियों में वह कष्ट उठाता है। उसकी यमराज की शृंखला कभी नहीं कटती और वह सदैव दुःख भोगता है ॥ ४ ॥ आवागमन का निवारण गुरु के उपदेश से ही सम्भव है; (गुरु-शब्दों का ज्ञाता) सदा सच्चे नाम को हृदय में धारण करता है। वह गुरु के उपदेश से मन को संयत करता, अहम् को दूर करता

और (इस प्रकार) प्रभु में समा जाता है ॥ ५ ॥ आवागमन में सारी सृष्टि नष्ट हो रही है। सतिगुरु के बिना जगत में कोई स्थिर नहीं होता। जब जीव के अन्तर्मन में ज्योति (ज्ञान) आलोकित होती है, तो जीव गुरु-उपदेश में सुख प्राप्त करता है और मनुष्य की आत्म-ज्योति परमात्मा की परमज्योति में मिल जाती है ॥ ६ ॥ काम-क्रोधादि पाँच विकारों का चिन्तन करने से चतुर्दिक् माया-मोह का प्रसार बढ़ता जाता है। यदि जीव सतिगुरु की ओर उन्मुख हो तो अपने-आप ये पंच-विकार वश में आ जाते हैं ॥ ७ ॥ गुरु के बिना मोह और अज्ञानांधकार ही फैलता है, जीव बार-बार इसी में डूबता-मरता है। यदि सतिगुरु से उसका मिलाप हो जाय और वह उसे सत्यनाम दृढ़ करवा दे, तो जीव का मन उसी सत्यनाम में रुचि लेने लगता है ॥ ८ ॥ परमात्मा का द्वार और दरबार ही सत्य है। सत्यस्वरूप परमात्मा की सेवा से ही उसके हुक्म में प्यार बनता है; सत्य की ध्वनि (अनाहत नाद) में निरत, सत्य का यशोगान करते हुए जीव सत्य में ही समा जाता है ॥ ९ ॥ शरीर रूपी घर में परमात्मा के स्वरूप को कोई विरला ही खोज पाता है और वह गुरु के शब्द द्वारा सहज में ही सुशोभित होता है। वहाँ शोक-संयोग व्याप्त नहीं होते— केवल सहजावस्था में ही जीव मस्त रहता है ॥ १० ॥ द्वैत-भाव में दुष्टता निवसित होती है, (ऐसे लोग) अनन्त मोह-पिपासा में मारे-मारे फिरते हैं; वे कुसंगति में बैठकर सदा दुःख पाते और दुःख ही दुःख में जीते हैं ॥ ११ ॥ सतिगुरु के बिना सत्संगति सम्भव नहीं, उसके उपदेश के बिना कोई मुक्ति नहीं पाता। जो सहज ही रात-दिन उसके (सतिगुरु के) गुण उच्चारते हैं, उनकी आत्म-ज्योति परमज्योति में मिल जाती है (वे प्रभु में ही विलीन हो जाते हैं) ॥ १२ ॥ शरीर वृक्ष है, उसमें मन रूपी पक्षी का निवास है। वह हरिनामामृत का दाना चुगता है और गुरु के उपदेशों में जीता है। (हरि-नाम के कारण) वह भटकता या चंचल नहीं होता। आवागमन से मुक्त होकर वह अपने वास्तविक घर में स्थिर निवास करता है ॥ १३ ॥ जो शरीर के भीतर प्रभु के अनाहत नाद की पहचानता और शब्द-श्रवण करता है; इससे मोह रूपी नशे तथा भ्रम का निवारण होता है। तब सुखदाता परमात्मा अपने-आप कृपा करता और अपने में विलीन कर लेता है ॥ १४ ॥ परमात्मा सदा सबके समीप है, गुरु के उपदेश से उसे निकट ही पाया जा सकता है। (गुरु के ही कारण) हृदय-कमल विकसित होता है और जीव प्रभु को प्रकट में देखता है ॥ १५ ॥ वह परमात्मा ही सच्चा कर्ता है; वही सबको मारता-जिलाता है, अन्य किसी में यह सामर्थ्य नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम के जाप से यश प्राप्त होता है और जीव अहम् त्यागकर परमसुख लाभ करता है ॥ १६ ॥ २ ॥ २४ ॥

मारू सोलहे महला ४

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सचा आपि सवारणहारा। अवर न सूझसि बीजी कारा। गुरमुखि सचु वसै घट अंतरि सहजे सचि समाई हे ॥ १ ॥ सभना सचु वसै मन माही। गुर परसादी सहजि समाही। गुरु गुरु करत सदा सुखु पाइआ गुर चरणी चितु लाई हे ॥ २ ॥ सतिगुरु है गिआनु सतिगुरु है पूजा। सतिगुरु सेवी अवरु न दूजा। सतिगुर ते नामु रतन धनु पाइआ सतिगुर की सेवा भाई हे ॥ ३ ॥ बिनु सतिगुर जो दूजै लागे। आवहि जाहि भ्रमि मरहि अभागे। नानक तिन की फिरि गति होवै जि गुरमुखि रहहि सरणाई हे ॥ ४ ॥ गुरमुखि प्रीति सदा है साची। सतिगुर ते मागउ नामु अजाची। होहु दइआलु क्रिपा करि हरि जीउ रखि लेवहु गुर सरणाई हे ॥ ५ ॥ अंम्रित रसु सतिगुरू चुआइआ। दसवै दुआरि प्रगटु होइ आइआ। तह अनहद सबद वजहि धुनि बाणी सहजे सहजि समाई हे ॥ ६ ॥ जिन कउ करतै धुरि लिखि पाई। अनदिनु गुरु गुरु करत विहाई। बिनु सतिगुर को सीझै नाही गुर चरणी चितु लाई हे ॥ ७ ॥ जिसु भावै तिसु आपे देइ। गुरमुखि नामु पदारथु लेइ। आपे क्रिपा करे नामु देवै नानक नामि समाई हे ॥ ८ ॥ गिआन रतनु मनि परगटु भइआ। नामु पदारथु सहजे लइआ। एह वडिआई गुर ते पाई सतिगुर कउ सद बलि जाई हे ॥ ९ ॥ प्रगटिआ सूरु निसि मिटिआ अंधिआरा। अगिआनु मिटिआ गुर रतनि अपारा। सतिगुर गिआनु रतनु अति भारी करमि मिलै सुखु पाई हे ॥ १० ॥ गुरमुखि नामु प्रगटी है सोइ। चहु जुगि निरमलु हछा लोइ। नामे नामि रते सुखु पाइआ नामि रहिआ लिव लाई हे ॥ ११ ॥ गुरमुखि नामु परापति होवै। सहजे जागै सहजे सोवै। गुरमुखि नामि समाइ समावै नानक नामु धिआई हे ॥ १२ ॥ भगता मुखि अंम्रित है बाणी। गुरमुखि हरि नामु आखि वखाणी। हरि हरि करत सदा मनु बिगसै हरि चरणी मनु लाई हे ॥ १३ ॥ हम मूरख अगिआन गिआनु किछु नाही।

सतिगुर ते समझ पड़ी मन माही। होहु दइआलु क्रिपा करि हरि जीउ सतिगुर की सेवा लाई हे ॥ १४ ॥ जिनि सतिगुरु जाता तिनि एकु पछाता। सरबे रवि रहिआ सुखदाता। आतमु चीनि परम पदु पाइआ सेवा सुरति समाई हे ॥ १५ ॥ जिन कउ आदि मिली वडिआई। सतिगुरु मनि वसिआ लिव लाई। आपि मिलिआ जगजीवनु दाता नानक अंकि समाई हे ॥ १६ ॥ १ ॥

परमात्मा गुरुमुख को स्वयं सँवारता है; उस गुरुमुख को फिर कोई दूसरा हरि-विमुख कृत्य पथ-भ्रष्ट नहीं कर सकता। गुरुमुख के मन में सत्यस्वरूप परमात्मा बसता है और वह सहज ही सत्य में समाया रहता है ॥ १ ॥ सत्यस्वरूप परमात्मा (यों तो) सबके चित्त में विद्यमान है, किन्तु गुरु-कृपा से कोई विरला ही उस परमपद को पाता है। गुरु का स्मरण करनेवाला सदा सुखी होता है, गुरु के चरणों में चित्त लगानेवाला (उसी में रत होता है) ॥ २ ॥ गुरु ज्ञान-रूप है, गुरु की शरण ही पूजा है। (ऐ जन!) सतिगुरु की सेवा में संलग्न रहो, (क्योंकि) उसके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं। सतिगुरु से ही हरिनाम-रत्न प्राप्त हुआ है, अतः (हमें) उसी की सेवा रुचती है ॥ ३ ॥ जो जीव गुरु की उपेक्षा करके द्वैत-भाव में लीन होते हैं, वे आवागमन के भ्रम में पड़े-पड़े भाग्यहीन मृत्यु को प्राप्त होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि मुक्ति उन्हीं को मिलती है, जो गुरु की ओर उन्मुख होकर उसकी शरण में समर्पित हो जाते हैं ॥ ४ ॥ गुरुमुख जीवों की प्रीति सदा सच्ची होती है और वे सतिगुरु से सदा अनन्त प्रभु-नाम की ही माँग करते हैं। परमात्मा उन पर दयालु होकर कृपा-वश उन्हें गुरु की शरण प्रदान करता है (गुरु-शरण में लेता है) ॥ ५ ॥ सच्चा गुरु अमृत का स्रोत है, दशम द्वार अर्थात् आत्म-मण्डल में वह हरि को साक्षात् करवाता है। वहाँ तक की यात्रा सम्पन्न करने पर ही जीव को अनाहत-ध्वनि-श्रवण का सामर्थ्य मिलता है और वह सहज आनन्द (हरि-नाम में लीन हो जाने का आनन्द) में लीन होता है ॥ ६ ॥ परमात्मा जिनके भाग्य में शुरू से ही लिख देता है (अर्थात् जिन पर प्रभु की महती कृपा होती है), उनका समूचा जीवन ही सदा गुरु-गुरु कहते बीतता है (वे सदैव गुरु का स्मरण करते हैं)। सतिगुरु के बिना इस दिशा में कोई सफल नहीं होता, (इसलिए) गुरु के चरणों में मन लगाएँ अर्थात् गुरु की ही शरण लें ॥ ७ ॥ जिस पर प्रभु तुष्ट होते हैं, उसे (वह सामर्थ्य) प्रदान करते हैं। वह जीव गुरु-कृपा से प्रभु-नाम की उपलब्धि करता है। गुरु नानक कहते हैं

कि वह कृपा-वश जीव को नाम-रहस्य प्रदान करता है और (जीव) नाम में ही समा जाता है ॥ ८ ॥ (ऐसे जीव के) मन में ज्ञान का प्रकाश होता है और वह सहज में ही हरि-नाम के रहस्यों को जान लेता है। यह प्रतिष्ठा उसे गुरु की संगति में ही मिलती है, (इसलिए) गुरु पर हम सदा क़ुर्बान हैं ॥ ९ ॥ गुरु-ज्ञान रूपी सूर्य के प्रकट होने से अज्ञान का अन्धकार मिट जाता है। गुरु-रत्न-प्रकाश में सब अन्धकार मिट जाता है। सतिगुरु महत् ज्ञान का देदीप्यमान सूर्य है, जो प्रभु-कृपा से उपलब्ध होता और जीव के लिए परमसुख का कारण होता है ॥ १० ॥ गुरु द्वारा नाम-प्राप्ति से शोभा हुई और जीव चारों युगों तथा चौदह लोकों में उत्तम समझा गया। नाम द्वारा नाम (परमात्मा) में रत होने से सुख पाया है, (इसलिए जीव) नाम में ही तल्लीन रहता है ॥ ११ ॥ जिस जीव को गुरु के द्वारा हरि-नाम की प्राप्ति होती है, उसका सोना-जगना सब सहजानन्द में होता है। वह गुरु के आदेशानुसार ही नाम में ध्यान लगाता और (गुरु नानक कहते हैं,) उसी हरि-नाम में समा जाता है ॥ १२ ॥ भक्तजनों के मुख की वाणी अमृत-समान है। वे गुरु के द्वारा हरि-नाम की ही व्याख्या करते हैं। हरि-हरि नाम जपने से मन सदा विकसित होता है, (इसलिए) मन को हरि-चरणों में लीन रखो ॥ १३ ॥ हम (मूर्ख सांसारिक जीव) अज्ञानी हैं, हमें ज्ञान का आलोक नहीं मिला था। अब सतिगुरु से ही हमें ज्ञानज्योति प्राप्त हुई है। परमात्मा ने कृपा करके दया-वश हमें सच्चे गुरु की शरण दी है ॥ १४ ॥ जिस जीव ने सतिगुरु को पहचान लिया, वह एक परमात्मा को पहचान लेता है। वह सुखदाता प्रभु सर्वव्यापक है। जिसने आतम-विचार द्वारा परमपद को पाया, उसकी आत्मा गुरु-सेवा में ही तल्लीन हो गयी ॥ १५ ॥ जिन जीवों को गुरू से ही प्रतिष्ठा प्राप्त है, उनके मन में सदा गुरु का प्यार वास करता है। गुरु नानक कहते हैं कि जगजीवनदाता (परमात्मा) स्वयं उस पर प्रकट होता और वह उसी के अंक में समा जाता है ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ मारू महला ४ ॥ हरि अगम अगोचरु सदा अबिनासी। सरबे रवि रहिआ घट वासी। तिसु बिनु अवरु न कोई दाता हरि तिसहि सरेवहु प्राणी हे ॥ १ ॥ जा कउ राखै हरि राखणहारा। ता कउ कोइ न साकसि मारा। सो ऐसा हरि सेवहु संतहु जा की ऊतम बाणी हे ॥ २ ॥ जा जापै किछु किथाऊ नाही। ता करता भरपूरि समाही। सूके ते फुनि हरिआ कीतोनु हरि धिआवहु चोज विडाणी हे ॥ ३ ॥ जो

जीआ की वेदन जाणै । तिसु साहिब कै हउ कुरबाणै । तिसु आगै जन करि बेनंती जो सरब सुखा का दाणी हे ।। ४ ।। जो जीऐ की सार न जाणै । तिसु सिउ किछु न कहीऐ अजाणै । मूरख सिउ नह लूझु पराणी हरि जपीऐ पदु निरबाणी हे ।। ५ ।। ना करि चित चिंता है करते । हरि देवै जलि थलि जंता सभतै । अचिंत दानु देइ प्रभु मेरा विचि पाथर कीट पखाणी हे ।। ६ ।। ना करि आस मीत सुत भाई । ना करि आस किसै साह बिउहार की पराई । बिनु हरि नावै को बेली नाही हरि जपीऐ सारंगपाणी हे ।। ७ ।। अनदिनु नामु जपहु बनवारी । सभ आसा मनसा पूरै थारी । जन नानक नामु जपहु भवखंडनु सुखि सहजे रैणि विहाणी हे ।। ८ ।। जिनि हरि सेविआ तिनि सुखु पाइआ । सहजे ही हरि नामि समाइआ । जो सरणि परै तिस की पति राखै जाइ पूछहु वेद पुराणी हे ।। ९ ।। जिसु हरि सेवा लाए सोई जनु लागै । गुर कै सबदि भरम भउ भागै । विचे ग्रिह सदा रहै उदासी जिउ कमलु रहै विचि पाणी हे ।। १० ।। विचि हउमै सेवा थाइ न पाए । जनमि मरै फिरि आवै जाए । सो तपु पूरा साई सेवा जो हरि मेरे मनि भाणी हे ।। ११ ।। हउ किआ गुण तेरे आखा सुआमी । तू सरब जीआ का अंतरजामी । हउ मागउ दानु तुझै पहि करते हरि अनदिनु नामु वखाणी हे ।। १२ ।। किस ही जोरु अहंकार बोलण का । किस ही जोरु दीबान माइआ का । मै हरि बिनु टेक धर अवर न काई तू करते राखु मैं निमाणी हे ।। १३ ।। निमाणे माणु करहि तुधु भावै । होर केती झखि झखि आवै जावै । जिन का पखु करहि तू सुआमी तिन की ऊपरि गल तुधु आणी हे ।। १४ ।। हरि हरि नामु जिनी सदा धिआइआ । तिनी गुरपरसादि परम पदु पाइआ । जिनि हरि सेविआ तिनि सुखु पाइआ बिनु सेवा पछोताणी हे ।। १५ ।। तू सभ महि वरतहि हरि जगंनाथु । सो हरि जपै जिसु गुर मसतकि हाथु । हरि की सरणि पइआ हरि जापी जनु नानकु दासु दसाणी हे ।। १६ ।। २ ।।

परमात्मा अगम, इन्द्रियातीत और शाश्वत है। वह घट-घटवासी

और सर्वव्यापक है। उसके सिवा अन्य कोई दातार नहीं; (इसलिए) ऐ प्राणियो, सदा उसी की आराधना करो ॥ १ ॥ परमात्मा सर्वरक्षक है; जिसकी रक्षा वह करता है, उसे कोई नहीं मार सकता। अतः, ऐ भले लोगो, ऐसे परमात्मा की सेवा करो, जिसकी वाणी उत्तम है (अर्थात् जो निर्मल शब्द-रूप है) ॥ २ ॥ जहाँ कुछ भी प्रतीत नहीं होता, वहाँ भी परमात्मा भरपूर व्याप्त होता है। वह सूखे को पुनः हरा-भरा बना सकता है। उसी परमात्मा का ध्यान करो जिसकी प्रतिष्ठा सर्वोच्च है (जिसके चमत्कार महान् हैं) ॥ ३ ॥ जो जीवों की पीड़ा को जानता है, उस परमात्मा (स्वामी) पर मैं क़ुर्बान हूँ। ऐ प्राणी, उसी के सम्मुख विनती करो, जो सब सुखों का प्रदाता है ॥ ४ ॥ जो मन की ख़बर नहीं जानता, उस अनजान पुरुष को कुछ न कहो। ऐ प्राणी, ऐसे मूर्ख से विवाद न करो— केवल प्रभु-भजन करने से ही निर्वाण-पद की प्राप्ति होती है ॥ ५ ॥ ऐ जीव, तू कोई चिन्ता न कर, कर्ता (परमात्मा) को तेरी चिन्ता है। परमात्मा जल-थल में सब जगह जीवों का पोषण करता है। मेरा प्रभु स्वतः ही सबको देता है, पत्थर में बसनेवाले कीड़े को भी (देता है) ॥ ६ ॥ मित्रों, पुत्रों, भाइयों पर आशा न रखो। शाहों, धनाढ्यों या व्यवहारियों पर भी आशा न रखो। हरि-नाम के बिना कोई मीत नहीं, इसलिए सदा परमात्मा का नाम जपो ॥ ७ ॥ हे जीव, दिन-रात प्रभु का नाम जपो, (इससे) तुम्हारी सब आशाएँ, इच्छाएँ पूर्ण होंगी। गुरु नानक कहते हैं कि मुक्ति-दाता परमात्मा का नाम जपते रहने से अन्धकारमयी आयु सुख-आनन्द में बीतती है ॥ ८ ॥ जो जीव परमात्मा की सेवा करते हैं, वे सुख लाभ करते हैं। वे सहज ही प्रभु-नाम में समा जाते हैं। वेद-पुराण साक्षी हैं कि जो जीव उसकी (प्रभु की) शरण लेता है, वह उसकी (शरण लेनेवाले जीव की) हर प्रकार से रक्षा करता है ॥ ९ ॥ परमात्मा जिनको सेवा प्रदान करता है, वे ही सेवा का गौरव प्राप्त कर सकते हैं। गुरु-उपदेश से उनके सब भ्रम-भय आदि नष्ट हो जाते हैं। वे गृहस्थी में भी इस प्रकार वीतरागी रहते हैं, जैसे कमल पानी में रहता है ॥१०॥ अहम्भाव-युक्त की गयी सेवा स्वीकार नहीं होती; ऐसा (सेवक जीव) जन्म-मरण (आवागमन) के चक्र में पड़ता है। वही तपस्या और वही सेवा उत्तम है, जो परमात्मा को जँचती है, प्रभु को स्वीकार्य है ॥ ११ ॥ हे मेरे स्वामी, मैं तुम्हारे गुणों का क्या बखान करूँ, तुम तो स्वयं समस्त जीवों के अन्तर्मन के जानकार हो। हे सृजनहार, मैं तुमसे यह दान माँगता हूँ कि मैं हर रोज़ तुम्हारा नाम उच्चारण करता रहूँ (अर्थात् मुझे इतना सामर्थ्य दो कि मैं सदैव तुम्हारा नाम जपा करूँ) ॥ १२ ॥ किसी को अपने अहंकार और शक्ति का गुमान है, किसी को अपने मायावी अधिकारों का ज़ोर है, किन्तु मुझे

परमात्मा के अतिरिक्त इस संसार में (धरती पर) और कोई सहारा नहीं। हे सृजनहार, तुम ही मुझ अकिंचन की रक्षा करो ॥ १३ ॥ तुम्हें स्वीकार हो तो अकिंचन भी सम्मानित होते हैं, अन्य अनेक दुःखी होते और आवागमन-चक्र में पड़े रहते हैं। (किन्तु) हे स्वामी, तुम जिनके पक्ष में होते हो, उनकी बात सबसे ऊपर होती है अर्थात् सर्वमान्य हो जाती है ॥ १४ ॥ जो सदा परमात्मा का नाम जपता है, उसे गुरु-कृपा से परम-पद की प्राप्ति होती है। जो प्रभु की सेवा करते हैं, वे सुखी होते हैं, सेवा-रहित पछताते हैं ॥ १५ ॥ हे जगन्नाथ, तुम सबमें व्याप्त हो; (किन्तु) तुम्हारा नाम वही जपता है, जिसके माथे किसी सच्चे गुरु का हाथ होता है, अर्थात् जिन पर सद्गुरु की कृपा होती है, वे ही नाम जपते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे उन लोगों के दासों के भी दास हैं, जो हरि-नाम जपते और प्रभु-शरण लेते हैं ॥ १६ ॥ २ ॥

मारू सोलहे महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ कला उपाइ धरी जिनि धरणा। गगनु रहाइआ हुकमे चरणा। अगनि उपाइ ईधन महि बाधी सो प्रभु राखै भाई हे ॥ १ ॥ जीअ जंत कउ रिजकु संबाहे। करणकारण समरथ आपाहे। खिन महि थापि उथापनहारा सोई तेरा सहाई हे ॥ २ ॥ मात गरभ महि जिनि प्रतिपालिआ। सासि ग्रासि होइ संगि समालिआ। सदा सदा जपीऐ सो प्रीतमु वडी जिसु वडिआई हे ॥ ३ ॥ सुलतान खान करे खिन कीरे। गरीब निवाजि करे प्रभु मीरे। गरब निवारण सरब सधारण किछु कीमति कही न जाई हे ॥४॥ सो पतिवंता सो धनवंता। जिसु मनि वसिआ हरि भगवंता। मात पिता सुत बंधप भाई जिनि इह स्रिसटि उपाई हे ॥ ५ ॥ प्रभ आए सरणा भउ नही करणा। साध संगति निहचउ है तरणा। मन बच करम अराधे करता तिसु नाही कदे सजाई हे ॥ ६ ॥ गुण निधान मन तन महि रविआ। जनम मरण की जोनि न भविआ। दूख बिनास कीआ सुखि डेरा जा त्रिपति रहे आघाई हे ॥ ७ ॥ मीतु हमारा सोई सुआमी। थान थनंतरि अंतरजामी। सिमरि सिमरि पूरन परमेसुर चिंता गणत मिटाई हे ॥ ८ ॥ हरि का नामु कोटि लखबाहा। हरि जसु कीरतनु संगि धनु ताहा।

गिआन खड़गु करि किरपा दीना दूत मारे करि धाई हे ॥ ९ ॥
हरि का जापु जपहु जपु जपने । जीति आवहु वसहु घरि अपने ।
लख चउरासीह नरक न देखहु रसकि रसकि गुण गाई हे ॥१०॥
खंड ब्रहमंड उधारणहारा । ऊच अथाह अगंम अपारा । जिसनो
क्रिपा करे प्रभु अपनी सो जनु तिसहि धिआई हे ॥ ११ ॥
बंधन तोड़ि लीए प्रभि मोले । करि किरपा कीने घर गोले ।
अनहद रुणझुणकारु सहज धुनि साची कार कमाई हे ॥ १२ ॥
मनि परतीति बनी प्रभ तेरी । बिनसि गई हउमै मति मेरी ।
अंगीकारु कीआ प्रभि अपनै जग महि सोभ सुहाई हे ॥ १३ ॥
जैजैकारु जपहु जगदीसै । बलि बलि जाई प्रभ अपुने ईसै ।
तिसु बिनु दूजा अवरु न दीसै एका जगति सबाई हे ॥ १४ ॥
सति सति सति प्रभु जाता । गुर परसादि सदा मनु राता ।
सिमरि सिमरि जीवहि जन तेरे एकंकारि समाई हे ॥ १५ ॥
भगत जना का प्रीतमु पिआरा । सभै उधारणु खसमु हमारा ।
सिमरि नामु पुंनी सभ इछा जन नानक पैज रखाई हे ॥१६॥१॥

जिसने शक्ति पैदा करके धरती बनाई और आकाश को अपने आदेश (हुक्म) रूपी चरणों पर खड़ा किया है; अग्नि उत्पन्न कर ईंधन में बाँध दी है, वही प्रभु समर्थ है, सबका रक्षक है ॥ १ ॥ जो समस्त जीव-जन्तुओं को भोजन (रोज़ी-रोटी) पहुँचाता है, वही सब कुछ करने योग्य स्वयं समर्थ है। क्षण भर में निर्माण और विनाश कर देने में सक्षम वह परमात्मा ही तुम्हारा सहायी है ॥ २ ॥ जिसने माता के गर्भ में भी तुम्हारा पोषण किया, श्वास-श्वास और एक-एक ग्रास खाते-पीते जिसने साथ रहकर तुम्हारी रक्षा की है। सदैव उस परमात्मा का स्मरण करो, उसकी कीर्ति महान है ॥ ३ ॥ वह बड़े-बड़े सुलतानों, सरदारों को क्षण भर में कीड़े (कंगाल) बना देता है। वह प्रभु ग़रीबों पर कृपा करके उन्हें सम्पन्न बनाता है। वह अहंकार को दूर करनेवाला तथा सर्वसाधारण का आश्रय है, उसका मोल नहीं किया जा सकता ॥ ४ ॥ जिस जीव के हृदय में प्रभु निवसित है, वही प्रतिष्ठित और सम्पन्न है। इस सृष्टि का जनक ही सबका माता, पिता, भाई, पुत्र और सम्बन्धी है ॥ ५ ॥ प्रभु की शरण में आने पर किसी प्रकार का भय नहीं रह जाता, सत्संगति में निश्चय ही गति मिलती है। जो मन, वचन और कर्म से नित्य परमात्मा की आराधना करता है। वह कभी (यमदूतों के हाथों) दण्डित नहीं होता ॥ ६ ॥ जो जीव गुण-निधान प्रभु को तन-मन से स्मरण

करता है, वह जन्म-मरण के योनि-चक्र से मुक्त हो जाता है। उसके दुःख नष्ट हो जाते हैं, वह सुखी बसता है और सर्वांग तृप्ति-लाभ करता है ॥ ७ ॥ वह परमात्मा ही हमारा सच्चा मित्र है, वह सब स्थानों में व्याप्त और अन्तर्यामी है। उसी पूर्ण परमेश्वर का सिमरण करो, वह सभी चिन्ताओं और तनावों को दूर करता है ॥ ८ ॥ हरि-नाम में लाखों, करोड़ों भुजाओं की शक्ति है; जो हरि-नाम का यशोगान करते हैं, वे ही सम्पन्न हैं। परमात्मा उन्हें ज्ञान रूपी खड्ग प्रदान करता है, जिससे जीव यम के दूतों को मार भगाता है ॥ ९ ॥ अन्य कोई जाप करने की अपेक्षा हरि-नाम का जाप करो। (जो जीव ऐसा करता है, वह) सदैव विजयी होता और अपने वास्तविक घर, प्रभु की शरण में बसता है। जो रसपूर्वक परमात्मा के गुण गाता है, वह चौरासी लाख योनियों में भ्रमने से बच जाता है ॥ १० ॥ वह खण्डों-मण्डलों और ब्रह्माण्ड का उद्धार करनेवाला है। वह ऊँचा, गहरा, अगम और अपार है। जिस पर वह अपनी कृपा करता है, वही जीव उसका स्मरण करता है ॥ ११ ॥ प्रभु ने यम के बन्धनों को तोड़कर हमें अपनाया है (मोल लिया है); कृपा-पूर्वक अपनी शरण में लिया है (अपना सेवक बना लिया है)। जिससे हमें सरस अनाहत ध्वनि तथा सहज आनन्दावस्था प्राप्त हुई है ॥ १२ ॥ हे प्रभु, मन में तुम्हारा विश्वास दृढ़ हुआ है, जिससे मेरी अहम्-बुद्धि का नाश हो गया है। अपने स्वामी ने जब स्वीकार कर लिया, तो संसार में शोभा अर्जित हुई ॥ १३ ॥ (इसलिए) परमात्मा का जय-जयकार करो, जगदीश्वर का नाम जपो, अपने ईश्वर पर क़ुर्बान हो जाओ। उसके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं दीखता, सारे संसार में वही एक (व्याप्त) है ॥ १४ ॥ उस सच्चे परमात्मा का ज्ञान गुरु की कृपा से हुआ है और मन सदा उसी में रत रहता है। हे प्रभु, तुम्हारे जीव तुम्हारा स्मरण करते हुए जीवित हैं और एक तुम्हीं में (परमात्मा में ही) समाते हैं ॥ १५ ॥ परमात्मा भक्तजनों का स्वामी है, सबका उद्धार करनेवाला वह हमारा मालिक है। गुरु नानक कहते हैं कि उसका स्मरण करने से सब इच्छाएँ पूर्ण होती हैं और प्रतिष्ठा बनी रहती है (अर्थात् वह इच्छाओं का पूरक एवं जन की मान-मर्यादा का रक्षक है।) ॥ १६ ॥ १ ॥

मारू सोलहे महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ संगी जोगी नारि लपटाणी। उरझि रही रंग रस माणी। किरत संजोगी भए इकत्रा करते भोग बिलासा हे ॥ १ ॥ जो पिरु करै सु धन ततु मानै।

पिरु धनहि सीगारि रखै संगानै। मिलि एकत्र वसहि दिनु राती प्रिउ दे धनहि दिलासा हे ॥ २ ॥ धन मागै प्रिउ बहु बिधि धावै। जो पावै सो आणि दिखावै। एक वसतु कउ पहुचि न साकै धन रहती भूख पिआसा हे ॥ ३ ॥ धन करै बिनउ दोऊ कर जोरै। प्रिअ परदेसि न जाहु वसहु घरि मोरै। ऐसा बणजु करहु ग्रिह भीतरि जितु उतरै भूख पिआसा हे ॥ ४ ॥ सगले करम धरम जुग साधा। बिनु हरि रस सुखु तिलु नही लाधा। भई क्रिपा नानक सतसंगे तउ धन पिर अनंद उलासा हे ॥ ५ ॥ धन अंधी पिरु चपलु सिआना। पंच ततु का रचनु रचाना। जिसु वखर कउ तुम आए हहु सो पाइओ सतिगुर पासा हे ॥ ६ ॥ धन कहै तू वसु मै नाले। प्रिअ सुख वासी बाल गुपाले। तुझै बिना हउ कित ही न लेखै वचनु देहि छोडि न जासा हे ॥ ७ ॥ पिरि कहिआ हउ हुकमी बंदा। ओहु भारो ठाकुरु जिसु काणि न छंदा। जिचरु राखै तिचरु तुम संगि रहणा जा सदे त ऊठि सिधासा हे ॥ ८ ॥ जउ प्रिअ बचन कहे धन साचे। धन कछू न समझै चंचलि काचे। बहुरि बहुरि पिर ही संगु मागै ओहु बात जानै करि हासा हे ॥९॥ आई आगिआ पिरहु बुलाइआ। ना धन पुछी न मता पकाइआ। ऊठि सिधाइओ छूटरि माटी देखु नानक मिथन मोहासा हे ॥१०॥ रे मन लोभी सुणि मन मेरे। सतिगुरु सेवि दिनु राति सदेरे। बिनु सतिगुर पचि मूए साकत निगुरे गलि जम फासा हे ॥ ११॥ मनमुखि आवै मनमुखि जावै। मनमुखि फिरि फिरि चोटा खावै। जितने नरक से मनमुखि भोगै गुरमुखि लेपु न मासा हे ॥ १२ ॥ गुरमुखि सोइ जि हरि जीउ भाइआ। तिसु कउणु मिटावै जि प्रभि पहिराइआ। सदा अनंदु करे आनंदी जिसु सिरपाउ पइआ गलि खासा हे ॥ १३ ॥ हउ बलिहारी सतिगुर पूरे। सरणि के दाते बचन के सूरे। ऐसा प्रभु मिलिआ सुखदाता विछुड़ि न कतही जासा हे ॥ १४ ॥ गुण निधान किछू कीम न पाई। घटि घटि पूरि रहिओ सभ ठाई। नानक सरणि दीन दुख भंजन हउ रेण तेरे जो दासा हे ॥ १५ ॥ १ ॥ २ ॥

[साधारण मनुष्य की स्थिति का चित्रण है। संगी जीवात्मा को

कहा गया है, 'नारि' शरीर के लिए प्रयुक्त हुआ है और 'योगी' विरक्त के लिए। जीवात्मा शरीर को अपना साथी बनाकर क्योंकर उसी में रम गया है, इसी स्थिति का वर्णन है।] मुक्त और विरक्त जीवात्मा ने शरीर की संगति कर ली है। (विरक्त योगी नारी की संगति में भटक गया है) वह उसी के रस-रंग में उलझकर रह गई है। कर्मों के फल के कारण जीवात्मा और शरीर का मेल हुआ है और वे भोग-विलास में मग्न हो गए हैं ॥ १ ॥ जो पति (जीवात्मा) करता-कहता है, वह पत्नी (शरीर) तुरन्त मान लेती है। पति पत्नी को श्रृंगार कर नित्य साथ रखता है (अर्थात् जीवात्मा शरीर से तादात्म्य स्थापित कर उसे सँवारता-श्रृंगारता है)। साथ मिलकर वे दोनों रहते हैं, पति पत्नी को दिलासा देता है (कि वे दोनों सदा साथ रहेंगे!) ॥ २ ॥ पत्नी की इच्छा-पूर्ति के लिए पति बहु-विधि व्यस्त रहता है; अपनी उपलब्धियों को पत्नी (शरीर) को सँवारने में लगाता है। किन्तु एक वस्तु (हरि-नाम रूपी वस्तु) को वह कभी प्राप्त नहीं कर पाता, जिसके कारण पत्नी कभी तृप्त नहीं हो पाती (सदा भूखी-प्यासी रहती है) ॥ ३ ॥ पत्नी दोनों हाथ जोड़कर बिनती करती है कि हे प्रिय, मेरे घर में ही बसो, परदेस मत जाओ। घर में ही रहकर ऐसा व्यापार करो कि जिससे सब आशाएँ-तृष्णाएँ शमित हो जायँ। (अर्थात् स्त्री पति को; शरीर जीवात्मा को; अपने में ही बाँधे रखना चाहती है।) ॥ ४ ॥ ज़माने के सब धर्म-कर्म करके देख लिये, किन्तु हरिरस-पान के बिना तिल भर भी सुख नहीं मिला। गुरु नानक कहते हैं कि जब परमात्मा की कृपा होती है, दोनों को सत्संगति प्राप्त होती है, तो पति-पत्नी दोनों आनन्द-मग्न हो जाते हैं ॥ ५ ॥ पत्नी अन्धी (अज्ञानी) है, पति चंचल और बुद्धिमान है (अर्थात् शरीर असूझवान है तथा आत्मा चंचलता-वश उसी में रमी है)। इस समूची पाँच तत्त्वों की रचना में जिस व्यापार के लिए तुम यहाँ आए हो, वह सतिगुरु के पास ही प्राप्य है। (पति ने जिस उद्देश्य से पत्नी की संगति की थी, वह सतिगुरु की कृपा से ही सम्भव था; किन्तु पति उद्देश्य भूलकर पत्नी-प्रेम में ही मग्न हो गया) ॥ ६ ॥ पत्नी पति से कहती है कि हे मेरे सुखदायी प्रिय स्वामी, तुम सदैव मेरे साथ ही रहो। तुम्हारे बिना मेरी कोई हस्ती नहीं। वचन दो कि तुम मुझे छोड़कर नहीं जाओगे ॥ ७ ॥ पति कहता है कि मैं तो प्रभु के हुक्म का बँधा हूँ। मेरा स्वामी महान है, उसे कोई भय या मुहताजी नहीं। जब तक वह रखेगा, तब तक ही मुझे तुम्हारे साथ रहना है। वह जब बुलाएगा, तभी मुझे तो चल ही देना है ॥ ८ ॥ पति (जीवात्मा) ऐसे सच्चे वचन कहता है, किन्तु पत्नी (शरीर) कुछ नहीं समझती, वह अपरिपक्व बुद्धि की है। वह बार-बार पति की स्थायी संगति माँगती है, किन्तु पति इस बात को मज़ाक़ में टाल

देता है ।। ९ ।। पति को बुलाने का आदेश आता है, तब वह न तो पत्नी को पूछता है, न उससे परामर्श लेता है । वह उठकर चल देता है, विधवा (शरीर) मिट्टी हो जाती है— गुरु नानक कहते हैं कि तब पत्नी का वह मोह मिथ्या प्रमाणित होता है ।। १० ।। हे मेरे लोभी मन, सुनो, सदा दिन-रात सतिगुरु की सेवा में रत रहो । सतिगुरु के बिना मनमुख जीव यों ही तड़प-तड़पकर मरते हैं, गुरु-विहीन जीव के गले यमदूतों की फाँसी लगती है ।। ११ ।। मनमुख जीव आवागमन के चक्र में पड़े रहते हैं, बार-बार उन्हीं पर चोट पड़ती है । मनमुख को अनेक नरकों को भोगना पड़ता है, किन्तु गुरुमुख को उसका किंचित भी ताप नहीं पहुँचता ।। १२ ।। सच्चा गुरुमुख भी वही है, जिसे परमात्मा स्वीकार करता है; जिसे प्रभु संरक्षण दे, उसे कौन मिटा सकता है । जिसे परमात्मा की ओर से सम्मानित किया जाता है (परमात्मा जिसके गले में सिरोपा पहनाता है), वह परमानन्द को प्राप्त होता है ।। १३ ।। मैं अपने सच्चे गुरु पर क़ुर्बान हूँ, वह मेरा शरण-दाता और वचन का सूरमा है (वचन देकर सदैव उसे निभाता है) । ऐसा सुखदाता परमात्मा मिले तो वह कभी नहीं बिछुड़ता ।। १४ ।। उस गुण-निधि परमात्मा की किसी ने क़ीमत नहीं जानी, वह सब जगह और घट-घट में व्याप्त है । गुरु नानक कहते हैं कि उन्हें तो केवल दीनों का दुःख दूर करनेवाले परमात्मा की शरण चाहिए, वे प्रभु के दासों की भी चरण-धूल बनकर रहेंगे ।। १५ ।। १ ।। २ ।।

मारू सोलहे महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। करै अनंदु अनंदी मेरा । घटि घटि पूरनु सिर सिरहि निबेरा । सिरि साहा कै सचा साहिबु अवरु नाही को दूजा हे ।। १ ।। हरखवंत आनंत दइआला । प्रगटि रहिओ प्रभु सरब उजाला । रूप करे करि वेखै विगसै आपे ही आपि पूजा हे ।। २ ।। आपे कुदरति करे वीचारा । आपे ही सचु करे पसारा । आपे खेल खिलावै दिनु राती आपे सुणि सुणि भीजा हे ।। ३ ।। साचा तखतु सची पातिसाही । सचु खजीना साचा साही । आपे सचु धारिओ सभु साचा सचे सचि वरतीजा हे ।। ४ ।। सचु तपावसु सचे केरा । साचा थानु सदा प्रभ तेरा । सची कुदरति सची बाणी सचु साहिब सुखु कीजा हे ।।५।। एको आपि तू है वडराजा । हुकमि सचे कै पूरे काजा । अंतरि बाहरि सभु किछु जाणै आपे ही आपि पतीजा

हे ॥ ६ ॥ तू वड रसीआ तू वड भोगी । तू निरबाणु तू है ही जोगी । सरब सूख सहज घरि तेरै अमिउ तेरी द्रिसटीजा हे ॥ ७ ॥ तेरी दाति तुझै ते होवै । देहि दानु सभसै जंत लोऐ । तोटि न आवै पूर भंडारै त्रिपति रहे आघीजा हे ॥८॥ जाचहि सिध साधिक बनवासी । जाचहि जती सती सुख वासी । इकु दातारु सगल है जाचिक देहि दानु स्रिसटीजा हे ॥ ९ ॥ करहि भगति अरु रंग अपारा । खिन महि थापिउथापनहारा । भारो तोलु बेअंत सुआमी हुकमु मंनि भगतीजा हे ॥ १० ॥ जिसु देहि दरसु सोई तुधु जाणै । ओहु गुर कै सबदि सदा रंग माणै । चतुरु सरूपु सिआणा सोई जो मनि तेरै भावीजा हे ॥ ११ ॥ जिसु चीति आवहि सो वेपरवाहा । जिसु चीति आवहि सो साचा साहा । जिसु चीति आवहि तिसु भउ केहा अवरु कहा किछु कीजा हे ॥ १२ ॥ त्रिसना बूझी अंतरु ठंढा । गुरि पूरै लै तूटा गंढा । सुरति सबदु रिद अंतरि जागी अमिउ झोलि झोलि पीजा हे ॥ १३ ॥ मरै नाही सद सद ही जीवै । अमरु भइआ अबिनासी थीवै । ना को आवै ना को जावै गुरि दूरि कीआ भरमीजा हे ॥ १४ ॥ पूरे गुर की पूरी बाणी । पूरै लागा पूरे माहि समाणी । चड़ै सवाइआ नित नित रंगा घटै नाही तोलीजा हे ॥ १५ ॥ बारहा कंचनु सुधु कराइआ । नदरि सराफ वंनीस चड़ाइआ । परखि खजानै पाइआ सराफी फिरि नाही ताईजा हे ॥ १६ ॥ अंम्रित नामु तुमारा सुआमी । नानक दास सदा कुरबानी । संत संगि महा सुखु पाइआ देखि दरसनु इहु मनु भीजा हे ॥ १७ ॥ १ ॥ ३ ॥

हे भाई, मेरा स्वामी परम आनन्दी है, वह अलग-अलग जीवों को कर्मानुसार निपटाता है (अर्थात् उनके कर्मों के अनुसार निर्णय लेता है) । सबके सिर पर वही सच्चा परमात्मा है, उसके अतिरिक्त और कोई नहीं ॥ १ ॥ सदा प्रसन्न रहनेवाले, दयालु और अनन्त प्रभु का आलोक सब जगह प्रकट है । वह स्वयं विभिन्न रूप रचता और उन्हें देखता है, प्रसन्न होता है और अपनी पूजा स्वयं करता है, अभिप्राय यह है कि कभी पूज्य और कभी पुजारी स्वयं ही बनता है ॥ २ ॥ वह परमात्मा स्वयं ही समूचा विचार करता है, प्रकृति के रूप में चतुर्दिक् प्रसार करता है, अपने सत्य-स्वरूप को खिलाता है । (तात्पर्य यह कि) प्रभु स्वयं ही सब कौतुक रचता

है और फिर उन्हें देख-देखकर प्रसन्न होता है ॥ ३ ॥ उसकी बादशाहत और उसका सिंहासन सत्य का रूप है; उसके कोष और उसकी सम्पन्नता सच्ची है। उस परमसत्य ने स्वयं सत्य को धारण कर रखा है, और सब ओर उसी सत्य के रूप में व्याप्त है ॥ ४ ॥ सच्चे परमात्मा का न्याय भी सच्चा होता है; हे प्रभु, तुम्हारा स्थान सदा सत्य का स्थान है। हे दाता, तुम्हारे सब कौतुक और रचनाएँ सत्य हैं, तुम्हीं समस्त सुखों के आधार हो ॥ ५ ॥ हे परमात्मा, तुम्हीं सर्वोच्च शासक हो, तुम्हारे सच्चे आदेश से ही सब कार्य सम्पन्न होते हैं। तुम बाहर-भीतर का सब कुछ जानते हो, सर्वज्ञ हो और अपने-आप की मस्ती में प्रसन्न रहते हो ॥ ६ ॥ रसिक और विलासी भी तुम्हीं हो; निर्लिप्त और योग-मग्न भी तुम्हीं हो। समस्त परम आनन्द सहज में ही तुम्हारे घर में प्राप्त हैं; तुम्हारी पावन-दृष्टि में से अमृत बरसता है ॥ ७ ॥ तुम्हारी भक्ति रूपी प्राप्ति तुम्हीं से उपलब्ध होती है; सब जीवों और लोकों को तुम्हीं सब कुछ देते हो। तुम्हारे भण्डार में कुछ अभाव नहीं, जिसे तुम तृप्त कर देते हो, वह कभी अतृप्ति महसूस नहीं करता ॥ ८ ॥ सब सिद्ध, साधक और वनवासी जीव तुम्हारी माँग करते हैं; यती, सती तथा सुखी बसने वाले जीव भी तुम्हें ही चाहते हैं। तुम एक-मात्र देनेवाले हो, अन्य सब तो याचक मात्र हैं, तुम समूची सृष्टि को देनेवाले हो ॥ ९ ॥ तुम्हारे अनेक रंगों में भक्तजन भक्ति करते हैं, तुम क्षण भर में निर्माण, विनाश कर सकने में समर्थ हो। हे स्वामी, तुम्हारी कल्पना बहुत ऊँची है और तुम्हारे आदेश के पालन में ही तुम्हारी भक्ति निहित है ॥ १० ॥ जिसे तुम दर्शन देते हो, वही तुम्हें जानता है; वह गुरु के शब्द द्वारा सदा (तुम्हारी जानकारी के कारण) प्रसन्न रहता है; जो तुम्हारे मन भावे, वही चतुर और सुन्दर है ॥ ११ ॥ जिसके मन में तुम बसते हो, वह बे-परवाह हो जाता है (निर्भीक होता है), जिसके चित्त में तुम्हारा स्वरूप विद्यमान है, वही सच्चा शाह है; जिसके मन में तुम अंकित हो, उसे कोई भय नहीं रहता, तुम्हारे बिना अन्य कौन कुछ कर सकता है! ॥ १२ ॥ जिसने गुरु की शरण ली, उसके बन्धन टूट गए; उसकी तृष्णा शान्त हो गई और मन शीतल हुआ। उसके हृदय में प्रभु की प्रीति जाग्रत् हुई और उसने खुले हाथों अमृत-पान किया ॥ १३ ॥ वह कभी मरता नहीं, चिरंजीवी होता है; वह अमरता पाकर अविनाशी हो जाता है। गुरु ने उसके सब भ्रम दूर कर दिए होते हैं, उसका आवागमन मिट जाता है ॥ १४ ॥ सच्चे गुरु के सच्चे शब्द के द्वारा जीव परब्रह्म में लीन होकर उसी में समा जाता है। ऐसे जीव पर नित्य-नित्य प्रभु का रंग (प्यार) बढ़ता जाता है, उसकी गुरुता कभी कम नहीं होती ॥ १५ ॥ (तब वह जीव) शुद्ध सोना हो जाता है। (बारह माशे तोल पर बिकनेवाला)

और गुरु रूपी सर्राफ़ की दृष्टि में अविकल साबित होता है। गुरु उसे परखकर परमात्मा के ख़ज़ाने में डाल लेता है, दुबारा उसे अग्नि-परीक्षा नहीं देनी पड़ती ॥ १६ ॥ हे स्वामी, तुम्हारा नाम अमृत-सम है, गुरु नानक उस पर नित्य बलिहार हैं। सन्तों की संगति में परम सुख लब्ध होता है और उनके द्वारा परमात्मा के दर्शनों से चित्त को अपार हर्ष प्राप्त होता है (अभिप्राय यह कि परमात्मा की प्राप्ति केवल सन्तों की संगति में ही संभव होती है) ॥ १७ ॥ १ ॥ ३ ॥

मारू महला ५ सोलहे

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गुरु गोपालु गुरु गोविंदा। गुरु दइआलु सदा बखसिंदा। गुरु सासत सिम्रित खटु करमा गुरु पवित्रु असथाना हे ॥ १ ॥ गुरु सिमरत सभि किलविख नासहि। गुरु सिमरत जम संगि न फासहि। गुरु सिमरत मनु निरमलु होवै गुरु काटे अपमाना हे ॥२॥ गुर का सेवकु नरकि न जाए। गुर का सेवकु पारब्रहमु धिआए। गुर का सेवकु साधसंगु पाए गुरु करदा नित जीअ दाना हे ॥ ३ ॥ गुरदुआरै हरि कीरतनु सुणीऐ। सतिगुरु भेटि हरि जसु मुखि भणीऐ। कलि कलेस मिटाए सतिगुरु हरि दरगह देवै मानां हे ॥ ४ ॥ अगमु अगोचरु गुरू दिखाइआ। भूला मारगि सतिगुरि पाइआ। गुर सेवक कउ बिघनु न भगती हरि पूर द्रिड़ाइआ गिआनां हे ॥ ५ ॥ गुरि द्रिसटाइआ सभनी ठांई। जलि थलि पूरि रहिआ गोसाई। ऊच ऊन सभ एक समानां मनि लागा सहजि धिआना हे ॥ ६ ॥ गुरि मिलिऐ सभ त्रिसन बुझाई। गुरि मिलिऐ नह जोहै माई। सतु संतोखु दीआ गुरि पूरै नामु अंम्रितु पीपानां हे ॥ ७ ॥ गुर की बाणी सभ माहि समाणी। आपि सुणी तै आपि वखाणी। जिनि जिनि जपी तेई सभि निसत्रे तिन पाइआ निहचल थानां हे ॥ ८ ॥ सतिगुर की महिमा सतिगुरु जाणै। जो किछु करे सु आपण भाणै। साधू धूरि जाचहि जन तेरे नानक सद कुरबानां हे ॥ ९ ॥ १ ॥ ४ ॥

(यहाँ गुरु की सर्व-सत्ता की चर्चा है।) गुरु ही गोपाल-रूप (धरती का रक्षक) है, गुरु ही गोविन्द-रूप (वेदों का ज्ञाता) है, गुरु दया का कोष

है और गुरु ही क्षमा का दाता है। गुरु ही शास्त्रों, स्मृतियों और षट्-कर्मों का आधार है, वही पावनता का स्थान है ।। १ ।। गुरु का स्मरण करने से सब पाप नष्ट हो जाते हैं, गुरु का सिमरण करने से यमों के फन्दे से मुक्ति मिलती है। गुरु का सिमरण करने से मन निर्मल होता है और गुरु जीव के अभिमान को धो डालता है ।। २ ।। गुरु का सेवक कभी नरक में नहीं जाता, वह गुरु की सेवा में रहकर नित्य परब्रह्म का ध्यान करता है। गुरु के सेवक को श्रेष्ठ संगति प्राप्त होती है, गुरु अपने सेवकों को नित्य आत्मिक जीवन का दान देता है ।। ३ ।। ऐसा गुरु-सेवी जीव गुरु से प्रभु के नाम का यशोगान सुनता है। सतिगुरु से मिलकर मुख से परमात्मा का यश गाता है। सतिगुरु सेवक के कलियुग के क्लेशों को दूर करता और परमात्मा के दरबार में उसे प्रतिष्ठा दिलवाता है ।। ४ ।। गुरु ही अगम अगोचर परमात्मा को दिखा सकने में समर्थ है, गुरु ही भूले हुए जीव को श्रेष्ठ मार्ग पर लगाता है। गुरु-सेवक को भक्ति के कारण कोई विघ्न नहीं पड़ता; गुरु ने उसे परमात्मा का पूर्ण ज्ञान दृढ़ करवाया होता है ।। ५ ।। गुरु सब जगह हरि को प्रत्यक्ष दिखा देता है; वह स्वामी जल-थल सब जगह व्याप्त है; (गुरु के कारण) जब मन सहज आनन्द को पा जाता है, तो जीव के लिए ऊँच-नीच सब समान हो जाता है ।। ६ ।। गुरु-मिलन से सब तृष्णा मिटती है, गुरु के मिलन से माया की कुदृष्टि से बचाव होता है। सत्य, सन्तोष के सद्‌गुण गुरु से प्राप्त होते हैं और जीव नामामृत पीता और पिलाता है ।। ७ ।। गुरु की वाणी सबमें समाई है, जिज्ञासु इसे सुनता है तो दूसरों के पास बखानता है। जिन जिज्ञासुओं ने गुरुवाणी का रस लिया है, वे मुक्त हो गए हैं, वे निश्चल स्थान के वासी बने हैं ।। ८ ।। गुरु की सच्ची महिमा स्वयं गुरु ही जानता है; जो कुछ वह करता है, स्वेच्छा से करता है। गुरु नानक ऐसे महिमावान गुरु पर सदा क़ुर्बान हैं और उसकी चरण-धूल की याचना करते हैं ।। ९ ।। १ ।। ४ ।।

मारू सोलहे महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। आदि निरंजनु प्रभु निरंकारा। सभ महि वरतै आपि निरारा। वरनु जाति चिहनु नही कोई सभु हुकमे स्रिसटि उपाइदा ।। १ ।। लख चउरासीह जोनि सबाई। माणस कउ प्रभि दीई वडिआई। इसु पउड़ी ते जो नरु चूकै सो आइ जाइ दुखु पाइदा ।। २ ।। कीता होवै तिसु किआ कहीऐ। गुरमुखि नामु पदारथु लहीऐ। जिसु आपि

भुलाए सोई भूल सो बूझै जिसहि बुझाइदा ।। ३ ।। हरख सोग का नगरु इहु कीआ । से उबरे जो सतिगुर सरणीआ । त्रिहा गुणा ते रहै निरारा सो गुरमुखि सोभा पाइदा ।। ४ ।। अनिक करम कीए बहुतेरे । जो कीजै सो बंधनु पैरे । कुरुता बीजु बीजे नही जंमै सभु लाहा मूलु गवाइदा ।। ५ ।। कलजुग महि कीरतनु परधाना । गुरमुखि जपीऐ लाइ धिआना । आपि तरै सगले कुल तारे हरि दरगह पति सिउ जाइदा ।। ६ ।। खंड पताल दीप सभि लोआ । सभि कालै वसि आपि प्रभि कीआ । निहचलु एकु आपि अबिनासी सो निहचलु जो तिसहि धिआइदा ।। ७ ।। हरि का सेवकु सो हरि जेहा । भेदु न जाणहु माणस देहा । जिउ जल तरंग उठहि बहु भाती फिरि सललै सलल समाइदा ।। ८ ।। इकु जाचिकु मंगै दानु दुआरै । जा प्रभ भावै ता किरपा धारै । देहु दरसु जितु मनु त्रिपतासै हरि कीरतनि मनु ठहराइदा ।। ९ ।। रूड़ो ठाकुरु कितै वसि न आवै । हरि सो किछु करे जि हरि किआ संता भावै । कीता लोड़नि सोई कराइनि दरि फेरु न कोई पाइदा ।। १० ।। जिथै अउघटु आइ बनतु है प्राणी । तिथै हरि धिआईऐ सारिंगपाणी । जिथै पुत्रु कलत्रु न बेली कोई तिथै हरि आपि छडाइदा ।। ११ ।। वडा साहिबु अगम अथाहा । किउ मिलीऐ प्रभ वेपरवाहा । काटि सिलक जिसु मारगि पाए सो विचि संगति वासा पाइदा ।। १२ ।। हुकमु बूझै सो सेवकु कहीऐ । बुरा भला दुइ समसरि सहीऐ । हउमै जाइ त एको बूझै सो गुरमुखि सहजि समाइदा ।। १३ ।। हरि के भगत सदा सुखवासी । बाल सुभाइ अतीत उदासी । अनिक रंग करहि बहु भाती जिउ पिता पूतु लाडाइदा ।। १४ ।। अगम अगोचरु कीमति नही पाई । ता मिलीऐ जा लए मिलाई । गुरमुखि प्रगटु भइआ तिन जन कउ जिन धुरि मसतकि लेखु लिखाइदा ।। १५ ।। तू आपे करता कारण करणा । स्रिसटि उपाइ धरी सभ धरणा । जन नानकु सरणि पइआ हरि दुआरै हरि भावै लाज रखाइदा ।। १६ ।। १ ।। ५ ।।

परब्रह्म मायातीत और आकार-रहित है, किन्तु निर्लिप्त होते हुए

भी सबमें व्याप्त है (सबमें वर्तता है), उसका कोई वर्ण, जाति, चिह्न अथवा स्वरूप नहीं, उसने केवल शब्द की शक्ति से समूची सृष्टि को उत्पन्न किया है ।। १ ।। सब जीव चौरासी लाख योनियों में बँटे हैं, परमात्मा ने मनुष्य-योनि को (मुक्ति-लाभ का) सम्मान दिया है। मनुष्य-जन्म लेकर भी जो व्यक्ति प्रभु-भक्ति से चूक जाता है, वह सदा जन्म-मरण के चक्र में दुःख भोगता है ।। २ ।। परमात्मा के किए (बनाए) की क्या सराहना करें, गुरु के द्वारा ही उसे हरि-नाम की पूँजी मिलती है। जिसे वह स्वयं भुलाता है, वह नाम-पदार्थ को भूल जाता है और जिसे बताता है, वह जान लेता है ।। ३ ।। परमात्मा ने हर्ष-शोक का यह शरीर रूपी नगर बसाया है; इसमें उन्हीं का कल्याण है, जो सतिगुरु की शरण लेते हैं। वही गुरुमुख, जो त्रिगुणात्मक माया से निर्लिप्त रहता है, सब जगह शोभायमान होता है ।। ४ ।। मनुष्य (इस शरीर में) अनेक कर्म कमाता है; जितने कर्म करता है, उतने पैरों में बन्धन बनते हैं— क्योंकि ऋतु-विपरीत बोया गया बीज कभी जमता नहीं, बल्कि मनुष्य संभव लाभ भी गँवा बैठता है। (अर्थात् अब हरि-नाम की ऋतु है, षट्कर्मों की नहीं। इस ऋतु में हरि-नाम फलता है, षट्कर्म तो बन्धन बन जाते हैं।) ।। ५ ।। कलियुग में हरि-कीर्तन की प्रधानता है, इसलिए ध्यानपूर्वक गुरु के द्वारा परमात्मा का ध्यान करो। इससे मुक्ति होगी, समूचे कुल की गति होगी और प्रतिष्ठित रूप से परमात्मा के घर जाएगा ।। ६ ।। खण्ड, पाताल द्वीप, लोक एवं रचना के समस्त अंग स्वयं परमात्मा ने काल-वश कर रखे हैं। वही एकमात्र निश्चल और अविनाशी है, या अन्य वह निश्चल होता है, जो उसका ध्यान धरता है ।। ७ ।। हरि की सेवा-भक्ति करने वाला जीव परमात्मा का ही रूप होता है। यद्यपि वह मनुष्य-देह में होता है, तो भी उसमें और परमात्मा में कोई भेद नहीं समझना। (उसकी स्थिति जल-वीचि-समान होती है।) जैसे जल में अनेक प्रकार की तरंगें उठती हैं और अन्ततः जल जल में समा जाता है ।। ८ ।। मनुष्य याचक के समान प्रभु के द्वार पर याचना करता है; किन्तु जब प्रभु को रुचता है, तभी वह कृपा करता है। हे प्रभु, ऐसे दर्शन दो कि जिससे मन तृप्त हो जाय और हरि-कीर्तन में रुचि बने ।। ९ ।। वह सुन्दर प्रभु किसी के वश में नहीं; वह तो वही सब कुछ करता है, जो उसके भक्तों को प्रिय होता है। जो वे (भक्तजन) तुमसे करवाना चाहते हैं, वही करवाते हैं; उन सन्तों का कथन तुम्हारे द्वार से भी नहीं मुड़ता अर्थात् तुम भी उनकी इच्छा का सत्कार करते हो ।। १० ।। जहाँ प्राणी को कठिनाई आती है, वहाँ वह वाहिगुरु का नाम जपता है। जहाँ स्त्री, पुत्र कोई सहायी नहीं होता, वहाँ परमात्मा स्वयं छुड़ाता है ।। ११ ।। परमात्मा अगम अथाह और महनीय स्वामी है, उस बे-परवाह परमात्मा को क्योंकर

मिला जा सकता है ! जिस प्रभु ने हमारे गले से भ्रम का फन्दा काटा है, वह अपने भक्तों में ही बसता है ।। १२ ।। जो जीव उस परमात्मा का हुक्म मानता है, उसकी इच्छा को शिरोधार्य करता है, वही प्रभु का वास्तविक सेवक है । वह बुरे-भले को एक समान मानता है । यदि मनुष्य में से अहम्-भाव निरस्त हो सके, तो जीव परमात्मा को जान सकता है और सहज में ही गुरु के द्वारा परमानन्द में समा सकता है ।। १३ ।। हरि की भक्ति करनेवाले जीव सदा सुखी बसते हैं; वे बाल्यावस्था से ही सरल स्वभावी और संसारातीत होकर उदासी होते हैं । वे दिन-रात अनेक प्रकार के रंग भोगते हैं, जैसे पिता पुत्र को भाँति-भाँति के लाड़ लड़ाता है (वैसे ही परमात्मा अपने भक्तों को प्यार करता है) ।। १४ ।। वह परमात्मा अगम, अगोचर है, कोई उसका मोल नहीं डाल सकता । यदि वह स्वयं किसी जीव को अपने संग मिला ले, तभी जीव उसे पा सकता है । गुरु के द्वारा वह उन्हीं जीवों पर प्रकट होता है, जिनके भाग्य-लेख उत्तम होते हैं अर्थात् जिनके प्रारब्ध कर्म श्रेष्ठ होते हैं ।। १५ ।। हे प्रभु तुम स्वयं ही सृष्टि के कर्ता भी हो और कारण भी; तुम्हीं ने समूची सृष्टि बनाई है और धरती की स्थापना की है । गुरु नानक कहते हैं कि वे प्रभु की शरण में हैं, जैसे उसे रुचता है, वैसे वह लाज रखेगा ।। १६ ।। १ ।। ५ ।।

मारू सोलहे महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। जो दीसै सो एको तू है । बाणी तेरी स्रवणि सुणीऐ । दूजी अवर न जापसि काई सगल तुमारी धारणा ।। १ ।। आपि चितारे अपणा कीआ । आपे आपि आपि प्रभु थीआ । आपि उपाइ रचिओनु पसारा आपे घटि घटि सारणा ।। २ ।। इकि उपाए वड दरवारी । इकि उदासी इकि घरबारी । इकि भूखे इकि त्रिपति अघाए सभसै तेरा पारणा ।। ३ ।। आपे सति सति सति साचा । ओति पोति भगतन संगि राचा । आपे गुपतु आपे है परगटु अपणा आपु पसारणा ।। ४ ।। सदा सदा सद होवणहारा । ऊचा अगमु अथाहु अपारा । ऊणे भरे भरे भरि ऊणे एहि चलत सुआमी के कारणा ।। ५ ।। मुखि सालाही सचे साहा । नैणी पेखा अगम अथाहा । करनी सुणि सुणि मनु तनु हरिआ मेरे साहिब सगल उधारणा ।।६।। करि करि वेखहि कीता अपणा ।

जीअ जंत सोई है जपणा। अपणी कुदरति आपे जाणै नदरी नदरि निहालणा ॥ ७ ॥ संत सभा जह बैसहि प्रभ पासे। अनंद मंगल हरि चलत तमासे। गुण गावहि अनहद धुनि बाणी तह नानक दासु चितारणा ॥ ८ ॥ आवणु जाणा सभु चलतु तुमारा। करि करि देखै खेलु अपारा। आपि उपाए उपावणहारा अपणा कीआ पालणा ॥९॥ सुणि सुणि जीवा सोइ तुमारी। सदा सदा जाई बलिहारी। दुइ कर जोड़ि सिमरउ दिनु राती मेरे सुआमी अगम अपारणा ॥ १० ॥ तुधु बिनु दूजे किसु सालाही। एको एकु जपी मन माही। हुकमु बूझि जन भए निहाला इह भगता की घालणा ॥ ११ ॥ गुर उपदेसि जपीऐ मनि साचा। गुर उपदेसि राम रंगि राचा। गुर उपदेसि तुटहि सभि बंधन इहु भरमु मोहु परजालणा ॥ १२ ॥ जह राखै सोई सुख थाना। सहजे होइ सोई भल माना। बिनसे बैर नाही को बैरी सभु एको है भालणा ॥ १३ ॥ डर चूके बिनसे अंधिआरे। प्रगट भए प्रभ पुरख निरारे। आपु छोडि पए सरणाई जिस का सा तिसु घालणा ॥ १४ ॥ ऐसा को वडभागी आइआ। आठ पहर जिनि खसमु धिआइआ। तिसु जन कै संगि तरै सभु कोई सो परवार सधारणा ॥ १५ ॥ इह बखसीस खसम ते पावा। आठ पहर कर जोड़ि धिआवा। नामु जपी नामि सहजि समावा नामु नानक मिलै उचारणा ॥ १६ ॥ १ ॥ ६ ॥

जो कुछ भी दृश्यमान है, वह तुम ही हो। कानों द्वारा सुनी जाने वाली वाणी तुम्हारी ही है। अन्य कोई वस्तु ज्ञात नहीं है, जो तुम्हारे सहारे पर नहीं ॥ १ ॥ अपने बनाए हुए का ध्यान भी वह स्वयं ही रखता है। केवल प्रभु ही स्वयंभू है, अपने-आप बना है। उसी ने स्वयं समूची रचना की है और सबकी सम्हाल करता है ॥ २ ॥ कुछ लोग उसने बड़े दरबारों वाले पैदा किये हैं, कुछ विरक्त हैं और कुछ को घर-बारी बनाया है। कुछ भूखे हैं, कुछ खा-खाकर पूर्ण तृप्त हैं —सबको एक तुम्हारा ही भरोसा है ॥ ३ ॥ परमात्मा स्वयं ही एकमात्र सत्य है। वह ताणे-पेटे की भाँति भक्तों में रचा हुआ है। वह स्वेच्छा से गुप्त भी है, प्रकट भी है; उसी का सब प्रसार है ॥ ४ ॥ सदैव तीनों कालों में उसका अस्तित्व है; वह उच्च, अगम, अथाह और अपार है। वह ख़ाली को भरता, भरे को ख़ाली करता है; यही सब उस परम स्वामी के कार्य

हैं ॥ ५ ॥ हे मेरे सच्चे स्वामी, मुख से मैं तुम्हारी कीर्ति गाऊँ, अगम-अथाह परमात्मा को आँखों से देखूँ। कानों से तुम्हारी मधुर वाणी सुनकर मेरा तन-मन प्रसन्न हो जाता है। मेरा स्वामी सबका उद्धार करनेवाला है ॥ ६ ॥ परमात्मा अपनी रचना को बड़े मनोयोग से निहारता है— सब जीव-जन्तु उसी का नाम जपते हैं। वह अपनी लीला को स्वयं ही जानता है और जिस पर कृपा-दृष्टि करता है, उसे एक ही नज़र में मुक्त कर देता है ॥ ७ ॥ जहाँ भक्तजनों की सभा बैठती है, वहाँ सदा तुम निकट ही होते हो। हरि की लीलाओं में उन्हें प्रसन्नता और आनन्द-मंगल होता है। गुरु नानक कहते हैं कि वे उसके गुण गाते, अनाहत नाद को सुनते और सदैव उसका चिन्तन करते हैं ॥ ८ ॥ संसार में मनुष्य का आवागमन सब तुम्हारी लीला है, तुम स्वयं उस खेल-प्रसार को करते और उसे देख-देखकर आनन्दित होते हो। तुम स्वयं उत्पन्न करनेवाले हो, उत्पन्न करते और उत्पत्ति का पालन भी करते हो ॥ ९ ॥ मैं तो तुम्हारी शोभा सुन-सुनकर जीवित हूँ और नित्य तुम पर क़ुर्बान जाता हूँ। दोनों हाथ बाँधकर मैं अपने अगम अपार ठाकुर को रात-दिन सिमरता हूँ ॥ १० ॥ तुम्हारे अतिरिक्त दूसरे किसकी सराहना करूँ, एकमात्र तुम्हें ही मन में जपता हूँ। जो जीव तुम्हारे आदेश को (शब्द को) समझ लेते हैं, वे ही भक्ति की कमाई करते हैं ॥ ११ ॥ गुरु के उपदेश द्वारा ही उस परमसत्य को मन में जपते हैं, गुरु के उपदेश से ही राम-नाम के रंग में रचते हैं। गुरु के उपदेश से ही सब माया-बन्धन टूटते और भ्रम-मोह आदि जल जाते हैं ॥ १२ ॥ जहाँ तुम रखो, वही जगह सुख-प्रद है; जो सहज ही होता है, उसी में भक्तों का भला निहित है। अपने मन से वैर नष्ट हो जाय तो फिर कोई वैरी नहीं रहता, सबका रक्षक एक परमात्मा ही है ॥ १३ ॥ भय दूर हो जाता है, अन्धकार नष्ट होता है और तब निर्लिप्त परमात्मा का साक्षात् होता है। अहम् का त्यागकर जीव उसकी शरण में आता है; जिसका था, उसी का बन जाता है ॥ १४ ॥ ऐसा सौभाग्यशाली कौन आया है, जिसने आठों प्रहर अपने स्वामी का ध्यान किया है। ऐसे व्यक्ति की संगति में आनेवाले सब लोग मुक्त हो जाते हैं, वह समस्त परिवार को सुधार लेता है ॥ १५ ॥ वह अपने स्वामी से यही याचना करता है कि वह आठों पहर हाथ जोड़कर उसी का ध्यान करता रह सके। गुरु नानक कहते हैं कि वह नाम के जाप द्वारा सहजानन्द को प्राप्त करता और नामी में ही लीन हो जाता है ॥ १६ ॥ १ ॥ ६ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ सूरति देखि न भूलु गवारा। मिथन मोहारा झूठु पसारा। जग महि कोई रहणु न पाए निहचलु

एकु नाराइणा ।। १ ।। गुर पूरे की पउ सरणाई । मोहु सोगु सभु भरमु मिटाई । एको मंत्रु द्रिड़ाए अउखधु सचु नामु रिद गाइणा ।। २ ।। जिसु नामै कउ तरसहि बहु देवा । सगल भगत जा की करदे सेवा । अनाथा नाथु दीन दुख भंजनु सो गुर पूरे ते पाइणा ।। ३ ।। होरु दुआरा कोइ न सूझै । त्रिभवण धावै ता किछू न बूझै । सतिगुरु साहु भंडारु नाम जिसु इहु रतनु तिसै ते पाइणा ।।४।। जा की धूरि करे पुनीता । सुरि नर देव न पावहि मीता । सति पुरखु सतिगुरु परमेसरु जिसु भेटत पारि पराइणा ।।५।। पारजातु लोड़हि मन पिआरे । कामधेनु सोही दरबारे । त्रिपति संतोखु सेवा गुर पूरे नामु कमाइ रसाइणा ।।६।। गुर कै सबदि मरहि पंच धातू । भै पारब्रहम होवहि निरमलातू । पारसु जब भेटै गुरु पूरा ता पारसु परसि दिखाइणा ।। ७ ।। कई बैकुंठ नाही लवै लागे । मुकति बपुड़ी भी गिआनी तिआगे । ऐकंकारु सतिगुर ते पाईऐ हउ बलि बलि गुर दरसाइणा ।। ८ ।। गुर की सेव न जाणै कोई । गुरु पारब्रहमु अगोचरु सोई । जिस नो लाइ लए सो सेवकु जिसु वडभाग मथाइणा ।। ९ ।। गुर की महिमा बेद न जाणहि । तुछ मात सुणि सुणि वखाणहि । पारब्रहम अपरंपर सतिगुर जिसु सिमरत मनु सीतलाइणा ।। १० ।। जा की सोइ सुणी मनु जीवै । रिदै वसै ता ठंढा थीवै । गुरु मुखहु अलाए ता सोभा पाए तिसु जम कै पंथि न पाइणा ।। ११ ।। संतन की सरणाई पड़िआ । जीउ प्राण धनु आगै धरिआ । सेवा सुरति न जाणा काई तुम करहु दइआ किरमाइणा ।। १२ ।। निरगुण कउ संगि लेहु रलाए । करि किरपा मोहि टहलै लाए । पखा फेरउ पीसउ संत आगै चरण धोइ सुखु पाइणा ।। १३ ।। बहुतु दुआरे भ्रमि भ्रमि आइआ । तुमरी क्रिपा ते तुम सरणाइआ । सदा सदा संतह संगि राखहु एहु नाम दानु देवाइणा ।। १४ ।। भए क्रिपाल गुसाई मेरे । दरसनु पाइआ सतिगुर पूरे । सूख सहज सदा आनंदा नानक दास वसाइणा ।। १५ ।। २ ।। ७ ।।

(इस पद में गुरुजी ने बताया है कि प्रभु के अतिरिक्त कोई वस्तु या

स्थिति स्थायी नहीं है, इसलिए किसी भी नश्वर वस्तु से मोह करना उचित नहीं है।) हे गँवार जीव, बाहरी रंग-रूप देखकर भ्रम में न पड़ो। संसार का यह समूचा प्रसार मिथ्या है। यहाँ (संसार में) कोई स्थायी नहीं, मात्र नारायण ही अविनाशी है ॥ १ ॥ पूरे गुरु की शरण में आओ, वही मोह-शोक तथा अन्य सभी भ्रमों को मिटा सकता है। इन सभी रोगों का एकमात्र उपचार परमात्मा के सच्चे नाम के मन्त्र को हृदय में दृढ़ करना ही है ॥ २ ॥ जिस प्रभु-नाम को देवी-देवता भी तरसते हैं, समस्त भक्तजन जिसकी सेवा करते हैं, जो अनाथों का सहारा है, दीनों का दुःख दूर करनेवाला है, उसका सही परिचय पूर्णगुरु से ही मिलता है ॥ ३ ॥ कोई अन्य यह ज्ञान नहीं दे सकता, चाहे व्यक्ति (इसके लिए) तीनों लोकों में भटकता फिरे। हरि-नाम के भण्डार का शाह स्वयं गुरु है, यह रत्न उसी से प्राप्त है ॥ ४ ॥ जिसकी चरण-धूल पवित्र कर देती है; हे मित्र, वह चरण-धूल देवी-देवताओं और ऋषियों-मुनियों को भी प्राप्त नहीं। सतिगुरु और परब्रह्म अभेद हैं, उससे भेंट होने मात्र से मुक्ति मिलती है ॥ ५ ॥ हे प्यारे मन, यदि तुम्हें कल्पद्रुम की इच्छा है, या अपने द्वार पर कामधेनु को सुशोभित देखने की आकांक्षा है, तो पूर्णगुरु की सेवा में संलग्न रहो, जिससे तृप्ति और सन्तोष मिलता है। (उसकी सहायता से) नाम की कमाई करो, जिसमें सब रसों का मूल है ॥ ६ ॥ गुरु के शब्द से पाँचों (काम-क्रोधादि) विकार नष्ट होते हैं, परब्रह्म के प्रति भक्ति-भाव से तुम निर्मल हो जाते हो। जब सच्चे गुरु जैसा पारस मिल जाए, तो उसको छूकर मनुष्य भी पारस बनकर दीख पड़ता है ॥ ७ ॥ (गुरु से मिलनेवाले हरिनाम-रत्न की तुलना में) कोई बैकुण्ठ उसकी बराबरी नहीं करता, बेचारी मुक्ति को भी ज्ञानीजन त्याग देते हैं। उस ओंकार ब्रह्म की प्राप्ति सतिगुरु से ही होती है, मैं उसके दर्शनों पर बार-बार क़ुर्बान हूँ ॥ ८ ॥ गुरु की सेवा की मूल विधि कोई नहीं जानता, गुरु परब्रह्मस्वरूप और अगम-अगोचर है। जिसके मस्तक में भाग्यरेखाएँ हैं, वही उसकी सेवा में तल्लीन होता है ॥ ९ ॥ गुरु की महत्ता को वेद-शास्त्रों ने भी नहीं बखाना, सुन-सुनकर किंचित तथ्य उन्होंने (वेद-शास्त्रों ने) कहे हैं। सतिगुरु परब्रह्म अपरंपर है, उसके स्मरण मात्र से मन शीतल होता है ॥ १० ॥ जिसकी शोभा सुनकर चित्त में चेतना होती है, जिसके हृदय में समाने से शीतलता मिलती है। जो जीव गुरु के द्वारा प्रभु-स्मरण करके शोभायमान होता है, वह कभी यमदूतों के मार्ग पर नहीं जाता ॥ ११ ॥ मैं तो सन्तों की शरण में पड़ा हूँ, मन, प्राण और तन-धन सब उसके सम्मुख समर्पित किया है, मुझे सेवा-स्मरण की कोई विधि ज्ञात नहीं, (हे सतिगुरु,) मुझ कीट पर दया करके अपना लो ॥ १२ ॥ मैं गुण-हीन हूँ, कृपापूर्वक अपनी शरण में अपना

लो, दया करके मुझे सेवा प्रदान करो। मैं सन्तों के लिए पंखा हिलाऊँगा, चक्की पीसूँगा और उनके चरण धोकर सुख पाऊँगा ॥ १३ ॥ बहुत (देवी-देवताओं के) द्वारों पर भटकता हुआ यहाँ पहुँचा हूँ, अब तुम्हारी कृपा से तुम्हारी शरण में हूँ। सदा के लिए मुझे सन्तों की संगति प्रदान करो और हरि-नाम-दान दो ॥ १४ ॥ मेरे परमात्मा मुझ पर कृपालु हैं, जिससे मुझे सतिगुरु के दर्शन प्राप्त हुए हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे प्रभु के दासानुदास हैं, उसी में उन्हें सहज ही परमानन्द लब्ध होता है ॥ १५ ॥ २ ॥ ७ ॥

मारू सोलहे महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सिमरै धरती अरु आकासा। सिमरहि चंद सूरज गुणतासा। पउण पाणी बैसंतर सिमरहि सिमरै सगल उपारजना ॥ १ ॥ सिमरहि खंड दीप सभि लोआ। सिमरहि पाताल पुरीआ सचु सोआ। सिमरहि खाणी सिमरहि बाणी सिमरहि सगले हरि जना ॥ २ ॥ सिमरहि ब्रहमे बिसन महेसा। सिमरहि देवते कोड़ि तेतीसा। सिमरहि जख्यि दैत सभि सिमरहि अगनतु न जाई जसु गना ॥ ३ ॥ सिमरहि पसु पंखी सभि भूता। सिमरहि बन परबत अउधूता। लता बली साख सभ सिमरहि रवि रहिआ सुआमी सभ मना ॥ ४ ॥ सिमरहि थूल सूखम सभि जंता। सिमरहि सिध साधिक हरि मंता। गुपत प्रगट सिमरहि प्रभ मेरे सगल भवन का प्रभ धना ॥ ५ ॥ सिमरहि नर नारी आसरमा। सिमरहि जाति जोति सभि वरना। सिमरहि गुणी चतुर सभि बेते सिमरहि रैणी अरु दिना ॥ ६ ॥ सिमरहि घड़ी मूरत पल निमखा। सिमरै कालु अकालु सुचि सोचा। सिमरहि सउण सासत्र संजोगा अलखु न लखीऐ इकु खिना ॥ ७ ॥ करन करावनहार सुआमी। सगल घटा के अंतरजामी। करि किरपा जिसु भगती लावहु जनमु पदारथु सो जिना ॥ ८ ॥ जाकै मनि वूठा प्रभु अपना। पूरै करमि गुर का जपु जपना। सरब निरंतरि सो प्रभु जाता बहुणि न जोनी भरमि रुना ॥ ९ ॥ गुर का सबदु वसै मनि जा कै। दूखु दरदु भ्रमु ता का भागै।

सूख सहज आनंद नाम रसु अनहद बाणी सहज धुना ।। १० ।। सो धनवंता जिनि प्रभु धिआइआ । सो पतिवंता जिनि साध संगु पाइआ । पारब्रहमु जा कै मनि वूठा सो पूर करंमा ना छिना ।। ११ ।। जलि थलि महीअलि सुआमी सोई । अवरु न कहीऐ दूजा कोई । गुर गिआन अंजनि काटिओ भ्रमु सगला अवरु न दीसै एक बिना ।। १२ ।। ऊचे ते ऊचा दरबारा । कहणु न जाई अंतु न पारा । गहिर गंभीर अथाह सुआमी अतुलु न जाई किआ मिना ।। १३ ।। तू करता तेरा सभु कीआ । तुझु बिनु अवरु न कोई बीआ । आदि मधि अंति प्रभु तू है सगल पसारा तुम तना ।। १४ ।। जमदूतु तिसु निकटि न आवै । साध संगि हरि कीरतनु गावै । सगल मनोरथ ता के पूरन जो स्रवणी प्रभ का जसु सुना ।।१५।। तू सभना का सभु को तेरा । साचे साहिब गहिर गंभीरा । कहु नानक सेई जन ऊतम जो भावहि सुआमी तुम मना ।। १६ ।। १ ।। ८ ।।

धरती और आकाश अर्थात् समूची रचना परमात्मा का स्मरण करती है, चन्द्र-सूर्य आदि भी उस गुणागार प्रभु को स्मरण करते हैं। पवन, पानी, अग्नि, समूची उत्पत्ति उसका सिमरण करती है ।। १ ।। खण्ड, द्वीप, लोक, सब उसका स्मरण करते हैं; पाताल, अमानुषिक नगरियाँ भी उस सत्यस्वरूप परमात्मा का स्मरण करती हैं। सब खण्डों-ब्रह्माण्डों के जीव तथा सब हरि-भक्त अपनी-अपनी वाणी में उसका सिमरण करते हैं ।। २ ।। ब्रह्मा, विष्णु, शिव भी उसको स्मरण करते हैं। तेंतीस कोटि देवता उसे सिमरते हैं। यक्ष, दैत्य और अन्य असंख्य लोग, जिनकी गणना सम्भव नहीं, प्रभु का स्मरण करते हैं ।। ३ ।। सब सशरीरी तथा पशु-पंछी उसका सिमरण करते हैं; वनों-पर्वतों पर रहने वाले योगी-जन भी उसी का स्मरण करते हैं। लताएँ, पेड़, शाखाएँ, जहाँ तक सूर्य की किरणें जाती हैं, सब परमात्मा को सिमरते हैं ।। ४ ।। सब स्थूल, सूक्ष्म जन्तु उसका ध्यान करते हैं। सिद्ध, साधक भी हरि-मन्त्र जपते हैं। गुप्त, प्रकट सब मेरे प्रभु का स्मरण करते हैं, वह चौदह भुवनों का स्वामी है ।। ५ ।। नर-नारी तथा चारों आश्रमों में जीनेवाले लोग उसका स्मरण करते हैं। सब जातियों, चारों वर्णों तथा ज्ञानाज्ञान वाले उसको सिमरते हैं। गुणी, चतुर और तत्त्व-वेत्ता लोग भी रात-दिन उसका स्मरण करते हैं ।। ६ ।। क्षण, घड़ी, मुहूर्त अर्थात् समय के प्रति खण्ड में प्रभु का ध्यान किया जाता है। जन्म-मरण तथा शौच-निर्मलता आदि सब उसे याद करते हैं। शगुन, शास्त्र और संयोग की चर्चा करने

वाले, जो क्षण भर भी उस अलख को कभी देख नहीं पाए, परमात्मा के नाम का सिमरण करते हैं ॥ ७ ॥ वह सबका स्वामी और सर्वस्व करने-कराने में समर्थ है, घट-घट का अन्तर्यामी है। जिन पर वह कृपा करके भक्ति-रस प्रदान करता है, उन्हीं लोगों का जन्म सफल होता है ॥ ८ ॥ जिन जीवों के मन में परमात्मा बस गया है, वे भाग्यशाली गुरु के द्वारा सदा उसका नाम जपते हैं। वे सर्व-निरन्तर परमात्मा को साक्षात् कर लेते हैं और सदा के लिए योनि-भ्रमण से छूट जाते हैं ॥ ९ ॥ जिनके हृदय में गुरु का शब्द रम जाता है, उसके सब दुःख, दर्द तथा भ्रम कट जाते हैं। वे अनाहत वाणी की सहज ध्वनि को पाकर नाम-रस के परम आनन्द तथा सुख को पा जाते हैं ॥ १० ॥ प्रभु का ध्यान करनेवाले ही वास्तव में धनवान हैं, सत्संगति में जीवन-यापन करनेवाले ही प्रतिष्ठित हैं। जिनके मन में प्रभु बस गया है, वे भाग्यवान हैं, उसकी सम्पत्ति (परमात्मा) छीनी नहीं जा सकती ॥ ११ ॥ वह परमात्मा जल, थल और आकाश का स्वामी है। उसके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं। गुरु ने ज्ञान-अंजन लगाकर सब भ्रम काट दिया है, अब उसके अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं दीख पड़ता ॥ १२ ॥ परमात्मा का दरबार सर्वोच्च है, उसका अन्त या सीमाएँ नहीं बताई जा सकतीं। वह गहरा, गम्भीर और अतुल स्वामी है, उसे कोई क्या नापे-तोलेगा ॥ १३ ॥ हे परमात्मा, तुम कर्ता हो, सब कुछ तुम्हीं ने किया; तुम्हारे अतिरिक्त और कोई नहीं हुआ। हे मालिक, आदि-मध्य-अन्त, सब तुम ही हो और यह समूचा प्रसार तुम्हारा ही किया हुआ है ॥ १४ ॥ जो जीव साधु-संगति में परमात्मा की कीर्तन गाता है, यमदूत कभी उसके निकट नहीं फटकते। जो कानों से परमात्मा का यश सुनता है, उसकी सब मनोकामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं ॥ १५ ॥ हे परमात्मा, तुम सबके रक्षक हो, सब तुम्हारे ही हैं। तुम सच्चे स्वामी हो, गहरे और गम्भीर हो। गुरु नानक कहते हैं कि वे लोग ही श्रेष्ठ हैं, जिन्हें, हे मालिक, तुम चाहते हो ॥ १६ ॥ १ ॥ ८ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ प्रभ समरथ सरब सुख दाना। सिमरउ नामु होहु मिहरवाना। हरि दाता जीअ जंत भेखारी जनु बांछै जाचंगना ॥ १ ॥ मागउ जन धूरि परमगति पावउ। जनम जनम की मैलु मिटावउ। दीरघ रोग मिटहि हरि अउखधि हरि निरमलि रापै मंगना ॥ २ ॥ स्रवणी सुणउ बिमल जसु सुआमी। एका ओट तजउ बिखु कामी। निवि निवि पाइ लगउ दास तेरे करि सुक्रितु नाही संगना ॥ ३ ॥ रसना गुण गावै हरि तेरे। मिटहि कमाते अवगुण मेरे। सिमरि सिमरि

सुआमी मनु जीवै पंच दूत तजि तंगना ।। ४ ।। चरन कमल जपि बोहथि चरीऐ । संत संगि मिलि सागरु तरीऐ । अरचा बंदन हरि समत निवासी बाहुड़ि जोनि न नंगना ।। ५ ।। दास दासन को करि लेहु गुोपाला । क्रिपा निधान दीन दइआला । सखा सहाई पूरन परमेसुर मिलु कदे न होवी भंगना ।। ६ ।। मनु तनु अरपि धरी हरि आगै । जनम जनम का सोइआ जागै । जिस का सा सोई प्रतिपालकु हति तिआगी हउमै हंतना ।। ७ ।। जलि थलि पूरन अंतरजामी । घटि घटि रविआ अछल सुआमी । भरम भीति खोई गुरि पूरै एकु रविआ सरबंगना ।। ८ ।। जत कत पेखउ प्रभ सुख सागर । हरि तोटि भंडार नाही रतनागर । अगह अगाह किछु मिति नही पाईऐ सो बूझै जिसु किरपंगना ।।९।। छाती सीतल मनु तनु ठंढा । जनम मरण की मिटवी डंझा । करु गहि काढि लीए प्रभि अपुनै अमिउ धारि द्रिसटंगना ।। १० ।। एको एकु रविआ सभ ठाई । तिसु बिनु दूजा कोई नाही । आदि मधि अंति प्रभु रविआ त्रिसन बुझी भरमंगना ।। ११ ।। गुरु परमेसरु गुरु गोबिंदु । गुरु करता गुरु सद बखसंदु । गुर जपु जापि जपत फलु पाइआ गिआन दीपकु संत संगना ।। १२ ।। जो पेखा सो सभु किछु सुआमी । जो सुनणा सो प्रभ की बानी । जो कीनो सो तुमहि कराइओ सरणि सहाई संतह तना ।। १३ ।। जाचकु जाचै तुमहि अराधै । पतित पावन पूरन प्रभ साधै । एको दानु सरब सुख गुण निधि आन मंगन निह किचना ।। १४ ।। काइआ पात्रु प्रभु करणैहारा । लगी लागि संत संगारा । निरमल सोइ बणी हरि बाणी मनु नामि मजीठै रंगना ।। १५ ।। सोलह कला संपूरन फलिआ । अनत कला होइ ठाकुरु चड़िआ । अनद बिनोद हरि नामि सुख नानक अंम्रित रसु हरि भुंचना ।। १६ ।। २ ।। ९ ।।

हे सुखदाता समर्थ प्रभु, कृपालु होकर मुझे अपना नाम स्मरण करने की शक्ति दो। हे परमात्मा, तुम दाता हो, अन्य सभी जीव-जन्तु भिखारी हैं, मैं तुम्हारा याचक बनकर माँगता हूँ ।। १ ।। मैं सन्तजनों की चरण-धूल माँगता हूँ, जिससे जन्म-जन्म की मलिनता धुल जाती है और परम गति मिलती है। मैं निर्मल हरि के प्यार में रँगा जाना माँगता हूँ, उस हरि रूपी ओषधि से विकटतर रोग कटते हैं ।। २ ।। (मैं याचना

करता हूँ कि) अपने कानों से अपने स्वामी का विमल यश सुनूँ; एकमात्र परमात्मा का सहारा लेते हुए, विषय-वासनाओं को त्याग दूँ। झुक-झुक कर तुम्हारे सेवकों के चरणों से लगूँ और बेझिझक सत्कर्मों में संलग्न रहूँ ॥ ३ ॥ हे परमात्मा, मेरी जिह्वा सदैव तुम्हारे गुण गाती रहे। (अब तक के) मेरे किए सब अवगुण मिट जायँ। हे स्वामी, मैं सदा तुम्हारा स्मरण करूँ और इन कष्टकर पाँच दूतों (काम, क्रोधादि) से बचा रहूँ ॥ ४ ॥ तुम्हारे चरण-कमल का स्मरण कर हरि-नाम रूपी जहाज़ में चढ़ूँ; तुम्हारे सेवकों की संगति में संसार-सागर को तर जाऊँ; तुम्हारी अर्चना-वन्दना करते हुए मैं परमगति को पा सकूँ और दुबारा योनि-बन्धन में पड़कर तिरस्कृत न होऊँ ॥ ५ ॥ हे परमात्मा, मुझे अपने दासों का दास बना लो, हे कृपाशील, दीन-दयाल प्रभु, हे मेरे सखा, सहायी मेरे मालिक, ऐसा मिलाप प्रदान करो, जो कभी नष्ट न हो ॥ ६ ॥ मैं हरि-प्रभु के सम्मुख तन-मन अर्पित करता हूँ, जिससे मेरा सुप्त मन जगेगा। मैं जिसका दास था, वही अब मेरा प्रतिपालक-रक्षक बना है, उसने नित्य कष्ट देनेवाले अहम्-भाव को मार दिया है ॥ ७ ॥ परमात्मा जल-थल में व्याप्त है और अन्तर्यामी है, वह निश्छल स्वामी घट-घट में व्याप्त है। मेरे गुरु ने भ्रम की दीवार तोड़ दी है, वह एक परमात्मा सबमें रमा हुआ है ॥ ८ ॥ जहाँ भी दृष्टि जाती है, अपने सुख-सागर परमात्मा को देखता हूँ। परमात्मा रत्नाकर है, उसके कोष में कभी कोई कमी नहीं आती। वह अगाह, अथाह है, उसका कोई परिमाण नहीं; जिस पर उसकी कृपा होती है, वही उसे पाता है ॥ ९ ॥ (परमात्मा के मिलन से) हृदय शीतल होता है और तन-मन शान्त रहता है, जन्म-मरण का चक्र मिट जाता है। प्रभु ने अपनी दृष्टि में अमृत धारण कर मेरा हाथ थामकर उबार लिया है ॥ १० ॥ वह एक परमात्मा ही सब जगह व्याप्त है, उसके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं। आदि, मध्य, अन्त सब जगह प्रभु रमता है, वह तृष्णा और भ्रमों का नाशक है ॥ ११ ॥ गुरु ही परमेश्वर है, गुरु ही ब्रह्म है, गुरु ज्ञान का कर्ता है और सदा क्षमाशील है। गुरु का नाम जपो, उसके जपने से सब फल मिलते हैं, सन्तों की संगति में ज्ञान का आलोक प्राप्त होता है ॥ १२ ॥ जहाँ तक मेरी दृष्टि जाती है, वहाँ तक, हे स्वामी, तुम ही तुम हो। जो मैं अपने कानों से सुनता हूँ, वह सब प्रभु की ही वाणी है। जो किया है, वह भी प्रभु ने ही करवाया है। प्रभु शरण में आनेवालों की सहायता करता है, इसीलिए सन्तजन तुम्हारा आसरा लेकर तुम्हारा ही रूप हो जाते हैं ॥ १३ ॥ मैं याचक यही याचना करता हूँ कि सदा तुम्हारा ही स्मरण करता रहूँ। तुम पतितों को पावन करनेवाले प्रभु महान साध्य हो। हे गुण-निधि, तुम एक ही सर्व-सुखों के दाता हो; ऐसी कृपा

करो कि किसी अन्य से माँगने से विरक्त रहूँ ।। १४ ।। हे परमात्मा, इस शरीर रूपी बर्तन को बनानेवाले तुम ही हो, इस पर सत्संगति का शृंगार हुआ है, तुम्हारी ही अमृत-वाणी से इसे सुशोभित किया गया है और मन हरि-नाम-रूप मजीठ रंग (आनन्द का रंग) से रँगा है ।। १५ ।। मेरी आत्मा ने पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया है, अनन्त कलाओं वाला ठाकुर इसमें प्रतिबिम्बित है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम द्वारा ही हमें अनेक आनन्द-सुख प्राप्त हैं, हमें इसी नाम-रस का पूर्ण भोग करना है ।। १६ ।। २ ।। ९ ।।

मारू सोलहे महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। तू साहिबु हउ सेवकु कीता । जीउ पिंडु सभु तेरा दीता । करन करावन सभु तूहै तूहै है नाही किछु असाड़ा ।। १ ।। तुमहि पठाए ता जग महि आए । जो तुधु भाणा से करम कमाए । तुझ ते बाहरि किछू न होआ ता भी नाही किछु काड़ा ।। २ ।। ऊहा हुकमु तुमारा सुणीऐ । ईहा हरि जसु तेरा भणीऐ । आपे लेख अलेखै आपे तुम सिउ नाही किछु झाड़ा ।। ३ ।। तू पिता सभि बारिक थारे । जिउ खेलावहि तिउ खेलणहारे । उझड़ मारगु सभु तुम ही कीना चलै नाही को वेपाड़ा ।। ४ ।। इकि बैसाइ रखे ग्रिह अंतरि । इकि पठाए देस दिसंतरि । इक ही कउ घासु इक ही कउ राजा इन महि कहीऐ किआ कूड़ा ।। ५ ।। कवन सु मुकती कवन सु नरका । कवनु सैसारी कवनु सु भगता । कवन सु दाना कवनु सु होछा कवन सु सुरता कवनु जड़ा ।। ६ ।। हुकमे मुकती हुकमे नरका । हुकमि सैसारी हुकमे भगता । हुकमे होछा हुकमे दाना दूजा नाही अवरु धड़ा ।। ७ ।। सागरु कीना अति तुम भारा । इकि खड़े रसातलि करि मनमुख गावारा । इकना पारि लंघावहि आपे सतिगुरु जिन का सचु बेड़ा ।। ८ ।। कउतकु कालु इहु हुकमि पठाइआ । जीअ जंत ओपाइ समाइआ । वेखै विगसै सभि रंग माणे रचनु कीना इकु अखाड़ा ।। ९ ।। वडा साहिबु वडी नाई । वड दातारु वडी जिसु जाई । अगम अगोचरु बेअंत अतोला है नाही किछु आहाड़ा ।। १० ।। कीमति कोइ न जाणै दूजा । आपे आपि निरंजन पूजा ।

आपि सु गिआनी आपि धिआनी आपि सतवंता अति गाड़ा ॥ ११ ॥ केतड़िआ दिन गुपतु कहाइआ। केतड़िआ दिन सुंनि समाइआ। केतड़िआ दिन धुंधूकारा आपे करता परगटड़ा ॥ १२ ॥ आपे सकती सबलु कहाइआ। आपे सूरा अमरु चलाइआ। आपे सिव वरताईअनु अंतरि आपे सीतलु ठारु गड़ा ॥ १३ ॥ जिसहि निवाजे गुरमुखि साजे। नामु वसै तिसु अनहद वाजे। तिसही सुखु तिसही ठकुराई तिसहि न आवै जमु नेड़ा ॥ १४ ॥ कीमति कागद कही न जाई। कहु नानक बेअंत गुसाई। आदि मधि अंति प्रभु सोई हाथि तिसै कै नेबेड़ा ॥ १५ ॥ तिसहि सरीकु नाही रे कोई। किसही बुतै जबाबु न होई। नानक का प्रभु आपे आपे करि करि वेखै चोज खड़ा ॥ १६ ॥ १ ॥ १० ॥

हे परमात्मा, तुम मेरे स्वामी हो, मैं तुम्हारा ही बनाया हुआ तुम्हारा सेवक हूँ। मेरा शरीर, प्राण, सब तुम्हारा ही दिया हुआ है। सब कुछ करनेवाले सब तुम्हीं हो, इसमें हमारा कोई योगदान नहीं ॥ १ ॥ तुमने भेजा तो संसार में आ गए; और जो तुम्हें रुचा, वे कर्म करते रहे। तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध कुछ नहीं होता, इसीलिए हमें कोई चिन्ता नहीं ॥ २ ॥ कहीं तुम्हारा हुक्म सुनाई देता है, कहीं तुम्हारा यशोगान किया जाता है। अपने-आप ही तुम भाग्य बनाते हो, स्वेच्छा से उसे मिटा भी देते हो (लेख-रहित कर देते हो), अतः तुमसे कोई ज़बरदस्ती नहीं ! ॥ ३ ॥ तुम सबके पिता हो, सब तुम्हारे बालक हैं; जैसे उन्हें खेलाते हो, वैसा वे खेलते हैं। उन्हें सन्मार्ग या कुमार्ग पर तुम्हीं चलाते हो, तुम्हारे किए बिना कोई कुमार्ग पर नहीं चलता ॥ ४ ॥ कइयों को तुमने घर ही बिठा रखा है, कुछ को देश-देशान्तरों में भटकने को तुम्हीं ने छोड़ा है। किसी को घासी (घास खोदनेवाला) और किसी को राजा तुम्हीं ने बनाया है, इसमें कुछ झूठ नहीं ॥ ५ ॥ किसी को मुक्ति-दान देते हो, किसी को नरकों में जलाते हो; किसी को संसार के विषय-भोगों में डाला है, किसी को भक्ति-दान दिया है; (तुम्हारे सम्मुख) कौन योग्य है, कौन मूर्ख, कौन सूझवान है और कौन जड़बुद्धि है ? ॥ ६ ॥ मुक्ति या नरक-भोग, सब तुम्हारे ही हुक्म से हैं; सांसारिकता और वैराग्यपूर्ण भक्ति भी तुम्हारे आदेश से ही प्राप्य हैं। किसी की योग्यता या अयोग्यता भी तुम्हारे हुक्मानुसार ही पनपती है— तुम्हारे बिना दूसरा कोई नहीं ॥ ७ ॥ तुमने अति विशाल सागर बनाया, कई मनमुखी गँवार जीव स्वेच्छाचार के कारण रसातल (यहाँ नरक) में

भेजे गए। कुछ जीवों को तुम्हारे ही हुक्म से सतिगुरु ने सत्य के जहाज़ में पार लँघा दिया है ॥ ८ ॥ जगत की सब लीलाएँ तुम्हारे ही हुक्म में बँधी हैं। सब जीव-जन्तु पैदा करके स्वयं ही (वह परमात्मा) नष्ट कर देता है। संसार की रचना एक अखाड़ा है, इसमें की लीलाएँ देख-देखकर, प्रभु प्रसन्न होता और आनन्द मनाता है ॥ ९ ॥ हरि-प्रभु महान है, उसका नाम भी महिमाशाली है। वह दाता महनीय है, उसका स्थान भी महत्त्वपूर्ण है। वह अगम, अगोचर (मन-इन्द्रियों से परे), अनन्त और अतुलनीय है, उसका कोई परिमाण नहीं ॥ १० ॥ कोई दूसरा उसकी क़ीमत नहीं डाल सकता, वह निरंजन अपने-आप में पूज्य है (अर्थात् अन्य कोई उसके बराबर पूज्य नहीं)। परमात्मा स्वयं ज्ञानवान तथा ध्यानस्थ रहनेवाला है, वह गहन और सत्यस्वरूप है ॥ ११ ॥ कितने ही युगों तक परमात्मा गोपनीय बना रहा, कितने ही युगों तक वह शून्य में समाधिस्थ रहा; युगों तक चतुर्दिक् अन्धकार छाया रहा और तब स्वयं ही (उदारता-वश) प्रभु प्रकट हो गया ॥ १२ ॥ वह प्रभु स्वयं ही शक्तिरूपा (माया) है और आप ही शक्तिवान (ब्रह्म, माया का स्वामी) कहलाता है। उसने अपने बल से सब पर अपना हुक्म चलाया है। परमात्मा स्वयं ही शान्ति-प्रसारक और हिम-समान शीतल है ॥ १३ ॥ जिस पर उसकी कृपा होती है, उसे वह गुरुमुख बनने की प्रेरणा देता है; उसे अनाहत-नाद-श्रवण की शक्ति एवं प्रभु-नाम की भक्ति देता है; उसी को सुख मिलता, ठकुराई प्राप्त होती है, यमदूत कभी उसके समीप नहीं फटकते ॥ १४ ॥ काग़ज़ पर उसके मोल का हिसाब नहीं किया जा सकता, गुरु नानक कहते हैं कि वह अनन्त स्वामी है। आदि, मध्य और अन्त, सबमें प्रभु व्याप्त है —समूचे निर्णय उसी के हाथ हैं ॥ १५ ॥ कोई उसका प्रतिद्वन्द्वी नहीं, किसी बहाने भी उसकी तुलना संभव नहीं; गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा स्वयम्भू है और अपनी लीलाओं का स्वयं ही दर्शक है ॥ १६ ॥ १ ॥ १० ॥

॥ मारू महला ५ ॥ अचुत पारब्रहम परमेसुर अंतरजामी। मधुसूदन दामोदर सुआमी। रिखीकेस गोवरधनधारी मुरली मनोहर हरि रंगा ॥ १ ॥ मोहन माधव क्रिस्न मुरारे। जगदीसुर हरि जीउ असुर संघारे। जगजीवन अबिनासी ठाकुर घट घट वासी है संगा ॥२॥ धरणीधर ईस नरसिंह नाराइण। दाड़ा अग्रे प्रिथमि धराइण। बावन रूपु कीआ तुधु करते सभही सेती है चंगा ॥ ३ ॥ स्री राम चंद जिसु रूपु न रेखिआ। बनवाली चक्रपाणि दरसि अनूपिआ। सहस नेत्र मूरति है सहसा

इकु दाता सभ है मंगा ॥ ४ ॥ भगति वछलु अनाथह नाथे । गोपी नाथु सगल है साथे । बासुदेव निरंजन दाते बरनि न साकउ गुण अंगा ॥ ५ ॥ मुकंद मनोहर लखमी नाराइण । द्रोपती लजा निवारि उधारण । कमला कंत करहि कंतूहल अनद बिनोदी निह संगा ॥ ६ ॥ अमोघ दरसन आजूनी संभउ । अकाल मूरति जिसु कदे नाही खउ । अबिनासी अबिगत अगोचर सभु किछु तुझही है लगा ॥ ७ ॥ स्री रंग बैकुंठ के वासी । मछु कछु कूरमु आगिआ अउतरासी । केसव चलत करहि निराले कीता लोड़हि सो होइगा ॥ ८ ॥ निराहारी निरवैरु समाइआ । धारि खेलु चतुरभुजु कहाइआ । सावल सुंदर रूप बणावहि बेणु सुनत सभ मोहैगा ॥ ९ ॥ बन माला बिभूखन कमल नैन । सुंदर कुंडल मुकट बैन । संख चक्र गदा है धारी महासारथी सतसंगा ॥ १० ॥ पीत पीतंबर त्रिभवण धणी । जगंनाथु गोपालु मुखि भणी । सारिंगधर भगवान बीठुला मै गणत न आवै सरबंगा ॥ ११ ॥ निहकंटकु निहकेवलु कहीऐ । धनंजै जलि थलि है महीऐ । मिरत लोक पइआल समीपत असथिर थानु जिसु है अभगा ॥ १२ ॥ पतित पावन दुख भै भंजनु । अहंकार निवारणु है भवखंडनु । भगती तोखित दीन क्रिपाला गुणे न कितही है भिगा ॥ १३ ॥ निरंकारु अछल अडोलो । जोति सरूपी सभु जगु मउलो । सो मिलै जिसु आपि मिलाए आपहु कोइ न पावैगा ॥ १४ ॥ आपे गोपी आपे काना । आपि गऊ चरावै बाना । आपि उपावहि आपि खपावहि तुधु लेपु नही इकु तिलु रंगा ॥ १५ ॥ एक जीह गुण कवन बखानै । सहस फनी सेख अंतु न जानै । नवतन नाम जपै दिनु राती इकु गुणु नाही प्रभ कहि संगा ॥ १६ ॥ ओट गही जगत पित सरणाइआ । भै भइआनक जमदूत दुतर है माइआ । होहु क्रिपाल इछा करि राखहु साध संतन कै संगि संगा ॥ १७ ॥ द्रिसटिमान है सगल मिथेना । इकु मागउ दानु गोबिद संत रेना । मसतकि लाइ परम पदु पावउ जिसु प्रापति सो पावैगा ॥१८॥ जिन कउ क्रिपा करी सुखदाते । तिन साधू चरण लै रिदै पराते । सगल नाम निधानु तिन पाइआ

अनहद सबद मनि वाजंगा ॥ १९ ॥ किरतम नाम कथे तेरे जिहबा। सतिनामु तेरा परा पूरबला। कहु नानक भगत पए सरणाई देहु दरसु मनि रंगु लगा ॥ २० ॥ तेरी गति मिति तू है जाणहि। तू आपे कथहि तै आपि वखाणहि। नानक दासु दासन को करीअहु हरि भावै दासा राखु संगा ॥२१॥२॥११॥

वही एक परमात्मा अविनाशी, परब्रह्म और अन्तर्यामी सर्वव्यापक स्वामी है। वही मधुसूदन (मधु राक्षस को मारनेवाला : श्रीकृष्ण) और दामोदर (पेट पर रस्सी बाँधी गई हो जिसके : श्रीकृष्ण); वही हृषिकेश, गोवर्धनधारी, मुरली बजानेवाला मनोहर हरि है, सब उसी के रंग हैं ॥ १ ॥ उसी ने मोहन, माधव, कृष्ण, मुरारि जगदीश्वर रूप में विश्व-घातक तथा जीवों को कष्ट देनेवाले असुरों का संहार किया है। वही विश्व को जीवन देनेवाला है, अविनाशी है, सबका स्वामी और सर्वव्यापक है ॥ २ ॥ धरनीधर (धरती का संरक्षक), ईश (कल्याणमय), नृसिंह (परमात्मा का एक स्वरूप) तथा नारायण (जल में रहनेवाले—विष्णु) आदि सब उसी परमात्मा के रूप हैं। अपनी दाढ़ों पर पृथ्वी को धारण करनेवाला (शूकर अवतार) भी वही एक प्रभु है। उसी कर्ता ने वामन का रूप धारण किया था, जो आकर्षक और सर्वसुन्दर था ॥ ३ ॥ श्रीरामचन्द्र का स्वरूप भी उसी रूपरेखा-विहीन ब्रह्म की एक लीला थी, वही बनवारी और चक्रपाणि के रूप में अनुपम दर्शन देने आया था। सहस्राक्षी (विष्णु रूप) मूर्ति उसी की है, वही एकमात्र दाता है, अन्य सब उसके द्वार के याचक हैं ॥ ४ ॥ वह भक्तों से प्यार करनेवाला और अनाथों का आश्रय है, वही गोपीनाथ (श्रीकृष्ण— मायापति) है, वही सबका सहायक है। वही वसुदेव, निरंजन और सबका पोषक है, उसके गुण अवर्णनीय हैं ॥ ५ ॥ वही मुक्ति-दाता मुकुन्द है, लक्ष्मी-नारायण (मायापति-ब्रह्म) भी वही है, द्रौपदी की लाज रखनेवाला उद्धारक वही है। कमलापति (ब्रह्म) के ही सब कौतुक हैं, वही निर्लिप्त भाव से सर्वत्र आनन्दमग्न है ॥ ६ ॥ उसका दर्शन परम सुखदायक है, यह अयोनि एवं स्वयम्भू है। वह अकालस्वरूप (अनन्त) है, उसका कभी क्षय नहीं होता। अविनाशी, अविगत, अगोचर आदि के सब विशेषण उसे ही शोभते हैं ॥ ७ ॥ श्रीरंग (लक्ष्मी के संग आनन्द करनेवाले विष्णु) उसी के हुक्म से वैकुण्ठ में निवास करते हैं। मच्छ, कच्छ आदि के रूप में भी उसने (विष्णु ने) हुक्मानुसार ही अवतार लिया है। केशव (सुन्दर केशों वाला— कृष्ण) उसी के हुक्म में लीलावतारी है— वही होता है, जो उसे जंचता है ॥ ८ ॥ वह परमात्मा भूख-प्यास, वैर-विरोध से इतर है। अपनी ही लीलाओं के कारण वह चतुर्भुज कहलाया है। साँवला, सुन्दर

रूप, जिसकी वंशी के संगीत से सब मोहित होते थे, प्रभु के आदेश से ही बना था ॥ ९ ॥ वैजयन्ती माला धारण करनेवाले एवं कमल-जैसे नयनों वाले सुन्दर श्रीकृष्ण, कुण्डल-मुकुट-वेणु धारण करनेवाले कृष्ण अथवा शंख-चक्र-गदाधारी विष्णु-रूप या अर्जुन के महासारथी के रूप में परमात्मा स्वयं ही है ॥ १० ॥ पीताम्बर, तीनों लोकों का स्वामी, जगन्नाथ, गोपाल आदि नामों का उच्चारण करता हूँ; (इसी प्रकार) सारंगधर (विष्णु), भगवान बिट्ठल आदि उसी के असंख्य नाम हैं, गिने नहीं जा सकते ॥ ११ ॥ उसे निष्कंटक, कैवल्य कहा जाता है, वह इन्द्रियजित् है, वही जल, थल और सर्वत्र व्याप्त है। वही मृत्युलोक और पाताललोक के निकटतर है और वही स्थिर तथा अटल है ॥ १२ ॥ वह परमात्मा पतित-पावन तथा दुःखों और भय का नाशक है; वह अहंकार दूर करनेवाला तथा जन्म-मरण का चुकता करनेवाला है। भक्ति से तुष्ट होनेवाला वह कृपालु अन्य किसी गुण पर नहीं रीझता ॥ १३ ॥ वह निरंकार परमात्मा निश्चल और स्थिर है, ज्योतिस्वरूप है और समूचे संसार में उसकी महक बसी हुई है। उससे वही मिल पाता है, जिसे वह स्वयं मिला लेता है— अपने-आप कोई उसे नहीं पा सकता ॥ १४ ॥ वही गोपी-रूप है, वही कन्हैया-रूप होकर वनों में गौ चराता रहा है। वही अपने-आप उत्पन्न करता है, वही नाश भी करता है; उसे किंचित् भी मोह नहीं ॥ १५ ॥ मेरे पास एक ही जिह्वा है, उसके असंख्य गुण मैं उससे क्योंकर बयान कर सकता हूँ; सहस्र जिह्वाओं वाला शेषनाग भी उसके सर्वगुणों का सम्यक् बखान नहीं कर पाता। वह (शेषनाग) नये से नये नाम नित्य जपता है, किन्तु वह प्रभु का एक भी गुण सही तौर से नहीं कह सकता ॥ १६ ॥ हे जगत्-पिता, मैं तुम्हारी शरण में हूँ, मैंने तुम्हारा ही सहारा लिया है— यमदूतों का भय भयानक है; माया का जाल दुस्तर है। कृपा करके स्वेच्छापूर्वक मुझे प्रश्रय दो और साधु-संगति में रहने दो ॥ १७ ॥ जो कुछ भी दृश्य है, सब मिथ्या है। अतः मैं तो गोविन्द के भक्तों की चरण-धूल का दान माँगता हूँ, ताकि उसे मस्तक पर लगाकर परमपद को प्राप्त कर सकूँ— जिसके भाग्य में यह धूल लिखी है, वही पाएगा ॥ १८ ॥ हे सुखदाता परमात्मा, जिस पर तुम्हारी कृपा हुई, उसी ने सन्तों के चरणों को हृदय में धारण कर लिया। उन्होंने हरि-नाम-राशि को पा लिया और हृदय में अनाहत नाद का श्रवण करने लगे ॥ १९ ॥ मैं तुम्हारे निमित्त-कर्मों पर पड़े असंख्य नामों को जपता रहा, किन्तु 'सत्यनाम' तुम्हारा सर्वोच्च और मूल नाम है। गुरु नानक कहते हैं कि भक्तजन तुम्हारी शरण में हैं, उनके मन में केवल तुम्हारी लगन है, उन्हें दर्शन दो ॥ २० ॥ तुम्हारी गति और कौतुक तुम्हीं जानते हो, तुम्हीं कहते हो और तुम्हीं व्याख्याता हो। गुरु नानक तुम्हारे

दासों का दास है, तुम्हारी इच्छा हो तो उसे अपने दासों की संगति प्रदान करो ॥ २१ ॥ २ ॥ ११ ॥

॥ मारू महला ५ ॥ अलह अगम खुदाई बंदे । छोडि खिआल दुनीआ के धंधे । होइ पैखाक फकीर मुसाफरु इहु दरवेसु कबूलु दरा ॥ १ ॥ सचु निवाज यकीन मुसला । मनसा मारि निवारिहु आसा । देह मसीति मनु मउलाणा कलम खुदाई पाकु खरा ॥ २ ॥ सरा सरीअति ले कंमावहु । तरीकति तरक खोजि टोलावहु । मारफति मनु मारहु अबदाला मिलहु हकीकति जितु फिरि न मरा ॥ ३ ॥ कुराणु कतेब दिल माहि कमाही । दस अउरात रखहु बदराही । पंच मरद सिदकि ले बाधहु खैरि सबूरी कबूल परा ॥ ४ ॥ मका मिहर रोजा पैखाका । भिसतु पीर लफज कमाइ अंदाजा । हूर नूर मुसकु खुदाइआ बंदगी अलह आला हुजरा ॥ ५ ॥ सचु कमावै सोई काजी । जो दिलु सोधै सोई हाजी । सो मुला मलऊन निवारै सो दरवेसु जिसु सिफति धरा ॥ ६ ॥ सभे वखत सभे करि वेला । खालकु यादि दिलै महि मउला । तसबी यादि करहु दस मरदनु सुंनति सीलु बंधानि बरा ॥ ७ ॥ दिल महि जानहु सभ फिलहाला । खिलखाना बिरादर हमू जंजाला । मीर मलक उमरे फानाइआ एक मुकाम खुदाइ दरा ॥ ८ ॥ अवलि सिफति दूजी साबूरी । तीजै हलेमी चउथै खैरी । पंजवै पंजे इकतु मुकामै एहि पंजि वखत तेरे अपरपरा ॥ ९ ॥ सगली जानि करहु मउदीफा । बद अमल छोडि करहु हथि कूजा । खुदाइ एकु बुझि देवहु बांगां बुरगू बरखुरदार खरा ॥ १० ॥ हकु हलालु बखोरहु खाणा । दिल दरीआउ धोवहु मैलाणा । पीरु पछाणै भिसती सोई अजराईलु न दोजठरा ॥ ११ ॥ काइआ किरदार अउरत यकीना । रंग तमासे माणि हकीना । नापाक पाकु करि हदूरि हदीसा साबत सूरति दसतार सिरा ॥ १२ ॥ मुसलमाणु मोम दिलि होवै । अंतर की मलु दिल ते धोवै । दुनीआ रंग न आवै नेड़ै जिउ कुसम पाटु घिउ पाकु हरा ॥ १३ ॥ जा कउ मिहर मिहर मिहरवाना । सोई मरदु मरदु मरदाना । सोई सेखु मसाइकु

हाजी सो बंदा जिसु नजरि नरा ॥ १४ ॥ कुदरति कादर करण करीमा । सिफति मुहबति अथाह रहीमा । हकु हुकमु सचु खुदाइआ बुझि नानक बंदि खलास तरा ॥१५॥३॥१२॥

(इस पद में गुरुजी ने मुस्लिम-धर्म के वास्तविक रहन-सहन का संकेत किया है।) हे अगम ख़ुदा के पवित्र बन्दे, इस संसार के धन्धों का त्याग कर दो। जो जीव अकिंचन होकर प्रभु के चरणों की धूल बन जाता है, वही फ़क़ीर ख़ुदा के द्वार पर स्वीकार होता है ॥ १ ॥ तुम परमात्मा में विश्वास की साथरी पर बैठकर सत्य की नमाज़ पढ़ो। मन को संयत करना ही असा (फ़क़ीरों का डण्डा) है। शरीर मस्जिद है, मन मुल्ला है और इसका पावन रूप ही वास्तविक ख़ुदाई कलिमा है ॥ २ ॥ (सूफ़ी फ़क़ीरों के रहन-सहन में चार स्थितियाँ शरीअत, तरीकत, मारफ़त और हक़ीक़त होती हैं, उसी ओर संकेत है।) नाम की कमाई करना ही 'शरीअत' है। वैराग्य द्वारा मन को शुद्ध करके परमात्मा की खोज करना ही 'तरीकत' है। हे (अब्दाल) फ़क़ीर, मन को संयत करना ही 'मारफ़त' है और परमात्मा से मिलन ही 'हक़ीक़त' है, ताकि पुनः जन्म-मरण समाप्त हो सके ॥ ३ ॥ क़ुर्आन तथा अन्य धर्मग्रन्थों का सार-तत्त्व मन में ही अर्जित करो। अपनी दसों स्त्रियों (इन्द्रियों—ज्ञानेन्द्रियों तथा कर्मेन्द्रियों) को बुरे मार्ग पर जाने से रोको। पाँचों पुरुषों (कामादि पाँच प्रवृत्तियों) को विश्वास द्वारा बाँधो, क्योंकि सन्तोषी जीव ही ख़ुदा की दरगाह में क़बूल होता है ॥ ४ ॥ ख़ुदा की कृपा ही मक्का है और प्रभु की चरण-धूल ही रोज़ा है। गुरु के आदेशों का पूर्ण पालन ही बिहिश्त है। परमात्मा की याद ही बिहिश्त की हूरें और नूर है और फ़क़ीर का कोठा ही ख़ुदा की बन्दगी के लिए उत्तम है ॥ ५ ॥ सत्य की कमाई करनेवाला ही क़ाज़ी है और मन को पवित्र कर लेनेवाला ही हाजी है। अपावनता को दूर करनेवाला मुल्ला है और जिसे केवल परमात्मा के यशोगान का ही आश्रय है, वही दरवेश है ॥ ६ ॥ (मुसलमान विशेष पाँच वक़्त नमाज़ पढ़ते हैं, गुरुजी कहते हैं कि) सब समय, हर वक़्त प्रभु की याद की सुगन्ध अपने दिल में बसाए रहो। दसों इन्द्रियों के दमन की तस्बीह (माला) लेकर परमात्मा को याद करो। शील तथा संयम ही श्रेष्ठ सुन्नत है, इसे अपनाओ ॥ ७ ॥ अब भली-भाँति मन में जान लो कि ऐ भाई, यह परिवार, भाई-बन्धु सब सांसारिक बन्धन ही हैं। मीर, मलिक, सम्पन्न लोग सब नाशवान् हैं, केवल ख़ुदा का द्वार ही स्थायी है ॥ ८ ॥ (पाँच नमाज़ें इस प्रकार हैं—) प्रथम प्रभु का गुणगान तथा दूसरी सन्तोष, तीसरी विनम्रता, चौथी दान करना और पाँचवीं पाँचों इन्द्रियों को संयत कर एकाग्र करना —ये ही तुम्हारी सर्वोत्तम पाँच वक़्तों

की नमाज़ें हैं ।। ९ ।। सबमें परमात्मा का ही रूप देखना वज़ीफ़ा (एक निरन्तर पाठ, जो मुसलमान करते हैं) है । बुरे कर्मों को त्याग देना ही हाथ का कूज़ा है । एक ख़ुदा को मानकर सही आज्ञाकारी बने रहना ही तूती बजाना (नाद करना) है ।। १० ।। हक़-अधिकार की कमाई का भोजन खाओ, दिल को उदार बनाओ और मन का मैल धो डालो । जो गुरु को पहचान लेता है, वही बिहिश्त का अधिकारी होता है । इज़्राईल (यमराज) उसे दोज़ख़ (नरक) में नहीं डालता ।। ११ ।। उत्तम कर्मों का शरीर धारण करो, प्रभु में विश्वास की स्त्री ब्याहो और प्रभु की लीला को ही रंग-तमाशा समझो । अपवित्र मन को पावन करना ही परमात्मा के समीप पहुँचा सकनेवाली सन्तों की शिक्षा है और सबको परमेश्वर-रूप जानकर उनके साथ सह-अस्तित्व ही पगड़ी धारण करना है —इन्हें अपनाओ ।। १२ ।। मुसलमान नर्म-दिल हो, अन्तर्मन का मैल धो डाले और दुनिया के रंग-तमाशों से दूर रहते हुए वह फूल, रेशम, घी तथा मृग-चर्म की तरह पवित्र बने ।। १३ ।। कृपा करनेवाले कृपालु भगवन् ने जिस पर कृपा की है, वही मर्दों में वीर मर्द हैं । जिस पर नियंता परमेश्वर की कृपा-दृष्टि होती है, वही त्यागी, तपस्वी और मक्के का हाजी है ।। १४ ।। हे क़ुद्रत बनानेवाले, कृपालु और दयालु, मुझे अपना गुण गा सकने का सामर्थ्य और प्यार दो । हे ख़ुदा, तुम सत्य-रूप हो और तुम्हारा आदेश ही सत्य है; गुरु नानक कहते हैं कि इस तथ्य को जान लेनेवाला बन्दा (जीव) ही बन्धन-मुक्त होकर मुक्ति प्राप्त करता है ।। १५ ।। ३ ।। १२ ।।

।। मारू महला ५ ।। पारब्रहम सभ ऊच बिराजे । आपे थापि उथापे साजे । प्रभ की सरणि गहत सुखु पाईऐ किछु भउ न विआपै बाल का ।।१।। गरभ अगनि महि जिनहि उबारिआ । रकत किरम महि नही संघारिआ । अपना सिमरनु दे प्रतिपालिआ ओहु सगल घटा का मालका ।। २ ।। चरण कमल सरणाई आइआ । साध संगि है हरि जसु गाइआ । जनम मरण सभि दूख निवारे जपि हरि हरि भउ नही काल का ।। ३ ।। समरथ अकथ अगोचर देवा । जीअ जंत सभि ता की सेवा । अंडज जेरज सेतज उतभुज बहु परकारी पालका ।। ४ ।। तिसहि परापति होइ निधाना । राम नाम रसु अंतरि माना । कर गहि लीने अंध कूप ते विरले केई सालका ।। ५ ।। आदि अंति मधि प्रभु सोई । आपे करता करे सु होई । भ्रमु भउ मिटिआ साध संग ते दालिद न कोई घालका ।। ६ ।। ऊतम बाणी गाउ

गोपाला। साध संगति की मंगहु रवाला। बासन मेटि निबासन होईऐ कलमल सगले जालका ।। ७ ।। संता की इह रीति निराली। पारब्रहमु करि देखहि नाली। सासि सासि आराधनि हरि हरि किउ सिमरत कीजै आलका ।। ८ ।। जह देखा तह अंतरजामी। निमख न विसरहु प्रभ मेरे सुआमी। सिमरि सिमरि जीवहि तेरे दासा बनि जलि पूरन थालका ।।९।। तती वाउ न ता कउ लागै। सिमरत नामु अनदिनु जागै। अनद बिनोद करे हरि सिमरनु तिसु माइआ संगि न तालका ।। १० ।। रोग सोग दूख तिसु नाही। साध संगि हरि कीरतनु गाही। आपणा नामु देहि प्रभ प्रीतम सुणि बेनंती खालका ।। ११ ।। नाम रतनु तेरा है पिआरे। रंगि रते तेरै दास अपारे। तेरै रंगि रते तुधु जेहे विरले केई भालका ।।१२।। तिन की धूड़ि मांगै मनु मेरा। जिन विसरहि नाही काहू बेरा। तिन कै संगि परमपदु पाई सदा संगी हरि नालका ।। १३ ।। साजनु मीतु पिआरा सोई। एकु द्रिड़ाए दुरमति खोई। कामु क्रोधु अहंकारु तजाए तिसु जन कउ उपदेसु निरमालका ।। १४ ।। तुधु विणु नाही कोई मेरा। गुरि पकड़ाए प्रभ के पैरा। हउ बलिहारी सतिगुर पूरे जिनि खंडिआ भरमु अनालका ।। १५ ।। सासि सासि प्रभु बिसरै नाही। आठ पहर हरि हरि कउ धिआई। नानक संत तेरै रंगि राते तू समरथु वडालका ।। १६ ।। ४ ।। १३ ।।

हे भाई, परब्रह्म सबसे ऊँचा है; वही बनाता है, बिगाड़ता है और वही सबको पुनः स्थापित करता है। अतः (ऐसे उच्चतम) प्रभु की शरण लेने से परमसुख की प्राप्ति होती है और माया का कोई भय नहीं रह जाता ।। १ ।। परमात्मा ने ही हमें गर्भ-अग्नि में बचाया है (उबारा है)। माता के रक्त का अणु मात्र होने की दशा में भी नष्ट नहीं होने दिया। अपने स्मरण की शक्ति द्वारा वह सबका प्रतिपालन करता है एवं वही सब घटों का स्वामी है ।। २ ।। मैंने उसी परब्रह्म के चरणों की शरण ली है, सन्तों की संगति में बैठकर परमात्मा का यशोगान किया है। वह जन्म-मरण के दुःखों को दूर करता है, इसलिए ऐ जीव, हरि-प्रभु का नाम जपो, तुम्हें काल का भय नहीं रहेगा ।। ३ ।। वह परमात्मा समर्थ, अगोचर, अकथनीय दैव है, जगत के सब जीव-जन्तु उसी की

सेवा में रमते हैं। वह अंडज, जेरज, उतभुज और स्वेदज, सब प्रकार की जीव-सृष्टि का पालन करता है ॥ ४ ॥ वह सुख-मन्दिर परमात्मा उसी को प्राप्त होता है, जो नित्य मन में हरिनाम-रस का आस्वादन करता है। वह माया के अन्धकूप से हमारा हाथ थामकर हमें उबारता है, वह अपूर्व मार्ग-दर्शक है ॥ ५ ॥ आरम्भ, मध्य और अन्त, समूचे विस्तार में वही प्रभु व्याप्त है। जो वह कर्ता करता है, वह हो जाता है। सन्तों की संगति में सब भ्रम-भय मिट गए हैं और अब पतन-पथ में लगानेवाली कोई निम्न प्रवृत्ति नहीं रही ॥ ६ ॥ धरती के पालक उस परमात्मा का कीर्ति-गान करो, उससे सत्संगति की चरण-धूल की याचना करो— इससे वासना को मिटाकर निःवासना हुआ जाता है और कलियुगी मलिनताएँ सब जल जाती हैं ॥ ७ ॥ सन्तों की यह निराली रीति है कि वे परब्रह्म को साथ ही करके देखते हैं। अतः श्वास-श्वास उस हरि का नाम जपने में कोई आलस्य नहीं करो ॥ ८ ॥ मैं जिधर देखता हूँ, उसी अन्तर्यामी को पाता हूँ, निमिष मात्र के लिए भी वह स्वामी मुझे विस्मृत नहीं होता। वह जंगल, जल, थल, सब जगह व्याप्त है, उसी के स्मरण से यह दास जीवित है ॥ ९ ॥ उस जीव को किसी प्रकार का ताप नहीं लगता, जो सदा प्रभु का नाम जपता और चिर-जाग्रत् रहता है। हरि-स्मरण करनेवाला जीव आनन्द-विनोद में मग्न रहता है, उसे माया से कोई कष्ट नहीं पहुँचता ॥ १० ॥ उसे कोई रोग-शोक-दुःख नहीं होता, जो सत्संगति में प्रभु की कीर्ति गाता है। हे प्रभु, मेरी विनती सुनो और अपना नाम-दान प्रदान करो ॥ ११ ॥ हे प्यारे परमात्मा, तुम्हारा नाम अमूल्य रत्न के समान है, तुम्हारे दास उसी के प्रेम में रत रहते हैं। तुम्हारे प्रेम में पड़नेवाले जीव, तुम्हारे ही समान हो जाते हैं— ऐसे कोई विरले ही जीव मिलते हैं ॥ १२ ॥ जिन्हें तुम कभी विस्मृत नहीं होते, मेरा मन उनकी चरण-धूल माँगता है। परमात्मा सदा जिनके संग-साथ रहता है, उनकी संगति में परम-पद की प्राप्ति होती है ॥ १३ ॥ वही परब्रह्म मेरा सज्जन और प्यारा मित्र है, उसमें दृढ़ विश्वास बनाने से दुर्मति का नाश होता है। जिसे उसका निर्मल उपदेश लब्ध होता है, उसका काम, क्रोध, अहंकारादि सब मिट जाते हैं ॥ १४ ॥ तुम्हारे सिवा (प्रभु के अतिरिक्त) मेरा कोई नहीं, मेरे गुरु ने तुम्हारे चरण पकड़ने का आदेश दिया है। मैं अपने सतिगुरु पर बलिहार जाता हूँ जिसने मेरा व्यर्थ का भ्रम दूर कर दिया ॥ १५ ॥ साँस-साँस प्रभु का स्मरण करो (उसे विस्मृत न करो), आठों प्रहर परमात्मा का ध्यान करो। गुरु नानक कहते हैं कि साधु-सन्त सब तुम्हारे ही प्रेम में रँगे हैं, तुम समर्थ और सबसे बड़े हो ॥ १६ ॥ ४ ॥ १३ ॥

मारू महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। चरन कमल हिरदै नित धारी । गुरु पूरा खिनु खिनु नमसकारी । तनु मनु अरपि धरी सभु आगै जग महि नामु सुहावणा ।। १ ।। सो ठाकुरु किउ मनहु विसारे । जीउ पिंडु दे साजि सवारे । सासि गरासि समाले करता कीता अपणा पावणा ।। २ ।। जा ते बिरथा कोऊ नाही । आठ पहर हरि रखु मन माही । साध संगि भजु अचुत सुआमी दरगह सोभा पावणा ।। ३ ।। चारि पदारथ असटदसा सिधि । नामु निधानु सहज सुखु नउनिधि । सरब कलिआण जे मन महि चाहहि मिलि साधू सुआमी रावणा ।। ४ ।। सासत सिम्रिति बेद वखाणी । जनमु पदारथु जीतु पराणी । कामु क्रोधु निंदा परहरीऐ हरि रसना नानक गावणा ।।५।। जिसु रूपु न रेखिआ कुलु नही जाती । पूरन पूरि रहिआ दिनु राती । जो जो जपै सोई वडभागी बहुड़ि न जोनी पावणा ।। ६ ।। जिसनो बिसरै पुरखु बिधाता । जलता फिरै रहै नित ताता । अकिरतघणै कउ रखै न कोई नरक घोर महि पावणा ।। ७ ।। जीउ प्राण तनु धनु जिनि साजिआ । मात गरभ महि राखि निवाजिआ । तिस सिउ प्रीति छाडि अन राता काहू सिरै न लावणा ।। ८ ।। धारि अनुग्रहु सुआमी मेरे । घटि घटि वसहि सभन कै नेरे । हाथि हमारै कछूऐ नाही जिसु जणाइहि तिसै जणावणा ।। ९ ।। जाकै मसतकि धुरि लिखि पाइआ । तिसही पुरख न विआपै माइआ । नानक दास सदा सरणाई दूसर लवै न लावणा ।।१०।। आगिआ दूख सूख सभि कीने । अंम्रित नामु बिरलै ही चीने । ता की कीमति कहणु न जाई जत कत ओही समावणा ।। ११ ।। सोई भगतु सोई वड दाता । सोई पूरन पुरखु बिधाता । बाल सहाई सोई तेरा जो तेरै मनि भावणा ।। १२ ।। मिरतु दूख सूख लिखि पाए । तिलु नही बधहि घटहि न घटाए । सोई होइ जि करते भावै कहि कै आपु वञावणा ।। १३ ।। अंध कूप ते सेई काढे । जनम जनम के टूटे गांढे । किरपा धारि रखे करि अपुने मिलि साधू गोबिंदु धिआवणा ।। १४ ।। तेरी

कीमति कहणु न जाई । अचरज रूपु वडी वडिआई । भगति दानु मंगै जनु तेरा नानक बलि बलि जावणा ॥ १५ ॥ १ ॥ १४ ॥ २२ ॥ २४ ॥ २ ॥ १४ ॥ ६२ ॥

(पद में गुरुजी ने परमात्मा के उपकारों की चर्चा करते हुए प्रेरणा दी है कि नित्य उस प्रभु का स्मरण करो।) नित्य उसके चरण-कमल को हृदय में धारण करो, पूर्णगुरु को प्रतिक्षण नमन करते रहो; सब तन-मन उसी के सम्मुख समर्पित करो, इसी से संसार में तुम्हारा नाम सुहाना होगा ॥ १ ॥ उस परमात्मा को मन से क्यों विस्मृत करते हो, जिसने तुम्हें शरीर देकर तुम्हारा रूप सँवारा है— श्वास-श्वास तुम्हारी रक्षा करता है और वही तुम्हारे कर्मों का फल देता है ॥ २ ॥ उससे कोई ख़ाली नहीं रहता अर्थात् उसकी शरण लेनेवाला कोई ख़ाली नहीं रहता। इसलिए हे जीव, आठों प्रहर परमात्मा को मन में सँजोए रहो। सन्तों की संगति में रहकर अच्युत (अनश्वर) स्वामी का भजन करो, इससे परमात्मा की दरगाह में तुम्हें शोभा प्राप्त होगी ॥ ३ ॥ चारों पदार्थ (काम, अर्थ, धर्म, मोक्ष) तथा अठारह सिद्धियाँ उसी की देन हैं। उसका नाम सुखप्रद है और सहज ही उससे नौ निधियाँ (विश्व की समूची सम्पन्नता) प्राप्त होती हैं। सन्तों की संगति में रहकर परमात्मा का स्मरण करो और मन में उसका ध्यान करो —इसमें पूर्ण कल्याण निहित है ॥ ४ ॥ शास्त्र, स्मृतियाँ और वेद भी यही कहते हैं कि हे प्राणी, अपने मनुष्य-जन्म को सफल कर लो। गुरु नानक कहते हैं कि काम, क्रोध, निन्दा आदि का त्याग कर जिह्वा द्वारा नित्य परमात्मा का भजन करो ॥ ५ ॥ उस प्रभु की कोई रूप-रेखा नहीं है, कोई कुल या जाति नहीं; वह सदैव पूर्ण है और रात-दिन सर्वव्याप्त है। जो भी मनुष्य भाग्यवश उसका नाम जपता है, वह पुनः योनि-चक्र में नहीं आता ॥ ६ ॥ जिसे वह कर्तापुरुष भूलता है, वह नित्य ताप वहन करता और यातनाएँ सहता है। वह कृतघ्न है, उसे कोई प्रश्रय नहीं देता, वह घोर नरक में पड़ता है ॥ ७ ॥ जिसने तुम्हारा जीव, प्राण, शरीर, सब बनाया है; माता के गर्भ में तुम्हारी रक्षा करके तुम पर अनुग्रह किया; उसी से प्रीति त्यागकर तुम अन्यों के प्रेम में रत होते हो— याद रखो, अन्य कोई तुम्हें गति नहीं दे सकेगा ॥ ८ ॥ मेरे स्वामी परमात्मा ने कृपा की है, वह घट-घट में सबके समीप बसता है। हमारे हाथ कुछ नहीं, जिसे वह प्रकाश देता है, वही उसे जान पाता है ॥ ९ ॥ जिसकी भाग्य-रेखाएँ मूलतः ही उत्तम हैं, उसी पुरुष को माया का भय नहीं होता। गुरु नानकदास उसी की शरण लेते हैं, उसके समान और किसी को नहीं समझते (अर्थात् किसी को निकट नहीं आने देते) ॥ १० ॥ उसी

परमात्मा के आदेश से सब सुख-दुःख बने हैं, उसके अमृत-समान नाम को कुछ विरले जन ही समझते हैं। उसका वास्तविक मोल अकथनीय है, वह सब जगह व्याप्त है ॥ ११ ॥ वह स्वयं भक्त है और सबसे बड़ा दाता भी है। वह पूर्ण कर्ता पुरुष है (सबका निर्माता है)। वही बाल्यावस्था से तुम्हारा सहायक है, वही तुम्हारे मन में समा जाता है ॥ १२ ॥ दुःख, सुख और मृत्यु, सब पहले से ही उल्लिखित हैं। उनमें तिल भर भी वृद्धि नहीं होती, न ही घटाने से वे घटते हैं। जो भी होता है, रचयिता की सहमति से होता है, इसके विपरीत कहना-सोचना अपने को ख्वार करने के समान है ॥ १३ ॥ वह परमात्मा ही माया के अन्धे कुएँ से निकालता है, वही जन्म-जन्म के बन्धन तोड़ता है। वही कृपापूर्वक सबकी रक्षा करता है, (इसलिए) सन्तों की संगति में रहकर सदा उस गोविन्द का ध्यान करो ॥ १४ ॥ तुम्हारी विशिष्टता अकथनीय है, तुम्हारी बड़ाई, तुम्हारे बनाए अचरजों में है। गुरु नानक कहते हैं कि वे नित्य उस पर बलिहार हैं और उसकी दासता में केवल भक्ति का दान माँगते हैं ॥ १५ ॥ १ ॥ १४ ॥ २२ ॥ २४ ॥ २ ॥ १४ ॥ ६२ ॥

मारू वार महला ३ १ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ विणु गाहक गुणु वेचीऐ तउ गुणु सहघो जाइ। गुण का गाहकु जे मिलै तउ गुणु लाख विकाइ। गुण ते गुण मिलि पाईऐ जे सतिगुर माहि समाइ। मुोलि अमुोलु न पाईऐ वणजि न लीजै हाटि। नानक पूरा तोलु है कबहु न होवै घाटि ॥ १ ॥ म० ४ ॥ नाम विहूणे भरमसहि आवहि जावहि नीत। इकि बांधे इकि ढीलिआ इकि सुखीए हरि प्रीति। नानक सचा मंनि लै सचु करणी सचु रीति ॥२॥ पउड़ी ॥ गुर ते गिआनु पाइआ अति खड़गु करारा। दूजा भ्रमु गड़ु कटिआ मोहु लोभु अहंकारा। हरि का नामु मनि वसिआ गुर सबदि वीचारा। सच संजमि मति ऊतमा हरि लगा पिआरा। सभु सचो सचु वरतदा सचु सिरजणहारा ॥ १ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ गुणों का सही ग्राहक न मिलने पर गुण का ठीक मोल नहीं पड़ता (बिना जरूरतमन्द ग्राहक के गुण सस्ता बिक जाता है), किन्तु यदि सही ग्राहक मिल जाय तो वही गुण लाखों में बिकता है। गुणवान से ही गुण उपलब्ध होता है, और वह गुणवान सतिगुरु है, जिसमें

सब गुण सँजोए रहते हैं। वे गुण अमूल्य हैं, (धन के रूप में) मोल देकर वे खरीदे नहीं जा सकते, न ही वे किसी दुकान पर मिलते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि गुणों का तौल सदैव पूरा होता है, उसमें कभी कोई कमी नहीं होती ॥ १ ॥ म० ४ ॥ हरि-नाम के गुण से रहित जन इधर-उधर भटकते फिरते हैं, नित्य आवागमन-चक्र में रहते हैं। कुछ जीव अब भी बन्धनों में बँधे हैं, कुछ के बन्धन कुछ ढीले हुए हैं और अन्य (जिन्होंने गुण पा लिये हैं) हरि-प्रीति में परम सुख को लाभ कर चुके हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे जीव, (तुम भी) परमसत्य का मनन करो और अपनी व्यावहारिक मर्यादा तथा कर्मों में सत्यता को अपनाओ ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ गुरु से प्राप्त ज्ञान बड़ा सबल खड्ग (शक्ति) है, इससे भ्रम का गढ़ तोड़कर मोह-लोभ-अहंकार आदि को मारा जाता है (मारा जा सकता है)। गुरु के उपदेशों के मनन से परमात्मा का नाम हृदय में बसता है। मन में सत् और संयम उपजता और बुद्धि निर्मल होती है, परमात्मा से प्रीति बनती है। सबका सर्जक सत्यस्वरूप है, वही सत्य सब जगह व्याप्त है ॥ १ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ केदारा रागा विचि जाणीऐ भाई सबदे करे पिआरु। सत संगति सिउ मिलदो रहै सचे धरे पिआरु। विचहु मलु कटे आपणी कुला का करे उधारु। गुणा की रासि संग्रहै अवगण कढै विडारि। नानक मिलिआ सो जाणीऐ गुरू न छोडै आपणा दूजै न धरे पिआरु ॥ १ ॥ ॥ म० ४ ॥ सागरु देखउ डरि मरउ भै तेरै डरु नाहि। गुर कै सबदि संतोखीआ नानक बिगसा नाइ ॥ २ ॥ म० ४ ॥ चड़ि बोहिथै चालसउ सागरु लहरी देइ। ठाक न सचै बोहिथै जे गुरु धीरक देइ। तितु दरि जाइ उतारीआ गुरु दिसै सावधानु। नानक नदरी पाईऐ दरगह चलै मानु ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ निहकंटक राजु भुंचि तू गुरमुखि सचु कमाई। सचै तखति बैठा निआउ करि सत संगति मेलि मिलाई। सचा उपदेसु हरि जापणा हरि सिउ बणि आई। ऐथै सुख दाता मनि वसै अंति होइ सखाई। हरि सिउ प्रीति ऊपजी गुरि सोझी पाई ॥ २ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ केदारा राग (केदारा और मारू राग में नाम मात्र का ही अन्तर है, कई पुराने हस्तलिखित ग्रन्थों में यह वार केदारा राग के अन्तर्गत दी गई है) का गान तभी उपयुक्त माना जा सकता है, यदि परमात्मा के नाम में प्यार बन जाय। सत्संगति में रहकर सत्य-

स्वरूप प्रभु में प्रीति हो, तभी अपनी मलिनता दूर होती है और समूचे कुल का उद्धार संभव है। जीव (परमात्मा से प्यार करनेवाला) गुणों की राशि संग्रह करता एवं अवगुणों को मारकर निकाल देता है। गुरु नानक कहते हैं कि वही जीव प्रभु से मिला समझा जाना चाहिए, जो अपने गुरु की शरण में रहे (छोड़े नहीं) और किसी अन्य से प्रीति न करे (द्वैत-भाव में न पड़े) ॥ १ ॥ म० ४ ॥ सागर (संसार-सागर) देखकर मुझे अतीव डर महसूस होता है; किन्तु जब मैंने परमात्मा का भय स्वीकार किया, तो अन्य सब भय नष्ट हो गए। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के शब्द से परम सन्तोष प्राप्त होता और हरि-नाम से जीव विकसित (मुकुलित) होता है ॥ २ ॥ म० ४ ॥ जहाज़ में बैठकर चलते हैं तो सागर की टकराती लहरों से डर लगता है, किन्तु यदि गुरु के सच्चे जहाज़ में बैठें तो गुरु-सरीखा धीरज देनेवाला संग होता है (भय को वह दूर करता है)। गुरु उस जहाज का मल्लाह होता है, वह परमात्मा की निकटता रूपी मंज़िल पर सकुशल पहुँचा देता है और सदैव सावधान रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु-कृपा से ही जीव परमात्मा के द्वार पर पहुँचता और सम्मानित होता है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ गुरु के द्वारा सत्य की कमाई करते हुए तुम निष्कंटक भाव से राज्य-भोग करो, निश्चय के सिंहासन पर बैठकर दूसरों के संशय दूर करो और सत्संगति में अपनी बुद्धि को मिलाए रखो। हरि-जाप का उपदेश धारण करो और परमात्मा से नाता जोड़ो। (ऐसा करने से) यहाँ सुखदाता परमात्मा मन में बसा रहता है और अन्तकाल में भी सहायी होता है। (किन्तु) गुरु से ज्ञान प्राप्त करके ही परमात्मा में प्यार उपजता है ॥ २ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ भूली भूली मै फिरी पाधरु कहै न कोइ। पूछहु जाइ सिआणिआ दुखु काटै मेरा कोइ। सतिगुरु साचा मनि वसै साजनु उत ही ठाइ। नानक मनु त्रिपतासीऐ सिफती साचै नाइ ॥ १ ॥ म० ३ ॥ आपे करणी कार आपि आपे करे रजाइ। आपे किसही बखसि लए आपे कार कमाइ। नानक चानणु गुर मिले दुख बिखु जाली नाइ ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ माइआ वेखि न भुलु तू मनमुख मूरखा। चलदिआ नालि न चलई सभु झूठु दरबु लखा। अगिआनी अंधु न बूझई सिर ऊपरि जम खड़गु कलखा। गुरपरसादी उबरे जिन हरि रसु चखा। आपि कराए करे आपि आपे हरि रखा ॥ ३ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ मैं भूला, भटकता रहा, कोई रास्ता बतानेवाला

न मिला। अनेक बुद्धिमान लोगों से भी मैंने अपना दुःख काटनेवाले के सम्बन्ध में पूछा (किन्तु कुछ पता न चला)। (जब) सच्चे गुरु को मन में बसाया तो परमात्मा भी वहीं बसता दीख पड़ा। गुरु नानक कहते हैं कि उसके सच्चे नाम का कीर्ति-गान करने से ही मन तृप्त होता है ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ परमात्मा स्वयं कर्म है, करनेवाला भी वही है और स्वेच्छा से सब कुछ करता है। जब चाहे किसी पर अनुग्रह करता और जब चाहे कर्मानुसार फल देता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु-मिलन से आलोक प्राप्त होता और प्रभु का नाम माया रूपी विषैले दुःखों को जलाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ ऐ मूर्ख मनमुख जीव, मायावी सम्पन्नता को देखकर तुम भूलो नहीं (भटको नहीं), यह लाखों की राशियाँ मृत्यु-समय साथ नहीं चलतीं, अतः सब मिथ्या हैं। जीव अपने अज्ञानांधकार के कारण यह नहीं जानता कि सिर पर यमदूत भयानक खड्ग लिये खड़ा है। केवल गुरु की कृपा से हरि-रस का पान करनेवाला ही उबरता है। परमात्मा ऐसे जीव को स्वयं संरक्षण देता और स्वेच्छा से विचरता है ॥ ३ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ जिना गुरु नही भेटिआ भै की नाही बिद। आवणु जावणु दुखु घणा कदे न चूकै चिंद। कापड़ जिवै पछोड़ीऐ घड़ी मुहत घड़ीआलु। नानक सचे नाम बिनु सिरहु न चुकै जंजालु ॥ १ ॥ म० ३ ॥ त्रिभवण ढूढी सजणा हउमै बुरी जगति। ना झुरु हीअड़े सचु चउ नानक सचो सचु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ गुरमुखि आपे बखसिओनु हरि नामि समाणे। आपे भगती लाइओनु गुर सबदि नीसाणे। सनमुख सदा सोहणे सचै दरि जाणे। ऐथै ओथै मुकति है जिन राम पछाणे। धंनु धंनु से जन जिन हरि सेविआ तिन हउ कुरबाणे ॥ ४ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ जिन्हें गुरु से मिलाप प्राप्त नहीं, जिन्हें प्रभु का थोड़ा भी भय नहीं, उन्हें नित्य आवागमन का तीखा दुःख उठाना पड़ता है, उनकी चिन्ता कभी नहीं मिटती। जैसे कपड़े धोते हुए उन्हें पछाड़ा जाता है या घड़ियाली समय का संकेत देते हुए घण्टे पर चोट मारता है— गुरु नानक कहते हैं कि सच्चे हरि-नाम के बिना जीवों के सिर से भी दण्ड नहीं मिटता अर्थात् वे कपड़े या घड़ियाल की तरह पछाड़े, मारे जाते हैं ॥ १ ॥ म० ३ ॥ तीनों लोकों में मैंने ढूँढ़कर देख लिया है कि अहंकार-ममता आदि बहुत बुरे तत्त्व हैं, किन्तु मन में दुःखी होने की अपेक्षा सच्चे प्रभु का नामोच्चारण करो, गुरु नानक कहते हैं कि इससे

सब निश्चयपूर्वक सत्य ही प्रतीत होने लगेगा ।। २ ।। पउड़ी ।। परमात्मा गुरु की आज्ञा माननेवालों पर स्वयं कृपा करता है और वे हरि-नाम में समा जाते हैं। वह आप ही उन्हें भक्ति में लीन करता और उन पर अपने कृपा-पात्र होने का निशान कर देता है। वे प्रभु-उन्मुख होने के कारण चिर सुन्दर होते हैं और सत्यस्वरूप परमात्मा के द्वार को पहचानते हैं। जो जीव प्रभु को पहचान लेते हैं, उन्हें यहाँ और वहाँ, दोनों ओर मुक्ति प्राप्त होती है। गुरु नानक कहते हैं कि वे जन धन्य हैं, जिन्होंने प्रभु-भक्ति की है। वे उन लोगों पर क़ुर्बान जाते हैं ।। ४ ।।

।। सलोकु म० १ ।। महल कुचजी मड़वड़ी काली मनहु कसुध। जे गुण होवनि ता पिरु रवै नानक अवगुण मुंध ।। १ ।। ।। म० १ ।। साचु सील सचु संजमी सा पूरी परवारि। नानक अहिनिसि सदा भली पिर कै हेति पिआरि ।।२।। पउड़ी।। आपणा आपु पछाणिआ नामु निधानु पाइआ। किरपा करि कै आपणी गुर सबदि मिलाइआ। गुर की बाणी निरमली हरि रसु पीआइआ। हरि रसु जिनी चाखिआ अनरस ठाकि रहाइआ। हरि रसु पी सदा त्रिपति भए फिरि त्रिसना भुख गवाइआ ।। ५ ।।

।। सलोकु म० १ ।। शरीर (सुन्दर) का अभिमान करनेवाली स्त्री (जीव) मनमुखी होने के कारण मलिन और विमूढ़ होती है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसी अवगुणी स्त्री के साथ पति (परमात्मा) तभी रमण करता है, जब वे गुण-वृद्धि कर लेती हैं ।। १ ।। म० १ ।। गुरु नानक कहते हैं कि जिस स्त्री को अपने पति (परमात्मा) से अटूट प्यार होता है, वही दिन-रात आनन्द मनाती है, वही सत्याचरण वाली, शुभ-कर्मी एवं परिवार में समादृत होती है ।। २ ।। पउड़ी ।। हरि-नाम की निधि प्राप्त होने पर जीव आत्मज्ञान पा जाता है, (किन्तु यह तभी सम्भव है, जब) कृपापूर्वक सतिगुरु अपने उपदेशों से उसका पथ प्रशस्त करता है अर्थात् शब्द (अनाहत नाद) में मिला लेता है। गुरु की निर्मल वाणी से प्रभु-प्रेम का रस मिला, और जिसने उक्त रस का आस्वादन किया, वह अन्य (सांसारिक) रसों से विमुख हो गया। हरि-रस को पीकर उसे पूर्ण सन्तोष हुआ और उसकी तृष्णा रूपी भूख शमित हो गई ।। ५ ।।

।। सलोकु म० ३ ।। पिर खुसीए धन रावीए धन उरि नामु सीगारु। नानक धन आगै खड़ी सोभावंती नारि ।। १ ।। ।। म० १ ।। ससुरै पेईऐ कंत की कंतु अगंमु अथाहु। नानक धंनु

सोहागणी जो भावहि वेपरवाह ।। २ ।। पउड़ी ।। तखति राजा सो बहै जि तखतै लाइक होई । जिनी सचु पछाणिआ सचु राजे सेई । एहि भूपति राजे न आखीअहि दूजै भाइ दुखु होई । कीता किआ सालाहीऐ जिसु जादे बिलम न होई । निहचलु सचा एकु है गुरमुखि बूझै सु निहचलु होई ।। ६ ।।

।। सलोकु म० ३ ।। जो जीव-स्त्री हरि-नाम का शृंगार करती है, परमात्मा-पति उस पर प्रसन्न होकर उसके साथ रमण करता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसी ही स्त्री सब ओर शोभा प्राप्त करती है (अर्थात् जैसे पति का प्यार पानेवाली पत्नी शोभती है, वैसे ही परमात्मा का प्यार पा लेनेवाली जीवात्मा शोभायमान होती है ।। १ ।। म० १ ।। वह जीव-स्त्री ससुराल और पीहर, दोनों जगह अपने पति के नाम से सुशोभित होती है; उसका पति अगम, अगह परमात्मा है। गुरु नानक कहते हैं कि वही जीव-स्त्री सुहागिन है, जो उस बे-परवाह प्रभु-पति को अच्छी लगती है ।। २ ।। ।। पउड़ी ।। वही राजा तख्त पर बैठता है, जो तख्त के योग्य होता है। सत्य की अनुभूति पा लेनेवाला व्यक्ति ही सत्य के सिंहासन के योग्य होता है अर्थात् सत्य को पहचाननेवाला ही सत्य द्वारा सम्मानित होता है। उन धरती के स्वामियों को सच्चा राजा नहीं कहा जा सकता, जो एक परमात्मा को छोड़ द्वैत-भाव में विचरते और दुःख उठाते हैं। संसार में उत्पन्न हुए जीव की भी क्या सराहना करें, उसे तो जाने में भी विलम्ब नहीं लगता। सच्चा निश्चल तो परमात्मा है, जो गुरु के द्वारा उसे जान लेता है, वह भी निश्चल हो जाता है ।। ६ ।।

।। सलोकु म० ३ ।। सभना का पिरु एकु है पिर बिनु खाली नाहि । नानक से सोहागणी जि सतिगुर माहि समाहि ।। १ ।। म० ३ ।। मन के अधिक तरंग किउ दरि साहिब छुटीऐ । जे राचै सच रंगि गूड़ै रंगि अपार कै । नानक गुरपरसादी छुटीऐ जे चितु लगै सचि ।। २ ।। पउड़ी ।। हरि का नामु अमोलु है किउ कीमति कीजै । आपे स्रिसटि सभ साजीअनु आपे वरतीजै । गुरमुखि सदा सलाहीऐ सचु कीमति कीजै । गुरसबदी कमलु बिगासिआ इव हरि रसु पीजै । आवण जाणा ठाकिआ सुखि सहजि सवीजै ।। ७ ।।

।। सलोकु म० ३ ।। सब जीवों का एक ही स्वामी है, स्वामी-हीन जीव कोई नहीं। किन्तु गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु के

आदेशानुसार आचरण करने एवं उसी में लीन होनेवाली जीव-स्त्री ही सच्ची सुहागिन है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ मन की अनेक तरंगें हैं, किन्तु (उस पर भी) यदि कोई जीव-स्त्री अपार प्रभु के सच्चे प्रेम के रंग में रची हो, तो वह स्वामी के द्वार से तिरस्कृत नहीं होती अर्थात् मन की तरंगों से बचकर वह स्वामी के द्वार पर बनी रहती है। गुरु नानक कहते हैं कि मन की तरंगों (विषय-वासनाओं) से गुरु-कृपा से ही सत्य में मन रमाकर छूट सकते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि का नाम अमूल्य है, इसका मोल नहीं किया जा सकता। हरि ने स्वयं ही समूची सृष्टि रची है और अब उसी में व्याप्त है। गुरु के द्वारा, सत्य के मूल्य पर ही सदैव उसकी सराहना सम्भव है। गुरु के शब्दों से हृदय-कमल विकसित होता है और इस प्रकार प्रभु का नाम-रस-पान होता है। (परिणामतः) जीव का आवागमन चुक जाता है और वह सहजावस्था में आनन्द-मग्न होता है ॥ ७ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ ना मैला ना धुंधला ना भगवा ना कचु । नानक लालो लालु है सचै रता सचु ॥१॥ म०३॥ सहजि वणसपति फुलु फलु भवरु वसै भै खंडि । नानक तरवरु एकु है एको फुलु भिरंगु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो जन लूझहि मनै सिउ से सूरे परधाना । हरि सेती सदा मिलि रहे जिनी आपु पछाना । गिआनीआ का इहु महतु है मन माहि समाना । हरि जीउ का महलु पाइआ सचु लाइ धिआना । जिन गुरपरसादी मनु जीतिआ जगु तिनहि जिताना ॥ ८ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ हरि-नाम जपनेवाला जीव न मैला (तमस्-गुण), न धुँधला (रजस्) और न ही भगवा (सत्) होता है, वह इन तीनों के कारण मायावी कच्चापन धारण भी नहीं करता। वह तो, गुरु नानक कहते हैं, सत्य के रंग में पगकर प्रगाढ़ लाल हो जाता है अर्थात् वह प्रभु की लाली में समा जाता है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ सहजावस्था में वनस्पति, फूल-फल सब प्राप्य है, गुरुमुख भँवरा निर्भय होकर इसमें बसता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा तरुवर है, परमात्मा का नाम फूल है और गुरुमुख जीव भँवरा है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो लोग मन से लड़ते हैं, वे ही प्रमुख शूरवीर हैं। वे ही अपने-आप को पहचानकर सदैव प्रभु के संग जुड़े रहते हैं। ज्ञानी का महत्त्व यही है कि वह मन में परमात्मा का नाम धारण करता है और सत्य में ध्यान लगाकर परमात्मा का नैकट्य पा लेता है। जिन्होंने गुरु-कृपा से मन को जीत लिया है, वे समस्त संसार के विजेता हो जाते हैं ॥ ८ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ जोगी होवा जगि भवा घरि घरि भीखिआ लेउ । दरगह लेखा मंगीऐ किसु किसु उतरु देउ । भिखिआ नामु संतोखु मड़ी सदा सचु है नालि । भेखी हाथ न लधीआ सभ बधी जम कालि । नानक गला झूठीआ सचा नामु समालि ॥ १ ॥ म० ३ ॥ जितु दरि लेखा मंगीऐ सो दरु सेविहु न कोइ । ऐसा सतिगुरु लोड़ि लहु जिसु जेवडु अवरु न कोइ । तिसु सरणाई छूटीऐ लेखा मंगै न कोइ । सचु द्रिड़ाए सचु द्रिड़ु सचा ओहु सबदु देइ । हिरदै जिस दै सचु है तनु मनु भी सचा होइ । नानक सचै हुकमि मंनिऐ सची वडिआई देइ । सचे माहि समावसी जिस नो नदरि करेइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सूरे एहि न आखीअहि अहंकारि मरहि दुखु पावहि । अंधे आपु न पछाणनी दूजै पचि जावहि । अति करोध सिउ लूझदे अगै पिछै दुखु पावहि । हरि जीउ अहंकारु न भावई वेद कूकि सुणावहि । अहंकारि मुए से विगती गए मरि जनमहि फिरि आवहि ॥ ६ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ जो कोई योगी बनकर घर-घर में भिक्षाटन करता है, वह परमात्मा के दरबार में हिसाब माँगा जाने पर किस-किस का हिसाब चुकाएगा ! यदि कोई सन्तोष की मढ़ी पर हरि-नाम की भिक्षा प्राप्त कर ले, वह सदा सत्यमय होता है। दिखावे के वेश बनाने से परमात्मा लब्ध नहीं होता, सब यमदूतों के बन्धनों में बँधे रह जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं (इसलिए) सब अन्य बातें झूठी हैं, केवल हरिनाम-स्मरण ही सत्य का आश्रय है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ जिस द्वार पर समर्पित होने पर भी जीव को हिसाब-किताब देना पड़े (अपने पापों-पुण्यों का हिसाब बताना पड़े), वह द्वार सेवा के योग्य नहीं। हे जीव, तुम ऐसा सच्चा सतिगुरु ढूँढ़ो, जिसके बराबर और कोई महान नहीं। उसकी शरण में आने में मुक्ति-लाभ होती है, आगे यमराज के समीप कोई हिसाब-किताब माँगने का साहस भी नहीं करता। वह (गुरु) सत्यस्वरूप परमात्मा का नाम दृढ़ाता और सत्यनाद रूपी शब्द प्रदान करता है। जिसके हृदय में सत्य बसा है, उसका तन-मन भी सत्य द्वारा आलोकित हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि सत्यस्वरूप परमात्मा का हुक्म मानने में ही बड़प्पन है; जिस पर उसकी कृपा होती है, वह सत्य में ही लीन हो जाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ शूरवीर उन्हें नहीं कहा जाता, जो अहंकार के कारण दुःखी होकर मरते हैं। वे अज्ञानांध हैं, अपने को नहीं पहचानते, बल्कि द्वैतभाव में ही जलते रहते हैं। वे क्रोध में दग्ध रहते हैं, आगे-पीछे दुःख पाते हैं। परमात्मा को जीव का अहम्-भाव स्वीकार

नहीं —ऐसा वेदों में भी सस्वर गान हुआ है। अहंकार में मरनेवालों की गति नहीं होती, वे मरते-जन्मते, आवागमन में पड़े रहते हैं ॥ ९ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ कागउ होइ न ऊजला लोहे नाव न पारु। पिरम पदारथु मंनि लै धंनु सवारणहारु। हुकमु पछाणै ऊजला सिरि कासट लोहा पार। त्रिसना छोडै भै वसै नानक करणी सारु ॥ १ ॥ म० ३ ॥ मारू मारण जो गए मारि न सकहि गवार। नानक जे इहु मारीऐ गुर सबदी वीचारि। एहु मनु मारिआ ना मरै जे लोचै सभु कोइ। नानक मन ही कउ मनु मारसी जे सतिगुरु भेटै सोइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ दोवै तरफा उपाईओनु विचि सकति सिव वासा। सकती किनै न पाइओ फिरि जनमि बिनासा। गुरि सेविऐ साति पाईऐ जपि सास गिरासा। सिम्रिति सासत सोधि देखु ऊतम हरि दासा। नानक नाम बिना को थिरु नही नामे बलि जासा ॥ १० ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ कौए से श्वेत हंस नहीं बनता, न ही लोहे की नाव से नदी पार की जा सकती है। प्रिय प्रभु के नाम-पदार्थ में श्रद्धा लाने से ही (भाग्य) सँवरता है। हुक्म के रहस्य को समझ लेनेवाला जीव ही उजला होता है और इस प्रकार लकड़ी की नाव पर लोहा भी पार लग जाता है अर्थात् पापी भी नामाधार पर तिर जाते हैं। (हुक्म पहचाननेवाले जीव की) तृष्णा छूट जाती है और परमात्मा का भय मन में आने से, गुरु नानक कहते हैं, उसके कर्म श्रेष्ठ हो जाते हैं ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ मरुस्थलों या जंगलों-पर्वतों में जो मन मारने को गए, वे गँवार मन को संयत नहीं कर सके। गुरु नानक कहते हैं कि इसे (मन को) गुरु-शब्दों पर विचार द्वारा (विवेकपूर्ण भक्ति द्वारा) ही मारा जा सकता है, अन्यथा चाहते सब हैं, कोई इसे मार नहीं पाता ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ उक्त दोनों मार्गों के बीच (कौए और हंस अर्थात् गुरुमुख और मनमुख वाले मार्ग) माया के प्रसार में जीव बन्दी है। वह हरि-नाम की शक्ति संकलित नहीं कर पाता, अतः जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है। खाते-पीते, श्वास-श्वास गुरु की सेवा में रत होने और नाम जपने में ही शान्ति है। स्मृतियों-शास्त्रों की शोध द्वारा भी हम इसी परिणाम पर पहुँचे हैं कि परमात्मा की दासता ही श्रेष्ठ है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम के बिना किसी को निश्चलता प्राप्त नहीं होती, अतः वे परमात्मा के नाम पर क़ुर्बान हैं ॥ १० ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ होवा पंडितु जोतकी वेद पड़ा मुखि

चारि । नव खंड मधे पूजीआ अपणै चजि वीचारि । मतु सचा अखरु भुलि जाइ चउकै भिटै न कोइ । झूठे चउके नानका सचा एको सोइ ॥ १ ॥ म० ३ ॥ आपि उपाए करे आपि आपे नदरि करेइ । आपे दे वडिआईआ कहु नानक सचा सोइ ॥२॥ ॥पउड़ी॥ कंटकु कालु एकु है होरु कंटकु न सूझै । अफरिओ जग महि वरतदा पापी सिउ लूझै । गुर सबदी हरि भेदीऐ हरि जपि हरि बूझै । सो हरि सरणाई छुटीऐ जो मन सिउ जूझै । मनि वीचारि हरि जपु करे हरि दरगह सीझै ॥ ११ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ जीव पंडित और ज्योतिषी भी बन जाए, मुख से चारों वेदों को पढ़ डाले । अपने विद्वत्तापूर्ण कर्मों के कारण चाहे नवखण्ड (समस्त धरती) में पूजित हो —यह सब कुछ होते हुए भी उसे यह सच्चाई नहीं भूलनी चाहिए कि पहले से ही चौके में कोई भ्रष्टता मौजूद नहीं है । गुरु नानक कहते हैं कि झूठा तो पवित्रता का पाखण्ड है । (उस पाखण्ड से झूठा की उत्पत्ति होती है ।) सच्चा तो एक हरि-नाम ही है ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ परमात्मा स्वयं बनाता, करता-कराता एवं जीवों पर कृपा-दृष्टि रखता है । गुरु नानक कहते हैं कि वह सच्चा प्रभु ही सबको बड़ाई देनेवाला है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ काल (मृत्यु) ही सर्वाधिक दुःखदायी है, इससे अधिक अन्य कुछ भी दुःखपूर्ण नहीं दीखता । संसार में यह काल अटल है, पापियों के साथ टकराता है अर्थात् पापियों को कष्ट पहुँचाता है । यदि कोई जीव गुरु के शब्दों में लीन होकर हरि-जाप द्वारा हरि की पहचान कर लेता है, तो वह मन को संयत करके हरि की शरण में आकर मुक्त हो जाता है । जो विवेकपूर्ण ढंग से हरि-नाम का जाप करता है, वह प्रभु के दरबार में सफल होता है ॥ ११ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ हुकमि रजाई साखती दरगह सचु कबूलु । साहिबु लेखा मंगसी दुनीआ देखि न भूलु । दिल दरवानी जो करे दरवेसी दिलु रासि । इसक मुहबति नानका लेखा करते पासि ॥ १ ॥ म० १ ॥ अलगउ जोइ मधूकड़उ सारंगपाणि सबाइ । हीरै हीरा बेधिआ नानक कंठि सुभाइ ॥२॥ ॥ पउड़ी ॥ मनमुख कालु विआपदा मोहि माइआ लागे । खिन महि मारि पछाड़सी भाइ दूजै ठागे । फिरि वेला हथि न आवई जम का डंडु लागे । तिन जम डंडु न लगई जो हरि लिव जागे । सभ तेरी तुधु छडावणी सभ तुधै लागे ॥ १२ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ प्रभु के हुक्मानुसार आचरण करने से परमात्मा प्रसन्न होता है और जीव उसकी दरगाह में क़बूल हो जाता है। परमात्मा जीव के कर्मों का आलेख देखता है, इसलिए सांसारिक धंधों में अपने-आप को न भुलाओ। मन को संयत रखना एवं उसे सत्पथ पर लगाना ही दरवेशी (फ़क़ीरी) है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रेम का लेखा प्रभु के पास सदा मौजूद रहता है (अर्थात् परमात्मा सदैव प्रेम करनेवाले का संरक्षण करता है) ॥ १ ॥ म० १ ॥ जो व्यक्ति विरक्त होकर भँवरे की तरह सब जगह परमात्मा रूपी सौरभ को खोजता है, उसका हीरा-मन प्रभु-नाम रूपी हीरे द्वारा बिंध जाता है और गुरु नानक कहते हैं कि सहज ही प्रभु उसके हृदय में बस जाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मनमुखी जीव में काल व्याप्त रहता है और वह माया-मोह में लीन होता है। वे द्वैत-भाव में संलग्न होने के कारण क्षण भर में ही काल द्वारा प्रताड़ित हो जाते हैं। यमराज का दण्ड लगते ही वे विवेकहीन हो जाते हैं, सत्पथ पर आचरण का अवसर उन्हें दुबारा नहीं मिलता। जो जीव हरि के प्यार में सजग होते हैं, उन्हें यमराज के दण्ड का कोई भय नहीं रह जाता। (उसके लिए) सब कुछ हे प्रभु, तुम्हारा है, तुम्हीं में लीन है और तुम्हीं मोक्ष के प्रदाता हो ॥ १२ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ सरबे जोइ अगछमी दूखु घनेरो आथि। कालरु लादसि सरु लाघणउ लाभु न पूजी साथि ॥१॥ ॥ म० १ ॥ पूंजी साचउ नामु तू अखुटउ दरबु अपारु। नानक वखरु निरमलउ धंनु साहु वापारु ॥ २ ॥ म० १ ॥ पूरब प्रीति पिराणि लै मोटउ ठाकुरु माणि। माथै ऊभै जमु मारसी नानक मेलणु नामि ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ आपे पिंडु सवारिओनु विचि नवनिधि नामु। इकि आपे भरमि भुलाइअनु तिन निहफल कामु। इकनी गुरमुखि बुझिआ हरि आतम रामु। इकनी सुणि कै मंनिआ हरि ऊतम कामु। अंतरि हरि रंगु उपजिआ गाइआ हरि गुण नामु ॥ १३ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ हे मनुष्य, सबमें उस अनश्वर परमात्मा को देखो, माया और अस्थिर तत्त्व अतीव दुःखों का कारण हैं। तुम तो कल्लर (व्यर्थ का बोझ) लाद रहे हो, संसार-सागर को पार करना है, हरि-नाम की पूँजी (की नौका) नहीं है (पार क्योंकर उतरोगे?) ॥ १ ॥ ॥ म० १ ॥ (इसलिए) हे मनुष्य, सत्यनाम की पूँजी एकत्रित करो, यह कभी न घटनेवाला उत्तम द्रव्य है। गुरु नानक कहते हैं कि इस पूँजी

से उस निर्मल व्यापार में संलग्न होनेवाला व्यापारी धन्य है ॥ २ ॥ ॥ म० १ ॥ परमात्मा की पूर्व-प्रीति को पहचानो और उस महान स्वामी का पूजन करो। हरि-नाम में रत होने से (वह महान स्वामी) माथे पर आए यमराज को भी मुँह के बल पटक देगा ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ प्रभु ने स्वयं ही मनुष्य-शरीर सजाकर उसके भीतर नौ निधियों (से भी उत्तम) हरि-नाम स्थापित किया है। मनमुख जीवों को भी उसने स्वयं ही भ्रम में भुलाया है, उनके समस्त कार्य निष्फल हो जाते हैं। कुछ जीव गुरु के द्वारा परमात्मा का ज्ञान प्राप्त करते एवं आत्मा में रमे हुए हरि को पहचान लेते हैं; कुछ जीव प्रभु की स्तुति सुनकर ही उसमें विश्वास बना लेते हैं, प्रभु-कृपा से उनके कार्य भी उत्तमता को प्राप्त होते हैं। (किसी भी तरह) प्रभु के नाम का गुणगान करने से मनुष्य के भीतर परमात्मा का प्यार पैदा होता है ॥ १३ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ भोलतणि भै मनि वसै हेकै पाधर हीडु। अति डाहपणि दुखु घणो तीने थाव भरीडु ॥ १ ॥ ॥ म० १ ॥ मांदलु बेदि सि बाजणो घणो धड़ीऐ जोइ। नानक नामु समालि तू बीजउ अवरु न कोइ ॥ २ ॥ म० १ ॥ सागरु गुणी अथाहु किनि हाथाला देखीऐ। वडा वेपरवाहु सतिगुरु मिलै त पारि पवा। मझ भरि दुख बदुख। नानक सचे नाम बिनु किसै न लथी भुख ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ जिनी अंदरु भालिआ गुर सबदि सुहावै। जो इछनि सो पाइदे हरिनामु धिआवै। जिसनो क्रिपा करे तिसु गुरु मिलै सो हरि गुण गावै। धरमराइ तिन का मितु है जम मगि न पावै। हरिनामु धिआवहि दिनसु राति हरि नामि समावै ॥ १४ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ भोलापन धारण करने से प्रभु का भय मन में बसता है। यही एक रास्ता (पाधर) है, यही उत्तम चाल (हीडु) है। ईर्ष्यालु होने पर अत्यन्त दुःखी होना पड़ता है, तीनों (मन, वाणी, शरीर) भ्रष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥ म० १ ॥ जो जीवन में धड़ेबन्दी (पक्षपात) करता है, उसके लिए वेदों में भी (पक्षपात का ही) ढोल बजता प्रतीत होता है। गुरु नानक कहते हैं कि हे जीव, तुम उसे सच्चे परमात्मा का नाम स्मरण करो, उसके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है ॥ २ ॥ ॥ म० १ ॥ यह संसार-सागर त्रिगुणमयी और अत्यन्त गहरा है; इसकी थाह कोई नहीं जानता। वह बे-परवाह महान सतिगुरु शरण में ले, तभी इससे पार उतरा जा सकता है। संसार के बीच दुःख ही दुःख भरे हैं।

गुरु नानक कहते हैं कि सच्चे हरि-नाम के बिना किसी की भूख शामित नहीं होती अर्थात् सांसारिक तृष्णा का नाश नहीं होता ॥ ३ ॥ ॥ पउड़ी ॥ जिन्होंने गुरु के सुन्दर शब्दों के माध्यम से अपने ही भीतर परमात्मा की खोज की है, वे हरि-नाम-स्मरण द्वारा मनोवांछित फल प्राप्त करते हैं। जिस पर प्रभु-कृपा होती है, उसे ही गुरु की प्राप्ति होती है और तभी वह हरि-गुणगान करता है। धर्मराज भी उनका मित्र हो जाता है, वे यम के मार्ग पर नहीं जाते। वे रात-दिन हरि-नाम का ध्यान करते और उसी में विलीन हो जाते हैं ॥ १४ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ सुणीऐ एकु वखाणीऐ सुरगि मिरति पइआलि। हुकमु न जाई मेटिआ जो लिखिआ सो नालि। कउणु मूआ कउणु मारसी कउणु आवै कउणु जाइ। कउणु रहसी नानका किस की सुरति समाइ ॥ १ ॥ म० १ ॥ हउ मुआ मै मारिआ पउणु वहै दरीआउ। त्रिसना थकी नानका जा मनु रता नाइ। लोइण रते लोइणी कंनी सुरति समाइ। जीभ रसाइणि चूनड़ी रती लाल लवाइ। अंदरु मुसकि झकोलिआ कीमति कही न जाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ इसु जुग महि नामु निधानु है नामो नालि चलै। एहु अखुटु कदे न निखुटई खाइ खरचिउ पलै। हरिजन नेड़ि न आवई जम कंकर जम कलै। से साह सचे वणजारिआ जिन हरि धनु पलै। हरि किरपा ते हरि पाईऐ जा आपि हरि घलै ॥ १५ ॥

॥ सलोकु म० १ ॥ स्वर्गलोक, इहलोक एवं पाताललोक में सब जगह एक ही परमात्मा सुनते और कहते हैं। उसका हुक्म मिटाया नहीं जा सकता, भाग्य-लेख सदैव जीव के साथ रहता है। कौन मरता है, कौन मारता है और कौन जन्म-मरण के चक्र में पड़ता है। कौन आनन्द को प्राप्त होता है और किसकी आत्मा परमात्मा में समाती है (अर्थात् किसी भी रूप में परमात्मा स्वयं ही विद्यमान रहता है) ॥ १ ॥ म० १ ॥ जीव अहंकार के कारण मरता है, ममता उसे मारती है और श्वास नदी की नाईं चलते हैं (अर्थात् अहम्भाव के कारण जन्म-मरण होता है और श्वासों की नदी के कारण जीवन बचा रहता है)। गुरु नानक कहते हैं कि यदि मन हरि-नाम में रत हो जाय, तो जीव की समूची तृष्णा समाप्त हो जाती है। उसकी आँखें सुन्दर नेत्रों वाले प्रभु में तथा सुरति (आत्मलीनता) कानों में समा जाती है (अर्थात् मनुष्य आँखों से सदा परमात्मा के सुन्दर दर्शन करता एवं कानों से उसी का यश श्रवण करता है)। उसकी

जिह्वा हरि-नाम रूपी रसायन को चुषित करती हुई परमात्मा के नाम में ही लीन रहती है। उसके हृदय में नाम की सुगन्धि भर जाती है, जो अमूल्य है (उसकी क़ीमत नहीं कही जा सकती) ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ इस युग में (कलियुग में) हरि-नाम ही एकमात्र निधि है, उसी की कमाई सही अर्थों में जीव का साथ देती है। यह कभी न घटनेवाली पूँजी है, खाने-खर्चने पर और भी बढ़ती है। यमदूत या काल कभी हरि-भक्तों के समीप नहीं फटकता। जिन जीवों के पास हरि-नाम रूपी धन मौजूद है, वे वास्तव में श्रेष्ठ हैं। प्रभु की कृपा से ही प्रभु की प्राप्ति होती है, परमात्मा स्वयं ही उन्हें प्रदान करता है ॥ १५ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ मनमुख वापारै सार न जाणनी बिखु विहाझहि बिखु संग्रहहि बिख सिउ धरहि पिआरु। बाहरहु पंडित सदाइदे मनहु मूरख गावार। हरि सिउ चितु न लाइनी वादी धरनि पिआरु। वादा कीआ करनि कहाणीआ कूड़ु बोलि करहि आहारु। जग महि राम नामु हरि निरमला होरु मैला सभु आकारु। नानक नामु न चेतनी होइ मैले मरहि गवार ॥१॥ ॥ म० ३ ॥ दुखु लगा बिनु सेविऐ हुकमु मंने दुखु जाइ। आपे दाता सुखै दा आपे देइ सजाइ। नानक एवै जाणीऐ सभु किछु तिसै रजाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरिनाम बिना जगतु है निरधनु बिनु नावै त्रिपति नाही। दूजै भरमि भुलाइआ हउमै दुखु पाही। बिनु करमा किछू न पाईऐ जे बहुतु लोचाही। आवै जाइ जंमै मरै गुर सबदि छुटाही। आपि करै किसु आखीऐ दूजा को नाही ॥ १६ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ मनमुखी जीव जीवन-व्यापार के रहस्य को नहीं समझते; वे विष खरीदते और विष एकत्रित करते हैं और विष से ही प्यार करते हैं (अर्थात् मायावी मिथ्यापन का व्यापार करते हैं)। ऐसे लोग बाहर से भले ही विद्वान् कहलवाते हों, मन से निश्चय ही मूर्ख-गँवार होते हैं। परमात्मा में मन नहीं रमाते, दुनिया के बाहरी झगड़ों में उनका मन रमता है। वे मत-मतांतरों की चर्चा करते और झूठ बोलकर निर्वाह करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि (वे मूढ़ नहीं जानते कि) संसार में केवल हरि-नाम ही निर्मल है, अन्य सब रूपाकार मलिनता हैं। जो लोग हरि-नाम नहीं जपते, वे गँवार मलिनता में ही मर जाते हैं ॥ १ ॥ म० ३ ॥ परमात्मा की सेवा में रत हुए बिना दुःख बना रहता है, उसका हुक्म शिरोधार्य करने से दुःखों से मुक्ति मिलती है।

वह दाता (प्रभु) अपने-आप सुख देता है, कर्मों का दण्ड भी वही देता है। गुरु नानक कहते हैं कि (ऐसा जान लो कि) सब उसी की इच्छा से होता है॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा के नाम के सिवाय संसार में कोई पूँजी नहीं (संसार निर्धन है), हरि-नाम के बिना मनुष्य को किसी प्रकार भी तृप्ति नहीं हो सकती। जो जीव द्वैत-भाव के भ्रम में भूला है और अहम् की वृत्तियों में दुःखी है, वह चाहे, कितना भी चाहे, सत्कर्मों के बिना कुछ नहीं पा सकता। उसका आवागमन, जन्म-मरण केवल गुरु के शब्द से ही छूटता है। किन्तु यह सब उसी की (प्रभु की) परियोजना है, दूसरा कोई नहीं, किसे कहा जा सकता है ? ॥ १६ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ इसु जग महि संती धनु खटिआ जिना सतिगुरु मिलिआ प्रभु आइ। सतिगुरि सचु द्रिड़ाइआ इसु धन की कीमति कही न जाइ। इतु धनि पाइऐ भुख लथी सुखु वसिआ मनि आइ। जिन्हा कउ धुरि लिखिआ तिनी पाइआ आइ। मनमुखु जगतु निरधनु है माइआ नो बिललाइ। अनदिनु फिरदा सदा रहै भुख न कदे जाइ। सांति न कदे आवई नह सुखु वसै मनि आइ। सदा चिंत चितवदा रहै सहसा कदे न जाइ। नानक विणु सतिगुर मति भवी सतिगुर नो मिलै ता सबदु कमाइ। सदा सदा सुख महि रहै सचे माहि समाइ॥ १ ॥ म० ३ ॥ जिनि उपाई मेदनी सोई सार करेइ। एको सिमरहु भाइरहु तिसु बिनु अवरु न कोइ। खाणा सबदु चंगिआईआ जितु खाधै सदा त्रिपति होइ। पैनणु सिफति सनाइ है सदा सदा ओहु ऊजला मैला कदे न होइ। सहजे सचु धनु खटिआ थोड़ा कदे न होइ। देही नो सबदु सीगारु है जितु सदा सदा सुखु होइ। नानक गुरमुखि बुझीऐ जिसनो आपि विखाले सोइ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ अंतरि जपु तपु संजमो गुर सबदी जापै। हरि हरि नामु धिआईऐ हउमै अगिआनु गवापै। अंदरु अंम्रिति भरपूरु है चाखिआ सादु जापै। जिन चाखिआ से निरभउ भए से हरि रसि ध्रापै। हरि किरपा धारि पीआइआ फिरि कालु न विआपै॥ १७ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ इस संसार में सन्तों ने हरिनाम-धन की कमाई की है, सतिगुरु की सहायता से वे प्रभु से जा मिले हैं। सतिगुरु ने उन्हें सत्य की थाती सौंपी है, जिसका मोल नहीं किया जा सकता। इस

(हरि-नाम की) पूंजी को पाकर जीवों की सांसारिक तृष्णाएँ शमित हो गईं और परमसुख की प्राप्ति हुई। शुरू से ही जिनके भाग्य में बदा होता है, वे ही उसे (प्रभु को) प्राप्त करते हैं। मनमुख जीव जगत में विपन्न रहता और केवल मायावी उपलब्धियों के लिए ललकता है। वह रात-दिन भटकता है, किन्तु उसकी तृष्णा शान्त नहीं होती। न उसे शान्ति मिलती है, न मन में सुखी होता है। वह चिन्ताओं में दु:खी एवं नित्य संशयों का शिकार रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के बिना उसकी बुद्धि भटकती रहती है; यदि वह सतिगुरु का सामीप्य प्राप्त कर ले, तो शब्द की कमाई (प्रभु-नाम-स्मरण) करता है और सदैव परम सुख में जीता और अन्तत: परमात्मा में ही लीन हो जाता है ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ जिसने इस धरती को उत्पन्न किया है, वही इसकी रक्षा भी करता है। इसलिए हे भाइयो, उसी एक का स्मरण करो, उसके बिना दूसरा कोई नहीं। भले लोगों को शब्द-श्रवण एवं सत्कर्मों का भोजन करना चाहिए, उससे पूर्ण तृप्ति मिलती है। परमात्मा के स्तुति-गान का वस्त्र धारण करना चाहिए, जो सदैव उज्ज्वल रहता है, कभी मैला नहीं होता। (इस प्रकार) सहज में ही सत्य रूपी धन की कमाई होती है, जो (उत्तरोत्तर बढ़ता है) कभी कम नहीं होता। शरीर का वास्तविक शृंगार प्रभु-नाम है, जिससे हमेशा परमसुख प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव गुरु के द्वारा उसे पहचानता है, वह उसी को मिलता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ गुरु-उपदेश से ही मन में जप-तप और संयम पैदा होते हैं। हरि-नाम का स्मरण करने से अहम्-भाव और अज्ञान का नाश होता है। जीव के भीतर परमांश का भरपूर अमृत मौजूद है, चखने से ही उसका स्वाद प्रतीत होता है (अर्थात् आत्म-ज्ञान द्वारा ही उसका आनन्द मिलता है)। जिन्होंने इस रस को चखा है, वे निर्भय होकर परम तृप्त हैं। परमात्मा जब कृपा-पूर्वक यह रस किसी को पिला देता है, तो काल उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता ॥ १७ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ लोकु अवगणा की बंन्है गंठड़ी गुण न विहाझै कोइ। गुण का गाहकु नानका विरला कोई होइ। गुर परसादी गुण पाईअन्हि जिसनो नदरि करेइ ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ गुण अवगुण समानि हहि जि आपि कीते करतारि। नानक हुकमि मंनिऐ सुखु पाईऐ गुर सबदी वीचारि ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ अंदरि राजा तखतु है आपे करे निआउ। गुर सबदी दरु जाणीऐ अंदरि महलु असराउ। खरे परखि खजानै पाईअनि

खोटिआ नाही थाउ । सभु सचो सचु वरतदा सदा सचु निआउ । अंम्रित का रसु आइआ मनि वसिआ नाउ ॥ १८ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ संसार के लोग अवगुणों की गठरी बाँधे फिरते हैं, कोई सद्गुणों का व्यापार नहीं करता। गुरु नानक कहते हैं कि कोई विरला ही गुण-ग्राहक होता है। जिन पर परमात्मा की कृपा होती है, वे ही गुरु-पथ पर चलते हुए सद्गुणों को ग्रहण करते हैं ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ गुण-अवगुण सब परमात्मा के बनाए हैं, इसलिए समान हैं। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा के हुक्म में रहने से और गुरु के शब्द पर विचार करने से सुख प्राप्त होता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मन के भीतर परमात्मा स्वयं राज्य-सिंहासन पर विराजता है, वही सब न्याय करता है। गुरु-उपदेश से परमात्मा का द्वार ज्ञात होता है और भीतर से प्रभु का आश्रय प्राप्त होता है। नैयायिक खरे को परखकर मोक्ष प्रदान करता है, खोटे (कुटिल) के लिए कोई जगह नहीं। उसके न्याय-क्षेत्र में सब सत्य ही सत्य है, उसका न्याय भी सत्य है। (प्रभु से प्रेम करनेवाले को) हरिनामामृत का रस मिलता है और प्रभु-नाम हृदय में बस जाता है ॥ १८ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ हउमै करी तां तू नाही तू होवहि हउ नाहि । बूझहु गिआनी बूझणा एह अकथ कथा मन माहि । बिनु गुर ततु न पाईऐ अलखु वसै सभ माहि । सतिगुरु मिलै त जाणीऐ जां सबदु वसै मन माहि । आपु गइआ भ्रमु भउ गइआ जनम मरन दुख जाहि । गुरमति अलखु लखाईऐ ऊतम मति तराहि। नानक सोहं हंसा जपु जापहु त्रिभवण तिसै समाहि ॥१॥ ॥ म० ३ ॥ मनु माणकु जिनि परखिआ गुर सबदी वीचारि । से जन विरले जाणीअहि कलजुग विचि संसारि । आपै नो आपु मिलि रहिआ हउमै दुबिधा मारि । नानक नामि रते दुतरु तरे भउजलु बिखमु संसारु ॥२॥ पउड़ी ॥ मनमुख अंदरु न भालनी मुठे अहंमते । चारे कुंडां भवि थके अंदरि तिख तते । सिम्रिति सासत न सोधनी मनमुख विगुते । बिनु गुर किनै न पाइओ हरिनामु हरि सते । ततु गिआनु वीचारिआ हरि जपि हरि गते ॥ १९ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ मनुष्य में जब तक अहम् होता है, तब तुम (परमात्मा) नहीं होते; मन में तुम्हारे आने से अहम् नहीं रह जाता। ज्ञानी जन इस अकथनीय कथा को मन में बूझते-समझते हैं। वह अदृश्य

परमात्मा सबमें बसता है, किन्तु गुरु के बिना उसके रहस्य को नहीं जाना जा सकता। (इस रहस्य को पाने के लिए) या तो सतिगुरु का मार्ग-दर्शन प्राप्त हो, या मन में उसके उपदेशों को रमा लिया जाय। अहम् के नष्ट होने से सब भ्रम-भय नष्ट हो जाते हैं और जन्म-मरण के कष्टों का निराकरण होता है। गुरु के उपदेशानुसार आचरण करने से अदृश्य परमात्मा के दर्शन होते तथा उत्तम विवेक द्वारा मोक्ष-लब्धि होती है। गुरु नानक कहते हैं कि उस प्रभु से अभेदता लानेवाला जाप जपो, जो त्रिभुवन में समाया हुआ है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ जिसने गुरु के उपदेशानुसार मन रूपी माणिक्य की परख की है, कलियुगी जगत में ऐसे विरले ही जन हैं। जिसने अहम्-भाव और दुबिधा को समाप्त कर दिया है, वह स्वस्वरूप की पहचान कर सका है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम में रत रहनेवाले जीव इस विषम भवसागर से पार हो जाते हैं ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ मनमुखी जीव के मन में स्वस्वरूप की पहचान नहीं होती, वह अहम्-भाव में लीन रहता है। वे चतुर्दिक् (सच्चाई की खोज में) घूमते हैं, किन्तु उनके भीतर की तप्त तृष्णा शमित नहीं होती। वे (अहंकारी होने के कारण) शास्त्र-स्मृतियों (धार्मिक ग्रन्थों) को नहीं विचारते और अहम् में ही नष्ट हो जाते हैं। सत्यस्वरूप हरि तथा उसके पावन नाम को गुरु के बिना कोई नहीं पा सकता। तत्त्व-ज्ञान को विचारकर यदि कोई विवेकपूर्ण चेतना से हरि-नाम का स्मरण करे, तो हरि में ही उसकी गति होती है ॥ १९ ॥

॥ सलोक म० २ ॥ आपे जाणै करे आपि आपे आणै रासि। तिसै अगै नानका खलिइ कीचै अरदासि ॥ १ ॥ ॥ म० १ ॥ जिनि कीआ तिनि देखिआ आपे जाणै सोइ। किसनो कहीऐ नानका जा घरि वरतै सभु कोइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सभे थोक विसारि इको मितु करि। मनु तनु होइ निहालु पापा दहै हरि। आवण जाणा चुकै जनमि न जाहि मरि। सचु नामु आधारु सोगि न मोहि जरि। नानक नामु निधानु मन महि संजि धरि ॥ २० ॥

॥ सलोक म० २ ॥ परमात्मा अपने-आप बनाता, सँवारता एवं सुरक्षित रखता है। अतः गुरु नानक कहते हैं कि उसी के सम्मुख विनती करो ॥ १ ॥ म० १ ॥ जिसने संसार का निर्माण किया है, वही इसकी सम्हाल भी करता है। गुरु नानक कहते हैं कि जब सब कुछ भीतर ही है, तो किसे कहें या दोष दें ? ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ अतः सबको छोड़कर केवल परमात्मा से मित्रता बनाओ। इससे तन-मन सुखी होगा और हरि

तुम्हारे पापों को नष्ट कर देगा। आवागमन चुक जाएगा, जन्म विफल नहीं होगा। जो जन सत्य-नाम का आश्रय लेते हैं, वे मोह और शोक में नहीं जलते। अतः गुरु नानक कहते हैं कि मन में सदैव हरि-नाम-पदार्थ सँजोकर रखो ॥ २० ॥

॥ सलोक म० ५॥ माइआ मनहु न वीसरै मांगै दंमा दंम। सो प्रभु चिति न आवई नानक नही करंम॥१॥ म० ५॥ माइआ साथि न चलई किआ लपटावहि अंध। गुर के चरण धिआइ तू तूटहि माइआ बंध॥२॥ पउड़ी॥ भाणै हुकमु मनाइओनु भाणै सुखु पाइआ। भाणै सतिगुरु मेलिओनु भाणै सचु धिआइआ। भाणे जेवड होर दाति नाही सचु आखि सुणाइआ। जिन कउ पूरबि लिखिआ तिन सचु कमाइआ। नानक तिसु सरणागती जिनि जगतु उपाइआ॥ २१ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ (मनमुख के मन से) माया कभी विस्मृत नहीं होती; वह निरन्तर माया के चक्र में रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि जब तक भाग्य उत्तम न हो, प्रभु की याद नहीं आती ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ हे ज्ञानांध जीव, माया किसी के साथ नहीं चलती, इसके साथ क्यों लिपटते हो ! तुम्हें माया-बन्धन तोड़ने हैं तो गुरु-चरणों की शरण लो ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ प्रभु-इच्छा से ही जीव हुक्म में विचरता है, उसकी इच्छा से ही सुख प्राप्त करता है। उसकी इच्छा से ही जन को सतिगुरु का मिलाप होता है, प्रभु-इच्छा से ही वह सत्य की आराधना करता है। सत्य तो यह है कि प्रभु-इच्छा से बड़ी कोई देन नहीं। जिनके भाग्य में बदा है, वह सत्यस्वरूप को पहचानता है। गुरु नानक (इसीलिए) संसार के उपजाता की शरण लेते हैं ॥ २१ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ जिन कउ अंदरि गिआनु नही भै की नाही बिंद। नानक मुइआ का किआ मारणा जि आपि मारे गोविंद ॥ १ ॥ म० ३ ॥ मन की पत्री वाचणी सुखी हू सुखु सारु। सो ब्रहमणु भला आखीऐ जि बूझै ब्रहमु बीचारु। हरि सालाहे हरि पड़ै गुर कै सबदि वीचारि। आइआ ओहु परवाणु है जि कुल का करे उधारु। अगै जाति न पुछीऐ करणी सबदु है सारु। होरु कूड़ु पड़णा कूड़ु कमावणा बिखिआ नालि पिआरु। अंदरि सुखु न होवई मनमुख जनमु खुआरु। नानक नामि रते से उबरे गुर कै हेति अपारि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ आपे करि करि

वेखदा आपे सभु सचा । जो हुकमु न बुझै खसम का सोई नरु कचा । जितु भावै तितु लाइदा गुरमुखि हरि सचा । सभना का साहिबु एकु है गुरसबदी रचा । गुरमुखि सदा सलाहीऐ सभि तिसदे जचा । जिउ नानक आपि नचाइदा तिव ही को नचा ॥ २२ ॥ १ ॥ सुधु ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ जिन मनमुखी जीवों के मन में ज्ञान नहीं, और न ही प्रभु का किंचित भय है; गुरु नानक कहते हैं कि ऐसे जीव मृत हैं, मृतकों को क्या मारना ? उन्हें तो प्रभु का तिरस्कार ही मार देता है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ मन की पत्री बाँचने से सुख ही सुख प्राप्त है। (अर्थात् जैसे पंडितजन पंचांग पढ़कर दिन-प्रतिदिन का व्यापार निश्चित करते हैं, वैसे ही यदि मन का पत्रा-बाँचन किया जाय, मन को नियत और संयत किया जाय, तो सुखोपलब्धि होती है।) वही ब्राह्मण श्रेष्ठ है, जो ब्रह्म का विचार करे और गुरु-उपदेशानुसार हरि-नाम का अध्ययन-मनन करे। उसी व्यक्ति का जन्म सफल माना जाता है, जो अपने कुल का उद्धार करने में समर्थ हो। मृत्यूपरान्त धर्मराज के सम्मुख कोई ब्राह्मण, शूद्र आदि जाति नहीं पूछता, तो वहाँ उत्तम कर्म ही प्रतिबिम्बित होते हैं। अत: शब्द की करनी (शब्द-रहस्य का ज्ञान) ही श्रेष्ठ है। अन्य सब प्रकार का पढ़ना, विचारना और कमाना मिथ्या है, विषैली माया के संग प्यार करने के समान है। (ऐसा करनेवाले) मनमुखी जीव के अन्तर्मन में कभी सुख नहीं होता, उसका जन्म ही व्यर्थ जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि केवल वे ही जीव मुक्त होते हैं, जो गुरु के उपदेशों में अपार प्रेम रखते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा स्वयं रचयिता है, स्वयं ही अपनी रचना को देखता है। वह आप ही सत्यस्वरूप है। जो अपने स्वामी परमात्मा की इच्छा को नहीं समझता, वह मनुष्य कच्चा है। गुरु के द्वारा वही सच्चे हरि की शरण लेता है, जिस पर परमात्मा की स्वैच्छित कृपा होती है। स्वामी (परमात्मा) सबका एक ही है, गुरु के शब्दों द्वारा उसमें रचा जा सकता है। गुरु के द्वारा उसका कीर्तिगान करनेवाले जीव ही उसे जँचते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वह जसे नचाता है, जीव को वैसा ही नाचना होता है ॥ २२ ॥ १ ॥ सुधु ॥

मारू वार महला ५ डखणे* म० ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ तू चउ सजण मैडिआ डेई सिसु

* डखणे, लहंदी भाषा में लिखे पदों के लिए कहा गया है।

उतारि । नैण महिंजे तरसदे कदि पसी दीदारु ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ नीहु महिंजा तऊ नालि बिआ नेह कूड़ावे डेखु । कपड़ भोग डरावणे जिचरु पिरी न डेखु ॥ २ ॥ म० ५ ॥ उठी झालू कंतड़े हउ पसी तउ दीदारु । काजलु हारु तमोल रसु बिनु पसे हभि रस छारु ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ तू सचा साहिबु सचु सचु सभु धारिआ । गुरमुखि कीतो थाटु सिरजि संसारिआ । हरि आगिआ होए बेद पापु पुंनु वीचारिआ । ब्रहमा बिसनु महेसु त्रैगुण बिसथारिआ । नवखंड प्रिथमी साजि हरि रंग सवारिआ । वेकी जंत उपाइ अंतरि कल धारिआ । तेरा अंतु न जाणै कोइ सचु सिरजणहारिआ । तू जाणहि सभ बिधि आपि गुरमुखि निसतारिआ ॥ १ ॥

हे मेरे स्वामी, यदि तुम कहो तो मैं सिर उतारकर अर्पित कर दूँ। मेरे नेत्र तरस रहे हैं, तुम्हारे दर्शन कब होंगे ? ॥ १ ॥ म० ५ ॥ मेरा प्यार केवल तुम्हारे साथ है, अन्य सब तरह का प्यार मिथ्या पाया है। जब तक स्वामी से मिलाप न हो जाय, यह सुन्दर कपड़ा, भोग-विलास के साधन, सब भयजनक हैं ॥ २ ॥ म० ५ ॥ प्रातःकाल उठकर, हे कन्त (स्वामी), मैं तुम्हारे दर्शन करूँ। दर्शन के बिना काजल, हार-श्रृंगार या पान का रस, सब (मेरे लिए) राख-समान हैं ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ हे मेरे स्वामी, तुम सत्यस्वरूप हो, तुमने सब सत्य ही धारण किया है। संसार की रचना करके तुमने गुरुमुख के लिए सुअवसर (धर्म कमाने की जगह) दिया है। तुम्हारे (परमात्मा के) ही आदेश से वेदों का निर्माण हुआ, जिन्होंने पाप-पुण्य का निर्णय किया। ब्रह्मा, विष्णु, महेश के द्वारा तीनों गुणों (सत्, रजस्, तमस्) का प्रसार किया। जगत के नौ खण्डों की रचना की और चतुर्दिक् अपना रंग बिखेर दिया। तुम ही मूल शक्ति के धारक हो, तुमने ही भाँति-भाँति के जीव-जन्तु पैदा किए। हे सच्चे सर्जक, तुम्हारे अन्त (रहस्य) को कोई नहीं पा सकता। तुम सब प्रकार से अपने ज्ञाता आप ही हो, या गुरु के द्वारा ही कोई निस्तार पा सकता है ॥ १ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ जे तू मित्रु असाडड़ा हिक भोरी ना वेछोड़ि । जीउ महिजा तउ मोहिआ कदि पसी जानी तोहि ॥१॥ ॥ म० ५॥ दुरजन तू जलु भाहड़ी विछोड़े मरि जाहि । कंता तू सउ सेजड़ी मैडा हभो दुखु उलाहि ॥ २ ॥ म० ५ ॥ दुरजनु दूजा भाउ है वेछोड़ा हउमै रोगु । सजणु सचा पातिसाहु जिसु

मिलि कीचै भोगु ।। ३ ।। पउड़ी ।। तू अगम दइआलु बेअंतु तेरी कीमति कहै कउणु । तुधु सिरजिआ सभु संसारु तू नाइकु सगल भउण । तेरी कुदरति कोइ न जाणै मेरे ठाकुर सगल रउण । तुधु अपड़ि कोइ न सकै तू अबिनासी जग उधरण । तुधु थापे चारे जुग तू करता सगल धरण । तुधु आवण जाणा कीआ तुधु लेपु न लगै त्रिण । जिसु होवहि आपि दइआलु तिसु लावहि सतिगुर चरण । तू होरतु उपाइ न लभही अबिनासी स्रिसटि करण ।। २ ।।

।। डखणे म० ५ ।। हे परमात्मा, यदि तुम हमारे मित्र हो, तो किंचित भी हमें वियोग का दुःख न देना । मेरा दिल तुमने मोह लिया है, हे प्यारे, अब तुम्हारे दर्शन कब होंगे ? ।। १ ।। म० ५ ।। हे दुर्जन, तू नष्ट हो जा, ऐ वियोग, तू मर जा (अर्थात् दुर्जन और विछोड़ा समाप्त हो जाय तो) हे स्वामी, तुम मेरी सेज पर रमण करते हुए मेरे सब दुःखों को दूर कर दो ।। २ ।। म० ५ ।। द्वैत-भाव ही दुर्जन है, अहम् का रोग ही विछोड़ा है और मेरा स्वामी सत्यस्वरूप है, जिससे मिलकर आनन्द होता है ।। ३ ।। पउड़ी ।। हे प्रभु, तुम अगम और दयालु हो, तुम्हारा अनन्त महत्त्व कौन कह सकता है ? तुमने समस्त संसार की रचना की है, तुम सब भुवनों के स्वामी हो । हे मेरे सर्वव्यापक स्वामी, तुम्हारी लीला को कोई नहीं जानता । तुम अविनाशी हो, संसार को तारनेवाले हो, तुम तक कोई नहीं पहुँच सकता । तुमने चारों युगों की स्थापना की है, चौदह लोकों की धरती तुम्हीं ने उपजाई है । तुम्हीं ने संसार का आवागमन बनाया है, तुम्हें स्वयं तृण मात्र भी लिप्सा नहीं । जिस पर तुम दयालु होते हो, उसे सच्चे गुरु की शरण में लाते हो; हे अविनाशी, सृष्टि के सर्जक, तुम अन्य किसी उपाय से नहीं मिलते (सिवाय गुरु की शरण में आने के) ।। २ ।।

।। डखणे म० ५ ।। जे तू वतहि अंङणे हभ धरति सुहावी होइ । हिकसु कंतै बाहरी मैडी वात न पुछै कोइ ।। १ ।। म० ५ ।। हभे टोल सुहावणे सहु बैठा अंङणु मलि । पही न वंञै बिरथड़ा जो घरि आवै चलि ।। २ ।। म० ५ ।। सेज विछाई कंत कू कीआ हभु सीगारु । इती मंझि न समावई जे गलि पहिरा हारु ।। ३ ।। पउड़ी ।। तू पारब्रहमु परमेसरु जोनि न आवही । तू हुकमी साजहि स्रिसटि साजि समावही । तेरा रूपु न जाई लखिआ किउ तुझहि धिआवही । तू सभ महि

वरतहि आपि कुदरति देखावही। तेरी भगति भरे भंडार तोटि न आवही। एहि रतन जवेहर लाल कीम न पावही। जिसु होवहि आपि दइआलु तिसु सतिगुर सेवा लावही। किसु कदे न आवै तोटि जो हरि गुण गावही ॥ ३ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ यदि तुम मेरे हृदय रूपी आँगन में रमण करो, तो मुझे समूची धरती सुहानी प्रतीत होगी। एक बार भी यदि मैं अपने स्वामी से विमुख हो जाऊँ, तो कोई मेरी बात न पूछेगा ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ स्वामी आँगन में (हृदय में) बैठा हो तो सब पदार्थ सुन्दर सुशोभित होते हैं। उस घर से (जिसके आँगन में स्वयं प्रभु स्वामी मौजूद हो) कोई जिज्ञासु (सवाली) खाली नहीं लौटता ॥ २ ॥ ॥ म० ५ ॥ आत्मा-स्त्री ने अपने स्वामी परमात्मा के लिए सेज बिछाई है, स्वयं सब शृंगार किया है, किन्तु गले में हार पहनना मुझे सह्य नहीं (क्योंकि आलिंगन-बद्ध होते समय वह मेरे और मेरे पति के बीच अन्तराल पैदा करता है) ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ हे परमात्मा, तुम परब्रह्म परमेश्वर हो, कभी किसी योनि में जन्म नहीं लेते। तुमने अपने आदेश से सृष्टि की रचना की है और रचना करके उसी में समा गए हो। तुम्हारा रूप भी दृश्य नहीं है, तुम्हें क्योंकर स्मरण किया जाय! तुम स्वयं सबमें व्याप्त हो, तुम्हारी लीला कोई नहीं कह सकता। तुम्हारी भक्ति (करने वालों के) भण्डार सदा भरे रहते हैं, उनमें कभी कमी नहीं आती। यह (तुम्हारी भक्ति) अमूल्य हीरे-मोतियों के समान है, कोई इसका मोल नहीं कर सकता। जिस पर तुम स्वयं कृपा करते हो, उसे सतिगुरु की सेवा में प्रवृत्त करते हो। जो तुम्हारे (हरि के) गुण गाता है, उसे जीवन में कभी कोई अभाव नहीं होता ॥ ३ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ जा मू पसी हठ मै पिरी महिजै नालि। हभे डुख उलाहिअमु नानक नदरि निहालि ॥१॥ म० ५ ॥ नानक बैठा भखे वाउ लंमे सेवहि दरु खड़ा। पिरीए तू जाणु महिजा साउ जोई साई मुहु खड़ा ॥ २ ॥ म० ५ ॥ किआ गालाइओ भूछ परवेलि न जोहे कंत तू। नानक फुला संदी वाड़ि खिड़िआ हभु संसारु जिउ ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ सुघड़ु सुजाणु सरूपु तू सभ महि वरतंता। तू आपे ठाकुरु सेवको आपे पूजंता। दाना बीना आपि तू आपे सतवंता। जती सती प्रभु निरमला मेरे हरि भगवंता। सभु ब्रहम पसारु पसारिओ आपे खेलंता। इहु आवा गवणु रचाइओ करि चोज देखंता। तिसु बाहुड़ि गरभि

न पावही जिसु देवहि गुर मंता । जिउ आपि चलावहि तिउ चलदे किछु वसि न जंता ॥ ४ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ यदि मैं हृदय में झाँककर देखूँ तो मेरा पति सदा मेरे साथ दीखता है। गुरु नानक कहते हैं कि उसकी कृपा-दृष्टि से मेरे सब दुःख दूर हो गए हैं ॥ १ ॥ म० ५ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि वे कानों से प्रभु का स्तुतिगान सुनते हैं और बहुत समय से उसके द्वार पर खड़े उसकी सेवा में रत हैं। हे स्वामी, तुम मेरा आशय जानते हो कि मैं क्यों खड़ा हूँ; मैं तो तुम्हारा मुँह जोहता हूँ (दर्शन करना और आदेश की प्रतीक्षा में रहना, दोनों भाव ज्ञापित हैं।) ॥ २ ॥ ॥ म० ५ ॥ हे गँवार, तुम क्या बातें करते हो ? पराई स्त्री को न देखो, तभी तुम सुव्रती पति हो। देखो, संसार में समूची प्रकृति विकसित हो रही है, फिर एक ही के (माया के) साथ अपने को क्यों बाँधते हो ? ॥३॥ ॥ पउड़ी ॥ हे परमात्मा, तुम सुन्दर, सुयोग्य एवं सुरूप हो, सबमें तुम्हीं व्याप्त हो। तुम स्वयं स्वामी हो; दास भी तुम्हीं हो; अपनी पूजा आप ही करते हो। तुम्हीं जानने-देखनेवाले हो और तुम्हीं सत्यवान हो (सत्य-स्वरूप हो)। मेरे भगवन्त हरि, तुम्हीं यति, सती और निर्मल हो। हे ब्रह्म, यह सब तुम्हारा ही प्रसार है, तुम्हीं इस सबमें खेल रहे (व्याप्त) हो। आवागमन भी तुम्हीं ने रचाया है, सब लीलाएँ तुम्हीं करते और देखते हो। जिसे गुरु-मन्त्र प्रदान करते हो (अर्थात् जिसे गुरु की शरण देते हो), वह दुबारा कभी गर्भ-वास नहीं करता (जन्म नहीं लेता)। (सच तो यह है कि) जीवों के वश कुछ भी नहीं, जैसा तुम उन्हें चलाते हो, वे चलते हैं ॥ ४ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ कुरीए कुरीए वैदिआ तलि गाड़ा महरेरु । वेखे छिटड़ि थीवदो जामि खिसंदो पेरु ॥ १ ॥ ॥म० ५॥ सचु जाणै कचु वैदिओ तू आघू आघे सलवे । नानक आतसड़ी मंझि नैणू बिआ ढलि पबणि जिउ जुंमिओ ॥ २ ॥ ॥ म० ५ ॥ भोरे भोरे रूहड़े सेवेदे आलकु । मुदति पई चिराणीआ फिरि कडू आवै रुति ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ तुधु रूपु न रेखिआ जाति तू वरना बाहरा । ए माणस जाणहि दूरि तू वरतहि जाहरा । तू सभि घट भोगहि आपि तुधु लेपु न लाहरा । तू पुरखु अनंदी अनंत सभ जोति समाहरा । तू सभ देवा महि देव बिधाते नरहरा । किआ आराधे जिहवा इक तू अबिनासी

अपरपरा। जिसु मेलहि सतिगुरु आपि तिस के सभि कुल तरा। सेवक सभि करदे सेव दरि नानकु जनु तेरा ॥ ५ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ नदी-किनारे की पगडण्डी पर चलनेवाले (जिज्ञासु), तुम्हारे नीचे बड़ा कीचड़ है, देखना कहीं पाँव फिसल गया तो दाग़ी (भ्रष्ट) हो जाओगे ॥ १ ॥ म० ५ ॥ (जिज्ञासु को सावधान किया गया है कि पथ-भ्रष्ट न हो जाय।) हे जिज्ञासु, तुम कच्चे को सच्चा जानकर आगे-आगे बढ़ते जा रहे हो। गुरु नानक कहते हैं कि तुम अग्नि में मक्खन की तरह ढल जाओगे, दूसरे ढलकर चौपत्ती (नीलोफर का पौधा) की तरह नष्ट होगे ॥ २ ॥ म० ५ ॥ हे भोले और भटके हुए जीवात्मा, तुम हरि-सेवन में आलस्य करते हो। समय कब का बीतता जा रहा है, फिर यह ऋतु कब आएगी अर्थात् मनुष्य-जन्म कब मिलेगा ? ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ हे परमात्मा, तुम्हारी कोई रूप-रेखा नहीं, जाति-वर्ण से भी तुम इतर हो। मनुष्य तुम्हें दूर समझता है, किन्तु तुम तो सम्मुख स्पष्ट व्याप्त दीख पड़ते हो। तुम सब शरीरों में स्वयं भोक्ता हो, फिर भी तुम पूर्ण निर्लिप्त हो। तुम परमानन्दयुक्त पूर्णपुरुष हो, सबमें ज्योति-रूप में समाए हो। तुम सबके रचयिता हो, देवों के देव हो, पूर्णपुरुष परमात्मा हो। एक जिह्वा तुम्हारी क्या आराधना करे, तुम तो परे से भी परे हो। जिसे तुम स्वयं सच्चे गुरु से मिला देते हो, उसका वंश तिर जाता है। सब जन तुम्हारी सेवा में रत रहते हैं, नानक भी तुम्हारे द्वार पर दास बना खड़ा है ॥ ५ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ गहडड़ड़ा त्रिणि छाइआ गाफल जलिओहु भाहि। जिना भाग मथाहड़ै तिन उसताद पनाहि ॥१॥ ॥ म० ५ ॥ नानक पीठा पका साजिआ धरिआ आणि मउजूदु। बाझहु सतिगुर आपणे बैठा झाकु दरूद ॥२॥ म० ५ ॥ नानक भुसरीआ पकाईआ पाईआ थालै माहि। जिनी गुरू मनाइआ रजि रजि सेई खाहि ॥३॥ पउड़ी॥ तुधु जग महि खेलु रचाइआ विचि हउमै पाईआ। एकु मंदरु पंच चोर हहि नित करहि बुरिआईआ। दस नारी इकु पुरखु करि दसे सादि लुोभाईआ। एनि माइआ मोहणी मोहीआ नित फिरहि भरमाईआ। हाठा दोवै कीतीओ सिव सकति वरताईआ। सिव अगै सकती हारिआ एवै हरि भाईआ। इकि विचहु ही तुधु रखिआ जो सतसंगि मिलाईआ। जल विचहु बिंबु उठालिओ जल माहि समाईआ ॥ ६ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ (यह जीवन) तिनकों से छाया छप्पर है, तुम्हारी ग़फ़लत (अवहेलना) के कारण यह आग में जल रहा है। जिनके माथे भाग्य-रेखा हो, उन्हें गुरु की शरण मिलती है ॥ १ ॥ म० ५ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि गुरुवाणी में वेद-वाक्यों का विश्लेषण करके पकाया गया है। इसे चुपड़-सजाकर अन्ततः जिज्ञासुओं के सामने रखा गया है अर्थात् जिसने इसे श्रवण (पीठा) किया, पकाया (मनन किया) एवं सजाया (निदिध्यासन) है, उसके लिए गुरु ने प्रभु को साक्षात् कर दिया। किन्तु सतिगुरु के बिना चाहे बैठे झाँकते रहो— न कोई भोजन-पूर्व की प्रार्थना करवाएगा, न भोजन प्राप्त होगा ॥ २ ॥ म० ५ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि रोटी पकाकर, थाली में डालकर वही तृप्त होकर खा सकता है, जिसने गुरु की शरण ली है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ हे परमात्मा, तुमने संसार में ऐसा खेल रचाया है कि सबमें अहम् भर दिया है। एक मन्दिर (शरीर) में काम-क्रोधादि पाँच चोर रख दिए हैं, जो नित्य बुराइयाँ करते हैं। दस स्त्रियों के साथ (इन्द्रियों के साथ) एक मन रूपी पुरुष भोग-रत है। माया ने सबको मोह रखा है और वे भ्रम में पड़े हैं। दोनों प्रकार की चीज़ें, चेतन आत्मा और माया, उसी ने बनाई हैं। चेतन आत्मा भी जब माया के सम्मुख पराजित होता है, तो यह परमात्मा को रुचता है। इस एक माया में से ही तुम्हारे मिलने का साधन सत्संग बना, जैसे जल में से ही बुलबुले उठते हैं और जल में ही समा जाते हैं ॥ ६ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ आगाहा कू त्राघि पिछा फेरि न मुहडड़ा। नानक सिझि इवेहा वार बहुड़ि न होवी जनमड़ा ॥१॥ ॥ म० ५ ॥ सजणु मैडा चाईआ हभ कही दा मितु। हभे जाणनि आपणा कही न ठाहे चितु ॥ २ ॥ म० ५ ॥ गुझड़ा लधमु लालु मथै ही परगटु थिआ। सोई सुहावा थानु जिथै पिरीए नानक जी तू वुठिआ ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ जा तू मेरै वलि है ता किआ मुहछंदा। तुधु सभु किछु मैनो सउपिआ जा तेरा बंदा। लखमी तोटि न आवई खाइ खरचि रहंदा। लख चउरासीह मेदनी सभ सेव करंदा। एह वैरी मित्र सभि कीतिआ नह मंगहि मंदा। लेखा कोइ न पुछई जा हरि बखसंदा। अनंदु भइआ सुखु पाइआ मिलि गुर गोविंदा। सभे काज सवारिऐ जा तुधु भावंदा ॥ ७ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ ऐ जीव, तुम परमेश्वर की ओर आगे बढ़ने की चाह करो, पीछे मुँह न फिराओ। गुरु नानक कहते हैं कि इस प्रकार

यह जन्म सफल करो, पुनः जन्म होगा ही नहीं ॥ १ ॥ म० ५ ॥ मेरा साजन चावों से भरा है और सब जीवों का मित्र है। सब उसे अपना मानते हैं, वह किसी का दिल नहीं दुखाता ॥ २ ॥ म० ५ ॥ हे प्यारे, तुम गुप्त हो, फिर भी मैंने तुम्हें खोजा है। अब तो तुम सामने ही प्रकट हो। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रिय स्वामी, जहाँ तुम बसते हो, वही स्थान सुन्दर है अर्थात् हृदय सुहाना स्थान है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, यदि तुम मेरे साथ हो, तो मुझे क्या मुहताजी हो सकती है। तुमने मुझे अपना जन मानकर सब कुछ दे रखा है। खाने-खर्चने पर भी धन की मुझे कभी कमी नहीं हुई। चौरासी लाख योनियों की यह समस्त सृष्टि तुम्हारी सेवा में संलग्न है। मेरे (समर्पण एवं दास्य-भाव ने) शत्रुओं को भी मित्र बना दिया है, अब वे मेरा बुरा नहीं चाहते हैं; परमात्मा जिसे अपना लेता है, कोई उससे कैफ़ीयत नहीं माँग सकता। गुरु के द्वारा प्रभु से मिलकर सुख-आनन्द प्राप्त हुआ है। जब तुम्हें रुचता है तो मेरे सब काम अपने-आप सँवर जाते हैं ॥ ७ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ डेखण कू मुसताकु मुखु किजेहा तउ धणी। फिरदा कितै हालि जा डिठमु ता मनुध्रापिआ ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ दुखीआ दरद घणे वेदन जाणे तू धणी। जाणा लख भवे पिरी डिखंदो ता जीवसा ॥ २ ॥ म० ५ ॥ ढहदी जाइ करारि वहणि वहंदे मै डिठिआ। सेई रहे अमाण जिना सतिगुरु भेटिआ ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ जिसु जन तेरी भुख है तिसु दुखु न विआपै। जिनि जनि गुरमुखि बुझिआ सु चहु कुंडी जापै। जो नरु उस की सरणी परै तिसु कंबहि पापै। जनम जनम की मलु उतरै गुर धूड़ी नापै। जिनि हरि भाणा मंनिआ तिसु सोगु न संतापै। हरि जीउ तू सभना का मितु है सभि जाणहि आपै। ऐसी सोभा जनै की जेवडु हरि परतापै। सभ अंतरि जन वरताइआ हरि जन ते जापै ॥ ८ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ हे मालिक, मैं तुम्हारे दर्शनों का इच्छुक हूँ; (देखना चाहता हूँ कि) तुम्हारा मुख कैसा है। बुरी अवस्था में भटकता था, किन्तु जब तुम्हारे दर्शन हुए, तो मन प्रसन्न हो गया ॥ १ ॥ म० ५ ॥ हे स्वामी, हम दुखियों की अतीव पीड़ा को तुम जानते हो— मैं इसके लाखों निदान चाहे जानता होऊँ, किन्तु मेरे प्राण तभी रहेंगे, जो तुम्हारा दर्शन पा सकूँ ॥ २ ॥ म० ५ ॥ (संसार रूपी नदी का) किनारा ढह रहा है, मैंने यह जान (देख) लिया है। इस स्थिति में वे ही सुरक्षित बचेंगे,

जिन्हें सतिगुरु की प्राप्ति हो गई ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ जिस जीव को, हे प्रभु, तुम्हारी ही कामना है, उसे कोई तृष्णा नहीं रह जाती। जिसने गुरु के द्वारा परमात्मा को जान लिया है, वह चतुर्दिक् लोक-जनित हो जाता है। जो जन प्रभु की शरण लेता है, स्वयं पाप उससे काँपते हैं। उसकी जन्म-जन्मान्तर की मलिनता दूर हो जाती है, वह गुरु की चरण-धूल में स्नान करता है। जो परमात्मा की इच्छा में प्रसन्न रहता है, उसे कोई शोक-सन्ताप नहीं रह जाता। हे दाता, तुम सबके शुभाशंसी मित्र हो, सब पर अपने-आप करुणा करते हो। जितना उच्च तुम्हारा प्रताप है, उतनी ही शोभा उसे प्राप्त होती है। वह प्रभु, सब दुनिया में अपने भक्तों को समादृत करता है और उन्हीं की बड़ाई से स्वयं जाना जाता है ॥ ८ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ जिना पिछै हउ गई से मै पिछै भी रविआसु। जिना की मै आसड़ी तिना महिजी आस ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ गिली गिली रोडड़ी भउदी भवि भवि आइ। जो बैठे से फाथिआ उबरे भाग मथाइ ॥ २ ॥ म० ५ ॥ डिठा हभ मझाहि खाली कोइ न जाणीऐ। तै सखी भाग मथाहि जिनी मेरा सजणु राविआ ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ हउ ढाढी दरि गुण गावदा जे हरि प्रभ भावै। प्रभु मेरा थिर थावरी होर आवै जावै। सो मंगा दानु गुोसाईआ जितु भुख लहि जावै। प्रभ जीउ देवहु दरसनु आपणा जितु ढाढी त्रिपतावै। अरदासि सुणी दातारि प्रभि ढाढी कउ महलि बुलावै। प्रभ देखदिआ दुख भुख गई ढाढी कउ मंगणु चिति न आवै। सभे इछा पूरीआ लगि प्रभ कै पावै। हउ निरगुणु ढाढी बखसिओनु प्रभि पुरखि वेदावै ॥ ९ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ जिनका अनुयायी मैंने बनना चाहा, वे मेरे अनुयायी बने दीख पड़े (अर्थात् मैंने जिनसे कुछ पाना चाहा, वे मुझसे धन की आशा लगाए दीख पड़े— मुझे क्या देते)। जिनसे मैंने आशा की, वे मेरी आशागत थे ॥ १ ॥ म० ५ ॥ गीले गुड़ के टुकड़े रूपी माया पर जीव मक्खी की भाँति मँड़राते हैं, जो बैठेगा, वही फँसेगा; जिनके माथे भाग्य है, वे बच जाते हैं ॥ २ ॥ म० ५ ॥ परमात्मा सबमें मौजूद है, उस तत्त्व से कोई ख़ाली नहीं। जिन्होंने मेरे साजन के मिलाप और प्यार का आनन्द पाया है, वे अतीव भाग्यशाली हैं ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ मैं हरि के द्वार का चारण हूँ, हरि की प्रसन्नता के लिए उसका गुण गाता हूँ।

मेरा स्वामी ही एकमात्र स्थिर-स्थायी है, अन्य सब आवागमन के शिकार हैं। हे स्वामी, मैं तुमसे वह दान माँगता हूँ, जिससे मेरी सम्पूर्ण तृष्णा मिट जाय। हे प्रभु, अपना पावन दर्शन दो, जिससे तुम्हारा यह सेवक चारण तृप्त हो जाय। प्रभु ने मेरी प्रार्थना सुनकर मुझे (चारण को) महल में बुला लिया। प्रभु के दर्शन पाते ही गुण-गायक (चारण) की सब तृष्णा-वेदना नष्ट हो गई और (दर्शन में रत होकर) माँगने का ध्यान ही नहीं रहा। प्रभु के चरणों से लगकर मेरी सब इच्छाएँ पूर्ण हो गईं। मुझ गुण-हीन अकिंचन चारण को परमप्रभु ने बख्श लिया ॥ ९ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ जा छुटे ता खाकु तू सुंञी कंतु न जाणही। दुरजन सेती नेहु तू कै गुणि हरि रंगु माणही ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ नानक जिसु बिनु घड़ी न जीवणा विसरे सरै न बिंद। तिसु सिउ किउ मन रूसीऐ जिसहि हमारी चिंद ॥ २ ॥ ॥ म० ५ ॥ रते रंगि पारब्रहम कै मनु तनु अति गुलालु। नानक विणु नावै आलूदिआ जिती होरु खिआलु ॥ ३ ॥ ॥ पवड़ी ॥ हरि जीउ जा तू मेरा मित्रु है ता किआ मै काड़ा। जिनी ठगी जगु ठगिआ से तुधु मारि निवाड़ा। गुरि भउजलु पारि लंघाइआ जिता पावाड़ा। गुरमती सभि रस भोगदा वडा आखाड़ा। सभि इंद्रीआ वसि करि दितीओ सतवंता साड़ा। जितु लाईअनि तितै लगदीआ नह खिजोताड़ा। जो इछी सो फलु पाइदा गुरि अंदरि वाड़ा। गुरु नानकु तुठा भाइरहु हरि वसदा नेड़ा ॥ १० ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ हे शरीर, ज्योंही प्राण तुमसे अलग होता है, तुम शून्य हो जाते हो— कंत (स्वामी) को नहीं समझ पाते। दुर्जनों के साथ प्यार लगाकर भला तुम किस गुण से प्रभु-प्रेम की आशा कर सकते हो ॥ १ ॥ म० ५ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि जिसके बिना जीवन का कोई महत्त्व नहीं, जिसे विस्मृत करके रंचमात्र भी नहीं निभता; उससे आप मन ही मन कैसे रूठ सकते हो, उसे ही तो सदैव हमारी चिन्ता रहती है ॥ २ ॥ म० ५ ॥ परब्रह्म के प्यार में तन-मन रत हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम के बिना द्वैत-भाव में पनपने से नित्य मलिनता ही उपजती है ॥ ३ ॥ पवड़ी ॥ हे प्रभु, जब तुम मेरे मित्र-सहायक हो, तो मुझे क्या चिन्ता हो सकती है। जिन कामादि ठगों ने संसार को लूटा है, तुमने उन्हें मार भगाया है। गुरु के द्वारा संसार-सागर को पार कर लिया है और सब झगड़ों का अन्त हुआ है। गुरु-मतानुसार आचरण

करने से संसार-अखाड़े में मुझे सब आनन्द ही आनन्द है। जब वह सत्यस्वरूप प्रभु हमारा है, तो सब इन्द्रियाँ वश हो गई हैं। उन्हें जिधर लगाया है, वे लगी हैं, व्यर्थ की खींचतान नहीं होती (अर्थात् इन्द्रियाँ संयत हो गई हैं)। गुरु ने अन्तर्मुखी बनाकर मनोवांछित फल की प्राप्ति करवाई है। हे भाइयो, गुरु नानक कहते हैं कि जब वह प्रभु संतुष्ट होता है, तो सदैव अंग-संग रहता है ॥ १० ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ जा मूं आवहि चिति तू ता हभे सुख लहाउ। नानक मन ही मंझि रंगावला पिरी तहिजा नाउ ॥१॥ ॥ म० ५ ॥ कपड़ भोग बिकार ए हभे ही छार। खाकु लुोड़ेदा तंनि खे जो रते दीदार ॥ २ ॥ म० ५ ॥ किआ तकहि बिआ पास करि हीअड़े हिकु अधारु। थीउ संतन की रेणु जितु लभी सुख दातारु ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ विणु करमा हरि जीउ न पाईऐ बिनु सतिगुर मनूआ न लगै। धरमु धीरा कलि अंदरे इहु पापी मूलि न तगै। अहि करु करे सु अहि करु पाए इक घड़ी मुहतु न लगै। चारे जुग मै सोधिआ विणु संगति अहंकारु न भगै। हउमै मूलि न छुटई विणु साधू सतसंगै। तिचरु थाह न पावई जिचरु साहिब सिउ मन भंगै। जिनि जनि गुरमुखि सेविआ तिसु घरि दीबाणु अभगै। हरि किरपा ते सुखु पाइआ गुर सतिगुर चरणी लगै ॥ ११ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ जब मेरे हृदय में, हे प्रभु, तुम आते हो, तो मुझे सब सुख प्राप्त होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रिय, तुम्हारा नाम पाकर मैं अन्तर्मन में परमानन्दित होता हूँ ॥ १ ॥ म० ५ ॥ सुन्दर वस्त्रों का पहनना, भोग-विलास करना, मनोविकारों द्वारा पोषित होना, सब मिट्टी (व्यर्थ) है। मुझे स्वस्वरूप में रत सन्तजनों की चरण-धूल चाहिए ॥ २ ॥ ॥ म० ५ ॥ दूसरों के पास क्या ढूँढ़ते हो? हृदय में एक ही आश्रय बनाओ। सन्तजनों की चरण-धूल हो जाओ, वहीं समस्त सुखों की उपलब्धि निहित है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ कर्महीन (भाग्यहीन, उत्तम कर्मों से रहित) लोगों को सतिगुरु नहीं मिलता और सतिगुरु के बिना मन स्थिर नहीं होता। कलियुग में केवल धर्म ही स्थिर रहता है, पापीजन कभी नहीं निभते। जीव इस हाथ करता है तो उस हाथ पाता है; दण्ड पाने में घड़ी-मुहूर्त भर का समय भी नहीं लगता। मैंने चारों युग (का इतिहास) खोजकर देखा है कि सत्संगति में विचरण करने के अतिरिक्त अहंकार का नाश नहीं होता; सन्तजनों के चरणों के सम्पर्क में आए बिना

हउमै (घमण्ड) नहीं छूटता। परमात्मा से विमुख रहकर जीव को कभी तत्त्व-रहस्य प्राप्त नहीं हो सकता। जो जीव गुरु के द्वारा प्रभु का स्मरण करता है, उसे अटूट और अटल सहारा मिलता है। प्रभु की कृपा से सुख प्राप्त होता है और सच्चे गुरु के चरणों में प्यार बनता है ॥ ११ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ लोड़ीदो हभ जाइ सो मीरा मीरंन सिरि। हठ मंझाहू सो धणी चउदो मुखि अलाइ ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ माणिकू मोहि माउ डिंना धणी अपाहि। हिआउ महिजा ठंढड़ा मुखहु सचु अलाइ ॥ २ ॥ म० ५ ॥ मू थीआऊ सेज नैणा पिरी विछावणा। जे डेखै हिक वार ता सुख कीमा हू बाहरे ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ मनु लोचै हरि मिलण कउ किउ दरसनु पाईआ। मै लख विड़ते साहिबा जे बिंद बोलाईआ। मै चारे कुंडा भालीआ तुधु जेवडु न साईआ। मै दसिहु मारगु संतहो किउ प्रभू मिलाईआ। मनु अरपिहु हउमै तजहु इतु पंथि जुलाईआ। नित सेविहु साहिबु आपणा सतसंगि मिलाईआ। सभे आसा पूरीआ गुर महलि बुलाईआ। तुधु जेवडु होरु न सुझई मेरे मित्र गुोसाईआ ॥ १२ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ उस शाहों के शाह प्रभु को मैं सब जगह ढूँढ़ता हूँ। वह हृदय में ही है और मुँह खोलकर आवाज़ें दे रहा है (किन्तु हम सुनते नहीं) ॥ १ ॥ म० ५ ॥ हे माँ, उस परमात्मा ने स्वयं ही मुझे नाम-माणिक्य प्रदान किया है; उस सच्चे नाम का स्मरण करके मेरा हृदय शीतल हो गया है ॥ २ ॥ म० ५ ॥ मैं (चाहता हूँ कि अपने प्यारे के लिए स्वयं) सेज बन जाऊँ और नेत्रों को प्यार का बिछौना बना लूँ। इस ओर यदि वह एक बार भी देखे (अर्थात् वह इस सेज पर रमण कर ले), तो मेरा सुख अमूल्य हो जाता अर्थात् मुझे अमित सुख प्राप्त होता ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ मेरा मन परमात्मा से मिलने के लिए तड़पता है, मैं क्योंकर उसके दर्शन पा सकता हूँ! यदि मेरा स्वामी रत्ती भर भी मेरी ओर उन्मुख हो जाए, तो (समझो कि) मैंने लाखों कमा लिये। हे स्वामी, मैंने चारों दिशाओं में ढूँढ़ा है, किन्तु तुमसे महान मुझे कोई नहीं मिला। हे सन्तजनो, मुझे प्रभु-मिलन का मार्ग बताओ (उन्होंने बताया है), मन को पूर्णतः हरि को समर्पित कर दो, अहंभाव को त्यागो और इसी मार्ग पर चलो। नित्य अपने प्रभु का स्मरण करो और सत्संगति में विचरण करो। गुरु के द्वारा परमात्मा के महल में पहुँचकर सब

मनोकामनाएँ पूर्ण होंगी। (अत:) ऐ मेरे मित्र, मेरे स्वामी, मुझे तुमसे महान और कोई दीख नहीं पड़ता ॥ १२ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ मू थीआऊ तखतु पिरी महिंजे पातिसाह। पाव मिलावे कोलि कवल जिवै बिगसावदो ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ पिरीआ संदड़ी भुख मू लावण थी विथरा। जाणु मिठाई इख बेई पीड़े ना हुटै ॥ २ ॥ म० ५ ॥ ठगा नीहुम त्रोड़ि जाणु गंध्रबा नगरी। सुख घटाऊ डूइ इसु पंधाणू घर घणे ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ अकल कला नह पाईऐ प्रभु अलख अलेखं। खटु दरसन भ्रमते फिरहि नह मिलीऐ भेखं। वरत करहि चंद्राइणा से किते न लेखं। बेद पड़हि संपूरना ततु सार न पेखं। तिलकु कढहि इसनानु करि अंतरि कालेखं। भेखी प्रभू न लभई विणु सची सिखं। भूला मारगि सो पवै जिसु धुरि मसतकि लेखं। तिनि जनमु सवारिआ आपणा जिनि गुरु अखी देखं ॥ १३ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ मैं सिंहासन बनूँ और मेरा प्रिय (उस पर आसीन होनेवाला) बादशाह हो जाय। जब उसका पाँव मुझे छुएगा, तो मैं कमल की तरह विकसित (परमानन्दित) हो जाऊँगा ॥ १ ॥ म० ५ ॥ मेरे प्रिय को भूख हो, तो मैं सलोणा (भोजन) बनकर उसके सम्मुख समर्पित हो जाऊँ। तुम जानो कि मैं ईख का रस हूँ, जो बार-बार भी दलोगे, तो भी मिठास नहीं घटेगी ॥ २ ॥ म० ५ ॥ काम-क्रोधादि ठगों से प्रीति तोड़ो, इन्हें गन्धर्व-नगरी (मृग-तृष्णा) समझो। इस मार्ग पर चलकर सुख की दो घड़ियाँ भी अनेक योनियों (जन्मों) रूपी घर हैं ॥ ३ ॥ ॥ पउड़ी ॥ सांसारिक कलाओं और योग्यताओं से प्रभु नहीं पाया जा सकता, वह अदृश्य और अनन्त है। छ: शास्त्रों के बताए मार्ग पर भटकते-फिरने अथवा आडम्बर-वेश करने से भी परमात्मा नहीं मिलता। चन्द्र संबंधी व्रत-उपवास भी किसी काम नहीं आते, सम्पूर्ण वेदाध्ययन से भी तत्त्व-रहस्य की जानकारी नहीं मिलती। स्नानोपरांत लम्बे तिलक लगानेवालों के भीतर भी कालिमा रहती है। सच्ची शिक्षा (गुरु से उपलभ्य) के बिना वेशाडम्बर से प्रभु नहीं मिलता। भूला-भटका जीव तभी सुमार्ग पर चलता है, यदि शुरू से ही उसके माथे भाग्य का लेख मौजूद हो। (सच तो यह है कि) जिन्होंने सतिगुरु के प्रत्यक्ष दर्शन कर लिये, उनका जन्म (जीवन) सँवर गया ॥ १३ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ सो निवाहू गडि जो चलाऊ न थीऐ। कार कूड़ावी छडि संमलु सचु धणी ॥ १ ॥ म० ५ ॥ हभ समाणी जोति जिउ जल घटाऊ चंद्रमा। परगटु थीआ आपि नानक मसतकि लिखिआ ॥ २ ॥ म० ५ ॥ मुख सुहावे नामु चउ आठ पहर गुण गाउ। नानक दरगह मंनीअहि मिली निथावे थाउ ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ बाहर भेखि न पाईऐ प्रभु अंतरजामी। इकसु हरि जीउ बाहरी सभ फिरै निकामी। मनु रता कुटंब सिउ नित गरबि फिरामी। फिरहि गुमानी जग महि किआ गरबहि दामी। चलदिआ नालि न चलई खिन जाइ बिलामी। बिचरदे फिरहि संसार महि हरि जी हुकामी। करमु खुला गुरु पाइआ हरि मिलिआ सुआमी। जो जनु हरि का सेवको हरि तिस की कामी ॥ १४ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ जो सदा स्थिर है (परमात्मा), जो चलायमान नहीं है, उसी के संग निबाह करो। मिथ्या क्रिया-कलाप का त्याग कर सच्चे परमात्मा (स्वामी) का स्मरण करो ॥ १ ॥ म० ५ ॥ प्रभु की ज्योति सब जीवों में इस प्रकार समाई है, जैसे जल के विभिन्न घड़ों में चन्द्र का प्रतिबिम्ब रहता है; किन्तु गुरु नानक कहते हैं कि प्रकट उसी पर होता है, जिसके माथे भाग्य-रेखा मौजूद है ॥ २ ॥ म० ५ ॥ मुख हरि-नाम के उच्चारण से शोभायमान होता है, (इसलिए) आठों पहर प्रभु का गुणगान करो। गुरु नानक कहते हैं कि इससे प्रभु के दरबार में स्वीकृति मिलती है और अनाथों को भी प्रश्रय मिलता है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा अन्तर्यामी है, बाहरी वेशाडम्बरों से नहीं मिलता। परमात्मा के बिना समूची सृष्टि निरर्थक है। मन कुटुम्ब-परिवार में रमा रहता है, नित्य अहंकार में विचरण करते हैं; (ऐसे) घमण्डी सांसारिकों का धन का गुमान किस काम का? यह माया (धन-सम्पत्ति) मृत्यु-समय साथ नहीं चलती, क्षण भर में ही विलीन हो जाती है। वे परमात्मा के हुक्म से ही संसार में भटकते फिरते हैं। जिसका भाग्योदय होता है, उसे सच्चा गुरु मिल जाता है और वह प्रभु-पति से उसे मिला देता है। जो जीव हरि की सेवा में रत हैं, हरि भी उनके काम आता है (हरि भी उनको चाहता है।) ॥ १४ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ मुखहु अलाए हभ मरणु पछाणंदो कोइ। नानक तिना खाकु जिना यकीना हिक सिउ ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ जाणु वसंदो मंझि पछाणू को हेकड़ो। तै तनि

पड़दा नाहि नानक जै गुरु भेटिआ ॥ २ ॥ म० ५ ॥ मतड़ी कांढ कुआह पाव धोवंदो पीवसा । मू तनि प्रेमु अथाह पसण कू सचा धणी ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ निरभउ नामु विसारिआ नालि माइआ रचा । आवै जाइ भवाईऐ बहु जोनी नचा । बचनु करे तै खिसकि जाइ बोले सभु कचा । अंदरहु थोथा कूड़िआरु कूड़ी सभ खचा । वैरु करे निरवैर नालि झूठे लालचा । मारिआ सचै पातिसाहि वेखि धुरि करमचा । जम दूती है हेरिआ दुख ही महि पचा । होआ तपावसु धरम का नानक दरि सचा ॥ १५ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ मुँह से बातें तो अनेक करते हैं, किन्तु मरण को कोई-कोई ही पहचानता है । गुरु नानक कहते हैं कि जिन्हें हृदय से प्रभु में विश्वास है, वे उनकी (विश्वासी जीवों की) चरण-धूल के समान हैं ॥ १ ॥ म० ५ ॥ अन्तर्यामी प्रभु मन में रहता है, यह बात कोई विरला ही जानता है । जो गुरु को पा लेता है, उसके शरीर में कोई रहस्य (भेद) नहीं रह जाता अर्थात् वे भीतर से ही उसे साक्षात् कर लेते हैं ॥ २ ॥ म० ५ ॥ जो परमात्मा से परिचय करवा दे (जो ईश्वर सम्बन्धी मत दे), मैं उसके चरण धोकर पी लूंगा । अपने सच्चे स्वामी के दर्शनों की अथाह इच्छा मेरे भीतर मौजूद है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ जो जीव निर्भय परमात्मा का नाम विस्मृत करके मायावी धंधों में रत रहते हैं; वे आवागमन में फँसे रहते हैं और अनेक योनियों में भटकते हैं । वे जो वचन कहते हैं, शीघ्र ही उससे खिसक जाते हैं अर्थात् अपने वचनों पर स्थिर नहीं रहते । वे भीतर से मिथ्यावादी होते हैं, उनकी समूची प्रवृत्ति ही मिथ्या होती है । वे झूठे लोभ में फँसकर निर्वैर (प्रभु) से भी वैर करते हैं । (इसीलिए) हमेशा से ही उनके द्वारा खोटा कार्य करने पर परमात्मा ने उन्हें दण्डित किया है । यमदूत उन्हें दुःख पहुँचाते हैं और वे अनेक यातनाओं में तड़पते रहते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि उस परमात्मा के सच्चे दरबार में धर्म का न्याय होता है ॥ १५ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ परभाते प्रभ नामु जपि गुर के चरण धिआइ । जनम मरण मलु उतरै सचे के गुण गाइ ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ देह अंधारी अंधु सुंञी नाम विहूणीआ । नानक सफल जनंमु जै घटि वुठा सचु धणी ॥ २ ॥ म० ५ ॥ लोइण लोई डिठ पिआस न बुझै मू घणी । नानक से अखड़ीआ बिअंनि जिनी डिसंदो मा पिरी ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ जिनि जनि गुरमुखि

सेविआ तिनि सभि सुख पाई । ओहु आपि तरिआ कुटंब सिउ सभु जगतु तराई । ओनि हरि नामा धनु संचिआ सभ तिखा बुझाई । ओनि छडे लालच दुनी के अंतरि लिव लाई । ओसु सदा सदा घरि अनंदु है हरि सखा सहाई । ओनि वैरी मित्र सम कीतिआ सभ नालि सुभाई । होआ ओही अलु जग महि गुर गिआनु जपाई । पूरबि लिखिआ पाइआ हरि सिउ बणि आई ॥ १६ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ हे भाई, प्रभातवेला में जगकर परमात्मा का नाम जपो और गुरु का ध्यान करो । सत्यस्वरूप परमात्मा का गुण गाने से जन्म-मरण की मलिनता दूर हो जाती है ॥ १ ॥ म० ५ ॥ नाम-विहीन शरीर अन्धकारमय तथा सूना होता है । गुरु नानक कहते हैं कि जिसके मन में सच्चा स्वामी रहता है, उसका जन्म सफल हो जाता है ॥ २॥ म० ५ ॥ मैंने आँखों से प्रभु की ज्योति को देखा है, उससे मेरी प्यास (प्रभु-दर्शन की) और अधिक बढ़ गई है कि बुझती ही नहीं । गुरु नानक कहते हैं कि वे आँखें और ही हैं, जिनसे मेरा प्यारा (प्रियतम-प्रभु) दीख पड़ता है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ जिन जीवों ने गुरु के द्वारा प्रभु की आराधना की है, वे अनन्य सुख प्राप्त कर चुके हैं । उनका अपना उद्धार हुआ है, परिवार-सहित समूचा संसार उनके कारण उद्धार प्राप्त करता है । वे हरि-नाम रूपी धन को संचित करते हैं, उनकी समस्त तृष्णाएँ समाप्त हो जाती हैं; वे सांसारिक लोभ-लिप्सा को त्यागकर अन्तर्मुखी हो जाते हैं । उसके समीप सदैव आनन्द बरसता है, परमात्मा स्वयं उसका सखा और सहायक होता है । वह मित्रों-वैरियों को एक समान बना लेता है और सद्भावना द्वारा सबसे व्यवहार करता है । वह गुरु द्वारा बताए पथ पर चलते हुए संसार में पूर्णता प्राप्त कर लेता है । परमात्मा की ओर से ही वह सत्कर्मों का फल पाता है और प्रभु में उसकी लीनता हो जाती है ॥ १६ ॥

॥ डखणे म० ५ ॥ सचु सुहावा काढीऐ कूड़ै कूड़ी सोइ । नानक विरले जाणीअहि जिन सचु पलै होइ ॥१॥ म०५॥ सजण मुखु अनूपु अठे पहर निहालसा । सुतड़ी सो सहु डिठु तै सुपने हउ खंनीऐ ॥ २ ॥ म० ५ ॥ सजण सचु परखि मुखि अलावणु थोथरा । मंन मझाहू लखि तुधहु दूरि न सु पिरी ॥ ३ ॥ ॥पउड़ी॥ धरति आकासु पातालु है चंदु सूरु बिनासी । बादिसाह साह उमराव खान ढाहि डेरे जासी । रंग तुंग गरीब मसत सभु

लोकु सिधासी । काजी सेख मसाइका सभे उठि जासी । पीर पैकाबर अउलीए को थिरु न रहासी । रोजा बाग निवाज कतेब विणु बुझे सभ जासी । लख चउरासीह मेदनी सभ आवै जासी । निहचलु सचु खुदाइ एकु खुदाइ बंदा अबिनासी ।। १७ ।।

।। डखणे म० ५ ।। सत्य शोभायमान होता है, किन्तु मिथ्या की प्रसिद्धि भी मिथ्या ही है । गुरु नानक कहते हैं कि यह तथ्य उसी के लिए ज्ञातव्य है, जो सत्य-निधि है ।। १ ।। म० ५ ।। मैंने सपने में उस सुन्दर स्वामी (प्रभु) को देखा था । उस मेरे साजन का मुख इतना सुन्दर था कि मैं आठों पहर उसे देखते रहना चाहता हूँ । उसके उक्त प्रकार स्वप्न पर मैं क़ुर्बान हूँ ।। २ ।। म० ५ ।। हे भाई, सत्य की परखकर मुँह से बोलना व्यर्थ है । हृदय के भीतर ही उसके दर्शन करो, वह प्यार की मूर्ति (परमात्मा) तुमसे दूर कहीं नहीं है ।। ३ ।। पउड़ी ।। यह धरती, आकाश, पाताल एवं चन्द्र-सूर्य, सब नश्वर हैं । जगत के सम्पन्न लोग, बादशाह और मन्त्रीगण सब अन्ततः गिर जानेवाले हैं । राजा, रंक, ग़रीब तथा अलमस्त, सब लोग मरणहार हैं । क़ाज़ी, शेख़ आदि बड़े लोग भी अन्ततः मृत्यु को पाते हैं । पीरों, पैग़म्बरों तथा औलियाओं में से भी कोई स्थिर रहनेवाला नहीं है । रोज़ा रखने, बाँग देने तथा क़ुर्आन का पाठ करनेवाले सब लोग यथार्थ जाने बग़ैर यहाँ से उठ जानेवाले हैं । धरती की चौरासी लाख योनियाँ सब आवागमन का शिकार हैं । विश्व का निश्चल सत्य केवल परमात्मा का अस्तित्व है और परमात्मा की सेवा में लीन जीव ही अनश्वर है ।। १७ ।।

।। डखणे म० ५ ।। डिठी हभ ढंढोलि हिकसु बाझु न कोइ । आउ सजण तू मुखि लगु मेरा तनु मनु ठंढा होइ ।। १ ।। ।। म० ५ ।। आसकु आसा बाहरा मू मनि वडी आस । आस निरासा हिकु तू हउ बलि बलि बलि गईआस ।। २ ।। ।। म० ५ ।। विछोड़ा सुणे डुखु विणु डिठे मरिओदि । बाझु पिआरे आपणे बिरही ना धीरोदि ।। ३ ।। पउड़ी ।। तट तीरथ देव देवालिआ केदारु मथुरा कासी । कोटि तेतीसा देवते सणु इंद्रै जासी । सिम्रिति सासत्र बेद चारि खटु दरस समासी । पोथी पंडित गीत कवित कवते भी जासी । जती सती संनिआसीआ सभि कालै वासी । मुनि जोगी दिगंबरा जमै सणु जासी । जो दीसै सो विणसणा सभ बिनसि बिनासी । थिरु पारब्रहमु परमेसरो सेवकु थिरु होसी ।। १८ ।।

।। डखणे म० ५ ।। मैंने सब खोज देखा है, उस एक परमात्मा के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं। (इसलिए) हे मेरे साजना, तुम मुझे दर्शन दो, जिससे मेरा तन-मन शीतल हो जाय ।। १ ।। म० ५ ।। हे प्रभु, तुम्हारे प्रेमी आशा-रहित होते हैं, किन्तु मेरे मन में तो बड़ी आशा बनी है (अर्थात् मुझ पर कृपा करके मेरी आशा-तृष्णा नष्ट करो)। एक तुम ही आशा को निराशा में बदल सकते हो, इसलिए मैं मन, वाणी से तुम पर क़ुर्बान जाता हूँ ।। २ ।। म० ५ ।। तुमसे बिछुड़ने की बात सुनकर ही दुःख होता है, किन्तु दर्शन के बिना तो बस मृत-प्राय हो जाता हूँ। विरही को अपने प्रिय से मिले बिना धैर्य नहीं होता ।।३।। पउड़ी ।। नदियों के तट, तीर्थ, देवालय, केदारनाथ, मथुरा, काशी, इन्द्र-सहित तेंतीस कोटि देवता, सब नश्वर हैं, काल के वश में हैं। चारों वेद, छः शास्त्र, स्मृतियाँ, दर्शन, सब नाश होंगे; पोथी, पण्डित, कविता-गीत और स्वयं कवि, सब नष्ट हो जायँगे। यति, सती, संन्यासी, सब लोग काल (मृत्यु) के वश में हैं। जो भी दृश्यमान है, वह नश्वर है, विनष्ट होगा। केवल परब्रह्म परमेश्वर ही अनश्वर है या उसका सेवक स्थिरता प्राप्त करेगा ।। १८ ।।

।। सलोक डखणे म० ५ ।। सै नंगे नह नंग भुखे लख न भुखिआ। डुखे कोड़ि डुन ख नानक पिरी पिखंदो सुभ दिसटि ।। १ ।। म० ५ ।। सुख समूहा भोग भूमि सबाई को धणी। नानक हभो रोगु मिरतक नाम विहूणिआ ।। २ ।। ।। म० ५ ।। हिकस कूं तू आहि पछाणू भी हिकु करि। नानक आसड़ी निबाहि मानुख परथाई लजीवदो ।।३।। पउड़ी ।। निहचलु एकु नराइणो हरि अगम अगाधा। निहचलु नामु निधानु है जिसु सिमरत हरि लाधा। निहचलु कीरतनु गुण गोबिंद गुरमुखि गावाधा। सचु धरमु तपु निहचलो दिनु रैनि अराधा। दइआ धरमु तपु निहचलो जिसु करमि लिखाधा। निहचलु मसतकि लेखु लिखिआ सो टलै न टलाधा। निहचलु संगति साध जन बचन निहचलु गुर साधा। जिन कउ पूरबि लिखिआ तिना सदा सदा आराधा ।। १९ ।।

।। सलोक डखणे म० ५ ।। सैकड़ों नंगे रहकर भी अपने नंगेपन से दुःखी नहीं होते, लाखों भूखे अपनी भूख से परेशान नहीं होते, करोड़ों दुःखी अपने दुःखों से प्रताड़ित महसूस नहीं करते, यदि उन पर परमात्मा की कृपा-दृष्टि बनी हुई हो! ।। १ ।। म० ५ ।। कोई चाहे समस्त सुखों को भोगे और सारी पृथ्वी का मालिक बन बैठे, किन्तु गुरु नानक कहते हैं

कि हरि-नाम के बिना सब रोग है और वे मुर्दा हैं ॥२॥ म०५॥ हे मनुष्य, तुम केवल एक परमात्मा को ही चाहो, उसी से मैत्री स्थापित करो। वही तुम्हारी आशाओं को पूरा करता है, मनुष्य से माँगने में तो लाज होती है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा निश्चल है, अगम और अगाध है। उसका नाम भी निश्चल और सुख-धाम है, जिसके स्मरण से वह प्रभु स्वयं मिल जाता है। गुरुमुख जीव नित्य परमात्मा के गुणों का कीर्तन गाते हैं। दिन-रात उसका निश्चल स्मरण ही सच्चा धर्म और सच्ची तपस्या है। निश्चल भाव का दया, धर्म, तप उसी को उपलब्ध होता है, जिसके कर्मों (भाग्य) में लिखा है। मस्तक पर लिखा लेख अटल है, वह टाले नहीं टलता। सन्तजनों की संगति और गुरु का वचन निश्चल है; जिन जीवों के भाग्य में पूर्व-लिखित है, वे सदैव उसकी आराधना (स्मरण) करते हैं ॥१९॥

॥ सलोक डखणे म० ५ ॥ जो डुबंदो आपि सो तराए किन्हखे। तारेदड़ो भी तारि नानक पिर सिउ रतिआ ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ जिथै कोइ कथंन्हि नाउ सुणंदो मा पिरी। मूं जुलाऊं तथि नानक पिरी पसंदो हरिओ थीओसि ॥ २ ॥ म० ५ ॥ मेरी मेरी किआ करहि पुत्र कलत्र सनेह। नानक नाम विहूणीआ निमुणीआदी देह ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ नैनी देखउ गुरदरसनो गुरचरणी मथा। पैरी मारगि गुर चलदा पखा फेरी हथा। अकाल मूरति रिदै धिआइदा दिनु रैनि जपंथा। मै छडिआ सगल अपाइणो भरवासै गुर समरथा। गुरि बखसिआ नामु निधानु सभो दुखु लथा। भोगहु भुंचहु भाईहो पलै नामु अगथा। नामु दानु इसनानु द्रिड़ु सदा करहु गुर कथा। सहजु भइआ प्रभु पाइआ जम का भउ लथा ॥ २० ॥

॥ सलोक डखणे म० ५ ॥ जो स्वयं डूबे हैं, वे किसी को क्या पार लगाएँगे ? केवल परमात्मा के प्यार में लीन जीव ही पार लगता और दूसरों को पार लगाता है ॥ १ ॥ म० ५ ॥ जहाँ कोई मेरे प्रिय का नाम जपता या सुनता है, गुरु नानक कहते हैं कि वे वहाँ जायँ और जीवन को शीतल करें ॥ २ ॥ म० ५ ॥ स्त्री, पुत्रों में प्यार बनाकर मेरी-मेरी (ममत्व भाव) क्या करता है; गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम के बिना भौतिक शरीर अनाधार होता है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ मैं अपने नेत्रों से गुरु का दर्शन करूँ, उसके चरणों में शीश झुकाऊँ, पैरों से गुरु-पथ पर चलूँ और हाथों से उसकी सेवा में रहकर पंखा झुलाऊँ; अकालमूर्ति परमात्मा को हृदय में दिन-रात जपते हुए मैंने गुरु के सामर्थ्य पर अपना समूचा ममत्व

छोड़ दिया है। गुरु ने मुझे सुखों का भण्डार हरि-नाम प्रदान किया, जिससे मेरे सब दुःख दूर हो गए हैं। हे भाइयो, अब मैं उस अकथनीय परमात्मा के नाम को भोगता और नाम का ही भोजन करता हूँ। गुरु के उपदेश से मैंने नाम (जपना), दान (बाँटकर खाना) तथा स्नान (पवित्र रहना) को दृढ़तापूर्वक सीख लिया है। अब मुझे परमानन्द प्राप्त है, परमात्मा का साक्षात्कार हो गया है और मेरा मृत्यु-भय नष्ट हो गया है ॥ २० ॥

॥ सलोक डखणे म० ५ ॥ लगड़ीआ पिरीअंनि पेखंदीआ ना तिपीआ। हभ मझाहू सो धणी बिआ न डिठो कोइ ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ कथड़ीआ संताह ते सुखाऊ पंधीआ। नानक लधड़ीआ तिनाह जिना भागु मथाहड़ै ॥ २ ॥ म० ५ ॥ डूंगरि जला थला भूमि बना फल कंदरा। पाताला आकास पूरनु हभ घटा। नानक पेखि जीओ इकतु सूति परोतीआ ॥ ३ ॥ ॥ पउड़ी ॥ हरि जी माता हरि जी पिता हरि जीउ प्रतिपालक। हरि जी मेरी सार करे हम हरि के बालक। सहजे सहजि खिलाइदा नही करदा आलक। अउगणु को न चितारदा गल सेती लाइक। मुहि मंगां सोई देवदा हरि पिता सुखदाइक। गिआनु रासि नामु धनु सउपिओनु इसु सउदे लाइक। साझी गुर नालि बहालिआ सरब सुख पाइक। मै नालहु कदे न विछुड़ै हरि पिता सभना गला लाइक ॥ २१ ॥

॥ सलोक डखणे म० ५ ॥ मेरी आँखें प्रिय-प्रेम में दीवानी हैं, किन्तु तृप्त नहीं होतीं। सबमें मेरा स्वामी बसता है, दूसरा कोई दीख नहीं पड़ता ॥ १ ॥ म० ५ ॥ सन्तों की कथाएँ सुख देनेवाले रास्ते हैं, किन्तु गुरु नानक कहते हैं कि वे उन्हीं को मिलते हैं, जिनके माथे भाग्य-रेखा मौजूद है ॥ २ ॥ म० ५ ॥ पर्वतों, जल, थल, वन, वनस्पति, कंदराओं, आकाश, पाताल सबमें वह परमात्मा पूरित है। गुरु नानक कहते हैं कि वे उसी के दर्शन करके जीवित हैं, जिसने यह सब एक सूत्र में पिरोया है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ हरि ही सबका माता, पिता और पोषक है। परमात्मा स्वयं मेरी रक्षा करता है, मैं उसका बालक हूँ। सहज में ही वह आनन्द देता है, कभी आलस्य नहीं करता। वह मेरे अवगुणों की उपेक्षा करके मुझे गले से लगाता है। मेरा सुखदायी परमात्मा-पिता मुझे वह सब कुछ देता है, जो मैं मुँह से माँगता हूँ। मुझे उसने हरि-नाम-धन का व्यापार करने योग्य बना दिया है। परमात्मा ने मुझे गुरु के साथ साझे में कर्मशील किया है, जिससे सब सुख मेरी चाकरी भरते हैं। हरि-

पिता सब बातों में समर्थ है; (मेरी प्रार्थना है कि) वह मुझसे कभी दूर न हो (मुझे विरह-दुःख न भोगना पड़े) ॥ २१ ॥

॥ सलोक डखणे म० ५ ॥ नानक कचड़िआ सिउ तोड़ि ढूढि सजण संत पकिआ । ओइ जीवंदे विछुड़हि ओइ मुइआ न जाही छोड़ि ॥ १ ॥ म० ५ ॥ नानक बिजुलीआ चमकंनि घुरन्हि घटा अति कालीआ । बरसनि मेघ अपार नानक संगमि पिरी सुहंदीआ ॥ २ ॥ म० ५ ॥ जल थल नीरि भरे सीतल पवण झुलारदे । सेजड़ीआ सोइंन हीरे लाल जड़ंदीआ । सुभर कपड़ भोग नानक पिरी विहूणीं ततीआ ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ कारणु करतै जो कीआ सोई है करणा । जे सउ धावहि प्राणीआ पावहि धुरि लहणा । बिनु करमा किछू न लभई जे फिरहि सभ धरणा । गुर मिलि भउ गोविंद का भै डरु दूरि करणा । भै ते बैरागु ऊपजै हरि खोजत फिरणा । खोजत खोजत सहजु उपजिआ फिरि जनमि न मरणा । हिआइ कमाइ धिआइआ पाइआ साध सरणा । बोहिथु नानक देउ गुरु जिसु हरि चड़ाए तिसु भउजलु तरणा ॥ २२ ॥

॥ सलोक डखणे म० ५ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि हे जीव, मिथ्याडम्बरी वेशधारी साधुओं से विमुख होकर सन्तों द्वारा सच्चा प्यारा साजन (परमात्मा) खोजो । कच्चे आडम्बरी जीवन में ही छोड़ जाते हैं, जबकि सच्चे सन्तजन मृत्यु-पर्यन्त भी नहीं छोड़ते ॥ १ ॥ म० ५ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि बिजली चमकती हो या घनी काली घटाएँ गर्जन करती हों, अपार मेघ-वर्षण हो रहा हो, किन्तु पति-मिलन से सुशोभित जीवात्मा-स्त्री निर्भय-सुखी होती है ॥ २ ॥ म० ५ ॥ (दूसरी ओर) धरती की नदियाँ जल से भरी हों, शीतल पवन बहता हो; सोने की सेज हो, उस पर हीरे-मोती जड़े हों; सुन्दर कपड़े और आभूषण भी हों, तो भी प्रियतम के बिना ये सब चीज़ें दुःखदायी होती हैं ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ यह कारण-कार्य रूप जो संसार है, इसे परमात्मा ने बनाया है और वह जो चाहता है, इससे करवाता है । प्राणी चाहे सौ युक्तियाँ करें, किन्तु उन्हें मिलता वही है, जो उनके कर्मलेख में पहले से लिखा है । यदि समूची धरती घूम-घूमकर भी प्रयास करो, किन्तु भाग्य के बिना कुछ नहीं मिलता । गुरु-मिलन से प्रभु का भय मिलता है, जिससे सांसारिक भय दूर हो जाता है । प्रभु के भय से जागतिक वैराग्य उपजता है और तब जीव परमात्मा को खोजता है । उसी खोज में जीव को आनन्द प्राप्त होता है, जिससे उसका जन्म-मरण मिट

जाता है। सन्तजनों की शरण लेकर वह हृदय में हरि-नाम की उपासना करता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु उस पर कृपा करके गुरु रूपी जहाज़ प्रदान करता है, जिससे वह संसार-सागर से पार उतरता है ॥ २२ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ पहिला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस। होहु सभना की रेणुका तउ आउ हमारै पासि ॥१॥ ॥ म० ५ ॥ मुआ जीवंदा पेखु जीवंदे मरि जान्हि। जिना मुहबति इक सिउ ते माणस परधान ॥ २ ॥ म० ५ ॥ जिसु मनि वसै पारब्रहमु निकटि न आवै पीर। भुख तिख तिसु न विआपई जमु नही आवै नीर ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ कीमति कहणु न जाईऐ सचु साह अडोलै। सिध साधिक गिआनी धिआनीआ कउणु तुधु नो तोलै। भंनण घड़ण समरथु है ओपति सभ परलै। करण कारण समरथु है घटि घटि सभ बोलै। रिजकु समाहे सभसै किआ माणसु डोलै। गहिर गभीरु अथाहु तू गुण गिआन अमोलै। सोई कंमु कमावणा कीआ धुरि मउलै। तुधहु बाहरि किछु नही नानकु गुण बोलै ॥ २३ ॥ १ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ हे मनुष्य, सर्वप्रथम मरण स्वीकार करो, जीवन की आशा-तृष्णा का त्याग करो, सबकी चरण-धूल बनो और तब हमारे पास आओ (अर्थात् सन्तजनों की शरण में जाने से पूर्व मनुष्य को विनम्रता और समर्पण-भाव ग्रहण करना होता है) ॥ १ ॥ म० ५ ॥ अहम्-भाव के प्रति मृत व्यक्ति को जीवित समझो और अहंकार-ग्रस्त जीवित लोगों को भी मृत समझो। किन्तु जिन्हें एक परमात्मा से प्रेम है, वे सबसे उत्तम हैं ॥ २ ॥ म० ५ ॥ जिसके हृदय में स्वयं परब्रह्म बसता है, कोई पीड़ा उसके समीप नहीं आती। उसे क्षुधा-पिपासा का कोई दुःख नहीं रहता; यमदूत भी उसके निकट नहीं फटकते ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ अटल सच्चे परमात्मा का मोल कोई नहीं कह सकता (अर्थात् परमात्मा अमूल्य है); सिद्ध, साधक, ज्ञानी, ध्यानी, इनमें से कोई भी उसका सही तौल नहीं जानता। वह प्रभु स्वयं बनाने-बिगाड़ने में समर्थ है, उत्पत्ति-प्रलय उसी के किए होता है। वह कारण-कार्यमय इस जगत के कण-कण में व्याप्त है, सर्व-समर्थ है। वह सबको भोजन देता है, हे मनुष्य, तुम क्यों डोलते हो (अर्थात् हे मनुष्य, उसमें विश्वास रखो)। हे प्रभु, तुम गहन, गम्भीर हो, तुम्हारे गुण और ज्ञान अमूल्य हैं; हे प्रभु, जो कुछ तुमने आरम्भ से आदेश दे रखे हैं, जीव वे ही कार्य करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु, तुमसे बाहर कुछ नहीं है, मैं तो मात्र अपनी बुद्धि-अनुसार तुम्हारा गुण-गान करता हूँ ॥ २३ ॥ १ ॥

रागु मारू बाणी कबीर जीउ की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ पडीआ कवन कुमति तुम लागे। बूडहुगे परवार सकल सिउ राम न जपहु अभागे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बेद पुरान पड़े का किआ गुनु खर चंदन जस भारा। राम नाम की गति नही जानी कैसे उतरसि पारा ॥ १ ॥ जीअ बधहु सु धरमु करि थापहु अधरमु कहहु कत भाई। आपस कउ मुनिवर करि थापहु का कउ कहहु कसाई ॥ २ ॥ मन के अंधे आपि न बूझहु काहि बुझावहु भाई। माइआ कारन बिदिआ बेचहु जनमु अबिरथा जाई ॥ ३ ॥ नारद बचन बिआसु कहत है सुक कउ पूछहु जाई। कहि कबीर रामै रमि छूटहु नाहि त बूडे भाई ॥ ४ ॥ १ ॥

हे पंडित, तुम किस कुमति में पड़े हो; यदि दुर्भाग्यवश राम-नाम नहीं जपोगे, तो स्वयं तो डूबोगे ही, परिवार को भी ले डूबोगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वेद-पुराण के रटने-पढ़ने का क्या लाभ ! तुम्हारे लिए तो यह ऐसा ही है, जैसे गधे पर चन्दन का बोझ लाद दिया गया हो (अर्थात् जैसे गधा चन्दन लदने पर भी उसकी सुगन्ध से लाभान्वित नहीं होता, वैसे ही वेदपाठी पंडित उसके अनुसार आचरण नहीं करता)। राम-नाम के रहस्य को जाने बिना संसार-सागर से पार नहीं उतरा जा सकता ॥ १ ॥ जीवों की हत्या को धर्म कहते हो, तो अधर्म किसे कहोगे (अर्थात् पशु-बलि आदि देकर यज्ञ करने को धर्म कहते हो, तो अधर्म क्या होगा) ? (हत्या करके भी) अपने को श्रेष्ठ ऋषि-मुनि समझते हो तो फिर कसाई किसे कहोगे ? ॥ २ ॥ मन में अज्ञानांधकार होने के कारण आत्मज्ञान नहीं रखते, तो किसी अन्य को क्या समझाओगे ? माया के लिए विद्या बेचते हो, इससे तो यह जन्म ही व्यर्थ हो रहा है ॥ ३ ॥ मुनिवर नारद, ऋषि व्यास तथा शुकदेव-सरीखे महामना लोगों का यही कहना है; कबीर भी यही कहते हैं कि हे भाई, हरि-नाम में रमण करने से ही उद्धार सम्भव है, अन्यथा बीच में ही डूब मरोगे ॥ ४ ॥ १ ॥

बनहि बसे किउ पाईऐ जउ लउ मनहु न तजहि बिकार। जिह घरु बनु समसरि कीआ ते पूरे संसार ॥ १ ॥ सार सुखु पाईऐ रामा। रंगि रवहु आतमै राम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जटा भसम लेपन कीआ कहा गुफा महि बासु। मनु जीते जगु जीतिआ जांते बिखिआ ते होइ उदासु ॥ २ ॥ अंजनु देइ

सभै कोई टुकु चाहन माहि बिडानु। गिआन अंजनु जिह पाइआ ते लोइन परवानु ॥ ३॥ कहि कबीर अब जानिआ गुरि गिआनु दीआ समझाइ। अंतरगति हरि भेटिआ अब मेरा मनु कतहू न जाइ ॥ ४ ॥ २ ॥

हे जीव, वन में जाकर रहने से भी, जब तक मन के विकार दूर नहीं होते, ईश्वर-मिलन क्योंकर सम्भव हो सकता है! संसार में वे ही जीव पूरे उतरते हैं, जिन्होंने घर और बाहर, दोनों को एक समान अनुभव किया है ॥ १ ॥ राम-नाम जपने में ही वास्तविक सुख है, अतः प्रेम से हृदय में राम-नाम जपो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जटाएँ बढ़ाने, भस्म रमाने, चन्दन का लेप करने एवं गुफाओं में निवास करने का क्या लाभ? मन जीतने से जगत पर विजय मिलती है और जीव माया से विरक्त हो जाता है ॥ २ ॥ सब लोग नेत्रों में अंजन लगाते हैं, किन्तु भावना अलग-अलग होती है (कोई सौंदर्य-विकार-वश लगाता है तो कोई ज्योति बढ़ाने के लिए किन्तु) जिन आँखों में ज्ञान का अंजन लगाया जाता है, वे ही आँखें श्रेष्ठ हैं ॥ ३ ॥ कबीरजी कहते हैं कि गुरु-ज्ञान द्वारा मुझे यह जान पड़ा है कि अन्तर्मुखी होकर जब परमात्मा को भीतर से ही खोज लिया जाता है, तो मन स्थिर हो जाता है, किन्हीं बाहरी आकर्षणों की ओर नहीं खिचता ॥ ४ ॥ २ ॥

रिधि सिधि जा कउ फुरी तब काहू सिउ किआ काज। तेरे कहने की गति किआ कहउ मै बोलत ही बड लाज ॥ १ ॥ रामु जिह पाइआ राम। ते भवहि न बारै बार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ झूठा जगु डहकै घना दिन दुइ बरतन की आस। राम उदकु जिह जन पीआ तिहि बहुरि न भई पिआस ॥ २ ॥ गुरप्रसादि जिह बूझिआ आसा ते भइआ निरासु। सभु सचु नदरी आइआ जउ आतम भइआ उदासु ॥ ३ ॥ राम नाम रसु चाखिआ हरि नामा हर तारि। कहु कबीर कंचनु भइआ भ्रमु गइआ समुद्रै पारि ॥ ४ ॥ ३ ॥

यदि किसी को रिद्धियों-सिद्धियों की शक्ति अर्जित करने का ध्यान हो, तो उससे तुम्हें क्या? तुम्हारी बातों को मैं क्या गति दूँ, मुझे तो कहते भी लाज आती है ॥ १ ॥ हे प्रभु, जिसने तुम्हें पा लिया है, वे द्वार-द्वार भटकते नहीं फिरते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मिथ्या संसार ख़ूब फलता-फूलता है, किन्तु दो ही दिन तो जीव को इसमें रहना होता है। जो जीव राम-नाम रूपी अमृत-जल को पी लेते हैं, उन्हें पुनः कोई प्यास नहीं रह जाती (अर्थात्

उसकी आशाएँ-तृष्णाएँ शमित हो जाती हैं) ॥ २ ॥ जो गुरु-कृपा से रहस्य को पा लेता है वह आशा से निराशा की ओर अग्रसर होता है अर्थात् वह मिथ्या आशाओं का त्याग कर देता है। जब जीवात्मा संसार के रंग-तमाशों से उदासीन हो जाता है, तब सत्यस्वरूप हरि का साक्षात्कार होता है ॥ ३ ॥ रामनाम-रस चखने से (हरि-नाम जपने के कारण) हर एक व्यक्ति तिर जाता है। कबीरजी कहते हैं कि तब जीव स्वर्णमय हो जाता है और संसार-सागर से पार लगता है ॥ ४ ॥ ३ ॥

उदक समुंद सलल की साखिआ नदी तरंग समावहिगे। सुंनहि सुंनु मिलिआ समदरसी पवन रूप होइ जावहिगे ॥ १ ॥ बहुरि हम काहे आवहिगे। आवन जाना हुकमु तिसै का हुकमै बुझि समावहिगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब चूकै पंच धातु की रचना ऐसे भरमु चुकावहिगे। दरसनु छोडि भए समदरसी एको नामु धिआवहिगे ॥ २ ॥ जित हम लाए तित ही लागे तैसे करम कमावहिगे। हरि जी क्रिपा करे जउ अपनी तौ गुर के सबदि समावहिगे ॥ ३ ॥ जीवत मरहु मरहु फुनि जीवहु पुनरपि जनमु न होई। कहु कबीर जो नामि समाने सुंन रहिआ लिव सोई ॥ ४ ॥ ४ ॥

समुद्र में, पानी में पानी की तरह और नदी में लहर की तरह हम परमात्मा में समा जायँगे। जब शून्य में शून्य मिलेगा (अर्थात् आत्मा ब्रह्म में लीन होगा), तो हम पवन की तरह समदर्शी हो जायँगे ॥ १ ॥ पुनः इस संसार में हम जन्म नहीं लेंगे। आवागमन परमात्मा के हुक्म का प्रतिफल है, हम हुक्म पहचानकर हुक्म में ही लीन हो जायँगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब पाँच तत्त्वों की रचना (भौतिक जगत) नष्ट होगी, तो साथ ही सब भ्रम भी दूर हो जायँगे। बाहरी आडम्बरों को छोड़कर समदर्शी बनेंगे और हरि-नाम का भजन करेंगे ॥ २ ॥ परमात्मा हमें जिधर लगाएगा, हम उधर ही तल्लीन होकर अपेक्षित कर्म कमाएँगे। यदि इस पर हरिजी ने प्रसन्न-वदन कृपा कर दी, तो गुरु के उपदेशों में ही लीन हो जायँगे ॥ ३ ॥ जीते-जी मर जाओ और मरकर पुनः अमर बनो, तो फिर कभी जन्म नहीं होता। कबीरजी कहते हैं कि हरि-नाम में लीन होनेवाला जीव सहज आनन्द को पा लेता है ॥ ४ ॥ ४ ॥

जउ तुम्ह मोकउ दूरि करत हउ तउ तुम मुकति बतावहु। एक अनेक होइ रहिओ सगल महि अब कैसे भरमावहु ॥ १ ॥ राम मोकउ तारि कहां लै जई है। सोधउ मुकति कहा देउ

कैसी करि प्रसादु मोहि पाई है ।। १ ।। रहाउ ।। तारन तरनु तबै लगु कहीऐ जब लगु ततु न जानिआ । अब तउ बिमल भए घट ही मह कहि कबीर मनु मानिआ ।। २ ।। ५ ।।

यदि तुम, हे प्रभु, मुझे अपने से अलग बताते हो, तो बताओ फिर मुक्ति किसे कहेंगे ? एक होकर भी तुम सबमें स्थित हो, अतः किसी को क्योंकर भ्रम में रखा जा सकता है ! ।। १ ।। हे प्रभु, तुम मुझे तारने के लिए कहाँ ले जाते हो ? (मैं पूछता हूँ कि) मुक्ति कैसी होगी और किन्हें दोगे ? इस कार्य में तुमने कृपा-वश मुक्ति तो मुझे दी है और मैंने प्राप्त भी कर ली है ।। १ ।। रहाउ ।। जब तक जीव आध्यात्मिक रहस्य को नहीं समझता, तब तक ही तिरने-डूबने की कहानी चलती है । कबीरजी कहते हैं कि अब तो शरीर के भीतर निर्मलता आ गई है और जीव ने मन ही मन उसे (प्रभु को) नमन किया है ।। २ ।। ५ ।।

जिनि गड़ कोट कीए कंचन के छोडि गइआ सो रावनु ।। १ ।। काहे कीजतु है मनि भावनु । जब जमु आइ केस ते पकरै तह हरि को नामु छडावन ।।१।। रहाउ ।। कालु अकालु खसम का कीन्हा इहु परपंचु बधावनु । कहि कबीर ते अंते मुकते जिन्ह हिरदै राम रसाइनु ।। २ ।। ६ ।।

रावण ने अपने महल और दुर्ग भी स्वर्ण के बनाए थे, किन्तु अन्ततः वह भी छोड़ गया ।। १ ।। (फिर) क्यों भला मन-भावन (मन की प्रेरणानुसार) किया जाय ! जब यमदूत आकर बालों को पकड़ लेते हैं, तब केवल हरि-नाम ही जीव को छुड़ा सकता है ।। १ ।। रहाउ ।। अन्तहीन काल को उसी परमात्मा ने बनाया है, ताकि वह सृष्टि को मारता रहे । कबीरजी कहते हैं कि अन्ततः वे ही मुक्ति-लाभ करते हैं, जिनके हृदय में राम-नाम रूपी परमरसायन रम जाता है ।। २ ।। ६ ।।

देही गावा जीउ धर महतउ बसहि पंच किरसाना । नैनू नकटू स्रवनू रसपति इंद्री कहिआ न माना ।। १ ।। बाबा अब न बसउ इह गाउ । घरी घरी का लेखा मागै काइथु चेतू नाउ ।। १ ।। रहाउ ।। धरमराइ जब लेखा मागै बाकी निकसी भारी । पंच क्रिसानवा भागि गए लै बाधिओ जीउ दरबारी ।।२।। कहै कबीर सुनहु रे संतहु खेत ही करहु निबेरा । अब की बार बखसि बंदे कउ बहुरि न भउजलि फेरा ।। ३ ।। ७ ।।

शरीर एक गाँव के समान है, जीव इस धरती का मालिक है और काम-क्रोधादि पाँच मुज़ारे (भाड़े पर काम करनेवाले किसान) हैं। आँखें, नाक, कान, जीभ आदि रस लेनेवाली विद्रोही इन्द्रियाँ हैं, जो किसी का कहा नहीं मानतीं ॥ १ ॥ हे भाई, मैं अब इस गाँव में नहीं बसता। यहाँ का मुंशी, जिसका नाम चित्रगुप्त है, घड़ी-घड़ी का हिसाब माँगता है। (अर्थात् शरीर में रहकर किए गए कर्मों का समूचा लेखा-जोखा चित्रगुप्त करता है, इसलिए इस शरीर रूपी गाँव में नहीं रहना) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यहाँ जब धर्मराज ने हिसाब-किताब माँगा था, तो मुझ पर पर्याप्त धन बक़ाया था; इस पर पाँचों मुज़ारे (भाड़ूत किसान) तो भाग गए, जीव रूपी मालिक बाँधकर धर्मराज के दरबार में पेश कर दिया गया ॥ २ ॥ कबीरजी कहते हैं कि हे सज्जनो, यहीं खेत में ही हिसाब चुका लो (अर्थात् शरीर रहते ही अपने कर्मों को संयत कर लो), ताकि आगे हिसाब न देना पड़े (अर्थात् जीव को धर्मराज के दरबार में दण्डित न किया जा सके)। हे परमात्मा, अबकी बार इस निरीह जीव को क्षमा कर दो, दुबारा संसार-सागर के चक्र में डालो ही नहीं ॥ ३ ॥ ७ ॥

रागु मारू बाणी कबीर जीउ की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ अनभउ किनै न देखिआ बैरागीअड़े। बिनु भै अनभउ होइ वणाहंबै ॥ १ ॥ सहु हदूरि देखै तां भउ पवै बैरागीअड़े। हुकमै बूझै त निरभउ होइ वणाहंबै ॥ २ ॥ हरि पाखंडु न कीजई बैरागीअड़े। पाखंडि रता सभु लोकु वणाहंबै ॥३॥ त्रिसना पासु न छोडई बैरागीअड़े। ममता जालिआ पिंडु वणाहंबै ॥४॥ चिंता जालि तनु जालिआ बैरागीअड़े। जे मनु मिरतकु होइ वणाहंबै ॥ ५ ॥ सतिगुर बिनु बैरागु न होवई बैरागीअड़े। जे लोचै सभु कोइ वणाहंबै ॥ ६ ॥ करमु होवै सतिगुरु मिलै बैरागीअड़े। सहजे पावै सोइ वणाहंबै ॥ ७ ॥ कहु कबीर इक बेनती बैरागीअड़े। मोकउ भउजलु पारि उतारि वणाहंबै ॥ ८ ॥ १ ॥ ८ ॥

ऐ बैरागी, अनुभव-रूप परमात्मा को किसी ने नहीं देखा। वास्तव में उस (परमात्मा) के भय के बिना जीव निर्भय नहीं होता। ('वणाहंबै' शब्द का कोई विशेष अर्थ नहीं, केवल छन्द की तुक मिलाने के लिए और अपनी बात की पुष्टि में प्रयोग हुआ है —यही बात सही है —इस प्रकार

का कुछ भाव है।) ॥ १ ॥ हे बैरागी, यदि परमात्मा का साक्षात्कार हो, तभी उसका भय और उसके प्रति भाव बनता है। यदि तुम परमात्मा का हुक्म समझ लो, तो पूर्ण निर्भय हो जाते हैं —यही बात है ॥ २ ॥ हे बैरागी, पाखण्ड करने से परमात्मा नहीं मिलता, जबकि सब लोग पाखण्डों में रत हैं —यही बात है ॥ ३ ॥ हे बैरागी, तृष्णा के बन्धन (पाश) जीव को नहीं छोड़ते और ममता पिंड (शरीर) को जला रही है ॥ ४ ॥ यदि मन अहम्-भाव के प्रति मृतप्राय हो, तो चिन्ता को त्यागकर शरीर-अध्यास से भी मुक्ति मिल जाती है —यही बात सच्ची है ॥ ५ ॥ हे बैरागी, सतिगुरु की कृपा के बिना वैराग्य नहीं होता, चाहे सब लोग इसे पाने का प्रयास करते रहें ॥ ६ ॥ अरे बैरागी, सतिगुरु से भी शुभ कर्मों के कारण ही मिलन होता है और फिर जीव सहज ही परमात्मा को पा लेता है ॥ ७ ॥ हे बैरागी, कबीरजी की एक विनती है कि परमात्मा उन्हें संसार-सागर से पार लगाए —बस यही बात सच्ची है ॥ ८ ॥ १ ॥ ८ ॥

राजन कउनु तुमारै आवै । ऐसो भाउ बिदर को देखिओ ओहु गरीबु मोहि भावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हसती देखि भरम ते भूला स्री भगवानु न जानिआ । तुमरो दूधु बिदर को पान्हो अंम्रितु करि मै मानिआ ॥ १ ॥ खीर समानि सागु मै पाइआ गुन गावत रैनि बिहानी । कबीर को ठाकुरु अनद बिनोदी जाति न काहू की मानी ॥ २ ॥ ९ ॥

(श्रीकृष्ण दुर्योधन से कहते हैं। जब कृष्णजी दुर्योधन के यहाँ न ठहरकर विदुर की कुटिया में चले गए थे, तब का प्रसंग है।) हे राजन, तुम्हारे घर कौन आए! मैंने विदुर का उत्कट प्रेम देखा है, अतः चाहे वह निर्धन है, फिर भी मुझे अच्छा लगता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जीव हाथी-घोड़े आदि सम्पन्नता देखकर भटकते हैं, वे श्रीभगवान् को नहीं पहचानते। तुम्हारे दूध की अपेक्षा विदुर का पानी भी मुझे अमृत-समान प्रतीत हुआ ॥ १ ॥ उसके यहाँ का अलूणा साग भी खीर-जैसा स्वादिष्ट लगा, क्योंकि वहाँ रात भर परमात्मा का गुणगान होता रहा। कबीरजी कहते हैं कि मालिक तो लीलाधर है, वह जाति-पाँति में बँधा हुआ नहीं ॥ २ ॥ ९ ॥

॥ सलोक कबीर ॥ गगन दमामा बाजिओ परिओ नीसानै घाउ । खेतु जु मांडिओ सूरमा अब जूझन को दाउ ॥ १ ॥ सूरा सो पहिचानीऐ जु लरै दीन के हेत । पुरजा पुरजा कटि मरै कबहू न छाडै खेतु ॥ २ ॥ २ ॥

गगन में युद्ध का बाजा बजा है, ढोल पर चोट पड़ी है। शूरवीरों ने (इसे सुनते ही) युद्धभूमि में अपनी स्थिति सम्हाल ली है, क्योंकि अब रण की वेला है। (अर्थात् दशम द्वार में, जहाँ अनाहत नाद श्रवण होता है, हरि-नाम-ध्वनि पैदा हुई; जिससे हृदय-कमल पर चोट पहुँची—प्रभु-पथ पर कुछ करने की प्रेरणा मिली। तब शूरवीर जीवात्मा ने जीवन रूपी युद्धभूमि में स्थान ग्रहण किया और काम-क्रोधादि शत्रुओं से युद्ध ठान लिया) ॥ १ ॥ वास्तविक शूरवीर वही है, जो अनाथों, निर्बलों के लिए लड़ता है। वह अंग-अंग से कट मरता है, किन्तु दीनों की रक्षा में कभी रण-भूमि नहीं त्यागता। (अर्थात् जब जीवात्मा हृदय में प्रभु की सुभावना को पाता और उसे बनाए रखने के लिए संघर्ष करता है, तो मरण स्वीकारता है, काम-क्रोधादि शत्रुओं के सम्मुख कभी हथियार नहीं डालता) ॥ २ ॥ २ ॥

कबीर का सबदु रागु मारु बाणी नामदेउ जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ चारि मुकति चारै सिधि मिलि कै दूलह प्रभ की सरनि परिओ। मुकति भइओ चउहूं जुग जानिओ जसु कीरति माथै छत्रु धरिओ ॥ १ ॥ राजा राम जपत को को न तरिओ। गुर उपदेसि साध की संगति भगतु भगतु ता को नामु परिओ ॥१॥ रहाउ ॥ संख चक्र माला तिलकु बिराजित देखि प्रतापु जमु डरिओ। निरभउ भए राम बल गरजित जनम मरन संताप हिरिओ ॥ २॥ अंबरीक कउ दीओ अभै पदु राजु भभीखन अधिक करिओ। नउनिधि ठाकुरि दई सुदामै ध्रूअ अटलु अजहू न टरिओ ॥ ३ ॥ भगत हेति मारिओ हरनाखसु नरसिंघ रूप होइ देह धरिओ। नामा कहै भगति बसि केसव अजहूं बलि के दुआर खरो ॥ ४ ॥ १ ॥

जब जीव परमात्मा की शरण ले लेता है तो चारों मुक्तियाँ (सामीप्य, सालोक्य, सारूप्य तथा सायुज्य) उसकी दासी बनकर उसे अपना दूल्हा मान लेती हैं। वह चारों युगों में मुक्त हुआ जान लिया जाता है और उसके मन में कीर्तिमान प्रभु के लिए जो प्रीति है, वही सिर पर छत्र धराने के समान है ॥ १ ॥ प्रभु राम का नाम जपने से कौन नहीं तिर गया! जो गुरु के उपदेश पर आचरण करते हैं, सन्तजनों की संगति में रहते हैं, संसार में उनका नाम 'भक्त' पड़ जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस प्रभु-स्वरूप पर शंख, चक्र, माला और तिलक शोभता है, उसे देखकर

तो स्वयं यमदूत भी डरकर भाग जाते हैं। जीव राम के बल से (आध्यात्मिक बल से) निर्भय हो जाते हैं और उनका जन्म-मरण के चक्र का दुःख दूर होता है ॥ २ ॥ (परमात्मा उदार है, सत्कर्मी को सर्वस्व प्रदान करता है, यथा) अंबरीष को परमात्मा ने अभय-पद प्रदान किया था और विभीषण को अधिक समय तक राज्य कर सकने का सामर्थ्य मिला था। परमात्मा ने सुदामा को समस्त निधियाँ दी थीं और ध्रुव को वह अटलता दी थी, जो आज तक ज्यों की त्यों स्थिर बनी है ॥ ३ ॥ अपने भक्त (प्रह्लाद) के लिए नृसिंह-रूप धारण करके स्वयं परमात्मा ने हिरण्यकशिपु को मार डाला था। नामदेवजी कहते हैं कि परमात्मा तो सदैव भक्तों के वश में है— आज भी वह राजा बलि के द्वार पर विराजता है अर्थात् अब भी वह उसकी सहायता के लिए तैयार है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ मारू कबीर जीउ ॥ दीनु बिसारिओ रे दिवाने दीनु बिसारिओ रे। पेटु भरिओ पसूआ जिउ सोइओ मनुखु जनमु है हारिओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साध संगति कबहू नही कीनी रचिओ धंधै झूठ। सुआन सूकर बाइस जिवै भटकतु चालिओ ऊठि ॥ १ ॥ आपस कौ दीरघ करि जानै अउरन कउ लग मात। मनसा बाचा करमना मै देखे दोजक जात ॥ २ ॥ कामी क्रोधी चातुरी बाजीगर बेकाम। निंदा करते जनमु सिरानो कबहू न सिमरिओ रामु ॥ ३ ॥ कहि कबीर चेतै नही मूरखु मुगधु गवारु। रामु नामु जानिओ नही कैसे उतरसि पारि ॥ ४ ॥ १ ॥

ऐ मूर्ख जीव, तूने तो अपना (वास्तविक) धर्म ही छोड़ दिया है। केवल पशुओं की तरह पेट भरता और गहरी नींद सोता रहा, मनुष्य-जन्म घाटे में ही गँवा दिया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तजनों की संगति में नहीं रहे, अपने दैनिक धन्धे में भी झूठ का व्यापार करते रहे। कुत्ते, सूअर और काक की नाईं जगह-जगह भटकते रहे (सत्य-संचयन न कर सके) ॥ १ ॥ सदा अपने को बड़ा समझते रहे, अन्य लोगों को अक्षर के साथ मात्रा की तरह लघु समझा —ऐसे लोगों को मैंने नरकों में जाते पाया है, जो मन, वचन, कर्म से दूसरों को हेय मानते थे ॥ २ ॥ ऐसे लोग कामी, क्रोधी, चतुर, धोखेबाज़ और व्यर्थ होते हैं; दूसरों की निन्दा करते हुए उनका जीवन बीतता है, वे कभी राम-नाम का स्मरण नहीं कर पाते ॥ ३ ॥ कबीरजी कहते हैं कि ऐसे मूर्ख और गँवार लोग कभी नहीं सुधरते। राम-नाम की महिमा को जाने बग़ैर वे कभी पार नहीं उतर सकते ॥ ४ ॥ १ ॥

अछर माही। बिआस बीचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही ॥ २ ॥ सहज समाधि उपाधि रहत होइ बडे भागि लिव लागी। कहि रविदास उदास दास मति जनम मरन भै भागी ॥ ३ ॥ २ ॥ १५ ॥

सुख और कल्याण के स्रोत कल्पवृक्ष, चिन्तामणि एवं कामधेनु, सब उसी प्रभु के वश में हैं। चारों पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष), आठों सिद्धियाँ एवं नौ निधियाँ, सब परमात्मा के ही हाथ में हैं (जिसे चाहे, प्रदान करे) ॥ १ ॥ हे जीव, जिह्वा से हरि-हरि-नाम नहीं जपते अर्थात् प्रभु का नाम जपो। अन्य व्यर्थ के वचनों की रचना त्याग दो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नाना-विधि आख्यान, वेद-पुराण तथा चौंतीस अक्षरों में लिखे समस्त शास्त्रों को गम्भीरतापूर्वक विचार कर व्यासजी ने यही सिद्धान्त प्रस्तुत किया है कि राम-नाम के समान अन्य कोई परमार्थ नहीं है ॥ २ ॥ उन्नत भाग्य से ही सांसारिक उपाधियों से मुक्त होकर जीव की लग्न परमात्मा में लगती है और वह सहज आनन्द-मग्न रहता है। सन्त रविदास कहते हैं कि मुझ सेवक की बुद्धि संसार से उदास (विरक्त) हुई है, इसीलिए मेरा जन्म-मरण का भय दूर हो गया है ॥ ३ ॥ २ ॥ १५ ॥